

મળવાનું છેલ્લું :

શ્રી આ. વા. શ્રે સ્થાનકવાસી
નેન યાઓદાર સમિતિ
મોન મોન પાસે રાજકોટ.

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧

પ્રિન્ટ સ્વતંત્ર : ૨૪૮૩

વિક્રમ સ્વતંત્ર : ૨ ૧૩

ક્રિસ્ટી સન ૧૯૫૭

: મુદ્રક

મણિલાલ હમનરાવ શાહ
ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટિંગ પ્રેસ
વીકારી રોડ : ૧ અમદાવાદ

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

સ મ મ તિ પ ત્ર

*

ઉપરાત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યે

૨

તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા ઠાણેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો

કે. ટ્રીન લોજ પાસે
ગરેડીયા કુવારોડ
રાજકોટ સૌરાષ્ટ્ર

}

શ્રી. અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

जैनागमवेत्ता जैनधर्मविवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी
महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००८
श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका विषा हुआ
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

सम्मद्वयत्त

सिरि-वीरनिष्ठाण-सवच्छर २४५८ आसोई
पुष्पमासी १५ सुक्वारो लुहियाभाओ ।

मए सुणिएमचंदेण य पेब्बियरणसुणिसिरि-वासीलासविनिम्मिया सिरिउवा
सगमुचस्स अगारधम्मसंजीवनीनामिया विची पब्बियमूलचंदपासाओ अज्जावत्त
सुपा, समीईणं, इयं विची जहाणामं तथा गुणेवि पारइ, सत्थं, अगाराणं तु इमा
नीक्ख (सनमजीक्ख) दाई एव अत्थि । वित्तकत्तुमा मूळमुचस्स भावा उज्जु
सेलीओ फुडीकओ, अइय उवासयस्स सामणविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,
कम्मपुरिसइवाओ समणोवासयस्स धम्मदइवा य, इवाइत्तिसया अस्सि फुडरीइओ
वण्णिया, जेण कत्तुमो पडिआए सुट्ठुप्पयारेण परिधओ इइ, तइ इइहासदिट्ठिओवि
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए कट्माण-भरइवासस्स य कत्तुणा विसय
प्पयारण वित्तं विचित्त, पुणो सक्खपाढीण, कट्माणकाले हिन्दीभामियाए भासाए
नामीणं य परमोवपारो फडो, इमेण कत्तुमो अरइवा दीसइ, कत्तणो एयं कज्ज
मएममविज्जमत्थि । पत्तेयनणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुचस्स अक्खोयणमइव
या एय अक्खिउ सावयस्स तु (उ) इमं सत्थं सम्भस्समव अत्थि, अओ कत्तुणो
अणगकाडीमा धम्मवाओ अत्थि, जेहिं अणंतपरिस्समेण जइणगतोवरि मसीमा
वपारो कइ, अइय सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयनणस्स पडयिज्जा अत्थि,
जेस्सि पइक्खओ वा गइणाओ आया निक्खामाहिगारी भवइ, तथा भविष्यपापामो
पुरिस्कारपरक्कमवाओ य अवस्समं वंसणिज्जो, किंइहुवा इमीसे विचीए पत्तेय
विसयस्स फुडसइहिं धम्मं कयं, अइ अमावि एवं अम्मायं पसुवप्पाए समाजे विज्जं
भवेज्जा तथा नाणस्स वरित्तस्स तथा सयस्स य स्विणं उदयो भविस्सई, एव इं मन्ने॥

मयईओ—

उपज्झाय-जइणमुणि-आयाराम-पचनईओ,

सम्मतिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज-

शुक्ला (पूर्णिमा) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पण्डितरत्न मुनि श्रीधासीलाल-
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम-
तथागुणवाली-अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-
संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकारने मूलसूत्र के भावको
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावकका सामान्य धर्म क्या है ?
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे
बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकको
धर्मके अन्दर दृढता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीर के समय जैनधर्म
किस जाहोजलाली पर था ? और वर्तमान समय जैनधर्म किस
स्थितिमें पहुंचा है ? इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया
है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालों को
भी पूरा लाभ होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है उसकी सरल हिन्दी
कर दी गई है। इसके पढ़ने से कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने-
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें श्रावकों (गृहस्थों) का
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकार को कोटिशः धन्यवाद दिया
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन-जनताके ऊपर असीम
उपकार किया है। इसमें श्रावकके वारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा
मोक्षका अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-

परामर्शवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये। कहाँ तक कहें इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे पताये गये हैं। हमारी सुसंप्राय (सोई दृढ़ीसी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान पारिश्र तथा भीसघक्ता शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूँ—

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आरमाराम पंजाबी



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८
श्री भागवतजी महाराज तथा ५ मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाज्ञ सूत्रके
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज कृत श्री उपासकदशाज्ञ
सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका
अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे
र किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्तियोंकी
समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखिनीसे समाजके विद्वान्
साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द
हुवा, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी
ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े
गौरवकी बात है।

दि सं १९८९ मा आश्विन
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर

श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रकी 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री वासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीकावाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री वासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि ये वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षायों से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं पहुंचने पर समाचार देंगे।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ मुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री वासीलालजी म. सा. ठाने ४ की हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर मुखशाता पूछें।

पूज्य श्री वासीलालजी म. जी का लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराज-श्रीजी देखना चाहते हैं इसलिये १ कापी आप भेजने की कृपा करें, फिर आप को वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहां से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक
प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि
श्री आत्मारामजी महाराज (पंजाब) का आचाराङ्गसूत्रकी
आचारचिन्तामणि टीका पर

सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री घासीलालजी (महाराज) की बनाई हुई
श्रीमद् आचाराङ्ग सूत्रके प्रथम अध्यायन की आचारचिन्तामणि टीका
सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका-न्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध
है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित
रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा
प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक
प्रतिपादन अधिक मनोरञ्जक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद
के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हू कि-जिज्ञासु महोदय इसका मली-भांति
पठन द्वारा जैनागम - सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को
रुपित करेंगे, और इसके मनन से दक्ष जन चार अनुयोगों का
संग्रह प्राप्त करेंगे । तथा आचार्यवर्य इसीप्रकार दूसरे भी जैनागमों के
विषय-विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार
कर पायगी करेंगे ।

वि स २ २
भृगुसर सुवि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम
छपियाना पंजाब भुममस्तु



प्रीतानेरपाला समाजभूषण शास्त्रज्ञ मेखानजी शेट्टिआनो अभिप्राय



आप शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।
इससे जैनजनता को काफी लाभ पहुंचेगा ।

(ता २८-३-५६ना प्रमांवी)

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्य-श्री आत्मारामजी-
महाराजानां पञ्चनद-(पंजाव)स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा-
मर्थबोधिनीनामटीकायामिदम्-

सम्मतिपत्रम् .

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्य प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला
सुबोधिनी च तथा सारवत्यपि । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाण-
पदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञानदर्शन-चारित्र्याणि
सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुक्रविर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैना-
गमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च
वृत्तौर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।”
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा
लुधियाना. }

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।

(श्री दशवैकालिकमूत्रका सम्मतिपत्र)

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

सम्मतिपत्रम्

मम पण्डियमुणि-हेमचंदेण य पण्डिय-मूलचन्दवासवारा पत्ता
पण्डिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सफाय-हिंदी-भापाहिं जुस्ता
मिरि-दसवेयालिय-नाम-सुसस्त आगारमणिमंजूमा चित्ती अवलो
इया, इमा मणोहरा अस्थि, पत्थ सहाण अइसयजुत्तो अस्थो
वण्णिओ विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा चित्ती
दीमइ ! आपारविमण चित्तीकत्तारण अइसयपुम्भ उन्नेहो कडो,
तहा अहिस्ताण सरुय जे जहा-तहा न जाणति तेमि इमाण चित्तीण
परमलाहो भविस्मइ, कसुणा पत्तेयविसयाणं फूडरूवेण वण्णाण
कड, तहा मुणिणो अरिस्ता इमाण चित्तीण अवलोयणाओ अइसय-
जुस्ता सिज्झइ ! सफायजाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो
अस्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा चित्ती दद्वन्वा ! अम्हाण समाजे
परिसयिज्ज-मुणिरयणाण मग्गयाओ समाजस्स अहोमग्ग अस्थि, किं ?
उत्तयिज्जमुणिरयणाणं कारणाओ जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्याओ,
अम्हकेर साहिच्चे न सुत्तप्यायं अस्थि तेसिं पुणोयि उदओ भविस्सइ
जस्स कारणाओ भयियप्पा मोक्खस्स जोग्गो भयिप्पा पुणो
नयणा पायिहिइ अजोइ आपारमणि-मंजूमाण कसुणो पुणो पुणो
देमि— ॥

१०० कालान्-
११ श्री-महाछ
(अलपर म्हा)

३३-
उरगहाय-जइण-मुणी, आपारामो
(पेचनईओ)

पसेही —

वण्णभारत मंगलाना-निषामी श्रीमान् रत्नलालजी बोमी भ्रम
णोपामक जैन मिश्रात हे कि —

श्रीमान् की की हुई रीकापाला उपामकदर्शांग सयकफ दृष्टि-
गत हुआ, सयक भनो उसका मनन कर रहा है यह प्रत्य सयक-
मुन्दर पयम् उपपत्तिटिका उपकारक है ।

निरयावलिका का सम्मतिपत्र.
आगमवारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री
आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुवा

सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्दजी पानाचन्दजी । सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला ! निरयावलिका विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कोपी निरयावलिकाकी और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें !

भवदीय गुजरमल-वच्छवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

(लेखक : - जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज)

सुन्दरबोधिनीटीकया समलंकृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम् , संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाग्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री घासीलालजी महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो धन्यवादाहर्हश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्री कन्हैयालालजी मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहर्हौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलंकृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफलयिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकशुभाङ्ग मूष परत्वे जैन समाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण
महान् विद्वान् संतोष समग्र विद्वान् धावकाए सम्मतिओ समर्पी
छे तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, भुवद्वान के
मंदार आगमरत्नाकर जैनधर्मविष्ठाकर श्री १००७ श्री उपाध्याय श्री
आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायग्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य
श्री मुनि हमचन्दजी महाराज
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डित रत्न श्री
१००८ श्री भागचन्दजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७
श्री मिलोकचंदजी महाराज
- (३) खिचन-सं ता ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८
श्री भारतरत्न श्री समरधमलजी महाराज
- (४) वात्साबोर-ता १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री
१००८ श्री दत्तात्रधानी श्री रतनचंदजी महाराज
- (५) घम्यई-ता १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री
कवि नानचंद्रजी महाराज
आगरा-ता १८-१२-३६, जगत् बल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर
श्री चौधमल्लजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यमेयी
श्री गारुध्दजी महाराज
- (७) इटावा- (इतिष) ता २५-११-३६ का पत्र, स्थिरपदभूषित
भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज तथा प्रसिद्ध चक्रा श्री १००७
श्री सामागमलजी महाराज
- (८) जयपुर-ता २७-११-३६ का पत्र, समदाय क गौरवर्यक श्रांत-
स्वभापी श्री १००८ श्री पूज्य श्री मृगचन्दजी महाराज
- (९) अम्पाला-ता २०-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजापफेसरी श्री
१००८ श्री पूज्य श्री रामजी महाराज

- (१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.
 (११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ मुश्रावक श्रीयुत् माधवलालजी.



ता० २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांती में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी बन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछे आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मती मंगाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों हैं संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं जैन समाज में ऐसे विद्वानोंका गौरव बढे यही शुभ कामना है आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा ।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती



आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानि गणीजी श्री प्यारचन्दजी महाराजने इस पुस्तकको अतीव पसन्द की है ।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खचिन से लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-
तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूँ।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की
बास्तव में ऐसे उत्तम व सचके ममज्ञान योग्य ग्रन्थों की बहुत
आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा
सकते हैं—ये दोनों ग्रंथ बास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्र
काशसे यह समाज अमावास्या के घोर अंधकार में दीपावली का अनुभव
करती हुई महावीर के अमूल्य ध्वजों का पान करती हुई अपनी उन्नति
में अग्रसर होती रहेगी।



ता २९-११-३६

अम्याला (पंजाब)

पत्र आपका मिला श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी
गमजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया। आपकी मेजी हुई
पञ्चमस्कण्डा सूत्र तथा गृहिधर्मकन्यासूत्र की एक २ प्रति भी प्राप्त हुई।
दाना पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं।
ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों
से जैन तथा अजैन सचका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ
सराहनीय है।

आपका

शशिमूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हाई स्कूल

अम्याला शहर

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्ववारिधि, धैर्यवान् श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने मूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग मूत्रको टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक मूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्धहिन्दी अनुवाद होने से भगवान् निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है ।



वालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल मूत्रनी सस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरी लेवा जेवुं छे, वली करांचीना श्री संवे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा वजावी छे.



बम्बई शहरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है ।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित रत्न मुनिश्री समर्थमलजी महाराज श्री फराते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गमूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



श्री धीतरागाय नमः ॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जे
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणचन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवामी जैनाचार्य
न नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान
कर ताकि आप जैन समाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें और
आप चिर जीव हों ।

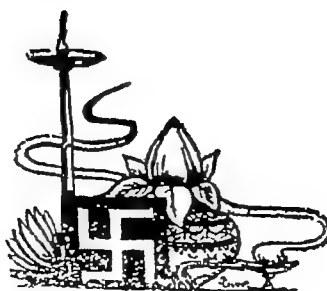
हम हैं आप के मुनि तीन
मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन

इतवारी बाजार
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कह मार्मिक स्थलोंको पढ़ा, पढ़ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तव में मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घर में होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न
मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



શ્રી દશવૈકલ્પિક સૂત્રનું સમ્મતિ પત્ર

અમલુ સધના મહાન આચાર્ય આગમવારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતન્ત્ર લેનાચાર્ય
પૂજ્યશ્રી આચાર્યમણી મહાશયે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મે તથા પંડિત મુનિ કેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ (જાગૈર
મારવાદલાલ) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ધાસીલાલજી મુનિ વિરચિત
સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સંહિત શ્રી દશવૈકલ્પિક સૂત્રની આચાર્યમણિમજી
ટીકાનું અવલોકન કર્યું આ ટીકા સુંદર બની છે તેમા પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ
સારી રીતે વિશેષભાવ લખીને સમજાવવામા આવેલ છે.

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ જુદિવાળાઓ માટે પરમ ઉપકાર કરવાળી
છે ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉદ્દેશ્ય કહેલ છે જે આધુનિક-
મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, દયામા પાપ સમજે છે તેમને
માટે અહિંસા શું વસ્તુ છે તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે વૃત્તિકારે
સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે આ વૃત્તિના અવલોકનથી
વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે

આ વૃત્તિમાં જોઈ બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત ભાષા
ગાવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદમંત્ર સુભાષણમય બનેલ છે

૨. ૧૩ છંદાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું એકજો વધારે શું
કહેવું આ ૧૧ | સમાજમા આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિ રત્નજી કોવું એ સનાતનું
અહોભાગ્ય છે આવા વિદ્વાન મુનિરત્નજીના કારણે સુસમાય—સુતેલો સમાજ
અને હૃદયપ્રમય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થયો
અમી વૃત્તિકારને વારંવાર મન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૬૦ શકાવન શુકલ
તેરસ મગધવાર
(અલ્હાબર સ્ટેડ)

કઈ
ઉવજાગ્ય જાણી
સુધી આચાર્યમો
પયનકો

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંતળકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદણ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલા હતા ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

✽

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારતુ જે કાર્ય થઈ રહ્યું તે કાર્ય જૈન સમાજ તેમા ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની જડને મજબુત કરવાવાળું છે

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશન્નીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભાગ લેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ ભગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

✽

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવરશ્રી ધામીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છત્રી સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમા હશે! નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારાધનમાં લીન હશે!

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને પંડિતજનોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે સાથે સાથે ટીકા વિનાના સુખ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણુતેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સારૂ છે એજ

આસો શુદ્ધ ૧૦, મંગળવાર તા ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઇચ્છતો,

દયા મુનિના પ્રણિપાત.

દરીયાપુરી સ પ્રદામના પંડિત રત્ન સાધય દલ મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી

વલ્લુપુર તા. ૧૬-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપદ શ્રીમદ્વર પંડિત રત્ન પૂજ્ય શ્રી ધારીલાલજી મહારાજ આદિ
મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે બધી અત્યંત આનંદ આપના
પ્રમશિત થયેલાં હેટલાક સૂત્રો બેમાં સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ
કરતી ટીકા પંડિતરત્નને સુમિય થઈ પડે તેવી છે સૂત્રપ્રકાશનનું કામ
ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને બધે આત્માઓને આત્મકથ્યાણ કરવામાં સાધનમૂલ
થાય એજ અર્થાર્થના.

શ્રી પંડિતરત્ન બાળપ્રજાચારી
પૂ. શ્રી સાધય દ મહારાજની
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના
પાશવજ્ઞ સ્વીકાર્યો.

*

તા. ૧૧-૫-૫૬

વીરમગમ

અચ્યમિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી સ્થાન્યદલ મહારાજના સ પ્રદામના
પ્રત્યક્ષ ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરચમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા. ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉક્ત.

ત આચાર્ય ધારીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રો લખાણ સુંદર
અને બધામાં થાય છે તે સાક્ષિ પંડિત મુનિશ્રી સમરચમલજી મહારાજ,
સમય આજ નળવાને કારણે સંપૂર્ણ બેઈ થકવા નથી છતાં જેટલું સાહિત્ય
બેયુ છે તે બહુ જ સાઈ અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને
અનુરૂપ લાગે છે આ સાક્ષિ દરેક મંદાણુ છોવાને વાચવા યોગ્ય છે આમાં
સ્થાનકવાસી સમાજની મહા પ્રજ્ઞવા અને દરસવાની દેહતા આજ્ઞાનુકૂળ છે
આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે

શ્રી દીશનસાલ પુષ્પીરાજ માણ
સુ ખીચન.

*

લી'બડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામા સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમ પદના અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમા પણ કરી રહ્યા છે તે માટે તેઓશ્રી અનેકશ ધન્યવાદના અધિકારી છે વદનીય છે, તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમા સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે —

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પડિત અપ્રમાદી સત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે. તેમા સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે. તેને પહોંચી વળવા માટે સાઈં સરખું ફડ જોઈએ એના માટે મારી એ સુચના છે કે:-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમા પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે વ્યાપારીઓ, ધધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે છતાં જો સભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે

આર્થિક અનુકુળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ મરલતાથી થઈ શકે પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમા એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમા વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાએ વિનંતી કરી અમદાવાદ પધારવા, અને ત્યાં અનુકુળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમા જામજોધપુરમા શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક

હરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી વાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કૃપાબુદ્ધારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે શાસનનાયક કેવ તેમના શરીરરક્તિને સચાકત અને લીધાંશુ રાખી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે એ અરુણ

આતુર્ગાંધ રક્ષણ, લીંબલી } લી
તાં ૨૦૧૦ માવજી વહ ૧૩ ગુરે } સદાનદી જૈનમુનિ હેમલાલજી

શ્રી વધુમાન સ પ્રદાયના પૂજ્ય શ્રી પુનમચ દ્રણ મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશ્વાસ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી વાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આનમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી મન્યવાદને પાત્ર છે તેમજ આગમો ઉપરનાં સ્વગત ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે આગમો ઉપરની તંમની સંસ્કૃતતીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ધર્મી જ સુંદર છે સંસ્કૃતસ્થાન્ય માધુર્ય તેમજ બહુકાર વગેરે ગુણોથી યુક્ત છે વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો ઉપાધ્યાયો વગેરેએ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતસ્થાન્યની કદર કરવી એઈએ અને ફરક પ્રકાશને સહકાર આપવો એઈએ

આવા મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી વાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે બહોલિક છે તેમજ આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે સ્થવાનુ ભત્રીચક્રામ શીલ સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા રાખે.

૧ મહાવાક

૨-૪-૫૬ રવિવાર
૧૫તિ

સુનિ પૂજ્ય દ્રણ

જા બાન ન પ્રદાયના મહાસતી શાસ્ત્રાભ્યાસ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શ્રી શાસ્ત્રાલભાઈ મનજીસલાહ

પ્રમુખ તાહેજ અખિલ ભારત ય્વેં સ્થાં જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

સુ. અમદાવાદ

અમે અને દવગુરનાં કૃપાએ ગુપ્તરૂપ છીએ વિ. માં આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી વાસીલાલજી મહારાજ તાહેજ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પંક્તિનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકકથામસત્ત, આચાર્યસૂત્ર, અનુસરોપપાતિકમસત્ત

દશવૈકલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયા તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયક છે તે વાચન ઘણું જ સુદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અઘાત પુરૂષાર્થે કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે

હવે સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના ભેદથી નિષ્કાલસ ભાવનાએ અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે માટે દરેક લબ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવાની સુદર તકને ચુકશે નહિ કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરપરાને પુઠીરૂપ સૂત્રો મળવા બહુ સુરકેલ છે. આ કાર્યને આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરાનું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ

લી શારદાબાઈ સ્વામી

ખલાત સપ્રદાય

*

ખરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ
સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધ ધુકા તા ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મગજલાલભાઈ

પ્રમુખ અ. ભ. સ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્ર ઉદ્ધાર સમિતિ

મું. રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગુ. ગુ.ના ભંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિઠાણા બંને સુખશાતામાં ખીરાજે છે, આપને સુચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ લાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલા સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલા તે સૂત્રો તમામ આદ્યોપાન્ત વાચ્યા મનન કર્યા અને વિચાર્યા છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હવે સમાન

આત્માએ જ્ઞાનકરણાઓથી આત્મરૂપ વાહીને વિકસિત કર્યો. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કેઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું જ્ઞાન ભવ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે

જ્યેષ્ઠ વિ. બસ્વાળા સપ્રધાયના વિદુષી
મહાસતીલ મૌઘીબાઈ સ્વામી
ના હસ્તાનુક્રમથી લી. જોડીદાસ અણ્ણેશળાઈ—પણુકા
સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ



અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન
પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સપ્રધાયના મુનિશ્રી બારીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને કિન્નીમાં ભાષાતરે કરવાના મહત્ત્વ વિકટ કાર્યમાં આપને થયેલા જ્ઞાનશાસ્ત્રીઓ જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયા છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધમાજથી હિંદી ભાષાઓના નિષ્ણાત છે, જો એમનો દુઃક પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે શાસ્ત્રોનું સપ્રધાન કરવામાં તેમને પોતાના, શિષ્ય વર્ગના અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોના સહયોગ મળ્યો છે, તે જોઈ મને ખાતર થયો સ્થાનકવાસી સપ્રધાયના અગ્રણી પંડિતોના સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના માર્ગને સરળ અને સિષ્ટ બનાવ્યું છે સ્થાનકવાસી સમાજના વિદ્વાન મહત્ત્વ જોઈ તે દિગ્ગજ મૂર્તિપૂજક શ્રેયોભર વળેર જૈનશાસ્ત્રના પ્રતિનિધિઓના મહત્ત્વ વિશિષ્ટતા આવતાં હું વિચારના ભય વગર કહી શકું પૂ. મહારાજને જ્ઞાનકવાસી સપ્રધાયના પ્રથમ છે જોવી મારી માન્યતા છે સંસ્કૃત સ્પષ્ટકરણ માત્ર આપવામાં આવ્યા છે ભાષા શુદ્ધ છે જોમ ક્ષામ્ભક કહી શકું છું, ગુજરાતી ભાષાતરે પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં જ્ઞાન અને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાતરને વાચનાલક્ષમાં અને કુટુંબોમાં વ્યાપી સહાય તે પ્રમાણે બનવા કરશે

પ્રતાપગજ વડોદરા
તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

કામદાર કેશવલાલ દિગ્ગજરામ
જોમ જો.

મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત ઋવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,

રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયા આ સૂત્રો ઉપર સસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યા છે સસ્કૃત ટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે આ સૂત્ર ત્રથોમા પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વતા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલા ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજી ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે બીજા ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે આ બધાંજ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રી આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ

પ્રો. રમણુલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેટ એવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણુલાલ શાહ

સોશીયા કોલેજ, મુંબઈ

*

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

ભગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પ મુનિશ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ મે જોયા

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાળુ જણાઈ આવે છે એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અબાણી નથી. આપણે બાણીએ હીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટિના છે તેની વસ્તુ ખરીર, આપણ અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, આટલા ગહન અને સર્વશ્રદ્ધા સૂત્રોનું ભાષ્યતર પૂ. ધાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટિના મુનિશ્રવને હાથે થાય છે તે આપણાં અઠોભાગ્ય છે. યત્નવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં ક્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી બાક છે એવે વખતે આવા વત્સવરૂપ આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલા સૂત્રોનું સરળ ભાષ્યમાં ભાષ્યતર દરેક જગતસુ મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક યર્ધ પડે તેમ છે જ્ઞાન અને જોનેતર, વિદ્યાન અને સાધારણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજાવું પડે તેવી સ્પષ્ટ, ડરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે મહારાજશ્રીને ક્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સકળાવેલા જોઈએ હીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કશ્પના કરી શકાય તેમ છે તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રી આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહ કાર મળ્યો છે અને આશા છે કે એ દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ જીવેલી શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો રસિકલાલ કસ્તુરચંદ માર્ધી
જેમ. જી. જેલ. જેલ. વી.
ધર્મ-પ્રસિદ્ધ કોલેજ
શબકોટ (સોરાપૂર)



મુખ્ય અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સલાહો વિનાસર દેવન્દ્રચંદ તથા સાધુ સંમેલનમાં મોકલાવેલ કરાવ

હાલ જે વખતે શ્રી. પ્રવેતાનર સ્થાનકવાસી જ્ઞાન સધ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત હીર્ષદ્વિધી પહેલી પોતાના મનજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદી અભિવેશમાં સર્વાનુમતે સાહિત્ય મત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે આ. બા. પ્રવે. સ્થા. જ્ઞાન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વજવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ ચર્ચ રહ્યું છે જેને પ્રધાનપદ્યાર્થી તથા પ્રચાર મત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે અને છેલ્લામા છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સમેલન તથા કોન્ફરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતની અને નાણાની-પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પ ર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિધ્યમા જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જોવા પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

(સ્થા જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

*

સ્વતંત્ર વિચારક અને નિરર લેખક ‘ જૈન સિદ્ધાંત ’ના તંત્રીશ્રી
શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમા ખોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમા મને લખેલું કે—

“ આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સપ્રદાયમા મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જોવામાં આવતા નથી લાખી તપાસને અતે મે મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી ચથાર્થ જ હોય એમા

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ધાસીલાલના બનાવેલાં સૂત્રો જોતા સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે હાથોડશાસનાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ધાસીલાલ મ. પાસેથી સંજોવી તે બસબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન ઝમણસધના આચાર્ય શ્રી આત્માત્મલ મહારાજે શ્રી ધાસીલાલ મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ધાસીલાલ મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાચકને સર્વને જોઈ સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આપુ સૂત્ર સરળતાથી સમજાય જાય છે.

કેટલાકને જોવો જામ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું કામ થઈ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ આ જામ તદ્દન ખોટો છે. બીજા કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાચકને પણ ધણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતની લોક ભાષામાં (અર્થ માગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. જોટલે સૂત્રો વાંચવા તેમજ સમજવામાં ધણી સરળ છે.

માટે કોઈપણ વાંચકને જોનો જામ હોય તો તે કાઢી નાખવો. અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને વકર નહિ. જોટલું જ નહિ પણ જરૂરી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવા.

સ્થાનકવાસીઓમા આ શ્રી સ્થા. નૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. નૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના ઉચ્ચા રિપોર્ટ પ્રમાણે બીજા છ સૂત્રો લખા ચેલ પછા છે. જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને કાણાગ સૂત્રો-લખાય છે તે પણ કાલ વખતમા તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો કાલે ધરવામા આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય જોમ ધિંધીએ છીએ અને સ્થા. બુધ્ધો સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમના સૂત્રો ધરમાં લાવે જોમ ધિંધીએ છીએ.

નૈન સિદ્ધાન્ત' પત્ર - મે ૧૯૫૫

શ્રુત ભક્તિ

(પૂઠ આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મં સાં ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર)

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તાં ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર ૫૦ મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધ, સ્વપર કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી, પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજોએ શ્રુત પરપરાએ સાચવી રાખ્યો શ્રુતપર-પરાથી સચવાતું જ્ઞાન ન્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે તે અર્ધ માગધી પાલી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે, પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે

જિનાગમ એ આપણા શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે એ આપણી આખો છે તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને મત્સ્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સહભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્ સ કલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાઓદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરખ વહેતી કરી છે આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે ? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે. અને તેઓ સ સારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે અને સ સાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતા મોક્ષ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે

આવા જ્ઞાન કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગળરો અને અન્ય ધર્મીઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ત્રય ગીતાના સેકડો નહિ પણ હજારો ટીકા ત્રયો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ

ભાષાઓમા ભાષાંતર કરી, તેને પડતર કરતા પછી ઘણી જોઈ કિમતે વેચી ધર્મ સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે મુસ્લિમ લોકો પછી તેમના પવિત્ર મનાતા ૩૫ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમા ભાષાંતર કરી સમાજમા પ્રચાર કરે છે આપણે પેસા પસ્નો મોઢ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવા જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાપ્તમ્યિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ સમિતિના નિયમા નુસાર રૂ. ૨૫૫૭ કરી સમીતીના સભ્ય બનવું જોઈએ ધાર્મિક અનેક ખાતાઓના સુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું - સ્પર્ધા પ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાક્યનું પાન કરવા પછી આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)



શ્રી. ન. ભા. શ્રવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખશ્રી વજેરે રાણુપુર પરમ પવિત્ર સૌત્રજૂની પુણ્ય ભૂમિ પર બ્યારથી શાત-શાસ્ત્રવિશારદ અમમાત્રિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજના પુનિત પગલા થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાભ કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના પાળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેજોશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમા તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમે સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે, મને તો સમલ્લખ છે કે સાધુજી ઠટે શુભસ્થાનકે હોય છે. પછી પૂજ્ય શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અમમત્ત બુદ્ધિસ્થાનકે જ રહે છે એવા અમમત્ત માત્ર પાવ-સાત નાધુજીએ જે ન્યાયકવાસી જૈનસમાજમા હોય તો સમાજનું શ્રેય થતા જરાએ વાર ન લાગે. સમાજના સ્થા. જૈન સમઘયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળદગી નીકળે. ૫ જુ વો દિન

૧) શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મારી જોકે નમ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધિ અને કાર્યપ્રણાલિકા સુવાનોને યશમાવે તેવી છે તેમને આમોઝામ વિકાસવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમા ઘણી શારીરિક-માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે બન્યાના આવકો ભક્તિ વાળા હેમ વાઙ્મનાં સગના વિષયી અલિપ્ત હોય એવા કેઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી ચક્રે જોના માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. બીજા કેઈ એવા સ્થળની અનુકૂળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમા યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. નકારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા કરી ચાહ આપુ છું ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશેજી બી. સદાનંદી જૈનસુનિ છેટાલાલજી

સમિતિના પ્રમુખ અને આદ્ય મુરખીશ્રી શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસનો દુકે પરિચય

*

શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસનો જન્મ ઈ. સ. ૧૯૦૧ ના ઓગસ્ટની ત્રીજી તારીખે તેમના મોમાળ ચોરવડોદરામાં થયો હતો.

વિદ્યાર્થી અવસ્થામાં જ એમનામાં રહેલી તીવ્ર બુદ્ધિ જુદી તરી આવતી હતી. ઈ. સ. ૧૯૧૬ માં અમદાવાદ કેન્દ્રમાંથી મેટ્રીક પાસ થનાર પ્રથમ દસ વિદ્યાર્થીઓમાંના તેઓ એક હતા. ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૯૨૩માં અર્થશાસ્ત્રનો વિષય લઈ તેઓ B. A થયા એ જમાનામાં બહુ થોડા ધનિક કુટુંબો ઉચ્ચ અભ્યાસમાં રસ લેતા હતા.

ત્રેમ્યુએટ થયા બાદ તુરંત જ એમના ઉપર ધધાની જવાબદારી આવી પડી. યુવાન વય, તિવ્ર બુદ્ધિ, વિશાળ વાચન અને મનને તેમને નવીજ દૃષ્ટિ આપી હતી અને તેમની સમક્ષ આવના ઉદ્યોગના અનેક વિકટ સવાલોને તેમણે બહુ કુશળતાથી ઉકેલવા માડ્યા. ૧૯૪૫ માં એ અમદાવાદ મિલ માલિક મહાશયના પ્રમુખ બન્યા હિંદની તેમજ ખાસ કરીને ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રનાં વેપારના પ્રાણ પ્રશ્નોના તળપદા અભ્યાસે મિલમાલિક મહાશયના પ્રમુખ તરીકેની કામગીરીને વધુ દીપાવી.

૧૯૪૮ થી હિંદી વેપારી મહામહાશયના તેઓ સભ્ય છે અને ૧૯૫૪-૫૫ અને ૧૯૫૫-૫૬ના વર્ષ માટેના દેશના આ સૌથી મોટા વેપારી મહામહાશયના તેઓ અનુક્રમે ઉપપ્રમુખ અને પ્રમુખ હતા આજે તો ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રને ખૂબજ ઉપયોગી નિવડેલી તેમની અસાધારણ શક્તિઓને દેશવ્યાપી ક્ષેત્ર મળ્યું છે.

૧૯૩૮-૩૯માં ઇન્ટરનેશનલ લેબર ઓર્ગેનિઝેશન (I. L. O.)માં ભાગ લેવા ગયેલ ભારતીય પ્રતિનિધિ મહાશયના તેઓ સરકાર તરફથી નિયુક્ત થયેલ સલાહકાર હતા ૧૯૪૬ માં અને ૧૯૪૮માં યુરોપ અને જાનીવા મુકામે ભરાયેલ I. L. O માં તેઓએ માલિકોના પ્રતિનિધિ તરીકે અગત્યનો ભાગ લીધો હતો.

સામાન્ય નિયમ છે કે શ્રી અને સરસ્વતીને બહુ સખધ હોતો નથી શ્રી શાંતિલાલ અને તેમનું કુટુંબ આમાં અપવાદરૂપ છે ધનપતિ હોવા છતાં એ સાહિત્ય અને સંસ્કારિતાના પૂજક છે એમની વિનમ્રતા અને સાદાઈ હજીએ

એ બાળવી રહ્યા છે અનેક શિક્ષણ સંસ્થાઓ માટે આજે પણ એ પોતાની અનેકવિધ પ્રવૃત્તિઓમાંથી સમય બચાવી લે છે, જોજ તેમના વિદ્યાપ્રેમને સચોટ પુરવો છે ઉદ્યોગ તો તેમને વારસામાં જ મળ્યો છે અને એ વારસાને તેમણે શોભાવ્યો છે

એમની દૃષ્ટિ આજના પ્રશ્નોને વૈજ્ઞાનિક રીતે હલવાની તો છે જ પણ આવતી કાલને પણ તેઓ એ જ વૈજ્ઞાનિક અને વ્યવહારિક દૃષ્ટિથી નિહાળવા હોય છે અને એટલે જ તો એમના સંચાલન તંત્રે ચાલતી ચાર મિલો કાપડ ઉદ્યોગમાં સુદૃઢ પ્રતિષ્ઠા જમાવી ચૂકેલ છે આ ઉપરાંત જુદી જુદી વ્યાપારી પ્રવૃત્તિઓ કરતી ઘણી કંપનીઓમાં તેઓ ડિરેક્ટર તરીકે સ્ત્રી યોગ્ય ભાગે દર્શન અને દેસ્વર્ણી આપી રહ્યા છે સૌરાષ્ટ્ર ક્ષેત્રને સીયલ ફેરવેશનનાં તેઓ ડિરેક્ટર છે સૌરાષ્ટ્ર મિલ માલિક મહાજમા તો તેઓ તેમની સ્થાપના થઈ ત્યારથી ઉઠા રસ દાખવે છે હજુ હમણાં સુધી સતત પાંચ પાંચ વર્ષ સુધી તેના પ્રમુખપદે સ્ત્રી તેમણે સૌરાષ્ટ્રના આ ઉદ્યોગની કશી સેવાઓ ખરેખર અસિનદનને યોગ્ય છે લેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના તેઓ પ્રમુખ છે અને તેની પ્રવૃત્તિમાં ઘણા ઉત્સાહથી હમેશા મદદ કરી રહ્યા છે આ ઉપરાંત અનેક લેન ને લેનેતર સામાજિક સંસ્થાઓને તેઓ સેવાઓ આપી રહ્યા છે



આદ્ય મુરબીશ્રી ભાણુવડનિવાસી શેઠ હરખચદ કાલીદાસ વારીયાનું જીવનચરિત્ર

આ સ્થાને ૩ ૬૦૦૦) છ હજાર જેવી રકમનુ વાતવાતમાં દાન આપનાર સ્વ૦ શ્રીમાન્ હરખચદ કાલીદાસ વારીયા ભાણુવડનિવાસીનુ દુક જીવનચરિત્ર અત્રે આપવા પ્રયાસ કરીએ છીએ સૂત્રમા તેઓશ્રીનો ફેટો આપવા માટે તેઓશ્રીની હયાતીમાં વાત થયેલ, પરંતુ તેઓ આ જાતની જાહેરાતથી વિરુદ્ધ હતા. તેમના અવસાન બાદ તેમના સુપુત્રો આગળ પણ ફેટાની માગણી કરી પરંતુ તેઓએ પણ તેમના પૂં પિતાજીના પગલે ચાલી ફેટો આપવામાં નારાજ બતાવી. એટલે તેઓશ્રીનું દુક જીવન આપીએ છીએ. આશા છે કે આવા ઉદાર અને વિચારશીલ મહાનુભાવના જીવનમાંથી વાચકોને ઘણું મળી રહેશે.

જન્મસ્થાન—ઘડેચી (ઓખામડળ) તા. ૨૫-૧૧-૧૮૮૫

પિતાનું નામ—વારીયા કાલીદાસ મેઘજીભાઈ

માતાનું નામ—કેસરબાઈ

અભ્યાસ—ભાણુવડ અને પોરબંદરમાં રહી ફક્ત ગુજરાતી જરૂરત પૂરતું ભણ્યા

પરદેશગમન—માત્ર બાર વર્ષની વયે તેમના કાકા નથુભાઈ મેઘજીને ત્યાં જોલા ખાતે અનુભવ મેળવવા રહ્યા ફરમ્યાન જોલા (શ્રી સોમાલીલેન્ડ) જીબુટી (ફ્રેન્ચ સોમાલીલેન્ડ) એડન અને ઇથીઓપીઆ તરફ પણ અનુભવ મેળવ્યો.

પ્રથમ ભાગીદારી—બુલહારમાં શ્રી. કાલીદાસ વેલજીના ભાગમાં ભળ્યા પરંતુ સવત ૧૯૬૭માં તે દુકાન વીટી લીધી અને લગ્ન માટે સ્વદેશ આવ્યા.

લગ્ન—સવત ૧૯૬૭ માં તેમના લગ્ન બાબુના ગામ ગુંદા સુકામે ખૂબ જ પ્રતિષ્ઠિત કુટુંબ મહેતા સુદરજી પ્રેમજીના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભોવાન સુદરજીનાં સુપુત્રી મણીબેન સાથે થયાં

પરિવાર—અત્યાદે તેમના પાંચે પુત્રો શ્રી લાલચંદભાઈ, જયચંદ્રભાઈ, નગિનદાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ અને વલ્લભદાસભાઈ એ પાંચે ભાઈઓ તેઓશ્રીનો ખડોજો વ્યવહાર અને વ્યાપાર ખરાબર સુયોગ્ય રીતે સંભાળી રહ્યા છે

ભાગીદારી—લગ્ન પછી સ ૧૯૬૮ માં પાછા પરદેશગમન થયું શરૂમાં વસનભૂ નથુભાઈ ડ્રા ના નામથી પેદી ચાલતી હતી તેમાં તેઓ ભાગમાં જાળ્યા. તેમાં શ્રી વારીયા નથુભાઈ મેઘભૂ, શ્રી વારીયા નથુભાઈ મુળભૂ, શ્રી વારીયા હરખચંદ કાલીદાસ, ફાફરીયા કેવલ જીવાભાઈ તથા શા વસનભૂ હીરજીભાઈ એમ પાંચ ભાગીદાર હતા તે પેદી સવત ૧૯૭૨ માં જુદી થઈ અને શ્રી વસનભૂ હીરજી કે જે સ્વખર્ચે આમળ વધ્યા હતા તેમજો પોતાની પેદી શા વસનભૂ હીરજીના નામથી જુદી કરી અને શા નથુભાઈ મુળજીના નામથી પેદી ખેલવામાં વારીયા નથુભાઈ મુળજી જેટલો જ હીસ્સો હરખચંદભાઈના હતો.

ઉપરની પેદી—ઉપરોક્ત નામથી જોટલે કે શા નથુભાઈ મુળજીના નામથી જે પેદી શરૂ થઈ તેના પ્રાણસમા શ્રીમુત્ત હરખચંદભાઈ તેમના જીવનના અત સુધી રહ્યા હતા. અત્યારે પણ તે નામને શ્રી નથુભાઈ મુળજી તેમજ શ્રી હરખચંદ કાલીદાસના વારસો ઝળહળાવી રહ્યા છે. ફરજના દેશાવરોમાં એકબાઈ લગભગ ૪૫ વર્ષ થયા કામકાજ ચાલે છે. તેના સંચાલનની દોર શ્રી હરખચંદભાઈના હાથમાં અત સુધી રહી હતી અને તેઓશ્રીના અવસાન પછી પણ તેમના દોરેલા ચીલા ઉપર પેદીને અવહાર સત્તા રીતે અત્યારે પણ ચાલે છે. અત્યારના મુકાનીઓએ પોતાના પૂર્વજ શ્રી નથુભાઈ તથા શ્રી હરખચંદભાઈના અકિત કરેલ માજે પોતાની સફર નાણુ રાખી છે અને તે સદાયે અવિચળ રહે તેવું આશિર્વાન કોઈ પણ દિન્દી ઉનાચાં નિખા રહી શકે નહીં તેવી ઉત્તમ પ્રપત્યાં પડી છે અને તે નરું સત્ય જ છે.

ની રાત—વર્ષો થયાં એકબાઈ બીજને સંચાલન હોવા છતાં એક હ સોદામતની જેમ નથુભાઈ મુળજીની પેદી ઉત્તરોત્તર કુલવી ની રહી છે બાપરી આં અને ઇજ્જતનો એ નાદર નમુને પણ એ / પીર ગભીરપણે પોતાનું કાર્ય ધપાવ્યે જાય છે એકબાઈ લગભગ ૫૫ થી સદી થયા ચાલતી આ પેદીને રજા માત્ર ૨૫ વામ્યો નથી તે તો સૌ કોઈ જાણે છે અને શાજ નથુભાઈ મુળજીની પુરા પ્રી પેદી માટે આજે પ્રત્યેક દિન્દી અભિમાન વધી શકે છે તેમાં શ્રી નથુભાઈ વારીયાનું ધર્મપ્રધાનપણું અને શ્રી હરખચંદભાઈનું ફરદોશીપણું કાર્યપ્રજ્ઞાઓની ઉત્તમતા અને એક નિષ્ઠા મુજબ નજાય.

વાંચન અને મનન—ઉપરની વાતો તો તેમના વ્યાપારી જીવનની સંક-
ળતા અને એક નાનામા નાની વ્યક્તિ આગળ કઈ રીતે વધી શકે છે
તેનો આછો ખ્યાલ આપવા પૂરતી થઈ, ત્યારે તેની ખીજ એક ખાસ
બાબત છે અતિ સામાન્ય અભ્યાસ પર તુ સ્વાતુલવે મેળવેલ જ્ઞાનસિદ્ધિ. જે
કાળમાં અણુખેડાયેલા દેશોમાં આવવા જવાના સાધનો પણ ન હતાં,
એડન સુધીની મુસાફરી પછી જેલા બરખરા જવામાં નાના વહાણોથી
સફર થતી, જીપ્સીથી ઇથોપિયા જવામાં દ્વીરદ્વિપ પછી (બગલ) ખચ્ચરો
ઉપર અને પગપાળા મુસાફરી થતી. દેશો બધા ખુબ જ જગલી
અવસ્થામાં હતા તેવા યુગમાં હિન્મત હાર્યા વિના આંગળીને વેઢ
ગણાય તેટલા હિન્દીઓ વ્યાપારમાં આગળ વધ્યા હતા તે યુગમાં શ્રી
હરખચદલાઈ હતા. ખુબ જ અધકારમાંથી પ્રકાશ મેળવવાનો હતો.
અત્યારે ઇથોપિયાના પાટનગર આડીસ અબાબા જવા માટે Air રસ્તે
૧૦ થી ૧૨ કલાકમાં પહોંચાય છે ત્યારે તે જમાનામાં આગમોટ,
વહાણ ખડખડપાચમ જેવી રેલ્વે અને તે પછી ખચ્ચરો ઉપર અને
થોડુંક પગપાળા અગર તો ગધેડા ઉપર પણ સફર કરવી પડતી. જુનો
જમાનો હતો એટલે હિન્દુ તરિકેનો ધર્મ જાળવવામાં પણ લોકો
ચુસ્ત હતા, કોઈનું અડેલું ખવાય નહીં રસોઈ તૈયાર હોય પણ એક
સોમાલી કે આરબ અગર ઇથોપિયનનો હાથ અડકી બંધ
એટલે ખાવાનું તેને આપી દઈ કડાકા કરવા પડે અગર તો પલાળેલા
ચણા કે મકાઈ ખાઈને ગુજરો કરવો પડે તેવા જમાનામાં શ્રી હર-
ખચદલાઈએ ખુબ જ ધધાકિય સફળતા મેળવી હતી તે સામાન્ય
વાત તો નથી જ, અને પોતે ખુબ જ ઓછું ભણ્યા હોવા છતાં લઘુ-
તર કરતા ગણતર તેઓમાં ઘણું હતું. સાહિત્ય અને તે પણ ધાર્મિક
અને ગુજરાતી શિષ્ટ સાહિત્યનું વાચન મનન એટલું બધું તેઓએ
કરેલું કે પોતાનો અભ્યાસ બહુ જ ઓછો છે એમ તેઓ ખુલાસો કરે
ત્યારે જ ખમર પડે, અજાણ્યા માણસને તો તેમનું અત્રે જ્ઞાન પણ સાઈ
હશે તેમ લાગતું વ્યાપારી તાર લખવા ઓછા શબ્દોમાં ઘણું સમજાવી
દેવું ઉપરાત અત્રે જ પત્ર વ્યવહારના બહારથી આવતા પત્રો આટીધુટી
સહિત હોય તો પણ ચચેચ રીતે સમજી લેવામાં તેઓ એટલા બધા
પારગત થઈ ગયેલા કે જોનારને તેમની શક્તિ ઉપર માન થઈ જતું, અને
તેઓ નિખાલસ ભાવથી જ્યારે કહેતા કે હું તો માત્ર ગુજરાતી ચાર પાંચ
ચોપડી ભણ્યો છું એમ વાત થતી ત્યારે તે માન અનેકગણું વધી જતું.

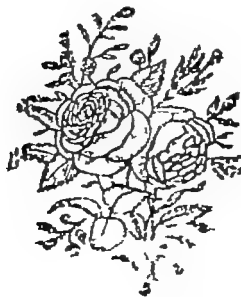
અભ્યાસી—ધાર્મિક ઉદ્યમાં ઉડુ જ્ઞાન તેમણે વાંચનથી મેળવેલું દેશ
પરદેશની વાતો થતી હોય ત્યારે તેમના આગળ પ્રખર અભ્યાસીઓ
પણ અંખા પડતા, વર્તમાન પત્રોનો શોખ તેમનો અબોઠ હતો દેશ
પરદેશના નાણાકિમ વહેવાર અને હુજિયામણની વાતો સામળીએ
ત્યારે તેમના જ્ઞાનના અગ્રધપણની સાંભળનારને અતિ ઉત્તમ છાપ પડતી

ધાર્મિક—ધાર્મિક અભ્યાસ તેમને જોટલો બધો બહોળો હતો કે તેમના
આગળથી રાજ્ય અવનવું બાંધવા મળતું હરેક ધર્મનો અભ્યાસ તેમણે
છાસાવૃત્તિથી કર્યો હતો. ધર્મ તેઓ ચુસ્ત સ્થાનકવાસી શ્વેતાંબરી
ઘેન હતા છતાં ધર્મોપવાનો તેમનામાં અથ પણ ન હતો. માફે જોટલું
સાફે એમ નહીં પણ સાફે જોટલું માફે એમ માનવા તેથી કદામહી
પણ તેમનામાં જનમ્યુ જ ન હતું. ઘેન ધર્મના હરેક શીરકા ઉપર તેમને
માન હતું. શ્વેતાંબર મંદિરમાં મિંદાબોના વરણાઓમાં તેઓ
આનંદ અને ઉત્સાહથી જતા, પ્રસંગ આવે ભાર્યારો નભાવવા અવ
હાડપણનો ઉપયોગ કરી દેશસરમાં થી બોલવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે
પણ તેઓ ઉત્સાહથી બોલતા. વરણામાં પોતાના ધસ્તી પુત્રવધુઓને
કળશ લેવડાવતા તેમને અનેશ આનંદ મળતો, ઘેન ધર્મના હરેક શીર
કાઓની જોડવાના તેઓ પ્રખર ચાહક હતા છેલ્લે છેલ્લે સૌરાષ્ટ્રમાં ઘેન
શ્વેતાંબર તેરાપથી સાધુઓ આવતા અને એમને સૌરાષ્ટ્રના ઘેનો અને
ઘેન સાધુઓ તેરાપથી સાધુને સ્થાન અને આહારપાણી ન આપવા તેઓ
પ્રયાસ ભેર ચોરથી કરતા તે બાબતને પોતે આકપણ માનતા અને
પોતાના ઘેર તેરાપથી સાધુઓને માનથી બોલતી આપતા સમાજથી જસ પણ
હસ્તા નહીં. ‘વિચારશેહ તો હરેક જગ્યાએ બુદ્ધિવાદી લોકોમાં હોય મુખાને
વિચારશેહ શાનો ? આમ તેઓ કહેતા પરંતુ એવા વિચારશેહને લઈને
સાધુ અને તે પણ પરદેશી સાધુઓનું આપમાન કરવું તેમાં માનવતા
ક્યા રહી ? ઘેનત્વ ક્યા રહ્યું ? તેમ તેઓએ બામનજરમાં એક વખત
કહેલું તે મને બસબર યાદ છે

પ્રેમાળ—જસત્તમ ખજર તો જુક હશે. આચરનાર તરફ તેમને
ધણે જ શાવ હતો એવે ઉજ્જતાથી આવા લોકોની ખબર લઈ
નાખતા છતાં તેનું હિલ દુભાન્યુ તે ઠીક ન કર્યું તેમ માની તે જ
અક્તિ સામે પ્રેમ અને મમત્વથી વાતો કરતા બીજાનું આજ્ઞ
એમ તેઓ ખરેખર રાખતા તેમની આજમા પ્રેમનું અમૂલ ભારો

ભાર ભર્યું હતું. પોતાને ત્યાં નોકરી કરી ગએલ મુનિમ કે કોઈ પણ વ્યક્તિ કમાણી કરીને ખુબ જ આગળ આવે, સારા અને સસ્કારી થાય વ્યવહારમાં સવાયા થાય તેને ત્યાં લગ્ન પ્રસંગ હોય અગર તો સારામાં સારા મકાનો તેણે કર્યા હોય તેવા પ્રસંગે જવાનું થાય ત્યારે તેમના આનંદનો અવધી થઈ જતો. તે વખતે તેઓની આખોનું અમૃત જેમણે નજરોનજર જોયું હશે તે તેમને જીવનભર નહીં ભૂલે. આવી એક મહાન વિભૂતિના જીવનનો ટુક સાર જ આપી શકાય સાગોપાગ જીવન તો કયાથી લખાય ?

કાળ—જનમ્યુ તે જવાનું જ તે કુદરતનો ક્રમ છે તેને આધીન તો સારા નરસા દરેકને થયું જ પડે સંવત ૨૦૦૭માં તેઓશ્રી ૬૮ વર્ષનું આયુષ્ય લોગવી ક્ષણભગુર દેહને છોડી ગયેલા પરંતુ તેમની સુવાસ સદાય પ્રસરતી જ રહેવાની ભાણુવડ જેવડા નાનકડા ગામમાં અને આસપાસના ગામોમાં જ્યાં જ્યાં તેઓ ગએલા અગર તો તેમનું કાર્યક્ષેત્ર હતું ત્યાં ત્યાં તેમના અવસાનથી સન્નાટો છાઈ ગયેલો. એમનું મૃત્યુ વીશ વર્ષના કંધોતરનો શોક હોય તેવો શોક સર્વત્ર આપતું ગયેલું નામ ઠામના લોભ વિના કરેલા તેમનાં ગુપ્ત દાનો એટલા બધા હતા કે તેમના જવાથી નાના મોટા દરેકને એકસરખી ખોટ લાગતી હતી છતાં તેઓ જીવતર જીવી ગયા આવું ધન્ય જીવન અને ધન્ય મૃત્યુ જોઈને આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધરવું તે કરતા તેમના જેવા થવાના પ્રયત્નો કરવા અને તેમના અમર આત્માની શાન્તિ માટે પ્રાર્થના કર્યા સિવાય બીજો માર્ગ જ કયા છે ? ૐ શાન્તિ ! શાન્તિ ! ! શાન્તિ ! ! !



આદ્ય સુરજીવી કોઠારી હરજોવીદલાઈ જે ચ દનો દુક પરિચય

*

પુ. મી ૧૦૦૮ ધાસીલાલજી નજાતજી રાજકોટ પધારતા પ્રાત સ્મરણીય સ્તવનાવલી સજકોટના રહીય ગુજ ધાવક તૃતધારી જેથદ અનતમર કોઠારીના સુપુત્ર હરજોવીદ કાકા તરફથી ૨૦૦૩ ના ઉદયવામા આવે અને તે હિંદભરમા બહોર મૂકી તેને ઉપયોગ હાત સર્વ લેન લેનેતર કરી રહેત છે. કાકા રાજકોટમા જ નહિ પણ સૌરાષ્ટ્ર, કચ્છ, ગુજરાત, મુંબઈ, કિસ્તી મુખી એક બલોઠ ઉત્સાહી પુરે છે એમને પ્રભા અને શાવ ઉપર ધણો જ સારો પ્રભાવ છે વેસ્નઈ ઈ પ્રિયા સ્ટેટ એલન્સી અને ગુજરાત સ્ટેટસ મહીકાકા સાબરકાંઠા બનાસકાંઠામાં રેસીડેન્સીમા પણ કાકા પ્રત્યે ધણો જ સારો ભાવ છે. તેઓને ધર્મ પ્રત્યે ધણી જ સારી ધમય હોઈ બનત ખર્ચ પોતાના પર આમલે ધર્મ ખ્યાન માટે પાંધશ્યાગા બધાવી છે તેમજ આજી નહને કિનારે વિશાળ વ્યાખ્યાન ભુવન હોલ બે નાગને પાન હવર માલુસા વ્યાખ્યાન સાબળી શકે તેવો બધાવેલ છે ઉદાર દિલના સખી માલુસ છે કોઈ પણ જરીબ ગુન્હાહીત માલુસ દાઢ માગવા આવે તો તરત જ બનતા ઉપાયે તેમને મદદ આપવા એવીસ કલાક તૈયાર રહે છે કાકાનું કુટુંબ પણ ધર્મજી ધર્મિષ્ઠ છે. તેમના ધર્મપત્નિ શ્રીમતી અખડ ત્રીભાગ્યવતી રૂકમણીબેન વહેવારદક્ષ પ્રેમાગ્રુ અને પૂજ્ય ધર્મીમા છે સાધુ, સાધ્વી પ્રત્યે તથા દરેક કુટુંબ સભ્યન સ્નેહી અને સ્વધર્મીઓ મહેમાનો સાથે ધણો જ સારો ઉચિત વહેવાર રાખવામા પૂર્ણ નિમગ્ન છે નિત્ય પોતાની ધર્મ પરચલુતા પ્રત્યે જ વફાદાર રહે છે

પૂ. ધાસીલાલજી મહારાજ આદી ધાણા છે (સમીરસુનિ, કનેલાલાલ સુનિ દેવસુનિ, તપસ્વી માંગીલાલ, મદનલાલ) એવાટથી હામનગરના સ્થીત હમો દરબારના આમલથી પાલનપુર નહીં રોકાતા તેમણે ચિકીતર ચારૂ ક્યો, અને મોરબી મુકામે તપસ્વી મદનલાલજી અને માંગીલાલજીની ૭૧ ઉપવાસની તપશ્ચર્યા ચાતુ માસમાં ઘમેલી જે પ્રસંગે સજકોટથી હરજોવીદકાકા કુટુંબ સહિત એકઠા બન્ટમીને હીવસે દર્શનાર્થે આવ્યા અને રાજકોટ પધારવાની પિનતી કરી. અને નવેમ્બર ૧૯૪૬ મા ધાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધાર્યા. કાકાના વ્યાખ્યાન ભુવનમાં બીરાલ્યા બને તપસ્વીજીએ માસખમણની તપશ્ચર્યા કરી. સ્થાનિક રાજકોટ સકલ સુધે ધણોજ ભક્તિભાવ બતાવ્યો. અને રતાગઢ એકાના સ્થીય જવારલાલજી હાઈ બાંદમલજી બહારીની ૨૦૦૨ તા. ૨૭-૧-૪૭ના રોજ દીક્ષા વસ તપશ્ચર્યાને

દીવસે હોવાથી સંઘમાં વધારે ઉત્સાહ આનંદ આવ્યો. મહાસુદિ એકમથી પાંચમ સુધી ૬ વરઘોડાઓ જુદે જુદે ઠેકાણેથી ચડ્યા. મહા સુદી ૪ ના દિવસે કાકાને ઘેરથી દીક્ષા ઉત્સવનો વરઘોડો રાજકોટ ઠાકોર સાહેબ પ્રધુમનસિંહજી અને કુ શ્રી બનેસિંહજીની સંપૂર્ણ મદદથી રાજેશ્રીના ઠાંઠને પણ વટાવી જાય તે રીતે સરકારી અને સ્ટેટ જેન્ડ પોલીસ ઘોડેસ્વાર ગાડીઘોડા મોટરો તથા હાલરો જૈન જૈનેતર માનવમેદની સાથે આખા શહેર સદરના રસ્તા પર ફર્યો હતો. પાંચમના દિવસે તપગચ્છના ચાદીના રથમાં દીક્ષાર્થીને બેસાડી ૪ ચાર બેલ જોડેલ રથને કાકા પોતે સારથી બની હાકતા હતા બને દીવસે સોના રૂપાનાં કુલ તથા પૈસા દિક્ષીત ઉડાવી રહેલ હતા ઠેકાણે ઠેકાણે પોલીસો ગોઠવવામાં આવી હતી આ સરઘસ શહેર સદરમાં ફરી જુબીલી બાગમાં આવ્યું અને દસ હજાર માણુ-સોની હાજરીમા પૂઠ શ્રી ઘાસીલાલજીની જેનેશ્રાય નીચે દીક્ષા આપવામા આવી તે પ્રસંગે શાંતિ જળવાયેલી આ પ્રસંગે બને દીવસોએ ફેાટાઓ તથા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કમિટિના ફેાટાઓ લેવામાં આવ્યા અને ૩૦-૧-૪૭ના દીવસે શાસ્ત્રોદ્ધારની મિટીંગ મળી જેમા કાકા તરફથી સૂત્રને માટે રૂપીઆ પાંચ હજારની ભેટ મળી તે ઉપરાંત પ્રસંગોપાત સૂત્ર માટે જુદી ભેટ રોકડી રકમની આપવામા આવી છે તેમજ જીવહયાના પ્રખર હિમાયતી પૂઠ ૧૦૦૮ જેઠમલજી મઠ ની નેશ્રાય નીચે તન મન ધનથી જીવહયાનુ કાર્ય કરે છે અને જીવહયાનું પત્ર પોતાને ખર્ચે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી હિંદલરમા તેમજ યુરોપ અમેરીકા આફ્રીકામાં મોકલે છે હાલ પોતે સેવાલાવી કાર્યની પ્રવૃત્તિ કાયમ કર્યા કરે છે.

રાજકોટની ફ્લોર મીલોના ઓનરરી પ્રમુખ : જૈન બોર્ડીંગના ઓનરરી કાર્યકર્તા તથા જીવહયા મહાના મત્રી અને S P C A ના મત્રી, રાજકોટ શહેરી મહાના સેક્રેટરી તરીકે ઓનરરી સેવા કરી દરેકને પોતાની સેવાનો સાથ આપવામાં તન મન ધનથી કોઈની પણ સેવા કરવામા કાયમ તત્પર રહે છે

આદ્ય સુરજીવીશી મહુમ ધારશીભાઈ જીવનભાઈનો હૃદય પરિચય

મરહુમ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ શાહ, જેનો જ્યોત્સવ જીવનપ્રેસ સાથે આ સંકલ્પી શરૂઆતથી સંબંધ, પુનઃ સાતે દીવીકનના જુદા જુદા સ્થળોના ગુનામાં ગુના અને અગ્રગણ્ય એજન્ટ તરીકે બાણીયા છે તેનો જ મ કાઠીયાવાડમાં પીપળીયા ગામમાં થયેલ, માત્ર પ્રાથમિક કેળવણી લઈ, ૧૧ વર્ષની નાની ઉંમરે આગળ વધવાની ધનશ સાથે, માત્ર ખીસ્તમાં ૨૩ જેટલી નજીવી રકમ સાથે વતન છોડ્યું. મુંબઈ આવ્યા બનજી નયુભાઈની પેઢીમાં જોડીયા યોગ તરીકે નોકરી લીધી, ત્યાં ઉત્તરોત્તર ફરક કામમાં ખત સખી સતોત આપતાં તેમને પુનઃ મોકલવામાં આવ્યા. પુનઃથી કર માલા આવી ખમ્મ ઉપર તેલ ઉપડી ફેરી પણ કરી અને ત્યાંના સબ એજન્ટોને એકદમ પ્રમાણીકપણે સખત કામ બતાવી, કરમાલા ગામમાં તેલની સબડીલર-શીપ પ્રાપ્ત કરી ખીરે ખીરે તે જ પ્રમાણે મહેનત વાહુ રાખતા ૧૯૩૧માં જ્યારે બમશિલ અને એસ. વા. જો. સી વચ્ચે ભાવની ફરીકાઈ ઉપડી ત્યારે પોતાની સતત સેવા બતાવી બમશિલ પાસેથી ઘડીયાલ બક્ષીસ મેળવી અને તે લાઈનના તમામ કાર્યવાહકોની આહુના પ્રાપ્ત કરી.

ખીરે ખીરે પોતાની ખતથી તેવી જ એજન્સીઓ લીપ્ટન કુલ, લીમેન્ટ કુલ, આઈ સી. આઈ વીએરેની પણ મેળવી પોતાના વ્યાપારની સારી જમાવટ કરી.

સોલાપુર કીસ્ટ્રીકટમાં સારા જાબરૂદાર શહેરી તરિકે વગ તેમજ આહુના મેળવી અને લોકસેવા પણ સાથેસાથ વાહુ રાખી કરમાલા મ્યુનિસિપલ પ્રેસીડન્ટ થયા સોલાપુર કીસ્ટ્રીકટમાં દેશકિતના અનેક કામોમાં વન, મન, ધનથી સારી સેવા બતાવી.

તેજુ ખાનગી જીવન પણ બહુ સાદું હોવાથી જમા તેને આહુતા અને ધધામાં સાથે લાભ મળ્યો અને તે જ પ્રમાણે સેવાના તથા ધર્મોદાના અનેક કાર્યોના સારી રકમો વાપરી.

પોતાના કુટુંબના વજ તરીકે પણ કુટુંબીજનો, સગા સબ ખીઓને ફરક રીતે માર્ગદર્શન આપી ગુલા ગુલા ધધા તેમજ એજન્સીઓ વિજેર મેળવી સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરવામાં બહુ પરિશ્રમ લીધો.

યાત્રિક જેતીની પ્રગતીના કામ સર વિલાયત જઈ આવ્યા, ખમેરીકા જવા પણ ધારણા હતી ત્યાં લઈને ૧૪-૭-૪૬ના રોજ હુલ્લખાઈ પડી જતાં સ્વર્ગવાસ કર્યો. તેમની પાછળ બહોળું કુટુંબ, ધણાં સગાં તેમજ સ્નેહીઓ મૂકી ગયેલ છે. જેઓ સર્વને પોતાની મીઠી ચાહતીરી મુકી જીવનનું સાચું કરી ગયેલ છે.

॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्ययनों की विषयानुक्रमणिका ॥

(द्वितीय अध्ययन-प्रथम उद्देश)

| विषय | पृष्ठाङ्क |
|---|-----------|
| १ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । | १-३ |
| २ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । | ४-५ |
| ३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि-कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन । | ६-२८ |
| ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । | २९ |
| ५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है - इसका वर्णन । | ३०-५६ |
| ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । | ५७ |
| ७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है - उसका वर्णन । | ५८-७२ |
| ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । | ७२-७३ |
| ९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम-पालन में मुहूर्तमात्र भी प्रमाद न करे । | ७४-८६ |
| १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । | ८७ |
| ११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन । | ८८-९५ |
| १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । | ९६ |
| १३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक-सम्बन्धी और परलोक-सम्बन्धी दुःखों से वचाने में समर्थ नहीं हैं । | ९६-९७ |
| १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । | ९८ |
| १५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं । | ९९-१०० |

विषय

पृष्ठांक

- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र। १००
- १७ वृद्धावस्थामें कोई रसक नहीं होता और बाल्यावस्था में पराधीन होने के कारण दुःस्वप्न ही है—ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपात्रन का योग्य अवसर समझना चाहिये। १०१-१२२
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। १२२
- १९ वार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्र्यानुष्ठानमें मग्न हो जाना चाहिये। १२३-१२७
- ॥ इति प्रथमोद्देशः ॥



॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धमतिपादन। १२८
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १२९-१३०
- ३ संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि समयविषयक अतिको वृत्त कर क्षणमात्रमें मुक्त हो जाता है। १३१-१३७
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १३८
- ५ निनाशा से परिपूर्ण साधु मुक्तिमागी नहीं होता। १३९-१४४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १४५
- ७ 'अनगार' कौन कहलाते हैं। १४६-१४४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १४४
- ९ विनयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहास दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन। १४५-१४९
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। १४९
- ११ संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति। १६०-१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥



॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन । १६३
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । १६४
- ३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से हर्ष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये । १६५-१७०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । १७१
- ५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये । प्राणियों के अहित करनेवालों को दुरवस्था का वर्णन । १७२-१८६
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । १८६
- ७ उच्चकुलाभिमानि मनुष्य प्राणियोंका अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत-घर-धनधान्य-स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है । १८७-१९४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । १९४
- ९ असंयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण । १९५-२०६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २०७
- ११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन । २०७-२१४
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । २१४-२१५
- १३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है । २१५-२२१
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र । २२१
- १५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान् महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है—इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन । २२२-२२६
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र । २२७

विषय

पृष्ठांक

१७ पश्यक-तीर्थकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बास-अध्वानी जीव तो नरक आदि गति के भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश-समाप्ति । २२७-२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥



॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २३६
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २३७-२३८
- ३ बुद्धावस्था में ही आसक्तासादि रोग होते हैं, ऐसी बात नहीं ! ये तो युवावस्था में भी होते हैं । उस रोगावस्था में उस प्राणी का रक्षक कोई सगा-सम्बन्धी नहीं होता है, और न बही प्राणी उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे-सम्बन्धीका रक्षक हो सकता है । २३८-२४०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २४१
- ५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन । २४१-२४२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २४२-२४३
- ७ भोगसाधन धन विनश्यत है, अतः भोगकी स्पृहा और भागक विचार का भी परि त्याग कर देना चाहिये । २४३-२४५
- ८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र । २४६
- ९ 'कामभोग का आसेवन महा अयस्थान है' ऐसा जानकर अन्तःकार क्या करे ? इसका उपदेश तथा उद्देश-समाप्ति । २४६-२४९

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्वन्धप्रतिपादन । २६२-२६४
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २६४
- ३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन । २६५-२६८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २६९
- ५ भविष्य में उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये । २६९-२७२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २७३
- ७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये । २७३-२७५
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । २७६
- ९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन । २७६-२८३
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २८३
- ११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये । २८४
- १२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र । २८५
- १३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन । २८५-२९१
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । २९१
- १५ श्रुतचारित्र्य रूप इस मार्गको आर्योंने प्रवेदित किया है । इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्म से उपलब्ध न हो वैसा करना चाहिये । २९१-२९२
- १६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । २९२
- १७ हिरण्य-सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुःखलङ्घ्य है । इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन । २९३-२९९
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । २९९

विषय

- १९ ज्ञानमेवमुक्त मुनिका वर्णन । २९९-३०७
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३०७
- २१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिय; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और घैर बढ़ा नवाछा होता है। वह अपनाको अमर समझता है, इष्ट-विनाश-आदि कारण से वह उच्च स्वर से खड्ग करता है। ३०८-३१३
- २२ ग्यारहवां सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३१३
- २३ बाल-अज्ञानी परतैर्यिक काममागस्पृहाकी विक्रिस्ता कामभोग-सेवनही करते हैं, इसलिये वे इननाविक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं। उद्देश-समाप्ति । ३१४-३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥



॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

- १ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । ३१९
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३१९
- ३ पद्मीवनिकाय के उपघातका उपदश नहीं देनेवाले अनगार कमी भी पापाचरण नहीं करते । ३२०-३२१
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३२१
- ५ जो छ जीवनिकायों या छ प्रतामें से किसी एककी विराधना करता है वह छद्मकी विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विषमादसे अपने प्रता को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसारको बढ़ाता है, या एक न्द्रियादिरूप अवस्थाका प्राप्त करता है। इसलिये चाहिय कि प्राप्तिमाको जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है। ३२२-३२३

विषय

- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३३२
- ७ समत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य स्तनत्रययुक्त अनगार होता है । ३३२-३३४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३३४
- ९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे । ३३४-३३६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ३३६
- ११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रफलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्र्यविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्यों कि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते । ३३७
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३३८
- १३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्यन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे । सम्यक्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रुक्ष अन्न सेवन करते हैं । प्रान्त-रुक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं । ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं । ३३८-३४३
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ३४३
- १५ दुर्बल मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुबल मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं । यह सुबल मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं । ३४३-३४७
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ३४७
- १७ शारीरिक-मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है । उन सबों

का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि धन्य और मोक्षक उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन धन्य और मासके उपायों को जान कर मज्ज्य आसन्नधारा से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में भ्रष्टान नहीं रखते हैं—जो मुनि अनन्यदर्शी होते हैं—वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। ऐसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाषके अनुसार ही होता है। ३४८-३५४

१८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र।

३५५

१९ धर्मोपदेशक भोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाठसे बद्ध जीवों को छुड़ाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिहास्यारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, धन्यममोक्षान्वेषी—रत्नप्रय का अन्वेषणशील—यह मुनि न बद्ध है न मुक्त है।

३५६-३६३

२० दशम सूत्र का अवतरण और दशम सूत्र।

३६४

२१ तीर्थङ्कर, सामान्य कंबली और रत्नप्रयमुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिपिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें।

३६४-३६६

२२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।

३६७

२३ पश्यक—तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल-भ्रष्टानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति। द्वितीयाध्ययनसमाप्ति।

३६७

२४ द्वितीय अध्यायन की टीकाका उपसंहार।

३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन,
चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । ३६९-३७०
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३७१
- ३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं । ३७१-३८०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३८०
- ५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अद्वितके लिये होते हैं; इसलिये
प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये । ३८०-३८४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३८४
- ७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है—ऐसा ही प्राणी आत्म-
वान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है ।
ऐसा ही प्राणी पञ्चजीवनिकायस्वरूप लोकके परिज्ञानसे युक्त
होता है । वही मुनि कहलाता है । वही धर्मवित् और ऋजु है,
एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है । ३८५-३८८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३८९
- ९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और
आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीपहों को
सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक
रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परिपहों की
परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं । वे सर्वदा श्रुतचारित्र-
रूप धर्ममें जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना
चाहते हैं । वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करनेमें समर्थ होते हैं ।
इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं । ३८९-३९१
- १० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र । ३९२
- ११ जरा और मृत्युके वशमें पडा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ़ बना
रहता है । ३९२

विषय

पृष्ठाङ्क

- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३९२
- १३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर माणियों को देखकर, अममत्त हो, सयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार सयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना । ३९३
- १४ सप्तम सूत्र । ३९४
- १५ 'यह सत्सारपरिभ्रमस्वरूप दुःख सावधक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन । मायी और प्रमादी वारंवार मरकादियातना को प्राप्त करता है । जो पुरुष श्रद्धादि-विषयोंमें रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह भुतचारित्र धर्ममें जागरूक हो मरणसे घृष्टनात्ता है। ३९४-३९५
- १६ अष्टम सूत्र । ३९५
- १७ ससारी जीवोंके दुःखोंके जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त धीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं । ३९६
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ३९६
- १९ जो श्रद्धादि विषयोंमें होनेवाला सावध कर्म के ज्ञाता है वे निरवध क्रियारूप संयम में होनेवाले दुःखोंके सहन की उप योगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवधक्रियारूप संयममें दुःखोंके सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे श्रद्धादिविषयोंमें होनेवाले सावध कर्म के भी ज्ञाता हैं । ३९७-३९९
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३९९
- २१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; नयों कि उपाधिका जनक कर्म है । ४००-४०१
- २२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४०२
- २३ कर्मको सत्सारका कारण जानकर कर्मके कारण मायाविपातादि का त्याग करे । ४०२-४०३

- २४ वारहवाँ सूत्र । ४०३
- २५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ-जिन सम्बन्धी उपदेश,
या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो
जाते हैं । ४०३
- २६ तेरहवाँ सूत्र । ४०४
- २७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों
को विषयकपायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयामिलाप-
रूप लोकसंज्ञाका वसन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें
तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति । ४०४-४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और
द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र । ४०६
- २ प्राणियों के जन्ममृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को
सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है—इस वस्तु को
समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर
—‘निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि
परम हैं’ ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावध कर्म
नहीं करता । ४०६-४०९
- ३ द्वितीय सूत्र । ४१०
- ४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के
सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक-पारलौकिक
दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखने-
वाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-
भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो वारंवार गर्भगामी होते हैं । ४१०-४११
- ५ तृतीय सूत्र । ४११

विषय

पृष्ठांक

- ६ अग्न मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियाँ का संहार कर आनंद मानता है। बालों-अङ्गों का संग व्यर्थ है। उनके संग से ताँ ब्रेपकी ही वृद्धि होती है। ४११-४१२
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। ४१३
- ८ बालों के संगसे ब्रेप ही बढ़ता है; इस हेतु अतिविषय-सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्-सिद्धिगति नामक स्थान की अपवा सर्वविरतिरूप चारित्र की सच्चा को जान कर, नरक निगोदादिके विषय दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुषन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीर मुनि, अग्न और मूल का विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है। ४१३-४१५
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। ४१६
- १० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केसरी होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। शङ्खोकादि भय को दस्त्रनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकांक्षा करता हुआ संयमाराधनमें व्यत्तर रहे। ४१६-४१८
- ११ छठा सूत्र। ४१८
- १२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये समग्र म रति धरो। समग्रपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षपण करता है। ४१८-४१९
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ४१९-४२०
- १४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारी पुरुषों की इच्छाकी पूर्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यथादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं। ४२०-४२४

- १५ आठवाँ सूत्र । ४२४
- १६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि-जैसे कोई २
इन्हे निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये
इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे । ४२४-४२५
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४२५
- १८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी
नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो । ४२६
- १९ दशम सूत्र । ४२७
- २० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे,
न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनु-
मोदना ही करे । ४२७
- २१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ४२७
- २२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रिके आराधन में तत्पर
तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की
जुगुप्सा करे । ४२७-४२८
- २३ बारहवाँ सूत्र । ४२९
- २४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की
हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को
दूर करे । ४२९-४३०
- २५ तेरहवाँ सूत्र । ४३१
- २६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही
वाह्याभ्यन्तर ग्रन्थिको जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान
कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेहको पाकर किसी की
भी हिंसा न करे । उद्देशसमाप्ति । ४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

पृष्ठाङ्क

- विषय
- १ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र । ४३४
- २ सधियो जान कर लोकके सायोपशमिक मावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है । अथवा—सधि को जान कर लोक को—पट्टजीवनिकायरूप लोक को—दुःख देना ठीक नहीं है । ४३५
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४३५
- ४ अपने को जैसे सुख मिय है और दुःख अभिय, उसी प्रकार समी प्राणियों को है । इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात कर, न दूसरों से घात कराव, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे । ४३५-४३६
- ५ द्वितीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ४३७
- ६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है । ४३७-४४०
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४४०-४४१
- ८ ज्ञानी पुण्य चारित्र्यमें कमी भी प्रमाद न कर, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से खरीर—यापन करे । ४४१-४४२
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ४४३
- १० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन समी रूपां मं वैराग्ययुक्त होवे । ४४४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४४५
- १२ जो मुनि जीवों की गति और आगतिको जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन जग्य दुःखों से रहित हो जाता है । ४४५-४४७
- १३ सातव सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ४४८
- १४ मिथ्यादृष्टि जाव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं । उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा ?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा करते हैं किजैसा इस जीवका अतीतकाल था वैसा ही भविष्यकाल होगा । ४४८

विषय

पृष्ठाङ्क

- १५- आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४४९
- १६ तत्त्वज्ञानी जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं । इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपाजित सकल कर्मोंका क्षण करे । ४५०-४५१
- १७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ४५१-४५२
- १८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्ग में विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनशुभ होते हुए संयमानुष्ठान में तत्पर रहे । ४५२-४५५
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४५५
- २० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है। ४५५-४५७
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४५७-४५८
- २२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है । ४५८-४५९
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४५९-४६०
- २४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र्य से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है । ४६०-४६१
- २५ तेरहवां सूत्र । ४६१
- २६ सत्यको-अर्थात्-गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र्य धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो । सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र्य धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है । ४६२

विषय

- २७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र । ४६३
- २८ रागद्वेष का वशवर्त्ती जीव सणमग्न्युर जीवनेके परिषन्दन, मानन और पूजनके लिये माणातिपात आदि असत्कर्मों में मग्न रहते हैं। इस प्रकार वे परिषन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःस्वार्णव में अपने को डूबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिषन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परन्तु वे परिषन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते । ४६३-४६४
- २९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र । ४६४-४६५
- ३० ज्ञानधारित्रययुक्त मुनि दुःस्वभावासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता । हे शिष्य ! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो । रागद्वेषपरित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है । उद्वेगसमाप्ति । ४६५-४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥



॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र । ४६७-४७८
- १ आच्यवसायपूर्वक सयमक आराधनमं तत्पर मुनि क्रोध, मान आदि दोषका दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करोंने तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु भाग्य — आश्रम पापस्थाना का, अथवा कष्टार्था का — वन करनेवाला और मयकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है । ४६८-४७२
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४७२-४७३
- ४ आ एक को जानता है यह सबका जानता है, जो सबका जानता है वह एकको जानता है । ४७३-४७५
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ४७५

विषय

पृष्ठाङ्क

- ६ प्रमादी को सबसे भय रहता है और अप्रमादी को किसी से भी नहीं । ४७५-४७७
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४७७-४७८
- ८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है,
जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है । ४७८-४७९
- ९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र । ४७९
- १० धीर मुनि-षड्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर,
पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्र्यको
ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन
की अभिलाषा नहीं रखते हैं । ४८०-४८५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४८५
- १२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है,
दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है । ४८६-४८७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ४८७
- १४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता
हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है । ४८७-४८८
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४८८
- १६ षड्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे
षड्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे
संयमाराधन करे । ४८८-४८९
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४८९
- १८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है । ४८९-४९१
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४९१
- २० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्-जो क्रोधदर्शी होता है
वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला
होता है । ४९२-४९४
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४९४

- २२ पूर्वोक्त मेघावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसं छेकर मोह तत्कके भावसत्त्वों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे छेकर निगोवदु स्वपर्यन्त सभी दुःखांको दूर कर-यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है । ४९४-४९५
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४९५
- २४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपाजित कर्मोंका सपण करनेवाला होता है । ४९६
- २५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र । ४९६
- २६ पश्यकको, अर्थात्-केवलको उपाधि, अर्थात्-द्रव्योपाधि भावापाधि, अथवा-कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या? पश्यकको उपाधि नहीं है । उद्देशसमाप्ति । ४९६-४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

- १ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन । ५००
- २ सम्यक्त्व सम्पत्त्वका निरूपण । ५००
- ३ सम्यक्त्व सत्त्वकी सिद्धि, सम्यक्त्वका लक्षण, सम्यक्त्वके लक्षणके विषयम वादियों की विमतिपक्षिका निरसन । ५००-५११
- ४ सम्यक्त्वका द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण । ५१२-५२८
- ५ सम्यक्त्वकी स्थिति । ५२९
- ६ सम्यक्त्वके प्रादुर्भाषकी व्यवस्था । ५२९-५३०
- ७ सम्यक्त्वका अन्तरकाल । ५३०
- ८ सम्यक्त्वका फल । ५३१-५५९
- ९ सम्यक्त्वप्राप्तिका क्रम । ५५९-५७२

- १० सम्यक्तत्वमोहनीयका स्वरूप । ५७३-५७५
- ११ मिश्रमोहनीय । ५७६
- १२ मिथ्यात्वमोहनीय । ५७६-५८४
- १३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ५८५
- १४ सभी तीर्थङ्करोद्दारा प्रतिपादित सम्यक्तत्वका निरूपण । ५८५-५८८
- १५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ५८९
- १६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म-शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान् ने पञ्चजैवनिकायरूप लोकको दुःख-दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है । भगवान् ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सर्वोंके लिये किया है । ५८९-५९३
- १७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५९३
- १८ भगवान् का वचन सत्य ही है, भगवान् ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है-इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्तत्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं ! ५९३-५९४
- १९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ५९५
- २० उस सम्यक्तत्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश-आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्तत्वको प्रशम-संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्तत्वका परित्याग न करे । ५९५-५९६
- २१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ५९७
- २२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट-अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे । ५९७
- २३ छठा सूत्र । ५९८
- २४ लोकैषणा न करे । ५९८-५९९
- २५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ५९९
- २६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावध्य-व्यापारमें प्रवृत्ति कहाँसे

हो ! अथवा—जिसको यह सम्पत्त्वपरिणति नहीं है उसको साव-
धानाधानस रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहाँसे हो ! ५९९-६००

२७ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र । ६००

२८ इस सम्पत्त्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्कराने देखा है,
गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है, ज्ञानावरणीय
के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है । ६००-६०१

२९ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६०१

३० जिनवचनम भक्षारूप सम्पत्त्वक अभावसे मातापिता आदिके
साथ सांसारिक संबन्ध रक्ता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे वियुक्त
होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य
एकेन्द्रियादिक मर्षा म मटकता रहता है । ६०१

३१ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६०२

३२ दिन-रात मोक्षमाप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर
मूर्द्धमान इयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम ममत्ता
को-भ्रम्यताको आईत धर्मस बहिर्भूत समझा; और पञ्चविध
ममादासे रहित हो मोक्षमाप्तिके लिये अभिच्छिन्न प्रयत्न करो,
अथवा—अष्टविध कर्मश्रमोंका जीतनेके लिये प्रयास करो ।
उद्देशसमाप्ति । ६०२-६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका सङ्ग-प्रतिपादन; प्रथम
सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६०५

२ जो आसन्न-कर्मबन्धक कारण हैं वे परित्यक्त-कर्मनिर्जराक कारण
हो जात हैं और जो परित्यक्त-कर्मनिर्जराक कारण हैं वे आसन्न-

कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।

६०६-६१५

३ द्वितीय सूत्र।

६१५

४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'-इन पदोंको जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोंद्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो !

६१५-६१६

५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।

६१६

६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियोंके लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, आर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते हैं। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही है। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्त्व-श्रद्धान रखना चाहिये।

६१६-६२०

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।

६२०-६२१

८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे वहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति-असंयमी होते हैं, काल-मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा-आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।

६२१-६२४

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।

६२४

१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको वारंवार उत्पन्न होनेके कारण

उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं। ६२४-६२५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६२५

१२ कूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और कूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है। ६२६

१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र । ६२७

१४ चतुर्दशपूर्वपारी और केवलज्ञानीके कथनमें योद्धासा भी अन्तर नहीं होता । ६२७-६२८

१५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । ६२८

१६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक भ्रमण ब्राह्मण—‘समी प्राणी, समी भूत, समी जीव और समी सत्त्व इनन करनेयोग्य हैं, इनन करने के लिये आत्मा देनेयोग्य हैं, इनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विपश्चस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं है’ इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है। ६२८-६३१

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६३२

१८ समी प्राणी, समी भूत—आदि इनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई भ्रमण—ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है’ इस प्रकार आयौष्ठा कथन है। ६३२-६३३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६३४

समी प्राणी, समी भूत आदि इनन करनेयोग्य नहीं हैं—इत्यादि जो कोई आयौष्ठा कहते हैं—इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन । ६३५-६३६

२० ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ६३६

२२ दुःख जेस अपन लिये अभिय है उसी प्रकार वह समी प्राणी, भूत—आदिक लिये भी अभिय है। अतः किसीका दुःख नहीं दना चाहिये। उद्देशसमाप्ति । ६३६-६३८

॥ इति त्रितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

- १ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६३९
- २ धर्मसे वहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान् है । ६३९-६४०
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६४१
- ४ विद्वान् मनुष्य मनोवाक्कायके सावद्यव्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिन्न होते हैं । विद्वानके इस स्वरूपको सम्यक्तत्त्वदर्शी-केवलीने कहा है । ६४१-६४६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ६४६-६४७
- ६ सम्यक्तत्त्वदर्शी मुनि-सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करने-वाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं । ६४७-६४८
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६४८
- ८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन-धन-शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे । ६४९-६५४
- ९ पञ्चम सूत्र । ६५४
- १० तपस्या-आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे । ६५४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६५५
- १२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

विषय

पृष्ठ

- विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानाधरणीयादि अष्टविध कर्मोंको
भस्म कर डालता है । ६५५
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६५६
- १४ मुनि इस मनुष्यलोषको परिमित आयुवाला जानकर प्रथम
गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कपायोंका त्याग करे । ६५६
- १५ आठवां सूत्र । ६५७
- १६ हे मुनि ! क्रोधादिवश विकरण-प्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे
जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाछे
जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और
क्रोधजनित कर्मविपाकसे मविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे
भी समझो । ऐसे क्रोधी व्यक्ति मविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-
भयसम्बन्धी दुःखाको भोगते हैं । दुःखागमके भयसे कांपत हुए
जीवोंको तुम क्या देखिसे देखो । ६५७-६६१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६६१
- १८ जो भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशमंभ्रायुक्त है, और उनके उपदेश
को धारण करनेके कारण क्रोधादिकपायरूप अग्निक प्रक्षान्त हो
जानसे श्रीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें
निदानरहित हैं, वे ही मोक्षमुखके भागी कह गये हैं । ६६१-६६४
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६६४
- २० हे शिष्य ! जिसमिय क्रोधादिकपायांस युक्त जीव अनन्त दुःख
पाता है, इसलिये तुम आर्हवागम परिप्रीलन-जनित सन्त्यग्रानस
युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकपायजनित सन्तापस
अपनको बचाओ । उद्देशसमाप्ति । ६६४-६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६६६
- २ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोंसे पीडित-कृश करे । ६६६-६६७
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६६८
- ४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे । ६६८
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ६६८-६६९
- ६ मोक्षगामी वीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिन्तापूर्वक सेवनीय है । ६६९
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६६९
- ८ अन्तर्मान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोपक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है । और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है । ६६९-६७०
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ६७०
- १० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह बाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह बाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको

विषय

नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप
प्रवचनका अथवा सम्पत्त्वका लाभ नहीं होता।

६७०-६७५

११ छठ सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।

६७५

१२ जिसको पूर्वकालमें सम्पत्त्व नहीं मिला है और भविष्यकालमें
भी जिसे सम्पत्त्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्धमानमें सम्पत्त्व
कहाँसे मिले ?

६७५-६७७

१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र।

६७७

१४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका
सम्पग्नाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है। यह आरम्भसे
उपरमण होना ही सम्पत्त्व है। इस आरम्भापरमणसे जीव घोर
दुःखजनक कर्मबन्धको, धमको और दुस्सह शारीरिक परितापको
नहीं पाता है। अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक
कर्मबन्ध और धमको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप
को पाता है।

६७७-६८०

१५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र।

६८०

१६ हिरण्यरमत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपात-
रूप बन्ध आस्रवको और विषयामिक्षापक आन्तर स्रोतको रोक
कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षामिलापी हो सावधन्या-
पारक्य परित्याग करे। अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच बन्ध
स्रोतको छिन्न कर निःकर्मदर्शी हो जावे।

६८०-६८२

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।

६८२

१८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अनश्वयोग्य स्व-स्वफलजनक होते हैं-ऐसा
जानकर आर्हातागमजनित सम्पग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण
सावध व्यापारको छोड़ता है।

६८२-६८३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।

६८३

२० हे शिष्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-
युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा-सम्पग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा

संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-
वाले, अव्यावाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों
से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी-कर्मलोक अथवा विप-
यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व-आदि कसी भी
दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे ।

६८४-६८७

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।

६८७

२२ वीर-समित-आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका
वर्णन हम आगे करेंगे । क्या उनको उपाधि है ? पश्यकको उपाधि
नहीं होती है । उद्देशसमाप्ति ।

६८७-६८८

२३ चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार ।

६८९-६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



॥ अथ शुद्धिपत्रम् ॥

भेदम्

निखिलजीवभेदेन
- शत्रुभवकर्तृत्वञ्च ।
परिचितः पिता पितृभ्यादि ।

मूर्च्छां

मे

अहो-

रागाद्याविष्टचेता

-पुञ्जमित्यर्थः ।

पकरति

षट् षमिष

वाद्येके

कञ्जुयार

-कारणवपः

' पायडीकाठ ' इति भाषा ।

-विन्त्रियस्त्रीकारे

सर्विष

दुस्तथाव-

भवति

अत्रासक्तोऽ-

-नयकरी

अत्रासक्तः

सर्विष

ते

परिष्-

-इति भवति

नट-

प्रशानुकाय

शुद्धम्

निखिलजीवभेदेन

- शत्रुभावनकर्तृत्वञ्च ।

परिचितः । अथवा पूष-

सस्तुतः पितापितृभ्यादिः ।

मूर्च्छां

मे

अह-

रागाद्याविष्टचेताः

-पुञ्ज इत्यर्थः ।

पकरति

षट् षटमिष

वाद्येक्ये

कञ्जुयार

-कारणेव यः

(' पायडीकाठ ' इति भाषा

प्रसिद्धवत् ।)

-विन्त्रियस्त्रीकारे

सर्विष

दुस्तथाव-

भवति

अत्रासयिताऽ-

-नयकरी

अत्रासयिता

सर्विष

य

परिष्-

-इति भवति

नट-

प्रशानुकायः

पृष्ठम्

४

१४

१६

१८

१९

२०

२८

३०

३७

४१

४१

४४

४५

४७

५०

५७

६४

७१

८७

८८

८८

९६

९६

१००

१३०

१३२

१३५

पक्ति

१

५

१

४

२६

३

९

८

२२

४

२९

२४

४

१

१

४

७

१०

८

३

८

३

४

७

२

५

१

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृष्ठम् | पंक्तिः |
|--------------------------|-------------------------------|---------|---------|
| शब्दादि- | शब्दादि- | १४३ | ४ |
| सन्तोषादिना | सन्तोषादिना | १५२ | १ |
| -समुद्गाई | समुद्गाई | १५४ | ७ |
| -गट्टी | -गट्टी | १५४ | ८ |
| -विट्ट- | -विट्ट- | १५४ | ८ |
| कायै- | कायै- | १४४ | १६ |
| विरूपरूपैः | विरूपरूपैः | १५७ | ४ |
| पर्यालोच्च | पर्यालोच्च | १५७ | ७ |
| -दण्डं | -दण्ड | १५९ | १० |
| जम्बस्वामिन- | जम्बूस्वामिनं- | १६० | ७ |
| बुद्धा | बुद्ध्वा | १६१ | २ |
| परिरक्षेदित्यर्थः । | परिरक्षेरित्यर्थः । | १६१ | ५ |
| त्वसमानार्थमात्मबलादि- | त्वसम्मानार्थमात्म- | | |
| दण्डसमारम्भो | बलादिद्वारा दण्डसमारम्भो | १६४ | १ |
| उच्चैर्गोत्रे | उच्चैर्गोत्रे | १६५ | १ |
| जानीहि सातम् | जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम् | १७१ | १ |
| परिसंवेदयते | संपरिवेदयते | १७१ | ९ |
| -श्रौभौ | श्रौभौ | १७८ | २ |
| परिसंवेदयते | सम्परिवेदयते | १८१ | ६ |
| सूत्रे उपैतीत्यत्रैकवचन- | सूत्रे उपैतीत्यस्याऽऽवृत्त्या | | |
| मार्पत्वात् । | वचनविपरिणामेन | | |
| | च यथायोग्यमन्वय । | १९४ | २ |
| येन यत्र | येन यत्र वा | २२३ | २ |
| तस्मिन्= | तस्मिन् स्थाने= | २२६ | २ |
| सर्द्धि | सर्द्धि | २३८ | २ |
| क्षीणमातया | क्षीयमाणतया | २४१ | १६ |
| छन्दश्च | छन्द च | २४३ | ८ |
| छन्दः | छन्दं | २४३ | १७ |

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृष्ठम् | पंक्तिः |
|-----------------------------|--|---------|---------|
| तात्पर्यम् । “ बहु परधरे | तात्पर्यम् । तथा—‘ गृहस्था मेममहम् अनशनादिक न ददाति’ इति हेतोः धीरो न न कुप्येत्—न कोप कुर्यात् । | | |
| —आशानाकोपनम् , | “ बहु परधरे— | २६० | २ |
| प्रायेय | , आशानाकोपनम् , | २६१ | १ |
| सर्वमगन्धम्=अशु- | पायेयं | २६८ | २ |
| आदिस्समाणे | सर्वमगन्धम्=सर्वम् अशु-२७१ | | ८ |
| आदिस्समाणे | अदिस्समाणे | २७३ | २ |
| आदिस्समाणे | अदिस्समाणे | २७३ | ३ |
| आदिस्समानः | अदिस्समान | २७३ | ५ |
| ‘आदिस्समान’ इति । | ‘अदिस्समान इति | २७३ | ७ |
| आदिस्समानः | अदिस्समानः | २७३ | ८ |
| ब्रह्मक्षेत्रकावमावापेक्षया | ब्रह्मक्षेत्रकावमावापेक्षया | २७८ | ५ |
| —रनेषपीयमपि | रनेषपीयमपि | २८३ | ४ |
| अशुं | अशुं | २८५ | ५ |
| मायेत् | मायेत् | २८५ | ८ |
| स्निह्यात् | स्निह्यात् | २८५ | ८ |
| —मयप्यजेत् | —मयप्यजेत् | २८५ | ९ |
| मायेत् | मायेत् | २८६ | ८ |
| मायेत् | मायेत् | २८७ | १ |
| स्निह्यात् | स्निह्यात् | २८८ | १ |
| अयप्यजेत्= | अयप्यजेत्= | २८८ | ३ |
| कुसुमो | कुसुमो | २९१ | ५ |
| ना- | ना- | ३२३ | ८ |
| वृ | वृ | ३३४ | ४ |
| ‘व’-मिमादि । | ‘व’-मित्यादि । | ३३४ | १० |

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृष्ठम् | पंक्तिः |
|----------------------------------|---|---------|---------|
| तं | तत् | ३३४ | १० |
| सहइ | सहई | ३३६ | ७ |
| सहइ | सहई | ३३६ | ७ |
| अच्चइ | अच्चेइ | ३४३ | ६ |
| पमुच्चइ | पवुच्चइ | ३४३ | ६ |
| वर्त्तयेत् | वर्त्तकः | ३४३ | ७ |
| यस्य दुर्वसुः | यस्य स दुर्वसुः | ३४३ | १० |
| वर्त्तमानः | वर्त्तकः | ३४४ | २ |
| अणोद्धातन- | अणाद्धातन- | ३५६ | ३ |
| घटते= | घटते, | ३६४ | ९ |
| वयवं | वेयवं | ३८४ | ७ |
| दु खा | दुक्खा | ३८९ | ४ |
| विदित्वा | विदित्वा | ४०५ | १ |
| मतिमान्= | मतिमान् मेधावी= | ४०५ | १ |
| रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते | रागद्वेषरहित इत्यर्थः, सर्वलोके=समस्तजीवलोके न छिद्यते ४४६ | | ७ |
| पुव्वे | पुव्वं | ४४८ | २ |
| एतनुदर्शी | एतदनुदर्शी | ४५० | ६ |
| सृष्टो सन् | सृष्टः सन् | ४६५ | ६ |
| सम्यक्त्वं | सम्यक्त्वं | ५४४ | ५ |
| ज्ञानावरणीया- | ज्ञानावरणीया- | ५६१ | १० |
| काष्ठहारादय- | काष्ठहारादय- | ५९२ | ६ |
| तिर्थकरै- | तीर्थकरै- | ५९४ | ८ |
| तत्परतो | तत्पुरतो | ५९६ | ४ |
| -कतव्य- | -कर्त्तव्य- | ५९७ | १ |
| पुद्गल परिणा- | पुद्गलपरि- | ५९७ | ८ |
| वालग्नाना- | वालग्नाना- | ६०९ | ४ |
| भवे देवे दित्यर्थः | भवेदेवेत्यर्थः । | ६१६ | ४ |

| अध्यायम् | शब्दम् | पृष्ठम् | पङ्क्तिः |
|-----------------|-----------------|---------|----------|
| रसायन क्रियां, | रसायनक्रियां, | ६२१ | ८ |
| कर्मपु | कर्मसु | ६२६ | ३ |
| दोषो | दोषो | ६२८ | ९ |
| सर्वे | सर्वे | ६३५ | २ |
| सत्त्वानां | सत्त्वानाम् | ६३६ | ११ |
| धर्मविव | धर्मविव इति | ६४१ | ६ |
| —काव्यस्या— | —काव्यस्या— | ६४१ | १० |
| अथ एष | इति—अथ एष | ६४५ | १ |
| भवेदित्यर्थः । | भवेदित्यर्थः । | ६५४ | ५ |
| शुच | शुचम् | ६६५ | २ |
| दुःखेन | दुःखेन | ६६९ | ५ |
| निष्कम्भवृक्षी | निष्कम्भवृक्षी | ६८० | २ |
| निष्कान्तः | निष्कान्तः | ६८० | ८ |
| कर्मवन्धकारणात् | कर्मवन्धकारणात् | ६८२ | ८ |

॥ इति शुद्धिपत्रम् ॥

*

प्रकाशक : श्री अणिल भारत प्रेसप्रिन्टर स्थानकवासी जैन शास्त्रोद्धार समिति
 तारकधी रोड मंगनवाड छजनवाड आनन्दमन्त्री सु राजकोट (सौराष्ट्र)
 मुद्रक : मन्जीराड छजनवाड शा. नवप्रभात श्री. प्रिन्ट धीकांटा—अमरावती.

। अथाचाराङ्गसूत्रस्य द्वितीयमध्ययनम् ।

गतं प्रथमाध्ययनं, सम्पति द्वितीयमारभ्यते । अस्यायमभिसम्बन्धः- पूर्वाध्ययने पृथिव्यादिषट्कायस्वरूपं ज्ञात्वा तदारम्भनिवृत्तो मुनिर्भवतीति दर्शितं, षट्काया-
रम्भनिवृत्तिश्च शब्दादिविषयविजयमन्तरेण न भवतीति लोकविजयाध्ययनमा-
रभ्यते । अस्मिन् षडुद्देशकाः सन्ति, तत्र-स्वजनेऽभिष्वङ्गो मुनिना न कार्य इति
स्वजनाभिधः प्रथमः १ । “अदृढत्वं संयमिना संयमे न विधेयम्” इत्यदृढत्वाख्यो

। श्रीआचाराङ्ग सूत्रका द्वितीय अध्ययन ।

प्रथम अध्ययन समाप्त हो चुका, अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ होता है । अध्ययन का संबंध इस प्रकार से समझना चाहिये कि प्रथम अध्ययन में “पृथिव्यादि षट्काय के जीवों के आरंभ से रहित मुनि होता है” जो यह बात कही गई है सो छकाय के आरंभ की निवृत्ति, जब तक शब्दादिविषयों पर विजय प्राप्त न की जावेगी तब तक नहीं हो सकती है । इसी अभिप्राय से यह लोकविजय नामका द्वितीय अध्ययन प्रारंभ किया गया है । इसमें छह उद्देश हैं-प्रथम उद्देश में गणधर भगवान इस बातका वर्णन करेंगे कि संयमी मुनिको माता पिता आदि जो अपने इष्टजन हैं उनमें आसक्ति-ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये ? द्वितीय उद्देशकमें-उसे संयम में अरतिपरिणाम को दूरकर दृढता धारण करनी चाहिये कभी भी अदृढता न आने पावे इसका ख्याल रखना

श्री आचारांग सूत्रनुं भीष्णुं अध्ययन

पंडेलु अध्ययन पुई थयु, डवे भीष्णु अध्ययननो प्रारंभ थाय छे. अध्ययननो संध छे प्रकारे सभजवो जेष्ठछे डे प्रथम अध्ययनमां “पृथिव्यादि षट्कायना ज्योना आरंभथी रहित मुनि डोय छे आ वात जे डडेवामा आवी छे ते छ कायना आरंभनी निवृत्ति, न्या सुधी शब्दादि विषयोथी विजय प्राप्त नहि थाय त्या सुधी थर् शकती नथी आअभिप्रायथी आ ‘लोकविजय’ नामना भीष्णु अध्ययननो प्रारंभ थाय छे तेमा छ उद्देशो छे प्रथम उद्देशमा गणधर भगवान ते वातनु वर्णन करे छे डे संयमी मुनीछे माता पिता आदि जे पोताना इष्टजन छे तेमा आसक्ति-ममत्वभाव नहि राखवो जेष्ठछे १ भीष्णु उद्देशमा तेछे संयममां अरतिपरिणामने दूर करी दृढता धारण करवी जेष्ठछे, डोष्ठ वषत पणु अदृढता आवी न जाय तेना ख्याल राखवो जेष्ठछे २ भीष्णु उद्देशकमा-

द्वितीयाः २। “मुनिना मानो न कार्यो, निःसारता चार्थसारस्य चिन्तनीये” ति माना-
 र्थसारस्यस्तृतीयाः ३। ‘मोगेषु विरतिः सदा सर्वथा विधेया मुनिने’-ति ‘मोगेषु’
 नामकचतुर्थः ४। सर्वसावधानुष्ठानत्यागिना मुनिना संयमयात्रानिर्वाहार्थं स्वार्थारम्भ-
 प्रवृत्तलोकनिधया विहरणीयमिति ‘लोकनिधया’ नामधेयका पञ्चमः ५। एवं
 विहरता मुनिना पूर्वापर-मातापितृभूषधुरादिपरिचितापरिचितसंयोगे ममता न
 विधेयेति ‘लोकममत्वा’-स्याः षष्ठ उद्देशः ६।

आहिये २। तृतीय उद्देशक में-मुनिको मान न करना चाहिये; एवं घना-
 दिक परपदार्थों में सदा अमारता की भावना रखनी चाहिये ३। चतुर्थ
 उद्देशकमें विषयभोगों से सर्वथा (मन, वचन, कायसे) विरति
 भाव रखना चाहिये ४। पौंचवें उद्देशक में सर्वसावधानकर्मों के अनुष्ठान
 से रहित उस संयमी को अपने संयमयात्रा के निर्वाह के लिये अपने
 आरम्भादिकार्य में प्रवृत्त-गृहस्थलोगों के सहारे ही विहार करना चाहिये
 ५। छठवें उद्देशक में-लोगों के सहारे विहार करनेवाले उस संयमी को
 अपने परिचित, अपरिचित तथा माता-पिता सास-ससुर आदि से
 मिलने की उत्कंठा भी नहीं करनी चाहिये ६।

भावार्थः—इस द्वितीय अध्ययन के प्रारंभ करने का स्पष्टीकरण
 करते हुए टीकाकार कहते हैं कि प्रथम अध्ययन में यह बात निर्दिष्ट
 की गई है कि मुनियों को पृथिवीकायिक, अपृथायिक, तेजस्कायिक,
 वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक जीवों का यथार्थ स्वरूप जानकर उनके
 आरंभ का सदा परित्याग कर देना चाहिये, कारण कि जब तक वह

मुनिने मान न करने को छोड़के, तेमज घनादिक परपदार्थोंमा सदा असास्तानी भावना
 सभवी छोड़के उ योमा उद्देशकमा-विषयभोगेमाही सर्वथा (मन-वचन-कायमाही)
 निरतिभाव सभवे छोड़के ४ पाथमा उद्देशकमा-सर्वसावधानकर्मोंमा अनुष्ठान
 नही स्केत ते सयमीमे पोताना संयमयात्राना निर्वाह माटे पोताना आरभ
 कर्ममा प्रवृत्त गृहस्थ लोकमा सहासथी विहार करवे छोड़के ५ छठ्ठा उद्देशकमा-
 लोकमा सहारे विहार करनार ते सयमीने पोताना परिचित अने अपरिचित
 माता-पिता सासु-ससुर आदिथी भगवानी उत्कंठा पण न सभवी छोड़के ६

भावार्थः—आ जीवना अध्ययनने आरभ करीने स्पष्टीकरण करतों टीकाकार
 हडे छे डे प्रथम अध्ययनमा जे बात हडेवामा आवे छे डे मुनिमेमे पृथिवी
 कायिक अपृथायिक, तेजस्कायिक वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक जीवोंमा यथार्थ
 स्वरूप जानीने तेमा आरभनेमा सदा परित्याग करी देवे छोड़के, कारण डे

पृथिवीकायिकादिक एकेन्द्रिय जीवों के आरंभ से रहित नहीं होगा तब तक वह यथार्थ संयमी नहीं हो सकता, अतः इनके आरंभ का त्याग करना उसका आवश्यक कर्तव्य है। यह कर्तव्य उसका तभी निर्दोष रूपसे निभ सकता है जब कि वह इन्द्रियजयी होगा, अन्यथा इन्द्रियों के शब्दादिक विषय में लुब्ध होनेसे वह इस गुण से शून्य ही रहेगा, इसी विषय को विशेषरूपसे खुलासा करने के अभिप्राय से इस अध्ययन को छह उद्देशों में विभक्त किया है। प्रथम उद्देश में यह स्पष्ट किया गया है कि संयमी मुनि के लिये अपने मातापितादिक स्वजनों में आसक्ति भाव नहीं रखना चाहिये। द्वितीय उद्देशमें—गृहीत संयममें कभी भी अरुचिभाव नहीं करे प्रत्युत संयमभाव में दृढ़ता आती रहे ऐसा ही उसका प्रयत्न होना चाहिये। तृतीय उद्देशमें—मुनि को “मैं बड़ा तपस्वी हूँ—साधु हूँ—विद्वान् हूँ—मैं बड़े कुलका हूँ” इत्यादि बड़प्पन का अहंकार न करना चाहिये; तथा सांसारिक समस्त पदार्थों के—धनादिक के यथार्थ स्वरूप का चिन्तन करते रहना चाहिये, इस अभ्यास से उसके हृदयमें उनकी असारता का पूर्ण रूपसे भान होता रहेगा जिससे उसका मन उस तरफ कभी भी लोलुप नहीं हो सकेगा। चतुर्थ उद्देश में—विषयभोगों के वास्तविक स्वरूप का विचार करने से उसके हृदय में उनके प्रति सदा

न्या सुधी ते पृथिवीकायादिक ऐकेन्द्रिय लोभोना आरलथी रहित नहि थशे त्या-
सुधी ते यथार्थ संयमी जनी शकतो नथी भाटे तेना आरलनो त्याग करवो
तेनु आवश्यक कर्तव्य छे आ कर्तव्य तेनुं त्यारे निर्दोष रूपथी भनाशे न्यारे
ते छिन्द्रियजयी थशे अन्यथा छिन्द्रियोना शब्दादिक विषयमा लुब्ध थवाथी
ते आ शुश्रूथी शून्य न गणुथे आ विषयनो विशेष खुलासा करवा आ अध्ययनने
छ उद्देशोमा विलकृत करेव छे (१) प्रथम उद्देशमा ऐ स्पष्ट कर्युं छे के संयमी
मुनिऐ पोताना माता-पितादिक स्वजनोमा आसक्तिभाव राखवो न नेछ ऐ
(२) भीन उद्देशमा—लीघेला संयममा कदि पणु अङ्गिलाव न करे पणु संयमलावमा
दृढता आवती रहे ओवो प्रयत्न डोवो नेछ ऐ (३) त्रीन उद्देशमा—मुनिऐ “हुं
मोटे तपस्वी छु साधु छु, विद्वान् छु, मोटा कुलनो छु” इत्यादि मोटापणुनो
अडकार न करवो नेछ ऐ, तथा सांसारिक समस्त पदार्थोनु तथा धनादिकना यथार्थ
स्वरूपनु चिन्तन करता रहेवु नेछ ऐ, आ अभ्यासथी तेना हृदयमा तेनी
असारतानु पूर्ण रूपथी लान थतु रहेशे नेथी तेनु मन ते तरङ्ग कही पणु
लोखुप थशे नहि (४) चौथा उद्देशमा—विषयभोगोना वास्तविक स्वरूप विचार करवाथी,

તત્ર નિશ્ચિજીવમેવન સક્કલોપાધિરહિતેનોષમગુણરશ્નિતેન સ્વીકૃતપદ્મમહા-
વ્રતેન પદ્મકાયસયમોપસ્થિતમતિના મુનિના સ્વજનાદિષુ નામિષ્યજ્ઞા વિવેચ્યેતિ
મદર્શયતિ સૂત્રકાર—“જે ગુણે” ઇત્યાદિ

મન, ષષ્ઠન ઓર કાય સે ચિરતિ પરિણામ હી જગતા રહેગા। પંચમ
ઉદ્દેશમે—સમસ્ત પ્રકાર કે સાચક કાર્યો સે પરે રહનેવાલે ઉસ સયમી કો
અપને સ્વીકૃત સંયમયાત્રાનિષીદ્ય કે લિયે, જો અપને નિમિત્ત બનાયે હુણ
આહારપાની આદિ મેં પ્રવૃત્ત હૈં ડનકી નેશાયમેં વિહાર કરના ચાહિયે।
છઠવેં ઉદ્દેશ મેં—લોક કે નેશાય સે વિહાર કરતે હુણ મી ઉસકે મનમેં
અપને પરિચિત અપરિચિત પરિજનોં સે મિલને કે લિયે ઉત્સુક પરિણામ
નહીં હોના ચાહિયે, ઇન્હીં સય વાતોં કા ઇન છહ ઉદ્દેશોં મેં વિશેષરૂપ
સે છુલાસા કિયા જાવેગા।

ઇસમેં સર્વપ્રથમ પ્રથમ ઉદ્દેશકા પ્રારંભ કરને કે લિયે સૂત્રકાર—જીવો
કે મેદજ્ઞાનસે સમન્વિત, સક્કલ ઉપાધિ સે રહિત, ઉસમોસમગુણવિશિષ્ટ,
પંચમહાવ્રતારાધક, છહકાય કે જીવોં કી રક્ષા કરને મેં વસાવધાન, સંયમી
મુનિકો અપને આસજન માતાપિતાદિક મેં મમતાભાવ નહીં રસના ચાહિયે।
ઇસકા વિવેચન કરતે હૈં—‘જે ગુણે સે મૂલદાણે’ ઇત્યાદિ।

તેના હૃદયમા તેના પ્રતિ સદા મન-વચન અને કાયાથી નિરતિપરિણામ જ જામતો
સ્થેશે (૫) પાચમા ઉદ્દેશમા—સમસ્ત પ્રકારના આવધ કાર્યોથી દૂર સ્થેનાર તે સયમીએ
પોતાના સ્વીકૃત સયમયાત્રા-નિર્વાહ માટે જે પોતાના નિમિત્તે બનાવેલા આહાર-
પાણી આદિમા પ્રવૃત્ત છે તેની નેશાયમા વિહાર કરવો બોધ્યો. (૬) છઠ્ઠા ઉદ્દેશમા
લોકની નેશાયે વિહાર કરવા છતાં મનમા પોતાના પરિચિત અને અપરિચિત
પરિચનોથી મગવાને ઉત્સુકતા સજે નહિ. આ બધી વાતોના આ છ ઉદ્દેશમા-
વિશેષ રૂપથી ખુલાસા કરવામા આવશે.

એમા સર્વપ્રથમ-પ્રથમ ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરવાને માટે સૂત્રકાર—જીવોના
મેદજ્ઞાનથી સમન્વિત સક્કલ ઉપાધિથી રહિત, ઉત્તમેષત્તમગુણવિશિષ્ટ પંચ
મહામત્તાસપક, છ કાયના જીવોની રક્ષા કરવામા ઇચ્છાવધાન સયમી મુનિને પોતાના
આસજન-માતાપિતાદિકમા મમતાભાવ નહિ તબવો બોધ્યો. તેનું વિવેચન કરે છે
— જે ગુણે સે મૂલદાણે ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—જે ગુણે સે મૂલદ્ઠાણે, જે મૂલદ્ઠાણે સે ગુણે ઇતિ સે ગુણદ્ઠી મહયા પરિયાવેણં પુણો પુણો વસે પમત્તે, તંજહા—માયા મે પિયા મે મહ્ઙ્ઙા મે મહ્ઙ્ઙા મે પુત્તા મે ધૂઆ મે પ્હુસા મે સહિ-સયણ-સંગંથ-સંથુઆ મે વિવિત્તુવગરણપરિવટ્ઠણમોયણ-ચ્છાયણં મે, ઇચ્છત્થં ગઢિયે લોયે વસે પમત્તે અહો ય રાઓ ય પરિતપ્પમાણે કાલાકાલસમુદ્ઠાઈ સંજોગદ્ઠી અદ્ઠાલોમી આ-લુંપે સહસાકારે વિણિવિદ્ઠચિત્તે એત્થ સત્થે પુણો પુણો ।

છાયા—યો ગુણઃ સમૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાનં તદ્ગુણઃ, ઇતિ સ ગુણાર્થી મહતા પરિતાપેન પુનઃ પુનઃ વસતિ પ્રમત્તઃ, તદ્વથા—માતા મે પિતા મે મગિની મે માર્યા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્ત્રુપા મે સત્તિસ્વજનસંગ્રન્થસંસ્તુતા મે, વિવિક્તોપકરણપરિવર્તનભોજનાચ્છાદનં મે, ઇત્યર્થં ગૃદ્ધો લોકો વસતિ પ્રમત્તઃ અહશ્ચ રાત્રિં ચ પરિતપ્યમાનઃ કાલાકાલસમુદ્ઘાતી સંયોગાર્થી અર્થાલોમી આલુમ્પઃ સહસાકારઃ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ॥૧॥

શબ્દાર્થ—જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો મલી-મ્ભાંતિ જાનકર કૃત કારિત અનુમોદિત એવં મન, વચન, કાયસે અનેકે આરંભ કા ત્યાગ કર દેતા હૈ વહ અપને કર્તવ્યમાર્ગ કા જ્ઞાતા કહા જાતા હૈ ઓર વહી ગુણસ્થાન એવં મૂલસ્થાન કે જ્ઞાનપૂર્વક કષાયાદિરૂપ લોક પર વિજય પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા હૈ । અથવા—અપની બુદ્ધિ સે યા દૂસરે કિસી કે કથન સે અથવા તીર્થકરોં કે ઉપદેશ સે યા કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન લેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી મૂલસ્થાન હૈ । જો મૂલ હૈ વહી ગુણસ્થાન હૈ । ઇસલિયે વહ ગુણાર્થી અપરિમિત દુઃખસે

શબ્દાર્થ—જે મુનિ છ કાયના ભુવોના સ્વરૂપને ભલી ભાંતી બાણીને કૃત-કારિત અનુમોદિત અને મન, વચન કાયાથી તેના આરભને ત્યાગ કરે છે તે પોતાના કર્તવ્ય માર્ગને જ્ઞાતા કહેવાય છે, અને તે ગુણસ્થાન તેમજ મૂળ સ્થાનના જ્ઞાનપૂર્વક કષાયાદિરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરનાર થાય છે. અથવા—પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજા કોઈના કથનથી અથવા તીર્થકરોના ઉપદેશથી અથવા આચાર્યને સમીપે સાંભળીને એ બાણી લે છે કે જે ગુણ છે તે મૂળસ્થાન છે, જે મૂળ છે તે ગુણસ્થાન છે માટે તે ગુણાર્થી—અપરિમિત દુઃખથી રાગ-

રાગદ્વેપરૂપપ્રમણદશાસપદ્મ હોતા હૈ। હસ પ્રકાર વહ ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમેં આસક્ત હોતા હુઆ યહ માનતા હૈ કિ—યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પુત્ર હૈ, યહ મેરી પુત્રી હૈ, યહ મેરી વહુ હૈ, યે મેરે મિત્ર હૈ। યે મેરે માતામહ આદિ હૈ, યે મેરે સંબંધી જનોં કે સંબંધીજન હૈ, યે મેરે પરિચિત બન્ધુ હૈ, યે મેરે સુન્દર ઉપકરણ હૈ, યહ મેરા વિનિમય—એક વસ્તુકો વેચકર ઉસકે પ્રાપ્ત મૂલ્ય સે સ્વીકારા હુઆ પદાર્થ હૈ, યે મેરે જ્ઞાને કે પદાર્થ હૈ, યે મેરે પહિરને કે કપડે હૈ। હસ પ્રકાર યહ જીવ જન પૂર્વોક્ત પદાર્થોં મેં હી પ્રમાદી બના હુઆ હૈ। ઓર જનકે લિયે હી રાત્ર-દિન શારીરિક, માનસિક એવ વાચનિક અનેક કષ્ટોં કો હોલતા હુઆ કાલ-અકાલકે વિચાર સે રહિત હોકર મનમાના કાર્ય કરતા રહતા હૈ। કારણ કિ યહ સંયોગ કા અભિલાષી હૈ। હસલિયે સઘ પ્રકારસે ઘનકા અભિલાષી બના હુઆ હૈ। અનુચિત માર્ગ સે બી ઘન કે સંગ્રહ કરને મ જરા બી સકોચ નહીં કરતા હૈ। લોમરૂપી મહાસર્પ સે પ્રસિત્ત હો કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કે જ્ઞાન સે રહિત હો કર જિસ કિસી બી રીતિસે જો ઘનકા સંગ્રહ કરતા હૈ ઉસકા નામ આલુમ્પ હૈ—યહ જીવ પ્રમાદી બનકર હસી પ્રકાર સે ઘન કે સંગ્રહ કરને મેં લચલીન હોતા રહતા હૈ। હસ તરહ યહ

દ્વેષપ્રમત્તદશાસપદ્મ થાય છે આ પ્રકારે તે ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમાં આસક્ત થઈને માને છે કે—આ મારી માતા છે આ મારો પુત્ર છે, આ મારી પુત્રી છે, આ મારી વહુ છે, આ મારો મિત્ર છે, આ મારા માતામહ આદિ છે આ મારા સંબંધીજનોના સંબંધીજન છે આ મારા પરિચિત બંધુ છે, આ મારા સુદર ઉપકરણ છે, આ મારો વિનિમય—એક વસ્તુને વેચીને તેની કિંમતથી ખરીદેલી વસ્તુ—છે આ મારો આવનો પદાર્થ છે, આ મારા પહેરવાના કપડા છે. આ પ્રકારે આ જીવ આવા પૂર્વોક્ત પદાર્થોમાં જ પ્રમાદી બનેલો છે અને તેના માટે જ સતતજન, શારીરિક, માનસિક અને વાચનિક અનેક કષ્ટોને ઉદ્ભવતા કામ અકાળના વિચારથી સંક્રિત થઈને મનમાંથી કાચું કરવા લાગે છે, કાશ્યુ છે તે સંયોગનો અભિલાષી છે તેથી બધા પ્રકારથી ધનનો અભિલાષી બની રહે છે આ અનુચિત માર્ગથી પણ ધનનો સંગ્રહ કરવામાં જરા પણ સકોચ કરતો નથી. લોમરૂપી મહાસર્પથી અનિત દોષને કર્તવ્ય અકર્તવ્યના જ્ઞાનથી સંક્રિત થઈને કેઈ પણ રીતે જે ધનનો સંગ્રહ કરે તે તેનું નામ આલુમ્પ છે આ જીવ પ્રમાદી બનીને આ પ્રકારથી ધનનો સંગ્રહ કરવામાં રુચો પડ્યો રહે છે, એ

टीका—अस्याध्ययनस्य अनन्तरपरम्परसूत्रैरित्थं सम्बन्धः—अनन्तरसूत्रसम्बन्धो यथा—पट्कायस्वरूपं सम्यग्ज्ञात्वा त्रिकरणत्रियोगेन तदारम्भं परित्यजति स मुनिः परिज्ञातकर्मा भवति, स एव च गुणमूलस्थानज्ञानपूर्वकं कषायादिलोकविजयी भवति । परम्परसूत्रसम्बन्धो यथा—स्वबुद्ध्या परव्याकरणेन तीर्थङ्करोपदेशादन्येषां

अपने हित और अहित का कुछ भी विचार न कर सहसाकर्मकारी हो जाता है इस प्रकार यह शब्दादिविषयों में आसक्तचित्त हो उनके रक्षणके साधनोंको संग्रह करनेके लिये अपने हित और अहित के विवेक से विकल बन रात-दिन छहकायके जीवोंके उपमर्दन करनेमें ही वारम्बार प्रवृत्ति करता रहता है ।

टीकार्थः—इस अध्ययन का अनन्तर और परम्पर सूत्रोंसे संबंध है—उसमें अनन्तर सूत्रोंका संबंध इस प्रकार है—जो मुनि छहकाय के जीवों का स्वरूप अच्छी तरह जानकर कृत कारित और अनुमोदित एवं मन, वचन और कायसे उनके आरंभ का त्याग कर देता है वही अपने कर्तव्य को निर्दोष रीतिसे पालता है, और वही अपने तपसंयम में पूर्णरूप से निष्णात बन जाता है । ऐसा वह संयमी जन गुणस्थान और मूलस्थान को जानता हुआ कषायादिकरूप लोक पर विजय प्राप्त करने वाला हो जाता है । परम्पर सूत्रोंसे इस अध्ययन का संबंध इस प्रकार है—वह संयमी जन अपनी बुद्धि से या दूसरों के कथन से अथवा तीर्थकर

रीते पोताना छित्त अने अछित्तने जरा पणु विचार न करता सहसा कर्मकारी થઈ જાય છે તેવી જ રીતે તે શબ્દાદિ વિષયોમા આસક્ત ચિત્ત કરીને તેના રક્ષણને માટે રક્ષણના સાધનોનો સંગ્રહ કરવામા પોતાના હિતાહિતનો વિચાર કર્યા વગર વ્યાકુળ રાતદિવસ છકાયના જીવોનુ ઉપમર્દન (ઘાત) કરવામા જ વારવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે.

टीकार्थ —આ અધ્યયનનો અનન્તર અને પરમ્પર સૂત્રોથી સંબંધ છે તેમા અનન્તર સૂત્રોના સંબંધ આ પ્રકાર છે —

જે મુનિ છકાયના જીવોનુ સ્વરૂપ સારી રીતે જાણીને કૃત કારિત અને અનુમોદિત તેમજ મન, વચન, કાયાથી તેના આરભનો ત્યાગ કરે છે, તે પોતાના કર્તવ્યને નિર્દોષ રીતિથી પાળે છે, અને તે પોતાના તપસયમમા પૂર્ણરૂપથી નિષ્ણાત બને છે એવો તે સયમીજન ગુણસ્થાન અને મૂળસ્થાનનો જાણકાર કષાયાદિકરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોય છે પરમ્પર સૂત્રોમા આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રકાર છે—તે સયમીજન પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજાના કથનથી અથવા તીર્થકર પ્રભુના ઉપદેશથી અથવા બીજા ડોઈ આચાર્યની પાસેથી

યા કેપાશ્ચિદાચાર્પાંદીનાં સમીપે ગતા જાનીયાત્ । કિં તદિત્યાહ 'જે ગુણે' ઇત્યાદિ । યો ગુણ । ગુણ્યતે=આવર્ત્યતે-ચતુર્ગતિપુ ગમનાગમનાદિરૂપેણ પરિણમ્યતે આત્માઽનેનેતિ ગુણઃ ।

પ્રમુ કે ઉપદેશ સે યા અન્ય કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન છેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી મૂલસ્થાન હૈ ઇત્યાદિ । ચાર ગતિયોં-નરકગતિ, તિર્યચ્છગતિ, મનુષ્યગતિ ઓર દેવગતિ-મેં ગમન ઓર આગમન રૂપ સે આત્મા જિસકે દ્વારા ધ્રમણ કરતા હૈ ઉસકા નામ ગુણ હૈ । ઇસ ગુણ શબ્દકા વાચ્યાર્થ-શબ્દાદિક વિષય હોતા હૈ । યહ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયકા અપના-અપના સ્વતંત્ર ગુણ હૈ ।

જો મુનિ છહ્કાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો અપને આપ યા કિસી કે ઉપદેશ સે જાનકર છકાય કે આરંભ સે વિરત્ત હોતા હૈ વહ મુનિ અપને અગીકૃત સંયમ કા નિર્વોપ રીતિ સે પાલન કરને ઘાલા હોનેસે કુશલ માના જાતા હૈ । છકાય કે આરંભ સે નિવૃત્તિ તથ તક સંમથ નહીં હો સક્તી કિ જય તક વહ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં-ચાહે વે મનોહ હોં ચાહે અમનોહ-રાગદ્વેષ કરને કા ત્યાગ નહીં કરે, અતઃ યહ નિશ્ચિત્ત હૈ કિ છહ્કાય કે આરંભ કા ત્યાગ, પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં રાગદ્વેષ કે ત્યાગ કરને સે હી હોતા હૈ । ઇનકે વિષયોં મેં લોલુપી ડનકે આરંભ કા

આભાષી એવું બલ્લે છે કે જે ગુણ છે તે મૂળસ્થાન છે' ઇત્યાદિ. ચાર ગતિઓ નરકગતિ, તિર્યચ્છગતિ, મનુષ્યગતિ અને દેવગતિમાં ગમન અને આગમનરૂપથી આત્મા જે દ્વારા ધ્રમણ કરે છે તેનું નામ ગુણ છે આ ગુણ-શબ્દનો વાચ્યાર્થ (મુખ્ય અર્થ) શબ્દાદિક વિષય થાય છે તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાના સ્વતંત્ર ગુણ છે

જે મુનિ છ કામના જીવોના સ્વરૂપને પોતાની બાતે, અગર બીજાના ઉપદેશથી બાણીને છ કામના આશયથી વિરત થાય છે, તે મુનિ પોતાના અગીકૃત સંયમનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરનાર હોવાથી કુશળ માનવામાં આવે છે. જ્યાં સુધી પાપ ઇન્દ્રિયોના વિષયો જે અમોક્ષ કે અમનોક્ષ હોય તેમાં શગ દ્વેષ રાગે ત્યાં સુધી છ કામના આશયથી નિવૃત્તિ થતી નથી. તેથી તે નિશ્ચિત્ત છે કે-છકામના આશયનો ત્યાગ પાપ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં શગ દ્વેષનો ત્યાગ કરવાથી જ થાય છે તેના વિષયોમાં મગ્ન રહેનાર તેના આશયનો ત્યાગ કરી શકતા નથી.

यद्वा गुण्यते=विशिष्यते निश्चयनयेन शुद्धस्वरूपोऽप्यात्मा नरामरतिर्यगादि-
भेदेन भिद्यते येनेति गुणः—शब्दादिरूपः कामगुणः । स एव मूलस्थानम् ।

मूलस्थानपदस्य व्युत्पत्तिभेदेन बहवोऽर्था भवन्ति । यथा—मूलं=मोहनीयं
त्याग नहीं कर सकता—“ न यारंभो विणा बहा—न चारम्भो विना बधात् ”
इस वाक्य के अनुसार विना हिंसा के आरंभ नहीं होता—जहाँ हिंसा है
वहाँ सर्व प्रकारसे संयम का आराधन नहीं है । अतः निर्दोष संयम को
पालने के लिये छहकाय के जीवों के आरंभ करनेका त्याग अवश्य
करना पड़ता है ।

गुण शब्दका अर्थ—शब्दादिक विषय हैं, क्योंकि इन्हींके सेवन
से यह आत्मा चतुर्गतिरूप संसार में भटकता फिरता है । आना—जाना
यही तो एक बड़ा भारी गमनागमन का चक्कर इस जीव के पीछे पड़ा
हुआ है । कभी नरकमें जाकर रोता है तो कभी मानवपर्याय की प्राप्ति
से विषयभोगोंमें अपने जन्म को निष्फल कर देता है, कभी स्वर्गमें
जाकर वहाँ की दिव्य ऋद्धि आदि पाकर इठलाता गर्विष्ठ होता है, तो
कभी पशुपर्याय में जाकर विलखता है ।

यही बात—“ यो गुणः ” इन शब्दोंसे सूत्रकारने प्रकट की है ।

मूलस्थान शब्दका अर्थ प्रकट करने के लिये टीकाकार कहते हैं कि
मूलस्थान शब्द के व्युत्पत्ति के भेद से अनेक अर्थ होते हैं, जैसे—“ मूलं

“ न यारंभो विणा बहा ” न चारम्भो विना बधात् ”

आ वाक्य अनुसार हिंसा विना आरंभ थोता नहीं न्या हिंसा छे त्या
सर्व प्रकारथी सयमनु आराधन नथी, भाटे निर्दोष सयम पाणवामा छकाय
लुवोना आरंभ करवानो त्याग अवश्य २ करवो पडे छे.

गुण शब्दको अर्थ—शब्दादिक विषय छे, कारण छे तेना सेवनथी आ
आत्मा चतुर्गतिरूप संसारमा लटकतो करे छे जलु—आवु ओ तो ओक भारी
गमनागमननु चक्कर आ लुवना पाछण पड्यु छे डोर्ध वधत नरकमा न्छ
शेवे छे तो क्यारेक मानवपर्यायनी प्राप्तिथी विषयलोगोमा पोताना जन्मने
निष्फल करे छे क्यारेक स्वर्गमा न्छ त्यानी दिव्यऋद्धि आदि नेछने गर्विष्ठ
थाय छे क्यारेक पशुपर्यायमा न्छ शेवे छे

आ बात—“ यो गुण ” आ शब्दोथी सूत्रकारे प्रकट करी छे मूलस्थान
शब्दको अर्थ प्रकट करवाने टीकाकार कहे छे ते—मूलस्थान शब्दना व्युत्पत्तिना
लेहथी अनेक अर्थ थाय छे जेम—“ मूलं संसारस्तस्य स्थानमाश्रय कारणम् ”

તસ્ય સ્થાનમાશ્રય* । અથવા સંસારસ્ય મૂલમૂલત્વાન્મૂલમિવ મૂલં કારણં જ્ઞાના
વરણાદિરૂપમણ્ડવિધં કર્મ, તસ્ય સ્થાનમાધાર* । યદ્વા મૂલમિતિ નરામરનારકતિર્ય-
ક્ષસ્રગણસ્ય સંસારસ્ય કારણ કપાયાસ્તંભા સ્થાનમાશ્રયો મૂલસ્થાનમ્, યતો મનો-
જ્ઞાનનોજ્ઞશ્ચન્દાદિપ્રાપ્તૌ કપાયાણામુદયો ભવતિ તેન સંસાર ઇતિ ।

યદ્વા ‘મૂલ’-મિતિ પ્રધાને, ‘સ્થાન’-મિતિ કારણં, મૂલં ચ તત્સ્થાનં चेતિ
મૂલસ્થાનં, શ્ચન્દાદિક એવ કામગુણઃ, કપાયા વા પ્રધાનં કારણં સંસારસ્ય ભવતી
ત્યાશ્રય* ।

સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્” અર્થાત્-મૂલ નામ સંસાર કા હૈ
સ્થાન નામ કારણ કા હૈ-સંસાર કે જો કારણ હૈં ઉત્તકા નામ મૂલસ્થાન
હૈં । વે શન્દાદિક વિષય અથવા કપાય હૈં । અથવા-મૂલ-મોહનીય કા જો
સ્થાન-આશ્રય હૈં ઉત્તકા નામ મૂલસ્થાન હૈં । અથવા-સંસારકા મૂલ સ્વરૂપ
હોનેસે મૂલકે જેસા જો હૈં, ઘહ મૂલ હૈં-જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકાર કે
પૌલ્લિક કર્મોંકા નામ મૂલ હૈં ઓર ઉત્તકા જો આધાર હૈં ઉત્તકા નામ
મૂલસ્થાન હૈં । અથવા-મૂલ નામ-મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યક્ષગતિ ઓર
નરકગતિરૂપ સંસારકે કારણમૂલ કપાયોંકા મી હૈં, ઉત્તકે અધાર કા
નામ મૂલસ્થાન હૈં, વે શન્દાદિક વિષય હૈં, ક્યોંકિ મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ
શન્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ હોને પર કપાયોંકા ઉદય હોતા હૈં ઓર હસીસે
જીવકો સંસાર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં ।

પ્રધાન કારણકો મી મૂલસ્થાન કહતે હૈં, સંસાર કે પ્રધાન કારણ
શન્દાદિક વિષય અથવા કપાય હૈં ।

અર્થાત્ મૂળ નામ સંસારનુ છે સ્થાન નામ કારણનુ છે સંસારનુ જે કારણુ છે
તેનુ નામ મૂળસ્થાન છે તે શ્ચન્દાદિક વિષય અથવા કપાય છે, અથવા મૂળ-
મોહનીયનુ જે સ્થાન-આશ્રય છે તેનુ નામ મૂળસ્થાન છે, અથવા સંસારનુ
મૂળ સ્વરૂપ હોવાથી મૂળના જેવું છે, તે મૂળ છે જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના
પૌલ્લિક કર્મોંનુ નામ મૂળ છે અને તેનો જે આધાર છે તેનુ નામ મૂળસ્થાન
છે. અથવા મૂળ નામ, મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યક્ષગતિ અને નારકગતિરૂપ
સંસારના કારણમૂલ કપાયો પળુ છે, તેના આધારનુ નામ મૂળસ્થાન છે, તે
શ્ચન્દાદિક વિષય છે કારણુ કે મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ શ્ચન્દાદિક વિષયોંની પ્રાપ્તિ થવાથી
કપાયોંને ઉદય થાય છે અને તેથી જીવને સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પ્રધાન કારણને પળુ મૂળસ્થાન કહે છે સંસારનુ પ્રધાન કારણુ શ્ચન્દાદિક
વિષય અથવા કપાય છે.

ગુણ-મૂલ-સ્થાનયોઃ પરસ્પરમપેક્ષા વર્તતે યથા-યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલ-સ્થાનં તદ્ ગુણ ઇતિ તદુપાત્તાનાં વિષયકપાયાદીનામણ્ડપક્ષિવદ્ અનાદિઃ કાર્યકારણ-ભાવો યથા-પક્ષિતોઽણ્ડમ્, અણ્ડાચ્ચ પક્ષી સંજાયતે । એવમેવ મૂલસ્થાનાદ્રુણો, ગુણાચ્ચ મૂલસ્થાનમિતિ ।

અત્ર ચ સપ્તમ્યન્તપાઠમાશ્રિત્યેવં યોજના—યો ગુણે ગુણેષુ વા વર્તતે સ મૂલ-સ્થાને મૂલસ્થાનેષુ વા વર્તતે, યથાત્મા શબ્દાદિકે કામગુણે વર્તતે સ એવ સંસાર-મૂલે કપાયાદિસ્થાને વર્તતે-ઇતિ, એવં દર્શિતરીત્યા ગુણમૂલસ્થાનાનાં કાર્યકારણ-

ગુણ ઓર મૂલસ્થાન, ઇનકી પરસ્પર મેં અપેક્ષા હૈ, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરને કે લિયે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ” યહ વાક્ય ભગવાનને કહા હૈ । જિસ પ્રકાર પક્ષી સે અણ્ડા પૈદા હોતા હૈ ઓર અણ્ડાસે પક્ષી પૈદા હોતા હૈ ઊસી પ્રકાર મૂલસ્થાન સે ગુણ ઓર ગુણસે મૂલસ્થાન હોતા હૈ । ઇનકા યહ પરસ્પર કાર્ય-કારણભાવ અનાદિ કાલકા હૈ । પંચેન્દ્રિય કે વિષયોંસે જીવકો કષાયભાવ ઓર કષાયભાવસે પંચેન્દ્રિયોંકે વિષયકા ગ્રહણ હોતા હૈ । “જે ગુણે સે મૂલદ્વાણે” ઇસ વાક્યમેં “જે” કી છાયા “યઃ” માનકર “ગુણે” કો સસમી વિભક્તિકા એક-વચન માનકર ઇસ પ્રકારસે ભી અર્થ કિયા જા સકતા હૈ કિ જો ગુણમેં સ્થિત હૈ વહ મૂલ સ્થાનમેં સ્થિત હૈ । અર્થાત્-જો આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય મેં લવલીન હૈ વહી આત્મા સંસારકે મૂલ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમેં લવલીન હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇસ પદ્ધતિ સે ગુણ ઓર મૂલ સ્થાનોંકા પરસ્પરમેં સૂત્રકારને કાર્ય-કારણભાવ પ્રકટ કિયા હૈ । “ઇતિ” શબ્દ

ગુણ અને મૂળસ્થાન, એની પરસ્પરમા અપેક્ષા છે, આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ” આ વાક્ય ભગવાને કહ્યું છે-જે પ્રકારે પક્ષીથી ઇંડું પેદા થાય છે અને ઇંડાથી પક્ષી પેદા થાય છે તે પ્રકાર મૂળસ્થાનથી ગુણ અને ગુણથી મૂળસ્થાન થાય છે તેના પરસ્પર કાર્ય-કારણ ભાવ અનાદિ કાળનો છે પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી જીવને કષાયભાવ અને કષાયભાવથી પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય ગ્રહણ થાય છે “જે ગુણે સે મૂલદ્વાણે” આ વાક્યમા “જે”ની છાયા “ય” માનીને “ગુણે”ને સસમી વિભક્તિનું એકવચન માનીને આ પ્રકારે પણ અર્થ થાય છે કે જે ગુણમા સ્થિત છે તે મૂળસ્થાનમા સ્થિત છે અર્થાત્ જે આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયમા રહેલો છે તે આત્મા સંસારનું મૂળ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમા રહેલો છે આ પ્રકારે આવી પદ્ધતિથી ગુણ અને મૂળસ્થાનનો પરસ્પરમા સૂત્રકારે કાર્યકારણ-

માવો વર્ણિત' । “યા ગુણ સ મૂલસ્થાન, ય મૂલસ્થાન તદ્ ગુણઃ”-ઇત્યનેન ક્રિમા-
યાતમિત્યાહ-“ઇતિ સ ગુણાર્થી” ઇતિ ।

ઇતિર્હેતી, યતો હિ સસારસ્થા સર્વેઽપિ પ્રાણિના ગુણાયિન સન્તિ, અનાદિકાસ્ત્વ
આત્મનો મોહાવેશેનાવેષ્ટિતતાત્, અતઃ ॥ ગુણાર્થી કપાયાદિમૂલસ્થાને ધર્તેતે ।
ગુણસ્ય=શબ્દાદિગુણસ્ય અર્થઃ=મયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી । યદ્વા-ગુણે=શબ્દાદી
અર્થાઽનુરાગો યસ્ય સ ગુણાર્થી । સર્વા હિ પ્રાણિગણઃ પ્રાપ્ત્વા કામગુણાર્થી ભવતિ ।
શબ્દાદિગુણગણસ્યાલામ તં મુદુરિચ્છતિ, સમ્પ્રાપ્તસ્ય નાન્ત ચ શાંખાવિષ્ટો ભવતિ ।
મહતા=અપરિમિતેન પરિવાપન=માનસિકકાચિકવાચિકેન દુઃખેન પ્રમત્ત, પ્રમાદોઽપ્ર
રાગદ્વેપરુપસ્તદ્વાન્ પ્રાણી વિષયપુ રાગાધિચ્છેન પ્રવર્તતે, દૃષ્ટવિષયપ્રાપ્તાવનિષ્ટાપગમ
હેત્વર્થ મેં હૈ-અસકા અભિપ્રાય યહ હૈ-સસાર કે મમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી
હૈ, ક્યોંકિ પે અનાદિકાલ સે હી મોહ કે આવેશ સે યુક્ત હ, ઇસલિયે
ગુણાર્થી આત્મા-કપાયાદિ મૂલસ્થાન મેં સ્થિત હી હૈ, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયો
કા વિષય જિસકા પ્રયોજન હૈ યહ, અથવા શબ્દાદિક વિષયો મેં જિસે
અનુરાગ હૈ વહ ગુણાર્થી હૈ । પ્રાપ્ત સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક
વિષયો કા પ્રાર્થી હોતા હૈ અનેકે નહીં મિલને પર અને પ્રાપ્ત કરનેકી વહ
વાર ૨ બેષ્ટા કરતા રહતા હૈ । મિલને પર યે નષ્ટ ન હો જાવેં-ઇસ પ્રકાર
કા વહ પ્રયત્ન સી કરતા રહતા હૈ । યદિ પ્રાપ્ત ગુણ યે નષ્ટ હો જાતે હૈં-તો
અનેકે અમાય મેં અત્યંત શોકાકુલ વહ માનસિક વાચિક ઔર કાયિક
કષ્ટો કો ક્ષેલતા હૈ । સત્ય હૈ, પ્રમત્ત-રાગદ્વેપાધિષ્ટ આત્મા વિષયો મેં
રાગકી અધિકતા સે હી સો પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । તથા દૃષ્ટ વસ્તુકે નહીં પ્રાપ્ત
હોને પર અથવા પ્રતિકૂલ વસ્તુ કે મિલને પર અસ વિષયસે દ્વેષ કરતા

ભાવ પ્રકટ કર્યો છે “ઇતિ શબ્દહેત્વર્થમા છે તેના અભિપ્રાય એ છે-સ સાસ્ત્રના
સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી ॥ કારણ કે તે અનાદિકાળથી મોહના આવેશથી યુક્ત ॥
માટે ગુણાર્થી આત્મા કપાયાદિ મૂલસ્થાનમાં સ્થિત જ છે શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિ
યોના વિષય જેનું પ્રયોજન છે તે, અથવા શબ્દાદિક વિષયોમાં જેને અનુસર છે
તે ગુણાર્થી છે સાસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક વિષયોના પ્રાર્થી થાય છે તેના
અભાવમાં તેની પ્રાપ્તિ માટે વારંવાર બેષ્ટા કરતા જ રહે છે મળવાથી ફરી તેના
નાશ ન થાય તેના પ્રયત્ન કરતા રહે છે કદાચ પ્રાપ્ત થયેલાઓના નાશ થાય
તો તેના અભાવમાં તે અત્યંત શોકાકુળ બને છે અને માનસિક વાચિક અને
કાયિક કષ્ટોને કોબરે છે સત્ય છે પ્રમત્ત ત દ્વેષાધિષ્ટ ન્યાત્રા વિષયોમાં રુગની
અધિકતાથી જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તથા ઇષ્ટ વસ્તુ પ્રાપ્ત નહિ થવાથી અથવા પ્રતિકૂલ

ચ તં વિપયં દ્વેષ્ટિ । એવંવિધઃ સંસ્ત્રઃ પુનઃ પુનઃ=વારં વારં વસતિ=વિપયાસક્ત્યા તિષ્ઠતિ, મૂર્ચ્છિતો ભવતીત્યર્થઃ । રાગદ્વેષો હિ યત્ર યત્ર પ્રાયશો ભવતસ્તત્તદર્શયતિ । તથા—“માતા મે પિતા મે” ઇત્યાદિ ।

‘ઇયં મે માતા, અયં મે પિતા’ એવંરૂપો માતરિ પિતરિ ચ રાગસ્તુ સંસારેડ-નાદિકાલતો મોહનીયસદ્ભાવાદ્ વાલ્યાવસ્થાયાં લાલનપાલનાદિકારકત્વાચ્ચોપ-જાયતે । રાગાવિષ્ટચેતા હિ ચિન્તયતિ—કથં મયિ જીવતિ સતિ મે માતા-પિતરૌ ક્ષુત્પિપાસાદિકં દુઃસ્વમનુભવતઃ—ઇતિ, ઇત્યં વિચિન્ત્ય વહુપ્રાણિસંહારજનિતપાપવાન્ કૃષિવાણિજ્યસેવાદિરૂપા વૃત્તિં સ્વીકરોતિ । સમુદ્રમપિ દુરુલ્લઙ્ગં ગોષ્પદં મન્વાનો દ્વીપા-દ્વીપાન્તરં પરિભ્રમતિ । અઠાર્યશતમપિ કરોતિ । અહો કીદૃશં રાગસ્ય સામ્રાજ્યમ્ ? ।

હૈ । ઇસ પ્રકાર વહ ઉન વિષયોં મેં આસક્તિ-પરિણામ સે હી પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ । સંસારી જીવોં કે રાગ ઔર દ્વેષ કે વિષયભૂત પદાર્થોં કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હુઅ કહતે હૈ—“માતા મે” ઇત્યાદિ । યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પિતા હૈ, ઇસ પ્રકાર કા ઉનમેં ઇસ જીવ કો જો રાગ હોતા હૈ ઉસકા પ્રધાન કારણ મોહ હૈ, વહ મોહ ઇસ સંસારમેં અનાદિકાલ સે ઇસ જીવ કે સાથ લગા હુઆ હૈ । તથા દૂસરા કારણ વાલ્યાવસ્થા મેં ઉન્હોંને ઇસકા પાલન પોષણ ક્રિયા હૈ । રાગાવિષ્ટ યહ જીવ સદા યહી વિચારતા રહતા હૈ કિ મેરે જીતે-જી મેરે માતા-પિતા કમી ભી ખૂબ પ્યાસ આદિ સે જનિત દુઃસ્વોંકા અનુભવ ન કરે । ઇસ ધ્યાલસે વહ કૃષિ, વાણિજ્ય આદિ અનેક આરંભોં કો કરતા હૈ, જિસસે હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોંકા સંચય કરતા રહતા હૈ, દુરુલ્લંઘ્ય સમુદ્રકો ભી પારકર ઇક દ્વીપસે દૂસરે દ્વીપોંમેં જાકર

વસ્તુ મળવાથી તે વિષયમા દ્વેષ કરે છે આ પ્રકારે તે આવા વિષયોમા આસક્તિ-પરિણામથી પ્રવૃત્તિ કરે છે સંસારી જીવોના રાગ અને દ્વેષના વિષયભૂત પદાર્થોને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે અને કહે છે—“માતા મે” ઇત્યાદિ આ મારી માતા છે, આ મારા પિતા છે આ પ્રકારે જીવને જે રાગ થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ મોહ છે આ મોહ આ સંસારમા અનાદિ કાળથી જીવની સાથે લાગેલો છે. તથા બીજું કારણ બાલ્યાવસ્થામા તેણે તેનું પાલન કર્યું છે રાગાવિષ્ટ આ જીવ હમેશાં એ જ વિચારતો રહે છે કે મારા માતા પિતા મારા જીવતા કોઈ વખત પણ ભૂખ તરસથી હું બી ન થાય આવા ખ્યાલથી તે કૃષિ, વાણિજ્ય, આદિ અનેક આરભ કરે છે જેનાથી હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોના સંચય કરે છે હરિદ્વંધ સમુદ્રને ઓળંગીને એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપોમા જઈ વ્યાપાર ધંધા નિમિત્તે

“મગિની મે માયા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્તુપા મ” । શ્લોક ।

મગિની=સ્વસા, સા મે=મમ, અસ્યા રાગકારણં તુ સમાનમાતાપિતૃજત્વમ્ ।
માયાયાં રાગસ્તુ યાવજ્જીવં સ્વાનુકૂલ્યન વર્તનશીલત્વાત્ । પુત્રે ચ રાગકારણં સેવા-
દિકાર્યપ્રવર્તકત્વમ્ । સ્તુપા=પુત્રવધૂઃ તસ્યાચ્ચ રાગકારણં સકલગૃહકાર્યસમ્પા-
દકત્વમ્, પુત્રાપુત્રપાદનદ્વારા પૌત્રાદિસુસ્તાપનમવકર્તૃત્વચ્ચ । ષેઠસિ ચ મૃદા
વિચિન્તયતિ—કદા મે પુત્રો મવિતા, કદા મરીયમકુમલકુરિષ્યતિ । જાતે પુત્રે ચ
કયમયં વિધાપનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ । પત્ની કદા મા સુલિતા આનન્દયિષ્યતિ । કદા
મે દુહિતા દૌહિત્રં જનયિષ્યતિ, અશુરચ્છે પનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ ન ચતિ । તદય વાનેક-
વ્યાપાર ધંધા કે નિમિત્ત ઝ્રમણ કરતા હૈ । પૈસા કમાને કે લિયે અનેક
અકાર્ય મી કર જાલતા હૈ । દેવો રાગકા સામ્રાજ્ય કેસા આશ્ચર્યકારી હૈ ।

યહ મેરી પહિન, હસ પ્રકાર ઉસમેં રાગકા કારણ ણક માતા-પિતાસે ઉત્પન્ન
હોના હૈ । સ્ત્રીમેં રાગકા હેતુ યહ હૈ કિ—જીવન મર તક વહ અપને અનુકૂલ
પ્રવૃત્તિ કરતી હૈ । પુત્રમેં રાગ હોનેકા કારણ યહ હૈ કિ વહ રાત્રિદિન સેવાદિ
કાર્યમેં તહીનતા રખતા હૈ । પુત્રીમેં મી—યહ અપનેસે પૈદા હુઈ યહી રાગકા
કારણ હૈ । સમ્પૂર્ણ ઘરકે મારકો સંભાલને તથા પુત્રાદિકોં કો ઉત્પન્ન કરને
દ્વારા પૌત્રાદિસુખકા અનુભવ કરાનેસે પુત્રવધૂ મેં રાગ હોતા હૈ । પુત્ર—કલ્પ-
ત્રાદિ મેં મહામૂઢ થનકર યહ જીવ વિચારતા હૈ—મેરે પુત્ર કય હોગા, કય
મેરી ગોવી કો વહ સુશોભિત કરેગા, કેસે વહ વિધ્યાધ્યયન ઇથં ધનાદિક
પ્રાપ્ત કરેગા, મેરી સ્ત્રી કય મુઠે સ્વયં સુખ ચૈન ભોગતી હુઈ આનંદિત
કરેગી । મેરી પુત્રી કય દોહિતે કો જન્મ લેગી, વહ અપને અશુરચ્છ મેં

જન્મલુ કરે છે । પૈસા ઠમાવા માટે અનેક આકામ પલ્લુ કરે છે છુવો । સગનુ
સામાન્ય હેતુ આશ્ચર્યકારી છે ?

આ મારી બહેન છે એ પ્રકારના સગનુ કારણ એક માતા-પિતાથી ઉત્પન્ન
થવું તે સ્ત્રીમા સગનુ કારણ, જીવનભર તે પોતાના અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરે છે
પુત્રમા સગનુ કારણ તે સતતિવસ સેવાદિ કાર્યમા તત્શીનતા રાખે છે પુત્રીમા
પલ્લુ સગનુ કારણ પોતાથી પેદા થઈ છે માટે. સપૂર્ણ ઘરનો ભાર સંભાળવામા
તથા પુત્રાદિકાની ઉત્પત્તિ દ્વારા પૌત્રાદિસુખનો અનુભવ કરાવવાથી પુત્રવધુમા સગ
પેદા થાય છે પુત્રકલ્પત્રાદિમા મહામૂઢ બનીને બધા જીવ કિયારે છે કે—મારે પુત્ર
કયારે થશે, કયારે મારી ગોદીમા તે બેસીને મને સુશોભિત કરશે, કેવી રીતે તે
વિદ્યાધ્યયન તેમજ ધનાદિક પ્રાપ્ત કરશે. મારી સ્ત્રી કયારે તેણી સુખબેન સોજવતી
મને આનંદિત કરશે. કયારે મારી પુત્રી દોહિતને જન્મ આપશે, તેણીમા

सावधानुष्ठानपरायणो भवति। असौ ममकारमहाग्रहग्रहीतस्वान्तो नितान्तं परित-
पति। रागान्धो हि रागग्राहग्रहिलः परमरमणीयमपि सम्यग्ज्ञानादिकं व्यर्थमेवेति
निश्चिन्वानो मोहशय्याशयानो भार्यापुत्रभगिनीगृहक्षेत्रारामरमणीयमपि रमणीयं
मन्यते।

तथा 'सखि-स्वजन-संग्रन्थ-संस्तुता मे' इति। सखा च स्वजनश्च संग्रन्थश्च
संस्तुतश्चेति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। सखा=मित्रं, स्वजनो=मातामहादिः, संग्रन्थः=
स्वजनस्यापि सम्बन्धी यथा-मातामहश्यालकादिः। संस्तुतो मुहुर्मुहुर्दर्शनसम्मेलना-
धनकी अधिकारिणी होगी या नहीं। इस प्रकार यह ममत्वरूपी महा-
ग्रह-पिशाचादि द्वारा युक्त होकर रातदिन उनकी चिन्तामें ही अपने
भीतर ही भीतर जलता रहता है, ठीक है रागसे अंधा हुआ प्राणी असु-
न्दर भी परपदार्थों को सुन्दर माने तथा उपादेय-सुन्दर पदार्थों को हेय-
असुन्दर माने, इसमें कौनसी अचरजकी बात है। संसारमें सम्यग्ज्ञा-
नादिक इस जीवके उपादेय धर्म हैं-उन्हें यह रागरूपी ग्रह से ग्रस्त
होकर अशोभनीय मानता है, तथा जो स्त्री, पुत्र, भगिनी, घर-क्षेत्र
आदि अशोभनीय परपदार्थ हेय हैं, उन्हें मोहरूपी प्रचल मदिराके नशे
से आकुलितबुद्धि होता हुआ रमणीय-उपादेय मान रहा है। तथा
"सखि-स्वजन-संग्रन्थ-संस्तुता मे" सखा-मित्र, स्वजन-मातामहादि,
संग्रन्थ-स्वजन के संबंधीजन, संस्तुत-बारम्बार देखने से मेल मिलाप
से जिनके साथ परिचय हुआ है वे, अथवा-पूर्व में परिचित पिता
काका वगैरह, पश्चात्-परिचित ससुर साले वगैरह, ये मित्र स्वजन

अथशुश्रूषमा धननी अधिकारिणी थशे डे नडि ? आ प्रकार ते ममत्वरूपी मडाग्रह
-पिशाचादि द्वारा युक्त अपनी रातदिन तेनी न चिन्तामा पोताना भीतरनी
अदर न नगता रहे छे ठीक छे, रागथी अध अपनेल प्राणी असुन्दर पणु पर-
पदार्थोंने सुन्दर माने तथा उपादेय-सुन्दर पदार्थोंने हेय - असुन्दर माने, आमा
डेह अचरजनी बात नहीं ससारमा सम्यग्ज्ञानादिक आ एवने उपादेय धर्म
छे तेने रागरूपी ग्रहथी अशोभनीक माने छे तथा ने स्त्री, पुत्र, भगिनी, घर, क्षेत्र
आदि अशोभनीय परपदार्थ डोय छे, तेने मोहरूपी प्रचल मदिराना नशाथी आकुलित
बुद्धि थह रमणीय-उपादेय माने छे तथा "सखि-स्वजन-संग्रन्थ-संस्तुता मे"
सखा-मित्र, स्वजन-मातामहादि, संग्रन्थ-स्वजनना संबंधीजन, संस्तुत-
बारबार देखवाथी, भेजभेजापथी नेनी साथे परिचय थयो छे ते, अथवा
पूर्वमा परिचित पिता, काका विगेरे, पाछणथी परिचित ससुर साणा विगेरे. आ

दिना परिचितः पिता पितृव्यादिः । पश्चात्सस्तुतः=अश्वरथपालकादिः । इति चेमे मे सर्वे सर्वदा सुखिनो भवेयुरिति चिन्तयन् रागग्रस्तो भवति ।

‘विविक्तोपकरणपरिवर्तनमोजनाच्छादनं मे’ विविक्तं=सुन्दरं मनोहरं प्रभृतं वा उपकरणं=पृष्ठारामादिकं इत्यभरथासनपल्लवादिकं च, परिवर्तनं=विनिमयः इत्यभवादे-महार्घसमये विक्रयणम्, तन्मूल्येनैव सुलभसमय चानेकेषां क्रयणम् । मयैवैकेन इस्तिनाऽनेके इत्यादयः सम्पादिताः-इत्यादिविक्रयण परिवर्तनम् । क्वचित्

संग्रन्थ संस्तुत मेरे हैं और इनके लिये भी यह “ये सदा सुखी होंगे” इस प्रकार विचार करता हुआ राग से ग्रस्त होता है । अपने संयधीजन को तथा संयधीजन के संयधीजन को सुखी होने की कल्पना करना संयमी जन के लिये राग होनेसे बंध का ही कारण शास्त्रकारों ने प्रकट किया है । इस प्रकार का राग मोहकी पर्याय होने से संयमी जन के लिये स्वानुभूति में बाधक होता है, अतः इससे निवृत्ति ही सर्वश्रेष्ठ है ।

‘विविक्तुवगरण’-इत्यादि-मनोहर अथवा प्रभुर उपकरणरूप घर, पगीचा, इस्ती, अश्व, रथ, आसन, पल्लग बगैरह वस्तुएँ विविक्त उपकरण कहलाते हैं । परिवर्तन शब्द का अर्थ विनिमय है, तेजी के समय इस्ति बगैरह पदार्थों का बेचना तथा मंदी के समय उसी पैसे से अनेक इत्यादिक पदार्थों का खरीदना यह विनिमय है । कहीं “विविचित्र” यह पाठान्तर भी है-जिसका अर्थ होता है कि घर में शोभा के लिये अनेक

मित्र, स्वजन, सञ्जन्य, सन्तुत भास छे तेने भाटे पखु ते “तेज्जे सदा सुखी रहे” आ प्रकारने विचार करीने सभधी अस्त बाय छे पोताना सभधीजनना तथा सभधीना सभधी तेना सुखनी करिना करी सभधीजनने भाटे रागरूप होवाधी पखेनु अ ठारखु आसकारे प्रकट करुं छे आ प्रकारने सग भेदकी पर्याय होवाधी सभधीजनने भाटे स्वानुभूतिमा बाधक बाय छे भाटे तेमा निवृत्ति अ सर्वश्रेष्ठ छे.

विविक्तोपकरण-इत्यादि-मनोहर अथवा प्रभुर उपकरणरूप घर, पगीचा इस्ती, अश्व, रथ, आसन, पल्लग विगैरे वस्तुओंने विविक्त उपकरण कहे छे परिवर्तन शब्दने अर्थ विनिमय छे तेज्जेना समयमा इस्ति विगैरे पदार्थोंनु वेचनु अने मंदीना समयमा ते पैसाधी इस्ति आदि पदार्थोंनु खरीदनु ते विनिमय छे ठाँठ ठाँजे “विविचित्र” आवु पाठान्तर पखु छे बेने अर्थ

‘વિચિત્રે’—તિ પાઠઃ । તત્ર વિચિત્રમુપકરણં ગૃહાદૌ શોભાર્થં बहुशिल्पिविनिर्मितं
नानाविधं नयनमनोहारि वस्तुजातं मयैव सम्पादितम् ।

भोजनं=मोदकादिकं, मयैवेदृशं भोज्यं भुक्तम् । आच्छादनं=वस्त्रम्=एकेन्द्रिय-
निष्पन्नं कार्पासादिकं, विकलेन्द्रियनिष्पन्नं चीनांशुकादिकं, पञ्चेन्द्रियनिष्पन्नं रत्न-
कम्बलादिकम्, एतत्सर्वं कदाचिदपि मा विनाशमाप्नुयात् । यत्र यत्र विषये रागस्त-

कारीगरों द्वारा निर्मित नेत्र और मन को लुभानेवाली अनेक प्रकार की
वस्तुओं का संग्रह करना । प्रभत्त-दशा-सम्पन्न प्राणी ऐसा गर्व करता है
कि मने ही इस घर में एक हाथी की जगह अनेक हाथियों का संग्रह
किया है, तथा पहिले इस घरमें शोभा के लिये कोई सुन्दर वस्तु नहीं
थी वह मैंने ही अब इन तमाम नेत्र और मन को लुभानेवाली वस्तुओं
को एकत्रित किया है ।

मोदकादिक भक्ष्य पदार्थ भोजन है । आच्छादन नाम वस्त्र का है ।
एकेन्द्रिय से निष्पन्न कार्पास (सूती) आदिक, विकलेन्द्रियों से पैदा
हुआ चीनांशुक (रेशमी) वगैरह, तथा पंचेन्द्रियों से बनाया गया रत्न-
कम्बलादिक पदार्थ मेरे कभी नष्ट न हो जावें । इस प्रकार के विचारों से
वह मोही जीव सदा संतप्त रहा करता है । प्रतिकूल भोजन मिलने पर
पहिले सुन्दर खाये गये भोजन की याद कर व्याकुल-चित्त हो जाता है,
सोचता है—मैंने पहिले ऐसा भोजन कभी नहीं किया, सुन्दर २ मोद-
कादिक भक्ष्य पदार्थों का ही सेवन किया है । यह सब इस प्रकार की

એ થાય છે કે ઘરમા શોભાને માટે કારીગરોદ્વારા આખા અને મનને લોભાવવા-
વાળી અનેક પ્રકારની વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો

પ્રમત્તદશાસમ્પન્ન પ્રાણી એવો ગર્વ કરે છે કે—મેં આ ઘરમા એક
હાથીની જગ્યા અનેક હાથિઓનો સંગ્રહ કર્યો છે, તથા પહેલા આ ઘરમા શોભા
માટે કોઈ સુદર વસ્તુ ન હતી પણ મેં જ હમણા આ તમામ નેત્ર તથા મનને
લોભાવવાળી વસ્તુઓ લેગી કરી છે

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન છે આચ્છાદન નામ વસ્ત્રનું છે એકેન્દ્રિ-
યથી નિષ્પન્ન સતરાઉ આદિક, વિકલેન્દ્રિયોથી પેદા થયેલા રેશમી વિગેરે, તથા પંચે-
ન્દ્રિયોથી બનાવેલા મારા રત્નકમ્બલાદિક પદાર્થોનો નાશ ન થઈ જાય, આવા પ્રકારના
વિચારોથી તે મોહી જીવ સદા સતપ્ત રહે છે પ્રતિકૂળ ભોજનના મળવાથી પહેલા
સુદર ખાધેલા ભોજનની યાદ કરીને વ્યાકુળચિત્ત થાય છે અને વિચારે છે કે—
મેં પહેલા આખું ભોજન કોઈ વખત ખાધું નથી સુદર મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થો જ

સ્યેષ્ટતાત્પ્રાપ્તિમાયે દ્વેષ ઉપજાયતે, અતા યસ્મિન્ રાગસ્તસ્મિન્નેષ દ્વેષો મન્વતિ-इति स्वभावसिद्धम् । इत्यर्थे गृह्यो लोक इत्यवमर्षमतेषामर्ष मातापितृ पुत्रभार्यादिष्वेव रागादिकारणेषु यावज्जीवति तावत्कर्मणो 'ममेव, एषાं चાર' मित्यनिर्ध रागादिमान् अज्ञानमोहितचित्तो वसति-विच्छति तत्र मूर्च्छा प्राप्नोती

ચિત્તારધારા કા પ્રધાન કારણ પદાર્થોં મેં અતિશય ઉસકી ગૃહ્યતા હી હૈ । ક્યોંકિ હસસે હી ડસે જિસ ૨ વિષય મેં રાગ હોતા હૈ ઘહી ઉસે ઇષ્ટ પ્રતીત હોતા હૈ । અનિષ્ટ પ્રાપ્ત હોને પર યા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મિલને પર ઉસકી આત્મા મેં ઉસસે દ્વેષ કી આશના જાગૃત હોતી હૈ । હસ પ્રકાર હન રાગાદિકોં કે કારણમૂત હન માતા પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોં મેં ગૃહ્ય થના હુઆ યહ જીવલોક જય તક જીતા હૈ તય તક પ્રમત્સ-વશાયુક્ત હી થના રહતા હૈ । 'યે પદાર્થ મેરે હૈ-મૈં હનકા હૂં' હસ પ્રકાર કી કલ્પના સે રાત્રિન રાગાદિક આર્થોં સે લિષ્ઠ થનકર અજ્ઞાન સે આશ્ચાદિત હો ઉન્હીં પદાર્થોં મેં આસક્ત હોતા રહતા હૈ । 'મમકાર' યહ જીવોં કા ઇક પ્રબલ શત્રુ હૈ । થકરે કી તરહ "મૈ-મૈ" હસ પ્રકાર કે શત્રુ કો કરતા હુઆ યહ જીવ અન્ત મેં કસાઈ કે તુલ્ય હસ મયકર કાલ કે દ્વારા પ્રસિત હો જાયા કરતા હૈ । મમકાર કો પ્રબલ શત્રુ હસ લિયે થત લાયા ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર અપને ધલિષ્ઠ શત્રુ કે સમક્ષ જીવ વિવેક-શૂન્ય થન થાથલા જૈસા હો જાતા હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર હસ મમકાર કે સમક્ષ જીવ અપને હિત ઓર અહિત કે માન સે રહિત હો ઉન્મત્સ

આધિદાં છે આ બધા પ્રકારની ક્રિયારધારાનું મુખ્ય કારણ પદાર્થોમા તેની અતિશય ગૃહ્યતા જ છે કારણ કે અહીં તેને જે જે વિષયમા રાગ થાય છે તેથી તે ઇષ્ટ પ્રતીત થાય છે અનિષ્ટ પ્રાપ્ત થવાથી અથવા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મળવાથી તેના આત્મામા તેથી દ્વેષની ભાવના બ્રમત થાય છે આ પ્રકાર આવા સગાહિકાન્ય કારણમૂત માતા-પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોમા ગૃહ્ય બનીને ત્યાં મુખી આ હવેલાકે હવે છે ત્યાં મુખી પ્રમત્તવશાયુક્ત રહે છે આ પદાર્થ આરો છે, હું તેનો હું. આવા પ્રકારની કલ્પનાથી સત ક્રિયસ સગાહિક ભાવોથી વિષ્ઠ બનીને અજ્ઞાનથી આત્મપ્રદિત ગાનવાળા કોઈ તેવા પદાર્થોમા આસક્ત હોય છે મમકાર કો હવેનો એક પ્રબળ શત્રુ છે બકસની માફક "મૈ-મૈ" આ પ્રકારના શબ્દ બોલતા બોલતા આ હવ અતમા કસાઈ તુલ્ય થયકર કાળદ્વારા પ્રસિત બને છે મમકારને પ્રબળ શત્રુની ઉપમા તે માટે આપી છે કે જેમ પોતાના બલિષ્ઠ શત્રુ સમક્ષ હવ વિવેકશૂન્ય બની આવળો (ગાંઠ) બને છે, ઠીક તે પ્રકાર આ મમકારની સમક્ષ પશુ હવ પોતાના ક્રિયાક્રિતના ભાગથી સ્થિત થઈ ઉ મત્ત જેવો બને છે તે વખતે

त्यर्थः । समकारो हि प्राणिनो महाच्छत्रुः, ममशब्दं कुर्वाणो हि करालकालव्याल-
कवलितो भवति प्राणिगणः । यथा चोक्तम् ।

अशनं मे वसनं मे, जाया मे बन्धुवर्गो मे ।

इति मे-मे-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥

पुत्रा मे भ्राता मे स्वजना मे गृहकलत्रवर्गो मे ।

इति कृत-मे-मे-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥

पुत्रकलत्रपरिग्रहममत्वदोषैर्नरो व्रजति नाशम् ।

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥

जैसा बन जाता है । उसे उस समय इस बात का भी ध्यान नहीं होता कि मेरा स्वरूप क्या है और इन परपदार्थों का स्वरूप क्या है? कसाई का बकरा जिस प्रकार “मैं-मैं” करता हुआ कसाई के द्वारा अंत में मौत के घाट उतार दिया जाता है उसी प्रकार “मैं-मैं” करनेवाला यह जीव भी अन्त में एक न एक दिन इस दुष्ट भयंकर काल के द्वारा मारा जाता है । कहा भी है—

“अशनं मे वसनं मे, जाया मे बन्धुवर्गो मे ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

पुत्रा मे भ्राता मे, स्वजना मे गृह-कलत्र-वर्गो मे

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

पुत्र-कलत्र-परिग्रह-ममत्वदोषैर्नरो व्रजति नाशम्,

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ ” इति ।

इनका अर्थ ऊपर आ चुका है ।

तेने એ પણ ધ્યાન નથી હોતું કે મારૂં સ્વરૂપ શું છે અને આ પરપદાર્થોનું સ્વરૂપ શું છે ? કસાઈના બકરા જેમ “મैं-મैं” કરતો કસાઈદ્વારા અતમા મોતને તાબે થાય છે તે પ્રકારે “મैं-મैं” કરવાવાળા આ જીવ પણ અતમા એક દિવસ આ દુષ્ટ ભયંકર કાળદ્વારા મરે છે કહ્યું પણ છે—

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

पुत्रा मे भ्राता मे, स्वजना मे गृहकलत्रवर्गो मे ।

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

पुत्रकलत्रपरिग्रहममत्वदोषैर्नरो व્રजति नाशम् ।

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ इति ॥

આનો અર્થ ઉપર આવેલ છે,

इति ममकारप्रादृष्टीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दाविधिपयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिषहोपार्जनपरो दुःस्वमवानुभवति । सैव परितप्यमाना भ्रमतीत्याह—“अहम् रात्रिं च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दः पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये घनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःस्व का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणामी हो उसके समग्र की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहम् रात्रिं च” यहाँ पर “च” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारता रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को स्वरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक स्वपत होनेसे बिक्री तेजी से होती है । कौनसी बीज स्वरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका समग्र करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उधल-पुधल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ वह इन्हीं विचारों को छेकर पड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचारा

પાસ ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોના ગુણધર્મો પુરુષ માતા-પિતા આદિને સુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામા જ હોયેલા દુઃખને અનુભવ કરે છે અને સત ક્રિયસંચારના બની તેના સંબંધની ચિંતામા અહીં-તહીં ધૂંબ્યા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોના સામનો કરે છે

“અહમ્ રાત્રિં ચ” આ ઠેકાણે “ચ” શબ્દથી પક્ષ માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે વિચારતો રહે છે કે ક્યારે એવો વખત મળે જ્યારે હું બહાર જાઉં અને ક્રયવિક્રમની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું. એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં અનુકૂળ વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં આ વસ્તુઓ અધિક ખર્ચા કરવાથી તેજીથી વેચાઈ જાય. આ વખતે કઈ બીજા ખરીદવાથી ફાયદો થશે, તથા કઈ વસ્તુને સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમા અધિક લાભ થશે, ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમા સદા ઉધલપાથલ મચી રહે છે એટલે સુધી કે સુવા વખતે તથા ચુતા ચુતા તેને આ વિષયના સ્વપ્ના આવે છે અને કેઈ વખતે તે આવા વિચારોથી બાબ પા પા પા પા લાગે છે તેને નિદ્રા પણ ઠીક

તૃવર્ષાદિકં ગ્રાહ્યમ્ । પ્રવૃત્તસાવધ્યાનુષ્ઠાનઃ પરિ=સર્વતઃ, તપ્યમાનઃ=શારીરિકમાનસિક-
વાચિકદુઃખેન ક્લિષ્ટમાનઃ અન્તર્દાહદગ્ધો ભવતીતિ યાવત્ ।

કદા મે વિદેશગમનં ? કદા કુત્ર માણ્ડનયને મે લાભો ભવિતા ? કીદૃશશ્ચ ક્રય-
વિક્રયાવસરઃ ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्=सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति
तथैवानसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न
करोति । मातापितृपुत्रभार्याद्यर्थनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

રાત દિન इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल की ज्ञानकलासे सदा विकल ही
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करता उसी
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करता, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई
अरिर्मर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

આવતી નથી બિચારા રાતદિન આવા જ વિચારોમા મગ્ન બની સતપ્ત થાય છે.
કાળ અકાળનો તે જશ પણ વિચાર કરતો નથી તેને જેવો અવસર તેવો જ
અનવસર, તેને માટે અવસર અને અનવસરમા કોઈ ભેદ નથી, તે તો પોતાની
ઇચ્છાનુસાર અનર્ગળ પ્રવૃત્તિ કરે છે અથવા જેમ ભૂતાદ્યાવિષ્ટ-(ભૂતાના વળગાડ-
વાળા) ભલા-બુરાનો વિચાર નથી કરી શકતા તે તો મનમાન્યો કામ કરે છે તે
પ્રકારે માતા-પિતા આદિ સાંસારિક પદાર્થોમા જ આસક્ત મનવાળા પ્રાણી અન્ય
આત્મહિતકારી કાર્યોથી ઉપેક્ષિત વૃત્તિવાળા બની કાળ-અકાળની જ્ઞાનકલાથી
હમેશા વિકળ જ બને છે અવસર નહિ હોવાથી જેમ કાર્ય નથી કરતા તેમ
અવસરમા પણ કાર્ય નથી કરતા પણ જ્યાં ઇચ્છા થઈ કે સમય-અસમય જોયા
વિના કામ કરવા લાગે છે જેમ અરિમર્દન નામનો રાજા સમયનો બાણકાર નહિ

યથા કષિદરિમર્દનનામા નરાધિપો વિપક્ષપક્ષદક્ષનવક્ષોઽપ્યવસરાનમિદ્ધો નગરીં
સિંહાદિશ્વાપદાકુલ્લિતામવલોક્યાપિ યદુપુ માણિગણેષુ નાશમુપગતયુ પશ્યાચ રક્ષાર્થ
પ્રાકારં કારિતવાન્ તથૈવ કાલાકાલસમુત્થાયી ચાવસરાનવસરાનમિદ્ધા મયતીતિ માષ ।

યસ્તુ સમ્યક્ કાલોત્થાયી સ ષ કાલપરિજ્ઞાનાર્થ સતત સાવધાનો યથાવસરં
સકલ્લા ક્રિયાં વિદધાતિ । કિન્તુ યથા જન્માદરકાલ્યા નાસ્તિ તથા ધર્મેઽપિ
નાડકાલ , “ ધર્મો હિ ધુર્હર્ષિ પરિસેવિયન્વો ” ઇતિ ચચનાત્ । યા હિ રાગવાન્ સ
કાલાકાલસમુત્થાયી કિમર્થમિત્યાહ-“ સંયોગાર્થી ” સંયુજ્યતે, સંયોજનં વા સંયાગ ,
સોઽર્થ -પ્રયોજનં યસ્યાસ્તીતિ સંયાગાર્થી । સંયાગઃ=શબ્દાદિવિષય , માતાપિત્રા-
દિમિશ્વ સંયોગસ્તદર્થી=તત્પ્રયોજનવાન્ ।

પરન્તુ અનવસરજ્ઞ હોને સે ડસને અપની પ્રજાકી રક્ષા ડસ સમય-જબ
કિ ડસે સિંહાદિ નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કર રહે થે; નહીં કી, પશ્યાત્ જબ લોગ
હર તરહ સે ઘર્ષાદ્ હો શુકે તથ ડસ સમય જોકિ ડનકી રક્ષા કા અવ
સર નહીં થા ડસને રક્ષા કે લિયે નગર કા કોટ ધનવા દિયા । જિસ
પ્રકાર વહ રાજા કાલાકાલસમુત્થાયી હોને સે વિવેકી નહીં માના જા
સક્તા, ડસી પ્રકાર જો પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી હોતા હૈ વહ મી
અવસર ઔર અનવસર કા યથાર્થ જ્ઞાતા નહીં હોતા, જો કાર્ય કે ઉચિત
કાલ મેં કાર્ય કરને કે સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ નિરન્તર અવસર કે
અનુસાર હી સાવધાન હોકર ડસી સમય મેં સમસ્ત ક્રિયાઓં ક્રો કરતા
હૈ । રાગવાન પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી ક્યોં હોતા હૈ ? ઇસ્કે લિયે
સૂત્રકાર કહતે હૈ-“ સંયોગાર્થી ” ઇત્યાદિ । વહ સંયોગાર્થી હૈ । સંયોગ
હી જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ સંયોગાર્થી હૈ શબ્દાદિક વિષયોં કે સાથ,

હોવાથી જ્યારે સિંહાદિ હિંસક પ્રાણી પ્રભાતે નાશ કરી રક્ષાં હતા ત્યારે
પ્રભાતી રક્ષા કરી નહિ પણ જ્યારે પ્રભાતી બરણાદી ઘર્ષ અર્થ ત્યારે જો કે અવસર
નહિ હોવા છતાં પ્રભાતી રક્ષા માટે કોટ બનાવ્યો તો જે પ્રકારે તે રાજા કાળકાળ
સમુત્થાયી હોવાથી વિવેકી મનાતો નથી તે પ્રકારે જે પ્રાણી કાળકાળસમુત્થાયી
છે તે પણ સમય અસમયને જાણ નથી, જે કાર્યના ઉચિત કાળમાં કાર્ય કરવાના
સ્વભાવવાળા હોય છે તે નિરતર અવસર અનુસાર જ સાવધાન થઈ તે સમયમાં
સમસ્ત ક્રિયાઓ કરે છે રાગવાળા પ્રાણી કાળકાળસમુત્થાયી કેમ બને છે ?
તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે-“ સંયોગાર્થી ” ઇત્યાદિ તે સંયોગાર્થી છે સંયોગ જ
જેનું પ્રયોજન છે તે સંયોગાર્થી છે. શબ્દાદિક વિષયોમાં તેમ જ માતાપિતાદિકની

યદ્વા હસ્ત્યશ્વરથઋત્રમિત્રદ્વિપદચતુષ્પદાદિરૂપઃ સંયોગસ્તત્પ્રયોજનવાન્ । યતઃ સંયોગાર્થી અતएव કાલાકાલસમુત્થાયી, ઇતિ હેતુગર્ભં વિશેષણમ્ । સંયોગવ્યગ્રતયૈવા- નવગતકાલાકાલવ્યવસ્થા ઇતિ યાવત્ । અતएव અર્થાલોભી-અર્થો ધનં કુપ્યમકુપ્યં ચેતિ, તત્ર સુવર્ણાદિભિન્નં રત્નાદિ કુપ્યમ્, સુવર્ણરજતાદિરૂપમકુપ્યં ચેતિ ભેદઃ । આ=સમન્તાત્ સર્વત ઇતિ યાવત્, લોભો=લાલસા વિદ્યતે યસ્ય સ આલોભી અર્થસ્યા- લોભી અર્થાલોભી, અત્રાપિ કાલાકાલસમુત્થાયીતિ વિશેષણમ્ । યસ્માદ્ધનામિલાષી તસ્માત્કાલાકાલસમુત્થાયી, અનિર્જાતકાલાકાલનિયમઃ, યો હિ ધનં કામયતે

અથવા માતાપિતાદિક કે સાથ જો સંબંધ હૈ । ડસી કા નામ સંયોગ હૈ । અથવા-હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહ કે સાથ સંબંધ મી સંયોગ હૈ । તત્પ્રયોજનવાન્ પ્રાણી સંયોગાર્થી કહલાતા હૈ । યહ સંયોગાર્થી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ । કાલાકાલ-સમુત્થાયી હોને મેં સંયોગાર્થિત્વ યહ હેતુ હૈ । સંયોગ મેં વ્યગ્રતા હી કાલાકાલ કી અવ્યવસ્થા કા કારણ હોતી હૈ । “અર્થાલોભી”-સવ પ્રકાર સે અર્થ કા અમિલાષી જો હોતા હૈ-વહ અર્થાલોભી હૈ । કુપ્ય ઔર અકુપ્ય કે ભેદ સે ધન દો પ્રકાર કા વતલાયા ગયા હૈ । રત્નાદિક કુપ્ય હૈ । સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય હૈ । અર્થ-આ-લોભી-ઇસ પ્રકાર ઇસ વાક્ય મેં પદચ્છેદ કરને સે યહ અર્થ નિષ્પન્ન હોતા હૈ કિ જો આ-સર્વ પ્રકાર સે અર્થલોભી હૈ । યહાં પર મી ‘કાલાકાલસમુત્થાયી’ ઇસ વિશેષણ કી યોજના કર લેની ચાહિયે । ઇસસે યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ યહ ધનામિલાષી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ, કાલ ઔર

માથે જે સખ ધ છે તેનુ નામ સ યોગ છે, અથવા હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહની સાથે સખ ધ પણ સ યોગ છે એવા પ્રયોજનવાળો પ્રાણી સ યોગાર્થી કહેવાય છે તે સ યોગાર્થી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે કાળાકાળસમુ- ત્થાયી હોવામા સ યોગાર્થીત્વ હેતુ છે, સ યોગમા વ્યગ્રતા જ કાળાકાળની અવ્યવસ્થાનુ કારણ થાય છે “અર્થાલોભી” બધા પ્રકારે અર્થનો અમિલાષી થાય છે તે અર્થ- લોભી છે કુપ્ય અને અકુપ્યના ભેદથી ધન જે પ્રકારનું બતાવ્યું છે રત્નાદિક કુપ્ય છે, સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય છે ‘અર્થ-આ-લોભી’ આ પ્રકારે આ વાક્યમા પદચ્છેદ કરવાથી એવો અર્થ નિષ્પન્ન થાય છે કે જે આ સર્વ પ્રકારથી અર્થ-કુપ્ય અને અકુપ્યરૂપ દ્રવ્યનો લોભી-અમિલાષી-છે તે અર્થલોભી છે આ કહેણે પણ ‘કાળાકાળસમુત્થાયી’ આ વિશેષણની યોજના કરવી જોઈ એ તેથી એ ફલિતાર્થ થાય છે કે ધનામિલાષી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે. કાળ અને અકાળના

સોઝવસરાદિકં ન ક્ષિમપિ જાનાતિ । અનવસરમપિ શ્લોભમાનાવસરમ મન્યમાનો
 યસ્માત્કસ્માદ્ યેન કેન પ્રકારેણાર્યં ઘાઠ્ઠતિ । અર્થલુબ્ધો हि सत्तत्तमयोपार्जन-
 व्यासक्तमानस प्रादपि मृगशृङ्गारात्प્રरिते काले दुरधिगतनलस्यलसुपयविषयायां
 પદમપિ ગન્તુમસમાયાં સમાયાં વાણિજ્યાર્યં નાથાપારપારાવારમપિ તિતીર્થર્ષીપાદ્
 દ્વીપાન્તરે ગમનાગમનાદિકં કરોતિ, સર્વથ ધનલોભ એવ કારણમ્ । ધનાર્થી પ્રાથમપિ

અકાલ કે નિયમ કા જ્ઞાતા નહીં હૈ । જો ધનકા અભિલાષી હોતા હૈ વહ
 સમય કી પ્રતીક્ષા નહીં કિયા કરતા હૈ । ધનાર્જન કરને કા અવસર નહીં
 હોને પર ંહી યહ “ ધન કમાને કા સુન્દર અવસર હી હૈ ” ંસા માન
 કર જિસ કિસી ંહી રીતિ સે ધન કી અભિલાષા કિયા કરતા હૈ । જો
 દ્રવ્ય કા લુબ્ધક હોતા હૈ વહ નિરન્તર દ્રવ્ય કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્ત
 હિસ ધન કર ઘડોકાલ મેં મૂસલધાર પાની ઘરસને પર ંહી રાત્રિ કે
 સમય હી ઉસ ંમિ મેં કિ જિસમેં જલ સ્થલ સમમાર્ગ ંર ઘિપમમાર્ગ
 કી કુછ ંહી સ્વર નહીં પડતી ંર જાઈ ંક કદમ ંહી ચલના વઢા
 મુશ્કિલ હોતા હૈ ંસી ંમિ મેં ંહી ંયાવાર કે લિયે ગાફી આદિ કિસી
 સાધન દ્વારા ંક નગર સે દુસરે નગર મેં, ંર નૌકા સે અપાર સમુદ્ર કો
 ંહી પાર કર ંક દીપ સે દુસરે દીપ મેં આતા જાતા રહતા હૈ । પ્રાણો કો
 ંહી સંકટ મેં ંાલ ધનાભિલાષી ધન કમાને કે લિયે દુર્ગમ પ્રદેશો મેં
 જાકર ધન કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, ઉસમેં સિર્ફ ધન કા લોભ હી કારણ
 હૈ । દ્રવ્યલોલુપી અપને પ્રાણો કી ંાજી લગાકર ંહી હ્ચર ઉઘર દ્રવ્ય

નિમગ્નને રાખા નથી, જે ધનને અભિલાષી છે તે સમયની પ્રતીક્ષા કરતો નથી,
 ધન ઉપાર્જન કરવાને અવસર નહિ હોવા છતાં “ ધન કમાવાને મુદ્દર અવસર
 છે એમ માની કોઈ પણ પ્રકારે ધનની અભિલાષા કર્યા કરે છે જે દ્રવ્યને
 લુબ્ધક હોય છે તે નિરન્તર દ્રવ્ય ઉપાર્જન કરવામા આસક્ત બની વર્ષાઋતુમા
 મૂસલધાર પાણી વરસતો હોય છતાં રાત્રિ સમય તે ભૂમિમાં કે વન્યા જળ સ્થળ
 અમમાર્ગ અને વિષમમાગની કાંઈ પણ ખબર પડતી નથી અને જ્યાં કોઈ અશુભ
 પણ ભરતું મુશ્કેલ થઈ પડે છે તેવી ભૂમિમા પણ વ્યાપાર કરવા ગાથા આપિ
 કોઈ સાધનદ્વારા કોઈ ગામથી બીજા ગામમાં અને નૌકાથી અપાર સમુદ્રને પણ
 પાર કરી કોઈ દ્વીપથી બીજા દ્વીપમા આવે જાય છે પ્રાણને પણ એજમમા મૂકીને
 ધનાભિલાષી ધન કમાવા દુર્ગમ પ્રદેશમાં જઈ ધનનુ ઉપાર્જન કરે છે તેમાં કષ્ટ
 ધનને લોભ જ કારણ છે દ્રવ્યલોલુપી પાતાના પ્રાણના ભોજે પણ અહીં-તહીં

વૃણવન્મન્યમાનો મુહુર્મમતિ । ઉપાર્જિતાર્થરક્ષણાય રાત્રાવપિ ચૌરાદિભયાન્ન નિદ્રા-
મનુભવતિ । મમ્મણશ્રેષ્ઠિવદુઃખી ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

‘ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

કો કમાને કે હી ળ્યાલ સે ઘૂમતા હૈ તથા ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કે રક્ષણ કે
લિયે રાત્રિમેં ઢી ચૌરાદિક કે ભય સે યથેચ્છ નિદ્રા નહીં લેતા । મમ્મણ
સેઠ કી તરહ દુઃસ્વ કા હી અનુભવ કરતા હૈ । કહા ઢી હૈ:—

“ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥૧॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાઘ મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃસ્વં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુસ્વાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોઢી પુરુષ જમીન મેં ગઢે હુએ અપને ધનકો કઢી
બાહર નિકાલતા હૈ કઢી ફિર જમીન મેં ગાડતા હૈ કઢી પેટી આદિ મેં
રલ્લતા હૈ । વહ ચોર આદિ કે ભય સે રાતકો સોતા નહીં ઓર દિન મેં
ઢી ળંકા કરતા રહતા હૈ કિ ‘ મેરે ધન કો કોઈ ચુરા ન લે જાય । ’ વહ
ધન કો ઢાટ કર ડપર સે લીપતા હૈ, તથા ડસ લીપે હુએ પર ડસ ધન કો

દ્રવ્ય કમાવાના ખ્યાલથી રખડતો ફરે છે, તથા કમાયેલા દ્રવ્યનુ રક્ષણ કરવા રાત્રિના
મમયમા ચૌરાદિકના ભયથી સુખથી નિદ્રા પણ લેતો નથી મમ્મણુ શેઠ માફક
હુખનો જ અનુભવ કરે છે કહ્યું છે કે—

“ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્ક ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિત-પ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાઘ મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃસ્વં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુસ્વાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ—ધનલોભી પુરુષ જમીનમા ઢાટેલુ પોતાનુ ધન ડોઈ વખત ખહાર
ડાટે છે, ડોઈ વખત જમીનમા ઢાટે છે, ક્યારેક પેટી આદિમા રાખે છે, વળી
રાત્રે ચોર આદિના ભયથી સુતો નથી અને દિવસે પણ શકા કરે છે કે—“ માફ
ધન ડોઈ ચોરી ન જાય ” વળી ધનને ઢાટીને ડપરથી લીધે છે તથા તે લીધેલી

મુશ્વ ન તાવમિન્યાંપારો, જિમિતું નાપિ ચાધ મહસ્વામિ ।
નાપિ ચ વત્સ્યામિ શુદ્ધે, કર્તવ્યમિદં વહ્નય ॥ ૨ ॥ અપિ ચ-
જનયત્સ્પર્જને દુઃસ્વં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કયમર્યાઃ સુભાવશા ? ॥ ૩ ॥

પુનરપ્યર્યાસામિનોઽનુચિત્કરણે પ્રવૃત્તિં વર્ણયતિ-“આલુમ્પ ” ઇતિ, મા-

સમન્તાલ્લુમ્પતીત્યાલુમ્પો લુપ્ટાકો ઇઠાદનાપહારક, સ ચ ભોમમહાશીવિપદદ્યો
વિસ્મૃતકર્તવ્ય્યાકર્તવ્યો ધનમવાર્જનોય-મિતિ મન્યમાન કદુકકદુકસરવિપાકમનકં

પહિધાનને કે લિપ્ પુનઃ પુનઃ સુત્રા-નિશાન કરતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ ઘઠ
ન પૂરા સ્વાતા હૈ ન અચ્છા મ્વાને કે લિયે પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તથા ચોલ્તા હૈ
કિ-મૈં આજ ન સ્નાન કર્સેગ્યા ઓર ન ઘર પર હી રહ સર્કૂંગા, ક્યોંકિ આજ
સુદ્ધે વહુત કામ કરના હૈ ॥ ૨ ॥ યહ ઘન ઉપાર્જનકાલ મૈં દુઃસ્વ ઉત્પન્ન
કરનેવાલા હૈ, ઉસ્કે નષ્ટ હોને પર વહ પરમદુઃસ્વ કા કારણ હોતા હૈ,
યદ જાને પર વહ મોહકવાય કો વહાતા હૈ તો ફિર કહો કિ ઘન સુસ્વકા
કારણ કૈસે હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । અર્થ અનર્થ કા હી
મૂલ હૈ કિન્તુ સુસ્વ કા નહીં ॥ ૩ ॥

અર્થભોમી ઓર મી અયોગ્યકાર્ય મૈં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ઇસે પ્રકટ
કરતે હૈ-આલુમ્પ -‘ આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઈતિ આલુમ્પ લુપ્ટાકઃ
ઇઠાદનાપહારક ’ જો જપર્વસ્તી સે ઇસરોં કા ધન છૂટે-ઉસે આલુમ્પ
કહતે હૈ । છૂટ યહ ઇસલિયે મચાતા હૈ કિ યહ ભોમરૂપી મહાસર્પ સે
ચસા હુઆ રહતા હૈ । અતઃ ઇસે અપને કર્તવ્ય્યાકર્તવ્ય કા કુછ મી માન

જ્યા ઉપર તે ધનની પિત્રણ માટે નિશાની પશુ કરે છે ॥ ૧ ॥ તે પુરૂ ખાતે
પશુ નથી તેમજ સારૂ ખાવાને પ્રવૃત્ત થતો નથી, અને ખોલે છે કે-હું જાણે
માન કરવાનો નથી તેમજ ઘેર પશુ રહેવાનો નથી, કારણકે આને ખાતે થતું
કામ છે (૨) આ ધન, ઉપાર્જનકાળમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરવાવાળું છે અને તેના
નાશ થવાથી વધારે દુઃખનું કારણ થાય છે વધી જતા ઉપર તે મોહકવાયનો
વધારો કરે છે તે હવે કહો ! ધન સુખનું કારણ કેવી રીતે થાય ? અર્થાત્ ધર્મ
ચકતું નથી, અર્થ અનર્થનું જ મૂળ છે પણ સુખનું નહિ ॥ ૩ ॥

અર્થભોમી વળી અયોગ્ય કાર્યમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પ્રકટ કરે છે -
આલુમ્પ મા-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઈતિ આલુમ્પ-લુપ્ટાક ઇઠાદનાપહારક
ને જગત્માંથી બીજાનું ધન છૂટે-તેને આલુમ્પ કહે છે છૂટ તે એવી મચાવે
છે કે જાણે ભોમરૂપી મહાસર્પથી આયેલા હોય, અને તેવે વખતે કતબ્યા

નિર્લાઞ્છન-ગલકર્તન-ગૃહદાહાદિક ક્રૂરકર્મ કરોતિ 'ધનમેવ સારં' મન્યમાનો હિ સતતં તલ્લાભાય મોહાવિષ્ટો ભ્રમતિ । સ ચાર્યલાભાય કિં કરોતીત્યાહ-“ સહસાકાર ” ઇતિ આર્પત્વાત્કર્તરિ ઘઞ્ । સહસા કરોતીતિ સહસાકારઃ । સ્વહિતાહિતમવિચાર્ય કર્મકારી । યથા મૃગાદિઃ ક્ષેત્રે જાલાદિકં ત્રિલોક્યાપિ તમવજ્ઞાય ધાન્યાદિમક્ષણ-લોભેન સ્વયમપ્યવિચાર્ય જાલે વદ્ધો ભવતિ મ્રિયતે ચ પથ્વાત્તેનૈવ નિમિત્તેન । તથૈવ લોભાકુલિતચેતા ધનલાભપરાયણઃ સ્વપ્રપ્રાણઘાતકમપિ કર્મ કરોતિ । અર્થલાભાય નહીં રહતા, ઉસ સમય એક યહી ઉસકા લક્ષ્ય રહતા હૈ કિ કિસી ભી તરહ સે દ્રવ્ય એકત્રિત કરના ચાહિયે । ઇસ ધ્યાલ સે વહ બયંકર સે ભી બયંકર ભવિષ્યત્કાર્લાન કટુક વિપાક કી પરવાહ ન કરકે લોક-નિંદિત નિર્લાઞ્છન, દૂસરોં કા ગલા ઘોંટના, દૂસરોં કા ઘર-વાર ફૂંકના આદિ ક્રૂર કર્મ કર ડાલતા હૈ । ‘સંસાર મેં સાર વસ્તુ એક દ્રવ્ય હી હૈ’ એસા માન કર નિરંતર ઉસકે લાભ કે લિયે મોહાધીન હો ઘૂમતા રહના હૈ । ઓર ઇસકે લાભ કે લિયે વહ “સહસાકારઃ” હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હો અયોગ્ય કર્મ કરને કે લિયે તત્પર હો જાતા હૈ । જૈસે મૃગાદિ પશુ ક્ષેત્ર મેં વિસ્તીર્ણ જાલ કો દેખ કર ભી ઉસકી કુછ ભી પરવાહ ન કર ધાન્યાદિક ખાને કે લોભ સે અપને વધ (મૃત્યુ) કી ભી ઉપેક્ષા કર જાલ મેં ફંસ જાતે હૈં ઓર ઉસી મેં ફંસે ૨ મર જાતે હૈં । ઉસી પ્રકાર લોભ સે આકુલિતમતિ હોકર ધન કે લાભ કે લિયે તત્પર હુઆ જીવ ભી સ્વ ઓર પર કે પ્રાણોં કો ઘાત કરને વાલે ક્રૂર કર્મોં કો કિયા કરતા હૈ । દ્રવ્ય કે લાભ કે લિયે પ્રયત્નશીલ બના હુઆ યહ પ્રાણી જિસ પ્રકાર

કર્તવ્યનુ કાર્થ પશુ ભાન નહિ રાખતા ફક્ત એક જ લક્ષ્ય રાખે છે કે કોઈ પશુ પ્રકારે દ્રવ્ય એકત્રિત કરી લઈ આવા બચાવથી તે ભયકરમા ભયકર ભવિષ્યત્કાલીન કટુક વિપાકની પરવાહ પશુ ન કરતા લોકનિંદિત-નિર્લાઞ્છન, ખીજાનુ ગણુ દબાવવુ, ખીજાનુ ઘર બાળવુ, આદિ ક્રૂર કર્મ કરે છે ‘સંસારમા સાર વસ્તુ એક દ્રવ્ય જ છે’ એવુ માનીને નિરંતર તેની પ્રાપ્તિ માટે મોહાધીન થઈ ફરતો રહે છે દ્રવ્યપ્રાપ્તિ માટે તે “સહસાકાર” હિતાહિતના વિવેકથી વિકળ થઈ અયોગ્ય કર્મ કરવા તત્પર થાય છે જેમ મૃગાદિ પશુ ક્ષેત્રમા વિસ્તીર્ણ બળાને દેખીને પશુ તેની પરવાહ નહિ કરતા ધાન્યાદિક ખાવાના લોભથી પોતાના મૃત્યુની પશુ ઉપેક્ષા કરી બળામા ફસે છે અને તેની અદર ફસીને તેમા જ મરે છે તે પ્રકારે લોભથી આકુલિતમતિના બનીને ધનના લાભ માટે તત્પર થયેલ જીવ પશુ પોતાના અને ખીજાના પ્રાણોના ઘાત કરવામા ક્રૂર કર્મોને કરે છે, દ્રવ્યના લાભ માટે પ્રયત્નશીલ બની તે પ્રાણી જેમ ધન કમાવાના

પ્રયત્નમાનો હિ યથોપાયાન્ પશ્યતિ તથા નાપાયાન્ । અર્થાતુરો હિ ન સ્વજનાદિક-
મપિ ગણયતિ તમપિ વચ્ચયતિ । પુનરર્થાલોમી કીદૃશો મવતીત્યાહ—“ વિનિષ્ઠિચિત્ત ”
ઇતિ, વિનિષ્ઠિચિત્ત નિષ્ઠિચિત્ત અનેકથા સ્થિત ધનાર્જને ચિત્તં યસ્ય સ વિનિષ્ઠિચિત્ત ।

યદ્વા—માતાપિત્રાદ્યમિસમ્બધે વિનિષ્ઠિચિત્ત મન્તઃકરણં યસ્ય સ વિનિ-
ષ્ઠિચિત્ત, સતતં ઠસ્ય ચિત્તે ધનલાભામિનિવેશ ઉપજાયત ઇતિ માથ । પવંમૂલ
ક્લિં કરોતીત્યાહ—“ અથ શક્તે પુન પુન ” ઇતિ । અન્ન—અસ્મિન્ માતાપિતૃભ્રાતૃ
મગિની—માયા—પુત્ર—દુરિત—સ્ત્રુપા—મિત્ર—પિતૃષ્ય—શ્વશુર—ઇત્ય—આદિકે, શ્વદાદિ
કામદુષ્ટે વા વિનિષ્ઠિચિત્તઃ શક્તે—પશુજીવનિકાયાપમર્દનલક્ષણે પુન પુન પ્રવર્તતે ।
રાગાદ્યાદિષ્ટવેતા સયોગાર્થી અર્થાલોમી આલુમ્પઃ સહસાકારસ્ત્ર વિનિષ્ઠિચિત્તઃ પશુ
જીવનિકાયાસ્વારમ્ભે વારં વારં પ્રવર્તત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૧ ॥

ધન કમાને કે ઉપાયોં કી ઓર દેસતા હૈ ઉસ પ્રકાર સે કષ્ટોં કી તરફ
નહીં દેસતા, અર્થાત્ પ્રાણી અપને નિજ ઝન કી સી રક્ષત નહીં કરતા,
પ્રત્યુત ઉન્હેં સી ઠગને કી ફિરાક મેં રહતા હૈ । ક્યોંકિ વહ “ વિનિષ્ઠિ-
ચિત્તઃ ” અનેક પ્રકાર સે ધન કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્તિવાલા
હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર વહ “ અથ શક્તે પુન પુન ” માતા, પિતા, માઈ,
બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસુરા ઓર હસ્તિ આદિ
પદાર્થોં મેં અથવા શબ્દાદિકલિપયોં મેં વિનિષ્ઠિચિત્ત—તણીન ધનકર
પશુજીવનિકાયા કે ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમેં વારવાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।
ઇસ સૂત્ર કા ફલિતાર્થ યહ હુઆ કિ રાગાદિકોં મેં તણીનચિત્તવાલા
સયોગાર્થી, અર્થાલોમી, આલુમ્પ સહસાકારી પ્રાણી, ઝન ૨ પદાર્થોં મેં
તત્પર હોકર પશુજીવનિકાયા ક આરમ્ભ મેં વારવાર પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ॥ ૧ ॥

ઉપાયો તરફ જ દેખે છે તે પ્રમાણે કષ્ટો તરફ દેખતો નથી અર્થાત્ પ્રાણી પોતાના
નિજ જનની પણ ઇચ્છત કરતો નથી, ઉલ્ટું તેને પણ હુંડવાની ફિકર કરે છે,
પ્રત્યુત તે “ વિનિષ્ઠિચિત્ત ” અનેક પ્રકારથી ધન ઉપાન કરવામા આસક્ત
ચિત્તવાળો થાય છે આ પ્રકારે તે અન્ન શક્તે પુન પુન માતા, પિતા,
માઈ બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર પુત્રી, વહુ, મિત્ર કાકા, સસુરા અને હસ્તિ આદિ
પદાર્થોમા અથવા શબ્દાદિકલિપયોમા વિનિષ્ઠિચિત્ત—તણીન બનીને પશુજ
નિકાયાના ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમાં વારવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે આ સૂત્રનો ફલિતાર્થ
એ થાય છે કે તગાદિકામા તણીનચિત્તવાળા સયોગાર્થી, અર્થાલોમી, આલુમ્પ
સહસાકારી પ્રાણી તેવા પદાર્થોમા તત્પર બનીને પશુજીવનિકાયાના આરમ્ભમા
વારવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. ૧

યદિ મનુષ્યો દીર્ઘાયુરજરામરો વા ભવેત્તદા યુક્તો માતા-પિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞ-
સ્તસ્ય, કિન્તુ નૈવમસ્તિ। મનુષ્યશિરસિ ચ મૃત્યુરનિશં ભ્રમતિ। જરાજીર્ણસ્ય
કર્તવ્યકર્તવ્યશૂન્યસ્ય પ્રાણિનો વાર્થકે માતાપિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞેઽપિ તદર્થપ્રયાસાક્ષ-
મત્વેન મૂઢતા જાયતેતિ દર્શયતિ—“અપ્યં ચ” ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—અપ્યં ચ ચ્વલુ આઝયં ઇહમેગેસિં માણવાણં, તં જહા
સોયપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, ચક્ષુપરિણાણેહિં પરિહાય-
માણેહિં, ઘ્રાણપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, રસણપરિણાણેહિં
પરિહાયમાણેહિં, ફાસપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, અભિવકંતં
ચ ચ્વલુ વયં સંપેહાય તઓ સે ઇગયા મૂઢભાવં જળયઈ (સૂ. ૨)

યદિ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોતા અથવા અજર અમર હોતા તો માતા-
પિતાદિક મેં ઇસ્કા મમત્વ કરના મી યુક્તિયુક્ત થા, કિન્તુ ઇસા તો
હૈ નહીં ક્યોંકિ નિરન્તર હી ઇસ્કે મસ્તક પર મૃત્યુ ઘૂમતી રહતી હૈ।
ઔર જરા સે સમયાનુસાર યહ જીર્ણકાય મી હોતા રહતા હૈ। ઇસ પરિ-
સ્થિતિ મેં મૃત્યુ ઔર જરા કે વશ મેં પડે હુઈ ઇસ્કે હૃદય મેં સદા
આકુલ-વ્યાકુલ પરિણામોં કી પરિણતિ જાગૃત હોતી રહતી હૈ તવ ડસમેં
હી રાતદિન મગ્ન હુઆ યહ જવ સ્વયં અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે બોધ સે
હી ચિકલ રહતા હૈ તવ યહ અપને સગે-સમ્બન્ધી માતાપિતાદિક કા
અભિષ્વંગ-સંબંધ હોને પર મી અપની તરફ સે ડનકે લિયે થોડા સા
મી પ્રયાસ-ડચમ નહીં કર સકતા હૈ, જવ પ્રયાસ નહીં કર સકતા હૈ
તવ વહ કિંકર્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ। ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ
કરતે હૈં:—“અપ્યં ચ ચ્વલુ આઝયં” ઇત્યાદિ।

કદાચ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોત અથવા અજર અમર હોત તો માતાપિતાદિકમા
તેનુ મમત્વ કરુ યુક્તિયુક્ત હેતું પણ એવુ તો છે નહિ, કારણકે નિરન્તર તેના
માથા ઉપર મોત ભમે છે, અને ઘડપણથી સમયાનુસાર તે જીર્ણકાય પણ થાય
છે આવી પરિસ્થિતિમા મૃત્યુ અને જરાની વશમાં પડેલો તેના હૃદયમા હમેશા
આકુલ-વ્યાકુલ પરિણામોની પરિણતિ જાગૃત રહે છે તેમા જ રાતદિવસ મગ્ન
થએલો તે પોતે પોતાના કર્તવ્યા-કર્તવ્યના બોધથી જ વિકળ રહે છે ત્યારે તે
પોતાના સગા સબંધી માતા પિતાદિકના અભિષ્વંગ-સંબંધ હોવા છતા પણ
પોતાની તરફથી તેમને માટે થોડો પણ પ્રયાસ કરી શકતો નથી—ત્યારે પ્રયાસ
કરી શકતો નથી ત્યારે તે કિંકર્તવ્યમૂઢ બની બાંધ છે પૂર્વોક્ત વાતને જ સૂત્રકાર
પ્રકટ કરે છે—“અપ્યં ચ ચ્વલુ આઝયં” ઇત્યાદિ

છાયા-અત્ય ચ ત્વલ્લ આયુષ્કમિરૈકેયા માનવાનામ્ । તદ્યાયા-શ્રોત્રપરિહાને પરિહીયમાને, ચક્ષુ પરિહાને: પરિહીયમાને, ઘ્રાણપરિહાને: પરિહીયમાને, રસન-પરિહાને: પરિહીયમાને, સ્પર્શપરિહાને પરિહીયમાને, અમિકાન્તં ચ ત્વલ્લ વય સમ્પ્રેક્ષ્ય તત: સ એકદા મૃદમાર્ગં જનયતિ ॥ ૨ ॥

ટીકા-અત્ય=સ્તોકે, 'ચ' શબ્દન દીધાયુષ્કપરિગ્રહ । ત્વલ્લ ક્ષન્દાઽવધારણે, 'આયુ:' પૂર્વકૃતકર્મમોગાર્થમેતિ=સમાગચ્છતીત્યાયુ । યઐતિ=સમાગચ્છતિ સ્વકૃત કર્મમાપ્તનરકાદિગતિસ્થિતજન્તોઃ પ્રતિબન્ધકતામિત્યાયુ, મવસ્થિતિદેતુ કર્મપુણ્ય-પુણ્યમિત્યર્થ । આયુર્હિં સુત્વદુઃસ્વાપારં વેદસ્થિતં જીવં તત્તદ્વર્તો ધરતિ । ઉક્તઃ—

“દુક્ત્વં ન વદ આઠ, ન વિ ય સુદં વદ વતસુધિ ગર્હસુ ।

દુક્ત્વસુદાનામાપારં, પરં વેદિદિયં જીવં ॥ ૧ ॥”

છાયા-દુઃત્વં ન વદાત્યાયુર્નાપિ ચ સુત્વં વદાતિ વતસુધિપિ ગતિષુ ।

દુઃત્વસુત્વાનામાપારં, પરતિ વેદસ્થિતં જીવમ્ ॥ ઈતિ ।

इस संसार में कितनेक मनुष्यों की आयु अल्प है, पूर्ण आयु को भोगते हुए भी जब यह प्राणी बुढ़ावस्थासंपन्न होता है तब इसकी श्रोत्र-इन्द्रिय अपने विषय के ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती है, चक्षु इन्द्रिय रूप के देखने में क्षीण शक्तिवाली हो जाती है, घ्राण-इन्द्रिय सुगंध दुर्गन्ध के बोध करने से विमुक्त हो जाती है, रसना-इन्द्रिय ५ प्रकार के रसास्वादनरूप अपने कार्य से शिथिल बन जाती है और स्पर्शन-इन्द्रिय भी ८ प्रकार के स्पर्श को पहचानने में अक्षम हो जाती है । इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ जब इस अवस्था में अपने २ कर्तव्य से विमुक्त हो जाती हैं, तब यह प्राणी उस अवस्था में कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य हो जाता है ।

આ સંસારમાં કેટલાક મનુષ્યોની અયુ આઠી છે પૂર્ણ આયુને ભોગવતે છતાં પણ અધારે તે પ્રાણી બુદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેની શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પોતાના વિષય મહુષ્ય કરવામાં અસમર્થ બને છે ચક્ષુઇન્દ્રિય, રૂપ દેખવામાં ક્ષીણશક્તિવાળી થાય છે ઘ્રાણુઇન્દ્રિય સુગંધ દુઃગંધનો બોધ કરવામાં વિમુખ થઈ બાક છે રસના-ઇન્દ્રિય પાંચ પ્રકારના રસાસ્વાદન રૂપ પોતાના કાર્ય થી શિથિલ બની બાક છે અને સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય પણ આઠ પ્રકારના સ્પર્શ બતાવવામાં અક્ષમ થાય છે આ પ્રકારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય અધારે આ અવસ્થામાં પોત-પોતાના કર્તવ્ય થી વિમુખ થાય છે ત્યારે આ પ્રાણી આ અવસ્થામાં કર્તવ્યાકર્તવ્યના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે.

ટીકાર્થ:-સૂત્ર મેં “અપ્પં ચ ” યહૌં પર જો “ચ” શબ્દ હૈં ઉસસે દીર્ઘ આયુ કા મી ગ્રહણ હોતા હૈં । “ચ્ચલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય અર્થ મેં આયા હૈં । પૂર્વકૃત કર્મ કે ભોગને કે લિયે જો જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા જિસકે દ્વારા જીવ ઇક ગતિ સે દુસરી ગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિ મેં રહનેવાલે જીવ કો જો અપની સ્થિતિ તક ઔર દુસરી ગતિ મેં ન જાને દેવે વહ આયુ હૈં । અથવા-અજ્ઞાનિ મેં રહે હુણ જલ કી તરહ જો પ્રતિક્ષણ હાસ કો પ્રાપ્ત હો વહ આયુ હૈં । ઇન તમામ વ્યુત્પત્તિયોં દ્વારા યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈં કિ જો કર્મ-પુણ્નપુણ્ન ઇસ જીવ કો પ્રાપ્ત હુણ ભવ મેં રોકર રહે વહ આયુ હૈં । ક્યોંકિ સુખ દુઃખ કા આધારભૂત ઔર દેહ મેં રહને વાલે જીવ કો આયુ હી ઉસ ૨ ગતિ મેં અપને ઉદયપર્યન્ત રોકે રહતા હૈં । આયુ કર્મજીવ કો ચારોં હી ગતિયોં મેં ન તો દુઃખ દેતા હૈં ઔર ન વૈષયિક સુખ હી દેતા હૈં । કિન્તુ જો જીવ જિસ ગતિ કે આયુ કો વાંધ કર ઉસ પર્યાય કા ભોગ કરતા હૈં સુખ દુઃખ કે આધારભૂત ઉસ જીવકો વહ ઉસ ગતિ મેં ઉસ વિવક્ષિત પર્યાય મેં રોકે રહતા હૈં ।

ટીકાર્થ —સૂત્રમા “અપ્પં ચ” આ ઠેકાણે જે “ચ” શબ્દ છે તેનાથી દીર્ઘ આયુતુ ગ્રહણ થાય છે “ચ્ચલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય-અર્થમા આવ્યો છે પૂર્વકૃત કર્મ ભોગવવાને જે જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે આયુ છે, અથવા જે દ્વારા જીવ એક ગતિથી બીજી ગતિમા જાય છે તે આયુ છે, અથવા પોતાના દ્વારા કરેલા કર્માનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિમા રહેવાવાળા જીવને જે પોતાની સ્થિતિ સુધી બીજી ગતિમા ન જવાદે તે આયુ છે, અથવા અજ્ઞાનિમા રહેલા પાણીની માફક જે પ્રતિક્ષણ ઘટતુ જાય છે તે આયુ છે આવી તમામ વ્યુત્પત્તિયો દ્વારા એ નિષ્કર્ષ નિકળે છે કે જે કર્મપુણ્યલપુણ આ જીવને પ્રાપ્ત થએલા ભવમા રોકી રાખે તે આયુ છે, કારણકે સુખ-દુઃખના આધારભૂત અને દેહમા રહેનાર જીવને આયુ જ તે તે ગતિમા પોતાના ઉદયપર્યન્ત રોકી રાખે છે, આયુકર્મ જીવને ચારે ગતિમા દુઃખ અને વૈષયિક સુખ નથી આપતું પણ જે જીવ જે ગતિની આયુને બાંધીને તે પર્યાયનો ભોગ કરે છે સુખ દુઃખના આધારભૂત તે જીવને તે ગતિમા વિવક્ષિત પર્યાયમા રોકી રાખે છે.

પુરુષસ્યાયુર્વિંશુદિશ સ્પષ્ટમણ્ડારં, તૈસ્મરહિતો દીપો યથા સ્વરૂપેનૈવ કાષ્ટેન નાશ-
મેતિ તથાઽઽયુરપિ સ્વદ્ભવસમ્યન્ધિમોગ્યકર્મામાલે સ્વરૂપેનૈવ કાષ્ટેન સમાપ્તિપ-
ગચ્છતિ । આયુર્દિ જલ્પરક્ષમિષ, ખલસ્યિતેન્દુમતિષિમ્યમિષ, ત્રિયુદિષ પર્તુમશન્યં
મવતીત્યાયુપોઽસ્વત્ત્વં માનવાનામિત્યભિપ્રાયમેવ મનસિ નિષાય દર્શયતિ—“इह एकेषां
मानवानामल्पमायुष्कम् ” । અષ્ટૈકેપામિતિ કથનેન સયમરહિતાનાં સાવધાનુષ્ઠાનેન
દીર્ઘમપ્યાયુરુપમિવ મવતિ, તથૈવ સયમિનાં ચ સ્વરૂપમપ્યાયુર્નિરવધાનુષ્ઠાનેન દીર્ઘાં

જિસ પ્રકાર તૈલસે રહિત દીપક ધોરે હી સમય મેં ઘુસ જાતા હૈ
ઉસી પ્રકાર આયુર્કર્મ મી તત્તદ્ભવસમ્યન્ધી કર્મ પુણ્યોં કે અમાલસે
ધોરેસે હી કાલમેં સમાપ્ત હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર જલકી તરજી ઓર
પાનીમેં પ્રતિષિમ્બિત ચન્દ્રમા કા પ્રતિષિમ્ય, અથવા યિજલી લાલ પ્રયત્ન
કરને પર મી નહીં સ્થિર કિયે યા ઠહરાયી જા સકતી હૈં ઉસી પ્રકાર
તત્તદ્ભવસમ્યન્ધી આયુકી સમાપ્તિ હોને પર ઉસે ણક ક્ષણ મી ફિર નહીં
પઢાયા યા ઠહરાયા જા સકતા । હસી અભિપ્રાય કો ચિત્તમેં ઘારણ કર
સૂચકારને—“इह एकेषां मानवानाम् अल्पम् आयुष्कम् ” यह कहा है ।
અમ હસી વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

યહાં પર કિતનેક મનુષ્યોં કા જો આયુ અલ્પ કહા ગયા હૈં ઉસસે
યહ સમજના ચાહિયે કિ જો મનુષ્ય રાત-વિન સાવધકાર્યોં કે અનુ-
ષ્ઠાનમેં હી લવલીન હો રહે હૈં—સંયમભાવસે રહિત હ ઉન મનુષ્યોં કા
દીર્ઘકાલિક આયુર્કર્મ મી ઉસ અનુષ્ઠાનસે અલ્પ જૈસા હો જાતા હૈં, તથા
સંયમી જીવોં કા અમ્ય મી આયુર્કર્મ નિરવધ અનુષ્ઠાનસે દીર્ઘ જૈસા હો

જેવી રીતે તેલ વગરના દીપો યોગ્ય સમયમા બુઝઈ જામ છે તે પ્રકારે
આયુર્કર્મ પણ તત્તદ્ભવસમ્યન્ધી કર્મપુણ્યોના અભાવથી યોગ્ય કાગમા
નમાત ધાય છે જેમ પાણીનુ ઘોળુ, અને નન્દ્રમાનો પાણીમા પડેલો પ્રતિબિમ્બ,
અથવા સિદ્ધાંતી લાખ પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ સ્થિર કરાવી નથી તેવી રીતે
તત્તદ્ભવસમ્યન્ધી આયુની પ્રમાણિ થવાથી તે એક પણ ક્ષણ યોગ્ય અનર વધારી
શકાતું નથી. આ અભિપ્રાય ચિત્તમા ધારણ કરી સૂત્રકારે “इह एकेषां मान-
वानाम् अल्पम् आयुष्कम् ” એમ કહ્યું છે જેવે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—

આ જગ્યાએ કેટલાક મનુષ્યોની જે આયુ અલ્પ કહેવામા આવી છે તેથી
એમ સમજવાનુ છે કે જે મનુષ્ય શતદિનસાવધ કાર્યોના અનુષ્ઠાનમા જ રહેલો
રહે છે, નયમભાવથી રહિત છે તેવા મનુષ્યોના દીર્ઘકાલિક આયુર્કર્મ પણ અલ્પ
અનુષ્ઠાનથી ટુંકા જેવા થઈ જાય છે, તથા સયમી હોવાના ટુંકા પણ આયુર્કર્મ

યુરિવ વર્તતે, દીર્ઘકાલિકજન્મમરણોચ્છેદેનાયુષઃ સાફલ્યાત્ । इह=સંસારે એકેષાં
 ન્કતિપયાના માનવાનામાયુરલ્પં ભવતીત્યન્યઃ । આયુષોઽલ્પત્વઞ્ચ ક્ષુલ્લકભવાપેક્ષ-
 યાઽન્તર્મુહૂર્તમાત્રં જઘન્યમ્ । ચ શબ્દાદધિકં ચોત્તરોત્તરસમયાદિવૃદ્ધયા યુગલિકમા-
 શ્રિત્ય પલ્યોપમત્રયપરિમિતં ભવતિ । પલ્યોપમત્રયાયુરપિ સંયમકાલાભાવાદધિકમ-
 પ્યલ્પમેવ ।

અન્તર્મુહૂર્તાદારમ્ય દેશોનપૂર્વકોટિપરિમિતાયુષિ સંયમાયુષ્કસ્યાલ્પત્વાત્તદ-
 પ્યલ્પમેવ ભવતિ ।

જાતા હૈ । દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણ કે વિનાશ સે હી તો આયુ કી
 સફલતા હૈ ।

“અલ્પં ચ ક્ષલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम् ॥ यहां पर
 “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति” इस प्रकार अन्वय
 લગાના યાહિે । આયુકી અલ્પતા ક્ષુલ્લક-સવસે છોટ-ભવકી અપેક્ષાસે
 પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ક્યોંકિ મનુષ્ય ઓર તિર્યંચોં કે આયુકર્મકી
 સ્થિતિ શાસ્ત્રમેં દો પ્રકારસે વર્ણિત હૈ-(૧) જઘન્ય ઓર (૨) ઉત્કૃષ્ટ ।
 જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તકી હૈ, ઓર ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિ
 કી વૃદ્ધિસે લગા કર ત્રીન પલ્ય કી હૈ । યહ યુગલિયોં કી અપેક્ષાસે હૈ ।
 ભોગભૂમિ મેં જીવકો સંયમ કી પ્રાપ્તિ હોનેકા અવસર હી નહીં હૈ, ઇસ
 લિયે ત્રીન પલ્ય પરિમિત દીર્ઘ આયુ મી અલ્પ જૈસા હી હૈ, અર્થાત્
 ડસસે જીવકા નિજ કોઈ મી પરમાર્થ નહીં સધતા, કેવલ ભોગાદિકોં કે
 ઉપભોગસે હી વહ નિષ્ફલ હો જાતા હૈ । સંયમારાધન સે હી કાલ કે

નિરવધ અનુષ્ઠાનથી દીર્ઘ જેવા થાય છે દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણના વિનાશથી જ
 આયુની સફળતા છે

“અલ્પં ચ ક્ષલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम्”

અહીં “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति”

આ પ્રકારે અન્વય લગાડવો જોઈએ આયુની અલ્પતા ક્ષુલ્લક-બધાથી
 નાના-ભવની અપેક્ષાથી પ્રકટ કરેલ છે કારણકે મનુષ્ય અને તિર્યંચોના આયુ-
 કર્મની સ્થિતિ શાસ્ત્રમા એ પ્રકારે વર્ણિત છે (૧) જઘન્ય અને (૨) ઉત્કૃષ્ટ
 જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એક સમયાદિની વૃદ્ધિથી
 લગાવી ત્રણ પલ્યની છે, આ યુગલિયાની અપેક્ષાથી છે ભોગભૂમિમા જીવને
 સયમની પ્રાપ્તિ થવાનો અવસર નથી, માટે ત્રણ પલ્યની પરિમિત દીર્ઘ આયુ
 પણ અલ્પ જેવી છે. અર્થાત્ તેથી જીવનો નિજ કોઈ પણ પરમાર્થ સધાતો
 નથી, કેવળ ભોગાદિકેના ઉપભોગથી જ તે નિષ્ફળ થાય છે. સયમારાધનથી જ

યદ્વા ત્રિપલ્યોપમપરિમિતમપ્યાયુરલ્પમેવ, યતોઽન્તર્મુહૂર્તે વિહાય શેપસર્વસ્યાપ્યા-
યુપોઽપવર્તનશીલત્વાત્, મતિશ્ચાપમાયુપ' સીયમાણસ્વાચ્ચ । અપવર્તનં નામ દીર્ઘ-
સ્થિતિકાલિકકર્મપરમાણૂનપગમગ્ય તેષાં દ્વસ્વસ્થિતિકાલિકતાસમ્પાદનમ્ । આયુષ
સોપક્રમ-નિરુપક્રમમદેન દ્વિવિધમ્, ઉક્તશ્ચ મગવતા મગવસ્યામ્—

“જીવા ણ મંતે ! કિં સોલક્ષમાડયા નિરુલક્ષમાડયા ? ગોયમા ! જીવા સોલક્ષ
માડયાવિ નિરુલક્ષમાડયાવિ ” ઇતિ (મગવતી ષ ૨૦ ડ ૧૦)

છાયા—જીવા' સ્વલ્પ મદન્ત ! કિં સોપક્રમાયુષ્કા નિરુપક્રમાયુષ્કા ? ગૌતમ !
જીવાઃ સોપક્રમાયુષ્કા અપિ નિરુપક્રમાયુષ્કા અપિ ॥ ઇતિ ॥

એક ક્ષણ તક કી સફલતા માની ગઈ છે । उसी प्रकार अन्तर्मुहूर्तसे
लगा कर देशोनपूर्वकोटि-दश ऊन एक करोड पूर्व-परिमित आयु
प्राप्त होने पर भी उसमें संयम कालका अभाव होने से वह भी अल्प ही है ।

અથવા—અન્તર્મુહૂર્તકાલ પરિમિત આયુકો છોડ કર શેપ સમસ્ત
આયુ અપવર્તનશીલ—હોને સે ઔર ક્ષણ ૨ મેં આયુકા ક્ષય હોને સે ત્રિપ
લ્યોપમ પરિમિત—ત્રીન પલ્યોપમ કા—આયુ મી અલ્પ હી છે ।

दीर्घकालिक आयुर्कर्म के परमाणुओं को खींच कर थोड़ी स्थिति-
वाले आयुर्कर्म के परमाणुओं में स्थापित करने का नाम अपवर्तन है ।

સોપક્રમ ઔર નિરુપક્રમ કે મેદુ સે આયુ યો પ્રકાર કા છે । મગ
વતી સૂત્રમેં 'મગવાનને યહી વાત કહી છે—

“જીવા ણ મંતે ! કિં સોલક્ષમાડયા નિરુલક્ષમાડયા ? ગોયમા !
જીવા સોલક્ષમાડયા વિ નિરુલક્ષમાડયા વિ ” ઇતિ । (મ ષ ૨૦ ડ ૧૦)

કાળની એક ક્ષણ સુધીની સફળતા મનાય છે, તે પ્રકાર અન્તર્મુહૂર્ત'માં લગાવી
દેશોનપૂર્વ કોટિ-દેશ ઉન એક કરોડ પૂર્વ-પરિમિત આયુ પ્રાપ્ત થવાથી પણ
તેમાં સંયમકાળને અભાવ હોવાથી તે પણ અલ્પજ છે, અથવા અન્તર્મુહૂર્તકાળપરિ-
મિત આયુને ઊડીને શેપ સમસ્ત આયુ અપવર્તનશીલ હોવાથી અને ક્ષણક્ષણમાં
આયુને ક્ષય હોવાથી ત્રિપલ્યોપમપરિમિત ત્રણ પલ્યોપમ આયુ પણ અલ્પજ છે

दीर्घकालिक आयुर्कर्मના પરमाणुઓને જે થીને થોડી સ્થિતિવાળા આયુર્કર્મના
પરमाणુઓમાં સ્થાપિત કરવાનું નામ અપવર્તન છે

સોપક્રમ અને નિરુપક્રમના બેદથી આયુ બે પ્રકારની છે મગવતી સૂત્રમાં
મગવાને આ વાત કહી છે —

‘જીવા ણ મંતે ! કિં સોલક્ષમાડયા નિરુલક્ષમાડયા ?

ગોયમા ! જીવા સોલક્ષમાડયા વિ નિરુલક્ષમાડયા વિ

ઇતિ (મ ષ ૨૦ ડ ૧૦)

યદા જીવસ્તીમેણાયુર્વન્ધાઅધ્યવસાયેન જાતિનામનિષ્ણાયુર્વજ્ઞાતિ તદૈકેનૈવાકર્ષેન
જ્ઞાતિ । મન્દેન દ્વામ્યામાકર્ષામ્યા, મન્દતરેણ ત્રિમિરાકર્ષા, મન્દતમેન ચાધ્યવસા
યેન ચતુર્મિ પચ્ચમિ પદ્ધમિઃ સપ્તમિસ્કુપ્ટેનાષ્ટામિવાડ્ડકર્ષેર્જાતિનામનિષ્ણા-
યુર્વજ્ઞાતિ ।

एवं गतिस्थित्यवगाहनाप्रदेशानुमावनामनिषत्तायुष्काप्यपि जीवा वज्जाति ।
निषत्तं हि आयुषा सह जातिगत्यादीनां नियमत एकरूपेण वन्धनमिति । उक्तञ्च—
'जीवा गं मंते ! जाइनामनिषत्ताउय कइहि आगरिसहि पकरंति ? गोयमा !
जइन्नेण एक्केण दोहि वा तिहि वा उक्कोसणं अहहि " इति ॥

છપા—જીવાઃ સહ મદન્ત ! જાતિનામનિષ્ણાયુષ્કં કતિમિરાકર્ષે-
મકુર્વન્તિ ? ગૌતમ ! જપન્થેન એકેન દ્વામ્યાં વા ત્રિમિર્વાં ઉત્કર્ષેનાષ્ટમિઃ । ઇતિ ।

શક્ત—યહ જીવ કેસે એક આકર્ષસે અથવા દો આકર્ષોસે વ્ધ
ત્રીન અથવા સાત આઠ આકર્ષોસે આયુ વાંધતા હૈ ?

उत्तर—जिस समय जीव आयु बांधने के तीव्र अध्यवसाय से जाति
नामनिषत्त आयु का बंध करता है उस समय एक आकर्ष से ही उसका
वन्ध करता है, मन्द अध्यवसाय से दो आकर्षों से, मन्दतर अध्यव
साय से तीन आकर्षों से, मन्दतम अध्यवसाय से पांच छह और
सात और ज्यादा से ज्यादा आठ आकर्षों से जातिनामनिषत्त आयुका
बंध किया करता है । इसी तरह से गति-स्थिति-अवगाहना-प्रदेश-
अनुमाव-नामनिषत्त आयुओं का भी यह जीव बंध करता है । आयुबंध
के साथ अन्य जाति गति आनुपूर्वी आदि का नियम से जो बंध होता
है उसका नाम निषत्त है, कहा भी है—

અ એવ કેવી રીતે એક આકર્ષથી અથવા બે આકર્ષોથી તેમજ ત્રણ
અથવા સાત આઠ આકર્ષોથી આયુ બાંધે છે ?

૭ વખતે એવ આયુ બાંધવાના ત્રીમ અધ્યવસાયથી જાતિનામનિષત્ત
આયુ બંધ કરે છે તે વખતે એક આકર્ષથી જ તેને બંધ કરે છે મદ
અધ્યવસાયથી બે આકર્ષોથી મન્દતર અધ્યવસાયથી ત્રણ આકર્ષોથી, મન્દતમ અધ્યવ
સાયથી પાંચ, છ સાત અને વધારેમા વધારે આઠ આકર્ષોથી જાતિનામનિષત્ત
આયુને બંધ કરે છે આવી રીતે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુમાવ-નામ
નિષત્ત આયુએને પણ એ એવ બંધ કરે છે. આયુબંધની સાથ અન્ય જાતિ
ગતિ-આનુપૂર્વી-આદિને નિયમથી જો બંધ થાય છે તેનું નામ નિષત્ત છે કહ્યું છે કે —

सोपक्रमायुथोपक्रमकारणैर्दण्डकशाशस्त्ररज्जुवह्निजलपतनविषव्यालशीतोष्णारति-
भयक्षुत्पिपासाव्याधिमूत्रपुरीपनिरोधातिभोजनाजीर्णभोजनघर्षणश्वासप्रतिरोधनपीड-
नरूपैरकाले यस्यायुपो नाशस्तत् ।

उक्तञ्च—दण्ड—कस—सत्थ—रज्जू, अग्गी—उदग—पडणं विसं वाला ।

सी—उण्हं अरइ भयं, खुहा पियासा य वाही य ॥ १ ॥

मुत्तपुरीसनरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणं बहुसो ।

घंसण—घोलण—पीलण, आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

छाया—दण्डः कशा शस्त्रं रज्जुरग्निरुदकं पतनं विषं व्यालाः ।

शीतमुष्णमरतिर्भयं क्षुत्पिपासा च व्याधिश्च ॥ १ ॥

मूत्रपुरीपनिरोधो जीर्णोऽजीर्णं च भोजनं बहुशः ।

घर्षणं घोलनं पीडनमायुष उपक्रमा एते ॥ २ ॥ इति ।

“जीवा णं भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

इस सूत्र का अर्थ पूर्वोक्तरूप से ही है ।

सोपक्रम आयु वह है जिसका—उपक्रम के कारणभूत दण्ड, चावुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, जल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृष्णा, व्याधि, मूत्र-पुरीष-लघुनीत बडीनीत-का निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि बांधकर घसीटना, श्वास का निरोध और घंत्र आदि में पीडना आदि से अकाल में ही अन्त हो जाय, कहा भी है—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू-अग्गी-उदग-पडणं-विसं-वाला ।

सी-उण्हं-अरइ-भयं, खुहा पिवासा य वाही य ॥ १ ॥

“जीवा ण भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

आ सूत्रेनो अर्थ पूर्वोक्त इपथी न छे

सोपक्रम आयु ते छे जेना उपक्रमना कारणभूत दंड, चावुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, जल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृष्णा, व्याधि, मूत्र-पुरीष, लघुनीत-बडीनीत नो निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि व्याधीने घसडवु, श्वासनो निरोध अने यत्र आदिथी पीडवु, आदिथी अकालमा न अत थाय कहु छे—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू, अग्गी उदग पडणं विसं वाला ।

सी-उण्हं अरइ भयं, खुहा पिवासा य वाही य ॥ १ ॥

एतेन संयमरहितमानवानां स्वरूपमेवायुस्तत्र श्रुतश्चा विज्ञसमूहाः । तथा हि मनुजानामायुः प्रायश्च श्रुतवर्षपरिमितं भवति । तदर्थं रात्रिषु गतम्, अवशिष्टार्धे च बालस्ये वृद्धस्ये च न भुतचारिप्रभर्माचरणकर्तृत्वं जीवस्य भवति । कियदवशिष्टमायुर्नानाविधरोगशोकावियोगादिभिरेवाक्रान्तं भवति, कस्माच्चर्हि सौख्यं प्राणिनां भवत् ।

મુક્ત-પુરીસનિરોદ્ધે, જિજ્ઞાસાજિજ્ઞે ય મોયણે મહુસો ।

ધંસણ ઘોલણ પીલણ, આઝસ્સ ડબકમા પપ ॥ ૨ ॥

અર્થ પહેલે આશુકા હૈ ।

અતઃ સંયમરહિત જીવો કા લૈધકાલિક આયુ મો અલ્પ જૈસા હી હૈ, હસમેં મી હજારોં ચિદ્ર આતે રહતે હૈં । વિચારિયે તો—

હસ પશ્ચમ કાલ મેં જ્યાદા સે જ્યાદા સૌ વર્ષકા આયુ હૈ । હસ સૌ વર્ષ કે આયુ કા હિસાબ લગાયા આય તો પતા લગેગા કિ આધા આયુ તો સોતે ૨ વ્યતીત હો જાતા હૈ યાકી જો આધા થયતા હૈ ઉમમેં બાલ-અવસ્થા વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ । હન અવસ્થાઓં મેં જીવ કિસી મી પ્રકાર સે ધર્માલિક શુભ કાર્યોં કા આચરણ નહીં કર સકતા । અનેક પ્રકાર કે રોગ શોક ઓર વિયોગાદિજન્ય બુ બ્ધ હસકે અવશિષ્ટ જીવન કો સદા પ્રસન્ન કિયે રહતે હૈં । યૌવન અવસ્થા મેં સ્ત્રી કા પ્રેમ હસે આરામ નહીં લેને દેતા । હસ પર યહ ઉન્દ્ હૈ—

“બાલપને મેં જ્ઞાન ન લગ્યો, તરુણ સમય તરુણીરત રહ્યો ।

અર્ધમૃતક સમ વૃદ્ધાપનો, કૈસે રૂપ લક્ષે અપનો ॥ ૧ ॥

મુક્ત-પુરીસ-નિરોદ્ધે જિજ્ઞાસાજિજ્ઞે ય મોયણે મહુસો ।

ધંસણ ઘોલણ પીલણ આઝસ્સ ડબકમા પપ ॥ ૨ ॥

અર્થ પહેલે આવેલ છે

માટે સંયમરહિત હોવાની લીધકાલિક આયુ પણ અલ્પ જેવી જ છે, નેમા પણ ઉચારે વિગ્ને આવે છે. વિચારીએ તો આ માનમા કાળમા વધારેમા પારે સે વર્તની આયુ છે આ સે વધની આયુને હિસાબ કરીએ તો માત્રમ ૫ ૧ કે અઢધી આયુ તો મુલામા જ થાય છે બાકીની બે અઢધી આયુ છે તન બાલઅવસ્થા અને વૃદ્ધાવસ્થાને સમાવેશ છે. આ અવસ્થાઓમા હવ કેઈ પણ પ્રકારે ધર્માલિક શુભ કાર્યોનુ અચરણ કરી શકતો નથી. અનેક પ્રકારના રોગ-શોક અને વિયોગાદિજન્ય બુ બ્ધ તેના અવશિષ્ટ હવનને સદા પ્રસન્ન કરતા રહે છે યૌવન અવસ્થામા સ્ત્રીને પ્રેમ તેને આશ્રમ લેવા દેતો નથી, આ ઉપર હા છે.—

एतादृशस्वल्पायुषः कृते च शिरसि परिभ्राम्यदनेकमहाविपत्तिकलापः संयो-
गाद्यर्थी विवेकविकलो मानवोऽनिशमितस्ततः परिभ्रमति । स्वल्पेनैव कालेनायुषः
क्षयोऽवश्यं भावीत्यहो मोढ्यं प्राणिनो यदर्थं सततं परितप्यमानो धावतीति भावः ।

यह हालत है इस जीव की; फिर कहो इसे सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? फिर भी इतनी छोटी सी आयु को लेकर यह अनेक प्रकार की शिर पर घूमनेवाली आपत्तिविपत्तियों का कुछ भी ख्याल न कर रात-दिन पर पदार्थों के अपनाने में ही मस्त हो रहा है, और अपने कर्तव्य का कुछ भी ख्याल कहीं कर रहा है । अन्त में आयु के समाप्ति होने पर मृत्युशय्या पर विलाप करते हुए इस जीव का कोई भी रक्षक नहीं होगा । वे सब कुटुम्बी-जिनके लिये यह रात-दिन परिश्रम करके अपने खून का पानी कर रहा था-इससे जुदे हो जायेंगे और इसे फाल्गुन मास की होली की तरह चिता में जला देंगे ।

इस प्रकार आयु की अल्पता को देखता हुआ यह जो नहीं चेत रहा है यही एक इसकी बड़ी भारी मूर्खता है । जो इससे जुदे हो जाने वाले हैं उन्हीं के लिये यह रात-दिन महा परिश्रम करने में लगा हुआ है । इसकी इस महा अज्ञानता पर ज्ञानियों को बड़ा भारी आश्चर्य होता है । यहां तक-“अप्पं खलु आउयं इहमेगेसि माणवाणं” इस वाक्य का अर्थ हुआ है ।

“ वालपनमें જ્ઞાન ન લહ્યો, તરુણ સમય તરુણીરત રહ્યો ।

અર્ધમૃતકસમ વૃદ્ધાપનો, કૈસે રૂપ લેલે અપનો ॥ ૧ ॥

આવી હાલત છે આ જીવની હવે કહો તેને સુખ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય ? આટલી થોડી આયુ હોવા છતાં તે અનેક પ્રકારની શિર પર ધૂમવાવાળી આપત્તિ વિપત્તિઓનો પણ જરા ખ્યાલ ન કરતા રાત-દિન પર પદાર્થોને અપનાવવામાં જ મગ્ન રહે છે, અને પોતાના કર્તવ્યનો જરા પણ ખ્યાલ કરતો નથી અતમા આયુની સમાપ્તિ થવાથી મૃત્યુશય્યા પર વિલાપ કરે છે આ જીવનો કોઈ પણ રક્ષક થશે નહિ આ બધા કુટુંબીજનો માટે પોતાના લોહીનું પાણી કરતો હતો તેનાથી બુદ્ધો થઈ જશે અને તેને કાગણ માસની હોળી માફક ચિતામાં સળગાવી દેશે

આ પ્રકારે આયુની અલ્પતાને દેખીને પણ ચેતતો નથી, એજ એક, જીવની મૂર્ખતા છે જેનાથી બુદ્ધ થવાનું છે તેવાઓના માટે રાત-દિન પરિશ્રમ ઉઠાવે છે આ તેની અજ્ઞાનતા ઉપર જ્ઞાનીઓને મોટું આશ્ચર્ય થાય છે અહીં સુધી-
“ અપ્પં કલ્હ આઉયં ઇહમેગેસિ માણવાણં ” આ વાક્યનો અર્થ થયો છે.

દૃષ્ટક્રમોપક્રમામાવેડપિ પુનસ્તે વાર્દકકાલણ્યાલકવન્તિતા માનવા મર
ણાદપિ ગુસ્તરાં દુર્દશામનુભવન્તિ । સકળાનિ ચેન્દ્રિયાણિ જરામિભૂતવપા શિપિ
સ્ત્વાં ગતાનિ, તસ્માયમાનયા ચ તૃષ્ણયા ધ્યાકુલા મૂઢા મવન્તીતિ દર્શયતિ—“તપ-
યે ” તિ । વાર્દક્યે સર્વેપામિન્દ્રિયાણાં સ્વકાર્યકરણાક્ષમતા જાયતે તદા “ ઓષ્ઠપરિ-
જ્ઞાને પરિહીયમાને ” (જ્ઞાનોત્તિ માપાવર્ગણાપરિણતાન પુત્રલ્લાનિતિ ઓષ્ઠમ્ । તથ
દ્રવ્યમાવમેદેન દ્વિવિધમ્ । તથ કદમ્બપુષ્પસદૃશં દ્રવ્યાત્મકં, માવસ્ય હિ માપાદ્રવ્ય-
પ્રજ્ઞાલઘ્યુપયોગસ્વભાવાત્મકમ્ ॥

વળ કદા આવિસ્ય ઉપક્રમ કે અભાવ સે યદિ આયુ કી
પૂર્ણતા મી જીવ કો પ્રાપ્ત સુઈ તો યહ જીવ વૃદ્ધાવસ્થા મેં મરણાન્તિક
કષ્ટો કો મોગતા હૈ, યહી યાત આગે કે વાક્યો સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ ।

જય યહ વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન હોતા હૈ ઉસ સમય હસકા ઓષ્ઠેન્દ્રિય
જન્ય જ્ઞાન પિલકુલ અસ્ય હો જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર હસકી
ઓષ્ઠેન્દ્રિય તરુણાવસ્થા મેં કામ દેતી થી ઉસ પ્રકાર સે હસ અવસ્થા મેં
નહીં દેતી । હસ સમય જપકિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયો શિથિલ હો જાતી હૈ તથ
એક ધીજ હસકી તરુણ હોતી રહતી હૈ યહ હૈ હસકી તૃષ્ણા—“તૃષ્ણા
ચ તરુણાયતે ” ।

(“ જ્ઞાનોત્તિ માપાવર્ગણાપરિણતપુત્રલ્લાન હિતિ ઓષ્ઠમ્ ” માપાવર્ગણા
કે રૂપ મેં પરિણત પુત્રલો કો જો સુનતા હૈ ઉસકા નામ ઓષ્ઠ હૈ । વહ
ઓષ્ઠ દ્રવ્ય ઓર માવ કે મેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ । જિસકા આકાર
કદમ્બ પુષ્પ કે સમાન હૈ વહ દ્રવ્ય ઓષ્ઠ હૈ, જિસકે દ્વારા માપાવર્ગણા

૧. કથા આકિ રૂપ ઉપક્રમના અભાવથી કથા આયુની પૂર્ણતા પણ
હવની પુરી થઈ તો આ છવ વૃદ્ધાવસ્થામા મરણાન્તિક કષ્ટોને બોજવે છે આ
યાત આગળના વાક્યોથી સ્પષ્ટ છે

અર્થાત્ તે વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેનું ઓષ્ઠેન્દ્રિયજ્ઞાન બિલકુલ
અસ્ય થઈ જાય છે અર્થાત્ જે પ્રકારે તેની ઓષ્ઠેન્દ્રિય તરુણાવસ્થામા કામ દેતી હતી
તે પ્રકારે વૃદ્ધાવસ્થામા દેતી નથી. આ સમયે દરેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થઈ જાય
છે ત્યારે એક જ ધીજ તેની તરુણ રહે છે, તે રહે તૃષ્ણા “તૃષ્ણા ચ તરુણાયતે ।”

“ જ્ઞાનોત્તિ માપાવર્ગણાપરિણતપુત્રલ્લાન હિતિ ઓષ્ઠમ્ । ”

માપાવર્ગણા રૂપમા પરિણત પુત્રલોને જે સુણે છે (ચાલે છે)
તેનું નામ ઓષ્ઠ છે તે ઓષ્ઠ દ્રવ્ય અને ભાવથી જે પ્રકારે છે. જેને આકાર
કદમ્બપુષ્પ સમાન છે, તે દ્રવ્ય ઓષ્ઠ છે જે દ્વારા માપાવર્ગણા રૂપમા

परि=सर्वतो घटपटादिशब्दविषयकाणि ज्ञानानि=परिज्ञानानि श्रोत्रेण परि-
ज्ञानानि श्रोत्रपरिज्ञानि, तैः श्रोत्रपरिज्ञानैः, वार्द्धक्येन परिहीयमानैः=क्षीयमाणै-
रेकदात्मनो मूढतां जनयति, इत्युत्तरेण सम्बन्धः । वार्द्धक्ये च श्रोत्रेन्द्रियस्य
शिथिलतामुपगतस्य क्षीयमाणस्वशक्तिकस्य शब्दादिविषयग्रहणे चाक्षमता संजायते,
येन च वधिरो भवति, घटं टमिव शृणोति न शृणोति वेति तात्पर्यम् । एवं रोगेणापि
श्रोत्रपरिज्ञानानि क्षीयमाणानि भवन्तीति बोध्यम् । एवं सर्वत्र योज्यम् ।

के रूप में परिणत पुद्गलस्कन्धों का ग्रहण किया जाता है वह भावश्रोत्र
है । इसके भी दो भेद हैं—(१) लब्धि, और (२) उपयोग । भाषा के रूप
में परिणत पुद्गलस्कन्धों को जाननेरूप जो क्षयोपशम है उसका नाम लब्धि
है, अर्थात् शब्दों के जानने की शक्ति का नाम लब्धि है, और उन
शब्दों के जाननेरूप आत्मा का जो व्यापार-प्रयत्नविशेष है उसका
नाम उपयोग है । परिज्ञान शब्द का अर्थ है—सर्व प्रकार से अथवा सब
तरफ से घट पट आदि शब्दों का विषय करने वाला ज्ञान । (वृद्धावस्था में)
श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय हो जाता है—कोई कहता कुछ है वृद्ध सुनता
कुछ है, अतः इस अवस्था में इस प्रकार की हालत (आत्मा में मूढता को
उत्पन्न करती है ।) “ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” इस उत्तर पदका
सम्बन्ध प्रत्येक के साथ लगा लेना चाहिये, अर्थात्—“ वार्द्धक्ये परिहीय-
मानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीय-
मानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, ” इत्यादि ।

परिणत पुद्गल स्कन्धाने अलं करे छे ते भावश्रोत्र छे तेना पणु मे लेह
छे—(१) लब्धि, अने (२) उपयोग भाषाभा इपभा परिणत पुद्गलस्कन्धाना
भाषाभा इप क्षयोपशम छे तेनु नाम लब्धि छे, अर्थात् शब्दोनी शक्तिनु
भाषाभा तेनु नाम लब्धि, अने ते शब्दोने भाषाभा इप आत्मानो ने व्यापार-
यत्नविशेष छे तेनु नाम उपयोग परिज्ञान शब्दोने अर्थ, सर्व प्रकारथी
अथवा सर्व तरस्थी घट पट आदि शब्दोने विषय करवावाणु ज्ञान वृद्धावस्थाभा
श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय थाय छे कोछ कहे छे कोछ अने वृद्ध भाषुस साभणे
छे भीणु, तेथी आ अवस्थाभा आ प्रकारनी हालत आत्माभा मूढताने उत्पन्न करे छे

“ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” आ उत्तरपदको सम्बन्ध प्रत्येकनी
साथे लगावो लेछो, अर्थात् “ वार्द्धके परिहीयमानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभि-
क्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीयमानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः
समीक्ष्य मूढभावं जनयति ” इत्यादि,

ચક્ષુ'પરિજ્ઞાનૈ-ચક્ષુષા મસૂરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-ઘૃક્ષ્મનીભાવિરૂપવિષયકાણિ ચક્ષુ'પરિજ્ઞાનાનિ, તૈ, પરિજીવમાનૈઃ-નિચ્ચમાનૈ । ધ્રાણપરિજ્ઞાનૈ-ધ્રાણેન

(પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં યદિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી ઓત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી.) અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયો કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ- (નાકાચિલ) હો જાતી હૈ, (અતઃ વદ્) ઉન્હોં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે યદિરા વ્યક્તિ ષટ્ (ઘસા) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે ષટ્ (ઘસ) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે ધોલને પર નહીં ની સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ મય ઇન્દ્રિયો શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે ની ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યદ્ સ્વયં સમક્ષ લેના ચાહિયે, ઔર ઇસકા સમ્યન્વ ની પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિજીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્ (જિસ પ્રકાર ઓત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિજીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં ની અપને અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિજીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ)

(ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મસૂર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ ધર્ણ હૈ,) ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામા બહેરો ધાય છે, કારણકે તે બખતે તેની ઓત્રેન્દ્રિય શિથિલ ધાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી બાણવી, અર્થાત્ આ વખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને મહત્વ કરવામા યજિહીન ધાય છે અને તેને મહત્વ કરવામા અસમર્થ બને છે આ કારણે બહેરો માણુત્ર ધરને વચ્ચે શબ્દના રૂપમા આસળે છે અને હાવેલાં બોલવા આવે તે આસળતો નથી જેમ વૃદ્ધાવસ્થામા કારણે નમગી ઇન્દ્રિયો શિથિલ બને છે તે પ્રકારે જે પ્રકિં કારણોથી પણ તેમા શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેજે બાણવું બોધજે અને તેના અગ્રધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિજીનતા આવે બોડવો બોધજે, અર્થાત્ જેમ ઓત્રેન્દ્રિયમા અવિચાર મહત્વ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિજીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પત્ત થતી શિથિલતા છે તેમ અન્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાના વિષયને મહત્વ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિજીનતામા જે પ્રકિં કારણ છે

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો છે તેનો વિષય શુકલ, નીલ આદિ ધર્ણ છે આ અવસ્થામા અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અચાર

અતિમુક્તકકુસુમાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્ય-
જ્યમાનૈઃ। રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન ક્ષુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિક્તાદિરસવિષય-
કાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાનૈઃ। સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શન-સ્પર્શને-
ન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શાદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ,
પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ। ઇતિ સકલનામપીન્દ્રિયાણાં વાર્દ્ધક્યેન રોગોદયેન ચ
સ્વસ્વવિષયગ્રાહકશક્તયઃ પરિક્ષીણા ભવન્તીતિ ભાવઃ। અભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ
સમ્પ્રેક્ષ્ય સ એકદા મૂઢભાવં જનયતીત્યુત્તરેણાન્વયઃ। શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાના-

ચક્ષુઃન્દ્રિય જ્ય શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન
સે રિક્ત હો જાતી હૈ, ઘ્રાણ-ન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ
કે સમાન હૈ, વહ જ્ય હિસ અવસ્થા મેં)અથવા રોગાદિક કારણોં સે
(અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ન્દ્રિય-
જિસકા આકાર સ્વરૂપા કે સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિક્ત આદિ રસોં
કો વિષય કરતી હૈ વહ બી જ્ય હિસ અવસ્થામેં)અથવા રોગાદિક કારણોં
સે(અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-
ન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો
ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ
આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જ્ય હિસ અવસ્થામેં)અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ
હો જાતી હૈ ત્ય હિસ(આત્મામેં મૂઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ)યહ અનુભવસિદ્ધ
વાત હૈ। મૂઢતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ(હિસ હાલતમેં પ્રત્યેક
ન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને ગ્રહણના જ્ઞાનથી રિક્ત થાય છે, ઘ્રાણ-
ન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે તે ત્યારે આ અવસ્થામા
અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે,
રસના-ન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિક્ત આદિ રસોનો
વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામા અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાના વિષયને
ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનમા અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત
નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ
પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામા અથવા રોગાદિક
કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામા મૂઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ
વાત છે. મૂઢતા ઉત્પન્ન રવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમા દરેક બધી

મિન્દ્રિયાણામાકારા ક્રમણ કલ્પ્યમાણ-મસૂરધાન્યાઽતિમુક્તકકુસુમ-ધુરમ-નાના
વિધાકારા મવન્તિ । ઉક્તઃ—

પુષ્પં કલંબુયારં, ઘણમસૂરાશ્મુત્તચન્દો ય ॥

હોઈ સુરપ્પ, નાણા-કિઈ ય સોઈવિયાર્ણ ॥ ૧ ॥

છાયા—પુષ્પ કલ્પમાકારં ધાન્યમસૂરાતિમુક્તચન્દ્રઃ ।

મવતિ ધુરમા નાનાકૃતિઃ ધોષેન્દ્રિયાદીનામ્ ॥ ઇતિ ।

ઇન્દ્રો જીવસ્તસ્ય ચિદ્દમિન્દ્રિયમ્, તેનૈવ જીવજ્ઞાનસમ્મથાત્ । તત્ત્વ દ્રશ્યભાવ-
મત્તેન દ્વિવિધમ્ । દ્રશ્યેન્દ્રિયં દ્રવ્યમયમ્, તત્ત્વ નિર્વૃત્ત્યુપકરણમદાદિવિધમ્ । નિર્માણ
નામકર્માગોપાજ્ઞનામકર્મણાં નિર્વૃત્તિર્નિર્વૃત્તીન્દ્રિયમ્, તત્ત્વ વાચ્યાભ્યન્તરમદા-
દૈ ॥ ઇન્દ્રિયો કા જો યહ આકાર પ્રકટ કિયા હૈ વહ શાસ્ત્રકારોને હસ
પ્રકાર બતાવ્યા હૈ—

“પુષ્પં કલંબુયારં, ઘણમસૂરાશ્મુત્તચન્દો ય ।

હોઈ સુરપ્પ, નાણાકિઈ ય સોઈવિયાર્ણ ॥ ૧ ॥”

ઇન્દ્રિય શબ્દ કા અર્થ યહ હૈ કિ—(‘ઇન્દ્ર’ નામ જીવ કા હૈ, ઉસકા
જો ચિદ્દ હૈ વહ ઇન્દ્રિય હૈ,) અર્થાત્ જિસકે દ્વારા જીવ પહિચાના જાવે
ઉસકા નામ ઇન્દ્રિય હૈ ॥ યહ પાંચ પ્રકાર કી હૈ । इनमें प्रत्येक इन्द्रिय के
दो-दो भेद हैं—(१) द्रव्येन्द्रिय, (२) भावेन्द्रिय । पुष्पलद्रव्यों की जो
इन्द्रियाकार रचना है उसका नाम द्रव्येन्द्रिय है । यह द्रव्येन्द्रिय, निर्वृत्ति
और उपकरण के भेदसे दो प्रकार की है । इस द्रव्येन्द्रिय की रचना
निर्माणनामकर्म और अगोपाज्ज्ञा नामकर्म के द्वारा होती है । इस निर्वृत्ती-
न्द्रिय के—वाच्यनिर्वृत्ति और आभ्यन्तर-निर्वृत्ति, इस प्रकार से दो भेद

ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયને શ્રક્ષણ કરવાના બોધથી વિકલ થાય છે ઇન્દ્રિયોના
જે આકારો બતાવ્યા છે તે શાસ્ત્રકારોએ આ પ્રકારે બતાવ્યા છે—

“પુષ્પં કલંબુયારં, ઘણમસૂરાશ્મુત્તચન્દો ય ।

હોઈ સુરપ્પ-નાણાકિઈય સોઈવિયાર્ણ ॥ ૧ ॥

ઇન્દ્રિય શબ્દનો અર્થ એ છે કે—‘ઇન્દ્ર’ નામ જીવનું છે, તેનું જે ચિદ્દ
છે તે ઇન્દ્રિય છે અર્થાત્ જે દ્વારા જીવની પિછાણ થાય તેનું નામ ઇન્દ્રિય છે.
તે પાંચ પ્રકારની છે. તેમાં દરેક ઇન્દ્રિયના બે-બે ભેદ છે (૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨)
ભાવેન્દ્રિય. પુષ્પલદ્રવ્યોની જે ઇન્દ્રિયાકાર રચના છે તેનું નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય છે.
તે દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ અને ઉપકરણના ભેદથી બે પ્રકારે છે દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના
નિર્માણ-નામકર્મ અને અગોપાજ્ઞ-નામકર્મ દ્વારા થાય છે આ નિર્વૃત્તીન્દ્રિય,
વાચ્યનિર્વૃત્તિ અને આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ, આ પ્રકારથી બે ભેદ રૂપ છે ઉત્તેષાશુભના

દ્વિવિધમ્ । ઉત્તેષાદ્ગુણસંખ્યેયભાગપ્રમિતાનાં સ્વચ્છતરાણામાત્મપ્રદેશાનાં પ્રતિનિ-
યતચક્ષુરાદીન્દ્રિયસંસ્થાનેનાવસ્થિતા યા વૃત્તિઃ સા આભ્યન્તરા નિર્વૃત્તિરુચ્યતે, સ્વદ્ગ-
ધારાસ્થાનીયેતિ યાવત્ , આત્મપ્રદેશેષુ પુદ્ગલવિપાકિના નિર્માણાખ્યેન કર્મણા રથા-
દિવસ્તુસમ્પાદકરથકારેણેવયઃ પ્રતિનિયતસંસ્થાનસ્તત્તદિન્દ્રિયાભિધેયઃ કર્ણશૃંગુલ્યા-
દિર્નિર્વર્ત્યતે સા બાહ્યા નિર્વૃત્તિઃ સ્વદ્ગસદૃશી । તત્ર બાહ્યા પર્પટિકાદિરૂપા, સા ચ
વિચિત્રા પ્રતિનિયતરૂપતયોપદેષ્ટું ન શક્યતે, તથા હિ-કસ્યચિદક્ષિ સ્થૂલં, કસ્ય-
હૈં । ઉત્તેષાદ્ગુણકે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્મલ આત્મ-
પ્રદેશોં કી ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોં કે પ્રતિનિયત આકાર સે અવસ્થિત જો વૃત્તિ
હૈ ઉસકા નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ હૈ ॥ ઇસકી ઉપમા તલવાર કી ધારાસે
દી ગઈ હૈ । (ઉન આત્મપ્રદેશોં પુદ્ગલવિપાકી નિર્માણનામકર્મ કે દ્વારા
જો કર્ણશૃંગુલી આદિ રૂપસે ઉસ-ઉસ ઇન્દ્રિયોં કે આકારોં કી રચના
કી જાતી હૈ ઉસકા નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ હૈ ॥) જૈસે બઢઈ રથાદિક વસ્તુઓં
કે પ્રતિનિયત આકારોં કો બનાતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ નિર્માણ-નામકર્મ,
જો પુદ્ગલવિપાકી પ્રકૃતિ હૈ, ઉન ઇન્દ્રિયાકારરૂપપરિણત આત્મપ્રદેશોં મેં
પુદ્ગલદ્રવ્યોંકી પ્રતિનિયત ઇન્દ્રિયાકારરૂપ સે રચના કરતા હૈ । ઇસકી
ઉપમા તલવારસે દી ગઈ હૈ । બાહ્ય નિર્વૃત્તિકા પ્રતિનિયત કોઈ આકાર
નહીં હૈ, વહ અનેક પ્રકાર કી હૈ, જૈસે આંખોં મેં પર્પટિકાદિરૂપરચના ।
યહ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કી બાહ્ય નિર્વૃત્તિ હૈ, પરન્તુ યહ સર્વત્ર ઇસી પ્રકાર કી
હોતી હૈ, યહ નિયમિત નહીં, ક્યોંકિ કિસી કી આંખ મોટી હોતી હૈ

અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્મળ આત્મપ્રદેશોની ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોના
પ્રતિનિયત આકારથી અવસ્થિત જે વૃત્તિ છે તેનું નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ
છે, તેની ઉપમા તલવારની ધાર જેમ છે તે આત્મપ્રદેશોમા પુદ્ગલવિપાકી
નિર્માણ નામકર્મ દ્વારા જે કર્ણશૃંગુલી આદિ રૂપે તે તે ઇન્દ્રિયોના આકારોની
રચના કરી છે તેનું નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ છે જેમ સુથાર રથાદિક વસ્તુઓના
પ્રતિનિયત આકારોને બનાવે છે તે પ્રકારે આ નિર્માણ નામકર્મ જે પુદ્ગલવિપાકી
પ્રકૃતિ છે, તે ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ પરિણત આત્મપ્રદેશોમા પુદ્ગલદ્રવ્યોની પ્રતિનિયત
ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ રચના કરે છે તેની ઉપમા તલવારથી આપી છે બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો
પ્રતિનિયત કોઈ આકાર નથી તે અનેક પ્રકારના છે જેમ આખોમા પર્પટિકાદિ
રૂપ રચના, તે ચક્ષુઇન્દ્રિયની બાહ્ય નિર્વૃત્તિ છે, પરંતુ આમ સર્વત્ર છે,
તેમ નિયમિત નહિ કોઈની આખ મોટી હોય છે, કોઈની નાની આભ્યન્તર

ચિન્ચ દ્રવ્યમિત્યાધનેકમકારા । આમ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષા સમાના મતિ ।
 વતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં વાચ્યામ્યન્તરમદો મતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ ઘોઘ્યમ્ । ઉપ-
 ક્રિયત ઇત્યુપકરણમ્, ઉપકરણેન્દ્રિયઞ્ચ સદ્ગત્થાનીયવાચ્યાનિર્વૃત્તેઃ સદ્ગત્થારાસદ્
 સ્વચ્છતરપુલ્લસમૂહરૂપામ્યન્તરનિર્વૃત્તેષ્ઠ શક્તિવિશેષઃ । અનુપઘાતાનુગ્રહાભ્યાં નિર્વૃત્તી
 દ્વિયસ્યાપકારિત્વેનોપકરણમ્ । તદપિ વાચ્યામ્યન્તરનિર્વૃત્ત્યુપકારકરત્વેન ટ્રિપિપમ્ ।
 નિર્વૃત્ત્યુપકરણરૂપમયમતસ્પુલ્લપરિણામાત્મકમપિ સદિન્દ્રિયસમ્બધ્યવ્યવહારં સમતે ।

और किसीकी छोटी । (आम्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती है । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो वाद्य और आम्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं) ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ 'निर्वृत्ति का जो उपकार करे' यह है । यह स्वङ्ग-तलवार-स्थानीय वाद्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुल्लसमूह रूप आम्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

(यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आम्यन्तर और वाद्य निर्વृत्ति का उप-
 कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आम्यन्तर-उपकरण
 और (२) वाद्य-उपकरण) आम्यन्तर निर्વृत्ति का जो उपकार कर वह
 आम्यन्तर-उपकरण और वाद्य निर्વृत्तिका जो उपकार करे वह वाद्य-उप-
 करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुल्लपरिणामा

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખા છે નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે વાદ્ય અને
 આમ્યન્તર એક છે તે સ્પર્શને ઇન્દ્રિયને છાડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ
 સમજવાનું છે

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો એક ઉપકરણ છે એનો અર્થ 'નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર
 કરે' એ છે આ તલવારસ્થાનીય વાદ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તની ધારામ્યાનીય
 સ્વચ્છતરપુલ્લગણસમૂહરૂપ આમ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે
 અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા માની છે

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આમ્યન્તર અને વાદ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક
 હોવાથી બે પ્રકારનું છે (૧) આમ્યન્તર ઉપકરણ, અને વાદ્ય ઉપકરણ, આમ્યન્તર
 નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આમ્યન્તર ઉપકરણ છે અને વાદ્યનિર્વૃત્તિનો જે
 ઉપકાર કરે તે વાદ્ય ઉપકરણ છે નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્યૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થકાઘ્વત્ 'પાયલીકાટ' ઇતિ માપા । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લઘ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ત્વ તત્ત્વ-દિન્દ્રિયાવારકર્મણાં ક્ષયોપશમો લઘ્વિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યાપાર ઉપયોગઃ । અત્ર લઘ્વૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્યપેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોપયો-ત્મક હૈ તો 'મી' ઉસકા જો ઇન્દ્રિય શબ્દસે વ્યવહાર કિયા ગયા હૈ ઉસકા મતલબ યહી હૈ (કિ) (યહ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાનમેં સહાયક હૈ, ક્યૌંકિ વિના દ્રવ્યેન્દ્રિય કે આત્મા કો પદાર્થજ્ઞાન નહીં હો સકતા । યહી કારણ હૈ કિ વિગ્રહગતિ મેં 'ભાવેન્દ્રિય'કે હોને પર 'મી' દ્રવ્યેન્દ્રિય કે અભાવમેં જીવકો વાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન નહીં હોતા । દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાન કરાનેમેં સહાયક હૈ તો મી વહ 'ભાવેન્દ્રિય' કે સહયોગ કે વિના આત્માકો પદાર્થબોધમેં સહાયક નહીં હો સકતા ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય મી લઘ્વિ ઓર ઉપયોગકે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હૈ । (૧) ઝન-ઝન ઇન્દ્રિયોં કો આચરણ કરનેવાલે કર્મોંકા જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લઘ્વિ હૈ । એવં ઇન્દ્રિયોંકા અપને ૨ વિષયોં કે જાનને રૂપ જો વ્યાપાર હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । (આત્મામેં લઘ્વિ-જાનને કી યોગ્યતા-હોનેપર મી ઉસે નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ એવં ઉપયોગ કી અપેક્ષા રહતી હૈ । લઘ્વિ કે હોતે હુણ મી ઇનકે વિના આત્માકો પદાર્થ-

યદ્યપિ પુદ્ગલપરિણામાત્મક છે તે પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માનો સહાયક થઈ શકતો નથી

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લઘ્વિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે પ્રકારે છે તે તે ઇન્દ્રિયોના આચરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લઘ્વિ છે ઇન્દ્રિયોના પોત-પોતાના વિષયોને જાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ ઉપયોગ છે

આત્મામાં લઘ્વિ-જાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ, અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, લઘ્વિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ગત્યાપક્ષેતિ વિશેષમ્ । અપ્રાયં વિશેષઃ-શ્ચોષં દ્વાદશયોજનાગતં સ્મૃદ્ યદ્વાતિ, ચક્ષુરપિ સાતિરેકૈકવિંશતિલક્ષયોજનસ્થિતં રૂપ યદ્વાતિ, અન્યાનિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ નયયોજનાગતસ્વસ્વવિપયગ્રાહકાણિ ભવન્તિ । જયન્યતસ્તુ ચક્ષુરજુન્મસસ્યેયમાત્મ-મિતદેશવર્તિરૂપં યદ્વાતિ । અન્યાનિ ચત્વારીન્દ્રિયાણિ ષાકુલાસંસ્થયયમાગમિત-વેશસ્થિતં સ્વસ્વવિપયં યદ્વાતીતિ માત્રા । તપ્ર શ્ચોષાદીનાં ચતુર્ણાં પ્રાપ્યકારિત્વં, સ્મૃદાવિપુદ્ગણાનાં કર્ષાદિસંયોગેનૈવ નિર્ભયાત્ । ચક્ષુષમાપ્રાપ્યકારિત્વ રૂપસ્ય સયોગં કિના દૂરત્ત एव નિભયાદિતિ વિશેષઃ ।

યોષ નહીં હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર નિર્વૃત્તિ કે હોને પર મી ઉસે ઉપકરણ ઓર ઉપયોગકી અપેક્ષા રહા કરતી હૈ, ઓર ઉપકરણ કે સદ્ભાવમેં ઉપયોગ કી । શ્ચોષ-ઇન્દ્રિય પારહ યોજન સે આપે હુપ શબ્દ કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કુછ અધિક ૨૨ ફક્સ લાક્ષ યોજન સ્થિત રૂપ કો જાનતી હૈ । ષાકી કી ત્રીન ઇન્દ્રિયોં નય યોજન સે આપે હુપ અપને ૨ વિપય કો ગ્રહણ કરનેવાલી હોતી હૈ) યહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોં કા વિપય ઘતલાયા હૈ । (જયન્ય કી અપેક્ષા ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અજુલ કે સંસ્થાતવેં ભાગમેં સ્થિત રૂપકો ગ્રહણ કરતી હૈ । ષાકી કી ચાર ઇન્દ્રિયોં અજુલકે અસંસ્થાતવેં ભાગ પ્રમાણ દેશમેં રહે હુપ અપને ૨ વિપય કો જાનનેવાલી હૈ)

(સ્પર્શન, રસન, ગ્રાણ ઓર શ્ચોષ, યે ચાર ઇન્દ્રિયોં અપને ૨ પૌષ્ઠલિક વિપયોં કો છ (સ્પર્શ) કર હી જાનતી હૈ ઇસ લિપે યે પ્રાપ્યકારી હૈ ।

ગ્રાહ ઘટે નથી, એ પ્રકારે નિર્વૃત્તિ થવા છતાં પણ તેને ઉપકરણ અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, અને ઉપકરણના સદ્ભાવમાં ઉપયોગની રહે છે ।

શ્ચોષ ઇન્દ્રિય બાર યોજનથી આવેલા શબ્દને ગ્રહણ કરે છે ચક્ષુઇન્દ્રિય કાર્ષક અધિક એકવીસ લાખ યોજનથી રૂપ બાંહે છે બાકીની ત્રણ ઇન્દ્રિયોં નય યોજનથી આવેલા પોત-પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે આ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોંને વિષય બતાબે છે જયન્યની અપેક્ષા ચક્ષુઇન્દ્રિય અજુલના સપ્તમાતમાં ભાગમાં સ્થિત રૂપને ગ્રહણ કરે છે બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયોં અજુલના અસપ્તમાતમાં ભાગ પ્રમાણ દેશમાં રહેલા પોત-પોતાના વિષયને બાંહે છે

સ્પર્શન, રસન, ગ્રાણ અને શ્ચોષ, આ ચાર ઇન્દ્રિયોં પોત-પોતાના પોદ્ગતિક વિષયોંને સ્પર્શ કરી બાંહે છે માટે એ પ્રાપ્યકારી છે ચક્ષુઇન્દ્રિય પોતાના વિષયને સ્પર્શ કર્યા બિના બાંધી લે છે માટે તે અપ્રાપ્યકારી છે, અર્થાત્ આ

नन्विन्द्रियाण्येव वस्तु निर्णेतुं प्रभवन्तु किमधिकेनातिरिक्तात्मस्वीकारेणेति चेन्न, तत्तदिन्द्रियनाशेऽपि तत्तदिन्द्रियपूर्वानुभूतार्थस्मरणस्यान्यथानुपपत्त्याऽतिरिक्तस्यात्मनोऽवश्यं सिद्धेः । आत्मनो विज्ञानोत्पत्तौ श्रोत्रादीनि प्रकृष्टोपकारकाणि भवन्ति, तेन करणरूपकारकतया तृतीया विभक्तिः सिद्ध्यति, ततोऽनेन श्रोत्रेण मया शब्दः श्रुतः, अनेन च मन्दतरः शब्दः श्रुतः, इत्यादयः प्रयोगाः सङ्गच्छन्ते ।

चक्षु-इन्द्रिय अपने विषय को बिना छुए (स्पर्श किये) ही जान लेती है अतः वह अप्राप्यकारी है, अर्थात् यह इन्द्रिय अपने साथ अपने विषय का संयोग हुए बिना दूरसे ही अपने रूप-विषय का प्रकाशक है ।

(शङ्का—इन्द्रियों को ही अपने २ विषयरूप ज्ञेय का निर्णय करनेवाली मानलेनी चाहिये, उनसे अतिरिक्त आत्माके माननेकी क्या आवश्यकता है ?)

उत्तर—यह बात कहना ठीक नहीं है, कारण कि जब इन्द्रियाँ नष्ट हो जाती हैं तब उनके द्वारा पूर्वानुभूत पदार्थका स्मरण होता है । यदि इन्द्रियाँ ही पदार्थ की ज्ञाता मानी जायें तो फिर जो उनके बिनाश होने पर अनुभूत पदार्थ की स्मृति होती है वह नहीं होनी चाहिये अतः अन्य-थानुपपत्ति (जिसके नहीं होने पर नहीं होना) (रूप अनुमान से इन्द्रियोंके अतिरिक्त आत्माके अस्तित्वकी सिद्धि होती है) ।

शङ्का—यदि इन्द्रियों से भिन्न आत्माके अस्तित्व की स्वीकृति मानी जावेगी तो फिर “चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते” इत्यादि जो व्यवहार होता है वह नहीं होना चाहिये ।

इन्द्रिय पोतानी साथे पोताना विषयनो अयोग तथा बिना दूरथी न पोताना ३५ विषयनो प्रकाशक छे

शङ्का—इन्द्रियोने न पोत-पोताना विषय ३५ ज्ञेयनो निर्णय करनार मानवी जेधये अथी अतिरिक्त आत्माने मानवानी शु आवश्यकता छे ?

उत्तर—आम कडेवु व्याजणी नथी कश्छे न्यारे इन्द्रियो नष्ट थाय छे त्यारे तेना द्वारा पूर्वानुभूत पदार्थनु स्मरण थाय छे कदाय इन्द्रियोने न पदार्थनी ज्ञाता मानवामा आवे तो पछी न तेना बिनाश पछी अनुभूत पदार्थनी स्मृति थाय छे ते थवी जेधये नहि माटे अन्यथानुपपत्ति (जेना नहि डोवाथी नथी थतुं) ३५ अनुमानथी इन्द्रियोथी अतिरिक्त आत्माना अस्तित्वनी सिद्धि थाय छे

शङ्का—कदाय इन्द्रियोथी भिन्न आत्माना अस्तित्वनी स्वीकृति मानवामा आवे तो पछी “चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते” इत्यादि न व्यवहार थाय छे ते थवी जेधये नहि.

નન્વેવં કરણત્વાદિન્દ્રિયસ્વીકારે તુ શબ્દપાણિપાદપાયુપસ્થાનમપિ કરણ ત્વાદિન્દ્રિયસ્વમન્યત્ર સ્વીકૃતમિદમપિ કુતો નામિદિતમિતિ चेन्न, आत्मनो विज्ञानो-
स्पृष्टौ तेषां प्रकृष्टोपकारकस्त्रामावादिन्द्रियस्वस्यासिद्धे, सामान्यतः करणत्वादिन्द्रि-
यस्वस्वीकारे तु स्वस्वव्यापारवत् उदरादेरपि करणत्वादिन्द्रियत्वापत्तेः।

उत्तर—शङ्का ठीक है परन्तु विचारने पर स्वतः ही इस शङ्कका समाधान हो जाता है, क्योंकि इन्द्रियों आत्माके ज्ञानकी उत्पत्ति में प्रकृष्ट साधक हैं इस कारण वहाँ पर “बध्नुषा दृश्यते, भोजेण श्रूयते” इत्यादि में करण रूप कारक पने तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है। जहाँ ये आत्माके विज्ञानकी उत्पत्तिमें प्रकृष्ट उपकारक हैं तभी तो ‘मैंने इस भोज इन्द्रियसे मन्द शब्द सुना और इस भोज इन्द्रियसे मन्दतर शब्द सुना’ इत्यादि प्रयोग ठीक बैठ जाते हैं।

शङ्का—आत्माके विज्ञान रूप कार्यकी उत्पत्ति में अत्यन्त साधक होनेसे स्पर्शनादिकों को यदि आप इन्द्रिय रूपसे स्वीकार करते हैं तो फिर वाक्, पाणि, पाद, पायु (गुदा), और उपस्थ (जननेन्द्रिय), इन को भी इन्द्रियरूपसे आपको स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि ये भी आत्माके अपने २ अनुरूप कार्यमें प्रकृष्ट साधक होते हैं इसीलिये साध्य सिद्धान्तमें इन्हें इन्द्रियरूपसे स्वीकार किया है फिर आपने इन्हें इन्द्रियरूपसे यहाँ पर क्यों स्वीकार नहीं किया ?।

उत्तर—शङ्કા ઠીક છે, પરંતુ વિચારવાથી આપમેળે જ તે શંકાનું સમાધાન થાય છે કારણકે ઇન્દ્રિયો આત્માને જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં પ્રકૃષ્ઠ સાધકો છે એ કારણે ત્યાં “બધ્નુષા દ્રશ્યતે ભોજેણ શ્રૂયતે” ઇત્યાદિકરણત્વ રૂપ કારકપણે ત્રીજી વિભક્તિને પ્રયોગ થાય છે, ત્યારે જ્યારે આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં પ્રકૃષ્ઠ ઉપકારક છે તેથી જ મેં આ માત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દ શબ્દ સાંભળ્યો અને આ ભોજ ઇન્દ્રિયથી મન્દતર શબ્દ સાંભળ્યો ઇત્યાદિ પ્રયોગ ઠીક બેસે છે

શંકા—આત્માના વિજ્ઞાન રૂપ કાર્યની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત આધિકાકોષાવાથી સ્પર્શ નાદિકોને કદાચ આપે ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર કરો છે તો પછી વાક, પાણિ, પાદ, પામુ (ગુદા) અને જનનેન્દ્રિય આ સધર્માને ઇન્દ્રિય રૂપે આપે સ્વીકારવા એઈએ કારણકે આ બધા આત્માને પોત-પોતાના અનુરૂપ કાર્યથી પ્રકૃષ્ઠ સાધક થાય છે માટે સાધ્ય સિદ્ધાન્તમાં તેઓને ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર્યા છે તો પછી આપે ઇન્દ્રિય રૂપે આ ઠેકાણે કેમ સ્વીકાર ન કર્યો ?

ननु श्रोत्रेणैव रूपादीनामपि कथं न प्रत्यक्षमिति चेन्न, इन्द्रियाणां भिन्न-भिन्न-विषयकत्वेन तत्तदिन्द्रियेण स्वस्वविषयकातिरिक्तज्ञानासम्भवात् ।

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है, यहां पर तो आत्माके लिये जो विज्ञानकी उत्पत्तिमें अत्यन्त उपकारक हैं वे इन्द्रियाँ हैं और वे स्पर्शन आदि हैं, वाक् पाणि वगैरह सांख्यादि सिद्धान्तकी मानी हुई इन्द्रियाँ आत्माको विज्ञानकी उत्पत्तिमें श्रोत्र आदि की तरह प्रकृष्ट उपकारक नहीं हैं अतः उन वाक् आदि में इन्द्रियत्वका व्यपदेश ही सिद्ध नहीं होता। सामान्य रीतिसे जो यह बात मान ली जावे कि—जो करण होते हैं वे इन्द्रियाँ होती हैं अतःकरण होनेसे वाक् पाणि वगैरहमें भी इन्द्रियत्व स्वीकार करलेना चाहिये, तो फिर इस प्रकारसे आत्माके लिये अपने २ व्यापारमें निरत उदरादिक—पेट वगैरह—को भी करण होने से इन्द्रिय मानना पड़ेगा, तब इन्द्रियों की जो सांख्यादि सिद्धान्तकारोंने ११ ग्यारह संख्या नियत की है वह सिद्ध नहीं होगी, इससे भी अधिक इन्द्रियाँ इस प्रकार सिद्ध होती हैं ।

(शङ्का—श्रोत्र इन्द्रियसे ही रूपादिक अन्य इन्द्रियों के विषयों का प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता ?)

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं, कारण कि प्रत्येक इन्द्रिय का अपना

उत्तर—आम કહેવું ઠીક નથી આહીતો આત્માને જે વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમા અત્યન્ત ઉપકારક છે તે ઇન્દ્રિયો છે અને તે સ્પર્શનઆદિ છે વાક્ (વાણી) પાણિ (હાથ), વિગેરે સાખ્યાદિ સિદ્ધાન્તની માનેલી ઇન્દ્રિયો આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમા શ્રોત્ર આદિની માફક પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક નથી માટે તે વાક્ આદિમા ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ જ સિદ્ધ થતો નથી સામાન્ય રીતિથી જો આ વાત માની લેવા આવે કે જે કરણ થાય છે તે ઇન્દ્રિયો હોય છે માટે કરણ થવાથી વાક્, પાણિ વિગેરેમા પણ ઇન્દ્રિયત્વનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ તો પછી આ પ્રકારે આત્માને માટે પોત-પોતાના વ્યાપારમા સામાન્ય રુપે કરણ થવાવાળા ઉદરાદિક-પેટ વિગેરેનુ પણ ઇન્દ્રિયપણુ માનવુ પડે ત્યારે ઇન્દ્રિયોની જે સાખ્ય સિદ્ધાન્તકારોએ અગીયાર સખ્યા નક્કી કરેલ છે તે સિદ્ધ થતી નથી, તેથી પણ અધિક ઇન્દ્રિયો આવી રીતે સિદ્ધ થાય છે

શંકા—શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જ રૂપાદિક અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પ્રત્યક્ષ કેમ થતા નથી ?

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. કારણકે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોત-પોતાનો વિષય

નવેવ તર્હિ રસમતીતિકાછે શીતાળ્પકર્કશ્ચકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કયં મક્-
તીતિ વેદાદ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વન રસનેન્દ્રિયમવશઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન
રસમતીતિકાછેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ ઓગ્રાદિવ્યનનસઃ કુતો નેન્દ્રિયસ્વમિતિ વેદાદ—

વિષય નિયત હે અતઃ વહ દસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સકસી ।
શાસ્ત્રકાર મી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયોં મિમ્મર વિષયવાલી હૈં ઇસ
લિયે વે અપનેર વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકિ વિષયકી બોધક
નહીં હોતી હૈં ।)

શક્ત—ઘદિ યહી વાત સ્વીકાર કી આવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે
રસકે જ્ઞાનકે સમયમેં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન
હોતા હૈ વહ કેસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈં ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે
પ્રવેશમેં મી ઉસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમેં મી સ્પર્શકે
જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈ ।

શક્ત—જિસ પ્રકાર ઓગ્રાદિકોં મેં ઇન્દ્રિયસ્વકા વ્યપવેશ હોતા હૈં
ઉસી પ્રકાર મનમેં મી ઇન્દ્રિયસ્વકા વ્યપવેશ ક્યોં નહીં હોતા હૈં ? ।

ઉત્તર—ઓગ્રાદિક ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકો પ્રહ્ણ કરનેમેં જિસ
પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ઉસ પ્રકાર મન નહીં હૈ, ક્યોંકિ વહ ઉન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે બીજા વિષયની ગ્રાહક બનતી નથી. શાસ્ત્રકાર
પણ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયોં બિલ બિલ વિષયવાળી છે માટે તેઓ
પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંના વિષયની ગ્રાહક થતી નથી.

શકા—માને, આ વાત સ્વીકારવામાં આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના
જ્ઞાનના સમયમાં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનું જે જ્ઞાન થાય
છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રવેશમાં પણ
તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમાં પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની
સુલભતા થાય છે.

શકા—જે પ્રકારે આગ્રાદિકામાં ઇન્દ્રિયના વ્યપવેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ
ઇન્દ્રિયસ્વના વ્યપવેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—આગ્રાદિક ઇન્દ્રિયોં પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામાં જે પ્રકારે
સ્વતંત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તં ઇન્દ્રિયોંનું ઉપકારક માત્ર

શ્રોત્રાદીનિ ચ શબ્દાદિવિષયગ્રહણે સ્વતન્ત્રાણિ સન્તિ, મનસ્તુ તેપામુપકારિ-
માત્રં, સ્વતન્ત્રતયા તસ્ય પદાર્થનિર્ણાયકત્વાભાવાત્ । યતસ્તત્તદિન્દ્રિયનિર્ણીતપદાર્થ
એવ તસ્ય પ્રવૃત્તિર્ભવતિ નાતસ્તસ્યેન્દ્રિયત્વં મન્વિતુમર્હતિ । એકસ્મિન્ન સમય એકેને-
ન્દ્રિયેણૈક એવોપયોગો ભવતિ, એકસમયે ઉપયોગદ્વયાસમ્ભવાત્ ।

નન્વેવં તર્હિ પર્યટ ('પાપડ') ઇતિ ભાપાપ્રસિદ્ધપદાર્થ) મક્ષણકાલે પञ્ચમિ-
રિન્દ્રિયૈઃ સર્વે જ્ઞાનં ભવતિ યથા-શ્રોત્રેણ શબ્દં શૃણોતિ, ચક્ષુષા રૂપં પશ્યતિ, ગ્રાણેન
ઉપકારક માત્ર હૈ । યહ વિના ઇન્દ્રિયોસે જાને પદાર્થ કા સ્વતન્ત્ર રૂપસે
નિર્ણાયક નહીં હોતા હૈ, ક્યોંકિ મિત્ર મિત્ર ઇન્દ્રિયોં સે નિર્ણીત પદાર્થ
મેં હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે ઉસમેં સ્વતન્ત્ર રૂપસે ઇન્દ્રિયપના
નહીં હૈ । એક સમય મેં એક ઇન્દ્રિયસે એક હી ઉપયોગ હોતા હૈ-એક
સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે ।

શઙ્કા—યદિ એક સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે હૈં તો ફિર જિસ
સમય પાપડ ખાયા જાતા હૈં ઉસ સમય જો પञ્ચેન્દ્રિય-જન્ય ઉસકા
જ્ઞાન હોતા હૈં વહ નહીં હોના ચાહિયે ?, દેગિયે-ખાતે સમય પાપડકી
ચર-ચર આવાજ હોતી હૈં અતઃ ઇસ શબ્દ કા શ્રોત્રેન્દ્રિયસે પ્રત્યક્ષ હોતા
હૈં, ઉસ સમય ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય ઉસકે રૂપકી બોધિકા હોતી હૈં । ગ્રાણ-ઇન્દ્રિય
ઉસકે ગન્ધકી, રસના-ઇન્દ્રિય ઉસકે રસકી ઓર સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય ઉસકે
કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ કો બોધિકા હોતી હૈં । યે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયસે એક
હી સમયમેં ઉસર વિષયકે મિત્રર બોધ હોતે હૈં, સો ક્યોં હોતે હૈં ? ।

છે, તે ઇન્દ્રિયોથી જાણ્યા વગર પદાર્થનો સ્વતન્ત્ર રૂપે નિર્ણયિક થતુ
નથી, કારણકે જુદી જુદી ઇન્દ્રિયોથી નિર્ણીત પદાર્થમા જ તેની પ્રવૃત્તિ
છે માટે તેમા સ્વતન્ત્ર રૂપે ઇન્દ્રિયપાત્રુ નથી. એક સમયમા એક ઇન્દ્રિયથી
એક જ ઉપયોગ થાય છે એક સમયમા બે ઉપયોગ થતા નથી.

શકા—કદાચ એક સમયમા બે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી બે વખતે પાપડ
ખાવામા આવે છે તે સમયે બે પચેન્દ્રિયજન્ય તેનુ જ્ઞાન છે તે ન હોયું
જોઈ એ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર-ચર અવાજ થાય છે અને
તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુઇન્દ્રિય તેના રૂપની બોધક
થાય છે, ગ્રાણુઇન્દ્રિય તેના ગન્ધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન
ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણ આદિ સ્પર્શની બોધક થાય છે તે પ્રત્યેક
ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમા તે તે વિષયનો લિપ્ત લિપ્ત બોધ થાય છે તો
શા માટે થાય છે ?

ગર્ભ જિવ્રતિ, રસનેન રસમાસ્વાદયતિ, સ્પર્શનેન કર્કશ્ચકટોરાદિકં સૃષ્ટતિ, इति
 ક્યમેકસ્મિન્ સમય શબ્દાદિવિષયકજ્ઞાનં સજાયતે ? इति चेन्न, समयमवदपि
 कमलपद्मशतवेधनवस्तुस्मृतया तस्य ज्ञातुमशक्यत्वात् ।

एष चापयोगक्रमः—आत्मा मनसा युज्यते, मनश्चेन्द्रियेभ्य, इन्द्रियाणि च
 विषयसंयुक्तानि भूत्वा तत्तद्विषयग्राहकाणि भवन्ति, अतो मनसोऽन्तःकरणत्वं सर्वा
 नुगामित्वश्चोपपद्यते ॥

उत्तर—(इन पांच इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानोंमें भी समयका भेद
 अवश्य है परन्तु यह समयका भेद अति सूक्ष्म होनेसे जाना नहीं जाता
 है । जिस प्रकार कमलके सैकड़ों पत्ते तीर के ऊपर रखकर वेधने से
 'एक साथ ही विंध गये' ऐसा घोष होता है परन्तु वे एक साथ नहीं
 बिंधे, एक साथ बिंधनेका उनमें भ्रम ही होता है, क्रम-क्रमसे ही वे
 बिंधते हैं परन्तु उनके बिंधनेका समय अति सूक्ष्म होनेसे उसमें क्रमिक
 ताका घोष नहीं होता ।) उपयोगका क्रम इस प्रकार है—आत्मा मनसे
 संबंधित होता है, मन इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ पदार्थोंसे संबंधित होकर
 अपने-विषयकी ग्राहक होती हैं; इसीलिये मनका, 'अन्तःकरण' यह
 सज्ञा सार्थक है, क्योंकि यह अन्तरङ्ग करण है और इन्द्रियाँ बहिरंग
 करण हैं । प्रत्येक इन्द्रियके साथ इसका क्रमसे ही गमनरूप सम्बन्ध
 है इसलिये यह सर्वानुगामी है ।

उत्तर—આ પાંચ ઇન્દ્રિયોથી યથાવાળા જ્ઞાનમા પણ સમયનો ભેદ અતિ સૂક્ષ્મ
 હોવાથી બહુી યકતો નથી જેમ કમલના સેકડો પત્તા વિંધવાથી તે
 'એક સાથ જ વિંધાઈ ગયા' એવો જોશ થાય છે, પરંતુ તેઓ એકી
 સાથ વિંધાએલ નથી, એકી સાથ વિંધાવાનો તેમા ખાલી ભ્રમજ છે. ક્રમ
 ક્રમથી જ તે વિંધાય છે, પરંતુ તેના વિંધાવાનો સમય અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી
 તેમા ક્રમિકતાનો જોશ થતો નથી. ઉપયોગનો ક્રમ આ પ્રકારે—૭ આત્મા
 મનથી સંબંધિત છે મન ઇન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રિયો પદાર્થોથી સંબંધિત થઈ
 પોત-પોતાના વિષયની ગ્રાહક થાય છે માટે મનની 'અન્તઃકરણ' એ
 સજ્ઞા સાર્થક છે કારણકે તે અન્તરંગ કરણ છે અને ઇન્દ્રિયા બહિરંગ
 કરણ છે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની સાથ તેના ક્રમ-ક્રમથી જ ગમન રૂપ સંબંધ
 છે માટે તે સર્વાનુગામી છે

ઇન્દ્રિયવિષયકો વિચારો ગતઃ, સામ્પ્રતં પ્રકૃતાર્થમનુસરામઃ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં રોગોદયે ચ સર્વેપામિન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વસામર્થ્યહીનતામવલોક્યં સ પ્રાણી મૌઢ્યમાપદ્યતે, ઇતિ દર્શયતિ—‘અભિક્રાન્તં ચ ચ્છલુ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય સ એકદા મૂઢભાવં જનયતિ’ ઇતિ । પ્રાણિનાં કાલકૃતા વાલ્યયૌવનાદિરૂપા શરીરાવસ્થા વયસ્તત્ અભિક્રાન્તમ્—અતિક્રાન્તમ્, યદ્વા અભિ=જરામૃત્યુ અભિમુખીકૃત્ય ક્રાન્તં=પ્રાપ્તં, તિસ્રો હિ માનવાનામવસ્થા ભવન્તિ, તાસુ ચ વાલ્ય-યૌવનદ્વયમતીતં વિલોક્ય સકલેન્દ્રિયસામર્થ્યસ્ય ક્ષીણતાં મૃત્યુકાલસામીપ્યશ્ચ સમાલોચ્ય તતઃ=તદનન્તરં સ પ્રાણી, એકદા=વૃદ્ધાવ-

યહાં તક ઇન્દ્રિય સમ્બન્ધી વિચાર કિયા, અવ પ્રકૃત અર્થકા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

વૃદ્ધાવસ્થા મેં અથવા કિસી કે રોગાદિ કારણ જવ યહ પ્રાણી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોંકો અપનેર વિષયોંકે ગ્રહણ કરને મેં શક્તિવિકલ દેખતા હૈ, તવ યહ કર્ત્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ,) ઇસ વાતકા વર્ણન કરતે હૈ—“અભિક્રાન્તં ચ ચ્છલુ વયં” ઇત્યાદિ ।

પ્રાણિયોંકી કાલકૃત જો વાલ્ય-યૌવનાદિ રૂપ અવસ્થા હોતી હૈ ઉસકા નામ વય હૈ, ઉસકો અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા ઓર મૃત્યુકે સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખકર યહ પ્રાણી એકદા=વૃદ્ધાવસ્થા અથવા રોગોદયમેં મૂઢ-ભાવ=કર્ત્તવ્યાકર્ત્તવ્યકે વિવેકની શૂન્યતાકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

પ્રાણિયોંકી ત્રીન પ્રકાર કી અવસ્થાઈ હૈ—એક વાલ્યાવસ્થા, દૂસરી યૌવનાવસ્થા, ઓર ત્રીસરી વૃદ્ધાવસ્થા । ઇનમેં વાલ્ય ઓર તરુણ અવ-

આટલે સુધી ઇન્દ્રિયસબ ધી વિચાર કર્યો, હવે પ્રકૃત અર્થનુ પ્રતિપાદન કરે છે

વૃદ્ધાવસ્થામા અથવા કોઈ રોગાદિક કારણે ન્યારે પ્રાણી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને પોતપોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરવામા શક્તિવિકલ દેખે છે ત્યારે તે કર્ત્તવ્યમૂઢ બને છે આ વાતનુ વર્ણન કરે છે “અભિક્રાન્તં ચ ચ્છલુ વયં” ઇત્યાદિ ।

પ્રાણિયોની કાલકૃત જે બાલ્ય-યૌવનાદિરૂપ અવસ્થા છે તેનુ નામ વય છે તેનુ અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા અને મૃત્યુના સમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખીને પ્રાણી એકદા-વૃદ્ધાવસ્થા અથવા રોગોદયમા કર્ત્તવ્યા-કર્ત્તવ્યના વિવેકની શૂન્યતાને પ્રાપ્ત થાય છે

પ્રાણીઓની ત્રણ પ્રકારની અવસ્થા છે એક બાલ્યાવસ્થા, બીજી યૌવનાવસ્થા અને ત્રીજી વૃદ્ધાવસ્થા, તેમા બાલ્ય અને તરુણ અવસ્થાને વ્યતીત દેખીને

સ્યાયાં રોગોદયે ચાત્મનો મૂઢતા=કર્તવ્યકર્તવ્યવિચારગુન્યતાં જનયતિ=અજ્ઞાનભાવં
પ્રાપ્નોતીત્યર્થ । પ્રતિસમયં શ્રોત્ર-ચક્ષુ-ઘ્રાણ-રસન-સ્પર્શન-વિજ્ઞાનૈ સક્રમેરેકૈશ્ચ
વા, વેશ્વતઃ સર્વતો વા નશ્યમાનૈ કરણરૂપૈઃ કર્તવ્યમૂઢો મયતિ ।

યદ્વા-‘સોયપરિણાળેર્હિ, પરિહીયમાળેર્હિ’ ઇત્યાદી પ્રથમાર્થે તૃતીયાઽઽર્થ
ત્વાત્તદા તાનિ પરિજ્ઞાનાનિ હીયમાણાનિ કર્તૃરૂપાણિ મૂઢતા જનયન્તીત્યર્થો મયતિ ।

સ્થાકો વ્યતીત વેશ્વકર વૃદ્ધાવસ્થા કો સફલ ઇન્દ્રિયોંકી શક્તિસે રિત્ત,
પર્બં મૃત્યુકાલ કે સમીપ આઈ મૂર્છ વેશ્વ કર ઉસ કાલમેં યહ પ્રાણી મૂઢ
‘માવકો પ્રાસ હોતા રહતા હૈ-’ મેરા કર્તવ્ય કયા હૈ ઓર અકર્તવ્ય કયા
હૈ ’ ઇસ ઘાતકા ઉસ સમય વિચાર હી જાતા રહતા હૈ । ઉસ સમય શ્રોત્ર,
ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન, યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકે
જ્ઞાનસે ક્રમર કરકે અથવા ઇકઢી સાથ, યા કુછ-કુછ અંશમેં રિત્ત હો
જાતી હૈં ફિર ઇસે કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્યકા ‘માન’ મી કૈસે હો સકતા
હૈ, ક્યોંકિ કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કા ‘માન’ ઇન્દ્રિયોં દ્વારા હી ગ્રહણ
કિયે જુદ વિષયોંમેં માનસિક વિચારધારા સે હોતા હૈ । જબ યે ઇન્દ્રિયોં
અપનેર વિષયકે બોધસે વિકલ જનજાતી હૈં તથા ઉનકે વિષયોં મેં જો
માનસિક વિચારધારા બંધતી થી યહ કૈસે ધંધ સકેગી ? અતઃ યહ ઉસ
સમય ઇસ પ્રકાર કે બોધસે રહિત હોકર ઇક તરફ કા ઉન્મત્સ જૈસા
કર્તવ્યમૂઢ હો જાતા હૈ)

અથવા-આર્ષવાક્ય હોને સે-“સોયપરિણાળેર્હિ પરિહીયમાળેર્હિ”

વૃદ્ધાવસ્થાને સકળ ઇન્દ્રિયની શક્તિથી રિત્ત અને મૃત્યુકાળ તરફ આવેલી કેમીને
આ કાળમા પ્રાણી મૂઢ બાવને પ્રાપ્ત થાય છે ‘માર્ક કર્તવ્ય શું છે અને અક
ર્તવ્ય શું છે એ વાતને તે સમયે તેવો વિચાર જ વિચરત્ય બન્ય છે, તે
વખતે શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના અને સ્પર્શન, આ બધી ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના
વિષયના જ્ઞાનથી કેમ કેમ અથવા એકી સાથે, અથવા યોગ્ય યોગ્ય અશમા રિત્ત
થાય છે પણ તેને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનુ જ્ઞાન કેવી રીતે રહે, કારણ કે
કર્તવ્ય અકર્તવ્યનુ જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોદ્વારા જ પ્રાપ્ત કરેલા વિષયોમા માનસિક
વિચારધારાથી થાય છે જ્યારે આ ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના બોધથી રિત્ત
બને છે ત્યારે તેના વિષયોમા જે માનસિક વિચારધારા બધાવી હતી તે કેવી
રીતે બધાઈ શકે ? માટે તે વખતે તે આ પ્રકારના બોધથી રિત્ત થઈને એક
પ્રકારનો ઉ મત્ત અને કર્તવ્યમૂઢ થાય છે

અથવા-આર્ષવાક્ય હોવાથી-સોયપરિણાળેર્હિ પરિહીયમાળેર્હિ = ઇત્યાદિ

વૃદ્ધો हि सन्ततं चिन्तानुतप्तः प्रणष्टेन्द्रियसामर्थ्यः क्षुत्पिपासातुरस्तरूणायमानतृष्णा-
भिभूतः कल्याणसरणिर्विच्युतो भवतीति तात्पर्यम् ॥ २ ॥

વૃદ્ધાવસ્થાયા કીદૃશી દશા જાયતે ? શ્લોક—‘ જેહિં વા સર્દિં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જેહિં વા સર્દિં સંવસઈ તેઽવિ ણં ઇગયા નિયગા પુઠ્ઠિવ
પરિવયંતિ, સોઽવિ તે નિયણ પચ્છા પરિવણ્ણા, નાલં તે તવ
તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ
વા, સે ન હાસાણ, ન કિહ્ણાણ, ન રઈણ, ન વિમૂસાણ ॥ ૩ ॥

છાયા—યૈયાં સાર્દ સંવસતિ તેઽપિ ચ્વલુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વ પરિવદન્તિ,
સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા,
ત્વમપિ તેપાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, સ ન હાસાય, ન ક્રીડાયૈ, ન રતયે, ન
વિમૂષાયૈ ॥ ૩ ॥

ઇત્યાદિ વાક્યોં મેં પ્રથમા વિભક્તિ કે સ્થાનમેં તૃતીયા વિભક્તિ કા
પ્રયોગ કિયા હૈ । અતઃ પ્રથમા વિભક્તિ કા આશ્રય લેકર ઉસકા
અર્થ ઇસ પ્રકાર હોગા—નષ્ટ હોનેવાલે વે શ્રોત્રાદિક—પરિજ્ઞાન, ઉસ
સમય—વૃદ્ધાવસ્થા યા રોગોદયમેં ઇસ જીવકો કર્ત્તવ્યમૂઢ બના દેતે હૈં,
ક્યોંકિ વૃદ્ધ ઉસ સમય નિરન્તર ચિન્તાસે જલતા રહતા હૈ, ઉસકે
પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી શક્તિ નષ્ટ હો જાતી હૈ, વહ ક્ષુધા તૃષાસે પીડિત
રહતા હૈ, ઉસકે તૃષ્ણા કી વૃદ્ધિ હોતી રહતી હૈ, ઁસી હાલતમેં ઉસે
આત્મકલ્યાણ કી વાત હી નહીં સુઠાતી, અતઃ વહ કલ્યાણમાર્ગસે વહુત
હી દૂર રહતા હૈ, અર્થાત્ વહ આત્મકલ્યાણ નહીં કર સકતા ॥ ૨ ॥

વાક્યોંમા પ્રથમા વિભક્તિના સ્થાનમા ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરેલ છે,
માટે પ્રથમા વિભક્તિનો આશ્રય લઈ તેનો અર્થ આ પ્રકાર થશે—નષ્ટ
થનારા તે શ્રોત્રાદિક—પરિજ્ઞાન તે વળત—વૃદ્ધાવસ્થા અગર રોગોદયમા જીવને
કર્ત્તવ્યમૂઢ બનાવે છે, કારણ કે વૃદ્ધ તે વળતે નિરન્તર ચિન્તાથી બળતો રહે છે
તેની પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની શક્તિ નષ્ટ થાય છે, તે ક્ષુધા તૃષાથી પીડિત રહે છે.
તેના તૃષ્ણાની વૃદ્ધિ થતી જ રહે છે આવી હાલતમા તેને આત્મકલ્યાણની
વાત જ મારી લાગતી નથી માટે તે કલ્યાણ માર્ગથી ઘણો દૂર રહે છે, અર્થાત્
તે આત્મકલ્યાણ કરી શકતો નથી. ૨

ઠીકા—“યૈર્વાં સાર્ધં સંવસતિ” ઇતિ, યા-શબ્દોઽર્થાન્તરસૂચકા તેન યૈ સહ ન સંવસતિ તે પરિવદન્તીતિ જિમાધર્થ, પરં યૈર્વાં સાર્ધં સંવસતિ તેઽપિ નિન્દા ન્તીત્યર્થ । યૈર્વાં પુત્રમાનૃમાયાંદિમિઃ સાર્ધં=સહ સંવસતિ=સાનુરાગં નિસ્સતિ યાન યૌવનાવસ્થાયાં સર્વથા ધનોપાર્જનાદિના પરમાદરેણાપકૃત્ય પુપોફેત્યર્થ । તેઽપિ

વૃદ્ધાવસ્થામેં હસ જીવકી કેસી દશા હો જાતી હૈ હસકે લિયે કહતે હૈ—“જેહિં વા સદ્ધિ” ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનકે સાથ યહ રહતા હૈ વે આત્મીય જન મી વૃદ્ધાવસ્થામેં અથવા રોગાદિકે સમયમેં હસકા તિરસ્કાર કરને લગ જાતે હૈ । યહ મી ડન આત્મીય જનોંકી ડસ હાલતમેં નિન્દા કરને લગ જાતા હૈ હસલિયે હૈ આત્મન્ ! વે પરિચિત યધુ તેરી રક્ષા કરનેકે લિયે, તુમેં શરણ વેનેકે લિયે સમર્થ નહીં હૈ, ઓર ન ત્ મી ડન અપને પરિચિત યધુઓંકી રક્ષા કરનેકે લિયે, ડનેં શરણ પ્રવાન કરનેકે લિયે સમર્થ હૈ । ડસ અવસ્થામેં યહ વૃદ્ધ ન હાસ્યકે યોગ્ય હોતા હૈ ન ક્રીડાકે લાયક રહતા હૈ, ન રતિમેં સમર્થ હોતા હૈ ઓર ન વિમૂપાકે લાયક રહતા હૈ ॥ ૧ ॥

“યૈર્વાં સાર્ધં સંવસતિ” યહાં જો વા શબ્દ હૈ યહ અર્થાન્તર કા સૂચક હૈ, હસસે યહ વાત પ્રકટ હોતી હૈ કિ યહ જિનકે સાથ નહીં રહતા હૈ વે યદિ હસકા તિરસ્કાર યા હસકી નિન્દા કરતે હૈ તો કોઈ અચરજ કી વાત નહીં હૈ, પરન્તુ આશ્ચર્ય તો હસ વાતકા હૈ કિ ચિરપાલિત જિન

વૃદ્ધાવસ્થામાં આ જીવની કેવી દશા થઈ બાંધ છે તેના માટે કહે છે—
“જેહિં વા સદ્ધિ” ઈત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જેની સાથે તે રહે છે તે આત્મીયજન પણ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગાદિક સમયમાં તેને તિરસ્કાર કરવા લાગી બાંધ છે તે પણ તે આત્મીયજનોની તેવી હાલતમાં નિંદા કરવા લાગી બાંધ છે માટે હે આત્મન્ ! તે પરિચિત બધુ તારી રક્ષા કરવા માટે, તને શરણ દેવામાં સમર્થ નથી, અને તું પણ પોતાના પરિચિત બધુઓની રક્ષા કરવામાં તેમજ શરણ દેવામાં સમર્થ નથી. તે અવસ્થામાં તે વૃદ્ધ હાસ્યને યોગ્ય હોતો નથી, તેમજ ક્રીડાને લાયક પણ રહેતો નથી, અને રતિમાં પણ સમર્થ થતો નથી, તેમજ વિમૂપાને લાયક પણ રહેતો નથી.

“યૈર્વાં સાર્ધં સંવસતિ” આ કહેણે જે વા શબ્દ છે તે અર્થાન્તરનું સૂચક છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે—એ જેની સાથે નહિ રહેતા તે કદાચ તેને તિરસ્કાર અથવા તેની નિંદા કરે તો કોઈ અચરજની વાત નથી, પરંતુ આશ્ચર્ય તે એ વાતનું છે કે ચિરપાલિત જે પુત્ર બાઈ અને સ્ત્રી સાથે તે યજ્ઞ અનુ

खलु एकदा निजकाः पूर्वं परिवदन्तीति, ते चिरपरिपालिता अपि स्त्रीपुत्रभृत्यादयः
खलु=निश्चयेन एकदा=वृद्धावस्थायां रोगोदये च निजकाः=आत्मीयाः परिवदन्ति=
तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः । तं पूर्वोपकारिणं वृद्धं सम्प्रति शत्रुमिव मन्यन्त इति भावः ।
“अयं वाचालः परुषवाग् न म्रियते, नापि मोनं तिष्ठति, नापि स्थानान्तरं गच्छति,

पुत्र भाई और भार्या के साथ यह बड़े अनुरागसे रहता है, और जिनका
इसने अपनी जवानी अवस्थाके समय सर्व प्रकारसे धनादिक के अर्जन
द्वारा बड़े आदरके साथ संरक्षण किया है, पालन-पोषण किया है ऐसे
वे आत्मीय जन भी अपने इस उपकारी जनका इस वृद्धावस्थामें, अथवा
इसके रोगाक्रान्त हो जाने पर तिरस्कार करने लगते हैं, वे इसके प्रति
इस प्रकारसे व्यवहार करते हैं जैसे कोई अपने शत्रुके साथ व्यवहार
करता है । नौकर चाकर भी इसकी एक भी बात नहीं सुनना चाहते
हैं, अथवा सुनकर भी वे उसकी बातका कोई महत्त्व ही नहीं समझते ।
घरवाले उस समय यही कहते हैं कि-इसकी इस अवस्थामें बुद्धि मारी
गई है, ‘साठ वर्षमें मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है’ यह बात सत्य
है, इसे बोलने तकका भी अब तमीज नहीं है-रात दिन बड़बडाता
ही रहता है, हर एकसे यद्वा-तद्वा कठोर वचन बोल दिया करता है,
क्या करें, इसे मौत भी नहीं आती है, इससे हजारों बार कह दिया है
कि ज्यादा मत बोलो करो, चुप रहा करो, परन्तु यह नहीं मानता, रात-
दिन यहीं पर अड़ा बैठा रहता है, इससे इतना भी नहीं बनता कि

રાગથી રહે છે અને જેનો તેણે પોતાની બુવાન અવસ્થાને સમયે સર્વ પ્રકારથી
ધનાદિક કમાઈને આદરથી રક્ષણ કર્યું છે એવા તે આત્મીય જન પણ પોતાના
આવા ઉપકારી માણસનો આ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગા-ક્રાન્ત થવાથી તેનો
તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે તે તેના પ્રતિ એવા પ્રકારથી વ્યવહાર કરે છે
કે જાણે પોતાના શત્રુની સાથે વ્યવહાર કરતા હોય નોકર-ચાકર પણ તેની
કોઈ વાત સાંભળતા નથી, અથવા સાંભળે તો તેની વાતનો કોઈ મહત્વ સમજતા
નથી. ઘરવાળા આ સમયમાં એ કહે છે કે-એની આ અવસ્થાએ બુદ્ધિ મારી
ગઈ છે “સાઠ વર્ષે” મનુષ્યની બુદ્ધિ ભ્રષ્ટ થાય છે” આ વાત સત્ય છે, જેને
બોલવાનો પણ ઢગ નથી, રાત-દિવસ બડ-બડ કર્યા કરે છે દરેકથી
જેમ-તેમ ખરાબ ખરાબ શબ્દો બોલી નાખે છે શુ કરવું એને મોત પણ આવતી
નથી એને હજાર વાર કહ્યું કે આજુ બોલો નહિ, ચુપ રહ્યા કરો, પરંતુ એ
માનતો જ નથી, રાત-દિન આ ઢેકાણે અહો લગાવી બેસી જ રહે છે એ ...

સ્વદ્વાદિકમપિ ન પરિત્યજતિ इत्यथ नानाविधकठोरवाक्यैस्तर्जन्यादिना तर्जय
 “किमनेन बराकेणे”-स्येव सततं च धिक्कुर्वन्ति । अन्यपां का वार्ता किन्तु स्व
 मपि स्वात्मानं नाद्रियते, तथा हि-उत्थातुकामोऽपि नोत्थातु शक्नोति, भोतुं त्रप
 प्राप्तुमास्वादयितुं स्पन्दुमिच्छति, परन्तु तत्तदिन्द्रियसामर्थ्यस्य परिशीणतया
 शृणोति शब्दं, न पश्यति रूपं, न जिघ्रति गन्धं, नापि रसमास्वादयति, न चैव कर्कश
 यहासे दूसरी जगह भी जाकर बैठ जाये, जब देखो तब स्वाट पर ई
 पड़ा रहता है, यों तो इसके कोई मतलब ही नहीं है, क्योंकि कमा का
 तो हम ही छाते हैं । इस प्रकार के अनेक कठोर वचनोंसे अथवा तर्जन
 ऊंगली दिखाकर इसका अनादर करते हैं, उसे सदा धिक्कारा करते हैं

इस अवस्थामें दूसरोंकी क्या बात कहना, अर्थात् दूसरे व्यक्ति
 अथवा अपने सगे संबंधी लोग इस घृद्धकी सेवा चाकरी आदर सत्कार
 न करे तो कोई अश्वरज की बात नहीं, परन्तु यह स्वयं अपने शरीर
 सम्यग्धी कार्य करनेमें भी असमर्थ हो जाता है—यह उठना चाहता है
 तो भी उठ नहीं सकता, सुननेकी, देखनेकी, सूंघनेकी और चखनेकी
 तथा छूनेकी इच्छा करता है तो भी अपनी उनर पदार्थोंको विषय कर
 नेवाली इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण होनेसे न शब्द को सुन सकता है, न
 रूपको देख सकता है, न गंधको सूंघ सकता है, न रसको चख सकता
 है और न कर्कश कठोर आदि स्पर्शको पहचान सकता है ।

એટલું પણ નથી બનતું કે અર્ધાયાથી ઉઠી બીજી બચ્ચોએ બંધ બેસે બચ્ચા
 દેખી બચ્ચા ખાટ પર જ પડી રહે છે આમ તે એને કોઈ મતલબ જ નથી,
 કારણ કે કમાઈ કમાઈને તે અમે લાવીએ છીએ. આવા પ્રકારના અનેક
 કઠોર વચનોથી અથવા અગુઠા બતાવી બતાવીને તેના અનાદર કરવા જ રહે છે
 અને તેને ધિક્કારી જ કરે છે

આ અવસ્થાના બીજાની શું વાત કહેવી - અર્થાત્ બીજી બચ્ચિ અને
 પાતાના સગા સબંધી લોક આ ઘૃદ્ધની સેવા ચાકરી આદર સત્કાર ન કરે તે
 કોઈ અશ્વરજની વાત નહિ, પરંતુ તે પાતે પોતાના શરીર સબંધી કાર્ય કરવામાં
 પણ અસમર્થ બને છે તે ઉઠવા ચાહે છે તે પણ ઉઠી શકતો નથી, ચાખવાની
 દેખવાની સૂંઘવાની અને ચાખવાની તથા સ્પર્શની ક્ષમિત કરે છે તા પણ પાતાની
 તે તે પદાર્થથી વિષય કરવાવાળી ઈન્દ્રિયોની શક્તિ દીર્ઘ હોવાથી ન તો શબ્દને
 સામગી શકતા ન તા રૂપને દેખી શકતો, નથી ગંધને પારખી શકતો, નથી
 રસને ચાખી શકતા અને કઠોર તેમજ કર્કશ સ્પર્શને પીછાણી શકતા નથી.

ठोरादिकं स्पृशति । इति नानाविधां दुर्दशामनुभूय नवद्वारेभ्यो विनिःसृतं कर्णमलादिकं घृणास्पदं वस्तु दृशं दर्शमत्यर्थं क्लान्तमना भवति ततः 'कथमेतादृशस्य मम मरणं नायाती'-त्यनिश खट्वाह्वः कासश्वासादिरोगाभिभूतः कफावृतशय्यावसनादिको मुहुरूपतप्तो भवतीति निजशरीरं म्यस्मै सर्वथा न रोचते । उक्तञ्च—

ऐसी अनेक प्रकारकी दुर्दशाको भोगना हुआ यह वृद्ध सदा चित्तमें सन्तप्त होता रहता है । तथा शरीर के नव द्वारोंसे मदा निकलनेवाले कानके मेल तथा ग्वेग्वार आदि अपवित्र वस्तुओंको देख-देख कर नित्य ग्लानि करता रहता है परन्तु कर कुछ नहीं सकता, यह तो यही विचारता है कि मेरी मृत्यु कब आवे, ताकि इस दुःखसे छुटकारा मिल जावे, परन्तु इसके इस विचारसे कुछ होना जाना नहीं है, यह तो विचार अपनी खटिया पर पड़ा-पड़ा ही कफ खाँसी श्वास आदि रोगोंसे दुःखित होता रहता है, कफ आदि मलोंको यह बाहर फेंकनेकी इच्छा करता है तो भी शारीरिक अशक्ति की वजहसे वे कपड़ों पर ही गिर जाते हैं, बाहरमें मलत्यागकी भावना होनेपर भी उठनेकी अशक्ति की वजह से खटिया पर ही टट्टी पेशाव हो जाती है, यह उसमें ही लथ-पथ हो कर पड़ा रहता है और दुःखी भी होता है, परन्तु कर-धर कुछ नहीं सकता । ऐसी परिस्थितिमें इसे स्वयं भी अपना शरीर रुचिकर प्रतीत नहीं होता । कहा भी है—

એવી અનેક પ્રકારની દુર્દશાને ભોગવતા તે વૃદ્ધ સદા ચિત્તમા સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, તથા શરીરના નવ દ્વારોથી સદા નીકળતા કાનનો મેલ તથા ખેખાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓને દેખીને નિત્ય ગ્લાનિ ભોગવ્યા કરે છે પરંતુ કાંઈ પણ કરી શકતો નથી એ તો એ જ વિચારે છે કે મારી મૃત્યુ ક્યારે આવે જોઈ આ હું ખથી છુટકારો મળી જાય, પરંતુ તેના આ વિચારથી કાંઈ બની શકતું નથી એ તો જિયારો ખાટલા ઉપર પડ્યો પડ્યો કફ-ખાંસી શ્વાસ આદિ રોગોથી હું ખી થતો રહે છે કફ આદિ મળોને તે બાહર ફેંકવાની ઇચ્છા કરે છે તો પણ શારીરિક અશક્તિથી તે તેના કપડા ઉપર જ પડી જાય છે બાહર મલ ત્યાગની ભાવના હોવા છતાં પણ ઉઠવાની અશક્તિથી ખાટલા ઉપર જ ઝાડો પેશાવ થઈ જાય છે તે તેમા જ લથ-પથ પડ્યો રહે છે, અને હું ખી પણ થાય છે પરંતુ કાંઈ પણ કરી શકતો નથી આવી પરિસ્થિતિમા તેને પોતાને પણ પોતાનું શરીર રૂચિકર પ્રતીત થતું નથી. કહ્યું છે—

शिरः श्वेतं दन्तावलिरपि गता स्नायुनिषय,
 प्रयातः शैथिल्य पल्लमपि नैरस्यवलितम् ॥
 स्वयं स्वं सनिन्दन् छगुडशरणो मन्दकरणो,—
 मनोभावाभिज्ञा किमु जरसि कान्ता न हसति ? ॥ १ ॥
 शरीरं सङ्कोचं व्रजति चरणौ मन्दगतिकौ
 मुखं लालापन्नं नयनमपि नालोक्षितुमलम् ॥
 न वाक्यं मन्यन्ते परिजनगणा स्त्री न भजते
 जरायां हा ! कष्टं तनुजनुरपि श्रेष्ठि जनकम् ॥ २ ॥
 सकलपरिवारो वृद्धावस्थायां जुगुप्सते तद्विषय कथानक्रमत्र, तथा हि—

“ शिरः श्वेतं दन्तावलिरपि गता स्नायुनिषय,
 प्रयातः शैथिल्य पल्लमपि नैरस्यवलितम् ।
 स्वयं स्वं सनिन्दन् छगुडशरणो मन्दकरणो,—
 मनोभावाभिज्ञा किमु जरसि कान्ता न हसति ? ॥ १ ॥
 शरीरं सङ्कोचं व्रजति चरणौ मन्दगतिकौ,
 मुखं लालापन्नं नयनमपि नालोक्षितुमलम् ।
 न वाक्यं मन्यन्ते परिजनगणा स्त्री न भजते,
 जरायां हा ! कष्टं, तनुजनुरपि श्रेष्ठि जनकम् ॥ २ ॥ इति ।
 अर्थ स्पष्ट है ॥

वृद्धावस्थामें उसके समस्त अपने जन इससे घृणा करने लगजाते हैं, इस विषयमें एक कथा लिखी जाती है—

“ शिरः श्वेत दन्तावलिरपि गता स्नायुनिषय,
 प्रयातः शैथिल्य पल्लमपि नैरस्यवलितम् ।
 स्वयं स्वं सनिन्दन् छगुडशरणो मन्दकरणो
 मनोभावाभिज्ञा किमु जरसि कान्ता न हसति ? ॥ १ ॥
 शरीरं सङ्कोचं व्रजति चरणौ मन्दगतिकौ,
 मुखं लालापन्नं नयनमपि नालोक्षितुमलम् ।
 न वाक्यं मन्यन्ते परिजनगणा स्त्री न भजते
 जरायां हा ! कष्टं तनुजनुरपि श्रेष्ठि जनकम् ॥ २ ॥ इति ।
 अर्थ जुड़ो ॥

वृद्धावस्थायां तेना समस्त पाताना जन नेनाधी भूषा कल्या लागी अथ
 ७ अ विषयमा ओ३ कथा आपवाभा आनी छे—

आसीद्राजगृहे नगरे गुणगणविभूषितः संसारसारसुचारुसौन्दर्यालङ्कृतो निखिल-
गजवाजिरथवसनविभवोपार्जको 'देवदास'—नामा कश्चिन्हेष्टी । स च यौवने भा-
ग्यातिरेकेण दशकोटिमितसुवर्णमुद्रां वाणिज्यकर्मणा समर्ज्य सकलस्त्री-पुत्रादि-
परिपोषकश्चन्द्र इवाह्लादकस्तेषां बभूव । तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । स एकदा
वार्द्धके रत्नादिकं सकलधनं विभज्य पुत्रेभ्यः समर्प्य निश्चिन्तोऽभूत्स्वयम् । पुत्रा
अपि निज-निजपत्नीः पितृशुश्रूषार्थं समादिश्य स्वस्वकार्यसमासक्ता अभूवन् । गतेषु

राजगृह नामके प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामक एक सेठ रहता था
जो अनेक गुणों से अलङ्कृत था । जिसका शरीर संसारमें सारबुद्धिको
उत्पन्न करानेवाले सुन्दर सौन्दर्यसे सुशोभित था । जिसका घर हाथी
घोड़ों और रथोंसे सदा भरा-हुवा था । सुन्दर २ कीमती वस्त्रोंकी जिसके
यहां पर कमी नहीं थी । सम्पत्ति जिसकी दासी थी । किसी समय
उसने यौवन अवस्थामें शुभ कर्मके उदयसे व्यापारके जरिये दस करोड़
सुवर्ण मुद्राओंका उपार्जन किया । वह स्त्री-पुत्रादिक परिजनोंके लिये
चन्द्रमाकी तरह आनन्द उत्पन्न करता था । उसके चार पुत्र थे । उसने
एक समय अपनी वृद्धावस्थामें अपनी धनसम्पत्ति अपने समस्त पुत्रों
को बाँट दी और उनकी तर्फसे स्वयं निश्चिन्त हो गया । वे पुत्र भी
अपनी २ स्त्रियोंको “तुम हमारे पिताकी अच्छी तरहसे सेवा करना”
ऐसा आदेश देकर अपने २ काममें लग गये । कुछ दिनोंके बाद बड़े
पुत्र की स्त्री अपने ससुर की सेवा करने में आलस्य करने लगी । पुत्र

राजगृह नामका प्रसिद्ध नगरमा देवदास नामको एक सेठ रहते तो, जे
अनेक गुणोथी अलङ्कृत હતો જેનું શરીર સસારમા સારબુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરવા-
વાળા સુદર સૌન્દર્યથી સુશોભિત હતું, જેના ઘરે સુદર કીમતી વસ્ત્રોની કમીના
ન હતી જેનું ઘર હમેશા હાથી-ઘોડા અને રથોથી ભરેલું રહેતું હતું સપત્તિ
જેની દાસી હતી એક વખત તેણે યૌવન અવસ્થામા શુભ કર્મના ઉદયથી
વ્યાપારથી દસ કરોડ સુવર્ણમુદ્રા કમાયો તે સ્ત્રી પુત્રાદિક પરિજનો માટે ચંદ્ર-
માની માફક આનંદ ઉત્પન્ન કરતો હતો તેને ચાર પુત્રો હતા તેણે એક વખત
પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામા પોતાની ધનસપત્તિ પોતાના સમસ્ત પુત્રોમા વહેંચી આપી,
અને તેમના તરફથી બિલકુલ નિશ્ચિત થઈ ગયો તે પુત્ર પણ પોતપોતાની
સ્ત્રીઓને “તમે અમારા પિતાની સારી રીતે સેવા કરજો” એવો આદેશ આપીને
પોતપોતાના કામે લાગી ગયા થોડા સમય પછી થોડા પુત્રની સ્ત્રી પોતાના
સસરાની સેવા કરવામા આગસ કરવા લાગી ‘પુત્ર’ જે વખત ઘર આવે અને

ષ કતિપયેષુ દિવસેષુ સા જ્યેષ્ઠપુત્રવધૂસ્તસ્ય શુભ્રૂપાયાં સાલ્મસા વધૂવ । યદા પુત્રો
ગૃહમાગત્ય પિતરં કુશલં શુભ્રૂપાદિ ચ પૃચ્છતિ તથા સ્થવિરઃ કથયતિ-નેય સ્તુપા
માં શુભ્રૂપતે । સા તુ પત્ન્યા નિર્મલ્સિંસતા સ્વામિનમાદ-મયતા ન મમોપરિ વિશ્વાસોઽસ્તિ
તત્તથાન્યા એય શુભ્રૂપન્તામ્ । તત્તથાન્યા સ્તુપા તત્રીયસેવાકર્મણિ નિયુજ્યમાનાઽપિ
તથૈવ કૃતમન્દાદરા પુનઃ સ્વપતિમર્લ્સિસતા સેવાધર્માઞ્ચિરતા પશૂવ । એવમન્યા સ્તુપા
દુષ્ટિતા પૌત્રી પૌત્રો મૃત્યુર્ધ્વાશ્ચ ક્રમેણ સેવાત ઉપરતા આસન્ । તત્તથ સતતમનુષ્ઠા
ગુસ્તરસ્તેદલિભો પ્રશ્નગૃહીત ઇવ દુસ્વચ્ચતમનુમયતિ । તત્ સર્વેઃ પરિત્યક્ત એકપદમપિ

જિસ સમય ઘર આકર અપને પિતાસે કુશલ સમાધાર તથા સેવા કરને
કી પાત પૂછતા તો વહુ વૃદ્ધ કહતા કિ માઈ ક્યા કહૂં યહ વહુ તો મેરી
જરા મી ટહલ નહીં કરતી હૈ । ઇસ પાતકો સુન કર જબ ઉસકા પતિ
ઉસસે નારાજ હોતા તો વહુ અપને પતિસે કહતી કિ યદિ આપકા મેરે
ઊપર વિશ્વાસ નહીં હૈ તો આપ અપને પિતા કી સેવા દૂસરી વહુસે કરા
ક્યોં નહીં છેતે ? । ઇસ પ્રકાર ઉસકે કહને પર જબ ઉસને પિતા કી સેવા
કે લિયે દૂસરી વહુ કો નિયુક્ત કિયા તો વહુ મી પહિલી વહુ જૈસી હી ઉસકી
સેવામેં મન્દ આવરણાલી હોને લગી તથ ઉસકે મી પતિને ઉસકો બુરા
મલા કહા તો વહુ મી ઉસકી સેવા કરને સે વિમુક્ષ હો ગયી । ઇસી
પ્રકાર અન્ય ઔર મી બહુઈ તથા પુત્રી, પૌત્રી એમ તૌકર આકર મી
ઉસકી સેવા કરને સે ક્રમ ૨ સે વિમુક્ષ થન ગયે । જબ યહ અપની હાલત
ઉસ વૃદ્ધને દેસી તો ઉસકે ચિત્તમેં ધનુત હી જ્યાદા સન્તાપ હુઆ ઔર
વહુ અત્યન્ત સ્તેદલિભ હો પાગલ જૈસા થન કર અનેક પ્રકારકે કાટ્યોંકા

પિતાને કુશલ સમાધાર તથા સેવા કરવાની વાત પૂછે ત્યારે તે વૃદ્ધ કહેતો કે
ભાઈ શું કહું ? આ વહુ તો મારી જથ પશુ ખાતર ખરવાસ કરતી નથી, આવી
વાત આજણીને બ્યારે તેનો પતિ તેણીથી નારાજ થાય છે ત્યારે તેણી પોતાના
પતિને કહે છે કે તમને માત્ર ઉપર વિશ્વાસ નથી તો પછી તમારા પિતાજીની
સેવા બીજી વહુથી કેમ કરાવતા નથી ? આવા પ્રકારના તેણીના કહેવા પરથી
બ્યારે તેણે પિતાની સેવા માટે બીજી વહુને નિયુક્ત કરી તો તે પશુ પહેલી
વહુની માફક તેની સેવામાં મન્દ મન્દ આવરણાલી થવા લાગી. ત્યારે તેનો પતિ
પશુ બ્યારે તેને બહુ યુર કહેતો તો તે પશુ તેની સેવા કરવાથી વિમુખ બની
જતી. આ પ્રકારે બીજી વહુઓ તથા પુત્ર, પૌત્રી અને નોકર આકર પશુ તેની
સેવા કરવામાં ક્રમે-ક્રમે વિમુખ બની ગયા. બ્યારે આ પોતાની હાલત તે વૃદ્ધ
દેખી તો તેના ચિત્તમાં ધણેજ સન્તાપ પેદા થયો અને તે અત્યંત ખેદાગિત

ગન્તુમક્ષમસ્તૃણકુબ્જીકરણેઽપ્યસમર્થઃ શય્યાસવિધે કૃતમૂત્રપુરીપોઽતિમલિનવસનો
 વિગલિતદશનઃ કુક્કુરપિણ્ડમિવાહર્નિશં ભોજનં લભમાનો વૃદ્ધશ્વેતસિ વ્યચિન્તયત્
 -‘અહં યૌવને ધનાર્જનપરાયણઃ કુટુમ્બપોષણપરઃ કદાપિ કલ્યાણમાર્ગં નારાધિતવાન્
 કિમધુના કરોમિ કોઽપિ માં ન ગણયતિ, તે પૂર્વમુપલાલિતાશ્ચિરપાલિતાઃ પુત્રાદિ-
 પરિવારા આત્મસાધનવિકલિતં કૃતકલકલં મામુપહસન્તીત્યેવં મૃશં વિલપતિ, પથ્યાત્તા-

અનુભવ કરને લગા, સવ ઘરવાલોં ને ઉસે છોડ દિયા । વહ વિલકુલ
 કમજોર હો ગયા । એક પૈર મી ચલનેકી ઉસમેં શક્તિ નહીં રહી । વહ
 અપની ઘાટકે પાસ હી મલ-મૂત્ર કા ત્યાગ કરને લગા । વસ્ત્ર મી ઉસકે
 અત્યન્ત મલિન રહેને લગે । ઉસકે દાંત પહિલેસે હી ગિર ચુકે થે । ઘર-
 વાલોં મેં સે મી કિસીકા ઉસકે પ્રતિ જરા મી સ્નેહ નહીં રહા । ભોજન
 મી ઉસે અનાદરપૂર્વક દિયા જાને લગા । ઇસ અપની હાલત કો દેખ કર
 વહ વિચાર કરને લગા કિ-હાય ! મૈને યૌવન અવસ્થામેં ધન કમાનેમેં
 હી અપના સમય વ્યતીત કિયા, કુટુમ્બકે ભરણ-પોષણ કરને મેં હી
 ચિત્તકો લગાયા, કલ્યાણ માર્ગકી તર્ફ સદા ઉદાસીન રહા, ઉસકી
 થોડીસી મી આરાધના નહીં કી, અવ ઇસ અવસ્થામેં મૈં ક્યા કર સકતા
 હૂં । ઇતના સવ કુછ કરને પર મી તો યે લોગ મેરી તર્ફ જરા મી ધ્યાન
 નહીં દેતે । જિનકા મૈને પહિલે અચ્છી તરહ સે લાલન-પાલન કિયા,
 ઔર જિનકે સાથ મેરા ઘનિષ્ઠ પ્રેમ રહા હૈ । સંસારમેં જિન્હે આત્મીય

બની ગાંડાની માફક બની અનેક પ્રકારના કળેનો અનુભવ કરવા લાગ્યો બધા
 ઘરવાળાએ તેને છોડી દીધો તે બીલકુલ કમજોર થઈ ગયો એક ડગલુ પણ
 ચાલવાની તેનામાં શક્તિ ન રહી તે પોતાના ખાટલાની પાસે જ આડા પેશાબનો
 ત્યાગ કરવા લાગ્યો તેના વસ્ત્રો પણ એલા રહેવા લાગ્યા તેના દાંતો પહેલાથી
 જ પડી ગયા હતા ઘરવાળામાંથી કોઈનો પણ તેના પ્રતિ જરા નેટલો પણ
 પ્રેમ ના રહ્યો લોજન પણ તેને અનાદરપૂર્વક આપવામાં આવતું હતું આ પોતાની
 હાલતને દેખીને તે વિચાર કરવા લાગ્યો કે-“હાય ! મેં યૌવન અવસ્થામાં ધન
 કમાવામાં જ પોતાનો સમય વ્યતીત કર્યો કુટુમ્બનું ભરણ પોષણ કરવામાં જ
 ચિત્તને લગાવ્યું કેટલાય માર્ગની તરફ સદા ઉદાસી રહ્યો, તેનું થોડું પણ
 આરાધન ન કર્યું હવે આવી અવસ્થામાં હું શું કરી શકું ? આટલું આટલું
 કરવા છતાં પણ આ લોકો મારા તરફ પણ જોતા નથી જેનું મેં પહેલા સારી
 રીતે લાલન-પાલન અને જેની સાથે મારો ઘનિષ્ઠ પ્રેમ રહ્યો છે, સંસારમાં જેને

પાનુવત્તા 'કથ શ્રીઘ્ર ન મિયે' રૂતિ ધારં-ધારં ઘડન વિપીવતિ ચ । દુદાવસ્યાયાં
કૃપિવાણિજ્યગજવાજિરયાદિવિપયા મિજ્ઞાસા ઞાગર્તિ, પ્રત્યર્થ પૃચ્છતિ પુત્રાદિકં,
પર પુત્રેણ 'તિષ્ઠ તિષ્ઠ બ્રાહ્મ ! કાક શ્વાસ્તુવાં ગિરં કિં મુષા મરુપસિ ? કિં તે
શાતેન ? કિમિત્ર સ્વ પ્રયોજનમ્ ? મૌનં કૃત્વા યન્મિલતિ પાશનવસનાદિકં તદ્ ગૃહાન્ ?
ઇત્યાદિનાનાવિધપરુપવાગ્મિર્મૂયોભૂયસ્તર્જિતો મર્તિસતથ મમતિ ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અચ્છ ઓર કૌન એસા હૈં જો
આત્મસાધનાસે રહિત મુક્ત અમાગે કી ઓર ધ્યાન વેગા ? વે સબ લોગ
મુઠ્ઠે દેક્ષ ૨ કર હૈંસતે હૈં, હાય ! અચ્છ મૈં ક્યા કર્હૈં ? ઇત્યાદિ રૂપ સે વહ
વિલાપ કરને લગા, ઓર પચ્ચાસાપકી અગ્નિમેં જલતા હુવા " મૈં શ્રીઘ્ર
ક્યૌં નહીં મર જાતા હૂં " ઇસ પ્રકાર ધારંધાર વિચારને લગા ઓર
દુઃખી હોને લગા ।

જય જય વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃપિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ
આદિ કે વિપયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે !
પદ્-પદ્ ક્યૌં કરતે હો ? ગુપ-ગાપ ક્યૌં નહીં થૈઠે રહતે હો ? તુમકો
ઇનસે અચ્છ ક્યા મતલબ હૈં ? ગ્યર્થ હી કૌપ કે સમાન ઇમકો નહીં સુદા
નેવાલી વાણી ક્યૌં યોલતે હો ?, ક્યા હો રહા હૈં, ક્યા નહીં હો રહા હૈં ?
ઇસકે જાનનેકી તુમ્હેં ક્યા જરૂરત હૈં ?, ઇસ પ્રકાર કે જાનને સે મી
તુમ્હારા કૌનસા સ્વાર્થ સિદ્ધ હોતા હૈં ?, તુમ તો ગુપ હી રહા કરો, ઓર
જો કુછ મી જ્ઞાને-પીને કોમિલ જાતા હૈં ડસીમેં સંતોષ રખ્યો । ઇત્યાદિ

આરમ્ભીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યા છે તો હવે એવો કોણ છે જે
અધમસાધનાથી સ્ક્રિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા
લોકો મને કેળીને હસે છે હાય ! હવે હું શું કરું ? ઇત્યાદિ રૂપથી તે વિલાપ
કરવા લાગ્યો અને પચ્ચાસાપની અગ્નિમાં જલીને " હું જલથી કેમ મરતો નથી ? "
આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

અચ્છે અચ્છે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, બાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ
આદિ વિપયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતા તો તેઓ કહેતા કે- " અરે ! જ બડ શું
કર્ચા કરો છો ? ગુપગાપ કેમ બેસતા નથી ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ?
ખાતી કામગીરી સમાન અમારે નહિ આમળવા જેવી વાળીને સબળાવો છો ' શું
થઈ રહ્યું છે ? શું નથી થઈ રહ્યું ? એ બધું બાળવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ
પ્રકારનું બાળવાથી પણ નમાશો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ગુપ જ
રહ્યા કરા અને જે કાંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સતોષ રાખો " ઇત્યાદિ

વૃદ્ધાવસ્થાયાં વહુપલપનશીલો નિજપરિવારકૃતાનનાદરાન્ યસ્મૈ કસ્મૈચિદપિ પ્રાતિવેશિકાય કથયતીતિ દર્શયતિ—‘ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ ’ ઇતિ, સઃ=વૃદ્ધોઽપિ તાન્=પુત્ર-કલત્ર-भृत्यादीन् નિજકાન્=આત્મીયાન્, પશ્ચાત્=વૃદ્ધાવસ્થાયાં, પરિવદતિ=પરિભવતિ, પૂર્વં યાન્ પુત્રાદીન્ પોષયિતું ધનોપાર્જનાસક્તઃ ‘ સ્ત્રી પુત્રાદિભરણમેવ શ્રેયઃ ’ ઇતિ મત્વા વિહિતનિશ્ચિલાનર્થનિવહો વ્યગ્રવિગ્રહઃ કલ્યાણમાર્ગ-
અનેક પ્રકાર કે કઠોર વચનોંસે વારંવાર વે ઉસકા તિરસ્કાર કરતે હુણ ઉસ વૃદ્ધ સેઠકો દુઃખિત કરતે થે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં એક તો મનુષ્યકો સ્વભાવતઃ પહિલે કી અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આજાતી હૈ અતઃ અપને સગે સંવંધિયોં દ્વારા જો કુછ બી અનાદરસૂચક વ્યવહાર ઉસકે સાથ હોતા હૈ વહ જવ તક અપને પડો-સિયોંસે ન કહ દે તવ તક ઉસે શાન્તિ બી નહીં મિલતી, અવ હસી વાતકો સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈ—“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ” વહ વૃદ્ધ ઉન અપને પુત્ર કલત્ર ઔર નૌકર ચાકર આદિ અપને આત્મીય જનોં કી હસ પ્રકાર સે નિન્દા કરને લગતા હૈ કિ જિનકે પાલન-પોષણ કરને મેં મૈને જરા બી કસર નહીં કી, જિનકી સેવામેં રાત દિન એક કર દિયા, યહ સમજ્ઞ કર કિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કા પાલન-પોષણ કરના હી સર્વોત્તમ કાર્ય હૈ । મૈને ધન ઉપાર્જન કરનેમેં બી કુછ કસર નહીં રહી, સંસાર ભર કે સવ અનર્થ કિયે ઔર આકુલવ્યાકુલ ચિત્ત વન અસાવધાનીપૂર્વક અપની પ્રવૃત્તિ ચાલૂ રહી, ઔર અબી તક બી મૈ

અનેક પ્રકારના કઠોર વચનોથી વારંવાર તેઓ તેનો તિરસ્કાર કરીને તે વૃદ્ધ શેઠને દુઃખી કરતા હતા.

વૃદ્ધાવસ્થામા એક તો મનુષ્યને સ્વભાવત પહેલાની અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આવે છે માટે પોતાના સગા સબંધીઓ દ્વારા જે કાંઈ પણ અનાદરસૂચક વ્યવહાર તેની સાથે થાય છે, તે બધા સુધી પોતાના પાડોશીઓને તે ન કહે ત્યા સુધી તેને શાન્તિ થતી નથી હવે આ વાતને સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે—

“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ”

તે વૃદ્ધ તે પોતાના પુત્ર કલત્ર અને નોકર આદિ પોતાના આત્મીયજનોની આ પ્રકારે નિન્દા કરવા લાગે છે કે—જેનું પાલન પોષણ કરવામા મેં જરા પણ કસર નહિ રાખી, જેની સેવામા રાત દિવસ એકજ માન્યો, એવું સમજીને કે સ્ત્રી પુત્રાદિકોનું પાલન પોષણ કરવું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે મેં ધન ઉપાર્જન કરવામા કાંઈ કસર રાખી નહિ સંસારભરના સર્વ અનર્થ કર્યા, અને આકુળ-

અષ્ટો જાતોઝાં, ત એવ સામ્યતં મમાશ્નવસનાધિકાર્યેઽપિ વિમનસો ભવન્તીતિ મશ્કષ્ટમ્, ક્ષિમધિક્ષેન મદ્વચનમપિ તેષાં વિષાયતે, ક્ષેપવંધિધવાક્યૈર્નિમ્નપરિ વારાન્ત્વદ્વો પિક્કરોતીતિ માવઃ । અતો હે આત્મન્ ! ‘નાલં તે તથ ત્રાણાય વા શરણાય વેતિ’ ‘ત્રાણાય વા’ દૌર્લભ્યપીઢાદિરૂપાપદુશરણાય, શરણાય વા= નિર્મયાવસ્થાનાય વા ન અલં=સમર્થા । અત્ર વા—શબ્દોઽર્થાન્તરયોતકસ્તેન કદાચિ-

જિનકે કારણ કલ્યાણમાર્ગસે દૂર રહ્યા વેળી અથ મેરે સ્વાને-પીને પહિનને કે ક્ષત્તજામ કરનેમેં મી મન નહીં લગા રહે હું, યહ કિત્તને કષ્ટ કી માત હૈ? અરે! અધિક કયા કહા જાય उन लोगोंको तो अथ मेरा बोलना भी थिय जैसा मालूम पड़ता है । इस प्रकार के वचनोंसे वह बृद्ध उन आत्मीय जनों की निन्दा करता है और उन्हें धिक्कारता है, इसलिये सूत्रकार कहते हैं कि—

“નાલં તે તથ ત્રાણાય વા શરણાય વા” इति ।

हे आत्मन् ! जिन पर पदार्थोंका तूने अपनी रक्षाके क्वाल से पालन पोषण किया है वे कोई तेरी इस बृद्धावस्थाजन्य दुर्बलतासे अथवा उस समयमें होनेवाले अनेक कष्टरूप आपत्तियों से तेरा उद्धार नहीं कर सकते हैं और न तुझे शरण देनेके लिये ही समर्थ हो सकते हैं । इस वाक्यमें जो “वा” शब्द आया है वह इस बातका सूचक है कि यदि पूर्व पुण्यके उदयसे कोई ऐसे आत्मीय जन मिले हों जो मात्तापिताके

આકુળ બિન્ન સખી અસાધ્યાનીપૂર્વક પોતાની મુક્તિ માહુ સખી, અને હજુ સુધી પણ મે જેના કારણે કલ્યાણ માર્ગથી દૂર રહ્યો તે આજ માત્ર આવશ્ય -પીવામાં પહેલવામાં સંગવડ કરી આપવાજણ પણ મન લગાડતા નથી, તે કેટલા દુઃખની વાત છે? અરે! અધિક શું કહેવું, તે લોકોને તો હવે માત્ર બાલવું પણ ઝેર જેવું લાગે છે આ પ્રકારના વચનોથી તે વૃદ્ધ તે આત્મીય જનોની નિંદા કરે છે અને તેને ધિક્કારે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

“નાલં તે તથ ત્રાણાય વા શરણાય વા” इति

હે આત્મન્ ! જે પરપદાર્થોનું તે પોતાની રક્ષા માટે પાલન પોષણ કર્યું છે તે કેઈ તારી આ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાથી અથવા આ સમયમાં ઘનાર અનેક કષ્ટરૂપ આપત્તિઓથી તારો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી, અને તને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી આ વાક્યમાં જે ‘વા’ શબ્દ આવ્યો છે તે આ વાતનો સૂચક છે કે કદાચ પૂર્વ પુણ્યના ઉદયથી કેઈ આવા આત્મીય જન મનમાં હોય જે માતા-પિતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં ભક્તિ કરતા હોય, તેમની હરેક પ્રકારની સેવા

पूर्वपुण्योदयेन वृद्धावस्थायां पुत्रादयोऽतिभक्तास्तवापमानं नैव कुर्वन्ति तथापि ते वृद्धावस्थाजनितदुःखपरिमोचका न भवितुमर्हन्तीति तात्पर्यमवगम्यते ।

अथ यदि पुत्रकलत्रादयः सेवापरा दुःखभारभरमग्नाः सन्तीत्यालोच्य तेषां दुःखोद्धाराय तव चेतसि चिन्ता स्यादपि तथापि तदुद्धारः कर्तुमशक्य इति दर्शयति—
‘त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वे’—ति, त्वं वृद्धो न तेषां दुर्दशापदुद्धारको-
नापि तदाश्रयो भवितुमर्हसि सामर्थ्याभावादिति भावः ।

वृद्धावस्था में भी अतिभक्त हों, उनकी हर तरहसे सेवा चाकरी करनेमें कोई कर-कमर न रखते हों, उनका जरा भी तिरस्कार नहीं करते हों तो भी इस वृद्धावस्थामें होनेवाले जो अनेक कष्ट हैं चाहें वे शारीरिक हों चाहें मानसिक हों, चाहें वाचिक हों उनसे वे उनका उद्धार नहीं कर सकते ।

वृद्धावस्थामें यदि वह वृद्ध चाहे कि—मैं—अपने सेवक पुत्र कलत्रा-
दिकों का जो रात दिन मेरी सेवा करनेमें ही लगे रहते हैं, और जो विचारे दुःखों से पीड़ित हो रहे हैं मैं उन्हें कष्टसे निर्मुक्त करदूँ तो इस प्रकारका भी उसका विचार करना व्यर्थ ही है, इसी बातको प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा” इति । भाई ! वृद्धावस्थामें तुझे इस प्रकारकी चिन्ता करना ठीक नहीं है, कारण कि तुम स्वयं अशक्त हो तब तुम उन दुर्दशामें फँसे हुए अपने पुत्र कलत्रादिकों के उद्धारक कैसे हो सकते हो और कैसे उनके

आकरी करवाना डोढ़पिण्ड प्रकारनी करार शक्ता न होय, तेनो नरा पणु तिर-
स्कार करता नथी तो पणु आ वृद्धावस्थामा थनार ने कष्टो छे लले ते शारीरिक
होय के मानसिक होय, अगर वाचिक होय, तेनाथी तेओ तेमनो उद्धार करी
शक्ता नथी

वृद्धावस्थामा कदाय ते वृद्ध आछे जे—‘हु भारा सेवक पुत्र कलत्रादिको, जे
रात दिवस भारी सेवा करवाना न लाज्या रहे छे अने जे गिजारा दु जोथी
पीडित थछ रह्या छे, हु तेमने कष्टी निर्मुक्त करी दछे’ तो तेनो आ प्रका-
रनो पणु विचार व्यर्थ न छे आ वातने प्रकट करवा सूत्रकार कहे छे—

“त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा” इति

भाई ! वृद्धावस्थामा तारे आ प्रकारनी चिन्ता करवी ठीक नथी, कारण के
तुं पोते अशक्त छे तारे तु आवी दुर्दशामा इसेला पोताना पुत्र कलत्रादिकोने

માણ-શરણપદયોર્યસ્તુક એવ । અગાપિ વા-શબ્દન તથા પુત્ર-કલત્રાદિવા
યદિ હુ મ્મમમાસ્ત્વસ્તેવાપરા મપિ સ્યુસ્તથાપિ ન તેષાં સ્વં રક્ષકો મશ્તિ શ્વનોપિ,
इत्येव गम्यते । स्वकार्यकार्यकरणेऽप्यसमर्थस्तथा कथं महापातसाध्यं तथा
भरणपोषणादिकार्यं कर्तुमध्यवस्थसीति भावः ।

સ તસ્માનવસ્થાયા સ્વયં હાસયોગ્યો નાન્ય જનમુપહસિતુમમશીતિ દર્શયતિ-
'સ ન હાસાય-' તિ, સ-વૃદ્ધો હાસાય નિન્દિતાચારુપહસિતું ન યોગ્યો ભવતિ ।

આશ્રયપ્રદાતા હો સફળે હો, તુમ તો સ્વયં હસ સમય રક્ષા કરને યોગ્ય
એવ આશ્રય પાને યોગ્ય હો રહે હો ।

इस सूत्रमें भी जो 'वा' शब्द आया है उससे यह बोध होता है
कि-तेरे पुत्र कलत्रादिक यदि हुआ मम है और तेरी सेवामें भी तत्पर
हैं तो भी तू उनका रक्षक नहीं हो सकता, क्योंकि जब तू स्वयं अपना
शारीरिक कार्य करने तकमें भी असमर्थ हो रहा है तो फिर कैसे महाकष्ट
साध्य उनके भरण-पोषण आदि कार्य करनेके लिये विचार कर सकता है।

વૃદ્ધ અપની અવસ્થામાં સ્વયં હસીકા પાત્ર છે વહ દુસરોંકી હસી
કેસે કર સકતા છે ? इसका वर्णन करते हैं-"स न हासाय" जो स्वयं
ही हँसी-मजाक का पात्र होता है वह दूसरोंकी हँसी भी कैसे कर सकता
है अतः कोई यदि निन्दित आचारवाला है तो वह उसकी हँसी करनक
योग्य ही नहीं है ।

ઉદ્ધારક કેવી રીતે બની શકે છે, અને કેવી રીતે તેને આશ્રય આપી શકાય તમે
પોતે આ સમયે રક્ષા કથવવા યોગ્ય અને આશ્રય લેવા યોગ્ય છે.

આ સૂત્રમાં પણ જે 'વા' શબ્દ આવ્યો છે તેનાથી જો બોધ થાય છે કે
તારા પુત્ર કલત્રાદિક કદાચ હુ ખમખા છે અને તારી સેવામાં પણ તરપર છે તા
પણ તું તેમને રક્ષક બની શકતા નથી. કારણ કે જ્યારે તું સ્વયં પાતાના
શારીરિક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ છે તા પછી કેવી રીતે મહાકષ્ટસાધ્ય તેનું
ભરણ પાપણ આદિ કાર્ય કરવા વિચાર પણ કરી શકે

વૃદ્ધ પાતાની અવસ્થામાં સ્વયં જાતીને પાત્ર છે, તે બીજાની જાસી કેવી
રીતે કરી શકે ? તેનું વર્ણન કરે છે-"સ ન હાસાય" જે સ્વયં જાતી મજાકને
પાત્ર છે તે બીજાની જાસી કેવી રીતે કરી શકે માટે કેટલું કદાચ નિન્દિત
આચારવાળા છે તે તેઓ તેની જાસી કરવાને યોગ્ય નથી.

યઃ સ્વયમુપહાસપાત્રં સ કથમન્યમુપહસેદિતિ તાત્પર્યમ્ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુરુષઃ ક્રીડા-
કરણાક્ષમો ભવતિ, યદા કામચેષ્ટાભિભૂતો ભવતિ તદા સ પ્રાણપણેનાપિ યુવર્તિ
કામયતે પરં સા નિજાનન્દાક્ષમં તં વિદિત્વાઽવહેલયતીતિ દર્શયતિ—‘ ન ક્રીડાયૈ ન
રતયે ’ ઇતિ, ક્રીડા=અક્ષાદિનાં खेलनं, લઙ્ગનપ્રધાવનાસ્ફોટનાદિકં વા, તસ્યૈ ન સ
પ્રભવતિ । રતિર્નામ વનિતાવિપયક આલિંગનાદિનાનારૂપઃ ક્ષણિકમુખવિશેષસ્તસ્યૈ
ન સમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં યુવર્તિ વશીકર્તુ ન પારયતિ પ્રત્યુત ‘ ન લજ્જતેઽયં
પલિતકેશોઽચારુવેશો મમ હૃદયેશો બુભૂર્બુદ્ધિતુલ્યામપિ મામભિકામયતે ’
ઇત્યાદિવાક્યૈસ્તં સા ભર્તસ્યતિ ।

યુવર્તિ લઙ્ગુકામો ધૃતભૂષણોઽપિ ન શોભત ઇતિ દર્શયતિ—‘ ન વિભૂપાયૈ ’ ઇતિ,
વિભૂપા=ઠટકકુણ્ડલકેયૂરાઘલઙ્કારરૂપા, તસ્યૈ સ ન યોગ્યો ભવતિ, વૃદ્ધસ્ય વિભૂપા
ન શોભત ઇતિ ભાવઃ ।

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” ઇસ સૂત્રમેં યહ પ્રકટ કિયા હૈ કિ વૃદ્ધા-
વસ્થામેં પુરુષ ક્રીડા કરનેમેં અસમર્થ હો જાતા હૈ તથા વહ વિષયસેવનકે
ભી યોગ્ય નહીં રહતા હૈ ।

યહાં ક્રીડા કા અર્થ અક્ષાદિકોં-પાસોં-સે લેખના, લાંઘના, દૌડના
તથા વ્યાયામ કરના, ઇત્યાદિ હૈ । યહ ક્રીડા વૃદ્ધ કૈસે કર સકતા હૈ ?
ક્યોં કિ વહ વૃદ્ધાવસ્થા મેં બિલકુલ અસક્ત હો જાતા હૈ । રતિ કા અર્થ હૈ
આલિંગનાદિક । ઇસકા ભી ઉપભોક્તા વહ નહીં હો સકતા કારણ કિ
વૃદ્ધાવસ્થામેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ । અર્થાત્ શોભાકે લિયે
ધારણ કિયે ગયે અલંકાર ભી ઇસે કમી શોભા પ્રદાન નહીં કર સકતે ।
કહે, કુણ્ડલ, કેયૂર-ભુજવન્ધ આદિ અલંકાર ઉસકી શોભા કે અભિ-
વર્દક ન હોકર પ્રત્યુત ઉસકે લિયે હાસ્ય કે કારણ હી વનતે હૈ । કહા ભી હૈ—

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” આ સૂત્રમા એ પ્રગટ કરેલ છે કે વૃદ્ધાવસ્થામા પુરુષ
ક્રીડા કરવાને અસમર્થ બની જાય છે તથા તે વિષયસેવન માટે પણ યોગ્ય રહેતો નથી.

આ ઠેકાણે ક્રીડાનો અર્થ અક્ષાદિકો-પાસાઓથી ખેલવું, ઠેકવું, કુદવું, દોડવું
તથા વ્યાયામ કરવો, ઇત્યાદિ છે આ ક્રીડા વૃદ્ધ કેવી રીતે કરી શકે, કારણ કે
તે વૃદ્ધાવસ્થામા બિલકુલ અશક્ત થઈ જાય છે રતિનો અર્થ છે આલિંગનાદિક
તેના પણ ઉપભોક્તા તે બની શકતો નથી, કારણ કે વૃદ્ધાવસ્થામા પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયો
શિથિલ બને છે અર્થાત્ શોભા માટે પણ ધારણ કરેલા અલંકાર પણ તેને શોભા
આપી શકતા નથી કડા, કુડલ, કેયૂર-ભુજવન્ધ આદિ અલંકાર તેની શોભામા
વૃદ્ધ કરતા નથી પણ તેના માટે હાસ્યવુ કારણ બને છે કહ્યું છે કે.—

उक्तञ्च—“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विघ्नमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विद्वन्मनां याति परां तदा सः” ॥१॥ इति

एवं च वृद्धावस्थायां निजतनयवनितादितिरस्कृतस्य भराजर्जरितगेहस्य क्रीडा-
रतिविभूषादिकं न किमपि शोभत इति सूत्राश्रयः ॥ ३ ॥

उक्तमप्रशस्तमूलस्थानं, संप्रति प्रशस्तमूलस्थानमाह—यद्वा—यतस्ते पुत्रकन्यादयो
नालं मे प्राप्याय वा क्षरणाय वा भवितुमर्हन्तीति विचार्य धीराः क्षणमपि न प्रमादं
कुर्यादिति दर्शयति—‘इह्येव’ इत्यादि ।

“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विघ्नमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विद्वन्मनां याति परां तदा सः” ॥१॥ इति ।

इस प्रकार इसको न भूषण शोभा देते हैं—न इसकी हँसी ही
इसकी सुन्दरता बढ़ा सकती है, न विघ्नम—बिलास ही यह कर सकता है,
इसके अपने पास में रहे हुए जन भी कहने में नहीं रहते । अगर वह
ऊपर की बातों में प्रवृत्ति करे तो वह इस वृद्धावस्था में विद्वन्मना पाता
हुवा अपने पुत्र—कन्या आदि से तिरस्कार को ही पाता है, तथा जरासे
जर्जरित काय बने हुए इसके लिये क्रीडा—रति—विभूषादिक कुछ भी
शोभा नहीं देते ॥ ३ ॥

अप्रशस्त मूलस्थानों का वर्णन हो चुका, अब प्रशस्त मूलस्थानों
का वर्णन किया जाता है, अथवा—वे पुत्र कलत्रादिक मेरी रक्षा के लिये
या मुझे शरण प्रदान करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हैं, ऐसा विचार

“न भूषणं भाति न हास्यमस्य न विघ्नमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विद्वन्मनां याति परां तदा सः” ॥ १ ॥ इति ।

अब प्रकारे तेने भूषण शोभा देता नभी, तेनी हासी पक्ष तेनी सुन्दरता
वधारी शकती नभी, ते निवास पक्ष करी शकतो नभी, तेनी पास रहेता भावसे
पक्ष तेना कहेवाभा रहेता नभी, अगर ते उपर कहेवी बातोभा प्रवृत्ति करे तो
ते अब वृद्धावस्थाभा विडगना पागीने पोताना पुत्र कन्या आदिभी तिरस्कार
पासे छे तथा घटपक्षभी जर्जरित शरीर बनेछु कोछ तेना भाटे कीटा, रति,
विभूषादिक कोछ पक्ष शोभा भाटे भोज्य नभी.

अप्रशस्त मूलस्थानोनु वक्षुन भई मुकुषु केवे प्रशस्त मूलस्थानोनु
वक्षुन करे छे—अथवा ते पुत्र कलत्रादिक भारी रक्षा भाटे अगर बने शरक्ष
प्रदान करवा भाटे समर्थ जनी शकता नभी, कोवे विचार करी धीर वीर पुश्पु

મૂલમ્—ઇચ્છેવં સમુદ્ઘિષ્ઠ અહોવિહારાણ, અંતરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેહાણ ધીરે મુહુર્ત્તમવિ ણો પમાયણ વઓ અચ્છેતિ જોવ્વણં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇત્યેવ સમુત્થિતઃ અહોવિહારાય અન્તરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેક્ષ્ય ધીરો મુહુર્ત્તમપિ નો પ્રમાદયેત્, વયોઽત્યેતિ યૌવનં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કર ધીર વીર પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એક ક્ષણ મી પ્રમાદ ન કરે—
ઇસી વાતકી પુષ્ટિ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

“ઇચ્છેવ સમુદ્ઘિષ્ઠ” ઇત્યાદિ—યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર-મિત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર મેં લવલીન રહતા હૈ ઓર જવ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ વહ ઉન સકલ કાર્યોં કે વેદને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમ પાલન કરને કે લિયે ઉચુક્ત હુઆ સંયમી મુનિ સંયમ કો પાલન કરને કે ઇસ અવસર કા અચ્છી તરહ વિચાર કર એક મુહુર્ત્ત મી પ્રમાદ ન કરે, ક્યોં કિ આયુ ઓર યૌવન ડોનોં વીત રહે હૈ ।

સૂત્ર મેં “ઇત્યેવં” યહ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથન કી પુષ્ટિ કરતા હૈ, અર્થાત્—
જવ યહ વાત પ્રમાણિત હો ચુકી કિ યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર મિત્ર કલ-
ત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ પ્રાણી સાવધકાર્યોં કે કરને મેં લવલીન
હોતા હૈ પરન્તુ વહી પ્રાણી જવ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ ઉન સમસ્ત
કાર્યોં કે કરને મેં અપને કો સર્વથા અસમર્થ પાતા હૈ, જવ યહ હાલત હૈ

કર્તવ્ય છે કે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદ ન કરે આ વાતની પુષ્ટિ કરવા સૂત્ર-
કાર કહે છે કે—

“ઇચ્છેવ સમુદ્ઘિષ્ઠ” ઇત્યાદિ, યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર-મિત્રાદિકમાં આસક્ત બનીને આ પ્રાણી સાવધ વ્યાપારમાં લવલીન રહે છે અને ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે તે એ બધા કાર્યોંને કરવામાં અશક્ત બની જાય છે, એવો વિચાર કરી સંયમ પાલન કરવા માટે ઉચુક્ત થઈને સંયમી મુનિ સંયમનું પાલન કરવાને આ અવસરનો સારી રીતે વિચાર કરી એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કરે, કારણ કે આયુષ્ય અને યૌવન બન્ને વીતી જાય છે

સૂત્રમાં “ઇત્યેવ” આ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથનની પુષ્ટિ કરે છે અર્થાત્ ન્યારે આ વાત પ્રમાણભૂત બની ચૂકી છે કે યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોમાં આસક્ત બનેલ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર કરવામાં લવલીન થાય છે પરન્તુ તે પ્રાણી ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે આ બધા કાર્યોં કરવામાં પોતાને સર્વથા અસ-

ટીકા—‘इत्येवम्’ इतिञ्चः पूर्वपदशितवस्तुमुच्चस्तेन यौवन पुत्रकलप्राप्तक-
सावधानुष्ठानरतः स एव वृद्धावस्थया सफलकार्याप्तमो भवतीत्यर्थ । एवं=ययो
पदस्थितेन प्रकारेण ‘समुत्थित अहोविहाराय’ति ।

अहो इत्याभ्यर्चजनको विहारो=विहरणं यस्मिन् सः=अहोविहार संयमानुपालनं,
तस्मै=तदयं समुत्थितः=सम्यग्बुद्धिः सन् मुहूर्तमपि न प्रमादवदित्यनेन सम्बन्धः ।
तो वह इस प्रकार की परिस्थिति को दूर करने के लिये यह सर्वोत्तम
प्रयत्न करे कि वह संयम में अपने को लगा दे, कारण कि संयम का
अनुष्ठान करना ही इस रोगका इलाज है, इसके पालन-सेवन किय
बिना यह मर का रोग दूर नहीं हो सकता-संयमाराधन मनुष्य
गति के सिवाय अन्य और किसी भी गति में हो नहीं सकता-इसलिये
सूत्रकार प्रकट करते हैं कि इस संयमरूपी ओषधि का पान भी बड़ी
कर सकता है जो घीर हो-परीपक्व और उपसर्ग के आने पर भी जो
अपने कर्तव्यपथ से च्युत नहीं होता हो, उसका नाम सिद्धान्त की परि-
भाषा में घीर है । इसी भात की पुष्टि—“अहोविहाराय” इस पदसे तथा
“घीरे” इस पद से सूत्रकारने की है । अहोविहार शब्द का अर्थ संयम
है, कारण कि इसमें विचरण करनेवाला प्राणी देह में ममत्वबुद्धि
रखनेवालों के लिये आभ्यर्च पैदा करनेवाला होता है, उस की अनेक
प्रकार की तपश्चर्याएँ एवं कायकलेष्टादिक बाह्य तपको देखकर संसार
वहिरात्मा जीव आभ्यर्च्यचकित हो जाते हैं, वे विचारते हैं-वन्य है इस

મર્મ માને છે જ્યારે આવી હાલત છે તો તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને દૂર
કરવા માટે સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કે સમમમા પોતાને લાગવી છે, કારણ કે
સમમનુ અનુષ્ઠાન કરવું તે જ આ રોગનો ઉપાય છે તેનું પાલન-સેવન કર્યા
પછર આ સર્વોત્તમનો રોગ મટતો નથી ત્રયમારુધન, મનુષ્યગતિ ત્રિવાલ અન્ય
કેઈ ગતિમા મર્મ શકતુ નથી તેથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે આ સમમરૂપી
ઓષધિનું પાન તે કરી શકે છે જે ધીર છે અને પરીપક્વ ઉપચાર । આવવા છતાં
પણ જે પોતાના કર્તવ્યથી દૂર થતા નથી તેનું નામ સિદ્ધાન્તની પરિભાષામાં ધીર
છે આ વાતની પુષ્ટિ— અહોવિહારાય” આ પદથી તથા “ધીરે” આ પદથી
સૂત્રકારે કરેલ છે અહોવિહાર શબ્દનો અર્થ સમમ છે કાણકે તેમાં વિચરણ
કરવાવાળા પ્રાણી દેહમાં મમત્વબુદ્ધિ સખવાવાળાઓને માટે આશ્ચર્ય પેદા કરવા
વાળા હોય છે તેની અनेક પ્રકારની તપશ્ચર્યા અને કાયકલેષ્ટાદિક બાહ્ય તપને
દેખીને સસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત થાય છે તે કિન્નાર છે-વન્ય છે

સંયમી જન કો, હસ પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા કો-જિસસેં શરીર પર મી મમતા નહીં રહતી હૈ, અતઃ હમ પ્રકાર કા સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનં” હમ મહારોગ કા અચૂક મહૌ-પથ હૈ। ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હે પ્રાણી! તૂં ઇક મુહૂર્ત કી મી દેરી મત કર, મત સોચ ઉસ વાતકો કિ-“અમી તો ગ્વાને પીને કે દિન હૈ-એશ-આરામ ભોગને કા યહ સમય હૈ, વાદ જવ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી। તથા સંયમારાધન કરલૂંગા” કારણ કિ કૌન કહ સકતા હૈ કિ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી। વૃદ્ધાવસ્થા આને કે પહિલે હી યદિ તૂં હસ પર્યાય સે પર્યાયાન્તરિત હો ગયા તો ફિર તેરી યહ કલ્પના કોરી હી રહ જાવેગી। તથા વૃદ્ધાવસ્થા મેં જવ કિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ, શરીર મી અશક્ત બન જાતા હૈ, કરને કી ભાવના હોને પર મી જિસમેં કુછ મી કરતે ધરતે નહીં બનતા તો હસ સંયમ કા આરાધન હો મી કૈસે સકતા હૈ। યદિ પહિલે સે સંયમારાધન કી શક્તિ આત્મામેં આઈ હુઈ હો તો વૃદ્ધાવસ્થા મેં સંયમારાધન પૂર્વસંસ્કાર કે વશ સે હો મી જાય, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી યોગ્યતા તો તૂંને અમીતક પ્રાપ્ત હી નહીં કી, યહ યોગ્યતા જવ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય ચલવાન થી, શરીર મી સશક્ત થા, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઔર

તે સયમીજનને, આ પ્રકારની તપશ્ચર્યાને, જેથી શરીરમા પણ મમતા રહેતી નથી. માટે આ પ્રકારનું સયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનની-જઠરે શયન” આ મહારોગનું જરૂર મહા ઔપધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે હે પ્રાણી, તુ એક ક્ષણ પણ ઢીલ ન કર એ વાતનો વિચાર પણ ન કર કે-“હમણા તો ખાવા પીવાના દિવસો છે-એશઆરામ ભોગવવાનો સમય છે, ન્યારે વળી વૃદ્ધા-વસ્થા આવશે ત્યારે સયમારાધન કરી લઈશ” કારણ કે કોણ કહી શકે છે કે વૃદ્ધાવસ્થા આવશે વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પહેલા જ કદાચ તુ આ પર્યાયથી પર્યાયાન્તરિત થઈ ગયો તો પછી તારી આ કલ્પના નકામી જ રહી જવાની. અને વૃદ્ધાવસ્થામા ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, શરીર પણ અસક્ત બને છે, કરવાની ભાવના હોવા છતા પણ કાઈ પણ કરી શકતો નથી તો પછી આ સયમનું આરાધન કેવી રીતે બની શકે કદાચ પહેલાથી સયમારાધનની શક્તિ આત્મામા આવી ગઈ હોત તો વૃદ્ધાવસ્થામા સયમારાધન પૂર્વ સંસ્કારને વશથી થઈ પણ બીજા પર તુ આ પ્રકારની યોગ્યતા તો તને હબ્બુ સુધી પ્રાપ્ત જ નથી થઈ આ યોગ્યતા ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બગવાન હતી, શરીર પણ સશક્ત હતું, દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ-ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂળ હતી, તે અવસ્થામા આવી શકત.

માવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂળ થી उस अवस्था में आती, परन्तु वह अवस्था तो तूने मित्र पुत्र कलत्रादिकों में आसक्ति के बशवर्त्ती होकर गमा दी और सावधानुष्ठानों के करने से अपनी आत्मपरिणति को कलुषित कर दिया, तब भला, कहो तो सही, सहसा यह कार्य तुझ से अब कैसे बन सकेगा ? । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य प्राणी ! तू “मुहुस्मवि नो पमायण” एक मुहूर्त भी प्रमाद मत कर, और मन वचन एवं काय से, तथा कृत कारित और अनुमोदना से, अर्थात् नव कोटि से इस समय का आराधन कर, कनक कामिनी आदि पदार्थ जिन्हें तू भ्रमके बश से अभी तक अपने मानता आया है, और जिनके पाने में तथा पालन पोषण करने में तूने अपने हित और अहित का भी विवेक लुप्त कर दिया है, भला ! उनके स्वरूप का विचार कर और देख कि इनके संयोग से तेरी आत्मा में कहां तक शान्ति जागृत होती है ? यदि ये वास्तविक शान्ति प्रदान करने में असमर्थ हैं तो तू इनका नवकोटि से परित्याग कर दे, इस परित्याग से तेरी आत्मा में वह अपूर्य संस्कार जागृत होगा जो तेरी इन वीनदशा का अन्त करनेवाला हो जायगा, इन पदार्थोंका भोग अथवा संग्रह स्वाज को खुजलाने के समान है—जिस प्रकार स्वाजको खुजलानेवाला व्यक्ति

પરંતુ તે અવસ્થા તો તે પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોમાં આનુષ્ઠિતને વશવર્તી બની ગુમાવી અને સાવધાનુષ્ઠાનો કરવાથી પોતાની આત્મપરિણતિને કલુષિત કરી, આરે ભલા કહે તો ખરું સહજા આ કાર્ય તારાથી કેવે કેવી રીતે બની શકશે, આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે કે—હે ભવ્ય પ્રાણી ! તુ “મુહુસ્મવિ નો પમાયણ” એક મુહુરતે પણ પ્રમાદ ન કર અને મન વચન અને કાયાથી તથા કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી અર્થાત્ નવ કોટિથી આ સ્વભવનું આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જેને તું ભ્રમવશ હજી સુધી પોતાના માનતો આવ્યો છે અને જેને મેળવવામાં અને પાલન પોષણ કરવામાં તું પોતાના હિત અહિતને પણ વિવેક ભ્રષ્ટ કરી નાખેલ છે ભલા ! તંત્ર સ્વરૂપને વિચાર કર અને જોખ કે તેના સંગે ગઈ તારા આત્મામાં કયા સુખી શાંતિ બ્રમત થાય છે કદાચ તે વાસ્તવિક શાંતિ પ્રદાન કરવામાં અસમર્થ છે તા તુ તેને નવકોટિથી પરિત્યાગ કરી કે આ પરિત્યાગથી તારા આત્મામાં અપૂર્વ સંસ્કાર બ્રમત થશે તો આ તારી દીન દશાને અંત કરી દેશે, આ પદાર્થોના ભોગ અથવા સંગ્રહ પુજ્જીને ખજુવા બનવર છે જે પ્રકારે પુજ્જીને ખજુવાવાળો બ્યક્તિ, તે વખતે ખજુવાથી અનંદ આવે તેમ માને છે અને કહુ પણ છે—

खुजलाते समय आनंद में गोते लगाने लगता है और कहा भी है—

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खाने में, सो मजा देखा एक खाज के खजुवाने में”

ज्यों ही उस खुजलाने रूप कार्य को बंद कर देता है तो उसको जो जलनरूप वेदना होती है वह वहीं जानता है, इसी प्रकार इन विषयों का सेवन भी है, ऐसा विचार कर मन, वचन आदि रूप नव कोटि से इनका त्याग कर। इसी बातकी पुष्टि “अहो विहाराण” इस पद में लगा हुआ “अहो” यह पद करता है यह तो निश्चित है कि आत्मा में पूर्व संस्कार जितना कार्य करते हैं उतना वर्तमान संस्कार नहीं। बच्चा जब माता के पेट से उत्पन्न होता है तो उसकी स्तन्यपानप्रवृत्ति में पूर्व संस्कार ही सर्व प्रथम काम करता है। हम यह भी प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि कुंभकार अपने घटरूप कार्य को निष्पन्न करने के लिये चाक में जबर्दस्त भ्रमी पैदा करता है, यह जबर्दस्त भ्रमी सिर्फ वर्तमान में ही उसने उसमें उत्पन्न नहीं की है, किन्तु एक के बाद एक जो वह उसमें भ्रमी किया करता है—बारंवार उसे दंड से घुमाता है उससे ही यह उत्पन्न हुई है, इसी भ्रमीरूप संस्कार के द्वारा उसने घटरूप अपने कार्य को निष्पन्न किया है, इसी प्रकार आत्मा भी पूर्व पूर्व पर-पदार्थों के भोगने आदि रूप वासना-संस्कार से सांसारिक परपदार्थों को भोगने

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खानेमें, सो मजा देखा एक खाजके खजुवानेमें”

न्याये ते षण्णुवाइप कार्यने ण घ करवाभा आवे अने पछी तेनी जे जलनइप वेदना थाय छे ते तेज न्ते छे ते प्रकारे आ विषयेनु मेवन पणु छे तेवो विचार करी मन वचन आदि इप नव कोटिथी तेनो त्याग करीदे आ बातनी पुष्टि “अहो विहाराण” आ पदमा लागेला “अहो” ओ पद करे छे ओ तो निश्चित छे के आत्माभा पूर्वसंस्कार जेटलु कार्य करे छे तेटलु वर्तमान संस्कार नहि णस्यु न्याये माताना पेटथी उत्पन्न थाय छे तो तेनी स्तन्यपान-प्रवृत्तिभा पूर्वसंस्कार जे सर्व प्रथम काम करे छे अमे ओ पणु प्रत्यक्ष अनुभव करीओ छीओ के कुलार पोताना घटइप कार्यने निष्पन्न करवा भाटे आकभा जबरदस्त भ्रमी पैदा करे छे, आ जबरदस्त भ्रमी इकत वर्तमानभा जे तेने तेमा उत्पन्न करेल नथी पणु ओकनी पछी ओक जे ते तेमा भ्रमी कर्था करे छे—बारवार लाकडीथी घुमाव्या करे छे तेथी जे ते उत्पन्न थयेल छे, आ भ्रमीइप संस्कार द्वारा तेले घटइप पोताना कार्यने निष्पन्न कर्थु छे, ते प्रकारे आत्मा पणु पूर्व पूर्व परपदार्थोना भोगववा आदिइप वासना-संस्कारथी सांसारिक

અથવા અપનાને કી ઓર છુકતા હૈ। इन सस्कारों को सर्वथा प्रक्षीण करने की शक्ति यदि कहीं है तो वह सिर्फ एक संयम में ही है, इस संयम का आराधन नव कोटि से ही होना चाहिये, ऊपर की दिग्भाषटीसे नहीं। “अहो बिहाराए” इस पदमें जो “अहो” यह शब्द है वह आश्चर्य वाचक है, पूर्वोक्त प्रकारसे एक तो इस पदकी सार्थकता प्रकट की है, दूसरे इस प्रकार से भी इस पदकी सार्थकता टीकाकार प्रकट करते हुए कहते हैं कि-यह भी एक आश्चर्य की बात है कि जब यह आत्मा सासारिक वासनाओं से वासित था। उस समय किसी को अपना मित्र, किसी को अपना शत्रु मानकर रातदिन राग और द्वेष के फंदे में आपाद-शिला-पट्टी से चोटी तक जकड़ा हुआ था, इष्टानिष्ट पदार्थों की कल्पना से रात दिन अर्त्त रौद्र ध्यान करने में मस्त रहता था, परन्तु ज्यों ही संयम की यागबोर इसके हाथ में आती है यह उस प्रकार की कल्पना से सर्वथा रहित हो जाता है, कारण कि पदार्थों में इष्ट की कल्पना इन्द्रियों क अनुकूल पदार्थों में ही होती है, प्रतिकूल पदार्थों में अनिष्ट की कल्पना। पर जब संयम की यागबोर इसे प्राप्त हो जाती है तब क्या तो अनुकूल क्या प्रतिकूल सब एक हो जाते हैं-एक जैसे ही मालूम पड़त हैं।

પરપદાર્થોને ભોગવવા તથા અપનાવવાની તરફ જ હુકે છે આ સ્વચ્છારોને સર્વથા પ્રક્ષીણ કરવાની શક્તિ કબજે કોઈ જગ્યોએ હોય તો તે ફક્ત સંયમમાં જ છે આ સંયમનું આરાધન નવકોટિથી હોવું જોઈએ, ઉપર ઉપરના દેખાવ પુરતું ન હોવું જોઈએ.

“અહો બિહારાણ” આ પદમાં જે “અહો” ન શબ્દ છે તે આશ્ચર્ય વાચક છે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી એક તો આ ની સાર્થકતા પ્રગટ કરી છે બીજી આ પ્રકારથી પણ આ પદની સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રગટ કરીને કહે છે કે-એ પણ એક આશ્ચર્યની વાત છે કે જ્યારે આ આત્મા સાસારિક વાસનાઓથી વાસિત હતા તે વખતે કોઈને પાવાને મિત્ર, કોઈને પોવાનો શત્રુ માનીને સત ક્રિયસ રાગ અને દ્વેષથી પુરેપુરા પાથી માથા સુધી ફસાએલા હતા, અર્થાત્ જકડાયેલા હતા. ઇષ્ટ અનિષ્ટ પદાર્થોની કલ્પનાથી સતક્રિય ન આવત રોદ્ર ધ્યાન કરવામાં નસત રહેતા હતા. પરંતુ જ્યાં સંયમની સગામ તના હાથમાં આવે છે ત્યાં તે એવા પ્રકારની કલ્પનાથી સર્વથા રહિત થાય છે કારણ કે પદાર્થોમાં હજીની કલ્પના ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ પદાર્થોમાં જ થાય છે પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં અનિષ્ટની કલ્પના. પરંતુ જ્યારે સંયમની શરી તેને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ બધું એક

આશ્ચર્યકારિત્વશ્ચાત્ર ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ કનકકામિન્યાદિસકલવસ્તુપરિત્યાગિત્વેન ।
 યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મિત્રભાવેન । અથવાઽન્તર્મુદ્ગર્તાન્તર્ગતાઽપ્રસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽ-
 પ્યનન્તર્કર્મનિર્જરકત્વેન વોચ્યમ્ ।

લગામ હી તો ઘોડે કો વૈઠને વાલે કે અધીનસ્થ કરતી હૈ, ઇન્દ્રિયારૂપી ઘોડે મી ઇસી સંયમ કી વાગડોર-લગામ સે આત્મા કે અધીન વન જાતે હૈ, તવ “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ વહ નિન્દા ઓર પ્રશંસાકો તથા માન ઓર અપમાનકો સમાન સમઝતા હૈ । યહ કહને કી હી વાન નહીં હૈ-અનુભવ સિદ્ધ વિષય હૈ । કયા સંયમિયોં કે સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કર વૈઠે હુવ નહીં સુને હૈ ? , સંયમ વહ અંજન હૈ કિ જિસકે લગતે હી આંતર ચક્ષુઓંકી યહ કલ્પના કિ “ યહ મિત્ર હૈ, યહ શત્રુ હૈ ” બિલકુલ નષ્ટ હો જાતી હૈ । યહ સંયમી જીવ યદ્યપિ વાહ્ય જગત મેં વિચરણ કરતા હૈ તો મી વાહ્ય જગત મેં વહ જલ મેં કમલ કી તરહ અલિપ્ત હી રહતા હૈ, અતઃ શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ આદિ સમસ્ત કલ્પનાઓં કો મમત્વજન્ય બુદ્ધિ કા વિકાર માનકર વહ ઊનસે ઇકદમ પરે હો જાતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો લેકર ટીકાકાર ને “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” ઇસ પદ સે ઇસકા ખુલાસા કિયા હૈ । સમતાભાવ સંયમકા સર્વપ્રથમ ગુણ હૈ । જિસ

જ થઈ જાય છે-એક જ જેવું માલૂમ પડે છે લગામ જ તો ઘોડાને ખેસનારના અધીનમા કરે છે ઇન્દ્રિયો રૂપી ઘોડા પણ આ સયમરૂપ લગામથી આત્માને આધીન થઈ રહે છે ત્યારે “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ તે નિંદા અને પ્રશંસાને તથા માન અને અપમાનને સમાન સમજે છે એ કહેવાની જરૂર રહેતી નથી, કારણ કે આ અનુભવસિદ્ધ વિષય છે શુ સયમીઓના સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને ખેઠેલા નથી સાલજ્યા ? , સયમ તે અંજન છે કે જેનાથી આતરચક્ષુઓની એ કલ્પના કે “ આ મિત્ર છે, આ શત્રુ છે ” બિલકુલ નષ્ટ થઈ જાય છે તે સયમી જીવ હજી સુધી બાહ્ય જગતમા વિચરણ કરે છે તો પણ તે બાહ્ય જગતમા તે જલમા કમલની માફક અલિપ્ત જ રહે છે, માટે શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ, એ બધી કલ્પનાઓ મમત્વજન્ય બુદ્ધિનો વિકાર માનીને તે તેનાથી એકદમ દૂર થઈ જાય છે આ અભિપ્રાયને લઈને ટીકાકારે “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” એ પદથી તેનો ખુલાસો કરેલ છે સમતાભાવ સયમનો- સર્વપ્રથમ ગુણ છે જેમ સૂર્યના ઉદયથી અધકારનો નાશ

પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદિત હોને પર અધકાર કા અમાવ હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમરૂપી સૂર્ય કે ઉદિત હોતે હી આત્મા સે વિષમતા કી કલ્પના-રૂપ અધકાર વિલીન હો જાતા હૈ ।

હસ પ્રકાર સે 'મી 'અહો વિહારાપ" હસ સૂત્રમે 'અહો' પદ કી સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“અન્તર્મુદ્ધતાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્ર-સંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકલ્પેન” ૪૮ મિનટ કે સમયકો એક મુદ્ધર્ત કહતે હૈ, હસ મુદ્ધર્ત કે મીતર કે સમયકો અન્તર્મુદ્ધર્ત કહતે હૈ । યહ અસંઘપાત સમયો કા એક કાલ હૈ । સમય, વ્યવહારકાલ કા સઘ સે સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્તા હૈ । કાલ કો પ્રકાર કા હૈ ૧-નિશ્ચયકાલ, ૨-વ્યવહારકાલ । સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુદ્ધર્ત, વર્ષ આદિ સઘ વ્યવહાર કાલ હૈ । વર્તના જિસકા લક્ષણ હૈ વહ નિશ્ચયકાલ હૈ, ક્યોં કિ શાસ્ત્રમે 'વદુણાલક્ષણો કાલો' કહા હૈ ।

સદ્ગાવો સે યદિ અષ્ટસમયમાત્ર મી સંયમ કા આરાધન કર લિયા જાવે તો વહ અનન્ત કર્મો કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । હમ દેસતે હૈ—અગ્નિ કી ધોફી સી મી ચિનગારી જય રૂં કે પુંજપર પડ જાતી હૈ તો વહ ઉસે ખસ્મ કર દેતી હૈ । હસી પ્રકાર અષ્ટસમયમાત્ર

થાય છે તે પ્રકારે સયમરૂપી સૂર્યના ઉદયથી આત્માથી વિષમતાની કલ્પનારૂપ અધકારને નાશ થાય છે

આ પ્રકારમાં પણ “મહો વિહારાપ” આ સૂત્રમાં ‘અહો’ પદની સાર્થ કતા ટીકાકાર પ્રકટ કરે છે—‘અન્તર્મુદ્ધતાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકલ્પેન ૪૮ મીનીટના સમયને એક મુદ્ધર્ત કહે છે આ મુદ્ધર્તના સીતરના સમયને અન્તર્મુદ્ધર્ત કહે છે તે અસખ્યાત સમયોના એક કાળ છે સમય, વ્યવહાર કાળને બધાથી સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્તા છે કાલ ને પ્રકારને છે ૧ નિશ્ચયકાલ, ૨ વ્યવહારકાલ, સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુદ્ધર્ત, વર્ષ આદિ બધા વ્યવહારકાલ છે, વર્તનું જેવું લક્ષણ છે તે નિશ્ચયકાળ છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં ‘વદુણાલક્ષણો કાલો’ કહેલ છે

સદ્ગાવોથી કહાય અષ્ટ સમય માત્ર પણ સયમનુ આરાધન કરી લેવામા આવે તો તે અતલ કર્મોની નિર્જલનુ કારણ માનેલ છે. અમે રેખીએ હીએ અગ્નિની યાત્રી પણ ચિનગારી બ્યારે રૂના કાલા ઉપર પડી બાય છે તે બધુ રૂ બાળી નાખે છે તે પ્રકારે આઠ સમય માત્ર પણ સયમનુ સેવન હોવેના અનન્ત કર્મોના નિર્જલનુ કારણ બને છે તેમાં કઈ અચરજની વાત છે ?

કિં કૃત્વા સંયમાનુપાલનતત્પરો ભવેદિત્યાહ-‘અન્તરં ચ खलु इमं सम्प्रेक्ष्य’
 इमं=तपःसंयमकरणरूपम् अन्तरम्=अवसरम्, च=समुच्चये, खलु=निश्चयेन सम्प्रेक्ष्य
 =सम्यग्दृष्ट्वा अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्मार्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरति-
 प्राप्तिरूपावसरोऽनादौ संसारे जीवेन लब्ध इत्यनुभूय “धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमाद-
 येत् ” धीरः=परीषद्दोषसर्गसहने दृढः संयमी नो प्रमादयेत्=प्रमादं न कुर्यात् ।

भी સંયમ કા સેવન જીવોં કે અનન્તકર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ હો તો
 इस में कौनसी अचरज की बात है ? ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોં સે ખી જિતને કર્મોં કી નિર્જરા નહોં કર
 सकता है उतने कर्मों की निर्जरा तीन गुप्ति के धारक-संयमी महात्मा
 उच्छ्वास मात्र में कर देता है, यह सब महिमा संयम की ही है इसी
 लिये संयम भाव अचरजकारी है । इसलिये मनुष्य-जन्म को सफल
 बनाने के लिये यह आवश्यक कर्तव्य है कि संयम का आराधन किया
 जावे । यह दृढ़ विश्वास रखना चाहिये कि-संयमप्राप्ति की योग्यता
 मनुष्यजन्म में ही है, इसमें भी यदि अनार्य क्षेत्र में जन्म हुवा वहां अनार्यों
 की संगति मिली तो जिस प्रकार कड़वी तुंबड़ी के संग से दूध की हालत
 होती है ठीक यही हालत इस आत्मा की भी हो जाती है । रातदिन
 दुर्विचारों का उनकी संगति में पड़ने से तांता लगा रहता है, धर्म कर्मका
 उस अवस्था में भान नहीं रहता-बेहोशी का नशा ही सवार रहता है,
 मेरा शुभ कर्तव्य क्या है? हेय क्या है? उपादेय क्या है? भक्ष्य क्या है?
 अभक्ष्य क्या है? इत्यादि समस्त बातों का विचार उससे दूर रहता है ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોથી પણ જેટલા કર્મોની નિર્જરા નથી કરી શકતો
 તેટલા કર્મોની નિર્જરા ત્રણ ગુપ્તિના ધારક સયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસમાત્રમા
 કરી લે છે, આ બધો મહિમા સયમનો જ છે માટે સયમભાવ અચરજકારી
 છે, માટે મનુષ્યજન્મને સફળ બનાવવા માટે એ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે સય-
 મનુ આરાધન કરવામા આવે એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ કે-સયમ-
 પ્રાપ્તિની યોગ્યતા મનુષ્યજન્મમા જ છે તેમા પણ કયાં અનાર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ
 થયો ત્યા અનાર્યોની સંગતિ મળી તો જે પ્રકારે કડવી તુંબડીના સગથી દૂધની
 હાલત થાય છે ઠીક તે જ હાલત આ આત્માની પણ થાય છે, રાતદિવસ દુર્વિ-
 ચારોનુ તેની સંગતિમા પડવાથી તાતો લાગ્યો રહે છે, ધર્મકર્મનુ આ અવ-
 સ્થામા ભાન નહિ રહેતું હોવાથી બેહોશીનો નશો રહ્યા કરે છે માટે શુભ કર્તવ્ય
 શુ છે? હેય શુ છે? ઉપાદેય શુ છે? ભક્ષ્ય શુ છે? અભક્ષ્ય શુ છે? ઇત્યાદિ સમસ્ત

જ્યેમ હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ બનાયોં કે સંગ સે ઉપસ્થિત હોતી હે તથ
 યહાં પર સંયમ જૈસી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કી પ્રાપ્તિ કેસે હો સકતી હે ? કિન્તુ
 નહીં । યદિ આર્યક્ષેત્ર મેં જન્મ કુધા તો મી વુષ્કુલ મેં જન્મ મિલા તો
 યહાં ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી; કારણ કિ યહાં પર इतनी योग्यता
 હી નહીં કિ જિસસે સંયમભાવકો ધારણ કરને કી આવના જાગૃત હો,
 હિંસા, શૂઠ, ચોરી, કુશીલ ઓર પરિગ્રહ જૈસે પાંચ આઠવોં કા હી વિશે
 યતર યહાં સંગ્રહ હોતા રહતા હે જિસસે ઉસ મનુષ્યજન્મ કા પાના ન
 પાને કે હી સુત્ત્વ હો જાતા હે । મનુષ્ય પર્યાય મી મિલી, આર્યક્ષેત્ર મિલા
 ઓર ઉત્તમ કુલમેં જન્મ મિલા, પરન્તુ જો મૂલ મેં હી કમી હુઈ તો ઉસ
 જન્મ સે મી ક્યા લાભ હો સકતા હે ? અતઃ વહ જન્મ તમી સફલ હો
 સકતા હે જો યોગિ કી પ્રાપ્તિ હો । યદિ યોગિ કી પ્રાપ્તિ હી ન હુઈ તો
 સર્વવિરતિ કહા સે હોગી । સર્વવિરતિ-સાધુકા ચારિત્ર હી શ્રેય કી
 પ્રાપ્તિકા પ્રધાન કારણ કહા ગયા હે હસલિયે इन तमाम बातों की प्राप्ति
 કી ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા જાનકર ધીર પુરુષ કો ચાહિયે કિ વહ અપન
 જન્મ કો સફલ કરને કે લિયે સંયમારાધન કે પ્રતિ સુદૂર્ત માત્ર મી
 પ્રમાદ નહીં કરે । હસી યાત કા ટીકાકારને-“ अनन्तकालदुर्लभमातु

વાતોને સ્થિતિ તેનાથી દૂર રહે છે. જ્યારે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે ત્યારે
 આ ઠેકાણે સયમ જેવી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? બદલે નહીં જ
 કદાચ આર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો તો પણ વુષ્કુલમાં જ મ થયો તો ત્યાં પણ
 તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી, કારણ કે તે જગ્યાએ જોઈ શકાય ત્યાં જ નથી કે
 જેનાથી સયમભાવને ધારણ કરવાની ભાવના બાંધત થાય. હિંસા, શૂઠ, ચોરી,
 કુશીલ અને પરિગ્રહ જેવા પાંચ આઠવોનું જ વિશેષતર ત્યાં સંગ્રહ થયા કરે
 છે તેથી તે મનુષ્યજન્મ મળ્યો ના મળ્યા બરાબર જ થઈ જાય છે મનુષ્યપર્યાય
 પણ મળી આર્યક્ષેત્ર મળ્યું ઉત્તમ કુળમાં જ મ પણ મળ્યું પરંતુ મૂળમાં જ
 કમીના બની તો તે જ મથી જ ક્યો લાભ મળી શકે ? આટે તે જ મ ત્યારે
 સફળ બની શકે છે જ્યારે તેનાથી બોધિની પ્રાપ્તિ થાય. કદાચ બોધિની પ્રાપ્તિ
 જ ન થઈ તો સર્વવિરતિ કદાચી થશે. સર્વવિરતિ-સાધુનું ચારિત્ર જ શ્રેયની
 પ્રાપ્તિનું પ્રધાન કારણ કહેવામાં આવ્યું છે આટે આ તમામ વાતોની પ્રાપ્તિની ઉત્ત
 રોત્તર દુર્લભતા બાણીને ધીર પુરુષને ભોધાને કે પોતાના જ મને સફળ કરવા
 સયમારાધન પ્રતિ સુદૂર્ત માત્ર પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતને ટીકાકારે-

વજનમા-ડડર્યક્ષેત્ર-શોભનકુલોત્પત્તિ-વોધિલાભ-સર્વવિરતિપ્રાપ્તિરૂપા-
વસરોડનાદો સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो
પ્રમાદયેત્” इन पङ्क्तियोंसे खुलाशा किया है । अर्थात् दुर्लभ मनुष्य-
जन्म, आर्यक्षेत्र, उच्चकुल में जन्म, वोधिका लाभ, सर्वविरतिरूप चारित्र
की प्राप्तिरूप अवसर जीवने अनन्तकालसे प्राप्त किया है, ऐसा विचार
कर धीर वीर सयमीजन मुहूर्त मात्र भी संयमाराधन करने में प्रमाद-
शील न बनें । मनुष्यजन्म का पाना बहुत ही दुर्लभ है । इसकी दुर्लभता
शास्त्रकारोंने दश १० दृष्टान्तों से शास्त्रमें प्रकट की है । प्रथम तो मनु-
ष्यजन्म की प्राप्ति होना दुर्लभ है, उसमें भी आर्यक्षेत्र में जन्म मिलना
यह और भी महादुर्लभ है, आर्यक्षेत्र में भी उच्चकुल में जन्म पाना यह
और भी दुर्लभ है, इस में भी वोधिका लाभ होना और कठिनतर है,
इसमें भी सर्वविरतिरूप चारित्र का आराधन करना और भी दुर्लभ-
तम है, अतः इस अनादि संसार में यदि इस पूर्ण साधनसामग्रीकी
प्राप्ति तेरे हाथ आई है तो हे प्राणी ! तू संयमभाव से एक मुहूर्त भी
प्रमादी मत बन, धीर वीर होकर इसका-कितने ही उपसर्ग आवें कितने
ही चाहे परीपहो का ढेर तेरे मार्ग में आडा पड़ा हो तो भी आराधन

“अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्माऽऽर्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिवोधिलाभसर्वविरतिप्राप्ति-
रूपावसरोऽनादौ संसारे जीवेन लब्ध, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्’
આ પંક્તિઓથી ખુલાસો કરેલ છે, અર્થાત્ દુર્લભ મનુષ્યજન્મ, આર્યક્ષેત્ર,
ઉચ્ચકુળમા જન્મ, વોધિનો લાભ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિરૂપ અવસર
શુભે અનંતકાળથી પ્રાપ્ત કરેલ છે એવો વિચાર કરી ધીર વીર સયમી જન મુહૂર્ત
માત્ર પણ સયમારાધન કરવામા પ્રમાદશીલ ન બને. મનુષ્યજન્મનુ મળવુ ઘણુ
જ દુર્લભ છે, તેની દુર્લભતા શાસ્ત્રકારોએ ૧૦ દૃષ્ટાન્તોથી શાસ્ત્રમા પ્રગટ કરી
છે પ્રથમ તો મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે, તેમા પણ આર્યક્ષેત્રમા
જન્મ મળવો એ મહાદુર્લભ છે, આર્યક્ષેત્રમા પણ ઉચ્ચ કુળમા જન્મ થવો એ
પણુ દુર્લભ છે, તેમા પણ વોધિનો લાભ થવો ઘણુ જ કઠિનતર છે તેમા પણ
સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રનુ આરાધન કરવુ તે દુર્લભતમ છે માટે આ અનાદિ સંસા-
રમા કદાચ આ પૂર્ણ સાધન સામગ્રીની પ્રાપ્તિ તારે હાથે આવી છે તો હે
પ્રાણી ! તુ સયમભાવથી એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદી બનીશ નહિ ધીર વીર થઇ
તેમા કેટલાએ ઉપસર્ગ આવે અને ગમે તેટલા પરિપહેના ઢગલા તારા માર્ગમા
આડા આવે તો પણ સયમનુ આરાધન કર જેથી પ્રાપ્ત થયેલો આવો અવસર તારા

છઘસ્યોપયોગો મુહૂર્તમાત્રમવતિષ્ઠત, તનાત્ર મુહૂર્તમિતિ કથિતમ્, શાસ્ત્રસમ્મત
તુ સમયમાત્રમપીત્વર્થઃ “સમયં ગોયમ મા પમાયણ” ઇતિ વચનાત્ ।

પૂર્વપુણ્યોદયેન માનવજન્મ લબ્ધવાન, તત્રાપિ સસારાસારતાસમાભાષનેન
ચિરતો ભૂત્વા જ્ઞાનમપિ પ્રમાદી ન મઠવિત્યત્ર હતુપુપદર્શયતિ—“અસ્યેતિ ધ્રુવો યૌવન
વા” ઇતિ, વય = ક્રીમારયૌવનાદિ અસ્યેતિ=અતિગચ્છતિ વ્યતીત મવતીત્વર્થ,
યૌવન વા વ્યતિગચ્છતિ, ધ્રુવોમધ્યેऽપિ યૌવનસ્ય સત્ત્વાસ્પુનરૂપાદાનં તસ્યૈવ પ્રાધાન્ય
નાન્યસ્યેતિ જ્ઞાપનાય, ધર્માર્થકામાદિસાધનાનાં તદ્ધીનત્વાત્, મધચ્છાયાસન્નયારા-
ગવદ્ યૌવનં સ્વલ્પકાલસ્થાયીતિ મત્વા યથા વ્યર્થ તન્ન વ્યતીયાત્થયા સયમિના
ષાપમાદિના કાર્યમિતિ માત્ર ॥ ૬૦ ૪ ॥

કર, તાકિ પ્રાપ્ત હુઆ યહ અવસર તેરે હાથ સે ન નિકલને પાવે । પરી-
પહ્ઠ્ઠઃ ઓર ઉપસર્ગ કે આને પર મી જો સંયમ પથસે ધિચલિત ન હો ઉસકા
હી નામ ધીર હૈ । સત્તા ધીર ધીર વહી હૈ—જો હસ પવિત્ર સંયમ કા આરાધન
કર અપને જન્મકો સફલ યનાતા હૈ ।

યહાં પર જો ‘એક મુહૂર્ત મી પ્રમાદ ન કરે’ એસા કહા હૈ ઘહ છઘસ્ય
જીર્ષો કે ઉપયોગ કી અપેક્ષા કથન સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ છઘસ્યો
કા ઉપયોગ એક મુહૂર્ત તક હી સ્થિર રહતા હૈ—ફિર ઉપયોગાન્તર હો જાતા હૈ ।

શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો હસ ઘાત કા પ્રતિપાદન કરતા હૈ કિ એક
સમય મી પ્રમાદ મત કરો—“સમયં ગોયમ ! મા પમાયણ”—હૈ ગૌતમ એક
સમય મી પ્રમાદી મત યન ।

હસલિયે સૂત્રકાર હસ ઘાત કા વિચાર કર સંયોધન કરતે હુણ કહત
હૈ કિ—હૈ પ્રાણિ ! કિસી વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદય સે હી તુમે હસ વુર્લમતમ

હાથથી આસ્યે ન બાય પરીઠક અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં જે સુવર્ણમાંથી
નિર્માલિત ન થાય તેવું નામ જ ધીર છે તાથે ધીર ધીર તે છે જે આ પવિત્ર
સુવર્ણમાં આત્મધન કરી પોતાના જન્મને સર્જા જનાવે છે

આ ઠેકાણે જે ‘એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદ ન કરે’ એવું કહ્યું છે તે છઘસ્ય
શુભેના ઉપયોગની અપેક્ષા કથન સમજવું એકજો કારણ કે છઘસ્યેના ઉપ-
યોગ એક મુહૂર્ત સુધી જ સ્થિર રહે છે પછી ઉપયોગાન્તર થઈ બાય છે.
શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો આ ઘાતનું પ્રતિપાદન કરે છે કે એક સમય પણ પ્રમાદ
ન કરે. “સમયં ગોયમ ! મા પમાયણ” હૈ ગૌતમ । એક સમય પણ પ્રમાદી ન જન.

આના માટે સૂત્રકાર આ ઘાતને નિવાર કરી સંયોધન કરી કહે છે કે—હૈ
પ્રાણી ! એક વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદયથી જ તને આ દુર્લભતમ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ

મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ હુઈ હૈ તો ઉસે સફલ બનાને કે લિયે તૂ સંસાર કી અસારતા કા વિચાર કર, તાકિ તેરા મન માંસારિક પદાર્થોં મેં લુબ્ધ ન બને । સંસાર કી અસારતા કા વિચાર હી તો સાંસારિક પદાર્થોં મેં તુચ્છતા કી ભાવના જાગૃત કરતા હૈ । જિન પદાર્થોં કે લિયે યહ રાત દિન એક કર ડાલતા હૈ, ઉન પદાર્થોં કા જબ સ્વરૂપ વિચાર કરતા હૈ તો નિયમતઃ હસકે ચિત્તમેં ઉનસે વિરક્તિભાવ જાગૃત હોતા હૈ, દૃષ્ટિકા ભેદ હી તો વિરક્તિભાવ હૈ । જિન પદાર્થોં કે પરિણમન મેં યહ અપના પરિણમન માનતા થા, તથા પ્રાપ્તિ ન હોને પર આકુલિત હો ઉઠતા થા, ઉન્હીં પદાર્થોં મેં અસારતા યા તુચ્છતા કી ભાવના જાગૃત હોને પર ઉનસે હસકી દૃષ્ટિ બદલ જાતી હૈ ઓર ‘ભોગોં કે નિમિત્ત સે આત્મા મેં કર્મ કા બન્ધ હોતા હૈ’ એસા સમજ કર ઉનસે ઉદાસીન વૃત્તિ ધારણ કર લેતા હૈ, તબ જિસ પ્રકાર એક ઘાસ કે તિનચે મેં સાધારણ મનુષ્યકોં ભી ન રાગ હોતા હૈ ઓર ન દ્વેષ હોતા હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ, પરપદાર્થોં મેં દૃષ્ટિભેદ હોને સે હસકી હો જાતી હૈ, તબ યહ પ્રત્યેક પદાર્થ કે પરિણમન મેં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ હી રહતા હૈ, આકુલિત યા મોહી નહીં બનતા । યહી પરિસ્થિતિ હસે સંયમભાવ મેં દૃઢ રૂપસે સ્થિર રાખતી હૈ અતઃ યહ એક ક્ષણ ભી પ્રમાદી નહીં બનતા, હસી વાત કા ખુલાશા-“અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ” હસ વાક્ય સે સૂત્ર-

છે તો તેને સફળ બનાવવા માટે તુ સંસારની અસારતાનો વિચાર કર, જેથી તારૂં મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને સંસારની અસારતાનો વિચાર જ તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના બંધત કરે છે, જે પદાર્થો માટે તે રાત દિવસ એક કરી નાખે છે, જ્યારે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ વિચાર કરે છે તો નિયમત તેના ચિત્તમાં તેનાથી વિરક્તિભાવ બંધત થાય છે દૃષ્ટિનો ભેદ તે જ વિરક્તિભાવ છે જે પદાર્થોના પરિણમનમાં તે પોતાનું પરિણમન માનતો હતો તથા પ્રાપ્તિ ન થવાથી આકુલિત બનતો હતો, તે પદાર્થોમાં અસારતા અગર તુચ્છતાની ભાવના બંધત થવાથી તેનાથી તેની દૃષ્ટિ બદલી જાય છે, અને “ભોગોના નિમિત્તથી આત્મામાં કર્મનો બંધ થાય છે” એવું સમજીને તેનાથી ઉદાસીનવૃત્તિ ધારણ કરી લે છે, ત્યારે જે પ્રકારે એક ઘાસના તણખલા માટે સાધારણ મનુષ્યને પણ રાગ થતો નથી તેમ દ્વેષ થતો નથી, ઠીક તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પર પદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ થવાથી તેની થઈ જાય છે ત્યારે તે પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ જ રહે છે, આકુલિત અગર મોહી બનતો નથી આ પરિસ્થિતિ આ સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપથી સ્થિર રાખે છે, માટે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદી બનતો નથી. આ વાતનો

કારને કિયા છે । પ્રમાણી નહીં થનને મેં યહ હેતુસ્પસે કથન કિયા છે । કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓં કા નામ વચ છે, સૂત્રકાર કહતે હેં કિ-
 વેસ્થો હે અન્ય જીવ ! પરપદાર્યોં મેં રાગી મેપી યા મોહી હોતેર કૌમાર
 યૌવનાદિ કઈ પૂર્વ મવોંકી અવસ્થાઈં વ્યતીત હો ચુકી હેં, પરન્તુ તૂને
 અપના કુછ મી સુધાર નહીં કિયા, અતઃ યહ વર્તમાન સમય જો તુમે મિલા
 હેં હસે સફલ કરને કી કોશિશ કર, હસ મવકી મી યે પાલયૌવનાદિ
 અવસ્થાઈં વ્યતીત હો જાનેવાલી હેં—સ્થિર રહનેવાલી નહીં હેં, હસ લિખ અવ
 તો હનસે અપના કુછ કલ્યાણ કરલે । માના કિ—પાલ અવસ્થા મેં અલ્પ
 જ્ઞાન હોને સે આત્મા કલ્યાણમાર્ગ કે પથ પર અગ્રસર ન હો સકે તો મી
 યૌવન અવસ્થા મેં તો હો સક્તા હેં, પરન્તુ તૂ તો ઉસે મી વ્યર્થ સ્થો બેઠતા
 હે, વ્યર્થોં કિ સવ અવસ્થાઓં મેં યૌવન અવસ્થા કી હી મુખ્યતા હે, હસ
 અવસ્થા મેં હી યહ પ્રાણી સવ કુછ કરતા રહતા હે, ધર્મ, અર્થ ઓર કામાદિ
 સાધન સવ હસી અવસ્થા મેં પ્રાપ્ત કિયે જાતે હેં, હસી જ્યાલ સે ‘વચ’
 હસમેં ઉસકા સમાવેશ હોનેપર મી “યૌવન” હસ પદ કા પૃથક્
 રૂપસે ગ્રહણ કિયા હે, અતઃ વહ યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત ન હો હસ
 પ્રકાર સે સંયમી પુરુષ કો વહ અવસ્થા અપ્રમાદવશાસમન્વિત હોકર

બુલાસો—“ અત્યેતિ વયો યૌવનમ્ જ ” આ વાક્યથી સૂત્રકારે કહેલ છે પ્રમાણી
 નહિ બનવામા આ હેતુરૂપથી કથન કરેલ છે કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓંનું
 નામ વચ છે સૂત્રકાર કહે છે કે—દેખો કે બામ લખ । પરપદાર્યોંમા સુમી કેપી
 અગર મોહી થતા કૌમાર-યૌવનાદિ અનેક પૂર્વભવોંની અવસ્થાઓં વ્યતીત થયેલ
 છે પરતુ તે પોતાને કાંઈ પણ સુધાર કર્યોં નહિ, માટે આ વર્તમાન સમય જે
 તને મળેલ છે તેને સફળ કરવાની કોશિશ કર આ લખની પણ એ બાલ યૌવનાદિ
 અવસ્થાઓં વ્યતીત થઈ જવાની છે—સ્થિર પડેવાવાળી નથી, માટે હવે તેા તેનાથી
 પોતાનું કલ્યાણ કરી લેયો માનીલ્યો કે—બાલ અવસ્થામા અપજ્ઞાન હોવાથી આત્મા
 કલ્યાણ માગેમા અગ્રેસર ન બની શકે તો પણ યૌવન અવસ્થામા તો બની
 શકે છે પરતુ તુ તો તેને પણ વ્યર્થ જોઈ બેસે છે, કારણ કે બધી અવસ્થા
 યોગ્ય યૌવન અવસ્થાની જ મુખ્યતા છે આ અવસ્થામા જ પ્રાણી કાઈક પણ
 કરી શકે છે ધર્મ અર્થ અને કામાદિ સાધન પણ આ અવસ્થામા પ્રાપ્ત થાય
 છે એ ખ્યાલથી ‘વચ’ તેમા તેના સમાવેશ હોવા છતા પણ “યૌવન” આ
 પણ પૃથક્ રૂપથી ગ્રહણ કરેલ છે માટે તે યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત
 ન થાય એ પ્રકારથી સવમી પુરુષે તે અવસ્થા અપ્રમાદવશાસમન્વિત બની

‘સંયમાનુપાલનં શ્રેયઃ’ इति यो न जानाति पुत्रकलत्रासक्तः संसारासारसरणि-
मनुवर्तमानोऽनाराधितकल्याणमार्गोऽसंयमजीविताभिनिवेशवान् प्राणी बहुशः सत्त्वो-
पघातकारिणीं क्रियां करोतीति दर्शयति—“ जीविष ”—इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવિષ્ણુ ઇહ જે પ્રમત્તા સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા
વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા ઉત્તાસહતા અકડં કરિસ્સામિત્તિ મળ્ણમાળે
॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જીવિત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા
અપદ્રાવયિતા ઉત્ત્રાસકોઽકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સફલ બના લેની યાહિયે, ક્યોંકિ યહ અવસ્થા સદા સ્થાયી નહીં હૈ, સંધ્યા-
રાગ ઔર મેઘછાયાકી તરહ સ્વલ્પકાલ મેં હી દેખતે ૨ નષ્ટ હોજાનેવાલી
હૈ, અતઃ ઇસકી સફલતા કરને મેં હી બુદ્ધિમાની હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો વ્યક્તિ ઇસ વાત કો નહીં સમજતા હૈ કિ—‘સંયમ કા પાલન
કરના હિતાવહ હૈ’ વહ પુત્ર કલત્રાદિ પદાર્થોં મેં આસક્તચિત્ત હોકર ઇસ
અસાર સંસાર મેં હી ભ્રમણ કરતા રહતા હૈ, કલ્યાણમાર્ગ કા આરાધન
નહીં કરને કે કારણ અસયમ જીવન મેં હી વહ અપના સમય વ્યતીત
કરતા હૈ, ઔર સંયમ જીવન ધારણ કરને કી વાત કહે જાને પર વહ
અપને દુરભિનિવેશ કે વશવર્તી હો ઁસ તર્ફ જરા ભી ધ્યાન નહીં દેતા,
તથા ઁસે ૨ કાર્ય કરતા રહતા હૈ કિ જિનકે કરને મેં અનેક ત્રસ જીવોં
કા ઘાત હોતા હૈ ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

સફળ બનાવી લેવી જોઈએ, કારણ કે આ અવસ્થા સદા સ્થાયી નથી, સંધ્યાના
રાગ અને મેઘછાયા ની માફક સ્વલ્પકાળમા જ દેખતા-દેખતાં નષ્ટ થવાવાળી
છે, માટે તેની સફળતા કરવામા જ બુદ્ધિમાની છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે વ્યક્તિ, ‘સયમનું’ પાલન કરવુ તે હિતાવહ છે’ તેમ સમજતો નથી તે
પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોમા આસક્તચિત્ત થઈ આ અસાર સંસારમા જ ભ્રમણ
કરતો રહે છે, કલ્યાણ માર્ગનુ આરાધન નહિ કરવાના કારણે અસયમ જીવનમા
તે પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે અને સયમ જીવન ધારણ કરવાની વાત કહેવા
ઉપર તે દુરભિનિવેશવશવર્તી હોઈ તેના તરફ જરા પણ ધ્યાન આપતો નથી
તથા એવુ કાર્ય કરતો રહે છે કે જે કરવામા અનેક ત્રસ જીવોનો ઘાત થાય
છે તે વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

ટીકા—“ જીવિત રૂઢે પ્રમત્તાઃ ” રૂઢિ, રૂઢાસિન્ જીવિતે પ્રત્યરૂ વયાંડતિ-
ક્રમેડ્વપ્સયમજીવિતે, પ્રમત્તાઃ=વિપયકપાયે પ્રમાદવન્તો મવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ, પ્રમત્તો
રૂિ પદ્મજીવનિકાયોપમર્દને પ્રત્તતોડનેફાનર્યકરી વિવિધાં વિરૂદ્ધા સાવધાં ક્રિયાં
વિદધાતીત્યારૂ—“ સ રૂન્તા ” રૂઢિ સ=શબ્દાદિવિપયસુદ્ધઃ પ્રમાદી રૂન્તા=પૂર્વિચ્છ-
પ્તેજોપ્રાપ્તવનસ્પતિપ્રસાનાં પ્રાણિનાં નાશકઃ ‘ રૂેષ્ઠા ’ વનસ્પતિપ્રસૂતીનાં, કર્ણનાસિ-
કાવીનાં ષ, ‘ મેષ્ઠા ’ પૃથિવ્યાદિનિકાયાનાં, ‘ રૂમ્પયિતા ’ પ્રત્વિમેદનાદિના,
‘ વિરૂમ્પયિતા ’ ગ્રામપાતાવિકર્મણા, ‘ અપદ્રાવયિતા ’ વિપદશ્લાદિપ્રયોગેન મારકઃ,
‘ ઉગ્રાસક ’ ત્વોદ્ગ્રમ્લેપાદિનોદ્વેજકો રૂોકાનાં મચતીતિ સર્વેષ્ઠ યોજ્યમ્ ।

‘ જીવિરૂ રૂઢે જે ’ રૂત્યાદિ । રૂસ જીવન મેં જો પ્રમાદી બના રૂઢા રૂે
વરૂ ‘ યરૂ કાર્ય મેરે પૂર્વજેને નરૂો કિયા રૂે, રૂસે મેં કરૂંગા ’ રૂેસા સમસકર
ગ્રસ સ્થાવર જીવોં કા ઘાતક રૂોતા રૂે, રૂનકા રૂેવન કરનેચાલા રૂોતા રૂે,
રૂનકા મેદન કરનેચાલા રૂોતા રૂે, રૂનકા રૂુમ્પન કરનેચાલા રૂોતા રૂે,
વિરૂમ્પન કરનેચાલા રૂોતા રૂે, અપદ્રાવક રૂોતા રૂે, ઉગ્રાસક રૂોતા રૂે ।

જીવન રૂનકા રૂી સફલ રૂે જો રૂસ અસ્પજીવન મેં મી સંયમ રૂારા
અપના આત્મરૂિત કર રૂેતે રૂે । ષન્ય રૂે રૂન મરૂાત્માઓં કો જો વિપુલ
વિમૂતિ કે મોક્તા રૂોકર મી રૂસે જીર્ણ તૂણ કે સમાન રૂોરૂ વેતે રૂે,
રૂોરૂ અત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રસર રૂોજાતે રૂે, ચક્રવર્તિયોં યા તીર્થ-
કરોં કે પાસ કિસ વસ્તુકી કમી થી, રૂિનકા વેમવ અતુલ્ય થા, રૂરૂ
સ્વંરૂકી વિમૂતિકે જો મોક્તા થે, વેક્તા તથા રૂન્દ્ર રૂિનકી સેવા મેં સદા

જીવિરૂ રૂઢે જે ’ રૂત્યાદિ. આ રૂવનમાં રૂે પ્રમાદી બનેલ રૂે તે ‘ આ
કાર્ય મારૂ પૂર્વજેને કરૂલ નથી રૂોે રૂું કરૂીય ’ રૂોણ સમરૂને નલ સ્થાવર
રૂવેતે ઘાતક થાય રૂે, તેનુ રૂેવન કરવાયોગ થાય રૂે, તેનુ રૂેદન કરવાયોગ
થાય રૂે, તેનુ રૂુમ્પન કરવાયોગ થાય રૂે, વિરૂમ્પક થાય રૂે, અપદ્રાવક થાય રૂે,
ઉગ્રાસક થાય રૂે

રૂવન તેનુ રૂે રૂકેણ રૂે રૂે આ અગ્ર રૂવનમાં પજૂ સયમરૂાસ પોતાનુ
આત્મરૂિત કરૂી વે રૂે ષન્ય રૂે તે મરૂાત્મારૂોને રૂે વિપુલ વિમૂતિના રૂોક્તા
બનીને પજૂ તેને રૂુજૂતૂજૂની સમાન રૂેડી વે રૂે, અને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં
અગ્રસર થાય રૂે ચક્રવર્તિયોં અગ્ર તીર્થ કરૂીના પાસે કરૂ વસ્તુની રૂોા જતી,
રૂેને વેમવ અતુલ્ય રૂોતો. રૂે આ ની વિમૂતિના રૂે રૂોક્તા જતા રૂેવતા અને
રૂેડી રૂેની સેવામાં સદા ઉપસ્થિત રૂેવતા રૂોતા. રૂોેક રૂુજૂ મારૂ પજૂ રૂેવે સંધા-

અત્ર મૂળે પૂર્વે 'પ્રમત્તાઃ' ઇતિ વહુવચનપ્રસન્ને હન્તેત્યાદૌ સર્વત્રૈકવચનં તુ જ્ઞાત્યેકત્વવિશ્લેષયા વિજ્ઞેયમ્ । અનેકાનર્થકરક્રિયાપ્રદર્શનં ચ સંસારાભિષ્વજ્ઞપરઃ કાલાકાલસમુત્થાયી સતતં પરહનનાદિરૂપાં નાનાવિધાં ક્રિયાં કરોતીત્યર્થવોધનાયેતિ તાત્પર્યમ્ ।

ઉપસ્થિત રહેતે થે । એક ક્ષણ માત્ર મી જિન્હે સાંસારિક કષ્ટ કા અનુભવ નહીં હોતા થા, વે મી ઇસ સંયમ જીવન કી પ્રાપ્તિ કે લિયે ઉસે તૃણવત્ ત્યાગ કર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રગામી હુણ ।

યહ જાની હુઝ વાત હૈ કિ-સવ ભરત ચક્રવર્તી જૈસે નહીં હૈ । જહાં આરંભ ઔર પરિગ્રહ કા નિવાસ હૈ, વહાં શાન્તિમય જીવન નહીં, નિરાકુલતામય આત્મપરિણતિ નહીં, યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહીં, ઇન્દ્રિય-સંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જૈસી સુન્દર વસ્તુકે વહાં પર દર્શન નહીં । રાત્રિન આધિ-વ્યાધિ ઔર ઉપાધિ કે ભાર સે દબા હુઆ યહ પ્રાણી આત્મિક શાન્તિકે સચે નિર્મલ સ્રોત સે વશ્ચિત હી રહા કરતા હૈ-સિર્ફ ઝૂઠી કલ્પના સે હી અપને કો સુખી ઔર શાન્તિ કા ઉપભોક્તા માનતા રહતા હૈ । જહાં જિતના અધિક આરંભ હોગા વહાં ઉતના હી અધિક જીવોં કા ઉપમર્દન હોગા । આરંભ પરિગ્રહ કે સદ્ભાવ મેં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હી નહીં હો સકતી । અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિકા નામ હી પ્રમત્ત દશા હૈ । ઇસ પ્રમત્ત દશાકી નિવૃત્તિ, સર્વવિરતિરૂપ સંયમ કે અનુષ્ઠાન વિના નહીં હો સકતી !, ક્યોં કિ સંયમકે અનુષ્ઠાન મેં ત્રસ ઔર સ્થાવર

રિક કષ્ટનો અનુભવ કરેલ નથી તે પણ આ સંયમ જીવનની પ્રાપ્તિ માટે તેનો તૃણવત્ ત્યાગ કરી આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં અગ્રગામી થયા.

એ બાણેલી હકીકત છે બધા ભરત ચક્રવર્તી જેવા નથી ન્યા આરભ અને પરિગ્રહનો નિવાસ છે કે ત્યા શાન્તિમય જીવન નહિ નિરાકુલતામય આત્મ-પરિણતિ નહિ યતનાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહિ ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જેવી સુન્દર વસ્તુનું ન્યા દર્શન નથી રાત્રિ-દિવસ આધિ-વ્યાધિ અને ઉપાધિના ભારથી દબાએલો આ પ્રાણી આત્મિક શાન્તિના માયા નિર્મળ સ્રોતથી દૂર જ રહ્યા કરે છે ફક્ત બુઢી કલ્પનાથી જ પોતાને સુખી અને શાન્તિનો ઉપભોક્તા માનતો રહે છે ન્યા જેટલો અધિક આરભ થશે ત્યા તેટલું જ અધિક જીવોનું ઉપમર્દન થશે. આરભ પરિગ્રહના સદ્ભાવમાં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ જ બની શકતી નથી, અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિનું નામ જ પ્રમત્તદશા છે આ પ્રમત્તદશાની નિવૃત્તિ-સર્વવિરતિરૂપ સંયમના અનુષ્ઠાન વિના બની શકતી નથી, કારણ કે સંયમના અનુ-

જીવોકે ઉપમર્દન કા ત્યાગ નવકોટિસે હો જાતા હૈ ।

હસ સયમારાધન કે લિયે યહ નહીં કહા જા સકતા હૈ કિ-અમી સમય નહીં હૈ, સમય આને પર સંયમકા આરાધન કર લેંગે । બે તો પક્ષ પહાના લેકર સંયમારાધન સે વિમુક્ષ હો રહે હૈં, ડનકી યહ આત્માકી કમજોરી હૈ, જય તક યહ કમજોરી નહીં હટાઈ જાવેગી, તય તક અસંયમ જીવન સે છુટકારા મી નહીં મિલ સકતા હૈ । સંયમારાધન કે સમ્મુક્ષ હોને કે લિયે આત્મકમજોરી કો જાનને કી ઓર જાન કર ડસે દૂર કરન કી સક્ત આવશ્યકતા હૈ । હમ જાનતે હૈં કિ હમારે ઘરમેં સાંપ ઘુસાબેઠા હૈ પરંતુ જય તક ડસે હમ નહીં નિકાલ વેતે તય તક હમારા જાનના હમારે લિયે કિસ મતલબ કા ।

જીવન અત્ય હૈ । સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કી પ્રાપ્તિ હસ જીવકો અનન્ત માર હો ચુકી હૈ । સયોગ ઓર વિયોગ, યેદો હી નાટક સંસાર કે પર્વે પર હોતે રહતે હૈં । હમારે સાથ જો જન્મે યે બે બહે ગય, હમ મી કમી ન કમી બહે જાવેંગે, પરંતુ સર્વચિરતિ-સંયમારાધન કા અવસર હસ જીવ કો હાથ નહીં આયા । યદિ આયા હોતા તો-જો હમારા મલ મલમેં સંસાર મેં બહાર લગ રહા હૈ-બહ કમી કા વંદ હો જાતા, અતઃ જય જીવન

ધાનમા ત્રય અને સ્થાવર ઇવેના ઉપમર્દનનો ત્યાગ નવ કોટિથી થઈ બચ છે

આ સંયમારાધન માટે જોમ કહેવામા નથી આવતુ કે કમલુ સમય નથી પણ સમય આવશે ત્યારે સંયમનુ આરાધન કરી લેશુ એ તો જોઈ બહાનુ માત્ર છે. જે સંયમનુ બહાનુ હઈ સંયમારાધનથી વિમુખ થઈ બચ છે તે તેના આત્માની કમજોરી છે. આત્મીયે જો કમજોરી દૂર કરવામા નહિ આવે ત્યાંસુધી અસંયમ જીવનથી છુટકારો પણ મળી શકતો નથી.

સંયમારાધનસ મુખ્ય હોવા માટે આત્મકમજોરી બાધુષાની અને બાધીને તેને દૂર કરવાની સક્ત આવશ્યકતા છે. અમે બાધીને બીજે કે અમારા પરમા સાપ કુલેદો છે પરંતુ અ્યાં સુધી અમે તેને નહિ બહાર નિકાલીએ ત્યાં સુધી અમારું બાધુપણું નહોતું છે.

જીવન અત્ય છે. સ્ત્રી પુત્રાદિકોની પ્રાપ્તિ આ જીવને અનતવાર થમેલ છે. સંયોગ અને વિયોગ, જો બે સંસારના પર્વાપર નાટક થતા જ રહે છે. અમારી સાથે જે જન્મ્યા હતા તે આલી ગયાં, અમે પણ ક્યારેક માર્યા જઈશુ, પરંતુ સર્વચિરતિ-સંયમારાધનનો અવસર આ જીવને હાથ નહિ આવ્યો. હાથ આવ્યો હોત તો જે અમારા બોલોબાનના સંસારમાં બહાર જાગી રહ્યા છે તે ક્યારના

ક્ષણભંગુર હૈ તો उसके द्वारा संयमकी जितनी भी आराधना हो सके शुद्ध मन, वचन और काय से कर लेनी चाहिये, इसी में बुद्धिमान्नी है। शुद्ध आराधित थोड़ा भी संयम अनन्त कर्मों की निर्जरा का कारण माना गया है। जिस प्रकार संतप्त लोहेका गोला पानीको चारों ओर से खींचता है, उसी तरह असंयम जीवन भी विषयकषायों के द्वारा चारों ओर से कर्मणवर्गणाओंको खींचकर उन्हें कर्मरूप से परिणत कर उनसे लिस होता रहता है। असंयमी कर्मणवर्गणाओंको खींच उन्हें कर्मरूप में क्यों परिणमाता है ? इसका उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—

‘जीविए इह जे पमत्ता से हंता’ इत्यादि।

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત હો રહી છે—અંજલિ મેં રાખે હુએ જલ કી તરહ ક્ષણ ૨ મેં આયુકર્મ કી સ્થિતિ ઘટ રહી છે—ફિર મી પ્રાણી અસંયમ-જીવનવાલા હી બના હુઆ છે, વિષય ઓર કષાયોં મેં લવલીન હો રહા છે, રાતદિન વિકથા ઓર કષાય એવં પાંચઇન્દ્રિયોં કે વિષય સેવન કરને મેં હી જુટા હુઆ છે। પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા હોતા છે—સકષાય યોગવાલા હોને સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દન કરને મેં હોતી રહતી છે। ઉસે હસ બાતકા જરા મી વિચાર નહીં આતા કિ મેરી

પણ બધ થઈ જાત માટે ત્યારે જીવન ક્ષણભંગુર છે તો તે દ્વારા સંયમની જેટલી પણ આરાધના થઈ શકે તેટલી શુદ્ધ મન-વચન-કાયાથી કરી લેવી જોઈએ. તેમા જ બુદ્ધિમાની છે શુદ્ધ આરાધિત થોડો પણ સંયમ અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ બનાવે છે જે પ્રકારે સતત લોહનો ગોળો ત્યારે બાબુથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રકારે અસંયમ જીવન પણ વિષય કષાયોદ્વારા ત્યારે તરફથી કામણ વર્ગણાઓને ખેંચીને તેને કર્મરૂપ પરિણમન કરી તેનાથી લિપ્ત થઈ જાય છે અસંયમી કામણ વર્ગણાઓને ખેંચી તેને કર્મરૂપ શા માટે પરિણમાવે છે ? તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—‘જીવિયે इह जे पमत्ता से हंता’ इत्यादि

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત થઈ રહ્યું છે, અજાણીમા રાખેલા પાણી માફક ક્ષણ ક્ષણમા આયુકર્મની સ્થિતિ ઘટી રહી છે તો પણ પ્રાણી અસંયમ જીવનવાળા જ બની રહે છે, વિષય અને કષાયોમા જ લવલીન થઈ રહે છે રાતદિન વિકથા અને કષાય અને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય સેવન કરવામા જ મગ્યા રહે છે પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા થાય છે સકષાય યોગવાલા હોવાથી જ તેની પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાયનું ઉપમર્દન કરવામા જ બની રહે છે તેને આ વાતનો જરા પણ વિચાર આવતો નથી કે—

इस प्रवृत्ति से ब्रह्म अथवा स्थावर जीवोंका घात हो रहा है। अनेक अनर्पकारी साधक क्रियाओं को बह करतें हुए नहीं हिचकता है। इस लिये वह प्रमादी व्यक्ति शब्दादि विषयों में गूढ़ बनकर उन-ब्रह्म स्थावर जीवोंका हनन करनेवाला होता है। जहां अयतनापूर्वक प्रवृत्ति है वहां प्रमत्तयोग होने से हिंसा होती ही है, इसलिय प्रमादी व्यक्ति 'इता' कहा जाता है। जो रातदिन अपनी प्रवृत्ति को कुत्सित करनेवाली क्रियाओं के सेवन में लगाता रहता है वह एक प्रकार से उस तर्क से इतना विवेकशून्य हो जाता है कि फिर उसे उस काम से जरा भी घृणा या संकोच नहीं होता, दया जैसी वस्तु उसके हृदय में देखने को ही नहीं मिलती। जिस प्रकार ठक २ शब्द होते रहने पर भी ठठरेका कबूतर निर्भय होकर अपने स्थान पर बैठा रहता है अर्थात् उस जगह उसे बैठने में जरा भी संकोच नहीं होता है, उसी प्रकार जो बार बार हिंसा-भूद-आदि पाप आसक्तों के सेवन करने में तत्पर रहते हैं वे इतन व्यापक और उस कार्य के करने में इतने विवेकशून्य बन जाते हैं कि उन कामों को करते हुए जरा भी नहीं लजाते, या उनके किये बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता। यदि वे पाहुर में उस तरह की प्रवृत्ति न भी करें तो भी उनकी मानसिक प्रवृत्ति

મારી આ પ્રવૃત્તિથી બ્રહ્મ અને સ્થાવર જીવોનો ઘાત થઈ રહ્યો છે અનેક અનર્પકારી પ્રપંચ ક્રિયાઓને કરતા જરા પણ ધડકતો નથી. માટે તે પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોમાં ગૂઢ બનીને આ બ્રહ્મ સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરવાવાળો બને છે, જ્યાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ છે ત્યાં પ્રમત્ત યોગ હોવાથી હિંસા થયા કરે છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ 'ઈતા' કહેવાય છે જે તત્કલિપ્ત પોતાની પ્રવૃત્તિને કુત્સિત કરવાવાળી ક્રિયાઓના સેવનમાં લગાડતો રહે છે તે એક પ્રકારે એક તરફથી એવો વિવેકશૂન્ય થઈ જાય છે કે તેને તે કામથી જરા પણ બૂણા અગર સંકોચ થતો નથી. કયા જેવી વસ્તુ તેના હૃદયમાં દેખવામાં આવતી નથી. જે પ્રકારે જા જ શબ્દ થવા છતાં પણ કસાસની જગ્યા પાસેનું કણુતર નિર્ભય બની પોતાના સ્થાન પર જ બેસી જ રહે છે. અર્થાત્ તે જગ્યા ઉપર બેસવામાં તેને જરા પણ સંકોચ થતો નથી, તે પ્રકારે જે વારંવાર હિંસા, ભૂદ, વ્યાધિ પાત્ર વ્યાધિવોનું સેવન કરવામાં તત્પર રહે છે તે એટલા હિંસાશીલ અને તે કસી કરવામાં વિવેકશૂન્ય બની જાય છે કે તેવા કામો કરવામાં તે જરા પણ લાજ મર્યાદા સખતો નથી, અગર તેવા કામ કર્યા વિના તેને ચેન પડતું નથી. કહાય તે બહારમાં તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ન કરે તો પણ માનસિક પ્રવૃત્તિ તેની સુતાં ઉઠતાં બેસતાં

સોતે ઝઠતે વૈઠતે ઝસ તરફ સચેત બની રહતી છે. શાસ્ત્રકારોં ને હિંસા કે મુખ્ય દો ભેદ કિયે હૈ-૧ દ્રવ્યહિંસા ઓર ૨ ભાવહિંસા. પ્રાણિયોં કે અપનેર યોગ્ય પ્રાણો કા વિયોગ કરના દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અન્નઃકરણકી કલુપિત વૃત્તિ કરના ભાવહિંસા છે. પર્યાપ્તાવસ્થા મેં એકેન્દ્રિય જીવોં કે ૪ પ્રાણ હોતે હૈ, દ્વીન્દ્રિય જીવોં કે ૬, તેન્દ્રિય જીવોં કે ૭, ચતુરિન્દ્રિય જીવોં કે ૮, અસંજ્ઞિ પચેન્દ્રિય જીવોં કે ૯, ઓર મંજ્ઞિ પચેન્દ્રિય જીવોં કે ૧૦. એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ ઓર વાદર કે ભેદ સે દો પ્રકાર કે હોતે હૈ. સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જો દ્રા લોક મેં સર્વત્ર વ્યાપ્ત હૈં ઝનકા કિસીં ખી નિમિત્ત સે ઘાત નહીં હોતા હૈ, વાદર એકેન્દ્રિય જીવોંકા હી ઘાત હોતા હૈ. અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ અપની પ્રવૃત્તિ સે પૃથિવી-કાયિક, અષ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક ંવ વનરપતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોં કા તથા દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કા ઘાતક માના ગયા હૈ. રાગાદિક ભાવોં કા ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામે રહતા હૈ, ઝનકે વિના કોઈં ખી પ્રાણી જીવોં કે ઘાત કરને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોતા, અતઃ ઝનકી ઉદ્રેકતા હી ભાવહિંસા હૈ. અથવા રાગાદિકોં કી ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા હૈ, અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ વાદરમેં હિંસાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્ત ન ખી હો તો ખી વહ

તે તરફ જ અચેત બની રહે છે શાસ્ત્રકારોં હિંસાના મુખ્ય બે ભેદ કહ્યા છે ૧ દ્રવ્યહિંસા, અને ૨ ભાવહિંસા પ્રાણીઓના પોતપોતાના યોગ્ય પ્રાણોના વિયોગ કરણુ તે દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અતઃકરણની કલુપિત વૃત્તિ કરવી તે ભાવહિંસા છે પર્યાપ્તાવસ્થામા એકેન્દ્રિય જીવોને ૪ પ્રાણ હોય છે, બેઈન્દ્રિય જીવોને ૬, તેન્દ્રિય જીવોને ૭, ચોરેન્દ્રિય જીવોને ૮, અમ જી પચેન્દ્રિય જીવોને ૯ અને સર્જી પચેન્દ્રિય જીવોને ૧૦

એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ અને બાદરના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે, સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જે આ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેના કોઈ પણ નિમિત્તથી ઘાત થતો નથી બાદર એકેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત થાય છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ પોતાની પ્રવૃત્તિથી પૃથિવીકાયિક, અષ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનરપતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોનો તથા બેઈન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોનો ઘાતક માનેલ છે રાગાદિક ભાવોનો ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામાં રહે છે તેના વિના કોઈ પણ પ્રાણી જીવોનો ઘાત કરવામા પ્રવૃત્ત નથી થતો. માટે તેની ઉદ્રેકતા જ ભાવહિંસા છે. અને રાગાદિકોની ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા છે માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ બહારમા હિંસાદિક કાર્યોમા પ્રવૃત્ત ન હોય તો પણ તે પ્રમત્ત હોવાથી હિંસક માનવામા

કિમર્થં ધૈતાન્ વ્યાપારાન્ વિદધાતીત્યાહ—‘અકુર્તં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ’
 इति, यदन्यै पूर्वैः सङ्गिर्न कर्तुं=नानुष्ठितं तत्सर्वं करिष्यामि=विधास्यामि, इति मन्य-
 मानः=स्वीकुवाण सन् इननादिकर्मकता भवति । पुत्रकलत्रासक्तोऽप्राप्तपिबिष-
 विमवोऽनर्थकरं कर्म करिष्यामीति निश्चित्य इननादौ प्रवर्तते ।

પ્રમત્સ હોને સે હિંમક માના જાતા છે । ફસીલિયે પ્રમાવી કો શાસ્ત્રકારોને
 હિંમક કહા છે । પ્રમાવી જિસ પ્રકાર પાષાન્દ્રિયોં કે ચિપય મેં લોહુપી બન
 કર ત્રસ સ્વાવરોં કા ઘાત કરતા છે उसी प्रकार वह उनका छेदन भेदन
 भी करता है । फिर वह लुम्पयिता—किसी की गाठ काटना, खिसा क-
 रना आदि कार्य करता है, बिलुम्पयिता—ग्रामघातादि कार्य करता है,
 अपव्रावयिता—विष दास्यादि के प्रयोग से किसीको मारता है, उत्प्रास-
 यिता—कंकर पत्थर फेंकर किसीको डराता है । अनेक अनर्थों को करनेवाली
 इनन-छेदन-भेदन आदि क्रियाओं का जो यहाँ पर प्रदर्शन किया है
 उसका अभिप्राय सिर्फ इतना ही है कि जो संसार में ही फँसा है वह
 कालाकाल के ज्ञान से रहित होकर पर जीवों के विषय में अनेक अनर्थोंको
 पैदा करनेवाली अनेकप्रकार की घातादिक क्रियाओं को निरन्तर करता
 रहता है । शका—अनर्थकारी क्रियाओं को यह प्राणी क्यों करता है !

उत्तर—“ अकुरुतं करिष्यामीति मन्यमान ” अर्थात्—‘जो पहिले
 अन्य पूर्वजों ने कार्य नहीं किये हैं वे सब मैं करूँगा’ इस अभिप्राय के
 बशवर्ती होकर ही यह प्राणी उन अनर्थोत्पादक क्रियाओं के करने में

આવે છે નાટે પ્રમાવીને શાસ્ત્રકારોને હિંમક કહ્યો છે, પ્રમાવી ને પ્રકારે પાવ
 ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોહુપી બનીને ત્રસ સ્વાવરોના ઘાત કરે છે તે પ્રકારે તે
 તેનું છેદન ભેદન પણ કરે છે, પછી તે લુમ્પયિતા-કોઈની ગાઠ કાપવી, ખિસ્કો
 કાઢવું, આદિ કાર્ય કરે છે બિલુમ્પયિતા-ગ્રામઘાતાદિ કાર્ય કરે છે અપવ્રાવયિતા
 -વિષ યાસ્યાદિકોના પ્રયોગથી કોઈને મારે છે. ઉત્પ્રાસયિતા-કંકર પથ્થર ફેંકીને
 કોઈને ડરાવે છે, અનેક અનર્થોને કરવાવાળી, કબલું, છદલું, લેહલું, આદિ ક્રિયા-
 ઓનું ને આ ઠેકાણે પ્રદર્શન કર્યું છે, તેના અભિપ્રાય ફક્ત એટલો જ છે કે
 ને સંસારમાં જ રહેલા છે તે કાલાકાલના જ્ઞાનથી રહિત બની પર છુઓ
 વિરે અનેક અનર્થોને પેદા કરવાવાળી અનેક પ્રકારની ઘાતાદિક ક્રિયાઓને નિર-
 તર કરતા રહે છે શકા—અનર્થકારી ક્રિયાઓને આ પ્રાણી કેમ કરે છે ?
 ઉત્તર—“ અકુર્તં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ”

અર્થાત્ ‘જે પહેલાના અન્ય પૂર્વજોએ કાર્ય નથી કર્યું તે બધું હું કરીશ.
 આવા અભિપ્રાયને વશવર્તી બનીને તે પ્રાણી તેવા અનર્થોત્પાદક ક્રિયાઓને કરે

યદ્વા-યદન્યૈઃ કૈરપ્યાર્થયૃદ્ધોદ્ધાનાદિકં પૂર્વં ન કૃતં તત્સર્વં કરિષ્યામીતિ મન્ય-
માનઃ પ્રયતત્ત્વં ઇતિ તાત્પર્યમ્ । સતતં વ્યગ્રો ભૂત્વા નાનાવિધશસ્ત્રોપધાતપ્રવૃત્તો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । યદ્ સંસારમેં ફંસા હૈ-સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ વના હુઆ
હૈ । ઉનકે નિર્વાહ કે લિયે સર્વપ્રથમ દ્રવ્યકી ઇસે જસ્તરત્ત્વં હોતી હૈ પરન્તુ
નિર્વાહ લાયક સાધનોંકો કરતે હુઅ્ ભી મનમાના દ્રવ્ય ઇસે પ્રાપ્ત નહીં
હોતા હૈ, ઇસલિયે ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે યદ્ ન્યાય અન્યાય માર્ગકા
વિચાર ન કર ચેન કેન પ્રકારેણ દ્રવ્ય કે સંગ્રહકેલિયે હનનાદિ ક્રિયાઓં
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” ઇસકા યદ્ ભી અર્થ હોતા હૈ કિ
‘જો મકાન વગેરહ, અથવા વગીચા વગેરહ હમારે પૂર્વજોને નહીં કરવાયે
ઉન્હેં અય મેં કરવાઝંગા’ જેસા સોચ કર જય વદ્ ઉનકી તૈયારી કરાને
મેં પ્રયત્નશીલ હોતા હૈ ઉસ સમય જિસ સ્થાન પર ઇસે વગીચા વગેરહ
કી તૈયારી કરાની હૈ ઉસ સ્થાન કી વદ્ સફાઈ કરાને મેં પ્રવૃત્તિ હોતા હૈ ।
યદિ ઉસ સ્થાન પર કોઈ ઝાડી વગેરહ યદ્ સ્વચ્છ હોતી હૈ તો યદ્ ઉસે કટ-
વાતા હૈ, અથવા જો શક્ય હોતા હૈ તો ઉસે સ્વયં ભી કાટતા હૈ । ઇસ
પ્રકાર યદ્ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ વનકર અકૃત કે કરને
મેં લગ જાતા હૈ, અતઃ ઇસ સ્થિતિ મેં વદ્ પડ્જીવનિકાય કા ધાનક
હોતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

વામા પ્રવૃત્તિ થાય છે તે સમારમા ઇસેલા છે સ્ત્રી-પુત્રાદિકોમા ગૃહ્ બનેલા છે.
તેના નિર્વાહ માટે સર્વ પ્રથમ દ્રવ્યની તેને જરૂરત પડે છે, પરંતુ નિર્વાહલાયક
સાધનોને કરતાં છતાં પણ મનમાન્યુ દ્રવ્ય તેને પ્રાપ્ત થતું નથી માટે તેની
પ્રાપ્તિ માટે તે ન્યાય અન્યાય માર્ગનો પણ વિચાર ન કરીને ચેન કેન પ્રકારેણ
દ્રવ્યના સંગ્રહ માટે હણવાદિ ક્રિયાઓમા પ્રવૃત્તિ કરે છે

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે-‘જો મકાન
વિગેરે અથવા બગીચા વિગેરે અમારા પૂર્વજોએ નહિ બનાવ્યા તે હું બનાવીશ’
એવો વિચાર કરીને ન્યારે તે તેની તૈયારી કરાવવામા પ્રયત્નશીલ થાય છે તે
વખતે જે સ્થાન પર તેને બગીચા વિગેરેની તૈયારી કરાવવાની છે તે સ્થાનની
તે સફાઈ કરાવવામા પ્રવૃત્તિ થાય છે કદાચ તેવા સ્થાનપર કોઈ ઝાડી વિગેરે આડું
બડું હોય તો તેને તે કપાવી નાખે છે, અથવા જે શક્ય હોય છે તેને ખોતે
કાપે છે આ પ્રકારે આ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોમા ગૃહ્ બની અકૃત કરવામા
લાગી બન્ય છે માટે આ સ્થિતિમા તે પડ્જીવનિકાયનો ધાનક થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

एवं इननादि प्रकारानुचितव्यापारकरणोपतो ब्रीषान्तरगमनेऽपि समग्रकार्य-
साधनभूतमभूतधनाल्लभाद्विषयवेत्ता किं करोतीति दर्शयति—“जेहि वे”—इत्यादि॥

मूळम—जेहिं वा सद्धिं संवसइ ते वा ण एगया नियगा
ते पुंवि पोसेंति, सो वा ते नियगे पच्छा पोसिज्जा, नाल ते
तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं नाल ताणाए वा
सरणाए वा ॥ सू० ६ ॥

छाया—यैर्वा सद्धिं संवसति, ते वा सद्ध एकदा निजकास्तं पूर्वं पोषयन्ति,
स वा तान निजकान् पश्चात्पोषयति नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, स्वमपि
तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘यैर्वेति’ यैः=मातापित्रादिभिः सद्धिं संवसति=वेष्णा निवसति ते सद्ध=
निश्चयन, एकदा=वाक्यं वयसि निजकाः=स्वकीया मातापित्रादयः, तं=पुत्रादिकं
पूर्व=वाक्यावस्थायां पोषयन्ति, पा=शब्दोऽप्यर्थे स वा=सोऽपि तान्=मातापित्रादीन्,
निजकान्=भ्रातृमीयान्, पश्चात्=द्विदावस्थायां भनादिना पापयति किन्तु ते=माता-
पित्रादयः तव नालं त्राणाय वा शरणाय वा, स्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय
वा, ऐहिक-पारत्रि-दुःखोदयेषु न कोऽपि पोष्यः पोषको वा कस्यापि त्रान
शरणभूतो भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

इस तरह इननादि प्रकारवाले अनुचित व्यापारों के करने में उद्यत
यह प्राणी धन कमाने की इच्छा से अन्य दूसरे ब्रीषों में भी जाता है, परन्तु
यदि वहाँ पर भी समग्र कार्यका साधनभूत प्रभूत धन अर्थात् यथेच्छ
धनका लाभ जय इसे नहीं होता है तब यह अतिशयसे दुस्स्वित्त होता है
और इस परिस्थिति में यह क्या करता है सो प्रकट करते हैं—

‘जेहिं वा सद्धिं संवसइ’ इत्यादि । अर्थ स्पष्ट है ।

આવી રીતે હજુવાના પ્રકારવાળા અનુચિત વ્યાપારો કરવામાં પ્રયત્નથી
તે પ્રાણી ધન કમાવાની ઇચ્છાથી બીજા અન્ય બ્રીષોમાં પણ જાય છે, પરંતુ કદાચ
ત્યાં પણ સમગ્ર કાર્યનું સાધનભૂત પ્રભૂત ધન અર્થાત્ યથેચ્છ ધનને લાભ અપરે
ત્યાં પણ મળતો નથી તો તે યજ્ઞો ખિન્ન થઈ જાય છે, અને આ પરિસ્થિતિમાં
તે શું કરે છે તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—‘જેહિં વા સદ્ધિ સંવસઈ’ ઇત્યાદિ
અર્થ ખુલે છે.

વિશેષાર્થ—જિન માતાપિતા આદિકોં કે સાથ યહ રહતા હૈં વે इसकी वाल्य अवस्था में सर्वप्रथम सेवा-चाकरी करते हैं, इसकी सहायता करते हैं, इसका पालन पोषण करते हैं। वह भी जब युवावस्था आदि से समृद्ध हो जाता है तब इन अपने मातापिता आदि की वृद्धावस्था में धन आदि से सहायता, सेवा, या इनका पालन पोषण करता है। इस प्रकार पारस्परिक पोष्यपोषक भाव होने पर भी यह उनकी रक्षा के लिये, अथवा उनको शरण देने के लिये समर्थ नहीं होता है, वे भी इसकी रक्षा के लिये, अथवा इसके शरण देने के लिये समर्थ नहीं होते हैं।

સંસાર કી યહ રીતિ હૈ—પ્રત્યેક પ્રાણી અપને ૨ કુટુંબિયોં કી—સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કી મોહાધીન હો હરતરહ સે સેવા શુશ્રૂષા સંરક્ષણ પાલન પોષણ કિયા કરના હૈ। યહ વૃત્તિ સિર્ફ મનુષ્યોં મેં હી નહીં હૈ, પશુ-પક્ષિયોં તક મેં ભી ઇસી પ્રકાર કી પાઈ જાતી હૈ। વે ભી ઇષ્ટ કે સંયોગ મેં હર્ષાંતે હૈં ઓર ઉનકે વિયોગ મેં દુઃખી હોતે હૈં। જૈસે ચિડિયા ઘોસલે મેં રહતી હૈં ઓર વચ્ચાવચ્ચી દેતી હૈં, જવ વાહર સે રાના લેકર આતી હૈં તવ ઉસકે છોટે ૨ વચ્ચે ઉસે દેખતે હી ચૈ—ચૈ કર વાહર નિકલતે હૈં ઓર ઉસકે આસ પાસ છુદક ૨ કર ઉસકી ઓર અપની ૨ ચંચુ ગ્વોલકર

વિશેષાર્થ—જે માતાપિતા આદિની સાથે તે રહે છે તે તેની બાલ્ય અવસ્થામાં અર્થ પ્રથમ સેવા ચાકરી કરે છે તેની સહાયતા કરે છે, તેનું પાલન-પોષણ કરે છે, તે પણ ન્યાયે યુવાવસ્થા આદિથી અમૃદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે પોતાના માતાપિતા આદિની વૃદ્ધાવસ્થામાં ધન આદિથી સહાયતા, સેવા, અને તેમનું પાલન-પોષણ કરે છે આ પ્રકારે પારસ્પરિક પોષ્ય-પોષક ભાવ હોવા છતાં પણ તે તેમની રક્ષા માટે કે શરણ દેવામાં સમર્થ થતા નથી, તેમજ તેઓ પણ તેની ગદા અને શરણ દેવામાં અસમર્થ બને છે

મસારની એ રીતિ છે કે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતપોતાના કુટુંબીઓની સ્ત્રી-પુત્રાદિકોંની મોહાધીન થઈ દરેક પ્રકારથી સેવા, સુશ્રૂષા, સંરક્ષણ પાલન પોષણ કર્યા કરે છે આવી વૃત્તિ ફક્ત મનુષ્યોમાં જ છે તેમ નહિ પણ પશુપક્ષીઓમાં પણ છે તેમ દેખવામાં આવે છે તેઓ પણ ઇષ્ટ સંયોગમાં હર્ષ પામે છે અને તેના વિયોગમાં દુઃખી થાય છે જેમ ચકલીઓ માળામાં ગહે છે અને બચ્ચા બચ્ચી દે છે, અને ન્યાયે બહારથી ખાવાનું લઈ આવે છે ત્યારે તેના નાના નાના બચ્ચા તેને દેખતા જ ચૈ—ચૈ કરી બહાર નીકળે છે અને તેની આસપાસ કુદવા માડે છે અને તેની તગ્દ પોતપોતાની ચાચ ખોલીને બેઠી જાય છે તે પોતાની ચાચથી

યથા સ્વજનાદિર્ન તથા શ્રાણાય પ્રમવતિ તથૈવ કલ્પસમ્પાદિતં સુરસિતં વનમપિ ન શ્રાણાયતિ દર્શયતિ—“ઉવાઙ્મે”-ત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉવાઙ્મેયસેસેણ વા સનિહિસનિચઓ કિજ્ઞહ્મ્ ઇહ મેગેસિં અસજયાણ મોયણાણ, તઓ સે યગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્ઞતિ, જેહિં વા સદ્ધિં સવસહ્મ્ તે વા ણ યગયા નિયગા ત પુર્ધિં પરિહરતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિહરિજ્ઞા, નાલ તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમપિ તેસિં નાલ તાણાણ વા સરણાણ વા ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—ઉપાદિતશ્લેષેણ વા સન્નિધિસંનિચય ક્રિયતે, ફ્રૈકેપામસયતાનાં મોન નાય, તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પન્નતે, યૈર્વાં સાર્દ્ધં સવસતિ તે વા સહ્મ્ એકદા નિજકાસ્તં પૂર્ણં પરિહરન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિહરતિ, નામં તે તવ શ્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેર્વાં નામં શ્રાણાય વા શરણાય વા ॥ સૂ. ૭ ॥

બેઠ જાતે હૈં । વહ અપની વંશુ સે ફનકી વંશુ મેં કુહ સ્વાના ઘર દેતી હૈં, વે સ્વા જાતે હૈં, પદે સુશ હોતે હૈં ।

જય પશુપક્ષિયોં કી યજ્ઞ પરિસ્થિતિ હૈં તો ફિર મનુષ્ય જો સમ જ્ઞવાર પ્રાણી માના ગયા હૈં ઉસકી અપને ઇષ્ટ વંશુ જનોં કે—પુત્રાદિકોં કે પાલન પોષણ કરને કી ધૃત્તિ સયસે યજ્ઞ કર હો ઇસમેં કોઈ આશ્ચર્ય જૈસી પાત નહીં, ફિન્તુ ઇહલોક પરલોક સમ્યધી દુઃસ્વોં કા ઉદય હોને પર નથે તેરે ગ્રાણ ઓર શરણ હોતે હૈં ઓર ન તૂં ઉનકેલિયે ગ્રાણ ઓર શરણ હો સકતા હૈં ॥ સૂ. ૭ ॥

તેની આંબમા કાઈક ખાવાનુ ધરે છે તે તેઓ ખાઈ લાય છે અને યજ્ઞ ખુશ થાય છે

અમારે પશુ પક્ષિઓની આ પરિસ્થિતિ છે તો પછી મનુષ્ય તો સમજદાર યજ્ઞિ માનવામા આવે છે તેને પોતાના હજુ બધુ જનોને, પુત્રાદિકોને પાળવામા ધૃત્તિ બખાધી વધારે કોઈ શકે તેમા કોઈ આશ્ચર્યની વાત નથી. પરંતુ આલોક પરલોક સબધી દુઃખોને ઉદય થવાધી નથી તુ તેમને યજ્ઞ અને શસ્ત્ર દેવામા સમર્થ થતો, અને નથી તેઓ તને યજ્ઞ અને શસ્ત્ર દેવામા સમર્થ થતા ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘ઉપાદિતે—’ત્યાદિ ઇહ=સંસારે એકેપાં=કતિપયાનામ્, અસંયતાનાં=ગૃહસ્થાનાં સન્નિધિસંનિચયઃ=સન્નિધેર્વિદ્યમાનધનસ્ય સંનિચયઃ=એકત્રીકરણં, યદ્વા—સંનિચયો=વાહુલ્યમ્, ઉપભોગ્યધનસમૂહ इति યાવત્, ઉપાદિતશેષેણ=ઉપાદિતસ્ય=ઉપમુક્તસ્ય શેષેણ=અવશિષ્ટભાગેન ભોજનાય=ભોજનમુપભોગસ્તસ્મૈ=તદર્થં ક્રિયતે । યદ્વા—અસંયતાના—મિત્યત્રાર્પત્વાત્તૃતીયાર્થે પઠ્ઠી, તેન ચોપાદિતશેષેણ સદ્ગ્રહલિપ્તુભિઃ કૈરપ્યસંયતૈર્નાનાવિધસાવદ્યક્રિયોપાર્જિતમનર્થજનકં ધનં સમ્પાદ્ય ભવિષ્યત્કાલે કુડુમ્બપોષણાય સ્વોપભોગાય વા ક્રિયત इत्यર્થઃ । સંસારમૂર્ચ્છિતો ગૃહસ્થો ભવિષ્યત્કાલે ઉપભોગાર્થં ધનસંચયં કરોતીતિ ભાવઃ । કિન્તુ સોઽપિ ધનસંચયો ન તસ્યોપભોગાયેત્યાહ—‘તતઃ’ इत्यादिना, તતો=ધનસંચયાનન્તરમુપભોગકાલ इति યાવત્, તસ્યોપભોક્તુરેકદા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવનિમિત્તપ્રકટવેદનીયકર્મોદયે ‘રોગ-સમુત્પાદાઃ’ રોગાણા=કાસશ્વાસરાજયક્ષ્મકુષ્ઠાર્શાદીના સમુત્પાદાઃ=પ્રાદુર્ભાવાઃ

૧ ઉપપૂર્વકાત્ ‘અદ્’-ઘાતો. સ્વાર્થેણિચિત્ત ।

જિસ પ્રકાર સ્વજન વગૈરહ્ ઇસ જીવકે રક્ષક નહીં હો સકતે હૈં ઉસી પ્રકાર કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન મી ઇસકા રક્ષક નહીં હોતા હૈ ઇસી વાતં કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘ઉવાહ્યસેસેણ વા’ इत्यादि । ઇસ સંસાર મેં કિતનેક અસંયત સંસારી જીવ અપને ઉપભોગ કે લિયે નાના પ્રકાર કી સાવદ્ય ક્રિયાઓં દ્વારા અનર્થકારી ધનકા ઉપાર્જન કર રાખને પીને સે અવશિષ્ટ ધનકા સંચય કરતે હૈં ઓર ઉસકા ઉપભોગ કરતે સમય ઇચ્છાનુકૂલ આહાર વિહાર કરતે હૈં, પરન્તુ જવ અસાતા કા ઉદય આતા હૈ તવ ઉનકે શરીર મેં કાસ—શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । ઇસ અવસ્થા મેં ઇસકે નેત્ર ઓર નાસિકા સે પાની ગિરને લગતા હૈ, કુષ્ઠ

જે પ્રકારે સ્વજન વિગેરે આ જીવના રક્ષક નથી બની શકતા તે પ્રકારે કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન પણ તેનુ રક્ષક બનતુ નથી આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—

‘ઉવાહ્યસેસેણ વા’ इत्यादि—આ સંસારમા કેટલાક અસંયત સંસારી જીવ પોતાના ઉપભોગ માટે નાના પ્રકારની સાવદ્ય ક્રિયાઓદ્વારા અનર્થકારી ધનનુ ઉપાર્જન કરી ખાવા—પીવાથી અવશિષ્ટ ધનનો સચય કરે છે, અને તેનો ઉપભોગ કરી તે સમય ઇચ્છાનુકૂળ આહાર વિહાર કરે છે, પરન્તુ જ્યારે અશાતાનો ઉદય આવે છે ત્યારે તેના શરીરમા કાસ શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે આ અવસ્થામા તેના નેત્ર અને નાસિકાથી પાણી નીકળવા લાગે છે.

સમુત્પદ્યત=જાય તે, ધનાપમાને માનવાનાં સ્વચ્છાહારક્રીડાવિના શ્રદ્ધિતિ ધાતુ
વૈપમ્યોદયાભાનાવિષરોગા મવન્તીતિ માવ ।

તત્ત્વિં મવતીત્યાહ-‘યૈષા સાર્દ’-મિત્યાદિ । યૈ=પુત્રકલપ્રાવિભિં સાર્દ
સક્ષતિ ત વ પચ નિમજ્જા=આત્મીયા પચદા=રોગામિમચ પૂર્વે=પ્રથમ પરસ્પરરોગ-
સંસર્ગમયાત્ તે ગમ્યન્નેત્રનાસિકં ત્રિશીર્ષપાણિપાદં ગગિર્ણ પશ્ચિગન્તિ । કદાચિત્
સ વા=સોડપિ પશ્ચાત્ તાન્ નિમજ્જાન્=આત્મીયાન્ પુત્રકલપ્રાદીન્ પરિગતિ, કિન્તુ યદિ
કથચ્ચિત્તે શુશ્રૂષણપરા અપિ ન તવ રક્ષકા, નાપિ તેષા સ્વ રક્ષક, દર્શિક-પારમિક-
દુ=સ્વવિમાચનાય પરસ્પર સમયા ન મવન્તીતિ માવ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યાવદ્દાર્ષિક્યાત્રિક નાયાતં તાવન્તેવ શ્રુતચારિત્રાદિસ્પષ્ટણે ધર્મે યસ્મ કર્તવ્ય
इति दर्शयति-‘ एवं જાણિતુ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂષ્મ-એવ જાણિતુ દુઃસ્વ પત્તેય સાય, અણમિક્તત ચ સ્વહ
વય સપેહાપ, સ્વળ જાણાહિ પડિયા । ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હત્યા-એવં જ્ઞાત્વા દુ સ્વ પ્રત્યકં સાતમ્, અનમિક્તાન્તં ચ સ્વહ વય સમ્પેક્ષ
પણં જાનોહિ પશ્ચિત ! ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આદિ રોગ કે કારણ હાથ પૈર ગલને લગતે હૈં, ઉસ સમય ઇસકે અપન
કુદ્દુમ્પી-પુત્ર કલપ્રાદિક-મી ‘હમકો મી રોગ ન લગ જાય’ ઇસ મય સે
इसे छोड़ देते हैं । અથવા કિસી સમય યહ મી કિસી કારણવશ ઉન્હૈં
छोड़ देता हैं । યદિ પરસ્પર કોઈ કિસીકો ન મી છોડે તો મી દેશિક
और पारत्रिक दु स्तों से कोई किसी की रक्षा नहीं कर सकता है ॥ સૂ૦ ૭ ॥

जय तक वृद्धावस्था यगैरह नहीं आई है तय तक श्रुतचारित्ररूप
धर्म सेवन करने में प्रयत्न करते रहना चाहिये । इसी बातको सूत्रकार
प्रदर्शित करते हैं—

કુદ્દુમ્પી-આદિ રોગના કારણે હાથ પાન પગલા લાગે છે તે વખત તેના પોતાના
કુદ્દુમ્પી-પુત્રકલપ્રાદિક પણ અમને પણ થેગ ન લાગી બલ આ કમ્પમી તેને
छेड़ी दे छे अथवा कोई वખत ते पणु कोई कारणवश तेज्जाने छेड़ी दे छे.
કદાચ પરસ્પર કોઈ કોઈને ન પણ છેડે તા પણ એહિક અને પારત્રિક દુ ખેમી
कोई कोछनी रक्षा करत शकता नहीं ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આ મુખી વૃદ્ધાવસ્થા વિગેર નથી આવી ત્યા મુખી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ
सेवन करवाभा प्रयत्न करते रहेवे अच्छे, आ बातने सूत्रकार प्रदर्शित करे छे.-

टीका—हे पण्डित ! = हे परमार्थज्ञ—मेधाविन् ! एवं = “ केऽपि स्वजनादयस्त्राणाय वा शरणाय वा न भ्रमन्ति ” इति पूर्वोक्तप्रकारेण प्रत्येकं = प्रत्येकप्राणिजः सर्वेषां प्राणिनामित्यर्थः, दुःखं, तथा सातं = सुखं च ज्ञात्वा = ‘ स्वकृतशुभाशुभकर्मविपाकानुभवोऽवश्यं भवती ’—तिबुद्ध्वा अनभिक्रान्तम् = अव्यतीतं वयः = शरीरस्य कालकृतावस्थां संप्रेक्ष्य = परिवाददोषवतो वार्द्धक्यस्य, पोषणदोषवतो बाल्यस्य, परिहारदोषवतो रोगस्य च दूर्वर्तित्वं यत्रास्ति तादृशं वयः समालोच्य, क्षणम् = अवसरं जानीहि = बुध्यस्व हे पण्डित ! इति सम्बन्धः ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि । हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थ के जाननेवाले मुनि ! कोई भी स्वजनादिक एक दूसरे को त्राण और शरण के लिए समर्थ नहीं हो सकता है । इसप्रकार पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक प्राणी के सुख दुःख को जानकर—अर्थात् अपने किये हुए पुण्य-पाप का फल अवश्य भोगना पड़ता है, ऐसा समझकर तथा अवस्था को भी अनभिक्रान्त देख कर, तथा जब तक रोगादि का उदय नहीं हुआ है—सब इन्द्रियां अपनी २ शक्ति में समर्थ हैं और स्वजनादिकों ने नहीं छोड़ा है अर्थात् जबतक स्वजनादि आदर करते हैं तबतक ही आत्मा का श्रेय साध लेना चाहिये, ऐसी अवस्था को अर्थात् परिवाद—दोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण—दोषवाली बाल्यावस्था और परिहार—दोषवाली रोगावस्था को सोचकर तू संयमाराधन के अवसर को भली—भाँति जान ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि—हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थना ज्ञाणुशर मुनि ! कोछ पाणु स्वजनादिक ओछ जीनने त्राणु अने शरणु भाटे समर्थु जनता नथी आ प्रकारे पूर्वोक्त रीतिथी प्रत्येक प्राणीना सुख दुःखने ज्ञाणीने अर्थात् ‘ पोताना करेला पाप पुन्यना इण अवश्य भोगववा पडे छे ’ ओवु समजने तथा अवस्थाने पाणु अनभिक्रान्त देणीने, तथा न्या सुधी रोगादिकने उदय थये नथी, अधी इन्द्रियो पोतपोतानी शक्तिमा समर्थ छे, अने स्वजनादिओ छोडेल नथी, अर्थात् न्यासुधी स्वजनादि आदर करे छे त्यांसुधी आत्मातु श्रेय साधी लेवु जेछे ओवी अवस्थाने अर्थात् परिवाददोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण-दोषवाणी बाल्यावस्था अने परिहारदोषवाणी रोगावस्थाने सोयीने तु संयमाराधनना अवसरने ललिलाति ज्ञाणु

ચાહે સુસ્ત્રી હો ચાહે દુસ્ત્રી હો—પ્રત્યેક મનુષ્યનો અપને કૃત-ક્રિય કૃપા શુભાશુભ કર્મના ફળનો મોગ અવશ્ય મોગના પડતા છે. યદ્દ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે વિના ફળ દિયે કર્મ કમી મી નષ્ટ નહીં હોત. આત્માનો જો પૌદ્ગલિક વર્ગનારે પરમનુષ્ઠ કરતી છે, તેના નામ મી કર્મ છે. આ લોકમાં કમલની કુપ્તીની તરફ સર્વત્ર કર્મણવર્ગનારે મરી હુઈ હ—યે પૌદ્ગલિક છે. આત્માને ક્રોધાદિ કપાયોને નિમિત્તને તેમાં સ્થિતિયથ અને અનુભાગયથ રૂપ ફળ દેનેની શક્તિ આત્માની છે. કર્મણયથની શાસ્ત્રકારેને ૪ પ્રકારની અવસ્થાએ વ્યવસ્થા છે. ૧ પ્રકૃતિયથ, ૨ સ્થિતિયથ, ૩ અનુભાગયથ અને ૪ પ્રદેશયથ. જ્ઞાનાવરણીયથિક અષ્ટવિધ કર્મોમાં આત્માને તે ૨ ગુણોને વ્યાપ્ત કરનેની જો શક્તિ છે તેના નામ પ્રકૃતિયથ છે. પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનો છે. જેમ પ્રકારનીમના સ્વભાવ કડુયા હોતો છે તેમ પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને જ્ઞાન ગુણને વ્યાપ્ત કરનેનો છે, વર્ણનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને વર્ણનગુણને વ્યાપ્ત કરનેનો છે, વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુસ્ત્ર અને દુસ્ત્ર દેનેનો છે, મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ, આત્માને સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં રુદ્ધ બનાવેનો છે,

મહે સુખી હોય તથા દુખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મોના ફળને લોગવવું પડે છે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે જ્ઞાન આત્મા નિષ્કર્મ કેઈ વખત નાશ થતા નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગના પરમનુષ્ઠ કરે છે તેનો નામ જ કર્મ છે આ લોકમાં કાળગતી ચીજો માફક સર્વત્ર કર્મણ વર્ગનાઓ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગલિક છે આત્માના ક્રોધાદિ કપાયોના નિમિત્તથી તેમાં સ્થિતિયથ અને અનુભાગયથ અવશ્ય જ્ઞાન દેવાની શક્તિ આવે છે કર્મણયથની શાસ્ત્રકારેને ૪ પ્રકારની અવસ્થામાં વ્યવસ્થા છે ૧ પ્રકૃતિયથ, ૨ સ્થિતિયથ, ૩ અનુભાગયથ, અને ૪ પ્રદેશયથ. જ્ઞાનાવરણીયથિક અષ્ટવિધ કર્મોમાં આત્માના તે ૨ ગુણોની વ્યાપ્ત કરવાની જે શક્તિ છે તેનો નામ પ્રકૃતિયથ છે પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનો છે. જેમ લીંબાને સ્વભાવ કઠવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો સ્વભાવ આત્માને જ્ઞાનગુણને વ્યાપ્ત કરવાનો હોય છે વર્ણનાવરણીય કર્મોનો સ્વભાવ આત્માને વર્ણનગુણને વ્યાપ્ત કરવાનો છે વેદનીય કર્મોનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુખ અપવાને છે મોહનીય કર્મોનો સ્વભાવ આત્માને સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

आयु कर्मका स्वभाव नियत समय तक जीवको उस २ पर्यायमें रोक रखने का है, नाम कर्मका स्वभाव चित्रकार की तरह शरीरादिकों को अनेक रूपमें परिणमाने का है, गोत्रका स्वभाव ऊँच नीच कुलमें पैदा कराने का तथा अन्तराय कर्म का स्वभाव आत्मा के वीर्य के घात करने का है। प्रदेशबन्ध वह है—जिसकी वजह से दूध और पानी की तरह आत्मा और कर्म के अनन्तानन्त प्रदेशों का एकीभाव जैसा संबंध हो जाता है। यह दोनों प्रकार का बंध, मन वचन काय के योगों से होता है। स्थितिवंध—कर्मों में आत्मा के साथ रहने की मर्यादा को कहते हैं। फल देने की शक्ति की हीनाधिकता को अनुभागबंध कहते हैं। ये स्थितिवंध और अनुभागबंध कषायों से होते हैं। कर्मोंका आत्माके साथ बंध होता है, इसका यह मतलब नहीं है कि आत्मा कर्म हो जाता है, अथवा कर्म आत्मा रूप हो जाते हैं। प्रत्येक द्रव्यमें एक अगुरु-लघु नामकी शक्ति रहा करती है, जिसकी वजह से एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं हो सकता। इस शक्ति के सद्भाव से प्रत्येक द्रव्य अपनेस्वरूप में सदा कायम बना रहता है। हर एक द्रव्य में इन छह गुणों का कि जिनको सामान्य गुण कहते हैं सदा निवास रहता है। (१) अस्तित्व—इस गुण के निमित्त से द्रव्य

गृह्ण भनाववानो छे आयुर्कर्मनो स्वभाव नियत समय सुधी लपने ते ते पर्यायमा रोड़ी राखवानो छे नामकर्मनो स्वभाव चित्रकारनी भाइक शरीरादिकोने अनेक रूपमा परिणभाववानो छे गोत्रनो स्वभाव उच्च नीच कुलमा पैदा कराववानो अने अन्तराय कर्मनो स्वभाव आत्माना वीर्यनो घात करवानो छे, प्रदेशबन्ध ते न छे, जेनी मारइत दूध अने पाणी भाइक आत्मा अने कर्मने अनन्तानन्त प्रदेशोने ऐकीभाव जेवो मध्य थई न्य छे जे जन्ने प्रकारना बंध मन वचन कायाना योगोथी थाय छे स्थितिवंध—कर्मोमा आत्माना साथे रहेवानी मर्यादाने कडे छे, इण हेवानी शक्तिनी हीनाधिकताने अनुभागबन्ध कडे छे जे स्थितिवंध अने अनुभागबन्ध कषायोथी थाय छे कर्मोने आत्मा साथे बंध थाय छे, तेनो जे मतलब नथी के आत्मा कर्म जनी न्य छे, अथवा कर्म आत्माइप जनी न्य छे प्रत्येक द्रव्यमा एक अगुरुलघु नामनी शक्ति रह्य करे छे, जेनी मारइत एक द्रव्य भील द्रव्यइप जनी शक्तु नथी आ शक्तिना मद्भावथी प्रत्येक द्रव्य पोताना स्वइपमा सदा कायमजनी रहे छे दरेक द्रव्यमा आ छ गुणो के जेने सामान्य गुण कडे छे ते सदा निवास करी रहेला छे १ अस्तित्व—आ गुणना निमित्तथी द्रव्यनो कोइ वधत नाश नथी थतो,

ચાહે સુસી હો ચાહે દુ સ્વી હો-પ્રત્યેક મનુષ્યે કૃત-ક્રિય
 કૃત-શુભાશુભ કર્મ કે ફલ કા ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ। યદ
 નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ બિના ફલ વિચે કર્મ કમી મી નષ્ટ નહીં હોતે।
 આત્મા કો જો પૌદ્ગલિક વર્ગનારે પરતન્ત્ર કરતી હૈ, ઉનકા નામ હી કર્મ
 હૈ। ઇસ લોક મેં કક્ષલ કી કુપ્પી કી તરફ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગનારે
 મરી છુઈ હૈ-યે પૌદ્ગલિક હૈ। આત્મા કે ક્રોધાદિ કપાયોં કે નિમિત્ત સે
 ઉનમેં સ્થિતિવચ્ચ ઓર અનુભાગવચ્ચ રૂપ ફલ દેને કી શક્તિ આતી હૈ।
 કર્મચન્ધ કી શાસ્ત્રકારોને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાએ પતલાઈ હૈ। ૧ પ્રકૃતિ
 વચ્ચ, ૨ સ્થિતિવચ્ચ, ૩ અનુભાગવચ્ચ ઓર ૪ પ્રદેશવચ્ચ। જ્ઞાનાવરણીયા-
 દિક અષ્ટવિધ કર્મોં મેં આત્મા કે ઉન ૨ ગુણોં કે ઘાત કરને કી જો શક્તિ
 હૈ ઉસ કા નામ પ્રકૃતિવચ્ચ હૈ। પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ। જિસ
 પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કહુયા હોતા હૈ ઉમીં પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ
 કા સ્વભાવ આત્મા કે જ્ઞાન ગુણ કો ઘાત કરને કા હોતા હૈ, વર્ણના-
 વરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વર્ણનગુણ કો ઘાત કરને કા હૈ, વેદ
 નીય કર્મકા સ્વભાવ આત્મા કો સુખ ઓર દુ સ્વ દેનેકા હૈ, મોહનીય
 કર્મકા સ્વભાવ, આત્માકે સ્વભાવ કો પરપદાર્થોં મેં રૂદ્ધ બનાને કા હૈ,

ભલે સુખી હોય ત્યા દુ ખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ
 કર્મના ફળને ભોગવવું પડે છે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના
 કર્મ કોઈ વખત નાશ થતા નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગના પરતન્ત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે. એ
 લોકમા કાર્મણી શ્રીશ્રી માર્ક સર્વત્ર કર્મણ વર્જણાએ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગ-
 લિક છે આત્માના ક્રોધાદિ કપાયોના નિમિત્તથી તેમા સ્થિતિવચ્ચ અને અનુભાગ
 વચ્ચ રૂપ દેવાની શક્તિ આવે છે કર્મવચ્ચની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવ-
 સ્થાઓ બતાવેલી છે ૧ પ્રકૃતિવચ્ચ, ૨ સ્થિતિવચ્ચ ૩ અનુભાગવચ્ચ, અને ૪
 પ્રદેશવચ્ચ. જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમા આત્માના તે તે ગુણની ઘાત
 કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિવચ્ચ છે પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ
 લીંબાને સ્વભાવ કહેવા હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના
 જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના
 દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને
 દુઃખ અપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમા

આયુ કર્મકા સ્વભાવ નિયત સમય તક જીવકો ઉસ ૨ પર્યાયમેં રોક રાખને કા હૈ, નામ કર્મકા સ્વભાવ ચિત્રકાર કી તરહ શરીરાદિકોં કો અનેક રૂપમેં પરિણમને કા હૈ, ગોત્રકા સ્વભાવ ઝૂંચ નીચ કુલમેં પૈદા કરાને કા તથા અન્તરાય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વીર્ય કે ઘાત કરને કા હૈ । પ્રદેશબંધ વહ હૈ—જિસકી વજહ સે દૂધ ઔર પાની કી તરહ આત્મા ઔર કર્મ કે અનન્તાનન્ત પ્રદેશોં કા એકીભાવ જૈસા સંબંધ હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર કા બંધ, મન વચન કાય કે યોગોં સે હોતા હૈ । સ્થિતિબંધ—કર્મોં મેં આત્મા કે સાથ રહને કી મર્યાદા કો કહતે હૈં । ફલ દેને કી શક્તિ કી હીનાધિકતા કો અનુભાગબંધ કહતે હૈં । યે સ્થિતિબંધ ઔર અનુભાગબંધ કષાયોં સે હોતે હૈં । કર્મોંકા આત્માકે સાથ બંધ હોતા હૈ, ઇસકા યહ મતલબ નહીં હૈ કિ આત્મા કર્મ હો જાતા હૈ, અથવા કર્મ આત્મા રૂપ હો જાતે હૈં । પ્રત્યેક દ્રવ્યમેં એક અગુરુ—લઘુ નામકી શક્તિ રહા કરતી હૈ, જિસકી વજહ સે એક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્યરૂપ નહીં હો સકતા । ઇસ શક્તિ કે સદ્ભાવ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપનેસ્વરૂપ મેં સદા કાયમ બના રહતા હૈ । હર એક દ્રવ્ય મેં ઇન છહ ગુણોં કા કિ જિનકો સામાન્ય ગુણ કહતે હૈં સદા નિવાસ રહતા હૈ । (૧) અસ્તિત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય

ગૃહ બનાવવાનો છે આયુકર્મનો સ્વભાવ નિયત સમય સુધી જીવને તે તે પર્યાયમા રોકી રાખવાનો છે. નામકર્મનો સ્વભાવ ચિત્રકારની માફક શરીરાદિકોને અનેક રૂપમા પરિણમવાવાનો છે ગોત્રનો સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુળમા પૈદા કરાવવાનો અને અન્તરાય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના વીર્યનો ઘાત કરવાનો છે પ્રદેશબંધ તે જ છે, જેની મારફત દૂધ અને પાણી માફક આત્મા અને કર્મને અનન્તાનન્ત પ્રદેશોનો એકીભાવ જેવો બળબંધ થઈ જાય છે એ બંને પ્રકારના બંધ મન વચન કાયાના યોગોથી થાય છે સ્થિતિબંધ—કર્મોમા આત્માની સાથે રહેવાની મર્યાદાને કહે છે, રૂપ દેવાની શક્તિની હીનાધિકતાને અનુભાગબંધ કહે છે. એ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ કષાયોથી થાય છે કર્મોનો આત્મા સાથે બંધ થાય છે, તેનો એ મતલબ નથી કે આત્મા કર્મ બની જાય છે, અથવા કર્મ આત્મારૂપ બની જાય છે પ્રત્યેક દ્રવ્યમા એક અગુરુલઘુ નામની શક્તિ રહ્યા કરે છે, જેની મારફત એક દ્રવ્ય બીજા દ્રવ્યરૂપ બની શકતું નથી આ શક્તિના સદ્ભાવથી પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાના સ્વરૂપમા સદા કાયમ બની રહે છે દરેક દ્રવ્યમા આ છ ગુણો કે જેને સામાન્ય ગુણ કહે છે તે સદા નિવાસ કરી રહેલા છે ૧ અસ્તિત્વ—આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો ડોઈ વખત નાશ નથી થતો.

કા કમી નાશ નહીં હોતા, (૨) વસ્તુત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે વ્રવ્ય ક્ષણ ૨ મેં કુછ ન કુછ કામ કિયા હી કરતા હૈ । (૩) દ્રવ્યત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે વ્રવ્ય મેં ઁકસી ષ મિશ્ર પ્રકાર કી અવસ્થાઈ પદલા કરતી હૈ, (૪) અગુરુલગુત્વ—ઇસકે નિમિત્ત સે વ્રવ્ય સદા અપની મર્યાદા મેં હી રહતા હૈ—કોઈ ઁમી ઇસકા ગુણ દુસરે ગુણરૂપ નહીં હો સકતા, કોઈ દુસરા ગુણ ઁમી ઁમમેં ઘાહર સે આકર નહીં મિલ સકતા, (૫) પ્રવેશયત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે વ્રવ્યકા કોઈ ન કોઈ આકાર અવદ્ય હોતા હૈ, (૬) પ્રમેયત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે વ્રવ્ય કિસી ન કિસી જ્ઞાનકા વિષય હોતા રહતા હૈ ।

આત્મા ઔર પુરૂલ મેં ઁક ઁસી વૈભાવિક શક્તિ હૈ કિ જિસસે યે દોનોં અનાદિકાલ સે અન્યોન્યસંપ્રક્ત હોને કે કારણ સ્વભાવ સે અન્યથા હોને રૂપ વિભાવ અવસ્થા મેં પડે છુગ હૈ । ઇનકી યહ વિભાવ અવસ્થા અનાદિકાલ કી હૈ—આજ નઈ પૈદા નહીં હુઈ હૈ, ઇસી સે જીવ મેં પુરૂલ કે નિમિત્ત સે વિભાવ—અન્યથાભાવ રૂપ પરિણમન ઔર વિભાવ-વદશાસંપન્ન જીવ કે નિમિત્ત સે પુરૂલ મેં વિભાવ—(કર્મ)—રૂપ પરિણમન છુઆ કરતા હૈ । ઇનકા યહ પરિણમન અનાદિકાલકા હૈ—આજકા નહીં ।

૨ વસ્તુત્વ—આ શુભુના નિમિત્તથી દ્રવ્ય ક્ષણ-ક્ષણમાં કાઈને કાઈ કામ કર્યા જ કરે છે । ૩ દ્રવ્યત્વ—આ શુભુના નિમિત્તથી દ્રવ્યમાં એક અને બિન્ન પ્રકારની અવસ્થાઓ બદલ્યા કરે છે । ૪ અગુરુલગુત્વ—એના નિમિત્તથી દ્રવ્ય સદા પોતાની મર્યાદામાં જ રહે છે, કોઈ પણ તેના શુભુ બીજા શુભુરૂપ બની શકતો નથી, અને બીજો શુભુ પણ તેમાં બદારથી આવી મળી શકતો નથી । ૫ પ્રવેશયત્વ—આ શુભુના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ ને કોઈ આકાર અવશ્ય થાય છે । ૬ પ્રમેયત્વ—આ શુભુના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનનો વિષય થઈ રહે છે ।

આત્મા અને પુરૂગણમાં એક એવી વૈભાવિક શક્તિ છે કે જેનાથી એ બન્ને અનાદિ કાળથી અન્યોન્ય સંપ્રક્ત હોવાને કારણે સ્વભાવથી અન્યથા હોવારૂપ વિભાવ અવસ્થામાં પડેલ છે, તેની આ વિભાવ અવસ્થા અનાદિ કાળની છે આજ નવી પેદા થયેલ નથી.

એનાથી હવેના પુરૂગણના નિમિત્તથી વિભાવ—અન્યથા ભાવરૂપ પરિણમન અને વિભાવવદશાસપ્ત હવેના નિમિત્તથી પુરૂગણમાં વિભાવ—(કર્મ)—રૂપ પરિણમન થયા કરે છે તેનું આ પરિણમન અનાદિ કાળનું છે. આજનું નહિ.

પ્રશ્ન—યદિ આત્મા પહેલે શુદ્ધ થા એસા માન લિયા જાવે તો ક્યા હાનિ હૈ ?

ઉત્તર—બઢી ભારી હાનિ હૈ । હસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં કર્મ કે સંબંધ કે પહિલે આત્મા શુદ્ધ ઠહરેગા, ઓર ફિર ડસકો કર્મકા સંબંધ માનને સે સિદ્ધાત્માઓં કો ભી કર્મ કા સંબંધ માનના પડેગા । એસા તો હૈ નહીં—શુદ્ધ મેં અશુદ્ધતા આ સકતી નહીં । સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા હૈ । અશુદ્ધ સે શુદ્ધ હોતા હૈ, હસીલિયે બન્ધ સે હી મોક્ષ કહા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ કે ફલ દેને કી કોઈ વિશેષ વિધિ હૈ ?

ઉત્તર—હાં, હૈ । જવ કર્મ બંધતે હૈં તવ ડનકે પકને કે લિયે કુછ કાલ ચાહિયે, વાંધે હુઅ કર્મ ડસી સમય ડદ્યમેં નહીં આને લગતે । ડનકા હિસાવ તો ચેતમેં પડે હુઅ વીજ કી તરહ હૈ । જિસ પ્રકાર ચેત મેં વોયા ગયા વીજ કુછ કાલ કે વાદ હી પકતા હૈ ઠીક હસી પ્રકાર વાંધે હુઅ કર્મ કો પકને મેં ભી સમય લગતા હૈ । હસ સમયકા નામ અવાધાકાલ હૈ । હસ અવાધાકાલ કા ચહ હિસાવ હૈ કિ—અક કોઢા-કોઢી સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મ મેં ડસકા અવાધાકાલ ૧૦૦ વર્ષ કા પડતા હૈ, સત્તર ૭૦ કોઢાકોઢી સાગર કી સ્થિતિવાલે મોહકર્મ મેં ૭૦૦૦ વર્ષકા

પ્રશ્ન—કદાચ આત્મા પહેલા શુદ્ધ હતો તેમ માની લેવામા આવે તો શુ હરકત છે ?

ઉત્તર—ઘણી ભારી હાનિ છે આ પ્રકારની માન્યતામા કર્મના સંબંધના પહેલા આત્માને શુદ્ધ માનવુ પડશે અને પછી તેને કર્મનો સંબંધ માનવાથી સિદ્ધાત્માઓને પણ કર્મનો સંબંધ માનવો પડશે એવું તો છે નહિ શુદ્ધમા અશુદ્ધતા આવી શકતી નથી સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા છે અશુદ્ધથી શુદ્ધ છે માટે બંધથી જ મોક્ષ કહેવાય છે

પ્રશ્ન—કર્મના ક્ષણ દેવાની બીજી કોઈ વિશેષ વિધિ છે ?

ઉત્તર—હા છે જ્યારે કર્મ બંધાય છે ત્યારે તેને પાકવા માટે થોડો વખત જોઈએ, બાધેલા કર્મ તે વખત ઉદ્યમા આવવા લાગતા નથી તેનો હિસાબ તો ખેતરમા પડેલા બી માફક છે જે પ્રકારે ખેતરમા વાવેલા બી થોડા વખત પછી પાકે છે તે પ્રકારે બાધેલા કર્મને પાકવામા પણ થોડો વખત લાગે છે તે સમયતુ નામ અબાધાકાલ છે આ અબાધાકાલનો એ હિસાબ છે કે એક કોઢાકોઢી સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મમા તેની અબાધા ૧૦૦ વર્ષની પડે છે ૭૦ કોઢાકોઢી સાગરની સ્થિતિવાલા મોહકર્મમા ૭૦૦૦ વર્ષનો અબાધાકાળ

અપાપકાલ પડતા હૈ। ઇસ હિસાબસે કરોડ સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મકા અપાપકાલ અન્તર્મૂર્ત માત્ર હી પડેગા, ઇસસે યહ થાત જાની જાતી હૈ કિ—જિતને કમ સ્થિતિ કે કર્મ ધર્વેંગે, વે જલ્દી ફલ દેને કો તૈયાર હો જાવેંગે, ઓર યહી વજહ હૈ કિ ઇસી મઝમેં યાંધે હુણ કર્મ જીવ કો ઇસી મઝમેં વદય આ જાતે હૈ ।

પ્રશ્ન—યાંધે હુણ કર્મકા વૈસા હી ફલ મિલતા હૈ? યા ઉસ મેં કુણ પરિવર્તન મી હો સકતા હૈ? ।

ઉત્તર—જીવોં કે પરિણામોં કે નિમિત્ત સે ફલોપમોગ મેં પરિવર્તન મી હો જાતા હૈ । ઉસ પરિવર્તન કો—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સક્રમણ, ઓર ઉદીરણા કહતે હૈ । યાંધે હુણ કર્મોં કી સ્થિતિ યા ઉનકે અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો વૃદ્ધિ હો જાતી હૈ ઉસે ઉત્કર્ષણ કહતે હૈ । પહિલે યાંધે હુણ કર્મોં કી સ્થિતિ વ અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો ઘટતી હોતી હૈ ઉસે અપકર્ષણ કહતે હૈ । જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે પાપ કા પુણ્ય મેં યા પુણ્ય કા પાપ મેં જો પરિવર્તન—વદલના હોતા હૈ ઉસકા નામ સક્રમણ હૈ । કિન્હીં કર્મોં કો કિસી નિમિત્ત કે ઘટા અપની ઠીક સ્થિતિ કે પહિલે વદય મેં લાકર સ્થાપા દેનેકા નામ ઉદીરણા હૈ ।

પડે છે આ હિસાબથી કરોડ સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મને અપાપકાલ અન્તર્મૂર્ત માત્ર જ પડે છે આથી તે થાત જણાય છે કે જેટલો થોડો સ્થિતિનો કર્મ બધાથી તેટલો જલ્દી ફળ દેવાને તૈયાર થઈ જશે, અને એવ કારણથી આ ભવમાં બાધેલા કર્મ છૂટને આ ભવમાં ઉદય આવે છે

પ્રશ્ન—બાધેલા કર્મનું તેવું જ ફળ મળે છે અગર તેના કાંઈ પરિવર્તન પણ થાય છે ?

ઉત્તર—છૂટવાના પરિણામોના નિમિત્તથી ફલોપલોભમાં પરિવર્તન પણ થઈ શકાય છે, આ પરિવર્તનને—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સક્રમણ, અને ઉદીરણા કહે છે બાધેલા કર્મોની સ્થિતિ અગર તેના અનુભાગમાં છૂટવાના ભાવોના નિમિત્તથી જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને ઉત્કર્ષણ કહે છે પહેલાં બાધેલા કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગમાં છૂટવાના ભાવોના નિમિત્તથી જે ઘટતી થાય તેને અપકર્ષણ કહે છે છૂટવાના ભાવોના નિમિત્તથી પાપનો પુણ્યમાં, અને પુણ્યનો પાપમાં જે પરિવર્તન થાય છે, તેનું નામ સક્રમણ છે. કેઈ કર્મને કેઈ નિમિત્તના કારણથી પોતાની ઠીક સ્થિતિના પહેલાં ઉદયમાં લાવીને જે ખપાવી નાખે છે તેનું નામ ઉદીરણા છે.

इन कर्मों की उत्तर प्रकृतियां कितनी हैं ? और उनका क्या स्वरूप है ? तथा देशघाति और सर्वघाति, पुण्यरूप और पापरूप प्रकृतियां कितनी और कौन २ हैं ? तथा देशघाति प्रकृतियों में सर्वघाति स्पर्द्धक कितने हैं ? इत्यादि समस्त बातोंका विचार शास्त्रों में अच्छी तरह किया गया है । इस प्रकार कर्मों का संक्षेप में स्वरूप समझ कर यह प्रकट किया है कि इसी कर्म के निमित्त से आत्मा इस संसार में भटकता और अनेक दुःखों को सहन करता रहता है । कर्म आत्मा को संसार में भ्रमता है । आत्मा भी स्वयं इनका निमित्त पाकर संसार में भ्रमता रहता है । कर्मों से दुःखी होनेवाले जीव ही संसारी हैं । वे सदा इस संसार में इसी की वजह से भ्रमण किया करते हैं । इस के इस परिभ्रमण को देख कर ज्ञानीजन इसे संबोधन करते हुए कहते हैं कि—

“ आघ्रातं मरणेन जन्म जरया विद्युच्चलं यौवनं,
सन्तोषो धनलिप्सया शमसुखं भोगाशया देहिनाम् ।
लोकैर्मत्सरिभिर्गुणा वनभुवो व्यालैर्नृपा दुर्जनै,—
रस्थैर्येण विभूतिरप्यपहृता ग्रस्तं न किं केन वा ? ” ॥१॥

આ કર્મોની ઉત્તર પ્રકૃતિઓ કેટલી છે? અને તેનું શું સ્વરૂપ છે? તથા દેશ-ધાતિ અને સર્વધાતિ પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ પ્રકૃતિઓ કેટલી અને કઈ કઈ છે? તથા દેશધાતિ પ્રકૃતિઓમાં સર્વધાતિસ્પર્દ્ધક કેટલા છે? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોનો વિચાર શાસ્ત્રોમાં સારી રીતે કરવામાં આવેલ છે આ પ્રકાર કર્મોના સંક્ષેપમાં સ્વરૂપ સમજાવે એવું પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મના નિમિત્તથી આત્મા આ સંસારમાં ભટકતો અને અનેક દુઃખોને સહન કરતો રહે છે કર્મ આત્માને સંસારમાં ભ્રમાવે છે. આત્મા પણ સ્વયં તેના નિમિત્ત બનીને સંસારમાં ભ્રમતો રહે છે. કર્મથી દુઃખી થવાવાળા જીવ સંસારી છે. તે સદા આ સંસારમાં એજ કારણથી ભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેના આ પરિભ્રમણને દેખીને જ્ઞાની જન તેને સંબોધન કરીને કહે છે કે —

“ આઘ્રાતં મરણેન જન્મ જરયા વિદ્યુચ્ચલં યૌવન,
સન્તોષો ધનલિપ્સયા શમસુખં ભોગાશયા દેહિનામ્ ।
લોકૈર્મત્સરિભિર્ગુણા વનભુવો વ્યાલૈર્નૃપા દુર્જનૈ,—
રસ્થૈર્યેણ વિભૂતિરપ્યપહૃતા ગ્રસ્તં ન કિં કેન વા ? ” ॥૧॥

હે સંસાર કે જીવો ! કહો દુનિયામેં ऐसी कौनसी वस्तु है जो निर्मय हो । देखो—मृत्यु ने जन्मको, बुढ़ापे ने बिजली के समान बचल युवावस्था को, धन की तृष्णा ने संतोष को, भोगों की आशाने मानसिक शांति को, मत्सर—भाववाले दुर्जनो ने गुणों को, सर्प और हिसको ने जंगली जानवरों को, दुष्टों ने राजाओं को और अस्थिरता ने ऐश्वर्य को भयभीत कर रखा है । एक को एकका भय लगा हुआ है । एकसे एक प्रसित है, फिर इसमें शांति की भावना रखना मानों कूप के किनारे पर बैठ कर निर्मयताके साथ ऊचना जैसा है । इसी लिये तो ज्ञानी पद पद पर संवोधित कर कहते रहते हैं कि—अरे भव्य !

“ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्ता नभ्यरचिते ”

सदा तू सारासार का विचार करता रह । क्यों नाशवान बनादिक की चिन्ता से व्यर्थ ही अपने को व्याकुल किया करता है ? क्या तुझे पता नहीं कि जिस प्रकार मांसके ऊपर गीध मंडराया—घूसा—करते हैं उसी प्रकार तुझे खाने के लिये यह काल तेरे शिर पर मंडरा—घूस—रहा है । लोगों को तू मरते हुए नित्य देखता है, प्रत्येक दिवस वृद्धों को असह्य कष्ट की यातनाओं से पीड़ित निहारता है और संसार को भी

હે સંસારી છોવો ! કહે દુનીયામા એવી કઈ વસ્તુ છે કે જે નિર્મય છે કેળો મૃત્યુને જન્મને, ઘટપણને વિજળી સમાન બચળ યુવાવસ્થાને, ધનની તૃષ્ણાને સંતોષને, ભોગની આશાને માનસિક શાંતિને, મત્સરભાવવાળા દુર્જનોને બુદ્ધિને, સર્પો અને હિંસકોને જંગલી જનાવરોને, દુષ્ટોને શબ્દોને, અને અસ્થિસ્થાને ભૈશ્વર્યને મહાભય છે. એકને એકને ભય લાગેલો છે એકથી એક પ્રસિત છે, પછી તેમાં શાંતિની ભાવના શબ્દની કુવાના કિનારા ઉપર ભેટીને નિર્ભયતાની સાથે ઉભ લેવા બસબર છે. માટે તો જ્ઞાની પદે પદે સંવોધિત કરી કરીને કહેતા રહે છે કે અરે ભવ્ય !

‘ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते परिहर चिन्ता नभ्यरचिते ’

સદા તુ સારસારને વિચારે કરતો રહે, કારણ કે નાશ થનારા થનાદિકની ચિન્તાથી વ્યર્થ પોતાની જાતને વ્યાકુલ બનાવીશ નહિ. શું તને ખબર નથી કે જેવી રીતે માંસ ઉપર ગીધ અવાસ્તવાર ઘૂસ્યા કરે છે તે પ્રકારે તને ખાવા માટે કાલ તારા શિર ઉપર ફૂંસી રહ્યો છે લોકોને મરતા તું નિત્ય જુવે છે પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોને અસહ્ય કષ્ટની યાતનાઓથી પીડિત જાણે છે, અને સંસારી છોવોને પણ તરેક તરેકના ભયોથી ઘેરાયેલાં અને નાના પ્રકારના સંકટોને સહન કરતા

તરહ ૨ કે ભયોંસે ઘિરા હૂઆ એવં નાના પ્રકાર કે સંકટોં કો ફેલતા હૂઆ તું સ્વયં અપની આંખોંસે દેખતા હૈ, ફિર ખી તું વિપય સ્વ ચારે કે લોભ સે મમતા કે કાંટે મે ફંસ કર અપના નાશ કર રહ્યા હૈ। મછલી ઓર ચન્દર કી તરહ વન્ધન મે ફંસતા હૂઆ ખી વહાં સે નહીં નિકલના ચાહતા। કયા તુજે નહીં માલુમ કિ તેરી ખી ઇક દિન યહી દગા હોને-વાલી હૈ, અતઃ યહી અવસર કલ્યાણ કરને કા હૈ। કહ્યા ખી હૈ—

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવચ્ચ દૂરે જરા,
યાવચ્ચેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુપઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને તુ કૂપસનન પ્રત્યુચ્ચમઃ કીદશઃ?” ॥ ૧ ॥

હે ભગ્ય ! જવ તક તેરા યહ શરીર ટીક દાલન મેં હૈ, ઇસમેં કોઈ ખી રોગ ને નિવાસ નહીં કિયા હૈ, જવ તક બુઢાપા દૂર હૈ, જવ તક ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિ વની હૂઈ હૈ, જવ તક આયુકે દિન ચાંકી હૈ, તવ તક તું આત્મ-કલ્યાણ કરને કી ચેષ્ટા અચ્છી તરહ કરના રહ। ઘર જલને પર કૂપ સ્વોદને સે કયા લાભ ? ॥૧॥

इन पूर्वोक्त बातों को ध्यानमें रखते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘ एवं जाणिचु ’ इत्यादि। ‘ हे पण्डित ! ’ इस शब्द के अर्थ का टीकाकार—

તું સ્વયં પોતાની આજોથી દેખે છે, છતાં તું વિપયના લોભથી મમતાના કાટામાં ફસી પોતાનો નાશ કરી રહ્યો છે માછલી અને વાદરાની માફક તું બંધનમાં ફસેલો। પણ ત્યારથી બહાર નીકળવા આહતો નથી થી તને બળર નથી કે તારી પણ એક દિવસ આ દશા થવાની છે માટે જોજ અવસર કલ્યાણ કરવાનો છે કહ્યું પણ છે —

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવચ્ચ દૂરે જરા,
યાવચ્ચેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુપઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને ચ કૂપસનનં પ્રત્યુચ્ચમઃ કીદશઃ ? ” ॥ ૧ ॥

હે ભગ્ય ! ન્યા સુધી આ તારૂ શરીર સારી હાલતમાં છે, તેમાં કોઈ પણ રોગે નિવાસ નથી કર્યો, ન્યા સુધી ઘડપણ દૂર છે, ન્યા સુધી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ બની રહી છે, ન્યા સુધી આયુના દિવસો બાકી છે, ત્યા સુધી તું આત્મ-કલ્યાણ કરવાની ચેષ્ટા સારી રીતે કરતો રહે ઘર બળવા લાગે ત્યારે કુવો ખોદવાનો થી અર્થ ? ॥ ૧ ॥

આ પૂર્વોક્ત વાતોને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે—“ एवं जाणिचु ” ઇત્યાદિ ‘ હે પંડિત ! ’ આ શબ્દના અર્થ તુ ટીકાકાર—હે મેઘાવી !, હે સર્વવિરતિસ પત્ર !,

હે મેઘાવી ! હે સર્વચિરતિસંપન્ન ! હે પરમાર્થજ્ઞ ! इन तीन पदों से विवेचन करते हैं। सार और असारतत्त्व का विवेचन करनेवाली बुद्धि का नाम मेघा-प्रज्ञा है। इसके बलपर ही प्राणी 'उपादेय क्या वस्तु है ? हेय क्या है ?' इस बात का विचार कर सकता है। इस पवित्र विचारधारा से उसकी आत्मा में मेदविज्ञान जागृत होता है। इससे वह यह मूर्ख भाँति जान लेता है कि "एगो हूँ नस्थि मे कोई" "मैं स्वयंत्र एक हूँ, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। इन पर-पदार्थों का केवल मेरे साथ संयोग संघ है, तादात्म्य संघबाले ज्ञानादिगुण मेरी आत्मा के साथ सदा रहनेवाले हैं। इन संयोगी पदार्थों का नियम से वियोग होगा, जिनका तादात्म्य संघ है वे तो इस आत्मा से त्रिकाल में भी दूर नहीं हो सकते। जो अपना निज गुण है वही हमें उपादेय है, पाकी हेय है" इस प्रकार की विशुद्ध भावना से उसकी आत्मा में उन पदार्थों से वैराग्यवृत्ति उत्पन्न होती है, इस वैराग्यवृत्ति से आत्मा में कोई अपूर्व वीर्योद्भास पैदा होता है, इसकी वजह से आत्मा से अनंतानुबंधी शोकही का और दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों का क्षय, क्षयोपशम या उपशम होता है। इसी परिस्थिति में इसे उपशम क्षयोपशम या क्षायिक समकित पैदा हो जाता है। अभी आत्मा में चारित्रमोहनीय कर्म की मत्ता मौजूद है,

હે પરમાર્થજ્ઞ ! આ ત્રણ પદોથી વિવેચન કરે છે—સાર અને અસાર તત્ત્વનું વિવેચન કરવાવાળી બુદ્ધિનું નામ મેઘા-પ્રજ્ઞા છે તેના બળ ઉપર છે પ્રાણી 'ઉપાદેય શું વસ્તુ છે હેય શું છે' આ વાતને વિચાર કરી શકે છે. આવી પવિત્ર વિચારધારાથી તેના આત્મામાં મેદવિજ્ઞાન અમત થાય છે, તેથી તે આ સારી રીતે બાણી લે છે કે—“ એગો હું નસ્થિ મે કોઈ ” “ હું એકલો હું ” આ સંસારમાં કોઈ નથી. આ પર પદાર્થોને કેવલ મારા આત્માની સાથે સંયોગ સંબધ છે તાદાત્મ્ય સંબધવાળા જ્ઞાનાદિગુણ મારી આત્માની સાથે સદા સ્થેવાવાળા છે આ સંયોગી પદાર્થોનું નિયમથી વિયોગ થશે, જેને તાદાત્મ્ય સંબધ છે તેઓ તે આ આત્માથી ત્રિકાળમાં પણ દૂર થઈ શકતા નથી જે પોતાને નિજગુણ છે તે અમને ઉપાદેય છે, બાકી હેય છે ” આવા પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાથી તેના આત્મામાં તે પદાર્થોથી વૈરાગ્યવૃત્તિ ઉત્પન્ન થાય છે તે વૈરાગ્ય વૃત્તિથી આત્મામાં કોઈ અપૂર્વ વીર્યોદ્ભાસ પેદા થાય છે તેની મારફતે આત્માની અનંતાનુબંધી ચોક્કસીને અને દર્શનમોહનીયની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ, અથવા ઉપશમ થાય છે આવી પરિસ્થિતિમાં તેને ઉપશમ, ક્ષયોપશમ, અને ક્ષાયિક સમકિત પેદા થાય છે હવે આત્મામાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની મત્તા મૌજૂદ છે,

इससे इसे देशविरति या सर्वविरति की प्राप्ति नहीं हुई है, परन्तु समकित की प्राप्ति होने के बाद ज्यों ही यह आगे बढ़नेका प्रयास करता है त्यों ही इसको या तो देशविरति होती है या सर्वविरति। देशविरति से मुक्ति नहीं, अतः जब यह अपने पुरुषार्थ की दिशाको आगे बढ़ाता है तब सर्वविरति के लाभ से यह अपने को पवित्र करता है और वास्तविक तप संयम का आराधक बन जाता है, अनपेक्ष परमार्थज्ञ-परम=उत्कृष्ट जो अर्थ=आत्मा का स्वरूप, उसका ज्ञ=ज्ञान हो जाता है। देशविरति में आत्मा प्राणानिपातादिक पांच आश्रयोंका एक देशसे त्यागी होता है और सर्वविरतिमें उनका सर्व प्रकार से त्याग हो जाता है। वहां समस्त जीवों पर समताभाव रहता है। आत्माका निजस्वरूप जो ज्ञाना-द्रष्टापना है वह इस तपसंयमकी अवस्था में प्रकट हो जाता है।

सूत्रमें—“दुःखं पक्षेयं सायं” जो पद है वह इस बातकी पुष्टि करता है—यह दुःख और सुख, पाप और पुण्य से होते हैं, अतः “संसार के समस्त प्राणियों को रोगादिक वेदना आदि के समय अपने द्वारा किये गये कर्मका विपाक अवश्य भोगना पड़ता है” ऐसा समझकर हे भव्य ! जब तक अपने शरीरमें रोगादिकों का उदय नहीं होता, और जब तक सचेष्टता बनी हुई है, तथा जब तक स्वजन संबंधी अपने से

તેનાથી તેને દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ પણ પ્રાપ્ત થયેલ નથી પરંતુ મમકિતની પ્રાપ્તિ વધા બાદ ન્યારે તે આગળ વધવાનો પ્રયાસ કરે છે ત્યારે તેને દેશવિરતિ થાય છે, અથવા સર્વવિરતિ દેશવિરતિથી મુક્તિ નહિ માટે ન્યારે એ પોતાના પુરુષાર્થની દિશાને આગળ વધારે છે, ત્યારે સર્વવિરતિના લાભથી તે પોતાને પવિત્ર કરે છે, અને વાસ્તવિક તપ સંયમનો આરાધક બની જાય છે, એટલે પરમાર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ જે અર્થ=આત્માનું સ્વરૂપ તેના જ્ઞ=જ્ઞાતા થાય છે દેશવિરતિમા આત્મા પ્રાણાતિ-પાતાદિક પાંચ આશ્રયોનો એક દેશથી ત્યાગી થાય છે અને સર્વવિરતિમા તેના સર્વ પ્રકારથી ત્યાગ થઈ જાય છે ત્યાં મમસ્ત જીવો ઉપર મમતાલાવ રહે છે આત્માનું નિજ સ્વરૂપ જે જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપન છે તે આ તપ સંયમની અવસ્થામા પ્રગટ થઈ જાય છે

સૂત્રમા “દુઃખ પક્ષેયં સાયં” જે પદ છે તે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—તે દુઃખ અને સુખ પાપ અને પુણ્યથી થાય છે, માટે “સંસારના મમસ્ત પ્રાણીઓને રોગાદિક વેદના આદિના સમયે પોતાનાથી કરેલા કર્મનો વિપાક અવશ્ય ભોગવવો પડે છે” એવું સમજીને હે ભવ્ય ! ન્યા સુધી પોતાના શરીરમાં રોગાદિકનો ઉદય નથી થતો, અને ન્યા સુધી સચેષ્ટતા બનેલ છે, અને ન્યા સુધી

વિરક્ત નહીં હોતે તથ તક આત્મકલ્યાણ કરને મેં અગ્રસર હો જા, ઔર
 હસ સંયમારાધનરૂપ પવિત્ર કાર્યકો ન છોડ । ક્યોં કિ-

“હાથ પાવમેં જય તક થલ હૈ, આંસોં મેં હૈ તેજ પ્રકાશ,
 અષણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિક કા હુઆ ન પ્રાસ ।
 ધર્મ આચરણ કરલે પ્રાણી, ધરકર મન મેં ઉત્તમ સાજ,
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥”

“અનભિકાન્તં ચ વયા સમગ્રેક્ષ્ય”

સમય સમય આયુ ઘટતી હૈ, ક્ષણ ક્ષણ કાયાક્ષીણ હોતી હૈ । જિસ
 પ્રકાર મિટીકા ઢેલા મીંજતે હી ગલ જાતા હૈ, ઉસી તરહ દેસતે ૨ યહ
 શરીર ગલ જાતા હૈ, હસલિયે તું અપને આત્મ-કલ્યાણ કી તરફ પ્રવૃત્તિ
 કર । ક્યોં કિ વય કે વ્યતીત હોને પર પરિવાર, પોષણ ઔર પરિહાર
 આદિક ઘોષ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । હસ લિયે ઉસ હાલત મેં સંયમકા પાલન
 અશક્ય હોતા હૈ । હસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-જય તક સંયમ ધારણ
 કરને યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત નહીં હુઈ હૈ તથ તક ધર્માચરણ રૂપ અવસર
 કો હાથસે મત જાને હો, અર્થાત્ યહી અવસ્થા હૈ જિસમેં પ્રાણી ધર્માચરણ
 કર સકતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તર કા બોધક હૈ હસ સે યહ

અવજન સબધી પોતાનાધી વિરક્ત નથી થતા ત્યા સુધી આત્મકલ્યાણ કરવામાં
 અગ્રેસર બની જા, અને આ સંયમારાધન રૂપ પવિત્ર કાર્યને ન છોડ, કારણ કે-

હાથ પાવમેં જય તક થલ હૈ આંસોં મેં હૈ તેજપ્રકાશ
 અષણશક્તિ હૈ બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિકકા હુઆ ન પ્રાસ ।
 ધર્મ આચરણ કર લે પ્રાણી ધરકર મનમેં ઉત્તમ સાજ
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥”

“અનભિકાન્તં ચ વયા સમગ્રેક્ષ્ય”

સમય સમય આયુ ઘટે છે, કણે કણે કાયા ક્ષીણ થાય છે જેમ માટીનું
 ટેકું પાણી લાગતા જ ગળી જાય છે તેમ દેખતાં દેખતામાં આ શરીર ગળી
 જાય છે, માટે તું પોતાના આત્મકલ્યાણ તરફ પ્રવૃત્તિ કર કારણ કે વચન
 વ્યતીત થવાથી પરિવાર, પોષણ અને પરિહાર આદિક ઘોષ ઉત્પન્ન થાય છે,
 તેથી તેવી હાલતમાં સંયમનું પાલન થવું અશક્ય છે, માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-
 જ્યાં સુધી સયમ ધારણ કરવાની યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત થઈ નથી ત્યા સુધી
 ધર્માચરણરૂપ અવસરને હાથથી જવા ધો નહિ. અર્થાત્ આજ અવસ્થા છે
 જેમાં ધર્માચરણ પ્રાણી કરી શકે છે સૂત્રમાં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તરને બોધક છે

યદ્વા-અવસીદતો વિનેયસ્યોત્સાહવર્ધનપરમિદં વાક્યમ્-હે પण्डित ! सम्प्रति त्वमनतिक्रान्तवया असि, अथ च परिवादादिदोषत्रयरहितोऽसि तावदेव संयमाय यतस्वेत्यर्थः, अत्रेदशक्षणाभिज्ञत्वेन पण्डित ! इति सम्बोधनं सङ्गच्छते ।

પ્રતીત હોતા હૈ કિ પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ૩ દોષોં મેં સે કિસી એક બી દોષ સે જો અસ્પૃષ્ટ-રહિત હૈ ઓર અવસ્થા બી ધર્માચરણ કરને કી જિસકી નિકલ ગઈ હૈ, પરન્તુ યદિ વહ દૃઢસંહનન વાલા હૈ તો બી પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષા કે યોગ્ય હૈ । જિસ પ્રકાર ભગવાન્ કે માતા પિતાને-દેવા-નન્દા ઓર ઋષભદત્તને અપની વૃદ્ધાવસ્થામેં દીક્ષા ધારણ કી થી ।

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ સંપ્રેક્ષ્ય ક્ષણં જાનીહિ પણ્ડિત !” યહ વાક્ય સંયમ મેં સીદાતે હુએ શિષ્યજનોં મેં જો નિરુત્સાહિત હો રહે હૈં ઉનકા ઉત્સાહ વઢાને કે લિયે કહા ગયા હૈ । ઉનકા ઉત્સાહ વઢાતે હુએ વે કહ રહે હૈં કિ-હે પण्डित ! इस समय तुम प्रव्रज्या ग्रहण करने की अवस्था वाले हो, तथा परिवादादिक दोषत्रय रहित भी हो, सो तुम जब तक इस अवस्था में हो तब तक संयम ग्रहण के लिये प्रयत्नशील रहो । इसी अभिप्राय से सूत्रकार ने ‘पण्डित !’ इस संबोधन से उन्हें संबोधित किया है, कारण कि शिष्यजन स्वयं इस प्रकार की अपनी अवस्था को समझ रहे हैं, अतः यह संबोधन उनके लिये संगत बैठता है ।

તેથી એ પ્રતીત થાય છે કે-પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ત્રણ દોષોમાંથી કોઈ એક પણ દોષથી જે અસ્પૃષ્ટ-રહિત છે અને અવસ્થા પણ ધર્માચરણ કરવાની જેની વીતી ગઈ છે પરંતુ કદાચ તે દૃઢ સંહનનવાલા છે તો પણ પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષાને યોગ્ય છે જેમ ભગવાનના માતાપિતાએ દેવાનદા અને ઋષભદત્તે પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં દીક્ષા ધારણ કરી હતી

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ સંપ્રેક્ષ્ય ક્ષણં જાનીહિ પણ્ડિત !” આ વાક્ય, સંયમમાં કબૂત પામતા શિષ્યજનોમાં જે નિરુત્સાહિત બનેલ છે, તેના ઉત્સાહ વધારવા માટે કહેવામાં આવેલ છે તેના ઉત્સાહ વધારીને તેઓ કહે છે કે-હું પડિત ! આ વખત તમે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરવાની અવસ્થાવાળા છો, તથા પરિવાદાદિક દોષત્રય વગર પણ છો જેથી તમે ન્યા સુધી આ અવસ્થામાં છો ત્યા સુધી સંયમ ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્નશીલ રહો, આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકારે ‘પડિત’ આ સંબોધનથી તેને સંબોધિત કરેલ છે, કારણ કે-શિષ્યજન સ્વયં આ પ્રકારની પોતાની અવસ્થાને સમજી શકે છે માટે આ સંબોધન તેને માટે સંગત બેસે છે

અથવા—હે અનમિદ્ધાન્તયૌવન ! શિષ્ય ! ક્ષણં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-માવમેદેન વતુ
 વિંધે ખાનીહિ । તપ્ત દ્રવ્યક્ષણમ્ સ્થાવરજન્મયોર્જન્મસ્ત્વં, તપ્રાપિ દ્વીન્દ્રિયાદિપરિ
 શરેણ પચ્ચેન્દ્રિયત્વં, તપ્રાપિ સઠિગ્ગત્વ, તપ્રાપિ મનુષ્યત્વ, તેષ્વપિ વિશિષ્ટજાતિ
 શ્રોમનકુલોત્પત્તિદીર્ઘાયુદ્ગુણૈરુચ્યાદિકમુપતન્મ્ય ચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપોઽવસરો નમ્યઃ ।
 યતો દેવનાસ્કમવે સમ્યક્ત્વં જ્ઞાનાવબોધરૂપધૃતસામાયિકાપલબ્ધિથ મનવિ,
 તિર્યંકુ કસ્યચિદેશવિરતિરુપજાયત, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રં મનુષ્યજન્મન્યથ સમતે,
 સ એવ દ્રવ્યક્ષણ । સામાયિકમ્તુર્વિંધઃ-સમ્યક્ત્વ-ધૃત-દેશવિરતિ-સર્વવિરતિ
 રૂપો બોધ્ય ।

અથવા—શિષ્ય કે લિયે સુત્રકાર ફિર કહતે હૈં કિ—હે અનમિદ્ધાન્ત
 યૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર માવ કે મેવસે ક્ષણ (અવસર)
 ચાર પ્રકાર કા હૈં ।

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવ કો જિસ ક્ષણ મેં પ્રાપ્ત હોતી હૈં
 વસકા નામ દ્રવ્યક્ષણ હૈં, ક્યોં કિ યહ જીવ અન્યવહાર રાશિસે વ્યવહાર
 રાશિ મેં આતા હૈં વહાં પર પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ
 પ્રાપ્ત કરતા હૈં । ફિર યહ કર્મ સ્થિતિકો મોગતા ક્રુઆક્રમ સે દ્વીન્દ્રિયા-
 વિક જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્થાવર ઓર જન્મપર્યાય મેં ।
 પ્રસપર્યાય કો પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ હૈં । ઇસમેં મી દ્વીન્દ્રિયાવિક પર્યાયોં કે
 સિવાય પંચેન્દ્રિયપર્યાય કો પ્રાપ્તિ; ઇસમેં મી સંશિપન કી પ્રાપ્તિ; ઇસમેં
 મી મનુષ્યપર્યાય કો પ્રાપ્તિ; વહાં મી વિશિષ્ટ જાતિ—ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ,
 દીર્ઘાયુ કા પાના, નિરોગ શરીર કો પ્રાપ્તિ હોના, ઇસ મેં મી ચારિત્ર કો પ્રાપ્તિ

અથવા શિષ્ય માટે સુત્રકાર કહીવાર કહે છે કે—હે અનમિદ્ધાન્તયૌવન
 શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને માવ ના લેઢથી ક્ષણ (અવસર) ચાર પ્રકાર છે

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા હવને જે ક્ષણે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ દ્રવ્ય
 ક્ષણ છે કારણ કે—આ હવ અન્યવહાર શરિરી અવહાર શરિરમા આવે છે ત્યા
 પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય હવેમા જન્મ પ્રકલ્પ કરે છે, પછી તે
 હર્મસ્થિતિને લોગવતા હમથી બેઠન્દ્રિય હવેમા ઉત્પન્ન થાય છે, આ પ્રકાર
 સ્થાવર અને ત્રસ પર્યાયની પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ છે તેમા પણ બેઠન્દ્રિયાદિક પર્યાયો
 સિવાય પંચેન્દ્રિય પર્યાયની પ્રાપ્તિ, તેમા પણ સંશીપણની પ્રાપ્તિ, તેમા પણ મનુ
 શ્યપર્યાયની પ્રાપ્તિ, આં પણ વિશિષ્ટ જાતિ—ઉચ્ચ કુળ—માં જન્મ, દીર્ઘાયુ મેળવવું,
 નિશ્ચય શરીર પ્રાપ્ત થવું, તેમાં પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી, ઇત્યાદિ એ બધું દ્રવ્ય

હોના; इत्यादि, ये सब द्रव्यक्षण हैं। ये सब बातें तुझे प्राप्त हुई हैं, क्यों कि-
 देवगति और नरकगति में तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्वसामायिक, और
 तत्त्वावबोधरूप श्रुतसामायिक की उपलब्धि जीवको प्राप्त होती है,
 तिर्यञ्चगति में किसी २ जीव को देशविरति का लाभ होता है, सर्वविरति
 रूप चारित्र की प्राप्ति तो इस जीवको मनुष्यजन्म में ही होती है। इसी
 लिये यहां पर वही द्रव्यक्षण है। सामायिक ४ प्रकार का है-१ सम्यक्त्व,-
 २ श्रुत, ३ देशविरति और ४ सर्वविरति।

यहां पर द्रव्यक्षण का विचार किया है, सर्वविरतिरूप चारित्र की
 उत्पत्ति अथवा प्राप्ति की मुख्यता से मनुष्य पर्याय को ही प्रधानतया
 द्रव्यक्षण कहा है, क्यों कि सर्वविरतिरूप चारित्र के सिवाय आत्मा दूसरी
 किसी अवस्था से कर्मोंका क्षय कर मोक्ष प्राप्त नहीं करता। मोक्षप्राप्त
 करना यह इस की स्वाभाविक अवस्था है। जिस प्रकार तुंबड़ी के ऊपर
 मिट्टीका लेप लगाने से वह पानी के नीचे बैठ जाती है, ठीक उसी प्रकार
 यह जीव भी कर्ममल से लिप्त होने के कारण संसाररूप समुद्र के अन्दर
 बैठ जाता है। जैसे उस तुंबड़ीका लेप ज्यों-२ पानी से गल कर हटता जाता
 है त्यों २ वह तुंबड़ी पानी के ऊपर आती जाती है, बिलकुल निर्लेप होने

ક્ષણુ છે આ બધી વાતો તને પ્રાપ્ત થયેલ છે, કારણ કે દેવગતિ અને નરકગતિમા
 તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વસામાયિક અને તત્ત્વાવબોધરૂપ શ્રુતસામાયિકની ઉપલબ્ધિ
 જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તિર્યચગતિમા કોઈ કોઈ જીવને દેશવિરતિનો લાભ
 થાય છે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ તો આ જીવને મનુષ્ય જન્મમા જ થાય
 છે માટે આ ઠેકાણે તેજ દ્રવ્યક્ષણુ છે સામાયિક ચાર પ્રકારનુ છે ૧ સમ્યક્ત્વ,
 ૨ શ્રુત, ૩ દેશવિરતિ અને ૪ સર્વવિરતિ

અહીં દ્રવ્યક્ષણુનો વિચાર કર્યો છે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉત્પત્તિ અથવા
 પ્રાપ્તિની મુખ્યતાથી મનુષ્યપર્યાયને જ પ્રધાનતયા દ્રવ્યક્ષણુ કહ્યું છે, કારણ કે સર્વ
 વિરતિરૂપ ચારિત્ર સિવાય આત્મા બીજી કોઈ અવસ્થાથી કર્મોના ક્ષય કરી મોક્ષ પ્રાપ્ત
 કરતા નથી મોક્ષપ્રાપ્ત કરવો તે તેની સ્વાભાવિક અવસ્થા છે જેમ તુંબડી ઉપર
 માટીનો લેપ લગાડવાથી તે પાણીની નીચે ઝેસી જાય છે, ઠીક તે પ્રકારે આ
 જીવ પણ કર્મમલથી લિપ્ત હોવાના કારણે સંસારરૂપ સમુદ્રની અંદર ઝેસી જાય
 છે. જેમ જેમ જેવો તે તુંબડી ઉપરનો માટીનો લેપ પાણીથી ગળીને હટી જાય
 છે તેમ તેમ તે તુંબડી પાણી ઉપર આવે જાય છે બિલકુલ નિર્લેપ થવાથી તે

પર વહ પાની કે કપર તૈરને લગતી હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર ક્યોં ૨ કર્મમલકા છેપ હસ જીઘાસ્મા સે છુટતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ યહ મી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાતા હૈ, એક દિન યહ મી આતા હૈ જય યહ કર્મમલ કે છેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાતા હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી હસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મો કો નાશ કરને કી વશા, સર્વધિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, એકેન્દ્રિયાદિક પર્વાયોં મેં હસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી, ક્યોં કિ સર્વધિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ યિના જ્ઞાન કે વિકાસ કે નહીં હો સક્તી, જ્ઞાન કા વિકાસ મનુષ્ય પર્વાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । હસીલિયે પ્રધાનતયા હસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાસ કા અભિપ્રાય પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આશ્રવોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાસ હૈ । યથાપિ દેવપર્વાય મેં મધ્યપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ ઘઠાં પર જો સર્વધિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ ઉસકા સ્વાસ કારણ યહી હૈ । ઉસ જ્ઞાન સે ઘઠાં પર પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સક્તી । હસી પ્રકાર નરક મેં મી પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઔર સર્વધિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સક્તી ।

પાણી ઉપર વસ્થા ઘાતે છે તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલને દેવ આ જીવાત્માથી છુટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. એક ક્ષિપ્ર એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના દેવથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે આ કર્મોનો નાશ કરવાની રશ્ય, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે એકેન્દ્રિયાદિક પર્વાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી, કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્વાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસનો અભિપ્રાય પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિથી છે જ્ઞાનથી પાંચ આશ્રવોની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે હવે દેવપર્વાયમાં મધ્યપ્રત્યય અવધિ કોષ છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું પ્રાપ્ત કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યા પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.

ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પંચદશકર્મ-
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્વપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપંચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાવાપ્તિર્ભવતિ । સ
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,
કસ્યચિદેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

इदमुक्तं भवति—क्षेत्रम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकरूपम् । तत्रोर्ध्वलोके देशविरति-
सर्वविरतिरूपसामायिकयोः क्षणो नास्ति, अवशिष्टयोः क्षणोऽस्ति । अधोलोके-

जिस क्षेत्र में सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति इस जीव को होती है उसका नाम क्षेत्रक्षण है । अधोलोक-ग्राम-संवलित अर्थात् सलि-
लावतीविजययुक्त तिर्यग्लोक में ही, वहां पर भी समयक्षेत्र में ही, वहां
भी पन्द्रह कर्मभूमियों में ही, वहां पर भी भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २५॥
देशों में ही इस जीव को चारित्र की प्राप्ति होती है । यह क्षेत्र रूप अवसर
भी दुर्लभ है, क्यों कि अन्यक्षेत्रों में सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसा-
मायिक, इन दो की उपलब्धि, तथा किन्हीं २ को देशविरति रूप चारित्र की
उपलब्धि की संभावना है, परन्तु वहां पर जीवों को सर्वविरति का लाभ
नहीं होता है ।

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, और तिर्यग्लोक, इस प्रकार क्षेत्र ૨ प्रकार का
है । इनमें ऊर्ध्वलोक में देशविरति और सर्वविरति रूप सामायिक धारण
करने का अवसर ही नहीं है । सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसामायिक
इन दो की जीव को वहां प्राप्ति हो सकती है । अधोलोक में भी अधो-

જે ક્ષેત્રમા સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ
ક્ષેત્રક્ષણ છે અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમા,
ત્યા પણ સમયક્ષેત્રમા જ, ત્યા પણ પંદર કર્મભૂમિઓમાં જ, ત્યા પણ ભરતક્ષેત્રની
અપેક્ષાથી સાર્દ્ધપચીસ (૨૫) દેશોમા આ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે
તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. ધારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમા સમ્યક્ત્વસામાયિક
અને શ્રુતસામાયિક, આ બંનેની ઉપલબ્ધિ, તથા કોઈ કોઈને દેશવિરતિરૂપ
ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ જીવોને સર્વવિરતિનો
લાભ થતો નથી

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक અને तिर्याग्लोक, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. તેમા
ऊर्ध्वલોકમા દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ
નથી સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક. આ બેની જીવને ત્યા પ્રાપ્તિ થઈ

પર વહ પાની કે ઉપર તૈરને લગતી હૈ, ઠીક હમી પ્રકાર ક્યોં ૨ કર્મમલકા છેપ હસ જીવાત્મા સે છૂટતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ યહ મી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાતા હૈ, પક દિન યહ મી આતા હૈ જય યહ કર્મમલ કે છેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાતા હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી હસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મો કો નાશ કરને કી વશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, એકેન્દ્રિયાલેખ પર્યાયોં મેં હસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી, ક્યોં કિ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ વિના જ્ઞાન કે વિકાસ કે નહીં હો સક્તી, જ્ઞાન કા વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । હસીલિયે પ્રધાનતયા હસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાસ કા અભિપ્રાય પાંચ આત્મચોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આત્મચોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાસ હૈ । યથાપિ દેવપર્યાય મેં ભવપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ વહાં પર જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ ઉત્તકા સ્વાસ કારણ યહી હૈ । હસ જ્ઞાન સે વહાં પર પાંચ આત્મચોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સક્તી । હસી પ્રકાર નરક મેં મી પાંચ આત્મચોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઓર સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સક્તી ।

પાણી ઉપર તરવા લાગે છે તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલનો હેપ આ અવસ્થામાંથી છૂટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. એક દિવસ એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના હેપથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે. આ કર્મોનો નાશ કરવાની શક્તિ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ અવને પ્રાપ્ત થાય છે એકેન્દ્રિયાલેખ પર્યાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ અવને થતી નથી, કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસને અભિપ્રાય પાંચ આત્મચોંની નિવૃત્તિથી છે જ્ઞાનથી પાંચ આત્મચોંની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે હવું દેવપર્યાયમાં ભવપ્રત્યય અવધિ હોય છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું પ્રાપ્ત કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યાં પાંચ આત્મચોંની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આત્મચોંની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.

ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પચ્ચદશકર્મ-
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્યપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપચ્ચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાચાપ્તિર્ભવતિ । સ
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,
કસ્યચિદ્દેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

इदमुक्तं भवति-क्षेत्रम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकरूपम् । तत्रोर्ध्वलोके देशविरति-
सर्वविरतिरूपसामायिकयोः क्षणो नास्ति, अवशिष्टयोः क्षणोऽस्ति । अधोलोके-

जिस क्षेत्र में सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति इस जीव को होती
है उसका नाम क्षेत्रक्षण है । अधोलोक-ग्राम-संवलित अर्थात् सलि-
लावतीविजययुक्त तिर्यग्लोक में ही, वहां पर भी समयक्षेत्र में ही, वहां
भी पन्द्रह कर्मभूमियों में ही, वहां पर भी भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २५॥
देशों में ही इस जीव को चारित्र की प्राप्ति होनी है । यह क्षेत्ररूप अवसर
भी दुर्लभ है, क्योंकि कि अन्यक्षेत्रों में सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसा-
मायिक, इन दो की उपलब्धि, तथा किन्हीं २ को देशविरति रूप चारित्र की
उपलब्धि की संभावना है, परन्तु वहां पर जीवों को सर्वविरति का लाभ
नहीं होता है ।

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, और तिर्यग्लोक, इस प्रकार क्षेत्र ३ प्रकार का
है । इनमें ऊर्ध्वलोक में देशविरति और सर्वविरति रूप सामायिक धारण
करने का अवसर ही नहीं है । सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसामायिक
इन दो की जीव को वहां प्राप्ति हो सकती है । अधोलोक में भी अधो-

જે ક્ષેત્રમા સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ
ક્ષેત્રક્ષણ છે. અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમા,
ત્યા પણ સમયક્ષેત્રમાં જ, ત્યા પણ પદર કર્મભૂમિઓમા જ, ત્યા પણ ભરતક્ષેત્રની
અપેક્ષાથી સાર્દ્ધપચ્ચીસ (૨૫૥) દેશોમા આ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે.
તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. કારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમા સમ્યક્ત્વસામાયિક
અને શ્રુતસામાયિક, આ બન્નેની ઉપલબ્ધિ, તથા કોઈ કોઈ ને દેશવિરતિરૂપ
ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ જીવોને સર્વવિરતિનો
લાભ થતો નથી

ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યાગ્લોક, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે તેમા
ઉર્ધ્વલોકમા દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ
નથી સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બેની જીવને ત્યા પ્રાપ્તિ થઈ

ડ્યોલોકગ્રામ (સલિલાક્તીવિજય) વર્જયિત્વોર્ધ્વલોકવદ્વિજ્ઞેયમ્, અધોલોક ગ્રામપુ ચ ચતુર્ણા સામાયિકાનાં જ્ઞાણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદિઃ સર્વ વિરતિ વિદ્યાય પ્રયાણા સામાયિકાનાં જ્ઞાણોઽસ્તિ, તન મનુષ્યક્ષેત્ર પર ચતુર્વિધ સામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ ધોષ્યમ્ ।

કાલક્ષણઃ—કાલરૂપોઽવસર, સ હિ અવસર્પિણ્યા સુપમદુષ્પમા-દુષ્પમસુપમા-દુષ્પમા-રૂપેષુ તૃતીય-ચતુર્થ-પદ્મમાત્મકેષુ શિષ્વરકેષુ, ઉત્સર્પિણ્યા દુષ્પમસુપમા-સુપમદુષ્પમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારકયાધ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકાપલમ્બિરૂપ-જાયતે । एतच्च नूतनधर्मप्राप्तिमपश्य कथितम् । पूर्वमतिपन्नापेक्षया संहरमाह-स्यायां लोकत्रये सवारकेषु सर्वविरतिसામાયિકાપલમ્બિર્જાયતે ।

લોકગ્રામ (સલિલાક્તીવિજય) કો છોડકર ઊર્ધ્વલોક કી તરફ હી સમજના યાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાક્તી વિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ બાકી જગહ સમ્યક્ત્વ ઔર શ્રુત, इन दो सामायिकों की प्राप्ति का ही अवसर है । તિર્યગ્લોક મેં મનુષ્યક્ષેત્ર સે યાહિર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કો અતિ-રિક્ત બાકી ત્રીન સામાયિકો કી ઉપલમ્બિ કા અવસર જીવ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, પરન્તુ ચારોં પ્રકાર કો સામાયિક કી પ્રાપ્તિ તો જીવ કો મનુષ્ય-ક્ષેત્ર-બાઈદીપ મેં હી હોતી હૈ ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હસ જીવ કો હોતી હૈ ઉત્સર્પિણીકાલ નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ-ઉત્સર્પિણીકાલ ઔર અવસર્પિણીકાલ । હસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઔર અવસર્પિણી-કાલ મીં ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કો ૬ મેદ-૧ દુષ્પમદુષ્પમા,

અકે છે અધોલોકમા પણ અધોલોકમા (સલિલાક્તીવિજય) ને છેડીને ઉર્ધ્વ લોકની માફ જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમા-અધોલોકમા-સલિલાક્તી વિજયમાં ચારે સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજી જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને શ્રુત એ બે સામાયિકોને પ્રાપ્ત કરવાનોજ અવસર છે તિર્યગ્લોકમા મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામાયિકોની ઉપલમ્બિને અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે પરંતુ ચારે પ્રકારની સામાયિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર-બાઈદીપમા જ થાય છે.

જે કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે કાલ બે પ્રકારે છે-ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ ૭ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ ૭ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણી

ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ-કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ । કર્મભાવક્ષણશ્ચ કર્મ-
નામુપશમ-ક્ષયોપશમ-ક્ષયા-ન્યતમપ્રાપ્तिરુપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં

૨ દુષ્પમા, ૩ દુષ્પમા-સુષમા, ૪ સુષમદુષ્પમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-
સુષમા, યે હૈં । इसी प्रकार अवसर्पिणी के भी-(१) सुषमसुषमा, (२)
सुषमा, (३) सुषमदुष्पमा, (४) दुष्पमसुषमा, (५) दुष्पमा, (६) दुष्पम-
दुष्पमा, ये ६ भेद हैं । जिसकाल में जीवों के ज्ञानादि शुभभावों की
वृद्धि तथा आयुष्य अवगाहना आदि की और वर्ण गन्ध रस स्पर्श के
पर्यायों की वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी है, और जिस काल में जीवों के
ज्ञानादि शुभभावों का हास, तथा आयुष्य अवगाहना आदि का और
वर्ण गन्ध रस स्पर्श की पर्यायों का हास होता है वह अवसर्पिणी है । इनमें
अवसर्पिणी के सुषमदुष्पमा-तीसरे काल में, दुष्पमसुषमा-चतुर्थकाल
में और दुष्पमा-पंचमकाल में, तथा उत्सर्पिणी के दुष्पमसुषमा-तीसरे
काल में और सुषमदुष्पमानामक चतुर्थकाल में सर्वविरतिरूप सामा-
यिक की प्राप्ति जीव को होती है । यह कथन नवीन धर्मप्राप्ति की अपेक्षा
से कहा है । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षासे संहरणावस्था में लोकत्रय में सम-
स्तकालों में सर्वविरतिरूप सामायिक की उपलब्धि जीव को हो सकती है ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઔર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ ભેદ-૧ દુષ્પમાદુષ્પમા, ૨ દુષ્પમા, ૩ દુષ્પમાસુષમા, ૪ સુષમદુષ્પમા, ૫
સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુષમા,
(૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્પમા, (૪) દુષ્પમસુષમા, ૫ દુષ્પમા, ૬ દુષ્પમાદુષ્પમા,
આ છ ભેદ છે જે કાળમા જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે
ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમા જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે
અવસર્પિણી છે. તેમા અવસર્પિણીના સુષમદુષ્પમા-ત્રીજા કાળમા દુષ્પમસુષમા-ચોથા
કાળમા અને દુષ્પમા-પચમ કાળમા, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્પમસુષમા-ત્રીજા કાળમા
અને સુષમદુષ્પમા નામક ચોથા કાળમા સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને
થાય છે આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે પૂર્વપ્રતિપન્નની
અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામા લોકત્રયમા સમસ્ત કાળોમા સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની
ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ બે પ્રકારના છે. ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ. ચારિત્ર-

અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ષર્જયિત્વોર્ધ્વલોકવદિત્તયમ્, અધોલોકગ્રામપુ ચ ચતુર્ણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદ્રિઃ સર્વવિરતિં વિશય પ્રયાણા સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ, તન મનુષ્યક્ષેત્ર એવ ચતુર્વિધસામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ બોધ્યમ્ ।

કાલક્ષણ:-કાલરૂપોઽવસર, સ હિ અવસર્પિण्या મુપમદુષ્પમા-દુષ્પમસુપમા-દુષ્પમા-રૂપપુ તૃતીય-ચતુર્થ-પચ્ચમાત્મકેષુ ત્રિપ્વરકપુ, ઉત્સર્પિण्या દુષ્પમસુપમા-સુપમદુષ્પમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારૂપયોઽથ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકાપલમ્બિરૂપપ્રાયતે । एतच्च नूतनधर्मप्राप्तिमपेक्ष्य कथितम् । पूर्वमतिपन्नापेक्षया संश्रयास्तथायां लोकत्रये सवारकेषु सर्वविरतिसामायिकोपलम्भिर्जायते ।

લોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) કો છોડકર ઋર્ધ્વલોક કી તરફ હી સમજના વાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતીવિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ વાકી જગહ સન્યસ્ત્વ ઓર મૃત, इन दो सामायिकों की प्राप्ति का ही अवसर है । तिर्यग्लोक में मनुष्यक्षेत्र से बाहिर सर्वविरतिरूप सामायिक के अतिरिक्त बाकी तीन सामायिकों की उपलब्धि का अवसर जीव को प्राप्त होता है, परन्तु चारों प्रकार के सामायिक की प्राप्ति तो जीव को मनुष्य-क्षेत्र-द्वीप में ही होती है ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હસ જીવકો હોતી હૈ ઉસકા નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ-ઉત્સર્પિણીકાલ ઓર અવસર્પિણીકાલ । હસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઓર અવસર્પિણીકાલ મી ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કો ૬ મેદ-૧ દુષ્પમદુષ્પમા,

શક છે અધોલોકમા પણ અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ને છેદીને ઉર્ધ્વલોકની માફક જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમા-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતીવિજયમા ચાર સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજા જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને મૃત્યુ બે બે સામાયિકોને પ્રાપ્ત કરવાનોજ અવસર છે, તિર્યગ્લોકેના મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામાયિકોની ઉપલબ્ધિનો અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે, પરંતુ ચારે પ્રકારની સામાયિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર-દ્વીપમા જ થાય છે.

જે કાળમા સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થા જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે કાલ બે પ્રકારે છે-ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ ૬ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણીકાલ

ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ-કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ । કર્મભાવક્ષણશ્ચ કર્મ-
ણાસુપશમ-ક્ષયોપશમ-ક્ષયા-ન્યતમપ્રાપ્તિરૂપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં

૨ દુષ્પમા, ૩ દુષ્પમા-સુષમા, ૪ સુષમદુષ્પમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-
સુષમા, એ હૈં । इसी प्रकार अवसर्पिणी के भी-(१) सुषमसुषमा, (२)
सुषमा, (३) सुषमदुष्पमा, (४) दुष्पमसुषमा, (५) दुष्पमा, (६) दुष्पम-
दुष्पमा, ये ६ भेद हैं । जिसकाल में जीवों के ज्ञानादि शुभभावों की
वृद्धि तथा आयुष्य अवगाहना आदि की और वर्ण गन्ध रस स्पर्श के
पर्यायों की वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी है, और जिस काल में जीवों के
ज्ञानादि शुभभावों का हास, तथा आयुष्य अवगाहना आदि का और
वर्ण गन्ध रस स्पर्श की पर्यायों का हास होता है वह अवसर्पिणी है । इनमें
अवसर्पिणी के सुषमदुष्पमा-तीसरे काल में, दुष्पमसुषमा-चतुर्थकाल
में और दुष्पमा-पंचमकाल में, तथा उत्सर्पिणी के दुष्पमसुषमा-तीसरे
काल में और सुषमदुष्पमानामक चतुर्थकाल में सर्वविरतिरूप सामा-
यिक की प्राप्ति जीव को होती है । यह कथन नवीन धर्मप्राप्ति की अपेक्षा
से कहा है । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षासे संहरणावस्था में लोकत्रय में सम-
स्तकालों में सर्वविरतिरूप सामायिक की उपलब्धि जीव को हो सकती है ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઓર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ ભેદ-૧ દુષ્પમદુષ્પમા, ૨ દુષ્પમા, ૩ દુષ્પમસુષમા, ૪ સુષમદુષ્પમા, ૫
સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે. આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુષમા,
(૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્પમા, (૪) દુષ્પમસુષમા, ૫ દુષ્પમા, ૬ દુષ્પમદુષ્પમા,
આ છ ભેદ છે જે કાળમા જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ લાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે
ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમા જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ લાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે
અવસર્પિણી છે તેમા અવસર્પિણીના સુષમદુષ્પમા-ત્રીજા કાળમા દુષ્પમસુષમા-ચોથા
કાળમા અને દુષ્પમા-પચમ કાળમા, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્પમસુષમા-ત્રીજા કાળમા
અને સુષમદુષ્પમા નામક ચોથા કાળમા સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને
થાય છે આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે પૂર્વપ્રતિપન્નની
અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામા લોકત્રયમા સમસ્ત કાળોમા સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની
ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ બે પ્રકારના છે. ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ, ચારિત્ર-

ચારિત્રમોહનીય કર્મકા-ક્ષય, ક્ષયોપશમ ઓર ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓ
 મેં સે કિસી મી અવસ્થારૂપ હોના-સો કર્મભાવક્ષણ હૈ। ઉસમેં ઉપશમ-
 ઁળી મેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમ હોને પર અન્ત-
 મુક્તપરિમિત જો ઉપશમચારિત્ર હોતા હૈ વહ ઉપશમચારિત્ર કા ક્ષણ
 હૈ। ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય હોને પર અન્ત-
 મુક્તપરિમિત જો છદ્મસ્ય ઓર યથાક્યાત્ત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ
 તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણ ચારિત્ર
 મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ। ઉસકા કાલ ઉત્કૃષ્ટ વેશ જન
 પક કરોડ પૂર્વકા હૈ।

કર્મભાવક્ષણ કા મતલબ હૈ-ચારિત્ર કે આચારક-(રોકનેવાલા)
 ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષય, ક્ષયોપશમ, ઓર ઉપશમ કી પ્રાપ્તિકા
 અવસર। ઉસમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧
 પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમસે જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ઉપશમ
 ચારિત્ર હૈ। યહ ઉપશમઁળી મેં હોતા હૈ, હિસકા કાલ અન્તમુક્ત હૈ।
 અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જીવ કો જો
 ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ક્ષાયિકચારિત્ર હૈ। ઉપશમઁળીમેં
 ઉપશમચારિત્ર ઓર ક્ષયકઁળી મેં ક્ષાયિકચારિત્ર હોતા હૈ। ઉપશમ-

મોહનીય કર્મના-ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓમા કેલ્લ પશુ
 અવસ્થારૂપ થવું, તે કર્મભાવક્ષણ છે, તેમા ઉપશમઁળીમા ચારિત્રમોહનીય કર્મની
 ૨૧ પ્રકૃતિઓના ઉપશમ થવાથી અન્તમુક્ત પરિમિત ને ઉપશમચારિત્ર થાય છે
 તે ઉપશમચારિત્રના ક્ષણ છે ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષય
 થવાથી અન્તમુક્ત પરિમિત ને છદ્મસ્ય અને યથાક્યાત્ત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે
 તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્રનું ક્ષણ છે, ક્ષયોપશમચારિત્ર ક્ષણનું ચારિત્રમોહનીય કર્મના
 ક્ષયોપશમથી થાય છે, તેનો કાળ ઉત્કૃષ્ટ વેશજન એક કરોડ પૂર્વના છે.

કર્મભાવક્ષણનો મતલબ છે ચારિત્રનો આચારક (ચેકવાળા) ચારિત્રમોહનીય
 કર્મના ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમની પ્રાપ્તિનો અવસર, તેમાં ચારિત્રમોહનીય
 કર્મની અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના ઉપશમ ને ચારિત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે તેનું
 નામ ઉપશમચારિત્ર છે આ ઉપશમઁળીમા થાય છે તેનો કાળ અન્તમુક્ત છે.
 અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષયથી જીવને ને ચારિત્ર પ્રાપ્ત થાય
 છે તેનું નામ ક્ષાયિકચારિત્ર છે ઉપશમઁળીમા ઉપશમચારિત્ર અને ક્ષય
 ઁળીમા ક્ષાયિકચારિત્ર થાય છે ઉપશમઁળીના સ્થાન ૮-૬-૧૦ અને ૧૧માં

ચારિત્રમોહનીયોપશમે સત્યન્તર્મુહર્તપરિમિતઃ, ચારિત્રમોહનીયક્ષયે ચાન્તર્મુહર્ત-
પરિમિતઃ છદ્મસ્થયથાખ્યાતચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપઃ । ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણઃ કર્મણઃ ક્ષયો-
પશમેન ભવતિ, સ ચોત્ક્રુષ્ટો દેશોનર્પૂર્વકોટિવર્પપરિમિતો વિજ્ઞેયઃ ।

નોકર્મભાવક્ષણ—આલસ્યમોહાવર્ણવાદસ્તમ્ભાદેરભાવે સતિ સમ્યક્ત્વાદિ-
સામાયિકોપલબ્ધિરૂપઃ । આલસ્યમોહાદ્યુપહતઃ સંસારોચ્છેદનસમર્થ મનુષ્યભવં
પ્રાપ્યાપિ ન ચોધ્યાદિકં લભત ઇતિ તાત્પર્યમ્ । કેચિત્તુ—નોકર્મભાવક્ષણ ‘રિક્તક્ષણ’
ઇત્યભિદધતિ ।

શ્રેણી કે સ્થાન ૮ વાં ૯ વાં ૧૦ વાં ઓર ૧૧ વાં ગુણસ્થાન હૈં । ૧૨ વૈં
ગુણસ્થાન તક જીવ કો છદ્મસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧
વૈં ૧૨ વૈં ૧૩ વૈં ઓર ૧૪ વૈં ગુણસ્થાન મૈં હોતા હૈ । છદ્મસ્થાવસ્થા કે ચારિત્ર
કો છદ્મસ્થચારિત્ર ઓર સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મ કે ક્ષય અથવા ઉપશમ સે
આત્મા કે શુદ્ધ સ્વરૂપ મૈં સ્થિર હોને કો યથાખ્યાત ચારિત્ર કહતે હૈં । અન-
તાનુબંધી આદિ ૧૨ કપાયોં કા ઉદયભાવી ક્ષય તથા ઉન્હીંકૈં નિષેકોં
કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ ઓર સંજ્વલન તથા નોકષાય કા યથાસંભવ
ઉદય હોને પર જો ચારિત્ર હોતા હૈં ઉસે ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર કહતે હૈં ।
હસકા દૂસરા નામ સરાગસંયમ મી હૈ ।

નોકર્મભાવક્ષણ—આલસ્ય, મોહ, અવર્ણવાદાદિક કે અભાવ હોને
પર જો સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિક કી પ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈં વહ નોકર્મ-
ભાવક્ષણ હૈ, ક્યોં કિ આલસ્ય ઓર મોહાદિક સે ઉપહત હુઆ પ્રાણી
સંસાર કા નિર્મૂલ ઉચ્છેદન કરને મૈં સમર્થ મનુષ્ય ભવકો પ્રાપ્ત કરકૈં

ગુણસ્થાન છે ક્ષપકશ્રેણિનુ સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૨મુ ગુણસ્થાન છે. ૧૨
મા ગુણસ્થાન સુધી જીવને છદ્મસ્થાવસ્થા રહે છે યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧
-૧૨-૧૩ અને ૧૪ મા ગુણસ્થાનમાં થાય છે છદ્મસ્થાવસ્થાના ચારિત્રનુ છદ્મસ્થ
ચારિત્ર અને સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મના ક્ષય અથવા ઉપશમથી આત્માના શુદ્ધ
સ્વરૂપમા સ્થિર હોવુ તેને યથાખ્યાતચારિત્ર કહે છે અને તાનુબંધી આદિ ૧૨
કર્મયોનો ઉદયભાવી ક્ષય તથા તેના નિષેકોનો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ અને સંજ્વલન
તથા નોકષાયનુ યથાસંભવ ઉદય હોવા પર જે ચારિત્ર થાય છે તેને ક્ષાયોપ-
શમિકચારિત્ર કહે છે તેનુ બીજુ નામ સરાગસંયમ પણ છે

નોકર્મભાવક્ષણ—આળસ, મોહ, અવર્ણવાદાદિકનો અભાવ થવાપર
જે સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ થયા કરે છે તે નોકર્મભાવક્ષણ છે, કારણ
કે આળસ અને મોહાદિકથી ઉપહત થયેલ પ્રાણી સંસારનો નિર્મૂળ ઉચ્છેદન

મત્રાયં પ્રકરણાર્થે સંક્ષિપ્ત-દ્રવ્યક્ષણો મજ્જમત્વાદિવિશિષ્ટમાનવમત્સ્વરૂપાઃ ।
 ક્ષેત્રક્ષણ આર્યક્ષેત્રરૂપાઃ । કાલક્ષણો ધર્માનુષ્ઠાનસમયઃ । માત્રક્ષણઃ ક્ષયોપશ્ચમાદિ
 રૂપો વિદ્યેયઃ । અતો હે પશ્ચિત્ ! પૃથક્કર્ત્ત્વં ચતુર્વિધં ધર્માચરણાયાતિદુર્લભં જ્ઞાનમવ-
 ગમ્ય સંયમાનુપાલનતત્પરોઽવશ્યં મરેતિ માત્રઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

इत्यमतिदुरापक्षणमवाप्य यावच्च धोत्रादीनां शक्तयो न परिहीनास्तावदात्मार्थं
 प्रयासो विधेय इति दर्शयति-‘जावे-’त्यादि ।

મૂલમ-જાવ સોયપરિણાણા અપરિહીણા, નેત્તપરિણાણા
 અપરિહીણા, ફરિસપરિણાણા અપરિહીણા, इच्चेपहिं विरूवरूवेहिं
 पण्णाणेहिं अपरिह्णीणेहिं आयुह सम्म समणुवासिज्जासि ति
 वेमि ॥ સૂ. ૯ ॥

भी धोषि आदि को प्राप्त नहीं कर सकता है । नो कर्मभावक्षण को कोई
 २ आचार्य रिक्तक्षण भी कहते हैं ।

इस प्रकरण को संक्षिप्त करते हुए टीकाकार कहते हैं-त्रयपर्याय
 विशिष्ट मानवमवस्थस्वरूप (१) द्रव्यक्षण है, आर्यक्षेत्ररूप (२) क्षेत्रक्षण,
 धर्मानुष्ठान का समय-(३) कालक्षण और क्षयोपशमादिरूप (४) भाव
 क्षण है, इसलिये हे परमार्थज्ञ ! मेधावी ! इस प्रकार के इस चतुर्विध क्षण
 को धर्माचरण करने के लिये अत्यन्त दुर्लभ मान कर संयम के पालन करने
 में अवश्य २ मन को लगाओ, नहीं तो समय के हाथसे निकल जाने
 पर अन्त में पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ हाथ न आयेगा, इस लिये
 प्राप्त हुए इस चतुर्विध क्षण को संयमाराधन से सफलित करो । सू. ८॥

કર્યામ્ સમર્થ મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરીને પણ જાણિ આદિને પ્રાપ્ત કરી શકતા
 નથી. નેકર્મભાવક્ષણને કાઈ કાઈ આચાર્ય રિક્તક્ષણ પણ કહે છે.

આ પ્રકરણને સંક્ષિપ્ત કરતા ટીકાકાર કહે છે- ત્રયપર્યાયવિશિષ્ટ માનવ-
 ભવસ્વરૂપ (૧) દ્રવ્યક્ષણ છે, આર્યક્ષેત્રરૂપ (૨) ક્ષેત્રક્ષણ, ધર્માનુષ્ઠાનનો સમય
 (૩) કાલક્ષણ અને ક્ષયોપશમાદિરૂપ (૪) ભાવક્ષણ છે. માટે હે પરમાર્થજ્ઞ !
 મેધાવી ! આ પ્રકારના ચતુર્વિધ ક્ષણને ધર્માચરણ કરવા માટે અત્યંત દુર્લભ
 માનીને સમયપાલન કરવામાં લગાવો. નહિ તો સમય નીકળી જવા પછી અત્યા-
 પશ્ચાત્તાપ સિવાય કાઈ પણ કામ આવશે નહિ, માટે આ પ્રાપ્ત થયેલ ચતુર્વિધ
 ક્ષણને સંયમારાધનથી સફળિત કરો ॥ સૂ. ૮ ॥

छाया—यावच्छ्रोत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, नेत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, घ्राणपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, जिह्वापरिज्ञानानि अपरिहीनानि, स्पर्शपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, इत्येतैर्विरूपरूपैः प्रज्ञानैरपरिहीनैरात्मार्थं समनुवासयेत्, इति ब्रवीमि ॥ सू० ९ ॥

टीका—‘याव’—‘दित्यादि । यावज्जरया रोगेण च श्रोत्रस्य परिज्ञानानि अपरिहीनानि=न नश्यमानानि तावदात्मार्थं समनुवासयेदिति सम्बन्धः । एवं यावच्छब्दः सर्वत्र योज्यः । एवमन्येषामपि नेत्रादीनां परिज्ञानानि यावन्न क्षीयमाणानि सन्ति तावच्छ्रेयो विचिन्तनीयमिति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार अत्यंत कठिनता से प्राप्त करने योग्य इस क्षण को पाकर के जब तक श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रिय की अपने २ विषय को जानने की शक्ति कमजोर नहीं पड़ती है तब तक आत्मकल्याण के लिये प्रयास करते रहना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘जाव सोयपरिणाणा’ इत्यादि ।

जब तक वृद्धावस्था या किसी रोग से तेरा कर्ण—इन्द्रियजन्य ज्ञान अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से विकल नहीं हुआ है, नेत्र—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने विषय ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, घ्राण—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने ज्ञेय को जानने की शक्ति से क्षीण नहीं हुआ है, जिह्वा—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने पदार्थ को ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, स्पर्शन—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक कर्कश—कठोरादि अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से हीन नहीं हुआ

आ प्रकार अत्यंत कठिनताથી प्राप्त करवायेज्य आ क्षणने भेगवीने न्या सुधी श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रियनी पोतपोताना विषयने न्वाणुवानी शक्ति कमजोर थती नथी त्या सुधी आत्मकल्याण भाटे प्रयास करता रहेवो नेधये, ये बात सूत्रकार कहे छे —

‘जाव सोयपरिणाणा’ इत्यादि न्या सुधी वृद्धावस्था अगर कोष्ठ रोगथी ताई कर्ण—इन्द्रियजन्य ज्ञान पोताना विषयने अडणु करवानी शक्तिथी विकल नथी थयु, नेत्र—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यासुधी पोतानो विषय अडणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, घ्राण—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यासुधी पोताना ज्ञेयने न्वाणुवानी शक्तिथी क्षीण नथी थयु, जिह्वा—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्या सुधी पोताना पदार्थने अडणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, स्पर्शन—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्या सुधी कर्कश कठोरादि पोताना विषयने अडणु करवानी शक्तिथी हीन

હે તપ તક અર્થાત્ હનિયોં કે જ્ઞાનની વિદ્યમાનતા મેં હી હે મધ્ય પ્રાણી ! તુ અપતા કલ્યાણ-અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શનચારિત્ર-આરાધન રૂપ તિજ પ્રયોજન કો સિદ્ધ કરશે । યદ નિશ્ચિત્ત હૈ-શુદ્ધાવસ્થા જ્ઞાતે પર, યા કિસી મયંકર રોગ કે હોને પર-હનિયોંની શક્તિયાં યા સ્વયં હનિયાં હી ક્ષીણ હો જાતી હૈ । જિસ સમય ચેચક નિકલા કરતી હે કઈ વ્યક્તિયોંની કાંસે ફૂટ જાતી હૈ, કાન સી બહિરે હો જાતે હૈ । લક્ષ્યાની બીમારી મેં સ્પર્શન હનિય શૂન્ય હો જાતી હે, ઘસન ઘર્ષણા ઠીક નહોં નિકલતી, વસતે સમય પેર કહોં રહતે હૈ પડતે હૈ કહોં । કહા સી હે—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ધ્રુષ્ટા ચ વસ્તાવલિઃ,

દષ્ટિર્નદ્યપિ વર્ષતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્ત્રં નાદ્રિયતે ચ વાગ્ધવજનો માર્યા ન શુશ્રુપતે,

હા ! કદં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસ પુત્રોઽપ્યમિદ્રાયતે ” ॥૧॥

“ દષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છબિ, વંક મઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂપ રહી પરની ઘરની, અતિરક મયો પરયક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાઢ) વહે મુલ્લ છાર, મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે, તિસના ઊર ઓર નવીન મઈ હૈ ” ॥૧॥

નધી યધુ ત્યા સુધી અર્થાત્ હનિયોંના જ્ઞાનની વિદ્યમાનતામા જ હે સવ્ય પ્રાણી ! તુ પોતાનું કલ્યાણ અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્ર આરાધનરૂપ તિજ પ્રયોજનને સિદ્ધ કરી હે । એ નિશ્ચિત્ત હે શુદ્ધાવસ્થા આવવામાં આગર કોઈ લાયકર રોગ યવાથી હનિયોંની શક્તિઓ આગર સ્વયં હનિયોં જ ક્ષીણ થાય છે । એ વખતે શીતલા નીકળે છે તે વખતે કઈ વ્યક્તિઓની આંખો ફૂટી જાય છે, જ્ઞાન પણ બહેલ થઈ જાય છે, લક્ષ્યાની બીમારીમા સ્પર્શન હનિય શૂન્ય બની જાય છે, વક્ત્ર -વાણ્ પણ ઠીક નીકળતી નથી, આલતી વખતે પણ કપાલ સહે છે અને પણ પડે છે કપાલ । કહુ પણ છે —

‘ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ધ્રુષ્ટા ચ વસ્તાવલિઃ,

દષ્ટિર્નદ્યપિ વર્ષતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્ત્રં નાદ્રિયતે ચ વાગ્ધવજનો માર્યા ન શુશ્રુપતે,

હા ! કદં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસ પુત્રોઽપ્યમિદ્રાયતે ” ॥૧॥

“ દષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છબિ વંક મઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂપ રહી પરની ઘરની મતિ રંક મયો પરયક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાઢ) વહે મુલ્લ છાર મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાણ પરે તિસના જર ઓર નવીન મઈ હૈ ” ॥૧॥

“વ્યાઘ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ इव प्रहरन्ति देहम् ।
आयुः परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो,
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम्” ॥૧॥

યહ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે । ઇસ અવસ્થામેં બુદ્ધિ પ્રાયઃ નષ્ટ હો જાતી છે, કૂબડ નિકલ આતી છે, દાંત ગિર પડતે હૈં, બાલ સફેદ હો જાતે હૈં, ચલ ખી કમ હો જાતા છે, આંખોં સે કમ સૂઝને લગતા છે, કાનોં સે શબ્દ સુનાઈ નહીં પડતે, હાથ પૈર ઢીલે ઓર ચલતે ફિરને સે લાચાર હો જાતે હૈં, કફ ઓર શ્વાસકા જોર વઢતા છે, વૈરિયોં કી તરહ સમસ્ત રોગ ઇસ અવસ્થા મેં અપના વદલા લેનેકે લિયે હી માનોં ફકદમ ટૂટ પડતે હૈં, તૃષ્ણા કી પ્રવલતા ઇસ અવસ્થા મેં હો જાતી છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરને કી શક્તિ સે શૂન્ય હો જાતી છે । જિસ તરહ કબૂતર પર વાજ झपटने કી તાકમેં રહતા છે, અથવા વિલ્હી ચૂહે પકડને કી તાક લગાઈ બેઠી રહતી છે, ઠીક ઇસી તરફ મૌત ખી ઇસ અવસ્થા મેં પ્રાણ પૈરુ કો પકડને કે લિયે તૈયાર રહતી છે । ડસી પ્રકાર ઇસ અવસ્થા મેં જવાની કા ચલ છિપ જાયા કરતા છે । મયૂરોં કી ધ્વનિ સુનને સે જેસે

“વ્યાઘ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ इव प्रहरन्ति देहम् ।
आयुः परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो,
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम्” ॥૧॥

આ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે, આ અવસ્થામા બુદ્ધિ નષ્ટપ્રાય થાય છે, બલ પણ ઓછુ થાય છે, વાકાપાણુ આવે છે, દાંત પડી જાય છે, બાલ સફેદ થાય છે, આખોથી ઓછુ દેખાય છે, કાનોથી શબ્દ સંભળાતો નથી, હાથ પગ ઢીલા અને ચાલવા ફરવાથી લાચાર બને છે, કફ અને શ્વાસનુ જોર વધે છે, વૈરીઓની માફક સમસ્ત રોગ આ અવસ્થામા બહલો લેવા માટે જાણે એકદમ તુટી પડે છે, તૃષ્ણાની પ્રબલતા આ અવસ્થામા થાય છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ઓછુ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય થાય છે જેવી રીતે કબુતર પર બાજ ઝડપ મારવાની તક શોધે છે, અથવા બિલાડી ઉદર પકડવાની તાક લગાવી બેસે છે, તેવી રીતે મોત પણ આ અવસ્થામા પ્રાણપંખેડને પકડવા તૈયાર રહે છે જે પ્રકારે વાદળોની અંદર સૂર્યનો પ્રકાશ ઢકાઈ જાય છે તે પ્રકારે આ અવસ્થામા જીવાનીનુ બળ છુપાઈ જાય છે મોરની ધ્વનિ માલગવાથી જેમ ચંદનવૃક્ષોમા

સ્ત્યેતૈઃ=પૂર્વોક્તિર્વિરૂપરૂપે-ઇષ્ટાનિષ્ટસ્વમાવતયા નાનાપ્રકારેઃ પ્રજ્ઞાનૈઃ=મહત્-જ્ઞાનૈરપરિહીનૈઃ=અપરિણીળૈઃ સદ્ગુણ આત્માર્થમ્=આત્મનોડર્થ આત્માર્થ , સ ચ જ્ઞાન-વર્ધન-ચારિત્રસ્થપ્તમ્ ।

યદ્વા-આત્મનેડર્થો ધૃતિ પ્રયોજનમિતિ યાવત્, સંચારિપ્રાણુપ્થાનમ્, તમ્, સમનુવાસયેત્=માવયત્, રક્ષયેદિતિ વા, યયોક્તાનુપ્થાનેનાત્માનં સમનુપાસ-યેદિતિ ભાવઃ ।

इति=पूर्वोक्तं ग्रन्थमि=सुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामिनमाह-यद्गवत* सकाशात् भुतं तदेवाह सुभात्मना कथयामि॥ सू० ९ ॥ इति ॥

इति द्वितीयाध्यायनस्य प्रथमोद्देशः सम्प्राप्य* समाप्त ॥ १ ॥

ચન્દનવૃક્ષોં મેં લપટે હુણ સુજંગોં કે બન્ધન હીલે પડ જાતે હૈં હૈસે હી ભાંસી કે છુલ્લ, છુલ્લ શબ્દ સે હસ અવસ્થા મેં અસ્થિરોં કી સંધિયાં શિથિલ હો જાયા કરતી હૈં । યહ જરા એક અચકર બ્યાધીં કી તરહ સામને આકર નિર્મય રૂપ સે સ્થકી હો જાતી હૈ, ઉસ સમય શત્રુઓં કી તરહ રોગ હસ પર પ્રહાર કરને સે નહીં ચક્તે, ફુટે ઘડે મેં સે પાની કી તરહ આયુ નિકલતી ચલી જાતી હૈ તો મી આશ્ચર્ય કી વાત હૈ કિ-પ્રાણી અપને આત્મ કલ્યાણ કી તરફ ધ્યાન નહીં વેતા ? ।

इसलिए जब तक वृद्धावस्था या किसी रोगसे तेरी शारीरिक शक्ति क्षीण नहीं हुई है और प्रत्येक इन्द्रिया जब तक सशक्त बनी हुई है तब तक सूत्रकार कहते हैं कि-“आत्मार्ष समनुवासयेत्” आत्माके त्रिप हितकारी सम्पगर्धान सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र की प्राप्ति से अपने आपको भाषित करो ।

હટકેલા ત્રાપેના બંધન હીલા પડે છે તેમ ખાસીના ખુસ્ક-ખુસ્ક શબ્દથી આ અવસ્થામાં હા-હાઓની સંધિયો શિથિલ બની જાય છે

આ વૃદ્ધાવસ્થા એક અચકર બ્યાધિની માફક સામે આવીને નિર્ભય રૂપથી ખડી થઈ જાય છે, તે વખતે શત્રુઓની માફક રોગ પશુ પ્રહાર કરવામાં મુક્ત નથી, ફુટેલા ઘડામાંથી પાણીની માફક આયુ નિકળવા માંડે છે તે પશુ આશ્ચર્યની વાત છે કે પ્રાણી પોતાના આત્મકલ્યાણની તરફ ધ્યાન દેતા નથી. માટે જ્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા અગર કોઈ રોગથી તારી શારીરિક શક્તિ ક્ષીણ નથી થઈ, અને પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યાં સુધી સશક્ત બનેલી છે ત્યાં સુધી સૂત્રકાર કહે છે કે-“ આત્માર્થ સમનુવાસયેત્ આત્મા માટે દ્વિતકારી સમ્યગ્જ્ઞાન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી પોતાને ભાષિત કરે.

યહાં આત્મા કે લિયે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્ર કા પ્રધાનતયા ગ્રહણ હોતા હૈ । ક્યોં કિ યથાખ્યાતચારિત્રકે વિના કેવલજ્ઞાન તથા કેવલ-દર્શન નહીં હો સકતે । ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં યથાખ્યાત ચારિત્ર કી પૂર્ણતા હોતે હી યહ આત્મા “ અ ઇ ઉ ઋ લૃ ” ઇન પાંચ હસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કાલ તક વહાં રહકર મુક્તિમેં જા વિરાજતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સે ચારિત્ર કી યહાં પર પ્રધાનતા કહી હૈ । સમ્યગ્દર્શન કી પૂર્ણતા ચતુર્થ ગુણસ્થાનમેં, સમ્યગ્જ્ઞાનકી પૂર્ણતા તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં ઓર સમ્યક્ ચારિત્ર કી પૂર્ણતા ચૌદ હવેં ગુણસ્થાન મેં શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત અર્થ કો સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ ! મૈને જૈસા ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુજે કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ યહ દ્વિતીય અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત હુઆ ॥ ૨-૧ ॥



અહીં આત્મા માટે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્રનુ પ્રધાનતયા ગ્રહણ થાય છે, કારણ કે યથાખ્યાતચારિત્ર વિના કેવળજ્ઞાન તથા કેવળદર્શન નથી થતું. ચૌદમા ગુણસ્થાનમા યથાખ્યાતચારિત્રની પૂર્ણતા થતા જ આ આત્મા “ અ ઇ ઉ ઋ લૃ ” આ પાંચ હસ્વ અક્ષરોનુ ઉચ્ચારણ કાલ તક ત્યાં રહીને મુક્તિમા બિરાજે છે આ અપેક્ષાથી ચારિત્રની આ ઠેકાણે પ્રધાનતા કહી છે સમ્યગ્દર્શનની પૂર્ણતા થાથા ગુણસ્થાનમા, સમ્યગ્જ્ઞાનની પૂર્ણતા તેરમા ગુણસ્થાનમાં, અને ચારિત્રની પૂર્ણતા ચૌદમા ગુણસ્થાનમા શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે

આ પૂર્વોક્ત અર્થને સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! મેં જેવી રીતે ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ બીજા અધ્યયનનો પહેલો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥



॥ આચારાંગ સૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશ ॥

ઉક્તઃ પ્રથમોદ્દેશઃ, સામ્પર્ત દ્વિતીયો વ્યાખ્યાયતે, તત્રાયં સમ્બન્ધ-પ્રથમે વિષયકપાય માતા પિત્રાદિ સ્લોકવિજયેન સંયમિનો મોક્ષકારણચારિત્રસ્ય પ્રાપ્તિઃ, કિંચ સ્લોકવિજયેન યાદ્યોગજરાવ્યયો નાયાતાસ્તાન્વાત્માર્થ સંયમો વિધેય इत्यपि प्रतिपादितम् ।

॥ આચારાંગ સૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

પ્રથમ ઉદ્દેશ કા વર્ણન હો ચુકા, અવ દ્વિતીય ઉદ્દેશ કા વર્ણન કરતે હૈં-હસ કે વર્ણન કરને કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ-પ્રથમ ઉદ્દેશ મૈં જો યહ જ્ઞાત થતલાઈ ગઈ હૈ કિ-“વિષય કપાય ઔર માતા પિતા આદિ જો લોક હૈં ઉન પર વિજય પ્રાપ્ત કરને સે, અર્થાત્ કપાયોં કો જીતને ઔર માતા પિતા આદિ કે સ્નેહ નિવારણ સે સંયમીં કો મોક્ષ કે કારણમૂત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । તથા લોક પર વિજય કરલેને સે જબ તક રોગ-વિક અથવા જરાવસ્થા વગેરહ જો સંયમ કો ચારણ કરને મૈં પ્રતિબંધક હૈં, તે હસ શરીર કો આકર નહીં ઘેરતે હૈં હસકે પહિલે આત્મકત્યાગ કે લિયે સંયમ કા આરાધન કરલેના ચાહિયે ” ॥

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ

પહેલાં ઉદ્દેશનું વર્ણન થયા પછી હવે બીજા ઉદ્દેશનું વર્ણન કર છે. તેનું વર્ણન કરવાનો અભિપ્રાય એ છે કે મહિલા ઉદ્દેશમાં જે વાત બતાવવામાં આવી છે કે “વિષયકપાય અને માતાપિતા આદિ જે લોક છે તે ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાથી અર્થાત્ કપાયોને જીતવાથી અને માતાપિતા આદિનો સ્નેહ નિવારણથી સંયમીને મોક્ષના કારણમૂત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે અને લોક ઉપર વિજય કરવાથી જ્યાં સુધી શૈશવિક અને જરાવસ્થા વિગેરે જે સંયમને ખારણ કરવામાં પ્રતિબંધક છે. તે આ શરીરને આવીને ઘેરતા નથી. તેના પહેલાં આત્મકત્યાગ માટે સંયમનું આરાધન કરી લેવું જોઈએ.

અત્ર ચ સંયમિનઃ કદાચિન્મોહનીયોદયાદજ્ઞાનલોભાદિસમુદયાદાત્મદોષાદ્વા સંયમે ચારતિરાવિર્ભૂતા તસ્યા નિરસનં, તથા યેડપિ વિષયિણોડ્લપમધિકં વા કાલં સંયમમનુપાલ્યાપિ પૂર્વોક્તદોષેણ મોહોદયાત્સંયમે શૈથિલ્યં પ્રાપ્નુવન્તિ તેષાં સંયમે દૃઢતા, વિષયેષુ ચાદૃઢતા યથા ભવેત્તથાડ્ઠહ ‘અરં’ ઇત્યાદિ.

સંયમી કો કદાચિત્ મોહ કે ઉદય સે યા અજ્ઞાન એવં લોભાદિ કિસી કષાય કે ઉદયસે અથવા અપને હી કિસી દોષ કે વશ સે સંયમ મેં જો અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઉસકો જૈસે ખી દૂર કિયા જા સકે; તથા જો શબ્દાદિ વિષયોં મેં લોલુપી બને હુએ હૈં ઓર સંયમ કા પાલન ખી કર રહે હૈં વે ઉસ સંયમ કો અલ્પકાલ તક યા અધિક સમય તક પાલન કરકે ખી પૂર્વોક્ત દોષ સે અથવા મોહકે ઉદય સે સંયમ મેં શિથિલ બન જાતે હૈં વે સંયમ મેં શિથિલ ન બનને પાવેં અર્થાત્ સંયમ મેં ઉનકી દૃઢતા હી બની રહે તથા વિષયોં કી ઓર સે ઉનકી આસક્તિ ઘટે—ઈસી વાતકા વર્ણન ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ મેં સૂત્રકાર કરતે હૈં— ‘અરં ઇત્યાદિ’ ।

અથવા—ચારિત્ર કો અંગીકાર કરને કે લિયે જિનકી ઇચ્છા જાગૃત તો હો ચુકી હૈં પરન્તુ મોહ કે ઉદય સે ઉનકે મન મેં અખી તક અરતિ-ભાવ વિદ્યમાન હૈં, એવં જિન્હોંને ચારિત્ર કો ધારણ તો કર લિયા હૈં પરન્તુ ઉસકે ધારણકે બાદ લોભાદિ સે કિસી ૨ સમય ઉન્હેં ઉસસે અરતિભાવ ખી પેદા હો જાતા હૈં, ઉસ સમય ઉન્હેં ક્યા કરના ચાહિયે? ઇસીકા નિરુ-

સયમિનિ કદાચિત્ મોહના ઉદયથી અજ્ઞાન અને લોભાદિ કોઈ કષાયના ઉદયથી અથવા પોતાના કોઈ દોષના વશથી સયમમા જે અરતિભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જેમ તેમ પણ દૂર કરવામા આવે, અને જે શબ્દાદિ વિષયોમા લોલુપી બનેલા છે અને સયમનુ પાલન કરે છે તેઓ સયમનુ અલ્પ કાળ સુધી અગર અધિક સમય સુધી પાલન કરીને પણ પૂર્વોક્ત દોષથી અથવા મોહના ઉદયથી સયમમાં જેઓ શિથિલ બની જાય છે તેઓ સયમમા શિથિલ બની ન જાય અર્થાત્ સયમમા તેઓની દૃઢતા બની રહે અને વિષયોની તરફથી તેઓની આસક્તિ ઘટે આ વાતનુ વર્ણન આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કરે છે — ‘અરં’ ઇત્યાદિ

અને ચારિત્રને અંગીકાર કરવા માટે જેની ઇચ્છા જાગૃત બનેલી છે પરતુ મોહના ઉદયથી તેના મનમા હજી સુધી અરતિભાવ મોજુદ છે અને જેઓએ ચારિત્રને ધારણ કરી લીધુ છે પરતુ લીધા પછી લોભાદિથી કોઈ કોઈ સમય તેને તેમા અરતિભાવ પેદા થાય છે. તે વખતે તેણે શુ કરવું જોઈએ તેનુ નિરૂપણ

યદ્રા સમુત્પદ્યમાનરુષ્વેરપિ મોહોદયાદરતિર્નાયતે, કસ્યચિદ્ધ્યારિત્રપ્રશ્નનન્તરં
નોમાદિના ક્ષ્ણાચિદરતિર્ભવતિ તદા કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘અરહ્’ इत्यादि ।

મૂઢમ—અરહ્ આઉદે સે મેહાત્રી. સ્વળાસિ મુક્તે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જાણ્યા—અરતિમ્ આર્ષેત્ત સ મેધાવી સળે મુક્તઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—‘અરતિ’—મિત્યાદિ, સ=કૃતચારિત્રપ્રશ્નનો મેધાવી પરિણાતનિસાર
સસારઃ સન્ ‘અરતિમ્’ રમણે=રતિ’ સંયમ પ્રતિસ્તસ્યામાવોડરતિસ્તાં પશ્ચાન્ના
પણ કરતે હૈ—‘અરહ્’ इत्यादि ।

જિસને સંસાર કી અસારતા જાન લી હૈ ઓર ચારિત્ર કો ખી અગી-
કાર કર લિયા હૈ ઘડ્ઢ અરતિમાય કો દૂર કરે તો ક્ષણ ભર મેં મુક્ત હો
જાવે । ચારિત્ર કો જિસને અગીકાર કર લિયા હૈ ઉસકા યહ ધર્મ હૈ કિ
ઘડ્ઢ કિત્તને ખી પરીપહોં ઓર ઉપસગોં કે ઉત્પન્ન હોને પર ખી અપને
ચારિત્ર ધર્મકા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરે । પરન્તુ જય તક કપાયોં કા
પૂર્ણતયા ઘિનાશ નહોં હો જાતા, તય તક જીવ સે હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ
નહોં હોતી હૈ । કયોં કિ જિસ ચારિત્રકા યહાં પર ઘર્ણન કિયા જા રહા
હૈ ઘડ્ઢ ક્ષાયોપશમિક હૈ, ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર તમી હોતા હૈ જય ચારિત્ર
મોહનીય કર્મ કે ૨૧ પ્રકૃતિયોં મેં સે, સર્વધાતિ પ્રકૃતિયોં કે કુછ સ્પર્દકોં
કા—અનન્તાનન્ત કર્મ ઘર્ણનાઓં કે સમુદાયકા ઇક, સ્પર્દક હોતા હૈ ઉનકા-
ઉદ્યમાવી ક્ષય હો તથા કુછ સર્વધાતિસ્પર્દકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હો
પર્વ દેશધાતિપ્રકૃતિકા ઉદય હો । હસ અવસ્થાકા નામ ક્ષાયોપશમ હૈ ।

આ બીજા ઉદેશમાં સૂત્રકાર કહે છે—“અરહ્” इत्यादि.

જેણે સંસારની અસારતા બાબતે છે, અને ચારિત્રને પણ અગીકાર કરેલ
છે તે અરતિભાવને દૂર કરે તો ક્ષણ ભરમાં મુક્ત થઈ બાકી ચારિત્રને જેણે
અગીકાર કરેલ છે તેના એ ધર્મ છે કે કેટલા પણ પરિપક્વ અને ઉપસર્ગો
ઉત્પન્ન થાય તો પણ પોતાના ચારિત્રધર્મનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરે, પરંતુ
જ્યાં સુધી ક્ષાયોપશમ પૂર્વે ઘિનાશ નથી થતો ત્યાં સુધી જીવથી તેના પ્રકારની
પ્રવૃત્તિ થતી નથી, કારણ કે જે ચારિત્રનું આ ઠેકાણું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે
ક્ષાયોપશમિક છે ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર ત્યારે જ ધાય છે—જ્યારે ચારિત્ર મોહનીય
કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓથી સર્વધાતી પ્રકૃતિઓના મોડાં સ્પર્દકોના—અનન્તાનન્ત કર્મ
વર્ગોના સમુદાયનો એક સ્પર્દક થાય છે તેના ઉદયમાવી ક્ષય થાય તથા મોડા
સર્વધાતિ સ્પર્દકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ થાય અને દેશધાતિ પ્રકૃતિને ઉદય
થાય, આ અવસ્થાનું નામ ક્ષાયોપશમ છે

વિપયારુચિં કપાયસંસર્ગોત્પન્ના માતા-પિતૃ-કલત્ર-મિત્રાદ્યુત્પાદિતામ્ આવર્તેત=નિવર્તયેત્, વિપયાભિપ્વદ્ધે રતિસત્ત્વે સંયમે ચારતિર્ભવતિ, તથા ચ કણ્ડરીકસદૃશસ્ય સંયમિનો નરકાદિગતિર્જાયતે, વિપયે રત્યભાવે સંયમે રતિસ્ત્પદ્યતે, તથા ચ પુણ્ડરીક-સદૃશસ્ય સદ્ભવતિર્ભવતિ । સંયમે રતિ વિદધાનસ્ય ન કિમપિ દુઃખં પરાભવતિ, ઉક્તશ્ચ—

इस दशामें देशघाति प्रकृति का तो उदय रहता है। यह चारित्र का बिगाड़ नहीं करती। किन्तु जिनका उपशम हुआ है—वे यदि निमित्त पाकर उदय में आजाती हैं तो वे अवश्य २ चारित्र में जीव को अरति-भाव या उससे भ्रष्ट कर देती हैं। इसी बात को लक्ष्य में रखकर सूत्रकार संयमी जन को कहते हैं कि—‘अरतिं आवर्तत’ इति संयमधारी मेधावी संयम में अरति को दूर करे। संयम में धृति धारण करना—इसका नाम रति है, रति का अभाव अरति है, पाँच आचारका पालन करना संयम है। इस विषय में संयमी जनको कषायों के संसर्ग से अथवा माता-पिता-मित्र-स्त्री आदि के संसर्ग से अरतिभाव पैदा हो सकता है। टीकाकार इस पर अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए कहते हैं कि—बात भी ठीक है, क्योंकि विषयों में अभिष्वंग (आसक्ति) रूप रति के सद्भाव होने पर संयममें अरतिभाव जीवों को उत्पन्न हो जाता है, परन्तु मेधावी मुनि संसार की असारता को भली भाँति जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह अरतिभाव को दूर करे, नहीं तो कण्डरीक की तरह उसे नरक गामी होना पड़ेगा, और संयम में रति करने से पुण्डरीक की तरह उसे

આ દશામા દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો તો ઉદય રહે છે, તે ચારિત્રનો બિગાડ કરતી નથી, પરંતુ જેનો ઉપશમ થયેલ છે તે કદાચ નિમિત્ત બનીને ઉદયમા આવી જાય છે તો તે અવશ્ય ૨ ચારિત્રમા જીવને અરતિભાવ અગર તેનાથી ભ્રષ્ટ કરે છે આ વાતને લક્ષમા રાખીને સૂત્રકાર સયમી જનને કહે છે કે— ‘અરતિં આવર્તેત’ સયમધારી મેધાવી સયમમા અરતિને દૂર કરે સયમમા ધૃતિ ધારણ કરવી, તેનું નામ રતિ છે રતિનો અભાવ અરતિ છે પાંચ આચારનું પાલન કરવું સયમ છે આ વિષયમા સયમી જનને કષાયોના સંસર્ગથી અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી અરતિભાવ પેદા થઈ જાય છે ત્યારે ટીકાકાર આ વાત પર પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કરતા કહે છે કે—વાત પણ ઠીક છે કારણ કે વિષયોમા આસક્તિરૂપ રતિનો સદ્ભાવ થવાથી સયમમા અરતિભાવ જીવોને ઉત્પન્ન થાય છે પરંતુ મેધાવી મુનિ સંસારની અસારતાને ભલીભાતિ જાણે છે તેથી તેનું કર્તવ્ય છે કે તે અરતિભાવને દૂર કરે, નહીં તો કંડરીકની માફક તેને નરકગામી થવું પડશે, અને સયમમા રતિ કરવાથી પુણ્ડરીકની માફક તેને

“ સિતિતલશયનં વા, પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા,
 સહજપરિભવો વા, દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।
 મહતિ ફલવિશેષે, નિત્યમમ્યુષતાનાં,
 ન મનસિ ન શરીરે, દુઃસ્વમુત્પાદયન્તિ ” ॥ ૧ ॥

“ તળસંધારનિસખ્ણોઽપિ મુનિષરો નહરાગમયમોહો ॥
 જં પાવદ્ મુચિસ્મદ્, તં કત્તો ચક્ષયદી ધિ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—શુભસંસ્તારનિપખ્ણોઽપિ મુનિવરો નષ્ટરાગમયમોહઃ ॥
 યત્પામોતિ મુક્તિમુક્તે તસ્કૃતચક્રવર્ત્યપિ ॥ ૧ ॥ રૂતિ, ક્ષિમપિકેન ।

સદ્ગતિકા લાભ હોગા । જીવોં કો અરતિ કા કારણ દુઃસ્વ હોતા હૈ । પરંતુ સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરનેવાલે કો કોઈ મી દુઃસ્વ નહીં હોતા હૈ । યદિ કિસી પ્રકાર કે કર્મોદય સે ડસે દુઃસ્વ મી આ પડે તો વહ દુઃસ્વ ડસ જીવ કો સંયમ મેં અરતિમાલ કા કારણ નહીં હોતા હૈ । યહી વાત મીચે લિલે શ્લોકસે પ્રકટ કી હૈ, જૈસે—

સિતિતલશયનં વા પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા,
 સહજપરિભવો વા દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।
 મહતિ ફલવિશેષે નિત્યમમ્યુષતાનાં,
 ન મનસિ ન શરીરે દુઃસ્વમુત્પાદયન્તિ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—“ તળસંધારનિસખ્ણો ધિ મુનિષરો નહરાગમયમોહો ।
 જં પાવદ્ મુચિસ્મદ્, તં કત્તો ચક્ષયદી ધિ ॥ ૧ ॥ ”

સદ્ગતિનો લાભ થશે જીવોને અરતિના કારણે દુઃખ થાય છે, પરંતુ સંયમે નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરવાથી કેઈ પણ દુઃખ થતું નથી કદાચ કેઈ પ્રકારના કર્મોદયથી તેને દુઃખ પણ આવી પડે તો તે દુઃખ તે જીવને સંયમમાં અરતિ આવતું કારણ થતું નથી, એ વાત મીચે શ્લોકથી પ્રગટ કરી છે—

સિતિતલશયનં વા પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા
 સહજપરિભવો વા દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।
 મહતિ ફલવિશેષે નિત્યમમ્યુષતાનાં,
 ન મનસિ ન શરીરે, દુઃસ્વમુત્પાદયન્તિ ” ॥ ૧ ॥

ફિર મી—“ તળસંધારનિસખ્ણો ધિ મુનિષરો નહરાગમયમોહો ।
 જં પાવદ્ મુચિસ્મદ્, તં કત્તો ચક્ષયદી ધિ ” ॥ ૧ ॥

મોહનીયક્ષયોપશમેનાધિગતચારિત્રસ્ય કદાચિત્પુનર્મોહનીયોદયાદરતિરૂપત્ના,
તસ્યાઃ ક્ષયાર્થમુપદિશ્યત-ઇતિ તાત્પર્યમ્ ।

નન્વનેનારતિમતે મેધાવિન ઉપદેશો, યથ મેધાવી સ પરિજ્ઞાતભવસ્વરૂપ એવ
ભવતિ, તસ્મિંશ્ચારતિમત્ત્વસ્યાસમ્ભવાચ્છાયાતપયોરિવ સહાનવસ્થાનરૂપવિરોધ-
સત્વાન્મેધાવિત્વારતિમત્ત્વયોઃ કથમેકત્ર સ્થિતિઃ ? । ઉક્તઞ્ચ—

इसका भाव यही है—कि भूमि पर सोना, अन्तप्रान्त भिक्षा का सेवन
करना चाहे, कोई तिरस्कार करे, चाहे दुष्ट खोटे र वचन भी कहें, तो भी
जिन साधु पुरुषों की प्रवृत्ति उत्तम फल के लाभ करने में सावधान है उनके
लिये इन बातों से मन में और शरीर में कोई भी कष्ट नहीं होता है।
“तणसंथारनिसण्णो” घासकी शय्या पर बैठे हुए रागमदमोह रहित मुनि
निवृत्तिभावसे जिस सुखका अनुभव करता है उस प्रकार के सुख का
अनुभव रत्नसिंहासन पर बैठा हुवा चक्रवर्ती भी नहीं कर सकता ॥१॥

शंका—चारित्र मोहनीय कर्मके क्षयोपशम से चारित्र की जिसे
प्राप्ति हो चुकी है और फिर बाद में चारित्रमोहनीय की किसी एक
प्रकृति के उदय से उसमें जिसे अरतिभाव हो गया है ऐसे अरतिभावयुक्त
मेधावी के लिये आपका यह उपदेश कि—“गृहीत—चारित्र में अरतिभाव
को दूर करे” लागू होता है । परन्तु जो मेधावी है वह तो संसार के स्वरूप
का जानकार ही होता है, उसमें अरतिपने का सद्भाव तो असंभव ही
है । क्यों कि जिस प्रकार छाया और आतप—धूप का एक जगह एक साथ

એનો ભાવ એ છે કે—ભૂમિ ઉપર સુવુ, અન્ત પ્રાન્ત-ભિક્ષા સેવન કરવી,
ભલે કોઈ તિરસ્કાર કરે અને દુષ્ટ ખોટા ખોટા વચન પણ બોલે તો પણ જે
સાધુપુરુષ ઉત્તમ ફળનો લાભ કરવામાં સાવધાન છે તેને આવી વાતોથી મનમાં
અને શરીરમાં કોઈ પણ કષ્ટ થતું નથી “તણસંથારનિસણ્ણો” ઘાસની શય્યા
પર બેઠેલા, રાગ મદ મોહ રહિત મુનિ નિવૃત્તિ ભાવથી જે નિર્લોભતારૂપ સુખનો
અનુભવ કરે છે તે સુખનો અનુભવ રત્નસિંહાસન ઉપર બેઠેલો ચક્રવર્તી પણ
કરી શકતો નથી ॥ ૧ ॥

शङ्का—चारित्रमोहनीय कर्मना क्षयोपशमથી ચારિત્રની જેને પ્રાપ્તિ થયેલી
છે, અને પછી ચારિત્ર મોહનીયની કોઈ એક પ્રકૃતિના ઉદયથી તેમાં જેને અરતિ
ભાવ થયો છે એવા અરતિભાવયુક્ત મેધાવી માટે આપનો એ ઉપદેશ—“ગૃહીત-
ચારિત્રમાં અરતિભાવને દૂર કરે” લાગુ થાય છે પરંતુ જે મેધાવી છે તે તો
સંસારના સ્વરૂપનો બહુકાર હોય છે, તેમાં અરતિપણના સદ્ભાવનો તો અસંભવ
જ છે, કારણ કે જે પ્રકારે છાયા અને તડકાનો એક જગ્યાએ એકી સાથે રહેવું

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુવિતે વિમાતિ રાગગણ” ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

મોહગ્રહપ્રલિહોઽજ્ઞાની સયમેઽરતિ, વિપયામિષ્વદ્દે કામિન્યાદૌ રતિં ચ કરોતિ, મેધાવી તુ યયા ઇત્તી લઘુત્વદ્દે ધર્પણં ન કરોતિ તથૈવ તુષ્ઠે કામિન્યાદૌ રતિં ન વિદધાતિ, કથં તર્હિ પ્રકૃતે મેધાવિનોઽરતિસમ્મનો વિરોધસત્ત્વાદિતિ ચેમ ।

રહના બિરુદ્ધ છે, उसी प्रकार मेधावित्त्व का और अरतिमत्त्व का भी एक जगह एक साथ रहना बिरुद્ध ही है । फिर इन दोनों का एक जगह युगपत् कहना कैसे संभव हो सकता है ? यही बात अन्यत्र भी कही है—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुविते विमाति रागगण ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिः,—दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ॥ १ ॥ ” इति ॥

यદ્ જ્ઞાન જ્ઞાન હી નહીં છે કે જિસ કે ઉદિત હોને પર રાગાદિ ગણકા સન્નાવ રહે । क्या सूर्य के उदय होने पर भी अंधकार रह सकता है ? कभी नहीं ॥ १ ॥ जो मोह स्वी ग्रहसे उन्मत्त हो रहे हैं—ऐसे अज्ञानी जीव ही सयम में अरति और शब्दादि 'विषयों' में रति किया करते हैं । परन्तु जो मेधावी होते हैं—ये जिस प्रकार हाथी एक छोटे वृक्ष से घर्पण नहीं करता उसी प्रकार संसार के तुच्छ पदार्थों में भी रति नहीं करते । किन्तु उनकी उनमें अरति और संयम में रति रहती है । फिर यहाँ पर मेधावी को अरति होने का संभव कैसे कहा ?

અશક્ય છે તે પ્રકારે મેધાવિત્ત્વને અરતિભાવને પણ એક જગ્યાએ સાધ રહેવું વિરુદ્ધ જ છે । પછી એ બન્નેનું એક જગ્યાએ બેગણ રહેવું કેવી રીતે સંભવ થઈ શકે આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ બતાવી છે કે—

तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुविते विमाति रागगण ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिः—दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ” ॥ १ ॥

તે જ્ઞાન જ્ઞાન જ નથી કે જેના ઉદય થવાથી સગાદિગણને સન્નાવ રહે, સૂર્યને ઉદય થવાથી શુ અંધકાર રહી શકે છે ? કહિ નહિ ॥ ૧ ॥

જે મોહરૂપી નકલી ઉન્મત્ત થઈ પડેલ છે એવા અજ્ઞાની એ જ સયમ મમા અરતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમા રતિ કરે છે પરંતુ જે મેધાવી હોય છે તે જેમ હાથી નાના વૃક્ષથી ધર્પણ કરતો નથી તે પ્રકાર સંસારના તુચ્છ પદાર્થોમા રતિ નથી કરતા પણ તેની તેમા અરતિ અને સયમમા રતિ જ રહે છે જગી આ ઠેકાણે મેધાવીને અરતિ હોવાને સંભવ પણ કેમ હોય.

यद्वा-आर्षत्वात्तृतीयार्थे सप्तमी, क्षणेन=स्तोककालेन अ-इ-उ-ऋ-लृ-इत्येवं-
रूपपञ्चद्वस्वाक्षरोच्चारणसमकालेनेति यावत्; यथाख्यातचारित्र्ये सम्यग्रतौ मुक्तो
भवति, संयमस्य सम्यक्परिपालनात्स्वल्पकालेनैव मोक्षभागी भवतीति भावः ॥ सू० १॥

नुकूल प्रवृत्ति है, और अरतिका अर्थ यह है कि-लिये हुए संयम के
पालन करने में प्रमाद को नहीं हटाना-यद्वा तद्वा प्रवृत्ति करना।
नोकषाय के उदय से जो रति और अरति होती है वे राग और द्वेष के
वाचक हैं। अतः पूर्वोक्त कथन निर्दोष है।

जिसको संयम में अरति नहीं है उसको क्या होता है ? वह कहते
हैं-‘क्षणे’ इति।

जिसे संयम में अरति नहीं है वह क्षण में मुक्त हो जाता है। अत्यन्त
सूक्ष्मकाल को क्षण कहते हैं। क्षण, काल का सबसे छोटा हिस्सा है
इससे सूक्ष्म काल का और कोई अंश नहीं है। संयम में वह शक्ति है
कि जीव को एक क्षण में मुक्ति प्राप्त करा देता है। ईंधन को जिस प्रकार
अग्नि जलाती है उसी प्रकार संयम भी कर्मरूपी ईंधन को भस्म कर
इस जीव को एक क्षण में शुद्ध कर देता है।

अथवा-‘क्षणे मुक्तः’ यहां पर आर्षवाक्य होने से तृतीया के
अर्थ में सप्तमी विभक्ति समझनी चाहिये। तथा च-‘क्षणेन मुक्तः’
इस प्रकार परिवर्तन होने से एक क्षण के द्वारा मुक्त हो जाता है, यह

अर्थ अये छे डे-दीधेदा सयमनु पालन करवाभा प्रमादने नडि छेउता ते.
आडी अवणी प्रवृत्ति करवी नोकषायना उदयथी ने रति अने अरति थाय छे
ते राग अने द्वेषनु वाचक छे भाटे पूर्वोक्त कथन निर्दोष छे

नेने सयमभा आरति नथी तेने शु थाय छे ? ते डडे छे—

नेने सयमभा अरति नथी ते क्षणुभा मुक्त थाय छे अत्यन्त सूक्ष्म
क्षणने क्षणु डडे छे क्षणु क्षणने पधाथी नाने डिस्से छे भाटे सूक्ष्म क्षणने
पीले डोछ अश नथी सयमभा ते शक्ति छे डे छवने अेक क्षणुभा मुक्ति
प्राप्त करवी आपे छे अग्नि लाडडाने ने प्रकारे पाणे छे ते प्रकारे सयम पणु
कर्मरूपी धधनने भस्म करी आ छवने अेक क्षणुभा शुद्ध करी नापे छे

अथवा ‘क्षणे मुक्त’ आ ठेकाणु आर्ष वाक्य डेवाथी त्रीलु विलक्षितना
अर्थभा सातमी विलक्षित समझवी नेछणे, अने ‘क्षणेन मुक्त’ आ प्रकारे
परिवर्तन डेवाथी अेक क्षणुथी मुक्त थछ नय छे. अे अर्थ थाय छे, तेने

उसके अरति भाव उत्पन्न होने में कौन विरोध आता है ? सहानवस्थालक्षण-साधमें नहीं रहने रूप विरोध वहाँ पर होता है जो परस्पर में विरोधी होते हैं, जैसे शीत और उष्ण । ये परस्पर में विरोधी हैं इनका एक-साथ एक जगह रहना नहीं हो सकता । प्रकृत में ज्ञान और अज्ञान, रति और अरति ये परस्पर विरोधी दो धर्म हैं इनका भी एक जगह अवस्थान (रहना) नहीं हो सकता । गृहीत-चारित्र्य में रति ज्ञानपूर्वक होगी अतः वह ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र्य मोहनीय के क्षयोपशम का कार्य है और अरति ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र्य मोहनीय के उदय का कार्य है । उदय में और क्षयोपशम में बड़ा भारी अन्तर है, एक क्षयोपशम का कार्य है—एक उदय का कार्य है । अतः ये दोनों—रति और अरति—परस्पर विरोधी बात युगपत् एकत्र नहीं रह सकती ।

शंका—रति और अरति ये चारित्र्य मोहनीय के मेव स्वस्व नोकपाय के कार्य हैं इन्हें क्षयोपशम और उदय जन्य कैसे कहते हैं ?

उत्तर—शंका ठीक है । वहाँ पर रति और अरति जो नोकपाय के उदय से मानी गई हैं उनसे इनमें मेव है । यहाँ, पर रति शब्द का वाच्यार्थ चारित्र्य को निर्दोष रूप से पालन करने की भावना और तद

ધવામા કયો વિશેષ આવે ? સહાનવસ્થાનરૂપ સાથે નહિ રહેવા રૂપ વિશેષ ત્યા જ થાય છે જે પરસ્પરમા વિશેષી હોય છે જેમ ઠંડી અને ગરમી એ પરસ્પરમા વિશેષી છે તેવું એકી સાથે એક જગ્યાએ રહેવું બની શકતું નથી પ્રકૃતમા જ્ઞાન અને અજ્ઞાન, રતિ અને અરતિ, એ પરસ્પર વિશેષી બે ધર્મ છે તેઓનું પણ એક જગ્યાએ અવસ્થાન (રહેવું) બની શકતું નથી, લીપેલા ચારિત્રમા રતિ જ્ઞાનપૂર્વક જ થશે. માટે તે જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર્ય મોહનીયના ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે અને અરતિ જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર્ય મોહનીયના ઉદયનું કાર્ય છે, ઉદયમાં અને ક્ષયોપશમમા પ્રવેશ જ અવર ૭ એક ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે એક ઉદયનું કાર્ય છે માટે એ બન્ને-રતિ અને અરતિ પરસ્પર વિશેષી વાતો યુગપત્ એકત્ર રહી શકતી નથી.

શંકા—રતિ અને અરતિ એ ચારિત્ર્યમોહનીયના લેહસ્વરૂપ નોકપાયનું કાર્ય ૭ તેને ક્ષયોપશમ અને ઉદયજન્ય કેમ કહે છે ?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે ત્યાં જે રતિ અને અરતિ જે નોકપાયના ઉદયથી માનેલા ૭ તેનાથી એમાં લેહ છે આ ઠેકાણે રતિ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ચારિત્ર્ય નિર્દોષ રૂપથી પાલન કરવાની ભાવના અને તદનુકૂલ પ્રવૃત્તિ છે, અને અરતિનો

યદ્વા-આર્ષત્વાત્તૃતીયાર્થે સપ્તમી, ક્ષણેન=સ્તોકકાલેન અ-ઇ-ઉ-ઋ-ૠ-ઇત્યેવ-
રૂપપશ્ચદ્વસ્યાસરોચારણસમકાલેનેતિ યાવત્ ; યથાખ્યાતચારિત્રે સમ્યગ્રતૌ મુક્તો
ભવતિ, સંયમસ્ય સમ્યક્પરિપાલનાત્સ્વલ્પકાલેનૈવ મોક્ષભાગી ભવતીતિ ભાવઃ ॥મૂ૦ ૧॥

નુકૂલ પ્રવૃત્તિ હૈ, ઓર અરતિકા અર્થ યહ હૈ કિ-લિયે હુઅ સંયમ કે
પાલન કરને મેં પ્રમાદ કો નહીં હટાના-યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરના ।
નોકષાય કે ઉદય સે જો રતિ ઓર અરતિ હોતી હૈ વે રાગ ઓર દ્રેષ કે
વાચક હૈં । અતઃ પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ હૈ ।

જિસકો સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ ઉસકો ક્યા હોતા હૈ ? વહ કહતે
હૈં-‘ ક્ષણે ’ ઇતિ ।

જિસે સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ વહ ક્ષણ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ । અત્યન્ત
સૂક્ષ્મકાલ કો ક્ષણ કહતે હૈં । ક્ષણ, કાલ કા સબસે છોટા હિસ્સા હૈ
ઇસસે સૂક્ષ્મ કાલ કા ઓર કોઈ અંશ નહીં હૈ । સંયમ મેં વહ શક્તિ હૈ
કિ જીવ કો એક ક્ષણ મેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ । ઈંધન કો જિસ પ્રકાર
અગ્નિ જલાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમ મી કર્મરૂપી ઈંધન કો ભસ્મ કર
ઇસ જીવ કો એક ક્ષણ મેં શુદ્ધ કર દેતા હૈ ।

અથવા—‘ ક્ષણે મુક્તઃ ’ યહાં પર આર્ષવાક્ય હોને સે તૃતીયા કે
અર્થ મેં સપ્તમી વિઅક્તિ સમજની ચાહિયે । તથા ચ-‘ ક્ષણેન મુક્તઃ ’
ઇસ પ્રકાર પરિવર્તન હોને સે એક ક્ષણ કે દ્વારા મુક્ત હો જાતા હૈ, યહ

અર્થ એ છે કે-લીધેલા સયમનુ પાલન કરવામા પ્રમાદને નહિ છોડતા તે.
આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કરવી નોકષાયના ઉદયથી જે રતિ અને અરતિ થાય છે
તે રાગ અને દ્રેષનુ વાચક છે માટે પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ છે

જેને સયમમા અરતિ નથી તેને શુ થાય છે ? તે કહે છે—

જેને સયમમા અરતિ નથી તે ક્ષણમા મુક્ત થાય છે અત્યન્ત સૂક્ષ્મ
કાળને ક્ષણ કહે છે ક્ષણ કાળનો બધાથી નાનો હિસ્સો છે માટે સૂક્ષ્મ કાળનો
બીજો કોઈ અંશ નથી સયમમા તે શક્તિ છે કે જીવને એક ક્ષણમા મુક્તિ
પ્રાપ્ત કરાવી આપે છે અગ્નિ લાકડાને જે પ્રકારે બાળે છે તે પ્રકારે સયમ પણ
કર્મરૂપી ઇંધનને ભસ્મ કરી આ જીવને એક ક્ષણમા શુદ્ધ કરી નાખે છે

અથવા ‘ ક્ષણે મુક્ત આ ઠેકાણે આર્ષ વાક્ય હોવાથી ત્રીજી વિલક્ષિતાના
અર્થમા સાતમી વિલક્ષિત સમજવી જોઈએ, અને ‘ ક્ષણેન મુક્ત ’ આ પ્રકારે
પરિવર્તન હોવાથી એક ક્ષણથી મુક્ત થઈ જાય છે. એ અર્થ થાય છે, તેનો

યે ચારિત્રવિપયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિફસંસારે દુઃસ્વસાગરમગ્રાથેતસ્તતઃ પરિ
 ભ્રમન્તીતિ વર્ણયતિ—‘અળાળાપ’—‘સ્થાદિ’ ।

મૂલ્ય—અળાળાપ પુઠાવિ યગે નિયદ્ધતિ, મંદા મોહેણ
 પાડઢા, અપરિગ્ગહા ભવિસ્સામો સમુદ્ધાયલદ્ધેકામે અભિગાહફ,
 અળાળાપ મુણિણો પઢિલેદ્ધતિ, યત્થ મોહ પુણો પુણો સન્ના નો
 હવ્વાપ નો પારાપ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાપા—અનાદ્યા સૃષ્ટા અપ્યકે નિર્વર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાદ્ધતાઃ, અપરિગ્ગહા
 મવિવ્યામ, સમુદ્ધાય સ્થાન કામાનભિગાહસે, અનાદ્યા મુનય પ્રત્યુપેસન્તે,
 અન્ન મોહે પુન પુનઃ સન્ના નો હવ્યાય નો પારાપ ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘અનાદ્ય’—‘સ્થાદિ’, આદ્યા=જ્ઞાનાચારાદિમહાચરુપો જિનાદેશ, ઠ-
 દ્વિપરીવા અનાદ્યા, તથા સૃષ્ટા=પરીપરોપસંગોચ્છિત્તેતસા, એકે=કમ્બરીકપ્રસૂતયો
 અર્થ હોતા હૈ । હસ કા માવ યહ હૈ કિ યથાસ્થાત ચારિત્ર મૈ જબ હસ
 જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તથ યહ ‘અ હ ઉ જ્ઞ હ’ હન પૌષ
 હસ્વ અક્ષરોં કૈ ઉચ્ચારણ કરને મૈ જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય
 માત્ર મૈ સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ
 સે પાલને સે યોગે હી કાલ મૈ યહ જીવ મુક્તિ કા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મૈ રતિ નહીં હૈ હે હસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર
 મૈ દુઃસ્વોં કી અનન્ત યોગે કો ઘેલસે કુપ્પ હતસ્તત’ ભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।
 હસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અળાળાપ’—‘સ્થાદિ’ । જ્ઞાનાચારાદિકોં મૈ પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો
 જિનેન્દ્ર ભગવાન કા આદેશ હૈ ઉસકા નામ આજ્ઞા હૈ હસસે વિપરીત

શ્રાવ એ છે કે યથાશ્ચાત ચારિત્રમા અચારે આ હવની રતિ-રમણ શ્રાવ છે,
 ત્યારે તે ‘અ હ ઉ જ્ઞ હ’ આ પાવ્ય હસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં લેટલો
 સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધમતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. અર્થાત્
 સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી શ્રાવણ કાળમાં તે હવ મુક્તિને લાભ
 કરી લે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

જેની ચારિત્રમા રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં દુઃખેના
 અનન્ત યોગને ઉદ્ધવતા અંદીતહીં ભ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

અળાળાપ’—‘સ્થાદિ’ જ્ઞાનાચારાદિકમા પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ જે જિનેન્દ્ર
 ભગવાનને આદેશ છે તેનું નામ આજ્ઞા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અનાદ્યા છે.

મન્દાઃ=જડા અનવગતકર્તવ્યવિવેકા इति यावत्, મોહેન=અજ્ઞાનેન મિથ્યાત્વ-મોહનીયેન વા, પ્રાપ્તાઃ=સર્વતોડવગુણિતા મોહાશ્ચિષ્ટાત્માન इति यावत्, 'અપિ'-શબ્દસ્ય નિવર્તન્તે इत्यनेन સમ્બન્ધઃ, સકલસાવધવિરતિ રૂપાત્સંયમાન્નિવર્તન્તે, અપિ-નિશ્ચયેન, પ્રાપ્તચારિત્રોઽપિ મોહનીયોદયેન પરીપહોપસર્ગાન્નિર્ભાવાત્પરિધૃતસાધુવેષોઽપિ ભ્રષ્ટચારિત્રો ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા હૈ । હસ અનાજ્ઞા સે જો સ્પૃષ્ટ હૈં અર્થાત્ જો પરીપહ ઔર ઉપસર્ગોં કે આને પર ચન્નલચિત્ત હો જાતે હૈં-ગૃહીત ચારિત્ર મેં અરતિભાવ રાખનેવાલે બન જાતે હૈં વે કંડરીક આદિ કત્તર્વ્યાકર્ત્તવ્ય-વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીય સે સર્વથા યુક્ત હોતે હુઅ ઉસ ચારિત્ર સે અવશ્ય ભ્રષ્ટ હો જાતે હૈં । સૂત્ર મેં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હુઆ હૈ । હસકા સંબંધ 'નિવર્તન્તે' હસ ક્રિયા કે સાથ હોતા હૈ । જિસને સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્રધર્મ કો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ-એસા વ્યક્તિ યદિ મોહ કે ઉદયસે પરીપહ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર અપને ચારિત્ર સે વિચલિત હો જાતા હૈ તો ઉસે ચારિત્રભ્રષ્ટ હી સમજના ચાહિયે અર્થાત્ વહ ભ્રષ્ટચારિત્રી હૈ । એસે વ્યક્તિ અપને કો સાધુ કે વેષ સે સુસજ્જિત કર લોગોં કી દૃષ્ટિ મેં સાધુપને કા ઢોંગ રચતે હૈ । યદ્યપિ હનકે અન્તરંગ મેં ઉસ વેષ સે જરા મી પ્રેમ નહીં હોતા હૈ તો મી બાહ્ય મેં વે અપની પ્રવૃત્તિ હસ પ્રકાર સે પ્રદર્શિત કરતે હૈં-કિ જૈસે યે સચ્ચે

આ અનાજ્ઞાથી જે સ્પૃષ્ટ છે અર્થાત્ જે પરિપહ અને ઉપસર્ગોના આવવા પર ચંચલ થઈ જાય છે લીધેલા ચારિત્રમા અરતિભાવ રાખવાવાળા ખની જાય છે તે કંડરીક આદિ કર્તવ્યા-કર્તવ્ય વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીયથી સર્વથા યુક્ત હોવાથી તે ચારિત્રથી અવશ્ય ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે

સૂત્રમાં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે તેના સંબંધ 'નિવર્તન્તે' આ ક્રિયા સાથે થાય છે, જેણે સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્રધર્મને પ્રાપ્ત કરી લીધો છે તેવો માણસ કદાચ મોહના ઉદયથી પરિપહ અને ઉપસર્ગ આવવાથી પોતાના ચારિત્રથી વિચલિત થાય છે તો તેને ચારિત્ર ભ્રષ્ટ જ સમજવો જોઈએ. અર્થાત્ તે ભ્રષ્ટચારિત્રી છે. એવી વ્યક્તિ પોતાને સાધુના વેષથી સુસજ્જિત કરી લોકોની દૃષ્ટિમાં સાધુપણનો ઢોંગ રચે છે, જે કે તેના અંતરંગમાં તે વેષથી જરા પણ પ્રેમ હોતો નથી તો પણ બાહ્યમાં તે પોતાની પ્રવૃત્તિ આ પ્રકારથી પ્રદર્શિત કરે છે કે-જાણે તે સાચો નિર્ઞન્ય છે આ વાતનો

યે ચારિત્રવિપયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિકસસારે કુલસાગરમપ્રાપ્તેવસ્તતઃ પરિ
ધ્રમન્તીતિ વર્ણયતિ—‘અણાણાપ’—इत्यादि ।

મૂલમ—અણાણાપ પુઢાવિ યગે નિયદ્ધતિ, મદા મોહેણ
પાડઢા, અપરિગ્ગદ્ધા ભવિસ્સામો સમુદ્ધાયલક્ષેકામે અભિગાહઈ,
અણાણાપ મુણિણો પઢિલેદ્ધતિ, યત્થ મોહં પુણો પુણો સદ્ધા નો
હવ્વાપ નો પારાપ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાપા—અનાદ્યા સૃષ્ટા અપ્યેકં નિવર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાપ્તા, અપરિગ્ગા
ભવિષ્યામઃ, સ્મૃત્યાય લબ્ધ્વાન્ કામાનભિગાહતે, અનાદ્યા મુનય પ્રત્યુપેક્ષન્તે,
અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સદ્ધા નો હવ્વાય નો પારાપ ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘અનાદ્યમે’—इत्यादि, આદ્યા=જ્ઞાનાચારાદિમહાચરુપો જિનાદેશ, ઠ-
વિપરીતા અનાદ્યા, તયા સૃષ્ટા=પરીપરોપસર્ગેચ્છિત્તેવતસઃ, એકે=કષ્ટરીકપ્રસૂતયો
અર્થ હોતા હૈ । ઇસ કા આવ યહ હૈ કિ યથાચ્યાત ચારિત્ર મેં જબ ઇસ
જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તય યહ ‘અ ઇ ડ ક્ષ લ્’ ઇન પાંચ
હ્રસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય
માત્ર મેં સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ
સે પાલને સે ધોરે હી કાલ મેં યહ જીવ મુક્તિ કા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મેં રતિ નહીં હૈ ષે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર
મેં કુલ્લોં કી અનન્ત યોજોં કો ફેલતે જુપ ઇતસ્તતઃ ધ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।
ઇસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અણાણાપ’ इत्यादि । જ્ઞાનાચારાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો
જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા આદેશ હૈ ઉસકા નામ આદ્યા હૈ ઇસસે વિપરીત

આવ એ છે કે યથાચ્યાત ચારિત્રમાં અનાદ્યે આ જીવની રતિ-રમણ થાય છે,
ત્યારે તે ‘અ ઇ ડ ક્ષ લ્’ આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં બેટલો
સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે અર્થાત્
સમયને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી મોક્ષ જ લાભ થાય તે જીવ મુક્તિને લાભ
કરી લે ॥ સૂ. ૧ ॥

એની ચારિત્રમાં રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં કુલ્લોના
અનન્ત યોજાને ઉક્ષવર્તા આવીતહીં ધ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—

અણાણાપ इत्यादि । જ્ઞાનાચારાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ એ જિનેન્દ્ર
ભગવાનને આદેશ ॥ તેનું નામ આદ્યા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અન્યાય છે

કરને કે લિયે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોતી હૈ । વાહ્ય કારણ સે ઇતના કામ નહીં બનતા જિતના અન્તરંગ સે । ચારિત્ર કો અંગી-કાર કરને મેં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા હૈ પરન્તુ ઇન દો વાહ્ય આભ્યન્તર કારણોં સે ઉપાદાન મેં વહ શક્તિ આજાતી હૈ કિ જિસસે ઉસે અપને લિયે હુણ સંયમ મેં રતિ ઇવં સંસાર-શરીર ઓર ભોગોં મેં અરતિ સ્વતઃ આજાતી હૈ । પ્રકૃત મેં યહોં ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિક અન્તરંગ કારણ હૈ ઓર પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં સે સર્વથા વિરતિભાવ કી જાગૃતિ વાહ્ય કારણ હૈ । જૈસે અગ્નિ ઓર ધૂમ કી (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ હૈ ઉસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર કે સાથ અન્તરંગ કારણ ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમા કી વિષમ વ્યાપ્તિ નહીં હૈ-અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત હૈ, જહાં પર ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ વહાં પર નિયમ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ ઓર જહાં પર સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ વહાં પર નિયમ સે ચારિત્ર મોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ । ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર ઓર ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિકોં કી સમવ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ) હૈ । પરન્તુ અન્તરંગ મેં ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિક કે અભાવ મેં જો વાહ્ય મેં સર્વ-સાવધવિરતિ રૂપ ચારિત્ર કી સત્તા માલૂમ પડતી હૈ-વહ

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું જેટલું અન્તરંગથી ચારિત્રના અંગીકાર કરવામા યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા છે પરંતુ આ બે-બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમા તે શક્તિ આવી જાય છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સયમમા રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમા અરતિ આપમેળે આવે છે પ્રકૃતમા અહીંઆ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક અન્તરંગ કારણ છે, અને પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિભાવની જાગૃતિ બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ છે તે પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્રની સાથે અતરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે જ્યાં ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે ત્યાં નિયમથી સમ્યક્ચારિત્ર છે અને જ્યાં સમ્યક્ચારિત્ર છે ત્યાં નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે આ પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્ર અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિકોની સમ વ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ છે) પરંતુ અન્તરંગમા ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમા જે બાહ્યમા સર્વસાવધ વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલુમ પડે છે તે કેવળ એક ઢોગ છે. તે ઢોગ ઉલ્ટો

અસાધવોડપિ સ્વાસ્થાને સાધુ મન્યમાના કિં કુર્વન્તીત્યાહ—‘અપરિગ્રહા’—ઈતિ અપરિગ્રહા=પરિ-સર્વતો મૂછામાષેન શુદ્ધત ઇતિ પરિગ્રહ, અવિધમાનઃ પરિગ્રહો યપામિત્યપરિગ્રહા=નિર્ગ્રન્થા વયં મવિપ્યામ ઇતિ વળ્લિશાક્યાદયોડવસમપાર્શ્વ-સ્થાદયો વા સમુસ્થાય=સાધુવેષં ચારિત્ર ચ શ્લીત્વા તતા લમ્બાન્=માત્તાન્ કામાન્=શબ્દાવિનિપયાન્ અભિગાહન્તે=સંભવત્ । અથ મૂછે આર્પણાદક્ષત્રચનમ્ । અથ ‘અપરિગ્રહા’ ઇતિ પશ્ચમમહાપ્રતોપાદાનાવચ્છિપ્તાનિ ચત્તારિ મહાપ્રતાન્યપિ વિજ્ઞયાનિ, અપરિગ્રહ સર્વેપામન્તમાવાત્ ।

નિર્ગ્રન્થ હ । ઈસી યાત્રા કા ચુલાશા ‘અપરિગ્રહા’ ઇસ પદ સે સૂત્રકારને ક્રિયા છે । જો સૂર્જામાય સે ગ્રહણ ક્રિયા જાતા છે તુકા નામ પરિગ્રહ છે । યહ પરિગ્રહ જિનકે વિધમાન નહીં છે—એ અપરિગ્રહ છે । વળ્લિ શાક્યાદિક અથવા અવનન્ન પાસત્યાદિક ‘હમ નિર્ગ્રન્થ છે અથવા આમે ચલકર નિર્ગ્રન્થ હો જાયેંગે’ ઇસ અભિપ્રાયસે સાધુવેષ પો ઓર ચારિત્ર કો ગ્રહણ કર તુકી આજ સે અપની વૈષયિક વાસના કી તૃપ્તિ કરતે છે । ઇનકી ઇસ પ્રકાર કી વાચા પ્રવૃત્તિ વસ્તુકર લોગ ધાર્મિક માધના સે ઇનકી દર દર પ્રકાર સે સેવા કરતે છે, જિસ વસ્તુ કી ઇન્ને આવશ્યકતા હોતી છે તુકી પૂર્તિ કરતે રહતે છે । ઇસ સાધુપને કે વાળને સે ઇન્ને જો કુછ ની મિલતા છે સિર્ફ એ ઇસસે અપની વૈષયિક વાસના કી હી પૂર્તિ કરતે રહતે હ વાસ્તવિક સર્વસાવચ ચિરતિ રૂપ ચારિત્ર કા આચરણ ઇનસે દર દર રહતા છે । ઇસી યાત્રા કી પુષ્ટિ ‘સમુસ્થાય લંબાત્ કામાન્ અભિગાહન્તે’ ઇસ પાંક્તિ સે સૂત્રકાર ને કી છે । સર્વસાવચ-ચિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત

પુણ્યનો અપરિગ્રહ આ પદમાં સૂત્રકાર કથી છે એ મૂર્ખાભાવથી પ્રવૃત્ત કરે છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે આ પરિગ્રહ એને વિધમાન નથી તે અપરિગ્રહ છે । હી શાક્યાદિક અને અવનન્ન પાસત્યાદિક ‘અમે નિર્મ થ છીએ’ ‘અથવા અમમ માણીને નિર્મ-થ થઈ જશું’ આ અભિપ્રાયથી સાધુવેષ અને ચારિત્રને ગ્રહણ કરી તેની આત્મી પોતાની વૈષયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરી લે છે તેની આ પ્રકારે વાચા પ્રવૃત્તિ દેખીને લોક ધાર્મિક ભાવનાથી તેની દરેક પ્રકારથી સેવા કરે છે એ વસ્તુની તેને આવશ્યકતા હાય તેની પૂર્તિ કરતા રહે છે આ સાધુપણના અભાવથી એ કઈ પણ મળે છે દુષ્ટા તનાથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરે છે વાસ્તવિક સર્વસાવચચિરતિરૂપ ચારિત્રનું આચરણ તેનાથી દૂર જ રહે છે આ વાતની પુષ્ટિ સમુસ્થાય લંબાત્ કામાન્ અભિગાહન્તે આ પાંક્તિથી સૂત્રકારે કર્યું છે એવ સાવચચિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરવાને માટે વાચા અને

કરને કે લિયે વાહ્ય ઔર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોની હૈ । વાહ્ય કારણ સે इतना काम नहीं बनता जितना अन्तरंग से । चारित्र को अंगी-
 कार करने में यद्यपि उपादान कारण आत्मा है परन्तु इन दो वાહ્ય
 આભ્યન્તર કારણોં સે ઉપાદાન મેં વહ શક્તિ આજાતી હૈ કિ જિસસે ઉસે
 અપને લિયે હુગ સંયમ મેં રનિ ણવં સંસાર-શરીર ઔર ભોગોં મેં અરતિ
 સ્વતઃ આજાતી હૈ । પ્રકૃત મેં યહોં ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિક
 અન્તરંગ કારણ હૈ ઔર પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં સે સર્વથા વિરતિભાવ કી
 જાગૃતિ વાહ્ય કારણ હૈ । જૈસે અગ્નિ ઔર ધૂમ કી (પરસ્પર અનિયતિ)
 વિષમ વ્યાપ્તિ હૈ ઉસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર કે સાથ અન્તરંગ કારણ
 ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમ કી વિષમ વ્યાપ્તિ નહીં હૈ-અર્થાત્ પરસ્પર
 સમનિયત હૈ, જહાં પર ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ વહાં પર નિયમ
 સે સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ ઔર જહાં પર સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ વહાં પર નિયમ
 સે ચારિત્ર મોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ । ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર ઔર
 ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિકોં કી સમન્વ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ) હૈ ।
 પરન્તુ અન્તરંગ મેં ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિક કે અભાવ મેં જો
 વાહ્ય મેં સર્વ-સાવધવિરતિ રૂપ ચારિત્ર કી સત્તા માલૂમ પડતી હૈ-વહ

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું
 જેટલું અન્તરંગથી ચારિત્રના અંગીકાર કરવામા યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા
 છે પરતુ આ બે-બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમા તે શક્તિ આવી જાય
 છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સયમમા રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમા
 અરતિ આપમેળે આવે છે પ્રકૃતમા અહીંઆ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક
 અતરંગ કારણ છે, અને પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિભાવની જાગૃતિ
 બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ
 છે તે પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્રની સાથે અતરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશ-
 મની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે ન્યા ચારિત્રમોહનીયનો
 ઉપશમાદિ છે ત્યા નિયમથી સમ્યક્ચારિત્ર છે અને ન્યા સમ્યક્ચારિત્ર
 છે ત્યા નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે આ પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્ર
 અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિઓની સમ વ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ છે) પરતુ
 અન્તરંગમા ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમા જે બાહ્યમા સર્વસાવધ
 વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલૂમ પડે છે તે કેવળ એક ઢોંગ છે તે ઢોંગ ઉઠે

કેવલ એક ઢોંગ છે । ઘડ ઢોંગ ઉડ્યા જીવ કો કર્મબન્ધ કા કારણ હોતા છે । એસે વ્યક્તિ ચારિત્ર કા ઢોંગ રચકર ઉસકી આજ મેં અપને વિષય કપાપોં કી હી પુષ્ટિ કિયા કરતે હૈં । યથાપિ સૂત્રમેં ‘અપરિગ્રહ’ હસ શબ્દ સે કેવલ પાંચવેં મહાવ્રત કા હી ગ્રહણ થતલાયા હૈં પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોંકા મી હસી એક પદ સે ગ્રહણ હો જાતા છે ।

હસી પ્રકાર જો વાસ્તવિક રૂપ સે અપરિગ્રહી નહીં હૈં કિન્તુ પરિગ્રહ સ્થાગ કા ઢોંગ રચતે હૈં, ડસીસે યહ મી સમજા લેના ચાહિયે કિ જો વાસ્તવિક રૂપસે અહિંસાવિમહાવ્રતધારી નહીં હૈં, કિન્તુ અહિંસામહાવ્રતી આદિ હોને કા ઢોંગ કરતે હૈં, એ કેવલ લોકોં કી પ્રતારણા કરને કે લિપ્ત હી અપની પેસી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । દ્રવ્યલિંગી સાધુઓં કી પ્રવૃત્તિ હસી ઢંગ કી હી હોતી છે । હનકે આત્મા મેં ઉસ સમક્તિજ્યોતિ કા પિલકુલ હી પ્રકાશ નહીં હોતા છે કિ જિસકે સન્નાવ સે મહાવ્રતોં મેં સમ્યક્પના આતા છે । હનકે ઉપર કે મહાવ્રત હૈં । જિસ પ્રકાર નદ અનેક વેપોં કો ધારણ કરતા હુઆ મી અંતરજ્ઞા મેં ડન ૨ વેપોંકી પરિણામોં સે સર્વથા શૂન્ય રહતા છે ડસી પ્રકાર યે દ્રવ્યલિંગી મી વાક્ય મેં મહાવ્રતી હોને કા કેવલ એક ઢોંગ હી કિયા કરતે હૈં ડસસે ડનકી આત્મા

જીવને કર્મબન્ધુ કારણ થાય છે, એવી વ્યક્તિ ચારિત્રને ઢોંગ રચીને તેની આત્મા પોતાના ક્ષિય કપાયોની જ પુષ્ટિ કરે છે, યથાપિ સૂત્રમા ‘અપરિગ્રહ’ આ શબ્દથી કેવળ પાંચમા મહાવ્રતનું જ મહત્ત્વ બતાવ્યું છે પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોનું પણ એમ એક પદથી મહત્ત્વ થાય છે

આ પ્રકારે જે વાસ્તવિક રૂપથી અપરિગ્રહી નથી પણ પરિગ્રહસ્થાનને ઢેકે । રચે છે તેનાથી એ પણ સમજી લેવું એકદમ કે જે વાસ્તવિક રૂપથી અહિંસાવિ મહાવ્રતધારી નથી પણ અહિંસા-મહાવ્રતી આદિ હોવાનો ઢોંગ કરે છે તેઓ કેવળ હોકોની પ્રતારણા કરવા માટે જ પોતાની એવી પ્રવૃત્તિ કરે છે. દ્રવ્યલિંગી સાધુઓની પ્રવૃત્તિ આ હબની હોય છે તેના આત્મામા સમક્તિ જ્યોતિને બિલકુલ જ પ્રકાશ નથી હોતો કે જેના સદ્ભાવથી મહાવ્રતોમા સમ્યક્પણ આવે તેના ઉપરના મહાવ્રતો છે જે પ્રકારે નદ અનેક વેપોને ધારણ કરે છે પણ અંતરગત તે તે વેપોના પરિણામોથી સર્વથા શૂન્ય રહે છે, તે પ્રકારે એ દ્રવ્યલિંગી પણ બાહ્યથી મહાવ્રતી હોવાનો કેવળ એક ઢોંગ જ કરે છે, જેનાથી તેના આત્મા બિલકુલ રન્ધિત થતો નથી, બલકે તેની પ્રવૃત્તિથી બાહ્યજન રન્ધિત થાય, પરંતુ તેના આત્મા સ્વતઃ તદનુકૂળ પ્રવૃત્તિથી શૂન્ય હોવાથી બિલકુલ

તદિત્યં દ્રવ્યલિङ્ગિનો નટા ઇવ તે હિંસામૃપાડ્ત્તાદાનાદિના લોકાન્ વશ્ચયન્તિ ।
તે પુનસ્તાઝાભાય પ્રવૃત્તા ભવન્તીત્યાદ્-‘અનાજ્ઞયે’-તિ ।

અનાજ્ઞયા=ભગવદાજ્ઞાવહિર્ભૂતયા સ્વચ્છન્દમત્યા મુનયઃ=મુનિવેપધારિણઃ,
શબ્દાદિકામોપાયે પ્રત્યુપેક્ષન્તે=પ્રવર્તન્તે કામભોગવિનિવિષ્ટચિત્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।
અત્ર=અસ્મિન્ કામભોગાસક્તિરૂપે મોહે, દ્રવ્યમોહે=મદ્યાદૌ, ભાવમોહે=સંસારેડ્જ્ઞાને
વિલકુલ હી રંજિત નહીં होती है । ‘મલે હી-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन
रंजित नहीं होती है, ‘मले ही-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन रंजित हो जावें,
परन्तु इनका आत्मा स्वतः नदनुकूल-प्रवृत्ति से शून्य होने से विलकुल
भी रंजित नहीं हो पाता है; हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों में ही
इनका अन्तरङ्ग लालसायुक्त बना रहता है । इसीसे ये लोकों को
ठगते रहते हैं । ऐसी प्रवृत्ति इनकी क्यों होती है? इस का कारण बताते
हुए सूत्रकार कहते है कि-‘अनाज्ञया मुनयः प्रत्युपेक्षन्ते’ महाव्रतों
को धारण करने का ढांग ये लोग इसी लिये करते है कि ये भगवदाज्ञा
से वहिर्भूत है । भगवान की आज्ञा-ग्रहण किये हुए महाव्रतों को अन्त-
रङ्ग की सच्ची लगन के साथ पालने की है । पांच आस्रवों का नवकोटि
से त्याग किये विना उनका शुद्ध पालन नहीं हो सकता है । जो इस प्रकार
की आज्ञा से वहिर्भूत हैं और “जो हम कहते हैं वह सत्य एवं शुद्ध
है” इस प्रकार की स्वच्छन्द्र प्रवृत्तिशाली हैं वे मुनि वेषधारी साधु
शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्त रहते हैं । “अत्र मोहे पुनः
पुनः संज्ञा नो हव्याय नो पाराय” मोह दो प्रकार का है-एक द्रव्यमोह

પણ રંજિત થતો નથી, હિંસા, જુઠ, ચોરી, આદિ આશ્રવોમા જ તેની અતરંગ
લાલસા બની રહે છે જેથી તે લોકોને ઠગતા રહે છે એવી પ્રવૃત્તિ તેની કેમ
થાય છે તેનું કારણ બતાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે—

‘અનાજ્ઞયા મુનય પ્રત્યુપેક્ષન્તે’ મહાવ્રતોને ધારણ કરવાનો ઢાંગ તે લોક
એ માટે કરે છે કે-તેઓ ભગવદ્વિજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે. ભગવાનની આજ્ઞા
મહાવ્રતોને અતરંગની સાચી લાગણીથી પાળવાની છે પાંચ આશ્ર-
વોના નવ કોટિથી ત્યાગ કર્યા વિના તેનું પાલન થતું નથી જે આ પ્રકારની
આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે અને “જે અમે કહીએ છીએ તે સત્ય અને શુદ્ધ છે”
આ પ્રકારની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિશાલી છે તે મુનિવેપધારી સાધુ શબ્દાદિક પાંચ
ઇન્દ્રિયોના વિષયોમા પ્રવૃત્ત રહે છે ‘અત્ર મોહે પુન પુન સંજ્ઞા નો હવ્યાય નો પારાય’
મોહ બે પ્રકારનો છે-એક દ્રવ્યમોહ અને બીજો ભાવમોહ. મદ્યાદિક દ્રવ્યમોહ

ચ પુન પુનઃ=અત્યન્ત મુદ્ધર્ષા સમાઃ=વિષયામિલાપિણો મૂઢા નિમગ્નાઃ સન્તો નો
 દ્રવ્યાય, દ્રવ્ય=ગાર્હસ્થ્યં પ્રકામકામમોગિત્વ તસ્મૈ, પારઃ સંયમસ્તસ્મૈ=તદર્થ ન મન્વતિ,
 નૈત્કલ્લોકાય ન પરલોકાય ધ, ન તે ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો, યથા મધ્યેનદિનિમગ્નાસ્તે
 ન ક્યમપિ પારં ગન્તું શક્નુવન્તિ, અપિ તુ નિમજ્જન્ત્યેવ, તથૈવ તે મન્વન્તીત્યર્થઃ, ય
 પરિધૃતસાધુવેવાઃ કામોપાયેષુ સજ્જ સે તે ન ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો ધા મન્વિતુમર્હન્તીતિ
 તાત્પર્યમ્ । અદ્વિચિન્તાનાં મુનિવેપધારિણાં પૂર્વે હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્ય-ગૃહ-ગૃણી
 -પુત્ર-મિત્રાદેઃ પરિત્યક્તવયા ન ગૃહસ્થત્વં, ધારિત્રસ્ય સમ્યગપરિપાલનેન વાન્તા-
 મિલાપિતયા નાપ્યનગારત્વમુપપદ્યત इति भावः ॥ सू० २ ॥

और दूसरा भावमोह । मद्यादिक द्रव्यमोह है, संसार एवं अज्ञान भाव-
 मोह है । कामभोगों में आसक्तिका नाम मोह है । इन भोगों की आस-
 क्तिमें जीव की प्रवृत्ति अज्ञान से होती है । कामभोगों की प्रवृत्ति को
 उसेजना मद्यादिक के सेवन से जीवों को मिलती है । इसलिये उन्हें
 द्रव्यमोह कहा है । विषयामिलापी मूढ जीव इस मोह में अत्यन्त भ्रष्ट
 बारंबार प्रवृत्ति करते हुए न तो यथेच्छ कामभोगादि भोग सकते हैं
 और न संयम ही पाल सकते हैं । जैसे नदी की मझपार में निमग्न
 हुआ प्राणी न इस पारका रहता है और न उस पार का रहता है, उसी
 प्रकार ऐसे प्राणी न इस लोक के रहते हैं और न उस लोक के ही रहते हैं-
 न वे सच्चे गृहस्थ ही बन पाते हैं और न सच्चे मुनि ही । नदी की
 मझपार में निमग्न प्राणी जिस प्रकार मझपार में ही डूब जाता है, उसी
 तरह से ये प्राणी भी साधुवेष छोड़कर विषयों में लवलीन बन बीच

છે, સંસાર અને અજ્ઞાન ભાવમોહ છે કામભોગોમાં આસક્તિ તેનું નામ મોહ
 છે, તે ભોગોની આશક્તિમાં લવળી પ્રવૃત્તિ અજ્ઞાનથી કામ્ય છે કામભોગોની
 પ્રવૃત્તિને ઉત્તેજના મધ્યાદિકના સેવનથી લવળે મળે છે, માટે તેને દ્રવ્યમોહ
 કહ્યો છે, વિષયામિલાપી મૂઢાં લવ આ મોહમાં અત્યંત અને વારંવાર પ્રવૃત્તિ
 કરવા છતાં પણ નથી યથેચ્છ કામભોગાદિ ભોગવી શકતા, અને નથી સંયમનું
 પાલન કરી શકતા જેમ નદીની મઝપારમાં નિમગ્ન થયેલ પ્રાણી નથી આ પાર
 જઈ શકતું કે નથી તે પાર જઈ શકતું એ પ્રકારે આવા પ્રાણી, નથી આ લોકના
 રહેતા અગર નથી પરલોકના રહેતા નથી તેઓ સાધ્યા ગૃહસ્થી બની શકતા,
 અને નહિ સાધ્યા મુનિ. નદીની મઝપારમાં નિમગ્ન પ્રાણી જેમ મઝપારમાં જ
 ડુબી બસ છે તે પ્રકારે આ પ્રાણી પણ સાધુવેષ છોડીને વિષયોમાં લવલીન

યે સંયમે રતિ, શબ્દાદિવિષયે ચારતિં વિદધાનાસ્તે કીદૃશા ભવન્તીતિ દર્શયતિ-
'વિમુક્તા' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—વિમુક્તા હુ તે જળા જે જળા પારગામિણો, લોભમ-
લોભેન દુગુંછમાણે લલ્લે કામે નાભિગાહઈ, વિળાવિ લોભં નિલ્લમ્મ
એસ અકમ્મે જાળઈ પાસઈ, પડિલેહાણ નાલ્લકંલઈ, એસ અળ-
ગારિ-ત્તિ પવુલ્લઈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વિમુક્તા હુ તે જના યે જનાઃ પારગામિનઃ, લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનો
લલ્લાન કામાનાભિગાહતે, વિનાપિ લોભં નિલ્લમ્મ એષઃ અર્કમા જાનાતિ પશ્યતિ
પ્રત્યુપેક્ષ્ય નાલ્લકાલ્લકતિ એષઃ અનગાર ઇતિ પ્રોચ્યતે ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—'વિમુક્તા' ઇત્યાદિ, 'પારગામિનઃ' પારો મુક્તિસ્તદ્વેતુર્જ્ઞાનદર્શનચા-
રિત્રાણ્યપિ પારઃ કાર્યકારણયોરભેદાત્, તેન પારં મોક્ષં તદ્વેતુશ્ચ જ્ઞાનાદિકં ગન્તું=પ્રાપ્તું

હી મેં લટકતે રહતે હૈં, ન લે સાધુ હી હૈં ઓર ન ગૃહસ્થ હી । સંયમ પાલન
કરને મેં જિનકે ચિત્ત મેં દૃઢતા તો હૈં નહીં, પરન્તુ મુનિ કા લેષ ધારણ
કર લિયા હૈં, હિરણ્ય-સુવર્ણ, ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિક કા
મુનિવ્રત ધારણ કરને કે પહિલે ત્યાગ ભી કર દિયા હૈં અતઃ ગાર્હસ્થિક
જીવન કે લિયે ઉપયોગી વસ્તુ કા ઉનકે પાસ સદ્ભાવ ન હોને સે ન ઉનમેં
ગૃહસ્થતા હૈં, ઓર ચારિત્ર કા સમ્યક્ રીતિ સે પાલન નહીં કરને કી વજહ
સે મુનિપના હી હૈં ॥ સૂ૦ ॥ ૨ ॥

જો સંયમ મેં રતિ એવં શબ્દાદિ વિષયોં મેં અરતિ કરતે હૈં, લે કૈસે
હોતે હૈં ? ઇસ લાત કા લુલાશા કરતે હૈં—

'વિમુક્તા હુ તે જળા' ઇત્યાદિ । કાર્યકારણ મેં અભેદ-લિલ્લક્ષા હોને સે

અની વચ્ચમા જ લટકતા રહે છે નથી તેઓ સાધુ છે અગર નથી તેઓ ગૃહસ્થી
સંયમ પાળવામા જેના ચિત્તમા દ્રઢતા છે જ નહિ, પરંતુ મુનિનો લેષ ધારણ
કરી લીધો છે હિરણ્ય-સુવર્ણ ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિકનો મુનિવ્રત
ધારણ કરવા પહેલા જ ત્યાગ કરેલ છે માટે ગૃહસ્થી જીવન માટે ઉપયોગી
વસ્તુનો સદ્ભાવ ન હોવાથી નથી તેનામા ગૃહસ્થીપણુ અને આ ચારિત્રને સમ્યક્
રીતિથી પાલન નહિ કરવાથી મુનિપણુ પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

જે સંયમમા રતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમા અરતિ કરે છે તે કેવા હોય
છે ? તેનો ખુલાસો કરે છે—

'વિમુક્તા હુ તે જળા' ઇત્યાદિ—કાર્યકારણમા અભેદલિલ્લક્ષા હોવાથી પાર

શીલં યેષાં તે પારગામિનો યે જના મુમુક્ષવસ્તે વિમુક્તા વિવિધમાવનયા દ્રવ્યતો વિષપરિવારસંસર્ગેણ, માવતો વિષયકપાયાદિતઃ પ્રતિસમયં મુખ્યમાના મોહ્ય-માણા ના વિમુક્તા* કુ=નિમ્બયેન મવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ। વિમુક્તાઃ કુતસ્તે મવન્તીત્યાહ-
'લોમ'—મિતિ 'લોમ' =લોમમોહનીયોદયેન પરચસ્તુપ્રવેષેષ્ઠા, તમ્ અલોમેન=

પાર શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ તથા—મુક્તિ કે કારણમૂલ સમ્યગ્દર્શન, સમ્ય-ગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર છે। ઇસ પાર કો પ્રાપ્ત કરને કા જિનકા સ્વમાય છે કે પારગામી કહે જાતે છે। જો મુમુક્ષુ છે કે અનેક પ્રકાર કી સાંસારિક ભાવનાઓ સે રહિત હોતે છે। 'વિમુક્ત' ઇસ પદ મેં 'વિ' ઉપસર્ગ ઓર 'મુક્ત' પેસે દો શબ્દ છે। 'વિ' કા અર્થ અનેક પ્રકાર કી ભાવના છે। 'મુક્ત' શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય ઓર ભાવ સે રહિત હોના છે 'કુ' શબ્દ કા અર્થ નિમ્બય છે। અર્થાત્ જિનકો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છા હોતી છે પેસે પ્રાણી નિયમત* દ્રવ્ય સે—ધનાદિક એવં પરિવાર કે સંસર્ગ સે તથા ભાવસે—વિષયકપાયાદિકો સે પ્રતિસમય રહિત હોતે છે।

લોમમોહનીય કે ઉદય સે પરચસ્તુ કે પ્રવેશ કરને કી ઇચ્છા કા નામ લોમ છે। ઇસસે વિપરીત અલોમ છે। 'જુગુપ્સમાન' શબ્દ કા અર્થ જીતને ચાલા, યા નિગ્રહ કરને ચાલા છે। વિમુક્ત હોને મેં યહ હેતુ-ગર્મિત વિશેષણ છે। ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા છે કિ કે વિમુક્ત ઇસલિયે છે કિ ઉન્હોને લોમ કો સંતોષ સે નિગૂહીત કર દિયા છે।

શબ્દનો અર્થ મુક્તિ અને મુક્તિના કારણમૂલ સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર છે આ પારને પ્રાપ્ત કરવાનો હેતુ સ્વભાવ છે તે પારગામી કહેવાય છે

કે મુમુક્ષુ છે તે અનેક પ્રકારની સામાયિક ભાવનાઓથી રહિત હોય છે.

વિમુક્ત' આ પદમાં 'વિ' નો અર્થ અનેક પ્રકારની ભાવના છે. 'મુક્ત' શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય અને ભાવથી રહિત થવું 'કુ' શબ્દનો અર્થ નિમ્બય છે. અર્થાત્ હેને મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છા થાય છે એવો પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્યથી—ધનાદિક અને પરિવારના સંસર્ગથી, તથા ભાવથી—વિષયકપાયાદિકોથી પ્રતિસમય રહિત થાય છે.

લોમમોહનીયના ઉદયથી પરચસ્તુને પ્રવેશ કરવાની ઇચ્છા તેનું નામ લોમ છે તેથી વિપરીત અલોમ છે. જુગુપ્સમાન' શબ્દનો અર્થ છુટવાવાળા અને નિમ્બ કરવાવાળા છે વિમુક્ત હોવામાં તે હેતુગર્મિત વિશેષણ છે તેથી એ નિષ્કર્ષ નીકળે છે કે તે વિમુક્ત એવા માટે છે કે તેઓએ લોમને સંતોષથી નિગૂહીત કરેલ છે

તદ્વિરુદ્ધેન સન્તોષેણ જુગુપ્સમાનઃ=નિન્દન્, સૂત્રેઽસ્મિન્ પૂર્વં बहुवचनप्रसङ्गेऽत्राप्येऽपि सर्वत्रैकवचनं तु जात्येकत्वविवक्षया समर्थनीयम् । लोभो हि संसारगर्तपातने प्रथमो गण्यते । लोभस्तु जीवस्य विमोहनमाकुलीकरणमिति यावत्, लुब्धो

સૂત્ર મેં પહિલે बहुवचन का प्रयोग किया है, बाद में जो सर्वत्र एक वचन का प्रयोग हुआ है वह जाति की अपेक्षा से समझना चाहिये ।

परवस्तु को अपनाने की इच्छा लोभमोहनीय के उदय से जीवों को होती है । लोभ दो प्रकार का है—एक वादरलोभ, दूसरा सूक्ष्मलोभ । वादरलोभ का सद्भाव आगम में ९वें गुणस्थान तक, तथा सूक्ष्मलोभ का सद्भाव १०वें गुणस्थान तक प्रकट किया है । इसलिये जबतक आगे २ के गुणस्थानों की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक ऐसे जीवों को लोभ का उदयरहता ही है, अतः जब लोभ का उदय है तो उसका कार्य भी वहां होना चाहिये ? इस शंका का निराकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘लोभम् अलोभेन जुगुप्समानः’ वे जीव लोभकषाय को संतोष से जीतते हैं । मुमुक्षु जीव परवस्तु के लाभ से आकृष्ट एवं अलाभ से असंतुष्ट नहीं होते ।

लोभ का निराकरण करते हुए टीकाकार कहते हैं कि—जीवों को संसाररूपी गड्ढे में गिराने का सर्वप्रथम कारण लोभ माना गया है जो जीवों को आकुलितपरिणामी बना देता है । लुब्धक रात-दिन व्याकुल ही

સૂત્રમા પહેલા બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે બાદમાં બે સર્વત્ર એક વચનનો પ્રયોગ થયેલ છે તે બંતિની અપેક્ષાથી સમજવું જોઈએ.

પરવસ્તુને અપનાવવાની ઇચ્છા લોભમોહનીયના ઉદયથી થાય છે લોભ બે પ્રકારના છે એક વાદરલોભ, બીજો સૂક્ષ્મલોભ

વાદરલોભનો સદ્ભાવ આગમમાં ૯મા ગુણસ્થાન સુધી, તથા સૂક્ષ્મલોભનો સદ્ભાવ ૧૦માં ગુણસ્થાન સુધી પ્રગટ કરેલ છે, માટે બંન્માંસુધી આગળ આગળના ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી એવા જીવોને લોભનો ઉદય રહે જ છે, માટે બંન્નારે લોભનો ઉદય છે તો તેનું કાર્ય પણ ત્યાં હોવું જોઈએ ? આ શકાનું નિરાકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાન’ તે જીવ લોભકષાયને સંતોષથી જીતે છે મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુના લાભથી આકૃષ્ટ અને અલાભથી અસંતુષ્ટ થતા નથી

લોભનું નિરાકરણ કરતાંયકા ટીકાકાર કહે છે કે—જીવોને સંસારરૂપી ખાડામાં પડવાનું સર્વ પ્રથમ કારણ લોભ જ છે લોભ જીવોને આકુલિતપરિણામી બનાવી

હિ રામિન્દિયં સમાકુલ્લ ઇવાયતિષ્ઠતે, 'કદા કુતઃ કયં કુઞ્ચ ધનાદિકં લપ્સ્યે' ઇત્યાશ્વા
 પ્રસ્તો દુર્લભપર્વતમપિ લિસ્લક્યિયતિ, અપારપારાધારમપિ તિતીર્પતિ, દુર્ગમગિરિકુલ્લેષુ
 શંઘ્રમીતિ, નિજવાન્ધવનિકરમપિ મિમારયિયતિ, દુર્ગમમપિ જિગમિયતિ, ઘડુ મારં
 ચાવહીતિ, દુઃસહા હ્રુપમપિ સોહુમિચ્છતિ, પાપં ચિકીર્ષતિ, કુલ્મશ્ચીસ્રજાતિપૈર્યાશ્ચિ
 ચ પરિનિહાસતિ, કિમધિકેન ? અજ્ઞાનાન્ધકારાદ્વતાયાં સોમરાત્રી પ્રાણાતિપાતાદિ
 દોષવતસ્કરૈરાત્મધનં લ્પ્ઠયતિ, ચિત્તમહારણ્ય મોહાન્ધકારે સોમપિજ્ઞાનં નર્ચયતિ ।
 સોમાકુલિત્ત્વેતા હિ જષ્ઠે જીર્ણપત્રમિષ, વાયૌ સ્પૃશ્વતુળમિવ, ગગને શ્વરન્મેઘ ઇથેતસ્તત
 સસારે પરિભ્રમતિ । સોમિનો જનસ્ય સકલોઽપિ ગુણો દોષાયતે । હ્રુમ્બો હિ
 સર્વાપદાસ્પદં ભવતિ, ઉક્તમ્—

યના રહતા હૈ । વહ 'કિસ સમય કહાં સે કૈસે ધનાદિક કા અર્જન કરેંગા' ઇસ આશા સે પ્રેરિત હો દુર્લભ્ય પર્વતાદિકોં કોં ભી પાર કરને કી इच्छा રહતા હૈ, અપાર સમુદ્ર કોં ભી તૈરને કી 'માધના રહતા હૈ, દુર્ગમ-પહાડી શાકિયોં મેં ભી ધ્રમણ કરને કી કામના કરતા હૈ, અપને ઘાંધવોં કોં ભી મારને કા મનોરથ કરતા રહતા હૈ, જહાં કોઈ નહીં જા સકતા પેસે ભયંકર સ્થાન મેં ભી જાને કી ઘાહના કરતા હૈ, ઘડુત મારી ઘોઘ કોં ભી ઘોતા હૈ, દુઃસહ ધ્રુપા કોં ભી સહન કર લેતા હૈ, પાપ કરને કે લિયે ભી વતાન હો જાતા હૈ, અપને કુલ, ઘીલ, જાતિ ઓર ધૈર્ય કો મૌકા પકડે પર છોડને કે લિયે કટિષદ્ધ હો જાતા હૈ । અધિક કયા કહા જાય ? અજ્ઞાન રૂપી અધકાર સે અચ્છાદિત ઇસ લોમરૂપી મહારાત્રિ મેં યહ જીવ આત્મધન કો પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી બોરોં સે સદા ધુરતા રહતા હૈ ।

હે છે હ્રુમ્બક તત્ત્વ દિવસ વ્યાકુળ જ બની રહે છે, 'કયા વખતે કયા રે કેવી રીતે ધનાદિકનું અર્જન કરે' આવી આશાથી પ્રેરિત થઈ બોલતી ન શકાય તેવા પર્વતોને પણ પાર કરવાની ઇચ્છા કરે છે અપાર સમુદ્રને તરવાની પણ ભાવના તણે છે, દુર્ગમ-પહાડી ઝીઝીઓના પણ ધ્રમણ કરવાની ઇચ્છા તણે છે, પોતાના ભાઈઓને પણ મારવાના મનોરથો તેવે છે, બધા કંઈ જઈ શકતું નથી તેવા ભયંકર સ્થાનમાં જવાની પણ હિંમત કરે છે, ઘડુ ભારે બોલ પણ ઉઠાવે છે, દુઃસહ ભૂખને પણ સહન કરી લે છે પાપ કરવાને માટે પણ તૈયાર થઈ બાધ છે, પોતાનું કુળ, શીલ, જાતિ અને ધૈર્યને પણ વખત મળતા હોવાને તૈયાર થઈ બાધ છે અધિક કેટલું કહેવું - અજ્ઞાનરૂપી અધકારથી અચ્છાદિત આ લોમરૂપી મહારાત્રિમાં આ જીવ આત્મધનને પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી ધોરણી

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

અત્ર લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનઃ, ઇતિ કથનાત્ પ્રધાનાન્ત્યપરિત્યાગપ્રદર્શનેન ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશઃ’ ઇતિ નિયમાત્ ક્રોધાદીનામપિ હેયતા પ્રદર્શિતા । અન્યત્રાપિ પ્રોક્તમ્—

મોહરૂપી અંધકાર સે યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલ મેં લોભરૂપી પિશાચ કો સદા નચાતા રહતા હૈ । જિસ તરહ જલ મેં જીર્ણપત્ર ફતસ્તતઃ ચક્રર કાટા કરતા હૈ, વાયુ કે ફ્લોકોં મેં લઘુતૃણ જિસ પ્રકાર ઉડતા રહતા હૈ, આકાશ મેં શરત્કાલીન મેઘમાલા જૈસે યહાં સે વહાં. વહાં સે યહાં ઘૂમા કરતી હૈ, ઁસી પ્રકાર લોભાકુલિતચિત્તવાલા પ્રાણી ભી સંસાર મેં યહાં વહાં ભમતા રહતા હૈ । લોભી જન કે સમસ્ત ગુણ દોષ રૂપ મેં હી પરિણત હો જાતે હૈં । જૈસે કહા હૈ—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥૧॥

લોભ સે બુદ્ધિ ચલિત હો જાતી હૈ, લોભ તૃષ્ણા કો પૈદા કરતા હૈ, તૃષ્ણા સે પીડિત પ્રાણી ઇસ લોક મેં ઔર પરલોક મેં દુઃખોં કો પાતા હૈ ॥૧॥ સૂત્ર મેં લોભકષાય કો સંતોષ સે નિગ્રહ કરને કા જો કથન કિયા ગયા હૈ વહ ઁક ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે ક્રોધ, માન, માયા કા ભી

હમેશા હુટાવતો રહે છે મોહરૂપી અંધકારથી યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલમા લોભરૂપી પિશાચને હમેશા નચાવતો રહે છે જેવી રીતે પાણીમાં જીવવાનકા અહીંતહીં ચક્કર ફર્યા કરે છે, વાયુની લહરોમા લઘુ તૃણ જેમ ઉડતા રહે છે, આકાશમા શરતકાલીન મેઘમાલા અહીંથી તહીં અને તહીંથી અહીં જેમ ઘૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે લોભાકુલિત ચિત્તવાળા પ્રાણી પણ સંસારમા આહી તહીં ભમ્યા કરે છે, લોભી જનના સમસ્ત ગુણો દોષરૂપમા જ પરિણત થાય છે જેમ કહ્યુ છે—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવ ” ॥ ૧ ॥

લોભથી બુદ્ધિ ચલિત થાય છે લોભ તૃષ્ણાને પેદા કરે છે તૃષ્ણાથી પીડિત પ્રાણી આ લોકમા અને પરલોકમા હુ ખોને પામે છે ॥ ૧ ॥

સૂત્રમા લોભકષાયને સંતોષથી નિગ્રહ કરવાનુ જે કથન કરવામા આવ્યુ છે તે એક ઉપલક્ષણ છે તેથી ક્રોધ, માન, માયાનો પણ પોતપોતાના પ્રતિપક્ષી

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેવં, દ્વારં નાશનમાત્મન ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

‘ ભોમં સન્તોષેષ જયે ’—વિત્યાશયન લોભમલોભનેત્યુક્તમ્,
લોભાત્મીન્ કેન કેન જયેવિત્યાદ્ દશવૈકામિકે—

“ ત્વસમેષ હને કોઈ, માર્ગ મહવયા ઝિજે ।

માયમજ્જવમાવેષ, છોઈ સંતોસ્યો ઝિજે ” ॥ ગાથા ૩૮ ॥

અપને ૨ પ્રતિપક્ષી ભાવોં સે નિગ્રહ કરના સમક્ષ છેના જાહિયે । ક્યોંકિ લોભ કી તરહ મુમુક્ષુઓં કે લિયેવે ક્રોધ આદિ મી હેય હેં । ચાર કષાયોં મેં અન્તિમ કષાય લોભ હૈ । ઉસકે ત્યાગ કે ઉપદેશ સે ક્રોધાદિ કા ત્યાગ કરના સ્વત સિદ્ધ હો જાતા હૈ । કહા મી હૈ—

ત્રિવિધં નરકસ્યેવં દ્વારં નાશનમાત્મન ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ॥

હસ શ્લોક સે અન્યત્ર મી કામ, ક્રોધ એવં લોભ કો નરક કા દ્વાર એવં અપને નાશ કા કારણ બતલાયા હૈ ।

શંકા—લોભ કો ઝિસ તરહ સે સંતોષ સે જીતા જાતા હૈ વસી પ્રકાર ક્રોધાદિકષાયોં કો જીતને કે લિયે કિન ૨ ભાવોં કી જસરત હોતી હૈ ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્ર મેં હન કષાયોં કો જીતને કે લિયે હન ભાવોં કો પ્રકટ કિયા હૈ—

ભાવેધી નિગ્રહ કરવાનુ સમક્ષ લેવુ એઈએ કારણ કે લોભની માફક મુમુક્ષુ બોને માટે ક્રોધ માન આદિ પણ હેય છે આર કષાયોમા અંતિમ કષાય લોભ છે. તેમા ત્યાગના ઉપદેશથી ક્રોધાદિઓ ત્યાગ કરવો સ્વત. સિદ્ધ થઈ જાય છે. કહ્યું પણ છે—

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેવં, દ્વારં નાશનમાત્મન ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકથી અન્યત્ર પણ કામ ક્રોધ બને લોભને નરકનુ દ્વાર બને પોતાના નાશનુ કારણ બતાવ્યુ છે

શંકા—લોભને જેમ સંતોષથી છુટાય છે તેમ ક્રોધાદિ કષાયોને છુટવા ક્યા ક્યા ભાવોની જરૂરત હેય છે ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્રમા આ કષાયોને છુટવા માટે એ ભાવોને પ્રગટ કર્યા છે—

ઢાયા-ઉપશમેન હન્યાત્ક્રોધં, માનં માર્દવેન જયેત્ ।

માયામાર્જવભાવેન, લોભં સન્તોષતો જયેત્ ॥

ઈતિ ક્રોધાદીનાં ચતુર્ણાં ત્યાગોપાયઃ પ્રદર્શિતઃ, અસન્તોષરોગસ્ય લોભપરિત્યાગ ઇવૌષધમિતિ, ઉક્તઞ્ચ—

“ યથાઽઽહારપરિત્યાગો, જ્વરિતસ્યૌષધં મતમ્ ।

લોભસ્યૈવં પરિત્યાગ, -સ્ત્વસન્તોષસ્ય મેષજમ્ ” ॥ ૧ ॥

“ ઉવસમેણ હ્ણે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમજ્જવભાવેણ, લોભં સંતોસઓ જિણે ॥”

ઉપશમ સે ક્રોધ કો, માર્દવ-નમ્રભાવ સે માનકો, આર્જવ ભાવ સે માયા કો ઓર સંતોષ સે લોભ કો જીતના ચાહિયે । અસન્તોષરૂપી રોગ કા ઔષધ લોભપરિત્યાગ હૈ । કહા મી હૈ—

“ યથાઽઽહારપરિત્યાગો, -જ્વરિતસ્યૌષધં મતમ્ ।

લોભસ્યૈવં પરિત્યાગ, -સ્ત્વસન્તોષસ્ય મેષજમ્ ॥ ૧ ॥ ”

જૈસે રોગી કે ઉવર કો નષ્ટ કરને કે લિયે આહાર કા પરિત્યાગ દવા કા કામ કરતા હૈ ઉસી તરહ સે અસન્તોષ કો નષ્ટ કરને કે લિયે લોભ કા પરિહાર મી ઉત્તમ ઔષધિ કા કામ દેતા હૈ । ઇસ કથન સે યહ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ હો જાતા હૈ કિ જો લોભાદિકોં કો ઉનકે પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોં કે દ્વારા નષ્ટ કર દેતે હૈં વે હી વાસ્તવ મેં પારગામી હૈં । ઇસે વ્યક્તિ પ્રાપ્ત હુયે કામભોગોં મેં નહીં ફસતે । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ “ લબ્ધાન્ કામાન્

“ ઉવસમેણ હ્ણે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમજ્જવભાવેણ, લોભં સંતોષઓ જિણે ” ॥

ઉપશમથી ક્રોધને, માર્દવ-નમ્ર ભાવથી માનને, આર્જવભાવથી માયાને અને સંતોષથી લોભને છુતાય છે અસતોષરૂપી રોગનુ ઔષધ લોભપરિત્યાગ છે. કહ્યુ પણ છે—

“ યથાઽઽહારપરિત્યાગો, -જ્વરિતસ્યૌષધં મતમ્ ।

લોભસ્યૈવં પરિત્યાગ, -સ્ત્વસન્તોષસ્ય મેષજમ્ ” ॥ ૧ ॥

જેમ રોગીના જ્વરને નષ્ટ કરવા માટે આહારનો પરિત્યાગ દવાનુ કામ કરે છે તે પ્રકારે અસતોષને નષ્ટ કરવા માટે લોભનો પરિહાર પણ ઉત્તમ ઔષધીનુ કામ આપે છે આ કથનથી એ સિદ્ધાન્ત ભલીભાંતિ પુષ્ટ થાય છે કે-જે લોભાદિકોને તેના પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોના મારફત નષ્ટ કરે છે તે જ વાસ્તવમા પારગામી છે એવી વ્યક્તિ પ્રાપ્ત થયેલ કામભોગોમા ફસતી નથી, એ વાતની પુષ્ટિ ‘ લબ્ધાન્ કામાન્ નામિગાદ્વતે ’ એ ઉપદેશથી સૂત્રકારે

સર્વથા યે લોભાદીન્ સન્તોષાદિના જયન્તિ ત્વ એવ પારગામિના મયન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમિત્યાદિ—અધ્યાન્=સમર્પિતવાન્, કામાન્=કામમોગાન્ નામિ-ગાહતે=ન ભયતે, યો હિ પરિત્યક્તલોભાદિસ્ત્વ કામાદયઃ કદાચિદપિ ન પરામયન્તિ ઇતિ માત્ત્વઃ ।

કોડપિ કેનાપિ હેતુના પરિહીનલાભાદિઃ કૃતચારિત્રગ્રહણો ભવતિ, કદા-ચિત્પુનર્લોભોદયસ્તસ્ય ચેતસિ સ્થાપ્તસ્ય હેયતામર્શનાય, યથ સર્વદેવ લાભાદિરહિતઃ સંયમ ગૃહ્ણતિ સ પવાનગાર ઇતિ પ્રતિપાદનાય ચાદિ—‘વિનાયી’—ત્યાદિ, એપઃ=લોભ-મલોભન નિન્દન્ લોભે=પૂર્વોક્તં વિનાડપિ=લોભરાહિત્યનાડપિ નિષ્ક્રમ્ય=ચારિત્રં ગૃહીત્વા અક્રમા=પાતિકર્મમત્તુષ્ટ્યાપનયનેન માત્રકેવલજ્ઞાનકેવલમર્શનો ભરતાદિકરૂપા ભૂત્વા જ્ઞાનાતિ=વિશેષજ્ઞાનુભવતિ, પશ્યતિ=સર્વં વસ્તુજાતં યથાર્થરૂપેનાવલાકટે । નામિગાહતે’ હસ ઉપદેશ સે સૂત્રકાર ને કી હૈ । ક્યોંકિ જિસને લોભ-દિકા કા પરિહાર કર દિયા હૈ ઉસે કામમોગાદિકા કમી મી પરાસ્ત નહીં કર સકતે ।

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિકાપાપોં સે હીન હૈ, પરન્તુ કિસી વજહ સે યદિ ઉસને ચારિત્ર ગ્રહણ કર લિયા હૈ તો ઉક્ત વ્યક્તિ કે ચિરા મેં કદાચિત્ ફિર સે મી લોભ કા ઉદય હો જાતા હૈ, ઉસકી ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ઊઠ્ઠને યોગ્ય હૈ, યહ દિલ્લાને કે લિયે, તથા જો સર્વદા લોભ રહિત હોકર સંયમ કો ધારણ કરતા હૈ યહી અનગાર-સાધુ હૈ, હસ વાત્ત કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે આગે સૂત્રાશ કા અવતરણ કરતે હુપ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—જો વ્યક્તિ હસ પૂર્વોક્ત લોભ કે વિના—અર્થાત્ લોભ સે રહિત હોકર ચરિત્ર કો ગ્રહણ કરતે હૈં ઘે ચાર વાલિયા કમોં કો નષ્ટ કર ભરતાદિ જૈસે હો-

કરી છે, કારણ કે જેણે લોભાદિકાનો પરિહાર કરેલ છે તેને કામલોભાદિકા કરી પણ પરાસ્ત કરી શકતા નથી.

કેઈ વ્યક્તિ લોભાદિ કાપોથી હીન છે, પરંતુ કેઈ કારણથી કદાચ તેણે ચારિત્ર ગ્રહણ કરેલ છે તો તે વ્યક્તિના ચિત્તમાં કદાચ ફરીથી પણ લોભનો ઉદય થાય છે તેની તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ઊપાયોગ્ય છે આ દેખાવા માટે, અને જે સર્વદા લોભરહિત થઈ સંયમને ધારણ કરે છે તે આજુઆર-સાધુ છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આગળના સૂત્રનું અવતરણ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે—જે વ્યક્તિ આ પૂર્વોક્ત લોભ વિના અર્થાત્ લોભથી રહિત થઈને ચારિત્રને ગ્રહણ કરે છે તે આ પ્રતિપાદન કરીને નષ્ટ કરી ભરતાદિ જેવા બનીને દેવગણ

નનુ લોભનાશે કુતઃ કર્માભાવો મધિતુમર્હતીતિ ચેન્ન । લોભનાશાન્મોહનીયનાશઃ, તસ્મિન્થ ઘાતિકર્મક્ષયઃ, તસ્મિન્થ કેવલજ્ઞાનાધિગમઃ, તેન ચ ભવોપગ્રાહિકર્મક્ષયઃ, इत्येवंरूपपरम्परया लोभापगमेन अकर्मैतिविशेषणसार्थक्यात् ।

કર કેવલ જ્ઞાન ઓર કેવલ દર્શન કો પાકર દુનિયાં કે ચર અચર સમસ્ત પદાર્થોં કો સ્પષ્ટરૂપ સે સમસ્ત ગુણ ઓર સમસ્ત પર્યાયોં સે યુક્ત જાનતે હૈં ઓર દેખતે હૈં ।

શંકા—લોભ કે નાશ સે કર્મોં કા અભાવ કૈસે હો સકતા હૈં ?

ઉત્તર—એસા નહીં કહના ચાહિયે; ક્યોંકિ લોભ કે ક્ષય સે મોહનીય કા ક્ષય હોતા હૈં, ઉસકે ક્ષય હોને પર શેષ ઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈં, ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ હોતે હી કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈં, કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને સે ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈં । હસ પ્રકાર પરમ્પરા કા સમ્બન્ધ કો લેકર લોભ કે વિનાશ સે આત્મા અકર્મા હો જાતા હૈં, હસ વિશેષણ કી સાર્થકતા સિદ્ધ હો જાતી હૈં । સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય હોતા હૈં । સમસ્ત કર્મોં મેં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ હૈં, જિસ પ્રકાર સેનાપતિ કે પરાસ્ત હોને પર સેના અશક્ત હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર મોહનીય કર્મ કે ક્ષય હોતે હી કર્મોં કી સેના મી ક્ષીણ હો જાતી હૈં । મોહનીય કે ક્ષય સે જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય ઓર અન્તરાય કા ક્ષય હોતા હૈં, ઉસ સે કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં ।

અને કેવળદર્શન પામીને દુનિયાના ચર-અચર સમસ્ત પદાર્થોને સ્પષ્ટ રૂપથી સમસ્ત ગુણ અને સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત બાણ છે અને દેખે છે

શંકા—લોભના નાશથી કર્મોનો અભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ કહેવું ન બોધ્યે, કારણ કે લોભના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય થાય છે તેનો ક્ષય થવા પછી શેષ ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે, ઘાતિયા કર્મોનો અભાવ થતા જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે આ પ્રકાર પરપરા સબધને લઈને લોભના વિનાશથી આત્મા અકર્મા બને છે આ વિશેષણની સાર્થકતા સિદ્ધ થઈ બાય છે સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, સમસ્ત કર્મોમા મોહનીય કર્મ સેનાપતિ છે જેમ સેનાપતિ પરાસ્ત થવાથી સેના અશક્ત બને છે તે પ્રકારે મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતા જ કર્મોની સેના પણ ક્ષીણ થઈ બાય છે મોહનીયના ક્ષયથી જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય અને અતરાયનો ક્ષય થાય છે, તેનાથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે

કર્મનાશ્ચાનન્તરં કિં કુરુતે ? इति दर्शयति—‘प्रत्युपेक्ष्य’—ति, प्रत्युपेक्ष्य लोमो निस्त्रिगानर्थकरो भवति, ‘लोहो सन्धविणासणो’ इतिवचनात्, तं पर्याभाज्य नावकास्तति=किमपि नेच्छति, यथैवभूत स एषोऽनगार=यथाख्यातचारिष्वान् मुनि प्रोच्यत तत्त्वदर्शिमिरिति शेष ॥ सू० ३ ॥

यस्तु सत्त्वोપघાતિની ક્રિયાં વિવિધાનઃ સદ્ધર્મા પાપમોક્ષકામનયાઽઽશ્વસયા ના વ્યવસ્કરોતિ તત્ત્વદર્શયતિ—‘અહો ય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય—અહો ય રાઓ પરિતપ્પમાણે કાલાકાલસમુદ્ઘાર્થે સજો ગઢી અઢાલોમી આલુપે સહસકારે વિણિવિઠ્ઠચિત્તે ઇત્ય સત્થે પુણો પુણો, સે આયવલે, સે નાહવલે, સે મિત્તવલે, સે પિચ્ચવલે, સે દેવવલે, સે રાયવલે, સે ચોરવલે, સે અતિહિવલે, સે કિવિણવલે, સે સમણવલે, ઇચ્છેપર્હિં વિરુદ્ધરુવેર્હિં કજ્જેર્હિં દઢસમાયાણ સપેહાપ મયા કજ્જઈ, પાવમુક્કવુત્તિ મહ્નમાણે, અદુવા આસસાપ ॥ સૂ० ૪ ॥

છાયા—અહિં રાત્રિશ્ચ પરિતપ્પમાન કાલાકાલસમુત્થાપી સંયાગાર્પી અર્થાં લોમી આલુપ્પઃ સહસકારં વિનિવિટ્ઠચિત્ત, અત્ર ઘસ્ટે પુનઃ પુનઃ, તવાત્મવત્, તજ્ઞાતિવત્, તન્મિત્રવત્, તત્પ્રેત્યવત્, તદેવવત્, તદ્રાજવત્, તદ્ધોરવત્, તદવિવિધવત્, તત્કુપ્પણવત્ તત્ ધમણવત્, इत्येतैर्विरूपरूपैઃ કાર્યેર્ણસમાદાનં સમ્પ્રેક્ષ્ય મયાત્ ક્રિયતે પાપમોક્ષ इति मन्यमान अथवा आशंसौ ॥ सू० ૪ ॥

‘लोहो सन्धविणासणो’ लोभ समस्त अनर्थों की जड़ है, इस प्रकार पर्यालोचन करके वह सयमी किसी भी सासारिक पदार्थों की इच्छा नहीं करता है । इस प्रकार जिसकी प्रवृत्ति है वही सदा अनगार है—अर्थात् वही तत्त्वदर्शियों द्वारा यथाख्यात—चारित्र्य—समन्वित मुनि कहा जाता है ॥ सू० ३ ॥

જો પ્રાણિયોં કો કષ્ટ હેને ઘાલી યા અનેક પ્રાણોં કો નાશ કરને ઘાલી ક્રિયાઓં કો કરતા હૈં વહ સકર્મા હૈ । વહ પાપોં કો દૂર કરન કી

હોહો સન્ધવિનાસણો લોભ સમસ્ત અનર્થોની જડ છે. એ પ્રકારે પર્યાલોચન કરીને તે સયમી કેઈ પણ સાસારિક પદાર્થોની ઇચ્છા કરતા નથી. એ પ્રકારે જેની પ્રવૃત્તિ છે તે જ આયો નિષ્ક્રમર છે. અર્થાત્ તે જ તત્ત્વદર્શિયોદ્વારા યથાખ્યાતચારિત્રસમન્વિત મુનિ કહેવામા આવે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

જે પ્રાણિયોને કષ્ટ હેવાવાળી અને તેના પ્રાણોનો નાશ કરવાવાળી ક્રિયાઓ કરે છે તે સકર્મા છે. તે પ્રાણોને દૂર કરવાની ભાવનાથી અને આશા સા—અશભ

ટીકા—‘અહશ્ચે’-ત્યાદિ, ‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યારમ્ય ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’
 ત્યન્તસ્ય વ્યાખ્યા પ્રથમોદ્દેશે પ્રોક્તેતિ તત્ એવ વિજ્ઞેયા । વિપયાસક્તો રાત્રિન્દિવં
 રિતપ્તો ધનાર્થી સત્ત્વોપમર્દને પ્રવૃત્તો ભવતીત્યર્થઃ, અપિ ચ પુનઃ કિં કરોતીત્યાહ—
 તત્ આત્મવલ ’-મિત્યાદિ, આત્મનો=જીવસ્ય વલં=સામર્થ્યમ્ આત્મવલં મેઽવશ્યં
 ત્યાદિતીચ્છયા વહૂપાયૈઃ સ્વતુપ્રચર્થ સત્ત્વોપઘાતં કરોતિ, કિઞ્ચ—સ્વમાંસપરિવર્ધનાય
 માંસાદિકમપ્યશ્નાતિ, તદર્થં પંચેન્દ્રિયાદીનપિ હન્તિ । તત્સ્વજનવલં તન્મિત્રવલં ચ
 મે ભવિષ્યતિ, યેન સમાપતન્તીમપિ વિપદં સુખેન તરિષ્યામિ । પ્રેત્યવલં=પરલોકવલં

કામના સે, અથવા આશંસા-અલભ્ય વસ્તુ કી લાભ કી ઇચ્છા સે જો જો
 ક્રિયાયે કરતા હૈ ઉન્હેં હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ । ‘અહો ય રાઓ’ યહાં સે લેકર ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ યહાં તક કે પદોં કા વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં લિખા
 જા ચુકા હૈ વહીં સે જાન લેના ચાહિયે । વિષયોં મેં આસક્ત ધન કા
 ઇચ્છુક પ્રાણી રાત-દિન સંતસચિત્ત હો જીવોં કે ઉપમર્દન કરને મેં પ્રવૃત્તિ
 કરતા રહતા હૈ । તથા મુજ્ઞે આત્મવલ પ્રાપ્ત હો હસ ય્યાલ સે વહ અપને
 સન્તોષ કે લિયે પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કા ઉપઘાત કરતા હૈ । અપના માંસ
 વધાને કે લિયે માંસ ખાતા હૈ ઓર ઉસકે લિયે વહ પંચેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિ-
 યોં કી હિંસા કરતા હૈ—‘જો માંસ મુજ્ઞે પ્રાપ્ત હુઆ, જિસે મૈં શિકાર કરકે
 લાયા હૂં ઉસે મૈં હી અકેલા યાઝૂં, અપને સગે સમ્બન્ધિયોં મેં તથા મિત્રોં
 મેં મીં ઉસકા વિતરણ કરૂં, કયોંકિ પરસ્પર કે હસ પ્રકાર કે આદાન

વસ્તુના લાભની ઇચ્છાથી જે જે કિયાઓ કરે છે તેને આ સૂત્રમા પ્રગટ કરતા
 સૂત્રકાર કહે છે—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ ‘અહો ય રાઓ’ અહીંયાથી લઈને ‘एत्थ सत्थे
 पुणो पुणो’ અહીં સુધીના પદોનુ વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદ્દેશમા આપવામાં આવેલ છે
 ત્યાથી જાણી લેવુ જોઈએ વિષયોમા આસક્ત ધનનો ઇચ્છુક પ્રાણી રાત દિવસ
 સંતસચિત્ત બની જીવોના ઉપમર્દન કરવામા પ્રવૃત્તિ કરતો રહે છે અને ‘મને
 આત્મબળ પ્રાપ્ત થાય’ એવા જ્યાલથી તે પોતાના સંતોષ માટે પ્રાણિયોના પ્રાણોનો
 ઉપઘાત કરે છે પોતાનુ માંસ વધારવા માટે માંસ ખાય છે અને તેને માટે તે
 પંચેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિઓની હિંસા કરે છે—‘જે માંસ મને પ્રાપ્ત થયુ છે, જેને
 હું શિકાર કરીને લાવ્યો છુ તેને હું એકલો જ ખાઉ પોતાના સગાસબધિઓમા
 તથા મિત્રોમા પણ તેનુ વિતરણ કરે, કારણ કે પરસ્પરના આવા પ્રકારના આદાન

મેં, ઇત્યાશ્રયા મંપાદિકં હિનસ્તિ । દેવબલં મ સ્પાદિત્યાશ્રયા પચનપાચનાદી
પ્રવર્તતે । રામવલ સ્પાદિતીચ્છયા રાજસેવા ક્રિયત । ચૌરબલં=ચૌરમાગો મનિ-
પ્યતીતિ ચૌરસમીપે તિષ્ઠતિ । અતિથિવલમ્, “અતિથિ ” ન વિષયે તિથિરાગ-
મનસ્ય યસ્ય સોઽતિથિઃ, અતિથિસંવયા મ બલમિતિ સ્મૃત્યા તં સવયે, તદર્થે સત્ત્વો

પ્રદાન સે મુક્તે ઉનકા યલ પ્રાપ્ત હોગા, જિસસે કમી મેરે ઉપર યદિ કોઈ
આપત્તિ આ જાયગી તો વે ઉસમેં મુક્તે મદદગાર બનેંગે, ઉનકી પ્રાપ્ત
સહાયતા સે અથવા સહાનુભૂતિ સે મેં ઉસ આપત્તિ સે વિના કિસી કષ્ટ કે
સુરક્ષિત હો જાઝંગા ’ । ‘વેધોંકા યલ મુક્તે પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ વિચાર સે વહ
નૈવેદ્ય આદિ, કે લિયે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરતા હૈ । ‘રાજા કી
કૃપા મુક્ત પર યની રહે’ ઇસ માધના સે વહ ઉનકી જૂઠી સુશામદ કરતા
હૈ, સેવા કરતા હૈ, ઉસકી પ્રત્યેક ખલી ખુરી વાતોં મેં હા મેં હાં મિલાતા હૈ,
‘સુશામદ મેં હી આમદ હૈ’ ઇસ તુચ્છ કામના સે વહ હર એક પ્રકાર
સે અપને કો કષ્ટ મેં ઢાલકર મી ઉનકી પ્રત્યેક વાત કો શિર-માથે-કા
મુકુટ ધનાને મેં મી સંકોચ નહીં કરતા । ‘મેં યદિ ચોરોંકી મદદ કલંગા,
યા ઉન્હેં મદદ પહુંચાઝંગા યા ઉનકા સહવાસ કલંગા તો મુક્તે ઉનસે
છૂટ કે દ્રવ્ય મેં સે હિસ્તા મી મિલતા રહેગા’ ઇસ વાહના સે વહ ચોરોં
કા મી યલ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જિસકે જાને કી કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નહીં
હૈ ઉસકા નામ અતિથિ હૈ, યેસે અતિથિયોં કી વહ સિર્ફ ‘જનકા આશી

પ્રદાનથી મને તેઓનું બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ઉપર કેઈ આપત્તિ આવે
તો તેઓ મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું
આવેલી આપત્તિથી કેઈ પણ બાવના કદ વગર સુરક્ષિત થઈ જશું ’ । ‘દેવેનું
બળ મને પ્રાપ્ત થશે તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાચનાદિકે આરંભ કરે
છે ’ સત્ત્વની કૃપા મારા ઉપર બની રહે તે માવનાથી તે તેની જૂઠી સુશામદ
કરે છે, સેવા કરે છે તેની પ્રત્યેક સારી નકારી વાતોમા હા મા હા મિલાવે છે.
‘સુશામદમા જ આમદ છે આવી તુચ્છ કામનાથી તે કશું પ્રકારથી પોતાને
કદમાં નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક વાતને શિરને સુગટ બનાવવામા સંકોચ કરતો
નથી હું જો જોવાને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ અથવા તેમને
સહવાસ કરીશ તો મને તેમની છુટના દ્રવ્યમાથી હિસ્તો-(ભાગ) મળતો
રહેશે આ માવનાથી તે જોવાનું પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે જેની આવવાની કેઈ
નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનું નામ અતિથિ છે એવા અતિથિઓની તે દ્રવ્ય તેમના

પર્મદનં કરોતિ । કૃપણવલં સ્યાદિત્યભિલાષેણ તં પરિચરતિ । ‘શ્રમણવલં’ શ્રમણઃ શાક્યાદિસ્તસ્ય વલં સ્યાદિતિ વાઙ્મય્યા તદર્થં પચનાદિસાવધક્રિયામાચરતિ । અત્રાનેકેવાં વલપ્રદર્શનં યં યં ચેતસિ સ્વાભિમતસાધકતયા પશ્યતિ તં તં સમ્યગુપ-
ચરતીતિ ઘોતનાય વોધ્યમ્ । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-
समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-
समादानम् ‘अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मवलादिकं मे नाभविष्य’—दिति सम्प्रेक्ष्य=
पर्यालोच्य भयात्=आत्मवलाद्यलाभभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं
वादरूप वल मुझे मिले’ इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त
प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके वल को प्राप्त
करने की इच्छा से वह करता है । ‘शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे
मिले’ इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में
जो इस प्रकार से अनेकों के वल का कथन किया गया है उसका भाव
यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका वल
प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी
की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों
से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त हो-
कर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने
माथे रखता है । ‘यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त
आत्मवलादिकों का लाभ नहीं होगा’ इस बात का विचार कर उनके

આશિર્વાદરૂપ બળ મને મળે’ એ વિચારથી સેવા કરે છે તેમના નિમિત્તે
પ્રાણીઓની હિંસા પણ કરે છે કૃપણની સેવા પણ તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવાની
ઇચ્છાથી કરે છે ‘શાક્યાદિ શ્રમણોનો સાથ મને મળે’ તે માટે તે તેમને માટે
પચન-પાચનાદિ કરે છે સૂત્રમાં જે આ પ્રકારથી અનેક બળોનું કથન કરેલ છે
તેના ભાવ એ છે કે-તે જેને પોતાના ઈષ્ટ અર્થનો સાધક સમજે છે તેનું બળ
પ્રાપ્ત કરવા માટે તેની ભલી પ્રકાર પરિચર્યા કરે છે જેનાથી પ્રાણીની હિંસા
થાય છે તેનું નામ દડ છે તેનો તે અનેક પ્રકારના કાર્યોથી સર્વત આદાન-અહણ
કરે છે વ્યર્થના પાપારભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને તે પ્રાણીઓના પ્રાણોનું અપ-
હરણ કરી પાપનો ભારી બોજ પોતાના માથે રાખે છે ‘કદાચ હું આ કામને
નહિ કરું તો મને પૂર્વોક્ત આત્મબલાદિનો લાભ થશે નહિ’ આ વાતનો વિચાર
કરી તેના અલાભના ભયથી પ્રાણીઓની હિંસાદિક ક્રિયાઓને-અનેક અનર્થકારી
સાવધ વ્યાપારોને તે કરે છે એ આત્મબલાદિક જે આ જીવને આ લોકમાં દડ

મે, ઇત્યાશ્રયા મપાદિકં દિનસ્તિ । દેવવર્ણ મ સ્યાદિત્યાશ્રયા પચનપાષનાદૌ
મવર્તતે । રાજવર્ણ સ્યાદિતીચ્છયા રાજસેવા ક્રિયત । ચૌરવર્ણ=ચૌરમાર્ગ મકિ-
પ્યતીતિ ચૌરસમીપે તિષ્ઠતિ । અતિથિવસ્તુ, “અતિથિઃ” ન વિષયે તિથિરાગ-
મનસ્ય યસ્ય સોઽતિથિઃ, અતિથિસેવયા મ બલમિતિ સ્પૃહયા તં સેવતે, તદર્થ સત્ત્વો

પ્રદાન સે મુક્તે ડનકા ચલ પ્રાપ્ત હોગા, જિસસે કમી મેરે ડપર યદિ કોઈ
આપસિ આ જાયગી તો ષે ડસમેં મુક્તે મદદગાર ધનેંગે, ડનકી પ્રાપ્ત
સહાયતા સે અથવા સહાનુભૂતિ સે મેં ડસ આપસિ સે વિના કિસી કષ્ટ કે
સુરક્ષિત હો જાઝંગા ’ । ‘દેવોં કા ચલ મુક્તે પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ વિચાર સે વહ
નૈવેદ્ય આદિ, કે લિયે પચન-પાષનાદિક આરમ કરતા હૈ । ‘રાજા કી
કૃપા મુક્ત પર ધની રહે’ ઇસ ભાવના સે વહ ડનકી છૂટી ડુશામદ કરતા
હૈ, સેવા કરતા હૈ, ડસકી પ્રત્યેક ભલી ડુરી ધાતોં મેં હાં મેં હાં મિલતા હૈ,
‘ડુશામદ મેં હી આમદ હૈ’ ઇસ ડુચ્છ કામના સે વહ હર ઇક પ્રકાર
સે ડપને કો કષ્ટ મેં ઢાલકર મી ડનકી પ્રત્યેક ધાત કો શિર-માથે-કા
મુકુટ ધનાને મેં મી સંકોચ નહીં કરતા । ‘મેં યદિ ચોરોં કી મદદ કરૂંગા,
ધા ડન્હેં મદદ પહુંચાઝંગા ધા ડનકા સહવાસ કરૂંગા તો મુક્તે ડનસે
છૂટ કે ડ્રવ્ય મેં સે હિસ્તા મી મિલતા રહેગા’ ઇસ ષાહના સે વહ ચોરોં
કા મી ચલ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જિસકે આને કી કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નહીં
હૈ ડસકા નામ અતિથિ હૈ, ઇસે અતિથિયોં કી વહ સિર્ફ ‘ઇનકા આશી-

પ્રદાનમી મને તેજ્યેનુ બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ડપર કેઈ આપત્તિ આવે
તો તેજ્યે મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું
આવેલી આપત્તિથી કેઈ પણ બાતના કષ્ટ વગર સુરક્ષિત થઈ બચીશ’ । ‘દેવેનુ
બળ મને પ્રાપ્ત થશે તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાષનાદિકે આરમ કરે
છે ’ સભાની કૃપા મારા ડપર બની રહે’ તે ભાવનાથી તે તેની છૂટી ડુશામદ
કરે છે, સેવા કરે છે તેની પ્રત્યેક સારી નકારી ધાતોમા ઢા માર ઢા મિલાવે છે.
‘ડુશામદમા જ આમદ છે આથી ડુચ્છ કામનાથી તે હરેક પ્રકારથી ધોવાને
કષ્ટમા નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક ધાતને શિરનેા મુગટ બનાવવામા સંકોચ કરતો
નથી. હું જો ષોરેને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ અગર તેમને
સહવાસ કરીશ તો મને તેમની છૂટના ડ્રવ્યમાથી હિસ્તે- (ભાગ) મળતો
રહેશે આ ભાવનાથી તે ષોરેનુ પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે જેની આવવાની કેઈ
નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનુ નામ અતિથિ છે જેવા અતિથિયોની તે રહ્ય ‘તેમના

पमर्दनं करोति । कृपणवलं स्यादित्यभिलाषेण तं परिचरति । 'श्रमणवलं' श्रमणः शाक्यादिस्तस्य वलं स्यादिति वाञ्छया तदर्थं पचनादिसावद्यक्रियामाचरति । अत्रानेकेषां वलप्रदर्शनं यं यं चेत्तसि स्वाभिमतसाधकतया पश्यति तं तं सम्यगुपचरतीति द्योतनाय बोध्यम् । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-समादानम् 'अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मवलादिकं मे नाभविष्य'—दिति सम्प्रेक्ष्य=पर्यालोच्य भयात्=आत्मवलाद्यलामभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं वादरूप वल मुझे मिले' इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके वल को प्राप्त करने की इच्छा से वह करता है । 'शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे मिले' इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में जो इस प्रकार से अनेकों के वल का कथन किया गया है उसका भाव यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका वल प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त होकर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने माथे रखता है । 'यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त आत्मवलादिकों का लाभ नहीं होगा' इस बात का विचार कर उनके

आशिर्वादइप अण भने भजे' ओ विचारथी सेवा करे छे तेमना निमित्ते प्राणिओनी हिंसा पणु करे छे कृपणुनी सेवा पणु तेनु अण प्राप्त करवान्नी धञ्छाथी करे छे 'शाक्यादि श्रमणोनो साथ भने भजे' ते माटे ते तेमने माटे पयन-पायनादि करे छे सूत्रमा ने आ प्रकारथी अनेक अणोनु कथन करैल छे तेना लाव ओ छे डे-ते नेने पोताना इष्ट अर्थनो साधक समजे छे तेनु अण प्राप्त करवा माटे तेनी लली प्रकार परिचर्या करे छे नेनाथी प्राणीनी हिंसा थाय छे तेनु नाम दंड छे तेना ते अनेक प्रकारना कार्योथी सर्वत आदान-ग्रहणु करे छे व्यर्थना पापारंभ कार्योमा प्रवृत्त थरने ते प्राणीओना प्राणोनु अप-हरणु करी पापनो लारी ओज पोताना माथे राखे छे. 'कदाच हु आ कामने नहि करे तो मने पूर्वोक्त आत्मवलादिनो लाभ थरने नहि' आ बातनो विचार करी तेना अलाभना लयथी प्राणिओनी हिंसादिक क्रियाओने-अनेक अनर्थकारी सावध व्यापारने ते करे छे ओ आत्मवलादिक ने आ छुवने आ लोकमां दंड

સાવચર્યાપાર કરોતીતિ સાત્પર્યમ્ । एतान्यात्मपलादीनि चैहिकदण्डग्रहणकारणानि ।
 न केवलं तदर्थमवानर्थं करोति किन्तु पारलौकिककार्यमपि परमार्थानभिज्ञो दण्ड
 ग्रहणं करोतीत्याह—‘ पापमोक्ष ’ इति, पापमोक्षः—पातयति नरकनिगोदादायिनि
 पापं, तस्मान्मोक्षो म भविष्यतीति मन्यमानः—चेतसि चिन्तयन्,

अत्र ‘इति’—शब्दो हेतो, यस्मान्म पापमोक्षा भवितेति मन्यमानः, इति सम्बन्धः ।
 असौ नानाविधवृत्तीयद्रव्यैर्जुहोति । तथा पिबृत्तर्पणार्थं दर्भ-तिष्ठ-ब्रह्मादिना समा-
 रम्भं करोति च । एवविषयावयव्यापारैर्नानाविधदुर्गतिदायकमनेकजन्मदुर्मोक्षमधि-
 क्कमयमवार्जयति ।

અભ્યાસ કે અથ સે પ્રાણિયોં કી હિંસાદિક ક્રિયાઓં કો—અનેક અનર્થ
 કારી સાવચર્યાપારોં કો વહ કરતા હે । યે આત્મપલાદિક જો હસ જીવ
 કો હસ લોક મેં દણ્ડ ગ્રહણ કે કારણ હે, કેવલ ઉનકે નિમિત્ત હે
 અનર્થોં કો વહ નહીં કરતા હે, કિન્તુ પારલૌકિક કાર્યોં કે લિપે મી પર
 માર્થ સે અનનિજ પના કુઆ વહ દણ્ડ કા પાત્ર પનતા હે । હસી અભિ
 પ્રાય કો ‘પાપમોક્ષ’ હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હે—નરક નિ
 ગોદાદિ ગતિયોં કો જીવ જિસકે દ્વારા પ્રાપ્ત કરતે હે ઉસકા નામ પાપ
 હે । ‘પાપ સે મેરી મુક્તિ હો જાયગી, અર્થાત્ મેં પાપરહિત હો જાઝંગા’
 હસ ધારણા સે ઓતપ્રોત્ત હોકર વહ નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્ય મેં હવન
 કરતા હે, અનેક અનર્થવિધાયક સાવચર્યા કાર્યોં કે કરને સે દણ્ડ-પ્રાપ્ત-
 તિપાતાદિ-કા અધિકારી હોતા હે, હન કાર્યોં સે પાપમુક્ત ન હોકર ઉલ્લે
 નરક નિગોદાદિ ગતિયોં મેં ઉસ જીવ કા પતન હોતા હે । સૂત્ર મેં ‘ઈતિ’
 વહ શબ્દ હેતુ-અર્થ કા બોધક હે, જિસકા ભાવ વહ હે—વહ વહ સમ-

અહણુ કારણ છે, કેવળ તેના નિમિત્ત જ અનર્થોને તે નથી કરતો પણ પાર-
 લૌકિક કાર્યોં માટે પણ પરમાર્થથી અનનિજ બનીને આ હણુ પાત્ર બને છે
 આ અભિપ્રાયને ‘પાપમોક્ષ’ આ પદથી સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—નરક નિગોદાદિ
 ગતિઓને છૂવ જેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ પાપ છે પાપથી ભારી મુક્તિ
 મર્થ જશે, અર્થાત્ હું પાપરહિત મર્થ જઈશ’ એ ખાસણથી ઓતપ્રોત્ત મર્થને તે
 નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્યોથી હવન કરે છે અનેક અનર્થવિધાયક સાવચર્યા કાર્યોને
 કરવાથી હ—પ્રજ્વલિતિપાતાદિ—નો અધિકારી થાય છે આવા કાર્યોથી પાપમુક્ત બનતો
 નથી પણ નરક નિગોદાદિ ગતિઓમા તે છૂવનું પતન થાય છે સૂત્રમા ‘ઈતિ’
 એ શબ્દ હેતુ અર્થના બોધક છે, જેનો ભાવ એ છે કે તે એમ સમજે છે કે

અથવા ‘આશંસાયૈ’ આશંસા ચાલમ્બ્યલાભસ્પૃહા તસ્યૈ=તદર્થે દણ્ડં સમારંભતે ।
મૈતત્ પરુપરારિ પરલોકે વા ભવિષ્યતીત્યાશયા દણ્ડં સમાદદાતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥
এবং কড়কবিপাকং দণ্ডসমাদানং সম্যগববুধ্য যত্কর্তব্যং তদাহ-‘তং পরিণায়’
ইত্যাদি ।

મૂલમ્—તં પરિણાય મેહાવી નેવ સયં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમા-
રંભિજ્જા, નેવ અન્નં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમારંભિજ્જાવિજ્જા, એહિં
કજ્જેહિં દંડં સમારંભંતે વિ અન્ને ન સમણુજાણિજ્જા, એસ મગ્ગે
આરિએહિં પવેહિં, જહેત્થ કુસલે નોવલિંપિજ્જાસિત્તિવોમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—તત્પરિણાય મેહાવી નૈવ સ્વયમેતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભત, નૈવાન્યમ્ એતૈઃ
કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભયેત્, એતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભમાણાનપ્યન્યાન્ન સમનુજાનીયાત્,
એ માર્ગ આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ, યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પેઃ, इति ब्रवीमि ॥ સૂ. ૫ ॥

જ્ઞતા હૈ કિ—‘પાપોં સી મેરી મુક્તિ હો જાયગી—મૈં નિષ્કલંક વન સ્વર્ગાદિ
લાભ કર લૂંગા’-એસા માનકર વહ પારલૌકિક કાર્ય કરને કે લિયે મી
છહકાય કા આરંભ કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે સાવધ વ્યાપારોં સે નાના-
વિધ દુર્ગતિયોં કો દેને વાલે તથા અનેક જન્મ જન્માન્તરોં મેં મી જો ન
નષ્ટ હો સકે એસે પાપ કા હી વહ અર્જન કરતા હૈ । ‘આશંસાયૈ’ ઇસ
પદ સે યહ વાત સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈં કિ—વહ અલંબ્યવસ્તુ કો પાને
કી ઇચ્છા સે મી દણ્ડ કા સમારંભ કરતા હૈ “યહ વસ્તુ મેરે પાસ નહીં
હૈ, આત્મબલાદિ કાર્યોં કે કરને સે વહ મુશ્કે આજ નહીં તો કલ, કલ
નહીં તો પરસોં મિલ જાવેગી, યદિ યહાં ન મી મિલેગી તો પારલોક મેં
મિલ જાલેગી” ઇસ ભાવ સે દણ્ડ કા સમાદાન (છહકાય કા આરંભ)
કરતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

‘પાપોથી મારી મુક્તિ થઈ જશે, હું નિષ્કલંક બની સ્વર્ગાદિ લાભ કરી લઈશ’
એવું માનીને તે પારલોકિક કાર્યો કરવા માટે છ કાયનો આરભ કરે છે આ
પ્રકારના સાવધ વ્યાપારોથી નાનાવિધ દુર્ગતિઓને દેવાવાળા અને અનેક જન્મ
જન્માન્તરોમા પણ જેનો નાશ ન થાય તેવો પાપનો ભાર જ તે વહે છે
‘આશંસાયૈ’ આ પદથી આ બાત સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે કે—તે અલંબ્ય વસ્તુને
પામવાની ઇચ્છાથી પણ તેઓ સમારભ કરે છે, ‘આ વસ્તુ મારી પાસે નથી
પણ આત્મબલાદિ કાર્યો કરવાથી તે મને આજ નહિ તો કાલ, કાલ નહિ તો
પરમ દિવસ મળી જશે, કદાચ અહીં નહિ મળે તો પરલોકમાં મળશે’ આ
ભાવથી તેઓ સમાદાન (છ કાયનો આરભ) કરે છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

‘ત’-વિત્પાદિ, મેધાવી=સંયમરસિમાન્ વિવિદતસંસારસ્વમાવ, તત્=પૂર્વોક્ત સન્નિગ્રાહકં શક્તપરિજ્ઞાપયિતમ્ અપ્રશસ્તશુભમૂલસ્થાનં વિષયકપાયાદિકં વાત્મવના ઘર્થં દૃષ્ટસમાદાનાદિકં ચ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા ગ્રાત્વા મેધાવી સ્વયમ્=આત્મના પૈતૈઃ=આત્મવલાદાનાદિકૈ કાર્યૈઃ દૃષ્ટ=આર્જિર્હિસાં નૈવ સમારમેષ=દૃષ્ટબ્રહ્મારમ્મં ન કુર્યાત્, પ્રત્યાસ્થાનપરિજ્ઞયા પરિહરેદિત્યર્થઃ, અન્યમપિ પૈતૈઃ કાર્યૈર્દૃષ્ટં ન સમાર મ્મયેદિત્યન્વયઃ, તથા સમારમમાળાનપ્યન્યાન્ ન સમજુજાનીયાત્=નાનુમાદયેત્, સુ-ધર્માં સ્વામી જન્મસ્વામિનં પ્રાહ-પપ માર્ગઃ યુગ્યતેઽન્વિષ્યતે મોક્ષપદમનેનેતિ માર્ગ=રત્નપ્રયસ્વસ્મઃ,

इस प्रकार कटुफ विपाक वाले दृष्ट के आदान को अच्छी तरह जानकर क्या करना चाहिये? सो कहते हैं—

‘तं परिज्ઞાય’ इत्यादि। संयम में जिसे प्रेम है, संसार का स्वभाव भी जिसने भली प्रकार जान लिया है ऐसा मेधावी मुनि शक्तपरीक्षा में प्रतिपादित अप्रशस्त गुण एवं मूलस्थानस्वरूप विषयकपायादिकों को तथा आत्मबलाविलाम के लिये दृष्टसमादान (आरम्भ समारम्भ) को ज्ञपरीक्षा से जानकर स्वयं आत्मफल को प्राप्त करने के छोटे अभि-प्राय से आचरित इन पूर्वोक्त कार्यों से प्राणातिपात आदि दृष्ट का समारम्भ नहीं करे। क्योंकि इन कार्यों के करने वाले प्राणी को पाप-रंभ के सिवाय अन्य किसी भी प्रशस्त फल का लाभ नहीं होता है। इस बात को जानकर प्रत्याख्यानपरीक्षा से उनका त्याग कर देवे। इतना ही नहीं किन्तु दूसरे से भी इन पूर्वोक्त कार्यों से वह दृष्ट का

આવા પ્રકાર કેડવા વિપાકવાળા દ્રવ્ય આદાનને સારી રીતે બાણીને શું કરવું બોધ્યે તે કહે છે—

‘તં પરિજ્ઞાય’ ઉત્પાદિ સમયમા બેને પ્રેમ છે, સંસારનો સ્વભાવ બેણે ભલી પ્રકારે બાણી લીધા છે એવા મેધાવી મુનિ શક્તપરીક્ષામાં પ્રતિપાદિત અપ્રશસ્ત શુભ અને મૂળસ્થાનસ્વરૂપ વિષયકપાયાદિકને તથા આત્મબલાવિ લાભ માટે દડસમાદાન (આરભ-સમારભ) ને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણીને સ્વય આત્મબળ પ્રાપ્ત કરવાના ખોટા અભિપ્રાયથી આચરિત એ પૂર્વોક્ત કાર્યોથી પ્ર-ણાતિપાત આદિ દ્રવ્યો સમારભ કરવો નહિ, કારણ કે આ કાર્યોના કરનાર બાણીને પાપારભ સિવાય બીજો કોઈ પ્રશસ્ત ફળનો લાભ થતો નથી એ વાતને બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરીક્ષાથી તેનો ત્યાગ કરે, એટલું જ નહિ પણ બીજાથી પણ તે પૂર્વોક્ત કાર્યોથી તે દડનો સમારભ ન કરવે, અને આ પ્રકારથી દડનો સમારભ

“આર્યૈઃ” આરાદ્યહિર્ગતા હેયધર્મેભ્યો યે તે આર્યાઃ તીર્થઙ્કર-ગણધરાદયઃ, તૈઃ પ્રવેદિતઃ=દ્વાદશવિધપરિપદિ પ્રકર્ષેણોક્તઃ । તદ્ બુદ્ધા કિં કાર્યમિત્યાહ—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પે”-રિતિ, હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેનાત્મા કર્મ-નોપલિમ્પો ન ભવેત્તથા કુશલઃ=ચતુર આત્માર્થી ત્વમત્ર=દળડસમારમ્ભે નોપલિમ્પેઃ= નં સંશ્લિષ્યેઃ, સર્વથા સર્વસમારમ્ભાદાત્માનં પરિરક્ષેદિત્યર્થઃ । કમલપત્રં યથા જલેન સ્પૃષ્ટં ન ભવતિ તથૈવ દળડસમાદાનેનાત્મા યથા સ્પૃષ્ટો ન ભવેત્તથા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૨ ॥

સમારમ્ભ ન કરાવે, તથા ઇસ પ્રકાર સે દળડ કા સમારંભ કરને વાલોં કી અનુમોદના મી ન કરે, અર્થાત્ દળડ સમારંભ કા સર્વથા ત્યાગ કરે ।

ઇસ પ્રકાર શ્રીસુધર્મા સ્વમી જમ્બૂ સ્વામી કો કહતે હું કિ-યહી રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ કા માર્ગ હૈ, મોક્ષ કા અન્વેષણ જિસસે કિયા જાના હૈ યહી માર્ગ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ હૈ । ઇસ માર્ગ કા નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર એવં ગણધરાદિકોં ને ચારહ પ્રકાર કી પરિપદ મેં કિયા હૈ । વિષય-કષા-યાદિક જો આત્મા કા પતન કરને વાલે હૈ-અનસે જો શીઘ્રાતિશીઘ્ર વિરક્ત હોતે હૈ વે આર્ય હૈ, ઓર વે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ હૈ, ક્યોંકિ યે સ્વયં અનસે વિરક્ત હોકર દૂસરોં કો મી અનસે વિરક્ત હોને કા ઉપ-દેશ દેતે હૈ । યે આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષ માર્ગ કે અનુપમ પથિક હોતે હૈ, ઓર દૂસરોં કો મી ઇસ માર્ગ કે પથિક બનને કે લિયે ઉપાયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ । ઇસ પંચમ કાલ મેં જો મોક્ષમાર્ગ કી પ્રરૂપણા મુનિ

કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે, અર્થાત્ કરવા, કરાવવા, અને અનુમોદવારૂપ, એ દ્વડસમારંભનો સર્વથા ત્યાગ કરે

આ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે-તે રત્નત્રયરૂપ મોક્ષનો માર્ગ છે, મોક્ષનું અન્વેષણ જેનાથી થાય છે તે માર્ગ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ છે. આ માર્ગનું નિરૂપણ આર્ય-તીર્થ કર અને ગણધરાદિકોએ બાર પ્રકારની પરિપદમા કર્યું છે વિષયકષાયાદિક જે આત્માનું પતન કરવાવાળા છે તેનાથી જે જલદી વિરક્ત થાય છે તે આર્ય છે, અને તે તીર્થ કર ગણધરાદિ દેવ છે. કારણ કે તેઓ સ્વયં તેનાથી વિરક્ત બની બીજાઓને તેનાથી વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ આપે છે તેઓ આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષમાર્ગના અનુપમ પથિક હોય છે, અને બીજાઓને પણ તે માર્ગના પથિક બનવા માટે ઉપાયોનું પ્રતિપાદન કરે છે આ પાંચમા કાળમા જે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા મુનિ અને આચાર્યોદ્વારા થાય છે તેનું

અર્થ આચાર્યો દ્વારા થોતી હે ઉસકા મૂલસ્રોત તીર્થકરાવિ હી હે । એસા સમજકર કુશળ આત્માર્થી કા કર્તવ્ય હે કિ ઘહ અપની આત્મા કો ઇસ વૃષ્ઠસમારંમ દ્વારા આને ઘાલે કર્મો સે લિસ ન યનાવે । એસા ઉપદેશ કરતે છુદ મૂચકાર કહતે હે—“યથાડ્ય કુશલો નોપલિમ્પેઃ” હે મન્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથન સે યહ મલી પ્રકાર જાન ચુકા હે કિ ઇન આત્મપલાદિક કાર્યો સે વૃષ્ઠસમાદાન હોતા હે, ઓર ઇસસે કર્મયજ્ઞ કે સિવાય આત્મા કો કોઈ લાભ નહીં હોતા હે, અત તું ઇસ ઘાત કા વિચાર કર, આત્મર્થી યન, ઓર જિસ પ્રકાર સે તેરી આત્મા કર્મો સે લિસ ન યને ઇસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ સે ઇન સમારંમો સે સર્વથા અપની રક્ષા કર । જૈસે જલ મેં રહતા છુદા કમલ જલ સે લિસ નહીં હોતા હે ઉસી પ્રકાર વૃષ્ઠસમાદાન સે આત્મા લિસ ન યને એસા કર । ‘ઈતિ ગ્રધીમિ’ ઇસકા અર્થ પહિલે કિયા જા ચુકા હે ॥ સુ. ૫ ॥

॥ ત્રિતીય અધ્યયન કા ત્રિતીય ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૨ ॥

મૂલસ્રોત તીર્થકરકિ જ છે એવું સમજાને કુશળ આત્માર્થીનું કર્તવ્ય છે. કે-તે પોતાના આત્માને આ હડસમારંમદ્વારા આવવાવાળા કર્મોથી વિપ્ત ન બનાવે, એવો ઉપદેશ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—

“યથાડ્ય કુશલો નોપલિમ્પેઃ” હે મન્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથનથી એ મલી પ્રકારે બાણી ચુક્યો છે કે આ આત્મપલાદિક કાર્યોથી હડસમાદાન યજ્ઞ છે, અને તેનાથી કર્મયજ્ઞ સિવાય આત્માને કોઈ લાભ થતો નથી, માટે તું એ આત્મનો વિચાર કરી આત્માર્થી બન, અને એ પ્રકારથી તારો આત્મા કર્મોથી લિસ ન બને એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી તેવા સમારંમોથી સર્વથા પોતાની રક્ષા કર. જેમ પાણીમાં રહેલાં કમળ પાણીથી લિસ નથી થતાં તે પ્રકારે હડસમાદાનથી આત્મા લિસ ન બને તેવું કર. ‘ઈતિ ગ્રધીમિ’ આનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે ॥ સુ. ૫ ॥

બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ૨-૨

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः ॥

कथितो द्वितीयोद्देशोऽधुना तृतीयस्य व्याख्या प्रारम्भ्यते । द्वितीये संयमे रतिर्विषये चारतिः कर्तव्येति प्रोक्तम् । अत्र च तत्सर्वं कपायनिरसनैव स्यात्, तन्निरसनं च मानपरित्यागं धनासारतापरिचिन्तनं विना नैव सम्पद्यते, अत उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिकं मुनिना परित्याज्यमिति प्रतिपादयति ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—‘जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि’ इति, हे शिष्य ! उच्चैर्गोत्राभिमानादौ त्वं यथा नोपलिप्तो भवेरिति ।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का तृतीय उद्देश ॥

द्वितीय उद्देश का कथन हो चुका, अब तृतीय उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । द्वितीय उद्देश में “संयमी को संयम में रति और विषयादिकों में अरति करना चाहिये” यह बात कही गई है । इस उद्देश में यह प्रतिपादन किया जायगा कि गृहीत (ग्रहण किये हुए) संयम में रति और विषयादिकों में अरति संयमी जनको तब ही हो सकती है कि जब वह कषायों को दूर करे । कषायों का परित्याग—जब तक मान का त्याग न कर दिया जावेगा, तथा जब तक धन की असारता का विचार न होगा, तब तक नहीं हो सकता । इसलिये संयमी मुनि को उच्चगोत्र में उत्पन्न होने के अभिमान आदि का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये ।

यहां पर “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” इस अनन्तर सूत्र के साथ सम्बन्ध है । जिसका भाव यह है कि हे शिष्य ! तू उच्च-गोत्र में

श्री आचारांगसूत्रना पीण्ण अध्ययननो त्रीण्णे उद्देश

पीण्ण उद्देशु कथनं समाप्तं भवति, उच्यते त्रीण्ण उद्देशानां प्रारंभः भवति ।
पीण्ण उद्देशमा संयमीये संयममा रतिं अने विषयादिकमा अरतिं करवी जेष्ठं ये
ये वातं उड्डेवामा आवी छे आ उद्देशमा येनु प्रतिपादनं करवामा आवशे के
गृहीत (ग्रहण करेदा) संयममा रतिं अने विषयादिकमा अरतिं संयमीजनने
त्यारे न भवति छे के न्यारे कषाये दूर करवामा आवे कषायेनो परित्याग, न्यां
सुधी माननो त्याग अने धननी असारतानो विचार नहिं करवामा आवे त्यांसुधी
ते भनी शक्तुं नथी. भाटे संयमी मुनिजे ‘भारी उत्पत्ति उच्य गोत्रमां थयेदी
छे’ तेवां अभिमाननो सर्वथा त्याग करवो जेष्ठं ये

आ उड्डेवामे “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” आ अनन्तर सूत्रनी
साथे सम्बन्ध छे, येनो भाव ये छे के—हे शिष्य ! तू उच्य गोत्रमा उत्पत्तिना

પરમ્પરાસૂત્રસમ્બન્ધસ્તુ—‘સે આયબલે’ ઇત્યાદિના, સ્વસમાનાર્થમાત્મબલાદિ
વળસમારમ્ભો ન સયા કર્તવ્ય ઇતિ ।

ઉચ્ચગોત્રોત્પત્ત્યા માનં, નીચગોત્રોત્પત્ત્યા આપમાનં ણાત્વા હર્ષ-ક્રોધો ત્વયા ન
વિદ્યેયૌ, યતસ્તૌ માનાપમાનો બહુષુ જન્મસુ પ્રાપ્તપૂર્વાવિતિ દર્શયતિ—“સે અસઈ”
ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ક—સે અસઈ ઉચ્ચાગોષ, અસઈ નીઆગોષ, નો હીણે, નો
અહરિત્તે, નોડપીહપ, હયપરિસંઘાય કો ગોયાવાઈ, કો માળાવાઈ,
કસિ વા યગે ગિજ્ઞે, તમ્હા પઢિય નો હરિસે નો કુજ્ઞે ॥ સૂ. ૧ ॥

જાણ—સોડસકુદુષ્કૈર્ગોત્રિજ્ઞકુશીચૈર્ગોત્રિ ન હીનો નાતિરિક્ત, નો હિંતાપિ,
ઇતિ પરિસત્ત્યાય કો ગોત્રવાદી કો માનવાદી, કસ્મિન્ વૈકસ્મિન્ યુષ્યત્, તસ્માત્પ
શ્ચિત્તો ન હૃષ્યત્ ન ક્લુષ્યેત્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉત્પત્તિ કે અભિમાનાદિકોં મેં જિસ તરહ સે ન કૈસે ઇસ પ્રકાર સે
અપની પ્રવૃત્તિ કર ।

‘સે આયબલે’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર કે સાથ મી સંબંધ હૈ, જિસસે
શિષ્ય કો સંબોધન કરતે હુપ આચાર્ય ઇસ વાત કા ઉપદેશ દેતે હૈં કિ
અપને માન કે લિયે આત્મબલ આદિ મારા તુજે વળસમારંભ નહીં
કરના ચાહિયે ।

નીચે કે સૂત્ર કા અવતરણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર શિષ્ય સે કહતે
હૈં કિ—હે શિષ્ય ! ઉચ્ચગોત્ર મેં ઉત્પત્તિ સે માન ઓર નીચ ગોત્ર મેં જન્મ
હેને સે અપમાન કા બિચાર કર હર્ષ ઓર ક્રોધ કરના તુજે યોગ્ય નહીં
હૈ, ક્યોંકિ કર્મ કે પ્રમાણ સે તુને પૂર્વ કે અનેક ભવોં મેં હન્નેં પ્રાપ્ત કિયા
હૈ । યહી વાત પ્રકટ કી જાતી હૈ—“સે અસઈ” ઇત્યાદિ ।

અભિમાનાદિમા જેવી રીતે ન હસે તેવી પ્રવૃત્તિ પોતાની કર.

‘સે આયબલે’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર સાથે પણ સંબંધ છે જેથી શિષ્યને
સંબોધન કરતા આચાર્ય એ વાતનો ઉપદેશ આપે છે કે પોતાના માન માટે
આત્મબલ આદિ દ્વારા તારે કશુંમારભ ન કરવો જોઈએ.

નીચેના સૂત્રનું અવતરણ કરવા માટે સૂત્રકાર શિષ્યને કહે છે કે—હે
શિષ્ય ! ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિથી માન, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ હેવાથી અપ-
માનનો વિચાર કરી હર્ષ અને ક્રોધ કરવો તને યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મના
પ્રભાવથી તે પૂર્વના અનેક ભવોમાં તે પ્રાપ્ત થઈ છે એ વાત પ્રગટ
કરવામાં આવે છે—‘સે અસઈ’ ઇત્યાદિ.

ટીકા-‘સ’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादौ समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयोर्गोत्रयोरनुभावबन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह-‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-बन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

जीवात्मा का जन्म-मरण जब तक उसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक होता रहता है। कभी यह नीच गोत्र के उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म लेता है तो कभी उच्च गोत्र के उदय से लोकपूजित कुल में। यह उच्च-नीच गोत्र में जन्म की प्राप्ति होना कर्म का कार्य है। इसमें किसी की इच्छा काम नहीं करती। अतः उच्च गोत्र में जन्म लेने से हर्षित होना और नीच गोत्र में जन्म लेने से दुःखित होना आत्मा के लिये योग्य नहीं। कारण कि पर्यायों में उलट-फेर होता ही रहता है; क्योंकि संसारी जीव कर्मों से युक्त हैं। अतः जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने से अपना अपमान समझता है उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि-वह तू अनेक बार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदि में उत्पन्न हो चुका है। तथा जो उच्चकुल में जन्म लेने से अपना मान-बड़प्पन समझता है उसके प्रति सूत्रकार कहते हैं कि-भाई तू भी नीचकुल जो काष्ठहार आदि का वंश है, उसमें अनेक बार जन्म ले चुका है। गोत्र

જીવાત્માના જન્મ મરણ જ્યા સુધી તેને મુક્તિની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યા સુધી થતા રહે છે, કોઈ વખત તે નીચ ગોત્રના ઉદયથી લોકનિન્દિત કુળમાં જન્મ લે છે તો કોઈ વખત ઉચ્ચ ગોત્રના ઉદયથી લોકપૂજિત કુળમાં. આ ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મની પ્રાપ્તિ થવી તે કર્મનું કાર્ય છે તેમાં કોઈની ઇચ્છાકામ કરતી નથી માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી હર્ષિત થયું, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી દુઃખી થયું આત્માને માટે તે યોગ્ય નથી, કારણ કે પર્યાયોમાં ઉલટ ફેર થયા જ કરે છે સંસારીજીવ કર્મોથી યુક્ત છે, માટે જે નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન હોવાથી પોતાનું અપમાન સમજે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-તૂં અનેકવાર લોકમાન્ય ઉગ્રકુળ ભોગકુળ આદિમાં ઉત્પન્ન થઈ ચુકેલ છે, તથા જે ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ લેવાથી પોતાનું માન-મોટાપણ સમજે છે તેના પ્રત્યે સૂત્ર-કાર કહે છે કે-ભાઈ તું પણ નીચ કુળ જે કઠીઆરા આદિનો વંશ છે તેમાં અનેકવાર જન્મ લઈ ચુકેલ છે ગોત્ર શબ્દનો અર્થ કુળ છે. ઉચ્ચ ગોત્રમાં

(કણ્ઠકમિતિ કર્મણ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન રહેતાપિ=જાતિ-કુલ-ચલ-સ્થાદિમદ સ્થાનેષ્વન્યતમં નાં રૂષ્ઠેદપિ, મનસાડપ્યુચ્ચકુલાદ્યમિમાનં ન ચેષ્ટેવેતિ તાત્પર્યમ્ । તત્ કિમાયાતમિત્યાહ-‘રૂતી’તિ, રૂતિ=પૂર્વાક્તપ્રકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-કુલાદિકં સમાનકર્મીશ્ચ ચ પરિસર્યાપ=ચુદ્વા, ‘ગોત્રવાદી’ ગોત્રં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રામિમાની ‘મમેવેવાદ્યં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં, કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ’ રૂતિ કો મવેત્, કિંચ “માનવાદી” માને=સ્વપુણો સ્કીર્તનમમિમાનં વદિતું શીલં યસ્યેતિ ॥ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કો મવેત્ ? ન કોઽપિ મવેદિત્યર્થઃ । અપિ ચ-કસ્મિન્ ના એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્ર-

શબ્દ કા અર્થ કુલ રૂ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન રૂને સે ન તો આત્મા અધિક થડા રૂ જાતા રૂ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ રૂને સે રૂીન રૂી । ક્યોંકિ રૂોનોં ગોત્રોં કે યન્ધાપ્યથસાયસ્યાન કે કણ્ઠક રૂક સરીરે રૂેં । રૂનકી સંખ્યા સમાન રૂે । (કર્મ કે અશ કા નામ કણ્ઠક રૂે) । રૂસલિપે “નો રૂંરૂત” જીવ કા કર્તવ્ય રૂે કિ થડ જાતિમદ, કુલમદ, યલમદ ઓર રૂપ ઘરૂરૂ કે મદ કરને કી કમી મનસે રૂી રૂેટા તક ન કરે । રૂસ પ્રકાર જથ થડ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક ઘાર પૂર્વ જન્મોં મેં પ્રાપ્ત કર રૂુકા રૂે, ઓર રૂનકે ઘંધ કે રૂી જથ સમાન કર્મ કે અશ રૂે તો રૂેસા કોન પ્રાણી રૂોગા જો રૂસ પરિસ્થિતિ કો જાન રૂૂજ્ઞકર રૂી ગોત્રવાદી ગોત્રામિમાની રૂોગા કિ-“મેરા રૂી રૂેસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર રૂે કિસી અન્ય કા રૂેસા નરૂી રૂે” રૂસ પ્રકાર કહરૂે કા સ્વમાવચાલા-સાહસ કરને ચાલા રૂોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો રૂૂસરૂોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉત્પન્ન રૂેવાધી નધી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નધી નીચ ગોત્રમા ઉત્પન્ન થવાધી નીચા થઈ જતો. કારણ કે અને ગોત્રોના બે ધાખ્યવસાય સ્થાનના કહો એકસરખા છે તેઓની સખ્યા સમાન છે (કર્મના અશતુ નામ કહો છે) માટે “નો રૂંરૂત” જીવનું કર્તવ્ય છે કે-તે જાતિમદ, કુળમદ, બળમદ અને રૂપ વિરૂદ્ધેનો મદ કરવાની કહિ પણ મનથી રૂેષ્ટા પણ ન કરે. આ પ્રકારે જ્યારે આ જીવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક ઘાર પૂર્વ જન્મોમા પ્રાપ્ત કરી ચુકલ છે, અને તેના બધાનો પણ જ્યારે સમાન કર્મોના અશ છે તો એવો કોમો પ્રાણી રૂોરૂે ને આ પરિસ્થિતિને જાણી જોઈને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રામિમાની થરૂે કે-“મારૂ જ એવું પરમ માનનીય સુન્દર ગોત્ર છે બીજા કોઈનું તેવું ગોત્ર નધી” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા રૂોરૂે, અને ઉત્કર્ષને બીજાઓના પ્રતિ પ્રમટ કરવાના ભાવનાવાળા રૂોરૂે ? માટે જ્યારે એ નિશ્ચિત છે

ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भक्त्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुल का हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे च्यवकर एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अपकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉચ્ચ ગોત્રના અને નીચ ગોત્રના અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉચ્ચ કુળના જ હોય” આ પ્રકારે ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કોણ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત-ભક્ત્યાત્મા જીવ ઉચ્ચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળના જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉચ્ચ કુળનો છું. અને તેનો પણ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પણ એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉચ્ચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે ખીન્ત સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉચ્ચ ગોત્રનો ઉદય છે તે વ્યવીને એકેન્દ્રિય-પૃથિવી-પાણી-વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉચ્ચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કંઈ લાભ મળી શકે

(કષ્ટક્રમિતિ કર્મણ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન હિતાપિ=આતિ-કુલ-ચલ-રૂપાદિમદ્
 સ્યાનેષ્વન્યતમે નાં રુદ્ધેદપિ, મનસાઽપ્યુચ્ચકુલામિમાને ન ચેષ્ટતેતિ તાત્પર્યમ્ ।
 તત્ કિમાયાતમિત્યાહ-‘હી’તિ, इति=પૂર્વોક્તમકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-
 કુલાદિકં સમાનકર્મણસ્થ ચ પરિસરૂપાય=મુદ્વા, ‘ગોત્રવાદી’ ગોત્રં વદિતું શ્રીલં
 યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રામિમાની ‘મમૈવૈતાદૃશં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં,
 કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ’ इति કાં મવેત્, કિંચ “માનવાદી” માને=સ્વશુભો
 સ્ત્રીર્વનમમિમાને વદિતું શ્રીલં યસ્યેતિ સ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કાં મવેત્ ?
 ન કોઽપિ મવેદિત્યર્થ । અપિ ચ-કસ્મિન્ વા એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્ર-

શબ્દ કા અર્થ કુલ હૈ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે ન તો આત્મા
 અધિક થકા હો જાતા હૈ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હીન હી ।
 ક્યોંકિ દોનોં ગોત્રોં કે ય-ધાધ્યવસાયસ્થાન કે કષ્ટક્રમ એક સરીલે હૈ ।
 ઉનકી સંખ્યા સમાન હૈ । (કર્મ કે અંશ કા નામ કષ્ટક્રમ હૈ) । ઇસલિયે
 “નો હિંદેત” જીવ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જાતિમદ્, કુલમદ્, ચલમદ્
 ઓર રૂપ ઘોરહ કે મદ્ કરને કી કર્મી મનસે મી ચેષ્ટા તક ન કરે ।
 ઇસ પ્રકાર જય વહ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક વાર પૂર્વ જન્મોં મેં
 પ્રાપ્ત કર ચુકા હૈ, ઓર ઇનકે વંધ કે મી જય સમાન કર્મ કે અંશ હૈ તો
 એસા કોન પ્રાણી હોગા જો ઇસ પરિસ્થિતિ કો જાન વૃદ્ધકર મી ગોત્રવાદી-
 ગોત્રાભિમાની હોગા કિ-“મેરા હી એસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર હૈ
 કિસી અન્ય કા એસા નહીં હૈ” ઇસ પ્રકાર કહને કા સ્વભાવવાલા-સાહસ
 કરને વાલા હોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો ડૂસરોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉપસા હોવાથી નથી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નથી નીચ ગોત્રમા
 ઉપસા થવાથી નીચો થઈ જતો કારણ કે બંને ગોત્રોના બન્ધાધ્યવસાય સ્થાનના
 કાંઈ એકતરખા છે તેઓની સખ્યા સમાન છે (કર્મના અંશનું નામ કષ્ટ
 છે) માટે “નો હિંદેત” એવું કર્તવ્ય છે કે-તે આતિમદ્, કુળમદ્, બળમદ્ અને
 રૂપ વિગેરેના મદ્ કરવાની કશી પણ મનથી ઘેષ્ટા પણ ન કરે. આ પ્રકારે બન્યારે
 આ જીવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક વાર પૂર્વ જન્મોમા પ્રાપ્ત કરી ચુકેલ છે,
 અને તેના બંધને પણ બન્યારે સમાન કર્મોના અંશ છે તો એવો કયા પ્રાણી
 હશે જે આ પરિસ્થિતિને બાણી બોધને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની થશે કે-
 “મારું જ એવું પરમ માનનીય સુંદર ગોત્ર છે બીજા કોઈનું તેવું ગોત્ર
 નથી” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા હશે, અને ઉપરને
 બીજાઓના પ્રતિ પ્રગટ કરવાના ભાવનાવાળા હશે ? માટે બન્યારે એ નિશ્ચિત છે

ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भव्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुलका हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे व्यवहार एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अप्रकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉચ્ચ ગોત્રમાં અને નીચ ગોત્રમાં અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉચ્ચ કુળમાં જ હોય” આ પ્રકાર ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કોણ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત-ભવ્યાત્મા જીવ ઉચ્ચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળમાં જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉચ્ચ કુળનો છું અને તેનો પછી વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું. કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પછી એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉચ્ચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે ખીજા સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉચ્ચ ગોત્રનો ઉદય છે તે ચ્યવીને એકેન્દ્રિય-પૃથિવી-પાણી-વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉચ્ચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કયો લાભ મળી શકે

વિકેન્નેકથા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃહ્યેત્—નામિલખ્યેત્—અથકુલોત્પન્નોઽમિત્યુત્કર્મ નેષ્ઠે-
વિત્પર્ય । તત્ કિમિત્યાહ—‘તસ્મા’—વિતિ, યસ્માદનાદિમય પરિભ્રમતા વહુનિ
પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ સમ્બાનિ, તસ્માદ્દેવોઃ પશ્ચિત્—
પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતદેવોપાદેવો ન હૃષ્યત્, ‘મમૈવદર્શનં કુલ’—મિતિ ન મોષેત, ન ક્રુધ્યેત્—
‘મમ કથમપમતરે કુલે બન્માયુ’—વિતિ સ્વાસ્થ્યને ન કુપ્યત્, ન વિપાદમપિ કુર્યાત્ ।
અનેકજનિષ્ઠ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિપ્રાપ્તાનીતિકથં હર્ષસમ્મય ૧, નીચકુલાનિ વહુશ્ચ સમ-
પિગતાનીતિ તૃયૈષ ક્રોધઃ । અમૃતપૂર્વયોઃ સુલલુપ્તયોરેવ સ્તોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્મવાદિતિ
તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તઃ—

અમૃતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુપ્ હોતે તો ઉનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિષાદ
કરના વચિત માના આતા, પરન્તુ એસા તો હૈં નહીં । અતઃ એસા વિચાર
કર જ્ઞાની કો હસ વિષય મેં હર્ષ વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા
એસા ક્યાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

હસ સસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે
હસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુલ્લ લુલ્લ કે સ્થાનમૃત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોં
કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર હનકી પ્રાપ્તિ મેં તુષે આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।
અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં હસ જીવને અનેક સુલ્લોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,
તથા—અપમાન સે, સ્થાન આદિકે અ્યુત હોને સે વષયંચન વર્ષ ધન કે
નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે લુલ્લોં કો જ્ઞેલા હૈ ।

કહા મી હૈ—

છે કદાચ તે અમૃતપૂર્વ કુળ લખને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ
વિષાદ કરવો ઉચિત મનાવ, પણ તેવું તો છે નહિ, મોટે ભાગે વિચાર કરી
જ્ઞાનીએ આ વિષયમાં હર્ષ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ પણ સદા હમેશાં એવો
ખ્યાલ રાખવો જોઈએ કે—

આ સસારમાં અનાદિ કાળથી અનેક યોનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને
અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનમૃત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ છે પણ
તેની પ્રાપ્તિમાં તને આશ્ચર્ય શું છે અનન્ત જન્મ જ માન્તરેમાં આ લવે
અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા છે અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના અ્યુત
હોવાથી, વધ બધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના
દુઃખોને સહન કર્યા છે.

કહુ પણ છે—

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।
उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥૧॥
તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

કિમધિકેન વર્તમાનેઽપિ જન્મનિ નાનાવિધા અવસ્થા અનુભૂયન્તે, અત-
આત્માર્થિભિર્હર્ષક્રોધૌ ન કાર્યાવિત્યાશયઃ । અત્ર ગોત્રપદમુપલક્ષણં, તેન જાત્યા-
દીનાં સર્વેષાં મદો ન વિધેય ઇતિ પ્રકરણાર્થઃ ।

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અધિક કયા કહ્યા જાય ? જવ વર્તમાન પર્યાય મેં હી ઇસ જીવ કી
અનેક અવસ્થાઈં હોતી દેખી જાતી હૈં તો જન્મ-જન્માન્તરોં મેં ઇસકી
અનેક અવસ્થાઈં હુઈ હોં, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ કુલોં મેં જન્મ હુઆ હો
તો ઇસમેં આશ્ચર્ય કી વાત હી કૌનસી હૈ । એસા દૃઢ વિશ્વાસ કર આ-
ત્માર્થીં કે લિયે ઇન અવસ્થાઓં મેં કમીં ભી હર્ષ ઔર વિષાદ કે લિયે
સ્થાન નહીં હોના ચાહિયે ।

સૂત્ર મેં ગોત્ર પદ ઉપલક્ષણ હૈ ઇસસે આઠ મદોં કા—(૧) જાતિમદ
(૨) કુલમદ, (૩) વલમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ,

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ

અધિક શુ કહેવામા આવે જ્યારે વર્તમાન પર્યાયમા જ આ જીવની અનેક
અવસ્થાઓ થાય છે તે નજરે દેખાય છે તો જન્મ જન્માતરોમા તેની અનેક
અવસ્થાઓ થાય, અનેક વાર ઉચ નીચ ગોત્રમા જન્મો થાય છે એમા
આશ્ચર્યની વાત કઈ છે એવો દૃઢ વિશ્વાસ કરી આત્માર્થીને માટે આ અવસ્થા
ઓમા કોઈ વખત પણ હર્ષ અને શોકનુ સ્થાન હોવું ન જોઈએ

સૂત્રમા ગોત્રપદ ઉપલક્ષણ છે માટે આઠ મદોનુ—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળ
મદ, (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ, (૭) સૂત્રમદ,

માનાદિનિરસનેન કપાયધ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિપયે વાદદતા, તપા
ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાધિગમસ્તેન ચ મોક્ષ ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ ર્પકોષૌ
સ્વાધ્યાવિતિ માવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે
કચિદરણ્ય વસતિ, કચિત્સમમૃમિષુ કચિન્ન વિપમમૃમિષુ શેતે, કચિત્સ્ત્રગ્જલં
કચિદ્ દૂપિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગમ્યતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ,
તયૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોશ્રાદિમાતૌ ન ર્પ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામન સંયમિના કાર્યા
વિતિ ક્તુલ્લકાર્યઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ્, (૮) ऐश्वर्यमद् કા મહણ હો જાતા હૈ । મદ્ મી અહંકાર હી
હૈ, અતઃ ઇનકા પરિત્યાગ કર દેના ચાહિયે; ક્યોંકિ જાતિ વગેરહ સે
હીન હોને પર મી આત્મા કાલ લાગિ આદિ કે પ્રાપ્તિ હોને પર ધર્મ કા
અધિકારી બન જાતા હૈ । ધર્મપ્રાપ્તિ મેં જાતિ વગેરહ પાષક નહીં હોતે હૈ ।

જિસ પ્રકાર દેશ-દેશાન્તર મેં ભ્રમણ કરને વાલે પ્રાણી કો કમી
કિસી સ્થાન પર સુખ, કમી કિસી જગહ દુઃખ મિલતા હૈ । કમી વહ
ગ્રામ મેં વસ જાતા હૈ કમી ઉસે ઘન મેં મી વસને કા અવસર આતા હૈ,
કમી પ્રશસ્ત ભૂમિ પર વહ સો જાતા હૈ કમી કંટકાકીર્ણ ભૂમિ મેં હી
પડ રહતા હૈ, કમી મીઠા સ્વચ્છ જલ ઉસે પીને કો મિલતા હૈ કમી સ્વા
મલિન જલ મી વહ પી લેતા હૈ, તો મી ઇસ વિષય મેં વહ સુખ ઓર દુઃખ
નહીં માનતા । ઉસે અપને લક્ષ્ય સ્થાન પર પહુંચને કે લિયે યહ સય કરના
પડતા હૈ । ઉસી પ્રકાર પ્રકૃત મેં મી મુક્તિ કો ચાહને વાલે સંયમી મુનિ કે

(૮) એશ્વર્યમદ્ગુ ગ્રહણ થાય છે મદ્ પણ ગ્રહણ કર છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ
કરી દેવો એકજે, કારણ કે જાતિ વિગેરેનું હીનપણુ લેવા છતાં પણ આત્મા
કાલ લાગિ આત્મા પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમા
જાતિ વિગેરે પાષક થવા નથી.

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ
સ્થાન પર સુખ, કોઈ વખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં
વસે છે કોઈ વખત વનમાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત
ભૂમિ પર તે સુખ ભાય છે કોઈ વખત કંટાળાળી ભૂમિમાં પણ પડપુ રહેવું
પડે છે કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખારું મલિન
પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ
માનતો નથી. તેને ચોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે
પ્રકારે પ્રકૃતમાં પણ મુક્તિને પાહવાવાળા સુબીમુનિ માટે જે નીચ મોવતી

પ્રાણિનાં સાતં પ્રિયં ભવતીતિ વિચાર્ય કેષાઞ્ચિદપિ પ્રાણિનામહિતં ન કર્ત્ત-
વ્યમ્ । તદહિતાચરણસ્ય યત્ફલં ભવતિ તદર્શયતિ—‘ભૂર્હિ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ભૂર્હિં જાણ પડિલેહ સાયં, સમિષ્ણ ઇયાણુપસસી, તં
જહા—અંધત્તં બહિરત્તં મૂયત્તં કાણત્તં કુંટત્તં શુજ્જત્તં વડભત્તં
સામત્તં સવલત્તં, સહ પમાણં અણેગરૂવાઓ જોણીઓ સંધાયઈ,
વિરૂપરૂવે ફાસે સંપરિવેયઈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ભૂતેષુ જાનીહિ સાતમ્ સમિત એતદનુદર્શી, તથા—અન્ધત્વં વધિરત્વં
મૂકત્વં કાણત્વં કુબ્જત્વં વડભત્વં શ્યામત્વં શવલત્વં સહ પ્રમાદેન અનેકરૂપા યોનીઃ
સન્દધાતિ વિરૂપરૂપાન્ સ્પર્શાન્ પરિસંવેદયતે ॥ મૂ૦ ૨ ॥

લિયે ઉચ્ચ નીચ ગોત્ર કી પ્રાપ્તિ મેં ભી હર્ષ વિષાદ કરના ઉચિત નહીં
હૈ । ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે માન આદિ કા જબ આત્મા સે અભાવ હો
જાતા હૈ તવ કષાય કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોને સે સંયમી કો સંયમ-
ભાવ મેં દૃઢતા, ઔર વિષયાદિકોં મેં અદૃઢતા આ જાતી હૈ, ઇસસે સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોં કી પ્રાપ્તિ હોને સે સંયમી મુનિ કો મુક્તિ કા લાભ
કાલાન્તર મેં યા ઉસી ભવ મેં હોજાતા હૈ । ઇસ પૂર્વોક્ત કથન સે સંયમી
મુનિ કો ઇસ વાત કા ભી સદા વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ માન
ઔર અપમાન કે કારણ-કલાપોં કી ઉપસ્થિતિ હોને પર મુજે હર્ષ ઔર
વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોં કો સાતાવેદનીય કે ઉદય સે સુખ એવં સુખ-
કારક સામગ્રી, તથા અસાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ એવં દુઃખકારક

પ્રાપ્તિમાં પણ હર્ષ શોક કરવો ઉચિત નથી આ પ્રકારના વિચારથી માન આદિનો
ન્યારે આત્માથી અભાવ થઈ નય છે ત્યારે કષાયનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોવાથી
સંયમીને સંયમ લાવમા દૃઢતા અને વિષયાદિકોમા અદૃઢતા આવી નય છે. માટે
સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોની પ્રાપ્તિ હોવાથી સંયમી મુનિને મુક્તિનો લાભ કાલા-
ન્તરમા અગર આ લાવમા થાય છે

આ પૂર્વોક્ત કથનથી સંયમી મુનિએ આ વાતનો પણ સદા વિચાર રાખવો
જોઈએ કે—માન અને અપમાનના કારણકલાપોની ઉપસ્થિતિ હોવાથી હર્ષ
અને વિષાદ કરવું માઈ કર્તવ્ય નથી ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાસારિક પ્રાણિયોને સાતાવેદનીયના ઉદયથી સુખ અને સુખકારક સામગ્રી,
અને અસાતાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ અને દુઃખકારક સામગ્રી પ્રાપ્ત થાય છે,

ટીકા—‘ભૂતેષુ’ इति । अत्र मूले ‘भूएहि’ इति तृतीयान्तपाठः सप्तम्यर्थे, भूतेषु=भवन्ति, मविष्यन्ति, अभूवन् च सचारूपेणेति भूतानि=प्राणिनस्तेषु सार्व=सुखं तद्विरुद्धं चासार्व=सुखं प्रत्युपेक्ष्य=सूक्ष्मधिया विचार्य जानीहि=बुध्यस्व । उपयोगवक्ष्यो जीवः कार्यप्रयेऽपि सचां वधाति, अतः प्राणिनस्त्रैकालिह्यसचाप्रतिपादनायात्र भूतशब्दोपादानं कुतमिति बोध्यम् ।

સામગ્રી પ્રાપ્ત થોતી હૈ, યેસા વિચાર કર કિસી ‘મી’ પ્રાણી કા ઝરા મી અહિત નહીં કરના ચાહિયે । અહિત આશ્વરણ કા જો ફલ હોતા હૈ સો કહતે હૈ—

‘મૂર્ખહિં જાણ’ ઇત્યાદિ । પ્રત્યેક જીવાત્મા—ચાહે વહ દરિદ્રી હો, ચાહે મિશ્રુક હો; ચાહે ધની હો; ચાહે ગુણી હો; કોઈ મી ક્યોં ન હો; યહી ચાહતા હૈ કિ હમકો શાંતિલાભ હો, સુખ પ્રાપ્ત હો । ચાહે આસ્તિક હો યા નાસ્તિક; સબકા એક યહી લક્ષ્ય હૈ । ઇસસે પ્રતિકૂલ કોઈ મી નહીં મિલેગા । એક મિશ્રુક જો દર દર કા મિસારી બનકર અપન ઉદર કા નિઘોઈ કરતા હૈ ઉસસે મી યદિ પ્રભ કિયા જાય તો વહ મી યહી કહેગા કિ, ક્યા કરૂં; મુજે જ્ઞાતા—સુખ નહીં હૈ । અત ઇસ પ્રકાર કે ઉસકે કપન સે યહ વાત સત્ય સાબિત હોતી હૈ કિ વહ મી જ્ઞાતા—સુખ પાને કા અમિલાપી હૈ । કિફી કો મી કોઈ છૂતા હૈ તો વહ મય કે મારે ભાગતી હૈ । વૃક્ષ કે નીચે કિસીને અગ્નિ જલાઈ હો તો, વહ ઉસકે આતાપ સે ઘુરછા જાતા હૈ । લજવંતી એક જાત કી વનસ્પતિ હોતી હૈ જો છૂતે હી સંકુચિત

એવો વિચાર કરી કોઈ પણ પ્રણિતુ જ્યા પણ અહિત નહિ કરતુ એઈએ અહિત આશ્વરણુ ને રૂળ હોય છે તે કહે છે—

મૂર્ખહિં જાણ ઇત્યાદિ. પ્રત્યેક જીવાત્મા ભલે તે દરિદ્રા હોય અથવા મિશ્રુક હોય, ભલે ધની હોય ચાહે ગુણી હોય. ભલે કોઈ પણ પ્રકારના હોય પણ ‘અભાને’ શાંતિને લાભ થાએ, મુખ થાએ ભલે નાસ્તિક હોય કે આસ્તિક પણ બધાનુ આ એક જ લક્ષ્ય છે એનાથી પ્રતિકૂળ કોઈ પણ કારણ મળતી નહિ. એક મિશ્રુક ને ધરધરને ભિખારી બનીને પોતાના પેટને નિર્વાહ કરે છે તેનાથી પણ એ પ્રભ કરવામા આવે તો તે પણ એ જ કહેશે કે શું કરૂં મને જ્ઞાતા—સુખ નથી, માટે આ પ્રકારના તેના કથનથી એ વાત સત્ય સાબિત થાય છે કે તે પણ જ્ઞાતા—સુખ મેળવવાને અભિલાષી છે કિફીને પણ કોઈ નડે છે તે તે પણ બપથી દૂર ભાગે છે વૃક્ષની નીચે કોઈએ અગ્નિ સળગાવી હોય તો તે તેના આ તાપથી મુકાઈ બાય છે. વજવંતી એક જાતની વનસ્પતિ હોય છે ને અડધાથી

હો જાતી હૈ । ઇન સવકી ઇન વાલ્ય ચેષ્ટાઓં સે યહી માલૂમ કિયા જા સકતા હૈ કિ-ઇનકે અન્દર રહને વાલી આત્મા ભી શાતા અર્થાત્ સુખ કા અભિલાષી હૈ । મતલબ યહી હૈ કિ-ચાહે કોઈ ભી જાત કા જીવ ક્યોં ન હો; સમી ઇસ શાતા-સુખ કે અભિલાષી હૈ । યહાં પર યહ પ્રશ્ન હોં સકતા હૈ કિ વહ શાતા-સુખ કૈસે ઓર કહાં પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ ? । ભવા-મિનંદી જીવ ઇસ વાત કા સહસા ઉત્તર દેંગે કિ-વહ શાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોં કે સેવન સે હી મિલ સકતા હૈ । પરન્તુ યહ ધારણા ડનકી ગલત હૈ । યદિ ઁસા હી હોતા તો ફિર ચક્રવર્તી જૈસે વિશાલ વૈભવ કે ભોક્તા ઇનકા પરિત્યાગ ક્યોં કરતે ? । કોઈ આર્થિક શાસ્ત્રવેત્તા કહેગા કિ-ધન કી પ્રાપ્તિ મેં હી શાન્તિ-સુખ સમાયા હુઆ હૈ । પરન્તુ યહ વિચાર ભી ઠીક નહીં । ક્યોંકિ યદિ યહી સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત કિયા જાય, તો ફિર આજ જો ભીલ માંગકર અપના ગુજારા કરને વાલે દરિદ્રી જીવ હૈં ડનસે જાકર યદિ યહ કહા જાવે કિ હમ તુમ કો દો લાલ્ રુપયા દેતે હૈં, તુમ અપને શરીર કા પાવ ભર ભી માંસ નિકાલકર હમકો દે દો, તો વહ કમી ભી આપકી માંગ કી પૂર્તિ નહીં કરેગા । અતઃ અધિક ક્યા કહા જાય, યહ વાત નિશ્ચિત હૈ કિ-ઇન ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોં મેં સચ્ચી સુલ્-

મકુચિત થઇ જાય છે આ બધાની આ બાહ્ય ચેષ્ટાઓથી એ માલુમ થાય છે કે-તેની અંદર રહેવાવાળો આત્મા પણ શાતા અર્થાત્ સુખનો અભિલાષી છે મતલબ એ છે કે ભલે કોઈ પણ જાતનો જીવ હોય પણ તે શાતા-સુખનો અભિલાષી છે આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન થાય છે કે તે શાતા-સુખ કેવી રીતે અને કઈ જગ્યાએ પ્રાપ્ત થઈ શકે ? ભવામિનંદી જીવ આ વાતનો સહસા ઉત્તર આપશે કે-તે શાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોના સેવનથી જ મળી શકે છે પરંતુ એવું ધારણુ તે ગલત છે, જો એ જ પ્રમાણે હોય તો પછી ચક્રવર્તી જેવા વિશાળ વૈભવના ભોક્તા તેનો પરિત્યાગ કેમ કરત ? કોઈ આર્થિકશાસ્ત્રવેત્તા કહેશે કે ધનની પ્રાપ્તિમા જ શાતા-સુખ સમાયા છે પરંતુ તે વિચાર પણ ઠીક નથી, કારણ કે કદાચ તે સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત કરવામા આવે તો પછી આજ જે ભીખ માગી પોતાનો ગુબારો કરવા-વાળા દરિદ્રી જીવ છે તેની પાસે જઈને તેને કહેવામા આવે કે-‘અમે તને બે લાખ રૂપિયા આપીશુ તુ પોતાના શરીરનુ પાશેર માસ અમને કાપીને આપી દે’ તો તે પણ તમારી આ માગણી પુરી કરશે નહિ માટે શુ વધારે કહેવું ? એ વાત નિશ્ચિત છે કે આવા ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોમા સાચી સુખશાન્તિ પ્રદાન કરવાની

શાન્તિ પ્રદાન કરને કી યોગ્યતા નહીં હૈ । યહ તો હમારી કલ્પના હૈ, જો હમને હનમેં સુસ્વશાન્તિ માન રહી હૈ । જિન જહ સ્થૂલ ઘસ્તુઓં મેં સુસ્વ કી કલ્પના કરકે સાધારણ મનુષ્ય મી જી-તોષ પરિશ્રમ કર રહે હૈ, ઉનકી પ્રાપ્તિ હોને પર મી ઉન્હેં સુસ્વ નહીં મિલતા, ક્યોંકિ ઉનમેં સુસ્વ પ્રદાન કરને કી શક્તિ હૈ નહીં । હસી સે આજ સારા સંસાર, બાહે ચૈમવસમ્પન્ન હો; બાહે વરિદ્રાવસ્થાપન્ન હો; બુઝી હી હૈ । યહ બુઝ તથતક નહીં મિટ સકતા જય તક સુસ્વ કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા પતા ન લગા સિયા જાયગા, અથવા ઉસકે સ્થાન કા પૂર્ણ જ્ઞાન ન હો જાવેગા ।

વાસ્તવિક સુસ્વ કયા હૈ ? હસકા ઇક માત્ર ઉત્તર હૈ—નિરાકુલતા । ક્યોંકિ સંસાર મેં જય કમી ઇચ્છાઓં કે શાત હોને પર યત્-કિમિત્ સુસ્વ કી અનુભૂતિ હોતી હૈ તથ હસસે હસ શાત કા અનુમાન મી લગાયા જા સકતા હૈ કિ કોઈં ઇસી મી અવસ્થા હૈ કિ જહા પર હસકા પૂર્ણસ્વ સે વિકાશ હૈ । ઘહ નિરાકુલતા કે સિંચાય ઓર કોઈં દૂસરી અવસ્થા નહીં હૈ । હસ નિરાકુલતા કા પૂર્ણમોક્ષા પરમાત્મા હૈ । હસી કા અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ હૈ । હસી અભિપ્રાય કો હૃદય મેં રલ્લકર સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ “મૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્”—હે અભ્ય ! પ્રત્યેક જીવોં મેં વ્યક્ત ઓર અવ્યક્તરૂપ સે શાતારૂપ જો સુસ્વ હૈ ઉસકી અભિલાષા

ચેત્વતા નથી, એ તો અમારી કલ્પના છે, જે અમે તેમાં સુખ શાન્તિ માની સમ્પ્રેલ છે જે જહ અને જહાં વસ્તુઓમાં સુખની કલ્પના કરીને સાધારણ મનુષ્ય પશુ છવતોહ પરિશ્રમ કરે છે તેના પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ તેને સુખ મળતું નથી. કારણ કે તેમાં સુખ પ્રદાન કરવાની શક્તિ છે જ નહિ. બોટલા મટે અથવા સાથે સંસાર ભલે વૈભવસમ્પન્ન હોય અગર હરિદ્રાવસ્થાપન્ન હોય, કુખી જ છે. એ કુખ ત્યાં સુધી મટી શકતું નથી જ્યાં સુધી સુખનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ હાથ ન લાગે, અગર તેના સ્થાનનું પૂર્ણ જ્ઞાન ન થાય.

વાસ્તવિક સુખ શું છે ? તેનો એક માત્ર ઉત્તર છે—નિરાકુલતા. કારણ કે સંસારમાં જ્યારે કેઈ વખત હૃદયજ્યોના શાત થવાથી જલક સુખની અનુભૂતિ થાય છે ત્યારે તેથી એ વાતનો અનુમાન કરવામાં આવે છે કે—કેઈ એવી પણ અવસ્થા છે કે જે ઠેકાણે તેનો પૂર્ણ રૂપથી વિકાશ છે, તે નિરાકુલતા સિંચાય બીજા કોઈ અવસ્થા નથી. આ નિરાકુલતાનો પૂર્ણ લોભતા પરમાત્મા છે તેનો અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી છવ છે. આ અભિપ્રાયને હૃદયમાં સખીને સૂત્રકાર કહે છે કે—“મૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્” કે જા.અ. ! પ્રત્યેક છવમાં અજ્ઞા અને અવ્યક્ત રૂપથી શાતારૂપ જે સુખ છે, તેની અભિલાષા હુપચેલી છે, તે

છુપી હુઈ હૈ, ઇસ વાત કા તું અપની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિ સે વિચાર કર। ઇસ સૂત્ર
કે અવતરણ મેં જો સાતવેદનીયજન્ય સુખ કે અમિલાષી પ્રત્યેક જીવ
કો વતલાયા ગયા હૈ વહ ઇસી નિરાકુલતારૂપ સુખ કા પરમ્પરાકારણ
હોને સે હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। ક્યોંકિ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ જો
સાતાવેદનીય કર્મ કે ઉદય સે સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત હોગા
વહ ક્ષણિક-વિનશ્વર હોગા, તથા ઉસકા ઉદય દુઃખોં સે અન્તરિમ-છુપા
હુવા હોગા। ઇસલિયે એસે સુખ સે આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિ-
ણતિ કા સદા ભોક્તા નહીં બન સકતા। હાં! સાંસારિક સુખ કી સામગ્રી
યદિ જીવોં કે પાસ હૈ, ઓર યદિ ઉનકે ચિત્ત મેં હેયોપાદેય કા વિવેક
જાગૃત હૈ તો વે ઉસકે દ્વારા કુછ અંશોં મેં સાંસારિક કાર્યોં સે નિરાકુલ
બનકર શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓં કા આરાધન ભલીભાંતિ કર સકતે હૈં।
ઇસ અવસ્થા મેં ઉનકે શુભભાવોં કી ક્રમશઃ જાગૃતિ હોતી હૈ, ઓર વહ
ઉન્હેં પરમ્પરારૂપ સે આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કા અધિકારી બના દેતી
હૈ। જો ભવાભિનંદી હૈ અથવા જિસ કિસી પ્રકાર સે અપના સ્વાર્થ સાધન
કરને મેં હી મસ્ત હૈ, ‘અપને સુખ મેં હી સવકા સુખ સમાયા હુઆ હૈ’-
જો ઇસ દુર્ભાવના કા વશવર્તી હૈ, “સાતાવેદનીય કે ઉદય સે જિસ પ્રકાર

વાતનો તુ તારી પોતાની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કર આ સૂત્રના અવતરણમા
જે સાતાવેદનીયજન્ય સુખના અમિલાષી પ્રત્યેક જીવને ખતાવવામાં આવ્યા છે,
તે આ નિરાકુલતારૂપ સુખના પરપરાકારણ હોવાથી પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે
એ નિશ્ચિત સિદ્ધાંત છે-જે સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી સાંસારિક વૈભવજન્ય
સુખ પ્રાપ્ત થશે તે ક્ષણિક વિનશ્વર હશે, અને તેના ઉદય દુ ખોથી અન્તરિમ
-છુપાયેલો હશે માટે એવા સુખથી આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિનો
સદા ભોક્તા બની શકતો નથી હાં, સાંસારિક સુખની સામગ્રી કદાચ
જીવેની પાસે છે, અને કદાચ તેના ચિત્તમાં હેયોપાદેયનો વિવેક
જાગૃત છે તો તે તેના દ્વારા થોડા અંશોમાં સાંસારિક કાર્યોથી નિરાકુળ
બનીને શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓનું આરાધન ભલીભાતિ કરી શકે છે આ અવસ્થામાં
તેના શુભ ભાવોની ક્રમશઃ જાગૃતિ થાય છે, અને તે તેને પરપરાથી આત્મકલ્યાણ-
કારી માર્ગનો અધિકારી બનાવી દે છે જે ભવાભિનંદી છે અથવા જેકોઈ પ્રકારથી
પોતાનો સ્વાર્થ સાધવામાં જ મસ્ત છે ‘પોતાના સુખમાં જ બધાના સુખ સમા-
યેલા છે’ જે આવી દુર્ભાવનાને વશવર્તી છે, “સાતાવેદનીયના ઉદયથી જેવા પ્રકારે

સમિતઃ=પઠ્ઠચસમિતિમિ સમિતઃ સન્ પતવનુદર્શી=પતસ્તુતં દુઃસ્વં ના વસ્પ-
માણ વાઙ્મત્વાદિકં દ્રષ્ટું=વિસ્રોષિતું શીલં યસ્ય સ પતવનુદર્શી=માખિભુમાશુમાત્-
લોકી સ્વં જાતિકુલાદિમદ્જનિતકદુર્કર્મવિપાકમન્થત્વાદિકં જ્ઞાત્વા મૃત્યુ સારં
જાનીદિ, ઇતિ સમ્બન્ધઃ । તદ્વેષ દર્શયતિ—‘સદ્યથે’-ત્પાદિના ।

હમ સાંસારિક વૈભવ કે ઓક્તા યને હૈં, વૈસે હી વીન દુઃસ્વી જીવ અ
સાતાવેદનીય કે લવ્ય સે દુઃસ્વ દરિદ્રાવસ્થા કે ઓક્તા યને હૈં, ફિર હમે
इनके दुःस्व को दूर करने की और इन्हें सुख पहुँचाने की क्या आवश्यक-
ता है? क्योंकि हम किसी के कर्मोदय को तो भेद सकते नहीं हैं।” इत्यादि
दुर्भावनाओं से जिनका अन्तःकरण दूषित है—वे ‘प्रत्येक संसारी जीव
सुखामिलायी है’ इस बात को नहीं समझ सकते । इसे समझने के
लिये सूक्ष्म-सदृशानरूपी बुद्धि, एवं संयम जीवन की आवश्यकता है ।
इसीका सुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘समिप पयाणुपस्सी
समिप्तः पतवनुदर्शी’ । जो समितियों के पालन करने में सावधान है,
जिसकी वित्तवृत्ति जीवों को दुःस्वित देखकर द्रवित हो जाती है, जो
जीवों की रक्षा करने में सदा सावधान रहते हैं, जिनकी प्रत्येक क्रिया
यत्नापूर्वक होती है, ऐसे समितिपालक संयमी मुनि ही ‘पतवनुदर्शी’
इस बात का अनुभव कर सकते हैं । पाँच समितियों के आराधन करने
का उद्देश्य जीवों की एकमात्र रक्षा करना है, इसमें स्व और पर दोनों
की रक्षा आजाती है । ईयांसमिति में खलीन साधु—सूसराप्रमाण दृष्टि से

અમે સાંસારિક વૈભવના લોભના બન્ધા છીએ તેવી જ રીતે એ દીન દુ ખી ભવ અસ-
તાવેદનીયના ઉદયથી દુ ખ દરિદ્રાવસ્થાના લોભના બન્ધા છે પછી અમને તેના દુઃખોને
દૂર કરવાની અને તેમને સુખ પહોંચાડવાની શું આવશ્યકતા છે ? કારણ કે અમે
કેઈના કર્મોદયને ભેદાવી શકતા નથી ” ઈત્યાદિ દુર્ભાવનાઓથી જેનું અતઃકરણ
દૂષિત છે તે “ પ્રત્યેક સંસારી ભવ મુખામિલાથી છે ” એ વાતને સમજી શકતા
નથી. તેને સમજવાને માટે સૂક્ષ્મ સદ્રશાનરૂપી બુદ્ધિ અને સચમ ભવનની આવ-
શ્યકતા છે, તેના બુદ્ધાસે કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—‘ સમિપ પયાણુપસ્સી સમિતઃ
પતવનુદર્શી, એ સમિતિઓના પાલન કરવામાં સાવધાન છે, જેની વિત્તવૃત્તિ ભવેની
રક્ષા કરવામાં સદા સાવધાન રહે છે, જેની પ્રત્યેક ક્રિયા યતનાપૂર્વક થાય છે, એવા
સમિતિપાળક સચમી મુનિ જ ‘પતવનુદર્શી’ એ વાતનો અનુભવ કરી શકે છે.
પાંચ સમિતિઓનું આરાધન કરવાનો ઉદ્દેશ્ય ભવેની બેઠક માત્ર રક્ષા કરવાની છે.
તેમાં સ્વ અને પર બન્નેની રક્ષા આવી બાબ છે. ઈયાંસમિતિમાં લવલીન સાધુ

માર્ગ કો દેખકર ચલતા હુવા મુનિ સદા હસ વાત કા પક્ષા ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં કોઈ છોટા મોટા જીવ મેરે પૈર કે નીચે આકર પ્રાણોં સે વ્યુક્ત ન હો જાય । હસમેં પર કે પ્રાણોં કા રક્ષણ કે સાથ ૨ અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા સંરક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા રહતા હૈ । ૧ । ભાષાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત-વચન બોલેગા, દૂસરે જીવોં કો જિસ વચન સે કષ્ટ પૈદા હો, હસ પ્રકાર કે સાવધ વ કઠોર વચન નહીં બોલતા હૈ । હસ સમિતિ સે સત્ય મહાવ્રત કી રક્ષા હોતી હૈ । ૨ । ઇષણાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ સિર્ફ સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કે લિયે ભ્રમરભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ-નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરતા હૈ । ૩ । આદાનનિક્ષેપણ-સમિતિ મેં મુનિ અપને સંયમ કે ઉપકરણોં કી ઉભય-દોનોં કાલ પ્રતિલેખના કર ઉનકે લેને ઓર રખને મેં યતના કરતા હૈ । ૪ । પ્રતિષ્ઠાપના-સમિતિ મેં મુનિ જીવરહિત સ્થાન મેં મલ-મૂત્રાદિક પરિઠવતા હૈ । ૫ । હન સમિતિયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી મુનિ ‘ સવ હી જીવ સુખ ચાહતે હૈં ’ ઇસા અનુભવ કરતે હૈં । જો વર્તમાન મેં સત્તારૂપ સે રહતે હૈં, ભવિષ્યત્ કાલ મેં ખી જો સત્તારૂપ સે રહેંગે, ઇવં ભૂતકાલ મેં જો સત્તારૂપ સે રહે હૈં વે ભૂત હૈં । સૂત્રકાર ને જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કર ઉસકી ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે “ ભૂત ”

હુસરાપ્રમાણુ દૃષ્ટિથી માર્ગને દેખીને ચાલતાં સદા આ વાતનો ખ્યાલ રાખે છે કે-કેઈ નાના મોટા જીવ મારા પગ નીચે આવી પ્રાણોથી વિચુક્ત ન થઈ બચ તેમા ખીજના પ્રાણોના રક્ષણની સાથે સાથે પોતાના અહિંસારૂપ મહાવ્રતનું સંરક્ષણ સારી રીતે થાય છે (૧) ભાષાસમિતિમા પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત વચન બોલશે, ખીજા જીવોને જે વચનથી કષ્ટ પેદા થાય તે પ્રકારના સાવધ કઠોર વચન બોલતા નથી, આ સમિતિથી સત્યમહાવ્રતની રક્ષા થાય છે (૨) ઐષણાસમિતિમા પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ ફક્ત સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે ભ્રમર-ભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરે છે (૩) આદાનનિક્ષેપણ સમિતિમા મુનિ પોતાના સંયમના ઉપકરણોની ઉભય-બંને કાળ પ્રતિલેખના કરી તેના લેવામા અને રાખવામા યતના કરે (૪) પ્રતિષ્ઠાપનાસમિતિમા મુનિ જીવરહિત સ્થાનમા મળ મૂત્રાદિકે પરિઠવે (૫) આ સમિતિઓમા પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી મુનિ ‘ બધા જીવો સુખ ચાહે છે ’ એવો અનુભવ કરે છે જે વર્તમાનમાં સત્તા રૂપથી રહે છે, ભવિષ્ય કાળમાં પણ જે સત્તારૂપથી રહેશે અને ભૂતકાળમાં જે સત્તા રૂપથી રહેલા છે તે ભૂત છે સૂત્રકારે જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોના પ્રયોગ ન કરી તેની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે “ ભૂત ” એ શબ્દનો સૂત્રમા પ્રયોગ

મન્યતમ્=ઉપરતનેમત્ત્વ દ્રવ્યતો માવતોઽપિ મવતિ, તથૈકેન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિયા
 દ્રવ્યમાવાન્યાઃ। ચતુરિન્દ્રિયો મિથ્યાદષ્ટિપઠ્વેન્દ્રિયધૌર્મ્યો માવાન્યૌ, દ્રવ્યમાવમદ-
 મિથ્યમન્યત્વં નિયમતો દુઃસ્વજનકં મવતિ। एवं ધધિરત્ત્વ=કર્મ્યાપાટત્વ, દ્રવ્યતો ધધિરઃ
 મવ્યશકિરહિતઃ, માવધધિરો જિનવચનધવળવિફલ। મૂર્ક્ત્વ=વચનવિકલત્વ દ્રવ્યતઃ,
 માવતો મૂકો મિથ્યાતાદ્યભિનિવેશેન સ્વદોષાપહવાય જિનવચનાપ્રતિપાદક।

इस शब्द का सूत्र में प्रयोग किया है। उपयोगलक्षणवाला जीव तीनों
 काल में भी सत्ता से रहित नहीं होता है, इसलिये प्राणी की त्रैकालिक
 सत्ता प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकारने इस सूत्र में “मृत” शब्द का प्रयोग
 किया है। अतः जय संसार का प्रत्येक प्राणी सुस्वाभिलाषी है, तब उसके
 साथ अत्याचार-अनर्थ कर उन्हें दुःखित करनेवाला प्राणी स्वयं अपने को
 दुःखित करने की चेष्टा करता है। जाति और कुलादिक के अभिमान से
 उन्मत्त बनकर जो दूसरों को हीन समझता है, तथा ‘तू अघा है, तू बहिरा
 है, तू मृगा है’ इत्यादि प्रकार के कर्कश शब्दों द्वारा जो दूसरों का तिर
 स्कार करता है वह अपनी कषायपरिणति से आत्मा को मलिन करता
 हुआ तदुपाजित कर्म के कटुक विपाक को अवश्य भोगता है। इसी बात
 का विगदर्शन कराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-“अन्यत्वं मूर्क्त्वं”
 इत्यादि। देखने की शक्ति की अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम
 अन्यत्व है, यह अंघापना द्रव्य और माव के भेद से २ प्रकारका है। एक-
 न्द्रिय, जीव दोइन्द्रिय जीव और तीनइन्द्रिय जीवों में दोनों प्रकार से अंघता
 है। पौल्ललिक द्रव्यइन्द्रियरूप पञ्च-इन्द्रिय की विकल्पा द्रव्य-अंघता है,

કરેલ છે ઉપયોગ લક્ષણવાળા એવ ત્રણે કાળમાં પણ સત્તાથી રહિત થતા નથી,
 માટે પ્રાણીની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં મૃત શબ્દનો
 પ્રયોગ કર્યો છે માટે બીજા સસાસ્ત્રા હરેક પ્રાણી મુખ્યભિલાષી છે ત્યારે તેની સાથે
 અન્યાચાર-અનર્થ કરી તેને દુઃખ દેવાવાળા પ્રાણી સ્વયં પોતાની બાતને જ દુઃખિત
 કરવાની ચેષ્ટા કરે છે બતિ અને મુખ્યદિકના અભિમાનથી ઉન્મત્ત બનીને જે બીજાને
 હીન સમજે છે અને તું અધણો છે, તું બહેણ છે, તું મુઝો છે' ઇત્યાદિ પ્રકારનાં કર્કશ
 શબ્દો દ્વારા જે બીજાને તિરસ્કાર કરે છે તે પોતાની કષાય પરિવૃત્તિથી આત્માને
 મલિન કરે છે. તટુકાઈત કમનાં કટુક વિપાકને અવશ્ય ભોગવે છે આ બાતનો
 વિગર્શન કરવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-“ અન્યત્વં મૂર્ક્ત્વં ” ઇત્યાદિ. દેખવાની શક્તિની
 અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ અંધત્વ છે તે અંધાપણું દ્રવ્ય અને ભાવના
 સેદથી બે પ્રકાર છે એકેન્દ્રિય એવ, બેન્દ્રિય એવ અને ત્રણ ઇન્દ્રિય એવામાં
 બે પ્રકારથી અંધતા છે. પૌલ્લલિક દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયરૂપ પાંચ-ઇન્દ્રિયની નિકલતા

કિञ્ચ-કાળત્વમ્=एकाक्षत्वं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કાળત્વં-निश्चयव्यवहारयोर्ज्ञान-
ક્રિયોર્વૈકપક્ષગ્રાહિત્વમ્ । કુણ્ટત્વં=कुटिलहस्तत्वादિકं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કુણ્ટત્વં
प्रतिलेखनादिक्रियाराधने वक्रत्वम् । કુબ્જત્વં=वक्रशरीरत्वं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કુટિલ-
ક્રિયત્વમ્ । વડભત્વં=वक्रपृष्ठत्वादिकं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ પરમર્મપ્રકાશકત્વમ્ । શ્યામ-
ત્વં=कालिमा દ્રવ્યતઃ, ભાવતો મલિનાચારત્વમ્, શવલત્વમ્=श्वेतकुण्डत्वादिकं દ્રવ્યતઃ,
ભાવતઃ શવલદોષવત્ત્વમ્ । અગ્રાન્ધત્વાદિકમુપલક્ષણં પદ્મત્વાદેર્વોધ્યમ્ ।

और भावइन्द्रिय की विकलता भाव-अन्धता है । चतुरिन्द्रिय और मिथ्या-
दृष्टि पंचेन्द्रिय जीव भावान्ध हैं, क्योंकि बाह्य में द्रव्येन्द्रियरूप चक्षुरिन्द्रिय
होने पर भी ये पदार्थ के यथार्थ स्वरूपावलोकन से रहित होते हैं । दोनों
प्रकार से अन्धता होनी, यह प्राणी के लिये नियम से दुःखोत्पादक होती
है । इसी प्रकार बधिरत्व, मूकत्व, कालत्व आदि भी द्रव्य और भाव के
भेद से दो दो प्रकार के होते हैं । उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की
शक्ति से श्रवणेन्द्रिय की विकलता का नाम बधिरता है । सुनने की
शक्ति से रहित होना यह द्रव्य-बधिरता, और जिनेन्द्र वचनों को सुनने
में अप्रेम तथा अनादर भाव का होना, या उनके वचनों को श्रवण करने
की विकलता होनी यह भाव-बधिरता है । वचन बोलने की शक्ति की
अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम मूकत्व है । प्राकृत-संस्कृतादिरूप
अपनी २ मातृभाषा में बोलने की हीनता का नाम द्रव्य-मूकता, एवं
मिथ्यात्वादिक के अभिनिवेश के वश से अपने दोषों को छुपाने के लिये

द्रव्यઅધતા છે. અને ભાવ-ઈન્દ્રિયની વિકલતા ભાવઅધતા છે ચાર ઇન્દ્રિય-
વાળા અને મિથ્યાદૃષ્ટિ પચેન્દ્રિય જીવ ભાવાન્ધ છે, કારણ કે બાહ્યમાં દ્રવ્યેન્દ્રિય
રૂપ ચક્ષુરિન્દ્રિય થવાથી પણ તે પદાર્થનું યથાર્થ સ્વરૂપાવલોકનથી રહિત હોય છે
અન્ને પ્રકારથી અંધતા થવી તે પ્રાણી માટે નિયમથી દુઃખોત્પાદક થાય છે. આ
પ્રકાર બહેરાપણું, મુગાપણું, આંધલાપણું આદિ પણ દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે
પ્રકારે હોય છે તેમાં પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાની શક્તિથી શ્રવણેન્દ્રિયની
વિકલતાનું નામ બધિરતા છે. સાંભળવાની શક્તિથી રહિત થવું તે દ્રવ્ય-બહેરા-
પણું, અને જીનેન્દ્રવચનો સાંભળવામાં અપ્રેમ અને અનાદર ભાવ હોવો, અગર
તેમના વચનો સાંભળવાની વિકલતા થવી તે ભાવ-બધિરતા છે. વચન બોલવાની
શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ મૂકત્વ છે પ્રાકૃતસંસ્કૃતાદિરૂપ
પોતપોતાની માતૃભાષામાં બોલવાની હીનતાનું નામ દ્રવ્યમૂકતા, અને મિથ્યાત્વાદિકના
અભિનિવેશનાવશથી પોતાના દોષોને છુપાવા માટે જિનવચનોનું પ્રતિપાદન નહિ

જિનવચનોં કા પ્રતિપાદન નહીં કરના ઇસકા નામ ભાવ-મૂકત્વ છે. એક આંસુ કા હોના યહ દ્રવ્ય સે કાળત્વ છે, ઓર નિશ્ચય ણં વ્યવહાર નય મેં સે, અથવા જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મેં સે કિસી એક કા એકાન્તરૂપ સે પક્ષ ગ્રહણ કરના ભાવ સે કાળત્વ છે. હાથ પાંચ આદિ અગ ડપાંગોં કી ઘટ્ટતા દ્રવ્ય-કુટત્વ, ઓર પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કે કરને મેં અનાદર યા છલ-કપટ કરના યહ ભાવ-કુટત્વ છે. સામાન્યતયા શરીર કા ટેદાપન અથવા શરીર મેં કૂચક ઘેરહ કા નિકલના યહ દ્રવ્ય સે કુચ્ચત્વ છે. કુટિલક્રિયાપને કા નામ ભાવ સે કુચ્ચત્વ છે. ઘૂઠ ભાગ ઘેરહ કા વક્ર હોના યહ દ્રવ્ય સે ઘટ્ટમત્વ છે, દૂસરોં કે ગુપ્ત કાર્યોં ણં અનેક રહસ્યોં કા પ્રકાશન કરના યહ ભાવ સે ઘટ્ટમત્વ છે. શરીર મેં કુષ્ણતા કા હોના યહ દ્રવ્ય સે શ્યામતા-મલિનતા, તથા હીન આચરણી હોના યહ ભાવ સે શ્યામતા છે. શરીર મેં સફેદ કુષ્ટ ઘેરહ કા હોના દ્રવ્ય સે શાલતા, તથા દોષવિશિષ્ટતા ભાવ સે શાલત્વ છે. સૂત્ર મેં અન્વત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણ રૂપ છે, ઇસસે પશુપને આદિ કા મી ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે. ઇન સબ યાત્રોં કો દિશ્વાને કા અભિપ્રાય યહી છે કિ પ્રાણી કિસી મી મદ કે આવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ એસે કપાયવિશિષ્ટ થનકર અપશયોં યા દૂસરોં કે મર્મસ્થલ કો મેવને વાલે કઠોર શત્ત્વોં કા પ્રયોગ ન કર.

કસ્તુ તેનુ નામ ભાવમૂકત્વ છે એક આખનુ હેલુ તે દ્રવ્યથી કાલુત્વ છે, અને નિશ્ચય અને વ્યવહાર નયમાથી અથવા જ્ઞાન અને ચારિત્રમાંથી કેઈ એકનુ એકાન્તરૂપે પક્ષ ગ્રહણ કરવો તે ભાવથી કાલુત્વ છે કાચ-પગ આદિ અગ ડપાંગોંની વક્તતા દ્રવ્યકુટત્વ અને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં આનાદર અગર છલકપટ કરવુ એ ભાવકુટત્વ છે સામાન્ય રીતે શરીરનુ વાકાપણુ અને શરીરમાં કેક વિગેરેનુ નિકળવુ તે દ્રવ્યથી કુચ્ચત્વ છે કુટિલક્રિયાપણુનુ નામ ભાવથી કુચ્ચત્વ છે પુષ્ટભાગ વિગેરેનુ વક્ર થવુ તે દ્રવ્યથી વક્રમત્વ છે બીજાના ગુપ્ત કાર્યો અને અનેક રહસ્યોનુ પ્રકાશન કરવુ તે ભાવથી ઘટ્ટમત્વ છે. શરીરમાં કાળાશ થવી તે દ્રવ્યથી શ્યામતા-મલિનતા, અને હીન આચરણી થવુ તે ભાવથી શ્યામતા છે. શરીરમાં સફેદ કેક નીકળવો તે દ્રવ્યથી શાલતા અને શાલ દોષવિશિષ્ટતા ભાવથી શાલતા છે સૂત્રમાં અન્વત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણરૂપ છે. તેથી લગાડપણુ આદિનુ પણુ ગ્રહણ કરી લેવુ એક એક આ બધી વાતને કેબા ક્વાને અભિપ્રાય એ છે કે-પ્રાણી કેઈ પણુ મદના આવેશમાં આવીને બીજાઓના પ્રતિ એવા કપાયવિશિષ્ટ બની અપશયહોને અગર બીજાના મર્મસ્થળને લેલવા

દુઃખં ચ કોઽપિ નેચ્છતિ પરન્તુ કર્મવશાત્પ્રાયશઃ સર્વેઽપિ સાવધક્રિયાવન્તો નિતાન્તદુઃખિતા ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

અપિચ-‘સદ્દે’તિ, પ્રમાદેન=અનવધાનેન સદ્દે=સાર્દ સમિતિવિકલોઽનવધાનવાન અનેકરૂપાઃ=સંવૃત-વિવૃત-રૂપા યોનીઃ સન્દધાતિ=સન્ધત્તે, ચતુરશીતિલક્ષયોનિ-સમ્બન્ધાવિચ્છેદેનાત્મના સદ્દે સંઘટ્ટનં કરોતિ । તાસુ ચ યોનિષુ વિરૂપરૂપાન્=વહુ-વિધાન્ સ્પર્શાન્=દુઃખાનિ પરિસંવેદયતે=જાનાતિ, નાનાવિધયોનિષ્ઠૂત્પન્નો જીવો વહુવિધાં નરકનિગોદાદિયાતનાં સમનુભૂય નિતાન્તં સ્થિત્તો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ।

ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કે વચનોં સે એક તો બોલનેવાલોં કે લિષે ભાવ-હિંસા કા દોષ લગતા હૈ ઓર દૂસરોં કે ચિત્તમેં શોક આદિકા ઉત્પાદક હોને સે દ્રવ્યહિંસા કા ખી દોષ આતા હૈ । હસ હિંસા સે અનેક અશુભ કર્મોં કા બંધ હોતા હૈ । આત્મપ્રશંસા એવં પર કી નિંદા કરના, તથા અપને દુર્ગુણોં કો સદ્ગુણ કા રૂપ દેકર ગર્વોન્મત્ત બન ઉન્હેં પ્રકાશિત કરના, ઓર દૂસરોં કે સદ્ગુણોં મેં ખી દૂષણ લગાના યા ઉન્હેં દુર્ગુણરૂપ મેં પ્રકટ કરના હસસે નીચ ગોત્ર કા બન્ધ હોતા હૈ, હસસે જીવ અનેક કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કર હીનઆચરણી આદિ હોતા હૈ । કિસી ધર્માત્મા કે જ્ઞાન એવં દર્શન કે વિષય મેં પ્રશંસા કા નહીં સુહાના, કિસી કારણ સે અપને જ્ઞાન કા છુપાના, માત્સર્ય ભાવ કા રખના, કિસી કે જ્ઞાન અથવા દર્શન મેં વિગ્ન કરના, હનસે જ્ઞાનાવરણ, તથા દર્શનાવરણ કર્મ કા જીવ બંધ કરતા હૈ । હસકા ફલ જીવોં કે જ્ઞાન એવં દર્શન ગુણોં કા ઘાત હોના હૈ ।

વાળા કઠોર શબ્દોને પ્રયોગ ન કરે, કારણ કે આ પ્રકારે વચનોથી એક તો બોલવાવાળાને ભાવહિંસાનો દોષ લાગે છે, અને બીજાના ચિત્તમા શોક આદિના ઉત્પાદક થવાથી દ્રવ્યહિંસાનો પણ દોષ લાગે છે. આ હિંસાથી અનેક અશુભ કર્મોનો બધ થાય છે આત્મપ્રશંસા અને પારકાની નિંદા કરવી અને પોતાના દુર્ગુણોને સદ્ગુણોનું રૂપ આપીને ગર્વોન્મત્ત બની તેને પ્રકાશિત કરવું, અને બીજાના સદ્ગુણોમા પણ દૂષણ લગાડવું અગર તેને દુર્ગુણ રૂપમાં પ્રગટ કરવું તેનાથી નીચ ગોત્રનો બધ થાય છે, તેનાથી જીવ અનેક કુયોનિઓમા જન્મ ધારણ કરી હીનાચરણી આદિ થાય છે કોઈ ધર્માત્માના જ્ઞાન અને દર્શન વિષયમા થતી પ્રશંસાને સહન નહિ કરવી, કોઈ કારણથી પોતાના જ્ઞાનને છુપાવવું, માત્સર્ય ભાવ રાખવો, કોઈના જ્ઞાન અને દર્શનમા વિગ્ન કરવું, તેનાથી જીવ જ્ઞાનાવરણ, અને દર્શનાવરણ કર્મનો બધ કરે છે તેનુ ક્ષણ જીવોને જ્ઞાન અને દર્શન ગુણોના

નિજ ઓર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-
વેદનીય કર્મ કા વંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કો કમી મી સાતા
નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઓર ઘટી-અણુઘટી યા મહા-
ઘટી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઓર પર કે ઉપકાર કે લિયે યોગ્ય
વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી
શાન્તિ હોની ઓર હોમ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સત્તા
વેદનીય કર્મ કા વંધ હોતા હૈ । હસકી વજહ સે જીવોં કો સદા સુસ્વકારી
વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કલ્કી
કા અવર્ણવાદ, મૃતકા અવર્ણવાદ, તથા સઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના,
હસસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા વંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમકિત ગુણ
કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કપાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા
રહના, હસસે ચારિત્ર મોહનીય કા વંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી
મી ચારિત્ર ધર્મ કો અંગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા
કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, હસસે
અશુભ નામ કર્મ કા વંધ હોતા હૈ । હસસે જીવ એકેન્દ્રિયાદિ અનેક
કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી અધુવિકલ હોતા હૈ, કમી

આધાતરૂપ થાય છે ળીલના અને પોતાના વિષયમા દુઃખ શેષકારિ કરવા-
કસવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે જેનાથી જીવને કેઈ વખત પણ
સાતા મળતી નથી. સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને ઘટી-અણુઘટી કે મહાઘટી
જીવોની સેવા કરવી, પોતાના અને પાશુકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન
દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાન્તિ થવી, અને હોમનો
ત્યાગ કરવો આદિ કાર્યોથી જીવને સાત્ત્વવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી
જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય
છે કેવળીને અવર્ણવાદ, મૃતને અવર્ણવાદ, અને સઘ આદિને અવર્ણવાદ કરવો,
જોનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે જેનાથી સમકિત ગુણની પ્રાપ્તિ
જીવને થતી નથી. કપાયાના ઉદયથી પરિણામોમા લીધતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર
મોહનીયનો બંધ થાય છે જેનું ફળ જીવ કેઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને
અંગીકાર કરી શકતો નથી.

યોગોમાં કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ
કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ એકેન્દ્રિય
આદિ અનેક કુયોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરે છે કેઈ વખત અધુવિકલ થાય છે,

મુંગા બનતા હૈ, કમી કુબ્જક ઓર કમી બહિરા હોતા હૈ । સૂત્ર મેં જો અન્ધત્વ, વધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રકટ કિયે ગયે હૈં વે સવ ઇસી અશુભનામકર્મ કે ઉપાર્જન સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર ચિત્રકાર કિસી ચિત્ર કા કમી હાથ ટેડા બના દેતા હૈ, કમી ઇક આંખ બના દેતા હૈ, કમી ઉસે છોટા યા કમી બઢા અપની ઇચ્છાનુસાર જિસે જૈસા બનાના ઇચ્છે બના દેતા હૈ, ઇસી પ્રકાર યહ નામકર્મ ખી ઇસ જીવ કો કમી અન્ધા, કમી બહિરા આદિ બના દિયા કરતા હૈ । યોગોં કી વક્રતા નહીં હોની, ઇવં વિસંવાદ-અન્યથા પ્રવૃત્તિકા અભાવ હોના, ઇસસે શુભનામકર્મ કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, જિસ કા ફલ પ્રત્યેક અંગ કી પૂર્ણતા ઇવં સૌંદરતા-સુન્દરતા આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના હૈ । ઉત્તમ યોનિયોં મેં જન્મ તથા મુક્તિપ્રાપ્તિ લાયક વજ્રઋષભ-નારાચ સંહનનાદિ શુભસંહનનોં કી ઇવમ્ સમચતુરસ્રાદિ શુભ સંસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ જીવ કો ઇસી કે ઉદય સે હોતી હૈ । તીર્થકર જૈસી પ્રકૃતિ ઇસી શુભનામકર્મ કા ભેદ હૈ ।

યદ્યપિ પ્રતિ સમય આયુકર્મ કો છોડ શેષ સાત કર્મોં કા બન્ધ હુઆ કરતા હૈ તથાપિ પૂર્વોક્ત ઇન ભાવોં દ્વારા જો જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા બન્ધ હોના પ્રકટ કિયા હૈ સો સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગ-

વેખતે મુંગા થાય છે, વળી કુબ્જ અને બહેરા પણ થાય છે સૂત્રમાં જે અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાણુત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રગટ કરેલા છે તે બધા આ અશુભનામકર્મના ઉપાર્જનથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે જેમ ચિત્રકાર કોઈ ચિત્રમાં હાથ આડો બતાવે છે, એક આખ બતાવે છે, કોઈ છોટું કોઈ મોટું પોતાની ઇચ્છાનુસાર જેને જેમ બનાવવા માગે તેમ બનાવે છે તે પ્રકારે આ નામકર્મ પણ આ જીવને કોઈ વખત આધરો, બહેરા આદિ બનાવે છે યોગોની વક્રતા ન થવી અને વિસવાદ - અન્યથા પ્રવૃત્તિ-નો અભાવ થવો એથી શુભનામકર્મનું ઉપાર્જન થાય છે જેનું ફળ પ્રત્યેક અંગની પૂર્ણતા અને સૌંદરતા - સુન્દરતા આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે ઉત્તમ યોનિયોમાં જન્મ અને મુક્તિપ્રાપ્તિલાયક વજ્રરૂપનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોની અને સમચતુરસ્રાદિ શુભ સંસ્થાનોની પ્રાપ્તિ જીવને આના ઉદયથી થાય છે તીર્થકર જેવી પ્રકૃતિ તે શુભનામકર્મનો ભેદ છે

હવે પ્રતિસમય આયુકર્મને છોડી સાત શેષ કર્મોના બંધ થયા કરે છે, તથાપિ પૂર્વોક્ત આ ભાવોદ્વારા જે જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના બંધ થવા પ્રકટ કરેલ છે તે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અપેક્ષા સમજવી બેધરૂં,

નિજ ઓર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-
વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવકો કમી મી સત્તા
નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઓર વ્રતી-અણુવ્રતી યા મહા-
વ્રતી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઓર પર કે ઉપકાર કે લિયે યોગ્ય
વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી
શાન્તિ હોની ઓર લોભ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સમ
વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્વસ્તી વજહ સે જીવોં કો સવા સુખકારી
વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કેવલી
કા અવર્ણવાદ, મૃતકા અવર્ણવાદ, તથા સઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના,
સસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમક્તિ ગુણ
કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કપાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા
રહના, સસે ચારિત્ર મોહનીય કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી
મી ચારિત્ર ધર્મ કો અગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા
કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, સસે
અશુભ નામ કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સસે જીવ એકેન્દ્રિયાદિ અનેક
કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી અધુવિકલ હોતા હૈ, કર્મ

આચાર્ય ધાય ૧૧ બીજના અને પોતાના વિષયમા ફાળ શેકાદિ કરવા-
કતવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે જેનાથી જીવને કેઈ વખત પણ
સાત્તા મળતી નથી । સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને વ્રતી-અણુવ્રતી કે મહાવ્રતી
જીવેની સેવા કરવી, પોતાના અને પારકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન
દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાંતિ થવી, અને લોભને
ત્યાગ કરવા આદિ કાર્યોથી જીવને સાત્તાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી
જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય
છે કેવળીનો અવર્ણવાદ, મૃતનો અવર્ણવાદ, અને સઘ આદિનો અવર્ણવાદ કરવો
જેનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે જેનાથી સમક્તિ ગુણની પ્રાપ્તિ
જીવને મળતી નથી । કપાયના ઉદયથી પરિણામોમા તીવ્રતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર
મોહનીયનો બંધ થાય છે જેનું ફળ જીવ કેઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને
અગીકાર કરી શકતો નથી ।

યોગેમા કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ
કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે તેનાથી જીવ એકેન્દ્રિય
આદિ અનેક કુયોનિયોમા જન્મ ધારણ કરે છે કેઈ વખત અધુવિકલ થાય છે,

रौद्ररूप परिणमों से युक्त नहीं होना है, और अपने उपार्जित कर्मों का फल भोगे बिना छुटकारा नहीं है अतः इनका फल अवश्य भोगना ही पड़ेगा—चाहे किसी भी परिस्थिति में जीव क्यों न हो। जिस प्रकार अपने उपार्जित पुण्य का फल भोगते हुए विषादपरिणति आत्मा में नहीं होती उसी प्रकार अपने उपार्जित पाप कर्म के फल को भोगते हुए भी मुझे विषादपरिणति नहीं होनी चाहिये, इत्यादि शुभाध्यवसाय से प्रेरित होकर समताभाव से शुभाशुभ कर्मों के फल को जो प्राणी भोगता है उसके लिये नवीन कर्मों का बन्ध नहीं होता। नवीन कर्मों का बन्ध कराने वाली कषायपरिणति ही है। हर्ष और विषाद ये कषायपरिणति-रूप ही हैं। समताभाव इस कषायपरिणति से रहित अवस्था है।

प्रश्न—इस समताभाव की प्राप्ति जीव को कैसे होती है?

उत्तर—समंकिन की प्राप्ति से।

समंकिनशाली जीव घर में-संसार में रहता हुआ भी अपनी वृत्ति कमलपत्र के, अथवा तप्तलोहपादन्यास (तपे हुए लोहे पर पैर रखने) के समान रखता है इससे वह समभावी होता है।

युक्त अनता नथी अने पोताना उपार्जित कर्मोना इण भोगव्या विना छुटके।
नथी भाटे तेनु इण अवश्य भोगवुं न पडसे लखे कोछ पणु परिस्थितिभां
एव केम न डोय, जेवी रीते पोताना उपार्जित पुण्यनु इण भोगवती वभते
विषाद परिणुति आत्माभा यती नथी ते प्रकारे पोताना उपार्जित पाप कर्मना
इणने भोगवता पणु मने विषाद परिणुति यवी न जेधये इत्यादि शुभाध्यवसायथी
प्रेरित थछ समताभावथी शुभाशुभ कर्मना इणने जे प्राणी भोगवे छे तेने भाटे
नवीन कर्मोना अ ध थतो नथी नवीन कर्मोना अ ध कषायवाणी कषायपरिणुति
न छे, इर्ष अने विषाद ये कषायपरिणुतिइप न छे समताभाव आ कषाय-
परिणुतिथी रहित अवस्था छे

प्रश्न—आ समताभावनी प्राप्ति एवने केवी रीते थाय छे?

उत्तर—समंकिननी प्राप्तिथी।

समंकिनशाली एव घरमा-संसारमा रहेवा छता पणु पोतानी वृत्ति कम-
लपत्र अथवा तप्तलोहपादन्यास (तपेला लोहा उपर पग राखवा) समान राखे
छे भाटे ते समभावी छे।

ઘન્ય કી અપેક્ષા સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ ઉસ સમય પ્રકૃતિ ઔર પ્રવેશાયઘ તો સય કર્મોં કા જુઝા કરતા હૈ, ફિન્ટુ સ્થિતિ ઔર અનુ ભાગયન્ય જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા અધિક હોગા । અપા હોના, વહિરા હોના, કાળા રૂપાદિ હોના, તથા ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા હોને પર મી શારીરિક શાંતિ કે લાભ સે વચિત રહના, દુઃસ્વોત્પાદક સામગ્રી કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોં કો જોલના આદિ કષ્ટોં કો કોઈ મી સાંસારિક પ્રાણી નહીં જાહતા હૈ, પરન્ટુ કર્મોં કે દ્વારા પરતન્ત્ર જુદ પ્રત્યેક સાસારિક જીવોં કો અપને ૨ યોગ વચ્ચે કપાયોં દ્વારા ઉપાર્જિત કિયે કર્મોં કા ફલ અવશ્ય ૨ ભોગના પડતા હૈ, રૂસ મેં જીવ કી રૂચ્છા કામ નહીં કરતી । કર્મોંની બન યહ પ્રાણી પ્રાય સાવધ ક્રિયાઓં કે કરને મેં હી વત્તાવધાન રહા કરતા હૈ, જિસ્કે કારણ રાત દિન દુઃસ્વી કા દુઃસ્વી હી રહા કરતા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મોં કે ફલોં કો ભોગતે જુદ મી આગે કે લિપે કર્મોં જ ઘન્ય નહીં હો એસા મી કોઈ ઉપાય હૈ ? ઉત્તર—હૈ ।

પ્રશ્ન—ક્યા હૈ ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોં કે ફલોં કા અનુભવ ન કરને વાલા પ્રાણી યદિ ડનકે ફલોં કો ભોગતે સમય રૂપે વિપાદ વચ્ચે અર્જ-

અર્થાત્ તે વખત પ્રકૃતિ અને પ્રવેશાયઘ તો બધા કર્મોંના ઘસા કરે છે પણ સ્થિતિ અને અનુભવજન્ય જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોંના અધિક ઘસે, અંધ ઘસુ, બહેસ ઘસુ, કાણુ ઘસુ ઇત્યાદિ તથા ઇન્દ્રિયાદિકોની પૂર્ણતા હોવાથી પણ શારીરિક શાંતિના લાભથી વચિત રહેવુ, દુઃસ્વોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ થવી, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોને સહન કરવા કેલ્ય પણ સાંસારિક પ્રજ્ઞી વાહતો નથી, પરંતુ કર્મોંનાત પરતન્ત્ર ઘસેલ કરેલ સાસારિક જીવને પાતપોવાન થોન અને કપાયોદાસ ઉપાર્જિત કરેલા કર્મોંના ફળ અવશ્ય અવશ્ય ભોગવવા પડે છે તેમાં જીવની ઇચ્છા કામ કરતી નથી કર્મોંની બની તે પ્રજ્ઞી પ્રજ્ઞ સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં જ વત્તાવધાન રહ્યા કરે છે, જેના કારણે સત દિન દુઃખીના દુઃખી જ રહ્યા કરે છે

પ્રશ્ન—કર્મોંના ફળને ભોગવતા છતાં પણ આગળ માટે કર્મોંના બંધ ન થાય એવો કેલ્ય ઉપાય છે ? ઉત્તર—છે

પ્રશ્ન—શું છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોંના ફળોને અનુભવ ન કરવાવાળા પ્રજ્ઞી કદ્ય તેના ફળોને ભોગવતી વખતે જ્યાં વિપાદ આદિ અને અર્થ શોધતી પરિણામથી

તૈદ્રુપ પરિણમોં સે યુક્ત નહીં હોના હૈ, ઓર અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કા ફલ ભોગે વિના છુટકારા નહીં હૈ અતઃ ઇનકા ફલ અવશ્ય ભોગના હી પડેગા—ચાહે કિસી ખી પરિસ્થિતિ મેં જીવ ક્યોં ન હો । જિસ પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પુણ્ય કા ફલ ભોગતે હુણ વિપાદપરિણતિ આત્મા મેં નહીં હોતી ડસી પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પાપ કર્મ કૈ ફલ કો ભોગતે હુણ ખી મુઝે વિપાદપરિણતિ નહીં હોની ચાહિયે, ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાય સે પ્રેરિત હોકર સમતાભાવ સે શુભાશુભ કર્મોં કૈ ફલ કો જો પ્રાણી ભોગતા હૈ ડસકૈ લિયે નવીન કર્મોં કા વન્ધ નહીં હોતા । નવીન કર્મોં કા વન્ધ કરાને વાલી કષાયપરિણતિ હી હૈ । હર્ષ ઓર વિપાદ યે કષાયપરિણતિ-રૂપ હી હૈ । સમતાભાવ ડસ કષાયપરિણતિ સે રહિત અવસ્થા હૈ ।

પ્રશ્ન—ડસ સમતાભાવ કો પ્રાપ્તિ જીવ કો કૈસે હોતી હૈ ?

ઉત્તર—સમકિત કો પ્રાપ્તિ સે ।

સમકિતશાલી જીવ ઘર મેં-સંસાર મેં રહતા હુઆ ખી અપની વૃત્તિ કમલપત્ર કૈ, અથવા તત્સલોહપાદન્યાસ (તપે હુણ લોહૈ પર પૈર રખને) કૈ સમાન રખતા હૈ ડસસે વહ સમભાવી હોતા હૈ ।

યુક્ત બનતા નથી અને પોતાના ઉપાર્જિત કર્મોના ફળ ભોગવ્યા વિના છુટકો નથી માટે તેનું ફળ અવશ્ય ભોગવવું જ પડશે ભલે કોઈ પણ પરિસ્થિતિમાં જીવ કેમ ન હોય, જેવી રીતે પોતાના ઉપાર્જિત પુણ્યનું ફળ ભોગવતી વખતે વિપાદ પરિણતિ આત્મામાં થતી નથી તે પ્રકારે પોતાના ઉપાર્જિત પાપ કર્મના ફળને ભોગવતા પણ મને વિપાદ પરિણતિ થવી ન જોઈએ ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાયથી પ્રેરિત થઈ સમતાભાવથી શુભાશુભ કર્મના ફળને જે પ્રાણી ભોગવે છે તેને માટે નવીન કર્મોનો બંધ થતો નથી નવીન કર્મોના બંધ કરાવવાવાળી કષાયપરિણતિ જ છે, હર્ષ અને વિપાદ એ કષાયપરિણતિરૂપ જ છે સમતાભાવ આ કષાયપરિણતિથી રહિત અવસ્થા છે

પ્રશ્ન—આ સમતાભાવની પ્રાપ્તિ જીવને કેવી રીતે થાય છે ?

ઉત્તર—સમકિતની પ્રાપ્તિથી.

સમકિતશાળી જીવ ઘરમાં-સંસારમાં રહેવા છતાં પણ પોતાની વૃત્તિ કમલપત્ર અથવા તત્સલોહપાદન્યાસ (તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા) સમાન રાખે છે માટે તે સમભાવી છે.

इदमत्र हृदयम्—य स्तोत्कर्षं समासाद्य जात्यादिमदसम्पन्नोऽन्यं प्रति 'अन्ध-
स्त्व'—मित्यादिकं पश्यं प्रवीति, मनसा तस्याप्रियमाचरति च, स जन्मान्तरे स्वप्-
मेव नीचगोत्रत्वादिकमन्धत्वादिकं फलं लभत इति भयान्मनोवाकाययोगैः कस्या-
प्यप्रियमात्मप्रतिपत्तिं नाचरेदिति बोध्यम् ॥ सू० २ ॥

उत्कृष्टकुलोत्पत्तिर्गर्वोन्मत्तचित्तोऽधमकुलतया क्षीनोऽन्धत्वादिकमुपलभमानो वा
कर्तव्याकर्तव्यानभिद्वः फर्मविपाकमधिष्ठाय तत्रैवोच्चकुलादिके विपर्यासं गच्छतीति
दर्शयति—'से अमुञ्जमाणे' इत्यादि ।

મૂઢમ—સે અવુજ્જમાણે હાઓવહપ્ જાહમરણ અણુપરિયદ્ધમાણે,
જીવિય પુદો પિય હહમેગેસિં માણવાળ સ્થિતવત્થુમમાયમાણાળ,
આરત્ત વિરત્ત મણિ કુદલ સદ્દ દિરણ્ણેણ હરિથયાઓ પરિગિજ્જ
તત્થેવ રત્તા, ન હરથ તવો વા દમો વા નિયમો વા દિસ્સહ, સપુણ્ણ
વાલે જીવિત્તકામે લાલપ્પમાણે મૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેદ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—સઃ, અબુધ્યમાનો હતોપરતા જાતિમરણમનુપરિવર્તમાનઃ, નીતિં
પૂયક્ પ્રિયમ્ હૈકેપો માનવાનાં સપ્રજાસ્તુમમાયમાનાનામ્, આરત્ત વિરત્તં મર્ષિ
કુણ્ણલં સદ્દ દિરમ્પેન હી પરિણ્ણ તત્થેવ રત્તાઃ, નાથ તવો વા દમા વા નિયમા વા
હરપતે, સમ્પૂર્ણ વાલો જીવિત્તકામો લાલપ્પમાનો મૂઢો વિપર્યાસમુપેતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इस सूत्र का सारांश यही है कि “जो मनुष्य अपने उत्कर्ष को
प्राप्त कर जात्यादिमदवेष्टा में आकर दूसरों के प्रति “तू अन्धा है” इत्यादि
कठोर भाषा का प्रयोग करता है, मनसे भी उसका अप्रिय करने का
विचार करता है वह दूसरे जन्म में स्वयं ही नीच गोत्रादिक अथवा
अन्धत्वादिक फल का भोक्ता बनता है, अतः ऐसा विचार कर आत्मार्थी
जन कभी भी मन घबन और कायरूप योगों से किसी का भी अप्रिय-
—अनिष्ट न करे ॥ सू० २ ॥

આ સૂત્રને સારાશ એ છે કે જે મનુષ્ય પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી
જાત્યાદિમદાવેષમાં આવીને બીજા પ્રતિ “તુ આધળો છે” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષાને
પ્રયોગ કરે છે, મનથી પણ તેનું અપ્રિય કરવાને વિચાર કરે છે તે બીજા જ મમ્મા
સ્વયં જ નીચ ગોત્રાદિક અથવા અ અધ્ધત્વાદિક ફળને ભોજ્યા બને છે, માટે એનો
વિચાર કરી આત્માર્થી જન કોઈ વખત પણ મન ઘબન અને કાયાથી કોઈનું
પણ અપ્રિય—અનિષ્ટ નહિ કરે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટોકા—‘સ’ ઇત્યાદિ । સઃ=ઉચ્ચકુલોત્પન્નઃ, અન્ધત્વાદિકમનુભવન, અવુ-
ચ્યમાનઃ=પૂર્વકૃતકર્મફલમજાનાનઃ, હતોપહતઃ=અન્ધત્વાદિનાનારોગપ્રસ્તત્વેન ક્ષત-
કાયત્વાદ્ હતઃ, સકલજનનિન્ધત્વેનોપહતઃ;

ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ લેને કે ગર્વ સે સંયમી મુનિ અધમકુલ મેં ઉત્પન્ન
હોકર દીન અથવા અન્ધત્વાદિક ફલ કા ભોક્તા બન કર્તવ્ય ઓર અ-
કર્તવ્ય સે વિકલ હોતા હુઆ કર્મ કે ફલ કો નહીં જાનકર ઉસી ઉચ્ચ
ગોત્રાદિક મેં વિપર્યાસ-વિપરીત ભાવ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, હસી કા વર્ણન
કરતે હૈ—“સે અવુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર કે પહિલે યહ વાત અચ્છી તરહ સે ખુલાશા
કર પ્રકટ કર દી હૈ કિ—“જો સંયમી મુનિ ઉચ્ચગોત્ર મેં જન્મ લેને કે
અભિમાન સે ઉન્મત્ત બન દૂસરોં કા તિરસ્કાર કરતા હૈ, અથવા મન સે
ભી ઉનકા અહિત વિચારતા હૈ વહ હસ કર્મ કે કટુક ફલ કા જન્માન્તર
મેં યા હસી ભવ મેં ભોક્તા બનતા હૈ” હસી વાત કો ફિર સે દ્વઢ કરને
કે અભિપ્રાય સે દોહરાતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ—વહ સંયમી મુનિ જો
ઉચ્ચકુલ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ ઓર અપને અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક
ફલવિશેષ કા ભોક્તા બના હુઆ હૈ, તથા “જો અન્ધત્વાદિક ફલ મુજ્ઞે
મિલા હૈ વહ મેરે હી દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મ કા કટુક ફલ હૈ” હસ વોધ સે
જો અનભિજ્ઞ હૈ, તથા જો હતોપહત બના હુઆ હૈ—અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક

ઉચ્ચ કુળમા જન્મ લેવાના ગર્વથી સંયમી મુનિ અધમ કુળમા ઉત્પન્ન
થઈને દીન અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બની કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના ભાનથી
વિકલ થઈને તેમજ કર્મના ફળને નહિ બાણીને તે જ ઉચ્ચ ગોત્રાદિકમા વિપર્યાસ-
વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે તેનું વર્ણન કરે છે—“સે અવુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ.

સૂત્રકારે આ સૂત્રના પહેલા આ વાત સારી રીતે ખુલાસો કરીને પ્રગટ
કરી છે, કે “જે સંયમી મુનિ ઉચ્ચ ગોત્રમા જન્મ લેવાના અભિમાનથી ઉન્મત્ત
બની ખીજઓને તિરસ્કાર કરે છે અથવા મનથી પણ તેનું અહિત કરવા વિચારે
છે તે આ કર્મના કટુક ફળનો જન્માન્તરમા અગર આ ભવમાં ભોક્તા બને છે.
આ વાતને ફરીથી દઢ કરવાના અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર કહે છે કે—તે સંયમી મુનિ
જે ઉચ્ચ કુળમા ઉત્પન્ન થયેલ છે, અને પોતાના અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક ફળ
વિશેષનો ભોક્તા થયેલ છે, તથા “જે અન્ધત્વાદિક ફળ મને મળ્યું છે તે મારા
જ દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મનું કટુક ફળ છે” એ યોધથી જે અનભિજ્ઞ છે, તથા જે
હતોપહત બનેલ છે, અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક અને નાના રોગોથી જેનું શરીર ક્ષત

પદ્મા-ઉચ્ચગોત્રાદિસમુદ્ભવગર્વાસ્કર્ત્ત્વ્યચ્યુતસ્વેનાપવાદધાન્ ભગજ્જનનાનાદરવપ-
નદ્વંષેન પટહ્ ઇવ ઇતઃ, શ્રુતચારિખલસળ્પયર્મરહિતસ્વેનોપહત, एवं 'जातिमरण'
નાતિથ મરણ ચ જાતિમરણમ્ અનુપરિવર્તમાન,=પારાધારતરલતરતરજ્જવત્ પુન-
ર્જન્મ પુનર્મરણ ચેતિ સંસારસાગરે પરિભ્રમન્ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણમુપલભમાનાઃ-
નિત્યસ્વેઽપિ નિત્યસ્વમનુમયન્ વિપર્યાસમૃપેતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

एवम् नाना रोगों से जिसका शरीर क्षत जीर्ण शीर्ण हो रहा है, तथा
सकलजन जिसकी निंदा करते हैं, अथवा उच्चगोत्रादिक में जन्म प्राप्त
करने के गर्व से जो कर्तव्यच्युत हो रहा है, “मेरा क्या कर्तव्य है” इस
बात को ही जो नहीं समझता है, यद्वातया प्रवृत्ति करने से लोगों क
अनेक अपवादों का जो पात्र बना हुआ है, तथा जिस प्रकार द्वंष्टे से
खोल पीटा जाता है उसी प्रकार जगत के जीवों के अनादरकारी वचन-
रूपी द्वंष्टों की चोट से जो आहत-ताड़ित है, एवम् जो वास्तविक अपने
श्रुतचारित्र्यरूप धर्म की आराधना से वंचित है, जिस प्रकार समुद्र की
तरल तरंगें समुद्र से उठती हैं और समुद्र में ही विलीन होती रहती
हैं, उसी प्रकार जो इस संसाररूपी अथाह सागर में बारंबार जन्म मरण
के गोले खाता रहता है, अहितकारी पदार्थोंको हितकारी एवम् अनित्य
परपदार्थों को नित्य मानकर जो उनके ही अपनाने में लगा हुआ है,
ऐसा प्राणी विपरीतकल्पनावाला ही माना गया है, और वह अपनी इस
कल्पना की वजह से ही रातदिन दुःखी होता रहता है ।

જીવું શીવું ધર્મ રહ્યું છે, તથા સકલજન જેની નિંદા કરે છે, અને ઉચ્ચ
ગોત્રાદિકમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરવાના ગર્વથી જે કર્તવ્યચ્યુત થઈ રહેલ છે, “મારું
શું કર્તવ્ય છે” એ વાતને પણ પોતે સમજતો નથી, આટલી અવળી પ્રવૃત્તિ કર-
વાથી લોકોના અનેક અપવાદોનો જે પાત્ર બનેલ છે તથા જે પ્રકારે ઇશ્વરી દોષ
પીટવામાં આવે છે તે પ્રકારે જગતના જીવોના અનાદરકારી વચનરૂપી ડોષોની
ચાટથી જે આહત-તાડિત છે અને વાસ્તવિક પોતાના શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની
આરાધનાથી વંચિત છે જે પ્રકારે સમુદ્રની તરલ તરંગો સમુદ્રથી ઉઠે છે અને
સમુદ્રમાં જ વિલીન થાય છે તે પ્રકારે જ આ સંસારરૂપી અથાગ સાગરમાં વાર
વાર જ મ મરણના ગોથા ખાત્તા રહે છે અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને
અને અનિત્ય પદાર્થોને નિત્ય માનીને જે તેને અપનાવવામાં લાગેલ છે એવા
પ્રાણી વિપરીત કલ્પનાવાળા જ માનેલ છે, અને તે પોતાની આવી કલ્પનાના ભેર
જ રાતદિવસ દુઃખી થાય છે

કિન્ન-इह संसारे 'क्षेत्रवास्तु' क्षेत्रं=धान्याद्युत्पत्तिस्थलं, वास्तु=प्रासादादિકं
 सर्वं ममेत्येवमाचरन्तो ममायमानास्तेषां क्षेत्रवास्तुप्रभृतिषु ममत्वं कुर्वताम् एकेषाम्=
 केषाञ्चिद्विपर्यस्तमतीनां मानवानाम्, उपलक्षणात् प्राणिनां जीवितम्=असंयमजीवि-
 तम् पृथक्=विभिन्नरूपेण स्वस्वापेक्षया प्रियम्=इष्टम्, भवतीति शेषः ।

જો સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકા ઉત્પત્તિ સ્થાન; વાસ્તુ-મહલ મકાન
 આદિ વાહ્ય પદાર્થો મેં મમત્વશાલી બને હુ! હું, જે વાસ્તવિક સંયમી નહીં
 હું, ક્યોંકિ જીવોં મેં વાહ્યપદાર્થોં સે મમત્વ હટે વિના સંયમભાવ હી નહીં
 ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઝૂંટ પર નોંદ લેને વાલે વ્યક્તિ કા પ્રાયઃ
 અધઃપતન હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો સંયમ કા ઢોંગ રચકર વાહ્યપદાર્થોં
 મેં હી મુર્ચ્છિત હો રહે હુંં ઉનકા બી અધઃપતન ઉસસે અવશ્ય હોતા હૈ ।
 સંયમ શબ્દ કા અર્થ તો યહી હૈ કિ-ઇન્દ્રિયોં ઇવમ્ ચિત્ત કી વૃત્તિ જો
 વાહ્યપદાર્થોં મેં આસક્ત બની હુઈ હૈ ઉસકા નિરોધ હો જાના, પરન્તુ
 જિનકી સમતા વાહ્ય-પર-વસ્તુઆ મેં જાગૃત હૈ કૈસે માના જા સકતા હૈ
 કિ ઉનકે સત્ય સંયમભાવ હૈ, અતઃ ગેસે પ્રાણી સંયમભાવ સે વહુત
 દૂર હી રહા કરતે હૈ, ઇન્હે અપના અસંયમ જીવન યાહે યે જિસ કિસી
 બી અવસ્થા મેં રહેં પ્રિય હોતા હૈ, ક્યોંકિ શુરુ સે ઇનકા અભ્યાસ હી
 ણેસા પડા હુઆ હૈ, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરને લિયે ચિત્તવૃત્તિ
 ઇવમ્ ઇન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી વડી ભારી જરૂરત હોતી હૈ, ઇસ
 પ્રકાર કા ઉપદેશ ઇન્હે નહીં મિલા હૈ, ક્યોંકિ ઇનકા જીવન તો બકરે

જે સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકાં ઉત્પત્તિ સ્થાન, વાસ્તુ-મહેલ, મકાન, આદિ
 બાહ્ય પદાર્થોંમા મમત્વશાળી બનેલાં તેઓ વાસ્તવિક સંયમી નથી, કારણ કે
 જોવામા બાહ્ય પદાર્થોંથી મમત્વ ફર થયા વિના સંયમભાવ જ ઉત્પન્ન થતો નથી
 જે પ્રકારે ઉટ ઉપર ઉધ લેવાવાળી વ્યક્તિને પ્રાયઃ અધઃપતન થાય છે તે પ્રકારે
 જે સંયમને ઢોંગ રચીને બાહ્ય પદાર્થોંમાં જ મૂર્ચ્છિત થાય છે તેનું પણ અધઃપતન
 તેનાથી અવશ્ય થાય છે સંયમ શબ્દનો અર્થ તો એ છે કે-ઇન્દ્રિયોં અને
 ચિત્તની વૃત્તિ જે બાહ્ય પદાર્થોંમા આસક્ત બની છે તેનો નિરોધ થઈ જવો.
 પરંતુ જેની મમતા બાહ્ય પરવસ્તુઓમાં જાય છે, કેવી રીતે માનવામા આવે
 કે તેનો સત્ય સંયમભાવ છે, માટે એવો પ્રાણી સંયમભાવથી જીવન ગમે તે
 સ્થિતિમા રહે તેને તે પ્રિય લાગે છે, કારણ કે શરૂઆતથી તેનો અભ્યાસ તેવો
 થયેલ છે, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરવા માટે ચિત્તવૃત્તિ અને ઇન્દ્રિયોં
 ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની મોટી જરૂરત હોય છે, આ પ્રકારનો ઉપદેશ તેને
 મળેલ નથી, કારણ કે તેનું જીવન તો બકરાની માફક “ઐ ઐ” કરતા કરતાં

અન્યત્ત્વ-આરક્તમ્=રુચિરરાગરશ્ચિતમ્, વિરક્તમ્=વિવિધરાગરશ્ચિતં પટાવિક્તમ્
 'મણિમ્' મણિ=પદ્મરાગાદિસ્તં, કુણ્ડલમ્=મસિદ્ધમ્, ઉપલક્ષણમતત્કટકકેયૂરત્તી-
 નામ્, હિરણ્યન=સુવર્ણેન સહ સ્ત્રી પરિગ્રહ=સ્વાયત્તીકૃત્ય તત્રૈવ હ્યપ્રવાસ્યવિવિધવક્ત-
 મણિકુણ્ડલકામિન્યાદૌ રક્તાઃ=યુગ્ધવો મૃદમતયો વિપર્યાસપ્રપયન્તિ, વદન્તિ ચ-
 અપ્ર સંસારે તપો વા=અનશનાદિસ્વરૂપમ્, વમા વા=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયોપશ્ચમરૂપઃ,
 નિયમો વા=અર્હિસાધ્યતં ન હ્યવયતે=ન ફલવ્દનુભૂયત, તપોદમનિયમવર્તાં વનાનાં
 કાયવલ્લેશ્વ એવાન્યથા કિમપિ ફલમ્, અપિ ચ હ્યપ્તસ્ય સુલાદર્શાનિ, અહ્યપ્તસુલસ્ય
 ફલપનં મહદનુચિતં, મવાન્તરે ચૈતત્કલં માવીતિ ગ્રહગ્રહિલસ્ય પ્રભાપ એવેતિ વદન્

કી તરફ “મેં મેં” કરતા હુઆ પરપદાર્થોં મેં આસક્તિસંપન્ન હો રહા
 હૈ । અચિત્તપરિગ્રહરૂપ મહાકીલે રંગ ધિરંગે કપડોં કે, પદ્મરાગાવિક
 મણિયોં કે, કટક કેયૂર કુણ્ડલ આદિકે, સુવર્ણ આદિ ધાતુઓં કે, એ
 સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ કે અપનાને, એમ્ અને રક્ષણાદિ કરને મેં
 હી અનેકી જીવનયાત્રા સમાપ્ત હો જાતી હૈ, અર્થાત્ સચિત્ત ઓર અચિત્ત
 પરિગ્રહ કે સંગ્રહ એમ્ રક્ષણ કરને મેં હી એસે જીવ ગૃહ્થ બને રહતે હૈ,
 ઓર સયમજીવન કો વોપ વેતે કુપ કહતે હૈ કિ-“હસ સંસાર મેં
 અનશનાવિક તપ, ઇન્દ્રિય ઓર મન કો વશ મેં કરને રૂપ વમ, અર્હિસા-
 ધ્યતાવિરૂપ નિયમ કુછ મી કાર્યકારી નહીં હૈ । ક્યોંકિ અનેકા આચરણ
 કરને વાલે વ્યક્તિયોં કો કાયવલ્લેશ કે સિધાય ઓર કિસી મી ફલ
 કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ, એસા મલા સંસાર મેં કોન સમજદાર હોગા જો
 પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુલાવિકોં કી કામના સે પ્રેરિત હોકર અનેકા પરિત્યાગ

પદાર્થોંમા આલક્ષિતપદ્મ કોમ્ય છે અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ બલબલત્યા રત્નભેરત્રી
 કપડાંના, પદ્મરાગાવિક મણિઓંના, કટક, કેયૂર, કુણ્ડલ આદિના, સુવર્ણ આદિ ધાતુ-
 ઓંના, અને સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહના અપનાવવામા અને તેના રક્ષણાદિ કરવામા
 જ તેની જીવનયાત્રા સમાપ્ત થઈ બાધ છે અર્થાત્ સચિત્ત અને અચિત્ત પરિ-
 ગ્રહને સમજ અને રક્ષણ કરવામા જ જોવા ગૃહ્થ બની રહે છે, અને સયમ જીવનને
 વોપ દેતા દેતા કહે છે કે “આ સંસારમા અનશનાવિક તપ, ઇન્દ્રિય અને મનને
 વશ કરવારૂપ વમ, અર્હિસાધ્યતાવિરૂપ નિયમ કોઈપણ કાર્યકારી નથી, કારણ કે તેણ
 આચરણ કરવાવાળા વ્યક્તિઓંને કાયવલ્લેશ સિવાય બીજા કોઈ નકારણુ રજા મળ્યું
 નથી જોવા ભલે । સંસારમા કોણ સમજદાર હશે જે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુખ-
 દિશોને ઊઠીને અહ્ય સુખાદિકોની કામનાથી પ્રેરિત બનીને તેના પરિત્યાગ કરશે ?

વાલઃ=પરિગ્રહકટુકફલાનભિજ્ઞઃ, સમ્પૂર્ણં યથાસમયપ્રાપ્તકામિન્યાદ્યાસક્તિપૂર્વકં
 યથા સ્યાત્તથા જીવિતુકામઃ અસંયમેન દીર્ઘકાલજીવનાર્થી લાલપ્યમાનઃ=કામ-
 ભોગતીવ્રાભિલાષેણ વ્યર્થં પ્રલપન્ મૂઢઃ=વિવેકવિકલઃ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટઃ, વિપ-
 ર્યાસમ્=વૈપરીત્યમ્ મિથ્યાત્વમિત્યર્થસ્તદ્યથા-તત્ત્વેડતત્ત્વબુદ્ધિમ્, અતત્ત્વે તત્ત્વબુદ્ધિમ્,
 કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મબુદ્ધિમ્, ડપ્ટેબ્વનિપ્ટબુદ્ધિમ્, અનિપ્ટેષ્વિ-
 પ્ટબુદ્ધિમ્, इत्थम् વિપર્યયમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ । ઉક્તञ्च-

કરેગા?, यह तो एक इस प्रकार की कल्पना है कि—जिस प्रकार कोई व्यक्ति
 अपने घर में झरते हुए अमृत को छोड़कर किसी के बहकावे में आकर
 “पर्वत में अमृत झरता है” इस ख्याल से उसकी चाहना में उसे छोड़ वहां
 दौड़ा जाता है । जो हमारी इन्द्रियों के गोचर है वही वास्तविक है, इसके परे
 स्वर्ग नरकादि कुछ भी नहीं है, प्रत्यक्ष इन्द्रियों के सुख सिवाय परोक्ष
 स्वर्गादिक सुख है, यह सिर्फ एक श्रद्धा की ही वस्तु है वास्तविक कुछ नहीं
 है । तथा “तपश्चर्या का फल इस भव में न मिले तो न सही परभव में तो
 मिलेगा ही” इस प्रकार की कल्पना भी ग्रहगृहीत पुरुष के प्रलाप जैसी ही
 है । जैसे भूतादि के आवेश से युक्त प्राणी का प्रलाप निरर्थक होता है उसी
 प्रकार “इस भव में तप संयमरूप कष्ट को झेलकर प्राणी परलोकसं-
 वंधी सुख समृद्धि को प्राप्त करता है” यह कहना भी निरर्थक है । इस
 प्रकार की विपरीत मान्यता उन अज्ञानी पुरुषों की है जो परिग्रह के
 फल से अनभिज्ञ हैं । रातदिन परिग्रह के बटोरने एवम् उसकी वृद्धि
 करने में दत्तावधान प्राणी की दृष्टि में संयम जीवन जैसे सुन्दर सिद्धांत

એ તો એક આ પ્રકારની કલ્પના છે કે—જે પ્રકારે કોઈ વ્યક્તિ પોતાના ઘરમાં ઝરતાં
 અમૃતને છોડીને કોઈના ભરમાવવાથી “પર્વતમાં અમૃત ઝરે છે” તેવા ખ્યાલથી
 તેની ચાહનામાં તેને છોડીને ત્યાં દોડી જાય છે જે અમારી ઇન્દ્રિયોને ગોચર
 છે તે વાસ્તવિક છે તેના સિવાય સ્વર્ગ નરકાદિ કંઈ પણ નથી, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિ-
 યોના સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ છે તે ફક્ત એક શ્રદ્ધાની વસ્તુ છે—
 વાસ્તવિક કંઈ પણ નથી અને “તપશ્ચર્યાનું ફળ આ ભવમાં નહિ મળે તો
 નહિ પરભવમાં તો મળશે જ ” આવા પ્રકારની કલ્પના પણ ગ્રહગૃહીત પુરુષના
 પ્રલાપ જેવી જ છે. જેમ ભૂતાદિકના આવેશથી યુક્ત પ્રાણીનો પ્રલાપ નિરર્થક
 બને છે તે પ્રકારે “આ ભવમાં તપસંયમરૂપ કષ્ટને ભોગવી પ્રાણી પરલોક
 સંબંધી સુખ સમૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે” એમ કહેવું પણ નિરર્થક છે આવી
 વિપરીત માન્યતા તેવા અજ્ઞાની પુરુષોની છે જે પરિગ્રહના કટુક ફળથી અન-
 ભિજ્ઞ છે. રાત દિન પરિગ્રહના વધારવામાં દત્તાવધાન પ્રાણીની દૃષ્ટિમાં સંયમ

કા કોઈ મહત્વ ન હો તો इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आगन को टेढ़ा कहता है। परिग्रहादि के योद्ध से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्ततः विखर जाती हैं अतः वे विखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन विखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महस्वदे सकती हैं परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जय किसी विशेष काष्ठ में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कपायों में फैलकर अस्तव्यस्त हो रही थीं—जय वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अकुशमदोन्मत्त गजराज को घा में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुँचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो धाराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन है

જીવન જેવા સુદર સિદ્ધાંતને કોઈ મહત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્ચર્ય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જે નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આગલાને વાકું કહે છે પરિગ્રહાદિના યોદ્ધથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ ખાલી જવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્વ ધારી શકે પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો બ્યારે કોઈ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ ખાલી જવળે ત્યજ કપાયેલાં હોયને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હતી, બ્યારે તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી પણ એક એવો પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અકુશ મદોન્મત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા લાવોથી જે આશ્રયન કરવા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતાં લાભને મેળવી શકે!

“દારાઃ પરિભવકારા, વન્ધુજનો વન્ધનં વિપં વિપયાઃ ।

કોડ્યં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહદાશા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પૂર્ણરૂપ સે વ્યતીત કરને કે લિયે, તથા ઉસકે રક્ષણ કે લિયે કષાયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી સર્વ પ્રથમ બડી ભારી જસ્સરત હૈ । પરિગ્રહ કો અપનાના યહ લોભકષાય કે ઉદય મેં હી હોતા હૈ । અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થા મેં રહતે હુઅ હી અપના જીવન વ્યતીત કરતે હૈ, તથા યહ યાહતે હૈ કિ “મેંને જો યહ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહીત કિયા હૈ ઉસકે ભોગને કે લિયે મેં અધિક સે અધિક જીઝં ” । અસંયમી જીવ પરપદાર્થોં કે ઉપભોગ કરને મેં હી અધિક આસક્તિસંપન્ન હોતે હૈ—ઈન્હેં જિતની ઇન પરપદાર્થોં કો ભોગને કી તીવ્ર અભિલાષા રહતી હૈ ઉસસે શતાંશ ભી આત્મકલ્યાણમય સંયમિજીવન કી તર્ફ ઇનકી રુચિ નહીં હોતી । જન્માન્તર સે મિથ્યાત્વ કા સંસર્ગ ચલા આતા હૈ । જૈનકુલ મેં ઉત્પન્ન હોને પર ભી ઉનકે ઇસ મિથ્યાત્વ કા નાશ નહીં હોતા । એસે હી જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતે હૈ । જો વર્તમાન ભવ મેં કુગુરુ કુદેવ ઓર કુધર્મ કી સંગતિ મેં પડકર અપને મેં અતત્ત્વરુચિ કો સ્થાન દેતે હૈ વે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । યે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોં કો અનિષ્ટકારી, તથા અનિષ્ટ પદાર્થોં કો ઇષ્ટકારી માના કરતે હૈ । વે યહ નહીં વિચારતે હૈ કિ—

માનવામા આવે છે કે—સયમ જીવનને પૂર્ણ રૂપથી વ્યતીત કરવા માટે તથા તેના રક્ષણ માટે કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની સર્વ પ્રથમ જરૂરત છે પરિગ્રહને અપનાવવો તે લાભકષાયના ઉદયમા જ થાય છે અસયમી જીવ અસયમ અવસ્થામા રહીને પોતાનુ જીવન વ્યતીત કરે છે, તથા એ યાહે છે કે “ મે જે આ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહ કર્યો છે તેને ભોગવવાને માટે હું વધારેમા વધારે જીવુ ” અસયમી જીવ પરપદાર્થોના ઉપયોગ કરવામા જ અધિક આસક્તિસંપન્ન હોય છે તેને જેટલી પરપદાર્થો ભોગવવાની તીવ્ર અભિલાષા રહે છે તેનાથી સોમા ભાગની આત્મકલ્યાણમય સયમ જીવનની તરફ તેની રૂચી થતી નથી જન્માન્તરથી મિથ્યાત્વનો સંસર્ગ આલ્યો આવે છે જૈન કુળમા ઉત્પન્ન થવા છતાં પણ તેના આ મિથ્યાત્વનો નાશ થતો નથી એવા જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે જે વર્તમાન ભવમા કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મની સંગતિમા પડીને પોતાનામા અતત્ત્વરુચિને સ્થાન આપે છે તે મિથ્યાત્વદૃષ્ટિ જીવ છે તે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોને અનિષ્ટકારી તથા અનિષ્ટ પદાર્થોને ઇષ્ટકારી માને છે તે એવુ વિચારતા નથી કે—

કા કોઈ મહત્વ ન હો તો इसमें आश्रय करने की कोई पात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आगन को टेढ़ा कहता है। परिग्रहादि के योजन से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्ततः विस्तर जाती हैं अतः वे विखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन विखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महत्त्व दे सकती हैं परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जय किसी विशेष काष्ठ में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कपायों में फैलकर अस्तव्यस्त हो रही थी—जय वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अंकुश मदनमत्त गजराज को बश में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुँचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो आराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन को

જીવન જેવા સુંદર સિદ્ધાંતને કોઈ મહત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્રય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જો નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આગલાને વાકું કહે છે પરિગ્રહાદિના યોજનથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ આવી અવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્વ હોઈ શકે પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો બધાં જ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તે તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ આવી અવળી વિષય કપાયોમાં ફસાને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હતી, બધાં જ તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તે તેનાથી પણ એક એવો પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અંકુશ મદનમત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુંદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા ભાવોથી જે આરાધન કરવા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતા લાભને મેળવી શકે!

‘ઇદ’-મિત્યાદિ । “ ધ્રુવચારિણઃ ” ધ્રુવતિ=વ્રજતિ આત્મતઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મ-
ચયો યેન તદ્ ધ્રુવં=ચારિત્રં, તત્ત્વચરિતું શીલં યેપા તે ધ્રુવચારિણઃ ।

યદ્વા-ધ્રુવો મોક્ષસ્તદ્દેતુત્વાત્તપોજ્ઞાનક્રિયાદિકં કાર્યકારણયોરભેદાત્, તત્ત્વચરણ-
શીલા ધ્રુવચારિણઃ । યે જના ધ્રુવચારિણઃ, તે ઇદમેવ અસંયમજીવિતં પૂર્વશુક્તમોગાદિકં
વા નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=નેચ્છન્તિ । ‘ જાતિમરણં ’ જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણં, જાતિ-
મરણં યત્ર સ જાતિમરણઃ=સંસારસ્તં વા જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા ‘ અશઙ્કિતમનાઃ ’ અશઙ્કિ-
તં મનો યસ્ય સોઽશઙ્કિતમનાઃ=તપોદમનિયમવૈફલ્યાશઙ્કાશૂન્યો જિનવચનશ્રદ્ધાવાન્,
અત એવ દૃઢઃ=વિશ્રોતસિકારહિતઃ, પરીપહોપસર્ગેર્નિષ્પકમ્પો વા ચરેત્=વિહરેત્ ।

ધ્રુવ શબ્દ કા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોંકિ-“ ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ
પૃથગ્ભવતિ કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જિસકે દ્વારા આત્મા સે
પૃથક્ હોતા હૈ વહ ધ્રુવ હૈ, વહ ચારિત્રસ્વરૂપ આત્મા કા નિજધર્મ હૈ ।

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં જ્યોં અવિરતિ,
પ્રમાદ, કષાય ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ, ત્યોં ત્યોં ઇસ
આત્મા મેં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વ-
લતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા સમસ્ત કર્મોં કા
નાશ કર દેતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત કર્મ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈં । તપ
શ્રુત ઓર વ્રતોં કા પાલન કરને વાલા આત્મા હી ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ
હોકર સંવર ઓર નિર્જરા કે સુન્દર મૈદાન મેં આકર અપને અન્તિમ મોક્ષ
પુરુષાર્થ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । સુવર્ણ જૈસે જૈસે અગ્નિ મેં તપાયા જાતા હૈ
વૈસે વૈસે વહ વિલકુલ નિર્મલ હોતા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર કર્મોં કે અનાદિ
સંબંધ સે આવૃત્ત યહ આત્મા ભી મલિનદશાસંપન્ન હૈ, ડસકી ઇસ

ધ્રુવ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે, કારણ કે “ ધ્રુવતિ વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્ભવતિ
કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જે દ્વારા આત્માથી પૃથક્ થાય છે તે
ધ્રુવ છે, તે ચારિત્રસ્વરૂપ આત્માનો નિજધર્મ છે

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય
અને અશુભ યોગોના નિગ્રહ કરતા રહે છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ અપૂર્વ
ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થાય છે આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને
નિર્જરાદ્વારા સમસ્ત કર્મોના નાશ કરે છે, અને સમસ્ત કર્મ આત્માથી પૃથક્ થઈ
જાય છે. તપ શ્રુત અને વ્રતોના પાલન કરવાવાળા આત્મા જ ધ્યાનરૂપ રથ પર
આરૂઢ થઈ સંવર અને નિર્જરાના સુન્દર મેદાનમાં આવીને પોતાના અતિમ મોક્ષ
પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કરી લે છે સુવર્ણને અગ્નિમાં જેમ જેમ વધારે તપાવવામાં
આવે તેમ તેમ તે વધારે નિર્મળ બને છે તે પ્રકારે કર્મોના અનાદિ સંબંધથી

सर्वथा विपर्यस्तोऽनरुभवपु परिभ्रमन् भ्रान्त सयमात्मपातमर करातीति
तान्पर्यम् । यत्र उपैतीत्यत्रैकनपनमार्पित्वान् ॥ सू० ३ ॥

य पुनरविपर्यम्ता सयमिनस्तथा कर्तव्यमुपदिशति—'इणमव' इत्यादि ।

म्वम्—इणमेव नावकस्त्विति, जेजणा ध्रुवचारिणो । जाइमरण
परिज्ञाय, चरेऽसकमणे ददे ॥ नरिथ कालस्सऽणागमो ॥ सू० ४ ॥

छाया—इदमव नावकाइभवन्ति, य जना धुरनारिण । जातिमरण परिज्ञाय,
चरदन्नइमना इद ॥ नास्ति कान्स्याऽणागम ॥ सू० ४ ॥

“दारा परिभवकाग,—य धुजनो पन्थन विप विपया” ।

कोऽय जनस्य मोहो, ये रिपवस्तेषु मुहदाशा” ॥ १ ॥

ये जो ग्री आदिक पदार्थ हैं य मेरा निरस्कार करन चाहे हैं । बहुत
जन एक पन्थन हैं । विपयादिक विप हैं । ऐसा क्या इस प्राणी का मोह
है जो अपन शत्रुओं को भी मित्र समझ रहा है । इस प्रकार यह प्राणी
विपर्ययुद्धियाला बनकर अनरु भवों में परिभ्रमण कर हयोपादय क
पिपेरु से रहित होकर सयमरूप अपनी आत्मा का घात करता रहता है ।
आत्मा का स्वभाव सगमस्वरूप है, इसको पालन नहीं करना, अथवा
आत्मा को संयमी नहीं बनाना आत्मा की घात करना है ॥ सू० ३ ॥

तो सत्ये पारित्र से युक्त ह य इस असंयमिजीवन को पसन्द
नहीं करते ह, यह बात इस सूत्र में प्रदर्शित करते हैं—“इणमेव नाव-
कस्त्वन्ति” इत्यादि ।

“दारा परिभवकाग बधुजनो पन्थन विप विपया ।

कोऽय जनस्य मोहो य रिपवस्तेषु मुहदाशा” ॥ १ ॥

अ ये श्री आदि ५७५ उ ने आदि निरस्कार इत्यादि उ भुवन
नरु भवन उ विपयि विप उ नये उपे अ अ प्रिये आदि उ ये पदार्थ
उ भुवन ५७ निरु नमरे उ अ प्राये अ अ प्रिये विपरीत युद्धिपदार्थ नमरे
नये नये अ परिभवपु हरी उपेपदेय विवेकी रति य १ ५७५
५७५ अ नये पद ३२३ १ उ अ नये स्वभाव नयन ३५ उ
१५ ५२५ नरि ३२५ नयन अ नये १५५ नरि नयन १ अ नये
५७ ३५ न नर उ ५ सू० ३ ५

अ अ परिभवपु युग उ ते अय न संयमिजीवन ५७५ ३५
नये अ ५७ अ सू० ३ ५७ ३२ उ—“इणमेव नावकस्त्वन्ति” इति

વર્ગનાઓં કો સ્વીચતા હૈં ઉન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈં । ઇસસે નો આત્મા ઓર કર્મ કા સંબંધ સાદિ સિદ્ધ હોતા હૈં ।

ઉત્તર—અભિપ્રાય કો સમજો વિના હીં યહ પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈં । કહને કા તાત્પર્ય યહીં હૈં કિ—યહ જીવાત્મા અનાદિ સે હીં કર્મબંધ સહિત હૈં । ઇસકે સાથ કોઈ નિયમિત સમય સે કર્મબંધ નહીં હુઆ । એસા નહીં થા કિ જીવ અલગ-ન્યારા થા ઓર કર્મ ન્યારે થે, પીછે સે ઇન દોનોં કા સંયોગ હુઆ હો । કિન્તુ જિસ પ્રકાર મેઝગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોં મેં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિ સે હીં બંધરૂપ હો રહે હૈં, ઓર ઉનમેં પુરાને પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં, ઓર નવીન આકર મિલતે હૈં । ઇસી પ્રકાર ઇસ મસાર મેં ઇક જીવદ્રવ્ય ઓર અનન્ત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં અનાદિકાલ સે સંબંધ હૈં । ઇનમેં સે કઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં ઓર કઈ કર્મપરમાણુ મિલતે રહતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ઇન કર્મપરમાણુઓં મેં પરસ્પર મિલના વિલુકના હોતા રહતા હૈં ।

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિક કે નિમિત્ત કો પાકર કર્મરૂપ હુઆ કરતે હૈં, ફિર વે અનાદિ સે કર્મરૂપ અવસ્થા વાલે કૈસે માને જા સકતે, કારણ કિ કાર્મણ વર્ગના, જિસસે કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન હોતી હૈં વહ સ્વયં પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈં ? ।

તેની કર્મસંજ્ઞા થાય છે તેથી તો આત્મા અને કર્મનો સંબંધ સાદિ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—અભિપ્રાયને સમજ્યા વિના જ પ્રશ્ન કર્યો છે કહેવાનો તાત્પર્ય એ છે કે—આ જીવાત્મા અનાદિથી જ કર્મબંધસહિત છે તેની સાથે કોઈ નિયમિત મયમયથી કર્મબંધ થયેલ નથી એવું ન હોતું કે જીવ અલગ-બુદ્ધો હોતો અને કર્મ પણ બુદ્ધ હોતા, પાછળથી એ બંનેનો મયોગ થયો હોય, પણ જેવી રીતે મેઝગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમા અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિથી જ બંધરૂપ થઈ રહેલ છે, અને તેમા પુરાણા પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન થતા રહે છે અને નવા આવીને મળે છે આ પ્રકાર આ મસારમા એક જીવદ્રવ્ય અને અનંત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓના પરસ્પરમા અનાદિ કાળથી સંબંધ છે, તેમાથી કોઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન થતા રહે છે અને કોઈ પુદ્ગલપરમાણુ મળતા રહે છે આ પ્રકાર આ કર્મપરમાણુઓમા પરસ્પર મળવું, છુટા થવું વિગેરે થતું જ રહે છે

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિકના નિમિત્તને લઈને કર્મરૂપ થયા કરે છે, પછી તે અનાદિથી કર્મરૂપ અવસ્થાવાળા જેવી રીતે માનવામા આવે ગરણ કે કર્મણુવર્ગણા જેનાથી કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે તે સ્વયં પુદ્ગલદ્રવ્ય છે ?

મલિનતા કો દૂર કરને મેં ચારિત્ર કી અરાધના અગ્નિ કા કામ દેતી હૈ । કર્મો કા સંબંધ આત્મા કે સાથ આજ કા નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો અનાદિકાલ કા હૈ, યહ પાત કાઈ ચાર લિખી જા ચુકી હૈ । યે કર્મપુટલ અચેતન હોને સે સ્વયં આત્મા કે પાસ નહીં જાતે કિન્તુ અનાદિકાલ સે બદ્ધરૂપ ઇસ આત્મા કે યોગરૂપ પરિણામ મેં ऐसी આકર્ષક શક્તિ હૈ કિ જિસકે દ્વારા બે કર્મરૂપ પુટલ સીંચે જાતે હૈ—અર્થાત્ આત્મા જય કપાયોં કે દ્વારા અલ્પાન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તથ યોગ દ્વારા કર્મપુટલોં કો—તપા હુઆ હોહા જિસ તરહ પાની કો ચારોં ઓર સે સીંચતા હૈ ઠીક ઊસી તરહ સીંચતા હૈ, ઓર બે સ્વાયે કુળ ભોજન કે ઇસ ઋધિરાદિરૂપ કી તરહ અપને હી આપ મિશ્ર-મિશ્ર રૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ । કર્મપુટલ નવીન-નવીન તયાર નહીં હોતે, કારણ કિ “સતો ન વિનાશ અસતઃ ઉત્પત્તિર્ન” સત્ કા વિનાશ ઓર અસત્ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી । આત્મા કપાયોં સે જય સતપ્ત હો જાતા હૈ તથ મન, વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં કે દ્વારા જિન કાર્મણ વર્ગનાર્જા કો સીંચતા હૈ ઊન્હોં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ ।

પ્રશ્ન—આપને અમી તો યહ કહા હૈ કિ—આત્મા કર્મોં કે સાથ અનાદિકાલ સે બંધ રહા હૈ, ઓર અબ આપ કહતે હૈ કિ—જિન કાર્મણ

આવૃત્ત આ આત્મા પશુ મલિનશાસપત્ત છે, તેની આ મલિનતાને દૂર કરવામાં ચારિત્રના આત્મધના અગ્નિ કામ આપે છે કારણેના સંબંધ આત્માની સાથે આજનો નથી પણ અનાદિ કાળનો છે, એ વાત ધણી વખત લખાઈ ચુકી છે આ કર્મ પુટલ અચેતન હોવાથી પોતે આત્માની પાસે નથી જતા પણ અનાદિ કાળથી બદ્ધરૂપ આ આત્માને યોગરૂપ પરિણામમાં એવી આકર્ષક શક્તિ છે કે ભેદ દ્વારા તે કર્મરૂપ પુટલ એવાઈ બાંધે છે અર્થાત્ આત્મા જ્યારે કાયબોદાસ અલ્પાન્ત સતપ્ત થાય છે ત્યારે યોગદ્વારા કર્મ પુટલોને—તપેશું હોડું જેવી રીતે પાણીને ચારે બાજુથી ખેંચે છે ઠીક તે પ્રમાણે ખેંચે છે અને તે ખવાયેલા બોજનનું આ રૂમિશાદિ રૂપની માફક પોતાની એળે જ સિત્ત સિત્ત રૂપથી પરિણત થાય છે કર્મપુટલ નવીન નવીન તૈયાર થતા નથી કારણ કે “સતો ન વિનાશ અસતઃ ઉત્પત્તિર્ન” સત્ને વિનાશ અને અસતની ઉત્પત્તિ થતી નથી આત્મા કપાયોથી જ્યારે સતપ્ત થાય છે ત્યારે મન, વચન અને કાય રૂપ યોગદ્વારા જે કર્મણ વર્ગનાઓને ખેંચે છે તેની કર્મસંજ્ઞા થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—આપે હમણા તો એ કહ્યું કે આત્મા કર્મોની સાથે અનાદિ કાળથી બંધી રહ્યા છે, અને હવે આપ કહો છો કે જે કર્મણ વર્ગનાઓને ખેંચે છે

વર્ગનાઓં કો સ્ત્રીચતા હૈ ઉન્હોં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ । ઇસસે તો આત્મા ઓર કર્મ કા સંબંધ સાદિ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

ઉત્તર—અભિપ્રાય કો સમજો વિના હી યહ પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ—યહ જીવાત્મા અનાદિ સે હી કર્મબંધ સહિત હૈ । ઇસકે સાથ કોઈ નિયમિત સમય સે કર્મબંધ નહીં હુઆ । ઇસા નહીં થા કિ જીવ અલગ-ન્યારા થા ઓર કર્મ ન્યારે થે, પીછે સે ઇન દોનોં કા સંયોગ હુઆ હો । કિન્તુ જિસ પ્રકાર મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોં મેં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિ સે હી વન્ધરૂપ હો રહે હૈં, ઓર ઉનમેં પુરાને પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં, ઓર નવીન આકર મિલતે હૈં । ઇસી પ્રકાર ઇસ સંસાર મેં ઇક જીવદ્રવ્ય ઓર અનન્ત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં અનાદિકાલ સે સંબન્ધ હૈ । ઇનમેં સે કઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં ઓર કઈ કર્મપરમાણુ મિલતે રહતે હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન કર્મપરમાણુઓં મેં પરસ્પર મિલના વિલુકા હોતા રહતા હૈ ।

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિક કો નિમિત્ત કો પાકર કર્મરૂપ હુઆ કરતે હૈં, ફિર વે અનાદિ સે કર્મરૂપ અવસ્થા વાલે કૈસે માને જા સકતે, કારણ કિ કાર્મણ વર્ગના, જિસસે કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ સ્વયં પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ ? ।

તેની કર્મસંજ્ઞા થાય છે તેથી તો આત્મા અને કર્મનો સંબંધ સાદિ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—અભિપ્રાયને સમજ્યા વિના જ પ્રશ્ન કર્યો છે. કહેવાનો તાત્પર્ય એ છે કે—આ જીવાત્મા અનાદિથી જ કર્મબંધસહિત છે. તેની સાથે કોઈ નિયમિત સમયથી કર્મબંધ થયેલ નથી એવું ન હતું કે જીવ અલગ-બુદ્ધ હોતો અને કર્મ પણ બુદ્ધ હોતા, પાછળથી એ બન્નેનો સંયોગ થયો હોય, પણ જેવી રીતે મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમા અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિથી જ બંધરૂપ થઈ રહેલ છે, અને તેમા પુરાણા પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન થતા રહે છે અને નવા આવીને મળે છે આ પ્રકાર આ સંસારમા એક જીવદ્રવ્ય અને અનંત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓના પરસ્પરમા અનાદિ કાળથી સંબંધ છે, તેમાથી કોઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન થતા રહે છે અને કોઈ પુદ્ગલપરમાણુ મળતા રહે છે આ પ્રકાર આ કર્મપરમાણુઓમા પરસ્પર મળવું, છુટા થવું વિગેરે થતું જ રહે છે

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિકના નિમિત્તને લઈને કર્મરૂપ થયા કરે છે, પછી તે અનાદિથી કર્મરૂપ અવસ્થાવાળા કેવી રીતે માનવામા આવે કારણ કે કાર્મણવર્ગણા જેનાથી કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે તે સ્વયં પુદ્ગલદ્રવ્ય છે?

उत्तर—निमित्त की समाधना तो नवीन कार्य की उत्पत्ति में ही कार्यकारी मानी जाती है। अनादि अवस्था में निमित्त की कल्पना करना उसकी अनादिता पर पड़ा लगाना है। जहाँ पर निमित्त है वहाँ अनादिता नहीं, और जहाँ अनादिता है वहाँ पर निमित्त नहीं। निमित्त का सम्यग्ध सादिता के साथ हुआ करता है। जैसे नवीन पुद्गलपरमाणु का दो गुण अधिक यथ स्निग्ध और रूक्ष के द्वारा होता है। यहाँ पर नवीन पुद्गल परमाणुओं के यथ के सम्यग्ध में स्निग्ध और रूक्षरूप निमित्त की कल्पना करनी पड़ती है, परन्तु मेरुगिरिआदि अकृत्रिम स्कन्धों में अनादि पुद्गलपरमाणु के यथ के सम्यग्ध में निमित्त की कल्पना करना कोई महत्त्व नहीं रखता। ठीक इसी प्रकार नवीन पुद्गलपरमाणुओं का कर्मरूप होना रागादिकनिमित्ताधीन है, परन्तु जिन पुद्गलपरमाणुओं की अनादिकाल से ही कर्मरूप अवस्था हो रही है, उसमें निमित्त की कल्पना करना कोई भी प्रयोजन की पुष्टि नहीं करता। शास्त्र में इसी बात का समाधान यों लिखा है—

“नैवम्, अनादिप्रसिद्धब्रह्मकर्मसम्यक्त्वस्य तत्र हेतुत्वेनोपादानम्”
कोई वादी प्रश्न करता है कि जय रागादिक भावकर्म का कारण ब्रह्मकर्म

ઉત્તર—નિમિત્તની સલાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકર્તા માનવામાં આવે છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અન્ય દિવા ઉપર બહો લગાડવા બરાબર છે જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં. અને અન્ય અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સબધ સારી તાની સાથે થયા કરે છે જેમ નવીન પુરૂગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્તિગ્ધ અને રૂઢ વાત વાય છે આ ઠેકાણે નવીન પુરૂગલ પરમાણુઓના બંધના સબધમાં સ્તિગ્ધ અને રૂઢરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સુ-ધોમાં અનાદિ પુરૂગલપરમાણુના બંધના સબધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્વ રાખતું નથી. કીક તે પ્રકાર નવીન પુરૂગલપરમાણુઓનું કમરૂપ હોયું તમાલિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુરૂગલપરમાણુઓની અનાદિ કાગથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈપણ પ્રયોગનની પુષ્ટિ નથી કરતી. આશમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

" मीयम् भनारिप्रसिद्धद्रव्यकमसम्बन्धस्य तत्र हेतुत्वं नोपापानाद
उक्तं पक्षे प्रथमे उक्ते-अपारे सग्राहिक भाष्यकर्तृना कारण द्रव्यकम पे,

હૈ, ઔર દ્રવ્યકર્મ કા કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ હૈ તો ऐसी परिस्थिति में इतरेतराश्रय दोष आकर उपस्थित होता है। इस दोष में किसीकी भी स्वतन्त्र सत्ता की सिद्धि नहीं होती है। तब आचार्य कहते हैं—ऐसा मत कहो, कारण कि अनादि से ही द्रव्यकर्म का सम्बन्ध स्वयं सिद्ध है, और इसी की वजह से जीव में रागादिक भावों की उत्पत्ति होती है। अनुभव से भी यही बात प्रतीतकोटि में आती है कि—यदि रागादिक भाव जीव के बिना किसी निमित्त के स्वीकार किये जावें तो वे जीव के निजस्वभाव हो जाने से विभाव भाव कैसे माने जा सकेंगे ?। ऐसी परिस्थिति में जीव का निजभाव रागादिक भी मानना होगा। परन्तु ऐसी मान्यता शास्त्र से बहिर्भूत है।

પ્રશ્ન—કર્મ ઔર આત્મા કા આપ અનાદિ સમ્બન્ધ કહતે હૈં પરન્તુ યહ વાત ઠીક નહીં વૈઠતી, કારણ કિ ઇન દોનોં કા જો સમ્બન્ધ હૈં વહ સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈં, તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ નહીં। પહિલે દૂધ ઔર પાની કી તરહ યે દોનોં સ્વતન્ત્ર હૈં ઔર ફિર પરસ્પર મિલેં તબ ડનકા સમ્બન્ધ માનના ઠીક હો સકતા હૈં।

ઉત્તર—જૈસે જલ ઔર દૂધ કા સુવર્ણ ઔર કિટ્લિક કા તુષ ઔર કળ કા, તિલ ઔર તૈલ કા સમ્બન્ધ જનાદિ કા માના જાતા હૈં, उसी

દ્રવ્યકર્મનુ કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ છે તો આવી પરિસ્થિતિમાં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે આ દોષમાં કોઈની પણ સ્વતંત્ર સત્તાની સિદ્ધિ થતી નથી ત્યારે આચાર્ય કહે છે—એવું ન કહો, કારણ કે અનાદિથી દ્રવ્ય-કર્મનો સંબંધ સ્વયંસિદ્ધ છે અને એજ કારણથી જીવમાં રાગાદિક ભાવોની ઉત્પત્તિ થાય છે અનુભવથી પણ એ વાત પ્રતિતીકોટિમાં આવે છે, કે—કદાચ રાગાદિક ભાવ જીવને વિના કોઈ નિમિત્તે સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તે જીવના નિજ ભાવ થઈ જવાથી વિભાવ ભાવ કેવી રીતે માની શકાશે ? આવી પરિસ્થિતિમાં જીવનો નિજભાવ રાગાદિક પણ માનવો પડશે, પરંતુ એવી માન્યતા શાસ્ત્રથી બહિર્ભૂત છે

પ્રશ્ન—કર્મ અને આત્માનો આપ અનાદિ સંબંધ કહો છે પરંતુ એ વાત ઠીક બેસતી નથી, કારણ કે બંનેનો જો સંબંધ છે તે સંયોગસંબંધ જ છે તાદાત્મ્યસંબંધ નહિ, પહેલાં દૂધ અને પાણીની માફક બંને સ્વતંત્ર હોય અને પછી પરસ્પર મળે ત્યારે સંબંધ માનવો તે ઠીક લાગે છે

ઉત્તર—જેવી રીતે પાણી અને દૂધ, સુવર્ણ અને કિટ્લિક, ચોખા અને ફેતરી, તલ અને તેલનો સંબંધ અનાદિનો માનવામાં આવે છે, તે પ્રકારે તેનો

પ્રકાર इनका भी सम्बन्ध अनादि का ही है। नवीन इनका सम्बन्ध नहीं हुआ है। इनका परस्पर में संयोगसम्बन्ध ही है, ऐसा जो कहा जाता है वह आगामी काल में इनकी भिन्नता को देखकर ही। अनादि से मिले हुए होने पर भी ये जुड़े-जुड़े हो जाते हैं, इससे अनुमान होता है कि ये पहिले से भी जुड़े हैं। परस्पर संयोगसम्बन्धविशिष्ट होने पर भी ये दोनों पदार्थ स्वस्वरूपापेक्षया भिन्न भिन्न ही हैं। यदि भिन्न न हों तो फिर भुक्ति इन के पृथक् होने से जो जीवात्मा को प्राप्त होती है, वह कैसे हो सकेगी। अतः जीव और कर्म का संबंध अनादि का ही है सादि नहीं।

प्रश्न—कर्म जय पुद्गलपिंडरूप हैं, तब वे घटपटादिक की तरह इन्द्रियगम्य क्यों नहीं होते।

उत्तर—स्थूल-स्थूल १, स्थूल २, स्थूल-सूक्ष्म ३, सूक्ष्म-स्थूल ४, सूक्ष्म ५, और सूक्ष्म-सूक्ष्म ६, इस प्रकार सिद्धान्तकारों ने पुद्गल को इन छह विभक्तियों में विभक्त किया है। इनमें कागज, लकड़ी, कलम, दावात आदि स्थूल पुद्गल हैं, इनमें कठोर वस्तुओं का समावेश है। स्थूल-स्थूल वस्तु आपस में छिन्न भिन्न होने पर अपने आप फिर मिल नहीं सकती।

પણ સબંધ અનાદિ કાળનો છે નવીન તેનો સબંધ થયો નથી તેનો પરસ્પર સંયોગસબંધ જ છે એવું જે કહેવામાં આવે છે તે આગામી કાળમાં તેના ભિન્નતાને કોઈને જ કહેવામાં આવે છે અનાદિથી તેઓ મળેલ છે છતાં તે જુદા જુદા ધર્મ ધારક છે તેથી અનુમાન થાય છે કે પહેલાથી જ જુદા છે. પરસ્પર સંયોગસબંધવિશિષ્ટ હોવા છતાં પણ એ બંને પદાર્થો સ્વસ્વરૂપાપેક્ષમાં ભિન્ન સ્થેલ છે એ જુદા નહિ હોવ તે પછી ભુક્તિ તેના પૃથક્ થવાથી જે જીવાત્માને પ્રાપ્ત થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે, માટે જીવ અને કર્મનો સબંધ નવાદિ છે ત્યાંદિ નહિ.

પ્રશ્ન—કર્મ બ્યારે પુદ્ગલપિન્ડરૂપ છે, ત્યારે તે ઘટપટાદિકની માફક ઇન્દ્રિયગમ્ય કેમ નથી થતા.

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧ સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫ અને સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, આ પ્રકારે ત્રિદાતાકાષ્ટ્યે પુદ્ગલોને છ વિભાગોમાં વિભક્ત કરેલ છે તેમાં કાગજ, લાકડી, કલમ, ખડીએ આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ છે, તેમાં કઠોર વસ્તુઓનો સમાવેશ છે, સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઓ અદૃશ્યઅદર ઇતિભિન્ન ધર્મથી પોતાની મેંમે ફરી મળી શકતી નથી ૧, સ્થૂલ-પહેલાવાળી થીએ, જેમ

સ્થૂલ-વહને વાલી ચીજે, જૈસે પાની દૂધ ઘૂત વગૈરહ ૨। સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જો દેખને મેં મોટી હોં, પરન્તુ હાથોં સે પકડી ન જા સકેં, જૈસે પ્રકાશ ધૂપ ઓર છાયા આદિ ૩। સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જો દેખને મેં ન આવેં એસી સૂક્ષ્મ હોં, પરન્તુ ભારી કાર્ય કર સકેં, જૈસે હવા શબ્દ ઇત્યાદિ ૪। સૂક્ષ્મ-જો પુદ્ગલ-પિંડ ઇતને સૂક્ષ્મ હૈં કિ વે કિસીં મીં ઇન્દ્રિય સે ગ્રહણ ન હો સકેં, જૈસે કાર્મણવર્ગણાં ૫। સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-દો પરમાણુઓં કા સ્કંધ યા એક પરમાણુ ૬। ઇન છહ મેદોં મેં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ હૈ, અનઃ વહ ઇન્દ્રિય-ગમ્ય નહીં હો સકતા।

પ્રશ્ન—કર્મ કી સત્તા તવ કૈસે જાની જાતી હૈ ?

ઉત્તર—ઉસકે કાર્ય સે।

પ્રશ્ન—ઇન કર્મોં કા કાર્ય કયા હૈ ?

ઉત્તર—આત્મા કે જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા ઘાત કરના, કેવલજ્ઞાન કી જ્ઞાનાવરણ, અનન્ત દર્શન કી દર્શનાવરણ, અવ્યાવાધ કી વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ કી મોહનીય, અવગાહનત્વ કા આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણ કા નામ, અગુરુલઘુ ગુણ કા ગોત્ર ઓર અનન્તવીર્ય કા અન્તરાય ઘાત કરતા હૈ। તથા એક જીવ સુખી હૈ ઓર એક જીવ દુઃખી હૈ, એક વિદ્વાન હૈ એક

પાણી, દૂધ, ઘી વિગેરે ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જે દેખવામાં મોટી હોય છે પરંતુ હાથોથી પકડી શકાતી નથી, જેમ પ્રકાશ, ધૂપ, છાયા આદિ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જે દેખવામાં ન આવે એવી સૂક્ષ્મ હોય પણ ભારી કામ કરી શકે, જેમ હવા, શબ્દ ઇત્યાદિ ૪, સૂક્ષ્મ-જે પુદ્ગલપિંડ એટલા સૂક્ષ્મ છે કે તે કોઈપણ ઇન્દ્રિયથી એહણ થઈ ન શકે, જેમ કાર્મણવર્ગણાઓ ૫, સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-એ પરમાણુઓના સ્કંધ અને એક પરમાણુ ૬, આ છ ભેદોમાં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ છે, માટે તે ઇન્દ્રિયગમ્ય થઈ શકતા નથી

પ્રશ્ન—કર્મની સત્તા ત્યારે કેવી રીતે બાણી શકાય ?

ઉત્તર—તેના કાર્યથી

પ્રશ્ન—તે કર્મોનું કાર્ય શું છે ?

ઉત્તર—આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોનો ઘાત કરવો, કેવળજ્ઞાનનો જ્ઞાનાવરણ, અનન્તદર્શનનો દર્શનાવરણ, અવ્યાયાધનો વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો મોહનીય, અવગાહ તત્ત્વનો આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણનો નામ, અગુરુલઘુગુણનો ગોત્ર અને અનન્ત વીર્યનો અન્તરાય ઘાત કરે છે તેથી એક જીવ સુખી છે અને એક જીવ દુઃખી છે, એક વિદ્વાન છે એક મૂર્ખ છે, એક મળલ છે એક કમજોર છે, એક રાત

મૂલ્ય છે, એક સયલ છે એક કમજોર છે, એક રાત્રિનિ સુસ્ત બેન મેં મસ્ત
 પના રહતા છે એક વર વર કા મિચ્છારી થના હુઆ છે, યહ સબ કિસ કા
 કાર્ય છે ? કહના પહેલા કર્મ કા । યહ જ્ઞાનાવરણાવિકર્મરૂપ પર્ણા
 કાર્મણવર્ગણાઓં કી હુઈ છે । કાર્મણવર્ગણા પુટલ દ્રવ્ય છે, જો જીવ કે
 રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાવિ પર્ણાવરૂપ પરિણત હો
 જાતા છે, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મેં નિમિત્તધાન ઘટપર્ણાવિ હુઆ કરતી
 છે । ઇસ પ્રકાર કી પર્ણાવિ ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મેં અનાદિકાલીન છે-
 નવીન નહીં છે, ઓર યહ જીવાત્મા મી ડન કર્મપર્ણાવિઓં સે અનાવિકલ્પ
 સે હી પરતન્ત્ર હો રહા છે । ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રતારૂપ યંચવશાકા કોઈ
 નિશ્ચિત સમય નહીં છે, અતઃ અનાદિકાલ સે યહ કર્મોં કે જાલ મેં ફંસા
 છે, પેસા કહા જાતા છે । અનાદિતા ઓર અનંતતા એવં સાદિતા કા સંબંધ
 છે સિર્ફ અનંતતા કા હી નહીં ।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા છે, ઇસકા અભિ-
 પ્રાય યહી છે કિ-આત્મા કે કર્મપર્ણાવિઓં કા નાશ હો જાતા છે, યવોં કિ
 કર્મદ્રવ્ય કા કર્મી મી નાશ નહીં હોતા । કર્મપર્ણાવિ કા હી નાશ હોતા
 છે । જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મેં પહિલે કપાયાવિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્ણાવિ

દિવસ સુખબેનમા મસ્ત બન્યો રહે છે, એક વરવરનો ભિખારી બનેલ છે એ વખત
 કેના કાર્યો છે ? કહેવું પડે છે કર્મના આ જ્ઞાનાવરણાવિકર્મરૂપ પર્ણાવિ કર્મવિ
 વર્ણવ્યાઓની થયેલી છે કર્મવિવર્ણવ્યા તે પુદ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના તમા-
 રાકે આવેલા નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાવિકર્મરૂપ પરિણત થાય છે જે પ્રકારે
 મૃત્તિકામાં નિમિત્તધાન ઘટપર્ણાવિ થાય છે તે પ્રકારની પર્ણાવિ તે કર્મવિ
 વર્ણવ્યાઓમા અનાદિ કાલીન છે, નવીન ॥ નહિ. બને આ જીવાત્મા પવન તે
 કર્મપર્ણાવિઓ અનાદિ કાલીન જ પરતન્ત્ર થઈ રહેલ છે તેની આ પરતન્ત્રતારૂપ
 બંધનશક્તિને કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાલીન આ કર્મોની વ્યવસ્થા
 કોઈ છે એવું કહેવામા આવે છે અનાદિતા બને અનંતતા એવં આદિતાને સંબંધ
 છે ફક્ત અનંતતાને જ નહિ.

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોના નાશ થાય છે તેનો અભિપ્રાય એ
 છે કે આત્માના કર્મપર્ણાવિઓના નાશ થાય છે કારણ કે કર્મદ્રવ્યનો કોઈ વખત
 ત્યાગ થતો નથી, કર્મપર્ણાવિઓના જ નાશ થાય છે કર્મવિ દ્રવ્યમા પહેલાં કપા
 વાળા નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્ણાવિ બની જતી, તે નિમિત્ત દૂર થવાથી તે દ્રવ્ય
 અનંત સ્થિતિ થાય છે કર્મવિવર્ણવ્યારૂપ દ્રવ્ય આત્માન્ય છે તેમાં

હોતી થીં, ઉસ નિમિત્તકે હટ જાને પર વહી દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાય સે સ્થિત હો જાતા હૈ । કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય હૈ, ઉસ મેં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નહીં હૈ । જવ વહ કર્મરૂપ બનતા હૈ, તવ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર હોતે હૈં । જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકાર કી સ્થિતિ જવ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અથવા તપ સંયમ કે દ્વારા જવ ઉસકા વિનાશ કિયા જાતા હૈ તવ વહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતા હૈ, ઇમ કા ભાવ યહી હૈ કિ વહ કાર્મણ દ્રવ્ય ઉનર પર્યાયોં સે રહિત હોકર અપને મૂલ સ્વભાવ સે વહાં સ્થિત રહતા હૈ, દ્રવ્ય કા કબી બી વિનાશ નહીં હોતા । સુવર્ણ અથવા મણિ સે જિસ પ્રકાર ઉનકે મલ કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા સે બી કર્મપર્યાય કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । ઁસા હોને પર જીવ કી આત્યન્તિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । સકલકર્મપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૂલ દ્રવ્ય કા વિનાશ નહીં હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઘટપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૃત્તિકા અઘટ પર્યાય સે સ્થિત રહતી હૈ, ઇસી પ્રકાર સકલપર્યાય કે વિનાશ હોને પર બી કર્મદ્રવ્ય અકર્મપર્યાય સે આક્રાન્ત હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા હૈ । જિસ પ્રકાર કાર્મણ દ્રવ્ય કી પર્યાય કર્મ હૈ ઉસી પ્રકાર અકર્મ બી ઉસકી ઁક પર્યાય હૈ । વિવક્ષિત જીવ કી અપેક્ષા સે હી ઉસમેં કર્મ ઔર અકર્મ પર્યાય રહતી હૈ । સંસારી

જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નથી. ન્યારે તે કર્મરૂપ બને છે ત્યારે તેમા જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર થાય છે જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકારની સ્થિતિ ન્યારે પૂર્ણ થાય છે, અથવા તપ સંયમ દ્વારા ન્યારે તેનો વિનાશ કરવામા આવે છે ત્યારે તે આત્માથી પૃથક્ વાય છે. તેનો ભાવ એ છે કે તે કાર્મણ દ્રવ્ય તે તે પર્યાયોથી રહિત થઈને પોતાના મૂલ સ્વભાવમા ત્યા સ્થિત રહે છે. દ્રવ્યનો કોઈ વખત પણ વિનાશ થતો નથી સુવર્ણ અથવા મણિથી જે પ્રકારે તેના મલની નિવૃત્તિ થાય છે તે પ્રકારે આત્માથી પણ કર્મપર્યાયની નિવૃત્તિ થાય છે એવું બનવાથી જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ થાય છે સકલ કર્મપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૂલ દ્રવ્યનો વિનાશ થતો નથી જે પ્રકારે ઘટપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૃત્તિકા અઘટપર્યાયથી સ્થિત રહે છે તે પ્રકારે સકલ પર્યાયનો વિનાશ થવાથી કર્મ દ્રવ્ય અકર્મપર્યાયથી આક્રાન્ત થાય છે દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા છે

જે પ્રકારે કાર્મણ દ્રવ્યની પર્યાય કર્મ છે તે પ્રકારે અકર્મપર્યાય પણ તેની એક પર્યાય છે વિવક્ષિત જીવની અપેક્ષાથી જ તેમા કર્મ અને અકર્મપર્યાય

મૂર્ત્યુ છે, એક સયલ છે એક કમજોર છે, એક રાત્રિનિ સુત્ર ચેન મેં મસ્ત થના રહતા છે એક દર દર કા મિશ્વારી થના હુઆ છે, યહ સય કિસ કા કાર્ય છે ? કહના પહેલા કર્મ કા । યહ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણવર્ગણાઓં કી સુઈ છે । કાર્મણવર્ગણા પુઠ્ઠલ દ્રવ્ય છે, જો જીવ કે રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિ પર્યાયરૂપ પરિણત હો જાતા છે, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મેં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય હુઆ કરતી છે । ઇસ પ્રકાર કી પર્યાય ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મેં અનાદિકાલ્પીન છે- નવીન નહીં છે, ઓર યહ જીવાત્મા મી ડન કર્મપર્યાયોં સે અનાદિકાલ્પ સે હી પરતન્ત્ર હો રહા છે । ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રતારૂપ વંધદશા કા કોઈ નિશ્ચિત સમય નહીં છે, અતઃ અનાદિકાલ્પ સે યહ કર્મોં કે જાલ મેં કેસા છે, એસા કહા જાતા છે । અનાદિતા ઓર અનંતતા ગ્વં સાદિતા કા સંબંધ છે સિર્ફ અનંતતા કા હી નહીં ।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા છે, ઇસકા અભિપ્રાય યહી છે કિ-આત્મા કે કર્મપર્યાયોં કા નાશ હો જાતા છે, ક્યોં કિ કર્મદ્રવ્ય કા કર્મી મી નાશ નહીં હોતા । કર્મપર્યાય કા હી નાશ હોતા છે । જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મેં પહિલે કપાયાદિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્યાય

દિવસ મુખચેતના મસ્ત બન્યો રહે છે એક ધરધરને બિખારી બનેલ છે આ બધા કેન્દ્ર કાર્યો છે ? કહેવું પડે છે કર્મના આ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કર્મજીવગણાઓની થયેલી છે કર્મજીવગણા તે પુદ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના સમગ્ર ક્રિયાઓના નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પરિણત થાય છે જે પ્રકારે મુક્તિનામં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય થાય છે તે પ્રકારની પર્યાય તે કર્મજીવગણાઓના અનાદિ કાલીન છે, નવીન છે નહિ. અને આ જીવદ્રવ્ય પશુ તે કર્મપર્યાયથી અનાદિ કાળથી જ પરતન્ત્ર થઈ રહેલ છે તેની આ પરતન્ત્રતારૂપ બંધદશાને કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાળથી આ કર્મોની બળમા ફરેલ છે એવું કહેવામા આવે છે અનાદિતા અને અનંતતા એવ સાદિતાને અબંધ છે ક્રેષ્ટ અનંતતાને જ નહિ.

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોની નાશ થાય છે. તેને અભિપ્રાય એ છે કે આત્માના કર્મપર્યાયોને નાશ થાય છે, કારણ કે કર્મદ્રવ્યને કોઈ વખત નાશ થતા નથી, કર્મપર્યાયોને જ નાશ થાય છે કર્મજીવ દ્રવ્યમાં પહેલાં કયા સાદિકના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્યાયો બની હતી, તે નિમિત્ત ફર થવાથી તે દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાયથી સ્થિત થાય છે કર્મજીવગણાજીવ દ્રવ્ય સામાન્ય છે તેમા

યદ્વા—‘સંક્રમણે’ ઇતિચ્છાયા, તત્ત્વ સંક્રમ્યતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોઽનેનેતિ સંક્રમણ=જ્ઞાનાદિત્રિકં, તત્રૈવ ચરેત્=તત્પરો ભવેત્, આત્મહિતાર્થિભિઃ સંયમે દૃઢે-પડના પડતા હૈ, ઇસ લિયે તપ, સંયમ ઓર નિયમોં કા પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર હૈ, ઇનકા પાલન કમી ખી વિફલ નહીં હો સકતા’ ઇસ પ્રકાર જિસકા મન ડનકે પાલન કરને મેં અડોલ ઓર અંકપ હૈ, મન કી લગન સે જો તપ સંયમ આદિ કે પાલન કરને મેં દત્તાવધાન હૈ, તથા જિસ કે હૃદયમેં જિનેન્દ્રવચનોં કે પ્રતિ દૃઢ આસ્થા હૈ, જો યે અચ્છી તરહ સે સમજતા હૈ કિ—‘ભગવાન્ વીતરાગ પ્રભુ કા બનાયા હુઆ યહ માર્ગ હૈ કિસી છદ્મસ્થ કા નહીં, સંયમ કી આરાધના સે કર્મોં કી નિર્જરા હોની હૈ, અતઃ મુજે ઇસકા પરિપાલન સમ્યક્ રીતિ સે હી કરના ચાહિયે અન્યથા અનન્ત સંસાર કા પથિક બનના પડેગા, યદિ મુજે અપને ગૃહીત માર્ગ સે ચ્યુત કરને કે લિયે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ ખી આડે આવેં તો મુજે ડનકી ખી કુછ પર્વાહ નહીં હૈ, મૈ અકપ બન ડનકા ખી સામના કરને કે લિયે તૈયાર હું’ ઇસ પ્રકાર અશંકિતમન ઓર દૃઢપ્રતિજ્ઞ હોકર અપને ગૃહીત માર્ગકો સંયમી આરાધના કરે ।

સૂત્ર મેં “સંક્રમણે” ઇસ શબ્દ કી છાયા ટીકાકાર ને ંક તો “અશકમનાઃ” યદ્ કી હૈ જિસકા અર્થ ‘નિઃશંકિતમન હો કર તપ સંયમ કા પાલન કરે’ યદ્ હોતા હૈ । ડૂસરી “સંક્રમણે” કી છાયા

માટે તપ-અયમ અને નિયમોત્તુ પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર છે તેતુ પાલન કોઈ વખત પણ વિકળ થતુ નથી આ પ્રકારથી જેતુ મન તેના પાળવામા મક્કમ અને અકપ છે, મનની લગનથી જે તપ અયમ આદિના પાલન ક્રવામા દત્તાવધાન છે, તથા જેના હૃદયમા જિનેન્દ્રવચનો પ્રતિ દૃઢ આસ્થા છે, જે આરી રીતે જાણે છે કે ભગવાન વીતરાગ પ્રભુનો બનાવેલો આ માર્ગ છે, કોઈ છદ્મસ્થનો નથી સંયમની આરાધનાથી ડર્મોની નિર્જરા થાય છે, માટે મારે તેતુ પરિપાલન સમ્યક્ રીતિથી જ કરવુ જોઈએ, અન્યથા અનંત સંસારનો પથિક બનવો પડશે, જે મારે પોતાના ગૃહીત માર્ગથી ચ્યુત ક્રવા માટે પરીષદ્ અને ઉપસર્ગ પણ આડા આવે તો મને તેની પણ કોઈ પરવાહ નથી હું અકપ બની તેનો પણ સામનો કરવા તૈયાર છું, તેવા પ્રકારે અશકિતમન અને દૃઢપ્રતિજ્ઞ બનીને પોતાના ગૃહીત માર્ગની સચમી આરાધના કરે.

સૂત્રમા “સંક્રમણે” આ શબ્દની ટીકાકારે એક તો “અશકમના” છાયા કરી છે જેનો અર્થ ‘નિઃશકિતમન થઈ, તપ સચમતુ પાલન કરે’ તેમ થાય છે.

જીવોં મેં હસ વર્ગના કાર્મરૂપ પર્યાય સે પરિણમન હૈ, ઓર શુદ્ધ આત્મવ્રત્ય કી અપેક્ષા અકર્મપર્યાયરૂપસે ।

જિસ પ્રકાર સુવર્ણ સે ડસકે કિટ્કાદિરૂપ મૈલ કા સંબધ પુરુષાકાદિ ધારા દૂર હોતા હુઆ દેસ્યા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર આત્મા મેં અનાદિકાલ સે સંબંધિત હન કર્મોંકા વિયોગ મી તપ સંયમ રૂપ સાધન ધારા દૂર હો જાતા હૈ । હસ મૈલ કે પૃથક્ હોને પર શુદ્ધ સુવર્ણ કી તરહ યહ આત્મા મી શુદ્ધ હોકર અપની અસલી સ્વરૂપ કો પાતા હૈ ।

સંયમી મુનિ કે લિયે ઉપદેશ દેતે હૈ—‘ઈણમેચ’ ઇત્યાદિ । કર્મોં કો આત્મા સે પૃથક્ કરનેવાલે ચારિત્ર કી જો આરાધના કરતે હૈ વે ધ્રુવચારી કહલાતે હૈ । અથવા ધ્રુવ નામ મોક્ષ કા હૈ । કાર્ય ઓર કારણ મેં અમેદ સંબધ હોને સે મોક્ષ કે કારણમૂલ સમ્યગ્દર્શન, તપ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા આદિ મી ધ્રુવ હૈ । હનકો મી પાલન કરને કે સ્વભાવવાલે ધ્રુવચારી હૈ । જો મુનિ ધ્રુવચારી હૈ વે અસંયમ જીવન કી, અથવા પૂર્વ મેં ભોગે હુણ વિષયાદિક ભોગોં કી કમી મી ઇચ્છા નહીં કરતે હૈ । જ્ઞ-પરિજ્ઞા સ સંસારકા સ્વરૂપ અથવા હસ યાત કો જાન કર કિ—‘અસંયમ જીવન વ્યતીત કરને સે જીવ કો હસ સંસાર મેં ધારધાર જન્મ ઓર મરણ કે વહર મેં

રહે છે સચારી છવેના આ વર્ગજ્ઞાના કર્મરૂપ પર્યાયથી પરિણમન છે, અને શુદ્ધ આત્મવ્રત્યની અપેક્ષા અકર્મપર્યાય રૂપથી.

જેવી રીતે સુવર્ણથી તેના કિટ્કાદિરૂપ મેલને સળધ પુરુષાકાદિદ્વારા દૂર થતો દેખવામાં આવે છે તેવી રીતે આત્મામાં અનાદિ કાળથી સંબંધિત આ કર્મોનાં વિશેષ પણ તપસ્યમરૂપ સાધનદ્વારા દૂર થાય છે આ મેલના પૂર્વક થવાથી શુદ્ધ સુવર્ણની માફક આ આત્મા પણ શુદ્ધ બની પોતાના અસલ સ્વરૂપને મેળવે છે

સંયમી મુનિ માટે ઉપદેશ આપે છે—‘ઈણમેચ’ ઇત્યાદિ કર્મોને આત્માથી પૃથક્કરવાવાળા ચારિત્રની જે આરાધના કરે છે તે ધ્રુવચારી કહેવાય છે. અને ધ્રુવ નામ મોક્ષનું છે કાર્ય અને કારણમાં અભેદ સળધ જોવાથી મોક્ષના કારણમૂલ સમ્યગ્દર્શન તપ જ્ઞાન અને ક્રિયા આદિ પણ ધ્રુવ છે તેનું પણ પ્રાપ્ત કરવાવાળા સ્વભાવી ધ્રુવચારી છે જે મુનિ ધ્રુવચારી છે તે અસંયમ છવનની અથવા પૂર્વમાં ભોગવેલા વિષયાદિક ભોગોનાં કમી પણ ઇચ્છા કરતા નથી. પરિજ્ઞાથી સચારું સ્વરૂપ અથવા તે વાતને બાબુને પણ અસંયમ છવન વ્યતીત કરવાથી છવને આ સચારમાં ધારધારજ મ અને મરણના વહરમાં પડતું પડે છે.

ઉક્તં સંયમિજીવનસ્વરૂપમ્, અથાસંયમિજીવનસ્વરૂપમાહ—‘સર્વે પાણા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સર્વે પાણા પ્રિયાડયા સુહસાયા દુઃખપટિકૂલા અપ્રિય-
વહા પ્રિયજીવના જીવિતકામા સર્વેસિં જીવિયં પ્રિયં, તં પરિ-
ગિજ્ઞ દુપયં ચડપ્પયં અભિજુંજિયાણં સંસિંચિયાણં તિવિહેણ
જાડવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા વહુયા વા સે તત્થ ગટ્ટિણ
ચિદ્દઙ્ ભોયણાણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુપઃ સુખાસ્વાદાઃ દુઃખપ્રતિકૂલા અપ્રિયવધાઃ
પ્રિયજીવના જીવિતકામાઃ સર્વેપાં જીવિતં પ્રિયમ્, તત્પરિગૃહ્ય ટ્વિપટં ચતુષ્પદમભિ-
યુજ્ય સ્વલુ સંસિચ્ય સ્વલુ ત્રિવિધેન યાડપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવત્યલ્પા વા વહુકા
વા સ તત્ર ગૃહસ્તિષ્ઠતિ ભોજનાય ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સર્વે’ ઇત્યાદિ, સર્વે=નિશ્ચિલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સંસારિણઃ, પ્રિયા-
યુપઃ=પ્રિયજીવિતા ભવન્તિ, યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોનો જન્મ ગૃહ્ણતિ તત્રૈવ રમતે
જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિપકૃમિન્યાયેન; ઉક્તઞ્ચ—

“ અમેઙ્ગમઙ્ગે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલણ ।

સમાણા જીવિયાકંભા, તેસિં મચ્ચુભયં સમં ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—“ અમેઘ્યમઘ્યે કીટસ્ય, સુરેન્દ્રસ્ય સુરાલયે ।

સમાના જીવિતાકાંક્ષા, તયોર્મૃત્યુભયં સમમ્ ॥ ”

સંયમજીવન કા સ્વરૂપ પ્રકટ ક્રિયા, અવ અસંયમજીવન કા સ્વરૂપ
પ્રકટ કરતે હૈં—‘સર્વે પાણા પ્રિયાડયા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જીવન પ્રિય હૈ, કોઈં મી જીવ એસા નહીં
હૈ, જિસે અપને જીવન સે મમતા ન હો, વિષ્ઠા કા કીડા મી અધિક સે
અધિક જીને કી ઇચ્છા રખના હૈ । જો જીવ જિસ પર્યાય મેં વર્તમાન હૈ
ઉસે વહી પર્યાય પ્રિય હૈ । વિષ્ઠા કે કીડે કી મમતા કો દેરિયે—વહ
યદિ ઉસ સ્થાન સે અલગ ક્રિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર

સયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે
છે—‘સર્વે પાણા પ્રિયાડયા’ ઇત્યાદિ

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈ પણ જીવ એવો નથી જેને
પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય વિષ્ઠાનો કીડો પણ વધારેમા વધારે જીવવાની
ઇચ્છા રાખે છે જે જીવ જે પર્યાયમા વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે
વિષ્ઠાના કીડાની મમતાને જુઓ—તે કદાચ તે સ્થાનથી અલગ કરવામા આવે તો

માર્ગ્યમ્ । ચાર્ધકયે પરુસ્પરારિ વા ધર્મ કરિણ્યામીતિ ચેતસિ ન ચિન્તયદિત્યર્થઃ,
 યત 'કાલસ્ય' કાલઃ=મૃત્યુસ્તસ્ય, અનાગમઃ=અપ્રાપ્તિર્નાસ્તિ=ન વર્તત, યત કોઽપિ
 ક્ષણો ન તાદૃગ્ યસ્મિન્મૃત્યોરાગમનસમ્મત્રો નાસ્તિ, તસ્માદર્હિસાદિપુ સાવધાનન સ્થ
 સ્થમુદ્ધર્તાદિસમયેષ્વપતિવન્ધવિહારિણાઽઽસ્મીપમ્યન મક્તિવ્યમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ૪૪ ॥

“સમ્મમણે” એસી મી હોતી છે । જિસકે દ્વારા મુક્તિની પ્રાપ્તિ જીવકે
 હોતી છે ઉસકા નામ સમ્મમણ છે । યહ સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે ।
 इनके द्वारा ही जीव मुक्ति का लाभ करता है, अतः सावधान मन होकर
 इनके परिपालन करने में संयमी मुनि को तत्पर रहना चाहिये, यह
 सूत्रकार का आदेश घबन है । ‘पर परार जय समय आवेगा तब धर्मा-
 चरण कहेगा, अभी समय नहीं है’ इस प्रकार का धर्माचरण के लिये
 यहाना नहीं करना चाहिये । ऐसा यहाना आत्महितार्थी के लिये उचित
 नहीं है । पहले कहा गया है कि—“ नास्ति कालस्यानागम ” ऐसा कोई
 मी समय नहीं है कि जिसमें मृत्युके आने की संभावना न हो, अतः
 यह समझ कर कि—“काल पीछे लगा हुआ है, कब यहां से जाना
 पड़ेगा ” धर्माचरण के लिये प्रमादी न बने । जो मी जितना मी समय
 मिले—धर्म की आराधना करता रहे । संयमी मुनि अपने गृहीति अर्हि
 साद्विमतों में सावधान होकर एक क्षण एक लक्ष एक मुहूर्त मी प्रति
 बन्धविहारी न बने, अर्थात् अप्रतिबन्धविहारी होकर विचरे ॥ सू० ४ ॥

જેના દ્વારા જીવને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે તેનું નામ સમ્મમણ છે. તે સમ્ય-
 ગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે તેના દ્વારા જ જીવ મુક્તિને લાભ કરે છે માટે સાવધાન
 મન રાખીને તેનું પરિપાલન કરવામાં સંયમીમુનીએ તત્પર રહેવું જોઈએ, એટલું
 કાશ્નુ આદેશ ઘબન છે અવતી કે તેની આ । હની શાલ જ્યારે સમય આવશે ત્યારે ધર્મ
 કરીશ, હમણા સમય નથી ” આવા પ્રકારનું ધર્માચરણ માટે બહાનું કરવું જોઈએ
 નહિ. એવું બહાનું આત્મહિતાર્થી માટે ઉચિત નથી પહેલા કહેવામાં આવેલ
 છે કે—“ નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમ ” એવો કોઈ પણ સમય નથી જેમાં મૃત્યુને
 આવવાની સંભાવના ન હોય, માટે એવું સમજીને કે “ કાળ પછવાડે જ
 લાગેલો છે જ્યારે અહીંથી જીવ પડે ” ધર્માચરણ માટે પ્રમાદી ન બને. જેટલો
 પણ વખત મળે તેટલો વખત ધર્મની આરાધના કરતો જ રહે.

સંયમી મુનિ પાતાના ગૃહીત અર્હિસાદિ મતેમાં સાવધાન બનીને એક
 ક્ષણ એક લવ એક મુહૂર્ત પણ પ્રતિબંધ વિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિબંધ
 વિહારી બનીને વિચરે ॥ સૂ० ૪ ॥

ઉક્તં સંયમિજીવનસ્વરૂપમ્, અથાસંયમિજીવનસ્વરૂપમાહ—‘સઁવે પાણા’ ઇત્યાદિ ।
 મૂલમ્—સઁવે પાણા પિયાડયા સુહસાયા દુઃસ્વપડિકૂલા અપ્પિ-
 યવહા પ્રિયજીવણા જીવિડકામા સઁવેસિં જીવિયં પ્રિયં, તં પરિ-
 ગિજ્ઞ દુપયં ચડપ્પયં અભિજુંજિયાણં સંસિંચિયાણં તિવિહેણ
 જાડવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા વહુયા વા સે તત્થ ગઢિઁ
 ચિટ્ઢ મોયણાઁ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુપઃ સુઁસ્વાદાઃ દુઃસ્વપ્રતિકૂલા અપ્રિયવધાઃ
 પ્રિયજીવના જીવિતુકામાઃ સર્વેપા જીવિતં પ્રિયમ્, તત્પરિગૃહ્ય દ્વિપદં ચતુષ્પદમભિ-
 યુજ્ય સ્વલુ સંસિચ્ય સ્વલુ ત્રિવિધેન યાડપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવત્યલ્પા વા વહુકા
 વા સ તત્ર ગૃહ્યસ્તિષ્ઠતિ ભોજનાય ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સર્વે’ ઇત્યાદિ, સર્વે=નિઁસ્વિલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સંસારિણઃ, પ્રિયા-
 યુપઃ=પ્રિયજીવિતા ભવન્તિ, યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોનો જન્મ ગૃહ્ણતિ તત્રૈવ રમતે
 જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિન્યાયેન; ઉક્તઁ—

“ અમેજ્ઞમજ્ઞે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલણ ।

સમાણા જીવિયાકંઁવા, તેસિં મચ્ચુભયં સમં ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—“ અમેધ્યમધ્યે ક્રીડસ્ય, સુરેન્દ્રસ્ય સુરાલયે ।

સમાના જીવિતાકાઙ્ક્ષા, તયોર્મૃત્યુમયં સમમ્ ॥ ”

સંયમજીવન કા સ્વરૂપ પ્રકટ ક્રિયા, અવ અસંયમજીવન કા સ્વરૂપ
 પ્રકટ કરતે હૈં—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જીવન પ્રિય હૈ, કોઈ ઁી જીવ ઁસા નહીં
 હૈ, જિસે અપને જીવન સે મમતા ન હો, વિષ્ટા કા કીડા ઁી અધિક સે
 અધિક જીને કી ઇચ્છા રઁવતા હૈ । જો જીવ જિસ પર્યાય મેં વર્તમાન હૈ
 ઁસે વહી પર્યાય પ્રિય હૈ । વિષ્ટા કે કીડે કી મમતા કો દેરિયે—વહ
 ઁદિ ઁસ સ્થાન સે અલગ ક્રિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર

સ યમ જીવનતુ સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસ યમ જીવનતુ સ્વરૂપ પ્રગટ કરે
 છે—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈ પણ જીવ ઁવો નથી જેને
 પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય વિષ્ટાનો કીડો પણ વધારેમાં વધારે જીવવાની
 ઇચ્છા રાખે છે જે જીવ જે પર્યાયમાં વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે
 વિષ્ટાના કીડાની મમતા કો દેરિયે—વહ ઁદિ ઁસ સ્થાન સે અલગ ક્રિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર
 આવે તે

મી વહીં પર ફિર સે પ્રવિષ્ટ હો જાતા હૈ । વહ અપને સ્થાન કો જરા મી નહીં છોડના પાહતા । હસકા કારણ સિર્ફ એક યહી હૈ કિ-ઉસે ડસી અવસ્થા મેં રહ કર અપના જીવન વ્યતીત કરના હૃષ્ટ હૈ । ત્રિશોલ વૈભવ કો મોક્તા કો જિસ પ્રકાર જીને કી હૃષ્ટા રહા કરતી હૈ, તથા જિસ પ્રકાર ડસે અપના જીવન સપસે અધિક પ્રિય હૈ ડસી પ્રકાર સમસ્ત સસારી જીવોં કી યહી હાલત હૈ-પાહે વે સંજી હોં પાહે અસંજી । કોઈ મી પ્રાણી એસા નહીં મિલેગા-જિસે અપને જીવન મેં અધિકસે અધિક મમતા ન હો । એક મિલ્હારી કો જિતના અપને જીવન સે મોહ હૈ ડતના હી મોહ ચક્રવર્તી કો મી અપને જીવન સે હૈ । કોઈ અપના અનિષ્ટ નહીં પાહતા । હસ પાત કી પુષ્ટિ કરસે હુપ ટીકાકાર કહતે હૈ-“યો જીવો યત્રોચનીષયોનો જન્મ શુદ્ધાતિ તત્રૈવ રમતે-જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિપ કૃમિન્યાયેન ” જો જીવ જિસ ડેંચ નીચ યોનિમેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ ડસે વહી યોનિ પ્રિય બન જાતી હૈ-વહીં પર વહ આનંદ માનતા હૈ । એસ વિષકે કીલે કો વિપમેં હી મજા આતા હૈ પાત મી સત્ય હૈ કહાની હૈ-

“ અમેઝમઝે કીલસ્ત, સુરિંદસ્ત સુરાલપ ।

સમાણા જીવિયાકંસા, તેસિં મચ્ચુમયં સમં ” ॥ ૧ ॥

પણ તે ત્યાંથી અલગ થઈને પણ ત્યાં જ ફરીથી પ્રવિષ્ટ થાય છે, તે પાતન સ્થાનને જમ્મ પણ એવા પાહતો નથી. તેનું કારણ રહ્યું એક એ જ છે કે તેની તે અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરવું ઈષ્ટ છે વિશાળ વૈભવ ભોક્તાને જે પ્રકારે જીવવાની ઈચ્છા રહ્યા કરે છે તથા જે પ્રકારે તેને પોતાનું જીવન બધાથી અધિક પ્રિય છે, તે પ્રકારે અમસ્ત સસારી જીવેલી તે જ હાલત છે, બધે તે સંજી હોય કે અસંજી. કોઈ પણ પ્રાણી એવો નહિ મળે જેને પોતાના જીવનમાં અધિકથી અધિક મમતા ન હોય એક બિખારીને જેટલો પોતાનો જીવ પહોંચે છે તેટલો જીવનનો મોહ ચક્રવર્તીને પણ હોય છે. કેમ પોતાનું જન્મ શુદ્ધાતિ નથી આ વાતની પુષ્ટિ કરતાં ટીકાકાર કહે છે કે-
“યો જીવો યત્રોચનીષયોનો જન્મ શુદ્ધાતિ તત્રૈવ રમતે-જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિપ કૃમિ ન્યાયેન જે જીવ જે ઈંચ નીચ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે તેની તે જ યોનિ પ્રિય બની બધ છે, ત્યાં જ તે આનંદ માને છે, જેમ વિપના કીડને સ્વિમાં જ મજા આવે છે વાત પણ સત્ય છે કહ્યું પણ છે.

“ અમેઝમઝે કીલસ્ત સુરિંદસ્ત સુરાલપ ।

સમાણા જીવિયાકંસા તેસિં મચ્ચુમયં સમં ” ૩૨૫

સુવનત્રયાધિપત્યપ્રાપ્ત્યપેક્ષયાપિ સ્વાયુષ્કસ્યેષ્ટતરત્વાત્, અપિ ચ સુસ્વા-
સ્વાદાઃ=સુસ્વામિલાપિણઃ, અમૃતપાનાદપિ સ્વસુસ્વાનુભવસ્ય શ્રેષ્ઠત્વાત્, દુઃસ્વપ્રતિ-
કૂલાઃ=દુઃસ્વાનમિલાપુકાઃ, વિષભક્ષણાદપિ દુઃસ્વં પ્રત્યધિકદ્વેષવત્ત્વાત્, કિંચ્ચ-અપ્રિ-
યવધાઃ-અપ્રિયઃ=અનિષ્ટઃ-વધો=મરણં યેષાં તે તથા । પ્રિયજીવનાઃ=પ્રિયં જીવનં
યેષાં તે તથા, અનિશં તદર્થં પ્રવૃત્તત્વાત્, અત એવ જીવિતુકામાઃ જીવિતું કામઃ=
સ્પૃહા યેષાં તે જીવિતુકામાઃ, વર્ષશતાયુષ્કસ્યાન્તિમાવસ્થાયામપિ જીવિતેચ્છયા
નાનાવિધમણિમન્ત્રયન્ત્રોપધાયર્થં પ્રવૃત્તિર્દર્શનાત્ ।

વિષ્ટા કે કીડેકી ઓર સ્વર્ગ કે અપાર વૈભવ કે ભોક્તા ઇન્દ્રકી મી
જીને કી ઇચ્છા ઓર મરણકા ભય સમાન હૈ, કોઈ નહીં ચાહતા કિ હમેં
કરાલકાલ કે ગાલકા કવલ (ગ્રાસ) બનના પડે । ક્યોં કિ તીન લોક
કે અધિપતિ બનને કી અપેક્ષા અપના જીવન અધિક પ્રિય હૈ ।

લોક મેં અમૃત કા પાન કરના સવસે અધિક સુખકારી સમજા
જાતા હૈ, પરન્તુ લોક ઇસસે મી અધિક સુખ અપને સુખી હોને મેં માનતે
હેં । અપને કો સુખી બનાને કે લિયે લોગ હર એક પ્રકાર કે સાધનોં કો
જુટાને મેં કસર નહીં કરતે । કિસી સે મી યદિ યહ પ્રશ્ન કિયા જાય
કિ-તુમ અપને જીવન મેં ક્યા ચાહતે હો ? તો શીઘ્ર હી વહાં સે યહી ઉત્તર
મિલેગા કિ-હમ અપને જીવન મેં શાંતિ ઓર સુખ કો ચાહતે હેં । “ દુઃસ્વ-
પ્રતિકૂલાઃ ” જગત મેં કોઈ મી પ્રાણી દુઃસ્વકો નહીં ચાહતા હૈ, પ્રત્યેક
પ્રાણી દુઃસ્વકો પ્રતિકૂલ માનતા હૈ, વિષ ભક્ષણ કર લેગા કિન્તુ દુઃસ્વ

વિષ્ટાના કીડાની અને સ્વર્ગના અપાર વૈભવના ભોક્તા ઇન્દ્રની બન્નેની જીવવાની
ઇચ્છા અને મરણનું ભય બન્ને સમાન છે, કોઈ આહતુ નથી કે હું કરાલકાલના
ગાલનો ગ્રાસ બનું, કારણ કે ત્રણ લોકના અધિપતિ બનવાની અપેક્ષા પોતાનું
જીવન અધિક પ્રિય છે

લોકમા અમૃતનું પાન કરવું તેને બધાથી અધિક સુખકારી માનવામા
આવે છે, પરંતુ લોક તેનાથી પણ અધિક સુખ પોતાને સુખી હોવામા માને છે
પોતાને સુખી બનાવવા માટે લોક દરેક પ્રકારના સાધનોને અજમાવવામા કસર
કરતા નથી કેઇથી એ પ્રશ્ન કરવામા આવે કે-તમે તમારા જીવનમા શું આહો
છો, તો ત્યાથી તરત જ એવો ઉત્તર મળશે કે-અમે અમારા જીવનમા શાંતિ
અને સુખને આહિએ છીએ “ દુસ્વપ્રતિકૂલા ” પ્રત્યેક પ્રાણી હું બને આહતુ
નથી, પ્રત્યેક પ્રાણી હું બને પ્રતિકૂળ માને છે, એવું પાન કરી લેશે પણ હું બ

મોગના નહીં ચાહતા। “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈં ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈં। જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈં। ચાહે જિસ કિસી મી ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હી ભાવનાશીલ રહતે હૈં। ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કી રૂઝે થોડી સી મી ચિન્તા નહીં હોતી। રૂઝેકા મી કારણ યહ હૈં કિ યે “જીવિતુકામા” હૈં। શત વર્ષ કી આયુવાલે કો મી અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કી રૂચ્છા ધની હી રહતી હૈં। ચાહે ધની હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રક હો, વિદ્વાન હો યા મૂર્ખ હો, વીઘાયુક્ક હો યા અલ્પાયુક્ક હો કોઈ મી કયોં ન હો કોઈ યહ નહીં ચાહતા કિ મેરી મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મેં મરજાઝેં। સય હી અધિક સે અધિક જીને કો અમિલાપી રહા કરતે હૈં। થોડા સા મી શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મેં મર ન જાઝે” રૂઝે ક્યાલ સે અનેક પ્રકાર કો મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ ઘરેરહ કો ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગા જાતે હૈં।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવોં કી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા સમજના ચાહિયે, કયોં કિ ઉન્હેં હી અપને પ્રાણ ઘરેરહ પ્રિય હોતે હૈં। ઘેહી અપની જીવનયાત્રા કો નિર્વાહ કો લિયે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કિયા

લોગવનુ ચાહતા નથી. “અપ્રિયવધા પ્રિયજીવના” સંસારમા હોવાને મરણ અપ્રિય હોય છે હોવાને પોતાનુ જીવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, ભલે કેઈ પણ કેઈ ઉપાયથી પોતાના જીવનનુ સંરક્ષણ કરવામાં જ ભાવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિની તેને જરા પણ ચિંતા થતી નથી, તેનુ પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામા” છે, સો વર્ષની આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધી જીવનની ઉમ્મિદ બની રહે છે, ભલે તબગર હોય અગર નિર્ધન હોય, રાજા હોય કે રક હોય, વિદ્વાન હોય, કે મૂર્ખ હોય, વીઘાયુક્ક હોય કે અલ્પાયુક્ક હોય કેઈ પણ કેમ ન હોય પણ કેઈ એ નથી યાદતા કે માઝે મોત થાય, અર્થાત્ મરી જાઉં, બધા જ અધિકથી અધિક જીવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે. થોડુંક શારીરિક કષ્ટ આવવાથી “કહાવ્યું મરી ન જાઉં” એવાં ખ્યાલથી અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરેના ઉપચારમા યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાં લાગી જાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી હોવાની અપેક્ષાથી જ કરેલ સમજવાનુ છે, કારણ કે તેને જ પોતાનો પ્રાણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના જીવન યાત્રાના નિર્વાહ માટે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કરે છે, કુ-ખોશી ગભરાય છે, અને સદા

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં ગુરુકર્મણાં જીવિતમ્=અસંયમજીવિતં પ્રિયમ્=ઇષ્ટં ભવતિ, ન તુ લઘુકર્મણામ્, તતઃ કિમિત્યાહ-‘ત’-દિત્યાદિ, તત્તસ્માત્કારણાદ્ દ્વિષદં=દાસી-દાસકર્મકરાદિ, ચતુષ્પદં=ઠસ્તિહયગોમહિષ્યાદિ પરિગૃહ્ય=સ્વાયત્તીકૃત્ય તતસ્તદેવ દ્વિષદં ચતુષ્પદમ્ ઉપલક્ષણાદન્યદપિ હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્યાદિકં ત્રિવિધેન કરણભૂતેન યોગત્રિક-કરણત્રિકેણ, અથવાઽઽત્મના પરેણોભયેન, ચેતનાચેતનમિ-શ્રરૂપેણ વા અભિયુજ્ય, અભિ=આભિમુખ્યેન યુક્ત્વા=વન્ધરોવાદિના તત્તત્કલ્પિત-સંજ્ઞયા કશાદિપ્રહારેણ વાહયિત્વા=તેષુ તેષુ કર્મસુ નિયુજ્ય ગિજ્ઞયિત્વેત્યર્થઃ । અપિ ચ-તદેવ સંસિચ્ય ક્રયવિક્રયાદિવ્યવહારેણાભિવદ્ધ્ય, અત્રાપિ ‘ત્રિવિધેને’-ત્યસ્ય

કરતે હૈ । દુઃખોં સે વે ઘવડાતે હૈ । ઔર સદા સાંસારિક સુખોંકે અભિ-લાષી રહતે હૈ । સંયમી જીવોં મેં યે સવ પ્રવૃત્તિયાં ઘટિત નહીં હાતીં । યદપિ ઉન્હેં ભી અપને પ્રાણ પ્રિય હોતે હૈ પરન્તુ જવ સંયમ મેં કોઈ ઘોર પરીપહ ઉપસર્ગ આકર ઉપસ્થિત હો જાતે હૈ તવ વે અપને સંયમ કી રક્ષા કે લિયે અપને પ્રાણોં કી ભી પરવાહ નહીં કરતે હૈ । અસંયમી જીવોં કો હી અપના અસંયમ જીવન પ્રિય હોતા હૈ, કારણ કિ યે ગુરુકર્મીં હૈ । લઘુકર્મીં સંયમી જીવોં કો એસા જીવન પ્રિય નહીં હોતા । ઇનકી વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કી ઓર હી ઝુકતી રહતી હૈ । અસંયમજીવી રાત દિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ, આદિ કે વઢાને કી ઓર હી અધિકાધિક લાલાયિત હોતે રહતે હૈ । વે ચેતન અચેતન તથા મિશ્ર રૂપ પરિગ્રહ કી જિતની ભી માત્રા પ્રાપ્ત કરતે હૈ-ચાહે વહ થોડી હો યા અધિક હો ઉસી

સાસારિક સુખના અભિલાષી રહે છે સંયમી જીવોના આ બધી પ્રવૃત્તિઓ ઘટિત થતી નથી જો કે તેને પણ પોતાનો પ્રાણ પ્રિય હોય છે પરંતુ જ્યારે સંયમમાં કેઈ ઘોર પરિવહ ઉપસર્ગ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે ત્યારે તે પોતાના સંયમની રક્ષા માટે પોતાના પ્રાણોની પણ પરવાહ કરતા નથી

અસંયમી જીવોને પોતાનું અસંયમ જીવન પ્રિય હોય છે, કારણ કે તે ગુરુકર્મીં છે લઘુકર્મીં સંયમી જીવોને એવું જીવન પ્રિય નથી હોતું, તેની વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગની તરફ જ લાગેલ રહે છે અસંયમજીવી રાતદિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નોકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ આદિને વધારવામાં અધિકમાં અધિક મગ્ન રહે છે તે ચેતન, અચેતન તથા મિશ્રરૂપ પરિગ્રહની જેટલી પણ માત્રા પ્રાપ્ત કરે છે-ચાહે બધે થોડી હોય કે

‘મોગના નહીં જાહેતા’ । “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવના” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈ ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈ । જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈ । જાહે જિસ કિસી મી ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હી માવનાશીલ રહતે હૈં । ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કી રૂંઠે થોડી સી મી ચિન્તા નહીં હોતી । રૂંઠા મી કારણ યહ હૈ કિ યે “જીવિતુકામા” હૈં । શત વર્ષ કી આયુવાલે કો મી અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કી રૂંઠા યની હી રહતી હૈ । જાહે ધની હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રક હો, વિદ્વાન હો યા મૂર્ખ હો, વીર્યાયુક્ત હો યા અલ્પાયુક્ત હો કોઈ મી ક્યોં ન હો કોઈ યહ નહીં જાહેતા કિ મેરી મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મેં મરજાઝેં । સવ હી અધિક સે અધિક જીને કે અમિલાપી રહા કરતે હૈં । થોડા સા મી શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મેં મર ન જાઝેં” રૂંઠા ક્યાલ સે અનેક પ્રકારે મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ વગેરહ કે ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગ જાતે હૈં ।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવોં કી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા સમજના જાહિયે, ક્યોં કિ રૂંઠે હી અપને પ્રાણ વગેરહ પ્રિય હોતે હૈં । વેહી અપની જીવનયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કિયા

લોગવણ જાહેતા નથી. “અપ્રિયવધા પ્રિયજીવના” સંસારમા હોવોને મરણ અપ્રિય હોય છે હોવોને પોતાનું જીવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, બહે કેઈ પણ કોઈ ઉપાયથી પોતાના જીવનનું સંરક્ષણ કરવામાં જ માવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિની તેને જરા પણ ચિન્તા થતી નથી, તેનું પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામા” છે, એ વર્ષની આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધી જીવનની ઈચ્છા બની રહે છે બહે તવગર હોય જગત નિર્મન હોય, સભા હોય કે રક હોય, વિદ્વાન હોય, કે મૂર્ખ હોય, વીર્યાયુક્ત હોય કે અલ્પાયુક્ત હોય કોઈ પણ કેમ ન હોય પણ કોઈ એ નથી જાહેતા કે માઈ મોત થાય, અર્થાત્ હું મરી જાઉં, બધા જ અધિકથી અધિક જીવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે થોડુંક શારીરિક કષ્ટ આવવાથી “કહાય હું મરી ન જાઉં” એવાં જ્ઞાતથી અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરના ઉપચારમા યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાં લાગી બધ છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી હોવાની અપેક્ષાથી જ કરેલ સમજવાનું છે, કારણ કે તેને જ પોતાનો પણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના જીવન યાત્રાના નિર્વાહ માટે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કરે છે કુળોથી બહાર છે, અને સભ

તથા उनके अधिक मूल्य की अपेक्षा कम मूल्यवालों में मूल्यकी अपेक्षा से अल्पत्व है । इस से विपरीत बहुत्व समझ लेना चाहिये ।

असंयमी जीव चाहे परिग्रह की मात्रा उसके पास अल्प हो या अधिक हो फिर भी उसे उससे संतोष नहीं होता, वह उस अपने परिग्रह को क्रय विक्रय आदि उपायों द्वारा बढ़ाने की चेष्टा में ही रहता है । चतुष्पदादि जिस समय ठीक २ रास्ते पर नहीं चलते या किसी का नुकसान करते हैं, तब वह उन्हें मारता है, खाने पीनेको भी ठीक २ समय पर नहीं देता, उनके प्रति अशिष्ट शब्दों का प्रयोग करता है, और रस्सी आदि से बांधकर भी उनको छूटा या एकस्थान पर रखता है, उनकी गर्मी शर्दी की बाधा का भी ध्यान नहीं रखता, ये इतना बोझ ले जा सकते हैं या नहीं ? इसकी भी उसे चिन्ता नहीं होती । वह भविष्यत्-काल में उपभोग करने के ख्याल से द्रव्य की सदा रक्षा करता रहता है, और उसमें वह इतना आसक्तिशाली बन जाता है कि मन से भी वह इसे नहीं छोड़ना चाहता । सच बात है—जो आरम्भ और परिग्रह के पुष्ट करने में ही आसक्तचित्त हैं वे केवलप्रणीत धर्म से सदा विमुख रहते हैं । आरम्भ और परिग्रह के सद्भाव में जीवों की प्रवृत्ति सर्वथा सावध रहती है ।

થોડા અમયના રહેવાવાળામા કાળની અપેક્ષાથી, તથા તેના અધિક મૂલ્યના અપેક્ષા થોડા મૂલ્યવાળામા મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પત્વ છે એનાથી વિપરીત બહુત્વ અમલુ લેવુ નોંધએ

અસંયમી જીવ થોડે પરિગ્રહની માત્રા તેની પાસે ભલે થોડીક હાંચ અગર વધારે હોય તો પણ તેનાથી સંતોષ થતો નથી તે પોતાના પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામા જ રહે છે ચતુષ્પદાદિ જે વખતે ઠીક ઠીક રસ્તા ઉપર નથી ચાલતા અગર કોઈનુ નુકસાન કરે છે ત્યારે તે તેને મારે છે, ખાવા પીવાનુ પણ ઠીક ઠીક અમય ઉપર દેતા નથી, તેના પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરે છે, અને રસ્સી આદિથી બાંધીને પણ તેને છુટો અગર એક સ્થાન પર રાખે છે, તેની ગર્મી શર્દીની બાધાનુ પણ ધ્યાન નથી રાખતા, એ આટલો બોજ જેથી શકશે કે નહિ તેની પણ તેને ચિંતા થતી નથી તે ભવિષ્યત્કાળમા ઉપભોગ કરવાના દ્રવ્યની રક્ષા કરે છે, અને તેમા તે એટલો આસક્તિશાળી બને છે કે મનથી પણ તે તેને છોડવા આહતો નથી સાચી વાત છે — જે આરભ અને પરિગ્રહ પુષ્ટ કરવામા જ આસક્તચિત્ત છે તે કેવલપ્રણીત ધર્મથી સદા વિમુખ રહે છે આરભ અને પરિગ્રહના સદ્ભાવમા જીવોની પ્રવૃત્તિ સર્વથા સાવધ રહે છે.

सम्बन्धः, तस्य=अर्थारम्भः, तत्र दासीदासहस्तिहयादिपरिग्रहे, या=यास्वपि
माणा मात्रा=परिग्रहांशः, सा अल्पा वा=स्तोका अचिरकामभोगक्षमा वा, बहुधा=
दीर्घकालभोगक्षमा वा, यद्वा प्रमाणातो मूल्यता वाऽल्पा बहुका, अल्पत्व-बहुत्व
चापेक्षिके, अतः सर्वस्याऽप्यल्पत्व-बहुत्वयोः सम्भवात्, अल्पा बहुका वाऽवादिमात्रा
यस्य, तत्र=अर्थादीं असेयमजीवी गृह=मूर्च्छितः, कृताकृतलम्बालम्बापाशापात्रै-
र्प्रयितः सन् भोजनाय=भविष्यदुपभागाय तदनं स्वायत्तीकृत्य तिष्ठति=तत्रैवास्तको
भवति, न ततो मनसाऽप्युपरमत इत्यर्थः, आरम्भपरिग्रहास्तक क्वलिपिर्धर्म
धर्म न नृणाति, धर्मध्वजमन्तरण न सम्यग्दर्शनम्, तदभावे सम्यग्ज्ञानाभावः,
तदभाव मिथ्यात्वमिहृदिस्तथा च ससारपरिभ्रमणं प्राणिना भवतीति परिग्र-
हदो नात्महितेपी भवतीति धर्तुल्लकार्य ॥ सू० ५ ॥

मैं अपनी आवश्यकता की पूर्ति न समझ कर उसके बढ़ाने में ही मग्न बने
रहते हैं। परिग्रह में अल्पता और बहुता यहाँ पर दो तरह से प्रकट की
गई है—एक काल की अपेक्षासे और दूसरी मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा
से। थोड़ेसमय तक, अथवा अधिक समय तक परिग्रह का जीवों के भोग
और उपभोग करने के काम में जो आना वह काल की अपेक्षा से परिग्रह
में अल्पता या बहुता है, या जिनका मूल्य कम ज्यादा हो अथवा प्रमाण
से जिनमें कमती बढ़तीपना हो यह मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा से उन
में अल्पता तथा बहुता है, क्योंकि अल्पत्व, बहुत्व, ये दोनों सापेक्ष हैं।

चार नौकर आकरों एवं चार चतुष्पदादि कों की अपेक्षा दो नौकर
आकरों एवं दो चतुष्पदादिकों में प्रमाण की अपेक्षा से, उनके अधिक समय
तक रहने की अपेक्षा से थोड़े समय तक रहनवालों में काल की अपेक्षा से,

वधारे दोय तेभा ते पोवानी आवस्थित्यानी पूर्ति न समलने तेभा वधास्वभा न
भज्य ननी रहे ॥ परिग्रहमा अल्पता अने बहुता व्या ठेकावे जे प्रकारे प्रगट करे
छे ओठ ठाणनी अपेक्षाभी अने जील मूल्य अने प्रमाणनी अपेक्षाभी सोय
समय सुभी अथवा अधिक समय सुभी परिग्रहनु लोवने भाग अने उपभोग
करवाना काममा जे आवसु ते ठाणनी अपेक्षाभी परिग्रहमा अल्पता अने
बहुता छे अने तेनु मूल्य ओषु अधिक दोय, अथवा प्रमाणभी जेभा
वधघट पछु दोय जे मूल्य अजर प्रमाणनी अपेक्षाभी तेभा अल्पता अने बहुता
छे, कारण छे अल्पत्व, बहुत्व, जे जे सापेक्ष छे

चार नौकर आकरे अने चार चतुष्पदादिकोनी अपेक्षा जे नौकर आकरे अने
जे चतुष्पदादिकोभा प्रमाणनी अपेक्षाभी, तेभा अधिक समय सुभी रहेवानी अपेक्षाभी

મૂલમ્—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિદ્ધં સંભૂયં મહોવગરણં
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા
સે, અગારદાહેણ વા સે હજ્જઈ, ઇય સે પરસ્સઽટ્ટાણ કૂરાઈં કમ્માઈં
વાલે પકુવ્વમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટ સમ્ભૂત મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપદ્ધરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદ્વહ્યતે, ઇતિ
સ પરસ્યાર્થાય ક્રૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃસ્થેન સમ્પ્રદો વિપર્યાસ-
મુપૈતિ ॥ મૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતધનાત્, સદ્ગ્રહકાલાદા, એકદા =
એકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રૌ વા । યદ્વા લામાન્તરાયકર્મક્ષયો-
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસદ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-
ભોગોર્વરિતમ્ સમ્ભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સશ્ચિતં, સંવૃતં વા ભૂમ્યાદિનિસ્વા-
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ડસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકાર સે નષ્ટ
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ
સે ઇગયા’ ઇત્યાદિ ।

લામાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ મેં અનેક પ્રકાર કે
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કરાને મેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇસ
લામાન્તરાય કર્મ કે ઉદય મેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જવ ઇસકા ઉદય

કમાએલા દ્રવ્યની દરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે’ ઇત્યાદિ

લામાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે. તેના અભાવમાં અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય
લાભ કરાવવામાં કારણ નથી થતા આ લામાન્તરાય કર્મના ઉદયમાં સંગૃહીત
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે.

યોડસયમજીવી મુદ્દોડનર્યકરમર્યમુપાર્જયમર્યપરિરક્ષણં કરોતિ કિન્તુ તસ તદ્વનમનેકપ્રકારેણ નશ્યતીતિ વર્ણયસિ-‘તમો સં’ इत्यादि ।

ચીતરાગપ્રણીત ધર્મ મેં સર્વથા સાધ્ય પ્રવૃત્તિ કરને કા નિપેધ છે ।
 હસ વાત કો તથ હી સમજા જા સકતા છે કિ જય ચીતરાગપ્રણીત ધર્મ
 કો સુનને જાનને ઓર ઉસકે મનન કરને કા અવસર મિછે, પરંતુ જય
 વે સિદ્ધાન્ત કો સુનતે હી નહીં હૈ તથ હસ સિદ્ધાન્ત કો જાન મી કેસે
 સકતે હૈ । અતઃ જહાં પર હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ચાહુ હૈ, જિન્હેં અપને
 કર્તવ્ય કા માન હી નહીં હૈ, ઓર જો જાન વૂઝ કર મી લઘુદે મેં પડ
 રહે હૈ, વે કેવલિપ્રણીત ધર્મ કે સિદ્ધાન્ત કો અમી તક સમજે હી નહીં
 હૈ । જિન સિદ્ધાન્ત કે સમજે બિના સમક્ષિત જૈસી સુન્દર વસ્તુ કમી
 મી ઉનકે હાયમેં નહીં આસકતી । હસકે અમાય મેં સમ્યગ્જ્ઞાન જ
 અમાય ઓર ઉસકે અમાય સે મિધ્યાત્વ કી વૃદ્ધિ, ઉસકી વૃદ્ધિ સે સંસાર
 મેં પરિવ્રમણ એસે જીવોં કા અનિવાર્ય હૈ, અતઃ જો આત્મહિત કી કમન
 કરનેવાલે હૈ ઉનકા યહ ધર્મ હૈ કિ-વે પરિગ્રહ મેં ગૃહ ન બને । તર્મ
 સંસારસાગર સે ઉનકા આત્મોદ્ધાર હો સકતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

જો અસંયમજીવી હૈ ઓર પરિગ્રહ મેં હી આસક્તપરિણતિવાજ
 બના છુઆ હૈ વહ અનેક અનર્થોકા ઉત્પાદક વ્રજ્ય કે સંગ્રહ કરને મેં હી
 લવલીન રહતા હૈ । વહ યથાપિ કમાયે છુપ અપને હસ વ્રજ્ય કી હર દક

ચીતરાગપ્રણીત ધર્મમા સર્વથા સાધ્ય પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિપેધ છે. એ
 વાતને ત્યારે જ સમજી શકાય છે કે જ્યારે ચીતરાગપ્રણીત ધર્મને સાબળવા
 બાંધવા અને તેનું મનન કરવામાં અવસર મળે, પરંતુ જ્યારે તે સિદ્ધાન્તને
 સાબળતો જ નથી ત્યારે તે સિદ્ધાન્તને બાંધી પણ કેવી રીતે શકે માટે એ
 ઠેકાણે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ચાહુ છે જેને પોતાના કલબનુ પણ માન નથી
 અને એ બાંધી બેઠને પણ ખાણમાં પડે છે તે કેવલિપ્રણીત ધર્મના સિદ્ધાન્તને
 કશું સુધી સમજ્યા જ નથી જે સિદ્ધાન્તને સમજ્યા બિના સમક્ષિત જેવી મુદર
 વસ્તુ કોઈ વખત પણ તેના કાથમાં આવી શકતી નથી. તેના અભાવમાં
 સમ્યગ્જ્ઞાનનો અભાવ, અને તેના અભાવથી મિધ્યાત્વની વૃદ્ધિ, તેની વૃદ્ધિથી
 સંસારમાં પરિવ્રમણ એવા છવોને અનિવાર્ય છે. અતઃ જે આત્મહિતની
 કામના કરવાવાળા છે તેના એ ધર્મ છે કે તે પરિગ્રહમાં ગૃહ ન બને. ત્યારે જ
 સંસારસાગરથી તેનો આત્મોદ્ધાર થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

જે અસંયમજીવી છે અને પરિગ્રહમાં જ આસક્તપરિણતિવાળા બનેલ છે તે
 અનેક અનર્થોના ઉત્પાદક વ્રજ્યને સંગ્રહ કરવામાં જ તલલીન રહે છે તે એ કે પોતાના

મૂલમ્—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિટ્ટં સંભૂયં મહોવગરણં
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા
સે, અગારદાહેણ વા સે હજ્જઈ, ઇય સે પરસ્સઽટ્ટાણ કૂરાઈં કમ્માઈં
વાલે પકુવમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપહરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, ચિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદ્દહ્યતે, ઇતિ
સ પરસ્પાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન સમ્પ્રદો વિપર્યાસ-
મુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતધનાત્, સદ્ગ્રહકાલાદ્વા, એકદા =
એકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રૌ વા । યદ્વા લાભાન્તરાયકર્મક્ષયો-
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસદ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-
ભોગોર્વરિતમ્ સમ્ભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સશ્ચિતં, સંગૃતં વા ભૂમ્યાદિનિશ્ચા-
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ડસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકાર સે નષ્ટ
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ
સે ઇગયા ’ ઇત્યાદિ ।

લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ મેં અનેક પ્રકાર કે
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કરાને મેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇસ
લાભાન્તરાય કર્મ કે ઉદય મેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જવ ઇસકા ઉદય

કમાગેલા દ્રવ્યની દરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે ’ ઇત્યાદિ

લાભાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે તેના અભાવમા અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય
લાભ કરાવવામા કારણ નથી થતા આ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયમા સંગૃહીત
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે,

તમિત્સ્પર્ષઃ, મહોપકરણ=શિવદત્તતુલ્યદાદિસમૂહો મયતિ । તસ્ય સ ધનસમૂહો-
પ્યુપમોગાય ન મયતીત્યાહ-‘તદપી’-તિ, એકદ્વા=દુર્માગ્યોદયે, યદ્વા જ્ઞાન્તિ
‘દાયાદા’ દાય=વિમાઝ્યદ્રવ્યમાદદતિ=શુદ્ધન્તીતિ દાયાદા=સગાયાઃ, તસ્ય
ધનાર્ધનકષ્ટમનુમયતો જનસ્ય તદપિ દ્રીપાન્તરગમન-કુરારોહપર્વતારોહન-સન્યા-
દિસનન-રાજસેવા-કૃપિવાણિજ્યાદિરૂપસાધ્યવ્યાપારૈઃ સ્વપરસન્તાપકરૈરુપમોગાય
સમુપાર્જિતસશ્વિતવિવર્દિતં ધનમ્ ચિમ્બજતે=સ્વસ્વમાગગ્રહણાય વિમાતં કુર્વન્તિ,
પૃથક્કુર્વન્તીત્સ્પર્ષઃ, અપવા અદત્તશરા, અદત્તમેવ હરતીત્યદત્તશરમૌરો વા તસ્ય
ધનમપહરતિ=ચોરયતિ ।

રહતા હૈ તય અનેક પ્રકાર કે દ્રવ્યનાશ હોને કે ઉપાય મી જીવો કો
સ્વયમેષ પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈ । ઉસ સમય બુદ્ધિ મેં મી કુછ પેસી વિપરી-
તતા આજાતી હૈ જિસસે દ્રવ્ય કે બ્યય હોને કે ઉપાય મી અઘ્ઘે ઓર
ઉપાદેય પ્રતીત હોને લગતે હૈ । સંસાર મેં કૌન યહ બાહતા હૈ કિ મેરા
યહ દ્રવ્યાવિક નષ્ટ બિનષ્ટ હો જાય ? પરન્તુ સબ કુછ વિચારતે હુપ મી
યા ઉસકી રક્ષા કે ઉપાય કરતે હુપ મી જો ઝીવ રાજા સે રક હો જાતે
હૈ વે હસી ઘાત કે પ્રબલ પ્રમાણ હૈ ।

હસ કર્મ કે ક્ષયોપશમ હોને પર જિસ પ્રકાર જીવોકો દ્રવ્ય કે
આને કે અનેક ઉપાય ઇવં દ્વાર પ્રાપ્ત હોતે હૈ ઇસી પ્રકાર હસકે ઉદય મેં
ઉસકે વિનાશ કે અનેક દ્વાર મી અઘ્ઘે મિલ જાતે હૈ, યહી ઘાત સૂત્રકાર
હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કર રહે હૈ—

ઉસ અર્ધસમદશીલ વ્યક્તિ કે પાસે લામાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ

અમારે તેના ઉદય રહે છે ત્યારે અનેક પ્રકારના દ્રવ્યનાશ હોવાના ઉપાયો પણ
હોવાને સ્વયમેવ પ્રાપ્ત થાય છે તે સમય બુદ્ધિમાં પણ કોઈ એવી વિપરીતતા
આવી નથી કે જેનાથી દ્રવ્યનો બચ્ત હોવાના ઉપાયો પણ સાસ અને ઉપદેશ
પ્રતીત થવા લાગે છે સત્સારમાં કોણ એ ઘાટે છે કે માત્ર આ દ્રવ્યાવિક નષ્ટ
નિષ્પટ થાય, પરન્તુ ચારે બાજુથી વિચારતા પણ તેની રક્ષાના ઉપાયો કરવા ઉપ
પણ એ હવે સંભાળી રહ થાય છે તે આ વાતનું પ્રબલ પ્રમાણ છે.

આ કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે પ્રકારે હોવાને દ્રવ્ય અદ્યવાના અનેક
ઉપાય અને દ્વાર પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રકારે તેના ઉદયમાં તેના વિનાશના અનેક
દ્વાર પણ તેને મળી રહે છે એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રકટ કરે છે—

તે અર્ધસમદશીલ વ્યક્તિની પાસે લામાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી

હોને પર અનેક પ્રકાર કા ભોગ ઉપભોગ સે વાકી વચા હોને કે કારણ ધનાદિ કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ “ ધનકો ધન કમાતા હૈ ” હસ લોકોક્તિ કે અનુસાર ઉસકે સંગૃહીત દ્રવ્ય સે ફિર અનેક ઉપાયોં દ્વારા ઉસે દ્રવ્યાદિકી પ્રાપ્તિ હોને લગતી હૈ । ભોગ ઔર ઉપભોગ કી આવશ્યકતાએં બી જૈસા જૈસા લાભ હોતા હૈ વૈસે ૨ વધતી જાતી હૈ, ઔર ઉનકી પૂર્તિ કરનેમેં બી દ્રવ્યાદિક કા વ્યય હોને લગતા હૈ । ભોગવિલાસ કી સામગ્રી જુટાને મેં તથા મૌજ મજા કરને મેં લાભાનુસાર દ્રવ્ય કા વ્યય હોતા હૈ । આવશ્યકતા કી પૂર્તિ સે અથવા લેન-દેન કે વ્યવહાર સે અવશિષ્ટ દ્રવ્ય કો લોગ, યા તો કિસી વેંક મેં જમા કરા દેતે હૈ, યા જમીન મેં ઉસે ગાડ કર રખ દેતે હૈ । જમીન મેં ન ગાડે તો ઉસે તિજોરિયોં મેં ભર કર બી ઇક જગહ રચદેતે હૈ । ઉન્હેં એસે અપને સગોત્રિયોં કા સમાગમ મિલતા હૈ જો ઇન્હેં રાત દિન દુઃખી કિયા કરતે હૈ । અવિભક્ત કુટુંબ હોનેસે કિસી વાનકો લેકર પરસ્પર મેં જવ કુછ અનવનસી હો જાતી હૈ તવ આપસ મેં અલગર હોને કી પરિસ્થિતિ આતી હૈ । જવ વિભક્ત હોતે હૈ તવ વે સમસ્ત ધનકો વટવા લેતે હૈ । સગોત્રિયોં કા સમાગમ ધની વ્યક્તિયોં કો કદાચિત્ અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા બી મિલ જાવે ઔર વે ધન કો અર્જન કરને મેં કષ્ટ કા અનુભવ કરનેવાલે ઉસ વ્યક્તિ કે ઉસ દ્રવ્ય કો

અનેક પ્રકારના લોગ અને ઉપભોગથી બાકી બચવાને કારણે ધનાદિનો સંગ્રહ થાય છે “ ધનથી ધન પ્રાપ્ત થાય છે ” આ લોકોક્તિને અનુસાર તેના સંગૃહીત દ્રવ્યથી પછી અનેક ઉપાયો દ્વારા તેને દ્રવ્યાદિકની પ્રાપ્તિ થવા લાગે છે. લોગ અને ઉપભોગની આવશ્યકતાઓ પણ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ વધતી જાય છે અને તેની પૂર્તિ કરવામા પણ દ્રવ્યાદિકનો વ્યય થવા લાગે છે લોગ-વિલાસની સામગ્રી મેળવવામા તથા મોજમજા કરવામા લાભાનુસાર દ્રવ્યનો વ્યય થાય છે આવશ્યકતાની પૂર્તિથી અથવા લેણદેણના વ્યવહારથી અવશિષ્ટ દ્રવ્યને લોક અગર કોઈ બેકમા જમા કરાવે છે અગર જમીનમા તેને દાટીને રાખે છે જમીનમા ન દાટે તો તેને તિજોરીઓમાં ભરીને પણ એક જગ્યાએ રાખે છે. તેને એવા પોતાના સગોત્રિયોનો સમાગમ મળે છે જે તેને રાતદિવસ દુઃખી કરે છે અવિભક્ત કુટુંબ હોવાથી કોઈ વાતને લઈને પરસ્પરમા ન્યારે કાંઈક અણ બનાવ થાય છે ત્યારે આપસ આપસમા અલગ અલગ થવાની તૈયારી બને છે. ન્યારે વિભક્ત થાય છે ત્યારે તે સમસ્ત ધનને વહેચી દે છે મગોત્રિયોનો સમાગમ ધની વ્યક્તિઓને કદાચિત્ અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પણ મળી આવે,

જો ઘડી કઠિનતા સે વસને ધીપાન્તરગમન સે, કુરારોહ પર્વતોં કે ઘનસે, સ્થાનિ મેં પહે કુળ ઉમકે સ્થોદને સે, રાજા કી સેવાસે, અપને ઇંચ પર કો સન્તાપ કરનેવાલે કૃષિ-ગ્રાણિજ્યાદિ સ્થ સાધ્યાપારોં સે પેદા કિયા હૈ સચિત કિયા હૈ ઓર ત્યાજ આદિ દ્વારા કો ઇદિ કી હૈ મહે હી ચિમાજિત ન કરે; પરન્તુ ચોરોં સે દ્રવ્ય રક્ષા કરના ઇક મુશ્કિલ કાર્ય હૈ । ધની વ્યક્તિયોં કે અનેક મિત્ર શત્રુ હો જાતે હૈ । જિનકા વસસે કામ નિકલતા રહતા હૈ વે ઇ મિત્ર, ઓર જિનકા વસસે કામ નહીં નિકલતા વે વસકે શત્રુ હો જાતે હૈ । જો મિત્ર હોતે હૈ વે મી કાલાન્તર મેં શત્રુ, ઓર જો શત્રુ હોતે હૈ મી કાલાન્તર મેં મિત્ર બનતે હુણ દેસે જાતે હૈ । અત જો પહેલે ઇ યન કર શત્રુ યન જાતે હૈ વે સય ઇસકા મેદ માથ જાનકર ચોરોં કો રીતિ સે સય પ્રકાર કી ઇસકી પ્રવૃત્તિ સે પરિચિત કરા દેતે હૈ ઓર અ મેં ઇસે લુટવા દેતે હૈ । ક્ષણ મર મેં યહ અમીર સે ગરીબ બન જાતા । યદિ પુણ્યોદય સે ચોરોંકો મી ઇસકે દ્રવ્યકો ચુરાને કા સાહસ ન જાત હો ઓર વે ઇસકે ઉપર ધાક ન મી પાડે તો મી અધર્મી રાજા નજર સે દ્રવ્યકી રક્ષા કરના મુશ્કિલ હી હૈ ।

અને તે ધનને ઉપાજન કરવામા કષ્ટનો અનુભવ કરવાવાળા તે વ્યક્તિએ દ્રવ્યને જે ઘણી સુરક્ષાથી રક્ષાપાત્રથી, મહાન પર્વતોના ઉચ્ચ ધનથી, ખાણમાં પડેલાને તેના ખોદવાથી સલાની સેવાથી અને પાતાને તેમજ બીજાને સત્તા કરવાવાળી ખેતી-વાણિજ્યાદિના સાવચ અપારથી પેદા કરેલ છે સચિત કરેલ છે અને બ્યાજ આદિ દ્વારા જેની વૃદ્ધિ કરેલ છે બધે તે વિભાજિત ન કરે, પરંતુ ચોરથી દ્રવ્યની રક્ષા કરવી એક સુરક્ષા કાર્ય છે. પૈસાદાર વ્યક્તિ બોના અનેક મિત્રો અને શત્રુઓ યાય છે જેનાથી જેનું કામ થાય છે તે મિત્ર, અને જેનાથી જે કામ બનતું નથી તે શત્રુ બની જાય છે જે મિત્ર હોય છે તે પણ કાલાન્તરમા શત્રુ અને જે શત્રુ હોય છે તે પણ કાલાન્તરમા મિત્ર બને છે તેમ દેખવામા આવે છે માટે જે પહેલા મિત્ર બનીને શત્રુ બને છે તે બધા તેના બેદરબાવ જણાને ચોરને ગ્રાસ રીતિથી સર્વ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી પરિચિત કરી આપે છે અને અન્તમા તેને કુરાવે છે યજ્ઞબરમા તે અમીરથી ગરીબ બની જાય છે કદાચ પુણ્યોદયથી ચોર તરફથી તેનું દ્રવ્ય ચોરાવાનું કદાચ આહસ ન બને, અને તેઓ તેની તરફ થા પણ ન પાડે તો પણ અધર્મી સલાની નજરથી દ્રવ્યની રક્ષા થવી સુરક્ષા છે

અથવા રાજાનઃ=નૃપાસ્તસ્ય ધનં વિલુમ્પન્તિ=વિલુપ્તન્તિ અભિયોગદ્વારેણ વલા-
લાત્તદ્ધનં ગૃહ્ણન્તીત્યર્થઃ । અથવા તસ્યાર્થગૃહ્ણસ્ય ધનં સ્વયમેવ નશ્યતિ, વાણિજ્યાદૌ
વહુમૂલ્યેન ક્રયણાદલ્પેન વિક્રયણાદિત્યર્થઃ । ‘વિનશ્યતિ’ રાજકોશે ‘વૈદ્ધ’
પદવાચ્યે સંસ્થાપિતં, ભૂમ્યાદૌ વા નિશ્ચાતં તસ્ય રાજ્ઞઃ પરિવર્તનેનાપગતાત્, ભૂમૌ યત્ર
નિશ્ચાતં દીર્ઘકાલેન તતોડપગમાદ્વા વિનશ્યતિ=સ્વયમેવ નષ્ટં ભવતીત્યર્થઃ ।

રાજા કી જબ લોલુપ દષ્ટિ ઇસકે ધન પર પડતી હૈ તબ વહ જવર્દસ્તી
કોઈ એસા અભિયોગ લગા દેતા હૈ કિ જિસસે ડસ વિચારે કા વહ ધન
દેખતેર લુટવા લિયા જાતા હૈ ।

યદિ ધાર્મિક રાજાકે રાજ્ય મેં વસને કા ધનીકો સૌભાગ્ય મિલતા
હૈ ઓર ડસકી વજહ સે ડસકે ધનકી દર ંક પ્રકાર સે રક્ષા મી હોતી
રહતી હૈ તો મી અધિક સંગ્રહ કી લાલસા સે યા ડસકી વૃદ્ધિ કી તીવ્ર
ભાવનાસે જબ ધની ડસે કિસી વ્યાપાર મેં લગા દેતા હૈ તો તેજી મંદી કે
સમય ક્રય વિક્રય કરને સે અચાનક જબ વ્યાપાર મેં ઘાટા આજાતા હૈ
તબ વહ કમાયા હુઆ દ્રવ્ય સહસા હાથ સે નિકલ જાતા હૈ, ઓર વહ
ધની વ્યક્તિ ફિર હાથ મલતે હી રહ જાતા હૈ । વ્યાપાર મેં યદિ પુણ્ય
કર્મ કે ડદ્ય સે અચ્છા લાભ મી હો જાતા હૈ, તો લોગ ડસે બૈકોં મેં
જમા કર દેતે હૈ યા ડસે જમીન વગેરહ મેં ગાડ દેતે હૈ । વહાં ડસકી
સુરક્ષા હોતી હો તો મી જબ રાજ્ય કા પરિવર્તન હોતા હૈ તબ બૈકે મી
પ્રાયઃ લુટ જાતી હૈ, અથવા જબ વહ ડસ ભૂમિ સે વહુત સમય કે વાદ ગાડે

રાજાની ન્યારે લોલુપ દષ્ટિ તેના ધન ઉપર પડે છે ત્યારે તે જખરાઈથી
કોઈ એવો અભિયોગ લગાવે છે કે જેનાથી તે બિચારાનું તે ધન દેખતા
દેખતામા લુટાવી લઈ જાય છે

કદાચ ધાર્મિક રાજાના રાજ્યમા વસવાનો ધનીને સૌભાગ્ય મળે છે, અને
તેના તરફથી તેના ધનની દરેક પ્રકારે રક્ષા પણ થાય છે તો પણ અધિક સંગ્ર-
હની લાલસાથી અગર તેની વૃદ્ધિની તીવ્ર ભાવનાથી ન્યારે પૈસાદાર તે ધનને
કોઈ વ્યાપારમા લગાવી દે છે તો તેજી મંદીના સમયમા કય વિક્રય કરવાથી
અચાનક ન્યારે વ્યાપારમા નુકસાન આવે છે ત્યારે તે કમાએલું ધન સહસા હાથથી
શુભાવી દે છે, અને પછી તે પૈસાદાર વ્યક્તિ હાથ ધસતો થઈ જાય છે, વ્યાપારમા
કદાચ પુણ્ય કર્મના ઉદયથી સારો લાભ પણ મળે છે તો લોક તેને બેકોમા જમા
કરાવી દે છે, અગર તેને જમીન વિગેરેમા દાટી દે છે તે જગોએ તેની સુરક્ષા
બને તો પણ ન્યારે રાજ્યનું પરિવર્તન થાય છે ત્યારે બેકોને પણ લુટવામા
આવે છે, અથવા ન્યારે તે ભૂમિથી બહુ સમય બાદ દોડેલા સ્થાનથી સ્થાનાન્તરિત

कथञ्चित्सुरक्षितमपि तद्धन मास्यद्रव्यसुवर्णरजतादिकम् अगारदाहन-
गेहदाहन दधते, इत्यान्तिकारणैरुपाजितस्याप्यर्थस्य यद्विधानां भवति, अन्तराय-
कर्ममावल्यनापार्जयितुरुपमागाय नैव भवतीत्यर्थः । उक्तञ्च—

“ चत्वारो धनदायका, धर्माग्निनृपतस्कराः ॥

तत्र ज्येष्ठापमानेन, प्रथमं कुप्यन्ति साधरा ॥ १ ॥ इति ।

दृष्टं स्थान से स्थानान्तरित हो जाता है तब उसका मिलना भी मुश्किल
हो जाता है । इस तरह से भी उसका विनाश होते देख नहीं लगती ।

कथञ्चित् कासा, द्रव्य, सुवर्ण, रजतादिरूप वह धन घर में सुरक्षित
भी रहे तो भी अचानक घरमें आग लगजाने से उसका भी विनाश
हो जाता है । उस समय यद्रुमृत्त्य वस्तुओं का कर्म मिल जाती है ।
आग से बुझाने के लिय आये दृष्ट लोगों के साथ भी उस समय जो
भी वस्तु लगती है वे उस उठाकर छे जाते हैं । इस प्रकार इन पूर्वोक्त
कारणों से उपाजित द्रव्य का अन्तराय कर्म के प्रपल उदयमें अनेक रीति
से विनाश होते देख नहीं लगती । नीतिकार भी यही बात कहते हैं—

“ चत्वारो धनदायका, धर्माग्निनृपतस्करा ।

तत्र ज्येष्ठापमानेन, प्रथमं कुप्यन्ति साधरा ॥ १ ॥ ”

धन के हिस्सेदार चार हैं । १ धर्म, २ अग्नि, ३ राजा, और ४ चोर ।
जिस धनका सदुपयोग धर्म में नहीं होता है उस धनका अग्नि, राजा
आर चोरों के द्वारा विनाश और अपहरण होता है ॥ १ ॥

धन छे त्याहे तनु भगवु पण मुक्कवणनी बाय छे आवी रीते पण तने
विनाश जायभा बार वाजती नथी ।

कार्थ पण नकारे ठान्ना, द्रव्य, सुवर्ण, रजतादि रूप त धन धरभा मु-
क्षित रहे तो पण अनानक धरभा आ । वागवाधी तेने पण विनाश धर बाय
छे तथा वधते पण द्रुमृत्त्य वस्तुओं का कर्म धार छे आनने आउयभा अपेय
वाकिल्ल जायभा पण ते वधते ते वस्तु पण छे त पण उअधी लर बाय छे न
प्रकार न पूर्वोक्त कारणों उपाजित द्रव्य का अन्तराय कर्म का प्रपल उदयभा
अनेक रीतिसे विनाश जायभा बार वाजती नथी । नीतिकार पण को बात कहे छे—

चत्वारो धनदायका, धर्माग्निनृपतस्करा ।

तत्र ज्येष्ठापमानेन प्रथमं कुप्यन्ति साधरा ॥ १ ॥

धनका हिस्सेदार चार छे १ धर्म, २ अग्नि, ३ राजा अने ४ चोर ।
धनका सदुपयोग धर्म में नहीं होता है धनका अग्नि, राजा अने चोरों द्वारा
विनाश अने अपहरण जाय छे ॥ १ ॥

વહુપ્રકારૈઃ સ ધનસશ્ચયકારી પરસ્યાર્થાય=અન્યાર્થમ્, દાયાદાઘ્યમેવ,
કૂરાણિ=શિરશ્ચેદ-ગલ્ફર્તનાદીનિ કર્માણિ=દુરાચરણાનિ ગ્રાહઃ=કર્તવ્યશન્યચેતાઃ
પ્રકુર્વાણઃ=પ્રકર્ષેણ વિદધાનઃ સન્, તેન કટુકર્મવિપાકોદયેન દુઃસ્વેન સંમૂઢઃ=પરિ-
હૃતમતિઃ રાગદ્વેષાભિભૂતતયા કાર્યાકાર્યમજાનન્ વિપર્યાસમ્=વૈપરીત્યં મિથ્યાત્વમ્
ઉવૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, અર્થાર્યમનર્થકારી ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ મૂં ૬ ॥

મૂઢાઃ સુસ્વેપ્સવો દુઃસ્વમવાપ્નુવન્તીતિ ન મયા સ્વબુદ્ધ્યોચ્યતે, ઇતિ સુધર્મા
સ્વામી કથયતિ-‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-મુણિણા હુ એયં પવેઙ્યં, અણોહંતરા એ, નો ય
ઓહં તરિત્તે, અતીરંગમા એ નો ય તીરં ગમિત્તે, અપારં-
ગમા એ, નો ય પારં ગમિત્તે, આયાણિજ્જં ચ આયાય તંમિ
ઠાણે ન ચિટ્ટિ વીતહં પપ્પડ્ધેયન્ને તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ટિ ॥ સૂં ૭ ॥

છાયા-મુનિના હુ એતત્પ્રવેદિતમ્, અનોવન્તરા એતે ન ચૌધં તર્તુમ્, અતીરંગમા
એતે, ન ચ તીરં ગન્તુમ્, અપારંગમા એતે, ન ચ પારં ગન્તુમ્, આદાનીય ચાદાય
તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ, વીતથં પ્રાપ્યાસ્થેદગ્નસ્તસ્મિન્ સ્થાને તિષ્ઠતિ ॥ મૂં ૭ ॥

જિસ ધનકા અન્તિમ યહ પરિણામ હોતા હૈ ઉસ ધનકો સંચિત
કરનેવાલે અજ્ઞાન મેં પડે હુએ હૈં “પરસ્યાર્થાય” સિર્ફ દાયાદ વગેરહ
દૂસરોં કે ઉપભોગ કે લિયે હી ઉસકે સંગ્રહાર્થ ભયંકર સે અયંકર ગલ-
કર્તન, શિરશ્ચેદન જૈસે નિંદિત દુરાચારોં કો કરતા હુઆ તજ્જન્ય કટુક
કર્મકે વિપાકજનિત દુઃસ્વ સે સંતસચિત્ત બન કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે વિવેક
સે રહિત હોકર મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપને કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ અર્થાત્
વહ ધનકે લિયે અનેક અનર્થ કરતા હૈ ॥ સૂં ૬ ॥

વાલ અજ્ઞાની સુસ્વ કી ચાહના કરતે હૈં પરન્તુ ઉન્હેં દુઃસ્વ કી હી પ્રાપ્તિ
હોતી હૈ, ઇસ વિષય મેં શ્રીસુધર્મા સ્વામી અપની નિજી કલ્પના કા નિષેધ

જે ધનનો અન્તિમ આ પરિણામ થાય છે તે ધનનો સચિત કરવાવાળા
અજ્ઞાનમા પડેલા છે “પરસ્યાર્થાય” શ્લોક દાયાદ વિગેરે બીજાના ઉપભોગ માટે
જ તેના સંગ્રહાર્થ લય કરથી લય કર ગલકર્તન, શિરશ્ચેદન જેવા નિંદિત દુરા-
ચારોને કરીને તજ્જન્ય કટુક કર્મના વિપાકજનિત દુઃખથી સંતસચિત્ત બની
કર્તવ્યાકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત બની મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપણાને પ્રાપ્ત
થાય છે, અર્થાત્ તે ધન માટે અનેક અધર્મ કરે છે ॥ સૂં ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની આહના કરે છે પરંતુ તેને દુઃખની જ પ્રાપ્તિ થાય
છે, આ વિષયમા શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાની નિજી કલ્પનાનો નિષેધ કરીને કહે છે-

ટીકા—‘મુનિને’—સ્યાતિ । ‘મુનિના’ સંસારસ્ય ત્રિકાલ્પવત્યા મનુતે ય સ મુનિઃ=યાતિકર્મક્તુપ્રયત્નયસમુદ્ભૂતાત્મસ્વરૂપસ્તીર્યદ્દરગણધરાદિ, તેન, દુઃસ્થિ-યન ઇતદ્=પૂર્વાક્ત વક્ષ્યમાણ વા, તત્ર પૂર્વાક્ત પરિગ્રહાસક્તિજન્નિતસંસારપરિભ્રમ-સ્વરૂપમ્, અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રેત્યાદિક ચ પ્ર=અર્પણેણ વેદિતં=દ્વાદશપર્પદિ પ્રસપિતમ્ મિશ્રમિશ્રસ્વરૂપેણ કથિતમિત્યર્થ । વક્ષ્યમાણ પ્રવદિતમાહ—‘અનાધન્તરા’ ઇત્યાદિ, કરતે હુમ્ કહતે હૈં—‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

“મુનિ” યહ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુ સે નિપ્પજ્ઞ હુઆ હૈં । ‘મન્’ ધાતુ કા અર્થ જાનના હૈં । જો સંસારી કી ત્રિકાલસંબધી સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ અવસ્થાઓ કો જાનતા હૈં ઉસકા નામ મુનિ હૈં, યાતિયા કર્મો કો ક્ષપ્ત હોને સે જિન્હોં કો કેવલજ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કો નિજરૂપ કી પ્રાપ્તિ હો જુકી હૈં તેસે તીર્થકર, ગણધરાદિ દલ યહા ‘મુનિ’ શબ્દ સે લિયે ગય હૈં । અપની નિજી કલ્પના કા પરિહાર કરતે હુમ્ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમેં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતા હૈં, તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃદ્ભીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (હસી ઉદ્દેશ ક પ્રથમાદિ સૂત્રોં) મેં જો કહા ગયા હૈં યહ સમસ્ત વિષય, અથવા જો બી કુછ આગે કહા જાવેગા વહ સય મેંને અપની નિજબુદ્ધિ સે કલ્પિત કર નહીં કહા હૈં, કિન્તુ તીર્થકરાદિક દેવોંને અપની ૨ પરિપદ્ મેં પૃથક્ પૃથક્ રૂપ સે તેસાહી કહા હૈં । ઉનકી પરંપરા સે જિસ પ્રકાર યહ વિષય વસા મુણિણા ઇત્યાદિ.

“મુનિ” આ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુથી નિપ્પજ્ઞ થયે છે । ‘મન્’ ધાતુનો અર્થ—“જાણવું” થાય છે જે અનાદીની ત્રિકાલસંબધી સમસ્ત ગુણપર્યાયરૂપ અવસ્થાઓને જાણે છે તેનું નામ મુનિ છે । યાતિયા કર્મને ક્ષય પોવાથી જેને કેવલ જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્માના નિરૂપની પ્રાપ્તિ થયેલ છે એવા તીર્થકર જલુધસદિ દેવ આ ઠેકાણે મુનિ-શબ્દથી લેવામા આવેલ છે । પાતાની નિજ કલ્પનાને પરિહાર કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે—પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમાં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે તથા અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃદ્ભીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (આ ઉદ્દેશના પ્રથમાદિ સૂત્રોં)માં જે કહેવામા આવેલ છે તે સમગ્ર વિષય, અને જે આ ૧૧ કહેવામા આવેલો તે બધા મેં પાતાની નિજ બુદ્ધિથી કલ્પના કરી કહ્યું નથી, પણ તીર્થકરાદિક દેવોંના પાતપોતાની પરિવદના પૃથક્ પૃથક્ રૂપથી એમ જ કહેલ છે, તેની પરંપરાથી જે પ્રકારે આ વિષય વાસ્તવે

અનોઘન્તરા: = ઓઘો દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધ: - દ્રવ્યોઘો નદીપૂરાદિક: , ભાવોઘોઽષ્ટવિધં કર્મસંસારો વા યેન યત્ર દુ:ખિતો ભવતિ પ્રાણી, તમોઘં તરન્તીત્યોઘન્તરા: , ન ઓઘન્તરા અનોઘન્તરા: = મિથ્યાદર્શિન: કુતીર્થિકાદય: પાર્શ્વસ્થાદયો વા, જ્ઞાનક્રિયાપ્રવહણવિકલા: , ઓઘતરણવ્યગ્રમનસોઽપિ તરણોપાયવિવેકાભાવાન્ન તત્તુ પ્રભવન્તિ તદેવાહ-

આ રહ્યા છે તે અનુસાર મેંને બી યહ પ્રતિપાદિત કિયા છે અતઃ મૂલ મેં યહ સર્વજ્ઞોક્ત હોને સે અપ્રમાણભૂત નહીં માના જા સકતા ।

વશ્યમાણ વિષય મેં સૂત્રકાર કહતે હૈં- ‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, ‘અનોઘન્તર’ શબ્દકા અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । જો ઓઘન્તર નહીં હૈ, વે અનોઘન્તર હૈ । દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદ સે ઓઘ દો પ્રકાર કા હૈ, નદી કા પૂર વગેરહ દ્રવ્ય-ઓઘ હૈ, અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર, ભાવ-ઓઘ હૈ । જિસકે દ્વારા પ્રાણી જહાં પર દુ:ખિત હોતા હૈ ડસ કા નામ ઓઘ હૈ, ડસ ઓઘ કો જો તર જાતે હૈ-પાર કર જાતે હૈ, વે ઓઘન્તર કહે જાતે હૈ । ઇનસે જો વિપરીત હૈ, વે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક યા પાસ-ત્થાદિક જીવ હૈ, ક્યોં કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ-ઓઘ કો પાર નહીં કરતે હૈ । ભાવ-ઓઘ કો પાર કરને કે લિધે જ્ઞાન ઓર ક્રિયા રૂપી પ્રવહણ (નૌકા) કી જરૂરત હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર મનુષ્ય વિના નૌકા કે સમુદ્ર કે પાર નહીં જા સકતા ડસી પ્રકાર ડસ સંસાર યા અષ્ટવિધ કર્મ રૂપી સમુદ્રકા પાર કરના બી વિના જ્ઞાન ઓર ક્રિયાકે સર્વથા અસંભવ

આવે છે તે અનુસાર મે પણ આ પ્રતિપાદન કર્યું છે માટે મૂળમાં આ સર્વ-જ્ઞોક્ત હોવાથી અપ્રમાણભૂત માની શકાતું નથી

વશ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહે છે- ‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ અનોઘન્તર શબ્દનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે જે ઓઘન્તર નથી તે અનોઘન્તર છે દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી ઓઘ બે પ્રકારે છે નદીનું પૂર વિગેરે દ્રવ્ય ઓઘ છે અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર ભાવઓઘ છે જેના કારણે પ્રાણી જે જગ્યોએ હુબ્બી થાય છે તેનું નામ ઓઘ છે તે ઓઘ જે તરી બંધ છે- પાર કરે છે તે ઓઘન્તર કહેવાય છે તેનાથી જે વિપરીત છે તે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક અગર પાસ-ત્થાદિક જીવ છે, કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ ઓઘને પાર કરતા નથી ભાવ ઓઘને પાર કરવા માટે જ્ઞાન અને ક્રિયારૂપી પ્રવહણ (નૌકા) ની જરૂરત પડે છે જેવી રીતે મનુષ્ય જહાજ વિના સમુદ્ર પાર કરી શકતો નથી તે પ્રકારે આ સંસાર અને અષ્ટવિધકર્મરૂપી સમુદ્રનો પાર કરવો તે જ્ઞાન અને ક્રિયા વગર સર્વથા અસંભવ છે. સમ્યક્જ્ઞાન અને

ન ચૌધમિતિ, ઓધ તર્તુ ન વ સમર્થા મવન્તીત્યર્થઃ સ્પષ્ટઃ । કિં વ-એતે 'અતીરંગમા' તીરં ન ગચ્છન્તીત્યતીરંગમા', એને ત્રીતરાગમપણીતરત્નત્રયસમારાધનામાધ્વાત્ તીરં ગન્તુ સમર્થા ન મવન્તીત્યર્થ, અપિ વ-'અપારંગમા' પારસ્તટસ્તં ગચ્છન્તીતિ પારગમા', ન પારગમા અપારંગમા, સમ્યગુપદશામાવાત્પારગમનમનસોઽપિ ઉત્સુપ્રમરૂપનાત્, હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ધારિત્ર વિકલ જીવોં કો હી મિથ્યાદષ્ટિ કહા ગયા હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કે અભાવ સે સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ મી સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અતઃ ઉસે યહા પ્રથક્ રૂપસે નહીં કહા ।

મિથ્યાદષ્ટિ જીવ યજ્ઞપિ ઓધ કો પાર કરને કે લિયે લાલાયિતમન રહતે હૈં પરન્તુ ડનકે પામ પાર કરનેકા ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકકા અભાવ હોને સે વે ઉસે પાર નહીં કર સકતે । યહી ઘાત "ન ચૌધ તર્તુ" હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં । સંસારરૂપ સમુદ્ર સે પાર હોને કે લિયે સર્વ પ્રથમ સમક્ષિત કી જરૂરત પડતી હૈ । શાસ્ત્ર મેં સમક્ષિત કો લેખદિયા કી ઉપમા કી ગઈ હૈ । જિસ પ્રકાર વિના લેખદિયા કે નૌકા જીવોં કો જલાશય સે પાર નહીં ઉતાર સકતી, ઉસી પ્રકાર હસ સંસારરૂપ સમુદ્ર સે જીવ વિના સમક્ષિત કો પાયે કમી મી પાર નહીં ઉતાર સકતા । સમક્ષિત કે વિષય મેં પીછે વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ।

મિથ્યાદષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્ર કે તીર કો ઓર પાર કો પાનેકે લિયે અસમર્થ હસલિયે હૈં કિ-યે "અતીરંગમ" ઓર "અપારંગમ" હૈં ।

સમ્યક્ધારિત્ર વિકલ જીવે ને મિથ્યાદષ્ટિ જીવ કહેલ છે સમ્યક્જ્ઞાનના અભાવથી સમ્યગ્દર્શનનો અભાવ પણ સ્વતઃ સિદ્ધ છે માટે તેને આ ઠેકાણે પૃથક્ રૂપથી કહેલ નથી.

મિથ્યાદષ્ટિ જીવ યજ્ઞપિ ઓધનો પાર કરવા માટે લાલાયિત મન સજે છે પરન્તુ તેની ધસે પાર કરવાના ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકનો અભાવ હોવાથી પાર કરી શકતા નથી. તે ઘાત "ન ચૌધ તર્તુ" એ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે સંસાર રૂપ સમુદ્રનો પાર કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમક્ષિતની જરૂર પડે છે. શાસ્ત્રમાં સમક્ષિતને જેવદિયાની ઉપમા આપેલ છે જે પ્રકારે જેવદિયા વગર નૌકા જીવોને જલાશયથી ધર નહીં ઉતારી શકે તે પ્રકારે આ સંસારરૂપ સમુદ્રથી જીવ વિના સમક્ષિત મેળવે કોઈ વખત પાર ઉતરી શકતા નથી. સમક્ષિતના વિષયમાં પાછળ વિવેચન કરવામાં આવેલ છે.

મિથ્યાદષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્રના તીરનો ધર કરવાને માટે અસમર્થ એ માટે છે કે તે "અતીરંગમ" અને "અપારંગમ" છે વીતસગમણીત રત્ન

તૈવ પ્રવૃત્તતાત્, ઉન્માર્ગપ્રચારકત્યાચ્ચ પારં ગન્તું પ્રભયો ન ભવન્તીત્યર્થઃ । ‘અતીરંગમાઃ’ ‘અપારંગમાઃ’ ઇત્યુભયત્રાપિ નગો ‘ભવન્તી’-ત્યત્ર ભવનક્રિયાયામન્યયે આર્પ-
ત્વાદસમર્થસમાસો વોદ્યઃ । તે તીરં તિતીર્પવોઽપિ પારં પિપારયિપવોઽપિ સ્વામિસત-
શાસ્ત્રપ્રવૃત્તયો નૈવ તીરં ગચ્છન્તિ, નાપિ પારં પ્રાનુવન્તિ । લોકે તીરપારયોરેકાર્થત્વેઽ-
પિ અત્ર તીરપદેન મોહનીયક્ષયઃ, પારપદેન ઘાતિકર્મક્ષયો ગૃહ્યત્ ઇતિ વિશેષાન્ન પોન-
સ્તત્યમ્ । ઓઘં તિતીર્પવોઽપિ કૃતો ન તીરપારગામિનો ભવન્તીત્યાહ-‘આદાનીય’-
વીતરાગપ્રણીત રત્નત્રય કી આરાધના કા ઇનમેં અભાવ હોને સે યે ‘અતી-
રંગમ’ ઓર સમ્યક્ ઉપદેશ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને સે પાર પ્રાપ્ત કરને
કે લિયે અભિલાષી હોતે હુએ ખી યે ઉત્સૂત્ર કે પ્રરૂપક ઓર ઉન્માર્ગ કે
પ્રચારક હોને કી વજહ સે ‘અપારંગમ’ હેં । લોકમેં તીર ઓર પાર શબ્દ
કા ણ્ક હી વાચ્યાર્થ હોતા હૈ ફિર ખી સૂત્રમેં જો ઇન દો શબ્દોંકા પ્રયોગ
કિયા હૈ, ઉસસે યહ વાત જ્ઞાત હોતી હૈ કિ-તીર શબ્દ સે ઘાતી કર્મોંકા
ક્ષય ઓર પાર શબ્દ સે અઘાતિયા કર્મોંકા અભાવ અર્થ હોતા હૈ ।

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ” આદાનીય શબ્દ કા
અર્થ મુક્તિ જિસસે પ્રાપ્ત કી જાતી હૈ એસા ચારિત્ર હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ
પરિગ્રહ મેં મૂર્છિત હોને સે અપની કલ્પનાનુસાર ચારિત્ર કા આરાધન
કરતે હેં । મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્ર કે આરાધન સે પ્રાપ્ત હોતી હૈ । જિસમેં
સાવધ પ્રવૃત્તિકા લેશ નહીં હૈ ઉસકા નામ સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । જૈસેર
જીવ ગુણસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ કરતા જાતા હૈ વૈસેર ગૃહીતચારિત્રમેં ઉડઝલતા

ત્રયની આરાધનાતુ તેમા અભાવ હોવાથી તે ‘અતીરંગમ’ અને સમ્યક્ ઉપદેશની
પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાથી પાર પ્રાપ્ત કરવા માટે અભિલાષી હોવા છતાં તે ઉત્સૂ-
ત્રના પ્રરૂપક અને ઉન્માર્ગના પ્રચારક હોવાથી ‘અપારંગમ’ છે લોકમાં તીર
અને પાર શબ્દનો એક જ વાચ્યાર્થ થાય છે તો પણ સૂત્રમાં જે બે શબ્દોનો
પ્રયોગ કર્યો છે તેનાથી એ વાત જાત થાય છે કે-તીર શબ્દથી ઘાતિયા કર્મોનો
લય અને પાર શબ્દથી અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ અર્થ થાય છે.

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ”

આદાનીય શબ્દનો અર્થ મુક્તિ જેનાથી પ્રાપ્ત થાય છે એવું ચારિત્ર છે
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં મૂર્છિત હોવાથી પોતાની વલ્પનાનુસાર ચારિત્રનું આરા-
ધન કરે છે, મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્રના આરાધનથી પ્રાપ્ત થાય છે જેમા સાવધ
પ્રવૃત્તિનો લેશ પણ નથી તેનું નામ સમ્યક્ચારિત્ર છે જેમ જેમ જીવ ગુણસ્થાનોની
પ્રાપ્તિ કરતો જાય છે તેમ તેમ ગૃહીત ચારિત્રમાં ઉડઝલતા આવતી જાય છે,

મિત્યાદિ, સ તીરપારજિગમિષુ આદાનીયમ્=આદીયતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેત્યા
 દાનીયં=ચારિત્ર, તદાવાય=સમારાધનજ્ઞાનવિપયીકૃત્ય તસ્મિન=ચારિત્રસ્થાને ન
 તિષ્ઠતિ પરિગ્રહમૃચ્છિતસ્ત્વાત્,

પદા—આદાનીયં=દાસીદાસહસ્ત્યશ્વરયપનધાન્યસુવર્ણાદિકં, તત્ આદાય=
 યદીત્થા તત્ત્વ વિમુક્ત, અથવા મિથ્યાત્વાભિરતિપ્રમાદકપાયયાગૈરાદાનીયં=કર્મ યદી
 ત્થા રત્નત્રયાત્મકે માક્ષમાર્ગે ન તિષ્ઠતિ=આત્માન ન સ્થાપયતિ। ન સ કેષલ્ સર્વજ્ઞો
 પવેશસ્થાને તિષ્ઠતિ, પ્રત્યુત વિપરીતાચારમાચરતીત્યાહ—‘વિતથ’—મિતિ, અસેદશઃ
 =પરપીઠાનમિદ્, વિતથ=મિથ્યાત્વમોહનીયં પ્રાપ્ય=ભ્રમ્યા તત્રૈવ સ્થાને=પરિગ્રહ
 દિમૃચ્છાયાં તિષ્ઠતિ, તત્રૈવ જીવનં યાપયતીત્યર્થઃ। શબ્દાદિકામગુણાસંગસંગી
 પદ્મજીવનિકાયસમારમ્ભધાન્ પરિગ્રહમૃચ્છિતા જ્ઞાનાવગળીયાદિવિક્લપકર્માણિ સ-
 મુપાર્જયન્નજસ નરકનિગોદાવિવ્યપદસં ભ્રમત ઇત્યાશયઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

આત્મી જાતી છે। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમક્ષિત કે અભાવ મેં પ્રથમ ગુણસ્થાન
 વર્તી હોતા છે અતઃ વહ સમક્ષિતસહિત ચારિત્ર કા આરાધન નહીં કર
 સકતા, ફસલિયે તીર ઓર પારકે લાભ સે સદા વંચિત રહા કરતા છે।

અથવા—આદાનીય શબ્દ કા અર્થ—દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
 ધાન્ય ઓર સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ મી છે। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ઇતી પરિગ્રહ
 મેં અત્યન્ત આત્મક રહતા છે ફસ લિયે વહ રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ મેં
 કમી મી સ્થિતિ કા લાભ નહીં કર સકતા। આદાનીય શબ્દ કા અર્થ કર્મ
 મી છે, ફસ કર્મ કો વહ મિથ્યાત્વ, અભિરતિ, કપાય, પ્રમાદ ઓર યોગો
 દ્વારા મહણ કરતા છે। કર્મકે સન્નાય મેં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિ
 કી પ્રાપ્તિ સે દૂર હી રહતા છે। ફસ વિષય મેં પહિલે લિસ્ટા જા શુકા છે। જ

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમક્ષિતના અભાવમા પ્રથમગુણસ્થાનવર્તી થાય છે માટે તે
 સમક્ષિતસહિત ચારિત્રનુ આરાધન કરી શકતા નથી, માટે તીર અને પારના
 લાભમી વંચિત રહે છે

અથવા—આદાનીય શબ્દનો અર્થ — દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
 ધાન્ય અને સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ પણ છે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ આ પરિગ્રહમાં
 આત્મન્ત આત્મક રહે છે જેથી તે રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગમાં કોઈ વખત
 પણ સ્થિતિનો લાભ કરી શકતો નથી આદાનીય શબ્દનો અર્થ કર્મ પણ
 છે આ કર્મને તે મિથ્યાત્વ, અભિરતિ, કપાય, પ્રમાદ અને યોગોદ્વાસ મહણ
 કરે છે કર્મના સદ્ભાવમા જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિની પ્રાપ્તિમી
 દૂર જ રહે છે આ વિષયમા પહેલા લખવામા આવેલું છે અથા મુખી મુક્તિના

યો નરકાદિવ્યપદેશભાગ્ ન ભવતિ, યથ્ ભવતિ તં દર્શયતિ—‘ઉદેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ, વાલે પુણ નિહે કામસમ-
પુન્ને અસમિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયટ્ટિત્તિ
વેમિ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—ઉદેશઃ પश्यकस्य नास्ति, वालः पुनः स्निहः कामसमनुज्ञोऽशमित-
दुःखो दुःखी दुःखानामेवाऽऽवर्तमनुपरिवर्तते । इति ब्रवीमि ॥ म० ८ ॥

ટીકા—‘ઉદેશ’ ઇત્યાદિ, પश्यतीતિ પश्यઃ, પश्य એવ પश्यકઃ=પરિજ્ઞાત-
સકલહેયોપાદેયસ્તીર્થક્કરગગધરાદિસ્તસ્ય ધ્રિદિતવેદિતવ્યસ્ય, ઉદિશ્યતે ઇત્યુ-
દેશઃ=નરકાદિવ્યપદેશો નારકાદિપર્યાયવ્યવહાર ઇતિ યાચત્, અત્ર વ્યપદેશાર્થકો-
દેશશબ્દકથનેન નામકર્મણઃ સકલાપ્યુત્તરપ્રકૃતિગ્રાહ્યા । નાસ્તિ=નૈવ વર્તતે તસ્ય
સર્વજ્ઞત્વાત્, ન તસ્ય વ્યપદેશાપેક્ષા, તસ્મિન્નેવ ભવે તસ્ય મોક્ષપ્રાપ્તેઃ ।

તક મુક્તિ કે કારણોં કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી તવ તક મુક્તિ નહીં મિલ
સકતી હૈ । મુક્તિકા કારણ રત્નત્રય હૈ । જવ તક જીવ કો इन तीनों की
पूर्णता प्राप्त नहीं होती तव तव मुक्ति का मार्ग उसके हाथमें नहीं आता ।
मिथ्यादृष्टि जीव जब इस मार्ग की प्राप्ति से ही रहित है तव वह मुक्ति
का लाभ भी कैसे कर सकता है? यही सर्वज्ञ का उपदेश है । इस सर्वज्ञ
के उपदेश की ओर उस की जरा भी रुचि जाग्रत नहीं होती है, यही
मिथ्यात्व का जोर है । इस जोर से वह अपनी मनमानी प्रवृत्ति करने में
लगा रहता है, और इसी की वजह से वह परिग्रह में मूर्च्छित होता
रहता है । परिग्रह के संग्रह करने में ‘जीवों का विघात मेरे द्वारा होता है’
इसकी ओर उसका लक्ष्य ही नहीं जाता, और अपना समस्त जीवन
अविरत अवस्था में ही व्यतीत कर देता है ।

કારણોની પ્રાપ્તિ થતી નથી ત્યાં સુધી મુક્તિ મળી શકતી નથી મુક્તિનુ કારણ
રત્નત્રય છે ન્યાં સુધી જીવને આ ત્રણેની પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થતી નથી ત્યાં સુધી
મુક્તિનો માર્ગ તેના હાથમા આવતો નથી મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ન્યાંરે આ માર્ગની
પ્રવૃત્તિથી જ રહિત છે તો પછી તે મુક્તિનો લાભ પણ કેવી રીતે મેળવી શકે
એ જ સર્વજ્ઞનો ઉપદેશ છે આ સર્વજ્ઞના ઉપદેશ તરફ તેની જરા પણ રૂચિ
બગ્ગત નથી થતી તે જ મિથ્યાત્વનુ જોર છે તે જોરથી તે પોતાની મનમાની
પ્રવૃત્તિ કરવામા લાગ્યો રહે છે, અને તેના પ્રભાવે તે પરિગ્રહમા પણ મૂર્છિત
થતો રહે છે પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવામા ‘જીવોનો વિઘાત મારા દ્વારા થાય છે’
તે તરફ તેનુ લક્ષ્ય પણ જતુ નથી, અને પોતાનુ સમસ્ત જીવન અવિરત અવ-
સ્થામા જ વ્યતીત કરે છે

इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सासारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का संग्रह करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा पदकाय के जीवों का विघात भी होता है परन्तु उसकी यह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि विषाण कर्मों के तीव्र अनुभागापघ में और तीव्र स्थितिपघ में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुम्ब के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रत्युत चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू० ७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टोंका भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्ययन्यतिरकमुम्ब से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्म नत्थि” इत्यादि।

देवनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है।

प्रश्न—संसार के संज्ञी और असंज्ञी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देवनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जाएंगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देशः पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहाँ पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ છુવ સામારિક વિચલોચેમા આનુકા બની પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરતો રહે છે આ પ્રવૃત્તિમા તે દ્વારા પદકાય છુવોનો ખાત પજુ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ બિઠ્ઠલા કર્મોના તીવ્ર અનુભાગાપઘમા પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિસુખના લાભથી વંચિત રહે છે આટલું જ નહિ પ્રત્યુત ચતુર્ગતિરૂપ મુક્તિ રમા નરકનિગોદાદિના કષ્ટોના પજુ લોકતા બને છે ॥ સૂ० ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોનો લોકતા કોણ બને છે? અને કોણ બનતો નથી? તે વિવચને ફરીથી આ સૂત્રમા અન્યયન્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—
“ઉદ્દેશો પાસગસ્મ નત્થિ” ઇત્યાદિ.

દેવવાવાળાનુ નામ પસ્ય છે સ્વાર્થમા ક પ્રત્યય હોવાથી પસ્યક શબ્દ બને છે પસ્ય શબ્દનો જે અર્થ છે તેજ પસ્યકનો છે

પ્રશ્ન—સંચારના સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પજુ છુવ છે તે બધા દેવવાવાળા છે માટે તે પજુ પસ્યક થઈ જશે. પરંતુ આ સૂત્રમા આ પસ્યકોનો તો મદ્દણ કરવામા આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશ પસ્યકસ્ય નાસ્તિ” આ કથનથી તેમા ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્ગોએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્ યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આતા હૈ, અતઃ “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર ષટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં હૈં વે ષટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં હોતે, ઓર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ હૈં । જબ તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તબ તક નામ કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે અનમેં બી મનુષ્યપર્યાય વિશિષ્ટ આદિ કા વ્યવહાર હોતા હી હૈ, પરન્તુ ભવિષ્ય મેં અસપ્રકાર કા વ્યવહાર અનમેં સર્વથા નહીં હોનેવાલા હૈ, ઇસ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનય કી

એ ચતુરિન્દ્રિયજાતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે ઉદ્દેશ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ “ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશ-નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ છે, ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ કહ્યો છે આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોમાં આવતો નથી, માટે “ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યાએ પહેલા એ કહેવામાં આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં આસક્ત બની ષટ્કાય જીવોના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોનો બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનન્ત દુખોના ભોક્તા બને છે, પરન્તુ જે પરિગ્રહમાં આસક્ત નથી તે ષટ્કાય જીવોના રક્ષક હોવાથી કર્મોના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા, અને ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી લે છે એવા જીવ જ આહી પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે તે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ છે જ્યાં સુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે, પરન્તુ ભવિષ્યમાં તે પ્રકારનો વ્યવહાર તેમાં સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી

इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सासारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का समग्र करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा पदकाय के जीवों का विघात भी होता है परन्तु उसकी वह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि चिक्छण कर्मों के तीव्र अनुभाषण में और तीव्र स्थितियुक्त में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुख के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रस्युत चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू० ७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टों का भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है ? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्वयन्यतिरेकसुख से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्स नत्थि” इत्यादि ।

देवनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है ।

प्रश्न—संसार के सञ्जी और असञ्जी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देवनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जायेंगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देश पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहाँ पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રને સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ છૂવે સાસારિક વિષયભોગેમાં આસક્ત બની પરિગ્રહને સમગ્ર કરતો રહે છે આ પ્રવૃત્તિમાં તે કાંઈ પદકાય છૂવેના ધાત પશુ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ ચિક્છણ કર્મોના તીવ્ર અનુભાવ ધમ્મા પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિમુખતા લાભથી વંચિત રહે છે આટલું જ નહિ પ્રસ્યુત ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં નરકનિગોદાદિના કષ્ટોના પશુ ભોક્તા બને છે ॥ સૂ. ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોને ભોક્તા કોણ બને છે ? અને કોણ બનતો નથી ? તે વિષયને ફરીથી આ સૂત્રમાં અન્વયન્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—“ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ.

દેવવાવણાનુ નામ પશ્ય છે સ્વાર્થમાં ક પ્રત્યય હોવાથી પશ્યક શબ્દ બને છે પશ્ય શબ્દને જે અર્થ છે તેજ પશ્યકને છે

પ્રશ્ન—સંસારના સ ની અને અસંજી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પશુ છૂવે તે બધા દેવવાવણા છે માટે તે પશુ પશ્યક થઈ જશે. પરંતુ આ સૂત્રમાં આ પશ્યકોને તો ગ્રહણ કરવામાં આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” આ કથનથી તેમાં ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્યાએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-
કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્
યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા
હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આતા હૈ, અતઃ
“ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ
પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર પટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા
હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે
અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં
હૈં વે પટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં
હોતે, ઓર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં,
એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થકર
ગણધરાદિ દેવ હૈં । જવ તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તવ તક નામ
કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે અનમેં ખી મનુષ્યપર્યાય
વિશિષ્ટ આદિ કા વ્યવહાર હોતા હી હૈ, પરન્તુ ભવિષ્ય મેં ઉસ પ્રકાર કા
વ્યવહાર અનમેં સર્વથા નહીં હોનેવાલા હૈ, ઇસ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનય કી

એ ચતુરિન્દ્રિયજાતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે ઉદ્દેશ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ
“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશ-નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્”
આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ છે, ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ
કહ્યો છે આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોમા આવતો નથી, માટે
“ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામા આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યોએ પહેલા એ કહેવામા આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ
પરિગ્રહમા આસક્ત બની પટ્કાય જીવોના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાના-
વરણાદિક કર્મોંનો બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનન્ત દુખોના ભોક્તા
બને છે, પરન્તુ જે પરિગ્રહમા આસક્ત નથી તે પટ્કાય જીવોના રક્ષક હોવાથી
કર્મોંના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા, અને ક્રમશઃ કેવળજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને
પ્રાપ્ત કરી લે છે એવા જીવ જ અહીં પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે તે
સાક્ષાત્ તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ છે ન્યા મુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા
ત્યા મુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમા પણ
મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે, પરન્તુ ભવિષ્યમા તે પ્રકારનો
વ્યવહાર તેમા સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી

અપેક્ષા સે યદ્વાં પર મી “પદ્યકસ્ય ઉદેશો નાસ્તિ” પદ્યક કો ઉદેશ નહીં હૈ, યદ્ કથન સુસંગત સમજના ધાહિયે ।

પ્રશ્ન—કૈસે જાના જાતા હૈ કિ-અનમેં આગે ચલકર સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયા સર્વથા ક્ષય હો જાનેવાલી હૈ? પ્રત્યક્ષ સે તો યદ્ યાત જ્ઞાત હો નહીં સકની, ક્યોં કિ પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંયમી પદાર્થ કો હી ગ્રહણ કરતા હૈ । ડસ પ્રકાર કી પર્યાયસંયમી વર્તમાન તો હૈ નહીં । અનુમાન મી હસ વિષય કો નહીં જાન સકતા, ક્યોં કિ તદ્વિના ભાવી કોઈ મી ંસા હેતુ નહીં હૈ જો હસ યાત કા અનુમાપક હો, જિસકે વિના જો ન હો ડસકો અવિનાભાવી કહેતે હૈ ।

ઉત્તર—યદ્ તો હમ મી માનતે હૈ કિ-અધુરાદિશ્ચિન્ત્યજન્ય જ્ઞાન રૂપ પ્રત્યક્ષ (સામ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) હસ પ્રકાર કી અવસ્થાકો નહીં જાન સકતા, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણ સે હસ યાત કી સિદ્ધિ હોતી હૈ કિ-અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ઘદ્દા પર સર્વથા ક્ષય હોગા । યદ્ કૈસ કહા કિ તદ્વિનાભાવી હેતુ ઘદ્દાં પર નહીં હૈ । “તસ્ય સઘણસ્વાત્” અર્થાત્ “ઘે સઘણ હૈ” યદ્દી તદ્વિનાભાવી હેતુ હૈ । જિસ પ્રકાર ધૂમ ઘદ્દિ કા અવિનાભાવી હેતુ હૈ ડસી પ્રકાર ઘાતિયા કમોં કે અભાવ સે ડત્પન્ન તે જ્યેએ યદ્ “પદ્યકસ્ય ઉદેશો નાસ્તિ” ડસ્થાને ઉદેશ નહીં, એ કથન સુસંગત સમજાવે છે.

પ્રશ્ન—કેવી રીતે બાલુવાળા આવે કે તેમા આમળ સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયા સર્વથા ક્ષય થઈ જવાવાળી છે? પ્રત્યક્ષથી તો એ વાત જ્ઞાત થઈ શકતા નથી, કારણ કે પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંયમી પદાર્થને / અવલોકે છે તેવા પ્રકારની પર્યાયસંયમી વર્તમાન તો છે નહિ. અનુમાનથી પણ આ વિષયને બાળી શકાતા નથી, કારણ કે તદ્વિનાભાવી કોઈ પણ જોવા હેતુ નથી જે આ વાતને અનુમાપક હોય. જેના વિના જે ન હોય તેને અવિનાભાવી કહે છે.

ઉત્તર—અ તા અમે પણ માનીએ છીએ કે-અધુરાદિશ્ચિન્ત્યજન્ય જ્ઞાનરૂપ પ્રત્યક્ષ (સામ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) આ પ્રકારની અવસ્થાને બાળી શકતા નથી, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણથી આ વાતની ત્રિષ્ટિ થાય છે કે-અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયોંનું ત્યા સર્વથા ક્ષય થશે એમ કેમ કહેવાય કે તદ્વિનાભાવી હેતુ ત્યા નથી. તસ્ય સઘણસ્વાત્ અર્થાત્ “તે સઘણ છે એજ તદ્વિનાભાવી હેતુ છે, જેવી રીતે ધુમાડા આવના અવિનાભાવી હેતુ છે, તેવા રીતે

સર્વજ્ઞ અવસ્થા ખી શેષ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ભવિષ્ય મેં વહાં વિલય-
હોનેરૂપ સાધ્ય કી સિદ્ધિ કરાને મેં અવિનાભાવી હેતુ હૈ અતઃ ઇસ અવિના-
ભાવી હેતુ સે વહાં પર સાધ્યકી સિદ્ધિ હોને મેં કોઈ ખી વાધા નહીં આતી ।

પ્રશ્ન—અપને સાધ્ય કો સિદ્ધ કરને મેં હેતુ કી સિદ્ધિ પ્રધાન માની
જાતી હૈ । જિસ સાધ્ય કા હેતુ સિદ્ધ નહીં હોતા વહ અપને સાધ્યકી સિદ્ધિ
નહીં કર સકતા । સાધ્ય અસિદ્ધ હોતા હૈ, હેતુ તો સિદ્ધ હોના ચાહિયે ।

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ હી હૈ—અસિદ્ધ નહીં, ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય ઓર ઉનકી અનન્તાનન્તપર્યાયોં કો હસ્તામલકવત્
અકાલાવચ્છેદન (અક કાલમેં) જાનનેવાલા હોને સે તીર્થકરાદિ પ્રભુ
સર્વજ્ઞ હૈ । જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કે સર્વથા વિનષ્ટ હોને સે
ઉન્હોને અપની જીવન્મુક્ત અવસ્થા મેં કેવલજ્ઞાનરૂપી સૂર્ય કો પ્રાપ્ત કરલિયા
હૈ । ઇસ પ્રશસ્તતમ ઓર અસાધારણ જ્ઞાન કે દ્વારા હી યે વિશ્વ કે સમસ્ત
પદાર્થસાર્થકો જાનતે રહતે હૈ । ઇનકા જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોં કા જ્ઞાતા હૈ,
યહ વાત અનુમાન પ્રમાણ સે સિદ્ધ હોતી હૈ, ક્યોં કિ જય છદ્મસ્થ જીવોં
કે જ્ઞાનગુણ મેં જાનને કી હીનાધિકતા પાઈ જાતી હૈ તો ઉસસે યહ વાત

ઘાતિયા કર્મોંના અભાવથી ઉત્પન્ન સર્વજ્ઞ અવસ્થા પણ શેષ નામકર્મની પ્રકૃતિ-
યોના ભવિષ્યમા ત્યા વિલયહોવારૂપ સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામા અવિનાભાવી
હેતુ છે માટે આ અવિનાભાવી હેતુથી ત્યા સાધ્યની સિદ્ધિ થવામા કોઈ અડ-
ચણ આવતી નથી

પ્રશ્ન—પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવામા હેતુની સિદ્ધિ પ્રધાન માનવામા
આવે છે જે સાધ્યનો હેતુ સિદ્ધ થતો નથી ને પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરી
શકતો નથી સાધ્ય અસિદ્ધ થાય છે, હેતુ તો સિદ્ધ થવો જોઈએ

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ જ છે અસિદ્ધ નહિ ભૂત ભવિષ્યત્ અને વર્તમાન
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેની અનન્તાનન્ત પર્યાયોને હસ્તામલકવત્
અકાલાવચ્છેદન (અક કાળમા) જાણવાવાળા હોવાથી તીર્થ કરાદિ પ્રભુ સર્વજ્ઞ
છે જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મોંનો સર્વથા વિનષ્ટ થવાથી તેને પોતાની
જીવન્મુક્ત અવસ્થામા કેવળજ્ઞાનરૂપી સૂર્યને પ્રાપ્ત કરેલ છે આ પ્રશસ્તતમ અને
અસાધારણ જ્ઞાનદ્વારા વિશ્વના સમસ્ત પદાર્થોને જાણતા રહે છે તેનું જ્ઞાન સમસ્ત
પદાર્થોનું જ્ઞાતા છે એ વાત અનુમાન પ્રમાણથી સિદ્ધ થાય છે કારણ કેન્યારે
છદ્મસ્થ જીવોને જ્ઞાનગુણમા જાણવાની હીનાધિકતા મેળવી શકાય છે તો તેનાથી

યદા—પદ્યકસ્ય=સર્વજ્ઞસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉપદેશ ‘સુર્ય મે આતસ તેજ’—મિત્યાદિ ‘તમિ ઠાણમિ ચિદ્દૃ’ इत्यन्त ‘पूर्वोक्तस्वरूपाः,’ ‘पाछे पुण निहे’ इत्यारभ्य ‘आयाए आराहिया मि मवइ’ इतिपर्यन्तवक्ष्यमाणस्वरूपा वा नास्ति=न तस्य प्रयोजनं वर्तत इत्यर्थः, सकललाका लोकपदार्थसार्थस्य इस्तामलकवत्केवला लोकोपविषयीभूतत्वात् । कं प्रत्युपदेश ? इत्याह—‘वाल’ इत्यादि । यं पुनः वासः=परिग्रहं यद्वा ज्ञानक्रियाविकलाः, स्निग्धत्वे इति स्निहः=विषयानुरागी, कामसमनुष्य—कामान्भी सिद्ध होती है कि एक ज्ञान ऐसा भी है कि जहाँ पर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों का अवलोकन—ज्ञान युगपत् होता है । जिस प्रकार परिमाण की तरतमता आकाश में अनन्त हो कर ठहर जाती है इसी प्रकार ज्ञान की अनन्तता भी इनमें स्थित होकर अपना स्थान प्राप्त करती है । संसार में अनन्त पदार्थ हैं, उनमें कई सूक्ष्म हैं, कई वादर हैं, कई अन्तरित हैं, कई अनन्तरित हैं, कई निकट हैं, कई दूर हैं । इन सब का यथार्थ रूप से प्रतिपादन करना बिना सर्वज्ञता के नहीं हो सकता, और इन अनन्त पदार्थों को जाननेवाला ज्ञान भी अनन्त ही होता है । जैनशास्त्र में ऐसे ज्ञान को ही केवलज्ञान कहा है, और इस ज्ञानसंपन्न आत्मा को सधज्ञ कहा है ।

यह व्याख्या “नरक निगोदादि पदार्थों के दुःख सर्वज्ञ नहीं प्राप्त करते ? तथा वे इस प्रकार के व्यपदेश से रहित होते हैं ?” इस प्रकार के व्यतिरेकमुम्बसे की गई है । अथ उद्देश की समाप्ति करते हुए सूत्रकार अन्वयमुम्ब से व्याख्या करते हैं—

તે ગાત ત્રિદ્વ ધાય છે કે એક જ્ઞાન એવું પણ છે કે બીજા ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું અવલોકન—જ્ઞાન યુગપત્ ધાય છે જે પ્રકારે પરિણામની તરતમતા આ કાશના અનન્ત બનીને અત્રી બાય છે તે પ્રકારે જ્ઞાનની અનન્તતા પણ તેમાં સ્થિત બનીને પોતાનું સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે સસારમાં અનન્ત પદાર્થ છે તેમાં કેાઈ સૂક્ષ્મ છે, કેાઈ બાહર છે કેાઈ અન્તરિત છે, કેાઈ અન્તરિત છે કેાઈ નિકટ છે કેાઈ દૂર છે આ બધાનું યથાર્થરૂપમાં પ્રતિપાદન કરવું સવ સાતા બિના બની શકતું નથી, અને આ અનન્ત પદાર્થોને બલજવાણુ જ્ઞાન પણ અનન્ત જ ધાય છે જૈનશાસ્ત્રમાં તથા જ્ઞાને જ કેવળજ્ઞાન કહે છે અને આ જ્ઞાનસંપન્ન આત્માને સર્વજ્ઞ કહે છે

આ આખ્યા “નરકનિગોદાદિ પદાર્થોના દુઃખ સર્વજ્ઞ નથી પ્રાપ્ત કરતા ? તથા તે આ પ્રકારના વ્યપદેશથી રહિત હોય છે ?” આ પ્રકારે વ્યતિરેકમુખથી કહેવામાં આવેલ છે હવે ઉદ્દેશની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર અન્વયમુખથી આખ્યા કરે છે—

=સ્પૃહા-મદનરૂપાન્ સમ્=સમ્યક્, અનુ=અનુકૂલં જાનાતીતિ કામસમનુજ્ઞઃ=કામ-
ગુણાનુમોદકઃ, અત એવ અશમિતદુઃખઃ-અશમિતમ્=અક્ષીણં દુઃખમ્=અલબ્ધલાભાય
લબ્ધપરિરક્ષણાય ચ વ્યગ્રતયા નિરન્તરચિન્તનરૂપં યસ્ય સોઽશમિતદુઃખઃ=વિષય-
કષાયાસક્તત્વેન નિતાન્તઃક્રાન્તસ્થાન્તઃ, અત એવ દુઃખી=શારીરિક-માનસિક-પીડા-
પીડિતઃ, દુઃખાનામ્=એહિક-પારત્રિક-નાનાવિધાનામેવ, આવર્ત=સંસારચક્રમ્-

“બાલે પુણ ણિહે” ઇત્યાદિ। “સુયં મે આઝસં તેણં” યહાં સે લેકર
“તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ઢિ” યહાં તક કા પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાલા ઉપદેશ તથા
“બાલે પુણ ણિહે” યહાં સે લેકર “આણાણ આરાહિયા વિ ભવઈ” યહાં
તક વક્ષ્યમાણ-આગે કહા જાનેવાલા-ઉપદેશ સર્વજ્ઞની અપેક્ષા સે
નહીં કહા ગયા હૈ। ક્યોં કિ વે કૃતકૃત્ય હૈં, ઉન્હેં કિસી ભી વસ્તુસે
પ્રયોજન નહીં રહા હૈ, કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોનેસે વે સમસ્ત પદાર્થોં કો
હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાનતે હૈં, અતઃ યહ ઉપદેશ બાલજીવોંની
અપેક્ષા સે હૈ। બાલ જીવ વે હૈં જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત હૈં, જ્ઞાનક્રિયા સે
વિકલ હૈં, વિષયાનુરાગી હૈં, કામગુણોંકે અનુમોદક હૈં, અલબ્ધ કો પ્રાપ્ત
કરને કે લિયે તથા લબ્ધની રક્ષા કરને કે લિયે જો વ્યગ્રચિત્ત હોને સે સદા
ચિંતાશીલ બને રહતે હૈં, વિષયકષાયોં મેં આસક્ત હોનેની વજહ સે
જિનકા અન્તઃકરણ અત્યન્ત દુઃખિત હોતા રહતા હૈ। ઇસ લિયે જો રાત-
દિન શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોંકા અનુભવ કિયા કરતે હૈં તથા

‘બાલે પુણ ણિહે’ ઇત્યાદિ ‘સુયં મે આઝસં તેણં’ અહીંથી લઈ ‘તંમિઠાણં-
મિચિટ્ઢિ’ સુધીનો પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાળો ઉપદેશ, તથા “બાલે પુણ ણિહે” અહીંથી
લઈને “આણાણ આરાહિયા વિ ભવઈ” અહીં સુધી વક્ષ્યમાણ-આગળ કહેવામા
આવનાર-ઉપદેશ આ સર્વજ્ઞની અપેક્ષાથી કહેવામા આવેલ નથી, કારણ કે તે
કૃતકૃત્ય છે, તેને કોઈ પણ વસ્તુથી પ્રયોજન રહ્યું નથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોવાથી
તે સમસ્ત પદાર્થોંને હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાણે છે માટે આ ઉપદેશ બાલ
જીવોંની અપેક્ષાથી છે બાલ જીવ તે છે જે પરિગ્રહમા આસક્ત છે, જ્ઞાનક્રિયાથી
વિકલ છે, વિષયાનુરાગી છે, કામગુણોંના અનુમોદક છે, અલબ્ધને પ્રાપ્ત કરવા,
લબ્ધની રક્ષા કરવા માટે જે વ્યગ્રચિત્ત હોવાથી સદા ચિંતાશીલ બની રહે છે,
વિષયકષાયોંમા આસક્ત હોવાથી જેનું અતઃકરણ અત્યન્ત દુઃખિત થતું રહે છે
માટે જે રાત દિન શારીરિક અને માનસિક કષ્ટોંનો અનુભવ કર્યા કરે છે, તથા

અનુપરિવર્તતે=પટ્ટીયન્ન્યાયેન મુદુર્મુદુઃ પર્યટતિ, યથા જલાવર્તે પતિતસ્તુષાદિસ્ત-
વાર્થતમેવાનુષાવતિ પરાધીનતયા નોન્મજ્જતિ ચ, તૈયેષ વિપયૈકતાનચિત્તો ચીતરામો-
પદેશપરાશ્ચુલ્લો ગુરુકર્મા ઝીવ સંસારસાગરસ્ય દુ સ્વાર્થતનિમગ્નઃ સ્મ ન ક્યાપ્ય
દુતો મન્વતીતિ વાલસ્ય સંસારપરિભ્રમણં વિદ્યાય તત્કારણપરિગ્રહવિપયાદિષુ મુદ્ધો મા
મૃદિતિ શિષ્યં પ્રત્યુપદેશ્યતિ સાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રહ્મીમીત્યસ્યાર્યસ્તુક્ટ પ્વ ॥ મૂં ૮ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય તૃતીયોદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૩ ॥

જિસ પ્રકાર રહટ ધૂમતા રહતા હૈ उसी प्रकार जो नाना प्रकार के पेड़
लौकिक एवं पारलौकिक दुःखोंको भोगते हुए इस संसारचक्रमें परि-
भ्रमण कर रहे हैं ।

ऐसे बालजीव कि जिनका मन विषयों में लवलीन हो रहा है, बीत-
राग प्रभु के उपदेश से जो सर्वथा पराश्रुत हो रहे हैं, गुरुकर्मी हैं, पानी
के आवर्त में पड़े हुए तृणकी तरह इस संसारसागर के दुःखरूपी
आवर्त में निमग्न बन कभी भी वहांसे छुटकारा नहीं पा सकते हैं । जिस
तरह पानी के आवर्त में पड़े हुए तृणकी दशा होती है उसी प्रकार की
इनकी भी दशा होती है । जैसे वह तृण उससे बाहर नहीं निकलने पता
प्रत्युत उसमें इधर-उधर चकर काटा करता है—कभी उसमें डूबता है
और कभी उसीमें ऊपर तैर जाता है, ठीक इसी प्रकार से इन बाल-
जीवोंका भी इस चतुर्गतिरूप संसारचक्रमें परिभ्रमण होता रहता है ।
ऐसा समझ कर संयमी मुनिका कर्तव्य है कि वह संसारपरिभ्रमण का

ને પ્રકાર રેટ મુમતો રહે છે તે પ્રકારે ને નાનાપ્રકારના બૈદલૌકિક અને
પારલૌકિક દુ ખેને ભોગવતાં આ સંસારચક્રમા પરિભ્રમણ કરે છે

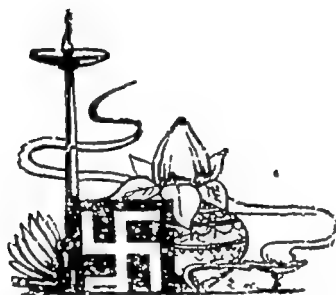
આવા બાલ જીવો કે જેના મન વિષયોમા લવલીન રહે છે વીતરત્ર પ્રભુના
ઉપદેશથી ને સર્વથા પરાશ્રુત રહે છે ગુરુકર્મી છે પાણીમા પડેલા તુલુ મારેક
આ સંસારસાગરના દુ ખરૂંપી આવર્તમા નિમગ્ન બની કેઈ વખત પણ ત્યાંથી
છુટકારો મેળવી શકતા નથી. જેવી રીતે પાણીના આવર્તમા પડેલા તુલુની દશા
માથ છે તે પ્રકારે તેની પણ દશા થાય છે જેવી રીતે તે તલુખણ તેનાથી બહાર
નીકળી શકતું નથી પણ તેમા ચક્કર લગાવ્યા કરે છે—કેઈ વખત તેમાં ડુબે
છે તેા કેઈ વખત ઉપર તરી આવે છે કીક તે પ્રકારે આ બાલ જીવોના પણ
ચાર અવિરૂપ સંસાર ચક્રમા પરિભ્રમણ થયા કરે છે એવુ સમજીને સંયમી
મુનિનુ કર્તવ્ય છે કે તે સંસારપરિભ્રમણનુ કારણ ને વિવેચ અને પરિશ્લષ્ટિ

कारण जो विषय और परिग्रहादिक हैं उनमें गृह्य न बने। इस प्रकार से सूत्रकार का शिष्य के प्रति यह उपदेश है। 'ब्रवीमि' इस पद का पहिले के प्रकरणों में अर्थ कहा जा चुका है ॥ सू० ८ ॥

॥ दूसरे अध्ययनका तृतीय उद्देश संपूर्ण ॥

छे तेमा गृह्य न बने आ प्रकारे सूत्रकारनो शिष्य प्रति आ उपदेश छे इति ब्रवीमि आ पहनो पड़ेला प्रकरणोभां अर्थ करवाभां आवेल छे

॥ पीन्त अध्ययननो त्रीन्ने उद्देश संपूर्ण २-३ ॥



॥ आचाराङ्गसૂત્રे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोऽध्यायः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उद्यैर्गोत्रात्पश्यमिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रागस्यावश्यं सम्भवा'—इति दर्शयिष्यते।
अत्रानन्तराप्रसम्बन्ध—'दुस्त्री दुस्साणमेव आवह्यं अणुपरिवह्य' इति, तानि च दुःस्त्रानि रोगकारणानि भवन्त्येता रागानेष दर्शयति।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका, अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारम्भ होता है। तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है। इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वङ्ग-रागपरिणति—नहीं करना चाहिये। क्योंकि "भोग भुरे भवरोग बढ़ावे घेरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं।

इस प्रकरण का "दुस्त्री दुस्साणमेव आवह्यं अणुपरिवह्य" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्योंकि दुःस्त्र रोग के कारण हुआ करते हैं।

आचाराङ्गसूत्रना जीन अध्यायनना चौथो उद्देश

जीन उद्देशनु कथन समस्त यमु कवे चौथा उद्देशने प्रारंभ थाय छे, जीन उद्देशनां संयमी मुनिजे पोताना संयमनी रक्षा भाटे छे ज ओत्रभां उत्पत्ति घवाने कारखे अभिमान आदि नहि करु लेखजे, जे सारी रीते समबन्धी देवभा आवेल छे आ चतुर्थ उद्देशना जे समबन्धववाभा आवरी छे—सोचोभा संयमी मुनिजे पोताना संयमनी रक्षा भाटे अभिष्वङ्ग-रागपरिणति नहि करु लेखजे, कारखे छे "भोग भुरे भवरोग बढ़ावे घेरी हैं जग जी के" आ वाक्य अनुसार जेक तो ते भवराग बढ़ावे ॥ जीन तेना सेवनसी अनेक शारीरिक रोग पण उत्पन्न थाय छे

आ प्रकरणना "दुस्त्री दुस्साणमेव आवह्यं अणुपरिवह्य" आ जीन उद्देशना अन्तिम सूत्रधी संबंध छे भाटे सूत्रकार ते रोगोना आ ठेकावे वर्णन करी, कारखे छे रोगोना कारखधी दुःस्त्र यथा करे छे

कामभोगसेवनादासक्तिः, तथा चार्तरौद्रध्यानं, ततश्च कर्मरजःसमुपार्जनम्, तेन चात्ममालिन्यं भवति, ततो ज्ञानादिगुणप्रणाशः, तेनोन्मार्गप्रवृत्तिः, तथा चैहिक-पारत्रिकदुःखानि जायन्ते, दुःखानि च रोगादिना भवन्ति, तत्र दुःखहेतून् रोगानुपदर्शयति—‘तओ से’ इत्यादि।

कामभोगों के सेवन से जीव की उसमें आसक्ति बढ़ती है। आसक्ति से आर्त्त और रौद्रध्यान उत्पन्न होते रहते हैं। उन ध्यानों से जीव अशु-भकर्मपरमाणुओं का बंध करता है। उससे आत्मा में मलिनता आती है। मलिनता के संबंध से ज्ञानादिक गुणोंका आवरण होने से जीवों की उन्मार्ग में प्रवृत्ति होती है। उस प्रकार की प्रवृत्ति से जीव इहलोक और परलोक-संबंधी अनंत यातनाओं को भोगता है। इस प्रकार परंपरा-संबंध से कामभोगसेवन तथा उस विषय की आसक्ति जीवको अनेक अनन्त कष्टों को देनेवाली होती है। परलोकसंबंधी दुःख जीवों को अशुभ कर्मोदय से प्राप्त होता है। वहां पर भी अनेक प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक दुःख इस जीव को झेलने पड़ते हैं।

इसलोकसंबंधी दुःखों की भी यही परिस्थिति है, फिर भी व्यवहारी जीवों की दृष्टिमें दुःखादिक रोगाधीन होते हैं; इस अभिप्राय से सूत्रकार उन दुःखों के कारणभूत रोगों का वर्णन करते हुए कहते हैं—“तओ से” इत्यादि।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે આસક્તિથી આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓના બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ હોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે આ પ્રકાર પરપરાસંબંધી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે પરલોકસંબંધી હું જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક હું જીવ આ જીવને ભોગવવા પડે છે

આલોકસંબંધી હું જીવોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે તો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં હું બાહ્ય રોગાધીન થાય છે આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ હું જીવોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતા કહે છે—“તઓ સે” ઇત્યાદિ.

મૂલ્ય—‘તઓ સે યગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્જતિ જેહિં સદ્ધિં સવસદ્ધિ તે વા ણ યગયા નિયયા પુર્વિં પરિધરંતિ, સો વા તે નિયમે પચ્છા પરિધરંજ્જા, નાલ તે તવ તાણાપ વા સરણાપ વા, તુમપિ તેસિં નાલ તાણાપ વા સરણાપ વા, જાણિત્તુ તુક્ષ્ણ પપ્પેયસાય, ભોગામેવ અનુસોયતિ, હમમેગેસિં માણવાણ ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા રાગસમુત્પાદાઃ સમુત્પાદ્યતે યૈર્વા સાર્દે સવસતિ તે વા ત્વલ્લ એકદા નિમકાઃ પૂર્વે પરિવદન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પદ્માત્પરિક્વદતિ, નાનં તે તવ પ્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેપાં નાનં પ્રાણાય વા શરણાય વા, જ્ઞાત્વા દુઃખં પ્રત્યક્કં સાતં માંગાનેવાનુષોધતિ, હૈકંપા માનવાનામ્ ॥ મૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ । ઈવં મૂયં પ્રથમાદેશ ત્વાવસ્યાપ્રસન્ને પ્રાક્તમ્, હૈ ચ યૌવનેઽપિ માગાસસ્યા નાનારોગાઃ સમુત્પાદ્યન્તિ ઇતિ લક્ષ્યયતિ નાતઃ પુનરુક્તિઃ ।

રાગા યયા—(૧)શ્વાસ(૨)કાસ(૩)ઝર(૪)વાહ(૫)કુક્ષિશૂલ(૬)મગન્દરા-(૭)અર્શ(૮)-ઝજીરક(૯)દષ્ટિશૂલ(૧૦)મૂર્ધશૂલ(૧૧)-અરુચિ(૧૨)નેત્રવેદના(૧૩)-કર્ણવેદના(૧૪)કષ્ટવેદના(૧૫)ઉદરવેદના(૧૬)કુષ્ટાલ્પ્યા પોદ્ધશ વિજ્ઞયા ।

સર્વેઽપિ જીવા સ્વકૃતકર્મફલમાગિનિ ઇતિ વિમામ્ય ચિવેક્ષી શુક્તપૂર્વાન્ માગામાનુસરેત્, માત્રામ સવેત, અસમ્પાપામિનાઽહેદિતિ માત્ર ।

યૌવન અવસ્થા મેં જીવોં કી મોગાલિકોં મેં અધિક આસક્તિ થકતી હૈ, ઉસસે હસ અવસ્થા મેં ની અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હોત હેં । હસ લિયે રોગોં કે નામ કહતે હેં—૧ શ્વાસ-૨ કાસ મ્વાસી ૩ ઝર ૪ વાહ ૫ કુક્ષિ શૂલ ૬ મગન્દર ૭ અર્શ-ચલાસીર ૮ અજીરક ૯ દષ્ટિશૂલ ૧૦ મૂર્ધશૂલ ૧૧ અરુચિ ૧૨ નેત્રવેદના ૧૩ કર્ણવેદના ૧૪ કષ્ટપીડા ૧૫ ઉદરપીડા ૧૬ કુષ્ટ । પે ૧૬ રાગોં કે નામ હેં ।

યૌવન અવસ્થામા યૌવની બોગાલિકોમા અધિક આસક્તિ વપે છે, તેથી તે અવસ્થામા પણ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે, માટે રોગોના નામ કહે છે—૧ શ્વાસ, ૨ કાસ-ખાસી, ૩ ઝર, ૪ વાહ, ૫ કુક્ષિશૂલ, ૬ મગન્દર, ૭ અર્શ-ઝર ૮ અજીરક ૯ દષ્ટિશૂલ, ૧૦ મૂર્ધશૂલ, ૧૧ અરુચિ, ૧૨ નેત્રવેદના, ૧૩ કર્ણવેદના, ૧૪ કષ્ટપીડા, ૧૫ ઉદરપીડા, અને ૧૬ કુષ્ટ, એ રોગના શ્રેણ નામ છે

ગૃહસ્થ મોગસ્યૈવાનુચિન્તનં કરોતીત્યાહ—‘મોગાનેવ’—તિ, મોગાનેવ=શબ્દાદિ-
 વિષયાનેવ અનુશોચતિ=સતતં પરિચિન્તયતિ । સૂત્રે વહુવચનમાર્ષત્વાત્ । યદ્યહં
 સર્વસ્વવ્યયસાધ્યમૈષજ્યાદિના નીરોગઃ સ્યાં તદાઽવશ્યમજસં મોગાન્ ભુઙ્ગીય, નાના-
 વિધાનિ સુખાન્યનુભવેયમિત્યાદિનાનાવિધપરિચિન્તનાદશાન્તસ્વાન્તઃ સન્તતમનુ-
 ત્પતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ । एवंવિધમોગાનુચિન્તનં કિં સર્વેષાં ભવતિ ? નેત્યાહ—
 ‘इहैकेषा’—મિત્યાદિ, इह=સંસારે एकेषाम्=અપરિજ્ઞાતવિષયકદુર્વિપાકાનાં કતિ-
 પયાનાં માનવાનામ્, ब्रह्मदत्तसदृशानां ભવતિ । इहामुत्र दुःस्वकारणत्वाद् भोगासक्तिः
 परिहरणीयेति सूत्राशयः ॥ સૂ. ૧ ॥

इस अवस्थामें जिनके साथ यह रहता है वे पुत्रकलत्रादिक पहले
 इसका अनादर करते हैं और तिरस्कारजनक वचन बोलते हैं, फिर यह
 भी उनका अनादर करता हुआ अपशब्द बोलता है, परन्तु हे जीव ! नहीं
 तो वे तेरे त्राण और शरण के लिये समर्थ हो सकते हैं और न तू भी
 उनको त्राण और शरण देनेके लिए समर्थ हो सकता है । समस्त संसारी
 जीव अपने२ किये हुए कर्म के अनुसार सुखदुःखादिक फल के भोगने-
 वाले होते हैं । ऐसा विचार कर विवेकी संयमी मुनि पूर्व में भोगे हुए उन
 भोगों की स्मृति न करे, तथा प्राप्त हुए उन भोगों का सेवन न करे और
 अलब्ध भोगों को भोगने की इच्छा तक भी न करे ।

जो विषयादिकों में गृह होता है वह उनका ही निरन्तर बारंबार
 चिन्तन-स्मरण करता रहता है; ऐसा जीव जब विषयादिकों के सेवन
 करने में किसी रोगादिक के पराधीन बन अपने को असमर्थ पाता

આ અવસ્થામાં જેની સાથે તે રહે છે તે પુત્ર કલાત્રિક પહેલા તેનો અનાદર
 કરે છે અને તિરસ્કારજનક વચન બોલે છે, પછી તે પણ તેનો અનાદર કરીને
 અપશબ્દ બોલે છે, પરંતુ હે જીવ ! તે તારા તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં
 પણ સમર્થ નથી, અને તુ પણ તેનો તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ
 નથી સમસ્ત સંસારી જીવ પોતાપોતાના કરેલા કર્મ અનુસાર સુખદુઃખાદિક ફળના
 ભોગવવાવાળા હોય છે એવો વિચાર કરી વિવેકી સંયમી મુનિ પૂર્વમાં ભોગવેલા
 તે ભોગોની સ્મૃતિ પણ ન કરે, તથા પ્રાપ્ત થયેલા ભોગોનું પણ સેવન ન કરે
 અને અલબ્ધ ભોગોને ભોગવવાની ઇચ્છા સુદ્ધા પણ ન કરે

જે વિષયાદિકોમાં ગૃહ થાય છે તે તેનું જ નિરન્તર ચિન્તન સ્મરણ કરતા
 રહે છે એવા જીવ જ્યારે વિષયાદિકોનું સેવન કરવામાં કોઈ રોગાદિકથી પરાધીન
 બને અને અસમર્થ બની જાય ત્યારે તે વિચારે છે કે—“જ્યારે હું નિરોગી બની

હે તથ યદ્ વિચારતા હૈ કિ-જય મેં નિરોગ હો જાઝેગા તથ નિયમ સે નિરન્તર ઇન વિષયાદિકોં કા મનમાફિક સેવન કરેગા। યદિ મુક્તે નીરો ગતા પ્રાપ્ત કરને મેં અપના સર્વસ્વ મી અર્પણ કર દેના પડે તો મી કોઈ ચિંતા કી પાત્ર નહોં। જીવન રહેગા તો ફિર ધન હો જાયગા। ધન હૈ મી કિસ લિયે? યદિ સાંસારિક મોજ મજાન દેખી તો ઇસ દ્રવ્ય કી પ્રાપ્તિ સે લાભ હી ક્યા મુઆ? ઇત્યાદિ અનેક પ્રકાર કે સંકલ્પ-વિકલ્પોં સે અશાન્ત ચિત્ત ધન નિરન્તર સંતપ્ત હોતા રહતા હૈ। ઇસ પ્રકાર કી સંતપ્તતા કા કારણ સિર્ફ ઇસ જીવ કી વિષયસંધી આસક્તિ હી હૈ। વે સંયમી મુનિ ધન્ય હૈ જો વિષયાદિક સેવન કે કટુકવિપાક કો જાનકર ઇસસે સર્વદા અપની રક્ષા કરતે રહતે હૈં। પરન્તુ જો ઇસકે કટુક વિપાક સે અનમિદ્ધ બને હુપ હૈં એસે કિત્તનેક ગ્રાહ્યવસ્તુ વ્યકર્ત્તી જૈસે મનુષ્ય હી ઇસ વિષયજાલ મેં ફંસ કર અપના ઇહલોક ઓર પરલોક ધોનોં કા બિગાડ કર નાના પ્રકાર કે કષ્ટોં કા અનુભવ કરનેવાલે હોતે હૈં। ઇસ લિયે વિષયોં કો ધોનોં મનોં મેં કષ્ટકારક જાન કર સંયમી મુનિ કો 'મોગાસક્તિ સે સર્વદા અપની રક્ષા કરને મેં સાવધાન રહના ચાહિયે। યહી ઇસ સૂત્ર કા આશય હૈં॥ સૂ. ૧॥

અર્થ ત્યારે નિયમથી નિરંતર આ વિષયાદિકોનું મનમાફક સેવન કરીશ કદાચ મને નિરોગતા પ્રાપ્ત કરવામાં પોતાનું સર્વસ્વ પણ અર્પણ કરી દેવું પડે તો કાંઈ ચિંતા નહિ, જીવન રહેશે તો પછી ફરીથી ધન થાશે. ધન કેના માટે છે? જો સંસારિક મોજમજા ન કરી તો આ દ્રવ્યની પ્રાપ્તિથી લાભ પણ થશે?" ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારના સંકલ્પ વિકલ્પોથી અશાંતચિત્ત બની નિરંતર સતપ રહ્યા કરે છે આ પ્રકારની સતપતાનું કારણ ફક્ત આ જીવની વિષયસંધી આસક્તિ જ છે

તે સંયમી મુનિ ધન્ય છે જે વિષયાદિકસેવનના કટુક વિપાકને બાંધીને તેનાથી સવદા પોતાની રક્ષા કરે છે પરંતુ જે તેના કટુક વિપાકથી અનમિદ્ધ બનેલા છે એવા કેટલાક ગ્રાહ્યવસ્તુ વ્યકર્ત્તી જેવા મનુષ્ય જ આ વિષયજાલમાં ફસીને પોતાનો આલોક અને પરલોક બંનેને બગાડીને નાના પ્રકારના કષ્ટોને અનુભવ કરવાવાળા થાય છે વિષયોને બંને બંધોમાં કષ્ટકારક બાંધીને સંયમી મુનિએ મોગાસક્તિથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરવામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ, જે જ આ સૂત્રનો આશય છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય વિનશનશીલતાં દર્શયતિ—‘તિવિહેણ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તિવિહેણ જાડિવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા
વહુયા વા, સે તત્થ ગઢિઢ્ઠણ્ ચિટ્ઠ્ઠિ ભોયણાણ્, તઓ સે ઇગયા
વિપરિસિટ્ઠં સંભૂયં મહોવગરણં ભવઙ્, તં પિ સે ઇગયા દાયાયા
વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે અવહરઙ્, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ,
ણસ્સઙ્ વા સે, વિણસ્સઙ્ વા સે અગારદાહેણ વા સે ડઙ્ઙઙ્ઙઙ્,
ઇય સે પરસ્સ અટ્ટાણ્ કૂરાણિ કમ્માણિ વાલે પકુવ્વમાણે તેણ
દુક્ખેણ વિપ્પરિયાસમુવેઙ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ત્રિવિધેન યાડિવિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવતિ—અલ્પા વા વહુકા વા, સ
તત્ર ગૃહસ્થિષ્ઠતિ ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા વિપરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ
તદપિ તસ્યૈકદા દાયાદા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્ય હરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા દહ્યતે તદ્,
રતિ સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યા-
સમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ત્રિવિધેને’—ત્યાદિ, એતસ્ય વ્યાખ્યા તુ તૃતીયોદેશે પ્રોક્તા । પ્રાગ્
ધનસ્ય નિસ્સારતા પ્રદર્શિતા, અત્ર તુ ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય ક્ષીણમાણતયા તદ-
ભાવાદપિ ન ભોગો ભવિતુમર્હતીતિ દર્શિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ભોગ કે સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દિશ્વલાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે
હૈ—“તિવિહેણ જાડિવિ” इत्यादि ।

ઇસ સૂત્રની વ્યાખ્યા તૃતીય ઉદ્દેશ મેં અચ્છી તરહ સે કી જા ચુકી
હૈ । વહાં પર સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કી હૈ, યહાં પર ભોગ ઔર
ઉપભોગ મેં કામ આનેવાલે સાધનભૂત ધનની અસારતા બતલાઈ ગઈ હૈ;
કારણ કિ સાંસારિક ભોગ ઔર ઉપભોગ કા કારણ ધન હોતા હૈ । ઇસકે

ભોગોના સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દેખાડતા સૂત્રકાર કહે છે—
“તિવિહેણ જાડિવિ” इत्यादि

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ત્રીજા ઉદ્દેશમા સારી રીતે આપવામા આવેલ છે તે
જગ્યેજગ્યે સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રગટ કરેલ છે આ ઠેકાણે ભોગ અને
ઉપભોગમા કામ આવવાવાળા સાધનભૂત ધનની અસારતા બતાવવામા આવેલ છે,
કારણ કે સાંસારિક ભોગ અને ઉપભોગનુ કારણ ધન જ છે તેના સદ્ભાવમા

एष 'मोगे रोगः' इति प्रोक्तम् । अथ च मोगसाधनं धनमपि नश्वरं ततः किं धेयमिति दर्शयति—'आसं च' इत्यादि ।

જાગ્રત મેં જીવ સાંસારિક મૌજ-મજા મોગનેમેં અપની શક્તિઅનુસાર કસર નહીં રાખતે, કિન્તુ મોગ સદા દુઃસ્વધાવી હોતે હૈં । કહા મી હૈ—

મોગ દુરે અથ રોગ વઢાઈ, વૈરી હૈં જગ જી કે ।

વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગૈં નીકે ॥

વજ્ર અગનિ વિષ સે વિપદર સે, યે અધિકે દુઃસ્વદાઈ ।

ધર્મરતન કે બોર અપલ અતિ, દુર્ગતિપથસહાઈ ॥

મોહ-ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, મોગ મલે કર જાનૈ ।

જ્યો કોઈ જન સ્વાય ષતૂરા, સો સય કંચન માનૈ ॥

જ્યો જ્યો મોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।

તૃષ્ણા નાગિન ત્યો ત્યો રૂંકે, લહર જહર કી આવૈ ॥

उन 'मोगों' की आशा से पाल अज्ञानी जीव प्राणातिपातादिक अनेक प्रकार के कूर कर्मों को करता हुआ विपरीतपत्तने को प्राप्त होता है; तथात् मोक्षमार्ग से विमुक्त हो जाता है ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार जब 'मोग' में 'रोग' है और 'मोग' का साधनभूत धन धिन श्वर है तब क्या करना चाहिये? इसका प्रत्युत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—“आसं च” इत्यादि ।

અવ સાંસારિક મોગ-મજા મોગવવામાં પોતાની શક્તિઅનુસાર કસર રાખતા નથી પણ મોગ સદા દુઃખદાયી થાય છે કહ્યું પણ છે—

મોગ દુરે અથ રોગ વઢાઈ વૈરી હૈં જગજીકે ।

વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ સેવત લાગૈં નીકે ॥

વજ્ર અગનિ વિપલે વિપદર સે યે અધિકે દુઃસ્વદાઈ ।

ધર્મરતનકે બોર અપલ અતિ દુર્ગતિપથસહાઈ ॥

મોહ ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની મોગ મલે કર જાનૈ ।

જ્યો કોઈ જન સ્વાય ષતૂરા સો સય કંચન માનૈ ॥

જ્યો જ્યો મોગ સંજોગ મનોહર મનવાંછિત જન પાવૈ ।

તૃષ્ણા નાગિન ત્યો ત્યો રૂંકે લહર જહર કી આવૈ ॥”

આવા ભોગેની આશાથી પાલ અજ્ઞાની અવ પ્રાણાતિપાતાદિક અનેક પ્રકારના કૂર કર્મો કરીને વિપરીતપત્તને પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ મોક્ષમાર્ગથી વિમુક્ત થાય છે ॥ સૂ० ૨ ॥

આ પ્રકારે ક્યારે ભોગમાં રોગ છે અને ભોગના સાધનભૂત ધન ધિનશ્વર છે ત્યારે શું કરવું જોઈએ? તેનો પ્રત્યુત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—“આસં ચ” ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—આસંચ છંદં ચ વિગિંચ ધીરે, તુમં ચેવ તં સહ-
માહદુ, જેણ સિયા તેણ નો સિયા, ઇણમેવ નાવબુજ્જાંતિ જે જણા
મોહપાડા, થીલોભપદ્ધિએ તે મો વયંતિ ઇયાઈ આયત-
ણાઈ, સો દુઃખાએ મોહાએ મારાએ નરગાએ નરગતિરિઠ્ઠાએ
સયયં મૂઢે ધર્મં નામિજાણઈ ઉદાહુ વીરે, અપ્પમાઓ મહામોહે,
અલં કુસલસ્સ પમાણં સંતિ મરણં સંપેહાએ મિદુરધર્મં
સંપેહાએ નાલં પાસ અલં તે ઇણહિં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—આશાં ચ છન્દશ્ચ વેવિક્ષ્વ ધીર ! ત્વમેવ તત્ શલ્યમાહત્ય યેન સ્યાત્
તેન નો સ્યાત્, શ્દમેવ નાવબુઘ્યન્તે યે જના મોહપ્રાટ્ટાઃ, સ્ત્રીલોકપ્રવ્યથિતઃ,
તે મો વદન્તિ, ઇતાન્યાયતનાનિ, તત્ (તેપા) દુઃખાય મોહાય મારાય નરકાય
નરકાત્, તિરશ્ચે, સતતં મૂઢો ધર્મં નામિજાનાતિ, ઉદાહ વીરઃ, અપ્રમાદો મહામોહે અલં
કુશલસ્ય પ્રમાદેન શાન્તિમરણં સંપ્રેક્ષ્ય મિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પશ્યાલં તે ઇતૈઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘આશાં ચે’ત્યાદિ । હે ધીર ! ધિયા=ચારિત્રારાધનરૂપયા મત્યા
રાજત ઇતિ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! =હે સંયમિન્ ! યદ્વા-ધિયં=બુદ્ધિમ્
ઈરયતિ=પ્રેરયતિ પરીપહોપસર્ગવિજયાર્થં યઃ સ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! હે
સંયમિન્ ! અથવા હે પરીપહોપસર્ગૈરક્ષોભ્ય ! આશાં=શબ્દાદિવિષયસ્પૃહાં,
છન્દઃ=ભોગસ્યાભિપ્રાયં ચ વેવિક્ષ્વ=પૃથક્કુરુ-પરિત્યજેત્યર્થઃ । હે શિષ્ય ! ત્વમેવ

ચારિત્ર કો આરાધન કરનેવાળી બુદ્ધિ સે જો શોભિત હોતા હૈ
અથવા પરીપહ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને કે લિયે જો બુદ્ધિ કો પ્રેરિત
કરતા હૈ યહાં ઉસકા નામ ધીર હૈ । સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈ કિ-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરીપહ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને-
વાલે શિષ્ય ! તુમ શબ્દાદિ વિષય કી ઇચ્છા ઔર ભોગ કી ચાહના કો
અપને સે પૃથક્ કરો-છોડો, કારણ કિ વ્રતી કા લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત હોના વ્રતલાયા હૈ । સંયમ કો લેકર મી જો શબ્દાદિવિષયો

ચારિત્રનુ આરાધન કરવાવાળી બુદ્ધિથી જે શોભિત થાય છે, અથવા પરિ-
પહ અને ઉપસર્ગને છૂટવા માટે જે બુદ્ધિને પ્રેરિત કરે છે, આ ઠેકાણે તેનું નામ
ધીર છે । સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરિપહ
અને ઉપસર્ગને છૂટવાવાળા શિષ્ય ! તમે શબ્દાદિ વિષયની ઇચ્છા અને ભોગની
ચાહનાઓને તમાગથી દૂર કરો-છોડો, કારણ કે-વ્રતીના લક્ષણ “નિશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત થવું પડેલા છે । સંયમને લધને પણ જે શબ્દાદિ વિષયને ભોગ-

કે મોગને કી આહના કે વશવર્તી બના રહતા હૈ વહ વંશકા સેવન કરનેવાલા હૈ । વે શબ્દાદિવિષયોંકો ન મી મોગતે છૌં તો મી ઉનકી પરિણતિ તન્મુલમત્સ્ય કે સમાન ઉસ ઓર લાલસાવાલી હોને સે સયમ કા નાશ કરનેવાલી માની ગઈ હૈ । સંયમ કો મૂલ સે નાશ કરનેવાલા શલ્ય હૈ । માયાશલ્ય કે સન્નાય સે હી અગ્રત મી વ્રત ઝૈસે માલૂમ પડત હૈં । અત સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! તું ઇસ શલ્ય કો દૂર કર, વ્યર્થ ક્યોં ઇસકે ખંદે મેં પકકર અપને કો કુ છત્રી બના રહા હૈ । દૂસરે વાહે કુછ મી કરતે હૌં વહ તુકે નહીં દેખના હૈ, તું અપની હી ઓર દેખ “તારું રે સંમાલ તને યીજાની રી પડી” તું કયા કર રહા હૈ ? ઇસી લિય સૂત્રકાર “સ્વમેષ” ઇસ પદ પર જોર દેકર શિષ્ય સે કહ રહે હૈં ।

અથવા-શલ્ય શબ્દકા અર્થ-અષ્ટવિધ કર્મ મી હૈ, વહ પહિલે પત લાયા જા ચુકા હૈ કિ-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સયમ પાલન કરને સે સંવર તો હોતા હી હૈ પરન્તુ સંયત કર્મોં કી નિર્જરા મી હોતી હૈ । ચારિ દ્વારાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં ર અચિરતિ, પ્રમાદ, કપાય, ઓર અશુભ યોગોંકા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ ત્યોં ર ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ ર ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા કર્મોંકા ક્રમશઃ નાશ કરતા જુઆ આગેર કે ગુણ

વવાની આહનાને વશવર્તી બની રહે છે, તે શબ્દાદિ વિષયોને બંધે નહિ ભોગવતા હોય તો પણ તેની પરિણતિ વડુલમત્સ્યવ્રમાન તે વચ્ચે લાલસાવાળી હોવાથી સયમનો નાશ કરવાવાળી માનવામાં આવે છે સયમને મૂળથી નાશ કરવાવાળા શલ્ય છે માયાશલ્યના સદ્બાવથી અગ્રત પણ મત જેવા માત્રમ પડે છે માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-હે શિષ્ય ! તું આ શલ્યને દૂર કર, વ્યર્થ આ માટે તેના દ્વારમાં પડીને પોતાને કુખી બનાવે છે ? બીજા બંધે કોઈ પણ કાર્ય કરતા હોય એ તારે જોવાનું નથી, તું કદા તારી જ તરફ રેખ, “તું તારું રે સંમાલ, તને બીજાની રી પડી ?” તું શું કરી રહ્યો છે ? તે માટે સૂત્રકાર “સ્વમેષ” આ પદ ઉપર જોર રાખીને શિષ્યને કહે છે

અથવા શલ્ય શબ્દનો અર્થ અષ્ટવિધ કર્મ પણ છે એ પહેલા બતાવવામાં આવેલ છે કે-“તપસા નિગ્રહા ચ” તપ, સયમ પાલન કરવાથી સંવર તો થાય જ છે પરંતુ સંયત કર્મોની નિર્જરા પણ થાય છે આસ્ત્રિયસંપનદાસ આત્મા જેમ જેમ અચિ નિ, પ્રમાદ, કપાય, અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતા જાય છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની વ્યવસ્થા થતી જાય છે આ ઉજ્જ્વલતાની વ્યવસ્થામાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદાસ કર્મોની ક્રમશઃ નાશ કરીને આ જ આગળના સુલુક્યાનોમાં વ્યક્ત થાય છે. એક સમય એવો

સ્થાનોં મેં ચઢતા ચલા જાતા હૈ । એક સમય એસા બી આતા હૈ કિ જિસમેં
 હિસ કી આત્યંતિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । હિસ પ્રકાર કર્મોચ્છેદ મેં ચારિત્ર કો
 સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! નિર્દોષ ચારિત્રારાધન
 કર ઔર હન કર્મોં પર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર । વિષય
 ભોગોં કી ચાહ સે એસે સુન્દરતમ ચારિત્ર કો વિગાડને કે લિયે ક્યોં
 વ્યર્થ મેં ચેષ્ટા કરતા હૈ ? ક્યોં હિસે નષ્ટ બ્રષ્ટ કરતા હૈ ? એસા કરને સે
 ઉલ્ટે અનન્ત સંસાર વર્ધન કરનેવાલે હન કર્મોંકા બંધન દૃઢ હી હોગા,
 જો તુજે અવર મેં દુઃખદાતા હોગા । અપને કો દુઃખી કરને મેં તેરા હી
 અપરાધ હૈ, હિસનેં ઔર કોઈ નિમિત્ત નહીં । હિસી વાત કી પુષ્ટિ “અષ્ટ
 વિધં કર્મ વા આહૃત્ય-પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખમુત્પાદયસિ ” ટીકાકારને
 હિસ પંક્તિસે કી હૈ । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રખ-જિસ ભોગાદિક કી ચાહના
 મેં પડકર તું સંયમ જૈસે અમૂલ્ય રત્ન કો કલંકિત કરને મેં સંકોચ નહીં
 કરતા હૈ । ક્યા હન ભોગાદિકોં કો ભોગને કી તેરી યહ ભાવના સફલ
 હો જાયગી ? । માન લિયા સંયમરત્ન કો વેંચ કર તૂને ભોગાદિક વસ્તુઓંકો
 खरीद भी लिया, परन्तु यदि तेरे प्रबल अन्तराय-भोगान्तराय का उदय
 है तो प्राप्त हुए उन भोगादिकों को तू नहीं भोग सकता । अथवा संयम

પણ આવે છે કે જેમા તેની આત્યંતિક શુદ્ધિ થઇ બાક છે આ પ્રકારે કર્મો-
 ચ્છેદમા ચારિત્રને સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત થયેલ છે માટે હે શિષ્ય ! નિર્દોષ
 ચારિત્રારાધન કર, અને એ કર્મો ઉપર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર
 વિષય ભોગોની આહનાથી એવા સુન્દરતમ ચારિત્રને બગાડવા શા માટે વ્યર્થ
 ચેષ્ટા કરે છે ? શા માટે તેને નષ્ટ બ્રષ્ટ કરે છે ? આવું કરવાથી ઉલ્ટા અનત
 સંસારને વધારવાવાળા તે કર્મોના બંધન દૃઢ જ થશે, જે તેને ભવભવમા દુઃખ
 દાતા થશે, પોતાને દુખી કરવામા તારોજ અપરાધ છે, તેમા કોઈ બીજું નિમિત્ત
 નથી આ વાતની પુષ્ટિ “અષ્ટવિધં કર્મ વા આહૃત્ય પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખ-
 મુત્પાદયસિ ” ટીકાકારે આ પંક્તિથી કહ્યું છે એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખ, જે ભોગા-
 દિકની આહનામા પડીને તું સંયમ જેવા અમુલ્ય રત્નને કલંકિત કરવામા સંકોચ
 કરતો નથી શું તે ભોગાદિકોને ભોગવવાની તારી એ ભાવના સફળ થશે ? માની
 લ્યે કે-આ સંયમરત્નને વેચીને તે ભોગાદિક વસ્તુઓને ખરીદી લીધી, પરંતુ
 કદાચ તારા પ્રબળ અંતરાય-ભોગાન્તરાયનો ઉદય હોય તો પ્રાપ્ત થયેલ તે ભોગા-
 દિકોને તું ભોગવી શકતો નથી, અથવા સંયમની ઓટમા બેસીને ભોગાદિકની

નાન્ય, સ્વત્વ=માયાદિરૂપમ્ અણ્વિધં કર્મ ના આદ્યસ્ય=પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુ સમુત્પા-
દ્યસિ । યતો યનાયાંદિના મોગપ્રાપ્તિ સ્યાત્ તેનૈવ કદાચિન્નો સ્યાત્, અન્તરાય-
કર્મપરિણામસ્યાઘટિતઘટનાઘટકત્વાત્ । અન્તરાયકર્મૈવૈચિત્ર્યમિદં મોહપ્રાટ્ટતા ન
જાનન્તીત્યાહ—‘શ્વયમે’—તિ, ‘મોહપ્રાટ્ટતા’ મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રાટ્ટતા=સમ્યગ્-
શુષ્ઠિતા, અજ્ઞાનતમસાઽઽચ્છાદિતા इत्यर्थ, ય જના તીર્થચરગણધરાજાવિરાધકા
શ્વયમે=મોગસાધનમપ્યમોગસાધનં મવતીતિ કારણૈવૈચિત્ર્યમેવ નાવયુધ્યતે=ન
જાનન્તિ । મોગાન્તરાયોદયાદજ્ઞાનાયા વિપરીતમતયો હેતુૈવૈચિત્ર્યં ન મન્યન્તે ।
શ્વયમે હિ લાકે મોગાય સમવહિતોઽપિ કારણકલાપોઽન્તરાયોદયાદનર્થાય મવતિ ।

ફી ઓટ મેં થેઠ કર મોગાદિક ફી વ્હાહના સે તૂને અન્ય પ્રાણિયોં ફો
રિક્ષાકર કિસી દૂસરે વ્હાને સે મોગાદિક સામગ્રી ફો જુટાન મેં સાધન
મૂત દ્રવ્યાદિક ફા સંગ્રહ મી કરલિયા તો તુમે યહ ફેસે વિશ્વાસ હૈ ફિ
હસ દ્રવ્યાદિક સે મુશ્કે ડસ મનોનુકૂલ સામગ્રી ફા લામ અચદ્યર હો
હી જાયગા । વિપરીત મી હો સક્તા હૈ, કારણ ફિ અઘટિત ઘટના ફો
ઘટાને મેં પદુ અન્તરાય કર્મ ફા ઉદય અમી તેરે ઘના હુઆ હૈ, ડસકા
જપ તક નાશ નહીં હોતા તથ તક શાળી મનોનુકૂલ મોગાદિકોં ફો
‘મોગને મેં સર્વથા અસમર્થ રહતા હૈ, યહી યાત “જેણ સિયા તેણ જો
સિયા” હન પદોં સે વ્યક્ત ફી હૈ । જિસ દ્રવ્યાદિક સાધન સે ‘મોગપ્રાપ્તિ
હોતી હૈ અન્તરાય ફે ઉદય હોને પર ડસી સે મી સંમવ હૈ ફિ ન મી હો ।
યહ સદ્ય અન્તરાય કર્મ ફી હી વિચિત્રતા હૈ, પરન્તુ જિન ફી આત્મા મોહ
ફે ઉદય સે આચ્છાદિત હો રહી હૈ, તથા તીર્થકર તથ ગણધરાદિકોં ફી
આજ્ઞા ફે વિરાધક હૈ થે અન્તરાય ફી હસ વિચિત્રતા ફો નહીં જાનતે ।

આજ્ઞાથી તુ અન્ય પ્રાણીઓને રીઅવી કોઈ બીજા બહાનાથી મોગાદિક સામગ્રી
મોગવધાગ સાધનમૂત દ્રવ્યાદિકોના તમજ પજુ કરી હે તો પજુ તને એવો
વિશ્વાસ કેમ છે કે—આ દ્રવ્યાદિકથી મને તે મનોનુકૂળ સામગ્રીનો લાભ અવશ્ય
મળ જ જશે? વિપરીત પજુ બની શકે છે કારણ કે અઘટિત ઘટનાને ઘટા વામા
પદુ અન્તરાય કર્મનો ઉદય હજુ પજુ તારે વિષમાન છે તેનો વ્યાપ્તિ મુખી નાશ
થશે નહિ ત્યા મુખી પ્રાણી મનોનુકૂળ મોગાદિકોને એ વધવામાં સુવધા અસમર્થ
રહે છે. આ યાત “જેણ સિયા તેણ જો સિયા” આ પદાથી વ્યક્ત કરી છે
જે દ્રવ્યાદિક સાધનથી મોગપ્રાપ્તિ થાય છે અતત્તયના ઉદય થતા તેનાથી પજુ સભવ
છે કે ઉદય ન પજુ બને, આ બધી અન્તરાય કર્મની જ વિચિત્રતા છે, પરંતુ
એની આત્મા મોહના ઉદયથી આચ્છાદિત થઈ રહી છે તથા જે તીર્થકર અને
ગણધરાદિકોની આજ્ઞાના વિરોધક છે તે અન્તરાયની આ વિચિત્રતાને બહુતા નથી

યથા સ્વભોગાર્થં વિપુલવિભવસમ્પાદિતં સકલજનાધ્યર્થકારિકારુકલાકલાપનિર્મા-
યિતં સકલેન્દ્રિયસુસ્વાવલમ્બિ-ગગનચુમ્બિ-પ્રાસાદમવલોકિતુમુપરિતનભાગમુપગતો
ભવનશોભાવલોકનનિમગ્નો ભવનાધિપતિરારોહમાર્ગેનાવતરન્ કર્મવૈચિત્ર્યાત્પાદસ્વ-
લનેન તતો નિપત્ય મૃતિમવાપ । અહો ! પશ્યન્તુ મહામોહમહિમાનમ્ ।

સચ વાત હૈ ઓગાન્તરાય કે ઉદય સે જો અજ્ઞાન સે અન્ધ હો રહે હૈ, એવં
જિનકી મતિ વિપરીત બની હુઈ હૈ વે इस अन्तराय की विचित्रताको
कि-जो पदार्थ भोगसामग्री का साधन है वही कालान्तर में अन्तरायादि
निमित्त को पाकर उसका साधन नहीं होता है-नहीं माना करते हैं, परन्तु
उनकी मान्यता या अमान्यता से कुछ भी नहीं हो सकता है। हम
व्यवहार में यह बात प्रत्यक्ष देखते हैं कि-भोग के लिये एकत्रित किये
गये कारणकलाप-साधन अन्तराय के उदय से अनर्थकारी हो जाते हैं।

જૈસે કિસી ધનિક વ્યક્તિને અપને ઉપભોગ કરને કે લિયે પૂર્ણ ઉપભોગ
કી સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુન્દર ગગનતલચુમ્બી પ્રાસાદ બહુત
ચતુર કારીગરો દ્વારા બનવાના પ્રારંભ કિયા । ધીરે ૨ વહ બનકર પૂર્ણ
તૈયાર હો ગયા । મકાનમાલિક ઉસકી શોભા કા નિરીક્ષણ કરને લિયે
વહાં ગયા । સવ સે ઝંચે સ્વળડ પર ચઢ કાર ઉસને ઉસકી શોભા કા
સર્વાંગનિરીક્ષણ કિયા । પૂર્ણ શોભા સે યુક્ત ઉસે દેસકર વહ આનન્દ
મગ્ન બી હુઆ । કુછ દેર વાદ વહ વહાંસે વાપિસ લોટકર નીચે આને લગા,

સાચી વાત છે કે ઓગાન્તરાયના ઉદયથી જે અજ્ઞાનથી અધ થઈ રહેલ છે, અને
જેની મતિ વિપરીત બનેલ છે તે આ અતરાયની વિચિત્રતાને કે-જે પદાર્થ ભોગ
સામગ્રીનું સાધન છે તે કાલાન્તરમાં અતરાયાદિક નિમિત્તને મેળવી તેનું સાધન
બનતું નથી-માનતા પણ નથી, પરંતુ તેની માન્યતા અગર અમાન્યતાથી
કાંઈ પણ બની શકતું નથી અમે વ્યવહારમાં આ વાત પ્રત્યક્ષ દેખીએ છીએ
કે-ભોગ માટે એકત્રિત કરવામાં આવેલ કારણકલાપ-સાધન અતરાયના ઉદયથી
અનર્થકારી બની જાય છે

જેવી રીતે કોઈ ધનિક વ્યક્તિએ પોતાના ઉપભોગને માટે પૂર્ણ
ઉપભોગની સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુન્દર ગગનચુમ્બી મહેલ ઘણા ચતુર
કારીગરો દ્વારા બનાવવાનો પ્રારંભ કર્યો ધીરે ધીરે તે બનીને પૂર્ણ તૈયાર
બની ગયો મકાનમાલિક તેની શોભાનું નિરીક્ષણ કરવા ત્યા ગયો સૌથી
ઉંચા ખડ ઉપર ચડીને તેણે તેની શોભાનું સર્વાંગનિરીક્ષણ કર્યું પૂર્ણ શોભાથી
યુક્ત તેને દેખીને તે આનંદમગ્ન પણ થયો, થોડા વખત પછી તે ત્યાથી પાછો
ફરીને નીચે આવવા લાગ્યો પરંતુ વચમાં જ અશુભ ઉદયથી કોઈ એક સીડીના

મોહનીય કામપ્રાધાન્યેન સ્ત્રિયાઃ પ્રાધાન્યમિતિ વર્ણયતિ—‘સ્ત્રી’ તિ, સ્ત્રીભાવે= કામીનીજનૈ, પ્રવ્યથિતઃ=પ્રવ્યથેષ વ્યથિતઃ=અધીનીકૃતઃ મોગાશપાશ્વચ્ચઃ સાઃ ધાતુજ્ઞાત્રી મન । તે સન્યાનપિ મુદ્ગરુપદશાદિના સસારાધોગર્થે પાતયન્તીત્વા -‘તે મો’ રૂપાદિ । તે ચનિતાવશ્યર્થિનો વદન્તિ=કથયન્તિ ‘મો’ રૂપિત સનોપને હે મના ! એતાનિ=કામિન્યાનીન્યથ આયતનાનિ=મોગાધિષ્ટાનાનિ સુલ્લકારણાની સ્પર્શઃ । કામિન્યો હિ કમનીયસુલ્લકારણીભૂતા સકલજગતો સન્નામરૂપા નિસ્સિદ્ધ સ્વોકામન્દાનન્દસન્દોદાયિન્યો મવન્તિ, કિં મોગસ્તાભિર્વિના?, રૂપાદિ દુરન્તિ । પરન્તુ ધીર ઈ મેં અશુભોદય સે કિસી જગ સીદી પર સે વસકા પર ફિસલ ગયા ઓર વહ વહાં સે નીચે ગિર કર મર ગયા । ઇસ દૃષ્ટાન્ત સે યહી ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ—જો સામગ્રી મોગ કે નિમિત્ત હોતી હૈ યહી મોગાન્તરાય કે ઉદય સે કાલાન્તર મેં અનર્થ કે કિયે જીવોં કો હો જાતી હૈ । પરન્તુ કર્મ કી ચલચલા ઈ કુછ પેસી હૈ, જો ઇસ જીવ કો પાહિરી વસ્તુઓં મેં ઉન્મત્ત બના રહી હૈ ।

इसी मोहनीय के उदयमें भोगों की आशारूपपाश से बंधे हुए जीवों में काम की प्रधानता होने से वे स्त्रियों के द्वारा व्यभिच किये जाते हैं, अधीन किये जाते हैं । शास्त्रकार कहते हैं कि—पैसे जीव “इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट” हो तो कोई अचरज की बात नहीं है, परन्तु ये स्वयं विगड़कर दूसरों को भी विगाड़ने की बातें करते हैं, यही एक बड़ा आश्चर्य है । ने दूसरों से यही कहते हैं कि—“अरे भाई! इन की आदि पदार्थों के सेव- करने में ही ससार का सर्व सुख

પ્રાપ્તિ થાય છે તેના ખજ હાથથી નથી, બન નથી નીચે પડીને મરી જાય છે હાથથી જોયું ત્યારપછી નીકળે છે કે-એ સામગ્રી મોગને નિમિત્ત હોય છે તે મોગાન્તરમા ઉદયથી કાલાન્તરમા એવાને બનાવે છે પરન્તુ કર્મની ચલચલા જ કોઈ જોવી છે કે એ આ જીવ બહારની વસ્તુઓમાં ઉન્મત્ત બનાવે છે

આ મોહનીયના ઉદયમાં મોગોની આશારૂપ પાશથી જ કામની પ્રધાનતા હોવાથી તે સ્ત્રિયોદ્દાસ વ્યથિત થયે જાય છે પ્રવેશ એવા છે શાસ્ત્રકાર કહે છે કે—એવો જીવ ઇતો ભ્રષ્ટસ્તો ભ્રષ્ટ થાય છે કોઈ અથ સ્વની વાત નથી, પરન્તુ તે ચાતે બગડીને બીજાને પણ બગાડવા વાળો વાળો છે એ પણ એક મોટું આશ્ચર્ય છે તે બીજાઓને જોમ કહે છે કે મારે ભાઈ

કિન્તુ નૈવં, પ્રત્યુત દુઃસ્વાદ્યર્થમેવેત્યાહ—‘તદિ’—ત્યાદિ, તેષાં તત્=કામિની-વશવર્તનં તાસાં સુખાયતનકથનં ચોભયમેવ દુઃસ્વાય=એહિકપારત્રિકાઽકલ્યાણાય ભવતિ । एवं सर्वत्र चतुर्थ्यन्ते योज्यम् । अपि च मोहाय=અજ્ઞાનાય । किं च-મારાય=મરણં મારસ્તસ્મૈ ચરમકામદશાર્થમ્, કામસ્ય દશવિધા અવસ્થાઃ સમુત્પદ્યન્તે, તાસુ દશમાવસ્થા મરણાત્યા ભવતિ । ઉક્તञ्च—

સમાયા હૈ, ये ही सुख के कारण हैं ” । मोहाभिभूत जीवों की दृष्टि में स्त्री ही उत्तम से उत्तम आनंद प्रदान करनेवाली वस्तु प्रतिभासित होती है । जगत के अनेक सुन्दर पदार्थों से भी वह अधिक सुन्दर उन्हें मालूम देती है । इसके बिना संसार का मजा भी उनकी दृष्टि में फीका रहता है, परन्तु इस प्रकार की उनकी मान्यता केवल एक मोह का ही विलास है । जिस प्रकार अशुचि पदार्थ का सेवन करनेवाला वराह अपने को सुखी मानता है उसी प्रकार “नारीजघनरन्ध्रस्थविष्मूत्रमयचर्मणा” नारीके जघन के छिद्रस्थ चमड़े के सेवन से अज्ञानी मनुष्य भी अपने को सुखी मानता रहता है, परन्तु ज्ञानियों की दृष्टि में इस प्रकार के जीवों का व्यवहार गर्हित एवं निन्दित है । इसी बात को खुलाशा करते हुए कहते हैं कि—“तत् तेषां दुःस्वाय मोहाय” इत्यादि । स्त्रियों के अधीन रहना और उन्हें सुख का स्थान समझना ये दोनों बातें मानव जगत को इस लोक और परलोक में अकल्याणप्रद हैं, अज्ञान को देनेवाली हैं और काम की

તે જ સુખનુ કારણ છે ” મોહવશ જીવોની દૃષ્ટિમા સ્ત્રી જ ઉત્તમમા ઉત્તમ આનંદ આપવાવાળી વસ્તુ પ્રતિભાસિત થાય છે જગતના અનેક સુદર પદાર્થોથી પણ તે અધિક સુદર તેને માલૂમ પડે છે તેના બિના સંસારની મજા પણ તેની દૃષ્ટિમા ફીકી રહે છે, પરંતુ આ પ્રકારનો તેનો કેવળ એક મોહનો જ વિલાસ છે જે પ્રકારે અશુચિ પદાર્થનુ સેવન કરવાવાળા ભૂડ પ્રાણી પોતાને સુખી માને છે તેજ પ્રકારે “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમય-ચર્મણા” નારીના જઘના છિદ્રસ્થ ચામડાનુ સેવન કરવાથી અજ્ઞાની મનુષ્ય પણ પોતાને સુખી માનતો રહે છે, પરંતુ જ્ઞાનીયોની દૃષ્ટિમા આ પ્રકારના જીવોનો વ્યવહાર ગર્હિત અને નિન્દિત છે આ વાતનો ખુલાસો કરીને કહે છે કે— તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય ઇત્યાદિ સ્ત્રિયોના આધીન રહેવુ, અને તેને સુખનુ સ્થાન સમજવુ, એ બન્ને વાતો માનવજગતને આલોક અને પરલોકમા અકલ્યાણપ્રદ છે અજ્ઞાનને દેવાવાળી છે અને કામની અન્તિમ દશાને પહોંચાડવાવાળી છે.

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા, દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિच्छति ।
 તૃતીયે दीर्घनिःश्वासश्चतुर्थे ज्वरमाविशेत् ॥ ૧ ॥
 પચ્ચમે વદ્યતે ગાત્રં, પષ્ઠે મક્ત ન રોચતે ।
 સપ્તમે ચ મહેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં સ્પજેત્ ।
 કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે વદ્ય તે હમી ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

અતઃ એવોક્તં ‘મારાય’-તિ । કિચ્ચ-મૃત્વા નરકાય=દશવિધશ્ચેત્રયાતનાસ્યાનાય,
 તથા ચ-‘નરકતિરશ્ચે’ અથ ‘નરક’ ઇતિ છુપ્તપદ્ધતી, તન નરકાભિર્ગત્ય યદિ સ
 જન્મ લભતે તર્હિ પ્રાયસ્તિર્યમ્પોનિષ્વચેત્યર્થ ।

અન્તિમ દશા મેં પહુંચાનેવાલી હૈં । કામ કી વદ્ય અવસ્થાનું વતહાર્દ હૈં,
 ઉનમેં મરણ યે કામ કી અન્તિમ અવસ્થા હૈં । કહા મી હૈં—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિच्छति ।
 તૃતીયે दीर्घनिःश्वासश्चतुर्थे ज्वरमाविशेत् ॥ ૧ ॥
 પચ્ચમે વદ્યતે ગાત્રં, પષ્ઠે મક્ત ન રોચતે ।
 સપ્તમે ચ મહેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં સ્પજેત્ ।
 કામિનાં મદનોદ્વેગા જાયન્તે વદ્ય તે હમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ હૈં । સ્ત્રિયોં કે સંગમ સે જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોંકા ઘર
 થન કર આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કી થજહ સે મર કર નરક મેં જા પડતા હૈં । વહાં
 પર વદ્ય પ્રકાર કી કોષ્ટીય યાતના કો બોગતા હૈં । નરક જન યાતનાઓં કે

કામની દશ અવસ્થાઓ બતાવેલ છે તેમા મશજુ બે કામની અન્તિમ
 અવસ્થા છે કહું પડુ છે—

‘ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિच्छति ।
 તૃતીયે दीर्घनिःश्वासश्चतुर्थे ज्वरमाविशेत् ॥ ૧ ॥
 પચ્ચમે વદ્યતે ગાત્રં પષ્ઠે મક્ત ન રોચતે ।
 સપ્તમે ચ મહેત્કમ્પ ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં સ્પજેત્ ।
 કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે વદ્ય તે હમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે સ્ત્રિયોના ગુણમ લુપ્તોને નરકનુ દુઃખ આપે છે અને અતમા
 તેનાથી છુપ અનેક અસાધ્ય રોગોનુ ધર બનીને આર્તરૌદ્ર ધ્યાનથી મરીને નરકમા
 બધ છે તે કહાલે દશ પ્રકારની રોગીય યાતનાઓ બોગવે છે નરક આ યાતનાઓના

एवम्भूतः स्वात्महितं न जानातीत्याह—‘सतत’—मित्यादि । सततं=नित्यं, मूढः=दर्शनमोहचारित्रमोहकर्मणा युक्तः धर्म=जिनोक्तं श्रुतचारित्रलक्षणं न जानाति । एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु—‘उदाहे’—ति, वीरः=परिज्ञातसकलहेयो पादेयस्तीर्थङ्करादिः, उत्=प्राबल्येन आह=कथितवान् । अवार्पत्वाद् भूते लट् । कि-मित्याह—‘अप्रमाद’ इति, महामोहे=स्त्रीपुंनपुंसकवेदरूपे अप्रमादः=प्रमाद आसक्तिः प्रधान स्थान हैं। वहां से निकल कर जीव प्रायः तिर्यंच योनि में ही जन्म धारण करता है। “नरक-तिरिक्खाण” अर्थात् नरक से निकल कर जीव जब जन्म धारण करता है तो वह प्रायः तिर्यंच योनि में ही उत्पन्न होता है, यह अर्थ इस पद से प्रतीत होता है।

जिनकी आत्मा नित्य चारित्रमोहनीय के उदय से मलिन बनी है वे जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित इस श्रुतचारित्र रूप धर्म को नहीं जानते हैं। इस प्रकार का कथन श्री अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीका है, जिन्होंने जगत के समस्त हेयोपादेय तत्त्वों को अच्छी तरह जान लिया है। इस कथन में सूत्रकार महावीर स्वामी की प्ररूपणा प्रकट करने से तथा अपनी कल्पना का निषेध करने से उसमें प्रमाणता प्रकट करते हुए कहते हैं—“एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाह वीरः”। यह समस्त पूर्वोक्त कथन तथा जो कुछ आगे कहा जाता है वह सब मैंने नहीं किया है, किन्तु वीर भगवान् ने कहा है। भगवान् का उपदेश है कि जीवों को “अप्पमाओ महामोहे” स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद

પ્રધાન સ્થાન છે ત્યાથી નીકળીને જીવ પ્રાય તિર્યંચ યોનિમા જ જન્મ ધારણ કરે છે “નરકતિરિક્ખાણ” નરકમાથી નીકળી જીવ ત્યારે જન્મ ધારણ કરે છે ત્યારે તે તિર્યંચ યોનિયોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે એ પૂર્વોક્ત અર્થ આ પદથી પ્રતીત થાય છે.

જેને આત્મા કાયમ ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી મલિન બનેલ છે તે જીનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત આ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને જાણતો નથી આ પ્રકારનું કથન શ્રી અતિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીનું છે જેણે જગતના સમસ્ત હેયોપાદેય તત્ત્વોને સારી રીતે જાણી લીધા છે આ કથનમા સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામીની પ્રરૂપણા પ્રગટ કરવાથી, તથા પોતાની કલ્પનાનો નિષેધ કરવાથી તેમા પ્રમાણુતા પ્રગટ કરતા કહે છે “એતત્સર્વં ન મયા સ્વમત્યા પ્રોક્તં કિન્તુ ઉદાહવીર” આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અને જે આગળ કહેવામા આવશે તે બધા મે કરેલ નથી પણ વીર ભગવાને કરેલ છે. ભગવાનનો ઉપદેશ છે કે જીવોને “અપ્પમાઓ મહામોહે” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ

ન પ્રમાદોઽપ્રમાદ, સ વિધેયઃ, ન તત્ર પ્રમાદપ્રમત્તેન માન્યમ્ । અન્યદપ્યાહ-‘અલ’ મિત્યાદિ, ‘કુશલસ્ય’ કુશાન્=માવકુશાન્ અષ્ટવિધક્રમાણિ લુનાતિ=છિનતીતિ કુશલઃ=કર્મવિદારણપરસ્તસ્ય પ્રમાદેન=મથ-વિપય-કપાય-નિદ્રા-વિકયારૂપેષ અલં=અર્થ, તત્ર કુશલે પ્રમાદસ્યાસમ્મથાત્ । કિં કૃત્વા પ્રમાદ ન કરોતીત્યાહ-‘શાન્તી’-ત્યાદિ, શાન્તિમરણં, શમનં શાન્તિઃ=સકલકર્મનાશઃ, અત એવ શાન્તિઃ=

રૂપ મહામોહ મેં આસક્તિ નહીં કરની વાહિયે । પ્રમાદ સે સંસાર ઓર અપ્રમાદ સે મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । સૂત્ર મેં શાન્તિ ઓર મરણ इन शब्दों का वाच्य अर्थ क्रमशः अव्यायाधसुखलक्षण मोक्ष और चतुर्गतिरूप संसार है, क्योंकि “शमनं शान्तिः” शमन का नाम शान्ति है, वह समस्त कर्मों का अभावस्वरूप अवस्था है । इसका दूसरा नाम अव्यायाधसुखलक्षण मोक्ष भी है । पारंपार चतुर्गतियों में प्राणी जहाँ पर मरते रहते हैं उस का नाम मरण-संसार है । मावकुशरूप अष्टविध कर्मोंका जो छेदन करता है वह कुशल है, क्योंकि-“कुशालं लुनातीति कुशलः” । अष्ट प्रकार के कर्मों को विदारण करनेवाले का नाम कुशल है । “अलं कुशलस्य प्रमादेन” अर्थात् कुशल के लिये प्रमाद होता ही नहीं है । मथ विपय कपाय निद्रा और विकथा के भेदसे प्रमाद पाच प्रकारका होता है । जो कर्मों को नाश करने में प्रयत्नशाली हो रहे हैं, वे कभी प्रमत्तदशासंपन्न नहीं होते हैं । कारण कि वे जानते हैं कि-प्रमाद से संसार में परिध्रमण तथा अप्रमाद से शान्ति-अव्यायाधसुख

અને તપુસકવેદ રૂપ મહામોહમા આસક્તિ કરવી બેઠકે નહિ. પ્રમાદથી સંસાર અને અપ્રમાદથી મુક્તિને લાભ થાય છે. સૂત્રમા શાન્તિ અને મરણ આ શબ્દોનો માન્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાયાધસુખલક્ષણ મોક્ષ અને ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર છે. કારણ કે “શમનં શાન્તિ” શમનનું નામ શાન્તિ છે તે સમસ્ત કર્મોની અભાવ સ્વરૂપ અવસ્થા છે તેનું બીજું નામ અવ્યાયાધસુખલક્ષણ મોક્ષ પણ છે. વારંવાર ચતુર્ગતિમાં પ્રાણી ભ્યાં મરતા રહે છે તેનું નામ મરણ-સંસાર છે. ભાવકુશ રૂપ અષ્ટવિધ કર્મોનું જે છેદન કર છે તે કુશલ છે. કારણ કે “કુશાલં લુનાતીતિ કુશલઃ” આઠ પ્રકારના કર્મોનું વિદારણ કરવાવાળાનું નામ કુશલ છે. “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશલને માટે પ્રમાદ થતો જ નથી. મથવિપય કપાય નિદ્રા અને વિકથાના બેદથી પ્રમાદ પાચ પ્રકારનો હોય છે, જે કર્મોનો નાશ કરવામાં પ્રયત્નશાળી હોય છે તે કદાં વખત પ્રમત્તદશાસપન્ન બનતા નથી. કારણ કે તેઓ બુદ્ધે છે કે-પ્રમાદથી સંસારમાં પરિધ્રમણ અને અપ્રમાદથી શાન્તિ

અવ્યાવાધસુખલક્ષણો મોક્ષઃ, 'મરણં' મ્રિયન્તે મુહુર્મુહુથતુર્ગતિષુ પ્રાણિનો યત્રેતિ તન્મરણં=સંસારઃ, શાન્તિશ્ચ મરણં ચ શાન્તિમરણં, તત્ સંપ્રેક્ષ્ય=અપ્રમાદેન સંસારો-પરમઃ, પ્રમાદેન સંસારપરિભ્રમણં ભવતીતિ સમ્યગ્લોચ્ય । અપિ ચ—'ભિદુરધર્મ'—મિતિ, પ્રમાદો વિપયામિષ્વદ્ઃ, સ ચ શરીરે ભવતિ તતો ભિદુરો=ભદ્રશીલો ધર્મઃ=સ્વભાવો યસ્ય તદ્ ભિદુરધર્મં શરીરં, સ્વતઃ એવ વિનશનશીલત્વાત્, સમ્પ્રેક્ષ્ય=વિચાર્ય સ્વરૂપ મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ અવ્યાવાધ-સુખ-સ્વરૂપ શાન્તિ કે લાભ સે જો વંચિત કરાનેવાલા હૈ ઉસ પ્રમાદ સે લાભ હી કયા હો સકતા હૈ, ણેસા વિચાર કર સંયમી કો પ્રમાદ કમી નહીં કરના ચાહિયે । “ ભિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” મંગ હોના જિસકા સ્વભાવ હો ઉસકા નામ ભિદુરધર્મ હૈ, ણેસા યહ શરીર હૈ; ક્યોં કિ યહ સ્વતઃ હી વિનાશશીલ હૈ । સંયમી મુનિકો ઇસ વાત કા દૃઢ વિશ્વાસ કરના ચાહિયે કિ યહ મેરા શરીર અવશ્ય હી વિનશ્વર હૈ, ક્યોં કિ યહ પૌદ્ગલિક પર્યાય હૈ, જો પર્યાય હોતી હૈ વહ ઉત્પાદ-વ્યય-ધર્મ-વિશિષ્ટ હોતી હૈ । પુદ્ગલ કા સ્વભાવ હી પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ હૈ । અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ કે મોહ મેં ફંસ કર જો સંયમી અપને સંયમરૂપી ધન કો પ્રમાદ-રૂપી ચોરોં કે જરિયે લુટવા દેતે હૈં વે મહાપ્રમાદી હૈં । સંયમ કી આરાધના કરતે હુએ યદિ ઇસ શરીર કા પતન હોગા, તો ઉસ દશા મેં કમી ન કમી અવશ્ય અવ્યાવાધ-સુખ-રૂપ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોગી; અન્યથા-ઇસ સંસાર

અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ મુક્તિનો લાભ થાય છે માટે આ અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ શાન્તિના લાભથી જે દૂર રખાવે છે તે પ્રમાદથી લાભ પણ કંઈ થતો નથી એવો વિચાર કરી સંયમીએ પ્રમાદ કદી પણ કરવો જોઈએ નહિ “ ભિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” ભગ થયુ જેનો સ્વાભાવ છે તેનું નામ ભિદુરધર્મ છે, એવું આ શરીર છે, કારણ કે તે સ્વતઃ વિનાશશીલ છે સંયમી મુનિએ આ વાતનો દૃઢ વિશ્વાસ કરવો જોઈએ કે આ માટે શરીર અવશ્ય જ વિનશ્વર છે કારણ કે આ પૌદ્ગલિક પર્યાય છે, જે પર્યાય હોય છે તે ઉત્પાદ વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોય છે પુદ્ગલનો સ્વભાવ જ પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ છે, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુના મોહમાં ફસીને જે સંયમી પોતાના સંયમરૂપી ધનને પ્રમાદરૂપી ચોરો મારફત લુટાવી દે છે તે મહાપ્રમાદી છે સંયમની આરાધના કરતા કરતા કદાચ આ શરીરનું પતન થશે તો તેવી દશામાં કોઈને કોઈ વખત અવશ્ય અવ્યાવાધ સુખરૂપ મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે અન્યથા આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતા અનન્ત

પ્રમાદો ન વિધેય इति सम्बन्धः । भागास्तु युक्तपूर्वा अपि न वृत्तिजनका, इत्याह-
'नाल' मिति भोगा परिशुक्ता अपि स्पृहानिवृत्तये नाल-न समर्था भवन्ति । उक्तञ्च—

“ नग्मी तिप्पइ कड्ઢેहि, नावगाहि મહોવહી ।

ન જમો સબ્બમૂપહિ, इत्थीहि पुरिसा तथा ” ॥ ૧ ॥

મેં પરિભ્રમણ કરતે છૂગ અનન્ત કષ્ટોં કો ભોગના પહેગા । શરીર કા નાશ અવશ્યમાવી હૈ, તો મેં સંયમની ચિરાધના કરકે હસે અશ્વિનશ્વર અમર તો કર નહીં સકતા । અતઃ હસ ચિનશ્વર વસ્તુ સે જો મુક્તે પરપરાસ્પસે અશ્વિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તો યહ સપ્થ સે પઢા મારી લામ મુક્તે મિલતા હૈ, ફિર યયોં પ્રમાદી યન કર હસ શરીર કૈ મોહ મેં પઢ અપને સંયમની ચિરાધના કરૂં ? । ઢોનોં હાલત મેં શરીર કા નાશ સ્વયં સિદ્ધ હૈ; ફિર મી ઇક હાલત અનત આનન્દપ્રદ ઓર દૂસરી હાલત અનત કષ્ટપ્રદ હૈ, ઢેસા વિચાર કર સયમી કો કમી મી પ્રમાદ નહીં કરના ઘાહિયે । હસી લિયે સૂત્રકાર ને “ મિષુરધર્મ સમેક્ષ્ય ” હસ વાક્ય કદ્વારા સંયમી જનકો શિક્ષા લી હૈ । તથા આગે મી શિક્ષા લેતે છુપ લે પ્રકટ કર રહે હૈ કિ જિન પંચેન્દ્રિયોં કૈ ભોગ તુમને પહિલે ભોગ લિયે હૈ લે મી તુમહારી હચ્છા કી શાન્તિ કરને કૈ લિયે સમર્થશાલી નહીં હૈ, કહા મી હૈ—

“ નગ્મી તિપ્પइ કડ્ઢેहि, નાવગાहि મહોવહી ।

ન જમો સબ્બમૂપહિ, इत्थीहि पुरिसो तथा ” ॥ ૧ ॥

કષ્ટને ભોગવવા પડશે, શરીરના નાશ અવશ્યભાવી છે તે હું સચમની વિશ્લેષના કરીને તેને અશ્વિનશ્વર અમર તો કરી શકતા નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરપરાસ્પથી અશ્વિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તે આ બધાથી માટે લાભ મને મળે છે તે પણ આ માટે પ્રમાદી બનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સચમની નિલધના કરૂં, બને હાલતમાં શરીરના નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તે પણ જો હાલત અનત આનન્દપ્રદ અને ઊંચા હાલત અનત કષ્ટપ્રદ છે જોલે વિચાર કરી સચમીજે કોઈ વખત પણ પ્રમાદ નહિ કરવા ભોઈજે, માટે સૂત્રકારે “ મિષુરધર્મ સમેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સચમી જનને શિક્ષા આપી છે તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતા તે પ્રકટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના ભોગ તમે પહેલા ભોગવી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાન્તિ કરવા માટે સમર્થશાલી નથી, કશું પણ છે—

નગ્મી તિપ્પइ कड्ઢેहि, नावगाहि મહોવહી ।

ન જમો સબ્બમૂપહિ इत्थीहि पुरिसो तथा ॥ ૧ ॥

છાયા—નાગ્નિસ્તૃપ્યતિ કાષ્ઠૈ = નાપગાભિર્મહોદધિઃ ।

ન યમઃ સર્વભૂતૈશ્ચ, સ્ત્રીભિઃ પુરુષસ્તથા ॥ ૧ ॥ ઇતિ

તત્સર્વ પદ્ય=બુદ્ધ્યસ્ય, દશેર્જ્ઞાનસામાન્યાર્થકત્વાત્, અતો હે મેધાવિન્ ! તે= ત્વ સદુપદેશજિઘૃક્ષોઃ એભિઃ=પ્રમાદમયૈર્દુઃસ્વજનકૈર્વિપયોપભોગૈઃ અલં=વ્યર્થમ્, એભિરાત્મકલ્યાણ સાધ્ય નાસ્તીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-એતૈર્વિપયોપભોગૈરવ્યાવાધમુગ્ધમ્, અલમ્=પર્યાપ્તં વિશિષ્ટતરમિત્યર્થઃ, અતર્કિતોપનતમરણે સંસારે મુગ્ધલ્પસ્યાઽસમ્ભવાદવ્યાવાધમુગ્ધમેવ મુગ્ધમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ મુ. ૩ ॥

જિસ પ્રકાર અગ્નિ કાષ્ઠોં સે, સમુદ્ર નદિયોં સે, કાલ પ્રાણિયોં કી મૃત્યુ સે તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય મી સ્ત્રીસંભોગ સે કમી મી તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ ॥ ઇસલિયે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ મી યહ અપને મન મેં દૃઢ ધારણા કર લો કિ પ્રમાદ-ભય-દુઃસ્વજનક ઇન વિપયભોગોં સે કમી મી આત્મકલ્યાણ સાધ્ય નહીં હો સકતા, અતઃ ઇનકી ચાહકી દાહમેં ક્યોં અપને સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મ કી આહુતિ કરને કે લિયે સંકલ્પ વિકલ્પ કરતે હો । યહ તુમસે ઇસલિયે કહા જાતા હૈ કિ તુમ સદુપદેશ કો ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા રખતે હો ।

અથવા—યહ સમજો કિ હમ વૈષયિક મુગ્ધ કી અપેક્ષા અવ્યાવાધ-સુખ વિશિષ્ટતર હૈ । કારણ કિ સંસારદશા ભયવાલી હૈ, ઇસમેં નિર્ભય અવસ્થા તો હો હી નહીં સકતી । યદિ થોડી દેર કે લિયે યહ અસંભવ મી સંભવિત કલ્પિત કર લિયા જાય કિ—“યહાં પ્રાણી ભયરહિત હૈ” તો મી

એ પ્રકારે અગ્નિ કાષ્ઠોથી, સમુદ્ર નદિઓથી, કાળ પ્રાણિઓની મૃત્યુથી તૃપ્ત થતો નથી, તે પ્રકારે મનુષ્ય પણ સ્ત્રી સંભોગથી કોઈ વખત પણ તૃપ્ત થતો નથી માટે હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ એ, પોતાના મનમાં દ્રઢ કરી લ્યો કે પ્રમાદ ભય-દુઃસ્વજનક આ વિપયભોગોથી કોઈ વખત પણ આત્મ-કલ્યાણ સાધ્ય થઈ શકતું નથી, માટે તેની આહુતી દાહમાં શા માટે પોતાના સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મની આહુતિ કરવા સંકલ્પ વિકલ્પ કરો છો આ તમને એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે તમે સદુપદેશને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા રાખનાર છો

અથવા એ સમજો કે આ વૈષયિક મુગ્ધની અપેક્ષા અવ્યાવાધ મુગ્ધ વિશિષ્ટતર છે, કારણ કે સંસારદશા ભયવાળી છે તેમાં નિર્ભય અવસ્થા તો થઈ શકતી નથી કદાચ થોડા વખત માટે આ અસંભવ પણ સંભવિત માની લઈએ કે “આહી પ્રાણી ભયરહિત છે” તો પણ ઠીક નહિ, કારણ કે—એ

મોગામિપયુદાનાં મોગસ્યાધિગમેડનધિગમેડપિ મહાદુઃસમવેત્યુપદિશતિ-
'પયં પસ્ટ' ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય—પય પસ્ટ મુળી, મહઠમય નાહવાહજ્ઞ કચળ, પસ
વીર પસસિપ, જે ન નિવિજ્ઞહ આયાણાપ ન મે દેહ ન કુપ્પિજ્ઞા,
થોવ લઘુ ન ચિંસપ, પહિસેહિઓ પરિણમિજ્ઞા, પય મોળ
સમણુવાસિજ્ઞાસિ તિવેમિ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—પતત્પદ્ય મુને ! મહઠ્ય નાતિપાતપત્ કચ્ચન એવ વીરઃ પ્રશંસિત
યો ન નિવિજ્ઞેવ આગ્રનાય ન ય વદાતિ ન કુપ્પત્, સ્ત્રાકં સમ્બ્વા ન મિન્દેત્,
પ્રતિપિદ્ પરિણમત્, એત મૌનં સમનુવાસયેઃ, ॥ ઇતિ પ્રવીતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—'એત'—વિસ્થાદિ । હ મુને ! = હ અનગાર ! એત્=કામમાગાસેવર્તં,
મહઠ્યં=મયજનકતયા મહાદુઃ સ્વરૂપમ્, મરણફારણત્વેન દુઃસ્થે મહત્ત્વમ્, પસ્ય=
સર્વયા દુઃસજનકં જાનીહિ । ઉક્ત્ય—

ઠીક નહીં; કારણ કિ—ન માત્રુમ કાલકા ગ્રાસ હો કલ જાના પહે ।
મૃત્યુ કા જયર્વસ્ત મય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણી કો લગા હી રહતા હૈ ।
કાલ યાજે યજાતા તો આતા નહીં હૈ કિ જિસસે ઉસસે સંવેત હો
જાય । યહ તો વિના વિચાર કરનેવાલે પ્રત્યેક જીવાત્મા કો અપને પંજે મેં
ફેંસા હેતા હૈ । અત સંસારદશા મયબાલી હૈ ઓર યહાં પર નિર્મયદશા
સ્વ સુખ કા અશ માત્ર મી પ્રાપ્ત હોના સર્વથા અસંભવ હૈ; અત અન્યા
પાંચ સુખ હી વાસ્તવિક સુખ હૈ । ઇસકી પ્રાપ્તિ સયમારાધન સે હી જીર્ણો
કો હોતી હૈ । યેસા વિચાર કર સંયમી મુનિ કો સંયમભાવ મેં કરી
મી પ્રમત્તદશાયુક્ત નહીં હોના ચાહિયે ॥ સૂ. ૫ ॥

ખબર નથી કે કાગળો ગ્રાસ બની ક્યારે બનુ પડે. આ પ્રકારે મૃત્યુને
ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણીને લાગેલો જ રહે છે કાળ વાળુ વગાડતો તો અવતો
જ નથી કે જેનાથી પ્રાણી થેતી બાધ, એ તો વિચાર નહિ કરવાવાળા પ્રત્યેક
જીવાત્માને પોતાના પબ્લમા દેખાવે છે માટે સંસારદશા ભયવાળી છે, અને આ
કેડાણે નિભયદશારૂપ મુખનો અગમ્ય પદ્મ પ્રાપ્ત થવો સર્વથા અસંભવ છે
માટે અન્યાઅધમુખ જ વાસ્તવિક મુખ છે તેની પ્રાપ્તિ સયમારાધનથીજ
હોયોને યાય છે એવો વિચાર કરી સંયમી મુનીએ સંયમભાવમા કેવળ વખત
પદ્મ પ્રમત્તદશાયુક્ત થયુ બોધએ નહિ. ॥ સૂ. ૬ ॥

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” ॥ १ ॥ इति ।

छाया—एतस्मादुष्णतरा अन्याः का वेदना गण्यन्ते ।

यत्कामव्याधिगृहीतो, दग्धते किल चन्द्रकिरणैः ॥ १ ॥

भोग રૂપી માંસ મેં ગૃહ્થ બને પ્રાણિયોં કો ભોગોં કી પ્રાપ્તિ હોને પર અથવા નહીં હોને પર વડા ભારી દુઃખ હી હોતા હૈ । ઇસ વાત કા સૂત્રકાર ઉપદેશ દેતે હુણ કહતે હૈ—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि ।

હે મુને ! કામભોગ-વિષયસેવન કો તુમ વહુત ભારી ભય-સ્વરૂપ-અર્થાત્ મરણરૂપ ભય કા કારણ હોને સે મહાદુઃખરૂપ હી માનો । ભાવાર્થ-કામભોગ કા સેવન સદા ભય એવં દુઃખદાયી માના ગયા હૈ । વિષયસેવન સે જીવોં કો અનેક દુઃખ હોને કા સદા ભય બના રહતા હૈ । તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃખ અન્હેં ભોગને ભી પડતે હૈ । મહાકષ્ટોં કો ભોગતેર જીવ જવ અત્યન્ત દુઃખી હો જાતે હૈ, તવ વે આત્મઘાત તક કર લિયા કરતે હૈ । ઇસલિયે વિષયસેવન સદા મહાદુઃખદાયી હી હૈ, એસા સમજ્ઞ કર કમી ભી અનગાર કો ડસ તરફ લાલસાપરિણતિ નહીં કરની ચાહિયે । કહા ભી હૈ—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” इति ॥

ભોગરૂપી મામમા ગૃહ્થ બનેલ પ્રાણિઓને ભોગોની પ્રાપ્તિ થવાથી અથવા નહિ મળવાથી ઘણુ ભારી દુખ જ થાય છે આ વાતનો સૂત્રકાર ઉપદેશ આપી કહે છે—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि

હે મુનિ ! કામભોગ-વિષયસેવનને તમે ઘણો ભયસ્વરૂપ અર્થાત્ મરણરૂપ ભયનુ કારણ હોવાથી મહાદુખરૂપ જ માનો.

ભાવાર્થ—કામભોગનુ સેવન સદા ભય અને દુખદાયી જ માનવામા આવે છે વિષયસેવનથી જીવોને અનેક દુખ થવાનો સદા ભય રહ્યા કરે છે, તથા અનેક પ્રકારના દુખ તેને ભોગવવા પણ પડે છે, મહાકષ્ટો ભોગવી ભોગવી જીવ જ્યારે અત્યંત દુખી થાય છે ત્યારે તે આત્મઘાત પણ કરે છે માટે વિષયસેવન સદા મહાદુખદાયી જ છે, એવું સમજીને કોઈ વખત પણ આણુગારે તે તરફ લાલસાપરિણતિ નહિ રાખવી જોઈએ કહ્યું છે—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” इति ॥

યદ્રા યસ્કામભોગાસક્ત આસન્નદારૈર્હિંસાદિપુ પ્રવર્તતે તસ્યેહ પરમ ચ મસ્ત્યે
મવતીતિ પશ્ય । इह लोके पुरुषवचकाऽस्त्रीकपादिघोरपारदारिकाणां मारदम्बन-
जिह्वाच्छेदनबन्धघातादिकं च पश्य, परलोके नरकादिषूपपातं पश्येति तत्स्पर्श्यम् ।
एवं तर्हि किं विधेयम् ? इत्याह—‘नातिपातयेत्’—दित्यादि । मुनिः कश्चन=कमपि
प्राणिनं नातिपातयेत्=न प्राणैर्व्यपरोपयत् ; उपलक्षणं यथावादायास्तत्राणामेतत् ।

કામભોગ સે અધિક સંસાર મેં ઔર કોઈ ઘેવના ઉજ્જતર નહીં હે,
ક્યોં કિ ફુસ વ્યાધિ કા રોગી શીતલચંદ્રકિરણોં સે भी અત્યત સંતપ્ત
હો જાતા હે ।

અથવા—કામભોગસેવન હસ જીવ કો હસ લોક મેં ઔર પરલોક
મેં મહામયકારી હોતા હે । ક્યોં કિ કામભોગ મેં આસક્ત, પ્રાણી હિંસા-
વિક પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હે । હિંસાવિકોં મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે જીવ
અશુભ કર્મોં કો યાંચતા હે, ઔર હસકે ફલ કો વહ નરકાદિ યોનિયોં મેં
મોગતા હે । જો પ્રાણી હિંસક, ફૂઠા, ચોર ઔર પરવારલંપટ હોતે હેં ઉનેં
હસી લોક મેં ફાંસી, રાજવંડ, જિહ્વાછેદન, પંચ ઔર ઘાતાવિક અનેક
કષ્ટ મોગને પડતે હેં, તથા પરલોક મેં નરકાદિ ગતિયોં મેં ઉનકો જન્મ
ધારણ કરના પડતા હે । ઁસા સમજ કર હે મુને ! તુમ હસ ઔર અપની
માનસિક પરિણતિ કો લાલસાવાલી મત કરો, કિન્તુ સદા હસ પ્રકાર
કો પ્રવૃત્તિ કરો કિ જિસસે કિસી મી જીવ કી ધિરાધના ન હો । સૂત્ર મેં
“નાતિપાતયેત્” યહ પદ ફૂઠ, ચોરી આદિ આસ્રવોં કા ઉપલક્ષક હે;

કામભોગથી અધિક આ સંસારમાં બીજા કોઈ વેદના ઉપ્યુત્તર નથી, કશુંકે,
આ બ્રાહ્મિના રોગી શીતલ ચંદ્રકિરણોથી પણ અત્યત સંતપ્ત થાય છે

અથવા કામભોગસેવન આ જીવને આલોકમાં અને પરલોકમાં મક્કા ભવ
કારી થાય છે. કાશ્યુ કે કામભોગમાં આસક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પ્રયોગ પ્રવૃત્તિ
કરતા રહે છે. હિંસાદિકોમાં પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવ અશુભ કર્મોં બાંધે છે, અને
તેના જીવને તે નરકાદિ યોનિઓમાં ભોજવે છે જે પ્રાણી, હિંસક, જુઠે, ચોર અને
પરશીલ પટ હોય છે તેને આ લોકમાં ફાંસી, રાજવંડ, જિહ્વાછેદન, પંચ અને
ઘાતાદિક અનેક કષ્ટા ભોગવવા પડે છે તથા પરલોકમાં નરકાદિ ગતિઓમાં
તેને જન્મ ધારણ કરવો પડે છે એવું સમજીને હે મુનિ ! તમે આ તરફ યોતાની
માનસિક પરિણતિને લાલસાવાળી બનાવો નહિ, પણ સદા એવી પ્રવૃત્તિ કરો કે
જેનાથી કોઈ પણ જીવની નિરાધના ન થાય. સૂત્રમાં “નાતિપાતયેત્” આ પદ
જુઠ, ચોરી આદિ આશ્રવોનું ઉપલક્ષક છે, અર્થાત્ સયમી જીવોને યોતાની પ્રવૃત્તિ

પરિત્યક્તભોગાભિલાપસ્ય પદ્મકાયપરિપાલકસ્ય ગુણાધિગમો ભવતીત્યાહ—‘एष’
 इत्यादि । एषः=कामभोगस्पृहाभिप्रायविवेचनचतुर एक एव प्रमादपञ्चकरहितः,
 वीरः=कर्मरिपोर्नाशनाद्वीर इव वीरः, प्रशंसितः=तीर्थङ्करगणधरादिभिरभिनन्दितः ।
 वीरस्वभावमाह—‘यो ने ’—त्यादि । यो वीरः, ‘आदानाय’ आदीयते=अधिगम्यते
 निखिलकर्मक्षयसञ्जातसर्वविषयज्ञानं येन तदादानं=चारित्रानुष्ठान, तस्मै न
 निर्विघ्नेत=न विघ्नेत—‘अन्ये लभन्तेऽशनवसनादिकं वराकोऽहं न लभे किमेतया

अर्थात्-સંયમી જીવોં કો અપની પ્રવૃત્તિ ઇસ પ્રકાર કી કરની ચાહિયે કિ
 जिससे उन्हें हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों का बंध नहीं हो । जो
 सयमी मुनि इस प्रकार की शुभप्रवृत्तिवाला तथा काम-भोग की इच्छा से
 रहित होता है, तथा पांच प्रमाद के वशवर्ती नहीं होता है वह वीर है
 और प्रशंसा का पात्र है । ऐसे मुनि की प्रशंसा तीर्थंकर गणधरादि देव
 भी किया करते हैं । प्रशंसा पाने का कारण यह है कि वह सदा अपनी
 इस प्रकार की प्रवृत्ति से क्रमशः भविष्य में कर्मशत्रुओं पर विजय प्राप्त
 करनेवाला हो जावेगा । धन्य हैं वे जो चारित्र अंगीकार करके किसी भी
 निमित्त के उपस्थित होने पर उस चारित्र से विरक्ति-भाव पैदा नहीं
 करते । यहां “आदान” शब्द का अर्थ चारित्र का अनुष्ठान है, क्योंकि
 इस से ही सकल कर्मों के क्षय से उद्भूत सर्वपदार्थविषयक बोध—केवल-
 ज्ञान जीवों को प्राप्त होता है । “अशनवसनादिक दूसरों को तो प्राप्त हो
 रहे हैं मैं ऐसा अभाग्य हूं जो मुझे कोई पूछता भी नहीं है, इस चारित्र

એવા પ્રકારની કરવી જોઈએ કે જેનાથી તેને હિંસા જીઠું ચોરી આદિ આશ્રવોનો
 બંધ ન થાય

જે સયમી મુનિ આ પ્રકારની શુભ પ્રવૃત્તિવાળા તથા કામભોગની ઇચ્છાથી
 રહિત હોય છે તથા પાંચ પ્રમાદને તાબે થતા નથી તે વીર છે અને પ્રશંસા-
 પાત્ર છે એવા મુનિની પ્રશંસા તીર્થંકરગણધરાદિ દેવ પણ કરે છે પ્રશંસા
 મળવાનું કારણ એ છે કે—તે સદા પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ક્રમશઃ ભવિ-
 ષ્યમા કર્મશત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા થઈ જશે ધન્ય છે તેઓને જે
 ચારિત્ર અંગીકાર કરીને પછી કોઈ પણ કારણ ઉપસ્થિત થવા છતાં પણ તે ચારિ-
 ત્રથી વિરક્તિભાવ પેદા કરતા નથી આહીં “આદાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્રનું
 અનુષ્ઠાન છે, કારણ કે તેનાથી જ સકલ કર્મોના ક્ષયથી ઉદ્ભૂત સર્વપદાર્થ-
 વિષયક બોધ—કેવળજ્ઞાન જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે “અશનવસનાદિક બીજાને તો
 પ્રાપ્ત થતા જ રહે છે અભાગી હું છું જે મને કોઈ પૂછતું પણ નથી આ ચારિત્રને

પરિગૃહીતયા દુર્લભલામયા પ્રવ્રજ્યયા' इत्येष 'ब्रह्मणाऽनगारवण स्वयमवमन्येते
ति तात्पर्यम् । " वहुं परधरे अस्थि, विविह खाइमसाइमं, अ तस्य पंडिओ कुप्पे,
इच्छा विअ परो ण वा " ॥ इत्यादि भगवद्वचनात् ।

अपि च—लामालामसममाय सन् स्तोत्रम्=अर्घ्यं भैक्षं कञ्च्वा=प्राप्य दातारम्
अस्मादिकञ्च न निन्देत्=न जुगुप्सेत्, किन्त्वेन चिन्तयेत्, ममैवान्तरायोदयप्राप्त
व्यमेतत् । किञ्च=प्रतिपिद्धः=निपिद्ध सन् परिणमेत्=निवर्तेत किञ्चिदपि दौर्मनस्यं
न कुर्यात्, व गृहस्य परुषवाग्भिर्न तिरस्कृयात्, तंतनाटाविशब्द न कुर्यादित्यर्थः ।

કે કિ જિસમેં લામ દુર્લભ હૈ અગીકાર કરને સે મુશ્કે લામ હી ક્યા હુમા ”
इस प्रकार ब्रह्मण अनगार की तरह स्वय अपने ग्रहण किये हुए चारित्र की
उपेक्षा न करे । यह भी स्वप्न में विचार न करे कि—“ देखो तो मही, इन
गृहस्थों के यहां अशन पान स्वाद्य स्याद्य आदि विविध वस्तुएँ मौजूद हैं
परन्तु ये कितने अविनयी, अश्रद्धालु एवं लोभी हैं जो इनमेंसे मुझे कुछ
भी नहीं देते हैं ” । चाहे कुछ मिले या न मिले, अथवा थोड़ा मिले, साधु
का यही परम कर्तव्य है कि वह इन अवस्थाओं में समभावशाली
रहे । दाता की अथवा उसके विये हुए अलादि की कमी भी निंदा न कर ।
अल्पलाभ होने पर यही एक मात्र विचार करे कि मेरा ही यह अन्तराय
का प्रयत्न उदय है, जो यथेच्छ लाभ नहीं हो रहा है, अथवा नहीं हुआ है ।
आहारादिक के निमित्त परधरप्रवेश करते समय यदि वहां पर आह-
रादिक की याचना करने पर उस के लिये कोई निषेध भी करे तो उस
समय मन में कोई जात का वृर्माय न आने देवे, और न उस गृहस्थ का
“ तू अघमात्मा है ” इत्यादि कठोर शब्दों से तिरस्कार ही कर ।

જેમાં લાભ દુર્લભ છે અગીકાર કરવાથી મને લાભ શું થયો ” આ પ્રકારે ૬૬મું
અણુગાર માફક સ્વય પોતાના અણુ કરેલા ચારિત્રની ઉપેક્ષા કરે નહિ. એવું
પણ સ્વપ્નથી વિચાર ન કરે કે—“જુઓ ! તે ગૃહસ્થોને ત્યાં અશન પાન પ્રાપ્ત
સ્વાદ્ય આદિ વિવિધ વસ્તુઓ મોજુદ છે પરંતુ એ બધા કેટલા અવિનયી અશ-
્રદ્ધ અને લોભી છે જે તેમણી મને કાંઈ પણ દેતા નથી. ’ ભલે મળે, ભલે ન
મળે, ભલે જરૂર મળે, સાધુનું એ પરમ કર્તવ્ય છે કે તે બંને અવસ્થામાં સમભાવી
રહે. દાતાની અથવા તેનાથી અપામેલા અન્નાદિની કોઈ વખત પણ નિંદા ન કરે.
અપવાલ થવાથી એ એક જ માત્ર વિચાર કરે કે—મારો આ અતસયના પ્રયત્ન ઉદય
છે કે જેથી મને યથેચ્છ લાભ થતો નથી, અથવા થયો નથી. આજ્ઞાસરિક નિમિત્તે
પરધર પ્રવેશ કરતી વખતે કદાચ આજ્ઞારિકની યાચના કરવાથી કાંઈ તેને માટે નિષેધ

ઉપસંહરન્નાહ-‘એત’-દિત્યાદિ । એતત્=વ્રતજ્યાનિર્વેદરૂપમ્-આદાનાકોપનમ્, અલ્પા-નિન્દનમ્, પ્રતિપિદ્ધનિર્વર્તનં મૌનં-મુનેરિદં મૌનમ્-અનગારાચરણં જ્ઞાનાચારાદિક-મિત્યર્થઃ, હે શિષ્ય ! ‘સમનુવાસયેઃ’ સમ્-સમ્યક્પ્રકારેણ પૂજા-સત્કાર-ગૌરવ-નિદાનરાહિત્યેન અનુવાસયેઃ-અનુપાલયેરિત્યર્થઃ, ગણધરાદિસેવિતં નિરતિચારં ચારિત્રં પરિપાલયેરિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥

અન્ત મેં ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હેં-યે જો પૂર્વોક્ત સાધુ કા આચાર પ્રકટ ક્રિયા હૈ કિ-વહ અપને ગ્રહણ ક્રિયે હુણ ચારિત્ર કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ન રહે, અલ્પલાભ મેં ખી સંતુષ્ટ રહે, નિષેધ કરને પર પરધર સે શાંતિપૂર્વક વાપિસ હો જાવે । અતઃ હે શિષ્ય ! તુમ અચ્છી તરહ સે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ ઓર નિદાન કી ભાવના સે રહિત હોકર ગણધરાદિ-સેવિત ઇસ નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન કરો । “ ઇતિ બ્રવીમિ ” ઇન પદોં કા અર્થ પહિલે સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીય અધ્યયન કા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

પણુ કરે તો તે વખતે મનમા કોઈ પણ જાતનો હુલ્લાવ લાવે નહિ, તેમજ તે ગૃહસ્થનો “ હું અધર્માત્મા છે ” ઇત્યાદિ ખરાબ શબ્દોથી તિરસ્કાર પણુ ન કરે

અતમા ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે-આ જે પૂર્વોક્ત સાધુનો આચાર પ્રગટ કરેલ છે કે-તે પોતાના ગ્રહણ કરેલ ચારિત્ર પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રાખે નહિ. અલ્પ લાભમા પણુ સંતુષ્ટ રહે નિષેધ કરવાથી ધરથી શાંતિપૂર્વક પાછા ફરી જાય. માટે હે શિષ્ય ! તમે સારી રીતે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ અને નિદાનની ભાવનાથી રહિત થઈને તીર્થંકર ગણધરાદિકથી સેવિત નિરતિચાર ચારિત્રનુ પાલન કરો “ ઇતિ બ્રવીમિ ” આ પદોનો અર્થ પહેલા સ્પષ્ટ કરેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ઇતિ બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

॥ આચારાંગસૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પञ्चમોદેશ ॥

અમિહિતઘટુર્યોદેશોઽધુના પञ્ચમસ્ય વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્યતે । પૂર્વે માગામિષ્ણં વિશય લોકનિશ્ચયા શરીરરક્ષણાર્થે વિચરણીયમિત્યુક્તમ્ । અપ્રાપિ તદ્વત્ પ્રતિપાદયિષ્યતે । તથા ચ વિષયકપાયકરાસજ્વાલાજટિલસસારદાવાનલપ્રસ્તા વાસ્કુરુદ્ધ ઇષ પલાયમાના નિર્વાપશાન્તિપ્રાપ્તય પરિહૃતમોગસ્પૃહો મુક્તિપञ્ચમહાવ્રતા નિરુપાનુષ્ઠાનપર* કાપનિર્વહણાર્થે લોકનિશ્ચયા વિહરતિ, આશ્ચર્યરહિતસ્ય દેહસાધનાઽસ્મન્નાત્, દેહસ્યાસન્નાત્ ધર્માઽપિ મનિતું નાર્હતિ । દેહસન્નાત્ત્વ નિશ્ચયા મનવિ । નિશ્ચા હિ પञ્ચમા, ઉક્તઃ—

॥ આચારાંગસૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા પાંચવૉં ઉદેશ ॥

ઘટુર્ય ઉદેશ કી વ્યાખ્યા સમાપ્ત હો ચુકી, અથ યહાં પંચમ ઉદેશ કી વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્ય હતી હૈ । પહેલે જો યહ કહા ગયા હૈ કિ—‘મોગોં સે ચિત્ત ઘટ્તિ કો હટાકર શરીરરક્ષા કે લિયે સંયમી કો લોક કી નેસરાય સે વિચર ના ચાહિયે; યહી વિષય યહાં પર સ્પષ્ટ કિયા જાયગા । મૃગ કે વચ્ચે કી તરહ જો સંયમીજન હસ સંસારરૂપી વાવાનલ સે—કિ જો વિષય—કપાય રૂપી મયંકર ઝલાલા સે વ્યાપ્ત હૈ—ગ્રસ્ત હોકર નિરાશા ધર્મતા લાભ કે લિયે હતત્તાત વૉઢા ફિરતા હૈ, જિસ્ને ‘મોગોં કી ઇચ્છા કા પરિસ્થાગ કર દિયા હૈ, પञ્ચમહાવ્રતોં કા જો આરાધક હૈ, ઓર નિર્વોપ અનુષ્ઠાન કે આચરણ કરને મેં જો સર્વથા સાધધાન હૈ વહ અપને શરીરનિર્વાહ કે લિયે લોક-નિશ્ચા (નેસરાય) સે વિચરતા હૈ, ક્યોંકિ વિના આશ્રય કે વહ

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદેશ

ત્રીથા ઉદેશની વ્યાખ્યા સમાપ્ત થઈ હવે પાંચમા ઉદેશની વ્યાખ્યા શરૂ થાય છે, પહેલાં જે એમ કહેવામા આવેલ છે કે—ભોગોથી ચિત્તવૃત્તિને હટાવી શરીરરક્ષા માટે સંયમીએ લોકની નેસરાયથી વિચરતું જોઈએ. આ જ વિષય આ ઠેકાણે સ્પષ્ટ કરવામા આવશે.

મૃગના જાણ્યા માફક જે સંયમી જન આ સંસારરૂપી વાવાનલથી કે જે વિષયકપાયરૂપી ભયકર જ્વાલાથી વ્યાપ્ત છે, ત્રાસીને નિરાશા ધર્મતા લાભ માટે અહીં તહીં ફર્યા કરે છે જેણે ભોગોની ઇચ્છાનો પરિસ્થાગ કર્યો છે. પંચમહાવ્રતોના જે આરાધક છે અને નિર્વોપ અનુષ્ઠાનનું આચરણ કરવામા જે સર્વથા સાધધાન છે તે પોતાના શરીરના નિર્વાહ માટે લોક-નિશ્ચા (નેસરાય)થી વિચરે છે. કારણ કે આશ્રય વિના દેહની સાધના બની શકતી નથી. દેહની સાધના વિના ધર્મનું

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પળ્લન્તા;
તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ॥

(સ્થાનાઙ્ગ ૦ સ્થાન ૫।૩૦ ૩।)

છાયા—ધર્મ યુક્ત ચરતઃ પશ્ચ નિશ્રાસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞાનિ, તદ્વથા-ષટ્કાયાઃ, ગણો, રાજા, ગાથાપતિઃ, શરીરમ્, ઇતિ ।

યદ્યપિ દેહસ્ય સાધનાનિ-વસતિવસ્ત્રપાત્રાશનશયનાસનાદીનિ સન્તિ, તથાપિ તેષુ પ્રત્યહમાહારસ્યાઽઽવશ્યકતયા તસ્ય પ્રાધાન્યં, સ ચ ગૃહપતેઃ સકાશાદ્ગવેષયિ-તવ્યો ભવતિ । સ હિ ગૃહસ્થો નિજપરિવારપોષણાર્થમન્નાદિકં સમુત્પાદયત્યેવ, તતઃ સંયમજીવનરક્ષણાય વૃત્તિરેષ્ટવ્યા ભવતીતિ ।

કી સાધના નહીં હો સકતી, દેહ કી સાધના કે વિના ધર્મ કા આરાધન નહીં હો સકતા; અતઃ ધર્મ કી આરાધના કરને કે લિયે દેહ કી સાધના, ઔર દેહ કી સાધના કે લિયે લોક કી નેસરાય સંયમી કો આવશ્યકીય હૈ । નેસરાય પાંચ પ્રકાર કી હૈ ? કહા ભી હૈ—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પળ્લન્તા;

તંજહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરનેવાલે સંયમીજન કે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન હૈ—ષટ્કાયા, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઔર શરીર । યદ્યપિ દેહ કી સાધના કે સાધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન ઔર આસનાદિક હૈ તો ભી ઊન સબમેં આહાર કી હી મુખ્યતા હૈ । સંયમીજન ત્રીન કરણ ત્રીનયોગ પૂર્વક સાવધ વ્યાપાર સે રહિત હોતે હૈ, અતઃ ઊસ આહાર કી ગવેષણા ગૃહસ્થોં કે યહાં કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ વે ગૃહસ્થ અપને પરિવાર કે પોષણ કે લિયે

આરાધન બની શકતુ નથી અને ધર્મની આરાધના કરવા માટે દેહની સાધના, અને દેહની સાધના માટે લોકની નેસરાય સયમીને આવશ્યક જ છે નેસરાય પાચ પ્રકારની છે કહ્યુ પણ છે—

“ ધમ્મં ણ ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પળ્લન્તા, તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરવાવાળા સયમી જનો માટે પાચ નિશ્રા-સ્થાન છે ષટ્કાયા, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર કદાચ દેહની સાધનાના સાધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન અને આસનાદિક છે તો પણ એ સધનામા આહારની મુખ્યતા છે સયમીજન સાવધ વ્યાપારથી ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી રહિત હોય છે માટે તેવા આહારની ગવેષણા ગૃહસ્થોને ત્યા કરવી જોઈએ, કારણ કે

અનનતરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—‘પર્ય મોર્ણ સમણુવાસિજ્ઞાસિ’ ઇતિ । તથા નિરતિચારચારિત્રપાલનં તુ ભોક્ત્રિભયા મવતીતિ કથિતમ્, અપ્રાપિ મુનિના સમ્યગાહારશુદ્ધિર્ધિચિન્તનીયતિ વર્ણયિષ્યતે ।

ગૃહપતયો हि स्वीयपुत्रदुर्हिप्रापयं शस्त्रसमारम्भं कुर्वन्तीति वर्णयति—‘जमिणं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—‘જમિણ વિરૂઘરૂઘેર્હિ સત્યેર્હિ લોગસ્સ કમ્મસમા રમ્મા કજ્જતિ ત જહા—અપ્પણો સે પુત્તાણ ધૂયાણ સુણ્ઠાણ નાર્ઠેણ ધાર્ઠેણ રાર્ઠેણ દાસાણ દાસીણ કમ્મકરાણ કમ્મકરીણ આપ સાપ પુઠોપહેણાપ સામાસાપ પાયરાસાપ સનિહિસનિચઓ કજ્જઈ, ઇદમેગોસિં માણવાણ ભોયણાપ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરતે હૈં । સંયમી મુનિ સંયમજીવન કી રક્ષા કે લિયે અપની આવશ્યક્તાનુસાર ગૃહસ્થ કે ઘરું સે આહાર આદિ લેકર સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હૈં ।

યહાં પર “પર્ય મોર્ણ સમણુવાસિજ્ઞાસિ” હસ અનન્તર સૂત્ર કે સાથ સંબંધ હૈ—વહા ‘નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન લોક-નિઘ્રા સે હોતા હૈ’ યહ કહા હૈ । હસમેં મી ‘સંયમી મુનિ કો આહાર કી શુદ્ધિ કા અઙ્ગી તર સે ધ્યાન રખના જાહિયે’ યહ યાત આગે ચલકર પ્રકટ કી જાયગી ।

ગૃહસ્થ અપને પુત્ર-પુત્રી આદિ કે નિમિત્ત શસ્ત્ર-પદ્ધત્યસમારમ્ભરૂપ સાવજ્ય બ્યાપારોં ઘઘ મોજનાદિ સાધનોં કે આરમ્ભોં કો કિયા કરતે હૈં, યહી યાત સૂત્રકાર કહતે હૈં—“જમિણ” ઇત્યાદિ ।

ગૃહસ્થ પોતાના પરિવારના પોપણ માટે અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરે છે. સંયમી મુનિ સંયમજીવનની રક્ષા માટે પોતાની આવશ્યક્તાનુસાર ગૃહસ્થને ત્યાંથી આહાર આદિ લાવીને સંયમયાત્રાનો નિવાહ કરે છે.

આ ઠેકાણે “પર્ય મોર્ણ સમણુવાસિજ્ઞાસિ” એ અનન્તરસૂત્ર સાથે મુળપ છે ત્યાં નિરતિચાર ચારિત્રનું પાલન લોકનિઘ્રાથી થાય છે એમ કહેલ છે તેમા પણ સંયમી મુનિએ આશ્રમની શુદ્ધિને સારી રીતે ધ્યાન સપાવે એમણે એ યાત આગળ ઉપર પ્રગટ કરવામા આવશે.

મૂળપ પાતાના પુત્ર પુત્રી આદિ નિમિત્તે શસ્ત્ર-પદ્ધત્ય સમારમ્ભરૂપ સાવજ્યપાથ અને બાળનાદિ સાધનોને આરમ્ભ કર્યા કરે છે તેજ યાત સૂત્રકાર કહે છે—“જમિણ” ઇત્યાદિ.

છાયા—યદિદં વિરુપરૂપૈઃ શસ્ત્રૈર્લોકાય કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે, તદ્વથા—
આત્મને તસ્ય પુત્રેભ્યો દુહિતૃભ્યઃ સ્તુષાભ્યો જ્ઞાતિભ્યો ધાત્રીભ્યો રાજભ્યો દાસેભ્યો
દાસીભ્યઃ કર્મકરેભ્યઃ કર્મકરીભ્ય આદેશાય પૃથક્પ્રહેણકાય શ્યામાશાય પ્રાતરાશાય
સન્નિધિસંનિચયં ક્રિયતે, ઇહૈકેષાં માનવાનાં ભોજનાય ॥ મૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘યદિદ’—મિત્યાદિ । યદ્ ઇદમ્=સુખદુઃખપ્રાપ્તિપરિહારરૂપં પ્રયોજન-
મુદ્દિશ્ય વિરુપરૂપૈઃ=વહુપ્રકારૈઃ શસ્ત્રૈઃ=ષટ્કાયસમારમ્ભરૂપૈઃ લોકાય=અસંયતલોકાય-
સ્વશરીરપુત્રકલત્રાદિરૂપાય કર્મસમારમ્ભાઃ=ષટ્કાયોપમર્દનરૂપાઃ પચનપાચનાદિસાવ-
ધવ્યાપારાઃ ક્રિયન્તે, યદ્વા કર્મણોઽષ્ટપ્રકારકસ્ય સમારમ્ભાઃ=ઉપાર્જનોપાયાઃ ક્રિયન્તે ।

સુખપ્રાપ્તિ ઓર દુઃખપરિહાર કે પ્રયોજન સે ગૃહસ્થીજન જપને શરીર
પુત્રકલત્રારૂપ લોક કે લિયે અનેક પ્રકાર કે ષટ્કાયસમારંભરૂપ પચન-
પાચનાદિ સાવધ વ્યાપાર કરતે હૈં, ઁનકા દિગ્દર્શન કરાતે હુણ સૂત્ર-
કાર કહતે હૈં—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવધ વ્યાપાર કે વિના
ચલતા નહીં હૈં । ઇસમેં ઇસ તરહ કે અનેક પ્રકાર કા આરમ્ભ જીવોં કો
કરના હી પડતા હૈં । જહાં આરંભ-સમારંભ હૈં વહાં જીવોં કી હિંસા
અવશ્યંભાવી હૈં । હિંસા સે આસ્ત્રવ હોતા હૈં, ઓર ઇસસે જીવોં કા સંસાર
બંધન સે છુટકારા હોના બઢા કઠિન હોતા હૈં । ઇસીલિયે આત્મા કો
સાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરને કી આવશ્યકતા હૈં ।

ગૃહસ્થ લોક અપને લિયે તથા પુત્રોં કે લિયે પુત્રિયોં કે લિયે પુત્ર-
વધુઓં કે લિયે, જાતિભાઈયોં, સગે સંબંધિયોં ઁવં કુટુમ્બિયોં કે લિયે,

સુખપ્રાપ્તિ અને દુઃખપરિહારના પ્રયોજનથી ગૃહસ્થી જન પોતાનુ શરીર
પુત્ર કલત્રાદિરૂપ લોક માટે અનેક પ્રકારના ષટ્કાયસમારભરૂપ પચનપાચનાદિ
સાવધ વ્યાપાર કરે છે તેનુ દિગ્દર્શન કરાવીને સૂત્રકાર કહે છે—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવધ વ્યાપાર વિના ચાલતું
જ નથી તેમા આવા પ્રકારના અનેક પ્રકારે આરભ જીવોને કરવા જ પડે છે
જ્યા આરભ-સમારભ છે ત્યા જીવોની હિંસા અવશ્ય ભાવી છે હિંસાથી આશ્રવ
થાય છે, અને તેનાથી જીવોનો સંસારબંધનથી છુટકારો થવો ઘણુ કઠિન થઈ પડે
છે, માટે આત્માને સાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની આવશ્યકતા છે

ગૃહસ્થલોક પોતાના માટે તથા પુત્રો માટે, પુત્રિયો માટે, પુત્રવધુ માટે,
ભતિભાઈઓ, સગા-સબંધિઓ અને કુટુમ્બિઓ માટે, માતા-પિતા, સાસુ-સસરા

અથવા 'લોગસ્સે'—તિ તૃતીયાર્થે પઠ્ઠી, લોકેન કર્મસમારમ્માઃ ક્રિયન્તિ ઇતિ ।
 અપ્રેદં તત્ત્વમ્, 'તં જહા' ઇતિ મૂલપાઠેન લોકાયતિ ચતુર્થ્યેવ સાધીયસી-
 યદર્થે સમારમ્મસ્તં પૂર્વ સામાન્યતો લોકપદેનોપદર્શ્ય વિશેષતો દર્શયિતુ 'ત જહા'
 ઇત્યસ્ય પ્રતિપાદનમ્ ।

યદિ ચ તૃતીયાર્થેઽપિ પઠ્ઠી, સાઽપિ સામાન્યતઃ સમારમ્મા લોકેન ક્રિયન્તિ
 ઇત્યુપદર્શ્ય ક્ષિમર્યમિતિ જિજ્ઞાસાયાં 'તંજહા' ઇત્યપિ ક્ષત્રિસ્તમાધાન મક્ષિતુમર્હતિ ।

યદય પાત્ક્રુપિષાળિગ્યાદિસાવધગ્યાપારમારમન્તે તાન્ દર્શયતિ—'તથાપેતિ'
 તસ્ય સમારમ્મશીલસ્ય આત્મને—સ્વશરીરાર્થમ્, આત્મગન્ધોઽગ્ર શરીરવાચકઃ, સ્વાર્થ
 સ્વયમેવ સમારમત ઇત્યર્થઃ ।

માતા પિતા સાસુ-સસુર આદિ કે લિયે, સ્વજનોં કે લિયે, ધાયમાતા કે
 લિયે, રાજા કે લિયે વાસી વાસ નૌકર બાકર ઔર પાહુનોં કે લિયે, પૂષ્ક-
 પ્રહેળક કે લિયે, અર્ધાત્ કન્યાવિવાહ કે ઉત્સવ કા મોજન, પ્રસ્થાન કે
 સમય રાસ્તે મેં સુપહ-શામ સ્નાને કે લિયે સાથ મેં દિયે જાને વાલા મોજન,
 તથા કાંસા પરોસા આદિ પૃથક્પ્રહેળક કહલાતા હૈ, ઉસકે લિયે પચન-
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ ગ્યાપાર કરતે હૈં ।

માવાર્થ—સૂત્રકાર યહાં પર યહ યાત સ્પષ્ટ કર રહે હૈં કિ—ગૃહસ્થ લોગ
 અપને તથા અપને સગે સંબંધિયોં ગ્ઘ વાલ-બર્ષોં બગૈરહ કે લિયે મોજન
 બગૈરહ આરમ્મોં કો નિતપ્રતિ કરતે રહતે હૈં । સર્વવિરતિ મુનિ કે શરીર
 કી યાત્રા કા નિર્વાહ ઉનકે યહાં સે માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત મોજન સે અચ્છી
 તરહ હો સકતા હૈ, ઇસલિયે મુનિ કો સાવધ ગ્યાપાર કરને કી આવશ્ય

આદિ માટે સ્વબને માટે ધાવમાતા માટે, સબ માટે દાસી-દાસ નૌકર-બાકર
 માટે, મહેમાને માટે, પૃથક્પ્રહેળકને માટે, અર્ધાત્ કન્યાવિવાહના ઉત્સવ
 મોજન, મુસાફરી સમય સ્તયામા સવાસનાજ ખાવા માટે સાથે આપવામા આવતું
 મોજન, અને કાંસા પિરસણુ આદિ પૃથક્પ્રહેળક કહેવાય છે તેને માટે પચન-
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ ગ્યાપાર કરે છે

માવાર્થ—સૂત્રકાર આ ઠેકાણે એ યાત સ્પષ્ટ કરે છે કે—ગૃહસ્થ લોગ પોતાના
 તથા પોતાના સગાસબંધિઓ અને છેકરા-છેમા તિજેરે માટે મોજન તિજેરે
 આરંભો કરવેએ કરતા જ રહે છે સર્વવિરતિ મુનિના શરીરની યાત્રાને નિર્વાહ
 તેને ત્યાંથી માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભાજનથી સારી રીતે થઈ શકે છે, માટે મુનિને
 સાવધ ગ્યાપાર કરવાની આવશ્યકતા જ નથી, સાવધ ગ્યાપારથી દેશા થવાના

क्रिञ्च-पुत्रेभ्यः, दुहितृभ्यः=पुत्रीभ्यः, स्नुषाभ्यः=पुत्रवधूभ्यः, ज्ञातिभ्यः=पूर्वपश्चात्सम्बन्धिभ्यः, माता-पितृ-भ्रू-वगुरादिभ्य इत्यर्थः, स्वजनेभ्यः, धात्रीभ्यः=उपमातृभ्यः, राजभ्यः, दासेभ्यः=भृत्येभ्यः, दासीभ्यः, कर्मकरेभ्यः=परिचारकेभ्यः, कर्मकरीभ्यः=परिचारिकाभ्यः, आदिश्यते=आज्ञाप्यते परिजनः सत्कारार्थं यस्मिन्नागते स आदेशः=प्राचूर्णकादिस्तस्मै, पृथक्प्रहेणकाय ' पृथक्=विभिन्नरूपेण प्रहेणकः=रुस्मिन्निदुत्सवे भोजनोपायनं लोकेभ्यो दीयमान पृथक्प्रहेणक इत्युच्यते ।

कता ही नहीं है। सावध्य व्यापारों से हिंसा होने के कारण उस अवस्था में सर्वविरति संयम की आराधना हो ही नहीं सकती, इसलिये मुनि का संयम निर्दोष रीति से पल सके इस आशय से यह अवस्था परम्परा से की गई है ।

मूल सूत्र में—“लोगस्स कम्मसमारंभा कज्जंति” यह पाठ है, इसकी संस्कृत छाया—“लोकाय कर्मसमारंभाः क्रियन्ते” होती है। जिसका अर्थ लोको-असंयतो के लिये पट्काय के उपमर्दनरूप सावध्य व्यापारों का आरम्भ किया जाता है। अथवा लोक के द्वारा कर्मसमारम्भ किये जाते हैं, यह अर्थ भी होता है। पहिले सूत्रकार सावध्यव्यापाररूप कर्मसमारम्भ का निमित्त कारण सामान्यतया असंयत लोकों को बतलाते हुए इसी बात को विशेष रीति से खुलाशा करने के अभिप्राय से “तं जहा” इस पद से व्यक्त करते हैं। तथा “लोकों के द्वारा जो सावध्यव्यापाररूप कर्मसमारम्भ किया जाता है वह किस लिये किया जाता है”

कारण आ अवस्थाभा सर्वविरति संयमनी आराधना णनी न शक्ती नथी भाटे मुनि संयमने निर्दोष रीतिथी पाणी शके ओ आशयथी आ अवस्था पर पराथी करवामा आवेल छे

मूलसूत्रभा—“लोगस्स कम्मसमारंभा कज्जंति” ओ पाठ छे तेनी संस्कृत छाया—“लोकाय कर्मसमारंभा क्रियन्ते” छे जेना अर्थ लोक-असंयतोने भाटे पट्कायना उपमर्दनरूप सावध्य व्यापारोना आरंभ कर्ये नय छे, अथवा लोकद्वारा कर्मसमारंभ कराय छे ओ पणु अर्थ थाय छे पड़ेला सूत्रकार सावध्यव्यापाररूप कर्मसमारंभना निमित्त कारण सामान्यतया असंयत लोकोंने बतावीने ते बातने विशेष रीतिथी खुलासा करवाना अभिप्रायथी “तंजहा” आ पहथी स्पष्ट करे छे तथा “लोकों द्वारा जे सावध्यव्यापाररूप कर्म समारंभ

યદ્વા કન્યાપરિણયોસ્તસવે કન્યાપિતૃષ્ટે વિમિશ્રરૂપેણ યદ્ભોજ્યં સ પૃથક્પ્રદેશકઃ ।
અથવા પ્રસ્થાનસમયે જામાતૃમ્યો વિમિશ્રરૂપેણ દીયમાનં પ્રાધયં પૃથક્પ્રદેશકપદન
કથ્યતે, તસ્મૈ । ‘શ્યામાશ્વાય’ શ્યામાયાં રાશ્યામ્, અશ્વનમાશ્વઃ=શ્યામાશ્વસ્તસ્મૈ ।
‘પ્રાતરાશ્વાય’ પ્રાતઃ=પ્રાતઃકાલે આશ્વો=ભોજનં પ્રાતરાશ્વસ્તસ્મૈ કર્મસમારમ્મા
ક્રિયતે । તમેવ વિશ્વિનષ્ટિ-‘સન્નિધિસન્નિચયમ્’ ઇત્યાદિ, સન્નિધાનં સન્નિધિઃ=ભ્રૂપ
કાન્મસ્ત્યાવિદ્રઘ્યાનાં સંગ્રહકરણમ્, વધિ-મક્ત-કુશર-અપ્જનાદીનાં સ્થાપનમ્ ।

અપિ ચ-‘સન્નિચય’ સમ્યગ્ નિચયનં=સંગ્રહણ સન્નિચયઃ=ચિરસ્થાપિનાં વૃત્ત-
તૈલ-ગુઢાદિદ્રવ્યાનાં સંગ્રહ, સન્નિધિઃ સન્નિચયઃ સન્નિધિ-સન્નિચયમ્, તત્
ક્રિયતે । મૂત્ર પુંસ્ત્વમાર્પસ્થાત્ । યદ્વા-સન્નિધેઃ=ભક્તનવશનાદેઃ સન્નિચયઃ=સંગ્રહઃ
ક્રિયતે । કિમર્યં સંગ્રહ ક્રિયતે? ઇત્યાહ-‘ઈદે’-તિ । ઈદ=સસારે એકેપાં
=રુતિપયાનાં માનવાનાં=સમ્બન્ધિજનનાં માજનાય=મવિષ્યદુપભોગાય, ચિરુપત્તૈઃ
શ્વે કર્મસમારમ્માઃ ક્રિયન્તે ઇતિ ।

લોકાઃ પુષ્પાર્થે કર્મોણિ સમારમન્તે પત્ન, તેમ્યઃ સંયમયાત્રા નિર્બોદુ માત્ર-
યાઽમાદિક્માત્રાપ મુનિના વર્તિતચ્ચમિતિ સૂત્રાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૧ ॥

હસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા હોને પર ડસકા સમાધાન સૂત્રકાર ને “તં જહા”
પદ સે કિયા હૈ ।

“સન્નિધિસન્નિચય” યહાં ડો પદ હૈ-૧ ‘સન્નિધિ’ ડીર ડસરા ‘૨
સન્નિચય । ડહી, માત, કુશર-સીચડી, અપ્જન-શાક આદિ ‘સન્નિધિ’
પદસે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈ । ઘન, તૈલ, ગુઢ આદિ પદાર્થ ‘સન્નિચય’
પદ સે ગૃહીત હુપ હૈ । અથવા સન્નિધિ-અધાન વશન આદિ કા સન્નિચય-
સંગ્રહ કરના વહ સન્નિધિસન્નિચય હૈ । કિતનેક ગૃહસ્થ અપને ષ
સંબંધિજનોં કે નિમિત્ત મવિષ્યત્કાલ મેં ઉપભોગ કે અભિપ્રાય સે
ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોં કા સંગ્રહ કર લિયા કરસે હૈ । હસ સંગ્રહ મેં

ધાય છે” તે ચા માટે કશ્વાભા આવે છે આ પ્રકારની ભગ્નાય યવાધી તેડ
સમાધાન સૂત્રકારે “તં જહા” પદથી કહ્યું છે

“સન્નિધિસન્નિચય” આહી જે પદ છે ૧ સન્નિધિ’ અને બીજી
૨ ‘સન્નિચય’ ડહી, માત, ખીચડી, શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદથી દેવામાં આવેલ
છે બી, તેલ, ગોળ આદિ પદાર્થ ‘સન્નિચય’ પદથી દેવામાં આવેલ છે. અથવા
સન્નિધિ’ અધાન વશન આદિના ‘સન્નિચય’ સંગ્રહ કશ્વો તે સન્નિધિસન્નિચય
છે. કેટલાક ગૃહસ્થ પોતાને અને સબંધીજનોને નિમિત્તે મવિષ્ય કાળમાં ઉપભો-
ગના અભિપ્રાયથી ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોના સંગ્રહ કરે છે. આ સંગ્રહમાં

મવિપ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિં વિધેયમિત્યાહ-
'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય-સમુદ્વિષ અણગારે આરિષ આરિયપત્રે આરિયદંસી
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈષ નાઈયાવણ ન સમણુજાણણ
સવ્વામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપત્ર આર્યદર્શી અયં સન્ધિરિતિ અદ્રક્ષીત્,
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમનુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ
પરિવ્રજેત્ ॥ મુ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદયત્ ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં
ગૃહં यस્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હૈયધર્મેભ્યો યઃ

અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ એવ
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુણ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? ઇસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—
'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર
કે આરાધન કરને મેં જો અઠ્ઠી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ડસકા નામ
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ડસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે ડો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમા પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમા ત્રસ અને સ્થાવર
જીવોની હિંસા થાય છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ
કરવામા તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમા સયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,
તેના પ્રત્યુત્તરમા સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમા ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના
આરાધન કરવામા જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે જેને અગાર-
ઘર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના જે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો

સ આર્યઃ=શ્રુતચારિપ્રરૂપધર્મારાધનયોગ્ય । યદ્વા-વિષય-કપાય-કાષ્ઠશ્લેષ
 ક્ષવનાઽઽરાસાદૃશ્યાદારા=રત્નત્રય, તાં યાતિ=પ્રાપ્નોતિ યઃ સ આર્યઃ=સર્વથા સફલ-
 ક્ત્વમપરાશ્ચિક્ષણપિતૃચરિત્ રિત્તિ इत्यर्थ । ‘આર્યપ્રજ્ઞઃ’ નાર્યા=મેષ્ટા પ્રજ્ઞા=મતિ-
 ર્યસ્ય સ આર્યપ્રજ્ઞઃ હેયોપાદયવિવેકધાન । एवमार्यदर्शी=आर्य-युक्तियुक्त द्रष्टुं शील
 यस्येत्यार्यदर्शी=आरम्भजन्यकटुविपाकदर्शी । य एवम्भूतः पुन ‘अयं सन्धि’-रिति
 अयं=प्रत्यक्षोपलभ्यमान सन्धि-पारगमनाद्य पतनयोर्मध्ये सन्धिरिव सन्धि-
 आर्यक्षेत्र-सुकुलात्पक्षी-न्निपनिर्दिष्टि यद्वा-संबन्ध-रत्नत्रयप्राप्तिरक्षणं सन्धिस्थानम्,
 इति=इत्येवम् अद्राक्षीत्=अग्राक्षीत् । यद्वा-अयं प्रत्यक्षनिर्दिष्टः सन्धि-प्रतिष्ठसन-
 प्रकार हैं । एक द्रव्य-अगार और दूसरा भाव-अगार । अनगार इन दोनों
 प्रकार के अगारों से रहित होता है । जो हेय धर्मों से सदा दूर रहता
 है उसका नाम आर्य है । आर्य-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આરાધન કરને
 યોગ્ય હોતા હૈ, અથવા વિષયકપાયરૂપ કાષ્ઠ કા શ્લેષક હોને સે આર-
 કરોત કે સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મ કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈ વહ આર્ય હૈ, અર્થાત્
 જિસકી સફલ ક્ત્વમ-પાપરાગિ સે કલુષિત પરિણતિ નહીં હૈ उसका
 नाम आर्य है । उत्तम जिसकी मति है, हेय और उपादेय के विवेक से
 जिसका अन्तःकरण युक्त है उसका नाम आर्यप्रज्ञ है । युक्तियુक्त देखने
 का जिसका स्वभाव है ‘आरम्भजन्य पापों का विपाक भयंकर कष्टप्रद
 होता है’ इस बात को मली-मौलि से जानता समझता है वह आर्यदर्शी
 है । સંસાર સે પાર હોના એવ ઉસમેં અષ-પતન હોના, इन दोनों के बीच
 में सन्धि के समान आर्यक्षेत्र, सुकुल में जन्म, इन्द्रियादिकों की पूर्णता
 अद्वा, संबंध और रत्नत्रय की प्राप्तिरूप सन्धिस्थान है । जो प्रत्यक्ष

ભાવ-અગાર, અનગાર આ બે પ્રકારના અગારોથી રહિત હોય છે એ હેય
 ધર્મોથી તથા દૂર રહે છે તેનું નામ આર્ય છે આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું
 આરાધન કરવા યોગ્ય હોય છે અથવા વિષયકપાયરૂપ કાષ્ઠના શ્લેષક હોવાથી આર
 કરવતના સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મને જે પ્રાપ્ત કરે છે તે આર્ય છે અર્થાત્ જેની
 સફલક્ત્વમ-પાપરાગિ થી કલુષિત પરિણતિ નથી તેનું નામ આર્ય છે ઉત્તમ
 જેની મતિ છે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી જેનું અંતઃકરણ યુક્ત છે તેનું નામ
 આર્યપ્રજ્ઞ છે યુક્તિયુક્ત રેખાનું એવો જેનો સ્વભાવ છે આરમ્ભજન્ય પાપોને
 વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ થાય છે આ વાતને જે ભલીભાવિથી જાણે છે, તેમજ
 સમજે છે તે આર્યદર્શી છે સંસારથી પાર થવું અને તેમાં અષ-પતન થવું એ
 બન્નેની વચ્ચેના સન્ધિસ્થાન આર્યક્ષેત્ર, સારા કુળમાં જન્મ, ઈન્દ્રિયોની પૂર્ણતા,
 અદ્વા, સંબંધ અને રત્નત્રયની પ્રાપ્તિરૂપ સન્ધિસ્થાન છે જે આ પ્રત્યક્ષ

પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાયા યઃ સમુચિતઃ કાલ ઇતિ યોઽજ્ઞાસીદિત્યર્થઃ । એવંભૂતઃ સઃ
અનગારો નાદદીત=અકલ્પનીયમાહારાદિકં ન ગૃહ્ણીયાત્, શાસ્ત્રે તસ્ય પ્રતિપિદ્ધત્વાત્,
પદ્મજીવનિકાયારમ્ભદોષસ્ય મુનિના પૂર્વ પરિત્યક્તત્વાચ્ચ, નાઽઽદાપયેત્=નાન્યં
ગ્રાહયેત્, ન સમનુજાનીયાત્=નાપીતરં સાધું ગૃહ્ણન્તમનુમોદયેત્ । યદ્વા-નાઽઽધાન્નાઽઽ-
દયેદિતિચ્છાયા, સ મુનિરિદ્ધાલધૂમાદિપશ્ચિધદોષદૂપિતમાહાર નાઘાત્=નાશ્ત્રી-
યાત્, નાદયેત્=નાન્ય ભોજયેત્ અદન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્ ।

અપિ ચ કિ કુર્યાદિત્યાહ-‘સર્વામગન્ધ’-મિત્યાદિ । સર્વામગન્ધમ્, આમં ચ
ગન્ધશ્વાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વે આમગન્ધ, સર્વં ચ તદામગન્ધમિતિ સર્વામગન્ધમ્=અશુ-

પ્રતિભાસિત વાત કો અચ્છી તરહ્ સે જાનતા હૈ, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિ-
ક્રમણાદિ ક્રિયાઓં કે ઝનિત અવસર કા જો જ્ઞાતા હૈ, યહ વાત “અયં
સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” ઇમ પદ સે પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા
જો અનગાર હૈ વહ અકલ્પનીય આહારાદિક કો ન સ્વયં ગ્રહણ કરતા
હૈ, ક્યોંકિ સદોષ આહાર કા ગ્રહણ કરના અનગાર કે લિધે શાસ્ત્ર મેં
નિષિદ્ધ બતલાયા ગયા હૈ, ઇસકા કારણ-ષટ્કાય કે જીવોં કા આરમ્ભ
અનગાર ને પહિલે સે હી છોડ દિયા હૈ, વહ સદોષ આહાર સ્વયં ન
ગ્રહણ કરતા હૈ, ન દૂસરોં સે ગ્રહણ કરવાના હૈ, ઓર ન ઇસ પ્રકાર કે
આહાર કો ગ્રહણ કરને વાલે અન્ય કિસી કી અનુમોદના મી કરતા હૈ ।

અથવા “સે નાર્ઘ નાર્ઘ્યાવળ” ઇન પદોં કી સંસ્કૃત છાયા “સ ન
અઘાત્ ન આદયેત્” યહ મી હૈ, ઇસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ-ઈદ્દાલ ધૂમ
આદિ પાંચ પ્રકાર કે દોષોં સે દૂષિત આહાર કો ન સ્વયં કરે ઓર ન

પ્રતિભાસિત વાતને સારી રીતે જાણે છે, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયા-
ઓના ઉચિત અવસરનો જે જ્ઞાતા છે, એ વાત “અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્”
આ પદથી પ્રદર્શિત કરવામા આવેલ છે આ પ્રકારના જે અણુગાર છે તે અક-
લ્પનીય આહારાદિકને સ્વયં ગ્રહણ કરતા નથી, કારણ કે સદોષ આહારનું ગ્રહણ
કરવું અણુગાર માટે શાસ્ત્રમા નિષિદ્ધ થતાવેલ છે તેનું કારણ ષટ્કાયના જીવોના
આરભ અણુગારે પહેલાથી જ છોડી આવેલ છે તે સદોષ આહાર પોતે ગ્રહણ નથી
કરતા બીજાથી ગ્રહણ નથી કરાવતા, અને આ પ્રકારના આહાર ગ્રહણ કરવાવાળા
અન્ય કોઈની અનુમોદના પણ નથી કરતા

અથવા “સે નાર્ઘ નાર્ઘ્યાવળ” આ પદોની સંસ્કૃત છાયા “ન અઘાત્ ન
આદયેત્” એ પણ છે એનો અર્થ આ પ્રકારે છે ઇદ્દાલ, ધૂમ આદિ પાંચ
પ્રકારના દોષોથી દૂષિત આહારને ન સ્વયં કરે અને બીજાથી કરાવે નહિ, તથા

आहार परिश्राय=अ-परिश्राया इत्या निरामगन्धः, आमगन्धादशुद्धाहाराभिर्गतो यः स निरामगन्धः=उद्भूतोत्यादनैषणागतद्विचत्वारिंशदोषदूषिताहाराग्राहकः सन् 'परिव्रजेत्'-परि=समन्ताद् व्रजेत्=विहरेत् रत्नत्रयसमाराधनतत्परो भवेदिति भावः । तीर्थं कुरुनिर्विघ्ने समुचितानसरे प्रतिलेखन-प्रतिक्रमणादिक्रियां कुर्वन् नगर आर्यदेशोत्तमकुलादिकं मोक्षकारणं प्राप्य संसारपारावारमुत्तीर्य च सन्निस्थानीय तृतीरे वर्तमाना निस्त्रिंशदर्थं कृत्वा ततो निष्क्रमितुकामोऽस्मीत्येव परिश्रावान् 'अपःकर्मादिदोषदूषिताहारो विषमक्षणमिवात्मगुणघातकः' इति सम्यगालोच्य तादृशमाहारं प्रिकरणत्रियोगैः परित्यज्य परिशुद्धमाहारादिकं मिश्रमाणो विहरेदिति समुचितार्थः ॥ सू० २ ॥

दूसरों को करावे, तथा करने वाले किसी अन्य की अनुमोदना भी न करे । "सर्वांगगन्धं परिश्राय निरामगन्धः परिव्रजेत्" इसका अर्थ है अशुद्ध आहार, अर्थात् अ-परिश्रायाहारा इस प्रकार के आहार को अशुद्ध जानकर 'निरामगन्धः'-अशुद्ध आहार से मिश्र शुद्ध आहार को कि जो उद्भूत (१६) उत्पादन (१६) एषणा (१०) संयंभी ययालीस (४२) दोषों से रहित होता है ग्रहण करे । यदि इस प्रकार के आहार का लाभ संयंभी को नहीं होता है तो वह इस दूषित आहार को छोड़कर अपने रत्नत्रय की आराधना में तत्पर रहे । तीर्थं कुरु प्रभुने प्रतिलेखनादि क्रियाओं का जो समय निश्चित कर दिया है उस समय में उन २ क्रियाओं को करने वाला, तथा आर्य क्षेत्र का लाभ, उत्तम कुल में जन्म, रत्नत्रय की प्राप्ति आदि मोक्ष के कारणभूत संघिस्थानों को जिसने पाया है ऐसा अनगर

कृत्वावाणा जीव को डोहनी अनुमोदना पक्ष न करे । "सर्वांगगन्धं परिश्राय निरामगन्धः परिव्रजेत्" आने अर्थ है अशुद्ध आहार अर्थात् अ-परिश्रायाहारा का प्रकार का आहारने अशुद्ध आहारने निरामगन्धः अशुद्ध आहारधी सिद्ध शुद्ध आहारने के ने उद्भूत (१६) उत्पादन (१६) एषणा (१०) संयंभी ४२ ययालीस दोषों से रहित होता है तो तेने अक्षय करे छे कदाच आ प्रभरना अक्षरने लाभ संयंभीने न पाय तो ते आवा दूषित आहारने छोड़ने पिताना रत्नत्रयनी आराधनामा तत्पर रहे ।

तीर्थं कुरु प्रभुने प्रतिलेखनादि क्रियाओंने ने समय निश्चित करी आये छे ते समयमा ते ते क्रियाओंने कृत्वावाणा, तथा आर्यक्षेत्रने लाभ, उत्तम कुलमा जन्म रत्नत्रयनी प्राप्ति आदि मोक्षना कारणभूत संघिस्थानोंने नेछे

निरामगन्ध इति निषेधे आमपदेन हननकोटित्रिकं, गन्धपदेन पचनकोटि-
त्रिकं च प्रतिषिध्य क्रयणकोटित्रिकं निषेधयितुमुपदर्शयति—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

मूलम्—आदिस्समाणे कयविक्रयेसु से न किणे न किणावए
किणंतं न समणुजाणए ॥ सू० ३ ॥

छाया—आदिश्यमानः क्रयविक्रययोः स न क्रीणीयात्, न क्रापयेत्, क्रीणन्तं
न समनुजानीयात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘आदिश्यमान’ इति। क्रयविक्रययोः, क्रयश्च विक्रयश्चानयोरितरेतर-
योगद्वन्द्वे क्रयविक्रयौ, तयोः—आदिश्यमानः=व्यपदेशमलभमानः—‘अयं क्रयविक्रय-
कर्ते’—ति व्यपदेशभाग् न भवतीत्यर्थः ॥

‘सकल कर्म को नाश कर मैं इस संसारसमुद्र से पार होने की दृढ़
भावना वाला हूँ’ इस प्रकार के संसारसमुद्र के पार जाने के अभि-
प्राय से जो समन्वित हो रहा है वह अनगार आधाकर्मादि दोष से
दूषित आहार को विषभक्षण की तरह आत्मगुण का घातक जानकर
तीन करण और तीन योग से उसका परित्याग ही कर देवे, और शुद्ध
निर्दोष आहार की प्राप्ति से अपने शरीर की यात्रा का निर्वाह करता
हुआ संयममार्ग में विचरे ॥ सू० २ ॥

‘निरामगन्ध’ इस निषेध में ‘आम’ पद से हननकोटित्रिक तथा
‘गन्ध’ पद से पचनकोटित्रिक का प्रतिषेध करके क्रयणकोटित्रिक का
निषेध करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

क्रय शब्द का अर्थ खरीदना और विक्रय शब्द का अर्थ बेचना

मेणव्या छे ओवा अणुगार “सकल कर्मनो नाश करी हु आ ससारसमुद्रथी
पार थवानी द्रढ भावनावानो छु” आ प्रकारे ने ससार समुद्रथी पार जवाना
अभिप्रायथी ने समन्वित थयेल छे ते अणुगार आधाकर्मादि दोषथी दूषित
आहारने विषभक्षणा नी भाइके आत्मगुणना घातक जालीने त्रणु करणु अने त्रणु
योगथी तेनो परित्याग करे, अने शुद्ध निर्दोष आहारनी प्राप्तिथी पोताना शरीरनी
यात्रानो निर्वाह करीने संयम मार्गभा विचरे ॥ सू० २ ॥

निरामगन्ध आ निषेधभा आम-पदथी हननकोटित्रिक तथा गन्ध-पदथी
पचनकोटि त्रिकनो प्रतिषेध करीने कयणकोटित्रिकनो निषेध करवाने भाटे
सूत्रकार कहे छे—‘अदिस्समाणे’ इत्यादि

कय शब्दनो अर्थ खरीदवु, अने विक्रय शब्दनो अर्थ बेचवु, ने कय.

યદ્વા-‘અદૃશ્યમાનઃ’ ઇતિચ્છાયા, ક્રય-વિક્રયયોઃ અદૃશ્યમાનઃ=દ્રવ્યાદિમાત્ર-
સ્કયવિક્રયવ્યવહારેજ્ઞાનમાનોઽકિંચનઃ સઃ=અનગાર આહારાદિક ન ક્રીણીયાત્
નાન્યં ક્રાપયેત્, ક્રીણન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયત્ । एतेन इननादि
नवकोटिपरिभुदमाहारादिकं परिच्छाद्वाहारधुमाविदोपरस्थित मुनिर्मुञ्जीतेति निगूढार्थः ।
अत्र कृपपदेनोद्गमदोषाणां ग्रहणं, तेन बोध्यादैनैपणादोषाः सपृहीता इति सूत्र
तत्पर्यम् ॥ सू० ३ ॥

હૈ । જો ક્રય-વિક્રયરૂપ વ્યાપાર કરતા હૈ વહ વ્યવહાર મૈં બેચને
સ્વરીવને બાલા કહા જાતા હૈ । મુનિ, જો સર્વસાધ્ય ક્રિયાઓં કે ત્યાગી હો
જુકે હૈં ઘે ક્રય વિક્રય રૂપ સાધ્ય વ્યાપાર કો નહીં કર સકતે હૈં । હસ
લિપે સૂત્રકાર યહાં હસ બાત કા પ્રદર્શન કરતે હુપ કહતે હૈં કિ-અનગાર
શુદ્ધ આહાર કે ન મિલને પર આહારાદિક અન્ય સે ન સ્વરીવે, ઔર મિલે
હુપ કો અન્ય કિસી કો ન ઘેચે । ક્યોંકિ હસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કરને
સે ઉસમૈં ક્રય વિક્રય કા દોષ લાગૂ હોતા હૈ, જો સિદ્ધાન્તદષ્ટિ સે મુનિ
કે આચાર સે સર્વથા નિષિદ્ધ હૈ । અથવા “અદિસ્તમાણે” હસ પદ કી
સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાનઃ” યહ મી હોતી હૈ । હસકા ભાવ યહ હૈ
કિ-અનગાર અપને પાસ કિસી મી પ્રકાર કા દ્રવ્યાદિક તો રક્ષતે હી
નહીં હૈ, ક્યોંકિ ઘે સકલ પરિગ્રહ કે ત્યાગી હોત હૈં, સખિત અવિત
આદિ સમસ્ત પરિગ્રહ કે છોડને સે હી ઉનમૈં અપરિગ્રહતા આતી હૈ ।
હસીકો સૂત્રકાર યહાં પર પ્રકટ કરતે હુપ કહતે હૈ કિ-જબ મુનિકે પાસ

વિક્રય રૂપ વ્યાપાર કરે છે તે વ્યવહારમાં વેચવાખરીદવાવાળા કહેવાય છે. મુનિ
કે સર્વ સાધ્ય ક્રિયાઓના ત્યાગી બનેલ છે તે ક્રય-વિક્રયરૂપ સાધ્ય વ્યાપારને
કરી શકતા નથી, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનું પ્રદર્શન કરીને કહે છે કે-
અનુગાર શુદ્ધ આહાર ન મળવાને કારણે આહારાદિક બીજાથી ખરીદવાની શકે
નહિ, અને મળેલ હોય તે બીજાથી બીજાને વેચી શકાય નહિ. કારણ કે આ
પ્રકારના વ્યવહાર કરવાથી તેમાં ક્રય-વિક્રયનો દોષ લાગુ પડે છે, જે સિદ્ધાન્ત
દષ્ટિથી મુનિના આચારથી સર્વથા નિષિદ્ધ છે. અથવા “અદિસ્તમાણે” આ
સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાન” એ પણ થાય છે તેનો ભાવ એ છે
પાતાની પાસે કોઈપણ પ્રકારનું દ્રવ્યાદિક તો સખિત જ નથી, કારણ
ત્યા ત્યાગી હોય છે સખિત અવિત આદિ સમસ્ત પરિગ્રહના
નિષિદ્ધતા આવે છે માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે પ્રગટ
જે હેતુરેણુને વ્યવહાર કરવામાં સહાયક બાબ

लेन-देन के व्यवहार करने में सहायक बाह्य द्रव्यादिक सामग्री नहीं है तो वह उस प्रकार के व्यवहार करने में सर्वथा अकिञ्चित्कर है। तब शुद्ध निर्दोष आहार के न मिलने पर वह उस प्रकार की आहारादिक सामग्री को न तो स्वयं खरीदता है, और न दूसरों से खरीद करवाता है, और खरीद करते हुए अन्य को न भला जानता है, अतः नवकोटि-विशुद्ध आहार की ही उसे गवेषणा करनी चाहिये, और उसके प्राप्त होने पर मात्रानुसार उसे ग्रहण कर अपने संयम की रक्षा करने में ही सावधान रहना चाहिये। इसी को प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—

वह अनगार द्रव्यादिक के अभाव से क्रय विक्रय के व्यवहार में अकिञ्चन है, इसलिये आहारादिक को न स्वयं खरीदे और न दूसरों से उसे खरीदवावे, तथा इसे खरीदने वाले अन्य किसी की अनुमोदना भी न करे। इससे इस बात की पुष्टि की है कि—अनगार मन वचन काया से कृत, कारित एवं अनुमोदना द्वारा हननादि तीन, पचनादि तीन क्रयणादि तीन, एवं नवकोटि से विशुद्ध आहारादिक प्राप्त कर शरीर की पुष्टि के अभिप्राय से नहीं, किन्तु संयम की रक्षा के अभिप्राय से ही अंगारधूमादिदोषरहित हो उसका सेवन करे। सूत्र में कहे हुए क्रय विक्रय

द्रव्यादिक सामग्री नहीं तो ते अे प्रकारने व्यवहार करवामा सर्वथा अकिञ्चित्कर छे, भाटे शुद्ध निर्दोष आहारना न भणवाथी ते अेवा प्रकारनी आहारादिक सामग्रीने पोते नथी भरीही शकता, अने भीजथी भरीहावी पणु शकता नथी, अने भरीह करवावाणा भीजने लखे पणु न्णुता नथी; भाटे नवकोटिविशुद्ध आहारनी न तेणु गवेषणा करवी न्नेधअे, अने तेना प्राप्त थवाथी मात्रानुसार तेने अणुणु करीने पोतानी संयमनी रक्षा करवामा न सावधान रडेवु न्नेधअे तेने प्रगट करीने सूत्रकार कडे छे डे—

ते अणुगार द्रव्यादिना अलावथी क्य-विक्रयना व्यवहारमा अकिञ्चन छे, भाटे आहारादिकने पोते न भरीह्ते अने भीजथी भरीहावे नछि, तथा ते भरीहवावाणा भीज कोधनी अनुमोदना पणु न करे आथी आ वातनी पुष्टि करी छे डे—अणुगार मन, वचन कायाथी कृत कारित अगर अनुमोदना द्वारा हननादि त्रणु, पचनादि त्रणु, क्यणादि त्रणु, अेम नव कोटिथी विशुद्ध आहारादिक प्राप्त करी शरीरनी पुष्टिना अलिप्रायथी नछि पणु संयमनी रक्षाना अलिप्रायथी अंगारधूमादिदोषरहित थधने तेनु सेवन करे सूत्रमा कडेला क्य विक्रय पदथी उद्गम

પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘સે મિસ્ત્રુ’ રિત્યાદિ।

મૂલમ.—સે મિસ્ત્રુ કાલદ્વે ઘલદ્વે માયદ્વે સ્વેયદ્વે રવણયદ્વે વિણયદ્વે સસમયદ્વે પરસમયદ્વે ભાવદ્વે પરિગ્રહ અસમાયમાણે કાલાણુટ્ટાઈ અપઢિણ્ણે દુહઓ છેત્તા નિયાઈ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—સ મિષ્ટુ કાલદ્વો ઘલદ્વો માયાદ્વ સ્વેદદ્વઃ સ્વસમયદ્વઃ પરસમયદ્વો માયદ્વઃ પરિગ્રહમમાયમાનઃ કાલાણુટ્ટાઈ, અપઢિણ્ણ, દ્વિપાતશ્ચિત્ત્વા નિયાતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘સ મિષ્ટુ’ રિત્યાદિ। સઃ—પૂર્વોક્તઃ સમુત્પત્તિતેત્યાદિમુનિગુણગણયુક્તો મિષ્ટુ = ચારિત્રવાન્ કાલદ્વઃ—કાલં—પ્રતિલેક્ષનાદિસમયં જાનાતીતિ કાલદ્વઃ।

અથવા કાલં=મિત્રાકાલ જાનાતીતિ કાલદ્વઃ, અકાલે મૈત્રાચરણેનાત્મનાઃ પછેદ્વાધિગમો ગ્રામનિન્દા ચ જાયતે, તતથ મગધવાગ્ગપિરાધકત્વેન સ્વેદમકટનેન ચ ચારિત્રમાલિન્યં મસ્ત્યતોઽનુચિતકાલે મૈત્રાદિકં નાચરણીયમિત્યાદ્યમિદ્વિત્યર્થઃ। યદ્વા કાલં=મુમિષ્યં દુર્મિત્રે દિનમમાયં રાત્રિમમાયં વા જાનાતીતિ કાલદ્વઃ।

પરંતુ સે ઉત્તમ દોષોં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, ઉસસે ઉત્પાદન ઔર ઇપણા દોષોં કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

इन पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त अनगार कैसा होता है? इसका खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से मिस्त्रु’ इत्यादि।

यह चारित्रवान् अनगार कि जिसका वर्णन ‘समुद्रिण’ इस द्वितीय सूत्र में किया जा चुका है वह; कालद्व-प्रतिलेखनादि क्रियाओं के अवसर का ज्ञाता होता है। अथवा ‘कालद्व’-शब्द का अर्थ-काल का जानने वाला-येसा है। इससे यह बात सूत्रकार प्रकट करते हैं कि-साधु को मित्राचरण के काल में ही मित्रा के लिये गमन करना चाहिये; क्योंकि अकाल में उसके निमित्त

કોયોનુ મહત્ત્વ થાય છે તેનાથી ઉત્પાદન અને અવશ્યકિ કોયોને પશુ મહત્ત્વ ધર્મ બાય છે (સૂ. ૩)

જોવા પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત અનુગાર કેવા હોય છે? તેના ખુલાસો કરતા સૂત્રકાર કહે છે— સે મિસ્ત્રુ રિત્યાદિ.

તે ચારિત્રવાન અનુગાર કે જેનું વર્ણન ‘સમુદ્રિણ’ આ બીજા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે તે કાલદ્વ—‘પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓના અવસરના જ્ઞાતા’ હોય છે અથવા ‘કાલદ્વ’ શબ્દનો અર્થ ‘જાણના બહુવાચણ’ હોય છે જોથી આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે—સાધુઓ ભિક્ષાચરણના કાલમાં જ ભિક્ષા માટે જવું બેઠાં,

‘વલજ્ઞઃ’ વલ્=સ્વશક્તિ પરશક્તિ વા યો જાનાતિ સ વલજ્ઞઃ=સ્વ-પરવલાભિજ્ઞઃ,
 ‘માત્રાજ્ઞઃ’ માત્રા જાનાતિ યઃ સ માત્રાજ્ઞઃ, યાવત્પ્રમાણાહારાદિગ્રહણેન ગૃહસ્થો ન
 પુનરાસ્મિ પ્રવર્તતે । યદ્વા—સ્વસંયમયાત્રાનિર્વાહો યાવતાઽઽહારેણ ભવતિ, તાવન્મા-
 ત્રાજ્ઞાનકુશલઇત્યર્થઃ । ‘શેદજ્ઞઃ’ શેદમ્=અભ્યાસં, સંસારપરિભ્રમણજન્યં શ્રમં વા

કિયા ગયા ગમન એક તો અપને લિયે કલેશકારક હોતા હૈ, દૂસરે ઇસ
 પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે ગામ મેં ઉસ સાધુ કી નિંદા બી હોતી હૈ । ઇસલિયે
 આહાર લેને કે લિયે જો માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત હૈ ઉસસે વિપરીત
 પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી-સાધુ કે ચારિત્ર મેં ભગવાન કી આજ્ઞા કા
 વિરાધક હોને કી વજહ સે, ઓર અપને મેં શેદ ઉત્પન્ન કરને કે નિમિત્ત
 સે મલિનતા આતી હૈ, ઇસલિયે અકાલ મેં ભિક્ષાવૃત્તિ નહીં કરની ચાહિયે ।
 ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દ કા અર્થ યહ બી હોતા હૈ—જો સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ, દિનપ્રમાણ
 એવં રાત્રિ કે પ્રમાણ કો જાનતા હૈ ।

અપની શક્તિ એવં પરકી શક્તિ કો જો જાનતા હૈ વહ વલજ્ઞ હૈ ।
 જિતને પ્રમાણ કા આહાર લેને સે ગૃહસ્થ ફિર દુવારા આરમ્ભ ન કરે,
 અથવા જિતને આહાર કે ગ્રહણ સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ હો
 સકતા હૈ, ઉતની હી માત્રા મેં આહાર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી વિધિ
 મેં જો કુશલ હોતા હૈ ઉસકા નામ માત્રાજ્ઞ હૈ ।

અભ્યાસ, અથવા સંસાર મેં પરિભ્રમણ સે ઉત્પન્ન હુણ કલેશ યા પદ-

કારણ કે અકાળે તે નિમિત્તે થએલુ ગમન એક તો પોતાને માટે કલેશકારક થાય
 છે, બીજુ આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ગામમા તે સાધુની નિંદા પણ થાય છે માટે
 આહાર લેવા માટે જે માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત છે તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ
 કરવાવાળા સયમી સાધુના ચારિત્રમા ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક હોવાના મતલબથી,
 અને પોતાનામા જેક ઉત્પન્ન કરવાના નિમિત્તથી મલિનતા આવે છે માટે અકા-
 ળમા ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી બેઠએ નહિ

કાળજ્ઞ શબ્દનો અર્થ એ પણ થાય છે—જે સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ દિનપ્રમાણ
 અને રાત્રિના પ્રમાણને બાણે છે

પોતાની તેમજ બીજાની શક્તિને જે બાણે છે તે બલજ્ઞ છે, જેટલા પ્રમા-
 ણમા આહાર લેવાથી ગૃહસ્થ ફરીથી બીજુ વાર આરભ ન કરે, અથવા જેટલા
 આહારના ગ્રહણથી પોતાની સયમયાત્રાનો નિર્વાહ થાય છે એટલી જ માત્રામાં
 આહાર લેવો બેઠએ આ પ્રકારની વિધિમા જે કુશળ છે તેનું નામ માત્રાજ્ઞ છે

અભ્યાસ અથવા સંસારમા પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન થતા કલેશ, અગર ષટ્કાચિક

યો જાનાતિ સ સ્વેદઃ, યદ્વા-સ્વેદઃ=પદ્મજીવનિકાયદુઃસ્વ જાનાતીતિ સ્વે
 યદ્વા-‘ક્ષેત્રજ્ઞ’ ઇતિ-જ્ઞાયા, ક્ષેત્રજ્ઞપદ્મકુલાદિરૂપ જાનાતિ ય સ ક્ષેત્ર
 યદ્વા-મૈત્રાદિક્ષામક્ષેત્રપરિક્ષાતેત્યર્થઃ । ‘ક્ષણજ્ઞ’ ક્ષણ એવ ક્ષણજ્ઞઃ પ્રતિષ્ઠ
 મૈત્રાદિકર્તવ્યકાલસ્તં જાનાતીતિ ક્ષણજ્ઞઃ=નમસ્કારપૌરુષ્યાદિદશવિધમત્યાસ્મ
 ક્ષતરજ્ઞઃ । ‘વિનયજ્ઞઃ’ વિનય દ્રમ્યક્ષેત્રકાલભાવપેક્ષયા ગુરુસમીપે યયાક્ષ
 પત્તિભક્ષણ જાનાતિ યઃ સ વિનયજ્ઞઃ । યદ્વા-વિનયજ્ઞઃ=અભ્યુત્થાનાધર્મિ
 નાઝલિકરણાદિવિજ્ઞાતા । યદ્વા-ગુરુસમીપે ગર્વ ન કુર્યાન્ન દીના ભવેત્, ન મિ
 કાયિક જીવોં કે દુઃસ્વોં કા જો જ્ઞાતા હૈં ઉસકા નામ સ્વેદજ્ઞ હૈં । અથ
 “સ્વેદન્ને” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ક્ષેત્રજ્ઞ” યહ બીં હોતી હૈં, જો ઉ
 કુલાવિકરૂપ ક્ષેત્ર કા જ્ઞાતા, અથવા મિત્રાદિક લાભ કે ક્ષેત્ર કો
 જાનતા હૈં યહ ક્ષેત્રજ્ઞ હૈં ।

પ્રતિષ્ઠેક્ષન એવે મિત્રાકરને યોગ્ય કાલ કા નામ ક્ષણ હૈં, ઇસકો
 જાનને ચાલા હૈં ઉસકા નામ ક્ષણજ્ઞ હૈં । નમસ્કાર, પૌરુષ્યાદિ દશ પ્ર
 કે પ્રત્યાખ્યાન કે અવસર કો જાનના યહ ઇસકા ફલિતાર્થ હૈં । ક્ષ
 ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કો અપેક્ષા સે શુરુ કા આવર સત્કાર કરના
 જાનતા હૈં ઉસકા નામ વિનયજ્ઞ હૈં । શુરુ જિસ સમય અપની તરફ જા
 યા સ્થે હોં ઉસ સમય સ્થે હો જાના, નમસ્કાર કરના, હાથ જોડ
 આદિ બીં વિનય હૈં, ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કો જાનન ચાલા બીં વિનય
 કહલાતા હૈં । અથવા-ગુરુ મહારાજ કે સમીપ અહંકાર ન કરના, દીના
 જાહિર નહીં કરની, ન ઉનકી ગુપ્ત વાત કિસી કો કહની, ઇત્યાદિરૂપ

જીવેના દુ ખોને જે જ્ઞાતા છે તેનું નામ સ્વેદજ્ઞ છે અથવા = “સ્વેદ” તેની
 સંસ્કૃત છાયા “ક્ષેત્રજ્ઞ” જે પણ થાય છે જે ઉત્તમકુલાદિરૂપ ક્ષેત્રને જ્ઞાતા
 અથવા મિત્રાદિક લાભના ક્ષેત્રને જે બાબુકાર છે તે ક્ષેત્રજ્ઞ છે

પ્રતિષ્ઠેખન અને મિત્રા કરવાયોગ્ય કાલનું નામ ક્ષણ છે, તેના જે બાબુકાર
 છે તેનું નામ ક્ષણજ્ઞ છે નમસ્કાર પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકારના પ્રત્યાખ્યાનના અવસરને
 બાબુકો તે તેનું ફલિતાર્થ છે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાથી ગુરુને અહર
 સત્કાર કરવો જે બાબુ છે તેનું નામ વિનયજ્ઞ છે, શુરુ જે વખતે પાતાની તરફ જા
 અગર ઉભા હોય તે વખતે ઉભા થવું, નમસ્કાર કરવો, હાથ બે વા આદિ ર
 વિનય છે. આ પ્રકારના વ્યવહારને બાબુવાવાળા પણ વિનયજ્ઞ કહેવાય છે અને
 શુરુ મહારાજની સમીપ અહંકાર ન કરવો, દીનતા બહેર ન કરવી, તેની કો
 ગુપ્ત વાત બીજાને ન કહેવી, ઇત્યાદિરૂપ પણ વિનય છે જે આ પ્રકાર

રહસ્યાદિ ત્રુત્તીતેત્યાદિરૂપો વિનયસ્તદભિજ્ઞ इत्यर्थः । ‘स्वसमयज्ञः’ स्वं=निजं
 समयं=सिद्धान्तं जानाति यः स स्वसमयज्ञः, एवं परसमयज्ञः-अन्यदीयसिद्धान्तज्ञा-
 ननिपुणः, ‘स्वसिद्धान्ते तत्परता परसिद्धान्ते चोपेक्षा कार्या’ इत्याद्यभिज्ञः, यथा पर-
 समये स्नानादेशवश्यकर्तव्यत्वेन प्रतिपादितेऽपि स्वसमये तस्य मददर्पकरत्वेन मुनिना
 तत्परित्याज्यमेवेति यो वेत्तीत्यर्थः । उक्तञ्च—

स्नान मददर्पकरं, कामाङ्गं प्रथमं स्मृतम् ।

तस्मात्કામ પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ । ૧ । इति

વિનય છે । જો આ પ્રકાર કે વિનય કા જ્ઞાતા હોતા છે અસકા નામ ધી
 વિનયજ્ઞ છે । અપને સિદ્ધાન્ત ઓર પર કે સિદ્ધાન્ત કે જ્ઞાતા કો સ્વસમયજ્ઞ
 એવં પરસમયજ્ઞ કહતે છે । જો સ્વસિદ્ધાન્ત કા જ્ઞાતા હોગા અસકે હૃદય મેં
 પરસિદ્ધાન્ત કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેગા—દ્વેષ ઉત્પન્ન નહીં હોગા । સ્વ-
 સિદ્ધાન્ત કે બોધ સે યુક્ત સાધુ કે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત
 તત્ત્વોં કે પ્રતિ ન રાગ હોગા ઓર ન દ્વેષ હી—અનેકે પ્રતિ અસકી સદા માધ્ય-
 સ્થ ભાવના હી રહેગી । સમકિતી કે લિયે પરસિદ્ધાન્ત કે તત્ત્વોં કા
 બોધ હી અપને સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપ્રાદિત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કે પ્રતિ અધિક
 ગ્રહણ કા કારણ બનતા છે । અન્ય સિદ્ધાન્તકારોં ને સાધુ અવસ્થા મેં ધી
 જ્ઞાન વગેરહ કરના કર્તવ્ય બતલાયા છે, તવ જૈનસિદ્ધાન્ત મેં આસે અસ
 અવસ્થા મેં મદ ઓર દર્પકારી માના ગયા છે, આસલિયે હી સાધુ આસ
 પ્રવૃત્તિ સે સદા દૂર રહતે છે । કહા ધી છે—

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ ॥ ૧ ॥”

વિનયના જ્ઞાતા હોય છે તેનું નામ પણ વિનયજ્ઞ છે પોતાના સિદ્ધાન્તનો અને
 બીજાના સિદ્ધાન્તનો જે જ્ઞાતા છે તેને સ્વસમયજ્ઞ અને પરસમયજ્ઞ કહે છે
 જે સ્વસિદ્ધાન્તના જ્ઞાતા હશે તેના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્ત પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ
 રહેશે—દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે નહિ સ્વસિદ્ધાન્તના બોધથી યુક્ત સાધુના હૃદયમાં પર
 સિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વો પ્રતિ રાગ અને દ્વેષ થતો નથી તેના પ્રતિ તેની
 સદા મધ્યસ્થ ભાવના જ રહેશે, સમકિતી માટે પરસિદ્ધાન્તના તત્ત્વોનો બોધ
 પોતાના સિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપ્રદિત તત્ત્વોના સ્વરૂપ પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધાનું કારણ બને
 છે અન્ય સિદ્ધાન્તકારોએ સાધુ અવસ્થામાં પણ સ્નાન વિગેરે કરવું, કર્તવ્ય
 બતાવ્યું છે, ત્યારે જૈનસિદ્ધાન્તમાં તેને તે અવસ્થામાં મદ અને દર્પકારી
 માનેલા છે માટે સાધુ આવી પ્રવૃત્તિથી સદા દૂર રહે છે કહ્યું પણ છે—

પરસમયનિરસનનીતરાગસમયસ્થાપનચતુર ઇતિ યાવત્ । 'માવજ્ઞ' માવમન્તઃ-
કરણાશ્રયં સ્વીયં પરકીયં વા યો જાનાતિ સ માવજ્ઞઃ=સ્વપરાશ્રયચેત્તા, एवं 'પરિગ્રહ'
પરિગ્રહ્યતે ય સ પરિગ્રહઃ, યાવદાહારવસ્તુપાત્રાદિગ્રહણેન સયમમાત્રા નિર્વહતિ,
તતાઽધિકસ્તૈપણીયસ્યાપિ મૂર્છાભાવેન ગ્રહણં પરિગ્રહસ્તમ્ અમમાયમાનઃ=અમમી-
કુર્વન્, તં મનસાઽપ્યનાદદાન ઇત્યર્થઃ ।

કિઞ્ચ-કાલાનુષ્ઠાયી=શાસ્ત્રધિરિત્તિકાલે કર્તવ્યકરણશીલા । પૂર્વે 'કાલજ્ઞ' ઇતિ
કાલં જાનાતીતિ હપરિગ્રહયા પ્રોક્તમ્, અન્ન ચાવસરેઽનુષ્ઠાનવિધાયીતિ આસેક્વ

અર્થ સ્પષ્ટ છે । હસ પ્રકાર કા સાધુ પરસિદ્ધાન્ત કા નિરસન ઓર
સ્વસિદ્ધાન્ત કા સંસ્થાપન કરને મેં યજ્ઞ ચતુર રહતા છે । અપને ઓર પર
કે માનસિક અભિપ્રાય કે જ્ઞાતા કા નામ માવજ્ઞ છે । જિતને આહાર,
વસ્ત્ર, ઓર પાત્રાદિકોં સે સંયમયાત્રા નિમ્ન સક્તી છે ઉસસે અધિક કા
મૂર્છાભાવ સે ગ્રહણ કરના પરિગ્રહ છે । હસ પરિગ્રહ કા જો સર્વથા
ત્યાગી હોતા છે-મન સે ઓં ઉસે ગ્રહણ કરને કી યાહના નહીં કરતા છે
વહ પરિગ્રહ કી મમતા નહીં કરને ચાલા કહલાતા છે । જિસ પ્રતિલેક્ષનાદિ
ક્રિયા કે કરને કા જો સમય શાસ્ત્ર મેં નિયત કિયા ગયા છે ઉસી કે
અનુસાર અપને આવશ્યક કાર્યોં કા કરને ચાલા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહલાતા
છે । કાલજ્ઞ મેં ઓર કાલાનુષ્ઠાયી મેં યહી મેવ છે કિ-કાલજ્ઞ તો મિશ્રાદિ
આચરણ કે સમય કા જ્ઞાતા હોતા છે, ઓર કાલાનુષ્ઠાયી ઉસ ૨ કાલ મેં
અપને કર્તવ્ય કર્મોં કા કરને ચાલા હોતા છે । જ્ઞ-પરિજ્ઞા કી અપેક્ષા કાલજ્ઞ

“ જ્ઞાને મત્તર્પકરે, કામાર્જ્જ પ્રથમ સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામ પરિચય્ય મેઘ સ્વામિત્ત્વમે રતા ॥ ૧ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે આ પ્રકારનો સાધુ પરસિદ્ધાન્તનુ નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તનુ
સંસ્થાપન કરવામાં યજ્ઞ ચતુર રહે છે પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિ
પ્રાયના પોતાનું નામ આવજ્ઞ છે જેટલો આહાર વસ્ત્ર અને પાત્રાદિકોંથી સયમ-
યાત્રા નથી શકે છે તેનાથી અધિક મૂર્છાભાવથી મહત્ત્વ કરવું તે પરિગ્રહ છે.
આ પરિગ્રહના જે સ્વચ્છ ત્યાગી હોય છે મનથી યજ્ઞ તે મહત્ત્વ કરવાની યાદના
નથી કરતા તે પરિગ્રહની મમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે જે પ્રતિલેક્ષનાદિ
ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને
કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહેવાય છે કાલજ્ઞ અને કાલાનુષ્ઠાયીમાં જે ભેદ
છે કે-કાલજ્ઞ તે જિ પ્રતિ આવશ્યકના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયી
તે તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોંના કરવાવાળા હોય છે. આ પરિજ્ઞાની અપેક્ષા

परिज्ञया प्रतिपादितम् । ‘अपि चाप्रतिज्ञः’ अविद्यमाना प्रतिज्ञा यस्य सोऽप्रतिज्ञः प्रतिज्ञा च कषायप्रावल्यानेन भवति । यथा क्रोधाविर्भावान्नास्तिकमतानुयायिना पालकब्राह्मणेन स्कन्दकाचार्यस्य पञ्चशतशिष्यान् तैलयन्त्रे निष्पीड्यमानानवलोक्य स्कन्दकऋषिणा सकलराजधान्या विनाशप्रतिज्ञा कृता । मानोदयाद्वाहुवलिना ‘यज्ज्येष्ठोऽहं पूर्वं प्रव्रजितान्पुनर्वतिसंख्यकान् कनीयसः स्वभ्रातृन् न वन्दे’ इति प्रतिज्ञा व्यथायि । मायोदयान्मल्लीस्वामिजीवेन पूर्वभवेऽन्यमुनीन् प्रतार्य प्रत्याख्यानप्रतिज्ञाऽकारि । लोभोदयात्सुभूमचक्रवर्तिना सप्तमखण्डसाधनप्रतिज्ञा विहिता । एवमादि-

और आसेवन-परिज्ञा की अपेक्षा कालानुष्टायी समझना चाहिये । “अप्रतिज्ञः” जिसके प्रतिज्ञा विद्यमान नहीं है उसका नाम अप्रतिज्ञ है । प्रतिज्ञा, कषाय की प्रवलता से होती है, जैसे क्रोध के आवेश से नास्तिकमतानुयायी पालक ब्राह्मण ने स्कन्दकाचार्य के पांच सौ शिष्यों को तैल के यन्त्र में पेल दिया था । इस बात को देखकर स्कन्दकऋषि ने समस्त राजधानी को नष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी । मानकषाय के उदय से बाहुवली महाराज ने दीक्षित अपने से छोटे (९९) निन्यानवे भाइयों को इस ख्याल से वन्दन नहीं किया था कि ‘मैं इनसे बड़ा हूँ-और ये मुझ से छोटे हैं’ । मायाकषाय के उदय से मल्ली स्वामी के जीवने पूर्वभवं अन्य मुनियों के साथ माया करके प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की थी । लोभ-कषाय के उदय से सुभूमचक्रवर्ती ने सप्तम खंड को साधने की प्रतिज्ञा की, इत्यादि । इस प्रकार की कषायोदयजनित प्रतिज्ञा मुनियों को नहीं करनी चाहिये, इसीलिये यहां ‘अप्रतिज्ञः’ यह विशेषण दिया है । अथवा

કાલજ્ઞ અને આસેવન-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા કાલાનુષ્ઠાયી સમજવું જોઈએ “અપ્રતિજ્ઞ જેની પ્રતિજ્ઞા વિદ્યમાન નથી તેનું નામ અપ્રતિજ્ઞ છે પ્રતિજ્ઞા, કષાયની પ્રબલતાથી થાય છે જેમ ક્રોધના આવેશથી નાસ્તિકમતાનુયાયી પાલક બ્રાહ્મણ સ્કન્દકાચાર્યના પાંચસો શિષ્યોને તેલના યત્રમાં પિટ્યા હતા, તે વાતને દેખીને સ્કન્દકઋષિએ સમસ્ત રાજધાનીને નષ્ટ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી માન-કષાયના ઉદયથી બાહુબલિ મહારાજે દીક્ષિત પોતાનાથી નાના (૯૯) નવાણુ ભાઈઓને તેવા ખ્યાલથી વંદન ન કર્યું કે “હું તેમનાથી મોટો છું અને એ મારાથી નાના છે” માયાકષાયના ઉદયથી મલ્લી સ્વામીના જીવે પૂર્વ ભવમાં અન્ય મુનિઓ સાથે માયા કરીને પ્રત્યાખ્યાન પ્રતિજ્ઞા કરી હતી લોભકષાયના ઉદયથી સુભૂમચક્રવર્તીએ સાત ખંડ સાધવાની પ્રતિજ્ઞા કરી, ઇત્યાદિ આવા પ્રકારની કષાયોદયજનિત પ્રતિજ્ઞા મુનિઓએ કરવી જોઈએ નહિ, માટે અહીં આ

પ્રતિજ્ઞા મુનિના ન કાર્યેતિ સાત્પર્યમ્ । યદ્વા-મૈસાધરણાદૌ 'મૈસાધારાદિકં સ્યા' વિસ્પાદિપ્રતિજ્ઞા ન સાધીયસી । અથવા-યથા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે 'જ્ઞાનક્રિયામ્બો મોક્ષઃ' ઇત્યસ્તિ તત્ત્વ પદ્ધતરેણૈવ તદ્વધિગમ ઇત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન વિધેયેત્યર્થઃ, પદ્ધ-મહાવ્રતાવિરક્તિ કસ્મિંશ્ચિદપિ વિષયે પ્રતિજ્ઞા ન કર્તવ્યા મુનિના । યદિવા મમ તિજ્ઞઃ=અનિદાન માયાશન્યાવિરહિત ઇત્યર્થઃ । ઈશ્વરોઽનગારઃ કિં કૃત્વા નિહરતી સ્યાદ- 'દ્વિષાતઃ' ઇત્યાદિ, દ્વિષાતઃ=ઠમૌ રાગદ્વેષાવિત્યર્થઃ છિત્ત્વા=મ્યપનીય નિયાતિ=નિ=નિશ્ચયેન યાતિ=મોક્ષમાર્ગ પ્રાપ્નોતિ, પૂર્વમુજસમ્પન્નોઽપિ રાગદ્વેષ દ્વેષવાંશ ન મોક્ષ સ્મત ઇતિ માત્રા ।

મિશ્ત્રા કે સમય મેં 'મુક્તે હી આહારાવિક મિલે' એસી પ્રતિજ્ઞા નહીં કરની જાહિયે, ક્યોં કિ મુનિ કે લિયે હસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા કરના ઉચિત નહીં હૈ । જ્ઞાન ઓર ક્રિયા હન દોનોં સે મુક્તિ કા લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા કરના કિ- 'સિર્ફ જ્ઞાનમાત્ર સે યા ક્રિયામાત્ર સે હી મુક્તિ હોતી હૈ' ઉચિત નહીં હૈ । મુનિયોં કો પંચમહાવ્રતોં કે આરાધન કરને કે સિધાય અન્ય કિસી સી વિષય મેં પ્રતિજ્ઞા નહીં કરની જાહિયે ।

અથવા "અપ્રતિજ્ઞા" હસ શબ્દ કા અર્થ- 'માયાદિ ત્રિણ શસ્ત્રોં રહિત' હોતા હૈ । અનગારોં કા સર્વ સંયમ શસ્ત્રત્રય સે રહિત હોકર હી નિર્મલ હો સક્તા હૈ । હન પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અનગાર હી રાગ ઓર દ્વેષોં કા ઉન્મૂલન કર "નિયાતિ" નિશ્ચય સે મોક્ષ કે માર્ગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । રાગદ્વેષ કે ઉન્મૂલન કે અમાધ મેં હન પૂર્વોક્તગુણસમ્પન્ન સી અનગાર

"અપ્રતિજ્ઞા" કો વિશેષણ જાહેલ છે. અથવા-શિક્ષાસમયમાં 'મને જ આદ્યશબ્દિક મળે' જેવી પ્રતિજ્ઞા કરવી જોઈએ નહિ, કારણ કે મુનિ માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી ઉચિત નથી. જ્ઞાન અને ક્રિયા આ બન્નેથી મુક્તિને લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તમા પ્રતિપાદિત કરેલ છે. પરંતુ જોવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી કે 'ફક્ત જ્ઞાનમાત્રથી અથવા ક્રિયામાત્રથી જ મુક્તિ થાય છે' તે ઉચિત નથી. મુનિયોએ પદ્ધ મહાવ્રતોનું આરાધન કરવા સિવાય બીજા કોઈ પણ વિષયમાં પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ.

અથવા "અપ્રતિજ્ઞા" આ શબ્દનો અર્થ 'આદ્ય ત્રણ શસ્ત્રોથી રહિત' થાય છે. અજુગારોને સર્વ સંયમ શસ્ત્રત્રયથી રહિત બનીને જ નિર્મળ થઈ શકે છે. આ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અજુગાર જ રાગ અને દ્વેષનું ઉન્મૂલન કરી "નિયાતિ" નિશ્ચયથી મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરે છે. રાગ દ્વેષના ઉન્મૂલન

નનુ શાસ્ત્રે નાનાવિધાભિગ્રહરૂપા પ્રતિજ્ઞાઽભિહિતાઽત્ર તુ ‘ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવે’-
 દિતિ કથિતં તત્કથમ્ ? इत्यत्राह—द्विधेति, अत्र पक्षे द्विधेतिच्छाया, द्विधा=
 द्विप्रकारेण रागेण द्वेषेण च प्रतिज्ञां छित्त्वा=अकृत्वा नियाति=नियतं याति=संयमे
 विहरति, रागद्वेषवशेन मुनिरनेषणीयमपि गृह्णाति शुद्धते चेति रागद्वेषवती प्रतिज्ञा
 मुनिना न विधेयेति भावः ॥ सू० ४ ॥

આચારવિશેષં પુનરપિ દર્શયતિ—‘ વત્થં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વત્થં પડિગ્ગહં કંબલં પાયપુંછણં ઉગ્ગહં ચ કઢાસણં
 एएसु चेव जाएज्जा ॥ सू० ५ ॥

છાયા—વસ્ત્રં પતદ્ગ્રહં કમ્બલં પાદપ્રોઞ્છનમવગ્રહં ચ કટાસનમેતેષુ ચૈવ
 याचयेत् ॥ सू० ५ ॥

મુક્તિ કે લાભ સે વંચિત માના ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—શાસ્ત્ર મેં અનેક પ્રકાર કી અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાઓં કા કથન
 किया गया है, फिर यहां पर “मुनिरप्रतिज्ञो भवेत्” मुनि को प्रतिज्ञा-
 संपन्न नहीं होना चाहिये, यह कैसे कहा गया है ? ।

ઉત્તર—રાગ ઓર દ્વેષ સે જો પ્રતિજ્ઞા કી જાતી હૈ વહ સંયમી મુનિ
 के लिये उचित नहीं है । तभी वह अपने संयम मार्ग में विचर सकता
 है । राग और द्वेष के वश होकर की गई प्रतिज्ञा से मुनि अनेषणीय
 भी આહારાદિક કો ગ્રહણ કર લેતા હૈ, इसलिये रागद्वेषवाली प्रति-
 ज्ञाओं के करने का निषेध किया गया है । यह भाव “दुहओ छेत्ता नियाइ”
 इन पदों से प्रकट होता है अतः इस प्रकार की प्रतिज्ञा मुनिजनों को
 नहीं करनी चाहिये ॥ सू० ४ ॥

અભાવમાં આ પૂર્વોક્તશુભસપન્ન પણ અણગાર મુક્તિના લાભથી વચિત માનેલ છે.

પ્રશ્ન—શાસ્ત્રમાં અનેક પ્રકારની અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાતુ કથન કરેલ છે,
 વળી આ ઠેકાણે “ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્ ” મુનિએ પ્રતિજ્ઞાસંપન્ન નહિ બનવું
 જોઈએ, એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—રાગ અને દ્વેષથી જે પ્રતિજ્ઞા કરવામાં આવે છે, સયમી મુનિએ
 તેવી પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ તો જ તે પોતાના સયમ માર્ગમાં વિચરી શકે
 છે રાગ અને દ્વેષથી કરેલી પ્રતિજ્ઞાથી મુનિ અનેષણીય પણ આહારાદિક ગ્રહણ
 કરી લે છે. માટે રાગ દ્વેષવાળી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાનો નિષેધ કરેલ છે આ ભાવ
 “ दुहओ छेत्ता नियाइ ” એ પદોથી પ્રગટ થાય છે માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા
 મુનિજનોએ નહિ કરવી જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘વસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । મુનિર્યયાઽઽહારં યાચયત્ ગૃહસ્થેમ્યસ્તયૈન પતેપુ ચૈવ
 =ગૃહપતિષ્વેવ વસ્ત્રં=વસનં પતવ્ગ્રહં=પાત્રં વસ્ત્રગ્રહણેન વસ્ત્રૈપયા પતવ્ગ્રહણેન વ
 પાત્રૈપયા વ સન્નૃષીતા, કમ્બલ્=લુકાદિકમ્, પતેનોર્ણાવસ્ત્રગ્રહણમ્, પાદમોઽઘ્નં
 રજોપહરણમ્, અવગ્રહમ્=અવગૃહ્ણતે યઃ સોઽવગ્રહો વસતેરાશ્વા, શક્તેન્દ્રાજગૃહસ્વ
 શ્ય્યાતરસાધર્મિકમેદેનાવગ્રહઃ પચ્ચા, પતેનાવગ્રહપ્રતિજ્ઞા સર્વા સન્નૃષીતાઃ, વમ
 વગ્રહમ્, અપિ ચ કટાસન કટખ=સસ્તારમ્ આસનં ચ=પીઠફલકાદિકં વાનયોઃ
 સમાહારઽન્દસ્તસ્કટાસનમ્, આસ્પતેઽપ્રેત્યાસનં શ્ય્યા વા, સસ્તારઃ સાર્દ્દસ્તવ્ય-
 પ્રમાણા, શ્ય્યા ચ શરીરપ્રમાણા, પતસ્સર્વં યાચયેત્=ગવેપયેત્, પપનીયં વસ્ત્રાદિકં
 યાચયેત્ નાનેપનીયમ્, ઇતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

મંચમી મુનિ કે વિશેષ આચાર કો પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતે હુપ સૂત્ર-
 કાર કહતે હૈ—‘વસ્ત્ર’ ઇત્યાદિ ।

અનગાર જિસ પ્રકાર ગૃહસ્થોં સે આહાર કી યાચના કરતા હૈ ઉસી
 પ્રકાર ઉનસે વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહને કે લિયે વસતિ-સ્થાન
 કી ઓર કટાસન કી મી યાચના કરે । સૂત્ર મેં વસ્ત્ર કે ગ્રહણ સે
 વસ્ત્રૈપયા ઓર પાત્ર કે ગ્રહણ સે પાત્રૈપયા કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । કંબલ
 સે કતી કંબલ જાનના બાહિયે, રેશમી આદિ કમ્બલ નહીં । અવગ્રહ
 શબ્દ કા અર્થ-વસતિ-સ્થાન મેં ઠહરને કી આજ્ઞા । અવગ્રહ, શક્તેન્દ્ર, રાજા,
 ગૃહસ્થ, શય્યાતર, ઓર સાધર્મિક કે મેદ સે ૫ પ્રકાર કા હૈ । અવગ્રહ
 (આજ્ઞા) શબ્દ સે અવગ્રહસમ્યગી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હુઆ
 હૈ । કટ સે સંસ્તારક એવં આસન સે પીઠફલકાદિ જાનના બાહિયે ।
 આસન સે અપને શરીરપ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તાર સે (૨૥) વાઈ હાથકર

સચમી મુનિના વિશેષ આચારને પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતા સૂત્રકાર કહે છે-
 વસ્ત્ર ઇત્યાદિ.

અનુગાર જેવી રીતે ગૃહસ્થોમાં આહારની યાચના કરે છે તે પ્રકારે તેનાથી
 વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહેવાને મકાનની અને કટાસનની પણ યાચના
 કરે. સૂત્રમાં વસ્ત્રના મહણથી વસ્ત્રૈપયા અને પાત્રના મહણથી પાત્રૈપયાનું
 મહણ કહેવાય છે. કંબલથી ઉનની કંબલ બાણથી ભેંડબે રેશમી આદિ કંબલ
 નહિ. અવગ્રહ શબ્દનો અર્થ-વસતિ-સ્થાનમાં રહેવાની આજ્ઞા. અવગ્રહ-શક્તેન્દ્ર,
 સલ્લ, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, અને સાધર્મિકોના લેહથી ૫ પ્રકારના છે. અવગ્રહ
 (આજ્ઞા) શબ્દથી અવગ્રહસમ્યગી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓનું મહણ છે. કટથી
 સંસ્તારક અને આસનથી પીઠ-ફલકાદિ બાણનું ભેંડબે. આસનથી પોતાના
 શરીર પ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તારથી બંદી કાઢવું-નિસ્તર સમજવો.

મુનિર્માત્રયૈવાહારાદિકં ગૃહીયાત્, લાભાભાદૌ ચ મધ્યસ્થતામવલમ્બેતેતિ દર્શયતિ—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લઘ્વે આહારે અણગારો માયં જાણિજ્ઞા સે જહેયં ભગવયા પવેઙ્ગયં લાભુત્તિ ન મજ્જિજ્ઞા, અલાભુત્તિ ન સોઙ્ગજ્ઞા વહુંપિ લઘું ન નિહેપરિગ્ગહાઓ અપ્પાણં અવસક્કિજ્ઞા અન્નહા ણ પાસણ પરિહરિજ્ઞા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—લઘ્વે આહારેડનગારો માત્રાં જાનીયાત્, તદ્યથેદં ભગવતા પ્રવેદિતમ્, લાભ ઇતિ ન માઘેત, અલાભ ઇતિ ન શોચેત્, વહુપિ લઘ્વ્યા ન સ્નિહ્યાત્, પરિગ્રહા-દાત્માનમવષ્ણકેત્, અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ । અનગારઃ=મુનિઃ, લઘ્વે=સમ્પ્રાપ્તે આહારે ઉપલક્ષ-ણાદન્યસ્મિન્નપિ વસ્ત્રપાત્રશય્યાસંસ્તારકાદાવધિગતે સતિ ‘માત્રા’ યાવદ્ગ્રહણેન વિઘ્નૌના-વિસ્તર સમઙ્ગનાં ચાહિયે । અનગાર ઇન સમસ્ત ઇષણીય વસ્તુઓં કી હી ગૃહસ્થોં સે યાચના કરે, અનેષણીયોં કી નહીં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અનગાર માત્રાપ્રમાણ હી આહારાદિકોં કો લેવે । ઉનકે લાભ ઓર અલાભ મેં મધ્યસ્થ ભાવ રહે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘લઘ્વે આહારે’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્ર મેં ‘આહાર’ યહ શબ્દ ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા, સંસ્તારક આદિ કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । આહાર એવં વસ્ત્રા-દિક વસ્તુઓં કો ગૃહસ્થ કે પાસ ઉતની હી માત્રા મેં ઘોરના ચાહિયે કિ જિસસે ઘોરના વાલે ગૃહસ્થ કો ઘુવારા આરંભ નહીં કરના પડે । તથા ઇતની હી લેની ચાહિયે કિ જિનકે લેને સે અપની સંયમયાત્રા કા

જોઈએ અણગાર આ સમસ્ત ઇષણીય વસ્તુઓની ગૃહસ્થોથી યાચના કરે, અનેષણીયોની નહિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અણગાર માત્રાપ્રમાણથી આહારાદિ લે, તેના લાભ-અલાભમા મધ્યસ્થ ભાવ રાખે, આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—લઘ્વે આહારે ઇત્યાદિ

આ સૂત્રમા ‘આહાર’ આ શબ્દ ઉપલક્ષણ છે તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા, સંસ્તારક આદિનુ ગ્રહણ થાય છે આહાર અને વસ્ત્રાદિક વસ્તુઓને ગૃહસ્થોને પાસેથી એટલી માત્રામા લેવી જોઈએ કે જેનાથી દેવાવાળા ગૃહસ્થને ફરીથી બીજા વાર આરભ કરવો ન પડે, તથા એટલી જ માત્રા લેવી જોઈએ કે જે લેવાથી પોતાની સંયમયાત્રાનુ પાલન થઈ શકે, અર્થાત્ જે સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ

પૃથ્વિર્ન પુનરાસ્મે મવર્તેત, યાવતા ચાત્મનાઃ સંયમયાત્રાનિવાહો મવતિ, યયા ચ પરિષ્ઠાપનીયં ન મહેત્ તાવતી માત્રા, તાંજાનીયાત્=મુખ્યતઃ માત્રાતોઽધિક્ક્રમણે સયતમર્યાદાસ્વચ્છનાત્ । एतत्सर्वं 'जमिण चिरुवरुवर्हि' इत्युद्देशस्याविमस्ममारभ्य-
 તાવત્સ્પર્યન્તં ન મયા સ્વષુદ્ધયા પ્રોક્તમિતિ વર્ણયતિ—'તથાપિ' । તદ્વયા—इदम्-
 उद्देशारम्भतोऽप्यवहितमूत्रपर्यन्तमभिव्याप्य यदमिहितं तत्सर्वं भगक्ता प्रवदितम्=
 ઉક્તમ્ । एतेन पूर्वोक्तमूत्रादमिहितार्येऽवश्यकर्तव्यता प्रदर्शिता, अन्यया भगवदाज्ञा
 વિરાધકત્વમાપદ્યેતેતિ સમ્પ્રતિતમ્ । અપિ ચાનગારઃ કિં કુર્યાંદિતિ વર્ણયતિ—'લામ
 इती' ति, लामः=अश्वत्थसनादेर्ममैराधिगम इति चेत्तसि परिचिन्त्य न माद्येत=न
 મોદેત નામિમાનં કુર્યાંદિત્યર્થઃ ।

નિર્વાહ હો સકે, અર્થાત્ જો સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કરને મેં કિસી
 તરહ સે યાવક ન થન સકે । લેસે સમય યહ ધ્યાન અવશ્ય રહના
 ચાહિયે, એસા ન હો કિ-અધિક લેને પર પરિષ્ઠાપન કરના પડે । इतना
 ધ્યાન રહના હી માત્રા હૈ । इस मात्रा की मर्यादा का उत्लंघन करने से
 યથાવત્સંયમ કા નિર્વાહ નહીં હો સક્તા ।

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-યહ સબ કુછ જો इस
 उद्देश के प्रथम सूत्र से लगा कर यहां तक कहा गया है वह मैंने अपनी
 નિજ કલ્પના સે નહીં કહા હૈ, કિન્તુ ચીતરાગ પ્રમુદ્ધ ને યહ સબ પ્રકટ કિયા
 હૈ । इसलिये जो कुछ यहां तक कहा गया है संयमी मुनि का कर्तव्य है
 કિ ઉસ પર પૂર્ણ ધ્યાન રહે, ઓર ઉસકા અપને સંયમ કો નિર્મલ બનાવે
 કે લિયે અવશ્ય પાલન કરે, નહીં તો ભગવાનની આજ્ઞા કા વિરાધક
 થનના પડેગા ।

કસ્વામાં કોઈ પણ પ્રકારે બાધક ન બની શકે હૈતી વખત કો ધ્યાન અવશ્ય
 રાખવું જોઈએ, જેવું ન બને કે અધિક લેવાથી પરિષ્ઠાપન કરવું પડે. આટલું
 ધ્યાન રાખવું તે માત્રા છે આ માત્રાની મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવાથી બેશબર
 સંયમને નિર્વાહ બની શકતો નથી.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે—આ બધું જે કો ઉદેશના
 પ્રથમ સૂત્રથી લઈને બહીંજા સુધી કહ્યું છે તે એ મારી પોતાની કલ્પનાથી કહેલ
 નથી પણ ચીતરાગ પ્રમુદ્ધે જ આ બધું પ્રગટ કરેલ છે માટે જે કંઈ બહીંજા
 સુધી કહ્યું છે તે ઉપર સંયમી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તેના ઉપર પુરેપુરું ધ્યાન
 આપે, અને તેનું પોતાના સંયમને નિર્મળ બનાવવા માટે અવશ્ય પાલન કરે
 નહિ તો ભગવાનની આજ્ઞા વિરોધક બનવું પડશે.

અથવા ‘લાભે’ इति—જ્ઞાયા, લાભે સતિ વસ્ત્રાહારાદેરધિગમે ચ ન માદ્યેત ।
 एवमलाभे वस्त्रपात्रादेरमाप्तौ ‘धिग् हतभाग्यं मां यदन्यैर्लभ्यते अन्तरायोदयान्मया
 न लभ्यते’ इति=एवं न शोचेत् शोकं न विदध्यात्, लाभालाभयोर्मध्यस्थभावमव-
 लम्बेतेत्यर्थः । उक्तञ्च —

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन्दधाति माध्यस्थ्यम् ।
 लाभे प्राणपरिस्थितिरथचालाभे तपोवृद्धिः” ॥ १ ॥ इति ।

ऐसा कभी भी भाव न रखे कि—अशनादि-आहारवस्त्रादिक का
 लाभ मुझे ही होता है अन्य को नहीं । क्यों कि इस प्रकार की भावना
 से आत्मा में एक प्रकार का अहंकार उत्पन्न होता है जो संयम जीवन
 में सफेद वस्त्र में धब्बे की तरह बाधक होता है, अतः इस प्रकार का
 अहंकार कभी नहीं करना चाहिये । अथवा “लाभ इति न माद्येत”
 इसका अभिप्राय यह भी होता है कि आहार वस्त्रादिक का लाभ होने
 पर संयमी को हर्षित नहीं होना चाहिये, और अलाभ होने पर उसे
 “मुझ हतभागी-अभागे को धिक्कार है, दूसरों को तो सब कुछ मिलता
 है मुझे अन्तराय के उदय से कुछ भी नहीं मिलता” इस प्रकार का
 शोक भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि संयमजीवन की शोभा लाभ और
 अलाभ में मध्यस्थ भाव रखने से ही है । कहा भी है—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन् दधाति माध्यस्थ्यम् ।
 लाभे प्राणपरिस्थिति-रथ चालाभे तपोवृद्धिः ॥ १ ॥” इति ॥

એવો લાભ કોઈ વખત ન રાખે કે—‘અશનાદિ-આહારવસ્ત્રાદિકનો લાભ
 મને જ થાય છે બીજાને નહિ’ કારણ કે આ પ્રકારની લાવનાથી આત્મામા એક
 પ્રકારનો અહંકાર ઉત્પન્ન થાય છે જે સયમ જીવનમા સફેદ વસ્ત્રમા ડાઘાની
 માફક બાધક થાય છે માટે આ પ્રકારનો અહંકાર કોઈ વખત કરવો ન જોઈએ
 અથવા “લાભ इति न माद्येत” એનો અભિપ્રાય એ પણ થાય છે કે—આહારનો
 લાભ થવાથી સયમીએ હર્ષિત નહિ થવું જોઈએ, અને આલાભ થવાથી તેણે
 “હું હતભાગી-અભાગીને ધિક્કાર છે, બીજાઓને સઘળું મળે છે, મને અતરાયના
 ઉદયથી કાંઈ પણ મળતું નથી” આવા પ્રકારનો શોક પણ નહિ કરવો જોઈએ,
 કારણ કે સયમજીવનની શોભા લાભ અને અલાભમા મધ્યસ્થલાવ રાખવામા
 જ છે કહ્યું પણ છે—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन् दधाति माध्यस्थ्यम् ।
 लाभे प्राणपरिस्थिति-रथ चालाभे तपोवृद्धिः ॥ १ ॥” इति ।

કિં ચ-અપિ=કેનાપિ કારણેન પુષ્કલં સ્મૃત્વા=માપ્ય ન સ્મિન્નાત્=અમાર્ગો
 ગૃહપતૌ વા સ્નેહં ન કુર્યાત્, અપિ ચ પરિગ્રહાત્સયમયાનાનિર્માહમાપ્તો મૂર્ચ્છાભાવે
 નૈપણીયસ્યાપ્યધિકસ્વાનાદાનાત્ આસ્માનમ્ અવ્યવસ્કેત્=અપગમયેત્, તત્ આસ્માનં
 નિવર્તયદિત્યર્થઃ ।

નનુ સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્યમાવશ્યકત્સપાત્રાદીનામપિ ગ્રહણં પરિગ્રહપદેન વક્તુ-

આહારાદિક વસ્તુએ મિલે તો મી ઠીક, ન મિલે તો મી ઠીક, મુઝે
 તો દોનોં અવસ્થાઓં મેં સમતા હૈ । લામ મેં પ્રાણોં કા રક્ષણ ઓર
 અલામ મેં તપ કી વૃદ્ધિ હોગી । એસા ચિન્તાર કરના ચાહિયે ।

કિસી કારણવશ યદિ આહારાદિક સામગ્રી કિસી એક જી જગહ
 સે અધિક મિલ જાવે તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેને થાહે વાતા-
 ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થ ભાવ રખસે । હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ
 નહીં રન્વને સે સંયમી મુનિ મેં લીનતા, તથા સિદ્ધિપ્રવૃત્તિ કે અભાવ હોને
 કા પ્રસંગ આજાતા હૈ । સંયમયાત્રા કા નિર્વાહમાત્રાવાલી આહારાદિક
 સામગ્રી કે અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રી સે અપને કો દૂર રસે, કારણ કિ
 ઇષણીય હોને પર મી મૂર્છાભાવ સે અધિક ગ્રહણ કરને સે ઉસ મેં
 પરિગ્રહ કા લોપ આતા હૈ, અતઃ હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહ સે
 સદા અપની રક્ષા કરતા રહે ।

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે જો આપ આવશ્યક વસ્તુ
 પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ કરના સંયમી મુનિ કે લિયે કહ રહ હો સો યહ

આહારાદિક વસ્તુઓ મળે તો ખબ ઠીક છે, ન મળે તો ખબ ઠીક છે, એમ
 મને તો બન્ને અવસ્થાઓના સમતા હૈ લાભમા પ્રાપ્તુ રક્ષણ અને અલાભમા
 તપની વૃદ્ધિ થશે એવો ચિન્તાર કરવો બેઈએ.

હોઈ કારણવશ કદાચ આહારાદિક સામગ્રી કોઈ એક જગ્યાથી અધિક મળી
 બાક તો અન્નાદિક સામગ્રીપર તથા દેવાવાગ્ર કાવા ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-
 મધ્યમ્યભાવ રાખે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ નહિ સુખવાથી સયમી મુનિમા લીનતા,
 તથા સિદ્ધિપ્રવૃત્તિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ આવી બાક છે. સંયમયાત્રાના નિર્વાહ
 માત્રાવાગ્રી આહારાદિક સામગ્રીથી અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રીથી પોતાને દૂર રાખે,
 કારણ કે ઇષણીય હોવા છતાં પણ મૂર્છાભાવથી અધિક પ્રવૃત્તિ કરવાથી તેમાં
 પરિગ્રહનો કોઈ અર્થ નથી બાક હૈ માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહથી સદા
 પોતાની રક્ષા કરવા રહે.

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે જે આપ આવશ્યક વસ્તુ પાત્રાદિકોં
 પ્રાપ્ત કરવું તપમી મુનિ માટે કહી રહ્યા છે તે તે કહેવું બ્યાજની નથી,

મુચિતમ્, યતશ્વાનુકૂલે વસ્તુનિ રાગઃ પ્રતિકૂલે દ્વેષશ્ચ સજ્જાયતે, એવશ્ચ રાગદ્વેષ-
યોરવશ્યંભાવાન્મૂર્છાં, સૈપા પરિગ્રહઃ ‘મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો’ ઇતિ વચનાત્, તત્સદ્ભાવે
ચ કર્મવન્ધ ઇતિ કથં સંયમોપકરણસ્ય ન પરિગ્રહત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—ધર્મોપકરણે
મુનીનાં ‘મમેદ’—મિતિ ન મોહો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“અવિ અપ્પણોઽવિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાઇય” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ બી પરિગ્રહ હી હૈ, ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગ
કિયે વિના સર્વથા સંયમારાધકતા હોતી નહીં હૈ । પરિગ્રહરૂપતા ઇનમેં
ઇસલિયે હૈ કિ અનુકૂલ ઇનકી પ્રાપ્તિ મેં પ્રાપ્તકર્તા કો હર્ષ, ઔર પ્રતિકૂલ
પ્રાપ્તિ મેં પાનેવાલે કો દ્વેષ હોતા હૈ । જહાં પર રાગ ઔર દ્વેષ હૈ વહાં પર
મૂર્છા હૈ, ઔર મૂર્છા કા હોના હી પરિગ્રહ હૈ । “મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો”
મૂર્છા હી પરિગ્રહ હૈ, જેસા ભગવાન કા કથન હૈ, જહાં ઇસકા સદ્ભાવ હૈ
વહાં કર્મવન્ધ અવશ્ય હૈ, અતઃ વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણ કો પરિગ્રહ કયોં
નહીં કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—સામાન્યતયા વસ્ત્રપાત્રાદિકોં મેં પરિગ્રહતા કા હમ નિષેધ
નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ જો સંયમ કે ઉપકારક હૈં વે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈ ।
યહ એક વિશેષ વિધિ હૈ, કારણ કિ મુનિયોં કો ઇનમેં “મમ ઇદં” “યહ
મેરે હૈં” ઇસ પ્રકાર કી સમત્વભાવરૂપ મૂર્છા નહીં હોતી હૈ । કહા બી હૈ—
“અવિ અપ્પણોવિ દેહમિ, નાયરંતિ મમાઇયં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

કારણ કે તે પણ પરિગ્રહ જ છે અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કર્યા વિના સર્વથા સ-
મારાધકતા થતી નથી પરિગ્રહરૂપતા તેમા એ માટે છે કે અનુકૂળ તેની પ્રાપ્તિમાં
પ્રાપ્તકર્તા ને હર્ષ અને પ્રતિકૂળ પ્રાપ્તિમા લેનારને દ્વેષ થાય છે, જે જગ્યેએ રાગ
અને દ્વેષ છે ત્યા મૂર્છા છે, અને મૂર્છાતુ હોવુ તે પરિગ્રહ છે “મુચ્છા પરિ-
ગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા એ જ પરિગ્રહ છે, એવુ ભગવાનનુ કથન છે, ન્યા તેનો
સદ્ભાવ છે ત્યા કર્મબંધ અવશ્ય છે, માટે વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણને પરિગ્રહ
કેમ માનેલ નથી ?

ઉત્તર—સામાન્ય રીતે વસ્ત્રપાત્રાદિકોમા પરિગ્રહતાનો અમે નિષેધ કરતા
નથી જે સયમના ઉપકારક છે તે પરિગ્રહરૂપ નથી એ એક વિશેષ વિધિ છે,
કારણ કે મુનિયોને તેમા “મમ ઇદં” એ ભાસ છે, એ પ્રકારની સમત્વ ભાવરૂપ
મૂર્છા થતી નથી કહ્યુ પણ છે—

“અવિ અપ્પણો વિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાઇય ” ઇતિ (દશ અ ૬ ગા ૨૨)

છાયા—અપ્યાસ્મનોઽપિ દેહે નાશરન્તિ મમાયિતમ્ । ઇતિ । તેપાં કર્મણિ
જર્ણનાર્થ સ્વીકારાત્, યથ મૂર્છયા પરિગ્રહ્યતે સસ્ય પરિગ્રહરૂપેનામિધેયત્વાત્ ।
તત્પરિહારે ચ સયમયાત્રાયા અપિ નિર્વાહમશ્નયત્વાત્ ।

કિન્ન—અન્યથાનપદ્યકઃ—પદ્યતીતિ પદ્યઃ, સ એવ પદ્યકઃ, અન્યથા=અન્ય
મકારેણ ન પદ્યકઃ=અન્યથાનપદ્યકઃ=ધર્માપકરણાપરિગ્રહદર્શી સન્ પરિગ્રહ પરિ
રેત્ । યથા ગૃહસ્થો વસ્ત્રાદિકં શરીરાદિમુલસાધન મન્યતે ન તથા મુનિઃ । સ ચૈત-
દ્ધર્માપકરણં મમ ધર્મસાધનમથ, ન શરીરાદિમુલસાધનમિતિ મન્યમાનઃ પરિગ્રહ

સાધુઓં કો જય અને નિજ શરીર મેં હી મોહ મમત્વ નહીં હોતા
હે, તય શરીર સે સર્વથા મિલ ઉપકરણાદિકોં મેં મમત્વભાવ કૈસે હો
સકતા હે । મુનિ અવસ્થા મેં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કિયે હુવ વસ્ત્ર પાત્રાદિક
સંયમ કે ઉપકારક હોને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે હી સાધક હોતે હેં,
હસીલિયે વે સંયમ અવસ્થા મેં સ્વીકાર કિયે જાતે હેં । પરિગ્રહ વહીં પર
હે કિ જહાં પર મૂર્છાભાવ સે અપનાના હોતા હેં । જન પાત્રાદિકોં કા
ગ્રહણ મૂર્છાભાવ સે નહીં કિયા જાતા હેં, અતઃ વે પરિગ્રહરૂપ નહીં હેં,
પ્રત્યુત જનકે અભાવ મેં સંયમયાત્રા કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો
સકતા, હસીલિયે જનકા ગ્રહણ કરના આવશ્યક યતલાયા ગયા હેં । હસી
યાત કી પુષ્ટિ સૂત્રકારને “અન્યથાનપદ્યકઃ પરિગ્રહેત્” હસ વાન્ય
સે કી હેં । વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મોપકરણ હેં, જનકે વિના સંયમ કા યથાવત્
નિર્વાહ નહીં હો સકતા, હસલિયે જનકારત્વના આવશ્યક હેં । હસ પ્રકાર
જનકો પરિગ્રહરૂપ નહીં દેખતા હુઆ અનગાર જનસે અતિરિક્ત ધન

આધુઓને અન્યથે પોતાના શરીર ઉપર જ મોહ અને મમત્વ નથી
થતો તે પછી શરીરથી સર્વથા મિલ ઉપકરણાદિકોમાં મમત્વભાવ કેવી રીતે
હોઈ શકે મુનિ અવસ્થામાં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કરેલા વસ્ત્રપાત્રાદિક સંયમન
ઉપકારક હોવાથી કર્મોની નિર્જરાના જ સાધક અને છે, માટે તે સંયમ અવ
સ્થામાં સ્વીકાર કરવામાં આવે છે પરિગ્રહ તે અન્યથે ઉપર છે કે અન્ય મૂર્છા
ભાવથી લેવામાં આવે છે આ પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ મૂર્છાભાવથી કરવામાં આવતું
નથી, માટે તે પરિગ્રહરૂપ નથી પ્રત્યુત તેના અભાવમાં સંયમયાત્રાને યથા-
વત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું ગ્રહણ કરવું આવશ્યક બતાવ્યું છે
આ વાતની પુષ્ટિ સૂત્રકારે “અન્યથાનપદ્યકઃ પરિગ્રહેત્” આ વાક્યથી કરેલ
છે. વસ્ત્રપાત્રાદિક ધર્મોપકરણ છે તે વિના સંયમને યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો
નથી, માટે તેનું સંયમ આવશ્યક છે એ પ્રકારે તેને પરિગ્રહરૂપ નહિ દેખતા

પરિત્યજેત્, ન તત્ર મમત્વં કુર્યાદિત્યર્થઃ । સમુચિતમાત્રયાઽઽહારાદિગ્રાહી મુનિર્લાભા-
લામહર્ષવિપાદવર્જિતઃ પરિગ્રહાગ્રહનિવૃત્તો રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન દર્શિતોઽયં માર્ગ ઇતિ દર્શયતિ—‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસ મગ્ગે આરિયહિં પવેઙ્ગ જહેતથ કુશલો નોપલિં-
પેજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—એપ માર્ગ આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પયેઃ । ઇતિ
બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—‘ એપ માર્ગ ’ ઇત્યાદિ । એપઃ=પૂર્વોક્તરૂપઃ માર્ગઃ શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ
આર્યૈઃ=તીર્થઙ્કરગણધરાદિભિઃ પ્રવેદિતઃ—પ્ર=પ્રકર્ષેણ=દ્વાદશપરિપદિ કથિતઃ ।

ધાન્યાદિ કો પરિગ્રહ સમજ્ઞકર છોડ દેતા હૈ । ગૃહસ્થ જિસ પ્રકાર વસ્ત્રા-
દિકોં કો શારીરિક સુખાદિ કા કારણ માનકર ઉન્હેં ગ્રહણ કરતા હૈ
ઉસ પ્રકાર કી ભાવના સે મુનિ નહીં । ધર્મોપકરણ સે ધર્મ કા હી સાધન
હોતા હૈ—અન્ય શરીરસુખાદિક કા નહીં । એસા માનકર હી મુનિ ગ્રહણ
કરતા હૈ, ઓર ઉનમેં મમત્વભાવ સે રહિત હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-
અનગાર કો સમુચિત માત્રા મેં આહારાદિક ગ્રહણ કરને વાલા, લાભ ઓર
અલાભ મેં સમભાવી; પરિગ્રહ સે ચિરત, ઓર રત્નત્રય કી આરાધના મેં
નિમગ્ન હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

હિસ માર્ગ કે પ્રદર્શક કૌન હૈં? હિસ વાત કો દિખલાતે હુઅ સૂત્રકાર
કહતે હૈં—‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ ।

યહ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોને

અણુગાર તેનાથી અતિરિક્ત ધનધાન્યાદિને પરિગ્રહ સમજીને છોડી દે છે. ગૃહસ્થ
જેવી રીતે વસ્ત્રાદિકોને શારીરિક સુખાદિકનું કારણ માનીને તેને ગ્રહણ કરે છે
તે પ્રકારની ભાવનાથી મુનિ નહિ ધર્મોપકરણથી ધર્મનું જ સાધન થાય છે—અન્ય
શરીરસુખાદિકનું નહિ એવું માનીને જ મુનિ તેને ગ્રહણ કરે છે, અને તેમાં
મમત્વભાવથી રહિત થાય છે તાત્પર્ય એ છે કે—અણુગારે સમુચિત માત્રામાં
આહારાદિક ગ્રહણ કરવાવાળા, લાભ અને અલાભમાં સમભાવી, પરિગ્રહથી વિરત,
અને રત્નત્રયની આરાધનામાં નિમગ્ન થવું જોઈ એ. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આ માર્ગનો પ્રદર્શક કોણ છે, આ વાતને બતાવતા સૂત્રકાર કહે છે—
‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ

આ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોએ બાર

હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેણ ત્વં કુશલ સન્ આર્યક્ષેત્રસુકુલજન્માવિક્તં, સસારાર્ણવતરિ ઘોષિ, સકલકર્મણપણસમર્થ ચારિત્ર ચ સ્મધ્યા અત્ર=શ્રી તીર્થકુરનિર્દિષ્ટમાર્ગેષ્ટવિષકર્મહેતુમૂતેન પાપકર્મણા નોપસ્મિપ્યે=નોપસ્મિતો મવેસ્તયા કુરુપ્ત, પતસ્મિન્માર્ગે સ્થિત एव મુનિઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાવિક્તં લમત ઇતિ માવા । ઇતિ-શબ્દોઽપિ કારસમાપ્ત્યર્થઃ, સ ચાહારાવિગથપણારૂપ । યન્મયા મગયત્સમીપે ધૃતં તત્સર્વં ત્વાં ઘ્રવીમિ=વચ્મિ । ઇતિ ॥ સૂ. ૭ ॥

પરિગ્રહાદાત્મનિવૃત્તિષ્ઠ તત્કારણો મૂલ્લન વિના ન સમ્ભવતિ, તત્કારણં ચ શબ્દાદયઃ પશ્ચ કામગુણાઃ, તેપામ્લનમૂલ્લને ચ દુષ્કરમિતિ વર્ણયતિ-‘કામા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કામા દુરિક્કમા, જીવિય દુષ્પટિબૂહગ, કામકામી સ્વલ્લ અય પુરિસે, સે સોયદ્ જૂરદ્ તિપ્પદ્ પિટ્તદ્ પરિતપ્પદ્ । સૂ. ૮ ।

પારદ્ પ્રકાર કી સમા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । उन्होने कहा है कि—जो मनुष्य आर्य क्षेत्र, सुकुल में जन्म; ससाररूपी समुद्र के पार पहुँचने के लिये नौका स्वरूप बोधि, एवं सकल कर्मों के विनाशक चारित्र को प्राप्त कर तीर्थकरादि प्रदर्शित इस मार्ग का अवलम्बन करता है—इसमें प्रवृत्ति करता है वह पापकर्म से—जो अष्ट प्रकार के कर्मों के आखव का हेतु है—कभी भी उपलब्ध नहीं होता है, इसलिये हे शिष्य ! तुम भी अपनी प्रवृत्ति को इस प्रकार की बनाओ, ताकि तुम भी इस विषय में कुशल वन पापकर्म से उपलब्ध न हो सको । सूत्र में ‘इति’ शब्द इस अधिकार की समाप्ति का सूचक है, अर्थात् हे शिष्य ! आहारादिक की गवेपणारूप यह अधिकार जैसे मैंने भगवान् के निकट सुना है वैसा ही यहां तुम से प्रकट किया है, मेरी निजी कल्पना इस विषय में कुछ भी नहीं है ॥ सू. ७ ॥

પ્રકાશની સભામાં પ્રગટ કરેલ છે તેઓએ કહ્યું છે કે—જો મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુળમાં જન્મ. અવ્યબાધ સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્પર્શ્ય બોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકુરનિર્દિષ્ટ આ માર્ગનું અવલમ્બન કરે છે—આમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે અષ્ટ પ્રકારના કર્મોના આસ્રવનો હેતુ છે—કેમ વખત પણ ઉપલિપ્ત થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપલિપ્ત ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ઇતિ શબ્દ આ અધિકારની તમાપ્તિનો સૂચક છે, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગવેપણારૂપ આ અધિકાર એવો મેં ભગવાન પાસેથી શ્રાવ્યો છે તેવો હું તને કહું છું. મારી પોતાની કલ્પના આ વિષયમાં કંઈ પણ નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પ્રતિવૃંહણીયં, કામકામીં ચ્છુ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂર્યતે તેપતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ મૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ ઇત્યાદિ । કામાઃ—ઈચ્છામદનભેદાદ્વિવિધાઃ । તત્ર-ઈચ્છાકામાઃ-હિરણ્યાદિવાચ્છારૂપાઃ, મદનકામાઃ=શબ્દાદિરૂપાઃ, પૂર્વસ્ય કારણં મોહનીયભેદૌ હાસ્યરતી, પરસ્ય ચ કારણં મોહનીયભેદવેદોદયઃ । તતશ્ચોભયોરપિ કામયોઃ પ્રાદુર્ભાવો મોહનીયાદેવ, એવશ્ચ કારણસત્ત્વે કાર્યભૂતસ્ય કામસ્યોન્મૂલનમશક્યમ્ ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈં । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના બડા કઠિન હૈ, ઇસી વાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—“કામા દુરઈક્રમા” ઇત્યાદિ ।

ઈચ્છા ઔર મદન કે ભેદ સે કામ દો પ્રકાર કા હૈ । હિરણ્યાદિક કી વાચ્છારૂપ ઇચ્છાકામ હૈ । ઇસકા કારણ મોહનીય કર્મ કા ભેદ હાસ્ય ઔર રતિ હૈ । શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય મદનકામ હૈ । ઇનકા મી કારણ—મોહનીય કર્મ કા ભેદ—વેદ—નોકષાય કા ઉદય હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કામોં કી ઉત્પત્તિ મોહનીયકર્મ કે ઉદય સે હી હોતી હૈ । કારણ કે સદ્ભાવ મેં કાર્ય કા સદ્ભાવ અવશ્યંભાવી હૈ, ઇસીલિયે સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને “દુરતિક્રમાઃ” ઇસ પદ સે ઇનકા ઉન્મૂલન દુષ્કર બતલાયા હૈ । જબતક મોહનીયરૂપ કારણ કા ઉદય હૈ તબ તક ઇનકા અભાવ હો હી નહીં સકતા, અતઃ ઇનકા પ્રતીકાર કરના દુઃશક્ય હૈ । જીવન કા મી પ્રતિ-

પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ તેના કારણનો નાશ કર્યા વગર બની શકતી નથી તેનું કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ છે તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરઈક્રમા’ ઇત્યાદિ.

ઈચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે હિરણ્યાદિકની વાચ્છારૂપ ઇચ્છાકામ છે, તેનું કારણ મોહનીય કર્મના ભેદ—હાસ્ય અને રતિ છે શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય મદન કામ છે, તેનું પણ કારણ—મોહનીય કર્મના ભેદ—વેદ—નોકષાયનો ઉદય છે આ પ્રકારે બંને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણ સદ્ભાવમા કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમા સૂત્રકારે “દુષ્કર” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન દુષ્કર બતાવ્યું છે બધા સુધી મોહનીયરૂપ કારણનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો દુઃશક્ય છે જીવનનો પણ પ્રતિદિન

હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેણ ત્વં કુશલઃ સન્ આર્યક્ષત્રસુકુલમન્માદિકં, સંસારાર્ણવતરિ ધોધિં, સફલકર્મસપ્પણસમયં ચારિત્રં ચ લભ્વા અન્ન=ઇદં તીર્થકુરનિર્વિઘ્નમાર્ગેષ્ટવિષકર્મહેતુભૂતેન પાપકર્મણા નોપલિમ્પય=નોપલિમ્નો મહેસ્તયા કુરુત્વ, પતસ્મિન્માત્રો સ્થિત ઇવ મુનિ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં લમતઃ ઇતિ માત્રં । ઇતિ-શબ્દોઽપિ કારસમાપ્ત્યર્થ, સ આહારાદિગથેપણારૂપ । યન્મયા મગવત્સમીપે શ્રુતં તત્સર્વં ત્વાં વ્રવીમિ=વચ્મિ । ઇતિ ॥સૂં ૭॥

પરિગ્રહાદાત્મનિવૃત્તિષ્વ તત્કારણોન્મૂલનં વિના ન સમ્પન્નવતિ, ઉત્કારણં ચ ક્ષન્વાદય પન્ન કામગુણાઃ, તેપાન્મૂલનં ચ દુષ્કરમિતિ વર્ણયતિ-‘કામા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-કામા દુરદ્વક્ષકા, જીવિય દુષ્પટિબૃહદ્, કામકામી સ્વલ્લ અય પુરિસે, સે સોયદ્ જૂરદ્ તિપ્પદ્ પિટ્તદ્ પરિતપ્પદ્ ॥સૂં ૮॥

બારદ્ પ્રકાર કી સમા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । ઉન્હોને કહા હૈ કિ-જો મનુષ્ય આર્ય ક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ; સંસારરૂપી સમુદ્ર કે પાર પહુંચને કે લિયે નૌકા સ્વરૂપ બોધિ, ઇવં સકલ કર્મો કે વિનાશક ચારિત્ર કો પ્રાપ્તકર તીર્થકરાદિ પ્રદર્શિત ઇસ માર્ગ કા અવલંબન કરતા હૈ-ઇસમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વદ્ પાપકર્મ સે-જો અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મો કે આશ્રય કા હેતુ હૈ-કર્મી મી ઉપલિસ નહીં હોતા હૈ, ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ મી અપની પ્રવૃત્તિ કો ઇસ પ્રકાર કી બનાઓ, તાકિ તુમ મી ઇસ વિષય મેં કુશલ થન પાપકર્મ સે ઉપલિસ ન હો સકો । સૂત્ર મેં ‘ઇતિ’ શબ્દ ઇસ અધિકાર કી સમાપ્તિ કા સૂચક હૈ, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિક કી ગથેપણારૂપ યદ્ અધિકાર જૈસે મૈને મગધાન્ કે નિકટ સુના હૈ વૈસા હી યદ્માં તુમ સે પ્રકટ કિયા હૈ, મેરી નિજી કલ્પના ઇસ વિષય મેં કુછ મી નહીં હૈ ॥સૂં ૭॥

પ્રકારની સભામાં પ્રગટ કરેલ છે તેઓએ કહ્યું છે કે-જો મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુલમાં જન્મ, અવ્યાપાક સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્વરૂપ બોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકરાદિપ્રદર્શિત આ માર્ગનું અવલંબન કરે છે-આમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે આઠ પ્રકારના કર્મોના આશ્રયને હેતુ છે-કેલ્લ વખત પણ ઉપલિસ થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપલિસ ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ઇતિ શબ્દ આ અધિકારની સમાપ્તિને સૂચક છે, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગથેપણારૂપ આ અધિકાર જેવા મેં મગધાન પાસેથી સાંભળ્યો છે તેવો હું તને કહું છું, મારી પોતાની કલ્પના આ નિરપમા કાલ પણ નથી ॥ સૂં ૭ ॥

છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પતિવૃંઘ્નીયં, કામકામી સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂયંતે તેષતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ મૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ ઇત્યાદિ । કામાઃ—ઈચ્છામદનભેદાદ્વિવિધાઃ । તત્ર-ઈચ્છાકામાઃ-હિરણ્યાદિવાઙ્છારૂપાઃ, મદનકામાઃ=શબ્દાદિરૂપાઃ, પૂર્વસ્ય કારણં મોહનીયભેદૌ હાસ્યરતી, પરસ્ય ચ કારણં મોહનીયભેદવેદોદયઃ । તત્ત્વોભયોરપિ કામયોઃ પ્રાદુર્ભાવો મોહનીયાદેવ, એવંચ કારણસત્ત્વે કાર્યભૂતસ્ય કામસ્યોન્મૂલનમશ્કયમ્ ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈં । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના વડા કઠિન હૈ, ઇસી વાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—“કામા દુરઈકમા” ઇત્યાદિ ।

ઈચ્છા ઓર મદન કે ભેદ સે કામ દો પ્રકાર કા હૈ । હિરણ્યાદિક કી વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ હૈ । ઇસકા કારણ મોહનીય કર્મ કા ભેદ હાસ્ય ઓર રતિ હૈ । શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય મદનકામ હૈ । ઇનકા મી કારણ—મોહનીય કર્મ કા ભેદ—વેદ—નોકષાય કા ઉદય હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કામોં કી ઉત્પત્તિ મોહનીયકર્મ કે ઉદય સે હી હોતી હૈ । કારણ કે સદ્ભાવ મેં કાર્ય કા સદ્ભાવ અવશ્યંભાવી હૈ, ઇસીલિયે સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને “દુરતિક્રમાઃ” ઇસ પદ સે ઇનકા ઉન્મૂલન દુષ્કર બતલાયા હૈ । જબતક મોહનીયરૂપ કારણ કા ઉદય હૈ તબ તક ઇનકા અભાવ હો હી નહીં સકતા, અતઃ ઇનકા પ્રતીકાર કરના દુઃશ્ક્ય હૈ । જીવન કા મી પ્રતિ-

પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ તેના કારણનો નાશ કર્યા વગર બની શકતી નથી. તેનું કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ છે તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરઈકમા’ ઇત્યાદિ.

ઈચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે હિરણ્યાદિકની વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ છે, તેનું કારણ મોહનીય કર્મના ભેદ-હાસ્ય અને રતિ છે શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય મદન કામ છે, તેનું પણ કારણ—મોહનીય કર્મના ભેદ-વેદ-નોકષાયનો ઉદય છે આ પ્રકારે બન્ને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણ સદ્ભાવમા કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમા સૂત્રકારે “દુષ્કર” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન દુષ્કર બતાવ્યું છે બન્યા સુધી મોહનીયરૂપ કારણનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો હુ શક્ય છે જીવનનો પણ પ્રતિદિન

અતઃ એવં ત્રિવિધા અપિ કામા 'દુરતિક્રમાઃ' દુ = દુઃસ્થેનાતિક્રમઃ = ઉન્મૂલનં = વિનાશો
 યેષાં તે દુરતિક્રમાઃ । અથવા-દુઃસ્થેનાતિક્રમ્ય તે = ઉન્મૂલ્ય તે યે તે દુરતિક્રમાઃ =
 દુઃશક્યપ્રતીકારા દુષ્પરિહરા इति यावत् ।

ફિં ચ-જીવિતં = મનઃપ્રણાલિયુક્ત પ્રતિદિનમપચીયમાનતયા દુષ્પરિબૃહ્ણીયં = વૃદ્ધિ
 યિતુમશક્ય પરિજીર્ણશ્ચિન્નવસ્ત્રવત્સન્ધાતુમનર્હમિત્યર્થઃ ।

યદ્વા-જીવિતં-સંયમજીવિતં દુષ્પરિબૃહ્ણીયં, સયમિનચારિત્રાન્તરાયોદયા-
 ત્કામામિપ્તજ્ઞે સતિ સંયમજીવિતસ્ય પ્રત્યહં સીયમાપ્તવાત્ ।

દિન હાસ હો રહા છે । આયુર્કર્મ કા શાસ્ત્રકારોં ને અપકર્પણ તો કતલાયા
 છે કિન્તુ ઉત્કર્પણ નહીં, હસલિયે આયુઃકર્મ કા પ્રતિસમય અપચય હોને સે
 જીવન મી અપચય કી ઓર હી વઢ રહા છે । એસા કોઈ મી કારણ નહીં છે
 જો જીવન કો સ્થિર, અથવા મુજ્યમાન આયુ મેં એક સમય મી વૃદ્ધિ કર
 સકે, હસલિયે જિસ પ્રકાર બિલકુલ જીર્ણ પટે હુપ વસ્ત્ર કા સીના
 અશક્ય હોતા છે વસી પ્રકાર આયુર્કર્મ કી વૃદ્ધિ હોની મી અશક્ય
 છે । એસા સમજકર આત્મહિતૈષી કે લિયે હન ચિપયાદિકોં મેં ઘાંખા નહીં
 કરની ચાહિયે । જીવન કા જિતના અશ હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે સુર
 ક્ષિત રહ સકે એસા હી પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે ।

અથવા-જીવન શબ્દ કા અર્થ સંયમજીવન છે । યદ્ દુષ્પરિબૃહ્ણીય
 (વઢાના મુશ્કિલ) હસલિયે કતલાયા જા રહા છે ફિં યદિ સંયમી કો
 ચારિત્રમોહનીય કે વદ્ય સે કામગુણોં મેં ઘાંખા ઉત્પન્ન હો જાવે તો

હાસ થઈ રહો છે, આયુર્કર્મના શાસ્ત્રકારોએ અપકર્પણ તો બતાવેલ છે, પણ
 ઉત્કર્પણ નહિ માટે આયુર્કર્મ પ્રતિસમય અપચય હોવાથી જીવન પણ અપ
 ચય ની વરદ બ વધી રહ્યું છે એવું કોઈ પણ કારણ નથી જે જીવનને સ્થિર
 અથવા મુજ્યમાન આયુમાં એક સમય પણ વૃદ્ધિ કરી શકે, માટે જે પ્રકારે
 બિલકુલ પટેલા વસ્ત્રનું ચીવવું અશક્ય થાય છે તે પ્રકારે આયુર્કર્મની વૃદ્ધિ થવી
 પણ અશક્ય છે એવું સમજીને આત્મહિતૈષી માટે આ ચિપયાદિકોમાં ઘાંખ્યા નહિ
 કરવી એમજે જીવનને જેટલો પણ અશ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી મુરશ્ચિત રહી
 શકે તેવો જ પ્રયત્ન કરતા રહેવો એમજે.

અથવા-જીવિત શબ્દને અર્થ સયમ જીવન છે આ દુષ્પરિબૃહ્ણીય
 (વધારવું મુશ્કેલ) છે એટલા માટે બતાવવામાં આવેલ છે કે જ્ઞાત્યસયમીને ચારિત્ર
 મોહનીયના વદ્યથી કામગુણોમાં ઘાંખ્યા ઉત્પન્ન થઈ અથ તો તેનું તે સયમ-

યતઃ કામા દુરતિક્રમા અત એવ અયં પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન કામકામી-કામં દ્વિપ્રકારં કમિતું શીલં યસ્ય સ કામકામી=કામસ્પૃહાશીલો ભવતિ, ય ઈદ્દશઃ સઃ= પૂર્વોક્તપ્રકારઃ અપહતમનઃસંકલ્પઃ સન્ કિં કરોતીત્યાહ-શોચતીતિ । શોચતિ= ઇષ્ટવિપયાપ્રાપ્તૌ તન્નાશે વા શોકં કરોતિ । અપિ ચ-સ એવ જૂર્યતે=જૂરણાં કરોતિ— અન્તર્દુઃસ્વેન શરીરં શોપયતીત્યર્થઃ, દીનઃ સન્ વહુ વિલપતિ, તથાહિ—

અસકા વહ સંયમજીવન વિલકુલ હી નષ્ટ હુઆ સમજ્ઞના ચાહિયે । એસા તો હો નહીં સકતા કિ સંયમજીવન વના રહે ઓર કામગુણોં કી વાઙ્છા ભી અપના કામ કરતી રહે । ઇસલિયે એસી પરિસ્થિતિ મેં સંયમ-જીવન કા પાલન અશક્ય હી હૈ ।

જવ યે કામગુણ દુરતિક્રમ હૈ તવ હી તો પ્રાણી ઇનકે અધીન બન ઇનકી ઓર સ્પૃહાશીલ હોકર આકૃષ્ટ હોતા હૈ । આકૃષ્ટ હોને પર ભી જવ ઇસકા માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નહીં હોતા, અથવા ઇસકી મનચાહી વસ્તુ ઇસે નહીં મિલતી તવ યહ પ્રાણી શોકાકુલ હોતા રહતા હૈ । યદિ ઇસે મનચાહી વસ્તુ મિલ ભી જાતી હૈ પરન્તુ જ્યોં હી ઇસકા વિયોગ હો જાતા હૈ તો ઇસકે હૃદય મેં અપાર શોક કા સમુદ્ર ઉમડને લગતા હૈ । અનભીષ્ટ સંયોગ હોને પર ડસે દૂર કરને કે લિયે ઇસકે ચિત્ત મેં અનેક પ્રકાર કે અશુભ સંકલ્પ ઉઠતે રહતે હૈ । અનિષ્ટ વસ્તુ કે સંયોગ મેં એસા હી હોતા હૈ । પ્રાણી ડસ સમય અન્તર્દુઃસ્વ સે અપને તક કો ભી સુઝા દેતા હૈ । કામી પુરુષ સ્વતઃ હી દીન બનકર પ્રલાપ કરને લગ જાતા હૈ ।

જીવન બિલકુલ જ નષ્ટ થયેલ સમજવુ બેઠએ એવુ તો બની જ શકતું નથી કે સયમજીવન બની રહે અને કામગુણોની વાછના પણ પોતાનુ કામ કરતી રહે માટે આવી પરિસ્થિતિમા સયમજીવનનુ પાલન અશક્ય જ છે

ન્યારે એ કામગુણ દુરતિક્રમ છે ત્યારે જ તો પ્રાણી તેના આધીન બની તેની તરફ સ્પૃહાશીલ બનીને આકૃષ્ટ થાય છે આકૃષ્ટ થવા છતાં પણ ન્યારે તેનો માનસિક સકલ્પ પૂર્ણ નથી થતો, અથવા તેની મનપસદ વસ્તુ તેને નથી મળતી ત્યારે તે પ્રાણી શોકાકુલ થઈ રહે છે કદાચ તેને મનપસદ વસ્તુ મળી પણ બંધ પરન્તુ ન્યા તેનો વિયોગ થઈ બંધ છે તો તેના હૃદયમા અપાર શોકનો સમુદ્ર ઉભરાવા લાગે છે અનભીષ્ટ સંયોગ બનવાથી તેને દૂર કરવા માટે તેના ચિત્તમા અનેક પ્રકારના અશુભ સકલ્પ વિકલ્પ ઉઠતા રહે છે, અનિષ્ટ વસ્તુના સંયોગમા એવુ જ થાય છે પ્રાણી તે વખતે અતરડુ બની પોતાની બંતને પણ સુકાવી નાખે છે કામી પુરુષ સ્વતઃ દીન બની પ્રલાપ કરવા લાગી બંધ છે, આ બાત આ શ્લોકથી પ્રકટ કરવામા આવે છે

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,—

બહુજનવ્યયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ॥

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્ષીય ! સતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુષન્ધ્યાઃ ક્રિયન્તે ॥ ૧ ॥ इति ।

અપિ ચ=તેપતે કુલાદિમર્યાદાતઃ સચલતિ-નિર્મર્યાદો મક્તીત્યર્થઃ । તથા પીન્યતે=શારીરમાનસદુ સ્તૈઃ ક્રિયન્તે । કિં ચ-પરિતપ્યતે-પરિ=સર્વતો નાશ્મન્તથ

यह बात इस श्लोक से प्रकट की जाती है—

“प्रथमतरमथेदं चिन्तनीयं तवासीद्,

बहुजनव्ययितेन प्रेम कृत्वा जनेन ।

हतहृदय ! निराश ! क्षीय ! सतप्यसे किं,

नहि जह ! गततोये सेतुषन्ध्याः क्रियन्ते ” ॥ १ ॥ इति ॥

કામિયોં કી વશા હી કુછ એસી વિલક્ષણ હોતી હૈ કિ જિસ કી વજહ સે વે અપની કુલ કી મર્યાદા તક કો મી છોડ દેતે હૈ । શારીરિક પંથ માનસિક દુઃખોં સે વે સદા સતત રહા કરતે હૈ । રાતદિન પચ્ચાત્તાપ હી પચ્ચાત્તાપ કિયા કરતે હૈ કિ “યદિ એસા ઉપાય કરતે તો યહ વાત થન જાતી, એસા ઉપાય કરતે તો યહ કામના ફલીમૂત હો જાતી, અથ વ્યા કરેં?, એસા નહીં છુઆ” હરથાવિ પચ્ચાત્તાપ સે બાહર ખીતર જલા કરતે હૈ । મન મેં પચ્ચાત્તાપ કરના ખીતરી પચ્ચાત્તાપ હૈ, ઓર ઉસે શબ્દ સે પ્રકટ કરના વાચ્ય પચ્ચાત્તાપ હૈ । મનોજ્ઞ પદાર્થોં કી અપ્રાપ્તિ મેં અથવા પુત્રકલ્યાદિ પદાર્થોં કે વિનાશ મેં દુઃખી હોના મી પરિતાપ હૈ । વજો

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્ -

બહુજનવ્યયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્ષીય ! સતપ્યસે કિં

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુષન્ધ્યાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ इति ॥

કામીઓની દશા જ કઇ એવી વિવશજન થાય છે કે જે તે પિતાના બુજની મર્યાદાને પણ છોડી દે છે શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી તે સદા સતત તથા કરે છે તત્કાલિન પચ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે કે—“ કદાચ એવો ઉપાય કરના તો એ વાત બની જાન, આવો ઉપાય કરતા તો તેમાં ખારી કામના ફલીમૂત થાત, અને મું કરે એવું બ મું નહિ ” ઇત્યાદિ પચ્ચાત્તાપથી બચાવથી તેમજ અદરથી બચ્યા કરે છે । નામાં પચ્ચાત્તાપ કરતો અતરંગી પચ્ચાત્તાપ છે અને તને શબ્દથી પ્રમત્ કરતો તે બાહ્ય પચ્ચાત્તાપ છે । મનોજ્ઞ પદાર્થોની અપ્રાપ્તિમાં અથવા પુત્રકલ્યાદિ પદાર્થોના વિનાશમાં દુઃખી થવું પણ પરિ-

તપ્યતે=પશ્ચાત્તાપસંતપ્નો ભવતિ । અથવા-હિતાપ્રાપ્તૌ પુત્રકલત્રાદિનાશે ચ પરિતપ્યતે ।
નિશ્ચિલમિદં હિ શોચનાદિકં વિષયાસન્નેન કલુષિતાન્તઃકરણસ્ય દુઃસ્વાવસ્થાદ્યોતકમ્ ।

યદિ વા યૌવનધનમદમોહાભિભૂતઃ કાશ્ચનકામિન્યાદીન્યુપમુજ્ય વૃદ્ધાવસ્થાયાં
નિકટમરણકાલે શોચતિ-‘ ધિગ્ મા હતભાગ્યં, યદવસરે સકલસુખદો ધર્મો મયા
શોચનાદિક અવસ્થાએ યહાં કામી પુરુષોં કી પ્રકટ કી ગર્હ હૈં ; વે સમસ્ત
હી વિષય કે સમ્બન્ધ સે કલુષિત-અન્તઃકરણવાલે વ્યક્તિયોં કી દુઃસ્વા-
વસ્થા કી દ્યોતક હૈં ।

અથવા-‘ શોચતિ ’ આદિ પદોં કે અર્થ કા સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થા કે
સાથ મીં ઇસ પ્રકાર સે હોતા હૈં-યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત તથા
મોહ કે નશે સે અચેત વના હુઆ યહ પ્રાણી કંચન કામિની કા ઉપભોગ
કરતે ૨ જવ વૃદ્ધાવસ્થા કા મેહમાન હોતા હૈં ઓર અપના મરણકાલ
નિકટ દેખતા હૈં તવ વહ શોકાકુલ હો વિચારતા હૈં-મુજ્ઞ અમાગે
કો ધિક્કાર હૈં કિ મૈને યોગ્ય અવસર કે પ્રાપ્ત હોને પર મીં
સકલ સુખદાયી ધર્મ કા અરાધન નહીં કિયા, રાત દિન યૌવન ઓર
ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત હોકર અશુભ કા હી સંગ્રહ કિયા, ઇસકા ફલ
ક્યા હોગા? ઇસ વાત કા જરા મીં વિચાર નહીં કિયા; અવ વૃદ્ધાવસ્થા
આચુકી હૈં, ઇસમેં જિન ૨ કષ્ટોં કા મૈ અનુભવ કર રહા હૂં યે સવ પૂર્વ

તાપ છે આ જે શોચનાદિક અવસ્થાઓ આ ઠેકાણે કામી પુરુષોની પ્રગટ કરેલ
છે તે સમસ્ત વિષયના સબ ધર્મી કલુષિત અન્તઃકરણવાળી વ્યક્તિઓની દુઃખાવ-
સ્થાની દ્યોતક છે

અથવા-‘ શોચતિ ’ આદિ પદોના અર્થનો સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ
આ પ્રકારે થાય છે-યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત તથા મોહના નશાથી
અચેત બનેલા તે પ્રાણી કંચન કામિનીનો ઉપભોગ કરતો કરતો ન્યારે વૃદ્ધા-
વસ્થાનો મહેમાન થાય છે અને પોતાનો મરણકાળ નિકટ આવેલો જાણીને શોકા-
તુર બની વિચારે છે કે ‘ મને અભાગીને ધિક્કાર છે કે મેં યોગ્ય અવસરની
પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સુખદાયી ધર્મનું આરાધન ન કર્યું રાત્રિન યૌવન અને
ધનના મદથી ઉન્મત્ત બની અશુભનો જ સંગ્રહ કર્યો, તેનું ફળ શું મળશે ?
એ વાતનો જરા પણ વિચાર ન કર્યો હવે વૃદ્ધાવસ્થા આવી તેમા જે જે કષ્ટોનો
હું અનુભવ કરી રહ્યો છું તે બધા પૂર્વમા ઉપાર્જિત અશુભ પરિણતિનું જ

નાચરિતઃ' इति श्लोकं करोति । अष्टमस्य परिणतिमनवधायैव तत्र या प्रवृत्तिर्निर्दिता सा चार्द्धमये दुःखदा भवति । उक्तञ्च—

“मविर्भी भूतानां परिणतिमनालोच्य नियतां,
पुरा यद्यत् किञ्चिद्विहितमशुभं यौवनमदात् ।
पुनः प्रत्यासन्ने महति परलोकेकगमने,
तदेवैकं पुंसां व्यथयति जराजीर्णवपुषाम्” ॥ १ ॥

‘જૂયંતે’ इत्यादेरर्थस्तु पूर्ववत् । अतो मेधाविना पूर्वं कार्यं परिणतिमनालोच्यैव करणीयं, येन पश्चात् पश्चात्तापो न भवेत् । उक्तञ्च—

में उपार्जित अष्टम-परिणति के ही फलरूप हैं । नीचे के श्लोक में यही बात प्रकट की गई है, जैसे—

“मविर्भी भूतानां परिणतिमनालोच्य नियतां,
पुरा यद्यत् किञ्चिद्विहितमशुभं यौवनमदात् ।
पुनः प्रत्यासन्ने महति परलोकेकगमने,
तदेवैकं पुंसां व्यथयति जराजीर्णवपुषाम्” ॥ १ ॥ इति ।

વૃદ્ધ અપને કો દુઃખી લેસકર શૂરતા હૈ, માનસિક એવં શારીરિક અનેક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ । દુઃખી હોને પર અપની કુલમર્યાદા કા ‘મી’ ધ્યાન નહીં રસતા । ફસલિયે ધુલ્હિમાન પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ પ્રત્યેક કાર્ય કે પ્રારમ્ભ-કાલ મેં ઉસકે ફલાફલ કા વિચાર કર ઉસ કાર્ય કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરે । બિના વિચારે તથા ઉસકી સારતા એવં અસારતા કી પૂરી વિચારણા કિયે બિના કોઈ ‘મી’ કાર્ય નહીં કરના ચાહિયે, નહીં તો પશ્ચાત્તાપ કે સિચાય ઓર કોઈ ફલ હાથ નહીં લગતા

કુળકૃપ છે. નીચેના શ્લોકમાં એજ વાત પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે જેમ—

મવિર્ભી ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિંચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકેકગમને
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ॥ ૧ ॥

વૃદ્ધ પાતાને કુળી કેળીને કુરે ॥ માનસિક અને શારીરિક અનેક કષ્ટોને

અનુભવ કરે છે. કુળી યવાથી પાતાની કુળમર્યાદાને પણ અચ્છ સખતો નથી. તેથી ધુલ્હિમાન પુરુષને કર્તવ્ય છે કે પ્રત્યેક કાર્યના પ્રારંભકાળમાં તેના ફળાફળને વિચાર કરી તે હાથમાં પ્રવૃત્તિ કરે. વિચાર્યા વગર તથા તેની સારતા અને અસારતાની પૂરી તપાસ કર્યા બિના કોઈ પણ કાર્ય કરવું એઈ એ નહિ. નહિ તે પશ્ચાત્તાપ સિચાય

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ
પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણિતેન ।
અતિરમસકૃતાના કર્મણામાફલાપ્તે,—
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાક.” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અતઃ પરિગ્રહકારણં શબ્દાદિકામગુણોઽવશ્યમુન્મૂલનીયો મુનિનેતિ
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કઃ શોકાદિકં ન પ્રાપ્નોતીતિ દર્શયતિ—‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આયયચક્ષૂ લોગવિપસ્સી લોગસ્સ અહોભાગં જાણઇ,
ઉડ્ઢં ભાગં જાણઇ, તિરિયં ભાગં જાણઇ, ગડ્ઢિણ લોણ અણુ-
પરિયટ્ટમાણે સંધિં વિહિત્તા ઇહ મચ્છિણહિ, એસ વીરે પસંસિણ જે
વચ્છે પડિમોયણ, જહા અંતો તહા વાહિં, જહા વાહિં તહા અંતો,
અંતો અંતો પૂહિદેહંતરાણિ પાસઇ પુઢો વિ સવંતાઈં પંડિણ
પડિલેહણ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

હૈ । નીચે કે પદ્ય મેં યહી વાત દિશ્વલાઈ ગઈ હૈ, જૈસે—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણિતેન ।
અતિરમસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥

હસલિયે મુનિજન કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે જૈસે ભી હો સકે પરિગ્રહ
કે કારણભૂત ઇન પૂર્વોક્ત કામગુણોં કા ઉન્મૂલન કરે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ખીણુ કાઈ પણુ ફળ મળતું નથી નીચેના પદ્યમા આજ વાત બતાવવામા આવી
છે, જેમ—

“ ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
પરિણતિરવધાર્યા યત્નત પણિતેન ।
અતિરમસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાક ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

માટે મુનિનુ કર્તવ્ય છે કે ન્યા સુધી બને ત્યા સુધી પરિગ્રહના કારણભૂત
આ પૂર્વોક્ત કામગુણોનુ ઉન્મૂલન કરે ॥ સૂ ૮ ॥

જ્ઞાયા—આયત્તચક્ષુર્લોકવિદર્શી લોકસ્યાવામાર્ગ જાનાતિ, ઈર્થ્યં માર્ગં જાનાતિ, તિર્થ્યજ્ઞ માર્ગં જાનાતિ, યદ્વદો લોકોઽનુપરિવર્તમાનઃ સન્ધિં વિવિત્સા ૩૬ મ-
ત્યેષુ, એવ વીરઃ પ્રશ્નસિતો યો યદ્દાન્ પરિમોચયતિ, યથાઽન્તસ્તથા ષાઠ્ઠં, યથા
ષાઠ્ઠં તથાઽન્તઃ, અન્ત અન્ત પૂતિવેદાન્તરાગ્નિ પૂયગપિ સ્પન્તિ પશ્વિતઃ પ્રત્યુપેષ્વતઃ ૩૭

ટીકા—‘આયત્તચક્ષુરિત્યાદિ । આયત્તચક્ષુઃ=આયત્=દીર્ઘ ચક્ષુઃ=જ્ઞાનચક્ષુર્-
સ્ય સ આયત્તચક્ષુઃ=પેરિકપારખિકદુ સ્વદર્શી—‘કામા નિયમતોઽનર્થમદુસા’ ઇત્ય-
વષાર્થે તાન્ વિદ્યાયાઽઽત્મમુસાન્નુમવીત્યર્થઃ । કિંચ લોકવિદર્શી, લોકં વિપયાસ-
ત્રેન હિન્વમાનં જન વિ=વિશેષેન=કામામિષ્વત્રેન લોકે દુઃસ્વાધિક્યં, તત્પાત્રેન ચ
મશ્વમમુલં ભવતિ ’ ઇત્યંવરૂપેણ દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સ લોકવિદર્શી—લોકદુઃસ્વામિનઃ,

શોકાવિકોં કો કૌન પ્રાપ્ત નહીં કરતા ? ઇસકે સિયે સૂત્રકાર કહત
હે—‘આયત્તચક્ષુ’ ઇત્યાદિ ।

૩૬લોકસમ્યગ્ની ઓર પરલોકસમ્યગ્ની દુઃસ્વોં કા જ્ઞાન જિસસે
હોતા હે એસે જ્ઞાનચક્ષુ કા હી યહા પર ચક્ષુ-શબ્દ સે પ્રહ્ણ કિયા ગયા
હે । ડમયલોકસમ્યગ્ની દુઃસ્વોં કે જ્ઞાન સે હી ડસ ચક્ષુ મેં આયત્તા
પ્રકટ કી ગઈ હે । ઇસી આમ્યન્તર ચક્ષુ સે યહ જાના જાતા હે કિ કામ-
ગુણ નિયમ સે અનર્થકારી હે । અત્ત ઇનકા પરિત્યાગ કર આત્મસુલ્લ કા
અનુમલ્લાલી હોના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કે પવિત્ર વિચાર સે જો ડસ
સુલ્લ કા અનુભવી હે, તથા જો લોકવિદર્શી હે—અર્થાત્ જો ઇસ માત્ર
કી જાનતા હે કિ યહ લોક વિપર્યોં કે સમ્યગ્ન સે હી અધિક દુઃસ્વી હો
રહા હે, યદિ પ્રશમ સુલ્લ યહાં પર હો સકતા હે તો ડનકે સરુવે ત્યાગ
સે હી હો સક્તઃ હે । ઇસ પ્રકાર સે જિસકે દેખને કા સ્વભાવ હે ડસકા

લોકવિદર્શીને લોક પ્રાપ્ત નથી કરતા તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયત્ત-
ચક્ષુ’ ઇત્યાદિ.

આ લોકસમ્યગ્ની અને પરલોકસમ્યગ્ની હુ જેવુ જ્ઞાન હોને યાચ છે એવા
જ્ઞાનનમુને આ લોકલે ચક્ષુ-શબ્દથી પ્રકટ કરેલ છે અને લોકસમ્યગ્ની
દુઃખેના જ્ઞાનથી જ તે ચક્ષુમા આયતતા પ્રકટ કરેલ છે આ આમ્યન્તર-ચક્ષુથી
એમ બલ્લવામા આવે છે કે કામગુણ નિયમથી અનર્થકારી છે માટે તેના પરિ-
ત્યાગ કરી આત્મસુખના અનુભવશાળી બનવું એમજે આવા પ્રકારના પવિત્ર
વિચારથી જ તેવા સુખના અનુભવી છે તથા જે લોકવિદર્શી છે અર્થાત્ જે
આ વાતને બહે છે કે આ લોક વિશેના સમ્યગ્ની જ અધિક દુઃખી બની
રહેલ છે. કદાચ પ્રશમ સુખ અહી બની શકતું હોય તે તેના સાથા ત્યાગથી
જ બની શકે છે આવા પ્રકારથી જેને દેખવાનો સ્વભાવ છે તેનું નામ લોક

યદ્વા લોકસ્ય=પશ્ચાસ્તિકાયરૂપસ્ય વિ=વિશેષમ્ ઊર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્ગતિસુખદુઃસ્વાયુઃ-
કારણકર્મરૂપં દ્રષ્ટું શીલં यस્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવાહ-‘લોકસ્યે-’ ત્યાદિ । લોકસ્ય
અધોભાગં=નિમ્નભાગં ભવનપતિનારકાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ=જ્ઞાનવિપચી-
કરોતિ, એવમ્, ઊર્ધ્વ ભાગમ્=ઉપરિતનભાગં સૌધર્મકલ્પાદિરૂપં જાનાતિ, તથા
તિર્યઞ્ચં ભાગં=મધ્યભાગં પશુપક્ષિ-મનુષ્યાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ, લોકવિ-
દર્શી યેન કર્મવિપાકેન યસ્મિંલોકે યસ્ય પ્રાણિનો જન્મ ભવતિ તત્સર્વ જાનાતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—‘લોકવિદર્શી’ લોકં=પરિગ્રહાદ્યર્જનતત્પરં ગૃહ્ણં વિશેષેણ દ્રષ્ટું શીલં
યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવ દર્શયતિ ‘ગૃહ્ણઃ’ ઇત્યાદિ । ‘ગૃહ્ણઃ’=કામભોગમૂર્ચ્છિતો
લોકઃ=જનઃ અનુપરિવર્તમાનઃ=ચતુર્ગતિપુ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણે પ્રાપ્તુવન્ વર્તતે’

નામ લોકવિદર્શી હૈ । અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ ઇસ લોક કે ઉર્ધ્વલોક,
અધોલોક એવં તિર્યગ્લોક કે સુખ દુઃખ ઓર આયુર્બંધ કે કારણરૂપ કર્મ
કો જાનને કા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । લોકવિદર્શી
‘ભવનપતિ ઓર નારકી આદિ કે નિવાસસ્થાનભૂત અધોભાગ કો,
તથા સૌધર્મકલ્પાદિ રૂપ ઉર્ધ્વભાગ કો ઓર પશુ, પક્ષી, મનુષ્યાદિકા
નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્ય લોક કો જાનતા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
લોકવિદર્શી જિસ કર્મકે વિપાક સે જિસ લોક મેં જિસ જીવ કા જન્મ
હોતા હૈ ઇસ સવ વિષય કો ભલીભાંતિ જાનતા હૈ ।

અથવા પરિગ્રહાદિક કે ઉપાર્જન તથા સંગ્રહ કરને મેં તત્પર ઓર
કામભોગમેં મૂર્ચ્છિત એસે ઇસ લોક કો વિશેષ રીતિ સે દેખને કા જિસ
કા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । વહ યહ વાત બી જાનતા હૈ કિ
જો પ્રાણી કામભોગોં મેં આસક્ત હૈં વે ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં વારં-

વિદર્શી છે, અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ આ લોકનો, ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્-
લોકના સુખદુઃખ અને આયુષધના કારણરૂપ કર્મને બાણવાનો જેનો સ્વભાવ
છે તે પણ લોકવિદર્શી છે લોકવિદર્શી ભવનપતિ અને નારકી આદિના નિવા-
સસ્થાનભૂત અધોભાગને, તથા સૌધર્મકલ્પાદિરૂપ ઉર્ધ્વભાગને, અને પશુ, પક્ષિ,
મનુષ્યાદિના નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્યલોકને બાણે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-
લોકવિદર્શી જે કર્મના વિપાકથી જે લોકમાં જે જીવનો જન્મ થાય છે તે બધા
વિષયને સારી રીતે બાણે છે

અથવા પરિગ્રહાદિકનું ઉપાર્જન, તથા સંગ્રહ કરવામાં તત્પર અને કામ-
ભોગોમાં મૂર્ચ્છિત એવા આ લોકને વિશેષ-રીતિથી દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
પણ લોકવિદર્શી છે તે એ વાત પણ બાણે છે કે-જે પ્રાણી કામભોગોમાં
આસક્ત છે તેનું ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણ થયા કરે છે.

इत्यादिकमपि ज्ञानातीति सम्बन्धः । इह=अर्द्धतृतीयद्वीपरूपे लोके मर्त्ये=मनुष्य-
जन्मसु सन्धि=भावसन्धि-ज्ञानादिरत्नत्रयसमाराधनावसर विदिस्था=ज्ञात्वा श्रद्धा-
विविपयान् यो अज्ञाति स एष=पूर्वोक्त आयतचक्षुर्लोकविदर्शी सन्धिपरिज्ञाता वीर
=कर्मविदारणसमर्थः प्रशंसितः=तीर्थङ्करादिभिरमिनन्दितः, य ईदृशः स एव परान्
मोचयितुं समर्थ इत्याह-‘जे वदे’ इत्यादि । यः स्वयं द्रव्यभावरूपेण बन्धनेन
विमुक्तः स एव बद्धान्=कर्मपाशनिगडितान् इतरानपि प्रतिमोचयति=संसार-
सारताप्रदर्शनरूपसदुपदेशेन संसारकारागृहादपनयति । यः स्वयं मुक्तः स एव पर
मोचको भवतीति भावः ।

પાર જન્મ ઓર મરણ કરતે રહતે હૈ । હસ અઢાઈ દ્વીપ મેં મનુષ્ય-જમ
મેં હી જીવોં કો જ્ઞાનાવિકરત્નત્રય કી આરાધના કરને કા અવસર
મિલતા હૈ-અન્યત્ર નહીં, અતઃ શબ્દાદિક વિષયોં કા જો પરિત્યાગ કરતા
હૈ એસા વહ પૂર્વોક્ત આયતચક્ષુસંપન્ન લોકવિદર્શી ઓર સંધિપરિ
જ્ઞાતા વીર કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં શક્તિશાલી હોતા હૈ, ઓર એસે હી
વીર પુરુષ કી તીર્થકરાદિ મહાપુરુષોં ને પ્રશંસા કી હૈ । એસે મનુષ્ય હી
દ્રવ્ય ઓર ભાવ-બંધન સે રહિત હોતે હુણ અન્ય-દૂસરે કર્મરૂપી પાશ સે
જકડે હુણ સંસારી જીવોં કો બી સંસાર કી અસારતા પ્રદર્શન કરનેવાહે
અપને ઉપદેશોં સે પ્રતિયોધિત કર હસ સંસારરૂપી કારાગાર કે બંધન સે
રહિત કર દેતે હ । પાત બી ઠીક હૈ; જો સ્વયં મુક્ત હોતા હૈ વહી દૂસરોં
કો મુક્ત કરનેવાલા હોતા હૈ ।

જ્ઞાની, અપને તથા પર કો હસ સંસારરૂપી કારાગાર કે બંધન સે કેસે

આ અહીં દ્વીપમા મનુષ્ય-જમમાં જ જીવોને જ્ઞાનાદિક રત્નત્રયની અશ્ર-
ધના કરવાને અવસર મળે છે, અન્યત્ર નહિ. આટલે શબ્દાદિક વિષયોને ? પરિ-
ત્યાગ કરે છે એવા તે પૂર્વોક્ત આયતચક્ષુસંપન્ન, લોકવિદર્શી અને સંધિ
પરિજ્ઞાતા, વીર - કર્મોને વિનાશ કરવામાં શક્તિશાળી થાય છે. અને એવા જ
વીર પુરુષની તીર્થકરાદિ મહાપુરુષોએ પ્રશંસા કરેલ છે એવા મનુષ્ય જ દ્રવ્ય
અને ભાવબંધનથી રહિત થઈને અન્ય-બીજા કર્મરૂપી પાશથી જકડાએલા
સંસારી જીવોને પણ સંસારની અસારતા પ્રદર્શિત કરવાવાળા પોતાના ઉપદેશોથી
પ્રતિયોધિત કરી આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી રહિત કરી દે છે. પાત
પણ ઠીક છે તે સ્વયં મુક્ત બને છે તે જ બીજાને મુક્ત કરવાવાળા બને છે.

જ્ઞાની પોતાને તથા બીજાને આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી કેવી રીતે

કેન પ્રકારેણ સ્વપરાત્માનં પ્રતિમોચયતીતિ જિજ્ઞાસાયાં શરીરામેધ્યત્વ-નિસ્સાર-ત્વ-પ્રદર્શનપુરસ્સરં નિર્વેદ-જનનેત્યાહ—‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ અન્તઃ=શરીરસ્યાઅન્યન્તરે શુક્રશોણિતમેદોમજ્જાવસાસ્થ્યાદિપૂર્ણતયા નિઃસારતાઽસ્તિ તથૈવ વહિઃ=શરીરસ્ય વહિર્ભાગેઽપિ શ્લેષ્મશિઙ્ગાણમૂત્રપુરીષાદયો મલાઃ નિઃસરન્તિ, ઇત્તિ નિઃસારતા દ્રષ્ટવ્યા । एवं યથા=યાદૃશા=વહિર્નવમિદ્વારૈર્મલા નિઃસરન્તિ તથા=તાદૃશાસ્તે મલા અન્તરપિ વર્તન્તે । શરીરં હિ—અતિજુગુપ્સિતશુક્રશોણિતસંયોગાદુત્પન્નત્વેનાતિઘ્ણિતમૂત્રપુરીષપૂત્યાદેર્નિષ્પન્દમાનતયા ચાન્તર્વહિરત્યન્તામેધ્યમેવ ।

છુડાતા હૈં? इस प्रकार की जिज्ञासा का समाधान करने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—‘यथान्तस्तथावाह्य’—मिति । संसार में समस्त अज्ञानी जीवों को जितना मोह अपने शरीर पर होता है उतना किसी पर भी नहीं होता । अपने शरीर की संभाल के लिये प्रत्येक प्राणी अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु तक की भी उपेक्षा कर दिया करता है । अतः जिस शरीर पर अज्ञानी का इतना अधिक मोह होता है, ज्ञानी जीव उसी की असारता प्रकट कर उससे मोही जीवों का अनुराग घटाने के लिये कहते हैं कि—जिस प्रकार यह शरीर भीतर से शुक्र, शोणित, मेद, मज्जा, वशा और अस्थ्यादि अशुचि पदार्थों से युक्त है—अर्थात् इस शरीर के भीतर इन अपवित्र वस्तुओं का जमघट है उसी प्रकार बाहर में भी यह शरीर श्लेष्म-कफ, मूत्र, पुरीषादि से सदा घृणित बना रहता है । इन अपवित्र पदार्थों को बहाने के लिये जैसे इसमें नवद्वार हैं, उसी तरह भीतर भी हैं । यह अतिजुगुप्सित-घृणित शुक्र और शोणित के संयोग

છોડાવે છે? તે પ્રકારની જિજ્ઞાસાનુ સમાધાન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—‘યથાન્તસ્તથા વાહ્ય’—મિતિ । સંસારમાં સમસ્ત અજ્ઞાની જીવોને જેટલો મોહ પોતાના શરીર ઉપર હોય છે એટલો બીજા ઉપર હોતો નથી પોતાના શરીરની સંભાળ માટે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાની પ્રિયમાં પ્રિય વસ્તુની પણ ઉપેક્ષા કરી દે છે માટે જે શરીર ઉપર અજ્ઞાનીનો આટલો અધિક મોહ હોય છે, જ્ઞાની જીવ તેનીજ અસારતા પ્રગટ કરી તેનાથી મોહી જીવોનો અનુરાગ ઘટાડવા માટે કહે છે કે—જે પ્રકારે આ શરીર ભીતરથી શુક્ર, લોહી, મેદ, મજ્જા, વસા અને અસ્થિ આદિ અશુચિ પદાર્થોથી યુક્ત છે, અર્થાત્ આ શરીરની ભીતર એ અપવિત્ર વસ્તુઓનો જમાવ છે તે પ્રકારે બહાર પણ આ શરીર શ્લેષ્મ-કફ, મૂત્ર, પુરીષાદિથી સદા ઘૃણિતજ બન્યું રહે છે આ અપવિત્ર પદાર્થોને બહાર નિકળવા જેમ તેના નવ દ્વાર છે તે પ્રકારે ભીતરમાં પણ છે એ અતિજુગુપ્સિત-ઘૃણિત

યથા શર્યહસ્તૈવોડનાયમૃતકં તૃણૈર્નેષ્ટપિત્થા સપ્તાઈં યાવજ્જ્વલે સસ્થાપ્ય ક્ષૈ-
ન્નેસ્તસ્ય કથિતમાસમપાકૃત્ય વર્ષયતિ—પશ્યન્તુ મનન્ત, શરીરમિદં યથાન્તસ્તથા
મરિચ્યા મસ્તિયાન્ત, સર્વં ચ શરીરં સ્વર્ગમાંસશોણિતજાઠરાન્મૂત્રપુરીપાપ્મશુનિ-
પિષ્ઠરૂપમેવાત શરીરે કઃ શુચિવાદ ? । અથુષીં ચ શરીરે મુષેવ મોહોડ્ઞાનિનામ્ ।
યદ્વા—કુષ્ઠાદિના જાયમાનાં તસ્ય દુર્દશાં વર્ષયતિ—‘ યથાન્તઃ ’ ઇત્યાદિ ।

ગલ્લસ્કુષ્ઠિના યથા અન્ત—શરીરમધ્યે મૂત્રપુરીપલેલશ્નિજ્ઞાપિત્તશોણિત-

સે ઉત્પન્ન હોને કી યજહ સે, તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીપ આદિ કો
ચહાને ઘાલા હોને સે મીતર ઓર બાહર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર હી હૈ ।

જૈસે કોઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતક કો તૃણો સે લપેટ કર સાત દિન
તક જલ મેં ઉસે રચ્ચ દેતા હૈ ઓર જબ ઉસકા ચમડા ધીરે ૨ સફ-ગલ
જાતા હૈ તપ ઉસ ચમડે કો ચહ ઉસકે ઉપર સે નિકાલકર ઉસકે
અસ્થિપંજર કો દિસલાકર કહતા હૈ કિ—દેસિયે, યહ શરીર જિસ પ્રકાર
મીતર હૈ ઉસી પ્રકાર બાહર હૈ । યહ સમસ્ત શરીર ચમડા, માસ,
શોણિત, પેટ સંયંધી આતે, મૂત્ર ઓર પુરીપાદિ અશુષિ પદાર્થો કા પિષ્ઠ
રૂપ હી હૈ, અતઃ હસ શરીર મેં શુષિતા કી માન્યતા કહાં તક શોમા-
સ્પદ માની જા સક્કસી હૈ ? અશુષિ શરીર મેં વ્યર્થ હી અજ્ઞાની જન મોહ
કરતે હૈ । તથા—કુષ્ઠાદિક સે જિસ સમય હસ શરીર કી દુર્દશા હોતી હૈ
ઉસ સમય કી પરિસ્થિતિ કા ધ્યાન દિલાતે છુપ મી યહ કહા જાતા હૈ
કિ “ યથાન્તસ્તથા યાદ્ય ”—મિતિ ।

૫૬ પેસા મી કોહ હોતા હૈ કિ જિસસે શરીર કે પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ

શુક અને લોહીના સંયોજથી ઉત્પન્ન થવાથી તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીપ
આદિને વહાવવાવાળા લોહીના બીતર અને બહાર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર જ હૈ

જેમ કેઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતકને ઘાસથી લપેટી ચાતદિવસ સુધી જળમાં
તેને રાખે છે અને બચ્ચા રે તેનું ચમડું ધીરે ધીરે સડી સડી ગળી જાય છે
ત્યારે તે ચમડીને તેના ઉપરથી કાઢીને તેના અસ્થિપિંજરને દેખાડી કહે છે
કે—જેણે આ શરીર જેવી રીતે બીતર છે તેવી રીતે બહાર છે જે પ્રકારે બહાર
છે તે પ્રકારે બીતર છે આ સમસ્ત શરીર—ચમડી, માસ, શોણિત, પેટસબંધી
આવરજ, મૂત્ર અને પુરીપાદિ અશુષિ પદાર્થોના પિંડરૂપ જ છે, માટે આ શરીરમાં
શુષિતાની માન્યતા કયા સુધી શોભાસ્પદ માની લેવામાં આવે ? અશુષિ
શરીરના વ્યર્થ જ અજ્ઞાનીજન મોહ કરે છે

તથા—કુષ્ઠાદિકથી ૭ વખતે આ શરીરની દુર્દશા થાય છે તે સમયની પરિ-
સ્થિતિનું ધ્યાન આપીને પણ એ કહેવામાં આવે છે કે “ યથાન્તસ્તથા યાદ્ય ” મિતિ

એક એવો પણ કોહ થાય છે કે જેનાથી શરીરના પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ

कृम्यादीनि भवन्ति तथा वह्निः=शरीरवह्निर्भागेऽपि पूयपूतिशोणितकृम्यादीनि स्रवन्ति भवन्ति । तदुपरि 'भिनभिनेति' शब्दं कुर्मणैर्मक्षिकासहस्रैराक्रान्तं स्वशरीरं विज्ञाय स्वयमपि स्वात्मानं जुगुप्सते उद्विजते च । यच्छरीरदौर्गन्ध्येन सङ्क्रामकरोगभिया च यत्पार्श्वे परिजनोऽपि नोपवेष्टुमुत्सहते ।

‘जहा अंतो तहा वाहिं’ इत्यादिना गूढतयोक्तमेवार्थं प्रकटीकुर्यन्नाह—‘अंतो अंतो’ इत्यादि । स आयतचक्षुर्लोकविदर्शी अन्तः अन्तः=शरीरस्य मध्ये मध्ये पूतिदेहान्तराणि-पूत्यन्तराणि=पूतिविशेषान्, तथा देहान्तराणि=देहावस्थाविशेषान् मासरुधिरमेदोमज्जादिरूपाणि पूत्यन्तरदेहान्तराणीत्यर्थः, पश्यति=ज्ञानचक्षुषा विलोकयति,

गलने लग जाते हैं, इस रोगी को गलत्कुष्ठी कहते हैं । इसके शरीर के भीतर जैसे मूत्र, पुरीष, खेल-कान का मैल, शिङ्घाण-नाक का मैल, पित्त, शोणित और कृम्यादिक होते हैं वैसे ही शरीर के बाहिरी भागों में भी पीव, शोणित और कीड़े वगैरह निकलते रहते हैं, हजारों मन्त्रिख्यां भी भिन्-भिन् शब्द करती हुई उसके ऊपर मंडराती रहती हैं । ऐसी अपनी दशा देखकर वह स्वयं भी अपने से घृणा करने लग जाता है, और दुःखी भी होता रहता है । उसी समय उसके पास उस रोग के लग जाने के भय से तथा उसकी दुर्गंध से उसके परिजन तक भी बैठने की इच्छा तक भी नहीं करते । अतः इस शरीर की जब यह हालत हो तो फिर उसमें मोह करना ही व्यर्थ है ।

ज्ञानी जन तो इस शरीर को सदा अपवित्र जानकर राग करने का स्थान ही नहीं मानते, उनकी दृष्टि में तो इस देह के समस्त भाग ही अति

गणवा लागे છે, આ રોગીને ગલત્કુષ્ઠી કહે છે તેના શરીરની બીતર ભેમ મૂત્ર-પુરીષ, બળખા, કાનનો મેલ, શિંઘાણુ-નાકનો મેલ, પિત્ત, શોણિત અને ચર-મીઆ આદિ થાય છે તેવી જ રીતે શરીરના બહારના ભાગમા પણ પડ, શોણિત અને કીડા વિગેરે નીકળતા રહે છે હબરો માખીઓ પણ બણુ-બણુ શબ્દો કરતી તેના ઉપર ફરતી રહે છે એવી પોતાની દશા દેખીને તે પોતે પોતાની બલતની ઘૂણા કરવા લાગી બળ્ય છે, અને હુળી પણ બને છે તે વખતે તે રોગના લાગી જવાના લયથી તથા તેની દુર્ગંધથી તેના પરિજન પણ તેની પાસે બેસવાની ઇચ્છા કરતા નથી માટે આ શરીરની તેવી સ્થિતિ બનતી હોય તો પછી તે શરીર ઉપર મોહ રાખવો વ્યર્થ છે

જ્ઞાનીજન તો આ શરીરને સદા અપવિત્ર બાણીને રાગ કરવાનું સ્થાનજ માનતા નથી, તેની દૃષ્ટિમા તો આ દેહના સમસ્ત ભાગ અતિ દુર્ગંધથી ઘૂણિતતર જ

तथा 'पुगो वि' पृथगपि=वेदाद् धरिपि 'सवताई' सवन्ति=नि'सरन्ति=स्पन्दमानानि पृतिदेशान्तराणि-पूत्यन्तराणि=विकृतदुर्गन्धरुधिराणि, वेदान्तराणि=श्लेष्मादीनि, कुष्ठरोगिणा मांसादीनि च पश्यति । यत्नेन ततः किं कुर्यात्? इत्याह—'पण्डितः' इत्यादि । पण्डितः=परिज्ञातहेयोपादेयः, प्रत्युपेक्षेत=यथावस्थितरूपेण जानीयात् । एतत्सर्वं त्रिविधत्वाऽत्यन्ताशुचौ यौक्तरूपसम्पन्नेऽपि शरीरे राग न विदध्यादिति भावः । उक्तञ्च—

“मंसद्विरुद्धिरण्णारुवणद्वकलमलयमेयमज्जहारिं ।

पुण्यमि चम्मकोसे, दुग्गवे असुइपीमच्छे ॥ १ ॥

संचारिमजंतगलंतवच्चमुत्तसेअपुण्यमि ।

वेहे हुज्जा किं रागकारणं असुइहेउम्मि ॥ २ ॥ इति ॥

दुर्गंध से घृणिततर हैं । यदि उन भागों के दुर्गंध की याद की जावे तो घमन तक भी हो जावे । तथा इस देश में अपने २ स्थान में रही हुई जो जो मांस, रुधिर, मज्जा, शुक्र, वसा- (चर्बी) तथा हड्डी वगैरह चातुर्ये उपधातुर्ये हैं वे सब ही, तथा कुष्ठादि-अवस्था में समस्त ही इन्द्रियां गल जाती हैं । अतः जानी जन इस क्षणविनश्वर एवं नित्य अशुचि शरीर में ममताशाली नहीं होते हैं । कहा भी है—

“मंसद्विरुद्धिरण्णारुवणद्वकलमलयमेयमज्जहारिं,

पुण्यमि चम्मकोसे, दुग्गवे असुइपीमच्छे ॥ १ ॥

संचारिमजंतगलंतवच्चमुत्तसेअपुण्यमि ।

वेहे हुज्जा किं रागकारणं असुइहेउम्मि ॥ २ ॥ इति

भाषार्थ इसका यही है कि यह देश मांसादिक पदार्थों से युक्त

है । कदाच ते आग्नेयी दुग्ग धनी याद कर्यामां आवे तो उलटी पलु दाव छे तथा आ देहमा पोतपोतान्ता स्थानमां लोवा के के भास, रुधिर, मेद, मज्जा, शुक्र, चर्बी तथा दाहता विगेशे चातुर्ये, उपधातुर्ये छे ते अपी, तथा कुष्ठादि-अवस्थाभा समस्त इन्द्रियो पलु जणी तथा भांटे छे, तेधी समीपल आ दावविनश्वर नने नित्य अशुचि शरीरभा ममताशाली यत्ता नधी । कहु पलु छे—

“मंसद्विरुद्धिरण्णारुवणद्वकलमलयमेयमज्जहारिं ।

पुण्यमि चम्मकोसे दुग्गवे असुइपीमच्छे ॥ १ ॥

संचारिमजंतगलंतवच्चमुत्तसेअपुण्यमि ।

वेहे हुज्जा किं रागकारणं असुइहेउम्मि ॥ २ ॥ इति

भाषार्थ जो छ के आ देह भाषादिक पदार्थों से युक्त होता है अशुचि

છાયા—માંસાસ્થિરુધિરસ્નાયવનદ્વકલમલકમેદોમજ્જાભિઃ ।

पूर्णे चर्मकोशे दुर्गन्धेऽशुचिवीभत्से ॥ १ ॥

संचारिमयन्त्रगलद्वर्चोमूत्रान्त्रस्वेदपूर्णं ॥

देहे भवेत्किं रागकारणम् अशुचिहेतौ ॥ २ ॥ इति ॥ सू० ९ ॥ सू०

उक्तस्वरूपं શરીરં નિર્વર્ણ્ય કિં કરોતીતિ દર્શયતિ—‘સે મઙ્ગમં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે મઙ્ગમં પરિજ્ઞાય મા ય હુ લાલપચ્ચાસી, મા તેસુ તિરિચ્છમપ્પાણમાવાયેઃ કાસંકસે સ્વલુ અયં પુરિસે, વહુમાઈ ક-
હેણ મૂઢે પુણો તં કરેઈ લોહં વેરં વડ્ઢેઈ અપ્પણો, જમિણં પરિક-
હિજ્જઈ ઇમસ્સ ચેવ પરિવૂહણયા, અમરાયઈ મહાસઢ્ઢી અટ્ટમેયં
તુ પેહાણ અપરિણાણ કંદઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અથ મતિમન્ ! પરિજ્ઞાય મા ચ હુ લાલાપ્રત્યાસી, મા તેષુ તિરસ્ચીન-
માત્માનમાપાદયેઃ, કાસંકપઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, વહુમાયી કૃતેન મૂઢઃ પુનસ્તત્કરોતિ
લોભં વૈરં ચ વર્દયતિ આત્મનઃ, યદિદં પરિકથ્યતેઽસ્ય ચૈવ પરિવૃંહણાય અમરાયતે
મહાશ્રદ્ધી આર્તમેતં તુ પ્રેક્ષ્યાપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોને કી વજહ સે અશુચિ, દુર્ગંધયુક્ત, વીભત્સ હૈ । ઇસમેં કોઈં મીં એસી
ચીજ નહીં હૈ જો જ્ઞાનીજન કે રાગ કા કારણ હો સકે, અતઃ જો હેયો-
પાદેય કે જ્ઞાતા હૈં ઉનકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ઇસ શરીર કો જૈસા ઇસકા
સ્વભાવ હૈં ઉસી રૂપ સે જાનેં । ઇસ સવકે કહને કા તાત્પર્ય યહીં હૈં
કિ યૌવન સે મદમાતે રૂપ સે યુક્ત મીં ઇસ અત્યન્ત અપવિત્ર દેહ મેં
પૂર્વોક્ત રીતિ સે કથિત ઇસ શરીર કા સ્વરૂપ સમજ્ઞકર જ્ઞાની-સંયમી
મુનિ કો રાગ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ॥ ૯ ॥

દુર્ગંધયુક્ત વીભત્સ છે તેમા ઝોવી કોઈ પણ ચીજ નથી કે જેને માટે જ્ઞાની-
જનો રાગનુ કારણ માની શકે, માટે જે હેયોપાદેયના જ્ઞાતા છે તેનુ કર્તવ્ય છે
કે આ શરીરને જેવો તેનો સ્વભાવ છે તેવા રૂપમા જ માને આ સઘળું
કહેવાનો મતલબ એ છે કે—યૌવનના મદમાતા રૂપથી યુક્ત પણ આ અત્યન્ત
અપવિત્ર દેહમાં પૂર્વોક્ત રીતિથી કથિત આ શરીરનુ સ્વરૂપ સમજ્ઞને જ્ઞાની
સંયમી મુનિએ રાગ નહિ કરવો જોઈએ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ત્રીકા—‘અય મતિમભિ’ સ્યાદિ । અય કાયકામસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનન્તરમતિ-
મન્=હે મેઘાવિન્ ! પરિજ્ઞાય=અશુચિ અશુચિસમ્મલ્લક્ષણમશુરં ચ શરીરં કદુર્બિપાકં
શબ્દાદિવિષયસ્વરૂપ ધ જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય ‘ચ’
સમુદાયે ‘દુ’—ચાક્યાલકારે ‘લાલાપ્રત્યાશી’ લાલા=મધરવપ્રુટ મુલ્લસલિલે, તાં
પ્રત્યશ્ચિતુ=પુનરશ્ચિતુ શીલં यस્ય સ લાલાપ્રત્યાશી=લાલામણી મા ભવ । યયા વિવે-
કકલાવિકલો રાલો મુલ્લનિસ્સુતામપઃપતન્તી લાલા પુન પુનરાસ્વાદયતિ તયૈષ
ત્વમપિ પરિત્યક્તાનાં કામભોગાનાં પુનરભિલાપં મા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । અપિ ચ
તેષુ મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિસસારસ્રોતસ્સ આત્માનં ચિરધીન=પતિક્લેશ્ચામિનં પતન-
શીલ મા આપાદયે=માકુર, જન્મ-મરણમગાદે સ્વાત્માનં મા પાતયેત્યર્થઃ, શુભ-
ચારિત્રલક્ષણપરમાનંદે સ્થાપયતિ ભાવ ।

જ્ઞાનીજન દેહ કા ઉક્ત સ્વરૂપ જાનકર કયા કરતે હૈં ? સો કહાં
હૈં—‘સે મહમં’ સ્યાદિ ।

શિષ્ય કા સયોધન કરતે મુગ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે મેઘાવં
શિષ્ય ! તુમ શરીર ઓર કામગુણ કે ઘર્ણિત સ્વરૂપ સે પરિચિત હૈં
જુકે હો, તથા યહ મી જાન જુકે હો કિ યહ શરીર સ્વયં અશુચિ
તથા અશુચિ-કારણો સે પૈદા છુઆ હૈં, ઓર લક્ષણમશુર હૈં, યે
શબ્દાદિ વિષય મી કદુર્બિપાકયાલે હૈં, ફમલિયે ફન સય પાતોં કો
જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ફનકા પરિત્યાગ કર
અય લાલાપ્રત્યાશી-તાર ષાટને લાલા મત યનો । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર
વિવેકવિકલ પાલક મુખસે નીચે ગિરતી છૂઈ અપની તાર કો વારવાર
ષાટતા હૈં ડસી તરહ તુમ મી પરિત્યક્ત ફન કામ-ભોગોં કો ફિર સે
ભોગને કી અભિલાષા મત કરો । તથા મિથ્યાત્વ, ઓર અવિરતિ આદિ

જ્ઞાનીજન દેહન ઉક્તસ્વરૂપ જાણીનેશુકરે છે, તે કહે છે સે મહમં’ સ્યાદિ.

શિષ્યને સયોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે મેઘાવં શિષ્ય ! તમે
શરીર અને કામગુણના ઘર્ણિત સ્વરૂપથી પરિચિત બની ચૂકેલ છે, તથા એ
પણ બાળી ચૂક્યા છે કે-આ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ કારણોથી
પૈદા થયેલ છે અને લક્ષણમશુર છે એ શબ્દાદિ વિષય પણ કદુર્બિપાકયાલ છે,
માટે આ તપાની પાતોને જ-પરિજ્ઞાથી બાળીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેના પરિ-
ત્યાગ કરી નવે લાલાપ્રત્યાશી-ચાગ-ચાન્નારા ન બને. અર્થાત્ જેવી રીતે વિવેકવિકલ
બાળક મુખથી નીચે ટપકતી પોતાની બાગને વારવાર ષાટે છે તે માફક તમે પણ
પરિત્યાગ આ કામભોગોને ફરીથી બેનવવાની અભિલાષા ન કરે. તથા મિથ્યાત્વ અને

ન પ્રમાદવતઃ શાન્તિરિતિ દર્શયતિ=‘કાસંકપઃ’ ઉત્પાદિ । અયં પ્રમાદી પુરુષઃ
 કાસંકપઃ—કસ્યતે=પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ શબ્દાદિવિપયાસ્તાન્ કપતિ=
 તદભિમુખં ગચ્છતીતિ ‘કાસંકપઃ’ શબ્દાદિવિપયલોલુપઃ । સ દિ સમુદીયમાન-
 ભોગસ્પૃહોઽર્હનિશં ‘કૃતવાનમું કરિણ્યે ચેમમ્’ ઇત્યાદિનાનાવિધસંકલ્પવિકલ્પવગતઃ
 પદે પદે વિપીદન્ન કદાચિદપિ શાન્તિમુપલભમાન ઇત્યર્થઃ । કિં ચ વ્રહ્માયી=માયા-
 જો સસાર કે સ્ત્રોત-કારણ હૈં, उनमें अपनी आत्मा को पतनशील मत
 बनाओ ; कारण कि ऐसा करने से जन्म और मरण के प्रवाह का कभी
 भी अंत नहीं आ सकेगा । अतः जो इस प्रवाह को रोकने की चाहना
 हो तो मिथ्यात्व आदि सांसारिक कारणों में अपने को मत फँसाओ,
 श्रुतचारित्ररूप परम आनन्द में ही अपने को स्थित करो ।

પ્રમાદી આત્મા કો શાંતિ નહીં મિલતી હૈં યહ માની હુઈ વાત હૈં;
 क्योंकि प्रमादी मनुष्य शब्दादि विषयों की ओर झुकता रहता है, उनमें
 लोलुपी बना रहता है, इसके चित्त में भोगों की इच्छा निरन्तर रहा
 करती है, “मैंने इसको किया, इसको अब करूँगा” इत्यादि अनेक
 संकल्प-विकल्पों के तांतों में फँसकर यह कभी भी सच्ची शांति का
 अनुभव नहीं कर सकता । क्षण-क्षण में विषादी बनता है, कारण कि
 इसका एक संकल्प पूरा होता है और दूसरे को पूर्ण करने के लिये आकुल-
 व्याकुल हो उठता है । जो शब्दादि-विषयों में लोलुप है उसका नाम
 कासंકष है । “कास्यते पीड्यते प्राणी यैस्ते कासास्तान् कपति=तदभि-

અવિરતિ આદિ જે સસારના સ્ત્રોત-કારણ છે તેમા પોતાના આત્માને પતનશીલ
 બનાવો નહિ કારણ કે એવું કરવાથી જન્મ અને મરણના પ્રવાહનો કોઈ વખત
 પણ અંત આવી શકશે નહિ માટે જે આ પ્રવાહને રોકવાની આહવા હોય તો
 મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોમા પોતાની જાતને ફસાવો નહિ શ્રુતચારિત્ર-
 રૂપ પરમ આનંદમા જ પોતાને સ્થિર કરો

પ્રમાદી આત્માને શાંતિ મળતી નથી, એ માનેલી વાત છે, કારણ કે પ્રમાદી
 મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ઝુકતા રહે છે, તેમા લોલુપી બની રહે છે, તેના
 ચિત્તમા ભોગોની ઇચ્છા નિરન્તર રહ્યા કરે છે “મે આ બનાવ્યું, આ વસ્તુને
 હંમણા કરું છું અગર કરીશ” ઇત્યાદિ અનેક સંકલ્પ વિકલ્પોના તાતામા ફસીને
 તે સાચી શાંતિનો અનુભવ ક્યારેય પણ કરી શકતો નથી ક્ષણે ક્ષણે વિષાદી
 બની રહે છે, કારણ કે તેનો એક સંકલ્પ પુરો થાય છે ત્યા બીજાને પુરો
 કરવામા આકુલ-વ્યાકુલ થઈ જાય છે જે શબ્દાદિક વિષયોમા લોલુપ છે તેનું
 નામ કાસંકષ છે, “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ, તાન્ કપતિ=તદભિમુખં

વહુલ' નાનાવિધોપાયે પરપ્રતારણચતુર इत्यर्थ । सम्भ्राविविषयासक्तस्य कपायो-
 दयोऽवश्यम्भावी ततो 'बहुमायी'—स्युपलक्षण क्रोधादीनां प्रयाणां, तेन 'बहुक्रोधी'
 इत्यादि भवति । अपि च 'कृतेन मूढ' 'कृतेन=कर्तव्येन मूढः=विकलः, कार्य-
 व्याकुलमविषयेन मोहनादिसमयं भोक्तुमप्यशक्नुवन् स पुनस्तन्मायादिकं तथा
 मुखं गच्छति-इति कासकप " अर्थात् जिनके द्वारा प्राणी कु:स्मित होते
 हैं उनका नाम कास है, और वे शब्दादि विषय हैं, इनकी ओर जो
 प्रवृत्ति करता है उसका नाम कासकप है ।

શબ્દાદિક-વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણી માયાપહુલ હોતે હેં । અનેક
 પ્રપંચ રચકર દુસરોં કી પ્રતારણા (ઠગાઈ) કરને કા ઉનકા ધ્યેય બના
 રહતા હેં । હસ કાર્ય મેં યે હતને ચતુર હોતે હેં કિ-‘મોછે-માછે પ્રાણી હન
 કી માયાશ્ચારી મેં પહુત જલ્દી ફેસ જાતે હેં । ‘બહુમાયી’ પદ અન્ય ક્રોધ
 માન લોભ કા ઉપલક્ષક હેં । હસસે શબ્દાદિ-વિષયોં મેં ફેસે હુગ પ્રાણી
 યહુક્રોધી, યહુમાની, યહુલોભી હોતે હેં, યેસા અર્થ મી હસી એક પદ સે
 ગૃહીત હો જાતા હેં, કારણ કિ શબ્દાદિક વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણિયોં કે
 કપાય કા ઉદય અવદય હોતા હેં તથા યેસે પ્રાણી કર્મભ્ય સે મી વિકલ
 હોતે હેં અર્થાત્-સમયાનુસાર જો કર્મ ઉન્હેં કરના ચાહિયે ઉનકો નહીં
 કરતે । અન્ય કાર્યોં મેં વ્યાકુલચિત્ત હોને સે, અધિક કપ્યા કહા જાય ?,
 ઉનકો સ્થાને તક કી મી ફુરસત નહીં મિલતી । રાત્રિદિન ઉન્હીં માયાદિક

ગચ્છતિ-इति कासकप " अर्थात् जे द्वारा प्राणी कु:स्मित थाय छे तेनु नाम कास
 छे अने ते शब्दादि विषय छे तेनी तरङ्ग जे प्रवृत्ति करे छे तेनु नाम कासकप छे
 शब्दादिक विषयोभा आसक्त प्राणी मायापहूल होय छे अनेक प्रपंच
 रचने नीजने ठगवाने तेनो ध्येय जनी रहे छे ते कार्यभा ते ओटो
 यतुर होय छे के कोना प्राणी तेनी मायाजगमां जहु जल्दी इत्ती जाय छे
 अनुमायीपद अन्य क्रोध मान लोभनो पण उपलक्षक छे तेथी शब्दादि विष-
 योभा इसेना प्राणी अनुक्रोधी, अनुमानी अने अनुलोभी होय छे, जेवने
 अर्थ पण तेना जेक पदधी अद्वित यथ जाय छे कारण के शब्दादि विषयोभा
 आसक्त प्राणियोने कपायना उदय अवस्य थाय छे, तथा जेवने आत्म कर्तव्यधी
 पण विकल थाय छे समयानुसार के कर्म तेने करु ओछेओ ततो कस्ता नथी,
 अन्य कार्योभा व्याकुलचित्त होवाथी तेने अधिक गु कहेणु ? आवाधोवानी पण
 कुरसद भगती नथी । रात्रिदिन तेना मायादिक कार्योभा जे इत्ती रहे छे, ताम

કરોતિ યેન આત્મનો લોભં વૈરં ચ વર્દ્યયતે । શબ્દાદિવિષયાઽપ્રાપ્તિદુઃખપીડિતો
 હિ કદાચિન્દ્રશ્વાદિવિષયાન્ પ્રાપ્નોત્યપિ કિન્તુ પરિણતિવિરસત્વાત્સેવિતા અપિ તે
 ચિરકાલદુઃખદા એવ ભવન્તિ । ઉક્તञ्च—

“खणमित्तसुक्खा बहुकालदुक्खा” इति । यदर्थमात्मनोऽनन्तसंसारजनकं
 वैरमुत्पादयति । तदाह—‘यदिद’—मित्यादि । यद् यस्मात् अस्यैव क्षणभङ्गुरस्य
 शरीरस्य परिवृंहणाय=परिवर्द्धनाय=पुष्टयर्थं हिंसाद्यनेकसावद्यव्यापारान् करोति,
 कार्यों के करने में ही फँसे रहते हैं, लोभ और वैरभाव को बढ़ाते रहते
 हैं । लोभ से ही मायाचार करने में जीवों की प्रवृत्ति होती है । माया-
 चार से वैरभाव की वृद्धि होती है । थोड़ी देर के लिये मान लिया जाय
 कि शब्दादिविषयों की अप्राप्तिजन्य दुःखों से पीड़ित हुआ प्राणी
 कदाचित् उन शब्दादिकविषयों को प्राप्त कर भी ले, तो भी सेवन किये
 गये वे शब्दादिविषय परिणाम में विरस होने से भविष्यकाल में जीवों
 को चिरकाल तक दुःखदायी ही होते हैं । “खणमित्तसुक्खा बहुकाल-
दुक्खा”—ये विषय क्षणमात्र सुखरूप भासते हुए भी अनन्त दुःखों
 के देनेवाले होते हैं । जिनके लिये जीव अनन्त संसार के जनक वैर
 को उत्पन्न करता है । उसी बात को सूत्रकार “जमिणं” इत्यादि से स्पष्ट
 करते हुए कहते हैं—संसार में जीवों द्वारा हिंसादिक अनेक सावद्य व्या-
 पारों के करने में जो प्रवृत्ति की जाती है उसका प्रधान कारण एक निज
 शरीर की पुष्टि करने का मोह ही है । इस प्रकार के मोह के आधीन
 बना हुआ जीव स्वयं अपने आपको अनेक कष्टों को झेलता हुआ भी

અને વૈરભાવને વધારતા રહે છે લોભથી જ માયાચાર કરવામા જીવેની પ્રવૃત્તિ
 થાય છે, માયાચારથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે થોડા વખતને માટે માની લ્યે
 કે શબ્દાદિ-વિષયોની અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોથી પીડિત થયેલ પ્રાણી કદાચ તે
 શબ્દાદિક-વિષયોને પ્રાપ્ત કરી લે તો પણ ભોગવવામા આવેલા તે શબ્દાદિ વિષય
 પરિણામમા વિરસ થવાથી ભવિષ્યકાળમા જીવેને ચિરકાલ સુધી દુઃખદાયી જ
 થાય છે કેમ કે—“खणमित्तसुक्खा बहुकालदुक्खा” આ વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ
 લાગે છે પણ અનંત દુઃખોના દેવાવાળા હોય છે, જેના માટે જીવ અનંતસંસાર-
 જનક વૈરને ઉત્પન્ન કરે છે, આ વાતને સૂત્રકાર “जमिणं” ઇત્યાદિ પદોથી
 સ્પષ્ટ કરીને કહે છે—સંસારમા જીવે હિંસાદિક અनेक सावद्य व्यापारો
 કરવામા જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું પ્રધાન કારણ એક પોતાના શરીરની
 પુષ્ટિ કરવાનો મોહ જ છે આવા પ્રકારના મોહને આધીન બનેલા જીવ પોતે
 પોતાની જાતને અनेक कष्टોથી દુઃખી બનાવતા છતાં પણ સુખી માને છે, અને

સ્વયં ક્રિયમાણે ચ । શ્વમપરં કથ્યતે-‘અમરાયતે’ इत्यादि, ‘મહાભદ્રી’ મહતી વાસી
 ભદ્રાર્થકામવિષયા મહાભદ્રા, સાઽસ્તિ यस્ય સ મહાભદ્રી-ભોગેષુ તત્સાધનેષુ ચાતિ-
 ભદ્રાવાન્ સન્ અમરાયતે ભોગવાઠછયાઽર્થોપાર્જનપર આત્માનમમરમિવ મન્યતે । एतम्=
 અમરાયમાણમ્ મહાભદ્રિનમ્ આર્તમ્=શારીરમાનસિકપીડાપીઢિતં પ્રેક્ષ્ય વિવેકશુદ્ધપા
 વિચાર્ય, દે સ્મિપ્ય ! શબ્દાદિવિષયે મનો ન નિધેયમિતિ માત્રઃ । यच्च भोगसुद्धा

સુખી માનતા રહતા હૈ, ઓર અર્થ, કામ ઓર વિષયોં એક ઉનકે સાધનોં
 કે કુટાને મેં હી રાત-વિન યહ તહીન યના રહતા હૈ । ઉસકે હૃદય મેં સદા
 યહી હૃદ વિશ્વાસ કામ કરતા રહતા હૈ કિ-‘અર્થ કામાદિક એવં ઉનકે
 સાધનોં કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવન સુખમય હોતા હૈ, ઇનકે વિના જીવન કા
 કોઈ મૂલ્ય નહોં । શારીરિક સાતા દી જીવન કી સાતા હૈ, યહ વિના
 ભોગોં કે હોતી નહાં, ભોગોં કા ‘ભોગના મી વિના અર્થોપાર્જન કિયે
 યનતા નહીં, અત વે ‘ભોગોં કી વાન્છા સે પ્રેરિત હોકર અર્થોપાર્જન
 કરને મેં તત્પર હોતે રહતે હૈં ઓર સબ કુછ સાધનસંપન્ન હો જાને પર
 અપને આપકો અમર માનને લગ જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ‘ભોગ ઓર ઉનકે
 સાધનોં મેં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા અપને આપકો અમર માનને વાળે પ્રાણિયોં કો
 હૈ શિષ્ય ! તુમ કમી ‘મી સુખી ન સમજો । વે તો સદા શારીરિક એવ
 માનસિક પીડાઓં સે વ્યથિત હી રહતે હૈં । ગેસા જાનકર તુમ શબ્દાદિ
 વિષયોં મેં અપને મનકો કમી ‘મી આસક્તિયુક્ત ન કરો ।

અર્થ કામ તથા વિષયો અને તેના સાધનોને ભોગવાયા જ સત દિવસ તહીન
 બની રહે છે. તેના હૃદયમાં તથા એ જ વિશ્વાસ કામ કરતો રહે છે કે ‘અર્થ’
 કામાદિક અને તેના સાધનોની પ્રાપ્તિથી જ જીવન સુખમય થાય છે. તેના વિના
 જીવનનું કોઈ મૂલ્ય નથી. શારીરિક સાતા જ જીવનની સાતા છે એના વિના
 ભોગો થતા નથી. ભોગોનું ભોગવવું અર્થ ઉપાર્જન કર્યા વિના યતું નથી, તેથી
 તે ભોગોની વાન્છાથી પ્રેરિત થઈને અર્થ ઉપાર્જન કરવામાં તત્પર રહ્યા કરે છે.
 અને બધાસાધનસંપન્ન બનવાથી પોતે પોતાની જાતને અમર માનવા લાગી
 જાય છે. આ પ્રકારે ભોગ અને તેના સાધનોમાં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા પોતે પોતાની
 જાતને અમર માનવાવાળા પ્રાણીને હૈ શિષ્ય ! તમે કોઈ વખત પણ સુખી ન
 માનો. એ તો સદા શારીરિક અને માનસિક પીડાઓથી વ્યથિત જ રહે છે એવું
 સમજીને તમે શબ્દાદિ વિષયોથી પોતાના મનને કોઈ વખત પણ અસક્તિ
 મુક્ત ન કરો.

सोऽपरिज्ञाय=ज्ञपरिज्ञयाऽनर्थकामं तद्विपाकं चाबुद्ध्वा, प्रत्याख्यानपरिज्ञया च तम-
परित्यज्य च क्रन्दति=इष्टविषयाप्राप्तौ स्पृहां, तन्नाशे शोकं चानुभूयोच्चै रोदिति ।
कामभोगासक्तश्चतुर्गतिकसंसारे भ्रामं भ्रामं नरकनिगोदादिष्वनन्तयातनां प्राप्नो-
तीति भावः ॥ सू० १० ॥

कामकटुविपाकमुपदर्श्य साम्प्रतमुपसंहरति—‘से तं’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं जाणह जमहं वेमि, तेइच्छं पंडिए पवयमाणे
से हंता छेत्ता भेत्ता लुंपिता विलुंपिता उद्विता, अकडं करिस्सा-
मिति मन्नमाणे, जस्स विय णं करेइ, अलं वालस्स संगेणं, जे वा
से कारइ वाले, न एवं अणगारस्स जायइ-त्ति वेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—तत् (तस्मात्) तज्जानीत यदहं ब्रवीमि, चैकित्स्यं पण्डितः प्रवदन्
स इन्ता छेत्ता भेत्ता लुम्पयिता विलुम्पयिता अपद्रावयिता, अकृतं करिष्यामि—इति
मन्यमानः, यस्मै अपि च खलु करोति, अलं वालस्य सङ्गेन, यो वा तत्कारयति
वालः, न एवमनगारस्य जायते ॥ सू० ११ ॥ इति ब्रवीमि ॥

“अपरिज्ञाय क्रन्दति”—जो विषय-भोगों में गृद्ध बने हुए हैं वे इन
अर्थकामरूप भोगों को और इनके विपाक को ज्ञ-परिज्ञा से नहीं जान-
कर और प्रत्याख्यान-परिज्ञा से उनका परित्याग नहीं कर, इष्ट विषय
की प्राप्ति की इच्छा से और उसके वियोग में शोक से सदा आकुल-
व्याकुल बने रहते हैं । कामभोगों में आसक्त वे प्राणी चतुर्गतिरूप इस
संसार में बारंबार भ्रमण कर नरक-निगोदादि की अनन्त वेदनाओं को
पाते रहते हैं । ॥ सू० १० ॥

काम के कटुक विपाक को स्पष्टकर अब इसका उपसंहार करते
हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से तं’ इत्यादि ।

“अपरिज्ञाय क्रन्दति” जे विषय भोगोभा गृद्ध बनेला छे, तेओ आ
अर्थकाम-इप भोगोने बने तेना विपाकने ज्ञ-परिज्ञाथी नहि जाणीने बने
प्रत्याख्यान-परिज्ञाथी तेना परित्याग नहि करीने छट विषयनी प्राप्तिनी धृच्छाथी
तेना वियोगभा शोकथी सदा आकुण-व्याकुण बनी रहे छे कामभोगोभा आसक्त
प्राणी चतुर्गति-इप आ संसारभा बारवार भ्रमण करी नरकनिगोदादिनी अनंत
वेदनाओने भोगवता रहे छे ॥ सू० १० ॥

कामना कटुक विपाकने स्पष्ट करीने छे तेना उपसंहार करता सूत्रकार
कहे छे—‘से तं’ इत्यादि

ટોકા—‘સદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃસ્વપૂજાઃ તત્તસ્માત્કારણાત્ ફલપૂર્ણં
 વક્તવ્યમાણં વા અહં યત્તીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યુયં જાનીત-‘કામમોગા રેષા’
 इति मदीयोपदेशमवश्यं शृणुसेत्यर्थः ।

નનુ મવદુપદેશે કિં વૈભક્ષણ્યં યદુપદેશં ધ્યં શ્રુણુમ, અન્યોપદેશાદપિ કામ-
 નિવૃત્તિર્મક્તિમર્હતીતિ સેવાહ—‘વૈકિત્સ્ય’—મિત્યાદિ, પશ્ચિતઃ=પશ્ચિતમ્મન્યાઃ
 કેવલં શબ્દજ્ઞાની વૈકિત્સ્ય કામચિકિત્સામ્યુત્પત્તયરોગચિકિત્સામિત્ર કામસેવનયેવ

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃસ્વો કે મૂલ-કારણ હૈં, હમલિયે હસ વિષય
 મેં પહિલે જો કુછ કહા ગયા હૈં, અથવા આગે મી જો કુછ કહા જાબગા
 વહ સય યથાર્થ હૈં; હસમેં થોડા સા મી સંવેદ કે લિયે સ્થાન નહીં હૈં,
 પેસા તુમ વિશ્વાસ રચ્ચો । ‘કામમોગ સદા રેષ હૈં’ યહી હમારા ઉપદેશ
 હૈં । હસ ઉપદેશ કી પુષ્ટિ હસ પ્રકાર સે કામમોગોં મેં હેયતા કે પ્રદર્શન
 સે મલીમાંતિ હો જાતી હૈં । જત મોક્ષામિલાપીજન કો હસ ઉપદેશ કા
 અવળ કરના ચાહિયે । હસ પ્રકાર સે શિષ્યોં કે પ્રતિ સૂચકાર કા
 આદેશ હૈં ।

પ્રશ્ન—હસ આપકે ઉપદેશ મેં હી પેસી કયા વિલક્ષણતા હૈં જિસકે
 લિયે યહ ઉપદેશ અવશ્ય સુના જાય, અન્ય કે ઉપદેશ સે મી કમ્પા-
 દિક કી નિવૃત્તિ હો સકતી હૈં ?

ઉત્તર—જો મિર્ફ શબ્દજ્ઞાની હૈં, અપને આપકો વિદ્વાન માનતે હૈં

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃસ્વો ભૂજ કારણ છે માટે આ વિષયમાં પહેલા
 ને કાઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આજળ પણ કહેવામાં આવશે તે સ્વસ્તુ
 મથાર્થ છે તેમાં કશ પણ સંદેહનું સ્થાન નથી. કોવે તમે વિશ્વાસ રાખો.
 કામમોગ સદા રેષ-ત્યાગ્ય છે કોલ આમારે ઉપદેશ છે આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ
 પ્રકારથી કામલોભેમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી બહી થાતિ આવ છે. માટે પ્રત્યેક
 મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું અવશ્ય કરવું જોઈએ. આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ
 સૂચકારનો આદેશ છે

પ્રશ્ન—આ આપના ઉપદેશમાં કોવી કાઈ વિલક્ષણતા છે એના માટે આ
 ઉપદેશ અવશ્ય સાંભળવો પડે બીજાના ઉપદેશથી પણ કામચિકિત્સાની નિવૃત્તિ
 થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે કલ્પ શબ્દજ્ઞાની છે થાતે થાતમે વિદ્વાન માને છે કોવી બંધિ

તચિકિત્સાં પ્રવદન્ સઃ=મિથ્યોપદેષ્ટા પરતીર્થિકો વિવિધસાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તો
ભવતિ । તદેવાહ—‘હન્તે’ત્યાદિ । હન્તા દણ્ડાદિના, છેત્તા સ્વઙ્ગાદિના, મેત્તા
મલ્લકાદિના, લુપ્તપિતા ગ્રન્થિચ્છેદાદિના, વિલુપ્તપિતા આક્રમણાદિના, અપદ્રાવ-
યિતા પ્રાણાતિપાતાદિના ભવતિ । કિં કૃત્વૈતાદૃક્સાવધવ્યાપારકારી ભવતીત્યાહ—
‘અકૃતં’ યદન્યેન કેનાપિ પૂર્વં કામચિકિત્સનં ન કૃતં તદહં કરિષ્યે, ઇતિ=ઇત્યં
મન્યમાનઃ સઃ, યસ્મૈ ચોપદિશતિ સઃ, તદુભયમપિ ન કેવલપ્રુપદેષ્ટૈવ દનનચ્છેદન-

ऐसे व्यक्ति ‘कामभोगादिकों की निवृत्ति उनके सेवन करने से ही
होती है’ ऐसा मानते हैं और कहते भी हैं—जैसे उत्पन्न हुए
रोग की चिकित्सा दवाई से होती है उसी प्रकार कामादिकों की
चिकित्सा भी उनके सेवनरूप दवा से ही होती है । इस प्रकार की
मान्यतावाले सच्चे उपदेशक न होकर उल्टे मिथ्या उपदेशक ही हैं । ये
पत्थर की नाव के समान हैं । जिस प्रकार पत्थर की नौका स्वयं डूब जाती
है और साथ में बैठे हुए मनुष्यों को भी डुबा देती है, ठीक इसी प्रकार
ये स्वयं एक तो सावध व्यापार में प्रवृत्त बने रहते हैं और जो इनकी
मान्यता के अनुयायी होते हैं वे भी इन्हीं की मान्यता के पथिक बन जाते
हैं, अर्थात्—ये स्वयं डूबते हैं और अपने अनुयायियों को भी डुबाते हैं, अतः
इनके उपदेश से कामादिक की निवृत्ति नहीं हो सकती, किन्तु वीतराग
के उपदेश से ही होती है । इसलिये इस उपदेश के सुनने की जरूरत है ।
यह उपदेश भी साक्षात् वीतराग प्रभु के ही मुख से निकला हुआ है । हे
जम्बू ! भगवान् से जैसा मैंने सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूँ । पर-

‘કામભોગાદિકની નિવૃત્તિ, તેનું સેવન કરવાથીજ થાય છે’ એવું માને છે અને કહે
પણ છે કે—‘જેવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલા રોગની ચિકિત્સા દવાથીજ થાય છે તે પ્રકારે
કામાદિકની ચિકિત્સા પણ તેના સેવનરૂપ દવાથીજ થાય છે એવી માન્યતાવાળા સાચા
ઉપદેશક ન બનીને ઉલ્ટા મિથ્યા ઉપદેશક જ છે એઓ પત્થરની નાવ સમાન છે જેવી
રીતે પત્થરની નૌકા પોતે ડૂબી જાય છે અને તેમા બેઠેલા મનુષ્યોને પણ ડુબાવે છે,
તે પ્રકારે આ પોતે પણ એકતો સાવધ વ્યાપારમા પ્રવૃત્ત રહે છે અને જે એની માન્ય-
તાના અનુયાયી હોય છે તે પણ એની માન્યતાનાજ પથિક બની જાય છે. તે પોતે
ડૂબે છે અને પોતાના અનુયાયિઓને પણ ડુબાવે છે માટે તેના ઉપદેશથી કામા-
દિકની નિવૃત્તિ થતી નથી, વીતરાગના ઉપદેશથી જ થાય છે, જેથી તે ઉપદેશને
સામળવાની આવશ્યકતા છે આ ઉપદેશ પણ સાક્ષાત્ વીતરાગ પ્રભુના મુખથી
નિકળેલ છે હે જમ્બુ’

લુંજ કહું છું.

શ્લોક—‘તદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃસ્વમૂળા તત્તસ્માત્કારણાત્ યત્પૂર્વોક્તં
ચક્ષ્યમાણં વા અહં ધ્રુવીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યૂયં જાનીત—‘કામમોગા હેયા ’
इति मदीयोपदेशमवश्यं शृणुतेत्यर्थः ।

નત્તુ મધ્યુપદેશે કિં ચેત્સર્વમ્ યદુપદેશં વ્યં શ્રુણુમ્ , અન્યોપદેશાદપિ કામ
નિવૃત્તિર્મધ્યુપદેશીતિતિ વેદાઃ—‘ચૈકિત્સ્ય’—મિત્યાદિ, પશ્ચિત્તઃ=પશ્ચિત્તમ્નન્યઃ
કેવલં શબ્દજ્ઞાની ચૈકિત્સ્યં કામચિકિત્સામુત્પન્નરોગચિકિત્સામિષ કામસેવનમેવ

हे शिष्य ! काम सदा दुःखों के मूल-कारण हैं, इसलिये इस विषय
में पहिले जो कुछ कहा गया है, अबवा आगे भी जो कुछ कहा जावेगा
वह सब यथार्थ है; इसमें थोड़ा सा भी संदेह के लिये स्थान नहीं है,
ऐसा तुम विश्वास रखो। ‘कामभोग सदा हेय हैं’ यही हमारा उपदेश
है। इस उपदेश की पुष्टि इस प्रकार से कामभोगों में हेयता के प्रदर्शन
से मलीमांति हो जाती है। अतः मोक्षामिलापीजन को इस उपदेश का
अवगण करना चाहिये। इस प्रकार से शिष्यों के प्रति सूत्रकार का
आदेश है।

પ્રશ્ન—इस आपके उपदेशमें ही ऐसी क्या बिलक्षणता है जिसके
लिये यह उपदेश अवश्य सुना जाय, अन्य के उपदेश से भी काम
दिक की निवृत्ति हो सकती है ?।

उत्तर—जो सिर्फ शब्दज्ञानी हैं, अपने आपको विद्वान् मानते हैं

हे शिष्य ! काम सदा दुःखानु भूत कारण છે માટે આ વિષયમાં પહેલાં
જે કંઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આગળ પણ કહેવામાં આવશે તે સમગ્ર
યથાર્થ છે તેમાં જરા પણ સંદેહનું સ્થાન નથી એવો તમે વિશ્વાસ રાખો
કામભોગ સદા હેય—ત્યાગ્ય છે એજ અમારો ઉપદેશ છે આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ
પ્રકારથી કામભોગમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી ભલી બાતિ થાય છે માટે પ્રત્યેક
મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું અવગુ કરવું જોઈએ આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ
સૂત્રકારને આદેશ છે

પ્રશ્ન—આ આપના ઉપદેશમાં એવી કંઈ વિલક્ષણતા છે જેના માટે આ
ઉપદેશ અવગમ સાબળવો પડે, બીજાના ઉપદેશથી પણ કામચિકિત્સાની નિવૃત્તિ
થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે શબ્દજ્ઞાની છે પોતે પોતાને વિદ્વાન માને છે એવી બ્યક્તિ

તચિકિત્સાં પ્રવદન્ સઃ=મિથ્યોપદેશા પરતીર્થિકો વિવિધસાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તો ભવતિ । તદેવાહ—‘હન્તે’ત્યાદિ । હન્તા દણ્ડાદિના, છેત્તા खङ्गादिना, भेत्ता भल्लादिना, लुम्पयिता ग्रन्थिच्छेदादिना, विलुम्पयिता आक्रमणादिना, अपद्रावयिता प्राणातिपातादिना ભવતિ । કિં કૃત્વૈતાદૃક્સાવધવ્યાપારકારી ભવતીત્યાહ—‘અકૃતં’ યદન્યેન કેનાપિ પૂર્વ કામચિકિત્સનં ન કૃતં તદહં કરિષ્યે, ઇતિ=ઇતથં મન્યમાનઃ સઃ, યસ્મૈ ચોપદિશતિ સઃ, તદુભયમપિ ન કેવલમુપદેષ્ટૈવ હનનચ્છેદન-

ऐसे व्यक्ति ‘कामभोगादिकों की निवृत्ति उनके सेवन करने से ही होती है’ ऐसा मानते हैं और कहते भी हैं—जैसे उत्पन्न हुए रोग की चिकित्सा दवाई से होती है उसी प्रकार कामादिकों की चिकित्सा भी उनके सेवनरूप दवा से ही होती है । इस प्रकार की मान्यतावाले सच्चे उपदेशक न होकर उल्टे मिथ्या उपदेशक ही हैं । ये पत्थर की नाव के समान हैं । जिस प्रकार पत्थर की नौका स्वयं डूब जाती है और साथ में बैठे हुए मनुष्यों को भी डुबा देती है, ठीक इसी प्रकार ये स्वयं एक तो सावध व्यापार में प्रवृत्त बने रहते हैं और जो इनकी मान्यता के अनुयायी होते हैं वे भी इन्हीं की मान्यता के पथिक बन जाते हैं, अर्थात्—ये स्वयं डूबते हैं और अपने अनुयायियों को भी डुबाते हैं, अतः इनके उपदेश से कामादिक की निवृत्ति नहीं हो सकती, किन्तु वीतराग के उपदेश से ही होती है । इसलिये इस उपदेश के सुनने की जरूरत है । यह उपदेश भी साक्षात् वीतराग प्रभु के ही मुख से निकला हुआ है । हे जम्बू ! भगवान् से जैसा मैंने सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूँ । पर-

‘કામભોગાદિકની નિવૃત્તિ, તેનું સેવન કરવાથીજ થાય છે’ એવું માને છે અને કહે પણ છે કે—‘જેવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલ રોગની ચિકિત્સા દવાથીજ થાય છે તે પ્રકારે કામાદિકની ચિકિત્સા પણ તેના સેવનરૂપ દવાથીજ થાય છે. એવી માન્યતાવાળા સાચા ઉપદેશક ન બનીને ઉલટા મિથ્યા ઉપદેશક જ છે એઓ પત્થરની નાવ સમાન છે જેવી રીતે પત્થરની નૌકા પોતે ડૂબી જાય છે અને તેમા બેઠેલા મનુષ્યોને પણ ડુબાવે છે, તે પ્રકારે આ પોતે પણ એકતો સાવધ વ્યાપારમા પ્રવૃત્ત રહે છે અને જે એની માન્યતાના અનુયાયી હોય છે તે પણ એની માન્યતાનાજ પથિક બની જાય છે. તે પોતે ડૂબે છે અને પોતાના અનુયાયિઓને પણ ડુબાવે છે માટે તેના ઉપદેશથી કામાદિકની નિવૃત્તિ થતી નથી, વીતરાગના ઉપદેશથી જ થાય છે, જેથી તે ઉપદેશને સાભળવાની આવશ્યકતા છે આ ઉપદેશ પણ સાક્ષાત્ વીતરાગ પ્રભુના મુખથી નિકળેલ છે હે જમ્બૂ ! ભગવાન પાસેથી જેવું મેં સાભળ્યું છે તેવું જ કહું છું.

તીર્થિકોં કા ઉપદેશ મિથ્યા ફસલિયે હૈ કિ ઉનકે ઉપદેશ સે જીવોં કી સાવચ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ હો જાતી હૈ। ફસકા કારણ મી યહી હૈ કિ યે સ્વયં ઉન સાવચ ક્રિયાઓં સે ચિરક્ત નહીં હોતે હૈ, હનન-છેદન મેદન-લુમ્પન ઓર ચિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોં મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ધની રહતી હૈ। વૃણાદિક સે તાડન કરને કા નામ હનન હૈ, ફસ ક્રિયા કે કત્તા હોને સે યે ફન્તા કહે જાતે હૈ। સ્વદ્ગાદિક સે મિદારણ કરને કા નામ છેદન હૈ, માલે ઘેરહ સે મેદન કા નામ મેદન, ગાંઠ ઘેરહ કે છેદનાદિક કરને કા નામ લુમ્પન ઓર આક્રમણાદિક કરને કા નામ ચિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરને કા નામ અપદ્રાવણ હૈ। इन ૨ ક્રિયાઓં કે કર્તા હોને સે યે છેતા, મેસા, લુમ્પયિતા, ચિલુમ્પયિતા ઓર અપદ્રાવયિતા કહે જાતે હૈ। इन ૨ ક્રિયાઓં કે કરને મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ફસલિયે હોતી હૈ કિ—યે યહ વિચાર કરતે હૈં કિ કામ કી યહ ચિકિત્સા પૂર્વ મેં કિસી ને નહીં કી હૈં હમ ફસે કરેંગે। ફસ પ્રકાર કી માન્યતા સે પ્રેરિત હોકર યે જિનકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં યે ઓર સ્વયં ઉપદેષ્ટા, યે ધોનોં પૂર્વોક્ત હનન ઓર છેદનાદિક વ્યાપારોં કો કરતે હૈં, ફસલિયે કરને ઘાલે કરાને ઘાલે તથા ઉસકા અનુમોદન કરને ઘાલે મી અજ્ઞાની માને ગયે હૈં। અર્થાત્ તેસે જીવોં કા જ્ઞાન સિર્ફ શાન્દિક હી હૈં।

પરતીક્રિયાને ઉપદેશ મિથ્યા તેજા માટે છે કે તેઓના ઉપદેશથી હવેની સાવચ વ્યાપારમા પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે તેનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતે તેવા સાવચ વ્યાપારથી વિરક્ત બનેલા નથી. હવુ, છેવુ, સેવુ સુમ્પન, અને વિસુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યમા તેઓની પ્રવૃત્તિ બની રહે છે। જકિથી વાન કશ્વાનુ નામ હવુ છે આ ક્રિયાને કર્તા હોવાથી તે કર્તા હવનાર કહેવાય છે તથાચર આદિથી વિદારણ કરવાનું નામ છેદન છે। બાકી વિજેરથી સેવુ તેનું નામ મેદન, ગાંઠ વિજેરનું છેવુ તેનું નામ લુમ્પન અને આક્રમણાદિક કરવાનું નામ ચિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરવાનું નામ અપદ્રાવણ છે। આ બધી ક્રિયાઓના કર્તા બનવાથી તે છેતા, મેસા, લુમ્પયિતા, ચિલુમ્પયિતા અને અપદ્રાવયિતા કહેવામા આવે છે। આવી ક્રિયાઓના કરવામા તેઓની પ્રવૃત્તિ તેટલા માટે થાય છે કે—તે એવો વિચાર કરે છે કે આ કામની ચિકિત્સા પૂર્વમા કાલકે કરેલ નથી, અમે તે કરીશું. આવા પ્રકારની માન્યતાથી પ્રેરિત થઈને તે જોના માટે ઉપદેશ કરે છે તે અને સ્વયં ઉપદેષ્ટા એ બન્ને પૂર્વોક્ત હનન અને છેદનાદિક વ્યાપાર કરે છે માટે કરનાર, કરાવનાર તથા તેની અનુમોદના કરનાર પણ અજ્ઞાની માનવામાં આવે છે। અર્થાત્ એવા હવેનું જ્ઞાન રહ્યા શાન્દિક જ છે।

ખેદનાદિસાવચ્ચવ્યાપારાન કરોતિ । યો વા તત્ હનનાદિક કારયતિ 'વા' શબ્દાત્તદ-
 નુમોદકોઽપિ, વાલઃ=અજ્ઞાની શબ્દજ્ઞાનમાત્રાવલમ્બી ભવતિ, અતો વાલસ્ય=
 એતાદૃશસ્ય કર્તુઃ કારયિતુરનુમોદયિતુરજ્ઞાનિનઃ સંગેન=સંસર્ગેણ, અલં=અર્થમ્ ।
 અજ્ઞાનિનઃ સંસર્ગોઽપિ સર્પસંસર્ગ ઇવ સર્વથા પરિવર્જનીય ઇતિ ભાવઃ । તસ્માત્પર-
 તીર્થિકોપદેશઃ શબ્દાદિવિષયકપાયકલુપિતત્વેન હનનાદિસાવચ્ચક્રિયામુ પ્રવૃત્તિ-
 જનકતયા ચ હેય એવ, ન ચૈતાદૃશો મદીયોપદેશઃ વીતરાગભગવન્મુખાત્સાક્ષાચ્છુત-
 સ્યૈવ પરિકલ્પ્યમાનત્યાદિતિ તાત્પર્યમ્ । કસ્યૈવં ન ભવતીત્યાદિ-'નૈવ'-મિત્યાદિ ।

इसलिये जिस प्रकार सर्प का संसर्ग सर्वथा त्याज्य होता है उसी प्रकार
 ऐसे अज्ञानी जीवों का संसर्ग भी सदा छोड़ने योग्य शास्त्रकारों ने
 बतलाया है, अतः इसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिये । इससे यह भाव
 निकलता है कि परतीर्थियों का उपदेश शब्दादिक-विषय-कपायों से कलु-
 पित होने की वजह से, तथा हननादिक सावच्यक्रियाओं में प्रवृत्ति का
 जनक होने से सदा हेय-त्याज्य है । जिस प्रकार का इनका उपदेश होता
 है ऐसा उपदेश मेरा नहीं है । क्योंकि यह जो उपदेश दिया गया है,
 वह साक्षात् वीतराग प्रभु के मुख से ही सुना हुआ दिया गया है, मनः
 कल्पित नहीं । जो द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार के अगार से रहित हैं,
 तथा शब्दादिक विषयों के कटुक फल से परिचित हैं ऐसे संयमी मुनि
 कभी भी इस प्रकार से काम की चिकित्सा का उपदेश नहीं देते हैं,

માટે જેવી રીતે સર્પનો સંસર્ગ સર્વથા ત્યાજ્ય હોય છે, તે પ્રકારે આવા અજ્ઞાની
 જીવોનો સંસર્ગ પણ સદા છોડવા યોગ્ય શાસ્ત્રકારોએ બતાવેલ છે, માટે તેને
 અવશ્ય છોડી દેવો જોઈએ આથી સાર એ નિકળે છે કે પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ
 શબ્દાદિક-વિષય-કપાયોથી કલુષિત હોવાથી, તથા હણુવુ આદિ સાવચ વ્યાપારની
 પ્રવૃત્તિનો જનક હોવાથી સદા હેય-ત્યાજ્ય છે જેવી રીતે તેઓનો ઉપદેશ
 હોય છે, તે પ્રકારે મારો ઉપદેશ નથી કારણકે આ જે ઉપદેશ આપવામાં
 આવેલ છે તે સાક્ષાત વીતરાગ પ્રભુના મુખથી સાંભળેલો જે છે તેજ આપવામાં
 આવેલ છે મનકલ્પિત નહિ જે દ્રવ્ય અને ભાવ બન્ને પ્રકારના અગાર-ધરથી
 રહિત છે, તથા શબ્દાદિક વિષયોના કટુક ફળથી પરિચિત છે એવા સંયમી
 મુનિ કોઈ વખત પણ આ પ્રકારથી કામની ચિકિત્સાનો ઉપદેશ દેતા નથી,

अनगारस्य=द्रव्यमात्रागाररहितस्य परिष्ठातश्चदादिविषयकद्विपाकस्य संयतस्य
एवं कामचिकित्सोपदेशदानं तत्कारणं च न जायते=न कल्पते 'इति व्रवीमि' इति
पूर्ववद् व्याख्येयम् ॥ सू० ॥ सू० ११ ॥

इत्याचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां द्वितीयाध्ययनस्य
पञ्चमोद्देशः समाप्तः ॥ २-५ ॥

और न उसके कारण ही बनते हैं। "इति व्रवीमि" इन पदों की
व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ सू० ११ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके द्वितीय अध्ययन का
पंचम उद्देश समाप्त ॥ २-५ ॥

तेभ्यः तेषु शब्देषु पक्षे जनया नथी "इति व्रवीमि" आ पदोनी व्याख्या
पठेद्य आप्याभा आवेद्य छे ॥ सू० ११ ॥

आचारसूत्रना जीव अध्ययनने
पांचमो उद्देश समाप्त २-५

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठोद्देशः ॥

अभिहितः पञ्चमोद्देशः, साम्प्रतं पष्ठ आरभ्यते । इहानन्तरोद्देशके शरीरपरि-
रक्षणाय लोकनिश्रया विहरन्नासक्तिरहितोऽनगारो लोके ममत्वं न कुर्यादित्यर्थोऽ-
भिहितः, स एवात्र प्रतिपाद्यते—‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पूर्वोद्देशस्यान्तिमसूत्रे ‘ न ह्य एवं अणगारस्स जायइ ’ संयमिन एवं न कल्पते,
इति कथितम्, तस्यैव विशदीकरणायाह—‘ से तं ’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाय तम्हा
पावकम्मं नेव कुज्जा न कारवेज्जा ॥ सू० १ ॥

छाया—स तत् सम्बुद्धयमान आदानीयं समुत्थाय तस्मात्पापकर्म नैव
कुर्यात् न कारयेत् ॥ सू० १ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके दूसरे अध्ययनका छठा उद्देश ॥

द्वितीय अध्ययन का पंचम उद्देश संपूर्ण हुवा; अब यहां उसका
छठा उद्देश प्रारंभ किया जाता है। पंचम उद्देश में ‘ शरीर की रक्षा करने
के लिये आसक्तिरहित होकर लोक की निश्रा से संयममार्ग में विचरना
चाहिये, संयमी मुनि को लोक के साथ कभी भी ममत्व नहीं करना
चाहिये ’—यह बात कही गई है। इसी विषय की पुष्टि इस उद्देश में की
जायगी ‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पंचम उद्देश के “ न ह्य एवं अणगारस्स जायइ ” इस अन्तिम सूत्र
में “ संयमी को ऐसा नहीं कल्पता है ” जो यह कहा है उसी को विशद
करने के लिये कहते हैं—‘ से तं ’ इत्यादि ।

आचाराङ्गसूत्रना णीण अध्ययननो छठो उद्देश.

णीण अध्ययननो पांचमो उद्देश समाप्त थयो डवे छट्ठा उद्देशनो आरंभ
थाय छे पांचमो उद्देशमा शरीरनी रक्षा करवा भाटे आसक्ति रहित णीने
लोकनी निश्राथी संयमीओ संयम मार्गमा विचरवु नेछओ संयमी मुनिओ
लोकनी साथे कोछ वपत्त पणु ममत्व नछि करवु नेछओ आ वात कडेवाभां
आवेळ छे ते विषयनी पुष्टि आ उद्देशमा करवाभा आवशे—‘ सेतं ’ इत्यादि.

पांचमो उद्देशमा “ न ह्य एवं अणगारस्स जायइ ” आ अन्तिम सूत्रमा
“ संयमीने ओवु कल्पतु नथी ओम कडेळ छे तेनु विशद करवाने भाटे कडे
छे—‘ सेतं ’ इत्यादि

ટીકા—‘ત-’વિત્પાદિ । ય પદ્મજીવનિકામોપધાતજનકં ચિકિત્સોપદેશં તદાવરણં ચ ન કરોતિ સપૂર્વોક્તરૂપોડનગારઃ, તત્=ચિકિત્સોપદેશાદિકં સમ્બુદ્ધપમાન, સમ્=સમ્યક્કારણેણ બુદ્ધપમાનઃ=જ્ઞ-પરિજ્ઞાયા જ્ઞેયત્વેન, પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાયા ચ જ્ઞેયત્વેન જ્ઞાનાનઃ આદ્યાનીય=સ્વપ્રયં સમુત્થાય=પ્રાપ્તીત્વા ।

પદ્મા—સઃ પૂર્વોક્તોડનગારસ્તદાદ્યાનીય=જ્ઞાનાદિકં મોક્ષકારણમસ્તીત્યેષ સમ્બુદ્ધપમાન=સમ્યક્ જ્ઞાનાન સમુત્થાય=સમ્યક્સંયમાવરણેનોત્થાય ‘સર્વસાવધ્યાપારં ન કરિષ્યામી’-તિ પ્રતિજ્ઞાય, ત કદાપિ ન કુર્યાંવિત્પાદિ । યતઃ સર્વસાવ

જો અનગાર પટકાય કે ઝીર્ષા કે વિરાધક ચિકિત્સા કે ઉપદેશ કે ઔર ઉસકે આચરણ કે નહીં કરતા હૈ એસા પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાસા વહ અનગાર જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે જ્ઞેયપને ઔર પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા સે જ્ઞેયપને ઉસ ચિકિત્સોપદેશાદિક કે અઝી તરહ સે જાનતા હુઆ આદ્યાનીય-સ્વપ્રય કે ગ્રહણ કર પ્રાણાતિપાતાવિરૂપ અઠારહ પ્રકાર કે પાપકર્મો કે કમી મી ન કરે, ન દુસરો સે કરાવે, કરને વાલે ઈવં કરાને વાલે કે અનુમોદના મી ન કરે ।

અથવા-હુઅમે આવે કુપ ‘આદ્યાનીય’ શબ્દ કે અર્થ જ્ઞાનાદિક મી હૈ । જિસકા અભિપ્રાય વહ હોતા હૈ કે-“મોક્ષ કે પ્રધાનકારણ જ્ઞાનાદિક હૈ” હસ વાત કે અઝી તરહ સે જાનને વાલા વહ અનગાર “મેં સમસ્ત સાવધ્યા વ્યાપારોં કે નહીં કરુંગા” હસ પ્રકાર કે પ્રતિજ્ઞા કરકે અઝી તરહ સે સંયમ કે આરાધના કરતા હુઆ ઉસ સાવધ્યા વ્યાપાર કે કમી મી ન કરે । કયોંકે હસ પ્રકાર કે જય વહ પ્રતિજ્ઞા

જે અનગાર પટકાય હવેના વિરાધક ચિકિત્સાને ઉપદેશ, અને તેવ આચરણ નહીં કરતા, એવા પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળા તે અનગાર જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જ્ઞેયપદ્મ, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી જ્ઞેયપદ્મ તે ચિકિત્સોપદેશાદિકને સારી રીતે બુદ્ધિને આદ્યાનીય-સ્વપ્રયને પ્રજ્ઞુ કરી પ્રાણાતિપાતાદિ રૂપ અઠાર પ્રકારના પાપ કરીને કારણે પણ ન કરે. ન બીજાથી કશવે કરનાર અને કતવનાલી અનુ પ્રાપ્ત પણ ન કરે.

અથવા—સૂત્રમા આવેલા આદ્યાનીય શબ્દનો અર્થ જ્ઞાનાદિકે પણ છે જેના અભિપ્રાય એ થાય છે કે- “જેના પ્રધાન કારણ જ્ઞાનાદિક છે.” આ વાતને સારી રીતે બુદ્ધિવાળા તે અનુગાર “હું અમસ્ત પાપના વ્યાપારો નહીં કરીશ આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરીને સારી રીતે સંયમની આરાધના કરતા થશ તમા સાવધ વ્યાપારો કોઈ વખત પણ ન કરે કારણકે અથારે તે આવા પ્રકારની

ઘવ્યાપારાકરણપ્રતિજ્ઞાકારી તસ્માત્કારણાત્ પાપકર્મ=પાપજનકત્વાત્પાપરૂપમેવ કર્મ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાઘાદશપ્રકારકં નૈવ કુર્યાત્=ન કદાચિદપિ સમાચરેત્, ન કારયેત્ 'એવે-ત્યસ્ય નિશ્ચયાર્થકત્વાત્ કુર્વન્તં કારયન્તં વા નાનુમોદયેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રાણાતિપાતાદિષ્વેકં પાપકર્મ કુર્વન્નન્યસ્યાપિ કર્તા ભવતીતિ દર્શયતિ—'સિયા તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સિયા તત્થ ઇગયરં વિપ્પરામુસઙ્ગં છસુ અન્નયરંમિ કપ્પઙ્ગ, સુહટ્ઠી લાલપ્પમાણે સણ્ણ દુક્ખેણ મૂઢો વિપ્પરિયાસ-મુવેઙ્ગ, સણ્ણ વિપ્પમાણેણ પુઢો વયં પકુવ્વઙ્ગ, જંસિમે પાણા પવ્વહિયા, પહિલેહાણ નો નિકરણાણ એસ પરિન્ના પવુચ્ચઙ્ગ, કમ્મોવસંતી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સ્યાત્ત્રૈકતર વિપરામૃશતિ, પદ્મસ્વન્યતરસ્મિન્ કલ્પતે, સુસ્વાર્થી લાલ-પ્યમાનઃ સ્વકેન દુઃસ્વેન મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ, સ્વકેન વિપ્રમાદેન પૃથગ્વ્રતં પ્રકુરુતે, યસ્મિન્નિમે પ્રાણાઃ પ્રવ્યથિતાઃ પ્રત્યુપેક્ષ્ય નો નિકરણાય, એવા પરિજ્ઞા પ્રોચ્યતે કર્મોપશાન્તિઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કર ચુકા હૈ તવ વહ કૈસે પ્રાણાતિપાતાદિક અઠારહ પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કો કર સકતા હૈ । જવ નહીં કર સકતા હૈ તવ વહ उन पापकर्मों को करने वालों की तथा उन्हें कराने वालों की अनुमोदना भी कैसे कर सकता है? अर्थात् नहीं कर सकता । सूत्र में 'एव' शब्द निश्चय अर्थ में प्रयुक्त है, अतः यह निश्चित है कि अनगार कभी भी न स्वयं १८ अठारह प्रकार के पापस्थानों को करेगा, न करावेगा और न उन करने-कराने वालों की कभी अनुमोदना ही करेगा ॥ सू० १ ॥

પ્રતિજ્ઞા લીધેલ છે ત્યારે તે પછી પ્રાણાતિપાતાદિક અઠાર પ્રકારના પાપકર્મોં કેવી રીતે કરી શકે? જો નથી જ કરી શકે તો પછી તેવા પાપ કર્મોંના કરનારની તેને કરાવનારની અનુમોદના પણ કેવી રીતે કરી શકે? અર્થાત્ કરી શકતા નથી સૂત્રમાં એ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત છે, માટે એ નિશ્ચિત છે કે અણુગાર કેઈ વખત પણ ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોને કરે નહિ, કરાવે નહિ તેમજ તેઓની-કરનારાઓની અને કરાવનારાઓની અનુમોદના પણ કરે નહિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

હીક્ષા—'સ્યા'—'વિસ્વાદિ । યઃ પુરુષ સ્યાન્=કદાચિન્ પ્રમાદવાન તપ્=
પ્રાણાતિપાતાદિરુપપાપકર્મંશુ પૃથક્તરં પ્રાણાતિપાતાદિરુપં તિપરામૃત્તિ=સમારમ્ભતે,
યથ પદ્મ મધ્ય અન્યતરસ્મિન્ પૃથિગીધાયાદિક પદ્મસ્મિન્નપિ સમારમ્ભતે સ
પદ્મ જીવનિકાયૃ કલ્પના=સમારમ્ભત, યથા કુમાન્મગ્નાયા ઉદ્કેન પ્લાવને
પદ્મજીવનિકાયારમ્ભ પદ્મજીવનિકાયારમ્ભો મરતિ તૈવાયૈકજીવનિકાયવિરાધ
નાયા પદ્મજીવનિકાયવિરાધનાજન્યમ્ભાવિની । ઉપશ્ચ—

“તથ જને તત્થ વ્ણે, તથ વ્ણ તત્થ નિસ્સિમ્મો અગ્ગી ।

અગ્ગી વાઉત્તદગ્ગયા, તસા ય તપ્પિસિયા વેવ ” ॥૧॥

છાયા—યન્ન જન્ન તપ્પ વન્ન યન્ન વન્ન તપ્પ નિ'ધિતો'ઝ્ઞિઃ ।

અન્નિર્વાપુસદ્ગતગ્ગસાધ તનિ'ધિતાયેવ ॥ ૧૧ ।

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ પ્રકાર કે પાપસ્થાનાં મેં સે જો કિસી એક 'મી
પાપસ્થાન કા કરનેવાલા હોતા હેં યહ અન્ય પાપસ્થાનોં કા 'મી કરનેવાલા
હેં । હસી વિષય કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હેં—“સિયા તત્થ” રૂપાદિ ।

જો પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદ કે વશાયતીં હોફર પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં
મેં સે કિસી એક પાપ કર્મ કો કરતા હેં, છદ્ધકાય કે જીવોં કી વિરાધના
મેં સે કિસી એક કાયકે જીવોં કી વિરાધના કરતા હેં, વહ સમસ્ત પાપ
કર્મોં કા, ગ્વં છદ્ધકાય કે જીવોં કી વિરાધના કા કર્સાં માના જાતા હેં ।
જૈસે કુંભકાર કી શાલા કો જલ સે સીંધન પર એક જીવનિકાય કે
આરંભ હોને પર પદ્મજીવનિકાય કા આરંભ હોતા હેં, ઉસી તરહ યહાં
પર 'મી એક જીવનિકાય કી વિરાધના મેં પદ્મકાય કે જીવોં કી વિરા
ધના 'મી અવશ્ય હોતી હેં । કહા 'મી હેં—

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ અધ્યય પ્રકારના પાપસ્થાનોંમાથી જે કોઈ એક પણ
પાપસ્થાનના કરનાર હોય છે તે અન્ય પાપસ્થાનોના કરનાર હોય છે. આ વિષયને
સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“સિયા તત્થ” રૂપાદિ.

જે પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદને વશ બની પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંમાથી કોઈ
એક પાપકર્મને કરે છે છદ્ધકાય જીવોની વિરાધનામાંથી કોઈ એક કાયના જીવોની
વિરાધના કરે છે તેને સમસ્ત પાપકર્મોના અને છ કાય જીવોની વિરાધનાનો ક્વો
માનવામા આવે છે જેવી રીતે કુભારના ઘરને જલથી સીંધવાથી એક જીવ
નિકાયને આરંભ થવાથી પદ્મજીવનિકાયને આરંભ થાય છે તેવી રીતે આ કદાચે
જો એક જીવ નિકાયની વિરાધનામા પદ્મકાય જીવોની વિરાધના પણ અવશ્ય
થાય છે કહું પણ છે—

एवं पदसु व्रतेष्वायव्रतविराधनायां पण्णामपि व्रतानां विराधना भवति, तद्यथा
—संयमी प्राणातिपाते प्रवृत्तिं कुर्वन् हिंसादिदोषं स्पृशति, तेन प्रतिज्ञाभङ्गजन्यो
मृषावादः । उक्तञ्च—

“न करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य । ” इति ।

छाया—न करोमीति भणित्वा, तदेव निषेवते स तु ।

प्रत्यक्षमृषावादी, मायानिकृतिप्रसङ्गश्च ॥

कश्चिज्जीवं हनतो घातयतो वा स जीवो नैव स्वशरीरं तस्मै हननाय ना-
दात्, अतोऽदत्तादानमपि । सर्वं सावधं कर्मापरिग्राह्यं, तस्य ग्रहणात्परिग्रहोऽपि । यत्र

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

अग्गी वाउसहगया, तसा य तन्निस्सिया चेव ॥ १ ॥ ” इति ।

“जहां जल है वहां वनस्पति है, जहां वनस्पति है वहां उसके निश्चित
अग्नि होती है, जहाँ अग्नि होती है वहां वायुकाय है, जहां वायुकाय है
वहां त्रसकाय नियम से होते हैं ॥ १ ॥ ” इसी प्रकार छह ६ व्रतों में से
प्रथम व्रत की विराधना होने पर छही व्रतों की विराधना होती है । संयमी
जब प्राणातिपात में प्रवृत्ति करता है उस समय हिंसादिदोषजन्य पाप का
भागी होता हुआ प्रतिज्ञाभंगजन्य मृषावाद का भागी होता है । कहा भी है—

“न करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ॥ १ ॥ ” इति ।

‘मैं हिंसादिक पापों को नहीं करूँगा’ इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

अग्गी वाउसहगया, तसा य तन्निस्सिया चेव ” ॥१॥ इति ।

“જ્યા જળ છે ત્યા વનસ્પતિ છે જ્યા વનસ્પતિ છે ત્યા તેને નિશ્ચિત
અગ્નિ હોય છે જ્યા અગ્નિ છે ત્યા વાયુકાય છે, જ્યા વાયુકાય છે ત્યા ત્રસકાય
નિયમથી થાય છે ॥ ૧ ॥ ” આ પ્રકાર છ વ્રતોમાંથી પ્રથમ વ્રતની વિરાધના હોવાથી
છ વ્રતોની વિરાધના થાય છે સંયમી જ્યારે પ્રાણાતિપાતમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે
વખતે હિંસાદિ દોષજન્ય પાપનો ભાગી બનતો થકો પ્રતિજ્ઞાભંગજન્ય મૃષાવાદનો
ભાગી થાય છે કહ્યું પણ છે—

“ન करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ” ॥ १ ॥ इति ।

પરિગ્રસ્ત્ર મૈથુનં રાત્રિમોજનં ચ જાયત ઇવ । તતથ પદ્મસ્વન્યતરસ્મિન્ પ્રવૃષ્ઠો
 જનાઃ સર્વેષ્વપિ પ્રવર્તત ઇવ । યદ્વા-एकतरम्=एकमपि पापारम्भं य आचरति स
 सर्वमपि समारम्भं करोत्येव, उन्मार्गप्रवृत्तस्य तस्यैककरणे सर्वत्र प्रवृत्तिसम्भवात् ।

ઘાલા સંયમી મુનિ ધર્મિ ઉસી પ્રત્યાખ્યાત વિષય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તો
 હસ પ્રકાર કી ઉસકી પ્રવૃત્તિ સે એક તો ઉસકે ગૃહીતવ્રત કા મંગ હોતા
 હી હૈ, દુસરા ઉસકા મૃપાવાદ કા દોષ મી લગતા હૈ; ક્યોંકિ ઉસને
 અપની પ્રતિજ્ઞા મંગ કરમેરૂપ મૃપાવાદ કા સેવન કિયા । જિસ જીવ કી
 હિંસા કરને મેં ઘહ પ્રવૃત્ત હો રહા હૈ ઉસ જીવને ઉસકે લિયે અપને
 શરીર કો ઘાત કરને કે નિમિત્ત તો દિયા નહીં હૈ, અત અવશ કા
 ગ્રહીતા હોને સે ઉસકે લિયે અવશ્તાદાન કા દોષ મી લગતા હૈ । જિતને
 મી સાવચકર્મ હૈં વે અપરિગ્રાહ્ય હૈં; ઉન અપરિગ્રાહ્યો કો ગ્રહણ કરનેવાલા
 હોને સે ઉસે પરિગ્રહ કે ગ્રહણ કરને કા દોષ મી લાગૂ હોતા હૈ । જહાં
 પર પરિગ્રહ હૈં ઘહાં પર મૈથુન એવં રાત્રિમોજનજન્ય દોષ મી લગતા
 હી હૈ । હસલિયે છહ ૬ વ્રતોં મેં સે અન્ય એક મી વ્રત કી ચિરાધના કરને
 ઘાલા મુનિ સમસ્ત વ્રતોં કી ચિરાધના કરતા હૈ, યહ યત્ત મલીમાંતિ
 સિદ્ધ હો જાતી હૈ । હસી પ્રકાર છહ વ્રતોં મેં સે એક મી વ્રત કા નિર્દોષ
 રીતિ સે પાલન કરને ચાલા મુનિ અન્ય ઔર મી વ્રતોં કા પાલક માના
 જાતા હૈ ।

‘હું હિંસાદિ ક્રિયાને કવીશ નહિ.’ આ પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવાવાળા સંયમી
 મુનિ કદાચ તે પ્રત્યાખ્યાત વિષયમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તો આ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી
 એક તો તેના હીંમેલા મતને ભગ ધામ છે બીજી તેને મૃપાવાદનો દોષ પણ
 લાગે છે કારણ કે તેણે પોતાની પ્રતિજ્ઞા ભગ કરવારૂપ મૃપાવાદનું સેવન કર્યું
 જે હવની હિંસા કરવામાં તે પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે, તે છતાં તેના માટે પોતાનું
 શરીર ઘાત કરવાને નિમિત્ત તો આપેલ જ નથી. માટે અદત્તને પણ અહીંયા
 હોવાથી તેને માટે અદત્તાદાનનો દોષ પણ લાગે છે જેટલા પણ સાવધ કર્મ છે
 તે અપરિગ્રાહ્ય છે તે અપરિગ્રાહ્યનાં અહણ કરવાવાળા હોવાથી તેને પરિગ્રહને
 અહણ કરવાનો દોષ પણ લાગુ ધામ છે. બધા પરિગ્રહ છે ત્યાં મૈથુન અને રાત્રિ
 મોજનજન્ય દોષ પણ લાગે જ છે માટે છ મતોમાંથી અન્ય એક પણ મતની
 વિરોધના કરવાવાળા મુનિ સમસ્ત મતોની વિરોધના કરે છે આ વાત મલીમાંતિ
 સિદ્ધ થઈ જાય છે તે પ્રકારે છ મતોમાંથી એક પણ મતને નિર્દોષ રીતિથી
 પાલન કરવાવાળા મુનિ અન્ય બીજા પણ મતોના પાલક માનવામાં આવે છે

કિમર્થમયં પાપકર્મણિ પ્રવર્તતે ? इत्याह—‘सुखार्थी’—‘त्यादि । सुखार्थी=पौद्गलिक-सुखाभिलाषी लालप्यमानः=अत्यर्थं मुहुर्मुहुर्वा लपतीति लालप्यमानः, सुखार्थमुन्मत्तवन्मोहवशेन यद्वा तद्वा मुहुर्मुहुर्वृणन्, नानाप्रकारान् धावनवल्गनादिकान् व्यापारान् विदधत्, सुखकारणानि च चेतसि चिन्तयन्, कृष्यादिव्यापारैः पृथिवी-कायमुपमर्दयन्, तत्सेचनाद्यर्थमप्कायं, पाकाद्यर्थं तैजसकायं, ग्रीष्मसन्तापोप-

અથવા—કિસી એક મી પાપારમ્મ કા જો આચરણ કરતા હૈ વહ અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોં કા આચરણ કરનેવાલા હોતા હી હૈ; ક્યોંકિ જિસકી પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગ મેં ચાલૂ હૈ વહ યદિ એક મી પાપારમ્મ કો કરતા હૈ તો ઉસ એક કે કરને મેં અન્ય સવ પાપારમ્મ કે કરને કા સદ્ભાવ આ હી જાતા હૈ ।

પાપકર્મ મેં પ્રવૃત્તિ હોને કા કારણ એક કેવલ ઉસકી પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હી હૈ । અતઃ સુખાર્થી હોને કે કારણ સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ પાપકાર્યો મેં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત પ્રાણી નશા કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર વોલતા હૈ ઓર વ્યર્થ મેં ઇધર-ઉધર દૌડતા ફિરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યહ મી મોહ કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર વોલતા હુઆ અનેક પ્રકાર કી યહાં સે વહાં દૌડ-ધૂપ કિયા કરતા હૈ, ‘મુझे इन कामों के करने से सुख प्राप्त होगा’ इस प्रकार की विचारधारा से प्रेरित होकर कृषि आदि અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ઉપમર્દન કરને વાલે વ્યાપારોં કો કરતા હૈ, ઉસકે સિંચન કે લિયે અપ્કાય જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, રસોઈ આદિ વનાને કે લિયે

અથવા—કેઈ એક પણ પાપારમ્મનો જે આચરણ કરે છે તે અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોનુ આચરણ કરવાવાળા હોય જ છે કારણ કે જેની પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગમાં લાગેલી છે તે કદાચ એક પણ પાપારમ્મ કરે તો તે એક કરવામા અન્ય બધા પાપારમ્મ કરવાનો સદ્ભાવ આવી જાય છે

પાપકર્મમા પ્રવૃત્તિ હોવાનુ કારણ એક કેવળ તેની પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા જ છે અતઃ સુખાર્થી હોવાના કારણથી જ તેની પ્રવૃત્તિ પાપ કાર્યોમા થાય છે જેવી રીતે ઉન્મત્ત પ્રાણી નશાના આવેશથી જેમ તેમ વારવાર ખોલે છે અને વ્યર્થમાં અહીં તહીં દોડતા ફરે છે, તે પ્રકારે તે પણ મોહના આવેશથી જેમ તેમ વારવાર ખોલતા અનેક પ્રકારની ત્યાગી અહીં અને અહીંથી ત્યા દોડધામ કરતા રહે છે ‘મને એ કામો કરવાથી સુખ પ્રાપ્ત થશે’ આવા પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરિત થઈને કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોનુ ઉપમર્દન કરવાવાળા વ્યાપારોને કરે છે, તેના સિંચન માટે અપકાય

શાન્તયે વાયુકાયમ્, આહારાયર્થે વનસ્પતિકાય, કાષ્ઠાદિનિઃશ્વિતં પ્રસ્રકાય ચ
વિરાધયન્ સ્વકેન સ્વકૃતકર્મજનિતેન પૂર્યમય જ્ઞાનાવરણીયાષ્ટવિષકર્મરૂપં દુઃસ-
તત્વીજં તયોક્તવાન્ યથાઽસ્મિન્ મયે સ દુઃસ્વતરઃ પ્રરોક્ત્યેવ । તાદૃશ્યેન દુઃસેન
શારીરિકમાનસિકેન મૂઢઃ=અધ્યાકુલ્લિતઃ પરમાર્થમજાનન્ હિતાહિતમાત્તિપરિહાર
વિકલઃ ત્રિપયાસમૃપૈતિ પ્રાણિપીડનાદિકં સાધયન્વાપારમાચરન્ સુસ્ય વિપરીતં
દુઃસ્વયઃ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-અલ્પસુત્ત્વદ સાવધાનુદ્ધાનમનુલ્લિપ્ત, સુસ્યસ્યાનેઽનન્તકાલિકં શારીરિક
માનસિકદુઃસ્વયેવ પ્રાપ્નોતીતિ ભાવ । પુનરપ્યાહ-‘સ્વકેન’-ત્યાદિ । સ્વકેન=
અથવા સ્વેતી આદિ ક્ષી રક્ષા કરને કે લિયે અગ્નિ કા સહારા છેતા હૈ,
હસમેં અગ્નિકાયિક ણ્થ ઉસે પ્રજ્વલિત કરને કે લિયે વનસ્પતિકાય
તથા ઉસમેં રહે હુગ પ્રસ્રકાય જીવોં કી મી વિરાધના કરતા હૈ, ગર્મોજન્ય
સંતાપ કે શામન કે લિયે વાયુકાય કે જીવોં કા મી ઘાત કરતા હૈ । હસ
પ્રકાર યહ જીવ પદ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના કરતા હુઆ તઽજન્ય પાપ
કર્મોં કે ઉદય સે દુ મ્લિત પન હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હોકર સદા
વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જીવ પૂર્યમય મેં જિસ પ્રકાર કે તીવ્ર,
મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોં સે જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો
બાંધતા હૈ ઁસી પ્રકાર સે ઁનકા કર્મ મી ઁસી મય મેં અથવા આગામી મય મેં
ભોગતા હૈ, યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ । દુ સ્વ ભોગના મી હન્હીં કર્મોં કે ઉદયા-
ધીન હૈ । જિસ પ્રકાર વિના બીજ કે વૃક્ષ નહીં હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર વિના

હવોની વિરોધના કરે છે રતોઇ આદિ બનાવવા માટે અથવા ખેતી આદિની રક્ષા
કરવા માટે અગ્નિનો આશ્રય લે છે તેમા અગ્નિકાયિક અને તેને પ્રજ્વલિત કરવા
માટે વનસ્પતિકાય તથા તેમા રહેલા પ્રસ્રકાય હવોની પણ વિરોધના કરે છે
અર્મોજન્ય સંતાપને શમાવવા માટે વાયુકાયના હવોનો પણ ઘાત કરે છે આ
પ્રકાર આ હવ પદ્કાય હવોની વિરોધના કરતાં તઽજન્ય પાપકર્મોના ઉદયથી
દુઃખિત બની હિતાહિતના વિવેકથી વિકલ બનીને સદા વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વને પ્રાપ્ત
કરે છે હવ પૂર્વભવમાં જેવા પ્રકારે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોથી જ્ઞાનાવર
ણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બાપે છે તે પ્રકારે તેનુ ફળ પણ તે ભવમા અથવા
આગામી ભવમા ભોગવે છે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે દુ ખલોગવનુ પણ તેના કર્મોના
ઉદયાધીન છે જે પ્રકારે જીવ વિના વૃક્ષ થતુ નથી તે પ્રકારે જગુબ કર્મોદય વિના
દુ ખ પણ હવોને પ્રાપ્ત થતુ નથી. પરભવના બાપેલા કર્મો આગામી ભવમાં પણ



નિજાજિતેન વિપ્રમાદેન વિ=વિવિધેન પञ्चપ્રકારેણ પ્રમાદેન પૃથક્ જિનોક્તેષુ ષટ્સુ વ્રતેષુ છિન્નભિન્નરૂપેણ જિનશાસનોક્તવિપરીતં વા વ્રતં પ્રકુરતે ।

इदमत्र तत्त्वम्-षट्सु व्रतेषु प्रथमस्याचरणे द्वितीयस्यानाचरणं, तृतीयस्य चाचरण-मित्येवं छिन्नभिन्नरूपेण व्रतकरणम् ।

અશુભ કર્મોદય કે દુઃખ બી જીવોં કો પ્રાપ્ત નહીં હોતા । પરમ્ભવ કે વાંધે હુએ કર્મ અગામી ભવ મેં બી ઉદય મેં આતે રહતે હૈં । હસીલિયે જીવ ઉન અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખોં સે હિતાહિત કે વિવેક સે રહિત હોકર વ્યથિત હોતા રહતા હૈ । કમી શારીરિક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ તો કમી માનસિક પીડા સે દુઃખી હોતા રહતા હૈ । વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ સે અજાન બનકર “સાવધ વ્યાપારોં કે આચરણ સે હી મૈં સુખી હોજંગા” હસ પ્રકાર કી અપની વિપરીત કલ્પના સે સુખ કે સ્થાન મેં દુઃખ કો હી પ્રાપ્ત કરતા રહતા હૈ । અથવા—સાવધ વ્યાપારોં કા કરના સદા સુખદાયી નહીં હોતા । અપની આવશ્યકતા કી પૂર્તિ હોને પર જીવોં કો ઉસકી પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પસુખ ભલે હી મિલ જાવે પરંતુ વહ સદા સ્થાયી નહીં । જિસ સુખ કી આશા સે ઇન સાવધ વ્યાપારોં મેં જીવ પ્રવૃત્તિ કિયા કરતે હૈં ઉનસે તો ઉન્હેં ઉલ્ટે ઉમ સુખ કે સ્થાન મેં અનન્તકાલ તક ભોગને યોગ્ય શારીરિક એવં માનસિક દુઃખ હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં । એસા સમજકર સંયમી કો કમી બી કિસી બી પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરના ચાહિયે ।

ઉદયમા આવે છે, માટે જીવ એ અશુભ કર્મોદયજન્ય દુખોથી હિતાહિતના વિવેકથી રહિત થઈને વ્યથિત થતા રહે છે કેઈ વખત શારીરિક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે તો કેઈ વખત માનસિક પીડાથી દુખી થતા રહે છે વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિથી અજાણ બનીને “સાવધ વ્યાપારોના આચરણથીજ હું સુખી થઈશ” એવા પ્રકારની પોતાની વિપરીત કલ્પનાથી સુખના સ્થાને દુખને જ પ્રાપ્ત કરે છે અથવા—સાવધ વ્યાપારોનું કરવું સદા સુખદાયી થતું નથી પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ થવાથી જીવોને તેની પૂર્તિજન્ય કલ્પનિક અલ્પ સુખ ભલે મળી જાય પરંતુ તે સદા સ્થાયી નહિ જે સુખની આશાથી આ સાવધ વ્યાપારોમા જીવ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેનાથી તો તેને ઉલ્ટા તે સુખના સ્થાનમા અનન્ત કાળ સુધી ભોગવવા યોગ્ય શારીરિક અને માનસિક દુખ જ પ્રાપ્ત થાય છે એવું સમજીને સંયમીએ કેઈ વખતે પણ કેઈ પણ પ્રાણાતિપાતાદિકમા પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.

इसी प्रकार जो अपने द्वारा उपार्जित मत्थादि पांच प्रकार के प्रमाद के वशावर्ती होकर जिनोक्त छह प्रकार के व्रतों का पालन छिन्न-भिन्नरूप से करते हैं, अथवा जिन भगवानने इन व्रतों के पालन करने की जो विधि बतलाई है उस विधि-विधान से विपरीत विधि-विधान को लेकर जो व्रतों का आराधन करते हैं, अथवा जिनशासनप्रतिपादित व्रतों से विपरीत व्रतों को जो पालते हैं, वे संसार में परिभ्रमण किया करते हैं। सयमी के लिये छह व्रतों का पालन आवश्यक बतलाया है, वह यदि पांच प्रकार के प्रमाद में पतित होकर अपनी इच्छानुसार प्रथम व्रत का आचरण करे और द्वितीय का आचरण न करे तथा तृतीय का आचरण करे अन्य का नहीं; तो इस प्रकार के व्रताराधन से उसके संसार के बंधन का अन्त नहीं आ सकता। अतः व्रतों के पालन करने की विधि जिस प्रकार शास्त्रों में वर्णित है उसी विधि से व्रतों की आराधना करनी चाहिये। जिन व्रतों का पालन सयमी के लिये बतलाया गया है उनके सिवाय यदि वह अन्य व्रतों की आराधना करता है तो इस प्रकार की उसकी स्वच्छंदवृत्ति उसके भव का अन्त करने वाली न होकर बरूनी उसके अनन्त संसार की बढ़ाने वाली ही होगी; क्योंकि कि इस प्रकार की निजमान्यता में वीतराग प्रभु की आज्ञा का संग होता है। यह

આ પ્રકારે જે પોતાના દ્વારા ઉપાર્જિત મથાદિ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદને વશ બનીને જીનોક્ત છ પ્રકારના વ્રતોના પાલનને છિન્નભિન્ન રૂપમાં કરી નાખે છે અથવા જિન ભગવાને આ વ્રતોના પાલન માટે જે વિધિ બતાવી છે તે વિધિ-વિધાનથી વિપરીત વિધિ-વિધાન લઈને જે વ્રતોનું આરાધન કરે છે અથવા જિન શાસન પ્રતિપાદિત વ્રતોથી વિપરીત વ્રતોને જે પાળે છે તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે સયમી માટે છ વ્રતોનું પાલન આવશ્યક બતાવ્યું છે તે કદાચ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદમાં પતિત થઈને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પ્રથમ વ્રતનું આચરણ કરે અને બીજાનું આચરણ ન કરે તથા ત્રીજાનું આચરણ કરે અન્યનું નહિ. તો આ પ્રકારના વ્રતારાધનથી તેના સંસારના બંધનનો અંત આવે શકતો નથી. માટે વ્રતોના પાલન કરવાની વિધિ જે પ્રકારે શાસ્ત્રોમાં વર્ણિત છે તેવી વિધિથી વ્રતોની આરાધના કરવી જોઈએ. જે વ્રતોનું પાલન સયમી માટે બતાવ્યું છે તેના સિવાય કદાચ તે અન્ય વ્રતોની આરાધના કરે છે તો આવા પ્રકારની તેની સ્વચ્છંદવૃત્તિ તેના ભવનો અંત કરવાવાળી નથી બનતી. ઉલ્ટી તેને અનંત સંસાર વધારવા વાળી થશે, કારણ કે આ પ્રકારની તેની માન્યતામાં વીતરણ પ્રભુની આજ્ઞાને

યદ્વા-‘વયં’ इत्यस्य ‘वय-’ मितिच्छाया, तत्र वयन्ति=परिभ्रमन्ति जन्तवः स्वेन कर्मणा यस्मिन् स वयः संसारस्तं प्रकुरुते-संसारे परिभ्रमतीत्यर्थः ।

अथवा ‘वयः’ इतिच्छाया, कारणरय-ज्ञानावरणीयादिकर्मण, कार्येण-प्रमादेन सहाभेदात् स्वकेन विप्रमादेन=निजार्जितेनानेकविधेन मद्यादिरूपप्रमादजनकेन कर्मणा वयः=अवस्थाविशेषमेकेन्द्रियादिकं, पञ्चेन्द्रियेषु कललार्बुदादिरूपं, दारिद्र्य-दौर्भाग्याद्यात्मकं च प्रकुरुते ।

भંગ ही महान् अनर्थ का और भव की अनन्त परंपरा का बढ़ानेवाला कारण माना गया है ।

अथवा-જો સંયમી પાંચ પ્રકાર કે પ્રમાદોં કા આસેવન કરતા હૈ વહ અપને સંસાર કો બઢાતા હૈ, यह भी “वयं प्रकुव्वइ” इस पद से प्रकट होता है । “वयं” इसकी छाया “व्रतं” जब होती है तब पूर्वोक्तरूप से उसका अर्थ संगत होता है । परन्तु जब “वयं” इसका अर्थ “वयन्ति=परिभ्रमन्ति जन्तवः स्वेन कर्मणा यस्मिन् स वयः” इस व्युत्पत्ति के अनुसार किया जावेगा तो उसका अर्थ संसार होगा; क्योंकि प्राणी अपने उपार्जित कर्मों के द्वारा संसार में ही परिभ्रमण करते रहते हैं ।

अथवा-“वयं” की छाया “वयः” जब होगी तब इसका यह भी अर्थ होगा कि निजार्जित मद्यादिकरूपप्रमादजनक कर्म से एकेन्द्रियादिकरूप अवस्थाएँ, तथा पंचेन्द्रियों में गर्भ के अन्दर कलल अर्बुदादिरूप, तथा

લગ થાય છે તે લગ જ મહાન અનર્થનો, અને ભવની અનંત પરંપરાને વધારવાના કારણ રૂપ અને છે

અથવા-જે સંયમી પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોં આસેવન કરે છે તે પોતાના સંસારને વધારે છે તે પણ “वयं प्रकुव्वइ” એ પદથી પ્રગટ થાય છે. “वयं” તેની છાયા “व्रतं” ન્યારે હોય છે ત્યારે પૂર્વોક્ત રૂપથી તેનો અર્થ સંગત થાય છે પરંતુ ન્યારે “वयं” તેનો અર્થ “वयन्ति=परिभ्रमन्ति जन्तवः स्वेन कर्मणा यस्मिन् स वयः” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ સંસાર થશે, કારણ કે પ્રાણી પોતાના ઉપાર્જિત કર્મો દ્વારા સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરતા રહે છે

અથવા “वयं” ની છાયા “वयः” ન્યારે થશે ત્યારે તેનો એ પણ અર્થ થશે કે પોતાના ઉપાર્જિત મદ્યાદિકરૂપ પ્રમાદજનક કર્મથી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિકરૂપ અવસ્થાઓ, તથા પંચેન્દ્રિયોના ગર્ભની અંદર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા દારિ-

તપ મન્તવઃ નિલશ્યન્ત ઇત્યાહ—‘યસ્મિ—’ મિત્યાદિ । યસ્મિન્નિજાનિતપ્રમાદ
 જન્યકદુર્કર્મકે, મયોપગ્રાહિન્તુર્ગતિકે સંસારેઽવસ્થાવિશેષે વા, ઇમે=પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટાઃ
 પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રખ્યયિતાઃ=મહુવિધમ્પસનસમ્પાતેન પીડિતા મરન્તિ । તતઃ કિં
 કુર્પાદિત્યાહ—‘પ્રત્યુપેક્ષ્યે’—ત્યાદિ । તદત્સર્વં સ્વકૃતકર્મવિપાકેન વિવિધપ્રમાદેન
 વા પ્રાણિનાં પ્રખ્યયનં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=સમાલોચ્ય નિકરણાય—નિતરાં ક્રિયતે નાનાદુઃસ્વા-
 વસ્થ્યાન્તો બન્તવો યેન તથિકરણં દુઃસ્વોત્પાદન, યેન કર્મણા પ્રાણિનો દુઃસ્વનિવહ
 મનુભવન્તિ તત્કર્મ નિકરણં, તસ્મૈ=તદર્થ—કર્મ ન કુર્પાતુ, પ્રાણિપીઠાનનકં કર્મ સર્વથા
 દારિદ્ર્યઃ ઓર દૌર્ભાગ્યાવિરુપ અવસ્થાઈં હોતી હૈં । પ્રમાદ કા કારણ કર્મ હૈ
 ઓર પ્રમાદ ઉસકા કાર્ય હૈ । ઇન દોનોં મૈં અમેદ સંબંધ સે યહ અર્થ ઘટિત
 હો જાતા હૈ । અર્થાત્ જીવોં કી એકેન્દ્રિયાવિક તથા કલલ અર્બુદાવિરુપ પંચ
 દારિદ્ર્ય—દૌર્ભાગ્યાવિરુપ અવસ્થાઈં કર્મકૃત માની જાતી હૈં । પરન્તુ જો
 યહાં પર પ્રમાદકૃત ઉન્હૈં યતલાયા ગયા હૈ ઉસકા કારણ પ્રમાદ મૈં ઉસકે
 કારણમૂત કર્મ કા અમેદ—સંબંધ માનકર હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । ઇસ
 પ્રકાર પ્રમાદજન્ય ઇન અવસ્થાવિશેષોં મૈં, અથવા વ્તુર્ગતિરુપ ઇસ
 સંસાર મૈં યે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કે પડ્ને સે રાત્તદિન
 પીડિત હોતે રહતે હૈં । ઇસલિયે જીવોં કી સ્વકૃત કર્મ કે વિપાક સે
 અથવા અનેક પ્રકાર કે પ્રમાદ સે દુઃખિત અવસ્થાઓં કા અચ્છી પ્રકાર
 ચિચાર કર સંયમી મુનિ કો પ્રાણિપીઠાનનક કાર્ય સર્વથા છોડ દેના
 વાહિયે । અનેક પ્રકાર કી અવસ્થાઓં સે યુક્ત પ્રાણી જિસકે દ્વારા કિયે
 જાતે હૈં, એસે દુઃસ્વોં કો ઉત્પાદન કરનેવાલે કાર્યોં સે જીવ સદા દુઃસ્વોં
 કી પરંપરા કા હી અનુભવ કરતે રહતે હૈં । એસે કાર્ય સંયમી મુનિ કો

ફક્ષ અને દુર્ભાગ્યાવિરુપ અવસ્થાઓં વાચ ॥ પ્રમાદનુ કારણ કર્મ ॥ અને પ્રમાદ
 તેનુ કાર્ય ॥ આ બન્નેમાં અલેહ સબંધથી તેવો અર્થ ઘટિત થઇ ગય છે
 અર્થાત્ એવાની એકેન્દ્રિયાવિક તથા કલલ અર્બુદાવિરુપ અવસ્થાઓં કર્મકૃત માન
 વામાં આવે છે પરંતુ જે તેને આ જગ્યાએ પ્રમાદકૃત બતાવેલ છે તેનુ
 કારણ પ્રમાદમાં તેના કારણમૂત કર્મના અલેહ—સબંધ માનીને જ પ્રગટ કરવામાં
 આવેલ છે આ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય વ્યા અવસ્થા—વિશેષોમાં અથવા વ્તુર્ગતિરુપ
 વ્યા સંસારમાં જે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકારના કષ્ટો પ વાથી રાત્રિન પીડિત
 થયા હશે છે માટે એવાના સ્વકૃત કર્મના વિપાકથી અથવા અનેક પ્રકારના
 પ્રમાદથી દુઃખિત અવસ્થાઓંના સારી રીતે વિચાર કરી સંયમી મુનિએ પ્રાણિ
 પીઠા નનક કાર્ય સર્વથા છોડી દેનુ બોધ્યો. અનેક પ્રકારની દુઃખિત અવસ્થાઓંથી

વર્જयेदित्यर्थः । ततोऽपि किमित्याह ‘एषे’—त्यादि । एषा=पूर्वोक्ता सर्वारम्भ-
निवृत्तिरूपा परिज्ञा=तत्त्वविचारणा ज्ञप्रत्याख्यानरूपा प्रोच्यते=प्रकर्षेण उच्यते=
कथ्यते मया । सर्वारम्भपरित्यागे किमित्याह—‘कर्मोपशान्ति-’रिति । कर्मोपशा-
न्तिः=कर्मणामष्टविधानामुपशान्तिः=उपशमः कर्मक्षयो वा भवतीत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

સદા છોડ દેના ચાહિયે । હસ પ્રકાર કે કાર્યો કે પરિત્યાગ સે આઠ
કર્મોં કી ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા ઉનકા ક્ષય હોતા હૈ । હસ પ્રકાર
સે યહાં પર જો સંયમી મુનિ કે લિયે સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કહી ગઈ હૈ, ઉસકા કારણ યહી હૈ કિ સંયમી મુનિ
અપની પ્રવૃત્તિ કો પ્રમાદ સે સદા સુરક્ષિત રલે । પ્રમાદ કરને સે નવીન
કર્મોં કા વન્ધ ઓર ઉસસે ફિર પ્રમાદ હસ પ્રકાર કી પરસ્પર મેં કાર્ય-
કારણભાવ કી પરંપરા ચલતી હૈ, જિસસે સંયમી અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ
સે વંચિત રહતા હૈ । અતઃ વહ અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ કરને કે લિયે
ગ્રહણ કિયે હુએ સંયમમાર્ગ કી ઓર ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરતા હુઆ અગ્ર-
સર હોતા રહે । હસી વિચારણા સે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ યહ જો
સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞા કા કથન મૈને કિયા હૈ ઉસસે સંયમી મુનિ
અપને અષ્ટવિધ કર્મોં કા નિરાકરણ કર અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ કર
લેતા હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

યુક્ત પ્રાણી જે દ્વારા કરવામા આવે છે, એવા હુ ખોને ઉત્પન્ન કરનાર કાર્યોનું
નામ નિકરણ છે એવા કાર્યોથી જીવ સદા હુ ખોની પરપરાનો જ અનુભવ કરે
છે એવું કાર્ય સયમી મુનિએ સદા છોડી દેવું જોઈએ. આવા પ્રકારના કાર્યના
પરિત્યાગથી આઠ કર્મોની ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનો ક્ષય થાય છે આ
પ્રકારે આ જગ્યાએ જે સયમી મુનિ માટે સમારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞ-પરિજ્ઞા
અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા કહેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સયમી મુનિ પોતાની
પ્રવૃત્તિને પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રાખે પ્રમાદ કરવાથી નવીન કર્મોનો બંધ અને
તેનાથી પછી પ્રમાદ એ પ્રકારની પરસ્પરમાં કાર્યકારણ-ભાવની પરપરા ચાલે છે
જેનાથી સયમી પોતાના લક્ષની સિદ્ધિથી વચિત રહે છે માટે તે પોતાના લક્ષની
સિદ્ધિ કરવા માટે ગ્રહણ કરેલા સયમ-માર્ગની તરફ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરીને
અગ્રસર થતા રહે, એવી વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જે સર્વારંભ-
નિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનું કથન મેં કર્યું છે તેનાથી સયમી મુનિ પોતાના અષ્ટ-
વિધ કર્મોનું નિરાકરણ કરી પોતાના લક્ષની સિદ્ધિ કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણ મમત્વબુદ્ધિરેવ, તન્મિત્વસ્યા મુનિર્મતીતિ દર્શયતિ-‘જે મમાઇયમઈ’ इत्यादि ।

મૂલ્ય-જે મમાઇયમઈ જહાઈ, સે ચયઈ મમાઇય,

સે હુ દિદ્વપહે મુળી, જસ્સ નરિય મમાઇયં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા-‘યો મમાયિતમતિ જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દ્વપ્યો મુનિ-
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ મૂ. ૩ ॥

ટીકા-‘યો મમાયિતમતિ’-મિત્યાદિ । યા પરિગ્રહજન્યકટુવિપાકક્ષો
‘મમાયિતમતિ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તમ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-
યિતમતિ જહાતિ-ત્યજતિ, સ એવ મમાયિત દ્રવ્યતઃ પુષ્પકલપદિરપ્યમુવર્ણ્યમર્થા

શારીરિક एवं માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્વ
બુદ્ધિ હી હૈ । ડસકા જ્યતક પરિહાર નહીં કિયા જાવેગા તમતક વાસ્ત
વિક મુનિપના નહીં આસકતા હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ડસકી
નિવૃત્તિ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિશ્વાતે હુવ સૂચકાર કહતે
હૈ-‘જે મમાઇયમઈ’ इत्यादि ।

જો યહ સમજતા હૈ કિ ‘પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુ સ્વદાયી હૈ, તથા
ઇસકા ફલ બી કટુક હી હૈ’ યહ કબી બી પરિગ્રહ કે ડપાર્જન ફરને મેં
નહીં ફેસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો બી મલીનાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ
‘પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખવદ્ એવ પરિણામ મેં અનેક અનર્થો કમ મૂલ
હૈ’ યહ તો ડસ પરિગ્રહ ફી અમિલાપા તક બી નહીં કરતા હૈ,
વાહે યહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલય, હિરણ્ય, સુવર્ણ, યેશ્વવાદિરૂપ પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક ડ ખોળી ઉત્પત્તિનુ કારણ એક મમત્વ-બુદ્ધિ હ
હે તેને બધાં મુખી પરિહાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં મુખી વાસ્તવિક મુનિપણ
મળી શકું નથી. માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે. એ વાતને
રેખાંતે સૂચાર કહે છે- જે મમાઇયમઈ इत्यादि.

૨ જેમ સમજે છે કે પરિગ્રહને તમન મદા દુઃખદાયી છે, વધુ તેવ
રૂપ મુખ છે તે કોણ વખત પણ પરિગ્રહને ઉપાજન કરવામાં રૂપતા
સે રૂપે રૂપે લેખલોનાંતિથી બાળે છે કે ‘પરિગ્રહમાત્ર દુઃખમદ અને
ફેરફાર કો અનિવાર્ય છે’ તે તે તે પરિગ્રહની અમિલાપા મુદ્દા
સુદ્ધ રૂપે રૂપે રૂપે કલય હિરણ્ય, સુવર્ણ એવાંદિરૂપ પરિગ્રહ

દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિહરતિ-પરિગ્રહવુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષ-માર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યપદાર્થસાથોં હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાનુપૂર્વ્યાં મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં સુતરાં પરિ-ત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

ચાહે ભાવ સે મૂર્છારૂપ હો; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहवुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बत-लाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मૈથુનમતિ के परित्याग से मૈथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે જ્યાં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કાંઈ કઠિન કાર્ય નથી એ તો અનાયાસ જ બની શકે છે પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમા પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે જ્યારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમા પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી જે વ્યક્તિની પાસે આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે આ ઠેકાણે પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાનુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે તેથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

વૃષ્ટિશાસ્ત્રાદયઃ પરતૈર્યિકા યદપિ કિંચિત્સચિવાદિપરિત્યાગિનોઽપિ સ્વ-
માનપૂજાદિમૂર્છાન્તવાદયઃ કર્મેરેશિકાવિમોજિતાદ્રાગ્નેપાનુગત્ત્વાષ્ઠ સપરિગ્રહા
પૈવ દરીદ્રશ્યતે । સર્વથા પરિગ્રહપરિત્યાગી મુનિરેવ મોક્ષમાર્ગ સમારોહતિ નાન્ય
ઈતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પુનર્મુનિકર્ત્તવ્યમાહ—‘તં પરિભાય’ ઇત્યાદિ ।

મૂઝમ્—તં પરિન્નાય મેઘાવી વિઙ્ગિતા લોગ વતા લોગસન્ન
સે મઙ્ગમ પરક્કમિજ્જા—તિથેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ઘાયા—તં પરિગ્રાય મેઘાવી વિદિત્વા લોકં વાન્તા લોકસંઘાં સ મતિમાન
પરાક્રમેવ । ઇતિ ગ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘ત’—મિત્યાદિ । મેઘાવી=વિદિતપરિગ્રહકદુવિવાહઃ તં મમાપિતં
પરિગ્રાય=૩-પરિગ્રાયા ઘાતા પ્રત્યાક્ષ્યાન-પરિગ્રાયા પરિગ્રાય ચ લોકં પદ્મજીવનિ-

કરને ક્ષી મતિ કે ત્યાગ સે ધોરી કા તથા શૂઠ ધોલ્લને કી મતિ કા ત્યાગ
કરને સે શૂઠ આદિ કા મી સહજ મેં ત્યાગ હો જાતા હૈ । હસ કયન સે
વૃષ્ટી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ યદપિ કુછર સચિસાદિ પદાર્થો
કે પરિત્યાગી હોતે હૈ, પરન્તુ અપની માનપ્રતિષ્ઠા આદિ મેં મૂર્છા રલ્લને
સે, આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહાર કે ભોગને સે ઔર રાગદ્વેષ-
સહિત હોને સે વે પરિગ્રહધારી હી હૈ । જો પરિગ્રહ કે સર્વથા પરિત્યાગી
હૈ વે હી મુનિ હૈ ઔર વે હી મોક્ષમાર્ગ પર ચલને વાલે હૈ, અન્ય નહીં;
એસા સમજના ચાહિયે । યહી હસ સૂત્ર કા ભાવાર્થ હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ફિર ‘મી મુનિ કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—‘તં પરિભાય’ ઇત્યાદિ ।

જિસને પરિગ્રહ કે કદુકવિવાહ કો જાન તિયા હૈ એસા મેઘાવી
મુનિ રૂપરિજ્ઞા સે પરિગ્રહ કો જાનકર પ્રત્યાક્ષ્યાનપરિજ્ઞા સે ડસકા

મતિના ત્યાગથી ધોરીના તથા શૂઠ ગોલવાની મતિના ત્યાગથી શૂઠ અક્રિનો
સહજમા ત્યાગ થઈ શકે છે આ કયનથી હી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ
એકે કોઈ કોઈ સચિસાદિ પદાર્થોના પરિત્યાગી હોય છે પરન્તુ પોતાની માન
પ્રતિષ્ઠા આદિમાં મૂર્છા રૂપવાથી આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહારના ભોગવ-
વાથી અને રાગદ્વેષ-સહિત હોવાથી તે પરિગ્રહધારી જ છે, જે પરિગ્રહના સર્વથા
પરિત્યાગી છે તે જ મુનિ છે અને તે જ મોક્ષમાર્ગ પર ચાલવાવાળા છે, બીજા નહિ;
એવું સમજવું એક એ એ જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

હરી પદ્મ મુનિનું કર્તવ્ય કહે છે—‘તં પરિભાય’ ઇત્યાદિ.

એવે પરિગ્રહના કદુ વિવાહને બાબી લીધા છે એવા મેઘાવી મુનિ રૂપરિજ્ઞાથી
પરિગ્રહને બાબીને પ્રત્યાક્ષ્યાનપરિજ્ઞાથી તેને સવ થા પરિત્યાગ કરી આપે છે. ‘પરિ-

કાયરૂપં પરિગ્રહાગ્રહિણં=પરિગ્રહજનિતકટુવિપાકમનુભવન્તં, યદ્વા-લોકં કષાયલો-
કમધઃપતનશીલમ્ “અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી । માયા ગર્હપઙ્કિઘાઓ,
લોહાઓ દુહાઓ ભયં” ॥ (ઉત્તરા૦ અ૦ ૧ ગા. ૫૪) ઇતિવચનાત્ ।
અથવા-લોકમ્ આપાતસુખદં પરિણામકટુકં યથા—

“કિંપાકફલસમાના વિષયા હિ નિષેવ્યમાણરમણીયાઃ ।

પથાદ્ભવન્તિ કટુકાસ્ત્રપુષ્પિફલનિવન્ધનૈસ્તુલ્યાઃ” ઇતિ ॥ ૧ ॥

સર્વથા પરિત્યાગ કર દેવે । ‘પરિગ્રહ મેં આસક્ત વના હુઆ યહ ષડ્જીવ-
નિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હુએ કટુક-વિપાક કા હી હમેશા
અનુભવ કરતા રહતા હૈ’ એસા સમજાવેલો લોકસંજ્ઞા-લોક કી આહારાદિક-
મૂર્છારૂપ સંજ્ઞા કા પરિત્યાગ કર હેયોપાદેયવિવેક સે યુક્ત અન્તઃ-
કરણ વાલા વન વહ મુનિ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને મેં પુરુષાર્થ કરે ।

સૂત્ર મેં “લોગં” ઇસ પદ કા અર્થ એક તો ષડ્જીવનિકાયરૂપ
લોક હોતા હૈ, દૂસરા અર્થ-કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુન્દર-થોડે
સમય કે લિયે અચ્છા લગને વાલા પરન્તુ પરિણામ મેં દુઃસ્વપ્ન વિષય-
ભોગાદિક મી હોતા હૈ । ક્રોધાદિકષાય જીવોં કો કમી મી કિસી મી
અવસ્થા મેં સુખદાયી નહીં હૈ । ઇન્કે સેવન સે જીવોં કા સદા અધઃપતન
હી હોતા હૈ । કહા મી હૈ—“અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી”
ઇત્યાદિ । અર્થાત્ ક્રોધ સે આત્મા કા અધઃપતન હોતા હૈ ઓર માન સે
અધમગતિ હોતી હૈ । માયા સે શુભગતિ કા પ્રતિઘાત હોતા હૈ ઓર લોભ

અહમં આસક્ત બનીને તે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહથી ઉત્પન્ન થયેલ કટુક વિપા-
કનો જ હમેશા અનુભવ કરતા રહે છે’ એવું સમજીને લોકસંજ્ઞા-લોકની આહાર-
ાદિક મૂર્છારૂપ સંજ્ઞાને પરિત્યાગ કરીને હેયોપાદેયવિવેકથી યુક્ત અત્ કરણવાળા
બની તે મુનિ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં પુરુષાર્થ કરે

સૂત્રમાં “લોગં” આ પદનો અર્થ એક તો ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક
થાય છે, બીજો અર્થ કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુન્દર-થોડા વખત માટે સાદ્
લાગનાર પરન્તુ પરિણામમાં હું ખરૂં વિષયભોગાદિક પણ થાય છે ક્રોધાદિ કષાય
જીવોને કેઈ વખત પણ કેઈ પણ અવસ્થામાં સુખદાયી થતા નથી તેના સેવનથી
જીવોનું સદા અધઃપતન જ થાય છે કહ્યું છે “અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી”
ઈત્યાદિ અર્થાત્ ક્રોધથી આત્માનું અધઃપતન થાય છે અને માનથી અધમગતિ
થાય છે માયાથી શુભગતિનો પ્રતિઘાત થાય છે અને લોભથી ઇહલોક અને

વિદિત્વા=જાણ્યા લોકસઘાં લોકસ્ય=પ્રાણિગણસ્ય સઘા=આશારાદિમૂર્ચાસ્પા,
વા લોકસઘાં વાન્તશ=ઉત્તરીય પરિત્યગ્યેત્યર્થ, સ મતિમાન્ વિદિતહેયોપાદેયઃ
પરાક્રમત=સંયમાનુષ્ઠાને પરાક્રમ કુયાત્ । ઇતિ=શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થકઃ । બ્રહ્મ-
મીત્યસ્યાર્યસૂક્ત પૃષ્ઠ ॥ ૪ ॥

સયમાચરણે પરાક્રમમાણ પરિહૃતમમાયિતોઽનગાર કીદૃશો મથતીત્યાહ—
'નારહં સહૃ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—નારહ સહૃ વીરે, વીરે ન સહૃ રહ ।

તમ્હા અવિમણે વીરે તમ્હા વીરે ન રજહ ॥ સૂ. ૫ ॥

જાણ્યા—નારતિં સહતે વીરો, વીરો ન સહતે રતિમ્ ।

યસ્માદવિપના ચીરસ્તસ્માદ્વીરો ન રજ્યતિ ॥ ૪ ॥

સે રહ લોક એવં પરલોક સમ્યચી અય રહતા હૈ । તથા વિષયમોગાદિક
મી કિંપાકફલ કે સમાન ઝપર સે હી મનોહર માલુમ પડતે હૈ પરન્તુ
પરિણામ મેં જીવોં કે લિયે નરક-નિગોદાદિ ગતિયોં કે કારણ બનતે હૈ ।
કિંપાકફલ કા સેવન જિસ પ્રકાર પ્રાણોં કા હરણ કરને ચાલા હોતા હૈ
ઉસી પ્રકાર યે મી મથર મેં જીવોં કો અનન્ત યાતનાઓં કે દેનેવાલે હોતે
હૈ । જેસા સમજાકર ઉસ કપાપલોક કા સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કર દેવે ।

યહાં “ઇતિ” શબ્દ અધિકાર કી પરિસમાપ્તિ કા સૂચક હૈ
“બ્રહ્મિ” પદ કા અર્થ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ । ॥ સૂ. ૪ ॥

સંયમ કે પાલન કરને મેં પરાક્રમશાલી ઓર પરિગ્રહ કા ત્યાગી
અનગાર કેસા હોતા હૈ ? સો કહતે હૈ—‘નારહં સહૃ’ ઇત્યાદિ ।

પરલોક સઘ મી અય રહે છે તથા વિષય ભોગ્યાદિક પદ્ય કિંપાક ફળ સમાન
ઉપરથી જ મનોહર માલુમ પડે છે પરન્તુ પરિણામમાં લેવે માટે નરક નિગોદાદિ
અતિઓનુ કારણ બને છે કિંપાક ફળનુ સેવન જે પ્રકારે પ્રાણોનુ હરણ કરે છે
તે પ્રકારે આ પદ્ય ભોગ્યલભમાં લેવોને અનન્ત યાતનાઓ દેનાર બને છે એનુ
સમજાને તે કપાપલોકને તથા વિષયલોકને સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કરે

અહીં “ઇતિ” શબ્દ અધિકારની પરિસમાપ્તિને સૂચક છે “બ્રહ્મિ”
પદને અર્થ પહેલા કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ. ૪ ॥

સંયમનું પાલન કરવામાં પરાક્રમશાલી અને પરિગ્રહના ત્યાગી અનુચાર
કયા હોય છે તે કહે છે—“નારહં સહૃ” ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘નારતિ—’ મિત્યાદિ । વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ પરિહૃતપુત્રકલત્રાદિઃ સંયમી કદાચિન્મોહનીયોદયાત્સમુત્પન્નામ્, અરતિમ્=ચારિત્રવિષયમપ્રીતિં ન સહતે=ન ક્ષમતે, એવમેવ વીરઃ=પૂર્વોક્તઃ રતિં=વિષયાનુરાગં ચ ન સહતે=ન ક્ષમતે, ધર્મધ્યાનપરાયણો મુનિઃ સમુત્પન્નમાત્રામપિ રતિમરતિ ચ નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ । વીરો=યસ્માત્કારણાત્ રત્યરતિપરિત્યાગાત્ અવિમનાઃ=તત્રાનાસક્તઃ, તસ્માત્ વીરઃ શબ્દાદિકામગુણેષુ ન રજ્યતિ=મૂર્છાં ન પ્રાપ્નોતિ । અત્ર વીર-શબ્દસ્ય પુનઃ પુનરુપાદાનં કર્મરિપુરવશ્યં વિજેતવ્યં ઇતિ દ્યોતનાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“નારતિં સહતે વીરઃ” અર્થાત્ કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં જો શક્તિસંપન્ન હૈ, એવં જિસને પુત્રકલત્રાદિ પરિગ્રહ કા સર્વથા પરિહાર કર દિયા હૈ એસા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ચારિત્ર મેં ઉત્પન્ન હુણ અરતિ-પરિણામ કો કમી મી સહન નહીં કર સકતા હૈ, ઓર ન વિષયોં કી તરફ સ્વીચ્છેને વાલી રતિ કો કમી હૃદય મેં સ્થાન દે સકતા હૈ; કારણ કિ યે દોનોં પ્રકાર કે પરિણામ સંયમ એવં ધર્મધ્યાન કે વિઘાતક હૈં । સંયમી કા અન્તઃકરણ સદા ધર્મધ્યાન મેં મગ્ન રહતા હૈ । કદાચિત્ કર્મ કી પ્રબલતા સે ઇસ તરહ કે પરિણામ ઉસકે ચિત્ત મેં આ મી જાવેં તો વહ મુનિ એસે પરિણામોંકો અપને ધર્મધ્યાન કે પ્રભાવ સે શીઘ્રાતિશીઘ્ર દૂર કર દેતા હૈ । ઇન પરિણામોં કે પ્રતિ ઉસ સંયમી કી આસક્તિ નહીં હોતી । ઇસીલિયે ઇસ પ્રકાર કે રતિ-અરતિરૂપ પરિણામ, વિના કિસી રુકાવટ કે ઉસકી આત્મા સે બહુત શીઘ્ર દૂર હો જાતે હૈં । જૈસે સૂરે વઢે પર આઈ હુઈ વાલુ વિના કુછ કિયે ઉસ વઢે

નારતિં સહતે વીર અર્થાત્ કર્મોના વિનાશ કરવામા જે શક્તિસંપન્ન છે અને જેણે પુત્ર કલત્રાદિ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરેલ છે એવા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ચારિત્રમા ઉત્પન્ન થયેલ અરતિ પરિણામને કોઈ વખત પણ સહન કરી શકતા નથી, અને વિષયોની તરફ જે ચલાવાળી રતિને પણ હૃદયમાં કોઈ વખત પણ સ્થાન ન આપે, એટલે આપી શકતા નથી કારણ કે એ બન્ને પ્રકારના પરિણામ સંયમ અને ધર્મધ્યાનના વિઘાતક છે સંયમીનું અતઃકરણ સદા ધર્મધ્યાનમા જ મગ્ન રહે છે કદાચ કર્મની પ્રબલતાથી આવા પ્રકારનું પરિણામ તેના હૃદયમા આવી જાય તો તે મુનિ આવા પરિણામોને પોતાના ધર્મધ્યાનના પ્રભાવથી જલ્દી દૂર કરી નાખે છે આ પરિણામો તરફ તે સંયમીની આસક્તિ થતી નથી, માટે આ પ્રકારના રતિઅરતિરૂપ પરિણામ કોઈ જાતની રુકાવટ વિના તેના આત્માથી જલ્દી દૂર થઈ જાય છે જેવી રીતે સુકા ઘડા ઉપર ઉડીને આવેલી ઘુડ કાંઈ પણ કર્યા વિના તે ઘડાથી દૂર થઈ જાય છે તે પ્રકારે

તત કિમાપાતમિતિ વર્ણયતિ—‘સરે’ इत्यादि,

મૂઝમ્—સરે ય ફાસે અહિયાસમાળે, નિર્વિંદ નર્દિં હહ જીવિ
યસ્સ । મુળી મોળ સમાયાય, ધુળે કમ્મસરીરગ । પતં લૂહ વ
સેવતિ, વીરા સમત્તદસિણો । પસ ઓહતરે મુળી તિન્ને મુત્તે વિરપ
વિયાહિપ ત્તિધોમિ ॥ સૂ. ૬ ॥

જાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિંદ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિમૌને
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રક્ષં વ સેવતે ધીરાઃ સમ્યક્સ્વવર્તિના, એપ
ઓધન્તરો મુનિસ્તીર્ણો મુક્તો ચિરતો વ્યાખ્યાત इति વ્રણીમિ ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શાન્—ઇણનનિર્ણાન્, આપન્તગ્રહાદિ
તરેપાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાવીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ—સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ
સે દૂર હો જાતી હૈ, હસી પ્રકાર હન પરિણામોં કી મી યહી સ્થિતિ હોતી
હૈ । હસીલિયે સંયમી મુનિ શબ્દાવિક કામગુણોં મેં મૂઝામાય કો પ્રાપ્ત
નહીં હોતે હૈં । સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને પારખ જો ‘વીર’ શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા
હૈ, ઉસસે યહી પ્વનિત હોતા હૈ કિ કર્મરૂપી શાસ્ત્ર એસે સંયમીજનોં કે
દ્વારા અવશ્ય જીતને કે યોગ્ય હૈ ॥ સૂ. ૬ ॥

હસસે ક્યા સિદ્ધ હોતા હૈ ?—હસ યાતકો વિચલાતે હૈ—“સરે ય
ફાસે” इत्यादि ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ—ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઓર આદિ કી
સ્પર્શન—ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । હસસે મધ્યવર્તી
હતર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય—રૂપાવિકોં કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । શિષ્ય કો
સંપોધન કરતે હુપ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હૈ મેષાધી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોં
કે ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ વિષયોં મેં તુમ સર્વથા રાગદ્વેષ મત કરો । શાસ્ત્ર

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે માટે સયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમાં
મૂર્છાભાવને પ્રાપ્ત થતાં નથી. સૂત્રમાં સૂત્રકારે પારપાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ
કર્યો છે તેથી એ નક્કી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સયમીજનોથી અવશ્ય
છતવા થાય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

આથી તું સિદ્ધ થાય છે ? એ પાતને બતાવે છે.—“સરેય જાસે” इत्यादि.

સૂત્રમાં અન્તકી કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય—શબ્દનો અને આક્રિની સ્પર્શન
ઇન્દ્રિયના વિષય—સ્પર્શનો અદ્વલ થયેલ છે આથી મધ્યવર્તી બીજા ઇન્દ્રિયોનો
શિષ્ય—રૂપાર્થિનો પણ ગ્રહણ થાય છે શિષ્યને સંપોધન કરીને સૂત્રકાર કહે
છે કે હૈ મેષાધી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયના છત અને અનિષ્ટ વિષયોમાં તમે સર્વથા રાગ

સમાદાય ' સમ્=સમ્યક્ આદાય=ગૃહીત્વા કર્મશરીરકં કાર્મણશરીરમૌદારિકં વા ધુનીત=પરિશાતયેદપનયેદિત્યર્થઃ, અથવા-‘ મુણી ’ इत्यस्य ‘ हे मुने ! ’ इतिच्छा-
या, हे सम्यक्त्वदर्शिन ! मौनं=संयमं समादाय=सम्यग् गृहीत्वा કર્મશરીરકં ધુનીહિ
પૃથક્કુરુ, તત્ર મમત્વં ન કુપ્વેત્યર્થઃ । યતઃ કર્મશરીરે મુનેર્મમત્વં ન ભવતિ તસ્મા-
દેવાહ-‘ પ્રાન્ત-’મિત્યાદિ । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનકુશલાઃ, યદ્વા ‘ સમ-
ત્તદંસિણો ’ इत्यस्य ‘ समत्वदर्शिनः ’ इतिच्छाया, समत्वदर्शिनः=रागद्वेषवर्जिताः,

અથવા—“મુણી” इस शब्द की छाया ‘मुने !’ यह भी होती है ।
जिसका भाव यह है कि हे सम्यक्त्वदर्शी ! तुम संयम को अच्छी तरह
ग्रहण कर कर्मशरीर को अपने से पृथक् करो, अर्थात् यह समझो कि
यह कर्मशरीर पुद्गल, जड़, भूर्तिक है और मैं ज्ञाता द्रष्टा शुद्ध ज्ञानादि-
मय हूं । इस शरीर के बिगड़ने में मेरा कुछ नहीं बिगड़ता है, मैं इससे
भिन्न हूं । इसलिये इसमें ममत्ववृद्धि करना ही व्यर्थ है । इसके पोषण के
लिये जो वस्तुतत्त्वके परिज्ञान में कुशलमति हैं वे अन्त, प्रान्त, एवं
ठंढा और रूक्ष आहार से इस कर्मशरीर की उचित संभाल करते हुए
अपने संयमभाव की वृद्धि करने में सावधान रहते हैं, ऐसे मुनि ही वीर
कहलाते हैं । परीषह और उपसर्ग आने पर भी वे अपने पथ संयम-
मार्ग में रंचमात्र भी विचलित नहीं होते हैं । जहां पर समताभाव का
स्रोत बहता है वहां पर आत्मा अत्यन्त बलिष्ठ होती है । इसी बातका
ख्यालकर टीकाकारने “सम्मत्तादंसिणो” की दूसरी छाया “समत्व-

અથવા “મુણી” આ શબ્દની છાયા “મુને” એ પણ થાય છે, જેનો
ભાવ એ છે કે હે સમ્યક્ત્વદર્શિ । તમે સયમને સારી રીતે ગ્રહણ કરી કર્મ
શરીરને પોતાથી પૃથક્ કરો, અર્થાત્ એમ સમજો કે આ કર્મશરીર પુદ્ગલ, જડ
ભૂતિક છે, અને હું જ્ઞાતા, દ્રષ્ટા, શુદ્ધ જ્ઞાનાદિમય છું આ શરીરના બગડવામા
મારું કાંઈ પણ બગડતું નથી હું તેનાથી ભિન્ન છું તેથી તેમા મમત્વબુદ્ધિ કરવી
વ્યર્થ છે તેના પોષણ માટે જે વસ્તુતત્ત્વના પરિજ્ઞાનમા કુશળમતિ છે, તે અન્ત
પ્રાન્ત, ઠંડા અને રૂક્ષ આહારથી આ કર્મશરીરની ઉચિત સંભાળ કરતા
કરતા પોતાના સયમભાવની વૃદ્ધિ કરવામા સાવધાન રહે છે એવા મુનિ જ
વીર કહેવાય છે પરિષહ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ પોતે સયમમાર્ગમા
રંચમાત્ર પણ વિચલીત થતા નથી જે ઠેકાણે સમતાભાવનો પ્રવાહ જ વહે છે
ત્યાં આત્મા અત્યંત બલિષ્ઠ બને છે આ વાતનો ખ્યાલ કરીને ટીકાકારે “ સમત્ત-
દસિણો ની ખીણ છાયા “સમત્વદર્શિનઃ” લખી છે પ્રાત અને રૂક્ષ, દ્રવ્ય તથા

યદ્વા-રૂઢ=મનુષ્યજીવિતે યા પશ્ચવિધગ્રસાતીધારાણાં મધ્યે વ્યતીતં નિન્દ, સજાયમાનં સ્તુષુ, મવિષ્યન્તં વાતીચારં મત્યાસ્વાદીત્યાશ્ચયઃ । કિમાપ્તિય નન્દિ નિર્વિદેદિત્યાદ-‘મુનિ-’રિત્યાદિ । મુનિ.=કર્મવિપાકજ્ઞો યતિઃ, ‘મૌન’ મુનેરયં મૌનઃ સયમો વાસંયમો વા ઉપલક્ષણતયા કાય-મનસોરપિ સયમસ્તં તો આત્મા કો इनसे कोई छाम नहीं, नहीं हों तो इनके अभाव में आत्मा को कोई हानि नहीं । आत्मा की जो निज खोज है वह इनके संयोग और वियोग में न अच्छी होती है और न बिगड़ती ही है। ऐसा ब्यालकर पाछ वस्तु में संयमी को अपना अन्तःकरण आसक्तियुक्त नहीं करना चाहिये ।

અથવા—શિષ્ય કો સમજાતે હુણ સૂત્રકાર કહેતે હૈં કિ હે મેઘાવી ! અપને મનુષ્ય જીવન કો સફલિત કરને કે લિયે જો સંયમજીવન તુમને અગીકાર કિયા હૈ, ઉસમેં જો યે પાચ મહાવ્રતોં કી તુમ આરાધના કર રહે હો સો યહ સવા ધ્યાન રહો કિ इनमें जो पहिले अतीचार लग चुके हैं उनकी निंदा करो, वर्तमान में अतीचार न लगने पावें इसकी संभाल રહો, તથા આગામીકાલમેં લગને વાલે અતીચારોં કા પ્રત્યાહ્વાન કરો । કર્મ કે વિપાક કા જ્ઞાતા મુનિ યાચિક સંયમ કો, ઉપલક્ષણ સે કાયિક ઔર માનસિક સંયમ કો મલીપ્રકાર ગ્રહણ કર કર્મજન-શરીર સે અથવા કર્મજન્ય હસ ઔચારિક શરીર સે રહિત હો જાતા હૈ અર્થાત્ મોક્ષ કા મોક્ષા પન જાતા હૈ ।

હોય તો આત્માને બોલાવી કેઈ છામ નહિ, ન હોય તો તેના અભાવમાં આત્માને કેઈ હાનિ નહીં આપ્યાની જે નિજ ચીજ છે તે તેના સંયોગ અને વિયોગમાં નથી સારી બનતી અને બગડતી પણ નથી એવો ખ્યાલ કરી બાહ્ય વસ્તુમાં સંયમીએ પોતાનું અતઃકરણ અનુશિતમુક્ત નહિ કરવું જોઈએ.

અથવા શિષ્યને સમજાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે મેઘાવી ! પોતાના મનુષ્ય જીવનને સફળ બનાવવા માટે જે સયમ જીવન તમે અગીકાર કર્યું છે, તેના જે આ પાંચ મહાવ્રતોની તમે આરાધના કરી રહ્યા છો તે એ સદા ધ્યાનમાં રાખો કે તેમાં જે પહેલાં અતિચાર લાગી ચુકેલ છે તેની નિંદા કરો. વર્તમાનમાં અતિચાર ન લાગી બાપ તેની સંભાળ રાખો અને આવતા કાગમાં લામવાવાળા અતિચારોનું પ્રત્યાખ્યાન કરો. કર્મના વિપાકના જ્ઞાતા મુનિ યાચિક સયમને ઉપલક્ષણથી કાયિક અને માનસિક સયમને બન્ની પ્રકારે મેડવું કરી કાર્મણશરીરથી અથવા કર્મજન્ય આ ઔચારિક શરીરથી રહિત થઈ બાપ છે અર્થાત્ મોક્ષને લાગી બની બાપ છે

ઓધં=ભાવૌધં સંસારં તરતીત્યોધન્તરઃ, ‘કઢેમાળે કઢે’ ઇતિ વચનાત્તીર્ણઃ, મુક્તઃ=વાહ્યાભ્યન્તરમમત્વરહિતો ભવતિ, કિન્ચ-સ એવ વિરતઃ=વિષયકષાયસંજ્ઞવર્જિતઃ, વ્યાખ્યાતઃ=મુનિત્વેન પ્રસિદ્ધઃ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

યશ્ચ પૂર્વોક્તવિપરીતવર્તી સ કીદૃશો ભવતીત્યાહ-‘દુઃસ્વમુણી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃસ્વમુણી અણાણાણ તુચ્છાણ ગિલાઈ વત્તણ એસ વીરે પસંસિણ, અચ્છઈ લોગસંજોગં એસ નાણ પમુચ્છઈ ॥સૂ૦ ૭॥

છાયા—દુર્વસ્વમુનિરનાજ્ઞયા તુચ્છો ગ્લાયતિ વર્તયેત્ એષ વીરઃ પ્રશંસિતઃ અત્યેતિ લોકસંયોગમ્, એષ ન્યાયઃ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—‘દુર્વસ્વમુનિ’ રિત્યાદિ, દુર્વસ્વમુનિઃ, વસુ=દ્રવ્યં ભવ્યં કલ્યાણમિતિ યાવત્, તત્ત્વ દુર્=દુષ્ટં વિપરીતં દૂરે સ્થિતં વા યસ્ય દુર્વસુઃ, સ ચાસૌ મુનિશ્ચ દુર્વસુ-વહ “હોચુકા” એસા કહા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર યહાં પર ખી યહી સમજકર “તીર્ણઃ” ઇસ પદકા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । જો ‘ઓધન્તર’ હોતે હૈં વે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરપદાર્થોં સે મમત્વરહિત હોતે હૈં ઓર વિષયકષાયોં કે સંગસે રહિત હોકર મુનિરૂપસે પ્રસિદ્ધ કોટિ મેં આતે હૈં । “ઈતિ બ્રવીમિ” ઇન પદોં કા ભાવાર્થ પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ સે વિપરીતવર્તી હૈ વહ કૈસા હોતા હૈ ? ઇસ વિષય કો સમજાતે હૈં—‘દુઃસ્વમુણી’ ઇત્યાદિ ।

વહ દુર્વસુ મુનિ હૈ જો વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા સે રહિત હોતા હુઆ સ્વચ્છન્દ આચારવિચારવાલા હોતા હૈ । વસુ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય હૈ, દ્રવ્ય સે મતલબ ધન સે નહીં કિન્તુ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ સે હૈ ।

છે” એમ કહેવામા આવે છે, તે પ્રકારે આ ઠેકાણે પણ તેણે સમજાવે “તીર્ણઃ” આ પદનો ઉપયોગ કરવામા આવેલ છે જે ઓધન્તર અને છે તે બાહ્ય અને આભ્યંતરમા પરપદાર્થોથી મમત્વરહિત અને છે, અને વિષય કષાયોના સગથી રહિત બની મુનિરૂપથી પ્રસિદ્ધ કોટિમા આવે છે “ઈતિ બ્રવીમિ” આ પદોનો ભાવાર્થ પહેલા લખાઈ ચૂકેલ છે ॥સૂ૦ ૬ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપથી વિપરીતવર્તી છે, તે કેવા હોય છે ? આ વિષયને સમજાવતા સૂત્રકાર કહે છે—‘દુઃસ્વમુણિ’ ઇત્યાદિ

તે દુર્વસુ મુનિ છે કે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી રહિત થઈને સ્વચ્છન્દ આચાર વિચારવાળા અને છે વસુ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે દ્રવ્યનો તાત્પર્ય ધન નહિ પણ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ છે આ ભવ્ય-કલ્યાણ જેનાથી દૂર છે અથવા

વીરાઃ પરીપશોપસર્ગસદનસમર્થા મુનયઃ, માન્ત્વ=દ્રવ્યત સ્વાભાવિકરસરહિતં શીતલ પુરાણકુલ્પસ્યાદિક્ સ્તોકં વા, રુક્ષ=દ્રવ્યત આગન્તુકપૃતાદિરસર્વજિતં, માવતઃ માન્ત્વ દેપવિકલ ધૂમદોષવર્જિતમ્, માવતા રુક્ષમ્=રાગરહિતમન્નારદોષવર્જિતમાહારં ચ સેવન્તે=અશ્રન્તિ. યથ માન્ત્વરુક્ષમોજી સ કિમાપ્નોતીત્યાદ-‘ એપ ’ ઇતિ, એપ= પરિશુદ્ધમાન્ત્વરુક્ષાહારસેવનેન કર્મગરીરં ધુન્વાનો મુનિઃ=અનગાર, ‘ ઓઘન્તરઃ ’

વર્ણિત ’ લિખી છે. પ્રાન્ત ઓર રુક્ષ, દ્રવ્ય તથા માવ કે મેદ સે દો-દો પ્રકાર કે હૈ, ઉનમેં દ્રવ્યપ્રાન્ત સ્વાભાવિકરસર્વજિત ઠહા પુરાના કુલ્પ આદિ, તથા પ્રમાણ મેં ધોહા. માવપ્રાન્ત દેપરહિત ધૂમદોષવર્જિત. દ્રવ્ય રુક્ષ-ઘૃત આદિ રસર્વજિત, ઓર માવરુક્ષ-રાગરહિત અન્નારદોષવર્જિત આહાર. મુનિ હસ પ્રકાર કા આહાર કરતે હૈ. હસ પ્રકાર કે આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લેનેવાલા અનગાર કર્મશરીર ક્ષીણ કરતા હુવા ‘ ઓઘન્તર ’ સસારરૂપી માવ ઓઘકો “ કહેમાણે કહે ” હસ વાક્ય કે અનુસાર પાર કરને વાલા હો જાતા હૈ. યથાપિ સસારરૂપી સમુદ્ર કો અમી ઉસને પાર નહીં કિયા હૈ પરન્તુ પાર કરનેરૂપ કિયા અમી ઉસકી વાલૂ હૈ-પાર કરને કે સન્મુલ્હ હો રહા હૈ, અવિધ્ય મેં ઉસે પાર કરેગા ફિર મી સૂત્ર મેં “ તિષ્ણે-તીર્ણઃ ” જો હસ મૂલકૃદન્ત કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ થહ “ ક્રિયમાર્ગ કૃત ” હસ વાક્ય કે અનુસાર કિયા હુવા સમજના વાહિયે. જૈસે કિસી કાર્ય કી સમાપ્તિ અમી હુઈ નહીં હૈ, સમાપ્તિ કી ઓર થહ અગ્રસ્તર હો રહા હૈ ઓર અવિધ્ય મેં પાર હોગા; પરન્તુ વ્યવહાર મેં

ભાવ લેકમી બે પ્રકાર છે તેમાં દ્રવ્યમાન્ત-સ્વભાવિક રસર્વજિત ઠહા પુરાણ કુલ્પ આદિ, તથા પ્રમાણમાં ઘોડુ ભાવમાન્ત-દેપરહિત-દોષરહિત, દ્રવ્યરુક્ષ-મી આદિ રસ વર્જિત, અને ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અન્નારદોષવર્જિત આહાર, મુની આવા પ્રકારને આહાર કરે છે આવા પ્રકારના આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લાવવાવાળા અણુગાર કર્મ શરીરને ક્ષીણ કરીને “ મોક્ષસ્તર ” સ સાશરૂપી ભાવ ઓઘને “ કહેમાણે કહે ” આ વાક્ય અનુસાર પાર કરવાવાળા થઈ બચ છે એ કે સ સાશરૂપી સમુદ્રને કહ્યું તેમલે જોળાયેલ નથી પરંતુ જોળાગવારૂપ કિયા કહ્યું જેમની વાલૂ છે જોળાગવા માટે સ મુખ થતાં બચ છે અવિધ્યમાં તેના પાર કરશે તો પણ સૂત્રમાં “ તિષ્ણે-તીર્ણ ” એ આ મૂલ કૃદન્તે ઉપયોગ કર્યો છે તે “ ક્રિયમાર્ગ કૃત ” આ વાક્ય અનુસાર કરેલું સમજવું બેઠકો જેમ ઠોઠ કાર્યની સમાપ્તિ કહ્યું થયેલ નથી પણ સમાપ્તિના માર્ગ ઉપર છે અને અવિધ્યમાં સમાપ્ત કરશે, પણ બવહારમાં તે “ થઈ ગયેલ

દુત્તરં કર્તુમ્ અસમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । યદ્વા-જ્ઞાનવાનપિ ચારિત્રશૂન્યઃ પ્જાસત્કારમયાદ્ મોક્ષમાર્ગનિરૂપણાવસરે યથામ્ભિતં વોચયિતું લજ્જત ડવેત્યર્થઃ, યથ તીર્થકરાજ્ઞા-
પ્રવૃત્તિ દેશ્વકર વાસ્તવિક મુનિકે આચારવિપયક પ્રશ્ન ઉત્તરે પૂછતા હૈ તો વહ વસ્તુતત્ત્વ કા વાસ્તવિક જ્ઞાના ન હોજે સે ઉત્તરે પ્રશ્નકા યથાર્થ ઉત્તર નહીં દે સકતા હૈ, યા જો કુછ કહતા હૈ વહ સ્વકપોલકલ્પિત હી કહતા હૈ જિસે લોગ માનને કો તૈયાર નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર વહ અપની માન્યતા મેં વટા લગને કે અથવા પોલ ખુલને કે ડર સે સદા દુઃખી હી બના રહતા હૈ । અથવા-જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હો તો ખી યથાર્થ ચારિત્ર સે વહ શૂન્ય હૈ ઇસલિયે જિસ સમય વહ મોક્ષ માર્ગ કી પ્રરૂપણ કરતા હૈ ઉત્તર સમય વહ ઉત્તર કી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરને મેં લજ્જિત જૈસા હોતા હૈ, ક્યોંકિ વહ સમજતા હૈ કિ મેં સ્વયં યથાર્થ ચારિત્રશાલી નહીં હૂં, યદિ મેં વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પરિચય લોગોં કો કરા દૂંગા તો લોગોં કી દૃષ્ટિમેં મેરી માન્યતા ગિર જાવેગી, લોગ કહેંગે કિ-મહારાજ ! જૈસી આપ પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઉત્તર પ્રકાર કી ક્રિયા આપ ક્યોં નહીં પાલતે ? । ઇસ પ્રકાર અપના માન-સમ્માન કે જાને કે ભય સે વહ લોગોં કો અન્ધ-કાર મેં હી રખતા હૈ, પરન્તુ ઉસે વહ ભય સદા લગા રહતા હૈ કિ કહીં કોઈ યથાર્થ વક્તા આકર વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ન કરદે ।

આચારવિપયનો પ્રશ્ન પૂછે છે તો તે વસ્તુતત્ત્વનો વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોવાથી તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર યથાર્થરૂપે આપી શકતો નથી અગર જો કંઈ પણ જવાબ આપે છે તો તે સ્વકપોલકલ્પિત જ આપે છે, જે માનવાને લોક તૈયાર થતા નથી આવા પ્રકારથી તે પોતાની માન્યતામાં ડાઘ લાગવાના ભયથી અથવા પોલ ખુલ્લી થવાના ભયથી સદા દુખી બની રહે છે, અથવા જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હોય તો પણ યથાર્થ ચારિત્રથી તે શૂન્ય છે, તેથી જે વખતે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા કરે તે વખતે તે તેની યથાર્થ પ્રરૂપણા કરવામાં લજ્જિત બને છે, કારણ કે તે સમજે છે કે હું સ્વયં યથાર્થચારિત્રશાળી નથી, કદાચ હું વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનો પરિચય લોકોને કરાવી આપીશ તો લોકોની દૃષ્ટિમાં મારી માન્યતા નીચી પડશે, લોક બોલવા માડશે કે-મહારાજ ! જેવી આપ પ્રરૂપણા કરો છો તેવા પ્રકારની ક્રિયા આપ કેમ પાળતા નથી ? આવા પ્રકારે પોતાનું માન સન્માન જવાના ભયથી તે લોકોને અધારામાં જ રાખે છે, પરંતુ તેને સદા તે ભય લાગ્યો જ રહે છે કે કદાચ કોઈ યથાર્થવક્તા આવીને વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનું પ્રતિ-પાદન ન કરી નાખે.

મુનિ = મોક્ષાનર્થ રત્નત્રયવિરાષક इत्यर्थ , કુત इत्यमित્યાદ-‘અનાગ્રય’ સ્યાદિ । અના-
ગ્રયા વર્તમાન = વીતરાગોપદેશવિકલઃ સ્વચ્છન્દાચારી । નનુ વીતરાગોપદશાનુસારેણ
કુતો ન વર્તતે येन स्वैरित्य स्यादिति चेन्न, લાકેડમમીકારા, સ્પરસ્પોર્વિરોધઃ,
શ્વન્દાદિવિષયે તટસ્થતા ચ, इत्येवरूपतीक्ष्णासिधाराभ्यसदुपदशपरिसेवनस्याति-
दुष्करत्वेन स्वच्छन्दचारित्वस्य सुलभत्वात् । यथैतादृशं सतुच्छ = માવતુચ્છો જ્ઞાના-
દિકલાવિકલ સન્ ગ્ભાયતિ = સદેશવિષય પુણ્યન્તં કષિત્ સ વસ્તુતત્ત્વસ્થાપરિજ્ઞાનાત્
यह भव्य-कल्याण जिससे दूर है, अथवा जो भव्यभाव से कुछ-विपरीत
है, वह दुर्बल है । मुक्ति प्राप्ति के अयोग्य ऐसा रत्नत्रयका विराषक
मुनि ही यहा दुर्बल शब्द का वाच्यार्थ है । वीतराग प्रभु के उपदेश का
नाम आज्ञा है । इस आज्ञा से भिन्न अनाज्ञा है । दुर्बल मुनि वीतराग
प्रभु की आज्ञा से विकल होता है अर्थात् स्वच्छाचारी होता है ।
स्वच्छाचारिता इसमें इसलिये आती है कि यह जो प्रभुका उपदेश है
कि-“ किसी भी पदार्थ में ममत्व नहीं रखना । रति अरति नहीं
करना, तथा इन्द्रियों के शब्दादिविषयों में तटस्थ रहना ” इसे रुचिकर नहीं
होता, कारण कि यह तीक्ष्ण असिधारासदृश उनके समुपदेश के सेवन
को अतिदुष्कर मानता है । इसीलिये वह तुच्छ-भावतुच्छ है, अर्थात्-
ज्ञानादिक कलासे विकल है । यदि वह सम्यग् ज्ञानसंपन्न होता तो कभी
भी वीतराग प्रभु के उपदेश से बाह्यमतिवाला न होता । ज्ञानकला से
विकल होकर ही तो यह दुःग्मित होता है । जब कोई उसकी स्वच्छन्द

ને ભવ્ય ભાવથી દુષ્ટ-વિપરીત છે તે દુર્બલ છે મુક્તિપ્રાપ્તિના માટે અયોગ્ય
એવા રત્નત્રયના વિરાષક મુનિ જે આવી દુર્બલ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે વીતરાગ
પ્રભુના ઉપદેશનું નામ આજ્ઞા છે આ આજ્ઞાથી ભિન્ન અનાજ્ઞા છે દુર્બલ મુનિ
વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી વિકળ બને છે અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી થાય છે. સ્વચ્છન્દપણું
તેઓમાં આ માટે આવે છે કે એવો જે પ્રભુનો આદેશ છે કે “ કેહાંપણુ પદાર્થમાં
મમત્વ સખલુ નહિ, રતિ અરતિ કરવી નહિ, તથા ઈન્દ્રિયોના શબ્દાદિ વિષયોમાં
તટસ્થ રહેવું ” આ તેઓને રુચિકર થતું નથી. કારણ કે આ તીક્ષ્ણ તલવાસ્તી ધાર
સમાન તેના સદુપદેશને માનવું ઘણુ ઠીકીન સમજે છે તેથી તે તુચ્છ-ભાવતુચ્છ
છે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિક કલાથી વિકળ છે કહાય તેઓ સમ્યગ્ જ્ઞાનસંપન્ન હોય તે
કદિ પણ વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશથી વિમુખ ન થાય. જ્ઞાનકળાથી વિકળ બની
તે દુષ્ટી થાય છે. આજે કેહાં પણ તેની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ દેખી વાસ્તવિક મુનિના

ન્યાયી સ રત્નત્રયસમારાધક સુવસ્તુનિર્વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનામ કરાશિદપિ ગ્ભાયતિ ।
 પપા=સુવસ્તુનિ વીર=સપમાનુષ્ઠાનકુશલઃ પ્રશંસિતઃ=ગણધરાદિમિરમિનન્દિત ,
 સ પપ વ લોકસયોગ-લોકેન=અસયમિલોકેન સહ સંયોગઃ=સમ્પન્થો મમીકાર इति
 યાવત્ લોકસયોગસ્તં, યદ્વા-લોકસયોગ-લોકૈર્વાંશભૂતૈર્હિરણ્યસુવર્ણધનધાન્યમાતા
 પિતૃપુત્રકલ્પદુષ્ટિપ્રાદિમિરામ્યન્તરૈ રાગદ્રેષાદિમી રાગદ્રેષજન્યૈરપ્ટવિષ્કર્મમિર્વા
 સહ સંયોગ=સમ્પન્થમ્ અસ્યેતિ=અતિક્રામ્યતિ સ મુનિર્મમત્ત્વાદિમિઃ પરિશ્ચુત્તો મવત્તી

ये लक्षण दुर्बल मुनि के हैं, अथ सुवस्तु मुनि के सम्पन्ध का वर्णन करते हैं—

वे सुवस्तु मुनि हैं जो बीतराग प्रसु की आज्ञा के आराधक हैं—रत्न त्रयमार्ग के पालने में साधवान हैं। वे वस्तुतत्त्व के वास्तविक ज्ञाता होने से कभी भी अन्यथा प्ररूपणा नहीं करते। प्ररूपणा के अनुसार ही अपनी प्रवृत्ति रखते हैं। जैसा कहते हैं वैसा स्वयं पालन करते हैं, इसलिये इनको किसी भी प्रकार का भय भी नहीं होता; ये वीर होते हैं। गणधरादिक देवोंने ऐसे ही सुवस्तु मुनियों की प्रशंसा की है। इन्हें वीर इसलिये कहा गया है कि—ये निर्दोष संयम के अनुष्ठान करने में कुशल होते हैं। असंयमी लोगों के साथ यदि कदाचित् इनका संयोग हो जाता है तो भी ये अपने मोक्षमार्ग से बलित नहीं होते हैं। अथवा पादपरिग्रह—हिरण्य सुवर्ण धनधान्य माता-पिता पुत्र कलत्र आदि के साथ इनका सम्पन्ध हो जाता है तो ये उस सम्पन्धसे सदा बहिर्भूत

આ લક્ષણ દુર્બલ મુનિના છે હવે સુવસ્તુ મુનિના સંબંધનું વર્ણન કરે છે—

તે સુવસ્તુ મુનિ છે જે વીતરજ પ્રસુની આજ્ઞાના આરાધક છે રત્નત્રય માર્ગનું પાલન કરવામાં સાધવાન છે તે વસ્તુતત્ત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી જે કદાચ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરતા નથી પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખે છે જેનું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે, તેથી તેને કદાચ પણ પ્રકાશને ભય રહેતો નથી તે વીર બને છે અણધારતીક દેવોએ બોલા જ સુવસ્તુ મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે, તેમને વીર એટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે અસંયમી લોકોને સંગ કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી ચલિત થતા નથી, અને બાહ્ય પરિવર્તકરણ સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે તેના સંબંધ થાય તો પણ તે તેના સંબંધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે તેમાં તેની મમતા લાગતી નથી અત્યંત પરિશ્ચુત સજ દેવ આદિ, અથવા તેનાથી

દુત્તરં કર્તુમ્ અસમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । યદ્વા-જ્ઞાનવાનપિ ચારિત્રશૂન્યઃ પૂજાસત્કારમયાદ્ મોક્ષમાર્ગનિરૂપણાવસરે યથાવસ્થિતં વોધયિતું લજ્જત ઇવેત્યર્થઃ, યથ તીર્થઙ્કરાજ્ઞા-
 પ્રવૃત્તિ દેશ્વકાર વાસ્તવિક સુનિકે આચારવિષયક પ્રશ્ન ઉસસે પૂછતા હૈ
 તો વહ વસ્તુતત્ત્વ કા વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોને સે ઉસકે પ્રશ્નકા યથાર્થ
 ઉત્તર નહીં દે સકતા હૈ, યા જો કુછ કહતા હૈ વહ સ્વકપોલકલ્પિત-હી
 કહતા હૈ જિસે લોગ માનને કો તૈયાર નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર વહ અપની
 માન્યતા મેં બદ્દા લગને કે અથવા પોલ ખુલને કે ડર સે સદા દુઃખી હી
 બના રહતા હૈ । અથવા-જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હો તો ખી યથાર્થ ચારિત્ર સે
 વહ શૂન્ય હૈ ઇસલિયે જિસ સમય વહ મોક્ષ માર્ગ કી પ્રરૂપણ કરતા હૈ
 ઉસ સમય વહ ઉસકી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરને મેં લજ્જિત જૈસા હોતા હૈ,
 ક્યોંકિ વહ સમજતા હૈ કિ મૈં સ્વયં યથાર્થ ચારિત્રશાલી નહીં હૂં, યદિ
 મૈં વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પરિચય લોગોં કો કરા દૂંગા તો લોગોં કો
 દૃષ્ટિમેં મેરી માન્યતા ગિર જાવેગી, લોગ કહેંગે કિ-મહારાજ ! જૈસી
 આપ પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઉસ પ્રકાર કી ક્રિયા આપ ક્યોં નહીં પાલતે ? ।
 ઇસ પ્રકાર અપના માન-સમ્માન કે જાને કે ભય સે વહ લોગોં કો અન્ધ-
 કાર મેં હી રખતા હૈ, પરન્તુ ઉસે યહ ભય સદા લગા રહતા હૈ કિ કહીં
 કોઈ યથાર્થ વક્તા આકર વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ન કરદે ।

આચારવિષયનો પ્રશ્ન પૂછે છે તો તે વસ્તુતત્ત્વનો વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોવાથી
 તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર યથાર્થરૂપે આપી શકતો નથી અગર જે કંઈ પણ જવાબ
 આપે છે તો તે સ્વકપોલકલ્પિત જ આપે છે, જે માનવાને લોક તૈયાર થતા
 નથી આવા પ્રકારથી તે પોતાની માન્યતામા ઝાઝ લાગવાના ભયથી અથવા પોલ
 ખુલ્લી થવાના ભયથી સદા દુ ખી બની રહે છે, અથવા જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હોય
 તો પણ યથાર્થ ચારિત્રથી તે શૂન્ય છે, તેથી જે વખતે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા
 કરે તે વખતે તે તેની યથાર્થ પ્રરૂપણા કરવામા લજ્જિત બને છે, કારણ
 કે તે સમજે છે કે હું સ્વયં યથાર્થચારિત્રશાળી નથી, કદાચ હું વાસ્તવિક
 વસ્તુસ્થિતિનો પરિચય લોકોને કરાવી આપીશ તો લોકોની દૃષ્ટિમા મારી માન્યતા
 નીચી પડશે, લોક બોલવા માડશે કે-મહારાજ ! જેવી આપ પ્રરૂપણા કરે છે
 તેવા પ્રકારની ક્રિયા આપ કેમ પાળતા નથી ? આવા પ્રકારે પોતાનું માન સન્માન
 જવાના ભયથી તે લોકોને અધારામા જ રાખે છે, પરંતુ તેને સદા તે ભય લાગ્યો
 જ રહે છે કે કદાચ કોઈ યથાર્થવક્તા આવીને વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનું પ્રતિ-
 પાદન ન કરી નાખે.

નુપામી સ રત્નત્રયસમારાધકઃ સુવસ્તુનિર્વસ્તુતસ્વપરિજ્ઞાનામ કદાચિદપિ સ્થાયતિ ।
 एपः=सुवस्तुनि' वीरः=संयमानुष्ठानकुशलः प्रशंसितः=गणधरादिभिरभिनन्दित ,
 स एव च लोकसयोगं=लोकेन=असयमिलोकेन सह सयोगः=सम्यन्धो भमीकार इति
 यावत् लोकसयोगस्त, यद्वा=लोकसयोगं=लोकैर्षाद्भूतैर्हिरण्यसुवर्णधनधान्यमाता-
 पितृपुत्रकलत्रदुष्टिभ्रादिभिराम्यन्तै रागद्वेषादिमी रागद्वेषजन्यैरष्टविधकर्मभिर्वा
 सह सयोगः=सम्यन्धम् भस्येति=अतिक्राम्यति स मुनिर्ममस्वादिभिः परिष्कृतो भवती

ये लक्षण दुर्वस्तુ મુનિ કે છે, અથ સુવસ્તુ મુનિ કે સમ્યન્ધ કા ઘર્ષણ કરતે છે—

ये सुवस्तु मुनि हैं जो वीतराग प्रसु की आज्ञा के आराधक हैं—रत्न त्रयमार्ग के पालने में सावधान हैं। ये वस्तुतस्व के वास्तविक ज्ञाता होने से कभी भी अन्यथा प्ररूपणा नहीं करते। प्ररूपणा के अनु सार ही अपनी प्रवृत्ति रखते हैं। जैसा कहते हैं वैसा स्वयं पालन करते हैं, इसलिये इनको किसी भी प्रकार का भय भी नहीं होता; ये वीर होते हैं। गणधरादिक देवोंने ऐसे ही सुवस्तु मुनियों की प्रशंसा की है। इन्हें वीर इसलिये कहा गया है कि—ये निर्दोष संयम के अनुष्ठान करने में कुशल होते हैं। असंयमी लोगों के साथ यदि कदाचित् इनका संयोग हो जाता है तो भी ये अपने मोक्षमार्ग से अलित नहीं होते हैं। अथवा वाक्परिग्रह—हिरण्य सुवर्ण धनधान्य माता पिता पुत्र कलत्र आदि के साथ इनका सम्यन्ध हो जाता है तो ये उस सम्यन्धसे सदा बहिर्भूत

આ લક્ષણ દુર્વસ્તુ મુનિના છે કેવે સુવસ્તુ મુનિના સબધતુ વલન કરે છે—

તે સુવસ્તુ મુનિ છે જે વીતસમ પ્રધુની આજ્ઞાના આસપદ છે રત્નત્રય માર્ગનું પાલન કરવામાં સાવધાન છે તે વસ્તુતત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી જે કદાચ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરવા નથી. પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખે છે એવું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે તેથી તેને કદાચ પણ પ્રકારનો ભય રહેતો નથી. તે વીર બને છે ગણધરાદિક દેવોએ એવા જ સુવસ્તુ મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે તેમને વીર કોટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે. અસંયમી લોકોનો સંગ કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી અલિત થતા નથી, અને બાહ્ય પરિગ્રહિતસ્વ સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે તેના સબધ થાય તો પણ તે તેવા સબધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે તેમાં તેની ભમતા લાગતી નથી. આશ્ચર્ય તર પરિશ્રદ્ધ સંગ દ્વેષ આદિ, અથવા તેનાથી

બન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ ઇતિ=યત્પૂ-
ર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃખં તદ્, યચ્ચ પ્રાણિદુઃસ્વપરિજ્ઞાતારઃ
કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યા-
શ્ચ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિક્કરણત્રિકૈઃ પરિહૃત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=
ભેદપ્રભેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો
વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિમિશ્રતુર્વિધાભિઃ
કથાભિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હૈં, સ્વ-
સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હૈં, પરીપહ ઓર ઉપસર્ગ કે
સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હૈં, કર્મરૂપી મહાસુખદોં કી ઘટાકો હટાને
કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હૈં, રાગ ઓર દ્વેષરૂપી શ્વેત ઓર
કાલે નાગ કે ભયદ્ગર વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈધ કે સમાન હૈં,
કષાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ
હૈં, ઓર જો ભયદ્ગર હસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય
નિપુણ હોતે હૈં વે મનુષ્યોં કે હસ પૂર્વોક્ત દુઃખકી, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિ
સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર
પ્રકટ કરતે રહતે હૈં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ
બધતે હૈં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હૈં ?, બંધ કા અભાવ કેસે હોતા
હૈં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈં ?” હન સબ બારોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-
જ્ઞાતે હૈં । હનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમા નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના
જે ભણકાર છે પરિષદ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામા જે શક્તિશાળી હોય છે,
કર્મરૂપી મહાસુખદોની ઘટાને હઠાવવામાં ઉપાયો યોજવામા જે નિપુણ હોય
છે, રાગ અને દ્વેષરૂપી ધોળા અને કાળા નાગના ભયકર વિષનુ શમન કરવામાં
જે વિષવૈધમમાન છે, કષાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સન્તાપને શાંત કરવામા
કુશળ છે અને જે ભયકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામા અદ્વિતીય
નિપુણ હોય છે—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિથી
ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરન્તર પ્રકટ કરતા રહે છે
તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બધાય છે ? બધ શુ છે ?
બધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનુ કારણ
શુ છે ?” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ
શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર

છાયા-યદ્દુઃસ્વ પ્રવેદિતમિદ્ માનવાનાં તસ્ય દુઃસ્વસ્ય કુશળાઃ પરિજ્ઞામુદાહરન્તિ-
 इति कर्म परिज्ञाय सर्वज्ञः, योऽनन्यदर्शो सोऽनन्यारामः, योऽनन्यारामः सोऽनन्यदर्शी,
 यया पुण्या कथ्यते तथा तुच्छाय कथ्यते, यया तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्या
 कथ्यते, अपि च इत्यादनादियमाणः ॥ सू० ८ ॥

टीકા-‘યદ્દુઃસ્વ’ મિત્યાદિ, યત્=અનિર્દિષ્ટં દુઃસ્વ=શારીરિકમાનસિક, દુઃસ્વ
 जनकं कर्म वा यया यत्र येन प्रकारेण कर्म बध्यते म्रियते वा, यया च विपाको भवति
 यया च न भवति तत्सर्वं प्रवेदितं=तीर्थङ्करगणधरैः प्ररूपितम् । इह=अस्मिन् लोके
 કુશળા=દ્રવ્યજ્ઞકામમાવપરિજ્ઞાનનિપુણા સ્વસમયપરસમયજ્ઞાઃ પરીપરોપસર્ગ-
 सहनसमा, कर्ममहासुमटपटाविपटनोपायघटका रागद्वेषमहोरगविषमविषममन-
 निपवैद्याः, कपापानमसन्तापप्रथमनप्रवीणाः, विकृतमवाग्धीपारगमननिष्पाता
 માલ્લકુશલાઃ, માનવાનાં તસ્ય દુઃસ્વસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય માણાતિપાતાધુપાગ્નિતસ્ય કર્મણો
 वा परिज्ञाम्=कर्मोपानेनतत्क्षिरोपकारणपरिज्ञानम् उदाहरन्ति=उपदिशन्ति-बन्धो

અચ કિર ‘મી’ અગવાન કે ઉપદેશ કો કહતે હૈ-‘જંદુક્સ’ હત્યાદિ ।

इस चतुर्गतिक रूप संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी
 ન કિસી તજ્હ સે દુઃસ્વી ન હો । કોઈ શારીરિક તો કોઈ માનસિક
 दुःस्व से हर समय दुःस्वी ही बने रहते हैं । इन दुःस्वों का प्रदाना जीवों
 કો અપને કિયે જુદા કર્મ કે સિવાય ઓર કોઈ નહીં હૈ । યહ યાત હમે
 हमारे तीर्थङ्कर गणधरादि महापुरुषा ने अच्छी तरह से शास्त्रों में यत्
 લાઈ હૈ । સાચ મેં યહ મી યતલાયા હૈ કિ જિન કર્મો સે હમે સુસ્વદુઃસ્વ
 प्राप्त होता है उन कर्मों को यह जीव किस प्रकार से कैसे यांभता है ?,
 તથા ઊન કર્મો કે ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેસે હોતે હૈ ? કેસે નહીં
 હોતે હૈ ? । ઊન્હીં કે સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ મી-

હવે દરીઘી પણ અગવાનને ઉપદેશ કહે છે- ‘જંદુક્સ’ હત્યાદિ.

આ ચતુર્ગતિક્ષ્પ અચારમાં જેવું કેઈ પણ પ્રાણી નથી જે કેઈને
 કેઈ પ્રકારે દુઃસ્વી ન બોય. કેઈ શરીરથી તો કેઈ મનથી દુઃસ્વી તેવા પ્રકારે
 મહા દુઃસ્વી બની રહે છે. આ દુઃસ્વોને પ્રદાતા જીવાને યોગ્યતા કરેલા કર્મો સિવાય
 બીજું કેઈ પણ નથી. આ યાત અમને અમારા તીર્થંકરોએ તથા ગણધરાદિકે યજ્ઞી
 સારી રીતે આશ્રમ જતાવી છે. આમેં જે પણ જતાવેલ છે કે જે કર્મોથી અમાન
 મુખદુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેવા કર્મોને આ જીવ કેવા પ્રકારે કેવી રીતે બાપે
 છે ? તથા તેવા કર્મોના ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેમ થાય છે ? કેવી રીતે યત્ન
 નથી ? તેના સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ પણ-જે દ્રવ્ય, રોગ,

બન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ રૂતિ=ચત્પૂ-
ર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃસ્વં તદ્, યન્ચ પ્રાણિદુઃસ્વપરિજ્ઞાતારઃ
કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યા-
હ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિકકરણત્રિકૈઃ પરિહૃત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=
ભેદપ્રભેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો
વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિભિશ્ચતુર્વિધાભિઃ
કથાભિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હૈં, સ્વ-
સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હૈં, પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે
સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હૈં, કર્મરૂપી મહાસુખદોં કી ઘટાકો હટાને
કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હૈં, રાગ ઓર દ્વેષરૂપી શ્વેત ઓર
કાલે નાગ કે બયડ્કર વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈદ્ય કે સમાન હૈં,
કષાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ
હૈં, ઓર જો બયડ્કર હસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય
નિપુણ હોતે હૈં વેમનુષ્યોં કે હસ પૂર્વોક્ત દુઃસ્વકી, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિ
સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર
પ્રકટ કરતે રહતે હૈં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ
બંધતે હૈં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હૈં ?, બંધ કા અભાવ કેસે હોતા
હૈં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈં ?” હન સબ વાતોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-
જ્ઞાતે હૈં । હનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમા નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના
જે બાણકાર છે પરિષદ્ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામા જે શક્તિશાળી હોય છે,
કર્મરૂપી મહાસુખદોની ઘટાને હટાવવામા ઉપાયો યોજવામા જે નિપુણ હોય
છે, રાગ અને દ્વેષરૂપી ઘોળા અને કાળા નાગના ભયકર વિષનુ શમન કરવામા
જે વિષવૈદ્યમાન છે, કષાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સન્તાપને શાન્ત કરવામા
કુશલ છે અને જે ભયકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામા અદ્વિતીય
નિપુણ હોય છે—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિથી
ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરન્તર પ્રકટ કરતા રહે છે
તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બંધાય છે ? બંધ શું છે ?
બંધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બંધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનું કારણ
શું છે ?” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ
શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર

ધર્મોપદેશકઃ કીદૃશો મનતીત્યાહ—‘યોગ્યન્યે’—ત્યાદિ, યઃ કથિત્ અનન્યદર્શી-
અન્યં દ્રષ્ટુ શીલં યસ્ય સોઽન્યદર્શી, ન અન્યદર્શી=અનન્યદર્શી=અન્યદર્શનમદાનરહિતઃ
મગધદુપદિપ્ત્યસ્તુતસ્વરુચિશીલો મનતિ સ એવ અનન્યારામઃ=સ્તનપ્રયાતિરિક્-
ષસ્તુરમણવિરતો મનતિ । મિધ્યાદૃષ્ટિશાસ્ત્રસ્યાનાત્મપ્રીતસ્વાત્મપ્ર ન રમત ઇત્યાશય ।

કરનેવાળે, તથા उनके मतानुसार चलनेवाले व्यक्ति का यह प्रधान कर्तव्य
है कि वह उनके इस प्रकारके दिव्य उपदेशको—कि ज्ञानावरणीयादिक
कर्मोंको यह जीव इस प्रकार बांधता है और तज्जन्य इन दुःखों
को नितप्रति भोगता रहता है, इन सभी बातोंको—ज्ञ—परिज्ञासे जानकर
और प्रत्याख्यान—परिज्ञासे तीन करण तीन योगोंद्वारा उन सबका त्याग
करे, तथा ‘फिरसे नवीन कर्मोंका आस्रव न हो’ इस प्रकारसे अपनी
प्रवृत्तिको संभालकर रखे ।

धर्मोपदेशक कैसा होता है? इस बातका खुलासा करते हुए कहते
हैं—‘जे अणमदसी’ इत्यादि, तीर्थङ्करादिवारा प्रतिपादित सिद्धान्तके
सिवाय अन्य सिद्धान्तमें जिसकी उपादेयरूपसे आस्था नहीं होती है
उसका नाम अनन्यदर्शी है । अन्य सिद्धान्तको ग्रहण करनेकी जिसकी
दृष्टि होती है वह अन्यदर्शी है, इससे विपरीत अनन्यदर्शी है । जो
अनन्यदर्शी है वही अनन्याराम है, अर्थात् जिसकी रुचि वीतराग
प्रतिपादित तत्त्वोंमें ही एकत्रानरूपसे तल्लीन है । वह उनसे अतिरिक्त
मिध्यादृष्टियेके शास्त्रोंमें कभी भी रतिपाली नहीं होता है प्रस्युत उनके

વ્યક્તિનું એ પ્રધાન કર્તવ્ય છે કે તે તેના અથવા પ્રકારના દિવ્ય ઉપદેશને કે
જ્ઞાનાવરણીયાદિક કાર્મિક એ છુપ આ પ્રકારે બાધે છે અને તત્ત્વજન્ય તેવા દુઃખોને
નિત્ય ભોગવતા રહે છે આ સંબંધી વાતોને—૧-પરિજ્ઞાથી બાળીને, અને પ્રત્યાખ્યાન
પરિજ્ઞાથી ત્રણ કરણ ત્રણ યોગદાસ તે સમજાવે ત્યાગ કરે, તથા ‘ફરીથી નવીન
કાર્મિક આશ્રવ ન અને તેવા પ્રકારથી ચેતાની પ્રવૃત્તિને સંબાળી રહે.

ધર્મોપદેશક કેવા હોય છે? એ વાતનો ખુલાસો કરતા કહે છે—‘જે
અણમદસી’ ઇત્યાદિ.

તીર્થંકરશિદ્ધાંત પ્રતિપાદિત સિદ્ધાંત સિવાય અન્ય સિદ્ધાંતમાં જેની ઉપાદેય
રૂપથી આસ્થા મતી નથી તેનું નામ અનન્યદર્શી છે બીજા સિદ્ધાંતને
મનન કરવાની જેની દૃષ્ટિ થાય છે તે અન્યદર્શી છે, તેનાથી વિપરીત
અનન્યદર્શી છે જે અનન્યદર્શી છે તે અનન્યારામ છે અર્થાત્ જેની રૂચી
વીતરાગપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં જ એકત્રાન રૂપથી તરલીન છે તે તેથી અતિરિક્ત
મિધ્યાદૃષ્ટિએના શાસ્ત્રોમાં કદી પણ રતિપાળી થતા નથી, બરાકે તેના સિદ્ધાંતોની

સિદ્ધાન્તકા આલોડનકર જવ વહુ ઉનકી માન્યતાઓંકો તર્કણાકી કસોટી પર કસતા હૈ ઓર જવ વે અપની યથાર્થતાસે શૂન્ય સાબિત હોતી હૈં તવ ઇસકી દૃષ્ટિમૈં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંકી ઓર હી સન્તોષ ઉત્પન્ન હોતા હૈં । વહુ અપનેકો ધન્ય ઇસલિયે માનતા હૈં કિ મુઝે ત્રિલોકીનાથ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મકી શીતલ છત્રછાયા મિલી હૈં । સત્ત્વે મણિકી કીમત કાચલખણડકે દેખનેસે હી હોતી હૈં । ઉપદેશક જવ તક અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાલા નહીં હોગા તવ તક વહુ દૂસરોંકે લિયે અપને સિદ્ધાન્તકા રહસ્ય હૃદયંગમ નહીં કરા સકતા । ઉપદેશક ગુરુકા કર્ત્તવ્ય હૈં કિ વહુ પહિલે અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ રૂપસે જ્ઞાતા હો, શ્રોતાઓંકી ચિત્તવૃત્તિકો પરલેખવાલા હો, ઉનકી શંકાઓંકા યુક્તિ ઓર આગમકે અનુસાર સમાધાન કરનેવાલા હો, સદાચારી હો, અપને ઉપદેશમૈં શંકા સમાધાનકે સાથ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હો । ઇસ પ્રકારકે ઉપદેશકકા શ્રોતાઓંકે ઉપર અસર જિતના પડતા હૈં ઉતના ઓર કિસીકા નહીં પડતા, ઇસલિયે સૂત્રકારને ઉસકી પ્રશંસા-અનન્યારામ ઓર અનન્યદર્શી, ઇન પદોંસે કી હૈં । ઉપદેશક અપને વિષયકા પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિશ્લેષણી સંવેગિની ઓર નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારકી કથાઓંમૈંસે જિસ કથાકી જહાં આવશ્યકતા હોતી હૈં ઉસી કથાકા

આલોચના કરી જ્યારે તે તેમની માન્યતાઓને તર્કણી કસોટી ઉપર કસે છે અને જ્યારે તે પોતાની યથાર્થતાથી શૂન્ય સાબિત થાય છે ત્યારે તેની દૃષ્ટિમાં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોની તરફ જ સંતોષ ઉત્પન્ન થાય છે તે પોતાને ધન્ય તેટલા માટે માને છે કે મને ત્રિલોકીનાથદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મની શીતળ છત્રછાયા મળી છે સાચા મણિની કીમત કાચના ટુકડા દેખવાથી થાય છે ઉપદેશક જ્યારે સુધી પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાળો નહિ અને ત્યાં સુધી તે બીજાઓને પોતાના સિદ્ધાંતનું રહસ્ય હૃદયંગમ કરાવી શકતો નથી ઉપદેશક ગુરુનું કર્તવ્ય છે કે તે પહેલાં પોતાના સિદ્ધાંતના પૂર્ણ જ્ઞાતા હોય, શ્રોતાઓની ચિત્તવૃત્તિને પારખનાર હોય, તેની શંકાઓનું યુક્તિ અને આગમ અનુસાર સમાધાન કરવાવાળા હોય, સદાચારી હોય, પોતાના ઉપદેશમાં શંકા સમાધાન સાથે પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હોય આવા પ્રકારથી ઉપદેશકની શ્રોતાઓ ઉપર અસર જેટલી પડે છે તેટલી બીજા કશાથી થતી નથી. સૂત્રકારે તેની પ્રશંસા ‘અનન્યારામ અને અનન્યદર્શી’ આ પદોથી કરેલ છે ઉપદેશક પોતાના વિષયનું પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિશ્લેષણી સંવેગિની અને નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારની કથાઓમાંથી જે કથાની જ્યાં આવશ્યકતા હોય છે,

પ્રવક્તૃપદેશકસ્તરૂપમુપદર્શ્ય સર્વેભ્ય સમાન એવ મગનદુપદેશ ઇતિ દર્શયતિ 'યથે'ત્યાદિ ।

યથા=યેન પ્રકારેણ પુણ્યાય=પુણ્યવતે મઘ્વનીધાય સુરેશ્વરચક્રવર્તિમાન્ધલિકાયા ચ કથ્યતે=ઉપદિશ્યતે, તથા=એવમેવ તુઙ્ગાય=દ્રમકકાપ્ઠાશરકાય કથ્યતે,

અવલમ્બન કરકે ઉપદેશ દેતે હૈં । ઇસી ચાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે “ સમ્પસો ” પદકા સૂત્રકારને સૂત્રમેં પ્રહણ કિયા હૈ । જિસ વિષયમેં ઉપદેશક અકુશલ હોતા હૈ, અથવા જહા પર ઉસે સન્દેહ હોતા હૈ ઉસ વિષયકો થહ સ્વયં કેવલી અથવા શ્રુતજ્ઞાનીકે પાસસે જાનકર થાદમેં ઉસકા પ્રતિપાદન કરતા હૈ । જિસ સમય કેવલિયોંકા યહાં પર અસ્તિત્વ થા ઉસ સમય મી ધર્મોપદેશક થે । ધર્મોપદેશકોંકો જિસ વિષયમેં શક્તા હોતી થી વે અપની શક્તાઓંકા સમાધાન ઉનકે નિકટ કરતે થે, ઓર ઉસ વિષયમેં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતે થે । યથાપિ વર્તમાનકાલમેં ઇસ ક્ષેત્રમેં સાક્ષાત્ કેવલી વિચમાન નહીં હૈં ફિર મી ઉનકે સ્થાનાવસ્થા ઉનકા ઉપદેશ શાસ્ત્રમેં અય મી વિચમાન હૈ । ઉપદેશક શુરુ ઉન્હીં ઉપદેશોંકા અય મી અપની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂલ યનાકર પ્રચાર કરતે રહતે હૈં ।

વીતરાગ પ્રમુદ્ધારા પ્રતિપાદિત વિષય—ચાહે થહ દરિદ્રી હો, ધની હો, ઇન્દ્ર હો, ધન્યવર્તી હો, માન્ધલિક રાજા હો, કોઈ મી કયોં ન હો—સબકે લિયે સમાનરૂપસે હૈ, ઇસમેં કિસીમી જાતિવિશેષ યા ઘર્ણ વિશેષકા મેદ નહીં રખવા ગયા હૈ । મગધાનકા ઉપદેશ પદ્મપાતસે

તેથી કથાતુ અવલમ્બન કરીને ઉપદેશ આપે છે આ ચાતને પ્રગટ કરવા માટે “ સમ્પસો ” પદનું સૂત્રકારે સૂત્રમાં મહત્ત્વ કરેલ છે જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશલ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી બાંધી લે છે બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે જે વખતે કેવળીએનું જાણી અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શકા થતી હતી તેઓ પોતાની શકાએનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા જો કે વર્તમાનકાલમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિચમાન નથી તે પણ તેના સ્થાનાવસ્થા તેમના ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હતું પણ વિચમાન છે ઉપદેશક શુરુ તેઓના ઉપદેશોની હતું પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે

વીતરાગ પ્રમુદ્ધારા પ્રતિપાદિત વિષય—ચાહે કોઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે યકવર્તી હોય, માન્ધિક રાજા હોય, બીજા કોઈ પણ હોય—બધાને માટે સમાનરૂપ જ છે તેમાં કોઈ પણ ભતિવિશેષ અત્રર વર્ણ વિશેષને બેદ રાખવામાં આવેલ નથી મગધાનનો ઉપદેશ પદ્મપાતથી સ્થિત હોય

एवं यथा तुच्छाय रुच्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-
भावेन वर्पति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चावचभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-
नमेवोपदिशति । अत्रायं विवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य 'यथा-
स्यं नृपादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्यैवोप-
विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-
रूपसे वरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां वरसना
चाहिये अथवा यहां नहीं वरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे
ही वह एकरूपसे मेघधारा वरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें
भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि 'यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये
मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश
नहीं है ' । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर
काष्ठहार-लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये
प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका
कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार
श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह
उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-
सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बातका अपने
मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-
भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । बिना

છે જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમા અને સ્થળમા સમાન રૂપથી વરસે છે તેને
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આહી જ વરસવું અને ત્યા વરસવું નહિ એવા
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે તેવા પ્રકારે ભગવાનના
ઉપદેશમા પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ' આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી '
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયારા સુધી, રાજાથી
રક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ
ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-
ઓને સભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે જેવી રીતે રાજસભામા બેસીને ધર્મોપદેશ
દેનાર ઉપદેશક પહેલા એ વાતનો પોતાના મનમા નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અગર અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

પવમુપદશકસ્વરૂપમુપદર્શ્યસર્વેભ્ય સમાન એન મગધદુપદેષ્ય ઇતિ દર્શયતિ 'યથે'ત્યાદિ ।

યથા=યેન પ્રકારેણ પુખ્યાય=પુખ્યવતે મધ્યજીવાય સુરેશ્વરચક્રવર્તિમાષ્ટિકાયા ચ કથ્યતે=ઉપદિશ્યતે, તથા=એવમેવ તુચ્ચાય=દ્રમકકાષ્ઠકારકાય કથ્યતે,

અવલમ્બન કરકે ઉપદેશ દેતે હૈં । ઇસી વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે “સમ્વસો” પદકા સૂત્રકારને સૂત્રમેં ગ્રહણ કિયા હૈ । જિસ વિષયમેં ઉપદેશક અકુશલ હોતા હૈ, અથવા જહા પર ઉસે સન્દેહ હોતા હૈ ઉસ વિષયકો થહ સ્વયં કેવલી અથવા શ્રુતજ્ઞાનીકે પાસસે જાનકર થાદમેં ઉસકા પ્રતિપાદન કરતા હૈ । જિસ સમય કેવલિયોંકા યહાં પર અસ્તિત્વ થા ઉસ સમય મી ધર્મોપદેશક થે । ધર્મોપદેશકોંકો જિસ વિષયમેં શકા હોતી થી થે અપની ધાંકામોંકા સમાધાન ઉનકે નિકટ કરતે થે, ઓર ઉસ વિષયમેં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતે થે । યથાપિ વર્તમાનકાલમેં ઇસ ક્ષેત્રમેં સાક્ષાત્ કેવલી વિષયમાન નહીં હૈં ફિર મી ઉનકે સ્થાનાપન ઉનકા ઉપદેશ શાસ્ત્રમેં અવ મી વિષયમાન હૈ । ઉપદેશક શુરુ ઉન્હીં ઉપદેશોંકા અવ મી અપની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂલ બનાકર પ્રચાર કરતે રહતે હૈં ।

ચીતરાગ પ્રસુદારા પ્રતિપાદિત વિષય—આહે થહ દરિદ્રી હો, ધની હો, ઇન્દ્ર હો, ચક્રવર્તી હો, માળહલિક રાજા હો, કોઈ મી ક્યોં ન હો—મયકે લિયે સમાનરૂપસે હૈ, ઇસમેં કિસીમી જાતિવિશેષ યા વર્ગ વિશેષકા ભેદ નહીં રખલા ગયા હૈ । મગધાનકા ઉપદેશ પદ્મપાતસે

તેવી કથાનુ અવલમ્બન કરીને ઉપદેશ આપે છે આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સમ્વસો” પદનુ સૂત્રકારે સૂત્રમાં બદલુ કરેલ છે. જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી બાંધી લે છે બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શકા થતી હતી તેઓ પોતાની શકાઓનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિષયમાન નથી તો પણ તેના સ્થાનાપન તેમના ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિષયમાન છે ઉપદેશક શુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે

ચીતરાગ પ્રસુદારા પ્રતિપાદિત વિષય—આહે કેઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માળહલિક રાજા હોય, બીજા કેઈ પણ નામ—બધાને માટે સમાનરૂપ જ છે તેમાં કેઈ પણ અતિવિશેષ અગર વર્ગ વિશેષને ભેદ સંબધમાં આવેલ નથી. મગધાનનો ઉપદેશ પદ્મપાતથી સંકિત હોય

એવં યથા તુચ્છાય કથ્યતે તથા પુણ્યાય કથ્યતે । મેઘો યથા સ્થલે જલે ચ સમ-
ભાવેન વર્ષતિ તથૈવોપદેષ્ટાઽપિ નિરપેક્ષમુચ્ચાવચેભ્યઃ સર્વેભ્યોઽનુગ્રહવુદ્રચા સમા-
નમેવોપદિશતિ । અત્રાયં વિવેકઃ—ઉપદેશકો હિ દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવમનુસૃત્ય ‘યથા-
ઽયં તૃપાદિરભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિરનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિર્વેત્યાદિ પૂર્વમવધાયૈવોપ-

વિહીન હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર મેઘકી ધારા જલમ્મં ઓર સ્થલમ્મં સમાન-
રૂપસે વરસતી હૈ, ઉસે યહ પક્ષપાત નહીં હોતા કિ મુશ્કે યહાં વરસના
ચાહિયે અથવા યહાં નહીં વરસના ચાહિયે, ઇસ પ્રકારકી નિરપેક્ષ વૃત્તિસે
હી વહ એકરૂપસે મેઘધારા વરસતી હૈ । ઇસી પ્રકાર ભગવાનકે ઉપદેશમ્મં
મી ભેદભાવકી વૃત્તિ નહીં હોતી કિ ‘યહ પુણ્યાત્મા હૈ અતઃ ઇસકે લિયે
મેરા યહ ઉપદેશ હૈ, ઓર યહ પાપી હૈ ઇસકે લિયે મેરા યહ ઉપદેશ
નહીં હૈ ’ । પુણ્યાત્માસે લગાકર પાપાત્મા તક, ઓર ધનીસે લગા કર
કાષ્ઠહાર—લકડહારે તક, તથા રાજાસે લગા કર રંક તક સબકે લિયે
પ્રભુકા ઉપદેશ એક રસસે સના હુઆ હોતા હૈ ફિર મી ઉપદેશકકા
કર્ત્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉસ ઉપદેશકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકે અનુસાર
શ્રોતાઓં તક પહુંચાવે । યહ ઉપદેશકકી હી કુશલતા હૈ । અન્યથા વહ
ઉસ ઉપદેશસે અપને સ્વયંકી હાનિ કરનેવાલા હો જાતા હૈ । જૈસે રાજ-
સભામ્મં બેઠ કર ધર્મોપદેશ દેનેવાલા ઉપદેષ્ટા પહિલે ઇસ વાતકા અપને
મનમ્મં નિર્ણય કર લેવે કિ યહ રાજા અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ યા અન-
ભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ? ફિર અપને ઉપદેશકા પ્રવાહ ચલાવે । વિના

છે જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમા અને સ્થળમા સમાન રૂપથી વરસે છે તેને
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આહી જ વરસવુ અને ત્યા વરસવુ નહિ એવા
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે તેવા પ્રકારે ભગવાનના
ઉપદેશમા પણ સેહસાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ‘ આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી ’
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયારા સુધી, રાનથી
રક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ
ઉપદેશકનુ કર્ત્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-
ઓને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે જેવી રીતે રાજસભામા એસીને ધર્મોપદેશ
દેનાર ઉપદેશક પહેલા એ વાતનો પોતાના મનમા નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અગર અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

વિશેત્, અન્યયોપદેશે ચઢપાયસમ્મનાત્, તદેવાહ—અપિ ચેત્યાદિ, અનાદ્રિયમાણ= અવમન્યમાનો ધૂપાદિ, ઉપદેશકચિહિતનિન્દ સન્ રન્યાદપિ=સદુપનિષ્ઠકં નાશ્યદપિ, ‘અપિ’ સમ્માચને, ‘ચ’-શન્દાદન્યદપિ દષ્ટ-વજ્રાતાહનાદિકમપિ કુર્યાત્,

“દશસૂનાસમચ્ચાક્રી, દશચક્રિસમો વ્રજ ॥

દશધ્વજસમા ચેશ્યા, દશવેશ્યાસમો મુપઃ ॥ ૧ ॥”

ઈત્યાદિનિન્દામૂલિકામસ્તુદાં વાષમમિવપતમુપવટ્ટારં મતિ રાજા—‘एष मुनि सर्वधर्मवाहो राजप्रधानमिश्रो नीतिधर्ममपि न जानाति, मोक्षधर्मस्तावद्दूराव पेत्’ इत्येवं मुक्त्वा कुप्यमानो यष्टिमुष्मिभिस्ताडयन् ततो निःसारयन् तत्र रुन्धन् वस्त्रादिकं लुप्टयन् चर्मात्रिच्छेदं कारयन् प्राणानप्यपहरेदतस्तादृशं नोपदिशे-
दित्याशयः ॥ सू० ८ ॥

ચિહ્નારે જો ઉપદેશ વિયા જાયગા ઉસમેં અનેક કર્ટ્તોકા ઉસે સામના કરના પહેગા । ઉપદેશમેં યદિ કિસીં મી પ્રકારસે રાજાકી જ્ઞાનકે ચિહ્ન કોઈ શબ્દ ઉસસે નિકલ જાતા હૈ, અથવા રાજધર્મકે પ્રતિપાદનમેં કોઈ તેસી વાત આ જાતી હૈ જો ઉસકી પ્રતિષ્ઠાકે ચિહ્ન પડતી હો, તો હસસે રાજા અપના અપમાન સમજતકર ઉસ ઉપદેશકા પ્રાણઘાત તક કર દેતા હૈ । યદિ એસા ન મી કરે તો વહ ઉસે દણ્ડવિધાન કરતા હૈ, કોઢોસે મી પિટવાતા હૈ । હસ શ્લોકમેં રાજચિહ્ન વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“દશસૂનાસમચ્ચાક્રી, દશચક્રિસમો વ્રજઃ ।

દશધ્વજસમા ચેશ્યા, દશવેશ્યાસમો મુપઃ ॥ ૧ ॥”

હસ પ્રકાર રાજનિન્દામૂલક ઉપદેશ યદિ ઉપદેશ રાજસભામેં બેઠ કર કરે તો હસસે રાજાકે હૃદયમેં અપાર કષ્ટ હોગા । એસે ઉપદેશસે

ઉપદેશનો પ્રવાહ બહાવે. વગર વિચારે જે ઉપદેશ આપવા માંડે તે તેના તેને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે. ઉપદેશમાં કાંઈ પણ પ્રકારથી સજાની જ્ઞાનની વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ તેનાથી નિકળી આવે, અથવા રાજધર્મ પ્રતિ પાદનમાં કોઈ એવી વાત આવી આવે જે તેની પ્રતિષ્ઠાની વિરુદ્ધ પડે છે તે તેનાથી સજા ચોતાનું અપમાન સમજી તેના ઉપદેશકને પ્રાણઘાત પણ કરી નાંખે છે કહાય એવું ન પણ કરે તે તેને ઠઠ કરે છે કોણથી માર મારે છે આ શ્લોકમાં રાજચિહ્ન વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે જેમ—

દશસૂનાસમચ્ચાક્રી દશચક્રિસમો વ્રજઃ ।

દશધ્વજસમા ચેશ્યા દશવેશ્યાસમો મુપઃ ॥ ૧ ॥”

આ પ્રકાર રાજનિન્દામૂલક ઉપદેશ કાંઈ ઉપદેશક રાજસભામાં બેસીને કરે તેથી સજાના હુકમમાં અપાર કષ્ટ થશે તેના ઉપદેશથી મુનિ સજાના કોષનો

શ્રોતારં પરીક્ષ્યોપદેષ્ટા હિસાદિના નોપલિપ્તો ભવતીતિ દર્શયતિ—‘દૃત્યં’
 इत्यादि ।

મૂલમ—દૃત્યં પિ જાણ સેયંતિ નત્થિ, કેયં પુરિસે કં ચ નણ,
 एस वीरे पसंसिए जे बद्धे परिमोयए, उड्डं अहं तिरियं दिसासु, से
 सबओ सबपरिन्नाचारी, न लिप्पइ छणपएण वीरे, से मेहावी
 जे अणुग्घायणखेयन्ने, जे य बंधपसुक्खमन्नेसी कुसले पुण नो
 बद्धे नो मुक्के ॥ सू० ९ ॥

મુનિ રાજાકા કોપભાજન હો જાયગા । રાજા યહ સમજ્ઞ લેગા કિ યહ
 મુનિ સર્વધર્મસે બાહ્ય હૈ, રાજધર્મ કયા હૈ? હસે મી યહ નહીં
 જાનતા હૈ । અરે ! જબ યહ નીતિધર્મ તક નહીં જાનતા હૈ તો મોક્ષધર્મ
 કી બાત હી કયા કહની ? યહ વિલકુલ જડ-અબુધ હૈ । એસે વ્યક્તિયોં કે
 અસ્તિત્વકી કયા આવશ્યકતા હૈ? હસ પ્રકાર રાજા દ્વારા ઉપેક્ષિત બન યષ્ટિ-
 મુષ્ટિ આદિજન્ય અનેક કષ્ટોંકો ભોગતા હુઆ વહ મુનિ વહાંસે નિકાલ
 દિયા જાતા હૈ; અથવા કારાગારમં બંદ કર દિયા જાતા હૈ । ડસકે વસ્ત્રાદિક
 મી છીન લિયે જાતે હૈ । શરીરકા છેદન કર ડસકે પ્રાણ તક મી લે
 લિયે જાતે હૈ । હસલિયે ઉપદેષ્ટાકા યહ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
 દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકા અચ્છી તરહ વિચાર કર અપને ઉપદેશકા
 પ્રવાહ વહાવે । એસા ઉપદેશ ન કરે કિ જિસસે સ્વયંકો અનેક કષ્ટોંકા
 યા પ્રાણોંકે વિનાશકા સામના કરના પડે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ભોગ બનશે રાજા એવુ સમજી લેશે કે આ મુનિ સર્વ ધર્મથી બાહ્ય છે,
 રાજધર્મ શુ છે? તે પણ આ બાણુતો નથી અરે । બ્યારે આ નીતિધર્મ મુધી
 પણ બાણુતો નથી તો મોક્ષધર્મની વાત જ શુ કરવી? આ બિલકુલ જડ-
 અબુધ છે, આવી વ્યક્તિઓના અસ્તિત્વની શુ આવશ્યકતા છે? આવા પ્રકારે
 રાજાદ્વારા ઉપેક્ષિત બની યષ્ટિ-મુષ્ટિ આદિ જન્ય અનેક કષ્ટોને ભોગવતા તે
 મુનિને ત્યાથી હાકી કાઢે છે, અગર કારાગારમા મોકલી દેવામાં આવે છે તેના
 વસ્ત્રો પણ આચકી લેવામાં આવે છે તેના શરીરનુ છેદન કરી તેનો પ્રાણ પણ
 લઈ લેવામાં આવે છે માટે જ ઉપદેષ્ટાનુ એ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય છે કે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર
 કાળ અને ભાવનો સારી રીતે વિચાર કરી પોતાના ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે
 એવો ઉપદેશ ન આપે કે જેનાથી પોતાને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે
 અને પ્રાણ પણ ગુમાવે ॥ સૂ ૮ ॥

છાયા — અત્રાપિ જાનીદિ શ્રેય ઇતિ નાસ્તિ, કોડ્ય પુરુષઃ ક ચ નતઃ, એ વીરઃ
મંત્રસિતઃ, યો યદ્વાન પરિમોચયતિ, ઋર્ધ્વમધસ્તિર્યષ્ઠ દિશાસુ, સ સર્વત સર્પપરિ
જ્ઞાચારી, ન સ્થિપ્યતે સળપદેન યીરઃ, સ મેધાવી યઃ અણોદાતનસેદ્ધ , યથ યન્ધ-
મમોક્ષાન્વપી કુચ્છલઃ પુનર્નો યદ્વો નો મુક્તઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘અત્રાપી’—સ્પાદિ, અત્ર=ધર્મકથાયાં શ્રેયઃ=કલ્યાણમ્ ઇતિ અપિ=
નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન વિદ્યતે પ્રત્યુત કર્મબંધો મયસીતિ જાનીદિ=મુખ્યસ્વ સમિતિ
શેષ , ફેવ ટાવન્નાનિષ્ઠમપિ ચ પરત્રાપિ સત્પ્રસન્નમેતેત્યર્થ .

જો ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓનો સમજાવક દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકો
અનુસાર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કિસીકે સ્ત્રી કોપકા અથવા દુષ્ટાદિકકા
પાત્ર નહીં હોતા હૈ, યહ સમજાતે હૈ—“પત્યંપિ જાણ” ઇત્યાદિ .

વક્તાકો યહ યકાન્તરૂપસે માનના બાહિયે કિ ધર્મકથા કરનેમે
નિશ્ચયસે કલ્યાણ હી હોતા હૈ, પરન્તુ બિના દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવકા ધ્યાન
રખે ધર્મકથા કરે તો વહ કર્મબંધકા કારણ સ્ત્રી હો જાતી હૈ . વીતરાગ
ભાવસે જહા જય-પરાજય હોનેકા કુછ સ્ત્રી ચમ્પાલ નહીં હૈ, સિર્ફ, યે
પ્રાણી કૈસે સદ્ધર્મકા આશ્રય કરે ? હસી સદ્ધિપ્રાપ્તસે જો કથા ફી જામી
હૈ, અથવા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ વહી ધર્મકથા હૈ . દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકકા વિચાર
કિયે બિના હી જો ઉપદેશ કિયા જાયગા ઉમસે સંમથતઃ ઉપદેષ્ટા કો
અનેક અનર્થોકા સામના સ્ત્રી કરના પડેગા, હસલિયે ધર્મકથાકે કરનેમે
શ્રેયકા ધ્યાન રખના બાહિયે, ક્યોં કિ અપની પ્રકૃતિકે અનુસાર જીવો કો

ને ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને સમજાવે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવ અનુસાર
ઉપદેશ કરે ॥ તે કાઈના પણ કાંઈના તેમજ હાલિકાના પાત્ર થતા નથી. તે
સમજાવે છે—“પત્યંપિ જાણ” ઇત્યાદિ.

વક્તાએ જો કાલ રૂપથી માનવું જોઈએ કે ધર્મ કથા કરવામાં નિશ્ચય કલ્યાણ
જ થાય ॥ પરંતુ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવને ધ્યાન રાખ્યા વિના ધર્મ કથા
કરે તો કર્મબંધનું કારણ પણ બની જાય છે.

વીતરાગ ભાવથી જ્યાં જ્યાં પરાજય દેવાનો જશ પણ જાણ નથી, દેષ્ટ
આ પ્રાણી કેવી રીતે સદ્ધર્મના આશ્રય કરે ? જોના પ્રકારના સદ્ધિ પ્રાપ્તિથી
ને કથા કરવામાં આવે છે અથવા ઉપદેશ આપવામાં આવે છે તે જ ધર્મ કથા
છે. દ્રવ્યક્ષેત્રાદિકનો વિચાર કર્યા વિના જો ઉપદેશ આપવામાં આવે તો વિના
સદ્ધિ ઉપદેષ્ટાને અનેક અનર્થોના સામના જ કરના પડે, મારે ધર્મ કથા કરવામાં
પરંતુ ધ્યાન રાખવું જોઈએ. કારણ કે પોતાની પ્રકૃતિ અનુસાર પોતાને જે જે

યદ્વા—અત્રાપિ યદ્યદ્વિધિજલ્પનં હિંસકોઽયં રાજેત્યાલોચ્ય પશુવધાદિરૂપ હિં-
સાધર્મમણ્ડનાત્મકં ચાર્વાકાદિમતસ્થાપનં ચ, તત્ર સર્વત્રાપિ શ્રેયો નાસ્તિ શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધત્વાત્ । તર્હિ કથમુપદિશેદિત્યાહ—‘ કોઽય ’—મિત્યાદિ, શ્રોતારં સમીક્ષ્યોપ-
દેષ્ટા ચેતસિ ચિન્તયેત્, કોઽયં પુરુષઃ કં ચાયં ધર્મં પરિવૃચ્છતિ, સોઽયં કઃ કિ
પુણ્યવાન્ ઉત તુચ્છઃ ? । યદ્વા—અયં વક્રો વા જડો વા વક્રજડો વા પુરુષઃ, કં
ચ=દેવવિશેષં નતઃ=પ્રણતઃ કં દેવમુપાસ્તે વા ? ।

જો હિતાવહ-ઈષ્ટ હોતા હૈ વહ અન્ય જીવોંકે લિયે મી હિતાવહ હોગા,
યહ નહીં માના જા સકતા । સમ્યગ્દૃષ્ટિ અથવા મન્યપુરુષકે લિયે જિસ
ઉપદેશસે આત્મકલ્યાણ કરનેકી ઓર સતર્કતા જાગૃત હોતી હૈ ઉસી
ઉપદેશસે મિથ્યાદૃષ્ટિમેં સતર્કતા જાગૃત ન હોકર પ્રત્યુત કલુષતા જાગૃત
હો સકતી હૈ ।

અથવા—“ યહ રાજા હિંસક હૈ ” એસા વિચાર કર પશુવધાદિરૂપ
હિંસાધર્મકા મણ્ડન, તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિક મતકા સ્થાપનરૂપ કથન
કરના મી ઉપદેશકકે લિયે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । ઇસસે અનેક
અનર્થોંકી પરમ્પરા બઢતી હૈ । તથા ઇસ પ્રકારકી માન્યતા મી શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધ હૈ । અતઃ દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતાકો દવાકર ઉસકી
હાં મેં હાં મિલા કર જો ઉપદેશક ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કલ્યાણકારી
માર્ગ નહીં હૈ । ઇસ સમસ્ત કથનસે યે દો વાતેં ફલિતાર્થ હોતી હૈ—એક તો
અવસર દેખે વિના ધર્મકથા કરનેમેં એકાન્તરૂપસે કલ્યાણ નહીં હૈ તથા
દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતા બનાકર ઉપદેશ દેના, યહ મી

હિતાવહ-ઈષ્ટ થાય છે તે તે અન્ય જીવો માટે પણ હિતાવહ થશે તેમ માની શકાતું
નથી સમ્યગ્દૃષ્ટિ અથવા ભવ્ય પુરુષો માટે જે ઉપદેશથી આત્મકલ્યાણ કરવાની
તરફ સતર્કતા જાગૃત થાય છે તે જ ઉપદેશથી મિથ્યાદૃષ્ટિમા સતર્કતા જાગૃત
થતી નથી બલકે કલુષતા જાગૃત થાય છે, અથવા “ રાજા હિંસક છે ” એવો
વિચાર કરી પશુવધાદિરૂપ હિંસાધર્મનું મંડન તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિકમતનું
સ્થાપન રૂપ કથન કરવું તે પણ ઉપદેશક માટે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નથી તેનાથી
અનેક અનર્થોની પરપરા વધે છે તથા આ પ્રકારની માન્યતા પણ શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધ છે, માટે બીજાઓની માન્યતાનુસાર પોતાની માન્યતાઓને દબાવીને તેની
હા મા હા મેળવી જે ઉપદેશક ઉપદેશ કરે છે તે કલ્યાણકારી માર્ગ નથી.
આ સમસ્ત કથનથી એ બે વાતો સિદ્ધ થાય છે કે—એક તો અવસર દેખ્યા
વિના ધર્મકથા કરવામા એકાન્તરૂપથી કલ્યાણ નથી તથા, બીજાઓની માન્યતા-
નુસાર પોતાની માન્યતા બનાવીને ઉપદેશ આપવો એ પણ કલ્યાણકારી માર્ગ

યદ્વા-ઈ-કૃતરં ધર્મ-સાક્ષરં ચૌદમ-યં ચા નતઃ-મતિપન્ન, ઉપલક્ષણાત્,
 કિમયં મિથ્યાદૃષ્ટિસ્ત સમ્યગ્દૃષ્ટિ કેન ચાઽઽશ્ચયનાઈ પૃષ્ઠ ? , ઇત્યાદિફમપિ
 સમાસાશ્ચ ધર્મમુપદિશેદિત્યર્થઃ, ચશમ્બાદૃશકાળાદીના સમાલોચના કર્તવ્યા ।
 યથેવ ત્રિચાગ્યોપદિશ્નતિ, एषः=ઉપદેશ વાદિમાનમર્દનપૂર્વકપ્રવચનપરિમચ્છન-
 સમર્થઃ, પ્રશંસિત=ગણધરાદિમિ શ્રીયતિ, ચા યદ્વાન=અષ્ટધિપાત્રનિગદિતાન

કલ્યાણપદ માર્ગ નહીં છે । યદિ એમા છે તો ઉપદેશ કેસા હોના ચાહિયે ?
 इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि सर्वप्रथम उपदेष्टा श्रोताओंको भली
 प्रकार देख कर जिसमें यह विचार करे कि जो यह मुझसे धर्मको पूछता
 है, वह पुण्यात्मा है या तुच्छात्मा है? अथवा वह है या जड़ है? अथवा
 वह जड़ दोनों स्वभाववाला है? किस देवका उपासक है? किस
 मतका अनुयायी है—सांख्यमतका या बौद्धधर्मका? । उपलक्षणसे यह
 मिथ्याદृष्टि है अथवा नम्यगृह्णति है? यह भी जान लेना चाहिये । यह
 जो मुझसे धर्मविषयक प्रश्न पूछता है सो किस अभिप्रायसे पूछता है ?
 इत्यादि समस्त बातोंका विचार कर उपदेशकको धर्मका उपदेश देना
 चाहिये । साथमें देशकालादिकका भी विचार करना आवश्यक है । जो
 उपदेशक इस प्रकारकी समस्त बातोंका विचार कर उपदेश करता है वह
 चादियोंके मानका मर्दन करता हुआ अपने सिद्धान्तकी स्थापना करनेमें
 समर्थ होता है । इस प्रकार गणधराविकोंसे प्रशंसित वह उपदेशक आठ
 प्रकारके कर्मरूपी पाशसे जकड़े हुए प्राणियोंको अपने धर्मोपदेशसे

નથી હવે આવુ છે તે ઉપદેશ કેવો હોવો જોઈએ ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે
 છે કે—સર્વ પ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને ભલી પ્રકાર દેખીને ચિત્તમા એ વિચાર
 કરે કે જે આ મને ધર્મ વિશે પૂછે છે તે પુણ્યાત્મા છે ચા તુચ્છાત્મા છે ?
 અથવા વજ્ર છે ચા જડ છે ? અથવા વજ્ર અને જડ બન્ને સ્વભાવવાળા છે ? કયા
 દેવતા ઉપાસક છે ? કયા મતના અનુયાયી છે—સાંખ્યમતના ચા બૌદ્ધધર્મના ?
 ઉપલક્ષણથી મિથ્યાદૃષ્ટિ છે ચા સમ્યગ્દૃષ્ટિ ? એ પણ જાણી લેવું જોઈએ આ
 જે મને ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછે છે તે કયા અભિપ્રાયથી પૂછે છે ? ઇત્યાદિ સર્વ
 વાતોને વિચાર કરી ઉપદેશકેએ ધર્મને ઉપદેશ દેવો જોઈએ સાધમા દેશ
 કલ્યાણિકોનો પણ વિચાર કરવો આવશ્યક છે જે ઉપદેશક આ પ્રકારની સમસ્ત
 વાતોને વિચાર કરી ઉપદેશ આપે છે તે પારિજિના માનવ મદન કરીને પોતાના
 સિદ્ધાંતની સ્થાપના કરવામા સમર્થ થાય છે આ પ્રકારે અણુમણિકોથી પ્રશંસિત
 તે ઉપદેશક આઠ પ્રકારના કમરૂપી પાશથી જકડાયેલા પ્રાણીઓને પોતાના ધર્મ

પ્રાણિનો ધર્મોપદેશેન પરિમોચયતિ=સંસારકારાગારાન્નિષ્કાશયતિ સ એવ ઊર્ધ્વમધ-
સ્તિર્યશ્ચુ લોકેષુ સર્વતઃ=સર્વાસુ દિશાસુ દશસુ દિક્ષિત્યર્થઃ, સર્વપરિજ્ઞાચારી-સર્વા-
ચાસૌ પરિજ્ઞા સર્વપરિજ્ઞા તયા જ્ઞપ્રત્યાખ્યાનરૂપયા દ્વિવિધયાઽઽચરિતું શીલં યસ્ય
સ સર્વપરિજ્ઞાચારી-સમસ્તહેયોપદેયકુશલઃ। અત્રાયં વિવેકઃ-જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વિવિધા-
છાદ્યસ્થિકી કેવલિકી ચ, તત્ર છાદ્યસ્થિકી મતિશ્રુત્યવધિમનઃપર્યવભેદેન ચતુર્વિધા,
કેવલિકી કેવલજ્ઞાનરૂપૈકૈવ, મૂલોત્તરગુણભેદેન પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાઽપિ દ્વિવિધા,
યદ્વા સર્વપરિજ્ઞાચારી યો વિધિકથનગુણાન્ જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વાઽવિધિકથનદોષાંશ્ચ

સંસારરૂપી કારાગારસે સુક્ત કર દેતા હૈ । એસા ઉપદેશક હી ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા ઇસ તિર્યગ્લોકમેં ઓર સમસ્ત દિશાઓમેં સર્વપરિજ્ઞા-
ચારી હોતા હૈ । સમસ્તપરિજ્ઞાકા નામ સર્વપરિજ્ઞા હૈ । સર્વપરિજ્ઞાસે જિસ
કા આચરણ કરનેકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી હૈ । પરિજ્ઞા
દો પ્રકારકી હૈ (૧) જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર (૨) પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા । ઇન દોનોં
પ્રકારકી પરિજ્ઞાસે વહ યુક્ત હોતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત હેય ઓર ઉપા-
દેયમેં વહ કુશલ હો જાતા હૈ । ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-જ્ઞપરિજ્ઞા દો
પ્રકારકી હૈ-(૧) છદ્વસ્થ-સમ્બન્ધી ઓર (૨) કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી ।
છદ્વસ્થ-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃ
પર્યવજ્ઞાનકે ભેદસે ચાર પ્રકારકી હૈ । કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા એક
કેવલજ્ઞાનરૂપ હી હૈ, ઉસકે ભેદ નહીં હૈ । પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા ભી સૂલગુણ
ઓર ઉત્તરગુણકે ભેદસે દો પ્રકારકી હૈ । જો ઉપદેશક વિધિકે કથનકે
ગુણોં કો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર અવિધિ કે કથનકે દોષોંકો પ્રત્યાખ્યાન-

ઉપદેશથી સંસારરૂપી કારાગારથી મુક્ત કરે છે તેવા ઉપદેશક જ ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા આ તિર્યગ્લોકમાં અને સમસ્ત દિશાઓમાં સર્વ પરિજ્ઞાચારી
થાય છે સમસ્તપરિજ્ઞાનું નામ સર્વપરિજ્ઞા છે સર્વપરિજ્ઞાથી જેનું આચરણ કરવાનો
સ્વભાવ છે તેનું નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી છે પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે (૧) જ-પરિજ્ઞા
અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, આ બંને પ્રકારની પરિજ્ઞાથી તે મુક્ત બને છે
અર્થાત્ સમસ્ત હેય અને ઉપાદેયમાં તે કુશળ બની બાંધ છે તેનો ભાવ એ છે
કે-જપરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે (૧) છદ્વસ્થસબધી અને (૨) કેવળજ્ઞાની સબધી
છદ્વસ્થસબધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાનના
લેદથી ચાર પ્રકારની છે કેવળજ્ઞાનીસબધી પરિજ્ઞા એક કેવળજ્ઞાનરૂપ જ છે,
તેના લેદ નથી પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા પણ મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણના લેદથી બે
પ્રકારની છે જે ઉપદેશક વિધિના કથનના ગુણોને જ-પરિજ્ઞાથી બાણીને અને

પ્રત્યાસ્થાનપરિહયા પરિહરતિ, અથ એવ સર્વેતિ કથનં સંગતમ્ । એવમૂતોડસૌ
 ક્રિમાસાદયતીત્યાહ-‘ ન લિપ્યત ’ ઇત્યાદિ, વીર-પ્રત્યાસ્થાનપ્રવેશધર્મપ્રમાત્રપ્રધાર
 શક્તિસમ્પન્ન જાણપદેન હિંસાસ્થાનેનાત્મસંયમવિરાધનારૂપેણ ન લિપ્યતે-નોપલિપ્યો
 મયતિ આક્રોશનોદ્બુધ્વસનનબાદિનાઽઽત્મવિરાધકો જ્ઞાનાદિપ્રમાધારાનાધરણેન

પરિજ્ઞાસે છોડ દેતા હૈ વહ ઉપદેશક મી સર્વપરિજ્ઞાચારી કહલાતા હૈ । હસ
 અપેક્ષાસે પરિજ્ઞાકે સાથ ‘ સર્વ ’ યહ વિશેષણ સંગત થૈઠતા હૈ । હસ
 પ્રકારકા ઉપદેશક કિ જો આત્માકે પ્રત્યેક પ્રદેશમેં ધર્મકા પ્રચાર કરને
 કી શક્તિસે સમ્પન્ન હૈ વહ હિંસાકે સ્થાનમૂલ અપની આત્માકી વિરાધના
 સે તથા સંયમકી વિરાધનાસે કમી મી ઉપલિપ્ત નહોં હોતા હૈ । તાત્પર્ય
 યહ કિ વહ ઉપદેશક-આક્રોશન, ઉદ્બુધ્વસન ઓર વધાદિકસે અપની
 આત્માકી વિરાધના કરનેવાલા નહોં હોતા હૈ, ઓર ન જ્ઞાનાધાર વર્ણના
 ધાર ઓર તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારકે આચારોકે અનાધરણસે
 સંયમકા હી વિરાધક હોતા હૈ, કયોં કિ વહ હન દોનોં પ્રકારકી વિરા-
 ધના કે કટુક ફલકો મલી પ્રકાર જાનતા હૈ । હસે યહ પૂર્ણ રૂપસે
 વિશ્વાસ હૈ કિ જો હન દોનોં પ્રકારકી યા કિસી મી એકપ્રકારકી વિરા-
 ધનાકા કરનેવાલા હોતા હૈ હસે સંસારમેં હી ભ્રમણ કરના પડતા હૈ,
 કારણ કિ હસ પ્રકારકી વિરાધનાસે જીવ અશુભકમોંકા હી થક કરતા
 હૈ ઓર હનકા ફલ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરના હૈ । હસ સંસારકે

અભિપ્રિય કથનના દોષોને પ્રત્યાખ્યાન-પરિહારી છોડી આપે છે તે ઉપદેશક
 પણ સર્વપરિજ્ઞાચારી કહેવાય છે આ અપેક્ષાથી ‘ પરિજ્ઞા ની સાથે ‘ સર્વ ’ આ
 વિશેષણ સંગત બેસે છે આ પ્રકારના ઉપદેશક જે આત્માના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં
 ધર્મનો પ્રચાર કરવાની શક્તિથી સમ્પન્ન છે તે હિંસાના સ્થાનમૂલ પોતાના આત્માની
 વિરાધનાથી તથા અન્યની વિરાધનાથી કદિ પણ ઉપલિપ્ત થતા નથી તાત્પર્ય
 એ છે કે તે ઉપદેશક-આક્રોશન ઉદ્બુધ્વસન અને વધાદિકથી પોતાના આત્માની
 વિરાધના કરવાવાળા થતા નથી, તેમજ જ્ઞાનાધાર, વર્ણનાધાર અને તપઆધાર
 આદિ પાંચ પ્રકારના આધારોના અનાધરણથી સંયમના વિરાધક બનતા નથી,
 કારણ કે તે એ બંને પ્રકારની વિરાધનાના કટુ ફળને સારી રીતે બાળે છે તેને
 પૂર્ણ રીતે વિશ્વાસ છે કે જે આ બંને પ્રકારની અગર કોઈપણ એક પ્રકારની
 વિરાધનાના કરવાવાળા હોય છે તેને સંસારમાં જ ભ્રમણ કરવું પડે છે કારણ
 કે આ પ્રકારના વિરાધનાથી હવ અશુભ કોમોંકા જ બને છે અને તેનું ફળ
 ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ થાય છે ‘ આ સંસારના કારણમૂલ ધર્મનો નાશ

સંયમવિરાધકો ન ભવતીત્યભિપ્રાયઃ । અન્યદપિ વીરકર્તવ્યમાહ-‘સ મેધાવી’-
ત્યાદિ, સઃ=મુનિઃ મેધાવી=વિદિતાત્મસંયમવિરાધનકટુકફલો યઃ અળોદ્ધાતનખેદજ્ઞઃ-
અળતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારં તદળં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનમ્ અળોદ્ધાતનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞઃ=નિપુણઃ, યશ્ચ વન્ધપ્રમો-
ક્ષાન્વેષી-વન્ધસ્ય=પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાવપ્રદેશરૂપસ્ય પ્રમોક્ષઃ=પ્રકર્પેણ મોક્ષસ્તદુપાયો
વા રત્નત્રયરૂપસ્તમન્વેષ્ટું=ગવેષયિતું શીલં યસ્ય સ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી, યોઽળો-
દ્ધાતનખેદજ્ઞો યશ્ચ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી સ એવ મેધાવી ભવતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

કારણભૂત કર્મકો નાશ કરનેકે લિયે હી તો મૈને યહ મુનિવેષ ધારણ
કિયા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર-“અળુગઘાયણખેયન્ને”
‘અળોદ્ધાતનખેદજ્ઞઃ’ ઇસ પદસે કી હૈ-“અળતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિ-
ગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અળં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન ઘાતનમ્=
અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞઃ” ઇતિ । અર્થાત્-જિસકે દ્વારા પ્રાણિ-
સમૂહ ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસારમેં ભ્રમણ કરતા હૈ વહ અળ-કર્મ હૈ,
ઉસ કર્મકે વિનાશ કરનેમેં જો નિપુણ હૈ વહ અળોદ્ધાતનખેદજ્ઞ હૈ । જો
બંધકે નાશ કરનેકા અથવા ઉસકે નાશ કરનેકે ઉપાયોંકે અન્વેષણ કરને
કા સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ સંસારકે કારણભૂત કર્મકે વિનાશ કરનેમેં
કુશલ હોતા હૈ ।

શાસ્ત્રમેં વન્ધકે ચાર ભેદ વતલાયે ગયે હૈ—(૧) પ્રકૃતિવન્ધ, (૨)
સ્થિતિવન્ધ, (૩) અનુભાગવન્ધ, (૪) પ્રદેશવન્ધ । ઇનકા અત્યન્ત અભાવ
હોના વહ વન્ધપ્રમોક્ષ હૈ । અથવા ઇનકે અત્યન્ત અભાવ હોનેમેં કારણભૂત

કરવા માટે જ મે મુનિપણનો વેશ લીધો છે ’ આ અભિપ્રાયની પુષ્ટિ સૂત્રકાર
“અળુગઘાયણખેયન્ને” અળોદ્ધાતનખેદજ્ઞઃ એ પદથી કરેલ છે “અળતિ-
ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અળં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞ, ઇતિ, અર્થાત્ જેના દ્વારા પ્રાણીસમૂહ
ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમા ભ્રમણ કરે તે અળ=કર્મ છે તે કર્મનો વિનાશ કરવામા
જે નિપુણ છે તે અળોદ્ધાતનખેદજ્ઞ છે જે બંધનો નાશ કરવાના, અથવા તેનો
નાશ કરવાના ઉપાયોનુ અન્વેષણ કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે સંસારના
કારણભૂત કર્મનો વિનાશ કરવામા કુશળ હોય છે

શાસ્ત્રમા બંધના ચાર ભેદ બતાવેલ છે (૧) પ્રકૃતિબંધ (૨) સ્થિતિબંધ
(૩) અનુભાગબંધ, અને (૪) પ્રદેશબંધ તેનો અત્યંત અભાવ થવો તે બંધપ્રમોક્ષ
છે અથવા તેના અત્યંત અભાવ હોવાના કારણભૂત જે રત્નત્રયાદિક ઉપાય છે

નતુ ય એવ ઋણોદ્ધાતનસેવકઃ સ એવ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી चेति पौनरुक्त्यं समापतितमिति चेन्न—‘अणोद्धातनसेवकः’ इत्यनेन मूलोत्तरमकृतिमेदविशिष्टस्य योगनिमित्तेन प्राप्तस्य कपायस्थितिमतः कर्मणो बद्धस्पृष्टनिषचनिकाचितरूपबन्धमानावस्यापास्तदूरीकरणोपायस्य च सम्यग्ज्ञातेत्यस्यार्थस्याभिहितत्वाद् बन्धप्रमोक्षेत्यादिना च केवलं तदूरीकरणानुष्ठानस्याभिहितत्वात् ।

જો રત્નઘડ્યાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હૈં ‘બંધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા ગયા હૈ । બંધપ્રમોક્ષકા અથવા इनके उपायोका अन्वेषण करनेका जिसका स्वभाव है वह बंधप्रमोक्षान्वेपी है । जो अणोद्धातनकुशल और बंधप्रमोक्षान्वेपी है वही मेधावी होता है ।

શક્ત—જો અણોદ્ધાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । ફિર હસ પ્રકારકે કથનસે તો દોનોં શબ્દોકે અર્થોમેં પરસ્પરમેં સમાનતા આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—यह बात नहीं है—“अणोद्धातनसेवक” इस शब्दसे “मूल और उत्तरमेद विशिष्ट योगके निमित्तसे गृहीत और कपायसे स्थिति युक्त, ऐसे कर्मोंकी बद्ध, स्पृष्ट, निषत्त और निकाशितरूप बन्धमान अवस्थामोंका और कर्मोंको दूर करनेवाले उपायोंका वह सम्यग्ज्ञाता है” यह अर्थ प्रतिपादित किया गया है । ‘बन्धप्रमोक्षान्वेपी’ इस शब्द से सिर्फ उनके दूर करनेवाले अनुष्ठानका प्रतिपादन किया गया है ।

તેને પણ બંધપ્રમોક્ષ શબ્દથી બહુ કરવામાં આવેલ છે બંધપ્રમોક્ષનું અથવા તેના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાનો જોનો સ્વભાવ છે તે બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે એ અણોદ્ધાતનકુશળ અને બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી કહેાય છે.

શ કૃ—એ અણોદ્ધાતનમાં કુશળ છે તે જ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે એ પ્રકાશના કથનથી તો બન્ને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમાં સમાનતા અવવાધી પુનરુક્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે

ઉત્તર—એ વાત નથી “अणोद्धातनसेवक” આ શબ્દથી “મૂલ અને ઉત્તરભેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કપાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા કર્મોની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિષત્ત અને નિકાશિતરૂપ બંધમાન અવસ્થાઓના, અને તેવા કર્મોને દૂર કરવાવાળા ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ છે. તથા ‘बन्धप्रमोक्षान्वेपी’ આ શબ્દથી કૃકૃ તેને દૂર કરનાર અનુષ્ઠાનનું પ્રતિપાદન કરેલ છે

નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે-કેવલિનોઽળોદ્ધાતેત્યાદિ-વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિં કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ-‘કુશલ’ ઇત્યાદિ । કુશલઃ=કેવલી તીર્થદ્વરઃ સામાન્યકેવલી વા પુનઃ ન વદ્ધઃ ઘાતિકર્મણો નાશાત્, ન મુક્તઃ=ભવોપગ્રાહિકર્મસત્ત્વાત્ । વાહ્યાભ્યન્તરસાવધ્યાનુષ્ઠાનૈશ્વ મુક્તઃ, ભવોપગ્રાહિકર્મણઃ સત્ત્વેન વદ્ધોઽપિ ।

યદ્વા છદ્મસ્થ એવ કુશલપદેનોચ્યતે, તેન કુશલઃ=પ્રાપ્તરત્નત્રયઃ, ન વદ્ધઃ=અનન્તાનુવન્ધ્યાદિકષાયાનલોપશમાદિસત્ત્વાત્, ન મુક્તઃ=ઇદાનીમપિ તત્કર્મસત્ત્વાત્, અજ્ઞાનાવિરતિમિથ્યાત્વૈશ્વ મુક્તઃ, પ્રશસ્તૈસ્તુ ચારિત્રતપોવિનયાદિભિર્વા ન મુક્તઃ ॥૨૦૯॥

શઙ્કા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અળોદ્ધાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભવિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થદ્વર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો ભી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે વદ્ધ ભી હૈં ।

અથવા-‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્નત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઇસકે અનન્તાનુવન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શ કા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમા “ અળોદ્ધાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા નથી આ બંને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “કુશલ” આ શબ્દથી કેવળીનુ ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થદ્વર હોય તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોના અભાવ થયેલ છે, અને મુક્ત પણ નથી કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોના તેને સદ્ભાવ છે જે કે બાહ્ય અને આભ્યંતર સાવધ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે

અથવા “કુશલ” આ પદથી છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત કરેલ છે તે કુશલ છે તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનંતાનુબંધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિનુ ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

નતુ ય એન અળોદ્ઘાતનલેદશ્ચઃ સ એવ ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી ષેતિ પૌનરુત્થ સ-
માપતિતમિતિ ચેદ્—‘અળોદ્ઘાતનલેદશ્ચઃ’ ઇત્યનેન મૂલોત્તરપ્રકૃતિમેદવિશિષ્ટસ્ય
યોગનિમિત્તેન પ્રાપ્તસ્ય કપાયસ્થિતિમતઃ કર્મણો ષટ્સ્પૃષ્ટનિષ્પત્તિકાચિતરૂપબધ્યમા-
માનાવસ્યાયાસ્તદ્દૂરીકરણોપાયસ્ય ચ સમ્યગ્જ્ઞાતેત્યસ્યાર્યસ્યામિહિતત્વાદ્ બન્ધમ-
મોક્ષેત્યાદિના ચ કેવલં તદ્દૂરીકરણાનુષ્ઠાનસ્યામિહિતત્વાત્ ।

જો રત્નપ્રયાદિક ઉપાય છે તો ‘ય ધન્યપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા
ગયા છે । ય ધન્યપ્રમોક્ષકા અથવા ઇનકે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા
સ્વભાવ છે વહ ય ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી છે । જો અળોદ્ઘાતનકુશલ ઔર ય ધ
પ્રમોક્ષાન્વેષી છે વહી મેધાવી હોતા છે ।

શક્ત—જો અળોદ્ઘાતનમેં કુશલ છે વહી તો ય ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી છે ।
ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો ઘોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા
આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા છે ।

ઉત્તર—યહ વાત નહીં છે—“અળોદ્ઘાતનલેદશ્ચ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ
ઔર ઉત્તરમેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે ગૃહીત ઔર કપાયસે સ્થિતિ
યુક્ત, એસે કર્મોંકી ષટ્, સ્પૃષ્ટ, નિષ્પત્ત ઔર નિકાચિતરૂપ બધ્યમાન
અવસ્થાઓંકા ઔર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા
છે” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા છે । ‘ય ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ
સે સિર્ફ ઊંકો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા છે ।

તેને પણ બ ધન્યપ્રમોક્ષ શબ્દથી શરૂ કરવામા આવેલ છે બ ધન્યપ્રમોક્ષનુ, અથવા
તેના ઉપાયોંનુ અન્વેષણ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે બ ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી છે
જે અળોદ્ઘાતનકુશલ અને બ ધન્યપ્રમોક્ષા વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે

શક્ત—જે અળોદ્ઘાતનમાં કુશલ છે તે જ બ ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, જે
પ્રકાશના કથનથી તો જાને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમા સમાનતા અથવાથી
પુનરુક્તિ હોયને પ્રસન્ન આવે છે

ઉત્તર—જે વાત નથી “અળોદ્ઘાતનલેદશ્ચ” આ શબ્દથી “મૂલ અને
ઉત્તરમેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કપાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા
કર્મોંની બદ્ધ સ્પૃષ્ટ, નિષ્પત્ત અને નિકાચિતરૂપ બધ્યમાન અવસ્થાઓના અને તેના
કર્મોંને દૂર કરવાવાળા ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ
છે તથા ‘ય ધન્યપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દથી શક્ય તેને દૂર કરવાર અનુષ્ઠાનનુ
પ્રતિપાદન કરેલ છે

નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે—કેવલિનોઽણોદ્ધાતેત્યાદિ-વિશેષણાસમ્ભવાછદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિં કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ—‘કુશલ’ ઇત્યાદિ । કુશલઃ=કેવલી તીર્થઢ્કરઃ સામાન્યકેવલી વા પુનઃ ન વદ્ધઃ ઘાતિકર્મણો નાશાત્, ન મુક્તઃ=ભવોપગ્રાહિકર્મસત્ત્વાત્ । વાહ્યાભ્યન્તરસાવધાનુષ્ઠાનૈશ્વ મુક્તઃ, ભવોપગ્રાહિકર્મણઃ સત્ત્વેન વદ્ધોઽપિ ।

યદ્વા છદ્મસ્થ એવ કુશલપદેનોચ્યતે, તેન કુશલઃ=પ્રાપ્તરત્નત્રયઃ, ન વદ્ધઃ=અનન્તાનુવન્ધ્યાદિકષાયાનલોપગમાદિસત્ત્વાત્, ન મુક્તઃ=ઇદાનીમપિ તત્કર્મસત્ત્વાત્, અજ્ઞાનાવિરતિમિધ્યાત્વૈશ્વ મુક્તઃ, પ્રશસ્તૈસ્તુ ચારિત્રતપોવિનયાદિભિર્વા ન મુક્તઃ ॥ સૂ. ૦૯ ॥

શઢ્કા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અણોદ્ધાતનસ્વેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભવિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થઢ્કર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો હી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે વદ્ધ હી હૈં ।

અથવા—‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્નત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઇસકે અનન્તાનુવન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શઢ્કા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમા “ અણોદ્ધાતનસ્વેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા નથી આ બન્ને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે હા “ કુશલ ” આ શબ્દથી કેવળીનુ ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થઢ્કર હોય તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોના અભાવ થયેલ છે, અને મુક્ત પણ નથી કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોના તેને સદ્ભાવ છે જે કે બાહ્ય અને આભ્યન્તર સાવધ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે

અથવા “ કુશલ ” આ પદથી છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત કરેલ છે તે કુશલ છે તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનતાનુબન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિનુ ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

નતુ ય ઇષ અણોદ્યાતનસ્થેવદ્વઃ સ ઇવ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી ષેતિ પૌનસ્ત્યં સ-
માપતિતમિતિ ચેન્ન—‘અણોદ્યાતનસ્થેવદ્વઃ’ ઇત્યમેન મૂલોચરપ્રકૃતિમેદવિશિષ્ટસ્ય
યોગનિમિત્તેન પ્રાપ્તસ્ય કપાયસ્થિતિમત્ કર્મણો વદ્વસ્યુદ્વનિષ્પન્નિકાષિતરૂપબધ્યમા-
નાવસ્થાયાસ્તદ્દૂરીકરણોપાયસ્ય ચ સમ્યગ્જ્ઞાતેત્યસ્યાર્થસ્માભિશિત્ત્વાદ્ બન્ધપ્ર-
મોક્ષેત્યાદિના ચ ક્લેવલં તદ્દૂરીકરણાદ્વુષ્ઠાનસ્યામિશિત્તાત્ ।

જો રત્નઘ્રયાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હૈં મી ‘બન્ધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે પ્રજ્ઞાન કર લિયા
ગયા હૈં । બન્ધપ્રમોક્ષકા અથવા ફનકે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા
સ્વભાવ હૈં વહ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । જો અણોદ્યાતનકુશલ ઔર બન્ધ
પ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં વહી મેધાવી હોતા હૈં ।

શક્ત—જો અણોદ્યાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં ।
ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો ઢોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા
આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—યહ ઘાત નહીં હૈં—“અણોદ્યાતનસ્થેવદ્વઃ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ
ઔર ઉત્તરમેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે યુક્ત ઔર કપાયસે સ્થિતિ
યુક્ત, ઢેસે કર્મોંકી વદ્વ, સ્પૃષ્ટ, નિષ્પન્ન ઔર નિકાષિતરૂપ બધ્યમાન
અવસ્થાઓંકા ઔર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા
હૈં” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈં । ‘બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ
સે સિર્ફ ઉનકો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં ।

તેને યહ બન્ધપ્રમોક્ષ શબ્દમી શ્રદ્ધા કરવામા આવેલ છે બન્ધપ્રમોક્ષનું અથવા
તેના ઉપાયોનું અવેશ કરવાના કોના સ્વભાવ છે તે બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે
જે અણોદ્યાતનકુશલ અને બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે

શ કૃ—જે અણોદ્યાતનમાં કુશલ છે તે જ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, જે
પ્રકારના કથનમી તે જાને શબ્દોના અર્થોમા પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી
પુનરુક્તિ દોષને પ્રસન્ન આવે છે

ઉત્તર—જે ઘાત નથી “અણોદ્યાતનસ્થેવદ્વઃ” આ શબ્દમી “મૂલ અને
ઉત્તરમેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી યુક્ત અને કપાયમી સ્થિતિયુક્ત કોવા
કર્મોંની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિષ્પન્ન અને નિકાષિતરૂપ બધ્યમાન અવસ્થાઓના અને તેવા
કર્મોંને દૂર કરવાવાળા ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ
છે તથા ‘બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દમી શ્રદ્ધા તેને દૂર કરવાર અનુષ્ઠાનનું
પ્રતિપાદન કરેલ છે

નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે—કેવલિનોઽણોદ્ઘાતેત્યાદિ-
વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિં કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ—‘કુશલ’
ઇત્યાદિ । કુશલઃ=કેવલી તીર્થદ્વરઃ સામાન્યકેવલી વા પુનઃ ન વદ્ધઃ ધાતિકર્મણો
નાશાત્, ન મુક્તઃ=ભવોપગ્રાહિકર્મસત્ત્વાત્ । વાહ્યાભ્યન્તરસાવચ્છાનુષ્ઠાનૈશ્વ મુક્તઃ,
ભવોપગ્રાહિકર્મણઃ સત્ત્વેન વદ્ધોઽપિ ।

યદ્વા છદ્મસ્થ એવ કુશલપદેનોચ્યતે, તેન કુશલઃ=પ્રાપ્તરત્નત્રયઃ, ન વદ્ધઃ=અન-
ન્તાનુવન્ધ્યાદિકપાયાનલોપગમાદિસત્ત્વાત્, ન મુક્તઃ=ઇદાનીમપિ તત્કર્મસત્ત્વાત્, અ-
જ્ઞાનાવિરતિમિથ્યાત્વૈશ્વ મુક્તઃ, પ્રશસ્તૈસ્તુ ચારિત્રતપોવિનયાદિભિર્વા ન મુક્તઃ ॥૨૭૦॥

શઙ્કા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભ-
વિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ
હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે
સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થદ્વર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે
ધાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવો-
પગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવચ્છ
કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો ખી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે
વદ્ધ ખી હૈં ।

અથવા—‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્ન-
ત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ
ઇસકે અનન્તાનુવન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શઙ્કા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમાં “ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સ ભવિત થતા
નથી આ બંને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “કુશલ”
આ શબ્દથી કેવળીનુ ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થદ્વર
હોય તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ધાતી કર્મોનો અભાવ થયેલ છે, અને
મુક્ત પણ નથી કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોનો તેને સદ્ભાવ છે જે કે બાહ્ય
અને આભ્યન્તર સાવચ્છ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી
કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે

અથવા “કુશલ” આ પદથી છદ્મસ્થનુ જ ગ્રહણ થયેલ છે જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત
કરેલ છે તે કુશલ છે તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનતાનુબન્ધી આદિ
કષાયરૂપ અગ્નિનુ ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

યથેતાદશ' કેવલી છદ્ધસ્યો વા સ યદ્વુષ્ઠિત્વવાન્ યન્નાત્તુવિષ્ઠતિ વા તદ
ન્યેનાપિ સાધુનાઽનુષ્ઠેયમિતિ દર્શયતિ—'સે જ ચ' ઇત્યાદિ ।

મૂઢમ્—સે જ ચ આરમે જ ચ નારમે, અનારઢ્ધ ચ ન
આરમે છળ છળ પરિણાય લોકસક્ત ચ સન્વસો ॥ સૂ. ૧૦ ॥

છાયા—સ યન્નારૂપત યન્વ નારમતે, અનારઢ્ધ ચ નારમેત સર્વ ધર્મ
પરિણાય લોકસક્ત ચ સન્વસ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—'સ ય' ઇત્યાદિ, સ=તીર્થંકર સામાન્યકેવલી પ્રાપ્તરત્નપ્રયોગ મુનિર્વા
જ્ઞાનાવરણીયાદિકમાપન્નયનાય યત્કર્મ તપ સયમચિનયાદિકં ચ આરમતે=વિદધાવિ
ઘટતે=પરાક્રમતે, યતતે વા, યન્વ તદ્વિપરીતં સમારહેતું મિથ્યાત્વાદિત્યાદિકં

મુક્ત ફલિલે નહીં હૈં કિ હમ સમય મી ઉસકે ઉસ ઉસ કર્મકા સદ્ભાવ
હૈં । અજ્ઞાન અધિરતિ ઔર મિથ્યાત્વ, હનસે વહ મુક્ત-રહિત હૈં, પરન્તુ
પ્રયત્ન ચારિત્ર, તપ ઔર ચિનયાદિસે મુક્ત-રહિત નહીં હૈં ॥ સૂ. ૧ ॥

હસ પ્રકારકે વાહે કેવલી હો વા છદ્ધસ્ય, પરન્તુ ડન્હોને જિસકા
આચરણ ક્રિયા ઔર જો આચરણ કર રહે હૈં વહ અન્ય સાધુકો મી
કરના વાહિયે, હસ યાનકો કહતે હૈં—'સે જ ચ' ઇત્યાદિ ।

તીર્થંકર સામાન્યકેવલી અથવા રત્નપ્રયોગે ધારી મુનિ, જે "સે"
હસ શાસ્ત્રે પ્રવ્રણ ક્રિયે ગયે હૈં । ડન્હોને જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મકે
નાશ કરનેકે લિયે જિન તપ સયમ ઔર ચિનયાદિકોકા અનુષ્ઠાન-
પાલન ક્રિયા હૈં, હનકે પાલન કરનેમેં જો પરાક્રમ વિગ્ધલાયા હૈં, તથા
હનકી આરાધના કરનેમેં જો પ્રયત્ન ક્રિયે હૈં, ઔર હનસે વિપરીત સંસાર

અમયે પદ્ધ તેઓને તે તે કર્મને સદ્ભાવ હિ અપાન, અધિરતિ અને મિથ્યાત્વ,
તેનાથી તે મુક્ત-રહિત હિ પરન્તુ પ્રયત્ન ચારિત્ર, તપ અને ચિનયાદિથી મુક્ત
રહિત નથી ॥ સૂ. ૧ ॥

આવા પ્રકારના બધે કેવળી હોય કે છદ્ધસ્ય પરન્તુ તેઓએ જેનુ આચ
રણ કર્યું અને જે અપરણ કરે છે તે બીજા સાધુઓએ પણ કર્યું એઈએ
આ વાત કહે છે— સે જ ચ ઇત્યાદિ.

તીર્થંકર, સામાન્યકેવળી અથવા રત્નપ્રયોગી મુનિ, જે "સે" શબ્દથી
બ્રહ્મ કર્ત્ત્વમ્ આવેશ છે તેઓએ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોના નાશ કરવા
માટે જે તપ સયમ અને ચિનયાદિનુ અનુષ્ઠાન-પાલન કરેલ છે, તેનુ
પ્રયત્ન કરવામ્ જે પરાક્રમ અવેશ છે તથા તેની આરાધના કરવામાં જે પ્રયત્ન
કરેલ છે અને તેનાથી વિપરીત સમારણ કરજનૂન મિથ્યાત્વ તેમજ અધિરતિ

प्राणातिपातादिरूपाष्टादशपापस्थानानि च नारभते=न करोति न घटते न यतते न पराक्रमते वा । तद्विपरीतमाचरतीत्यर्थोऽपि । संयतैः पञ्चमहाव्रतपालनं विधेयं, संसारकारणं मिथ्यात्वाच्चिरत्यादिकं च नासेवनीयमित्यभिप्रायः । तदेवाह—‘अनारब्ध’-मित्यादि, अनारब्धं केवललिभिः प्राप्तस्नानत्रयैश्छद्मस्थैर्वा अनारब्धम्=अनाचीर्णं च द्विपञ्चाशत्प्रकारं नारभेत=न सेवेत, च शब्दाच्चदारब्धं तत्कुर्यादित्यर्थोऽपि । अनाचरणीयमेवाह—‘क्षण’-मित्यादि, क्षणं क्षणं, क्षणनं क्षणः=हिंसनं, कार्यकारणयोरभेदाद् येन कर्मणा कारणभूतेन हिंसा कार्यरूपा समुत्पद्यते तत्कर्म क्षणः, तम्,

के कारणभूत मिथ्यात्व एवं अविरति आदि तथा प्राणातिपातादिरूप अठारह (१८) पापस्थानों का जिस प्रकारसे इन्होंने परित्याग किया है, उनके छोड़नेमें जो अपनी शक्ति प्रकट की है, और जिस प्रकारका प्रयत्न किया है, तथा इन अविरति आदिकोंसे विपरीत अपनी प्रवृत्ति बनाई है, संयतोंका कर्तव्य है कि वे भी पांच महाव्रतोंका इसी लगनके साथ पालन करें, और संसारके कारण-मिथ्यात्व अविरति आदि-का परित्याग करें, स्वप्नमें भी इनका सेवन न करें । केवलियोंने अथवा रत्नत्रयको प्राप्त हुए छद्मस्थ मुनियोंने जिनका सेवन नहीं किया, अर्थात् (५२) प्रकारके जिन अनाचीर्णों-अनाचारों-का अनुष्ठान नहीं किया उनका संयति कभी भी सेवन न करे ।

सूत्रमें आये हुए “ च ” शब्दसे इस प्रकार अर्थ होता है कि जो उन्होंने पालन किया है वही वह पालन करे । उन्होंने क्या आचरण नहीं किया ? इसको प्रकट करते हैं—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि । ‘क्षण’ शब्दका अर्थ हिंसा है । कार्य और कारणमें अभेद सम्बन्धकी विवक्षासे कारणभूत

आदि तथा प्राणातिपातादिइप अठार (१८) पापस्थानोंको के प्रकारे तेणु परित्याग करेले छे, ते छोडवामा के पोतानी शक्ति प्रगट करेले छे, अने के प्रकारेनो प्रयत्न करेले छे, तथा आ अविरति आदिथी विपरीत पोतानी प्रवृत्ति अनावी छे. संयतोनु कर्तव्य छे के ते पणु पाय महाव्रतोनु तेवी भावनाथी पालन करे अने संसारना कारण मिथ्यात्व अविरति आदिनो परित्याग करे स्वप्नमां पणु तेनु सेवन न करे केवणीओओ, अथवा रत्नत्रयप्राप्त छद्मस्थ मुनियोओ केनु सेवन नथी कर्यु अर्थात् भावन प्रकारना के अनाचारोनु अनुष्ठान नथी कर्यु तेनु केछ पणु संयती सेवन न करे

सूत्रमा आवेला “ च ” शब्दथी ओ प्रकारे अर्थ थाय छे के के तेओओ पालन करेले छे ते न ते पालन करे तेओओ शुं आचरण नथी कर्यु ? ते प्रगट करे छे—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि ‘क्षण’ शब्दना अर्थ हिंसा छे कार्य अने कारणमां अवेदसभ धनी विवक्षाथी कारणभूत कर्मद्वारा के हिंसाइप कार्य उत्पन्न थाय छे

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાગયઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથ પૂર્વોક્તસકલગુણત્રિગિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદ્દેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નતિથિ, વાલે પુન નિહે કામસમણુન્ને અસ-
મિયદુક્ષ્વે દુક્ષ્વી દુક્ષ્વાણમેવ આવદં અણુપરિયદ્વૈત્તિવેમિ । સૂ૦ ૧૧ ।

॥ ૩૫ વીયજ્ઞયણસ્સ છદ્ધો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૨-૬ ॥

છાયા—ઉદ્દેશઃ પઙ્ગકસ્ય નાસ્તિ, વાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણુજ્ઞોઽગમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુવર્તેતે, ઇતિ ત્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પપ્થ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥

ટીકા—‘ઉદ્દેશ’ ઇત્યાદિ । મૂત્રમિદં તૃતીયોદ્દેશે વ્યાખ્યાતમિતિ । ઇતિ
ત્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુ પ્રથમાધ્યયનોક્તદિશાઽવસેયઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વાક્ય હૈ કિ—“જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય ઇમેવ સન્નવજીવાણં”
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમેં અપ્રિય હૈ ઉસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકો ભ
અપ્રિય હૈ । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકો દુઃખ પહુંચતા હૈ, એસા સમજ
કર સંયમી જન કમીં ભી પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે
ઔર ન સંયમાચરણસે મુઝ મોઢે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહ
સૂત્રકા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈ ઉસકે કયા હોત
હૈ ? હસકા યુલસા કરતે હૈ—‘ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નતિથિ’ ઇત્યાદિ ।

હસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન હસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદ્દેશમેં લિખા જ
ચુકા હૈ । ‘ઇતિ ત્રવીમિ’ હસકા અર્થ પ્રથમ ઉદ્દેશકે અનુસાર જાન
લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ આચારાદ્ સૂત્રકે લોકવિજયનામક દસરે અધ્યયનકે છદ્ધે ઉદ્દેશકા
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૨-૬ ॥

છે દે “જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય ઇમેવ સન્નવજીવાણં” જે પ્રકારે દુઃખ
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે સમસ્ત જીવોને પણ અપ્રિય છે હિંસાદિક
કાર્યોમા જીવને દુઃખ પહોચે છે એવું સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણા-
તિપાતાદિક કાર્યોમા પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સંયમાચરણથી દૂર રહે નહિ, અર્થાત્
સંયમમાં પ્રવૃત્તિશાળી બને, એ જ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોથી યુક્ત બને છે તેને શું થાય છે ? તેનો
ખુલાસો કરે છે—‘ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નતિથિ’ ઇત્યાદિ

આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમાં લખાઈ ગયેલ છે.
‘ઇતિ ત્રવીમિ’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદ્દેશ અનુસાર બાણી લેવો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

તસ્ય વીપ્સાયાં સળ-સળ, હિંસાજનકં સકલં કર્મેત્યર્થ, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાતા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહત્ય ચ । યદ્વા—સળઃ સંયમાચારાવસરઃ, તસ્ય વીપ્સાયાં સળઃ સળસ્તં પરિજ્ઞાય જ્ઞપરિજ્ઞયા વિદિતા, આસેવનપરિજ્ઞયા ષાઽસેવ્ય ચિચરત્ । અપિ ચ લોકસંજ્ઞાં ચ લોકસ્ય=અસંયતલોકસ્ય સજ્ઞા=સજ્ઞાનં શબ્દાદિવિવિધાસજ્ઞાન્ય-સુત્વસ્પૃશ પરિગ્રહાદિસજ્ઞાયા, તાં સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ યોગશ્રિક્રુરખ્રિક્રેણ પરિજ્ઞાય પરિહત્ય, યદ્વા—વશબ્દાદાત્મૌપમ્યેન ધ્વણનં ન વિદુષ્યાત્ “જહ મમ ણ પિયં દુક્લં જાણિય एमेव सञ्जमीवाणं” इत्यादिवचनात् । સર્વથા પ્રાણાતિપાતાદૌ ન પ્રવર્તેત

જિસ કર્મકે દ્વારા હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈં એસ કર્મકા નામ ક્ષણ હૈં । યદ્વા પર વીપ્સા મેં ‘ક્ષણં ક્ષણં’ યહ સ્થિતિ હૈં । તાત્પર્યેં હસકા યહ હૈં કિં હિંસાત્મક સકલકર્મોં કો સયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે જ્ઞનકા પરિત્યાગ કર ચિચરણ કરે ।

અથવા-સંયમકે આચરણ કરનેકે પ્રત્યેક અવસરકો મી સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર આસેવનપરિજ્ઞાસે હસકા સેવન કરે ।

તથા લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે પરિત્યાગ કરે । અસંયત લોકોંકો શબ્દાદિક વિવર્થોંકે સમ્ય-ધસે ઉત્પન્ન સુત્વકી જો વાહના હોતી હૈં હસકા નામ લોકસંજ્ઞા હૈં । અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાકા નામ મી લોકસંજ્ઞા હૈં । સંયમી હસ લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે અર્થાત્ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગસે ત્યાગ કરે ।

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” યદ્વાં પર જો “ચ” આયા હૈં એસસે યહ ઘાત પ્રકટ કી ગઈ હૈં કિં સંયમી સમસ્ત જીવોંકો અપને સમાન સમજ કર કમી મી હિંસાદિક કાર્યોંમે પ્રવૃત્તિ ન કરે, પર્યોંકિ આગમક

તે કર્મતુ નામ શબ્દ છે અહીં વીપ્સાથી ‘જળ ધર્મ’ આ દ્વિશ્ચિત છે એટલે હિંસાજનક સકલ કર્મોને સયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાધીને અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેને પરિત્યાગ કરી વિચરણ કરે.

અથવા સયમતુ આચરણ કરવાના પ્રત્યેક અવસરને પણ સયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાધી અને આસેવનપરિજ્ઞાથી તેનું સેવન કરે.

તથા લોકસંજ્ઞાને સર્વ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરે, અસંયત લોકોંકે શબ્દાદિક વિવર્થોંકે સમ્ય-ધથી ઉત્પન્ન સુખની જે વાહના થાય છે તેનું નામ લોકસંજ્ઞા છે અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાનું નામ પણ લોકસંજ્ઞા છે, સયમી આ લોકસંજ્ઞાને સર્વ પ્રકારથી અર્થાત્ ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી ત્યાગ કરે.

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” આ શબ્દોંકે ‘ચ’ શબ્દ અર્થેલ છે તેનાથી એ ઘાત પ્રગટ કરી આપેલ છે કે સયમી સમસ્ત જીવોંકે પોતાના સમાન સમજ કર નખત પણ હિંસાદિક કર્મોંમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, કારણ કે આગમનું વાક્ય

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથ પૂર્વોક્તસકલગુણવિશિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—ઉદેશો પાસગસ્સ નત્થિ, બાલે પુણ નિહે કામસમણુન્ને અસ-
મિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયટ્ટઈત્તિવેમિ । સૂ૦ ૧૧ ।

॥ ઇય વીયજ્ઞયણસ્સ છટ્ઠો ઉદેસો સમત્તો ॥ ૨-૬ ॥

છાયા—ઉદેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, બાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણ્ણોઽશમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાવર્તમનુવર્તતે, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પઠ ઉદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥

ટીકા—‘ઉદેશ’ ઇત્યાદિ । સૂત્રમિદં તૃતીયોદેશે વ્યાખ્યાતમિતિ । ઇતિ
બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુ પ્રથમાધ્યયનોક્તદિશાઽવસેયઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વાક્ય હૈ કિ—“જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ સન્વજીવાણં”
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમેં અપ્રિય હૈ ડસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકો ઢી
અપ્રિય હૈ । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકો દુઃખ પહુંચતા હૈ, એસા સમજ
કર સંયમી જન કમી ઢી પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે,
ઑર ન સંયમાચરણસે મુખ મોઢે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહી
સૂત્રકા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈ ડસકે ક્યા હોતા
હૈ ? ઇસકા ઁલાસા કરતે હૈ—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદેશમેં લિખા જા
ચુકા હૈ । ‘ઇતિ બ્રવીમિ’ ઇસકા અર્થ પ્રથમ ઉદેશકે અનુસાર જાન
લેના ઁહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે લોકવિજયનામક ડસરે અધ્યયનકે છટ્ટે ઉદેશકા
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૨-૬ ॥

છે કે “જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય એમેવ સન્વજીવાણં” જે પ્રકારે હુ ખ
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે સમસ્ત જીવોને પણ અપ્રિય છે હિંસાદિક
કાર્યોમાં જીવને હુ ખ પહોંચે છે એવુ સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણ-
તિપાતાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સયમાચરણથી દૂર રહે નહિ, અર્થાત્
સયમમા પ્રવૃત્તિશાળી બને, એ જ સૂત્રનો આશય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે સયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોથી યુક્ત બને છે તેને શું થાય છે ? તેનો
ખલાસો કરે છે—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ

આ સૂત્રનુ વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદેશમા લખાઈ ગયેલ છે.
‘ઇતિ બ્રવીમિ’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદેશ અનુસાર જાણી લેવો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

उपसंहारः-

अस्मिन्मध्ययने हि लोकविजये सज्जो न कार्यो धुरै-
 मांशायो च महाव्रतेऽप्यद्वयता मानोऽपि देयस्तथा ॥
 वैराग्यं विषये मुनेर्विरागं लोकेऽपि निभारुयया
 पुत्रादौ ममता त्यजेभिर्गदितं तूरेष्यद्वैकान्तिये ॥ १ ॥
 इत्याधाराङ्गसूत्रस्य लोकविजयाख्यद्वितीयाध्ययनस्य भाचारचिन्तामणि
 टीकायां पष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥ २-६ ॥

इति श्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पद्मदत्तमायाकल्पित-
 छलितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वार्दिमानमर्दक-
 -भ्रीसाहूछत्रपति-कोत्हापुरराजमदक - 'जैनशास्त्राचार्य'-पद
 भूषित-कोत्हापुरराजगुरु-बालप्रज्ञाचारि-जैनाचार्य-जैनधर्म
 दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल-प्रतिभिरचितायाम् आचा
 राङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां लोकविजयाख्य
 द्वितीयमध्ययनं सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

उपसंहारः-

लोकविजय नामक इस प्रकरण, में ये छे उद्देश भरे,
 माताविकर्मे संग अद्वयता, महाव्रतमें धुष न करे ।
 मान तजन वैराग्य विषयमें, हो विचार जगनिभासे,
 पुत्रादिकसे ममता हरनी छ उद्देश इस निभासे ॥ १ ॥
 ॥ इति आधाराङ्गसूत्रके लोकविजय-नामक दूसरे अध्ययनकी
 आचारचिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद संपूर्ण ॥ २ ॥

— उपसंहार —

लोकविजय नामना गीला अध्ययनभा आ छ उद्देशो बताव्या छे-—ज्ञानीके
 माता बनेनेना संग त्यजवो महाव्रतोभा ददता राजनी, अलिमान त्वगु
 विषयेधी विरक्त धनु अग्रणीकाने आग्रवे विद्वत्सु अर्थात् पयनपावनद्वि
 सानध द्विधामने राजतो थो गृहस्थीके पोताने भा? करेछ निस्वय आहार
 धासुधी असम-मात्रनो निर्बाह करवो तथा पुत्र पनेनेनी भभता त्वगु
 के छ उद्देशो तेभा छे ॥१॥

आशासग सूत्रना लोकविजय नामना गीला अध्ययनना छुस उद्देशोना
 शुभशती अनुवाद समाप्त. २-६

आ आशासगसूत्रना लोकविजय नामना गीला अध्ययननी आचार
 चिन्तामणि-टीकाने शुभशती अनुवाद संपूर्ण ॥२॥

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય શીતોષ્ણીયનામકં તૃતીયમધ્યયનમ્ ।

દ્વિતીયાધ્યયનકથનાનન્તરં શીતોષ્ણીયં નામ તૃતીયમધ્યયનમભિધીયતે ।
અસ્ય દ્વિતીયાધ્યયનેન સહાયમભિસમ્બન્ધઃ—શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામકાધ્યયનનિર્દિષ્ટવિશિ-
ષ્ટવ્રતભારધારિણો લોકવિજયાખ્યદ્વિતીયાધ્યયનોક્તસંયમમનુતિષ્ઠતોઽપાસ્તસમસ્ત-
કષાયાદિલોકસ્ય પરમપદમારુરુક્ષોરકસ્માત્ શીતોષ્ણાઃ=અનુકૂલપ્રતિકૂલાઃ પરી-
પદાઃ સમુત્પદ્યન્તે । તેષુ સ્ત્રીપરીપદસત્કારપરીપદાવેવાનુકૂલાવન્યે વિંશતિસંખ્યકાઃ
પરીપદાઃ પ્રતિકૂલાઃ । તેષાં હર્ષવિપાદપરિત્યાગપૂર્વકં પ્રસહનં કર્તવ્યમિતિ સમ્બન્ધા-
ભિધાયકમિદમધ્યયનમ્ । અત્ર ચત્વાર ઉદ્દેશાઃ સન્તિ । તત્ર—

આચારાઙ્ગસૂત્રકા શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયન

દ્વિતીય અધ્યયનકે બાદ અવે હેસ શીતોષ્ણીય નામક તૃતીય અધ્ય-
યન પ્રારમ્ભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયનકે સાથે હેસ અધ્યયનકા હેસ
પ્રકારસે સમ્બન્ધ હૈ કિ શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક અધ્યયનમેં જિન વિશિષ્ટ
વ્રતોંકે ધારણ કરનેકા વિધાન કિયા ગયા હૈ ડન વ્રતોંકે પાલનેવાલે,
તથા લોકવિજય નામક દ્વિતીય અધ્યયનમેં પ્રતિપાદિત સંયમકે અનુષ્ઠાન
કરનેવાલે, સમસ્ત કષાયલોકકે નિરાકરણ કરનેવાલે ઓર પરમપદ જો
મોક્ષ ડસમેં પહુંચનેકી ઇચ્છાવાલે એસે સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન શીત-
ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પરીપદોંકો સહન કરતે હૈ । પરીપદ ૨૨
બાઈસ પ્રકારકે હૈ, ડનમેં સ્ત્રીપરીપદ ઓર સત્કારપરીપદ હી અનુકૂલ હૈ,
બાકીકે ૨૦ બીસ પરીપદ પ્રતિકૂલ હૈ । ડન સવ પરીપદોંકો હર્ષ વિપાદ

આચારાંગ સૂત્રનું શીતોષ્ણીયનામનું ત્રીજું અધ્યયન.

ખીજા અધ્યયન બાદ હવે શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ
થાય છે ખીજા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો એ પ્રકારે સળખ છે કે શસ્ત્ર-
પરિજ્ઞા નામના અધ્યયનમાં જે વિશિષ્ટ વ્રતો ધારણ કરવાનું વિધાન કરેલ છે,
તે વ્રતોના પાળવાવાળા, તથા લોકવિજય નામના ખીજા અધ્યયનમાં પ્રતિપાદિત
સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળા, સમસ્ત કષાયલોકનું નિરાકરણ કરવાવાળાં અને
પરમપદ જે મોક્ષ તેમાં પહોંચવાની ઇચ્છાવાળા એવાં સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન
શીત-ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂળ પ્રતિકૂલ પરિપદો સહન કરે છે. પરીપદ બાવીસ
પ્રકારના છે. તેમાં સ્ત્રીપરીપદ અને સત્કારપરીપદ, એ જે પરીપદ જ અનુકૂળ
છે બાકીના ૨૦ ખીસ પરીપદો પ્રતિકૂળ છે આ સઘળા પરીપદોને હર્ષ વિપાદ

પ્રથમોદ્દેશે માવસુતાનાં दोषा नाग्रतां च गुणाः प्रदर्शिताः ॥ १ ॥

द्वितीये मावनिद्रावता दुःस्वानुमयः प्रदर्शितः ॥ २ ॥

तृतीये संयमाचरणमन्तरेण केषलं दुःस्वसहनादेव भ्रमणो न मक्तीति कथितम् ॥ ३ ॥

चतुर्थे तु वान्तवत् કપાયાસ્ત્યાજ્યાઃ, પાપકર્મણઃ ચિરતિઃ, તથા વિદિત-
વેદ્યસ્ય સંયમઃ પ્રતિશ્રોભિતઃ, તથા સપકથેણિપ્રવિષ્ટાનાં ચ સંયમિનાં મોક્ષા
મવતીત્યાવેદિતમ્ ॥ ૪ ॥

છોડ કર સંયમીકો સહન કરના ધાહિયે । હમ પ્રકારકે સમ્યન્ધક
પ્રતિપાદન કરનેવાલા યહ અધ્યયન હૈ । હસમેં ૪ ચાર ઉદ્દેશ હૈ । ઉનમેં-

પ્રથમ ઉદ્દેશમેં 'માવસુસ સંયમિયોકે दोष और जगते हुए संयमियोंके
गुण दिखलाये गये हैं १ ।

દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં-'માવનિદ્રાવાલે સંયમિયોકો दुःस्वोका अनुमय
કરના પડતા હૈ ' યહ યાત દિશ્વલાઈ ગઈ હૈ ૨ ।

તૃતીયઉદ્દેશમેં-'સંયમાચરણકે ચિના કેશલ दुःस्वोके सहन करने
मात्रसे साधु नहीं होता है ' યહ વિષય પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ ૩ ।

ચતુર્થ ઉદ્દેશમેં-'વમન-છર્વિત કિયે हुए मल्लके समान कपाय त्याग
કરને યોગ્ય હૈ, પાપકર્મ પરિહરણીય હૈ, તથા પદાર્થોકે સ્વરૂપકો જાનને
વાલે સંયમી મુનિકે લિપે સયમ આરાધનીય હૈ, પરં ક્ષપકથેણિમેં પ્રાપ્ત
હુણ સાધુજનોં કો મુક્તિકા लाभ अवश्यभाषी है ' આદિ સય વિષય
પ્રકટ કિયે ગયે હૈ ૪ ।

અહીંને સઘમીઓએ સદન કરવા બેઈએ આ પ્રકારના સજ થનુ પ્રતિપાદન
કરવાવાળું આ અધ્યયન છે તેમાં ચાર ઉદ્દેશ છે તેમાં—

પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવમુખત સઘમીઓના दोष અને જગતના સઘમીઓના
गुण બતાવવામાં આવેલ છે ૧

બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સઘમીઓને दुःस्वોનો અનુભવ કરવો પડે
છે એ ચાત બતાવવામાં આવી છે ૨

ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સઘમાચરણ ચિના કેવળ दुःस्वો સદન કરવા માત્રથી
કાઈ સાધુ બની શકતો નથી એ વિષય પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે ૩

ચોથા ઉદ્દેશમાં—વમન-છર્વિત કરેલા અત્ર સમાન કપાય ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે
પાપક્રમ પરિહરણીય છે તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને ભળવાવાળા સઘમી મુનિ માટે
સઘમ આરાધનીય છે તેમજ ક્ષપકથેણિમાં પ્રાપ્ત થયેલા સાધુજનોને મુક્તિને
लाभ अवश्यभाषी છે ' આદિ યપના વિષય પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે ૪

દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચરમમુત્રેણાસ્યવમભિસમ્બન્ધઃ—તત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે ” इत्युक्तं, તદિદાપિ “ ભાવસુપ્તા દુઃસ્વિનો દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુવર્તન્તે ” इति प्रतिबोधयितुमाह—‘ સુત્તા અમુણી ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—સુપ્તા અમુનયઃ, સદા મુનયો જાગ્રતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—અમુનયઃ=ગૃહસ્થાઃ સુપ્તાઃ=ભાવતઃ સુપ્તાઃ મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમયનિદ્રાવ્યામોહિતાઃ હિંસાદ્યાસ્ત્રવદ્વારેષુ સતતં પ્રવૃત્તાઃ સન્તિ । સુપ્તા િ દ્વિવિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર નિદ્રાપ્રમાદવન્તો દ્રવ્યસુપ્તાઃ, યદ્વા-શિથિલિતનયનપ્રચારાન્નોપાદ્ધાવિસ્પૃષ્ટચેતનાવસ્થાપન્નાઃ દ્રવ્યસુપ્તાઃ । ભાવસુપ્તાસ્ત્વમિહિતા એવ ।

દ્વિતીય અધ્યયનકે અન્તિમ સૂત્રકે સાથે ઇસ અધ્યયનકા ઇસ પ્રકાર સમ્બન્ધ હૈ—ઉસ અધ્યયનકા અન્તિમ સૂત્ર “ . . . દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવદં અણુપરિચદ્વૈ ” (દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) યહ હૈ, ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ—દુઃસ્વી દુઃસ્વોંકી પરંપરાકા હી અનુવર્તન કરતે હૈ । જિસ પ્રકાર યહ વાત ઉસ અધ્યયનમેં કહી ગઈ હૈ ઉસી પ્રકાર યહાં પર ભી—‘ જો ભાવસુપ્ત દુઃસ્વી હૈં વે દુઃસ્વોંકી હી પરમ્પરાકા અનુભવ કરતે હૈં ’ ઇસ વિષયકો સમજ્ઞાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘ સુત્તા અમુણી ’ इत्यादि ।

(અમુનિ શબ્દકા અર્થ ગૃહસ્થ હૈ । યે ભાવસે સુપ્ત-સોયે હુએ હૈ । મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાસે વ્યામોહિત મતિવાલે હોતે હુએ યે પ્રાણાતિપાતાદિક જો કર્મોંકે આનેકે દ્વાર હૈં ઉનમેં નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાલી હૈં ।) (સુપ્ત દો પ્રકારકે હોતે હૈ—(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે) નિદ્રાપ્રમાદ-

બીજા અધ્યયના અતિમ સૂત્રની સાથે આ અધ્યયનનો આ પ્રકારે સંબંધ છે, તે અધ્યયનનું અતિમ સૂત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવદં અણુપરિચદ્વૈ ” (દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) એ છે તેનો ભાવ એ છે કે હું બી હું બોની પરપરાનું જ અનુવર્તન કરે છે, જેવી રીતે આ વાત તે અધ્યયનમાં કહેવામાં આવેલ છે તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ ‘ જે ભાવસુપ્ત હું બી છે તેઓ પણ હું બોની જ પરપરાનો અનુભવ કરે છે. ’ આ વિષયને સમજાવવા માટે કહે છે—‘ સુત્તા અમુણી ’ इत्यादि.

અમુનિ શબ્દનો અર્થ ગૃહસ્થ છે. એ ભાવથી સુપ્ત-સુતેલા છે મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાથી વ્યામોહિત મતિવાળા હોવા છતાં પ્રાણાતિપાતાદિક જે કર્મોનાં આવવાનાં દ્વાર છે તેમાં નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાળી છે સુપ્ત એ પ્રકારના હોય છે.—

દ્રવ્યમુક્તાસ્તસ્પરાદિના મણિમાણિયરત્નાવપહારેણ યયાન્તદાદાદિપ-
દૌર્માગ્યાદિલ્પણપરિતાપક્રમપમનુમયન્તિ સયા માત્રગુપ્તા અપિ પ્રમાદાદિના સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાધ્યાત્મકરત્નાવપહારાર્થસમારપરિષ્રમણેન જન્મજરામરણાદિલ્પણ
વિવિધપરિતાપક્રમપમનુમયન્તિ ।

મુનયઃ=મોક્ષમાર્ગાદિવિષયમન્તો લ્પ્પસમ્યગ્વાધાઃ અનગારાઃ, સદા=મનવરતે
આપ્રતિ=મિધ્યાત્વાદિનિદ્રાપગમેન ઇષ્ટાનિષ્ટપ્રાપ્તિપરિહારાર્થં યતનયા ગમનાદિ
શાલી જો છે એ દ્રવ્યસે સુસ છે । અથવા જિમમે નેત્રોંકા પ્રચાર શિધિલ
હો જાતા હૈ તથા અદ્વ-ઉપાદ્યોં શી ક્રિયા મીજદા શિધિલ હો જાતી હૈ,
તેસી અસ્પષ્ટ ચેતનાકી અવસ્થાસે જો યુક્ત હૈ એ મી દ્રવ્યસે સુસ હૈ,
અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાલે પ્રાણી દ્રવ્યમુસ હૈ । એ દ્રવ્યસુસ જીવ જિસ પ્રકાર
ધોરોં યગેરહકે દ્વારા મણિ માણિન્ય ઓર રત્નાદિક દ્રવ્યકે શુરાપે જાને
સે અન્તર્દાહ પદ્ધ દારિદ્ર્ય દૌર્માગ્યાદિરૂપ અનેક સન્તાપોંકા અનુભવ
કરતે હૈ ડસી પ્રકાર આવસુસ પ્રાણી મી પ્રમાદ આદિકે દ્વારા સમ્યગ્જ્ઞાન
સમ્યગ્વર્ણન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ રત્નોંકે શુરાપે જાનેસે દીર્ઘ સંસારમેં
પરિષ્રમણજન્ય જન્મ જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અનેક સન્તાપોંકો
મોગતે રહતે હૈ ।

(મુનિ સદા જગતે હૈ) (મોક્ષમાર્ગને જો વિગલિત નહીં હોતે હૈ) ડનકા
પ્રામ મુનિ હૈ । એ નિરન્તર સચેત રહતે હૈ, અર્થાત્ મિધ્યાત્વાદિ નિદ્રાકે
વિનાશ હોનેસે ઇષ્ટકી પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ કે પરિહારકે લિયે યતનાસે

(૧) દ્રવ્યમી અને (૨) જાવમી. નિદ્રાપ્રમાદશાળી એ છે તેજો દ્રવ્યમી સુપ્ત છે,
જાવવા જેમા જાખોને પ્રચાર શિધિલ થઈ જાય છે તથા જગ ઉપાગેની ક્રિયા
પણ જ્યાં શિધિલ થઈ જાય છે એવી અસ્પષ્ટ ચેતનાની અવસ્થાથી એ સુપ્ત
છે તેજો પણ દ્રવ્યમી સુપ્ત છે અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાળા પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત છે
એ દ્રવ્યસુપ્ત જીવ એ પ્રકારે ધોરો વિગેરે દ્વારા મણિ-માણિક-રત્નાદિક દ્રવ્ય
આક્રિયા ચોરાર્થ જાણથી અન્તર્દાહ અને દારિદ્ર્ય દુર્માગ્યાદિ-રૂપ અનેક સત્તા
પોને અનુભવ કરે છે તે પ્રકારે જાવસુપ્ત પ્રાણી પણ પ્રમાદ આદિ દ્વારા સમ્ય
જ્ઞાન સમ્યગ્વર્ણન અને સમ્યક્ચારિત્રાદિરૂપ રત્નો ચોરાર્થ જાણથી દીર્ઘ સંસારમાં
પરિષ્રમણજન્ય જન્મ જરા અને મરણ આદિરૂપ અનેક સત્તાપોને અનુભવતાં રહે છે
મુનિ સદા જાગતા રહે છે મોક્ષમાર્ગથી એ વિચલિત થતા નથી તેનું
નામ મુનિ છે એજો નિરન્તર સચેત રહે છે અર્થાત્ મિધ્યાત્વાદિ નિદ્રાના
વિનાશ થવાથી ઇષ્ટની પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટના પરિહાર માટે યતનાથી અમનાદિક

કુર્વન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્રોપાર્જને પ્રવૃત્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ । યદ્યપિ ક્વચિદાચાર્યાનુજ્ઞયા પ્રથમપૌરુષ્યામ્ ઉત્સર્ગતશ્ચ દ્વિતીયતૃતીયપૌરુષ્યોર્દીર્ઘસંયમાધારભૂતસ્ય શરીરસ્ય સ્થિત્યર્થં નિદ્રાં ભજન્તિ તથાપિ મુનયઃ સદા ભાવતો જાગરૂકા એવ । ધર્માપેક્ષયા સુષ્પ્તજાગ્રદવસ્થે ઇહ પરિગૃહીતે ।

મુનયો દ્વિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યમુનયસ્તાવત્-લિઙ્ગમાત્રધારિણઃ, અસંયમપરિણામપરિણતાઃ, અવસન્નપાસ્ત્થાદિકાઃ । એપાં નાત્રાધિકારઃ, અમુનિકોટૌ તેપાં સમાવિષ્ટત્વાત્ । અધિકારશ્ચાત્ર ભાવમુનીનામ્ । તે ચ ભાવમુનયઃ ગમનાદિક ક્રિયાઈ કરતે હુઈ મી સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકે ઉપાર્જન કરનેમેં હી પ્રવૃત્તિશીલ રહા કરતે હૈં । યદ્યપિ(કમી ૨ આચાર્ય મહારાજ કી આજ્ઞાસે)યે રાત્રિકી પ્રથમ પૌરુષી મેં, ઓર ઉત્સર્ગ સે દ્વિતીય તૃતીય પૌરુષી મેં દીર્ઘ(સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં તો મી યે સદા ભાવસે જાગરૂક-જગતે હુઈ-હી રહતે હૈં ।) સુષ્પ્ત અવસ્થા ઓર જાગ્રત અવસ્થા કા સમ્બન્ધ યહાં ધર્મકી અપેક્ષાસે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ।

(મુનિ દો પ્રકારકે હોતે હૈં-(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । લિઙ્ગમાત્રકો ધારણ કરનેવાલે દ્રવ્યમુનિ હૈ । ઇનકા પરિણામ અસંયમમેં પરિણત રહા કરતા હૈ) અવસન્ન પાસ્ત્થાદિક ઇસી શ્રેણિકે હૈં । ઇનકા યહાં પ્રકરણ નહીં હૈ, કયોં કિ યે દ્રવ્યલિઙ્ગી અમુનિયોંકી કોટિમેં આતે હૈં । યહાં પર ભાવમુનિયોંકા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ અતઃ ઁન્હીંકા યહાં પર વિચાર હોગા । વે(ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે/ તથા

ક્રિયાઓ કરતા કરતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું ઉપાર્જન કરવામાં જ પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે બેકે ક્યારેક આચાર્ય મહારાજની આજ્ઞાથી એ રાત્રિની પ્રથમ પોરસીમા, અને ઉત્સર્ગથી દ્વિતીય તૃતીય પોરસીમા દીર્ઘ સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે તો પણ મુનિ સદા ભાવથી જાગૃક-જાગતા જ રહે છે. સુષ્પ્ત અવસ્થા અને જાગ્રત અવસ્થાનો સબધ આંહી ધર્મની અપેક્ષાથી ચડણ કરવામાં આવેલ છે

મુનિ બે પ્રકારના હોય છે (૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. લિંગ માત્રને ધારણ કરવાવાળા દ્રવ્યમુનિ છે તેનું પરિણામ અસંયમમા પરિણત રહ્યા કરે છે અવસન્ન પાસ્ત્થાદિક તેવી શ્રેણિના છે તેનું આંહી પ્રકરણ નથી, કારણ કે એ દ્રવ્યલિંગી અમુનિઓની કોટિમા આવે છે આ ઠેકાણે ભાવમુનિઓનું પ્રકરણ આંહી રહ્યું છે માટે તેઓના આ ઠેકાણે વિચાર થશે તે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય

ચારિત્રમોહનીયસયોપશ્ચમસયસમુત્પન્નસ્વરૂપપરાયણા, કપાયોત્રેકરહિતા, સમત-
સકન્દાયમાનાઃ, સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાપકાઃ, પ્રશ્નસ્તયોગસાપકાઃ, સમિતિ-
શુભિષારકા, નિશ્ચયવ્યવહારપ્રચારકાઃ, આશ્લયવર્જિતાઃ સંધેગાદિસ્ત્રણયુક્તાઃ,
પયાર્યોપયોગેન દ્રવ્યાર્થિકપર્યાયાર્થિકનયેન સ્વરૂપધેદિનાઃ, કર્મરજોદારકાઃ,
મુક્તોપરિ સદોરકમુલપશ્ચિકાધારકાઃ, વિશ્વતિસ્થાનવસમારાપકાઃ, દેવાસુરનરજ-
નિતંત્રિવિધોપસર્ગસહનશ્રીલાઃ, શાસ્ત્રોક્તાચારવિચારપરિપાલકા, જ્ઞાતપરમાર્થ-
મવન્તિ । ત एव सदा=निरन्तरं जाग्रति=प्रपुध्यते-इत्योपादेयविवेकपूर्वकं सक्त्वं
परिपहसहनं प्रकुर्वाणा संयमानुष्ठानं समाचरन्तीत्यर्थः ।

ક્ષયસે સમુત્પન્ન નિજ (આત્મસ્વરૂપમેં) લલ્લીન રહેતે હૈં) કપાયોત્રેક
સે રહિત હોતે હૈં । સમતારૂપી રસકે કન્દ હોતે હૈં । પાંચ સમિતિ ઓર
ત્રીન શુભિકે ધારક હોતે હૈં) નિશ્ચય ઓર વ્યવહારકે પ્રચારક હોત હૈં ।
આશ્લયદ્વારોસે રહિત તથા સંધેગાદિક-સ્ત્રણોસે યુક્ત હોતે હૈં । જિસ
નયકા જહાં ઉપયોગ હોતા હૈં વહાં ઉસી નયકા ઉપયોગ કરનેવાલે હોત
હૈં, અર્થાત્ જહાં દ્રવ્યાર્થિક નયકી પ્રધાનતાસે વસ્તુતત્ત્વકા નિર્ણય હોતા
હો વહાં પર્યાયાર્થિક નયકી ગૌણતા કર ઉસી નયસે ઉસકે સ્વરૂપકા
નિર્ણય કરતે હૈં, જહાં પર્યાયાર્થિક નયસે વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય હોતા હો
વહાં ઉસ નયસે ઇતર-દ્રવ્યાર્થિક નયકો ગૌણકર વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય
કરતે હૈં; કિન્તુ અપને આગ્રહસે કિસી બી વસ્તુકા એકાન્તરૂપસે નિર્ણય
યા પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈં । આત્માકે ઉપર અનાદિ કાલસે વહી હુઈ
કર્મરૂપી ધૂલિકો નાશ કરનેવાલે હોતે હૈં । મુક્તપર દોરાસહિત મુક્ત

કર્મના કાયોપશ્ચમથી તથા કાયથી સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમા આનંદિત રહે
છે કપાયોના ઉત્રેકથી રહિત હોય છે સમતાથી રસના કંદ હોય છે પાંચ
સમિતિ અને ત્રણ શુભિકા ધારક હોય છે નિશ્ચય અને વ્યવહારના પ્રચારક હોય
છે આશ્લયદ્વારથી રહિત અને સંધેગાદિક સ્ત્રણોથી સહિત હોય છે જે નયને
ન્યા ઉપયોગ થાય છે ત્યાં તે નયને ઉપયોગ કરવાવાળા હોય છે અર્થાત્ ન્યા
દ્રવ્યાર્થિક નયની પ્રધાનતાથી વસ્તુતત્ત્વને નિર્ણય થતો હોય ત્યાં પર્યાયાર્થિક
નયની ઓળખ કરી તે નયથી તેના સ્વરૂપને નિર્ણય કરે છે ન્યા પર્યાયાર્થિક
નયથી વસ્તુ સ્વરૂપને નિર્ણય થતો હોય ત્યાં તે નયથી બીજા-દ્રવ્યાર્થિક-નયને
ઓળ કરી વસ્તુના સ્વરૂપને નિર્ણય કરે છે પણ પોતાના આગ્રહથી કેઈ પણ
વસ્તુને એકાન્તરૂપથી નિર્ણય અગર પ્રતિપાદન કરતા નથી આત્માની ઉપર
અનાદિ કાળથી બેઠેલી કર્મરૂપી ધૂળને નાશ કરવાવાળા હોય છે મુખ ઉપર

તે હિ દર્શનાવરણીયકર્મવિપાકોદયાત્ સંયમાધારશરીરસ્થિત્યર્થં નિદ્રોપગતા દ્રવ્યતઃ સુપ્તા અપિ દર્શનમોહનીયરૂપમહાનિદ્રાપગમાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રારાધકત્વેન સદા જાગરૂકા એવ । તત્ર જિનકલ્પિનો રાત્રૌ પ્રહરમેકં સ્થવિરકલ્પિનસ્તુત્સર્ગતઃ પ્રહરદ્વયં સ્વપન્તિ ।

વસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીકે ધારક હોતે હૈં । વીસ સ્થાનોંકી અચ્છી તરહ આરાધના કરનેવાલે હોતે હૈં । દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય, ઇન તીનોં દ્વારા કિયે ગયે તીન પ્રકારકે ઉપસર્ગોં કો સહનેકે સ્વભાવવાલે હોતે હૈં । (શાસ્ત્રોંમેં જિન ૨ આચાર-વિચારોંકા પાલના વતલાયા હૈં ડન ૨ આચાર-વિચારોંકો પાલનેવાલે હોતે હૈં । પરમાર્થકે જ્ઞાતા હોતે હૈં । એસે યે ભાવમુનિ હી સદા જાગરૂક હોતે હૈં, અર્થાત્ હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકપૂર્વક સકલ પરીષહોં કો જીતતે હુએ સયમકે આરાધનમેં સદા દત્તાવધાન રહતે હૈં ।

યદ્યપિ યે દર્શનાવરણીય કર્મકે વિપાકોદયસે સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં, ઇસ અપેક્ષાસે યે દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં, તો ભી દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાકે વિનાશસે ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રકે આરાધક હોનેસે યે સદા જાગરૂક હી રહતે હૈં । જિનકલ્પી મુનિ રાત્રિમેં એક પ્રહર સોતે હૈં, કયોં કિ ઇનકા ઇસી પ્રકારકા કલ્પ હૈં । સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગસે દો પ્રહર સોતે હૈં ।

દોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીના ધારક હોય છે વીસ સ્થાનોની સારી રીતે આરાધના કરનારા હોય છે દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય એમ ત્રણે દ્વારા કરવામાં આવેલા ત્રણ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સહન કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે શાસ્ત્રોમાં જે જે આચાર વિચારોનું પાલન કરવાનું બતાવેલ છે તે તે આચાર વિચારોના પાળવાવાળા હોય છે પરમાર્થના જ્ઞાતા હોય છે એવા એ ભાવમુનિ જ સદા જાગરૂક હોય છે, અર્થાત્ હેય અને ઉપાદેયના વિવેકપૂર્વક સકળ પરીષદોને જીતતાં સયમના આરાધનમાં સદા દત્તાવધાન રહે છે

જે કે તેઓ દર્શનાવરણીય કર્મના વિપાકના ઉદયથી સયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે, આ અપેક્ષાથી એ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે તો પણ દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાના વિનાશથી ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રના આરાધક હોવાથી સદા જાગરૂક જ રહે છે જનકદેવી મુનિ રાત્રિમાં એક પ્રહર સુવે છે, કારણ કે તેનો આ પ્રકારનો કલ્પ છે. સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગથી બે પ્રહર સુવે છે,

સુચનં જાગરણં ષાષ્ટ ધર્મારાધનમધિકૃત્યામિધીયતે, અતો દ્રવ્યમાત્રમેવેન સુપ્તતાં
જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં મવતિ કસ્ય નેતિ મજ્જવતુષ્ટયં મદર્શયતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, માત્રતો જાગર્તિ ।
- (૨) માત્રતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, માત્રતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, માત્રતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અથ પ્રથમમજ્જવતો ધર્મારાધનં મવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન મવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, એ દોનોં વાતે ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપે
ક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હૈં । ફસલિયે દ્રવ્ય ઓર માત્રકે મેવસે સોનેવાલોકે
તથા જાગનેવાલોકે બીચમેં કૌન ધર્મકા આરાધક હોતા હૈ, કૌન નહીં
હોતા હૈ ? ફસ વાતકો ચાર મંગોસે દિસ્વલાતે હૈ—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર માત્રસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) માત્રસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર માત્રસે બી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે બી સુપ્ત હૈ ઓર માત્રસે બી સુપ્ત હૈ ।

ફન ચાર મંગોકો લેકર જય વિચાર કિયા જાતા હૈ તો જો દ્રવ્યસે
તો સુપ્ત હૈ પર માત્રસે જાગ્રત હૈ, એસે પ્રથમ મંગવાલેકો ધર્મકા આરા
ધન હોતા હૈ । દ્વિતીય મંગવાલેકો નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ યહ માત્રસે
હી સુપ્ત હૈ, દ્રવ્યજાગરુજતા તો ધર્મારાધનમેં કાર્યકારી હી નહીં હૈ ।

સુવું અને જાગવું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી બહી
કહેવામાં આવેલ છે એથી દ્રવ્ય અને જાગના એકથી સુવાવાળાની તથા જાગવા-
વાળાની વચમાં ધર્મનું આરાધન કેને શાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને
ચાર ભગીથી બતાવે છે

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ જાગથી જાગૃત છે
- (૨) જે જાગથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને જાગથી પણ જાગૃત છે
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને જાગથી પણ સુપ્ત છે

આ ચાર ભગીને લઈને અપારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી
તો સુપ્ત છે પણ જાગથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભગવાળાને ધર્મનું આરાધન
શાય છે, બીજા ભગવાળાને નહિ, કારણ કે તે જાગથી જ સુપ્ત છે દ્રવ્ય જાગૃતતા
ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.

તૃતીયભદ્રવતો દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયભદ્રવતૈવ ભાવ્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થભદ્રવતશ્ચ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાવલ્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો हि निद्रया भवति । सा च पञ्चविधा (१) निद्रा, (२) निद्रानिद्रा, (३) प्रचला (४) प्रचलाप्रचला (५) स्त्यानर्द्धिः ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલાપ્રચલા-સ્ત્યાનર્દ્ધિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્યો हि मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने

તૃતીય ભંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઓર ભાવસે-દોનો પ્રકારસે સદા જાગરૂક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીયભંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવાનને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) । ચતુર્થ ભંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; ક્યોં કિ યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ, ઇન દોનો પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઓર સ્ત્યાનર્દ્ધિ, યે ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો વહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીજા ભગવાણને સુચારુરૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી—બન્ને પ્રકારથી સદા ભગરૂક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીજા ભગવાણ બનવું જોઈએ માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તા અમુનય સદા મુનયો જાગ્રતિ) એથા ભગવાણને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ સુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રબળતા છે

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે,— (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ. તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દ્ધિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ જીવોને

સાસ્વાદનગુણસ્થાને ચાનન્તાનુબન્ધિકપાયથઘેન સહ મનતિ, ક્ષયસ્તુ નવમાઽર્નિર્ણયિ-
વાદરગુણસ્થાનસ્ય નક્ષુ માગેસુ મધ્યે પ્રથમમાગસ્યકાલસ્ય કિયસ્તુ સસ્યેયાંશ્વ
મથેપુ સત્તુ જાયતે । નિદ્રાપ્રચલયોરુદય* સામાન્યદર્શનાવરણીયકર્મોદયમ્ભવતિ ।
વન્ધોપરમોડ્પૂર્વકરણનામકાદ્યમગુણસ્થાનકાલસ્ય સંખ્યેયમાગાતે જાયતે, ક્ષય-
શ્ચાન્નૂતનવન્ધમાવાત્ । ક્ષયથ ક્ષીણમોહાક્યદ્વાદશગુણસ્થાનસ્ય ચરમસમયદ્વયેજ-
શ્ચિષ્ટે સતિ મથતિ । एतयोर्द्वयस्तु उपशान्तક્રોધोપशान्तમોહयोरपि મનતીતિ નિદ્રા-
પ્રમાદસ્ય દુરન્તસ્ત્વં વિદ્યેયમ્ ।

જીવ 'મી સમ્યક્સ્થકો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ ।' 'इनका यथ मिथ्यादृष्टि
नामक प्रथम गुणस्थानमें और सास्वादन नामक द्वितीय गुणस्थानमें
अनन्तानुबन्धी कषायके यथके साथ जीवोंको होता है, और क्षय नभमें
अनिवृत्तियादर गुणस्थानके नौ ९ भागोंमेंसे प्रथम भागके कालके जब
किरनेक संख्यात अष्ट व्यतीत हो जाते हैं तब होता है ।

નિદ્રા ઓર પ્રચલાકા ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મકે ઉદયસે
હોતા હૈ । इनके यथका अभाव अपूर्वकरण नामके आठवें गुणस्थानके
संख्यातवें भागके अन्तमें होता है । उसके बाद इनके नूतन यथका
अभाव हो जाता है । इनका क्षय 'मी' क्षीणमोह नामके पारहवें गुणस्थानके
अन्तिम दो समयों के अर्धशिष्ट रहने पर होता है । इन दोनोंका उदय
दसवें और ग्यारहवें गुणस्थानक तकके जीवोंमें भी होता है । इसी लिये
निद्राप्रमादकी दुरन्तता है, अर्थात् इसका अन्त होना पड़ा कठिन है ।

સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેને બધા મિથ્યાદૃષ્ટિ નામના પ્રથમ ગુણ-
સ્થાનમાં, અને સાસ્વાદન નામના બીજા ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબન્ધી કષાયના
બંધની સાથે જીવોને થાય છે, અને ક્ષય નવમાં અનિવૃત્તિવાદરગુણસ્થાનના નવ
ભાગોમાંથી પ્રથમ ભાગના કાળના અંતારે કેટલાક સંખ્યાત અષ્ટ વ્યતીત થઈ
જાય છે ત્યારે થાય છે

નિદ્રા અને પ્રચલાનો ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી થાય
છે તેના બંધનો અભાવ અપૂર્વકરણ નામના આઠમા ગુણસ્થાનના સંખ્યાતમાં
ભાગના અંતમાં થાય છે ત્યારબાદ તેને નૂતન બંધનો અભાવ થઈ જાય છે
તેનો ક્ષય પણ ક્ષીણમોહ નામના પારમા ગુણસ્થાનના અંતિમ બે સમયોના અર્ધ
શિષ્ટ રહેવા પર થાય છે એ બંનેનો ઉદય દશમા અને અગ્રીયારમા ગુણસ્થાન
મુખીના જીવોમાં પણ થાય છે, માટે નિદ્રાપ્રમાદની દુરન્તતા છે, અર્થાત્
તેનો અંત થવો મુશ્કેલ કઠિન છે

દ્રવ્યભાવસુખવિષયે વિવેકદક્ષઃ સુખમનુભવતિ । યથા પથિ તસ્કરાદિભયે સમુપસ્થિતે વિવેકી સ્વાત્મનઃ સાપાયનિરુપાયવિષયકં વિવેકમાલમ્બ્ય પલાયનાદિકાં ક્રિયા કુર્વાણઃ સુખભાગભવતિ । એવં મુનિરપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મકવિવેકવત્ત્વેન સદા પ્રમાદાદિભયાદ્ જ્ઞાનાચારાદિસમારાધનાવધાનરૂપાં જાગ્રદવસ્થાં વિભ્રાણઃ શિવસુખભાગભવતિ । ઉક્તઞ્ચ—

દ્રવ્યસુખ ઓર ભાવસુખકે વિષયમેં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખકા અનુભવ કરતા હૈ, અર્થાત્ જો મુનિ હસ વાતકો સમજતા હૈ કિ દ્રવ્યસુખ અવસ્થા ઓર ભાવસુખ-અવસ્થા આત્માકે લિયે સદા દુઃખદાયી હૈં, હસલિયે હન અવસ્થાઓંકા સદા પરિહાર કરના ચાહિયે, હન અવસ્થાઓંમેં વર્તમાન પ્રાણીકા કમી ખી કલ્યાણ નહીં હોતા હૈ । હસ તરહ કા વિવેક જિસ આત્મામેં હન દોનોં અવસ્થાઓંકે પ્રતિ જાગ્રત હો જાતા હૈ વહ હનસે સદા દૂર રહતા હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ મેં ચૌરાદિકોંકા ભય ઉપસ્થિત હોનેપર વિવેકી વ્યક્તિ હસ વાતકા વિચાર કરતા હૈ કિ હસ ઓર ભય હૈ હસ ઓર ભય નહીં હૈ । ઁસા વિચાર કર નિર્ભય સ્થાનકી ઓર ભાગતા હૈ ઓર સુખકી સાંસ લેતા હૈ । ઁસી પ્રકાર મુનિ ખી સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાલી હોનેસે સદા પ્રમાદાદિકોંકે ભયસે જ્ઞાનાચારાદિકોંકી સમ્યક્ આરાધનામેં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાકો ધારણ કરતા હુઆ મોક્ષ સુખકા ભાગી હોતા હૈ । કહા ખી હૈ—

દ્રવ્યસુખ અને ભાવસુખના વિષયમા વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખનો અનુભવ કરે છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતતે સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુખ અવસ્થા અને ભાવસુખ અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ તેવી અવસ્થાઓમા વર્તમાન પ્રાણીનુ કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામા એ બન્ને અવસ્થાઓ પ્રતિ જાગૃત થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમા ચોર આદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ જાણુ ભય છે, આ જાણુ ભય નથી પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુખનો શ્વાસ લે છે તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાદાદિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામા અવધાનરૂપ જાગૃક અવસ્થાને ધારણ કરીને મોક્ષ સુખના ભાગી થાય છે. કહ્યું છે—

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ જાગરમાણસ્સ વહ્દણ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગગદ્ધ સો સયા ધણ્ણા ” ॥૧॥ ॥ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદશાધાનાક્રમણિ, તચ્ચ પ્રાણિનામહિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્મુ
સ્વામિનમાદ-‘લોયંસિ જાણ, રૂપાદિ ।

મૂલ-‘લોયસિ જાણ અહિયાય દુક્ખ, સમય લોગસ્સ
જાણિત્તા રૂપ સંથોવરણ ॥ સૂ. ૨ ॥

જાણ-લોકે જાનીદિ અહિતાય દુઃખ, સમય લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અવશ્યોપરત ॥૨॥

ટીકા-હે જમ્મુ ! લોકે-પદ્મજીવનિકાયરૂપે જિનશાસને થા, દુઃસં-દુઃસ

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ, જાગરમાણસ્સ વહ્દણ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગગદ્ધ સો સયા ધણ્ણો ॥૧॥ ” ૧ ॥

ગાથાકા અર્થ થઈ છે કે-‘હે જમ્મુ ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યો
કિ જાગનેવાલોંકી યુદ્ધિ પડતી છે । જો મોત્તા છે વહ્દ ધન્ય નહોં છે, જો
જાગતા છે વહ્દ સદા ધન્ય છે ’ ॥૧॥

યદ્દ પહિલે કહા જા ચુકા છે કિ સુસ ઓર જાગત અવસ્થા ધર્મા-
ધનની અપેક્ષાસે હી સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા છે, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અહિ
તકારી છે, એસા વિચાર કર ખી સુધર્માસ્વામી જમ્મુસ્વામીસે કહતે છે-
“ લોયંસિ જાણ ” ૧ ॥

હે જમ્મુ ! વહ્દજીવનિકાયસ્વરૂપ દસ લોકર્મે, અથવા જિનશાસનર્મે,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ જાગરમાણસ્સ વહ્દણ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગગદ્ધ સો સયા ધણ્ણો ” ॥૧॥ ૧ ॥

જાણના અર્થ આ છે કે-હે જમ્મુ ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે
જાગવાવાળાની યુદ્ધિ વધે છે જે મોત્તા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે
જ સદા ધન્ય છે

જો પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુસ અને જાગત અવસ્થા ધર્માધનની
અપેક્ષાથી જ સમજની બેધબે ॥ સૂ. ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અહિ
તકારી છે જોવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્મુસ્વામીને કહે છે-‘લોયંસિ
જાણ ૧ ॥

હે જમ્મુ ! વહ્દજીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકર્મ અથવા જિનશાસનર્મ દ્વારા

યતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્, રૂઢ દુઃખશબ્દેનાજ્ઞાનં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં કર્મ વા ગૃહ્યતે દુઃખજનકત્વાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃખાય જાયતે । તત્રૈહિકં દુઃખં પ્રાણાતિપાતાદિસાવધાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તાનાં ભાવસુપ્તાનાં ભૂષાદિકૃતં વન્ધવધતાડનશૂ-
લારોપણાદિકમ્, પારત્રિકશ્ચ દુઃખં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-
દુઃખહેતુભૂતમજ્ઞાનં કર્મ વાસ્તીતિ ત્વં જાનીહિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા વુચ્યસ્વ । એતસ્ય ફલશ્ચ

દુઃખ-અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય જીવોંકે લિયે ઇસ લોકમેં તથા પરલોકમેં અહિતકારી માને ગયે હૈં । યહાં ‘દુઃખ’ શબ્દકા અર્થ-
“દુઃખયતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્” જો જીવોંકો પીડા પહુંચાવે એસા અજ્ઞાન,
અથવા હિંસાદિક પાપકર્મ-હૈ । અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક, જીવોંકો સદા દુઃખદાયી હોતે હૈં, ઇસ અપેક્ષાસે અજ્ઞાનાદિક દુઃખકે કારણ હૈં । ફિર
મી યહાં પર ઇન્હેં જો દુઃખરૂપ કહા ગયા હૈ વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપ-
ચારસે કહા ગયા હૈ । ઇન પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમેં
પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ભાવસુપ્ત જીવોંકો ઇસ લોકમેં રાજા આદિકે દ્વારા
કિયે ગયે વન્ધ, વધ, તાડન ઓર શૂલારોપણ આદિ અનેક કષ્ટ ભોગને
પડતે હૈં, તથા પરલોકમેં નરકનિગોદાદિકકી યાતનાઈ સહની પડતી હૈં ।
ઇસલિયે જમ્બૂસ્વામીકો ઉદ્દેશ કરકે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—

હે જમ્બૂ ! ઇસ લોક ઓર પરલોકસમ્બન્ધી અનેક દુઃખોંકે કારણ
પ્રાણાતિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન હૈં, એસા તુમ જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનો ।

અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ કાર્ય આ લોકમા તથા પરલોકમા જીવોંમાટે
અહિતકારી માનવામા આવેલ છે અહીં હું બી શબ્દનો અર્થ— ‘દુઃખયતિ પીડ-
યતીતિ દુઃખમ્’ જે જીવોંને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે
અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ જીવોંને સદા દુઃખદાયી થાય છે આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-
નાદિક, હું ખના કારણ છે તો પણ આ ઠેકાણે તેને જે હું ખરૂં કહેવામા આવેલ
છે તે કારણમા કાર્યના ઉપચારથી કહેવામા આવેલ છે આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ
સાવધ અનુષ્ઠાનોમા પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત જીવોંને આ લોકમા રાજા આદિ
દ્વારા કરવામા આવેલ બધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અનેક કષ્ટોંને ભોગ-
વવા પડે છે, તથા પરલોકમા નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે
છે એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદ્દેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સબધી અનેક હું ખોંતુ કારણ પ્રાણા-
તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણો એ જાણવારૂપ

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ જાગરમાણસ્સ વદ્ધપ્પ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ઘણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ઘમ્મો ” । ૧૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનાનુવતિ, તત્ત્વ પ્રાણિનામદિતાયતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી પ્રમ્
સ્વામિનમાદ-‘લોચંસિ જાણ, ૬ત્પાદિ ।

મૂલ્ય-લોચંસિ જાણ અદિયાય દુક્ખસ્થ, સમય લોગસ્થ
જાણિત્તા ૬સ્થ સત્થોવરપ્પ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા-લોકે જાનીરિ અદિતાય દુક્ખ, સમયં લોકસ્થ જ્ઞાત્વા અન્ન સ્વોપરત્તા ॥ ૧૧ ॥

ટીકા-હે જમ્મુ ! લોકે-પદ્ધત્તીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુક્ખ-દુક્ખ

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ, જાગરમાણસ્સ વદ્ધપ્પ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ઘણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ઘમ્મો ॥ ૧૧ ॥ ” ૬તિ ।

ગાથાકા અર્થ યદ્દ હૈ કિ-‘હે જમ્મુ ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યો
કિ જાગનેવાલોંકી યુદ્ધિ વપ્પતી હૈ । જો સોતા હૈ વદ્ધ ઘન્ય નહોં હૈ, જો
જાગના હૈ વદ્ધ સદા ઘન્ય હૈ ’ ॥ ૧૧ ॥

યદ્દ પદ્ધિલે કહા જા શુકા હૈ કિ સુસ ઓર જાગત અવસ્થા ધર્મારા
ઘનકી અપેક્ષાસે હી સમજના ચાદિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અદિ
તક્કારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્મુસ્વામીસે કહતે હૈ-

“ લોચંસિ જાણ ” ૬ત્પાદિ ।

હે જમ્મુ ! પદ્ધત્તીવનિકાયસ્થરૂપ હસ્થ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચ, જાગરમાણસ્સ વદ્ધપ્પ યુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ઘણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ઘમ્મો ॥ ૧૧ ॥ ૬તિ ।

ગાથાને અર્થ આ છે કે-હે જમ્મુ ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે
અજાગવાણની યુદ્ધિ વપ્પ છે જે સુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે
જ સદા ધન્ય છે

જો પદ્ધિલાં કહેવામા આવ્યું છે કે સુમ અને જાગત અવસ્થા ધર્માસધનની
અપેક્ષાથી જ સમજવી એમણે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે અને અજ્ઞાન પ્રાણિયોં માટે સદા અદિત
તક્કારી છે એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્મુસ્વામીને કહે છે-‘લોચંસિ
જાણ ’ ૬ત્પાદિ

હે જમ્મુ ! પદ્ધત્તીવનિકાયસ્થરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં દુષ્ણ

यद्वा लोकस्य=जिनशासनस्य समयम्=आचारं ज्ञानाचारादिरूपं पञ्चविधं ज्ञात्वा=मोक्षसुखहेतुभूतं सम्यगवबुध्य, अत्र=षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतः=शस्त्रात् द्रव्यभावभेदभिन्नात् उपरतः=निवृत्तो भव । धर्मजागरणेन जागृहीत्यर्थः ।

सर्वो हि लोकः शब्दादिविषयभोगेच्छया प्राणातिपातादिकं नानाविधं कर्म करोति, तेन नरकादियातनास्थानेषु घोरतरं दुःखमाप्नोति, अतः षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतो भवेति भावः ।

अथवा लोकस्येति पृष्ट्याः सप्तम्यर्थे विधानात् लोके=प्राणिसङ्घे ‘समयं’ इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वकीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थं सत्थोवरण” इसका यह भी अर्थ होता है कि—‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर षड्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्—सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि—यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरातिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! षड्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

अथवा “लोगस्स” इस षष्ठी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि—हे जम्बू ! तुम सदा इस बातका भली प्रकार

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थं सत्थोवरण” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે જીનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે બાણીને ષડ્જીવનિકાયના વિષયમા દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામા સતર્ક રહો ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો સારાંશ તેનો એ છે કે—આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણાનિપાતાદિક અનેક પ્રકારના દુષ્કાર્યો કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક યાતનાના સ્થાન છે તેમા ઘોરાતિઘોર દુઃખો ભોગવે છે તે માટે હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયના વિષયમા શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો

અથવા “લોગસ્સ” આ છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાનમા “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતા” માનીને એવો અર્થ થઈ બાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ વાતનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરો કે જે પ્રકારે

દુઃસહેતોરજ્ઞાનરૂપાદ્ દ્રવ્યમાયસ્વાપાભિર્વર્તનમિતિ । સત્ કિં કુર્યાદિત્યાદિ-લોક-
સ્યે-સ્વાદિ 'લોકસ્ય-પ્રાણિસહસ્ય સમયમ્-આચારં જ્ઞાત્વા-દુ સહેતું વિવાર્ય,
લોકો હિ ભોગેચ્છયા પ્રાણિપીઠનાદિજનિત કર્મ પરિણ્ણ નરકેષૂત્પદ્યતે, તત્ કર્મ
ધિભિષ્કાન્તો ધર્મોપાર્જનહેતુર્મૂતં મનુષ્યજન્માનાપ્ય પુનરપિ તત્તદેવ કર્મ કરોતિ પન
યેન પુનરપોઽયઃ સ્થાનં વ્રજતિ, ન કદાચિત્સસારદાવાનલ્લાદ્ વહિર્યાતીતિ લોકાચારઃ ।

इस जाननेरूप क्रियाका फल अज्ञानरूप द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा से
जीवका निवृत्त होना है । जीव जब इनसे निवृत्तिसंपन्न हो जाता है तब
वह यह समझने लगता है कि—यह लोक भोगोंकी इच्छासे प्राणिपीडन
आदि कृत्य करता है, और इस प्रकारके कृत्य करनेसे वह अशुभ क-
र्मोंका आश्रय कर बन्धक बनना है । उनके उदयमें इसको नरकादि अनेक
कुगतियोंमें अम भरण करना पड़ता है । वहांसे निकलने पर यदि इसको
किसी शुभ कर्मके उदयसे मनुष्यभवकी—जिसमें कि इसको धर्मोपार्जन
करनेका अवसर मिलता है—प्राप्ति हो जाती है तो भी यह जीव बारबार
उन्हीं कुकृत्योंको करता है, जिनकी वजहसे इसको पुनः नरकादि गतियों
में जाना पड़ता है । इस तरहसे इस जीवका कभी भी संसाररूपी दावा-
नलसे पाहर आना नहीं हो सकता है । यही इस लोकका आचार है । इस
आचारको—जिससे कि इसको अनेक अनेक संकटोंका सामना करना पड़ता
है—जान कर तुम इस द्रव्यरूप एवं भावरूप शास्त्रसे सदा निवृत्त होओ ।

કિંમતુ ફળં ડુ ખતુ કારણં જે અજ્ઞાનરૂપ દ્રવ્યનિદ્રા અને ભાવનિદ્રા છે તેનાથી
છવને નિવૃત્ત થવું છે છવ બધારે તેનાથી નિવૃત્તિસપ્ત થઈ બાધ છે ત્યારે તે
એવું સમજવા લાગે છે કે આ લોક, ભોમોની ઇચ્છાથી પ્રાણિ-પી ન આદિ કૃત્ય
કરે છે અને આવા પ્રકારનું કૃત્ય કરવાથી તે અશુભ કર્મોનિ આશ્રય કરી બંધક
બને છે તેના ઉદયમા તેને નરકાદિ અનેક કુગતિઓમાં અમ ભરણ કરવું પડે
છે ત્યાંથી નિકળીને કશાપ કોઈ શુભ કર્મના ઉદયથી મનુષ્યભવની—કે જેમા
તેને ધર્મોપાર્જન કરવાનો અવસર મળે છે—પ્રાપ્તિ થઈ બાધ છે તે પણ તે છવ
બારબાર તેજ કુકૃત્યો કરે છે કે જેનાથી તેને પુનઃ નરકાદિ ગતિઓમા જવું
પડે છે આવી રીતે આ છવને કદિ પણ સસારરૂપી દાવાનગથી બહાર આવવાનું
જની શક્ય નથી એ જ આ લોકને આચાર છે આવા આચારને—કે જેનાથી
તેને અનેક સંકટોને સામનો કરવા પડે છે—જાણીને તમે આ દ્રવ્યરૂપ તેમજ
ભાવરૂપ શાસ્ત્રથી સદા નિવૃત્ત થાઓ

यद्वा लोकस्य=जिनशासनस्य समयम्=आचारं ज्ञानाचारादिरूपं पञ्चविधं ज्ञात्वा=मोक्षसुखहेतुभूतं सम्यगवबुध्य, अत्र=षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतः=शस्त्रात् द्रव्यभावभेदमिन्नात् उपरतः=निवृत्तो भव । धर्मजागरणेन जागृहीत्यर्थः ।

सर्वो हि लोकः शब्दादिविषयभोगेच्छया प्राणातिपातादिकं नानाविधं कर्म करोति, तेन नरकादियातनास्थानेषु घोरतरं दुःखमाप्नोति, अतः षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतो भवेति भावः ।

अथवा लोकस्येति पष्ठ्याः सप्तम्यर्थे विधानात् लोके=प्राणिसङ्घे ‘समयं’ इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वकीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थं सत्थोवरण” इसका यह भी अर्थ होता है कि—‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर षड्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्—सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि—यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरतिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! षड्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

अथवा “लोगस्स” इस षष्ठी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि—हे जम्बू ! तुम सदा इस बातका भली प्रकार

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थं सत्थोवरण” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે જીનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે બાણીને ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામાં સતર્ક રહો ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો સારાશ તેનો એ છે કે—આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણાનિપાતાદિક અનેક પ્રકારના દુષ્કાર્યો કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક યાતનાના સ્થાન છે તેમાં ઘોરાતિઘોર દુઃખો ભોગવે છે તે માટે હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો

અથવા “લોગસ્સ” આ છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાનમાં “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતા” માનીને એવો અર્થ થઈ જાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ વાતનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરો કે જે પ્રકારે

‘યથા મમ દુઃસ્વાદિકં ભવતિ તથૈવાયપામપ્યકેન્દ્રિયાદીનાં વૃત્યુમીભ્યાં મુલેષ્ઠનાં તદુત્પન્નતે’ इत्यनुभवसिद्धामात्मोपमां ज्ञात्वा अप्र-अस्मिन् पद्मजीवनिकायरूपे लोके सुलोपरतो मवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

પદ્મજીવનિકાયરૂપે સુલોપરતઃ સન્ યથા મુનિસ્ત્વં પ્રાપ્નોતિ તદા—
‘જસ્તિમે’ ઇત્યાદિ ।

મૂઢમ્—જસ્તિમે સદા ય રૂચા ય રસા ય ગધા ય ફાસા ય અભિસમપ્નાગયા ભવતિ, સે આયવ નાણવ વયવ ધમ્મવ વંમવ પપ્પાણેહિં પરિયાણહ લોચ, મુળીતિ વુચ્ચે, ધમ્મવિક્ક ઉજ્જુ, આવદ્દસોયસગમભિજાણહ ॥ સૂ० ૩ ॥

ચિન્તાર કરો કિ જિસ પ્રકાર હમેં હિંસાદિક કારણોકે ઉપસ્થિત હોનેપર કષ્ટકા અનુભવ હોતા હૈ ઈસી પ્રકાર દુઃસ્વે એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોંકો —જો સદા મૃત્યુસે ઝરતે હૈં ઓર સુખકે અભિલાષી હૈં—હિંસાદિક કારણોકે ઉપસ્થિત હોનેપર દુઃસ્વ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર અનુભવસિદ્ધ —“ આત્મનઃ પ્રતિકુલાનિ પરેપાં ન સમાચરેત ” હસ વાક્યકો અપને હૃદયપટલ પર ઉતાર કર કમી મી કિસી મી જીવકો કષ્ટ ન પહોંચે એસી પ્રવૃત્તિ કરો । પરકે વૃત્તિઓંકા અપને દુઃસ્વોકે સાથ મિલાન કર સદા જાનીકો હસ યાતકા હદ ચિન્તાર કરના ચાહિયે કિ સંસાર કે એકેન્દ્રિયસે લગા કર પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત મમસ્ત જીવ મૃત્યુસે ઝરતે હૈં ઓર સુખકો ચાહતે હૈં, હસલિયે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકમેં અપની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાલી યનાની ચાહિયે ॥ સૂ० ૨ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટનો અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે જીવ એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ટરે ॥ અને મુખના અભિલાષી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃખ થાય છે, આવા પ્રકારે અનુભવસિદ્ધ—“ આત્મનઃ પ્રતિકુલાનિ પરેપાં ન સમાચરેત ” આ વાક્યને પોતાના હૃદયમાં ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ પણ જાને કષ્ટ ન પહોંચે તેવી પ્રવૃત્તિ કરે. પારકાના દુખને પોતાના દુખોની સાથે મેળવી સદા સખીએ બેવાતને. હદ નિશ્ચય કરવો એકેન્દ્રિય કે સંસારના એકેન્દ્રિયથી હદ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુથી ઝરે છે અને મુખને ચાહે છે માટે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકમાં પોતાની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાળી યનાવવાં એકેન્દ્રિય ॥ સૂ० ૨ ॥

છાયા—યસ્યેમે શબ્દાશ્ચ રૂપાણિ ચ રસાશ્ચ ગન્ધાશ્ચ સ્પર્શાશ્ચાભિસમન્વાગતા ભવન્તિ, સ આત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ પ્રજ્ઞાનૈઃ પરિજ્ઞાનાતિ લોકમ્, મુનિરિત્યુચ્યતે, ધર્મવિદ્ ઋજુઃ, આવર્તસ્રોતઃસદ્ગમભિજ્ઞાનાતિ ॥ સૂ૦ ૩॥

ટીકા—યસ્ય મુનેઃ, ઇમે=પ્રત્યક્ષમનુભૂયમાનાઃ, શબ્દાઃ રૂપાણિ રસા ગન્ધાઃ સ્પર્શાશ્ચ અનુકૂલપ્રતિકૂલરૂપાઃ, અભિસમન્વાગતાઃ—અભિ=આભિમુખ્યેન, સમ્યગ્=ઈષ્ટાનિષ્ટાવધારણેન, અનુ=શબ્દાદિસ્વરૂપાવગમાત્ પશ્ચાત્, આગતાઃ=વિજ્ઞાતાઃ, ભવન્તિ—શબ્દાદિવિષયાઃ પરમાર્થતઃ સંસારકારણતયાઽઽત્મકલ્યાણાય ન ભવન્તિ,

ષડજીવનિકાયરૂપે આ લોકમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રોથી ઉપરત હોતા હોવા જીવ જિસ પ્રકારથી મુનિપણેનો પાતા છે તેની પ્રતિપાદન કરતે છે—‘ જસિસમે ’ ઇત્યાદિ ।

જિસ મુનિકે લિયે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત શબ્દ; રૂપ, રસ, ગન્ધ અને સ્પર્શ, જે પૌદ્ગલિક ગુણ અનુકૂલ અને પ્રતિકૂલ હોતે હોયે ઇષ્ટ અને અનિષ્ટની કલ્પનાકે કારણ નહીં બનતે છે, અર્થાત્ જે શબ્દાદિક વિષય પુદ્ગલકે ગુણ છે, ઇનસે મેરી આત્માકા કોઈ મી ઉપકાર યા અપકાર નહીં હો સકતા છે । ઇનમેં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કરનેસે જે મેરે લિયે સંસારકા કારણ બનેંગે, ક્યોં કિ જે સ્વયં સંસારકે હી કારણ છે—મુક્તિકે નહીં । મુક્તિકે કારણ જે હી હોતે છે જિનસે આ આત્માકા કલ્યાણ હોતા છે । ઇનસે તો મેરી આત્માકા કુછ મી કલ્યાણ નહીં હો સકતા છે, અતઃ ઇનમેં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કર મેં ક્યોં અપના વિગાડ કરું । ઇનકે સ્વરૂપનો જાનનેકે બાદ આ પ્રકારકે દૃઢ અધ્યવસાયસે આ શબ્દાદિકોં

ષડજીવનિકાયરૂપ આ લોકમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રોથી ઉપરત બનીને જીવ જે પ્રકારે મુનિપણને પ્રાપ્ત થાય છે તેનું પ્રતિપાદન કરે છે—‘ જસિસમે ’ ઇત્યાદિ.

જે મુનિના માટે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગન્ધ અને સ્પર્શ, એ પૌદ્ગલિક ગુણ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ હોવા છતાં ઇષ્ટ અને અનિષ્ટની કલ્પનાના કારણ બનતા નથી અર્થાત્ તે શબ્દાદિક વિષય પુદ્ગલકે ગુણ છે તેનાથી મારા આત્માને કોઈ પણ ઉપકાર યા અપકાર બની શકતો નથી તેમાં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કરવાથી એ મારા માટે સંસારનું કારણ બનશે કારણ કે એ સ્વયં જ સંસારનું જ કારણ છે, મુક્તિનું નહિ મુક્તિનું કારણ તે બને છે જેનાથી આ આત્માનું કલ્યાણ થાય છે, આનાથી તો મારા આત્માનું કોઈ પણ કલ્યાણ બની શકતું નથી માટે તેમાં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કરીને આ માટે પોતાનો બગાડ કરે તેના સ્વરૂપને જાણ્યા બાદ આ પ્રકારના દૃઢ અધ્યવસાયથી તે શબ્દાદિકોમાં

‘યયા મમ દુઃસ્વાદિકં ભવતિ તથૈવાન્યેષામપ્યેકેન્દ્રિયાદીનાં મૃત્યુમીરુનાં મુખેન્દ્રનાં તદુત્પયતે’ इत्यनुभवस्तिद्वामात्मोपमां ज्ञात्वा अम=अस्मिन् पद्मजीवनिकायरूपे लोके श्रद्धोपरतो मवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

પદ્મજીવનિકાયલોકે શ્રદ્ધોપરતઃ સન્ યથા મુનિત્વં પ્રાપ્નોતિ તથા—
‘જસ્તિમે’ इत्यादि ।

મૂલ્મ—જસ્તિમે સદા ય રૂઘા ય રસા ય ગધા ય ફાસા ય અમિસમદ્વાગયા ભવતિ, સે આયવ નાળવં વયવ ધમ્મવ વમવં પદ્માણેર્હિ પરિયાણઙ્ લોય, મુળીતિ વુચ્ચે, ધમ્મવિઙ્ગ ઉચ્ચ, આવહસોયસંગમભિજાણઙ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ચિંતાર કરો કિ જિમ પ્રકાર હમેં હિંસાદિક કારણોકિ ઉપસ્થિત હોનેપર કષ્ટકા અનુભવ હોતા હૈ ડસી પ્રકાર ઢસરે ંકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોકો —જો સદા મૃત્યુસે ઝરતે હૈ ંર સુલ્લકે અમિલાપી હૈ—હિંસાદિક કારણોકે ઉપસ્થિત હોનેપર દુઃલ્લ હોતા હૈ । હમ પ્રકાર અનુભવસિદ્ધ —“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” હસ વાક્યકો અપને હૃદયવટલ પર ઉતાર કર કમી મી કિસી મી જીવકો કષ્ટ ન પઢુલે પેસી પ્રવૃત્તિ કરો । પરકે દુઃલ્લોકા અપને દુ લ્લોકિ સાથ મિલાન કર સદા જ્ઞાનીકો હસ માતકા હક ચિંતાર કરના ચાહિય કિ સંસારકે ંકેન્દ્રિયસે લગા કર પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુસે ઝરતે હૈ ંર સુલ્લકો ચાહતે હૈ, હસલિયે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકમેં અપની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાલી બનાની ચાહિયે ॥ સૂ ૨ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટને અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે બીજા એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ઢરે છે અને મુખના અધિ લાપી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃલ્લ થાય છે બાવા પ્રકારે અનુ ભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” આ વાક્યરે પોતાના હૃદયમા ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ ખણુ લખને કષ્ટ ન પડેલે તેવી પ્રવૃત્તિ કરે । પારકાના દુઃખને પોતાના દુઃખોની સાથે ંગળવી સદા જ્ઞાનીએ એ વાતને હક નિશ્ચય કરવો એકેએકે સંસારના એકેન્દ્રિયથી લઈ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત લ્લ મૃત્યુથી ંર છે અને મુખને બાહે છે માટે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકમા પોતાની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાલી બનાવવો એકેએકે ॥ સૂ ૨ ॥

छाया—यस्येमे शब्दाश्च रूपाणि च रसाश्च गन्धाश्च स्पर्शाश्चाभिसमन्वागता भवन्ति, स आत्मवान् ज्ञानवान् वेदवान् धर्मवान् ब्रह्मवान् प्रज्ञानैः परिजानाति लोकम्, मुनिरित्युच्यते, धर्मविद् ऋजुः, आवर्तस्रोतःसद्गमभिजानाति ॥ सू० ३॥

टीका—यस्य मुनेः, इमे=प्रत्यक्षमनुभूयमानाः, शब्दाः रूपाणि रसा गन्धाः स्पर्शाश्च अनुकूलप्रतिकूलरूपाः, अभिसमन्वागताः—अभि=आभिमुख्येन, सम्यग्रू= इष्टानिष्टावधारणेन, अनु=शब्दादिस्वरूपावगमात् पश्चात्, आगताः=विज्ञाताः, भवन्ति—शब्दादिविषयाः परमार्थतः संसारकारणतयाऽऽत्मकल्याणाय न भवन्ति।

षडजीवनिकायरूप इस लोकमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे उपरत होता हुआ जीव जिस प्रकारसे मुनिपनेको पाता है उसीका प्रतिपादन करते हैं—‘जस्सिमे’ इत्यादि।

जिस मुनिके लिये प्रत्यक्ष अनुभूत शब्द; रूप, रस, गन्ध और स्पर्श, ये पौद्गलिक गुण अनुकूल और प्रतिकूल होते हुए इष्ट और अनिष्टकी कल्पनाके कारण नहीं बनते हैं, अर्थात् वे शब्दादिक विषय पुद्गलके गुण हैं, इनसे मेरी आत्माका कोई भी उपकार या अपकार नहीं हो सकता है। इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना करनेसे ये मेरे लिये संसारका कारण बनेंगे, क्यों कि ये स्वयं संसारके ही कारण हैं—मुक्तिके नहीं। मुक्तिके कारण वे ही होते हैं जिनसे इस आत्माका कल्याण होता है। इनसे तो मेरी आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता है, अतः इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना कर मैं क्यों अपना बिगाड़ करूँ। इनके स्वरूपको जाननेके बाद इस प्रकारके दृढ़ अध्यवसायसे इन शब्दादिकों

षड्जीवनिकायरूप आ लोकमा द्रव्य अने भावरूप शस्त्रथी उपरत अनिने लव ने प्रकारे मुनिपणुने प्राप्त थाय छे तेनु प्रतिपादन करे छेः—‘जस्सिमे’ इत्यादि

ने मुनिना भाटे प्रत्यक्ष अनुभूत—शब्द, रूप, रस, गन्ध अने स्पर्श, अने पौद्गलिक गुण अनुकूल अने प्रतिकूल होवा छता छिट अने अनिष्टनी कल्पनाना कारण अनता नथी अर्थात् ते शब्दादिक विषय पुद्गलाने गुण छे. तेनाथी मारा आत्माने कोछ पणु उपकार या अपकार अनि शकतो नथी तेमा इष्टानिष्टनी कल्पना करवाथी अने मारा भाटे संसारनु कारण अनशे. कारण के अने स्वयं न संसारनु न कारण छे, मुक्तिनु नहि मुक्तिनु कारण ते अने छे नेनाथी आ आत्मानु कल्याण थाय छे, आनाथी तो मारा आत्मानु कोछ पणु कल्याण अनि शकतु नथी भाटे तेमा इष्टानिष्टनी कल्पना करीने शा भाटे पोताने अगाड करे तेना स्वरूपने लख्या पाद आ प्रकारना दृढ़ अध्यवसायथी ते शब्दादिकोमां

અતસ્તથ મનોજ્ઞાનોન્નિષયેષુ यस્ય રાગદ્વેષો નોત્પદ્યેતે इत्यर्थः, સ આત્મવાન્= જ્ઞાનાદિગુણસમ્પન્ન, યદ્વા-આત્મરિતાચરણમત્ત્વ, શબ્દાદિવિષયેષુ પ્રવર્તમાનમાત્માર્ન તેમ્પાઃ પૃથક્કૃત્ય તુપાઽધ્યાન્યમિષ રસિતેત્યર્થ । જ્ઞાનવાન્=હેયોપાદેયવિવેકવાન્, શબ્દાદિવિષયે રાગદ્વેષો કારણ, રાગદ્વેષતઃ કર્મબન્ધા, તસ્માત્ સંસારપરિશ્રમણં મયસીત્યેવ વિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । તથા વેદવાન્ વેદ્યતે જ્ઞાયતે જીવાનીવાદિસ્વરૂપમનેનેતિ વેદઃ=આચારાધ્યાયાગમઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ વેદવાન્-આચારાધ્યાગમાધિગતેત્યર્થઃ, તથા-ધર્મવાન્-દુર્ગતો પ્રપતન્તં જીવ ધારયતિ રક્ષતીતિ ધર્મઃ-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ

મેં-ચાહે વે અનુકૂલ હોં વાહે પ્રતિકૂલ હોં-જિસ પ્રાણીકો રાગ ઔર દ્વેષ નહીં હોતે હેં વહી પ્રાણી આત્મવાન્ હે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોસે સંપન્ન હે, અથવા આત્મહિતકારી આચરણમેં લક્ષલીન હે । જિસ પ્રકાર તુપસે ધ્યાન્ય અલગ ક્રિયા જાતા હે ડસી પ્રકાર શબ્દાદિ વિષયોમેં પ્રવર્તમાન અપની આત્માકો ડનસે અલગ કર વહ ડસકી રક્ષા કરનેવાલા હે । જ્ઞાનવાન્ હે-હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકવાલા હે । શ્રુત ઔર અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમેં પ્રવૃત્તિ ઔર નિવૃત્તિકે કારણ રાગ ઔર દ્વેષ હે । રાગ ઔર દ્વેષસે નવીન કર્મોંકા બન્ધ, ઔર હસસે જીવોંકા સંસારમેં પરિશ્રમણ હોતા હે । વેદવાન્ હે-જીવાદિક પદાર્થોંકા સ્વરૂપ જિસસે જાના જાતા હે ડસકા નામ વેદ હે, વે આચારાગ્ર આદિ આગમ હે, જનકા જો જાન નેવાલા હે ડસકા નામ વેદવાન્ હે । ધર્મવાન્ હે-દુર્ગતિમેં પડતે હુપ જીવોં કી રક્ષા કરતા હે ડસકા નામ ધર્મ હે, વહ ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ હે, વહ

સહો તે અનુકૂળ હોય કે પ્રતિકૂળ હોય, જે પ્રાણીને રાગ અને દ્વેષ થતો નથી તે પ્રાણી જ આત્મવાન છે અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સંપન્ન છે, અથવા આત્મ હિતકારી આચરણમાં લક્ષલીન છે જેની રીતે તુપથી ધ્યાન્ય અલગ કરવામાં આવે છે તેવી રીતે શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવર્તમાન પોતાના આત્માને તેનાથી અલગ કરી તે તેની રક્ષા કરવાવાળા છે, જ્ઞાનવાન્ છે-હેય અને ઉપાદેયના વિવેકવાળા છે-શ્રુત અને અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના કારણ રાગ અને દ્વેષ છે રાગ અને દ્વેષથી નવીન કર્મોંના બન્ધ અને તેનાથી છવોતુ સંસારમાં પરિશ્રમણ થાય છે. આવા પ્રકારના જ્ઞાનથી તે સંપન્ન છે વેદવાન્ છે-જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપ જેનાથી બાણી શકે છે તેનું નામ વેદ છે તે આચારાગ્ર આદિ આગમ છે તેના જે બાળનાર છે તેનું નામ વેદવાન્ છે ધર્મવાન્ છે-દુર્ગતિમાં પડતા છવોની જે રક્ષા કરે છે તેનું નામ ધર્મ છે તે ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ છે તે જેની પાસે છે અર્થાત્ ? આ ધર્મોના પાલક છે, તેનું

સોઽસ્યાસ્તીતિ ધર્મવાન્ । તથા બ્રહ્મવાન્-બ્રહ્મ=મોક્ષસુખં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્-મોક્ષસુખાભિજ્ઞાં ઇત્યર્થઃ, યદ્વા બ્રહ્મ=અષ્ટાદશવિધં બ્રહ્મચર્યં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, યદ્વા-બ્રહ્મ=કામસેવનપરિત્યાગઃ તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, ઇત્યંભૂતઃ સંયમી પ્રજ્ઞાનૈઃ=પ્રકર્ષેણ જ્ઞાયતે જ્ઞેયં જીવાજીવાદિ યથાવસ્થિતસ્વરૂપં યૈસ્તાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ-મત્યા-દીનિ, તૈર્લોકં=પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપં પરિજાનાતિ । યદ્વા લોકં=શબ્દાદિવિષયલોકં પરિજાનાતિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતીત્યર્થઃ ।

યઃ સ્વત્વાત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ સ એવ ચ મુનિરિત્યુચ્યતે ।
કિં ચ-ધર્મવિત્=જીવાજીવદ્રવ્યસ્વભાવાભિજ્ઞઃ, ઋજુઃ=ઋજુમાર્ગસ્ય સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાન-

જિસકે પાસ હૈ, અર્થાત્ જો ઇસ ધર્મકા પાલક હૈ ઉસકા નામ ધર્મવાન્ હૈ । બ્રહ્મવાન્ હૈ-બ્રહ્મ શબ્દકા અર્થ મોક્ષસુખ હૈ, વહ જિસકો હૈ ઉસકા નામ બ્રહ્મવાન્ હૈ અર્થાત્ મોક્ષસુખકા જ્ઞાતા હૈ, અથવા ૧૮ અઠારહ પ્રકારકે બ્રહ્મચર્યકા જો પાલક હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ, અથવા જો મૈથુનકા સર્વથા પરિત્યાગી હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ । ઇસ પ્રકારકા સંયમી અચ્છી તરહસે જીવાદિક પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો પ્રકાશિત કરનેવાલે પ્રજ્ઞાનોં-મત્યાદિક જ્ઞાનોં-કે દ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-કે સ્વરૂપકો જાનતા હૈ । અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે બન્ધકા કારણ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ । જો આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ ઔર બ્રહ્મવાન્ હૈ વહી મુનિ કહા જાતા હૈ ।

કિન્ન-જો ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા હૈ, તથા

નામ ધર્મવાન્ છે, બ્રહ્મવાન્ છે-બ્રહ્મ શબ્દનો અર્થ મોક્ષસુખ છે જે તેને છે તેનું નામ બ્રહ્મવાન્ છે અર્થાત્ મોક્ષસુખનો જ્ઞાતા છે, અથવા ૧૮ અઠાર પ્રકારના બ્રહ્મચર્યનો પાલક છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે અથવા જે મૈથુનનો સર્વથા પરિત્યાગી થાય છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે આવા પ્રકારનો સંયમી સારી રીતે જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળાં પ્રજ્ઞાન-મત્યાદિક જ્ઞાનોના દ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-ના સ્વરૂપને જાણે છે, અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બધનું કારણ જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિહાર-ત્યાગ કરે છે જે આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ અને બ્રહ્મવાન્ છે તેને જ મુનિ કહેવામા આવે છે

વળી-જે ધર્મવિત્-જીવ અજીવ દ્રવ્યના સ્વરૂપનો જ્ઞાતા છે તથા ઋજુ.

પારિપ્રલક્ષણસ્યાયસમ્બન્ધનાદકુટિલ, યદ્વા-સરલચિત્તઃ, આવર્તસ્રોત'સજ્ઞમ્-આવર્તો-
માવાવર્તો જન્મજરામરણાધિવ્યાધિવ્યસનોપનિપાતરૂપઃ સસારઃ-**અર્થઃ**—

“રાગદ્વેષશાબિર્દ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ શિષ્ટં, પ્રમાદાદ્ બ્રામ્પયે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥ इति ।

સ્રોતમાત્ર માવસ્રોતઃ-શબ્દાદિવિપયામિજાપઃ, આવર્તમ્ સ્રોતમાવર્તસ્રોત-
સી, તયો' સજ્ઞ-રાગદ્વેષકૃત સમ્બન્ધઃ, તમ્ અમિજાનાતિ । સસારસ્રોત'સજ્ઞા
રાગદ્વેષકૃતો મઘતીતિ ચિદ્વાય યસ્તં પરિહરતિ, સ એવાવર્તસ્રોતસીઃ સજ્ઞં વિજાના-
તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

જ્ઞજ્ઞ-સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકે સરલ
માર્ગકે અયલમ્બનસે જ્ઞાપરિણામી-અકુટિલ, અથવા સરલચિત્ત હૈ
ઘહી હસ્ પાતકો જાન સકતા હૈ કિ-આવર્ત ઓર સ્રોતકા સમ્બન્ધ
રાગદ્વેષકૃત હૈ । આવર્ત ઘો પ્રકારકા હૈ-એક દ્રવ્ય-આવર્ત ઓર દુસરા
માવ-આવર્ત, જલપ્રવાહમેં ંધર ઉઠતા હૈ ઘહ દ્રવ્ય-આવર્ત હૈ । જન્મ,
જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોંકા સ્થાનરૂપ સંસાર
માવ-આવર્ત હૈ । કહા મી હૈ—

“રાગદ્વેષશાબિર્દ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ શિષ્ટં, પ્રમાદાદ્ બ્રામ્પયે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥ इति ।

અર્થાત્—યહ જગત્ રાગ ઓર દ્વેષસે વ્યાપ્ત હૈ, મિથ્યા દર્શનસે
યુક્ત હોનેકે કારણ યહ દુસ્તર હૈ, જન્મરૂપી આવર્તમેં પડા જુઠા હૈ ઓર
પ્રમાદસે હતસ્તતા ચારોં ગતિયોમેં બક્ષર કાદતા ફિરતા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકા સરલ માર્ગના અવલ
બનથી જ્ઞાપરિણામી-અકુટિલ અથવા સરલચિત્ત છે તે જ આ પાતને બાધી
શકે ॥ ૩-આવર્ત અને સ્રોતને સબધ રાગદ્વેષકૃત છે આવર્ત એ પ્રકારના
છે એક દ્રવ્ય-આવર્ત અને બીજી માવ-આવર્ત જળ પ્રવાહમાં જે ંધર પડે
છે તે દ્રવ્ય-આવર્ત છે જન્મ, જરા, મરણ આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોના
સ્થાનરૂપ સસાર માવ-આવર્ત છે કહ્યું છે—

“રાગદ્વેષશાબિર્દ્વં મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ શિષ્ટં, પ્રમાદાદ્ બ્રામ્પયે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ આ જગત રાગ અને દ્વેષથી વ્યાપ્ત છે મિથ્યાદર્શનથી યુક્ત
હોવાને કારણે તે દુસ્તર છે જન્મરૂપી આવર્તમાં પડેલ છે અને પ્રમાદથી
ચારે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે ॥ ૧ ॥

आवर्तस्रोतसोः सङ्गमभिजानन् कं गुणं प्राप्नोतीत्याह—‘ सीउसिणच्चाई’ इत्यादि ।

मूलम्—सीउसिणच्चाई से निगन्थे अरइरइसहे फरुसयं नो वेणइ, जागर वेरोवरए वीरे, एवं दुःखा पमुक्खसि ॥ सू० ४ ॥

छाया—शीतोष्णत्यागी स निर्ग्रन्थः अरतिरतिसहः परुपतां नो वेत्ति, जागरो वेरोपरतः, वीर एवं दुःखात् प्रमोक्ष्यसे ॥ ३ ॥

टीका—स निर्ग्रन्थः=बाह्याभ्यन्तरग्रन्थरहितो निष्परिग्रह इति यावत्, शीतोष्णत्यागी=अनुकूलप्रतिकूलपरिपहं सहमानः, अनुकूलेऽनभिलाषी, प्रतिकूले चानुद्वेगीत्यर्थः । अरतिरतिसहः=अरति संयमे, रतिमसंयमे सहमानः—संयमाराधने परीपहोपसर्गतः कदाचिदरतिरुत्पद्यते, कदाचिच्चासंयमे रतिरुत्पद्यते, तामरति रतिं

स्रोत भी द्रव्य और भावके भेदसे दो प्रकारका है । नदी आदिका प्रवाह द्रव्यस्रोत है । शब्दादिक विषयोंकी अभिलाषा भावस्रोत है । इन दोनोंका सम्बन्ध राग एवं द्वेषसे हुआ है, इस बातको जान कर जो उनके उस सम्बन्धका परिहार—त्याग कर देता है वही आवर्त्त और स्रोतके संगका परिज्ञाता कहा जाता है ॥ सू० ३ ॥

जो मुनि इस आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धको जान लेता है वह किस गुणको प्राप्त करता है ? सो कहते हैं—‘ सीउसिणच्चाई’ इत्यादि ।

बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित—निष्परिग्रही मुनि अनुकूल और प्रतिकूल परीषहोंको सहन करता हुआ अर्थात्—अनुकूल परीषहमें अभिलाषी और प्रतिकूल परीषहमें उद्वेगी न बनता हुआ रति और अरति

स्रोत पणु द्रव्य अने लावना लेदथी जे प्रकारनु छे नदी आदिनो प्रवाह द्रव्यस्रोत छे शब्दादिक विषयेनी अभिलाषा लावस्रोत छे जे अन्नेनो स भ ध राग अने द्वेषथी थयेल छे ते वातने जाणी जे तेना ते स भ धनो परिहार—त्याग करे छे ते आवर्त्त अने स्रोतना स गनो परिज्ञाता कहेवाय छे ॥ सू० ३ ॥

जे मुनि आवर्त्त अने स्रोतना स भ धने जाणी वे छे ते केवा गुणोने प्राप्त करे छे ? ते कहे छे—‘ सीउसिणच्चाई’ इत्यादि

बाह्य अने आभ्यन्तर परिग्रहथी रहित—निष्परिग्रही मुनि अनुकूल अने प्रतिकूल परीषहो सहन करता थकां अर्थात् अनुकूल परीषहमां अभिलाषी अने प्रतिकूल परीषहोमा उद्वेगी न बनने रति अने अरतिनी उपेक्षा करी परीषहोने कष्टजनक

ય કર્મબન્ધદેતૃત્વાદુપેક્ષમાણ્ય इत्यर्थः । પરુપતાં=પરીપણાં પારુપ્ય કષ્ટજનકત્વ
રૂપ નો વેષિ-ન તાન્ પીઢાકારિત્વેન સુદ્ધાતિ, અપિ તુ કર્મબન્ધોષ્છેદાર્યમુપતઃ
સંસારાદુદ્ધિન્નમનાસ્તાન્ સાહાય્યકારિત્વેનાનુમન્યતે इत्यर्थः ।

કિંચ-સ જાગરઃ=મિધ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદનિદ્રાપગમાજ્ઞાગતીંસિ જાગરા-મૃત
ધારિત્રપર્મારાધને સદા જાગરૂક इत्यर्थः । ચૈરોપરતઃ=ચૈરં પરાપકારચિન્તનં, તસ્મા
વુપરતઃ, અથ ઇવ-ચૈરાઃ=કર્મધૈરિવિદારણસમર્થો ભવતિ । હે શિષ્ય ! ઇષમ્=ત્વંભૂતઃ
મૃતધારિત્રપર્મારાધને સદા જાગરૂકઃ પરાપકારાધ્યવસાયરહિતઃ સન્ દુઃસ્વાદ્=
દુઃસ્વકારણાત્ કર્મણઃ પ્રમોદ્યસે=મુક્તો મનિષ્યસિ ॥ ૬૦ ॥ ૪ ॥

કી ઉપેક્ષા કર પરીપણોનો કષ્ટજનક નહીં માનતા હૈ, કિન્તુ કર્મબન્ધ
કે વિનાશ કરનેકી ઓર ઉદ્યમી બહુ અનગાર ડન પરીપણોનો ડસ કર્મ
વિનાશરૂપ કાર્ય મેં અપને સહાયક માનતા હૈ ।

શાચાર્ય-પરિગ્રહમેં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ હી અનુકૂલ પરીપણોમેં
અમિલાપી ઓર પ્રતિકૂલ પરીપણોમેં ઉદ્દેગી બનતા હૈ । જિમકે પાસ
પરિગ્રહ હી નહીં હૈ એસે સંયમી મુનિકે લિયે કયા પ્રતિકૂલ પરીપણ કયા
અનુકૂલ પરીપણ સય ઇક સમાન હૈ । અનુકૂલમેં હસકી લાલસા નહીં
ઓર પ્રતિકૂલમેં હસકો ઢેપ નહીં, કારણ કિ હસ સિદ્ધાન્તકો મલી-મીતિ
જાન જુકા હૈ કિ-સંસારકે મૂલ કારણ રાગ ઓર ઢેપ હૈ । અનુકૂલમેં
અમિલાપા હોની યહ રાગકી પર્યાય હૈ, ઓર પ્રતિકૂલમેં ઉદ્દેગ હોના ઢેપ
કી પર્યાય હૈ, અતઃ યહ ડોનોં પ્રકારકે પરીપણોનો સમભાવસે સહન
કરતા હૈ । પરીપણો પર્થ ઉપસર્ગોસે કદાચિત્ત હસકે ચિત્તમેં સંયમપરિ

માનતા નથી, પણ કર્મબન્ધને વિનાશ કરવાની વશ ઉદ્યમી તે અનુગાર તેજ
પરીપણોને તે કર્મવિનાશરૂપ કાર્યમા પોતાના સહાયક માને છે

શાચાર્ય-પરિગ્રહમા આસક્તિસયઃ । વ્યક્તિ જ અનુકૂળ પરીપણોમાં અભિ
લાષી અને પ્રતિકૂળ પરીપણોમાં ઉદ્દેગી બને છે જેની પાસે પરિગ્રહ જ નથી
જેવા સઘની મુનિ માટે શું પ્રતિકૂળ પરીપણ અને શું અનુકૂળ પરીપણ ? સમજા
એકસમાન છે અનુકૂળમા તેની લાલસા નહિ અને પ્રતિકૂળમાં તેને ઢેપ નહિ,
કારણ કે એ આ સિદ્ધાન્તને સારી રીતે જાણી ચુકેલ છે કે સંસારનું મૂળ કારણ સય
અને ઢેપ છે અનુકૂળમાં અભિલાષા યથી તે સઘની પર્યાય છે અને પ્રતિકૂળમાં
ઉદ્દેગ યવેા તે ઢેપની પર્યાય છે માટે સઘની મુનિ તે બન્ને પ્રકારના પરીપ
ણોને સમભાવથી સહન કરે છે પરીપણો તેમજ ઉપસર્ગોથી કેઈ વખત તેના
ચિત્તમા સયમપરિણામ વશ અશ્તિ અને અસયમપરિણામ વશ રતિ થઈ

નામકે પ્રતિ અરતિ ઔર અસંયમપરિણામકે પ્રતિ રતિ હો જાતી હો સો
 મી વાત નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ ઇન દોનોં પ્રકારકી પરિણતિયોંકો મી
 કર્મબંધકા કારણ જાન કર ડનકી તર્ફસે ઉપેક્ષિત રહતા હૈ । પરીપહોં
 કો યહ અપને લિયે કષ્ટકારી નહીં માનતા હૈ પ્રત્યુત ડન્હેં અપને લક્ષમેં
 અધિકરૂપ જુટાનેવાલે હોનેસે અપના સહાયક હી માનતા હૈ । સંસાર
 શરીર ઔર ભોગોંસે જો નિર્વિણ્ણ-ઉદાસ હોતા હૈ ડસે પરીપહ ઔર
 ઉપસર્ગ અપને લક્ષ્યસે નહીં ગિરા સકતે હૈ । ંસે વ્યક્તિ વિગ્નકારક
 કારણકલાપોંકો-પરીપહોંકો કર્મબંધકે ઉચ્છેદન કરનેમેં સુવર્ણમેં શુદ્ધિ
 લાનેકે લિયે અગ્નિરૂપ સહાયકકી તરહ અપના સહાયક માના કરતે હૈ
 ઔર ડનકા સહર્ષ સ્વાગત કરતે હૈ ।

નિર્ગન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ ઔર પ્રમાદરૂપ નિદ્રાકે અભાવસે
 શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનમેં સદા જાગરૂક રહતા હૈ, ંવં પરકે
 અપકાર કરનેકે વિચારરૂપ વૈરસે વિરક્ત હોતા હુઆ કર્મરૂપી વૈરીકો
 નિવારણ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ મી શ્રુત
 ચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં સદા જાગરૂક બન પરકે અપકાર
 કરનેકે અધ્યવસાયસે રહિત હોકર દુઃખ ંવં દુઃખકે કારણ કર્મોંસે રહિત
 હો જાઓગે ॥ સૂ. ૪ ॥

જતી હોય તે પણ વાત નથી. કારણ કે તે આ બંને પ્રકારની પરિણતિઓને પણ
 કર્મબંધનુ કારણ બાળીને તેની તરફથી ઉપેક્ષિત રહે છે પરિણતિને તે પોતાને
 માટે કષ્ટકારી માનતો નથી પ્રત્યુત તેને પોતાના લક્ષ્યમાં અધિકરૂપ બેડવાવાળા
 હોવાથી પોતાના સહાયક જ માને છે. સંસાર, શરીર અને ભોગોથી જે ઉદાસ
 થાય છે તેને પરીપહ અને ઉપસર્ગ પોતાના લક્ષ્યથી દૂર કરી શકતા નથી એવી
 વ્યક્તિ વિગ્નકારક કારણકલાપોને-પરીપહોને કર્મબંધનુ ઉચ્છેદન કરવામાં
 સુવર્ણમાં શુદ્ધિ લાવવા માટે અગ્નિરૂપ સહાયકની માફક પોતાના સહાયક માન્યા
 કરે છે, અને તેઓનું સહર્ષ સ્વાગત કરે છે

નિર્ગન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને પ્રમાદરૂપ નિદ્રાના અભાવથી
 શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના આરાધનમાં સદા જાગરૂક રહે છે અને પરના અપકાર
 કરવાના વિચારરૂપ વૈરથી વિરક્ત બનીને કર્મરૂપી વૈરીનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ
 થાય છે માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં
 સદા જાગરૂક બની પરના અપકાર કરવાના અધ્યવસાયથી રહિત થઈ દુઃખ અને

યમાર્તસ્તોતસોઃ સજ્જાદજાગર , સ તુ સસારદુઃસ્વામ વિમુચ્યત ઇત્યાશયેનાદ-
'જરામચ્ચુ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—જરામચ્ચુવસોવણીય નરે સયય મૂઢો ધમ્મ નામિ-
જાણદ્વ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—મરામૃત્યુવશોપનીતો નર* સતત મૂઢો ધર્મ નામિજાનાતિ ॥સૂ. ૫॥

ટીકા—નરામૃત્યુવશોપનીતઃ=નરામરણપરાધીનઃ, નર*=મનુષ્યઃ, સતત=સર્વદા,
મૂઢ=મોહનીયોદયાદ્ વિવેકરહિત* ધર્મ=શ્રુતચારિત્રલક્ષ્ય નામિજાનાતિ । માષ-
સુપ્ત સસારી મોક્ષમાર્ગમમાપ્ય પુન* પુનર્નરામૃત્યુવશંગતો દુ સ્તાન્ત નોપયાતીતિ
માવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

નત્તુ જરામૃત્યુપારવશ્યાદેવ દુઃસ્તાન્તો ન મશતિ ચેત્તર્હિ સ્ત્યારવશ્યચારણાય
મુમુષુણા કિં કર્તવ્યમિતિ નિહાસાયમાદ—'પાસિય આઠરપાણે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—પાસિય આઠરપાણે અપ્પમત્તો પરિવ્વપ્પ । મતા ઇય
મદ્દમ પાસ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—દૃષ્ટા આઠરપાણાન્ અપમત્ત પરિવ્રજેત્ । મત્તા ઇત્ત મતિમન્
પણ્ય ॥ સૂ. ૬ ॥

જો આર્થસ્તં ઔર સ્તોતકે સમ્ય-ધસે જાગરુક નહીં હૈં વહ સંસારકે
કુન્ધોસે છૂટ નહીં સક્તા । હસ વિપયમેં કહતે હૈં—'જરામચ્ચુ' ॥ ૫॥

જો આર્થસ્તં ઔર સ્તોતકે સમ્ય-ધસે જાગરુક નહીં હૈં એસે મનુષ્ય
જરા ઔર મરણકે આધીન હોકર નિરન્તર મોહનીય કર્મકે ઉદય
સે વિવેકરહિત હો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો નહીં જાનસે હૈં । હસકા માવ
પછી હૈં કિ માયસુપ્ત સંસારી મોક્ષમાર્ગકો નહીં પ્રાપ્ત કર પારપાર જરા
ઔર મૃત્યુકે આધીન હોકર કમી યી કુન્ધોસે છૂટકારા નહીં પાતે હૈં ॥૫॥

જે આર્થસ્તં અને સ્તોતના મુજબથી બગરુક નથી તે અસારના દુન્ધોથી
છુટી શકતા નથી. તે વિષયમાં કહે છે— જરામચ્ચુ' ॥ ૫॥

જે આર્થસ્તં અને સ્તોતના મુજબથી બગરુક નથી તેવા મનુષ્ય જરા
અને મરણને આધીન બની નિરન્તર મોહનીય કર્મના ઉદયથી વિવેકરહિત ધર્મ
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને બગરુક નથી. આનો ભાવ એ છે કે ભાવમુત્ત મરણી મોક્ષ
માર્ગને પ્રાપ્ત કર્યા વિના ચારવાર જરા અને મૃત્યુને આધીન બની કદિ પલ્લુદુન્ધોથી
છુટકારો મેળવતા નથી. ॥ સૂ. ૫ ॥

टीका—आत्मकल्याणार्थी मनुष्यः आतुरप्राणान्=भावस्त्रापजनितजरामरण-
पारवश्योपनीतदुःखसागरान्तःपातिप्राणिनः, दृष्ट्वा, अप्रमत्तः=भावजागरूकः सन्
परिव्रजेत्=संयमाराधनतत्परो भवेत् । मतिमन्=हे मेधाविन् शिष्य ! त्वमपि
एतत्=सुप्तदूषणं जरामृत्युपारतन्व्यम्, मत्वा=ज्ञात्वा पश्य=चक्षुरुन्मीलय-संयम-
धर्मं जागृहीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

यदि जरा और मृत्युकी परवशतासे जीवोंके दुःखोंका अन्त नहीं
होता है तो फिर उनकी परवशताको दूर करनेके लिये सुसुक्ष्म प्राणियोंको
क्या उपाय करना चाहिये ? इस प्रकारकी जिज्ञासाका समाधान करनेके
लिये कहते हैं—‘पासिय आउरपाणे’ इत्यादि ।

“आत्मकल्याणका अभिलाषी मनुष्य भावनिद्रासे उत्पन्न, जरा और
मरणकी परवशतासे प्राप्त दुःखरूपी सागरमें पड़े हुए प्राणियोंको देख
कर भावनिद्राका परित्याग करके संयमकी आराधना करनेमें सदा तत्पर
रहे” प्रभुके इस सर्वोत्तम उपदेशसे हे मेधावी शिष्य ! तुम भी
भावनिद्राजन्य जरा और मरणकी परवशतारूप दूषणको जानकर सदा
संयमरूप धर्ममें जागरूक रहो ।

भावार्थ—प्रभुका उपदेश है कि—आत्मकल्याणकी कामना करनेवाला
मनुष्य भावनिद्राका परित्याग करे, क्योंकि निद्राके सङ्भावमें जरा और
मरणजन्य अनेक दुःखोंका कभी भी अन्त नहीं आ सकता है । इन
दुःखोंसे छुटकारा करनेवाला यदि कोई है तो वह भावनिद्राका अभाव

कहाय जरा अने मृत्युनी परवशताथी लुपोना हु भनो अ त थतो नथी तो पछी
तेनी परवशताने दूर करवा भाटे सुसुक्ष्म प्राणिओअे शे उपाय करवो लेधअे ? आवा
प्रकारनी लुशासानुं समाधान करवा भाटे कडे छे—‘पासिय आउरपाणे’ इत्यादि

“आत्मकल्याणना अलिवापी मुनि लावनिद्राथी उत्पन्न जरा अने मरणुनी
परवशताथी प्राप्त हु भइपी सागरमा पडेला प्राणीओअे हेभीने लावनिद्राने
परित्याग करीने संयमनी आराधना करवामा सदा तत्पर रहे” प्रभुना आ सर्वो-
त्तम उपदेशथी छे मेधानी शिष्य ! तमे पणु लावनिद्राजन्य जरा अने मरणुनी
परवशताइय दूषणने ललणीने सदा संयमइय धर्ममा लगइक रहे।

भावार्थ—प्रभुने उपदेश छे के—आत्मकल्याणुनी कामना करवावाणा मुनि
लावनिद्राने परित्याग करे, कारणु के आ निद्राना सङ्भावमा जरा अने मरणु
जन्य अनेक हु भनो कहि पणु अ त आवी शकतो नथी आ दुःखोथी छुट-
कारो करवनार ने केछि छेय तो ते लावनिद्राने अलाव छे स सारी प्राणी ने

કિંચ—

મૂલમ્—આરમ્બજ દુઃસ્વપ્નમિતિ જાણ્યા, માયી પ્રમાઈ પુનરેઈ ગબ્મ ।

ઉવેહમાણો સદ્ગુણેસુ અજૂ, મારામિસંકી મરણા પમુચ્છહા ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—આરમ્બજ દુઃસ્વપ્નમિતિ જ્ઞાત્વા, માયી પ્રમાદી પુનરેતિ ગર્ભમ્ ।
ઉપેક્ષમાણઃ શબ્દરૂપેષુ (યઃ) શ્રદ્ધુ, મારામિશ્રદ્ધી (સ) મરણાત્ પ્રમુચ્યતે ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—ઈદં=સંસારપરિભ્રમણરૂપં દુઃસ્વપ્ન, આરમ્બજમ્=સાવધક્રિયાનુશ્ચન-
પત્ત્વમૂલમ્, इति જ્ઞાત્વા આત્મકલ્યાણાય જાણ્યા । ભાવસુત્ત કિં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘માયી’
इत्यादि । માયી=ક્રોધાદિકપાપયુક્ત, કપાપમધ્યવર્તિમાયાગ્રહણેન પૂર્ણપરકપાપાણા-
મપિ ગ્રહણમ્ । પ્રમાદી=મદ્યાદિસેવી પુનઃ=વારં વારં, ગર્ભમેતિ=નરકાદિપાતનામદુ-
શ્રૂય સફળદુઃસ્વપ્નમૂલં ગર્ભ પ્રાપ્નોતિ ।

હૈ । સંસારી પ્રાણી જો જન્મ મરણકે અનન્ત કષ્ટોંકો ભોગ રહે હૈં ઉસકા
કારણ ભાવનિદ્રાકા સદ્ગાવ હી હૈ, એસા સમજકર ઔર પ્રશુકે ઉપદેશ
પર ધ્યાન દેકર હૈ મતિમાન શિષ્ય ! તુમ અનર્થાત્પાદક હસ નિદ્રાકા
પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમેં સદા જાગરુક રહો, જિસસે જરા-
મરણજન્ય કષ્ટોંસે તુમ્હે છુટકારા મિલે ॥ સૂ. ૬ ॥

ફિર મી કહતે હૈ—‘આરમ્બજ’ इत्यादि ।

‘સાવધ ક્રિયાઓંકે અનુષ્ઠાનકા ફલ હી યહ સંસારકા પરિભ્રમણરૂપ
દુઃસ્વપ્ન હૈ’ એસા જાનકર હૈ શિષ્ય ! તુમ આત્મકલ્યાણકી ઔર અપની
પ્રવૃત્તિ કરો । યહાં કપાપોંકે મધ્યવર્તી માયાકા ગ્રહણ કરનેસે અન્ય
કપાપોંકા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ અતઃ ભાવસુત્ત પ્રાણીકે યે ચિહ્ન હૈં કિ
વહ ક્રોધાદિક કપાપોંસે યુક્ત હોતા હૈ । પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકકા સેવન

જન્મ મરણના અનન્ત કષ્ટોંને લોગવી રહ્યા છે તેનું કારણ ભાવનિદ્રાના સદ્ગાવ
જ છે એવું સમજીને અને પ્રભુના ઉપદેશ ઉપર ધ્યાન આપીને હે મતિમાન
શિષ્ય ! તમે અનર્થાત્પાદક આ નિદ્રાના પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમાં સદા
જાગરુક રહો, જેથી તમને જન્મમરણજન્ય દુઃખોથી છુટકારો મળે ॥ સૂ. ૬ ॥

ફરી કહે છે—‘આરમ્બજ’ इत्यादि.

સાવધ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનનું ફળ જ આ સંસારના પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ
છે એવું જાણીને હે શિષ્ય ! તમે આત્મકલ્યાણની તરફ પોતાની પ્રવૃત્તિ કરો
અર્થાત્ કપાપોના મધ્યવર્તી માયાનું ગ્રહણ કરવાથી અન્ય કપાપોનું પણ પ્રત્યેક
ધાપ છે માટે ભાવસુત્ત પ્રાણીનું એ ચિહ્ન છે કે તે ક્રોધાદિ કપાપોથી મુક્ત
જાને છે, પ્રમાદમેવી-મદ્યાદિકનું સેવન કરવાવાળા અને છે ॥ પુનર્વાપ જનન પુનરપિ

एवं भावसुप्तस्य दोषं पर्यालोच्य यः शब्दरूपेषु=इदमुपलक्षणं, तेन शब्दरूप-
रसगन्धस्पर्शेषु विषयेषु इत्यर्थः, उपेक्षमाणो=रागद्वेषरहितः ऋजुः=अवक्रहृदयो
मायाप्रमादपरिवर्जितः, माराभिशङ्की=पुनः पुनर्मरणदुःखाभ्यागमशङ्कया भीरुः,
तद्दुःखपरिहारार्थं श्रुतचारित्रधर्मे जागरूक इति यावत्, स मरणात् प्रमुच्यते ॥सू० ७॥
किञ्च—

मूलम्—अप्पमत्तो कामेहि, उवरओ पावकम्मेहि, वीरे आ-
यगुत्ते जे खेयन्ने ॥ सू० ८ ॥

करनेवाला होता है “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे
शयनम्” बारंबार जन्म मरण और गर्भमें आगमन; इनसे उसका
छुटकारा नहीं होता है। सावध क्रियाओंमें तत्पर प्राणी नरकनिगोदा-
दिककी अनन्त यातनाओंको भोगता हुआ इनसे भी अधिक कष्टोंके
स्थानभूत गर्भमें जाकर बसेरा करता है।

इस प्रकार भावसुप्त प्राणीकी जब यह दशा होती है तब संयमी
मुनिका कर्तव्य है कि वह इस भावनिद्राका परिहार करे और पांच
इन्द्रियोंके विषयों—शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श—में रागद्वेषरहित
होकर मायाप्रमादसे अपनी प्रवृत्तिको सुरक्षित रखता हुआ बारंबार
जन्म मरणके दुःखोंको प्राप्त होनेकी आशङ्कासे भयभीत होकर सांसा-
रिक दुःखोंसे छुटकारा पानेके लिये श्रुतचारित्ररूप धर्ममें सदा जागरूक
रहे। इस प्रकारकी प्रवृत्तिसे ही प्राणी मरणसे छूट सकता है, अन्यथा
नहीं ॥ सू० ७ ॥

मरणं पुनરપિ જનનીજઠરે શયનમ્” વારંવાર જન્મ મરણ અને ગર્ભમાં આગ-
મન, તેનાથી તેના છુટકારો થતો નથી સાવધ ક્રિયાઓમાં તત્પર પ્રાણી નરક-
નિગોદાદિકની અનન્ત યાતનાઓને ભોગવતા તેનાથી પણ અધિક કષ્ટોના સ્થાનભૂત
ગર્ભમાં સ્થાન લે છે

આવા પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણીની જ્યારે આવી દશા થાય છે ત્યારે સંયમી
મુનિતે એ કર્તવ્ય છે કે તે આ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે અને પાંચ ઈન્દ્રિ-
યોના વિષયો—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શો—માં રાગદ્વેષ રહિત બનીને માયા
પ્રમાદથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સુરક્ષિત રાખીને વારંવાર જન્મ મરણના દુખોને
પ્રાપ્ત થવાની આશંકાથી ભયભીત બની સાંસારિક દુખોથી છુટકારો મેળવવા
માટે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં સદા જાગરૂક રહે આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જ
પ્રાણી મરણથી છુટી શકે છે, અન્યથા નહિ ॥ સૂ. ૭ ॥

જાપા—અપ્પમત્તઃ કામૈઃ, ઉપરતઃ પાપકર્મભ્યઃ, ધીરો ગુપ્તાત્મા યઃ સેવદ્ઃ॥૮॥

ટીકા—યઃ સેવદ્ઃ=સંસારિણાં દુઃસ્વાભિદ્ઃ, સ કામૈરપ્પમત્તઃ=કામભોગજન્ય પ્રમાદરહિતઃ, પાપકર્મભ્ય ઉપરતઃ=મનોબાકાચૈઃ સાવચવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્તઃ, અત્પન ધીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ગુપ્તાત્મા=આત્મરક્ષણપરાયણઃ આત્મોદ્ધારકારીત્યર્થ ॥૮॥

સેવદ્ઃસ્ય ગુપ્તમાદ—‘ જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે, સે અસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે, જે અસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે, સે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે॥૯॥

જાપા—યઃ પર્યવમાત્તવક્કસ્ય સેવદ્ઃ, સ અક્કસ્ય સેવદ્ઃ, યઃ અક્કસ્ય સેવદ્ઃ, સ પર્યવમાત્તવક્કસ્ય સેવદ્ઃ ॥ સૂ० ૯ ॥

ફિર ખી કહતે હૈ—‘ અપ્પમત્તો ’ ઇત્યાદિ ।

જો સંસારી જીવોંકે દુ સ્લોકા જ્ઞાતા હૈ થહ કામભોગજન્ય પ્રમાદસે રહિત હોકર મન વચન ઓર કાપસે હોનેવાલે સાવચ વ્યાપારોંસે દૂર રહતા હુઆ કર્મોંકે નાશ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ, યહી આત્મરક્ષા હૈ । હસ અપની રક્ષા કરને મેં થહ તત્પર રહતા હૈ, અર્થાત્ અપની આત્માકા ઉદ્ધાર કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ० ૮ ॥

જો હસ પ્રકારસે નિષ્ણાત થન જાતા હૈ ઉસે ક્યા લામ હોતા હૈ ? સો બતાતે હૈ—‘ જે પજ્જવજ્જાયઃ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પર્યવ ’ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિ વિષયોંકે સેવ—પ્રકાર, ‘ શક્ક ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવચકર્મ, ‘ સેવદ્ઃ ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિયોંકે સાવચક્રિયાજન્ય દુઃસ્લોકા જ્ઞાતા, હોતા હૈ ।

હરીધી કહે છે—અપ્પમત્તો’ ઇત્યાદિ.

જે સંસારી જીવોના દુઃખોનો જ્ઞાતા છે તે કામભોગજન્ય પ્રમાદથી રહિત બનીને મન વચન બંને કાચાથી બનનારા સાવચ વ્યાપારોથી દૂર રહીને કર્મોના નાશ કરવામાં સમર્થ થાય છે તે જ આત્મરક્ષા છે આ પોતાની રક્ષા કરવામાં તત્પર રહે છે અર્થાત્ પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાવાળો થાય છે. ॥ સૂ० ૮ ॥

જે આવા પ્રકારથી નિષ્ણાત બની બધા છે તેને શુ લાભ થાય છે ? તે બતાવે છે—જે પજ્જવજ્જાયઃ’ ઇત્યાદિ.

પર્યવ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષયોના સેવ—પ્રકાર, ‘ શક્ક ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવચ કર્મ ‘ સેવદ્ઃ ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણીયોના સાવચ ક્રિયાજન્ય દુઃખોનો જ્ઞાતા, થાય છે

ટીકા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય—પર્યવાઃ=શબ્દાદિવિષયપ્રકારાઃ તેષુ=તન્નિમિત્તં
જાતં શસ્ત્રં=પર્યવજાતશસ્ત્રં=શબ્દાદિવિષયવિશેષોપભોગાર્થં યત્ પ્રાણિનાં પીડના-
દિરૂપં સાવચકર્મ, તસ્ય ચેદજઃ=સાવચક્રિયાસમુત્પાદિતપ્રાણિદુઃસ્વાભિજઃ, સઃ
અશસ્ત્રસ્ય=નિરવચક્રિયારૂપસ્ય સંયમસ્ય ચેદજઃ=અભ્યાસજઃ, સંયમારાધને યાવદ-
ધિકદુઃસ્વસહનં તાવદધિકકર્મનિર્જરા ભવતીત્યભિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । યશ્ચાશસ્ત્રસ્ય=સંયમસ્ય
ચેદજઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ ચેદજઃ ।

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયોંકા ઉપ-
ભોગ કરનેકી લાલસાકે અધીન બનકર હી અપની પ્રવૃત્તિકો અસંયમિત
બનાતે હૈં । ડનકી ઇસ અસંયમિત પ્રવૃત્તિસે ત્રસ-સ્થાવર પ્રાણિયોંકો
અનેક પ્રકારકે કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં । અસંયમી જીવોંકી અનર્ગલ પ્રવૃત્તિ
હી અન્ય જીવોંકે લિયે અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકો દેનેવાલી હોતી હૈ । સંયમી
જીવ ઇસ વાતકા સદા વિશેષ ધ્યાન રચતા હૈ કિ કહીં મેરી પ્રવૃત્તિસે
પ્રાણિયોંકો દુઃસ્વ ન પહુંચે । ઇસલિયે વહ અપની પ્રવૃત્તિકો ઇતની સંય-
મિત રચતા હૈ કિ કોઈ ઓ પ્રાણી ડસસે દુઃસ્વી નહીં હો પાતા । વહ
અપની ઇસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિકો ઉત્તરોત્તર વઢાનેકા ઇતના અધિક સે
અધિક અભ્યાસ કરતા હૈ કિ યહ કઠી ન કઠી વીતરાગ પદકા ધારક
હો જાતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ મૈ સંયમકે આરાધનમેં જિતને અધિક
દુઃસ્વોંકો સહુંગા ડતની હી અધિક મેરે કર્મોંકી નિર્જરા હોગી, યહી વીત-
રાગપદ તક પહુંચનેકી ઉત્તમ સીદી હૈ । ઇસ પ્રકાર જો નિરવચક્રિયા

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોના ઉપભોગ
કરવાની લાલસાને આધીન બનીને જ પોતાની પ્રવૃત્તિને અસંયમિત બનાવે છે
તેની આ અસંયમિત પ્રવૃત્તિથી ત્રસ સ્થાવર પ્રાણીઓને અનેક પ્રકારના કષ્ટ
ભોગવવા પડે છે અસંયમી જીવોની સ્વચ્છ પ્રવૃત્તિ જ અન્ય જીવો માટે
અનેક પ્રકારના કષ્ટોને દેવાવાળી બને છે. સંયમી જીવ આ બાબતનું સદા વિશેષ
ધ્યાન રાખે છે કે કદાચ મારી પ્રવૃત્તિથી પ્રાણીઓને કુખ ન પહોંચે તેટલા
માટે તે પોતાની પ્રવૃત્તિને આટલી સંયમિત રાખે છે કે કોઈ પણ પ્રાણી તેનાથી
કુખી થતો નથી તે પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિને ઉત્તરોત્તર વધારવાનો એટલો
અધિકથી અધિક અભ્યાસ કરે છે કે તે કોઈને કોઈ વખત વીતરાગપદને ધારક
બને છે, તે જાણે છે કે હું જેટલું સંયમ આરાધનમા કુખ સહન કરીશ તેટલી જ
મારે કર્મોની નિર્જરા થશે, આજ વીતરાગપદ સુધી પહોંચવાની ઉત્તમ સીડી છે
આ પ્રકારે જ નિરવચક્રિયા સંયમનો અભ્યાસ કરવામા કર્મક-કુશળ છે તે

અર્થ 'ભાષ' —યોડનુકૂલપ્રતિકૂલશબ્દાદિવિષયપ્રાપ્તિપરિશારાર્થ સાધકકર્માનુષ્ઠાન શસ્ત્રરૂપં વેતિ સ સંયમમપિ સર્વજીવોપકારકમશ્ત્રરૂપં જાનાતિ । શસ્ત્રાશ્ત્રરૂપતાં વિદંસ્તપ્ર નિવર્તતે પ્રવર્તતે ચ । સક્લસાધકબ્યાપારેભ્યો નિવૃત્ત્યા સંયમારાધને મહત્ત્વા ચ મુનેઃ કર્મસયો મશ્વતીતિ ।

યદ્વા-યઃ પર્યવજાતશ્ત્રસ્ય=પર્યવજાતસ્ય=શબ્દાદિપર્યાયજનિતસ્યાષ્ટવિધકર્મેણઃ શસ્ત્ર-તપ તદ્વાનજનકસ્વાત્, તસ્ય યઃ સેવકઃ, સોડશ્ત્રસ્ય સંયમસ્યાપિ સેવકઃ ।

રૂપ સંયમકે અભ્યાસ કરનેમેં કર્મઠ-કુશલ-હૈ વહ જિન ૨ કાર્યોસે પ્રાણિયોકિ પ્રાણોકો કષ્ટ પહુંચે પેસી સાધક ક્રિયાઓસે સદા વિરક્ત હી રહતા હૈ ।

વિસ્તરાર્થ—જો અનુકૂલ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ ઇવં પરિહારકે લિયે સાધક ક્રિયાકો શસ્ત્રરૂપ માનતા હૈ, વહ યહ મી સમક્ષતા હૈ કિ સંયમ સર્વ જીવોંકા ઉપકારક હોનેસે અશસ્ત્રરૂપ હૈ । હસ પ્રકાર વહ સાધક ક્રિયામેં શસ્ત્રરૂપતા ઓર સંયમમેં અશસ્ત્રરૂપતા જાન કર અશસ્ત્રરૂપ સંયમમેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર શસ્ત્રરૂપ સાધક ક્રિયાઓંકિ અનુષ્ઠાનસે વિરક્ત હોતા હૈ । યહ માની હુઈ પાત હૈ કિ—મુનિકે, કર્મોંકા નાશ સકલ સાધક બ્યાપારોંકી નિવૃત્તિસે ઓર સંયમકી આરાધનામેં પ્રવૃત્તિ કરનેસે હી હોતા હૈ ।

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દકા અર્થ—‘શબ્દાદિ પર્યાય’ હૈ, ‘જાત’ શબ્દ કા અર્થ—‘ઉત્પન્ન’ હૈ, ‘શસ્ત્ર’ શબ્દકા અર્થ ‘તપ’ હૈ । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ—શબ્દાદિ પર્યાયોંસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા શસ્ત્ર તપ હૈ,

ને ને કાર્યોંથી પ્રાપ્તિઓના પ્રાપ્તિને કષ્ટ પહોંચે બેવી સાધક ક્રિયાઓંથી સદા વિરક્ત ન રહે છે

વિસ્તરાર્થ—ને અનુકૂળ અને પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંની પ્રાપ્તિ તેમજ પરિહાર માટે સાધક ક્રિયાને શસ્ત્રરૂપ માને છે તે બે પણ સમને છે કે સમમ સર્વ જીવોંના ઉપકારક હોવાથી અશસ્ત્રરૂપ છે, બ્યા પ્રકારે તે તેમના શસ્ત્ર અને અશસ્ત્રરૂપતા બાબુને અશસ્ત્રરૂપ સમમમા પ્રવૃત્ત થાય છે, અને શસ્ત્રરૂપ સાધક ક્રિયાઓંના અનુષ્ઠાનથી વિરક્ત થાય છે બે માનેલી વાત છે કે મુનિને કર્મોંના નાશ સકલ સાધક બ્યાપારોંની નિવૃત્તિથી અને સમમની આરાધનામાં પ્રવૃત્તિ કરવાથી ન થાય છે

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દનો અર્થ શબ્દાદિ પર્યાય હૈ ‘જાત’ શબ્દનો અર્થ ‘ઉત્પન્ન’ છે ‘શસ્ત્ર’ શબ્દનો અર્થ ‘તપ’ છે તેનું તાત્પર્ય બે છે કે શબ્દાદિ પર્યાયોંથી ઉત્પન્ન હોવાવાળા આઠ પ્રકારના કર્મોંનું શસ્ત્ર તપ છે કારણ

યોડશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ ચેદજ્ઞઃ । સંયમતપઃચેદજ્ઞસ્યાસ્રવનિરો-
ધાદનાદિભવોપાર્જિતકર્મણાં ક્ષયો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ચેદજ્ઞસ્ય મુનેઃ કર્મક્ષયાત્ કિં ફલં ભવતીત્યાહ—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અકમ્મસ્સ વ્યવહારો ન વિજ્ઞઈ, કમ્મુણા ઉવાહી

જાયઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અકર્મણો વ્યવહારો ન વિદ્યતે । કર્મણા ઉપાધિર્જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—અકર્મણઃ=અદ્વિધકર્મરહિતસ્ય વ્યવહારઃ=નારકતિર્યગ્દેવમનુષ્યાદિ-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ કર્મબન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશભાગ્ ભવતી-

ક્યોં કિ તપ કર્મોંકો જલા કર નાશ કર દેતા હૈ । ઇસ શસ્ત્ર-તપ-કા જો
ચેદજ્ઞ-જાનકાર હૈ વહ મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમ-કા મી જાનકાર હૈ । જો
અશસ્ત્ર-સંયમકા જાનકાર હૈ વહ શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારકે
કર્મોંકે વિનાશ કરવાલે શસ્ત્ર-તપ-કા મી જાનકાર હૈ । ઇન દોનોંકો
જાનનેવાલે મુનિ કે આસ્રવકા નિરોધ હોનેસે અનાદિ ભવોંસે સંચિત
કર્મોંકા ક્ષય હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ચેદજ્ઞ મુનિકો કર્મોંકા ક્ષય હોનેસે ક્યા લાભ હોતા હૈ ? ઇસકા
ખુલાસા કરતે હૈ—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જો આઠ પ્રકારકે કર્મોંસે રહિત
હો જાતા હૈ ડસકે ચારોં પ્રકારકી ગતિયોંકે સર્વથા અભાવ હો જાનેસે
ડસકે લિયે નારક, તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય ઓર દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંકા વ્યવ-

કે તપ કર્મોંનિ બાળીને નાશ કરી નાખે છે આ શસ્ત્ર-તપનો જે ચેદજ્ઞ બાણકાર છે
તે મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમનો પણ બાણકાર છે, જે અશસ્ત્ર-સંયમનો બાણકાર છે તે
શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારના કર્મોંનો વિનાશ કરવાવાળા શસ્ત્ર-તપનો
પણ બાણકાર છે એ બન્નેને બાણવાળા મુનિના આસ્રવનો નિરોધ હોવાથી
અનાદિ લવોથી સચિત કર્મોંનો ક્ષય થાય છે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ચેદજ્ઞ મુનિને કર્મોંનો ક્ષય થવાથી શુ લાભ થાય છે ? તેનો ખુલાસો કરે
છે—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જે આઠ પ્રકારના કર્મોંથી રહિત થાય છે
તેને ચારે પ્રકારની ગતિઓનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી નારક તિર્યચ્ચ મનુષ્ય
અને દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંનો વ્યવહાર થતો નથી આ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ

ત્યાહ-‘કર્મણા’ इत्यादि । उपाधीयते व्यपदिश्यते येन स उपाधि=विशेषणम्, यद्वा-उपाधिः=संसारपरिभ्रमणरूपं, कर्मणा=ज्ञानावरणीयादिना जायते । जीवस्य यावत् कर्मसंघस्तान्दुपाधिर्जायते-इत्यर्थः ।

उपाधिक्षिपा-आत्मशरीरकर्ममेवात् । तत्रात्मोपाधिः-आत्मनो दुष्पयुक्तत्वम्, ततः कर्मोपाधिर्जायते । स एव शरीरोपाधिस्त्वेन व्यपदिश्यते । नारकादिशरीरो

હાર નહીં હોતા હૈ । હસ પ્રકારકે વ્યવહારકા કારણ કર્મવંધ થા, વધ ઉમકા નષ્ટ હો જુકા હૈ । કર્મવંધસહિત જીવકે લિયે હી યહ વ્યવહાર ઘટિત હોતા હૈ, ઉસસે રહિત જીવકે લિયે નહીં । ‘ઉપાધિ’ શબ્દકા અર્થ વિશેષણ હૈ, કર્મવંધસહિત જીવકે હી નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બૈઠતે હૈ । ક્યોં કિ મનુષ્યગતિ-નામકર્મકે ઉદયસે જીવ મનુષ્ય વિશેષણવાલા હોતા હૈ નરકગતિ-નામકર્મકે ઉદયસે જીવ ‘નારકી’ હસ વિશેષણવાલા હોતા હૈ, इत्यादि । तात्पर्य यह कि-कर्मवंधसहित जीवके तत्सत्कर्मोदयमें तत्सद्व्यपदेशता घटित होती है । अथवा संसारपरिभ्रमणका नाम भी उपाधि है । यह संसारपरिभ्रमणरूप उपाधि ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके संबन्धसे ही जीवको प्राप्त होती है । जीवको जब तक कर्मका सम्यग्धर रहता है तब तक ही उपाधिका सञ्जाव रहता है ।

આત્મા શરીર ઓર કર્મકે મેવસે ઉપાધિ ત્રીન પ્રકારકી હૈ । અશુભ વૃત્તિ-સોટા પ્રણિધાન આત્માકી ઉપાધિ હૈ । આત્મા અવ અશુભ ક્રિયાઓમિ પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ યા અશુભ પ્રણિધાનવાલા

કર્મવંધ હતું તે તેને નાશ થઈ જુકેલા છે । કર્મવંધસહિત જીવને જ આ વ્યવહાર ઘટિત થાય છે તેનાથી સ્થિત જીવને નહિ.

‘ઉપાધિ’ શબ્દનો અર્થ વિશેષણ છે । કર્મવંધસહિત જીવને જ નારકી મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બેસે છે કારણ કે મનુષ્યગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ મનુષ્યવિશેષણવાળા થાય છે નરકગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ ‘નારકી’ એવા વિશેષણવાળા થાય છે । इत्यादि तात्पर्य એ કે-કર્મવંધસહિત જીવને તત્કર્મોદયમાં તત્સદ્વ્યવેશતા ઘટિત થાય છે । અથવા સંસારપરિભ્રમણનું નામ પણ ઉપાધિ છે । આ સંસારપરિભ્રમણરૂપ ઉપાધિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંબંધથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે । જીવને જ્યાં સુધી કર્મોના સંબંધ રહે છે ત્યાં સુધી જ ઉપાધિના સજ્જાવ રહે છે ।

આત્મા શરીર અને કર્મોના બેદથી ઉપાધિ ત્રણ પ્રકારની છે । અશુભવૃત્તિ-સોટા પ્રણિધાન-વિચારના

પાધિના નારકાદિરિત્યુચ્યતે, યથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ સદ્ભાવાત્ સંસારિષુ ક-
શ્ચિન્મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યયવાન, કશ્ચિન્મન્દમતિઃ, કશ્ચિચ્ચક્ષુર્દર્શની કશ્ચિદચક્ષુર્દર્શની,
કશ્ચિત્ સુખી કશ્ચિદ્દુઃખી, કશ્ચિન્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ કશ્ચિત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિરિત્યાદિર્વ્યવહારો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોતા હૈ તવ હસકે કર્મરૂપ ઉપાધિ હોતી હૈ । હસસે હી જીવ શરીર
ઉપાધિવાલા હોતા હૈ । કર્મ-ઉપાધિસે હી જીવોંકો શરીર-ઉપાધિ
પ્રાપ્ત હોતી હૈ । અશરીરીકે કોઈ ઉપાધિ નહીં હોતી । નારક આદિ શરી-
રકી ઉપાધિસે જીવ નારક આદિ નામોંસે વ્યવહૃત હોતા હૈ । ઉસ-ઉસ
શરીરકી ઉપાધિસે જીવ ઉસ-ઉસ નામવાલા, યા ઉસ-ઉસ પર્યાયવાલા
હોતા હૈ । જૈસે-જવ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકે સદ્ભાવસે સંસારી જીવોંમેં
કોઈ મતિશ્રુતજ્ઞાની, કોઈ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની, કોઈ મતિ, શ્રુત,
અવધિ, ઔર મનઃપર્યયજ્ઞાની હોતા હૈ, કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોતા હૈ; કોઈ
ચક્ષુર્દર્શનવાલા, કોઈ અચક્ષુર્દર્શનવાલા, કોઈ સુખી, કોઈ દુઃખી, કોઈ
મિથ્યાદૃષ્ટિ ઔર કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોતા હૈ તવ ઉનમેં ‘યહ મતિશ્રુતજ્ઞાની
હૈ, યહ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની હૈ, યહ મતિ-શ્રુત-અવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાની
હૈ, યહ ચક્ષુર્દર્શની હૈ, યહ અચક્ષુર્દર્શની હૈ, યહ સુખી હૈ, યહ દુઃખી હૈ,
યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ઔર યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પ્રવૃત્તિ કરે છે અગર અશુભ પ્રણિધાનવાળા થાય છે ત્યારે તેને કર્મરૂપ ઉપાધિ થાય
છે, તેનાથી જીવ શરીરઉપાધિવાળા થાય છે કર્મઉપાધિથી જ જીવોને શરીર
ઉપાધિ પ્રાપ્ત થાય છે અશરીરીને કોઈ ઉપાધિ હોતી નથી નારક આદિ શરીરની
ઉપાધિથી જીવ નારક આદિ નામોથી વ્યવહૃત થાય છે તે તે શરીરની ઉપાધિથી
જીવ તે તે નામવાળા અગર તે તે પર્યાયવાળા બને છે જેવી રીતે જ્ઞાનાવરણીયાદિ
કર્મના સદ્ભાવથી સંસારી જીવોમા જ્યારે કોઈ મતિશ્રુત અને મન પર્યવજ્ઞાની
થાય છે કોઈ મદબુદ્ધિ હોય છે કોઈ ચક્ષુર્દર્શનવાળા કોઈ અચક્ષુર્દર્શનવાળા,
કોઈ સુખી કોઈ દુખી, કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ અને કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે
તેમાં ‘આ મતિશ્રુતજ્ઞાની છે, આ મતિ-શ્રુત-અવધિજ્ઞાની છે, આ મતિશ્રુત-અવધિ-
મન પર્યવજ્ઞાની છે, આ ચક્ષુર્દર્શની છે, આ અચક્ષુર્દર્શની છે, આ સુખી છે,
આ દુખી છે, આ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, અને આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર
થાય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથેવ મયતિ, તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘કર્મ્મ ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્=કર્મ્મ ચ પઢિલેહાપ, કર્મ્મમૂલ ચ જ સ્વળ ॥૧૧॥

જ્ઞાયા—કર્મ્મ ચ પ્રતિલેખ્ય, કર્મ્મમૂલ ચ યત્ સ્વળ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—કર્મ્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, યદ્વા-પ્રકૃતિસ્થિત્યાદિચન્ન, પ્રતિલેખ્ય=સંસાર

સ્ય કારણમિતિ પર્યાલોચ્ય કર્મ્મમૂલ=પ્રાણિણુ સાવચબ્યાપારકરણ રાગદ્વેષમોહસ્પર્શ
વા કર્મ્મણઃ કારણમિતિ ચ પર્યાલોચ્ય યત્ સ્વળ=સ્વળનં-હિંસનં-પ્રાણાતિપાતાદિ,
તત્ પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । ચક્રચ્છ—

યદિ એસા હૈ તો મુનિકો ક્યા કરના ચાહિયે ? સો કહતે હૈ—
‘કર્મ્મ ચ’ ઇત્યાદિ ।

જય યહ નિશ્ચિત્ત હો જુકા કિ કર્મરૂપ ઉપાધિસે હી જીવોમિં નાર
કાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ તો મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ જહ જ્ઞાનાવરણીયાદિ
કર્મોકો, અથવા ઉનકે પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ આદિ બંધોકો સંસારકા
કારણ જાનકર કર્મોકે મૂલ કારણ સાવચ બ્યાપારકો, અથવા રાગ દ્વેષ
મોહકો જાન કર પ્રાણાતિપાતાદિક જો કાર્ય હૈ ઉનકા સર્વથા
પરિત્યાગ કરે ।

માધ્યમ—જીવોમિં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૂલ હૈ, કર્મ સંસારકા
કારણ હૈ । કર્મ જીવોકી શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિસે ઉત્પન્ન હોતે હૈ । અશુ
ભાદિ કર્મો સે નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ । અશુભાદિ કર્મોકા મૂલ
કારણ હિંસાદિ પાપ યા રાગ દ્વેષ ઓર મોહ હૈ । હસ લિપ જ્ઞાની મુનિકા
કર્તવ્ય હૈ કિ યહ ઉનકે મૂલ કારણોકા સર્વથા ત્યાગ કરે । કહા મી હૈ—

એ આમ જ હોય તો મુનિએ શુ કરવું બોધ્યે ? તે કહે છે—‘કર્મ્મ ચ’ ઇત્યાદિ

અર્થ એ નિર્ણય થયો કે કર્મરૂપ ઉપાધિથી જ જીવોમાં નારકાદિ બંધ
કાર થાય છે તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોને અથવા તેના
પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ આદિ બંધોને સંસારનું કારણ બનીને તે કર્મોનું મૂલ
કારણ સાવચ બ્યાપારને, અને રાગદ્વેષ મોહને બનીને પ્રાણાતિપાતાદિક જે
કાર્ય છે તેના સર્વથા પરિત્યાગ કરે.

માધ્યમ—જીવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૂલ છે, કર્મ સંસારનું કારણ છે
કર્મ જીવોની શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિથી ઉત્પન્ન થાય છે અશુભાદિ કર્મોથી નાર-
કાદિ વ્યવહાર થાય છે અશુભાદિ કર્મોનું મૂલ કારણ હિંસાદિ પાપ, અથવા
રાગદ્વેષ અને મોહ છે માટે જ્ઞાની મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે તેના મૂલ કારણનો
સર્વથા ત્યાગ કરે. કહું છે—

“ कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरदुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः ” ॥१॥ इति ॥ सू० ११ ॥

अपरं च मुनिकर्तव्यमाह—‘ पडिलेहिय ’ इत्यादि ।

मूलम्—पडिलेहिय सव्वं समायाय दोहिं अंतोहिं अदि-
स्समाणे ॥ सू० १२ ॥

छाया—प्रतिलेख्य सर्वं समादाय द्वाभ्यामन्ताभ्यामदृश्यमानः ॥ सू० १२ ॥

टीका—प्रतिलेख्य=कर्मस्वरूपं पर्यालोच्य सर्वम्=सर्वज्ञप्रणीतमुपदेशं संयमं
वा समादाय=गृहीत्वा अन्ताभ्याम्=अन्तकृद्भ्यां=कारणे कार्योपचारात्, आत्मनो
ज्ञानादिगुणविघातकाभ्यां द्वाभ्यां=रागद्वेषाभ्याम् अदृश्यमानः=अनुपलक्ष्यमाणो
वीतराग शब्दव्यपदेश्यो भवति ॥ सू० १२ ॥

“ कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरं दुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः ॥१॥ ” इति ।

जीवोंको कर्मसे ही कर्मका बन्ध होता है। उससे भव-संसार होता
है। भवसे शरीर, शरीरसे दुःख और दुःखोंसे फिर अन्य भव उन्हें
मिलता रहता है ॥ १ ॥ सू० ११ ॥

फिर भी मुनिके कर्तव्य को कहते हैं—‘ पडिलेहिय ’ इत्यादि ।

कर्म के स्वरूपकी पर्यायलोचना करके सर्वज्ञकथित उपदेशको अर्थात्
संयमको ग्रहण कर आत्माके ज्ञानादिगुणोंके विघातक राग और द्वेष से
रहित होता हुआ मुनि-आत्मा वीतराग शब्दका वाच्य हो जाता है ।

भावार्थ—मुनिके अन्य कर्तव्य को प्रकट करनेके लिये सूत्रकार कहते
हैं कि—वह कर्मके स्वरूपका विचार करे। कर्म के स्वरूपका विचार करनेसे

“ कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरं दुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः ॥१॥ ” इति ।

જીવોને કર્મથી જ કર્મનો બંધ થાય છે તેથી ભવ-સંસાર થાય છે ભવથી
શરીર, શરીરથી દુઃખ અને દુઃખોથી વળી અન્યભવ તેને મળતો રહે છે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી પણ મુનિના કર્તવ્ય બાબત કહે છે—‘ પડિલેહિય ’ ઇત્યાદિ

કર્મના સ્વરૂપની પર્યાયોચના કરીને સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશને અર્થાત્ સંય-
મને ગ્રહણ કરી આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોના વિઘાતક રાગ અને દ્વેષથી રહિત
બનીને મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દનો વાચ્ય થઈ જાય છે

ભાવાર્થ—મુનિના બીજા કર્તવ્યને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—
તે કર્મના સ્વરૂપનો વિચાર કરવાથી તેને તેવો દૃઢ વિશ્વાસ થઈ જશે કે આત્માના

મૂળમ—ત પરિણાય મેહાવી વિદ્વા લોગ વતા લોગસન્ન સે
મદ્દમ પરક્કમિજ્જાસિ ત્તિ ઘેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

જાયા—તત્ પરિણાય મધાથી નિવિત્વા લોકં ચાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન
પરાક્રમેત—इति ग्रहीमि ॥ सू. ૧૩ ॥

ટીકા—તત્=કર્મણં કારણં રાગદ્વેષરૂપ પરિણાય=અપરિણયા કર્મબન્ધદેહ
વિદ્વાય પ્રત્યાસ્પાનપરિણયા પરિત્યજ્ય લોકં વિપયકપાયખ્યામોહિતં સંસારિણં
ઉસે યહ દહ ચિન્ધાસ હો જાવેગા કિ—આત્માકે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા ધાતક
યદિ કોઈ હૈં તો યે કર્મ હી હૈં, રાગદ્વેષકો જો જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા ધાતક
સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈં યહ કારણમેં કાર્યકે ઉપચારસે કિયા હૈં । ક્યોંકિ
રાગ-દ્વેષસે જીવેંકે નવીન કર્મોંકા ય-ધ હોતા હૈં, અત રાગ દ્વેષ ઉનકે
ય-ધમેં કારણ હૈં, ઓર કર્મોંકા ય-ધ કાર્ય હૈં । इन कर्मोंका अभाव जब
तक सर्वज्ञ प्रभुके उपदेशानुसार जीव अपनी प्रवृत्ति नहीं बनायेगा तब
तक नहीं कर सकता, अर्थात् संयमकी आराधना बिना इनका अभाव
नहीं हो सकता । यदि उसे वीतराग बनना है तो उसका कर्तव्य है कि
यह राग द्वेषका अन्त करनेके लिये उक्त विधिका पालन कर ॥ सू. १२ ॥

इसी ध्यानको सूत्रकार फिर पुष्ट करते हैं—‘त परिणाय’ इत्यादि ।

સાધુ કર્મોંકે ય-ધમેં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષકે અપરિજ્ઞાસે જાન કર
ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા ત્યાગ કરે । ‘મમસ્ત સંસારી જીવ
વિપય-કપાયોંસે બ્યામોહિત હો રહે હૈં હમ લિયે इन विषयोंकी धांधलाको

જાનાદિક ગુણોના ધાતક જે કોઈ કોઈ તો તે કર્મ જ છે રાગ દ્વેષને જે જ્ઞાનાદિક
ગુણોના ધાતક સૂત્રકારે પ્રગટ કર્યા છે તે કારણમા કાર્યના ઉપચારથી કહેલ છે
કારણ કે રાગ-દ્વેષથી જીવેને નવીન કર્મોનો બધ અવધ છે માટે રાગ-દ્વેષ તેના
બંધમા કારણ છે, અને કર્મોનો બધ કાય છે તે કર્મોનો અભાવ જ્યાં સુધી
સવજ પ્રભુના ઉપદેશાનુસાર જીવ પોતાની પ્રવૃત્તિ નહિ બનાવે ત્યાં સુધી કરી
શકતો નથી અર્થાત્ સંયમની આરાધના નિના તેનો અભાવ થા શકતો નથી, કારણ
તેને વીતરાગ બનવાનું છે તો તેનું કર્તવ્ય છે કે તે રાગ દ્વેષનો અંત કરવા માટે
કહેલી વિધિનું પાલન કરે. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

આ ધ્યાનને સૂત્રકાર ફરીથી પુષ્ટ કરે છે— ‘ત પરિણાય’ ઇત્યાદિ.

સાધુ કર્મોના બંધમા મૂલ કારણ રાગ દ્વેષને ત-પરિણયથી બાળીને અને
પ્રત્યાખ્યાન-પરિણયથી તેને ત્યાગ કરે. મમસ્ત સંસારી જીવ વિપય કપાયોથી
બ્યામોહિત થઈ રહેલ છે માટે તેના વિષયોની બાળને સદા દૂર કરવી જોઈએ.

વિદિત્વા, લોકસંજ્ઞાં=વિષયવાઙ્મારૂપાં વાન્ત્વા=દૂરીકૃત્ય સ મતિમાન્=સાધુ-
મર્યાદારક્ષણતત્પરઃ સન્ પરાક્રમેત=સંયમારાધને ઉદ્યુક્તો ભવેત્ । યદ્વા-અષ્ટ-
વિધં કર્મ ક્ષપયિતુમુત્સહેત । સંયમં ગૃહીત્વા ન પશ્ચાત્તાપમવલમ્બેત, સિંહત્વેન નિષ્ક્ર-
મ્ય શૃગાલત્વેન ન વિહરેત્ । અત્ર ચતુર્ભઙ્ગી વાચ્યા । ઇતિ બ્રવીમિ પૂર્વવત્ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૧ ॥

સદા દૂર કરનાં હાથિયે' એસા વિચાર કર ઉસકા સદા પરિહાર કરે, ઓર મુનિપનેકી મર્યાદાકી રક્ષા કરનેમેં તત્પર વહ મતિમાન્ મુનિ સંયમ કી આરાધના કરનેમેં દત્તાવધાન રહે; ક્યોંકિ સંયમકી આરાધનાકે વિના કર્મોંકા નાશ નહીં હો સકતા, ઇસ લિયે આઠ કર્મકા નાશ કરનેકે અભિપ્રાય સે સંયમકી આરાધના કરે । સંયમકો ગ્રહણ કર ફિર પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્-સિંહવૃત્તિસે સંયમકી આરાધના કરે કિન્તુ ઇસકી આરાધનામેં શૃગાલવૃત્તિકો સ્થાન ન દે । યહાં ઇસ વિષયમેં ચતુર્ભઙ્ગી સમજ્ઞની હાથિયે, વહ ઇસ પ્રકાર—

(૧) સિંહવૃત્તિસે નિકલે સિંહવૃત્તિસે પાલે । (૨) સિંહવૃત્તિસે નિકલે શૃગાલવૃત્તિસે પાલે । (૩) શૃગાલવૃત્તિસે નિકલે સિંહવૃત્તિસે પાલે । (૪) શૃગાલવૃત્તિસે નિકલે શૃગાલવૃત્તિસે પાલે ।

ઇનમેં પહલા ઓર તીસરા ભંગ શ્રેષ્ઠ હૈ ॥ 'ઇતિ બ્રવીમિ' ઇસકા અર્થ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ તૃતીય અધ્યયનકા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૧ ॥

એવો વિચાર કરી તેનો સદા પરિહાર કરે અને મુનિપણુની મર્યાદાની રક્ષા કરવામાં તત્પર તે મતિમાન્ મુનિ સયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે, કારણ કે સયમની આરાધના વિના કર્મોનો નાશ થઈ શકતો નથી, માટે આઠ કર્મોનો નાશ કરવાના અભિપ્રાયથી સયમની આરાધના કરે, સયમને ગ્રહણ કરી પછી પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્ સિંહવૃત્તિથી સયમની આરાધના કરે પણ તેની આરાધનામાં શિયાળવૃત્તિને સ્થાન ન આપે આઠકાણે આ વિષયમાં ચતુર્ભંગી સમજવી જોઈએ, તે આ પ્રકારે—

(૧) સિંહવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૨) સિંહવૃત્તિથી નિકળે શૃગાલવૃત્તિથી પાળે. (૩) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૪) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, શૃગાલવૃત્તિથી પાળે

તેમાં પહેલો અને ત્રીજો ભગ ઉત્તમ છે. 'ઇતિ બ્રવીમિ' એનો અર્થ પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે, ૧૩

ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૩-૧.

તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે માનસુતાઃ પ્રતિષોધિતાઃ, અથ તેષાં સ્વાપ્સ્ય ફલં દુઃખં મનસીત્યાયેદયિતું દ્વિતીયોદ્દેશકં પ્રસ્તુતમાહ—‘જાઈ ચ બુદ્ધિં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—જાઈ ચ બુદ્ધિં ચ ઇહઽઽજ પાસે, મૂર્ખહિં જાણે પડિ લેહ સાય । તમ્હાઽતિવિજ્ઞો પરમતિ ણચ્ચા, સમ્મત્તદંસી ન કરેહ પાવ ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—જાતિં ચ વૃદ્ધિં ચ ઇહ અથ પશ્ય, શૂંતૈર્જાનીરિ પ્રતિષ્ઠેભ્ય સાતમ્ । તસ્માત્ અતિવિષ્ય પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, સમ્યક્સ્વદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—ઈહ=સંસારે અર્થેવ=અસ્મિન્નેવ દિવસે, અયં કાલસપ્પણેમેતિ માવઃ; જાતિમ્=ગર્ભોત્પત્તિં વૃદ્ધિં=બાલ્યાદિત્રિદાવસ્થાપર્યન્ત વર્ધનં પ્રાણિનાં, પશ્ય=ગર્ભોત્પત્તિ

તીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

તૃતીય અધ્યયનકે પ્રથમ ઉદ્દેશમેં આવસુત પ્રાણિયોંકા નિરૂપણ અબ્ધી તરહસે કિયા જા ચુકા હૈ । इस द्वितीय उद्देशमें यह समझाया जावेगा कि उनकी इस निद्राका फल उन्हें दुःखके सिवाय कुछ नहीं होता है । इसी विषयको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रकार इस द्वितीय उद्देश का प्रारम्भ करते हुए प्रथम सूत्र कहते हैं—‘जाई च बुद्धिं च’ इत्यादि ।

शिष्यको संबोधन करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! आज ही तुम इस बातका ज्ञानदृष्टिसे विचार करो, कल परसोंकी बात जाने दो, समय बीतानेसे क्या फायदा ? संसारमें प्राणियोंकी गर्भोत्पत्तिसे

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં આવસુત પ્રાણીઓ વિષે સારી રીતે સમજાવેલ છે આ બીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે તેની આ નિદ્રાનું ફળ તેને કુપ્ત સિવાય બીજું કંઈ થતું નથી. આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રકાર આ બીજા ઉદ્દેશને પ્રારંભ કરીને પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘જાઈ ચ બુદ્ધિં ચ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! આજ જ તમે આ બાબતને સમજાવેલી વિચાર કરો, કાલ પરમદિવસની વાત બંધા દો. સંભવ બીતાવવામાં શું ફાયદો ? સંસારમાં પ્રાણીઓની ગર્ભોત્પત્તિથી લગાવી બાકાત

વૃદ્ધિશ્ચ પ્રાણિનાં દુઃસ્વસહભાવિન્યેવ ભવતીતિ જ્ઞાનદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઽ નિપ્પિહ્હ ૥

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ અ વેઅણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ”

લગાકર ચાલાદિ-વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તકી સઘ અવસ્થાએ દુઃસ્વોંકે સાથ ૨ હી રહેનેવાળી હૈં । સંસારી પ્રાણીકી ऐसी कोई भी अवस्था नहीं है जिसमें दुःस्वोंका सम्बन्ध न हो । गर्भमें आना और वहां रहना यह एक महा दुःस्वमय है । यह प्राणी घेन केन प्रकारेण वहां से सुरक्षित दशा में उत्पन्न हो जाता है और बाल-युवा-वृद्धावस्था तक पहुंच भी जाता है तो भी इन अवस्थाओंमें इस जीवको रंचमात्र भी साता नहीं मिलती है । दुःस्वोंके सिवाय यहां सुस्वोंका नाम भी नहीं है । अतः गर्भोत्पत्ति और बालादि वृद्धावस्था तक की समस्त दशाएँ दुःस्वोंके साथ २ ही रहने वाली हैं । अन्यत्र भी यही बात कही है—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઽ નિપ્પિહ્હ ૥

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ચ, વેયણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ” ઇતિ ।

વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તની સઘણી અવસ્થાઓ હુ ખોની સાથે ને સાથે રહેવાવાળી છે સંસારી પ્રાણીની એક પણ અવસ્થા એવી નથી કે જેમાં હુ ખોનો સખધ ન હોય ગર્ભમાં આવવું અને ત્યાં રહેવું એ એક મહાન હુ ખ છે તે પ્રાણી કોઈ પકારે ત્યાંથી સુરક્ષિત દશામાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અને બાળ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા સુધી પહોંચી પણ જાય છે તો પણ આ અવસ્થાઓમાં આ જીવને ૨જ માત્ર પણ સાતા મળતી નથી હુ ખો સિવાય આંહી સુખોતુ નામ પણ નથી માટે ગર્ભોત્પત્તિ અને બાળાદિ વૃદ્ધાવસ્થા સુધીની સમસ્ત દશાઓ હુ ખોની સાથે જ રહેવાવાળી છે અન્યત્ર પણ આ વાત કહેલ છે —

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઽ નિપ્પિહ્હ ૥

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ચ, વેયણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ

તથા—“દીપમિષ્ણસ્સરો દીણો, વિધરીઓ વિધિતઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ ઘસઈ, સંપત્તો ધરિમં દસં” ॥૩॥ इत्यादि ।

છાયા—આપમાનસ્ય ચદ્દાસ્ત્ર મિયમાણસ્ય જન્તોઃ ।

તેન દુઃસ્થેન સંતપ્તો ન સ્મરતિ જાતિમાત્મનઃ ॥ ૧ ॥

વિરસરસિતં રસન્ તતઃ સ યોનિમુસ્વાદ્ નિસ્સરતિ ।

માતુરાત્મનોઽપિ ચ વેદનામતુલ્લં જનયન્ ॥ ૨ ॥

દીનમિન્નસ્વરો દીનો વિધરીતો વિધિતઃ ।

દુર્ધલો દુઃખિતો ઘસતિ સંપાત્તઃ ધરમાં દશામ્ ॥ ૩ ॥

તથા—“દીપમિષ્ણસ્સરો દીણો, વિધરીઓ વિધિતઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ ઘસઈ, સંપત્તો ધરિમં દસં” ॥૧॥ ” इति

ઉત્પન્ન હોનેવાળે પણ મરનેવાળે પ્રાણીઓ જો દુઃખ હોતા હોં તેણે
દુઃખસે સંતપ્ત બનાવવા પ્રાણી અપની ઉત્પત્તિકા સ્મરણ તક નહીં કરતા
॥ ૧ ॥ જિસ સમય યહ જીવ યોનિમુસ્વ-ગર્ભસ્થાનસે નિકલતા હોં તે
સમય વહુત ધુરી તરહસે રોતા હોં, ક્યોં કિ તે સમય વહ અપની માતા
કે ઓર અપને લિયે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાકા કારણ બનતા હોં ॥૨॥

તથા-ફિર વહ જમ વૃદ્ધાવસ્થામે પહુંચતા હોં તબ દીન બન જાતા હોં ।
इसका स्वर अस्पष्ट-गरगर शब्दवाला हो जाता है, दशा इसकी वय
नीय हो जाती है । तरुणावस्थामें इसकी जो हालत थी उससे भिन्न ही
इसकी हालत हो जाती है । भिन्न भी इसका ठिकाने नहीं रहता । उस
समय यह दुर्बल और सदा दुःखित ही रहा करता है ॥ ३॥

તથા— દીપમિષ્ણસ્સરો દીણો વિધરીઓ વિધિતઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ ઘસઈ, સંપત્તો ધરિમં દસં” ॥ ૩ ॥ इति ।

ઉત્પન્ન થનાર અને મરનાર પ્રાણીને જે દુઃખ થાય છે તે દુઃખથી સતત
બનેલ પ્રાણી પોતાની ઉત્પત્તિનું સ્મરણ પણ કરતો નથી ॥૧॥ જે વખતે આ
જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનથી નીકળે છે તે સમય વહુત જ ધુરી રીતે રહે છે; કારણ
કે તે વખત તે પોતાને માટે તેમ જ પોતાની માતા માટે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદ
નાનું કારણ બને છે ॥ ૨ ॥

તથા વગી તે જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થામાં પહોંચે છે ત્યારે દીન બની જાય છે તેનો
સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળો બની જાય છે તેની દશા દયાજનક થઈ પડે છે
તરુણ-અવસ્થામાં જે તેની હાલત હતી તે હાલતથી બીજાકા ભિન્ન તેની હાલત થઈ
જાય છે ચિત્ત પણ તેનું કેશાલે રહેતું નથી. આ વખતે તે દુર્બલ અને સદા
દુઃખી જ રહ્યા કરે છે ॥ ૩ ॥

किञ्च—भूतैः=उच्चारादिचतुर्दशसु जीवोत्पत्तिस्थानेषु जातैर्भूतग्रामैः सह स्वात्मनः सातं=सुखं प्रतिलेख्य=पर्यालोच्य जानीहि । यथा तव सुखं प्रियमस्ति, तथाऽन्येषामपीति, यथा च तव दुःखे द्वेषः तथाऽन्येषामपीति ज्ञात्वा कस्यापि जीवस्य दुःखं नोत्पादनीयम्, एवं कृते दुःखं न प्राप्स्यसीति भावः ।

तस्मात्—प्राणिनां सुखदुःखपर्यालोचनात्, अतिविद्यः=अतीव विद्या यस्य सः अतिविद्यः=तत्त्वपरिच्छेदविद्याविभूषितः, परमं=परमश्रेयस्करं निर्वाणपदं तत्प्रापकं सम्यग्दर्शनादिकं वाऽस्ति, इति ज्ञात्वा सम्यक्त्वदर्शी=परमार्थदर्शी सन् पापं न करोति, सावद्यक्रियां न समाचरतीत्यर्थः ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जीवोंकी उत्पत्तिके जो उच्चार (विष्टा) प्रस्रवण (सूत्र) आदि चौदह स्थान हैं उनमें उत्पन्न हुए जीवोंके साथ अपने सुख की पर्यालोचना करो, अर्थात् इस बातका सदा विचार करो कि जिस प्रकार सुख हमें प्रिय है उसी प्रकार अन्य जीवोंको भी वह प्रिय है, दुःख जिस प्रकार हमें अप्रिय-अनिष्ट है उसी प्रकार वह अन्य जीवोंको भी अनिष्ट है । ऐसा विचार कर या जानकर किसी को भी दुःख नहीं देना चाहिये । इस प्रकारसे विचार करने पर तुम स्वयं दुःख न पाओगे ।

इस प्रकार प्राणियों के सुख और दुःखकी पर्यालोचनासे वास्तविक तत्त्वका प्रकाशक ज्ञान जीवको प्राप्त होता है । उस ज्ञानसे युक्त वह मुक्तिपदको अथवा उसको प्राप्त करानेवाले सम्यग्दर्शनादिको परम-परमकल्याणकारी जानकर समदर्शी हो जाता है और सावद्य क्रियाओं को नहीं करता है ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जिवोनी उत्पत्तिना जे उच्चार=विष्टा प्रस्रवण=भूत्र आदि चौदह स्थान छे, तेमा उत्पन्न थयेला जिवोनी साथे आपणा सुખनी पर्या-लोचना करे अर्थात् जे बातनो सदा विचार करे जे जे प्रकारे सुખ अमोने प्रिय छे ते प्रकारे अन्य जिवोने पणु प्रिय छे हुण जे प्रकारे अमोने अप्रिय-अनिष्ट छे ते प्रकारे ते अन्य जिवोने पणु अनिष्ट छे जेवो विचार करी अगर जालुने केहने पणु हुण न आपणु जेहजे आ प्रकारनो विचार करवाथी तेमे स्वयं हुण पाभशो नहि

आ प्रकारे प्राणुजोना सुख अने दुःखोनी पर्यालोचनाथी वास्तविक तत्त्वनु प्रकाशक ज्ञान जिवने प्राप्त थाय छे ते ज्ञानथी युक्त ते मुक्तिपदने अथवा तेने प्राप्त करवनार सम्यग्दर्शनादिने परम-परमकल्याणकारी जालुने समदर्शी थछ जय छे अने सावद्य क्रियाजो करता नथी ॥ सू० १ ॥

मूत्रम्—उन्मुच पास इह मच्चिर्हर्हि आरम्भजीवी उभयाणु
पस्ती । कामेसु गिद्धा निचयं करेति, ससिच्यमाणा पुनरेति
गन्म ॥ सू० २ ॥

छाया—उन्मुच पाशम् इह मर्त्यः आरम्भजीवी उभयानुदर्शी । कामेसु यद्वा
निचयं कुर्वन्ति, ससिच्यमानाः पुनर्यन्ति गर्भम् ॥ सू० २ ॥

टीका—‘उन्मुच’ इत्यादि । इह=मनुष्यलोके, मर्त्यः=मनुष्यैः साकं, पाशं=
बन्धनहेतु बन्धनवाससम्बन्धम्, यद्वा—पार्श्व इवमावमदाद् द्विविधं, द्रव्यतो रज्ज्वा
दिकं, भावतो विषयकपायादिरूपम्, उन्मुच=उत्-उत्कर्षत-अतिशयन निराकृत ।
पाशयुक्तो हि कामभागक्षया प्राणिहिंसादिकं करोतीत्याह—‘आरम्भजीवी’ इत्यादि ।

‘उन्मु च पासं’ इत्यादि । इस मनुष्यलोके मनुष्योंके साथ पाश
—बन्धनके हेतु पुत्रकलत्रादि सम्बन्ध—का है शिष्य । तुम सर्वथा परिवार
करो । अथवा द्रव्य और भावसे भेदसे पाश—बन्धन दो प्रकारका है । रस्ती
आदि पदार्थ द्रव्यसे, विषयकपायादिक भावसे बन्धन है, इन दोनों प्रकार
के बन्धनोंका सर्वथा त्याग करो ।

भावार्थ—संसारमें जीवोंके लिये मरणसे प्रयत्न बन्धनका कारण पुत्र
कलत्रादिका सम्बन्ध है । आत्मार्थी इस बन्धनके हेतुका जपनक त्याग नहीं
करता तब तक यह आत्मकल्याणके मार्गपर आरुढ़ नहीं हो सकता, इसी
लिये उन्मुच सर्वथा त्याग करनेका यहां उपदेश दिया गया है । इस पाशसे
युक्त प्राणी कामभोगकी इच्छासे प्राणिहिंसादिरूप आरंभको करता है ।

उन्मुच पासं इत्यादि आ मनुष्यलोका मनुष्योंकी साथ पाश—बन्धन
हेतु पुत्रकलत्रादिक सम्बन्ध—के शिष्य । तब अथवा परित्याग करे । अथवा द्रव्य
अने भावना केद्वयी पाश—बन्धन के प्रकारका छ रस्ती आदि पदार्थ द्रव्यकी, विषय—
कपायादिक भावकी बन्धन छ जो जन्मे प्रकारका बन्धनने अथवा त्याग करे ।

भावार्थ—आरम्भ आ लोको भागे जहाँकी प्रलय बन्धननु कारण पुत्रकल
त्रादिकने सम्बन्ध छ आत्मार्थी आ बन्धनना हेतुने न्या मुधी त्याग नहीं
करेता तब मुधी ते आ म—कल्याणना मार्ग उपर आरुढ़ नहीं शक्ते नभी
भागे तेने अथवा त्याग करवाने आ ठेकावे उपदेश आपेउ छ आ पाशकी
बन्धन प्राणी कामभोगकी इच्छाकी प्राणिहिंसादिरूप आरम्भ करे छ

યસ્તુ-આરમ્ભજીવી=આરમ્ભેણ જીવિતું શીલમસ્યેતિ સઃ, આરમ્ભપ્રકલ્પિત-
જીવિકઃ, સ ઉભયાનુદર્શી=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વભોગી ભવતીત્યર્થઃ ।

કામેષુ=વિષયોપભોગેષુ, ગૃદ્ધાઃ=લોલુપાઃ, નિચયમ્=અષ્ટવિધકર્મસંચયં કુર્વન્તિ ।
સંસિચ્યમાનાઃ=કામભોગાદિજન્યકર્મરજસા શ્લિષ્યમાણાઃ પુનઃ=વારં વારં ગર્ભં
યન્તિ=ઉપયાન્તિ, સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવદ્ બ્રામ્યન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

મૂલમ્-અવિ સે હાસમાસજ્જ, હંતા નંદીતિ મન્નઇ ।

અલં બાલસ્સ સંગેણ, વેરં વહ્લઇ અપ્પણો ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા--અપિ સ હાસમાસાઘ, હત્વા નન્દીતિ મન્યતે ।

અલં બાલસ્ય સજ્જેન, વૈરં વર્ધયતિ આત્મનઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા--‘ અવિ સે ’ इत्यादि । सः=अज्ञः-विषयलोलुपो हासम्=मनोविनोदम्
आसाद्य=स्वीकृत्य, हत्वाऽपि=प्राणिनो निहत्याऽपि नन्दी=‘ क्रीडा ’ इति मन्यते ।

આરંભસે જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ આરંભજીવી હૈ । મહાન
આરંભો દ્વારા જો અપની આજીવિકા કરતે હૈં વે હસ લોક ઔર પરલોક-
દોનો-કે દુઃસ્વોંકો ભોગતે હૈં । કારણ કિ વિષયભોગોંમેં ગૃદ્ધ-લોલુપી
પ્રાણી અષ્ટવિધકર્મોંકા સંચય કરતે હૈં ઔર હન કામભોગોંસે ઉપાર્જિત
કર્મરૂપી ધૂલિસે લિસ હોકર વે બારંબાર અરહટકે ઘટમાલકી તરહ હસ
સંસારરૂપી ચક્રમેં ઘૂમતે રહતે હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

‘ અવિ સે ’ इत्यादि ।

વહ વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદકો પાકર, અર્થાત્ મનોવિનોદ કરને
કે અભિપ્રાયસે પ્રેરિત હોકર પ્રાણિયોંકી હિંસા કરકે મી આનન્દિત હોતા
હૈ । ઉસ હિંસાકો યહ અપને મનોવિનોદકા સાધન માન ક્રીડા સમદ્વતા હૈ

આરભથી જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે આરભજીવી છે મહાન
આરંભોદ્વારા જે પોતાની આજીવિકા કરે છે તે આ લોક અને પરલોક બન્નેના
દુઃખો ભોગવે છે, કારણ કે વિષયભોગોમા ગૃદ્ધ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધ કર્મોના
સંચય કરે છે, અને આ કામભોગથી ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂળથી લિસ બનીને તે
વારવાર રેટના ઘટમાલની માફક આ સંસારરૂપી ચક્રમા ઘૂમતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥
‘ અવિ સે ’ इत्यादि

તે વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદ માટે અર્થાત્ મનોવિનોદ કરવાના અભિપ્રા-
યથી પ્રેરિત બનીને પ્રાણીઓની હિંસા કરીને પણ આનન્દિત થાય છે તેવી હિંસાને
તે પોતાના મનોવિનોદનું સાધન માની ક્રીડા સમજે છે જ્યુકે બોલે છે, કહે છે

મૂતે ચ મપાવાદં યથા-મૃગાદયૈષ્વેતે મૃગયાર્થં ધાત્રા સુષ્ટા, મૃગયા ચ ક્રીડાર્થં મન્વતીતિ । યદિ મનોવિનોદાર્થમપિ પ્રાણિનો હત્વા મોદસે તર્હિ માસાદ્યુપમોગ્યાર્થં પ્રાણિનો નિહસ્ય મમુદિત્તો મન્વતીત્યત્ર કિમાશ્ચર્યમ્ । એવમવ્ચાદાનાદિદોષાનપિ સ ઉપાદત્તે । એવં વેષર્હિ કિં કર્તવ્યં મુનિના ? इत्याह—‘अलम्’ इत्यादि । बालस्य=अज्ञस्य संगेन=हास्यादिसङ्गेन प्राणातिपातादिरूपेण वा अल=अव्ययम्, अज्ञस्य यः संगो हास्यादिरूपः प्राणातिपातादिरूपो वा ॥ सर्वथा वर्जनीय इत्यर्थः । बालस्य सङ्गकरणे दोषं दर्शयति—‘वैरम्’ इत्यादि । बालस्य सङ्गः आत्मनो वैर=द्वेषं दर्शयति, नूतनमवानुपश्रित्वैरानुबन्धिकर्मणा यध्यते इत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

और झूठ ही कहता है कि ये मृगादिक पशु शिकारके लिये ही विधाताने बनाये हैं । शिकार क्रीडा करनेके निमित्तसे ही की जाती है । शिकार करनेसे मनोविनोद होता है । यदि मनोविनोदके लिये भी प्राणियोंकी हिंसा कर जो आनन्द मानता है वह मांसादिक म्मानेके लिये यदि उनकी हिंसा कर हर्षित होता है तो इसमें कौनसी अश्वरजकी बात है ? । इसी प्रकार विषयोंमें लपट बना हुआ प्राणी थोरी कुशील आदि पापोंको भी करता है । इसलिये मुनिजनका कर्त्तव्य है कि वह ऐसे बाल-अज्ञानी की संगतिसे, मनोविनोदके कारण हास्यादिकोंसे, अथवा हिंसादिक पापोंसे दूर रहे । बाल-अज्ञानियोंकी संगति, मनोविनोदके कारण हास्यादिक एवं प्राणातिपातादिक पाप, मुनिके लिये सर्वथा वर्जनीय हस्त लिये हैं कि इनका संग वैर-द्वेषका वर्धक होता है । इस वैरभावकी वृद्धिसे नूतनमवानुषङ्गा और वैरानुषङ्गी कर्मका यध्य होता है ॥ सू० ३ ॥

કે-આ મુગાદિકે પશુ શિકાર માટે જ વિધાતાએ બનાવેલ છે શિકાર ક્રીડા કરવાના નિમિત્તથી જ કરવામા આવે છે શિકાર કરવાથી મનોવિનોદ થાય છે કદાચ મનોવિનોદ માટે પ્રાણીઓની હિંસા કરી જે આનંદ માને છે તે માસાદિકે ખાવા માટે પણ કદાચ હિંસા કરી હર્ષિત થાય તો તેમાં કંઈ અશ્વરજ નથી. આ પ્રકારે વિષયોમા લપટ બનેલ પ્રાણી થોરી કુશીલ આદિ પાપો પણ કરે છે તેથી મુનિજનનું કર્તવ્ય છે કે તેઓવા બાલ-અજ્ઞાનીની સંગતિથી, મનોવિનોદના કારણે હાસ્યાદિકેથી, અથવા હિંસાદિકે પાપોથી દૂર રહે. બાલ-અજ્ઞાનીઓની સંગતિ, મનોવિનોદના કારણે હાસ્યાદિકે અને પ્રાણાતિપાતાદિકે પાપ, મુનિ માટે સર્વથા વર્જનીય આ માટે છે કે તેનો સંગ વૈર-દ્વેષનો વર્ધક થાય છે આ વૈરભાવની વૃદ્ધિથી નૂતનમવાનુષંગી અને વૈરાનુષંગી કર્મનો બધ થાય છે ॥ સૂ० ૩ ॥

યથેવં તર્હિ મુનિના કિં કર્ત્તવ્યમિત્યાહ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હાઽતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, આયંકદંસી ન કરેઙ્ગ પાવં । અગ્ગં ચ મૂલં ચ વિગિંચ ધીરે, પલિચ્છિદિયા ણં નિક્કમ્મદંસી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ । અગ્રં ચ મૂલં ચ વિવિચ્ય ધીરઃ, પરિચ્છિદ્ય સ્વલુ નિષ્કર્મદર્શી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ । તસ્માદ્=વાલસંગેન વૈરવર્ધનાદ્, અતિવિદ્યઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્, પરમં=સર્વોત્કૃષ્ટં—સિદ્ધિગતિનામધેયં પદં, સર્વવિરતિલક્ષણં ચારિત્રં વા અસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી=નરકનિગોદાદિનાનાદુઃસ્વદર્શકઃ, પાપં=પાપાનુ-વન્ધિ કર્મ ન કરોતિ । અત્ર કરોતીત્યુપલક્ષણમ્, ન ચ પરેણ કારયતિ, નાપિ કુર્વન્ત-મન્યમનુમોદયતિ ।

યદિ એસા હૈ તો મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે ? સો કહતે હૈ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

વાલ—અજ્ઞાનીકે સંગસે વૈરભાવકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । ઇસલિયે જો અતિવિદ્ય—સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હૈ વહ—‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા ડસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલા સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર હૈ’ એસા જાનકર નરકનિગોદાદિકકે અનેક દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા, અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોંકે દુઃસ્વ જીવોંકો તથ તક ભોગને પડતે હૈં કિ જબ તક સિદ્ધિપદકી પ્રાપ્તિ ડન્હેં નહીં હોતી’ ઇસ પ્રકારકા દૃઢશ્રદ્ધાવાલા હોતા હુઆ પાપાનુબન્ધી કર્મ નહીં કરતા હૈ । “કરોતિ” યહ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓંકી ઉપલક્ષક હૈ, ઇસસે યહ ઘટિત હોતા હૈ કિ વહ ન દૂસરોંસે પાપકર્મ કરાતા હૈ ઓર ન પાપકર્મ કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કરતા હૈ ।

ને આ પ્રમાણે છે તો મુનિએ શુ કરવુ બેઠએ ? તે કહે છે—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ

ખાલ—અજ્ઞાનીના સગથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે, માટે ને અતિવિદ્ય—સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન છે તે ‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર છે’ એવુ બાણીને નરકનિગોદાદિકના અનેક દુખોના જ્ઞાતા અર્થાત્ ‘નરકનિગોદાદિકોના દુખ જીવોને ત્યાં સુધી ભોગવવા પડે છે જ્યાં સુધી સિદ્ધિપદની પ્રાપ્તિ તેને થતી નથી’ આ પ્રકારના દૃઢ શ્રદ્ધાવાળા બનીને પાપાનુબન્ધી કર્મ કરતા નથી “કરોતિ” આ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓની ઉપલક્ષક છે, તેથી એ ઘટિત થાય છે કે તે બીજાઓથી પાપકર્મ કરાવતા નથી અને પાપકર્મ કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા નથી,

કિંચ-અગ્ર-મધોપગ્રાદિકર્મવતુપ્રયં કેવલિકર્મેત્યર્થઃ, મૂલ-ચતુર્વિધં પાતિકર્મ, યદ્વા મૂલ-મોહનીય કર્મ, અગ્ર-તદવશિષ્ટસત્કર્માણિ, મોહનીયસયેન વિનાઽન્યેષાં કર્મણાં ક્ષયો ન ભવતિ, તસ્માન્મોહનીયસ્ય મૂલત્વ સિદ્ધ્યતિ । ઇત્યુક્ત-

“નાયગમિ હપ સંતે, જહા સેના વિગસ્સહ ।

પર્વં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્ઞે સ્વયં ગપ ” ॥ ૧ ॥

છાપા—નાયકે હતે સતિ, યદ્વા સેના વિનશ્યતિ ।

પર્વં કર્માણિ નશ્યન્તિ, મોહનીયે ક્ષયં ગતે ॥ ,

પરીવહ પર્વં ઉપસર્ગો સે અધિચલિત્ત્વં હોકર વહ પુથક્ પુથક્ એવ પ્રમેદો સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે હસ યાત્રી પર્વાલોચના કરતા હૈ કિ અગ્ર ઓર મૂલ તપસંયમકે વિના આત્માસે પુથક-અલગ નહીં હો સકતે હૈ । મધોપગ્રાદી અઘાતિયા ચાર કર્મ કિ જો કેવલિકર્મ કહે જાતે હૈ, વેચાર પ્રકારકે ઘાતિયા કર્મ મૂલ હૈ । અથવા મોહનીય કર્મકા નામ મૂલ હૈ । હસસે અવશિષ્ટ સત્ત કર્મોકા નામ અગ્ર હૈ । મોહનીયકે ક્ષય હુપ વિના અન્ય કર્મો કા ક્ષય નહીં હોતા હૈ હસલિયે મોહનીયમેં મૂલતા સિદ્ધ હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

“નાયગમિ હપ સંતે, જહા સેના વિગસ્સહ ।

પર્વં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્ઞે સ્વયં ગપ ” ॥ ૧ ॥

જેસે સેનાપતિકે મારે જાને પર સેના તિતર-ચિતર હોકર ભાગ જાતી હૈ ડહી પ્રકાર મોહનીયકે ક્ષય હોને પર અન્ય કર્મ મી નષ્ટ હો જાતે હૈ ॥ ૧ ॥

પરીવહ અને ઉપસર્ગોથી અધિચલિત બનીને તે પુથક્ પુથક્ સેદ્યપ્રમેદો સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે આ યાત્રી પર્વાલોચના કરે કે અગ્ર અને મૂલ તપ સંયમ વિના આત્માથી પુથક્-અલગ થઈ શકતા નથી. મધોપગ્રાદી અઘાતિયા ચાર કર્મો કે જે કેવલિકર્મ કહેવાય છે તે માર પ્રકારના ઘાતિયા કર્મ મૂલ છે અથવા મોહનીય કર્મનું નામ મૂલ છે તેનાથી અવશિષ્ટ સત્ત કર્મોનું નામ અગ્ર ॥ મોહનીયને ક્ષય થવા વિના અન્ય કર્મોને ક્ષય થતો નથી. માટે મોહનીયમાં મૂલતા સિદ્ધ થાય છે કહ્યું છે—

નાયગમિ હપ સંતે જહા સેના વિગસ્સહ ।

પર્વં કમ્માણિ ણસ્સંતિ મોહણિજ્ઞે સ્વયં ગપ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે સેનાપતિના મરણથી સેના છિન્નચિત્ત થઈ ભાગી જાય છે તે પ્રકારે મોહનીયને ક્ષય થવાથી અન્ય કર્મ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે ॥ ૧ ॥

યદ્વા-મૂલં=મિથ્યાત્વમ્, અગ્રં તુ અષ્ટવિધકર્મપ્રકૃતિરૂપં તેષાં મિથ્યાત્વમૂલક-
ત્વાત્। ઉક્તञ्च—“ મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ-
કમ્મપગડીઓ વંધહ ” ઇતિ । ધીરઃ=પરીપહોપસર્ગેરક્ષોમ્યઃ સન્ વિવિચ્ય=
પૃથક્ પૃથક્ ભેદોપભેદૈઃ સવિસ્તરં પર્યાલોચ્ય, પરિચ્છિદ્ય=કર્માણિ તત્કારણીભૂત-
મિથ્યાત્વાદીનિ તપઃ-સંયમાભ્યાં સર્વથા છિત્વા=સ્વાત્મનઃ પૃથક્કૃત્ય, પૌદ્ગલિકસ્ય
જ્ઞાનાવરણીયાદેઃ કર્મણશ્છેદનં દ્વૈધીકરણરૂપ ન સંભવતિ, કિંત્વાત્મનઃ પૃથક્કરણ-
મેવેતિ ભાવઃ। નિષ્કર્મદર્શી=સ્વાત્માનં નિષ્કર્માણં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ તથાવિધો
ભવતીત્યર્થઃ । જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયકર્માપગમાત્ સર્વદર્શી ભવતીતિ ભાવઃ ॥૪૧॥

અથવા-‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વકા હૈ । ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારકે
કર્મોંકા હૈ, ક્યોંં કિ આઠોંં કર્મોંકા મૂલકારણ મિથ્યાત્વ હૈ । હસી-
લિએ મિથ્યાત્વકો મૂલ-શબ્દસે કહા હૈ । કહા ભી હૈ—“ મિચ્છ-
ત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ કમ્મપગડીઓ વંધહ । ” ઇતિ ।
મિથ્યાત્વકે ઉદયસે જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોંકો વાંધતા હૈ ।

હસલિયે કર્મોંંકે કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિકો તપસંયમદ્વારા
સર્વથા અપની આત્માસે અલગ કર વહ નિષ્કર્મદર્શી હો જાતા હૈ ।

સૂત્રમેં “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આયા હૈ, જિસકા અર્થ-“ છેદન કરકે ”
એસા હોતા હૈ । પરન્તુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકા તો છેદન હો
નહીંં સકતા; અતઃ-‘ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો અપની આત્માસે “ પરિ-
ચ્છિદ્ય ”-અલગ કરકે’ એસા અર્થ કરના ચાહિયે, ક્યોંં કિ કર્મોંકો
આત્માસે પૃથક્ કરના હીંં ઉનકા છેદન હૈ । આત્માસે કર્મોંકે અલગ હોને

અથવા ‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વનુ છે ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારના કર્મોંનુ છે,
કારણ કે આઠ કર્મોંનુ મૂલ કારણ મિથ્યાત્વ છે માટે મિથ્યાત્વને મૂલ શબ્દથી કહેલ
છે કહ્યુ છે “ . મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ કમ્મપગડીઓ વંધહ । ”
ઇતિ । મિથ્યાત્વના ઉદયથી જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિઓ બાધે છે માટે કર્મોંના
કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિને તપસયમદ્વારા સર્વથા પોતાના આત્માથી જુદા કરી
તે નિષ્કર્મદર્શી થઇ બચ છે

સૂત્રમા “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આવેલ છે તેનો અર્થ “ છેદન કરીને ” એમ
થાય છે પરન્તુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંનુ તો છેદન બની શકતું નથી
માટે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને પોતાના આત્માથી “ પરિચ્છિદ્ય ”-જુદા કરીને, એવો
તે જ તેનું છેદન

અન્યદપિ ફલં નિષ્કર્મદર્શિનો મયતીત્યાહ—‘એસ મરણા પમુચ્ચહ’ ઇત્યાદિ

મૂલ્ય—એસ મરણા પમુચ્ચહ, સે હુ દિદ્ધમણ મુળી, લોગસિ પરમદસી વિવિત્તજીવી ઉવસસે સમિણ સહિણ સયા જણ કાલ કસી પરિવ્વણ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—એપ મરણાત્ પ્રમુચ્યતે, સ એવ હૃદયમયો મુનિ, છોકે પરમદર્શી વિવિત્ત-જીવી ઉપશાન્ત સમિત સહિતઃ સદા યતઃ કાષ્ઠાકાઢી પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ. ૫ ॥

ટીકા—એપ.=નિષ્કર્મદર્શી મરણાત્=આયુ સયાત્ પ્રમુચ્યતે, આયુષ્યકર્મવન્ધા પગમાદિતિ માવ । યદ્વા-આવીચિમરણાત્ આવીચિ=અનુસમય નિરન્તર મરણ=મૃત્યુ સસારો યા, તસ્માત્ પ્રમુચ્યતે । કેવલી મૂલ્યા અન્યાન્ યા મોચયતિ દેશનાદિના । સ પર જીવ નિષ્કર્મદર્શી-અર્થાત્ કર્મરહિત અપની આત્માકો દેશનેકે સ્વ ભાવલા હો જાતા હૈ । હસ પ્રકારકા સ્વભાવ જીવકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે યિનાશસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । હસી અવસ્થામેં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હોતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી હૈ ઉસે ઓર મી દસરા લાભ હોતા હૈ, હસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘એસ મરણા પમુચ્ચહ’ ઇત્યાદિ ।

યહ નિષ્કર્મદર્શી આયુષ્યકર્મકે વાધકે અભાવ હોનેપર મરણસે રહિત હો જાતા હૈ । અથવા યહ આવીચિમરણસે છૂટ જાતા હૈ । અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણકો આવીચિમરણ કહતે હૈ । અથવા મરણ નામ સંસારકા હૈ । કેવલી હો જાનેસે આત્મા સમારય પનસે રહિત હો જાતા હૈ । સિદ્ધસ્થાનમેં ચિરાજનેકે નિશ્ચયસે વસી ભવમેં અઘાતિયા કર્મોકા

છે આત્માથી કર્મોના જલજ યવાથી છવ નિષ્કર્મદર્શી-અર્થાત્ કર્મરહિત પોતાના આત્માને બોવાના સ્વભાવવાળો થઈ બાય છે આ પ્રકારેના સ્વભાવ છવને જ્ઞાનાવરણીય અને દર્શનાવરણીય કર્મના વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે આ અવસ્થામાં છવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી થાય છે ॥ સૂ. ૪ ॥

તે નિષ્કર્મદર્શી છે તેને બીજો પણ લાભ થાય છે તે વાતને પ્રગટ કરે છે-

એસ મરણા પમુચ્ચહ ઇત્યાદિ

આ નિષ્કર્મદર્શી આયુષ્યકર્મના વાધને અભાવ થવાથી મરણથી રહિત થાય છે અને તે આવીચિમરણથી છુટી બાય છે અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણને આવીચિમરણ કહે છે અથવા મરણ નામ સંસાર છે કેવળી થઈ જવાથી આત્મા સંસારબંધનથી રહિત થાય છે સિદ્ધસ્થાનમાં ચિરાજવાના નિશ્ચયથી તેજ ભવમાં

દૃષ્ટભય એવ, દૃષ્ટં ભયમ્ इहलोकादि सप्तविधं येन स एव मुनिर्भवति । किं च लोके=उच्चारादिचतुर्दशस्थानसमुत्पन्ने जीवसमूहात्मके परम=आत्मनः समुत्कर्षकारित्वात् संयमः, तं द्रष्टुं शीलमस्येति परमदर्शी, तथा-विविक्तं रागद्वेषरहितत्वादक्लिष्टं जीवितुं शीलमस्येति विविक्तजीवी, अत एव उपशान्तः=उपशमसमन्वितः, अत एव समितः मोक्षमार्गं सम्यग् इतः=प्राप्तः, तथा सहित ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, अत एव सदा यतः=अनवरतं प्रमादरहितः । उक्तगुणधारणं कियत्कालपर्यन्तमावश्य-

અભાવ કર સિદ્ધપદકા અધિકારી હો જાતા હૈ । કેવલી હોકર યહ અન્ય જીવોંકો ભી સદેશના દ્વારા સંસારપરિભ્રમણ સે છુડા દેતા હૈ । इहलोक-भय आदि सात प्रकारका भय जिसने देख लिया है वह दृष्टभय है । दृष्टभय ही मुनि होता है । तथा उच्चारादि चौदह स्थानोंमें समुत्पन्न जीवसमूहरूप लोकमें आत्माका उत्कर्षकारी होनेसे परम जो संयम उसको देखनेका जिसका स्वभाव है वह परमदर्शी है । तथा रागद्वेष-रहित होनेसे अक्लिष्ट जीनेका जिसका स्वभाव है वह विविक्तजीवी है । यह निष्कर्मदर्शी विविक्तजीवी होता है । इसीलिये वह 'उवसंते' 'उपशान्तः'—उपशमसे युक्त होता है । कषायोंके उद्रेकका अभाव उपशम है । जब कषायोंमें बिलकुल मन्दता आ जाती है तब वह 'समिए' समितः—मोक्षके मार्गको प्राप्त हुआ कहलाता है । तथा 'सहिए' सहितः ज्ञान और चारित्र्यसे युक्त होनेसे वह 'सयाजए' सदायतः—निरन्तर यतनावान् अर्थात् प्रमादरहित होता है । इन पूर्वोक्त गुणोंके धारण करने

અધાતિયા કર્મેના અભાવ કરી સિદ્ધપદનો અધિકારી થાય છે. કેવળી બની તે અન્ય જીવોને પણ સદેશનાદ્વારા સંસારપરિભ્રમણથી છોડાવે છે. इहलोक-भय आदि सात प्रकारનો ભય જેણે જોઈ લીધેલ છે તે દૃષ્ટભય છે, દૃષ્ટભય જ મુનિ થાય છે તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદ સ્થાનોમા સમુત્પન્ન જીવસમૂહરૂપ લોકમા આત્માના ઉત્કર્ષકારી થવાથી પરમ જે સંયમ તેને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પરમ-દર્શી છે તથા રાગદ્વેષરહિત થવાથી અક્લિષ્ટ જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે વિવિક્તજીવી છે તે નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી થાય છે તેથી તે 'उवसंते' 'उपशान्तः'—ઉપશમથી યુક્ત થાય છે કષાયોના ઉદ્રેકનો અભાવ ઉપશમ છે, જ્યારે કષાયોમા બિલકુલ મંદતા આવી જાય છે ત્યારે તે 'समिए' समितः—મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરેલો કહેવાય છે તથા 'सहिए' सहितः—જ્ઞાન અને ચારિત્રથી યુક્ત થવાથી તે 'सयाजए' सदायतः—નિરન્તર યતનાવાન્ અર્થાત્ પ્રમાદરહિત થાય છે આ પૂર્વોક્ત ગુણોને ત્યા સુધી ધારણ કરવાની આવશ્યકતા છે

કમિત્યાહ—કાલાકાઠ્ઠીતિ । કાલ=મૃત્યુકાલમાકાઠિતું બીલમસ્યેતિ કાલાકાઠ્ઠી, તથાવિધ સન્ પશ્ચિનેત્—યાવત્ પર્યાયાગતં પશ્ચિતમરણં તાવદાકાઠ્ઠ્યમાપ્નો વિવિ-
ક્તજીવિત્વાદિગુણસમન્વિતઃ સયમારાધને સમુપ્તો ભવદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

મૂલ્મ—બહુ ચ खलु पावकम्म पगढ । (सद्यमि धिइ कुवहा।
एत्थोवरए मेहावी सव्व पापकम्म झोसइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—बहु च खलु पापकर्म प्रकृतम् । सत्ये वृत्तिं कुरुष्व । अत्र उपरतो
मेधावी सर्व पापकर्म शोषयति ॥ सू० ६ ॥

ટોંકા—‘बहु च’ इत्यादि । खलु=निश्चयेन पापकर्म बहु=बन्धस्यानापे-
क्षया बहुविधं प्रकृतम्=प्रकथितं, प्रतिपादितमित्यर्थ । यद्येवं तर्हि तद्वचपगमार्थं
किमावरणीयमित्यत आह—‘सत्ये’ इत्यादि । हे शिष्य ! सत्ये-सङ्ग्रहो मध्ये

કી આવશ્યકતા તમી તક છે જય તક કિ ઉસે પશ્ચિતમરણ પ્રાપ્ત નહીં
હોતા । યહી ઘાત સૂચકાર પ્રકટ કરતે હૈ—‘કાલકાઠ્ઠી’ ઇતિ, કાલ શબ્દ
કા અર્થ મૃત્યુકાલ હૈ, ઇસકી આકાઠ્ઠતા રચનેવાલેકો કાલાકાઠ્ઠી
કહતે હૈ । જય તક પર્યાયાગત પશ્ચિતમરણ પ્રાપ્ત નહીં હોતા તપ તક
ઉસકી આહના કરતા હુઆ ઇન પૂર્વોક્ત ગુણોસે યુક્ત હોકર વહ નિષ્કર્મ
દર્શી સંયમકી આરાધનામે પ્રયત્નશાલી યા લયલીન રહે ॥ સૂ. ૫ ॥

‘बहु च’ इत्यादि ।

(પાપકર્મ બંધસ્થાનકી અપેક્ષાસે વહુત પ્રકારકા કહા ગયા હૈ) વીત
રાગ પ્રમુને) આરહ પ્રકારકી પરિપદ્—સમાર્મે અપની વિન્ય દેશનાસે) બન્ધ
સ્થાનોકી અપેક્ષાસે કર્મોકિ અનેક મેવ મધ્ય જીવોકો સમજાયે હૈ । સાય
મેં યહ બી પ્રકટ કિયા હૈ કિ ઇન કર્મોકો આત્માસે દૂર કરનેકા ઉપાય

કે બન્યાં મુખી તેને પશ્ચિતમરણ પ્રાપ્ત નહિ થાય, આ વાત સૂચકાર પ્રગટ કરે
છે—‘કાલકાઠ્ઠી’ ઇતિ, કાલ શબ્દનો અર્થ મૃત્યુકાળ છે તેની આકાઠ્ઠતા સમજા-
વાળાને કાલાકાઠ્ઠી કહે છે બન્યાં મુખી પર્યાયાગત પશ્ચિતમરણ પ્રાપ્ત નથી થતું
ત્યાં મુખી તેની આહના કરીને પૂર્વોક્ત ગુણોથી મુક્ત થઈને તે નિષ્કર્મદર્શી
સંયમની આરાધનામાં પ્રયત્નશાળી અગર લયલીન રહે ॥ સૂ. ૫ ॥

“बहु च” इत्यादि

પાપકર્મ બંધસ્થાનની અપેક્ષાથી બધા પ્રકારના કહેલ છે વીતરાગ પ્રમુખે
આર પ્રકારની પરિપદ્—સમાર્થ પાતાની વિન્યદેશનાથી બંધસ્થાનોની અપેક્ષાથી
કર્મોના અનેક મેવ મધ્ય જીવોને સમજાવેલ છે સાથે જો વહુ પ્રગટ કરેલ છે
કે આ કર્મોના આત્માથી દૂર કરવાનો ઉપાય છે—“સદ્યમિ ધિર કુવહા” સત્યે

મ્યો હિતઃ સત્યઃ=સંયમસ્તસ્મિન્ ધૃતિ કુરુષ્વ । યદ્વા-સત્યઃ=વીતરાગપ્રણીતાગમઃ
યથાવસ્થિતતત્ત્વસ્વરૂપપ્રતિવોધનાત્ , તત્ર ભગવદાજ્ઞારૂપે પ્રવચને ધૃતિ=ચિત્તસ્થૈર્ય
કુતર્કપરિત્યાગેન કુરુષ્વ । કિચ-અત્ર=અસ્મિન્ સંયમે ભગવત્પ્રવચને વા, ઉપરતઃ=
ઉપ=સામીપ્યેન રતઃ=વ્યવસ્થિતઃ-પરાયણઃ, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, સર્વ-
નિરવશેષં પાપકર્મ શોપયતિ=ગોપયતિ-ક્ષપયતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિપ્રમાદયુક્તઃ કિણુણો ભવતીત્યાહ-‘અણેગચિત્તે ’ ઇત્યાદિ ।

હૈ-‘સચ્ચમ્મિ ધિં કુવ્વહા’ સત્યે ધૃતિ કુરુષ્વ (સત્ય-સંયમમે ધૈર્ય ધારણ
કરો, હસલિયે શિષ્યકો સમ્બોધિત કરતે હુણ કહતે હૈં કિ હે શિષ્ય !
તુમ યદિ ઇન કર્મો પર વિજય કરના ચાહતે હો તો-‘ સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-
-સંયમઃ ’ સત્પુરુષોંકે લિયે હિતકારી જો સંયમ હૈં ઉસમેં અટલ રહો ।
ઉપસર્ગ એવં પરીષદોંકે આને પર મી હસ માર્ગસે કર્મી મી વિચલિતચિત્ત
ન વનો) । અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમકા હૈં, ક્યોં કિ હસ
સે હી જીવાદિક તત્ત્વોંકે યથાર્થસ્વરૂપકી પ્રરૂપણા હોતી હૈં । ભગવાનકે
હસ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમેં કુતર્કોંકા પરિહાર કર ચિત્તકો સ્થિર કરો ।
કારણ કિ-હસ સંયમમેં અથવા વીતરાગપ્રણીત આગમમેં અચ્છી તરહસે
લવલીન ચિત્તવાલા મનુષ્ય હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકસે નિપુણમતિ વન
કર સમ્પૂર્ણ પાપકર્મોંકો નષ્ટ કર દેતા હૈં) ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિક પ્રમાદસે યુક્ત પ્રાણી કિસ ૨ ગુણવાલે હોતે હૈં ? હસકે
લિયે કહતે હૈં-‘ અણેગચિત્તે ’ ઇત્યાદિ ।

ધૃતિ કુરુષ્વ, સત્ય-સયમમા ધૈર્ય ધારણ કરો એ માટે શિષ્યને સ યોગ્ય કરીને
કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે જો આ કર્મો ઉપર વિજય કરવા માંગતા હો તો-
‘સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-સંયમઃ’ સત્પુરુષોને માટે હિતકારી જે સયમ છે તેમા
અટલ રહો ઉપસર્ગ અને પરીષદો આવવા છતાં પણ આ માર્ગથી કોઈ વખત
પણ વિચલિત ન બનો અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમનુ છે, કારણ
કે તેનાથી જ જીવાદિક તત્ત્વોના યથાર્થ સ્વરૂપની પ્રરૂપણા થાય છે. ભગવાનના
આ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમા કુતર્કનો પરિહાર કરી ચિત્તને સ્થિર કરો, કારણ કે
આ સયમમા અને વીતરાગપ્રણીત આગમમાં સારી રીતે લવલીન ચિત્તવાળા
મનુષ્ય હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી નિપુણમતિ બનીને સંપૂર્ણ પાપકર્મો નષ્ટ
કરી નાખે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિ પ્રમાદથી યુક્ત પ્રાણી કયા કયા ગુણવાળા થાય છે ? તેને માટે
કહે છે-‘ અણેગચિત્તે ’ ઇત્યાદિ.

મૂળમ્—અણેગવિત્તે સ્વલ્હ અય પુરિસે, સે કેયણ અરિહય
પૂરિત્તય, સે અણ્ણવહાય અણ્ણપરિયાવાય અણ્ણપરિગ્ગહાય જણ
વયવહાય જણવયપરિયાવાય, જણવયપરિગ્ગહાય ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—અનેકવિત્તઃ સ્વલ્હ અય પુરુષઃ, સ કેતનમ્ અર્હતિ પૂરયિતુમ્ । સોઽન્ય-
વધાય, અન્યપરિતાપાય, અન્યપરિગ્રહાય, જનપદવધાય, જનપદપરિતાપાય જન
પદપરિગ્રહાય ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—અય પ્રત્યક્ષવિષયઃ સંસારી પુરુષઃ સ્વલ્હ=નિશ્ચયેન અનેકવિત્તઃ=કૃપિ
ધાણિજ્યસેવાધનેકદૃશ્યાશ્રિતવિત્તો ભવતિ । સંસારસુખામિભાષિણશ્રિતમેકાગ્રં ન
ભવતીતિ માવઃ । અનેકવિત્તં કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘સ કેતનમ્’ इत्यादि ।
સોઽનેકવિત્તઃ કેતનં=માવકેતનમ્ इच्छां પૂરયિતુમ્ અર્હતિ ? કાકુત્તચનમેતદ્ ।
નાર્હતીત્યર્થઃ । કેતન દ્વિવિધં દ્રવ્યતો માવતથ । તથ દ્રવ્યકેતનં ચાલિની, સમુદ્રો

યહ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયસે કૃપિ ધાણિજ્ય સેવા આદિ અનેક કાર્યો
કે કરનેમેં વ્યગ્રચિત્તવાળા બના રહતા હૈ । વ્યર્થો કિ સંસારી જીવોંકી
અભિલાષા સાંસારિક અનેક સુખોંકો પ્રાપ્ત કરનેંકી ઓર સદા લગી રહતી
હૈ, હસીલિયે યે કૃપિ ધાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારકે આજીવિકોપયોગી
કાર્યોંકે સપાદનમેં રાત્રિવિન જુટે રહતે હૈં, અતઃ સાંસારિક સુખોંકે
અભિલાષી પુરુષોંકા મન કિસી એક વિષયમેં એકાગ્ર નહીં હોતા હૈ । હસ
પર સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—‘સે કેયણ અરિહય પૂરિત્તય’ સ કેતનમર્હઃ
પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ ઉસંકી હમ પ્રકારંકી યે ચેષ્ટાએં વ્યા ઉસ કેતન-માન
સિક અભિલાષાંકી પૂર્તિ કર સકમી હૈ ? કદાપિ નહીં । સૂત્રકારને યહાં
કાકુત્તચનના પ્રયોગ કિયા હૈ । કેતન ઘો પ્રકારકા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-કેતન

આ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયસે કૃપિ, ધાણિજ્ય, સેવા આદિ અનેક કાર્યો કર
વામાં વ્યગ્રચિત્તવાળા બની રહે છે કારણકે સંસારી જીવોની અભિલાષા સાચા
રિતિ અનેક સુખો પ્રાપ્ત કરવાની તથા સકા કાચી રહે છે તેથી તે બેટી,
વાલિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારના આશ્રિતિના ઉપયોગી કાર્યોના સપાદનમાં રાત્રિ
દિવસ વાગ્યા રહે છે માટે સાસારિકસુખોના અભિલાષી પુરુષોનું મન કોઈ
એક વિષયમાં એકાગ્ર બનતું નથી । આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે—‘સે કેયણ
અરિહય પૂરિત્તય’—સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ તેની આ પ્રકારની આ
ચેષ્ટાએ રા તેના કેતન=માનસિક અભિલાષાની પૂર્તિ કરી શકે છે ? કદાપિ
નહિ. સૂત્રકારે આ કૈલાવે કાકુત્તચનને પ્રયોગ કરેલ છે કેતન ત્રિ પ્રકારના છે.

વા । ભાવકેતનમ્ ઇચ્છા, લોભઃ । અત્ર ભાવકેતનાપેક્ષયા કેતનશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ ।
ઉક્તં ચ ભગવતા—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ ” ઇત્યાદિ ।

અપરં ચ—“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥

(૨) ભાવ-કેતન । દ્રવ્ય-કેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર હૈ, ઔર ઇચ્છા, લોભ, યે ભાવ-કેતન હૈ । યહાં ભાવ-કેતનકી અપેક્ષાસે ‘કેતન’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ હૈ । ભગવાને યહી યાત કહી હૈ—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્-જૈસે જૈસે લાભ હોતા હૈ વૈસે વૈસે લોભ મી બઢતા હૈ । લાભસે લોભકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જો અનેક કાર્યોમૈં વ્યગ્રચિત્ત બના રહતા હૈ વહ કયા ભાવ-કેતનરૂપ અપની ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કર સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા ? કહા મી હૈ—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જિસ પ્રકાર સોનેસે નિદ્રા નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઔર રાનેસે મૃત્ત નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઁસી પ્રકાર કામ-ઇચ્છાઓંમૈં ફંસા હુવા મનુષ્ય ઇચ્છાકે અનુસાર ઇષ્ટ વસ્તુઓંકા લાભ હોને પર મી ઁનસે શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ફિર મી કહા હૈ—

(૧) દ્રવ્યકેતન, (૨) લાવકેતન દ્રવ્યકેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, અને ઇચ્છા અને લોભ, એ લાવકેતન છે આ ઠેકાણે લાવકેતનની અપેક્ષાથી ‘કેતન’ શબ્દનો પ્રયોગ થયેલ છે ભગવાને એ જ વાત કહી છે—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ લોભ વધે છે લાભથી લોભની વૃદ્ધિ થાય છે જે અનેક કાર્યોમા વ્યગ્રચિત્ત બની રહે છે તે શુ લાવકેતનરૂપ પોતાની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરી શકે છે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જેવી રીતે સુઈ રહેવાથી નિદ્રા છૂટી શકાતી નથી અને ખાવાથી ભૂખ છૂટી શકાતી નથી તે પ્રકારે કામ-ઇચ્છાઓમા કસેલો પ્રાણી-મનુષ્ય ઇચ્છાનુસાર ઇષ્ટવસ્તુઓનો લાભ થતા છતા પણ તેનાથી શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી વળી પણ કહ્યું છે—

કિં ચ—“ ન જાતુ કામ કામાનામુપમોગેન શામ્યતિ ।

હવિષા કૃષ્ણચર્મૈષ, મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

ઈચ્છાપૂરણાર્થે વ્યાકૃત્તિષ્ઠિષ્ઠિઃ કિં કરોતીત્યાહ—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ, યદ્વા—‘ સે કે ય જ અરિહણ પૂરિષણ ’ ઇત્યસ્ય ‘ સ કચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ’ ઇતિચ્છાયા । સ પતાદશો જન કો વર્તેતે ય તમ્—અનેકધિષ્ઠિ પુરુષ પૂરયિતુમ્ મર્ઃ સમર્થો મવેત્, કસ્તદિચ્છાં પૂરયેત્, ન કોડપીતિ માથઃ, યતઃ સોડનેકધિષ્ઠિઃ પુરુષઃ અન્યવચાધર્થે પર્યુત્સુકો મવતિ, તથેવાહ સૂત્રકારઃ—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપમોગેન શામ્યતિ ।

હવિષા કૃષ્ણચર્મૈષ, મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

કામવિકાર વિષયમોગેકિ સેવન કરનેસે શાન્ત નહીં હોતા હૈ । પ્રત્યુત જેસે છૂતકે આલને સે અગ્નિકી જ્વાલા ચકતી હૈ ડસી પ્રકાર વિષયોકે સેવનસે વિષયવાસનાકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે જીવ ક્યા કરતા હૈ ? હસી યાતકો કહતે હૈ—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા “ સે કે ય જ અરિહણ પૂરિષણ ” હસ વાક્યકી છાયા “ સ કચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એસી મી હોતી હૈ । જિસકા અર્થ હસ પ્રકાર હોતા હૈ—કૌન એસા વ્યક્તિ હો સકતા હૈ કિ જો અનેક ચિત્તવાળે મનુ વ્યક્તી ઇચ્છાઓકી પૂર્તિ કરનેમેં સમર્થ હો સકે ? કારણ કિ વહ અનેક ચિત્ત પુરુષ અન્યવચ—વસરેકો મારના આદિ અનેક સાવચ ક્રિયાઓકિ કરનેમેં ડત્સુક યના રહતા હૈ । હસી યાતકો સૂત્રકાર સ્વયં દિલ્લલાતે હૈ—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપમોગેન શામ્યતિ ।

હવિષા કૃષ્ણચર્મૈષ મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામવિકાર વિષયમોગેન સેવન કરવાથી શાન્ત થતો નથી, પણ જેમ થી નાજવાથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે છપ શુ કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય જ અરિહણ પૂરિષણ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” જેમ પણ થાય છે જેને અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—કોણ એવો પ્રાણી થઈ શકે છે કે જે અનેક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવચ—બીજાને મારવું—આદિ અનેક સાવચ ક્રિયાઓ કરવામાં ડત્સુક બની રહે છે આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અળ્ળવહાણ ’ ઇત્યાદિ

સ ઇચ્છાપૂરણાર્થ પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેષાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-
ચોરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થ ધનિનં હન્તિ, ઇત્યાદિ । તથા-અન્યપરિતાપાય=
અન્યેષાં જીવાનાં પરિતાપાય=શારીરમાનસક્લેશાય ભવતિ । તથા-અન્યપરિગ્રહાય
=અન્યેષાં=દાસદાસીનાં ગોમહિષ્યાદીનાં ચ પરિગ્રહાય=સ્વાયત્તીકરણાય ભવતિ ।
તથા-જનપદવધાય-મગધાદયો જનપદાસ્તેષાં વધાય । યથા-મ્લેચ્છા ભૂપતયો
મ્લેચ્છધર્મમસ્વીકુર્વન્તં જનપદં ધનન્તીત્યાદિ । તથા-જનપદપરિતાપાય-જનપદાનાં

મનુષ્ય જબ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તવ ઉસ
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ બનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-
સિક-ડાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ડાલતા હૈ ।
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અભિલાષાઓંકી પૂર્ત્તિકે લિયે દાસી
દાસ આદિકો તથા ગાય મૈસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ
કરનેમેં વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-
વૃત્તિસે ત્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ડાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોતી
હૈ । અનુચિત કર-ટૅક્સકા લેના, અનુચિત દણ્ડ દેના, ઇત્યાદિકા નામ
મી પરિતાપ હૈ । અધાર્મિક ભૂપતિ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે ધન-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા જીવોની
હિંસાનુ કારણ બને છે, જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ડાકૂ પૈસાવાળા માણસના ધન
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાખે છે તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય જીવોને શારી-
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ ભોગવવો પડે છે તેમજ તે પોતાની અભિ-
લાષાઓની પૂર્ત્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-ભેસ આદિ કચાયથી ચોરી
લાવીને તેનો સંગ્રહ કરવામા વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે જનપદ-મગધાદિ દેશેને તે
પોતાની પ્રવૃત્તિથી ત્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાખે છે તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે અનુચિત કરખોળ-ટેક્સ
લેવો, અનુચિત દડ આપવો, ઇત્યાદિનુ નામ પણ પરિતાપ છે, અધાર્મિક રાજા
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાથી અનીતિ-

કિં ચ—“ ન જાતુ કામ કામાનામુપભોગેન શામ્યસિ ।

હિષિયા કૃષ્ણવર્ત્મેન, મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

ઈચ્છાપૂરણાર્થે વ્યાકૃત્તિચિત્તઃ કિં કરોતીત્યાહ—‘ સે અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ, યદ્વા—‘ સે કે ય ણ અરિહપ પૂરિસપ ’ ઇત્યસ્ય ‘ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ’ ઇતિચ્છાયા । સ પતાદશો જનઃ કો વર્ષતે યઃ તમ્=અનેકચિત્તં પુરુષ પૂરયિતુમ્ અર્હઃ સમર્થો મવેત્, કસ્તદિચ્છાં પૂરયેત્, ન કોડપીતિ માન, યતઃ સોડનેકચિત્તઃ પુરુષ અન્યવચાધર્થે પર્યુસ્તુકો મવતિ, તદેવાહ સૂત્રકારઃ—‘ સ અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામ કામાનામુપભોગેન શામ્યસિ ।

હિષિયા કૃષ્ણવર્ત્મેન, મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

કામચિકાર વિષયભોગેકે સેવન કરનેસે શાન્ત નહીં હોતા હૈ । પ્રત્યુત જૈસે છૂતકે જાલને સે અગ્નિકી જ્વાલા પડતી હૈ ઉસી પ્રકાર વિષયોકે સેવનસે વિષયવાસનાકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે જીવ ક્યા કરતા હૈ ? ઇસી યાતકો કહતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા “ સે કે ય ણ અરિહપ પૂરિસપ ” ઇસ વાક્યકી છાયા “ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એસી મી હોતી હૈ । જિસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હોતા હૈ—કૌન એસા વ્યક્તિ હો સકતા હૈ કિ જો અનેક ચિત્તાવાલે મનુષ્યકી ઇચ્છાઓકી પૂર્તિ કરનેમેં સમર્થ હો સકે ? કારણ કિ વહ અનેક ચિત્ત પુરુષ અન્યવચ—દૂસરેકો મારના આદિ અનેક સાવચ ક્રિયાઓકિ કરનેમેં વસ્તુક બના રહતા હૈ । ઇસી યાતકો સૂત્રકાર સ્વયં દિસલાતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ ।

ન જાતુ કામ કામાનામુપભોગેન શામ્યસિ ।

હિષિયા કૃષ્ણવર્ત્મેન મૂય પવામિવર્ષતે ” ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ॥

કામચિકાર વિષયભોગેન સેવન કરવાથી શાન્ત થતો નથી, પણ જેમ થી નાંખવાથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે. પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે જીવ શુ કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય ણ અરિહપ પૂરિસપ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” જેમ પણ થાય છે જેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—કોણ એવો પ્રશ્નો યદ્ય શકે છે કે જે અનેક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવચ—જીવાને મારવું—આદિ અનેક સાવચ ક્રિયાઓ કરવામાં વસ્તુક બની રહે છે આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અણ્ણવહાપ ’ ઇત્યાદિ.

સ ઇચ્છાપૂરણાર્થ પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેષાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-
ચોરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થ ધનિનં હન્તિ, ઇત્યાદિ । તથા-અન્યપરિતાપાય=
અન્યેષાં જીવાનાં પરિતાપાય=શારીરમાનસક્લેશાય ભવતિ । તથા-અન્યપરિગ્રહાય
=અન્યેષાં=દાસદાસીનાં ગોમહિષ્યાદીનાં ચ પરિગ્રહાય=સ્વાયત્તીકરણાય ભવતિ ।
તથા-જનપદવધાય-મગધાદયો જનપદાસ્તેષાં વધાય । યથા-મ્લેચ્છા ભૂપતયો
મ્લેચ્છધર્મમસ્વીકુર્વન્તં જનપદં ધનન્તીત્યાદિ । તથા-જનપદપરિતાપાય-જનપદાનાં

મનુષ્ય જવ અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તવ ઉસ
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ બનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-
સિક-ડાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ડાલતા હૈ ।
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અભિલાષાઓંકી પૂર્તિકે લિયે દાસી
દાસ આદિકો તથા ગાય ભૈસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ
કરનેમ્ વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-
વૃત્તિસે ત્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ડાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોતી
હૈ । અનુચિત કર-ટૈક્સકા લેના, અનુચિત દળડ દેના, ઇત્યાદિકા નામ
મ્હી પરિતાપ હૈ । અધાર્મિક ભૂપતિ અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે ધન-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા જીવોની
હિંસાનું કારણ બને છે, જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ડાકૂ પૈસાવાળા માણસના ધન
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાખે છે તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય જીવોને શારી-
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ લોગવવો પડે છે તેમજ તે પોતાની અભિ-
લાષાઓની પૂર્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-ભૈસ આદિ કચાંચથી ચોરી
લાવીને તેનો સંગ્રહ કરવામાં વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે જનપદ-મગધાદિ દેશોને તે
પોતાની પ્રવૃત્તિથી ત્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાખે છે તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે અનુચિત કરખોળ-ટેક્સ
લેવો, અનુચિત દડ આપવો, ઇત્યાદિનું નામ પણ પરિતાપ છે, અધાર્મિક રાજા
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાથી અનીતિ-

ક્ષેત્રાય, યયાઽનુચિતકરગ્રહણદષ્ટાદિમિરધાર્મિકા મૂપતયઃ । તથા—જનપદપરિ
ગ્રહાય—મગધાદિજનપદાનાં પરિગ્રહાય મળતિ—સ્વસ્વત્વોત્પાદનેન સ્વાયત્તીકરણાય,
યુદ્ધાદિકં કરોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

મૂષ્મ—આસેવિત્તા ઇયમદ્વદ્વદ્વેગે સમુદ્ધિયા, તમ્હા ત
ધીગ નો સેવે, નિસ્સાર પાસિય નાળી ॥ સૂ. ૮ ॥

જાણ—આસેવ્ય ઇતમ્ અર્થમ્ ઇત્યેવ એકે સમુત્થિયા, તસ્માર્થ દ્વિતીયં નો
સેવઠે નિસારં દદ્ધા જ્ઞાની ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘આસેવિત્તા’ ઇત્યાદિ । ઇત્યેવ—ઈચ્છાપૂર્યાર્થમેવ ઇતમ્=અર્થમ્

સંગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત અપની પ્રજાસે અનીતિદ્વારા ધનકા સંગ્રહ કરતે
હैं । કિસીપર કરકી વૃદ્ધિ કરતે હैं; કિસીકો અમિયોગમેં કંસા કર ઇસ
પર અધિક સે અધિક વળદ મી કર દિયા કરતે હैं । ઇસ પ્રકારકે મૂપતિ
અપની પ્રજાકે લિયે અપને અધિકૃત દેશકે લિયે ક્ષેત્રાકારક યા પરિ
તાપવાયક જુઆ કરતે હैं । જનપદપરિગ્રહ—અર્થાત્ વૃસરે રાજાઓ પર
ચઢાઈ કર વહા ઉનકે દેશકો અપને આધીન કરનેકા પ્રયત્ન—ચેષ્ટા કરતે
રહતે હैं । મૌકા પાકર જય વહ ચઢાઈ કર દેતે હैं તથા ઇસ સમય વ્યર્થમેં
નરસંહાર જૈસા મયજૂર કાળજી સ્થિત હો જાતા હૈ । ડનકી ઇસ પ્રકારકી
પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિસે ટીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ ઇનકી ઇસ પ્રવૃત્તિસે
અન્ય જીવોંકો યા જનપદકો ક્ષેત્ર તથા સન્તાપ હોતા હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

‘આસેવિત્તા’ ઇત્યાદિ ।

ઈચ્છાકી પૂર્તિસે લિયે સાતવેં સૂત્રમેં પ્રતિપાદિત દૃસરે જીવોંકા

દ્વારા ધનને સંગ્રહ કરે છે કોઈ ઉપર કરબોબની વૃદ્ધિ કરે છે કોઈને અભિ-
યોગમાં દ્વારો તેની ઉપર અધિકમાં અધિક હક પછી કરી નાખે છે આ પ્રકારની
સજા પોતાની પ્રજા માટે અગર પોતાના અધિકૃત દેશ માટે કલેશકારક અને ખરિતા
તાપકારક થયા કરે છે જનપદ પરિગ્રહ અર્થાત્ બીજા રાજાઓ ઉપર ચઢાઈ કરી
તેના દેશને પોતાના અધિન કરવાના પ્રયત્નમાં રહે છે સમય મળતા જ જ્યારે તે
ચઢાઈ કરે છે ત્યારે તે જાત અર્થમાં નરસંહાર જેવું કામ કરે હાંડ ઉપરિચિત થાય છે,
તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિથી ઠીક નથી કારણ કે તેની આ પ્રવૃત્તિથી
અન્ય જીવોને અને જનપદને કલેશ તથા સન્તાપ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ. ૭ ॥

‘આસેવિત્તા’ ઇત્યાદિ

ઈચ્છાની પૂર્તિ માટે સાતમાં સૂત્રમાં પ્રતિપાદિત બીજા જીવોને વધ પરિ

અન્યવધપરિતાપપરિગ્રહાદિકમ્ આસેવ્ય પથ્થાત્ વૃષ્ણિહેતુત્વાભાવાન્નિઃસારં વિજ્ઞાય, એકે=ભરતાદયઃ સમુત્થિતાઃ=સંયમારાધને પ્રવૃત્તાસ્તેનૈવ ભવેન સિદ્ધિં લબ્ધવન્તઃ । તસ્માદ્ યતો વાન્તવદ્ભોગં પરિત્યજ્ય પ્રતિજ્ઞા કૃતા ‘પુનર્ભોગાર્થં મયા ન પ્રવર્તિષ્યતે’ इति, તસ્માદ્ જ્ઞાની=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ વિષયભોગં નિસ્સારં દૃષ્ટ્વા, વિષયભોગે કૃતેડપિ વૃષ્ટ્યભાવાદિતિ ભાવઃ; ભોગલિપ્સયા તં દ્વિતીયં=દ્વિતીયવારં નો સેવતે, ન પુનસ્ત-ત્રાસક્તો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ન મનુષ્યાણામેવ ભોગો નિઃસારઃ કિંતુ દેવાનામપીત્યાહ ‘ઉવચાયં’ इत्यादि।

મૂલમ્—ઉવચાયં ચવણં ચ ણચ્ચા અણણં ચર માહણે ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—ઉપપાતં ચ્યવનં ચ જ્ઞાત્વા અનન્યં ચર માહન ! ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વધ પરિતાપ એવં પરિગ્રહાદિકા સેવન કરકે ખી જવ ઇચ્છાકી તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ કોઈ ભરતાદિક જૈસે મહાપુરુષ સંયમકે આરાધન કરનેમેં પ્રવૃત્ત હોતે હૈં ઓર ડસી અવમેં મુક્તિકા લાભ ખી ફર લિયા કરતે હૈં । હસ લિયે જો હર્દિત-વમન કિયે હુએ અન્નકે સમાન ભોગોંકા પરિત્યાગ કર “ફિર અથ મેં ભોગોંકે સેવન કરનેમેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરૂંગા” હસ પ્રકારકી પ્રતિજ્ઞા કર લિયા કરતે હૈં, સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન બે જ્ઞાની પુરુષ વિષયભોગોંમેં નિસ્સારતા જાન કર, અર્થાત્ “વિષયભોગોંકે સેવન કરને પર ખી જીવોંકો તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ” હસ પ્રકાર સમજ્ઞ કર ફિર ભોગોં કે સેવન કરનેકી ઇચ્છાસે દૂસરે મૃષાવાદ રૂપ પાપકા અથવા અસંયમ કા સેવન નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોંકે વિષયભોગ હી નિસ્સાર નહીં હૈં, કિન્તુ દેવોંકે ખી વિષ-યભોગ નિસ્સાર હૈં; હસી વાતકો સમજાતે હૈં—‘ઉવચાયં’ इत्यादि ।

તાપ તેમજ પરિગ્રહાદિનુ સેવન કરીને પણ બ્યારે ઇચ્છાની તૃપ્તિ થતી નથી ત્યારે કેઈ ભરતાદિક જેવો મહાપુરુષ સયમનુ આરાધન કરવામા પ્રવૃત્ત થાય છે અને તેજ ભવમા મુક્તિનો લાભ પણ કરી લે છે માટે વમન કરેલા અન્ન સમાન ભોગોનો પરિત્યાગ કરી “હવે પછી હું ભોગનુ સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ નહિ કરું” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરી લે છે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન તે જ્ઞાની પુરુષ વિષય-ભોગોમા નિસ્સારતા બાણીને અર્થાત્ “વિષયભોગોનુ સેવન કરવા છતાં જીવોને તૃપ્તિ થતી નથી” એવા પ્રકારે સમજીને પછી ભોગોનુ સેવન કરવાની ઇચ્છાથી બીજા મૃષાવાદરૂપ પાપનુ અને અસયમનુ સેવન કરતા નથી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોનાજ વિષયભોગ નિસ્સાર છે, એમ નહિ, કિન્તુ દેવોના પણ વિષય-ભોગ નિસ્સાર છે આ વાતને સમજાવે છે—‘ઉવચાયં’ इत्यादि

ટીકા—હે માહન ! હે મુને ! ઉપપાત્ત=દેવજન્મ, વ્યયન=દેવમરણં વ જ્ઞાત્વા
 મનન્ય=અન્યો=મોક્ષમાર્ગાદિતરઃ અસયમ, નાન્યોડનન્યઃ અસયમાદ્વિમ્નઃ શ્રુતચારિ
 માત્મકો ધર્મસ્તં ધર=સમાધર ॥ સૂ. ૮ ॥

હે મુનિ ! દેવોંકિ ઉપપાત્ત-જન્મ, વ્યયન-મરણકો જ્ઞાનકર તુમ
 અનન્ય-જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ હે ઉસકા સેવન કરો. માધાર્ય-દેવોંકી
 આયુ સાગરોંકી હોતી હે. જ્ઞાતની ધર્મી આયુ હોતે છુપ મી વિષયમોગોંસે
 વૃત્તિ નહીં હોતી. ઇન દેવોંકો વહ આયુ ક્ષણસદૃશ હી લગતી હે ઓર
 વ્યતીત હો જાતી હે. વહાં કે વિષયમોગ મી સદા સ્થિર નહીં હે, વે મી
 વિનમ્બર હે. જન્મ-મરણકા ચક્ર દેવગતિમેં દેવોંકો મી મોગના પડતા
 હે. અતઃ સંયોગન કરતે છુપ સૂત્રકાર કહતે હેં કિ હે મુનિ ! 'મનુષ્ય-
 લોકકે વિષયમોગ હી અસાર હેં' યહ વાત નહીં હે, કિન્તુ દેવલોકકે
 મી વિષયમોગ જ્ઞાતી તરહ અસાર હેં. જ્ઞાત ગતિમેં સંયમકી આરાધના
 નહીં હોતી હે, સંયમકી આરાધના મનુષ્યગતિકે સિવાય અન્ય કિસી
 મી ગતિમેં નહીં હો સકતી હે, અતઃ જ્ઞાત દુર્લભ મનુષ્યજન્મકો વિષય
 મોગોંકી આહનામેં અથવા ઉનકે સેવન કરનેમેં નષ્ટ કર દેના યહ બુદ્ધિ
 માનકા કર્તવ્ય નહીં હે. યહ મત સમજો કિ—'સંયમકી આરાધનાસે
 જ્ઞાત દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કર વહકિ વિષયમોગોંકો મોગતે છુપ સુખી હો

હે મુનિ ! દેવોના ઉપપાત્ત-જન્મ, વ્યયન-મરણને બાબતે તમે અનન્ય
 જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે તેનું સેવન કરો.

માધાર્ય—દેવોનું આશુખ્ય સાગરોનું હોય છે આટલું મોટું આશુખ્ય હોવા
 છતાં પણ વિષયભોગથી તૃપ્તિ થતી નથી. તે દેવોને તે આશુ સ્વચ્છદ્ય જ
 હોય છે અને વ્યતીત થઈ બીજા છે ત્યાંના વિષયભોગ પણ સદા સ્થિર નથી
 તે પણ વિનમ્બર છે જ મ મરણનું ચક્ર દેવગતિમાં દેવોને પણ ભોજવનું પડે છે,
 માટે શિષ્યને સંયોગન કરીને સૂત્રકાર કહે છે—

હે મુનિ ! મનુષ્યલોકના વિષયભોગ જ અસાર છે એ વાત નથી પણ
 દેવલોકના પણ વિષયભોગ આ માટે અસાર છે આ ગતિમાં સંયમની આરાધના
 થતી નથી. સંયમની આરાધના મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ પણ જ
 તિમાં બની શકતી નથી. માટે આ દુર્લભ મનુષ્ય જ અને વિષયભોગોની વાસનામાં
 અને તેનું સેવન કરવામાં નષ્ટ કરી નાખવો તે બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય નથી એમ
 ન સમજવો કે 'સંયમની આરાધનાથી અને દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરી ત્યાંના વિષય

કિં ચ--'સે ણ છણે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે ણ છણે ણ છણાવણ છણંતં ણાણુજાણણ ॥સૂ૦ ૧૦॥

છાયા-સ ન ક્ષણુયાત્, ન ક્ષાણયેત્, ક્ષણ્વન્તં નાનુજાનીયાત્ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા-સઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરો મુનિઃ, પ્રાણિનો ન ક્ષણુયાત્=ન હન્યાત્, ન ક્ષાણયેત્=ન ઘાતયેત્, ક્ષણ્વન્તં=ઘનન્તમન્યં નાનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેદિત્યર્થઃ ॥

અથ ચતુર્થવ્રતસિદ્ધચર્યમુપદિશતિ-'નિર્વિંદ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નિર્વિંદ નંદિં, અરણ પયાસુ, અણોમદંસી નિસણ્ણે પાવેહિં કમ્મોહિં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા-નિર્વિંદસ્વ નન્દીમ્, અરક્તઃ પ્રજાસુ, અનવમદર્શી નિષણ્ણઃ પાપેભ્યઃ કર્મભ્યઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા-પ્રજાસુ=પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ=સ્ત્રિયસ્તાસુ, અરક્તઃ=અનાસક્તઃ, તથા-અવમં=નીચં નીચફલોત્પાદકત્વાદ મિથ્યાદર્શનાદિ, તદ્વિન્નમ્ અન-

જાયેંગે' કારણ કિં વહાંકે વિષયભોગ મી અસાર હી હૈં, અતઃ નિદાન રહિત હો કર હી તુમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરો ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફિર મી કહતે હૈં-'સે ણ છણે' ઇત્યાદિ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમ્ તત્પર હુઆ મુનિ કમી મી સ્વયં પ્રાણિયોંકી હિંસા ન કરે, દૂસરોંસે હિંસા ન કરાવે ઓર હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના મી ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હસકે બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત) કી સિદ્ધિકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં-'નિર્વિંદ નંદિં' ઇત્યાદિ ।

'પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ' પુત્રાદિ સન્તાન જિનમ્ ઉત્પન્ન

ભોગોને ભોગવતા સુખી થઈ જશુ' કારણ કે ત્યાના વિષયભોગ પણ અસાર જ છે. માટે નિદાનરહિત બનીને જ તમે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરો ॥સૂ૦ ૯॥

ફરી પણ કહે છે--'સે ણ છણે' ઇત્યાદિ

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામા તત્પર બનેલ મુનિ કહિ પણ સ્વય પ્રાણીઓની હિંસા ન કરે. બીજા પાસે હિંસા ન કરાવે અને હિંસા કરવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ત્યાર બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત)ની સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરે છે- 'નિર્વિંદ નંદિં' ઇત્યાદિ

'પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ'—

પુત્રાદિ સન્તાન જેમા ઉત્પન્ન થાય છે તેનુ નામ પ્રજા-સ્ત્રી છે. તથા અવમનામ

વમ, વપ્ દ્રષ્ટું શ્રીસ્મસ્પેતિ—અનવમદર્શી—સમ્યગ્વર્ત્તનજ્ઞાનચારિત્રારાધનપરા, અત્તુ પથ
પાપેભ્ય—પાપકારણેભ્યઃ કર્મભ્યઃ—અઘાદશ્ચવિધમૈધુનેભ્યઃ નિવૃત્તઃ—નિવૃત્ત સન્
નન્દી—વૈષયિક સુખં નિર્વિન્દસ્વ—જુગુપ્સસ્વ । કામિનીકાયસ્પાતિનિન્દસ્વાપત્સજ્ઞ
નિતમુલ્કસ્ય હિંસાદિપાપેતુસ્વાપ્ત્વ ચતુર્થવ્રતારાધને સાવધાનો મહેત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

કિં ચ—‘કોહાહ’ ઇત્યાદિ ।

હોતી છે. એનું નામ પ્રજા—શ્રી છે । તથા અવમ નામ મિથ્યાદર્શન આદિકા
છે । એસે બિન્ન સમ્યગ્વર્ત્તનાદિક અનવમ છે । એ અનવમકો દેવનેકા
જિસકા સ્વભાવ હો વહ અનવમદર્શી છે । શિષ્યોંકો વ્રતચર્યવ્રતકે પાલન
કરનેકી શિક્ષા દેતે હુપ સૂત્રકાર કહેતે છે કિં હે શિષ્ય ! તુમ શિષ્યોંકે
વિષયમેં આસક્તચિત્ત ન બનો, સ્વપ્નમેં બી એનકા ધ્યાન ન કરો । તથા
જઘન્ય ફલકે ઉત્પાદક હોનેસે મિથ્યાદર્શનાદિક અવમ છે । એસે વિ
પરીત અનવમ—સમ્યગ્વર્ત્તન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર છે ।

એ સમ્યગ્વર્ત્તનાદિકકી આરાધનાસે તુમેં ધ્રુવ ધનનેવાલે જો
પાપકે કારણમૂલ અઠારહ પ્રકારકે મૈધુન છે, એસે નિવૃત્ત હુપ તુમ નન્દી
—વૈષયિક સુખોંકી ઓર સદા ધુળાદષ્ટિ રહો ।

માર્થ—શિષ્યોંકા શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોતો છે । એસે સેવન
સે ઉત્પન્ન હુઆ વૈષયિક સુખ હિંસાદિક પાપોંકા કારણ હોતો છે । એસી
દૃઢબ્રહ્મા કર તુમ ચતુર્થ વ્રતકી આરાધનામેં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ફિર કહેતે છે—‘કોહાહમાણ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદર્શન આદિનુ છે તેનાથી બિન્ન સમ્યગ્વર્ત્તનાદિક અનવમ છે આ અનવમને
દેખવાને જેને સ્વભાવ છે તે અનવમદર્શી છે શિષ્યોને બ્રહ્મચર્યવ્રતનુ પાલન
કરવાની શિક્ષા દેતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે શીષ્યો માટે આસક્ત
ચિત્ત ન બનો, સ્વપ્નમાં પણ તેનુ ધ્યાન ન કરો તથા મિથ્યાદર્શનાદિક જઘન્ય ફલના
ઉત્પાદક હોવાથી અવમ છે તેનાથી વિપરીત અનવમ સમ્યગ્વર્ત્તન, સમ્યગ્જ્ઞાન
અને સમ્યક્ચારિત્ર છે તેની આરાધનાથી તમને બ્રહ્મ બનાવનાર પાપના કારણમૂલ
અઠાર પ્રકારના મૈધુન છે તેનાથી નિવૃત્ત બનીને તમે નન્દી—વૈષયિક સુખોંની
તરફ સદા ધુળાદષ્ટિ રાખો.

માર્થ—શિષ્યોનુ શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોય છે તેના સેવનથી ઉત્પન્ન
મહેલ વૈષયિક સુખ હિંસાદિક પાપોનુ કારણ બને છે એવી દૃઢ બ્રહ્મા કરી
તમે શીષ્યા મતની આરાધનામાં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

બી કહે છે—‘કોહાહમાણ’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—ક્રોહાદિમાણં હણિયા ય વીરે, લોભસ્સ પાસે નિરયં મહંતં । તમ્હા ય વીરે વિરણ વહાઓ, છિન્દિજ્જ સોયં લહુ-ભૂયગામી ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—ક્રોધાદિમાનં હન્યાત્ ચ વીરઃ લોભસ્ય પડ્ય નિરયં મહાન્તમ્ । તસ્માચ્ચ વીરો વિરતો વધાત્ છિન્ધાત્ શોકં લઘુભૂતગામી ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ક્રોધાદિમાનં=ક્રોધાદીનાં માનમ્ અનન્તાનુ-વન્ધ્યાદિવિશેષં હન્યાત્=નિવારયેત્ । યદ્વા-ક્રોધ આદિર્યસ્ય સ ક્રોધાદિઃ, સ ચાસૌ માનશ્ચ ક્રોધાદિમાનઃ-ક્રોધહેતુકો ગર્વસ્તં હન્યાદિત્યર્થઃ । લોભસ્યાનન્તાનુવન્ધ્યાદેર્વિ-પાકં મહાન્તં=દુસ્તરં નિરયં=નરકં પડ્ય । ઉક્તશ્ચ—‘મચ્છા મણુઆ ય સત્તમિં પુઢવિં’ ઇતિ । અતિલોભાધિષ્ઠા મનુજ્યાસ્તન્દુલમત્સ્યાદયશ્ચ સપ્તમપૃથિવી ભાજો ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

કર્મોંકે વિનાશ કરનેકી શક્તિસે સંપન્ન વીર ક્રોધાદિક કપાયોં કે અભિમાનકો અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી આદિ ક્રોધ માન માયા ઔર લોભકો દૂર કરે । અથવા-ક્રોધ હૈ આદિમેં જિસકે વહ ક્રોધાદિ હૈ । ક્રોધાદિરૂપ જો માન ઉસકા નામ ક્રોધાદિમાન હૈ । જિસ ગર્વકા હેતુ ક્રોધ હૈ ઉસ ક્રોધાદિકારણક માનકો વહ નષ્ટ કરે । અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાય સમ્બન્ધી લોભકે વિપાકકો સદા દુસ્તર નરક હી સમજના ચાહિયે । કહા મી હૈ—“ મચ્છા મણુઆ ય સત્તમિં પુઢવિં ” અતિ લોભસે યુક્ત મનુજ્ય ઔર મત્સ્ય-તન્દુલમત્સ્ય આદિ મરકર સાતવેં નરકમેં જાતે હૈં । જવ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ લોભસે યુક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપકર્મોંમેં પ્રવૃત્તિયુક્ત હોનેસે મરકર નરક ગતિમેં જાતે હૈં તો જો કર્મોંકો નાશ કરનેવાલી શક્તિસે યુક્ત વીર હૈં ઉન્હેં પ્રાણિયોંકી હિંસાસે સદા

કર્મોના વિનાશ કરવાની શક્તિથી સ પન્ન વીર મુનિ, ક્રોધાદિક કપાયોના અભિ-માનને અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી આદિ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભને દૂર કરે અથવા ક્રોધ છે આદિમા બેને તે ક્રોધાદિ છે ક્રોધાદિરૂપ બે માન તેનું નામ ક્રોધાદિમાન છે બે ગર્વના હેતુ ક્રોધ છે, તે ક્રોધાદિકારણક માનનો તે નાશ કરે, અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાય સળધી લોભના વિપાકને સદા દુસ્તર નરક જ સમજવું બેઠએ, કહ્યું છે—“ મચ્છા મણુઆ ય સત્તમિં પુઢવિં ” અતિ લોભથી યુક્ત મનુજ્ય અને મત્સ્ય-તન્દુલમત્સ્ય આદિ મરીને સાતમી નરકમા બળ્ય છે બ્યારે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે લોભથી યુક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપ કર્મોમા પ્રવૃત્તિ-યુક્ત હોવાથી મરીને નરક ગતિમા બળ્ય છે તો બે કર્મોના નાશ કરવાવાળી શક્તિથી યુક્ત વીર છે તેને પ્રાણીઓની હિંસાથી સદા સર્વ રીતિથી દૂર જ રહેવું બેઠએ

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘તસ્માત્’ इत्यादि । છોમાવિદ્યાઃ પ્રાપ્તિ-
 રિસનાદૌ પ્રવૃત્ત્યા નરકં પ્રાપ્નુવન્તિ, તસ્માદ્ ધીરઃ—કર્મવિદારણોત્સાહયુક્તો મપાત્—
 પ્રાણિનાં રિસનાદ્ વિરતઃ સર્વથા નિવૃત્તઃ સ્પાત્ । કિંચ—લઘુમૂતગામી—લઘુમૂત
 આત્મા યેન સ લઘુમૂતો મોક્ષઃ, તે ગન્તું શીલ્મસ્યેતિ લઘુમૂતગામી, યદ્વા—‘લઘુ-
 મૂતકામી’ इतिच्छाया, તપ આત્માનં મધુમૂત કામયતે इति લઘુમૂતકામી—મોક્ષ-
 મિલાપી, મોક્ષમાર્ગાશ્ચઃ શોકં, ‘સ્રોત’ इतिच्छायाપદ્મે સ્રોતો—માવસ્રોતોવા કર્મ
 કારણં, છિન્ધાત્—વ્યપનયેત્ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના ચાહિયે । રિંસાદિક પાપકર્મોસે સદા તીન કરણ
 તીન યોગસે અર્પાત્ મન, વચન ઓર કાય, ઇયં કૃત કારિત ઓર અનુ
 મોદના સે જો દૂર રહતા હૈ વહ કર્મબંધકે મારસે મારી નહીં હોતા હૈ ।
 પેસે વ્યક્તિકી આત્મામેં સ્વામાયિક રીતિસે લાગવ શુણકા આવિર્ભાવ
 હોતા હૈ ઓર ઉસસે કર્ણગતિકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ‘લઘુમૂત’ શબ્દકા
 અર્થ મોક્ષ હૈ, ક્યોં કિ મુક્તિકા લાભ ઉસી આત્માકો હોતા હૈ કિ જિસ
 સે કર્મકા માર ઉતર જાતા હૈ । કર્મકા માર ઉતર જાનેસે આત્મા સ્વા
 માયિક રીતિસે લઘુ—હલ્કા હો જાતા હૈ । જો ધીજ વજનમેં હલ્કી હોતી
 હૈ વહ સ્વભાવસે હી ઉપરકી ઓર ઉઠતી હૈ । આત્મા મી જય કર્મબં
 ધનસે રહિત હો જાતી હૈ તથા હસકા મી સ્વભાવ સ્વતઃ કર્ણગમન કરને
 કા હો જાતા હૈ । સકલ કર્મોકા ક્ષય હોના હી આત્માકી મુક્તિ હૈ । હસ
 મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ લઘુમૂતગામી હૈ । અથવા
 ‘લઘુમૂતગામી’ હસ પદકી છાયા ‘લઘુમૂતકામી’ પેસી મી હોતી હૈ ।

હિંસાદિક પાપકર્મોથી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાયા
 અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી
 થતા નથી, જેવી વ્યક્તિના આત્મામાં સ્વાભાવિક રીતથી લાગવ શુણ્ણ આત્-
 મીન થાય છે અને તેનાથી કર્ણગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે । લઘુમૂત’ શબ્દનો અર્થ
 મોક્ષ છે । કારણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર
 ઉતરી જાય છે । કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવિક રીતથી લઘુ-
 હલ્કો બને છે જે ધીજ વજનમાં હલ્કી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની
 તરફ ઊંઠે છે । આત્મા પણ જ્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેના
 પણ સ્વભાવ સ્વતઃ કર્ણગમન કરવાનો થઈ જાય છે । સકલ કર્મોના ક્ષય થવો
 તે જ આત્માની મુક્તિ છે । તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
 લઘુમૂતગામી છે । અને લઘુમૂતગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુમૂતકામી’ જેમ થાય

કિંચ—‘ ગંથ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહજ્જ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિજ્જ દંતે । ઉમ્મજ્જ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિજ્જાસિ-ત્તિ વેસિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાઘ ધીરઃ, સ્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મજ્જનં લઘ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અઘૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન્ ગ્રન્થં =વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-
ખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્રોતઃ=ભાવસ્રોતો વિષયાસક્તિરૂપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

इसका अर्थ यह होता है कि मोक्षका जो अभिलाषी है वह लघुभूत-
कामी है । मोक्षाभिलाषी मोक्षमार्गपर आरूढ होता हुआ शोक को,
अथवा कर्मोंके आस्रवके कारणभूत भावस्रोतको अपनी आत्मासे सदा
दूर करे ॥ सू० १२ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मार्थी को समय बिताना
व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर बाह्य
और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-
ख्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार
को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करता हुआ संयमकी आ-
राधनामें अपनेको लगावे ।

થાય છે તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી
છે મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આરૂઢ થઈને શોકને અથવા કર્મોના આસ્ર-
વના કારણભૂત ભાવસ્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

इरी कहे छे—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે સમય વિતાવવો વ્યર્થ
છે બન્યા સુધી બની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાહ્ય અને આભ્યન્તર
પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બધનુ કારણ બાણી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે,
તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને બાણીને પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનનુ દમન કરીને
સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાડે,

इह संसारद्वये मनुष्येषु=मनुष्यमयेषु, उन्मज्जने=जन्मरूपं स्मृत्वा, मनुष्य
मवादन्यत्र संपूर्णमोक्षमार्गप्राप्त्यसम्भवादिवं दुर्लभमिति भावः; प्राणिनां=जीवानां

इस संसारमें मनुष्यमयकी प्राप्ति दुर्लभ है। यदि कोई पुण्यानुषधी
पुण्यके उदयसे इस मनुष्यमयकी प्राप्ति तुम्हें हुई है तो तुम इस अमृ-
त्य जीवनको व्यर्थ हिसादिक कार्योंमें लगाकर नष्ट न करो। इसी बात
को समझाते हुए सूत्रकार शिष्योंके प्रति कहते हैं—मनुष्यमयके सिवाय
अन्य किसी भी मयमें संपूर्ण मोक्षमार्गकी प्राप्ति जीवको नहीं होती है
इसीलिये ज्ञानियोंने इसकी प्राप्ति दुर्लभ पतलाई है। इसे प्राप्तकर
जीवोंके दस द्रव्य प्राणों (५ इन्द्रिय, ३ बल, १ आयु और १ श्वासोच्छ्वास
१०) का वियोग करनेमें ही इसे व्यर्थ गंवा देना यह बुद्धिमान मनुष्यका
काम नहीं है। इस मनुष्यमयकी प्राप्ति की सफलता तो जय ही है कि
इससे संयमका आराधन किया जाय और मुक्तिमार्गका पथिक बना
जाय। इसलिये हे शिष्य ! तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस दुर्लभतम
मनुष्यमयको पाकर व्यर्थ हिसादिक कार्योंमें न फँसकर मोक्षमार्गके
पथिक बनो और अपने इस मनुष्यमयको सफल बनाओ, यही सूत्रका
आशय है। अर्थात्—मनुष्यमयमें जन्म प्राप्त कर तुम प्राणियोंके प्राणोंका

આ સંસારમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે કહાય કેમકે પુણ્યાનુબંધી
પુણ્યના ઉદયથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ તમોને મળી છે તો તમો આ અમૂલ્ય
જીવનને બ્યર્થ હિસાદિક કાર્યોમાં લગાવી નષ્ટ ન કરો. આ વાતને સમજાવતાં સૂત્રકાર
શિષ્યો પ્રતિ કહે છે—મનુષ્ય ભવ સિવાય બીજા કોઈ પણ ભવમાં સંપૂર્ણ મોક્ષમાર્ગની
પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. માટે જ્ઞાનીઓએ તેની પ્રાપ્તિ દુર્લભ જતાવી છે તેને પ્રાપ્ત
કરી જીવેના દસ દ્રવ્ય પ્રાણો (૫ ઇન્દ્રિય, ૩ બળ, ૧ આયુ અને ૧ શ્વાસોચ્છ્વાસ-૧૦)ને
વિયોગ કરવામાં જ તેને બ્યર્થ શુભાવલો તે બુદ્ધિમાન મનુષ્યનું કામ નથી

આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિની સફળતા તો ત્યારે જ છે કે તેનાથી સંયમનું આશ-
રન કરવામાં આવે અને મુક્તિ માર્ગના પથિક બની બચ, તેથી કે શિષ્ય ! તમારું
કર્તવ્ય છે કે તમે આ દુર્લભ મનુષ્ય ભવ મેળવીને બ્યર્થ હિસાદિક કાર્યોમાં ન
ફસતાં મોક્ષમાર્ગના પથિક બનો, અને પોતાનાં આ મનુષ્યભવને સફળ બનાવો.
એ જ સૂત્રનો આશય છે અર્થાત્ મનુષ્યભવમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી તમે પ્રાણીઓના

પ્રાણાન્=પञ्ચેન્દ્રિયવલ્લભયોન્મુક્તવાસનિઃશ્વાસાયુષ્કરૂપાન્ દશવિધાન્ નો સમારંભેથાઃ
=નાતિપાતયેસ્તિત્યર્થઃ । પ્રાણિનાં પ્રાણાતિપાતં મા કૃથા ઇતિ ભાવઃ । ઇતિ વ્રવીમિ-
ઇતિશબ્દઃ ઉદ્દેશપરિસમાપ્તિવોધકઃ, વ્રવીમિ=યથા ભગવન્મુખાન્મયા શ્રુતં તથા
કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૩-૨ ॥

વ્યપરોપણ મત કરો । ‘ઇતિ’ શબ્દ હસ ઉદ્દેશકી સમાસિકા સૂચક છે ।
“વ્રવીમિ” યહ પદ વતલાતા છે કે જેસા મૈને ભગવાન્કે મુખસે સુના
છે વૈસાહી તુમસે કહા છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ તીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥

પ્રાણોનો ધાત ન કરો “ઇતિ” શબ્દ આ ઉદ્દેશની સમાપ્તિનુ સૂચક છે “વ્રવીમિ”
આ પદ બતાવે છે કે જેવું મે ભગવાનના મુખથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમોને
કહ્યું છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥



॥ अथ तृतीयाध्ययनस्य तृतीय उद्देश ॥

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके जात्यावृद्ध्या च दुःखं, तद्व्याघ्रं शीतोष्णपरीपहसनं च प्रतिषेधितम् । अथ तत्सहनमात्रेण पापकर्मानाचरणमात्रेण वा चारित्र्याचरणरहितः भ्रमणो न भवतीति प्रतिषेधयितुं तृतीयोद्देशकं प्रस्तुयन् प्रथमं सूत्रमाह—
'सर्धि लोगस्त' इत्यादि ।

मूलम्—सर्धि लोगस्त जाणिता ॥ सू० १ ॥

छाया—सन्धि लोकस्य ज्ञात्वा ॥ सू० १ ॥

। तीसरे अध्ययनका तीसरा उद्देश ।

इसके द्वितीय उद्देशमें प्राणियोंकी गर्भसे लगा कर बालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सब ही अवस्थाएँ दुःखोंसे समन्वित हैं, उन दुःखोंसे भयभीत प्राणियोंको आत्मकल्याणके मार्गस्वरूप संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस आराधनामें उन्हें शीत-उष्ण परीपहोंको सहन करना चाहिये, यह सब विषय बतलाया जा चुका है, अर्थात् मोक्षाभिलाषीके लिये यह सब समझाया जा चुका है । अब इस तीसरे उद्देशमें यह समझाया जायगा कि जो चारित्र्यके आचरणसे रहित है वह मछे ही शीत उष्ण परीपहोंको सहे, पापकर्मोंको न भी करे तो भी वह भ्रमण नहीं है । इसी अभिप्रायको छेकर सूत्रकार प्रथम सूत्रको कहते हैं—'सर्धि' इत्यादि ।

तीन अध्ययनका तीजे उद्देश

अत्राठ्ठा नील उद्देशमां प्राणीयेनी अकधी भाडी बालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सधणी अवस्थाओ दुःखोधी भरही छे ते दुःखोधी भयभीतप्राणीयेने आत्मकल्याणना मार्गस्वरूप संयमनी आराधना करणी ओछोके. आ आराधनामां तेजे शीत अने उष्ण परीपहो सहन करवा ओछोके. आ सधण विषयो जताज वामां आवेछ छे अर्थात् मोक्षाभिलाषीयो भागे आ सधणु समजववामां आवेछ छे दुवे आ नील उद्देशमां जे समजववामां आवेशे के जे चारित्रना आचरणुधी श्रद्धित छे ते भवे शीत अने उष्ण परीपहो सहन करे, पापकर्मो पणु जवे न करे, तो पणु ते भ्रमणु नथी. आ जनिआवने छधने सूत्रकार प्रथम सूत्र कहे छे—
'सर्धि लोगस्त' इत्यादि.

સંધાનં સન્ધિઃ=ત્રુચ્યતઃ પુનઃ સંમીલનં, સ દ્વિધા-દ્રવ્યસન્ધિર્ભાવસન્ધિથેતિ । તત્ર દ્રવ્યસન્ધિઃ=કુલ્યવસ્ત્રાદેઃ સંધાનં, ભાવસન્ધિઃ=ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમઃ, તં જ્ઞાત્વા=વિદિત્વા જ્ઞાતવત્ इत्यर्थः, લોકસ્ય=ક્ષાયોપશમિકાદિભાવલોકસ્ય પ્રમાદઃ શ્રેયસે ન ભવતિ । યદ્વા-સન્ધિઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણો ધર્મારાધનાવસરઃ, તં જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયરૂપસ્ય દુઃસ્વૌત્પાદનં ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સર્વત્રાત્મૌપમ્યેન સુખં દુઃખં વા જાનીયાદિત્યાહ-‘આયઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-આયઓ બહિયા પાસ, તમ્હા ન હંતા ન વિધાયણ ॥૨॥

છાયા-આત્મતો વહિઃ પશ્ય । તસ્માન્ન હન્તા ન વિધાતયેત્ ॥સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા-આત્મતઃ યથાઽઽત્મનઃ સુખં પ્રિયં, દુઃસ્વમપ્રિયમ્, તથા-વહિઃ=આત્મવ્યતિરિક્તાનાં પ્રાણિનામપિ પશ્ય=જાનીહિ । આત્મતુલ્યં સુખં દુઃખં સર્વપ્રાણિના વિજ્ઞાય કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માદ્’ ઇત્યાદિ ।

ટૂટી વસ્તુકો જોડના ઇસકા નામ સંધિ હૈ । વહ દો પ્રકારકી હૈ— (૧) દ્રવ્યસન્ધિ, (૨) ભાવસન્ધિ । ખીંત ઓર વસ્ત્ર આદિકા જોડના-યહ દ્રવ્યસન્ધિ, ઓર ચારિત્રમોહનીયકા ક્ષયોપશમ ભાવસન્ધિ હૈ । ઇસ સન્ધિકે જ્ઞાતા મુનિકો ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકકે વિષયમેં પ્રમાદ કરના ઉચિત નહીં હૈ । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનકા અવસર ખી સન્ધિ હૈ । ઇસકો જાનકર ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો દુઃસ્વ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘સમસ્ત સંસારી જીવોંકો સુખ તથા દુઃખ મેરે હી સમાન પ્રિય ઓર અપ્રિય હૈ’ એસા જાનના ચાહિયે, ઇસે સ્પષ્ટ કરતે હૈ-‘આયઓ’ ઇ૦

સંયમી જીવ સદા ઇસ વાતકા પૂર્ણ ધ્યાન રહે કિ-જિસ પ્રકાર મુક્તે સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ ઁસી પ્રકાર મુક્તસે ભિન્ન અન્ય સમસ્ત

ભાગી ગયેલ વસ્તુને ભેડવી તેનુ નામ સંધિ છે તે બે પ્રકારની છે. (૧) દ્રવ્યસંધિ (૨) ભાવસંધિ ભીંત અને વસ્ત્ર આદિનું ભેડવુ તે દ્રવ્યસંધિ અને ચારિત્રમોહનીયનો ક્ષયોપશમ ભાવસંધિ છે આ સંધિના જ્ઞાતા મુનિને ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકના વિષયમાં પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના આરાધનનો અવસર પણ સંધિ છે તેને બાણીને ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને હુ ખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સમસ્ત સંસારી જીવોને સુખ અને દુઃખ મારી જ માફક પ્રિય અને અપ્રિય છે, એવુ બાણુવુ ભેઠએ, તેને સ્પષ્ટ કરે છે-‘આયઓ’ ઇત્યાદિ

સંયમી જીવ સદા એ વાતનુ પૂર્ણ ધ્યાન રાખે કે જે પ્રકારે મને સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે તે પ્રકારે મારાથી ભિન્ન અન્ય સમસ્ત સંસારી જીવોને

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં મુખેઽમિલાપો દુઃસ્થે દ્વેષા, તસ્માત્ તેષાં ન હન્તાન્ન પ્રાણાતિપાતકઃ સ્યાત્ । અનૈરપિ સન્ ન વિષાતયેત્, ધ્વન્તમન્યં નાનુમોદયેત્ । યદપિ કુસીર્ષિકા ઉદિશ્યમોજિનો દ્રવ્યલિહ્વિનો દષ્ટિદનથ સ્વયં પાકાદિભિઃ સ્પૂલન્ પ્રાણિનો ન ધ્વન્તિ, તથાપ્યન્યૈર્ષાતયન્તિ ॥૬૦ ૨ ॥

સંસારી જીવોંકો મી યહ સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ । હસ લિયે ડન જીવોંકે પ્રાણોંકો મૈ કિસી મી રૂપમેં કષ્ટ ન પહુંચાઝું, દૂસરોંસે મી ઉન્હેં મૈ કષ્ટ ન પહુંચવાઝું, કષ્ટ વેનેવાલે યા ઘાત કરનેવાલે અન્યકી મૈ અનુમોદના મી ન કરું । યદપિ કુતીર્ષિક-અન્યમતાબલમ્બી સાધુ સન્યાસી, ઉદિષ્ટમોજી, દ્રવ્યલિહ્વી, તથા વળ્કી આદિ સ્વયં રસોઈ આદિ પકાકર નહીં સ્વાતે પીતે હૈ, હસ પ્રકાર વે સ્વયં સ્પૂલ જીવોંકી હિંસા નહીં કરતે હૈ ફિર મી દૂસરોંસે અપને લિયે જીવોંકી હિંસા કરાતે હી હૈ, ક્યોં કિ વે અપને નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ દૂસરોંસે કરાતે હૈ, ડસ આરંભ મૈ જો હિંસા હોતી હૈ ડસકા નિમિત્ત ઉન્હેં હોના પડતા હૈ ।

આવાય—સજ્જે મુનિ હોનેકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંકા ત્યાગ મન વચન ઓર કાયસે, ઇંબ કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાસે કરના ચાહિયે તમી આત્મામેં સાધુતા આતી હૈ । ઉપર-ઉપરસે હિંસાદિ પાપ છોડનેસે અથવા હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરને સે મુનિપના નહીં આતા હૈ । ડસકી પ્રાપ્તિકે લિયે જિસ પ્રકાર જીવ સ્વયં હિંસાકા ત્યાગ કરતા હૈ, ડસી પ્રકાર વહ દૂસરોંસે અપને નિમિત્ત હિંસાદિક નહીં કરા સકતા હૈ, ઓર

પણ આ મુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે માટે તે જીવોને હું કેટલું પણ પ્રકારે દુઃખ ન પહોંચાડું, બીજાથી પણ તેઓને દુઃખ ન પહોંચાડવું, કષ્ટ દેવાવાળા અને ઘાત કરવાવાળા બીજાઓની હું અનુમોદના પણ ન કરું કદાચ કુતીર્ષિક-અન્યમતાબલમ્બી સાધુ સન્યાસી ઉદિષ્ટમોજી દ્રવ્યલિહ્વી તથા વળ્કી વિગેરે જનમ રસોઈ આદિ પકાવીને ખાતા પીતા નથી, તે પ્રકારે તેઓ સ્વયં સ્પૂલ જીવોની હિંસા કરતા નથી તેા પણ બીજાથી પોતાને માટે જીવોની હિંસા કરાવે છે જ કારણ કે તેઓ પોતાના નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ બીજાઓથી કરાવે છે તે બ્ધર ભગ્ના જે હિંસા થાય છે તેનું નિમિત્ત તેને થવું પડે છે

આવાય—સાચા મુનિ થવા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક પ્રાપ્તિને ત્યાગ મન વચન અને કાયાથી તેમજ કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી કરવો જોઈએ, ત્યારે જ આત્મામાં સાધુતા આવે છે. ઉપર-ઉપરથી હિંસાદિ પાપ છોડવાથી અને હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરવાથી મુનિપણુ અપવૃત્ત નથી. તેની પ્રાપ્તિ માટે જે પ્રકારે જીવ સ્વયં હિંસાને ત્યાગ કરે છે તે પ્રકારે તે બીજાઓથી પણ પોતાને નિમિત્ત હિંસાદિક

પાપકર્માનાચરણમાત્રેણ શ્રમણો ન ભવતિ કિં તુ સમ્યગાસ્રવનિરોધેનેત્યાહ-
'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જમિણં અન્નમન્નવિતિગિચ્છાણ પહિલેહાણ ન કરેદ્ધ
પાવં કમ્મં, કિં તત્થ મુણી કારણં સિયા ?, સમયં તત્થુવ્વેહાણ
અપ્પાણં વિપ્પસાયણ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—યદિદમ્ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પ્રત્યુપેક્ષ્ય ન કરોતિ પાપં કર્મ ।
કિં તત્ર મુનિઃ કારણં સ્યાત્ ? સમયં તત્રોત્પ્રેક્ષ્ય આત્માન વિપ્રસાદયેત્ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—યદિદં પાપં=પાપાનુવન્ધિ કર્મ=પચનપાચનપરિગ્રહાદિલક્ષણમ્ અન્યો-
ન્યવિચિકિત્સયા-વિચિકિત્સા=આશંકા ભયં લજ્જા વા, અન્યોન્યસ્ય=પરસ્પરસ્ય યા
વિચિકિત્સા=આશંકા, યદ્વા-અન્યોન્યસ્માત્=પરસ્પરતો ભયં લજ્જા વા, તયા પ્રત્યુ-

ન અપને લિયે હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કર સકતા હૈ । યદિ
એસા કરતા હૈ તો વહ સાધુ નહીં કહલા સકતા । જો સાધુ હો કર
જીવહિંસાકે ભયસે સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા તો નહીં કરતે હૈં પરન્તુ ઉદિષ્ટ
ભોજન લેતે હૈં, તથા અપને લિયે દૂસરોંસે ભોજન તૈયાર કરવાતે હૈં વે નવ
કોટિસે હિંસા કે ત્યાગી નહીં હૈં, અતઃ વે સાધુ ભી નહીં હૈં ॥ સૂ. ૨ ॥

પાપ કર્મ નહીં કરને માત્રસે પ્રાણી મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ કર્મોં
કે આસ્રવકો ભલી પ્રકાર રોકનેસે હી વહ મુનિ હોતા હૈ, અવ ઇસી
વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

જો મુનિ-અવસ્થામેં પાપકર્મોં કે નહીં કરનેકે કારણ હૈં વે પ્રત્યક્ષ
હૈં । વે યે હૈં—આશંકા, ભય અથવા લજ્જા । અર્થાત્ મુનિ હો કર ભી જો
પાપ નહીં કરતા હૈં ઉસમેં પ્રધાન કારણ પરસ્પરકી અથવા એક દૂસરેસે

કરાવતા નથી, અને પોતાને માટે હિંસા કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા
નથી કદાચ એવું કરે તો તેને સાધુ કહેવામા આવતો નથી જે સાધુ બની
છવ હિંસાના ભયથી સ્વય પાકાદિક ક્રિયા નથી કરતા પરતુ ઉદિષ્ટ ભોજન લે છે
તથા પોતાને માટે બીજાઓથી ભોજન તૈયાર કરાવે છે તેઓ નવ કોટિથી હિંસાના
ત્યાગી નથી તેમજ તેઓ સાથા સાધુ પણ નથી ॥ સૂ. ૨ ॥

પાપકર્મ નહિ કરવા માત્રથી મુનિ બનતા નથી પણ કર્મોના આસ્રવને ભલી
પ્રકાર રોકવાથી જ મુનિ થાય છે, તે વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—'જમિણં' ઇત્યાદિ

જે મુનિ અવસ્થામાં પાપકર્મો નહિ કરવાના કારણ છે તે પ્રત્યક્ષ છે તે
આ છે—આશંકા ભય અથવા લજ્જા અર્થાત્ મુનિ બનીને પણ જે પાપ કરતા નથી
તેમા પ્રધાન કારણ પરસ્પરની અથવા એક બીજાઓથી પરસ્પરમા આશંકા ભય

પેક્ષ્ય=મનસિ વિચાર્ય ન કરોતિ । તત્ર=પાપક્રમાનાચરણે તસ્ય કિં મુનિ=મુનિત્વં
 કારણં સ્યાદ? ન, યતસ્તત્ર પાપક્રમાનાચરણે અપોન્યવિચિકિત્સૈવ કારણં, ન તુ
 મુનિત્વમ્ । યસ્તુ મુનિર્ભવતિ તસ્યૈવ મુનિત્વ પાપક્રમાનાચરણે કારણ મવતીતિ ।
 યદ્વા-‘કિમ્’-ઇતિ કાન્થા નિર્દેશ । ‘મુની’ ઇતિ સપ્તમ્યન્તમ્, તતથ-‘મુનો’-
 ઇતિચ્છાયા । તત્ર=તસ્મિન્ મુનો=મુનિત્વે કિં પાપક્રમાનાચરણમેવ કારણમ્? અપિ
 તુ ન, નરિ અન્યાન્યવિચિકિત્સયા પાપમનનુતિષ્ઠન્ મુનિર્ભવતીતિ । તર્હિ કયં મુનિર્ભ
 વતિ? ઇત્યાદ-‘સમય તત્પુચ્ચેદાપ’ ઇત્યાદિ । તત્ર સમયમ્=આગમમ્ ઉત્પેક્ષ્ય
 પર્યાલોચ્ય આત્માન વિપ્રસાદયત, જિનપ્રવચનરહસ્યપર્યાલોચનેનાત્માનમપ્રમાદ
 શુભમાવનાદિમિરિવિપૈરુપાયૈ પ્રસન્નં કુપાદિત્યર્થ । શુભાધ્યવસાયપૂર્વકમાગમો-
 ક્તાનુસારેણ યદનુષ્ઠાનં તત્સર્વે મુનિત્વે કારણમિતિ માવ’ । इव निश्चयनयामिप्रायेण ।

પરસ્પરમેં આશંકા, મય અથવા સજ્જા હૈ, ન કિ મુનિત્વ । ઘટ્તો હનીં
 સય ચાતોંકો મનમેં ચિચાર કર પાપાનુષ્ઠી કર્મ જો પચન પાચન ઇવં
 પરિગ્રહ આદિ હૈં અન્હેં નહીં કરતા હૈ ।

અથવા-પરસ્પરકી આશંકા યા મયાવિસે પાપકર્મોંકા નહીં કરના કયા
 યહી મુનિપનાકા કારણ હૈ? ઇસ પ્રકારકી આશંકાકા ઉત્તર દેતે હૈ-
 ‘સમયં તત્પુચ્ચેદાપ’ ઇત્યાદિ । સમય શબ્દકા અર્થ ‘આગમ’ તથા
 ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દકા અર્થ ‘ચિચાર કર’ હૈ, અર્થાત્-જિનપ્રતિપાદિત આ-
 ગમકે રહસ્યકા ચિચાર કર ‘અપ્યાણ વિપ્રસાદયત’ આત્માને વિપ્રસાદયેત,
 મુનિ અપની આત્માકો અપ્રમાદ ઇવં શુભ માવનાદિક વિવિધ ઉપાયોંસે
 પ્રસન્ન કરે । શુભ અપ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિકે અનુસાર જો
 અનુષ્ઠાન મુનિ-અવસ્થામેં કરનેયોગ્ય કહે ગયે હૈં તે સચ કરે, યે હી અનુ
 ષ્ઠાન મુનિપનામેં કારણ હૈ । યહ કથન નિશ્ચય નયકે અમિપ્રાયસે કિયા હૈ ।

અથવા સજ્જા છે, ન કે મુનિત્વ તેઓ (મુનિઓ) તો જ્યાં સઘળી વાતોનો મનમાં વિચાર
 કરી પાપાનુષ્ઠી કર્મ ને પચન-પાચન અને પરિગ્રહ આદિ છે તેને કરતા નથી.

અથવા-પરસ્પરની આશંકા અથવા ભયાદિથી પાપકર્મોંનું નહિ કરવું તે
 શુ મુનિપણાનું કારણ છે? જ્યાં પ્રકારની આશંકાનું સ્પર્શીકરણ કરે છે-‘સમય
 તત્પુચ્ચેદાપ’ ઇત્યાદિ. સમય શબ્દનો અર્થ ‘આગમ’ તથા ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દનો
 અર્થ વિચાર કરી છે અર્થાત્ જિનપ્રતિપાદિત આગમના રહસ્યનો વિચાર કરી
 ‘અપ્યાણ વિપ્રસાદય’ આત્માને વિપ્રસાદયેત-મુનિ પાતાના આત્માને અપ્રમાદ અને શુભ
 ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોંથી પ્રસન્ન કરે. શુભ અપ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિ-
 અનુસાર ને અનુષ્ઠાન મુનિ અવસ્થામાં કરનાયોગ્ય કહેવામાં આવેલ છે તે સમજા કરે
 તે જ અનુષ્ઠાન મુનિપણાનું કારણ છે જ્યાં કથન નિશ્ચયનયના અભિપ્રાયથી કરેલ છે.

યદ્વા-પરસ્પરાશક્કયા ભયેન લજ્જયા વા યદાધાકર્માદીનિ પરિહરતિ, યથા-કાલં પ્રતિલેખનાદીનિ કરોતિ, માસક્ષપણાનિ, આતાપનાદિકં ચ સમાચરતિ, તદિદં સર્વં કિં મુનિત્વે કારણં રયાન્ન વા? इति शिष्याशङ्कानिराकरणाय कथयति-‘जमिणं’ इत्यादि । अत्रोच्यते-जिनशासने पदार्थतत्त्वाधिगमाय नयद्वयमुपादीयते । तत्र तावन्निश्चयनयमाश्रित्य अन्योपाध्यनावेशेन परिवर्जिताऽकल्पनीयव्यापारत्वमेव मुनित्वे कारणम् । मुनित्वं हि शुभान्तःकरणपरिणामेन प्रवचनोक्तविधिनाऽनुष्ठित-क्रियस्यैव भवति, नान्यस्य ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કાસે ભયસે યા લજ્જાસે જો આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ, ઓર સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ, માસસ્વમગ ઓર આતાપના આદિ યોગોંકા અનુષ્ઠાન કરતા હૈ, યે સવ ક્રિયાઈ કયા મુનિપનેમ્મં કારણ હૈં યા નહીં? इस प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका परिहार करनेके लिये सूत्रकारने “जमिणं” इत्यादि सूत्र कहा है । जिनशासनमें पदार्थके स्वरूपको जाननेके लिये दो नयोंका विधान है-(१) निश्चय नय और (२) व्यवहार नय । इनमें प्रथम निश्चयनयकी अपेक्षासे जो अन्य किसी सांसारिक उपाधिके संसर्गसे रहित हो कर अकल्पनीय व्यापारसे दूर हो चुका है, इस प्रकारका उसका रहन-सहन ही उसके मुनिपनेमें कारणभूत है, क्योंकि कि शुभ अन्तःकरणके परिणामसे शास्त्रोक्त विधिके अनुसार अपनी क्रियाओंको करनेवाले व्यक्तिके ही मुनिपना होता है, अन्यको नहीं ।

અથવા—પરસ્પરની આશકાથી ભયથી, લજ્જાથી જે આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, અને સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓ કરે છે, માસખમણુ અને આતાપના આદિ યોગોનુ અનુષ્ઠાન કરે છે, એ સઘળી ક્રિયાઓ શુ મુનિપણુનુ કારણ છે યા નહિ? આ પ્રકારની શિષ્યની આશકાનો પરિહાર કરવા માટે સૂત્રકાર “ જમિણ ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે જીનશાસનમાં પદાર્થના સ્વરૂપને જાણવા માટે બે નયોનુ વિધાન છે (૧) નિશ્ચયનય અને (૨) વ્યવહારનય તેમાં પ્રથમ નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી જે અન્ય કોઈ સાંસારિક ઉપાધિના સંસર્ગથી રહિત થઈને અકલ્પનીય વ્યાપારથી દૂર થયેલ છે, આ પ્રકારનુ તેનુ રહન-સહન જ તેના મુનિપણુનુ કારણભૂત છે કારણ કે શુભ અંતઃકરણના પરિણામથી શાસ્ત્રોક્ત વિધિ-અનુસાર પોતાની ક્રિયાઓને કરવાવાળી વ્યક્તિને જ મુનિપણુ થાય છે બીજાને નહિ.

વ્યવહારનયે તુ યઃ પરસ્પરાશ્ચક્રયા મયાદિના વા કેનચિત્ કારણેનાઽઽપા-
કર્માદિ પરિવર્તયતિ, પ્રતિલેખનાદિકં કરોતિ, માસક્ષપ્પાદિતપ્રમાણરતિ, તસ્ય
મુનિત્વે તદનુષ્ઠાનં કારણં મવત્યેવ, તાદૃશાનુષ્ઠાનસ્ય નિશ્ચયનયામિતમુનિત્વોદ્
શુમાધ્યવસાયનનકરત્વાત્ । નિશ્ચયમુપલભ્યુ વ્યવહારઃ શરણીકરણીયો મવતિ, યયા
નદ્યાદિતરણં કરચરણપ્રધાલનાદિવ્યવહારેણ વિના નોપપદ્યતે યયા વા રમ્ય
સોપાનાધાલમ્બનેન વિના પ્રસાદશિસ્તરારોહણં ન સંજાયતે ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મના પ્રસન્નતા સંયમારાધનતત્પરસ્ય મવતિ, અતસ્તન્ન પ્રમાદો ન કાર્ય
इत्याह—‘अण्णपरमं’ इत्यादि ।

વ્યવહાર નયની અપેક્ષાસે તો જો પરસ્પરની આશાક્રૂ અથવા મયા
દિક કિસી કારણકે ઘટાસે આધાકર્માદિક ઘોષોકા પરિહાર કરતા હૈ,
સમયાનુસાર પ્રતિલેખનાદિક ક્રિયાઓનો, एवं માસક્ષપ્પાદિક તપનો
આચરતા હૈ, उस व्यक्ति के मुनिपनेमें ये सब बातें कारण होती हैं । व्य-
वहार, निश्चयका हेतु होता है । इस प्रकारके व्यावहारिक अनुष्ठान
निश्चयनयની અપેક્ષાસે મુનિપનેકે કારણમૂલ શુભ અધ્યવસાયકે ઉત્પાદક
હોતે હૈ । નિશ્ચયનો પાનેકે લિયે વ્યવહારકા અવલમ્બન કરના હી પડતા
હૈ । जैसे नदी आदिका तैरना हाथ पैर आदिके बलानेरूप व्यवहार क्रिया
के बिना, अथवा रज्जु-रस्सी या सीढ़ी आदिके अवलम्बन बिना मकान
के ऊपर चढ़ना नहीं होता है ॥ सू. ३ ॥

આત્મામેં પ્રસન્નતા સંયમકે આરાધનમેં તત્પર મુનિકો હી હોતી હૈ ।
इस लिये संयमके आराधनमें मुनिको प्रमाद नहीं करना चाहिये, इस
बातको प्रगट करते हैं—‘अण्णपरमं’ इत्यादि ।

વ્યવહારનયની અપેક્ષાથી તો જે પરસ્પરની આશા ॥ અને અધારિક કેઈ
કારણના વચથી આધાકર્માદિક ઘોષોના પરિહાર કરે છે, સમયાનુસાર પ્રતિલેખ
નાદિ ક્રિયાઓને તેમજ માસક્ષપ્પાદિક તપને આચરે છે, તે ભક્તિના મુનિપણમાં
જે સમગી વાતો કારણ અને છે વ્યવહાર નિશ્ચયને હેતુ થાય છે એ પ્રકારના
વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી મુનિપણના કારણમૂલ શુભ અધ્ય
વસાયના ઉત્પાદક અને છે નિશ્ચય મેળવવા માટે વ્યવહારનું અવલમ્બન હેતુ બ
પડે છે. જેમ નદી આદિનું તરવું હાથપગ આદિના બલાવવાક્રમ વ્યવહાર કર્યા
બગર, અને રજ્જુ-રસ્સી આગર સીડી આદિના અવલમ્બન વિના મકાન ઉપર
ચઢવું બની શકતું નથી ॥ સૂ. ૩ ॥

જાત્રમામ પ્રસન્નતા સમય આરાધનમા તત્પર મુનિને જ ધાય છે માટે
સમય આરાધનમા મુનિકો પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ. એ વાતને પ્રગટ કરે
છે—અણ્ણપરમ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—અણ્ણપરમં નાણી, નો પમાયણ કયાઈ વિ ।

આયગુત્તે સયા વીરે, જાયમાયાઈ જાવણ ॥સૂ૦ ૪॥

છાયા—અનન્યપરમં જ્ઞાની નો પ્રમાદયેત્ કદાચિદપિ ।

આત્મગુપ્તઃ સદા વીરઃ યાત્રામાત્રયા યાપયેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—જ્ઞાની=સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ, અનન્યપરમં=નાન્યત્ પરમમ્ ઉત્કૃષ્ટં યસ્માત્—અનન્યપરમં=ચારિત્રં, તત્ કદાચિદપિ નો પ્રમાદયેત્=કસ્મિન્નપિ કાલે ચારિત્રે પ્રમાદં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કેનોપાયેન પ્રમાદો વારણીયઃ? ઇત્યત આહ—‘આત્મગુપ્ત’ ઇત્યાદિ । આત્મગુપ્તઃ=આત્મના=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયેણ ગુપ્તઃ, ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયનિગ્રહી-

જ્ઞાની-સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમેં કિસી ખી સમય પ્રમાદ ન કરે । ‘અનન્યપરમ’ શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોં કિ “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જિસસે દૂસરી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નહીં હૈ વહ અનન્યપરમ હૈ । શાસ્ત્રમેં સાક્ષાત્ મોક્ષકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલા ચારિત્ર હી વતલાયા ગયા હૈ અતઃ વહી સર્વોત્કૃષ્ટ હૈ । પ્રમાદ ચારિત્રકા વિઘાતક હોતા હૈ ઇસી લિયે વહ સમ્યગ્દૃષ્ટિકે લિયે વર્જનીય કહા હૈ । પ્રમાદકો દૂર કરનેકા ઉપાય વતલારનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘આયગુત્તે’ ઇત્યાદિ, અર્થાત્ મુનિ કો સદા આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય ઔર નોઇન્દ્રિય-મનકા વિજયી બનના ચાહિયે । ઇન પર જય તક વિજયરૂપી અદ્ભુત વહ પ્રાપ્ત નહીં કર લેતા હૈ તબ તક ઇનકે આધીન બના હુઆ સાધુ પ્રમાદસે રહિત નહીં હો સકતા । જિહ્વા-ઇન્દ્રિયકી લોલુપતાસે વહ માત્રાસે ખી અધિક આહાર લે લેતા હૈ । ઇસ સે પ્રમાદકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । તથા અધિક સરસ-રસીલા આહાર લેનેસે

જ્ઞાની-સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમા કોઈ પણ સમય પ્રમાદ ન કરે ‘અનન્યપરમ’ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે કારણ કે “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જેનાથી ખીજી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નથી તે અનન્યપરમ છે શાસ્ત્રમા સાક્ષાત્ મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર ચારિત્ર જ બતાવવામા આવેલ છે માટે તે જ સર્વોત્કૃષ્ટ છે પ્રમાદ ચારિત્રનો વિઘાતક બને છે, માટે તે સમ્યગ્દૃષ્ટિ માટે વર્જનીય કહેલ છે પ્રમાદને દૂર કરવાનો ઉપાય બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયગુત્તે’ ઇત્યાદિ અર્થાત્ મુનિએ સદા આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય અને નોઇન્દ્રિય-મનના વિજયી બનવું જોઈએ તેના ઉપર ન્યાસુધી વિજયરૂપી અદ્ભુત તે પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યા સુધી તેના આધીન બનેલા સાધુ પ્રમાદથી રહિત બની શકતા નથી જીભ ઇન્દ્રિયની લોલુપતાથી તે માત્રાથી પણ અધિક આહાર લઈ લે છે તેનાથી પ્રમાદની વૃદ્ધિ થાય છે તથા અધિક સરસ-રસીલા આહાર લેવાથી ઇન્દ્રિયોને પણ

ત્પર્ય, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, ધીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહવાન, યાત્રામાત્રયા=યાત્રા-
સયમયાત્રા તદર્થ યા માત્રા=જિનપ્રવચનોક્તમાહારાવિપ્રમાણ તયા, શરીરં યાપ-
યેત્=નિર્વાહેત્-ગમયેદિત્યર્થઃ ।

પ્રમાણાધિકેનાહારેણ રામપિષ્ઠાદિના યા હન્દ્રિયનિગ્રહો ન મળતિ, યસ્માદ્
ધર્મોપાર્જનસહાયમૂલસ્ય શરીરસ્ય ધારણાર્થ પ્રમાણોપેતમાહારમગ્રીકૃયાત્ । एवं
કૃતે સતિ પ્રમાદો ન મનઃવીતિ માઘઃ । ઉક્તઃ—

“ આહારાર્થ કર્મ કૃપાંદનિન્ધ્યં, સ્વાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાંસ્તશ્વજિજ્ઞાસનાર્થ, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદુ વિમુચ્ચેત્ ” ॥૧॥શ્લોકાદ૦૪॥

હન્દ્રિયોંકો મી ઉત્સેજના મિલ્લી છે, હસસે ચતુર્થ વ્રતકી રક્ષામેં મી યાત્રા
ઉપસ્થિત હોતી છે । હસી યાત્રાકા વિચારકર સુઘ્રકાર કહતે હૈ—‘જાયા-
માયા’ યાત્રામાત્રયા, ઇતિ, અર્થાત્—સંયમયાત્રાકે નિર્વાહયોગ્ય આહાર-
રાદિકકા ઉચિત પ્રમાણમેં લેના જતલાતે હૈ । મુનિ કી સદા યહી માનના
રહની યાહિયે કિ—મેં જેસે મી બને વૈસે નિર્વોપ ચારિત્રકી આરાધના
કરતા હુઆ કર્મોંકો નષ્ટ કરું । હસ તરફકે ઉત્સાહસે સંપન્ન વહ મુનિ
અપની સંયમરૂપી યાત્રાકી નિર્વિષ્ણ પરિસમાપ્તિકે લિયે જિનપ્રવચનમેં
પ્રતિપાદિત પ્રમાણકે અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે । હસસે હી અપને
શરીરકા નિર્વાહ કરે । પ્રમાણસે અધિક આહારકે લેનેસે અપવા અક-
લ્પનીય રાજપિષ્ઠાદિકસે હન્દ્રિયોંકા નિગ્રહ નહીં હોતા હૈ । હસલિયે
ધર્મકે ઉપાર્જનમેં સહાયક શરીરકી રક્ષાકે લિયે શાસ્ત્રમેં પ્રતિપાદિત
માત્રાનુસાર આહાર લેના યાહિયે । કહા મી હૈ—

ઉત્સેજના મળે છે તેથી ચતુર્થ વ્રતની રક્ષામા પશ્ચ જાયા ઉપસ્થિત ધ્યાન છે
આ યાત્રાને વિચાર કરી સૂત્રકાર કહે છે—“ જાયામાયાય યાત્રામાત્રયા, ઇતિ
અર્થાત્—સંયમયાત્રાના નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકનુ ઉચિત પ્રમાણમા લેવું જતલાવેલ છે
સદા મુનિની જો માનના રહેવી જોઈ જો કે હું જ્યામુખી બને ત્યાં મુખી નિર્વોપ
ચારિત્રની આશરના કરીને કમોના નાશ કરે, આવા પ્રકારના ઉત્સાહથી સંપન્ન તે મુનિ
પોતાની સંયમરૂપી યાત્રાની નિર્વિષ્ણ પરિસમાપ્તિ માટે જનપ્રવચનમાં પ્રતિપા-
દિત પ્રમાણને અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે, તેનાથી જ પોતાના શરીરને નિર્વાહ
કરે. પ્રમાણથી અધિક આહાર લેવાથી અને અકલ્પનીય રાજપિષ્ઠાદિકથી હન્દ્રિ-
યોંકો નિગ્રહ જનતો નથી માટે ધર્મના ઉપાર્જનમાં સહાયક શરીરની રક્ષા માટે
શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેવો જોઈ જો. કહ્યું પણ છે—

आत्मगुप्तः कथं स्यादिति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘विरागं’ इत्यादि ।

मूलम्—विरागं रूपेण गच्छिज्जा महया खुड्डएहिं वा ॥सू० ५॥

छाया—विरागं रूपेण गच्छेत् महत्सु क्षुल्लकेषु वा ॥ सू० ५ ॥

“आहारार्थं कर्म कुर्यादनिन्द्यं, स्यादाहारः प्राणसंधारणार्थम् ।

प्राणा धार्यास्तत्त्वजिज्ञासनार्थं, तत्त्वं ज्ञेयं येन दुःखाद् विमुच्येत् ॥१॥”

आहारके लिये अनिन्द्य कर्म करे । आहारका ग्रहण प्राणोंकी रक्षा के निमित्त है । प्राणोंकी रक्षा तत्त्वोंकी जिज्ञासाके लिये है, और तत्त्व-ज्ञान अपनेको (जीवको) सांसारिक दुःखोंसे छुड़ानेके लिये होता है ॥

इसलिये साधुको आहारकी प्राप्तिके लिये अनिन्द्य कर्म (गणना-समितियुक्त प्रवृत्ति) करना चाहिये निन्द्य कर्म नहीं । प्राणोंकी रक्षाके लिये ही आहार ग्रहण करना चाहिये, विषयादिकोंकी या प्रमादकी पुष्टि के लिये नहीं । तत्त्वोंकी विचारणा करनेके लिये ही प्राणोंकी रक्षा करनी चाहिये, दूसरे जीवोंकी हिंसादिकके लिये नहीं । तत्त्वज्ञानका विचार भी सांसारिक दुःखोंसे छूटनेके लिये करना चाहिये, मान माया आदि कषायकी पुष्टिके लिये नहीं । इसलिये संयमयात्राका निर्वाहके लिये मात्रानुसार आहार लेना चाहिये जिससे प्रमाद नहीं हो ॥ सू० ४ ॥

मुनि—आत्मगुप्त—इन्द्रिय और मनका निग्रह करनेवाला कैसे बने ? ऐसी शिष्यकी जिज्ञासाका समाधान करते हैं—‘विरागं’ इत्यादि ।

“आहारार्थं कर्म कुर्यादनिन्द्यं, स्यादाहारः प्राणसंधारणार्थम् ।

प्राणा धार्यास्तत्त्वजिज्ञासनार्थं, तत्त्वं ज्ञेयं येन दुःखाद् विमुच्येत्” ॥१॥

आहार भाटे अनिन्द्य कर्म करे आहारनु अहण्य प्राणोनी रक्षा निमित्त छे प्राणोनी रक्षा तत्त्वोनी लज्ञासा भाटे छे, अने तत्त्वज्ञान पोताने (लवने) सासारिक दुःखोथी छोडाववा भाटे थाय छे

भाटे साधुअे आहारनी प्राप्ति भाटे अनिन्द्य कर्म (अेषण्यसमितियुक्त प्रवृत्ति) करवु नेछअे, निन्द्य कर्म नहि प्राणोनी रक्षा भाटे न आहार अहण्य करवो नेछअे, विषयादिकोनी अने प्रमादनी पुष्टि भाटे नहि तत्त्वोनी विचारण्य करवा भाटे न प्राणोनी रक्षा करवी नेछअे — भीण लवोनी हिंसादिक भाटे नहि तत्त्वज्ञाननो विचार पण्य सासारिक दुःखोथी छुटवा भाटे करवो नेछअे — मान माया आदि कषायनी पुष्टि भाटे नहि भाटे संयमयात्राना निर्वाह भाटे मात्रा-नुसार आहार लेवो नेछअे नेथी प्रमाद न थाय ॥ सू० ४ ॥

मुनि, आत्मगुप्त—इन्द्रिय अने मननो निग्रह करनार केवी रीते बने ? अेवी शिष्यनी लज्ञासानु समाधान करे छे—‘विरागं’ इत्यादि

કિમાલમ્બૈતત્ કર્તવ્યમિત્યાહ—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આગઈ ગઈ પરિણાય દોહિ વિ અંતેહિં અદિસ્સ-
માણે । સે ન છિજ્જઈ ન મિજ્જઈ ન ડજ્જઈ ન હમ્મઈ કંચણં
સઁવલોણ ॥ સૂ ૦ ૬ ॥

છાયા—આગતિ ગતિં પરિજ્ઞાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદશ્યમાનઃ । સ ન છિદ્યતે
ન મિદ્યતે ન દહ્યતે ન હન્યતે કેનચિત્ સર્વલોકે ॥ મૂ ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘ આગતિં ગતિ ’—મિતિ, આગતિઃ=આગમનં, ગતિર્ગમનં, તત્ર તિરશ્ચાં
મનુષ્યાણાં આગતિશ્ચતુર્વિધા ભવતિ, નરકાદિચતુર્વિધગતિતસ્તેપામાગમનસદ્ભાવાત્ ।

કયા વિચાર કર રૂપાદિકોં મેં વિરક્ત બુદ્ધિવાલા બને ? સો કહતે
હૈં—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

દૂસરી ગતિસે આનેકા નામ આગતિ ઓર દૂસરી ગતિમેં જાનેકા
નામ ગતિ હૈ । મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચોંકી આગતિ ચાર પ્રકારસે હોતી હૈ,
અર્થાત્ ચારોં ગતિયોંસે આકર જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિમેં જન્મ
લેતે હૈં । દેવ ઓર નારકિયોંકી આગતિ દો પ્રકારસે હોતી હૈ, અર્થાત્
તિર્યશ્ચ ઓર મનુષ્ય ગતિસે આ કર હી જીવ દેવગતિ ઓર નરકગતિમેં
ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ગતિ ખી ઉન સવકીં ઇસી તરહસે હોતી હૈ । મનુષ્ય
અંવ તિર્યશ્ચ ગતિકે જીવ ચારોં ગતિયોં મેં ઉત્પન્ન હો સકતે હૈં પરન્તુ દેવ-
ગતિ અંવ નરક ગતિકે જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિકે સિવાય અન્ય
ગતિયોંમેં જન્મ નહીં લેતે । દેવ ચ્યવકર દૂસરે ભવમેં દેવગતિમેં ઓર

શુ વિચાર કરી રૂપાદિકોમા વિરક્તબુદ્ધિવાળા બને ? તે કહે છે—‘ આગઈ ’
ઈત્યાદિ

ખીજી ગતિથી આવવાનુ નામ આગતિ અને ખીજી ગતિમા જવાનુ નામ
ગતિ છે મનુષ્ય અને તિર્યચોની આગતિ ચાર પ્રકારની હોય છે અર્થાત્ ચારે
ગતિયોથી આવીને જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિમા જન્મ લે છે દેવ અને
નારકીઓની આગતિ બે પ્રકારની હોય છે, અર્થાત્ તિર્યચ અને મનુષ્ય ગતિથી
આવીને જીવ દેવગતિ અને નરકગતિમા ઉત્પન્ન થાય છે ગતિ પણ તે સઘળા-
ઓની આ પ્રકારે જ હોય છે મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિનો જીવ ચારે ગતિઓમા
ઉત્પન્ન થઈ શકે છે પરન્તુ દેવગતિ અને નરકગતિના જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ
ગતિના સિવાય અન્ય ગતિઓમા જન્મ લેતા નથી દેવ ચવીને ખીજી લવમાં

દેવાનાં નારકિણાં ધાગતિર્દિવિષૈવ, તેપાં તિર્યગ્મનુપ્યગતિમ્યામવાઽગમનાત્ ।
 ગતિરપ્યવ મયતિ, કેવલં મનુપ્યાણાં ગતિં પશ્ચવિધા પ્રોક્તા, તેપાં મોક્ષગતિસમ-
 વાત્ । તામાગતિં ગતિં ચ, પરિગ્રાય=સંસારચક્રે ઘટીયન્નવત્ પરિભ્રમણરૂપામાગતિ
 ગતિં ચ મુદ્ધ્વા મનુપ્યાણા મોક્ષગતિસંમર્વં ચાવગત્ય સ આગતિગતિસ્વરૂપામિદ્ધા,
 યદ્વા-સંસારદુઃખમીલો મોક્ષગતિમુક્તગતેવી, રૂપાવિષુ વિષયેષુ અન્તામ્યામ્=સ્વસંત્યાગાં
 મુક્તેરન્તકારિત્વાદન્તો=રાગદ્વેષો વામ્યામ્ દ્વામ્યામપિ=રાગદ્વેષામ્યામ્ અદ્યમાન=
 અવર્તમાન, રાગદ્વેષરહિત ઇત્યર્થઃ, ન છિદ્યતે કેનચિત્=સ્વહૃદ્ગાદિના, ન મિથતે
 કષ્ટકસૂચીચૂળાદિના, ન દક્ષતે દહનાદિના, ન હન્યતે કષ્ઠાદિના નરકગત્યાનુપૂ

નરકગતિમેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા । इसी प्रकार नारकी जीव भी नरकसे
 निकल कर दूसरे भवमें देवगति या नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता ।
 मनुष्य एवं तिर्यञ्च तो मर कर दूसरे भवमें मनुष्य, तिर्यञ्च, देव
 और नरकगतिमें जन्म ले सकता है । मनुष्योंकी गति मुक्तिप्राप्तिकी
 अपेक्षासे पांच प्रकारकी भी कही गई है । इस प्रकार संसारचक्रमें घटी
 यन्त्रके समान परिभ्रमणरूप आगति और गति, एवं मनुष्योंमें मोक्ष
 गतिकी संभवताको जानकर उनके स्वरूपका ज्ञाता, अथवा संसारके
 दुःखों से भयभीत हो कर मोक्षगतिके सुखका गवेपी वह साधु रूपादि
 विषयो में राग और द्वेषसे रहित हो कर सर्वलोकमें न किसीके द्वारा
 तलवार आदिसे हाथ पैर आदि में कमी छेदा जाता है, न कष्टकसूची
 शूलादिसे मेदा जाता है, न अग्नि आदिसे जलाया जाता है और न कोड़े
 आदिसे मारा जाता है और न उसके नरकगत्यानुपूर्वों आदिका उदय

દેવગતિમા અને નરકગતિમા ઉત્પન્ન થતા નથી. તે પ્રકારે નારકી જીવ પણ
 નરકથી નીકળી બીજા ભવમા દેવ ગતિ અથવા નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતાં
 નથી. મનુષ્ય અને તિર્યચ તો મરીને બીજા ભવમા મનુષ્ય તિર્યચ દેવ
 અને નરકગતિમા જન્મ લઈ શકે છે. મનુષ્યોની ગતિ મુક્તિપ્રાપ્તિની
 અપેક્ષાથી પાંચ પ્રકારની પણ કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે સંસારચક્રમા ઘટી
 ચત્રની સમાન પરિભ્રમણરૂપ ગતિ અને ગતિ તેમજ મનુષ્યોમા મોક્ષગતિની
 સંભવતાને જાણીને તેના સ્વરૂપના જ્ઞાતા અને સંસારના દુઃખોથી ભયભીત બનીને
 મોક્ષગતિના મુખના ગવેપી તે સાધુ રૂપાદિ વિષયોમા રાગ અને દેવથી રહિત
 બનીને સર્વલોકમાં કેઈનાથી પણ તલવાર આદિથી કાપ પણ આદિમાં કદિપણ
 છેદવામા આવતા નથી. તેમજ કષ્ટક સૂચી શૂલાદિથી લેદવામા આવતા નથી.
 તેમજ નથી અગ્નિથી જાળવામા આવતા, તેમજ નથી કોરડા આદિથી મારવામા

વ્યાદિના વા । અયં ભાવઃ—તિર્યગ્મનુષ્યાદીનામાગતિગતિપરિજ્ઞાનેન રાગદ્વેષ-
નિવૃત્તિઃ, તયોરભાવાચ્ચ છેદનાદિના સંસારદુઃખાનિ ન ભવન્તીતિ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

હોતા હૈ । ‘અન્ત’ શબ્દકા અર્થ રાગ દ્વેષ હૈ, ક્યોં કિ યે દોનોં “અન્ત-
કારિત્વાત્” અપની સત્તામેં જીવકી મુક્તિકા અન્ત-નિરોધ-કરનેવાલે
હોતે હૈં, इन दोनोंके सद्भाव में जीवको सच्चे स्वरूप-मोक्षकी प्राप्ति नहीं
होती है । इसका भावार्थ यह है—तिर्यञ्च अथवा मनुष्यादिकोंकी गति
और आगतिके परिज्ञानसे साधुको अच्छे एवं बुरे रूपादिकोंमें राग द्वेष
न हो कर प्रत्युत उनमें मध्यस्थता ही उसे रहती है । रागद्वेषकी निवृत्ति
से, छेदनभेदनादिद्वारा सांसारिक दुःखोंका जो उसे अनुभव होता था
वह फिर नहीं होता । क्योँ कि दुःखोंका अनुभव करानेवाली जो राग-
परिणति थी वह उसकी दूर हो चुकी है । दूसरा इसका भाव यह भी
हो सकता है कि जब मुनिकी आत्मासे राग द्वेषका अभाव हो जाता है
तो उसकी आत्मा अत्यन्त निर्मल एवं विशिष्ट प्रभावशाली हो जाती
है । इस अवस्थामें कोई भी ऐसी शक्ति नहीं है जो उसे छेदन भेदन
एवं ताडनादिजन्य दुःख पहुंचा सके । ‘न हन्यते नरकगत्यानुपूर्व्यादिना
वा’ इस टीकाका भाव यह है कि—सर्वसंयमीके लिये नरकगति एवं
तिर्यञ्च गतिका बन्ध नहीं होता है इस लिये उसकी आनुपूर्विका भी उसे
उदय नहीं होता है ॥ सू० ६ ॥

આવતા અને નહિ તેને નરકગત્યાનુપૂર્વી આદિનો ઉદય થાય છે ‘અન્ત’ શબ્દનો
અર્થ રાગ દ્વેષ છે કારણ કે એ બંને “અન્તકારિત્વાત્” પોતાની સત્તામાં
જીવની મુક્તિનો અત કરવાવાળા હોય છે એ બંનેના સદ્ભાવમાં જીવને સચ્ચા
સ્વરૂપ-મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી તેનો ભાવાર્થ એ છે કે તિર્યચ અથવા મનુ-
ષ્યાદિકોની ગતિ અને આગતિના પરિજ્ઞાનથી સાધુને સારા તેમજ ખરાબ રૂપા-
દિકોમાં રાગ દ્વેષ ન થઈને પ્રત્યુત તેમાં મધ્યસ્થતા જ તેને રહે છે રાગદ્વેષની
નિવૃત્તિથી, છેદન-ભેદનાદિ દ્વારા સામારિક દુખોનો જે તેને અનુભવ થતો હતો
તે પછી થતો નથી કારણ કે દુખોનો અનુભવ કરાવનારી જે રાગપરિણુતિ
હતી તે તેની દૂર થઈ ચૂકેલ છે બીજી તેનો ભાવ એ પણ થઈ શકે છે કે
જ્યારે મુનિના આત્માથી રાગ દ્વેષનો અભાવ થઈ જાય છે તો તેની આત્મા
અત્યન્ત નિર્મળ અને વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી બની જાય છે આ અવસ્થામાં એવી
કોઈ પણ શક્તિ નથી કે જે તેને છેદન-ભેદન તેમજ માર મારવો આદિ દુખ
પહોંચાડી શકે ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના વા’ આ ટીકાનો ભાવ એ છે
કે સકલસયમી માટે નરકગતિ અને તિર્યચગતિનો બંધ થતો નથી તેથી તેને
તેની આનુપૂર્વીના પણ ઉદય થતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મિથ્યાદૃષ્ટીનામાગતિગતિજ્ઞાનામાય ઇત્યાદિ-‘અવરેણ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-અવરેણ પુનઃ ન સરતિ યગે કિમસ્ત્ત તીય ? કિં વાઽઽગમિસ્ત્ત ? માસતિ યગે ક્વ માણવા ઽ જમસ્ત્ત તીય ત આગમિસ્ત્ત ॥ સૂ. ૭ ॥

જાણ-અપરેણ પૂર્વે ન સરન્તિ એકે કિમસ્ય અતીત ? કિં વા આગમિપ્યત્ ? માપતં એક ક્વ માનવાસ્તુ યદસ્ય અતીતં તદ્ આગમિપ્યત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

એકે=અન્ય મિથ્યાદૃષ્ટ્ય, અપરેણ=પશ્ચાત્કાલમાગિના સહ, પૂર્વે=પૂર્વકાલિક ન સ્મરન્તિ, યથા=અસ્ય જીવસ્ય કિમ્=અનેન જીવન કીદૃશં દુઃસ્વં સુસ્વં વાઽતુયુત ? મિતિ ન સ્મરન્તિ । તથા=કિં વા આગમિપ્યત્=અભિવ્યત્કાલિકે નરકાદિમથે કીદૃશં દુઃસ્વં સુસ્વં વાઽસ્ય જીવસ્ય માયીતિ ન સ્મરન્તિ । યદિ પુનરસ્ય જીવસ્યાતીતાના-ગતિગતિચિન્તનં કુર્યાત્તર્હિ વૈરાગ્ય સુતરાનુસરેત્ । ઉક્તમ્—

મિથ્યાદૃષ્ટિયોગો જીવોંકી ગતિ ઝીર આગતિકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઇસ માતકો કહતે હૈ-‘અવરેણ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોંકી અભિવ્યત્ કાલમેં હોનેવાલી અવસ્થાઓંકે સાથ પૂર્વકાલિક અવસ્થાઓંકી તથા અભિવ્યત્કાલમેં હોનેવાલી સુખદુઃખાદિકોંકે સાથ પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોંકી સ્મૃતિ નહીં હોતી હૈ । જીસે ઇસ જીવકા સમય પૂર્વ મેં કૈસેર સુખદુઃખાદિકોંસે ખીતા હૈ ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્વાયોંમેં ઇસ જીવને કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ઓગે હૈ ? એવં આગામી કાલમેં નરકાદિક પર્વાયોંમેં યહ જીવ કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ઓગેગા ? ઇસકા ઉર્હે સ્મરણ તક નહીં હોતા । યદિ ઇસ જીવકી અતીત એવં અનાગત કાલ સમ્યક્ષી ગતિકા ઘાર-ઘાર ચિચાર કિયા જાય તો જીવકો વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન હો જાયે । કહા યી હૈ—

મિથ્યાદૃષ્ટિજ્ઞાને લવેની ગતિ અને આગતિનુ જ્ઞાન થતુ નથી એ વાતને કહે છે-અવરેણ ઇત્યાદિ.

મિથ્યાદૃષ્ટિ લવેના અભિવ્યત્કાલમા અવસ્થાઓંની સાથે પૂર્વ કાલિક અવસ્થાઓંની તથા અભિવ્યત્કાલમા અવસ્થાઓંની સાથે પૂર્વ કાલિક સુખદુઃખાદિકોંની સ્મૃતિ થતી નથી. આ લવેના સમય પૂર્વમા કેવા કેવા પ્રકારે સુખદુઃખોંમાં વીચે છે ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્વાયોંમાં આ લવે કયા કયા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ઓગ્યા છે ? તેમજ આગામી કાલમાં નરકાદિ પર્વાયોંમાં આ લવે કેવા કેવા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ઓગશે ? તેનુ તેને સ્મરણ સુદાં હોતુ નથી. કદાચ આ લવેની અતીત તેમજ અનાગત કાલ સુખ ધી ગતિને ઘાર ઘાર ચિચાર કરવામા આવે તો લવેને વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન થઈ જાય કહું છે.—

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ?, કહં ડઓ તહ પુણોડવિ ગંતવ્વં ।

જો ઇત્તિયંપિ ચિંતઢ, ડત્થં સો કો ન નિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ડત્તિ ।

હહ=અસ્મિન્ મનુપ્યલોકે, ઇકે પુનર્મહામિથ્યાદૃષ્ટ્યો માનવાઃ=મનુપ્યાઃ માપન્તે=કર્મવિપાકજ્ઞાનામાવાદેવં વદન્તિ-અસ્ય જીવસ્ય યદ્ અતીતં=ત્રાહ્મણ-ક્ષત્રિય-વૈશ્ય-શૂદ્ર-ગવા-ડ્ધવ-ભવાદિ, તત્સંસ્કારવગાત્તદેવ પુનરન્યસ્મિન્ ભવેડપિ આગમિપ્યત્ત=માત્રીતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યે તુ સંસારસિન્ધુમુત્તીર્ણાસ્તે પૂર્વાપરગતિવેદિનઃ સર્વજ્ઞા નૈવં વદન્તિ । તસ્માત્ કર્મક્ષપણાર્થં સંયમઃ સેવનીય ડત્યાહ-‘નાર્ઢય ’૦ ડત્યાદિ ।

મૂલમ્-નાર્ઢયમટ્ઢ ન ય આગમિસ્સં, અટ્ઢ નિયચ્છંતિ તહા-ગયા ડ । વિહૂયકપ્પે ઇયાણુપસ્સી, નિજ્ઞોસડત્તા ડવવ ઢહેસી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ? કહં ડઓ તહ પુણોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો ઇત્તિયં પિ ચિંતઢ, ડત્થં સો કો ણ ણિવ્વિણ્ણો ॥૧॥ ” ડત્તિ ।

અર્થાત્ કિસ કારણસે મેરી ડસ પર્યાય મેં ડત્પત્તિ હુર્ઢ હૈ ? ક્યા મુઢ્ઢે યહાંસે ફિર અવ દૂસરી પર્યાયમેં જાના પડેગા ? । જો ડતના ઢી વિચાર કરે તો કૌનસા ઇસા જીવ હૈ જિસે વૈરાગ્ય જાગ્રત ન હો જાય ॥

ડસ સંસારમેં ઇસે ઢી મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈં જો કર્મોંકે વિપાક કે જ્ઞાનસે શૂન્ય હો કર ઇસા કહતે હૈં કિ-ડસ જીવકા જો ભવ, ચાહે વહ ત્રાહ્મણ સમ્બન્ધી હો, ચાહે ક્ષત્રિય સમ્બન્ધી હો, ચાહે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગો ઓર અશ્વ-ઘોડા-સમ્બન્ધી હો; વ્યતીત હો ચુકા હૈં, વહી ભવ ડનર ભવોંકે સંસ્કારકે વશસે આગામી કાલમેં ફિરસે ડસે પ્રાસ હોગા ॥૭॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી, કહં ડઓ તહ પુણોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો ઇત્તિયંપિ ચિંતઢ, ડત્થં સો કો ણ ણિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ડત્તિ ।

અર્થાત્ ક્યા કારણથી મારી આ પર્યાયમા ડત્પત્તિ થઈ છે ? શું મને અર્ઢીયાથી ડરીથી હવે ળીલ પર્યાયમા જવું પડશે ? જો ઓટલો પણ વિચાર કરે તો ક્યો ઓવો ળવ છે જેને વૈરાગ્ય જાગ્રત ન થાય ?

આ સંસારમા ઓવા પણ મહામિથ્યાદૃષ્ટિ ળવ છે જે કર્મના વિપાકના જ્ઞાનથી શૂન્ય બનીને ઓવુ કહે છે કે-આ ળવનો જે ળવ મલે તે પ્રાહ્મણુ સબધી હોય, લલે ક્ષત્રિય સબધી હોય, લલે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગાય અને અશ્વ-ઘોડા સબધી હોય-વ્યતીત થઈ ગયેલ છે તે જ ળવ તે તે લલોના સંસ્કારના વશથી આગામી કાળમા ડરીથી તેને પ્રાસ થશે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—નાતીતમયં ન ચ આગમિવ્યન્તમ્ અર્થ નિયન્ત્તિ તથાગતાસુ ।
વિષૂતકલ્પ એસદનુદર્શીં નિર્જુપ્ય ક્ષપયેત્ મહર્ષિ ॥ મુ. ૮ ॥

ટીકા—તથાગતાઃ=યથા તીર્થક્રમેણ માપિતં તથૈવ ગતં-જ્ઞાનં યેષાં તે તથાગતા
સ્વત્ત્વજ્ઞાનિનસ્તુ-અતીતમયં ન નિયન્ત્તિ=વેતસિ નાનયન્તિ, આગમિવ્યન્તમર્થ-
મપિ ન નિયન્ત્તિ । કિં હુ કર્મપરિણામૈવૈચિત્ર્યાત્ કર્માનુસારિ દુઃખં દુઃખં વા
પ્રાણિના મવતીત્યેવ નિર્ણયન્તિ । તસ્માત્-અતનુદર્શીં=વર્તમાનાર્થાનુદર્શીં વર્તમાન-
મવસંપાદ્યશ્રુતચારિત્રપર્મારાધનપરં ઇત્યર્થા, અતીતાનાગતસ્વર્ગાદિમુક્તાનમિચિન્તક
ઈતિ યાવત્, તથાષોક્તમ્-

જો સંસારસાગરસે પાર હો જુકે હું જે જીર્ણોંકી પૂર્વાપર-ગતિકે
જ્ઞાતા સર્વજ્ઞ મગવાન જેસા નહીં કહતે હું, હસલિયે કર્મોંકો નાશ કરને
કે લિયે સંયમકી આરાધના કરની વાહિયે, હસ પાતકો કહતે હું—
' નાઈયમદ્ ' ઇત્યાદિ ।

જેસા તીર્થક્રમ પ્રમુખે કહા હૈં ઉસીકે અનુસાર જિનકા જ્ઞાન હૈં જે
તથાગત-તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-કો ચિત્તમેં નહીં છાતે હૈં ઔર
ન આગામી અર્થ કો હી ચિત્તમેં છાતે હૈં, કિંતુ ' પ્રાણિયોંકે સુખ અથવા
દુઃખ કર્મોંકે અનુસાર કોતે હૈં ' એસા હી જે નિર્ણય કરતે હૈં । હસલિયે
વર્તમાન ભવમેં પ્રાપ્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધનામેં તત્પર-અર્થાત્
અતીત ઔર અનાગત કાલ સમ્બંધી સ્વર્ગ આદિકે સુખોંકા ચિંતન નહીં
કરનેવાલા તથા વિષુદ્ધ આચારવાલા, અથવા અતીત એવં અનાગતકે સંક
લ્પકો દૂર કરનેવાલા મહામુનિ નિરતિચાર સંયમકા આરાધના કરકે
પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કા નાશ કરે । જ્ઞાની કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર કહા હૈં—

જે સંસારસાગરથી પાર થઈ જુકેલ છે તે જીવોની પૂર્વાપર ગતિના શતા
સર્વજ્ઞ મગવાન જેવું કહેતા નથી માટે કર્મોના નાશ કરવા માટે સમગ્રની
આરાધના કરવી જોઈએ. જે વાતને કહે છે—' નાઈયમદ્ ' ઇત્યાદિ.

જેવું તીર્થક્રમ પ્રમુખે કહ્યું છે તેના અનુસાર જેવું જ્ઞાન છે તે તથાગત-
તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-ને ચિત્તમાં છાવતા નથી ન આગામી અર્થને
ચિત્તમાં છાવે છે પણ પ્રાણિઓના મુખ અથવા દુઃખ કર્મોના અનુસાર બને
છે જેવો જ તે નિષ્કલ કરે ॥ માટે વર્તમાન ભવમાં પ્રાપ્ત જે શ્રુત આચિ-
ત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં તત્પર અર્થાત્ અતીત અને અનાગત કાળ સંબંધી
સ્વર્ગ આદિના મુખોનું ચિંતન નહિ કરવાવાળા, તથા વિષુદ્ધ આચારવાળા, અથવા
અતીત અને અનાગતના સંકલ્પને દૂર કરવાવાળા મહામુનિ નિરતિચાર સમગ્રની
આરાધના કરીને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના નાશ કરે. જ્ઞાનીનું સ્વરૂપ મ્હ પ્રકારે કહ્યું છે—

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વિધૂતકલ્પઃ=વિધૂતૌ=વિશુદ્ધઃ કલ્પઃ=આચારો યસ્ય સઃ, યદ્વા-વિધૂતઃ=અપ-
નીતઃ કલ્પઃ=અતીતાનાગતસંકલ્પો યેન સઃ, મહર્ષિઃ=મહામુનિઃ, નિર્જુણ્ય=સંયમં
નિરતિચારં સમારાધ્ય, ક્ષપયેત્=પૂર્વોપાર્જિતકર્માણિ નાશયેત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મક્ષણાર્થ સમુદયતસ્ય મહર્ષેર્ધર્મધ્યાનતઃ શુક્લધ્યાનતો વા યત્ ફલં ભવતિ
તદાહ—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

અર્થાત્—‘ગઈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥ ’

જો વીતી હુઈ વાતોં પર ધ્યાન નહીં દેતા, ભવિષ્યકી વાતોંકી ચાહના
નહીં કરતા, કિન્તુ વર્તમાન અવસ્થા પર હી સંભલ કર રહતા હૈ, વહી
જ્ઞાની કહલાતા હૈ ॥

ઇસ શ્લોકસે ટીકાકાર ઇસ વાતકી પુષ્ટિ કર રહે હૈં કિ તત્ત્વજ્ઞાની
મૂત ભવિષ્યત્ કાલકે સાંસારિક સુખોંકી સ્મૃતિ એવં ઇચ્છા ન કર
વર્તમાન કાલમેં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેરૂપ અપની અવ-
સ્થામેં હી તત્પર રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મોં કો નાશ કરનેમેં કટિબદ્ધ મહર્ષિ કો ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાન
સે જો ફલ હોતા હૈ ઉસકો વતલાતે હૈં—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

એટલે—‘ગઈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥

જે વીતી ગએલી વાતો ઉપર ધ્યાન નથી દેતા, ભવિષ્યની વાતોની યાદના
નથી કરતા, પણ વર્તમાન અવસ્થા ઉપર જ સંભળીને રહે છે તે જ જ્ઞાની કહેવાય છે

આ શ્લોકથી ટીકાકાર આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે તત્ત્વજ્ઞાની ભૂત ભવિષ્ય
કાળના સાંસારિક સુખોની સ્મૃતિ તેમ જ ઇચ્છા ન કરી વર્તમાનકાળમા શ્રુતચા-
રિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવારૂપ પોતાની અવસ્થામા જ તત્પર રહે છે ॥સૂ૦ ૮॥

કર્મોના નાશ કરવામા કટિબદ્ધ મહર્ષિના ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાનથી જે
ફળ થાય છે તે કહે છે—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ

મૂલ્મ—કા અરઈ ? કે આણદે?, इस्थ पि अग्नाहे चरे ।

સવ્ય હાસ પરિચ્છજ્ઞ, આલીણયુત્તો પરિવ્વપ ॥સૂ.૦૧॥

ઠાપા—કા અરતિ ? ક આનન્દઃ ? અનાપિ અગ્રહચરેત્ ।

સર્વે હાસ્ય પરિસ્થિત્ય આલીનઘ્ન પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—ઈષ્ઠિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ઠપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુર્લભ સા અરતિઃ, અમિલપિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્ત્વા યો ર્વઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, एतद्वर्ष धर्मशुद्ध्यानलम्बनचित्तस्य महर्षेर्न भवति, સત્કારણમાત્રાત્ । इममधार्ष कथमति-
 का अरति क आनन्द इति । महर्षेः का अरति ? क आनन्द ? । मिथ्याहृत्तेरिवार
 तिरानन्दश्च महर्षेर्धर्मशुद्ध्यानावेषाच्च सम्पूज्यत इति भावः । अत्रापि=अरतावानन्दे
 च, अग्रह=अविचलितः सन् चरेत्=ध्यानमार्गे विहरेत् ।

इच्छित पदार्थकी अप्राप्ति से, अथवा उसके विनाशसे या अनिष्ट पदार्थके समागमसे जो मानसिक दुःख होता है उसका नाम अरति है। इष्ट पदार्थकी प्राप्ति होने पर जो हर्ष या सुख होता है उसका नाम आनन्द है। ये दोनों धर्मध्यान या शुक्लध्यानमें लक्ष्मीन चित्तवाछे महर्षिके नहीं होते हैं, क्योंकि अरति और आनन्दके कारणोंका वहाँ अभाव हो चुका है। महर्षिके लिये, क्या अरति? क्या आनन्द?, दोनों सम हैं। मिथ्याहृष्टिको जिस प्रकार अरति और आनन्द होते हैं उस प्रकार महर्षिके वे दोनों धर्मध्यान और शुक्लध्यानके प्रभावसे नहीं होते हैं। इसलिये अरति और आनन्दमें अश्लक्षित न बन कर महर्षिको अपने ध्यानके मार्गमें लक्ष्मीन रहना चाहिये।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનન્દ છે. એ બન્ને ધર્મધ્યાન અગર શુદ્ધ ધ્યાનના લક્ષ્મીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણ કે અરતિ અને આનન્દના કારણોનો ત્યા અભાવ થઈ ચુકેલ છે. મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનન્દ? બન્ને સરખાં છે. મિથ્યાહૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનન્દ થાય છે તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બન્ને ધર્મધ્યાન અને શુદ્ધધ્યાનના પ્રભાવથી થતાં નથી. માટે અરતિ અને આનન્દમાં અશ્લક્ષિત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લક્ષ્મીન રહેવું જોઈએ.

યદ્વા-સંયમારાધનપરાયણસ્ય મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । અયંભાવઃ-સંયમારાધનતત્પરસ્ય કુતશ્ચિત્ કારણાત્ પ્રતિકૂલપરીપહોપસર્ગોપસ્થિતૌ અરતિર્ન-ભવતિ । સ હિ તદાનીમેવં ચિન્તયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વભવેષુ નરકનિગોદાદૌ ક્ષુત્પિ-પાસાદિજનિતં વધવન્ધનાદિજનિતં ચ યદ્ ઘોરતરં દુઃસ્વમનન્તવારં પ્રાપ્તં તત્પુરતઃ કિમેભિરલ્પદુઃસ્વજનકૈઃ પરીપહોપસર્ગૈરિતિ । તથા-ઋદ્ધિ-રસ-શાતાદ્યુપસ્થિતૌ હર્ષઃ સુખં વા નોત્પદ્યતે ।

સ હિ તદાનીમેવં વિભાવયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વ દેવભવેષુ નરલોકદુર્લભં નાનાવિધઋદ્ધ્યાદિસુસ્વમનન્તશોડનુભૂતં, તસ્ય સમુદ્રસદૃશસ્ય દિવ્યસુખસ્ય પુરતઃ

અથવા-સંયમકી આરાધના કરનેમેં દત્તાવધાન મહર્ષિકો અરતિ ઓર આનન્દસે કોઈ પ્રયોજન નહીં હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ-સંયમકી આરાધના કરનેમેં તત્પર મહર્ષિકે જવ કિસી કારણસે પ્રતિકૂલ પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગકી ઉપસ્થિતિ હોતી હૈ ઉસ સમય ઉસે ઉસસે અરતિ નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ ઉસે ઉસ સમય યહી વિચાર આતા હૈ કિ હસ આત્માને પૂર્વભવમેં નરકનિગોદાદિ ગતિયોમેં ક્ષુધા-તૃષ્ણા-આદિ-જનિત એવં વધ ઓર વન્ધન આદિસે ઉત્પન્ન હુએ જો ઘોરતર દુઃસ્વ અનન્ત વાર પાચે હૈં ઉનકે આગે અલ્પદુઃસ્વજનક યે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ ક્યા ચીજ હૈં ? તથા ઋદ્ધિ, રસ, શાતા આદિકી ઉપસ્થિતિ હોને પર ભી ઉસે હર્ષ યા સુખ નહીં હોતા હૈ, ક્યોં કિ ઉસ સમય ભી વહ યહી વિચાર કરતા હૈ કિ હસ આત્માને પૂર્વ-દેવભવોમેં, મનુષ્યલોકમેં દુર્લભ એસે અનેક પ્રકારકે ઋદ્ધિ-આદિજન્ય સુખોંકો અનન્ત વાર ભોગા હૈ તો સમુદ્ર

અથવા સયમની આરાધના કરવામા દત્તાવધાન મહર્ષિને અરતિ અને આ-નન્દથી કોઈ પ્રયોજન જ નથી.

તાત્પર્ય એ છે કે-સયમની આરાધના કરવામા તત્પર મહર્ષિને ન્યારે કોઈ કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ્ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી અરતિ થતી નથી પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ પૂર્વભવમા નરક નિગોદાદિ ગતિયોમા ક્ષુધા તૃષ્ણા આદિ જનિત તેમજ વધ અને વધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ઘોરતર દુખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની અપેક્ષા અલ્પ દુખજનક આ પરીષદ્ અને ઉપસર્ગ કઈ ચીજ છે ? તથા ઋદ્ધિ રસ, શાતા આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતા પણ તેને હર્ષ અગર સુખ થતું નથી કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ દેવભવોમા, મનુષ્યલોકમા દુર્લભ એવા અનેક પ્રકારના ઋદ્ધિ આદિ જન્ય સુખોને

किमनेन विन्दुसुखेन प्रदुग्धादिसुखेन? इति। उक्तञ्च—

“न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि” ॥ १ ॥ इति।

तस्मात्—अत्रापि=अस्मिन् अस्थानानन्दकारणेऽपि अग्रहः=तदनपेक्षमाणः
मध्यस्थभावमुपगतं सन् चरेत्=संयममार्गे विहरेत्।

तथा—सर्वे=समस्त हास्य=हास, तत्स्थानं वा परिस्थय्य, आलीनगुप्त—उत्त-
आलीन—आहू=मर्यादया—इन्द्रियनिरोधादिरूपया लीनः, गुप्त—मनोवाक्कायकर्मभिः,
यदा—गुप्तः=कर्मवत्संवृत्तगात्र, आलीनभासौ गुप्तमेत्यालीनगुप्तः, एवंभूतं सन्
के तुल्य उस सुखके सामने विन्दुसुख्य इस कद्वि रस आदिके सुखकी
क्या गिनती है। कहा भी है—

“न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥”

हे आत्मन् ! जब तू अनन्तवार सेवन किये गये इन कामोंसे तू तनही
हुआ; उल्टा इनके भोगने से तेरा ही अन्त हुआ तो फिर इन के भोगने से
तुझे क्या लाभ है? अतः अब इन से वैराग्य ही लेना सर्वश्रेष्ठ है।
इसलिये उस संयमी को चाहिये कि वह अरति और आनन्द के
कारणोंमें भी अग्रह—अनपेक्षावाला बन कर अर्थात् माध्यस्थ्यभाव
राखता हुआ संयममार्गमें विचर।

तथा—समस्त हास्य अथवा हास्यके स्थानभूत—जिनकी तीर्थहूरा
दिकोंने निन्दा की है ऐसे—विषयकपार्योंका परित्याग कर इन्द्रियनिग्रही
गये मन, ध्यान और कायसे सदा सावधानियासे रक्षित होते हुए अथवा
अनन्तवार भोगवेत छे तो समुद्रका तुम्ह ते अपनी आँखें बन्द तुम्ह आ कद्वि
आदिना अपनी शु अणुना छे कष्ट पण छे—

“न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥”

हे आत्मा ! क्यारे अनन्त बार मेरी सुकेश तो कामेभी क्यारे तू तूत
न धये, उरु तुना भोगववायी ताशेजे अत धये, तो पछी तेना भोगववाभी
तने शु लाभ छे? भये ते वस्तुभी बेसज्ज व खेवे अथ श्वरक्षर छे।
तेधी ते सबभीने जोड़ जे के ते अस्ति अने अनन्तना कारणभा पण
अनन्द—अनपेक्षावाला अपनी अर्थात् माध्यस्थ्यभाव सभीने संयम भाग भा नियर।
तथा—अग्रह हास्य अथवा हास्यका स्थानभूत के जेनी तीर्थहूराजे निदा
करे छे, अथ विषयकपार्योंका परित्याग कर इन्द्रियनिग्रही तेमन मन ध्यान

પરિવ્રજેત્-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્-સંયમાનુષ્ઠાનવિધાયી ભવેદિત્યર્થઃ॥સૂ૦૧॥

સ્વાત્મનો વીર્યગુણાવલમ્બનેનૈવ મોક્ષઃ પ્રાપ્યતે ન તુ પરસાહાય્યાશ્રયણેનેતિ દર્શયિતું કથયતિ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-પુરિસા ! તુમમેવ તુમં મિત્તં, કિં વહિયા મિત્ત-મિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—પુરુષ ! ત્વમેવ તવ મિત્રં, કિં વહિર્મિત્રમિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! =પુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! શિષ્ય ! તવ મિત્રં ત્વમેવ=આત્મનઃ કલ્યાણાર્થ સમુદયતસ્ય-ગૃહીતસંયમભારસ્ય તવ સહાયસ્તવાત્મૈવાસ્તીત્યર્થઃ । શ્રુત-ચારિત્રધર્માચરણકરણેનૈકાન્તતોઽત્યન્તતશ્ચ પરમસુગ્વજનકત્વાત્પમાદરહિત આત્મૈ-વાત્મનો મિત્રમુપકારી પરમાર્થતો, ન ત્વન્ય ઇતિ ભાવઃ । વહિઃ=વાહ્યં સ્વાત્મનો વ્ય-તિરિક્તં, મિત્રં=હિતકારિણં સહાયં, કિમ્=કુતઃ, ઇચ્છસિ=અન્વેષયસિ ।

કમઠ-કચ્છપકે સમાન સંવૃતશરીર હોતે હુણે મહર્ષિ સંયમકી આરાધના કરનેમેં સાવધાન રહે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અપની આત્માકે વીર્યગુણકે અવલમ્બન સે હી મોક્ષ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કિન્તુ દૂસરોંકી સહાયતાકે સહારે નહીં । ઇસ વાતકો દિશ્વલને કે લિયે કહતે હૈ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

પુરુષાર્થ સાધન કરનેમેં સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તુમ હી સ્વયં અપને મિત્ર હો-અપની આત્માકે કલ્યાણ કરનેમેં ઉદયત હો કર જો તુમને યહ સંયમકા ભાર અંગીકાર કિયા હૈ ઉસમેં તુમ્હારી આત્માસે અતિરિક્ત ઓર દૂસરા કોઈ સહાયક નહીં હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આચરણ કરને સે આત્મા અપ્રમાદી વનતા હૈ । પ્રમાદ સે રહિત આત્મા હી આત્માકા એકાન્તિક

અને કાયાથી સદા સાવધ ક્રિયાઓથી રહિત થઈને, અથવા કમઠ-કચ્છપના સમાન સંવૃતશરીર થઈને તે મહર્ષિ સંયમની આરાધના કરવામા સાવધાન રહે ॥સૂ૦૯॥

પોતાના આત્માના વીર્યગુણના અવલમ્બનથી જ મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ બીજાઓની સહાયતાના સહારાથી થતો નથી આ વાતને બતલાવવા માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ

પુરુષાર્થ સાધન કરવામા સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તમે પોતે જ તમારી બાતના મિત્ર છો પોતાના આત્માનુ કલ્યાણ કરવામા ઉદ્યોગી બની જે તમે સંયમનો ભાર અંગીકાર કરેલ છે, તેમા તમારી આત્માથી અતિરિક્ત બીજા કોઈ સહાયક નથી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનુ આચરણ કરવાથી આત્મા અપ્રમાદી

स्वात्मव्यतिरिक्तस्य ससारकार्ये साहाय्यकारिणः पुत्रकल्पादेः समारिषस्तथा हिरण्यसुवर्णादेः जन्ममरणादिबहुविधानन्तव्यसनोपनिपातसंसारसागरान्तर्गतनकारित्वादमित्र मित्रं मन्यमान किं मोक्षार्थेन स्वात्मानं निपातयसि ?, परमार्थं धृतचारिप्रधर्मानुष्ठानास्स्वात्मैव मित्रं, सद्विरोधिसावयक्रियानुष्ठानादमित्रं च स्वात्मैवास्तीति भावः । उक्तञ्च—

“अप्येवं मरणं कुर्यात्, सत्कृदो बलवानरि ।

मारणानि तनन्तानि, जमानि च करोत्ययम् ॥” इति ॥ सू० १० ॥

तथा आत्मन्तिक परम सुखका जनक होनेसे उत्कृष्ट वस्तु है। इसलिये जब आत्माका आत्मासे अतिरिक्त हम अबस्थामें कोई वास्तविक इष्टि से वस्तु—सहायक है ही नहीं; तो फिर हे आत्मन्! अपने से सदा मित्र रहे हुएओंको तुम अपना सहायक मानने की चाहना क्यों करते हो ?!

तात्पर्य यह है कि—आत्मासे सदा मित्र रहे हुए ये सांसारिक समस्त पदार्थ, वे चाहे स्त्री, पुत्र, मित्र आदि हों, चाहे हिरण्य, सुवर्ण आदि हों; तुम्हें सांसारिक कार्योंमें ही सहायक होते हैं, पारमार्थिक कार्योंमें नहीं। आत्माको इनके ममत्वसे निरन्तर ही जन्म जरा और मरणादिक अनेक प्रकारसे अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है। इन कष्टोंके स्थानभूत इस संसारसमुद्र में उसे बारबार गोते खाने पड़ते हैं। इसलिये इन्हें अपना सहायक मानना शत्रुको सहायक मानने जैसा है। अतः हे शिष्या! यह निश्चय विश्वास रखकर अपनी संयमयात्रा का निर्वाह करो और

जने छे प्रभाइवी रहित आत्मा व आत्मानो केवलित तथा आत्मन्तिक परम सुभनो जनक केवाधी उत्कृष्ट वस्तु छे भाटे ज्यारे आत्मानो आत्माया अति रिक्त आ अवस्थामां केवल वास्तविक इष्टिभी वस्तु—सहायक छे व नहि, तो पछी हे आत्मन्! पोतानाभी सदा मिल रहेवाजोने तुं पोताना सहायक मानवानी आहन्ता श भटे करे छे ?

भावार्थ—आत्माभी सदा मिल रहेवा को सांसारिक समस्त पदार्थ—स्त्री स्त्री पुत्र मित्र आदि दोष, चाहे हिरण्य सुवर्ण आदि दोष, जने सांसारिक कार्यमा व सहायक जने छे परमार्थिक कार्यमा नहि, आत्माने तेना ममत्वभी निरन्तर व जन्म, वश जने मरणादिक अनेक प्रकारका जनत कष्टोने सामनो करवे पठे छे ते कष्टोना स्थानभूत आ संसारसमुद्रमां तेने बारबार गोथा थावा पठे छे भाटे तेना पोताना सहायक मानवा ते शत्रुने सहायक मानवा भगवत्तर छे भाटे छे शिष्या! को

આત્મા યસ્ય મિત્રં સ કથં જ્ઞાતવ્યઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ जं जाणिज्जा ’ इत्यादि ।

સોચો કિં ઇસ યાત્રામાં મેરા સહાયક મેરી આત્મા હી હૈ, અન્ય-આત્મ-વાહ્ય-કોઈં બી પદાર્થ નહીં । જો ઇનકી સહાયતાકી અપેક્ષાવાલે વનોગે તો અપની આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડુબોનેવાલે હોઓગે । ઇસલિયે ઇનકે મોહમાં ફંસ કર આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડાલનેકી ચેષ્ટા ન કરો ઓર પરમાર્થસે યહ સમઘટે હુએ ઇસ યાત્રામાં આગે વઢતે રહો કિં શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મકે અનુષ્ઠાનસે આત્માકા સહાયક આત્મા હી હૈ ઓર તદ્વિ-રોધી સાવચક્રિયાઓંકે કરનેસે આત્મા હી આત્માકા શત્રુ હૈ । કહા બી હૈ—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संकुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम् ॥ ૧ ॥” इति ।

અર્થ-બલવાન સે બલવાન બી શત્રુ અગર કુદ્ધ હો કર મારે તો એક હી જન્મમાં મારતા હૈ, પરંતુ સાવચક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બન કર અનન્તવાર અપને આપકો મારતા હૈ ઓર જન્મ લેતા હૈ । અર્થાત્ આત્મા હી અપના શત્રુ બન કર ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતા રહતા હૈ, કિન્તુ કબી બી મોક્ષકો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥ ૧ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

કરો, અને વિચારો કે—આ યાત્રામાં મારો સહાયક મારો આત્મા જ છે બીજુ બાહ્ય કોઈં પણ પદાર્થ નહિ જે તેની સહાયતાની અપેક્ષાવાળા બનશે તો પોતાના આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં બુઝાવનારા બનશે, માટે તેના મોહમાં ફસીને આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં નાખવાની ચેષ્ટા ન કરો, અને પરમાર્થથી એ સમજીને આ યાત્રામાં આગળ વધતા રહો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના અનુષ્ઠાનથી આત્માનો સહાયક આત્મા જ છે, અને તેના વિરોધી સાવચક્રિયાઓના કરવાથી આત્મા જ આત્માનો શત્રુ છે કહ્યું છે—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संकुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम् ” ॥ ૧ ॥ इति ।

અર્થ:—બળવાનથી બળવાન પણ શત્રુ કોધી થઈને મારે તો એક જ જન્મમાં મારે છે, પરંતુ સાવચક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બનીને અનંત વાર પોતે પોતાને મારે છે, અને જન્મ લે છે અર્થાત્ આત્મા જ પોતાનો શત્રુ બનીને ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, કિન્તુ કદી પણ મોક્ષ

મૂઠ્ઠમ—જ જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલહય, ત જાણિજ્ઞા દૂરાલહય ।

જં જાણિજ્ઞા દૂરાલહય, ત જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલહય ॥સૂ૦ ૧૧॥

ઠાપા—યં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિક સં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્ ।

ય જાનીયાત્ દૂરાલયિકં સ જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકમ્ ॥ છ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—યં પુરુષમ્ ઉચ્ચાલયિકમ્—ઉચ્ચઃ=કર્માપનયનમાનસપત્તિઃ, આલયઃ—

આ=સમન્તાત્ લીયન્તે વિચારા યસ્મિન્ સ આલયઃ=અન્તાકરણમ્, ઉચ્ચઃ આલયઃ

ઉચ્ચાલયઃ, સોડસ્યાસ્તીતિ—ઉચ્ચાલયિકસ્તમ્ કર્મણામપનેતારં જાનીયાત્, સં

દૂરાલયિકં=કઠિનતરતપાસંયમારાધનપ્રાપ્તીયત્વેન દૂરે આલયઃ દૂરાલયઃ=મોક્ષ-

સ્થાનં, સોડસ્યાસ્તીતિ દૂરાલયિકસ્તં મોક્ષગામિનં જાનીયાત્ । પરસ્પરકાર્યકારણમા-

વ્યવર્ત્તનાયોક્તમર્થં ગત-પ્રત્યાગતરૂપેણ કથયતિ—‘યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્’

જિમ્મકા આત્મા હી મિત્ર હે એસે પુરુષકી પહિચાન કૈસે હોતી હૈ? હસપ્રકારકી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જં જાણિજ્ઞા’ હત્યાદિ ।

કર્મીકા જો અપનેતા હે ઉસકા નામ ઉચ્ચાલયિક, તથા મોક્ષગામી

કા નામ દૂરાલયિક હૈ । અર્થાત્—જો ઉચ્ચાલયિક=કર્મીકા નાશ કરને

વાલા હૈ વહ દૂરાલયિક=મોક્ષગામી હૈ, એસા સમજો । કઠિનતર તપ

ઔર સંયમકી આરાધના સે પ્રાપ્ત હોનેવાલા હોને કે કારણ દૂર જો આલય

—સ્થાન હૈ ઉસકા નામ દૂરાલય—મોક્ષ હૈ । વહ જિસકે હોતા હૈ વહ દૂ

રાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી હૈ । પરસ્પરમેં કાર્ય—કારણ આવકા પ્રદર્શન

કરારનેકે લિયે ઉક્ત અર્થકો સૂત્રકાર ગત—પ્રત્યાગત (હિર—ફેર) રૂપસે કહતે

હૈ—જો દૂરાલયિક=મોક્ષગામી—અર્થાત્ મુક્તિકે માર્ગપર આસદ્ હૈ, ઉસકો

નેને આત્મા જ મિત્ર હે એવા પુરુષની જોળખાણ કેવી રીતે થાય?

આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી સૂત્રકાર કહે છે—‘જં જાણિજ્ઞા’ હત્યાદિ.

કર્મીના જે અપનેતા છે તેનું નામ ઉચ્ચાલયિક તથા મોક્ષગામીનું નામ

દૂરાલયિક ॥ અર્થાત્—જે ઉચ્ચાલયિક=કર્મીના નાશ કરવાવાળા છે તે દૂરાલયિક=

મોક્ષગામી છે, એમ સમજો. કઠિનતર તપ અને સંયમની આરાધનાથી પ્રાપ્ત

થવાવાળા હોવાના કારણે દૂર જે આલય—સ્થાન છે તેનું નામ દૂરાલય—મોક્ષ છે.

તે જેને થાય છે તે દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી છે પરસ્પરમા કાર્યકારણ

આવનું પ્રદર્શન કરાવવા માટે ઉક્ત અર્થને સૂત્રકાર ગત—પ્રત્યાગત (ફેર—ફેર)

રૂપથી કહે છે—જે દૂરાલયિક=મોક્ષગામી અર્થાત્ મુક્તિના માર્ગ ઉપર આસદ્ છે

ઇત્યાદિ । યં પુરુષં દૂરાલયિકં મોક્ષગામિનં મોક્ષમાર્ગારૂઢં જાનીયાત્, તમુચ્ચાલ-
યિકં=કર્મણાં તદાસ્રવદ્વારાણાં ચાપનેતારં કર્મોણિ દૂરીકર્તુ કૃતનિશ્ચયં સોત્સાહં વદ્ધ-
પરિકરમિતિ યાવત્ જાનીયાત્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

સ્વાત્મૈવ યેન મિત્રતયાઽઙ્ગીકૃતઃ સ કિ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ।

ઉચ્ચાલયિક = કર્મ ઓર ડનકે આસ્રવોકે દ્વારોંકા નાશ કરનેવાલા
સમજ્ઞો । ક્યોં કિ વહ કર્મોં કો દૂર કરનેકે લિયે કૃતનિશ્ચય ંવં ઉત્સા-
હસંપન્ન હોતા હૈ । કર્મોં કે નાશ કરનેમેં વહ કિસી ંધી પ્રકારસે પીછે
પૈર નહીં રલ્લતા હૈ, અર્થાત્ કટિવદ્ધ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ આત્માકો હી જો
સંયમયાત્રામેં સહાયક માનતા હૈ ડસકી પહિચાન ક્યા હૈ ? ડસકા
સમાધાન સૂત્રકારને ડસ સૂત્રસે કિયા હૈ । લે કહતે હૈં કિ જો સંયમી
ડસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ કર્મોં કે દૂર કરનેમેં સદા કટિવદ્ધ
રહતા હૈ । ડસી રૂપસે વહ દૃષ્ટિપથ હોતા હૈ । ડસકી પ્રત્યેક ક્રિયાં
ંસી હોતી હૈં કિ જિનસે કર્મોં કા આસ્રવ રુકતા હૈ ઓર સંચિત કર્મોં
કી નિર્જરા હોતી રહતી હૈ । ંસા સંયમી મુનિ હી મોક્ષમાર્ગ પર આરૂઢ
માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

અપની આત્મા કો હી જિસને મિત્રરૂપસે અંગીકાર કિયા હૈ વહ
સંયમી કિસ ફલકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? ડસકેલિયે કહતે હૈં—‘પુરિસા’
ઇત્યાદિ ।

તેને ઉચ્ચાલયિક-કર્મ અને તેના આશ્રવદ્વારાનો નાશ કરવાવાળા સમજે કારણ
કે તે કર્મોને દૂર કરવા માટે કૃતનિશ્ચય તેમજ ઉત્સાહસંપન્ન બને છે કર્મોનો
નાશ કરવામા તે કોઈપણ પ્રકારે પાછળ પગલુ ભરતા નથી, અર્થાત્ કટિવદ્ધ થાય છે

ભાવાર્થ—શિષ્યે જે આ પ્રશ્ન કરેલ હતો કે આત્માનેજ જે સયમયાત્રામા
સહાયક માને છે તેની ઓળખાણ શુ છે ? તેનુ સમાધાન સૂત્રકારે આ સૂત્રથી
કરેલ છે, તે કહે છે કે જે સયમી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે કર્મોને દૂર
કરવામા સદા કટિવદ્ધ રહે છે તેવા રૂપથી તે દૃષ્ટિપથ થાય છે તેની દરેક
ક્રિયાઓ ઓવી હોય છે કે જેનાથી કર્મોનો આસ્રવ રોકાય છે, અને સચિત
કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે, ઓવા સયમી મુનિ જ મોક્ષ માર્ગપર આરૂઢ
માનવામા આવે છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

પોતાના આત્માને જ જેણે મિત્રરૂપથી અંગીકાર કરેલ છે તે સયમી કેવા
રૂપને પ્રાપ્ત કરે છે તેને માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ

ब्रह्म-पुरिसा! अत्ताणमेव अभिणिगिज्झ एव तुक्खा
पमुच्चसि ॥ सू० १२ ॥

छाया-पुरुष ! आत्मानमेव अभिनिष्ठ एवं दुःखात् प्रमादयस ॥ सू० १२ ॥

टीका-हे पुरुष ! परमपुरुषार्थसाधनसमर्थ ! भव्य ! आत्मानमेव-स्वस्व
रूपावलीकृतं भुतचारिप्रपञ्चाराधनं वा परित्यज्याऽनादिमिध्याताविरत्यादि
वासनावशाद् विषयसंगार्यं वरिषाधमानं स्वात्मानमेव अभिनिष्ठ-मोक्षसाधक
मानुषानप्रबलतरसत्कारणं तस्य प्रतिनिधत्वं, एव-पुनः पुनरनेन प्रकारेण स्वात्मानं
ज्ञानदर्शनवारिषात्मनिष्ठं कृत्वा, दुःखात्-दुःखकारणात् ज्ञानावरणीयादिकर्म
न्यात् प्रमोदयसे-दुःखो भविष्यति ॥ सू० १२ ॥

हे पुरुष-अर्थात् परम पुरुषार्थ-मोक्षके साधनमें समर्थ हे भव्य !
अपनी आत्माको वैयक्तिक मार्ग से हटा कर आत्मनिष्ठ करो, इसीसे
तुम्हारे दुःखोंका अन्त होगा ।

भाषार्थ-जो संयमी अपनी आत्माको ही संयम-मार्गके साधनमें
सहायी मानता है उसे मुक्तिका लाभरूप फल प्राप्त होता है । संसार
वशामें कैसे हुए व्यक्तियोंसे, अथवा संयमकी आराधनामें सांसारिक
परपदार्थ की महापताकी ही अपेक्षा रखनेवाले संयमी से स्वरूपका अन्त
लोकन, अथवा भुतचारित्र्य रूप धर्मका आराधन नहीं हो सकता है । जब
तक इस प्रकारकी प्रवृत्ति संयमी में उत्पन्न नहीं होती है तब तक वह
अपने कर्त्तव्य-मार्गसे असलग ही रहता है । उसकी आत्मा अनादिकालसे
संसक्त (लगा हुआ) मिध्यात्य अपिरति आदिकी भावनाके वशसे

हे पुरुष ! अर्थात् परमपुरुषार्थ-मोक्षका साधनमा समर्थ हे भव्य !
आत्माना आत्माने वैयक्तिक मार्गशी हटावी आत्मनिष्ठ करो, तेनाही तमाश
दुःखान्ते अन्त आये

भाषाया-हे संयमी आत्माना आत्माने व संयम भावना साधनमा
सहायक माने है तेने मुक्तिना लाभरूप फल प्राप्त थाय है असारवशामें
होती व्यक्तियोंशी, अथवा संयमनी आराधनामा सांसारिक परपदार्थनी सहा
वानाही व अपेक्षा महापताका संयमीशी स्वरूपनु अवलोकन अथवा भुतमा
चित्ररूप धर्मनु आराधन नही शकतु नथी अथवा भुती भा प्रगारनी प्रवृत्ति
संयमीमा उत्पन्न नथी गती तथा भुती ते आत्माना कर्त्तव्य भावशी अलग व
है है तेनी आत्मा अनादि कालशी संसक्त (लगेता) मिध्यात्य अपिरति

અપિ ચ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

—પુરિસા ! સચ્ચમેવ સમભિજાણાહિ, સચ્ચસ્સ આ-
ણાણ સે ઉવટ્ટિણ મેહાવી મારં તરહ્મ । સહિઓ ધમ્મમાયાય સેયં
સમણુપસ્સહ્મ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

વિષયોંની કી ઓર ચક્ર કરતા કરતા હૈ ઓર મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુ-
ષ્ઠાનકે સંસ્કારોં સે વશિત રહતા હૈ । ઇસ વાતકા ક્યાલ કર સૂત્રકાર
શિષ્યજન કે શિક્ષાર્થ કહતે હૈં કિ—હે શિષ્ય ! યદિ તુમ પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષ કે સાધન કરને મેં અપનેકો શક્તિશાલી સમજતે હો તો તુમ
સ્વરૂપકા અવલોકન મેં, યા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના મેં અપનેકો
વિસર્જિત કર દો । જો ઇસા નહીં કરતે, વે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ
અં અવિરતિ આદિકી લગી હુઈ વાસનાકે વશ સે વિષયોંકે સંગકે લિયે
વાહિરી પદાર્થોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલી અપની આત્મા કો ડસ ઓર સે હટા
નહીં સકતે । ઇસલિયે તુમ મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનકે સંસ્કાર
કો અપને આપમેં પ્રવલતર કરો, તાકિ વિષયમાર્ગની કી ઓર બઢતી હુઈ
યહ તુમ્હારી આત્મા ડસ ઓર ન જા સકે—ડસ તરફસે નિવૃત્તિ હો જાવે ।
ઇસ પ્રકારકે વારર કે અભ્યાસ સે આત્માકો અપને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર—મેં સ્થાપિત કરતે હુઈ તુમ ડુઃખોં કે
કારણભૂત જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે વન્ધન સે મુક્તિ હો જાઓગે ॥૧૨॥

આદિ ભાવનાના વશથી વિષયોની તરફ જ લાગ્યો રહે છે, અને મોક્ષના
સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનના સંસ્કારોથી વશિત રહે છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરી
સૂત્રકાર શિષ્યજનના શિક્ષાર્થ કહે છે કે—હે શિષ્ય ! જો તું પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષનું સાધન કરવામાં પોતાને શક્તિશાળી સમજતો હોય તો તું સ્વરૂપના
અવલોકનમાં અગર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં પોતાને વિસર્જિત કરી દે.
જો આમ નથી કરતા તે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ અને અવિરતિ આદિની લાગેલી
વાસનાના વશથી વિષયોના સંગ માટે બહારના પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા
પોતાના આત્માને તે તરફથી હટાવી શકતા નથી, માટે તમે મોક્ષના સાધક ધાર્મિક
અનુષ્ઠાનના સંસ્કારને પોતે પોતામાં પ્રબલતર કરો, જેથી વિષયમાર્ગની તરફ
વધતો એ તમારો આત્મા એ તરફ જઈ શકે નહિ—તે તરફથી નિવૃત્તિ થઈ જાય
આ પ્રકારના વારંવારના અભ્યાસથી આત્માને—પોતાને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્-
જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર—માં સ્થાપિત કરીને તમે હું ખોના કારણભૂત જ્ઞાનાવર-
ણીયાદિક કર્મોના બંધનથી મુક્ત થઈ જશો ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! સત્યમેવ સમમિજાનીદિ, સત્યસ્યાગ્નયા સ ઉપસ્થિતો મેધાસી મારં તરતિ । સદિતો ધર્મમાદાય ધેયઃ સમનુપશ્યતિ ॥ મૂ० ૧૩ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! સત્યમેવ સમમિજાનીદિ—ગુરુદત્ત સાક્ષીકૃત્ય યા ધ્રુતચારિષ્ઠ ધર્મસ્ય ગ્રહણી તથાઽસવની ય શિક્ષા પરિગૃહીતા, તામ્ અવિસ્મરન્ પરિપાલય-ત્યર્થઃ । યદ્વા—સત્ય=આગમસ્તમય સમમિજાનીદિ=ચરણકરણરૂપમાગમોક્તમર્થ પ્રતિપાલયેત્યર્થઃ । એતત્ કિમર્થમિત્યાદિ—‘સત્યસ્ય’ इत्यादि । सत्यस्य=गुरुदेवं साक्षीकृत्य परिगृहीतायाः ध्रुतचारिष्वधर्मस्य ग्रहण्या आसवन्त्याश्च शिक्षायाः निम्नवचनस्य वा आह्वया=अनुसरणेन उपस्थितः सन् मेधासी=हेयोपादयविवेककुञ्ज , मारं=संसारार्णव त्ररति=समुक्षीणो भवति । किं च—सदित्=हितेन ज्ञानादिना युक्तः धर्ममादाय=ध्रुतचारिष्वक्षणं धर्मं गृहीत्वा धेयः=धुर्म मोक्षपद समनुपश्यति, तीर्थङ्करादिमिदं सत्यगबलोकयतीत्यर्थः ॥ सू० ૧૩ ॥

કિર કહતે હૈ—‘પુરિસા’ इत्यादि ।

હે પુરુષ=પરમપુરુષાર્થ કે સાધન કરને મેં સમર્થ અન્ય ! મગવાન તયા ગુરુકો સાક્ષી કરકે જો તુમને ગ્રહણી—ધ્રુતચારિષ્ઠરૂપ ધર્મકો અગીકાર કરનેવાલી એવ આસેવની=ઠસ ધર્મકો નિર્દોષ રીતિસે પાલન કરનેવાલી શિક્ષા ગ્રહણ કી હૈ, ઠસે તુમ સ્થપ્ન મેં મી મત્ત શૂલો । હસકા અન્ત કરણસે પાલન કરો । અથવા ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ—(ચરણ સત્તરી ઔર કરણસત્તરી) કા પાલન કરો । જિનપ્રવચનકી આજ્ઞા કે અનુસાર જો અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ અહ હેય ઔર ઉપાદેય કે વિવેકસે કુદાલ હો જાતા હૈ । હસ કુદાલતાકા યહ ફલ હૈ કિ—વહ સંસારસમુદ્ર સે પાર હો જાતા હૈ । તથા—આત્માકે હિતકારી હોનેસે હિતરૂપ

શીધી કહે છે—‘પુરિસા’ इत्यादि

હે પુરુષ ! = પરમપુરુષાર્થનું સાધન કરવામા સમર્થ અન્ય ! મગવાન તથા શરૂને સાક્ષી કરીને જે તમે ગ્રહણી—ધ્રુતચારિષ્ઠરૂપ ધર્મને અગીકાર કરવાવાળી, અને આસેવની—તેને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કરી છે તેને તમે સ્થપ્નમા પણ શૂલો નહિ તેનું અતઃકરણથી પાલન કરે અને ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ (ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી)નું સેવન કરે. જિનપ્રવચનની આજ્ઞાનુસાર જે પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી કુશળ બની જાય છે તે કુશળતાનું જો ફળ છે જે તે સંસારસમુદ્રથી પાર થઈ જાય છે, તેમજ આત્માના હિતકારી હોવાથી હિતરૂપ જ્ઞાનથી શુભોથી મુક્ત

પ્રમાદરહિતસ્ય મહર્ષેર્ગુણા ઉક્તાઃ, અથ પ્રમાદવતો દોષાન્ દર્શયિતુમાહ-
'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

સૂત્રમ્—દુહઓ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાણણપૂયણાણ, જંસિ
એગે પમાયંતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

છાયા—દ્વિહતો જીવિતસ્ય પરિવંદનમાનનપૂજનાર્થ, યસ્મિન્ એકે પ્રમાદ્યન્તિ ॥

ટીકા—દ્વિહતઃ=દ્વાભ્યાં રાગદ્વેષાભ્યાં હતઃ રાગદ્વેષવશીભતઃ જીવિતસ્ય=ચપ-
લાવિલાસચત્રલસ્ય ક્ષણમહ્દુર્ગુરસ્ય જીવનસ્ય, સુખાર્થ, તથા પરિવંદનમાનનપૂજ-
નાર્થ—પરિવંદનં=સંસ્તવઃ, યથા—'શ્રીમાન્ આયુષ્માન્ ભવે'—ત્યાદિ, તદર્થ, તથા
માનનં=જનસત્કારઃ, યથા—'અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિર્મિર્જના માં માનયિષ્યન્તી'—તિ
તદર્થ, તથા પૂજનં, યથા—'સમુપાર્જિતગ્રામજનપદસ્ય મમ દાનમાનપ્રણામસેવાદિભિ-
ર્જનાઃ પૂજન કરિષ્યન્તી'—તિ, તદર્થ પ્રાણાતિપાતાદિષુ પ્રવર્તતે । એવમ્—એકે=યે કે

જ્ઞાનાદિ ગુણોસે યુક્ત વહ સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કર શુભ
એવં તીર્થદ્વરાદિદ્વારા દૃષ્ટ એસે મુક્તિસ્થાનકા દર્શક હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમેં પ્રમાદરહિત મહર્ષિકે ગુણોંકા કથન કિયા હૈ, અવ પ્રમા-
દસંપન્ન પ્રાણીકે દોષોંકો દિશ્વલાતે હૈ—'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

જો મનુષ્ય, રાગ એવં દ્વેષ, ઇન દોનોંસે યુક્ત હૈ વહ વિજલીકે ચમકારે કે
સમાન ક્ષણમંગુર ઇસ જીવનકો સુખી કરનેકે લિયે 'આપ લક્ષ્મીવાન્ હોં,
ચિરંજીવી હોં' ઇત્યાદિ રૂપસે અપની સ્તુતિ કરાનેકે લિયે, 'લોગ મુઝે દેશ્વ
કર સ્વહે હોંગે, આસનાદિકકે પ્રદાનસે મેરા સન્માન કરેંગે' ઇસ પ્રકાર
અન્ય જનોંસે સત્કાર પ્રાસિકે લિયે, તથા 'મુઝે ગ્રામાધિપતિ યા નગરાધિ-
પતિ દાન, માન, પ્રણામ ઓર સેવા—શુશ્રૂષા આદિસે પ્રતિષ્ઠિત કરેંગે' ઇસ
પ્રકાર અપની પૂજાકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોંમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

તે સયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરી શુભ તેમજ તીર્થદ્વરાદિદ્વારા દૃષ્ટ
એવા મુક્તિસ્થાનના દર્શક બને છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમા પ્રમાદરહિત મહર્ષિના ગુણોનુ કથન કરેલ છે, હવે પ્રમાદ-
સંપન્ન પ્રાણીના દોષો કહે છે—'દુહઓ' ઇત્યાદિ

જે મનુષ્ય રાગ અને દ્વેષ, એ બન્નેથી યુક્ત છે તે વીજળીના ચમકારા સમાન
ક્ષણભંગુર આ જીવનને સુખી કરવા માટે 'તમે લક્ષ્મીવાન્ થાઓ ચિરંજીવી થાઓ'
ઇત્યાદિ રૂપથી પોતાની સ્તુતિ કરાવવા માટે, તથા 'લોક મને દેખીને ઉભા થશે, આસ-
નાદિકના પ્રદાનથી માફ સન્માન કરશે' આ પ્રકારે અન્ય જનોથી સત્કાર પ્રાપ્તિ માટે, તથા
'મને ગ્રામાધિપતિ અગર નગરાધિપતિ દાન, માન, પ્રણામ અને સેવા—શુશ્રૂષા આદિથી
પ્રતિષ્ઠિત કરશે.' આ પ્રકારે પોતાની પૂજા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોમા પ્રવૃત્તિ

ધન રાગદ્વેષામિમૂઠા* અસંયમરતા* સ્વાર્થે પરાર્થે વા યસ્મિન્=પરિચન્દનાદૌ પ્રમાણતિ= આર્તરૌદ્રધ્યાનભગ્નેન ચેતસા પરિચન્દનાદિરૂપસાવધવ્યાપારેણ પ્રવૃત્તિરૂપે પ્રમાણે કુર્વન્તિ । એ પ્રમાદકારિણઃ સ્વલ્લ નિજાત્મનો દુઃસ્ને ન સ્પર્શયન્તિ; કિન્તુ કર્મોપચયેન સ્વાત્માને દુઃસ્વાર્ણવે નિપાતયન્તીતિ શાષઃ । યદ્વા-‘પમોયતિ’ इति पाठपक्षे ‘प्रमो दते’ इति व्याप्ता । तस्यायमर्थः - ‘असि’ यस्मिन् परिचन्दनादौ ‘एग’ एके= केचित् प्रमाद-ते=इष्यन्ति-इयं प्राप्नुवन्ति, न तत्तस्य हितायति भावः ॥ सू० १४॥ एतत्प्रतिपक्षभूतस्तत्प्रमादी यत् फलं प्राप्नोति तदाह-‘सहिओ’ इत्यादि ।

इस प्रकारकी चाहनावाले जो कोई भी मुनि हैं वे राग और द्वेषसे युक्त हैं और असंयममें आसक्त हैं । ऐसे प्राणी स्वार्थ अथवा परमार्थका कुछ भी ख्याल न कर मिरफ अपनी ख्यातिलाम पूजादिककी चाहनाके आधीन हो आर्ष और रौद्र ध्यानमें संलग्नबिस्त रहा करते हैं और सावध व्यापारोंमें प्रवृत्ति करनेरूप प्रमादका सेवन करते रहते हैं । ये प्रमादकारी प्राणी निश्चित ही अपनी आत्माके दुःस्वोको दूर न कर प्रत्युत कर्मोंके संबन्धसे स्वयं अपनी आत्माको दुःस्वरूपी समुद्रमें फकेलते हैं । अथवा सूत्रमें ‘प्रमायति’ के स्थानमें कहीं ‘पमोयति’ ऐसा भी पाठ है । उसका अर्थ इस प्रकार होता है-जिस परिचन्दन आदिमें कितनेक प्राणी हर्ष मनाते हैं किन्तु वह उसकी आत्मा के हितके लिये नहीं होता ॥ सू० १४॥ इससे भिन्न प्रवृत्ति करनेवाला अप्रमादी मुनि जिस फलको पाता है वह दिम्बलाते हैं-‘सहिओ’ इत्यादि ।

કરે છે આ પ્રકારની આહનાવાળા એ કોઈ મુનિ છે તે શમ અને દ્વેષથી મુક્ત છે અને અસંયમમાં આસક્ત છે । એવા પ્રાણી સ્વાર્થે અથવા પરાર્થને જત પણ ખ્યાલ કરતા નથી, ફક્ત પોતાની ખ્યાતિલાભ અને પૂજારીની આહનાને આધીન થઈ આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનમાં સંલગ્નબિસ્ત રહ્યા કરે છે, અને સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ કરવારૂપ પ્રમાદનું સેવન કરતા રહે છે એ પ્રમાદકારી પ્રાણી નિશ્ચિત જ પોતાના આત્માને દુઃખરૂપી સમુદ્રમાં નાંખે । અથવા સૂત્રમાં ‘પ્રમાયતિ’ ના સ્થાનમાં ક્યાંક ‘પમોયતિ’ એવો પણ પાઠ છે, તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે-એ પરિવશ આદિમાં ફેટલાઈ પ્રાણી હર્ષ મનાવે છે, પણ તે તેના આત્માના હિત માટે હોતુ નથી ॥ સૂ० ૧૪ ॥

તેનાથી ભિન્ન પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમાદી મુનિ એ ફળને ધમે છે તે બતાવે છે-‘સહિઓ’ ઇત્યાદિ.

मूलम्--सहिओ दुःखमच्चत्ताए पुटो नो झंझाएति, पासिमं
दविए लो गालोगपवंचाओ मुच्चइ-त्तिवेमि ॥ सू० १५ ॥

छाया—सहितो दुःखमात्रया स्पृष्टः न झञ्झायति, पश्येमं द्रविको लोकाऽऽलोक-
प्रपञ्चान्मुच्यते—इति ब्रवीमि ॥ सू० १५॥

टीका—सहितः=ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, दुःखमात्रया शीतोष्णपरीषदसमुत्पन्नया
व्याध्युपसर्गजनितया वाऽल्पया महत्या वा स्पृष्टो सन् न झञ्झायति—न व्याकुलीभवति,
कषायं न कुर्यादित्यर्थः । किंच—हे शिष्य ! इमं=वक्ष्यमाणमर्थं, यद्वा—इममुक्तमर्थं
'संघिं लोगस्स जाणित्ता' इत्यारभ्य 'णो झंझाएति' इत्यन्तेन प्रतिबोधितं,
पश्य=हेयोपादेयविवेकेन सम्यग् जानीहि । तमेवार्थं दर्शयितुमाह—'द्रविक'

ज्ञान एवं चारित्रसंपन्न संयमी मुनि शीत-उष्ण परीषहसे उत्पन्न
अथवा कोई व्याधि या उपसर्गसे जनित दुःखकी थोड़ी या बहुत मात्रासे
स्पृष्ट होता हुआ भी कभी भी आकुलितचित्त नहीं होता है । इस लिये
हे शिष्य ! इस आगे कहे जानेवाले अर्थको अथवा "संघिं लोगस्स"
यहां से लगाकर "णो झंझाएति" यहां तक जो कुछ अभी तक अर्थ
प्रकट किया गया है उसको हेय और उपादेयके विवेकसे वासितअन्तः-
करण हो तुम पूर्णरूपसे अपने ध्यानमें रखो । "संघिं लोगस्स" यहांसे
प्रारंभकर "णो झंझाएति" यहां तक जो कुछ भी विषय कहा गया है
उसका निचोड़ अर्थ यही है कि—रागद्वेषसे रहित मुनि चौदह (१४)
राजुप्रमाण इस लोकमें प्रत्यक्षसे दिखते हुए चतुर्गति में भ्रमणरूप
व्यवहारसे सदाके लिये मुक्त हो जाता है ।

ज्ञान अने चारित्र—स पन्न सयमी मुनि, शीत, उष्ण परीषदथी उत्पन्न थयेल,
अथवा केह व्याधि अगर उपसर्गथी जनित थोड़ी अगर वधारेहुःअनी मात्राथी
स्पृष्ट अनवा छता पणु कटि पणु आकुलितचित्त नथी थता. माटे छे शिष्य !
आगण कडेवाभा आवशे ते अर्थने अथवा "संघिं लोगस्स" अर्द्धायाथी
लधने 'णो झंझाएति' त्या सुधी ने कछ अत्यार सुधी अर्थ प्रगट करेल
छे तेने हेय अने उपादेयना विवेकथी वासितअत करणु अनी तमे पूर्णरूपथी
पोताना ध्यानमां राखे "संघिं लोगस्स" त्याथी प्रारंभ करी "णो झंझाएति"
त्या सुधी ने कछ पणु विषय कडेवाभा आवेल छे तेने निचोड अर्थ अछे
के—रागद्वेषथी रहित मुनि चौदह (१४) राजु प्रमाण आ लोकमा प्रत्यक्षथी देखाता
चतुर्गतिमा भ्रमणरूप व्यवहारथी सदाने माटे भ्रमण शर्म लागे छे

इत्यादि। द्रविषः=रागद्वेषविनिर्मुक्तः मुनिरित्यर्थः, लोकाऽऽशोकप्रपञ्चात् चतुर्वर्ग-
रज्ज्वात्मफलोक्ते आलोकात्=इत्यमानात् प्रपञ्चात्=चतुर्गतिभ्रमणरूपाद् व्यवहाराद्
मुच्यते=मुक्तो भवतीत्यर्थः। 'इति ब्रवीमि' अस्य व्याख्यानं प्राग्वत् ॥ सू० १५॥
॥ तृतीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः संपूर्णः ॥ ३-३ ॥

भावार्थ—“संघि लोगस्स” इस सूत्रसे लगाकर “जो झझाएति”
यहां तक मुनिके सम्बन्धमें जो कुछ सूत्रकारने प्रकट किया है उस पर
वह मुनि यदि हृदयकी लगनसे प्रवृत्तियुक्त होता है तो यह निश्चित है
कि वह अवश्य ही राग और द्वेषसे रहित होता हुआ इस चौदह (१४)
राजू प्रमाण लोकमें चारों गतियोंके भ्रमणसे मुक्त हो जाता है। ‘तिवेमि’
इति ब्रवीमि, इस पदका व्याख्यान पहिलेके समान है ॥ सू० १५ ॥
॥ तृतीय अध्ययनका तृतीय उद्देश समाप्त ॥ ३-३ ॥

भावार्थ — ‘संघि लोगस्स’ के सूत्रकी लगावी ‘जो झझाएति’ त्या
મુખી મુનિના સંબંધમાં જે કાંઈ સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે તે ઉપર તે મુનિ
જે હૃદયના ભાવથી પ્રવૃત્તિયુક્ત થાય છે તેા જો નિશ્ચિત છે કે તે અવશ્ય જ
રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને આ ચૌદ (૧૪) રાજૂ પ્રમાણલોકમાં ચાર ગતિ-
ઓના ભ્રમણથી મુક્ત થઈ જાય છે ‘તિવેમિ’ इति ब्रवीमि—આ પદનું વ્યાખ્યાન
પહેલા સમાન છે ॥ સૂ० ૧૫ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

। તૃતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થ ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके “न केवलं पापकर्मानाचरणेन मुनिर्भवति, किंतु-
अप्रमादशुभभावनापूर्वकसंयमानुष्ठानादेवे”-ति प्रतिबोधितं, तत्र शुभभावना=शुभा-
ध्यवसायः, स च कषायवमनाद् भवति । तस्माद् वान्तवत् कषायास्त्याज्या इति
बोधयितुं चतुर्थमुद्देशकं कथयन्नाद्यं सूत्रमाह ‘से वंता’ इत्यादि ।

यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मे जागरूको वैरोपरतः सन् जातिं वृद्धिं च विदित्वा
निष्कर्मदर्शी यो लोकालोकप्रपञ्चात् प्रमुच्यते, स पुनरेवं प्रमुच्यते इति बोधयितुमाह-
‘से वंता’ इत्यादि ।

તૃતીય અધ્યયનકા ચતુર્થ ઉદ્દેશ ।

ત્રીસરે અધ્યયનકે ત્રીસરે ઉદ્દેશમેં “કેવલ પાપકર્મકે નહીં કરનેસે
મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમકે
અનુષ્ઠાનસે હી મુનિ-અવસ્થા પ્રાપ્ત હોતી હૈ ” યહ વિષય સમઘાયા ગયા
હૈ । અવ-“શુભભાવના શુભઅધ્યવસાયરૂપ હૈ । ડસ શુભઅધ્યવ-
સાયકી પ્રાપ્તિ કષાયોંકે ત્યાગસે હી હોતી હૈ” । ઇસલિયે “વાન્ત-વમન
કિયે હુઅ અન્નકી તરહ કષાય છોડને યોગ્ય હૈ” - ઇસ વિષય કો સમ-
ઝાનેકે લિયે ઇસ ચતુર્થ ઉદ્દેશકકી પ્રરૂપણા કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈ-
‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમેં જાગરૂક સંયમી વૈરસે રહિત
હોકર તથા જન્મ ઓર બાલ્યાદિ-અવસ્થાઓંકો દુઃખસહભાવિની જાન કર
નિષ્કર્મદર્શી હોતા હૈ વહ લોગ મેં દ્રશ્યમાન ચતુર્ગતિયોં મેં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચ

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમાં “કેવલ પાપ કર્મ નહિ કરવાથી મુનિ
થતાં નથી પણ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમના અનુષ્ઠાનથી જ મુનિ
અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે” આ વિષય સમજાવવામાં આવેલ છે હવે શુભ ભાવના
શુભ અધ્યવસાયરૂપ છે તે શુભ અધ્યવસાયની પ્રાપ્તિ કષાયોના ત્યાગથી થાય છે.
માટે વાન્ત-વમન કરેલા અન્નની માફક કષાય છોડવા યોગ્ય છે આ વિષયને સમ-
જાવવા માટે આ ચોથા ઉદ્દેશની પ્રરૂપણા કરતા સૂત્રકાર કહે છે-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક સંયમી વૈરથી રહિત બનીને
તથા જન્મ અને બાલ્યાદિ અવસ્થાઓને હું ખસડેલાવિની જાણીને નિષ્કર્મદર્શી
થાય છે તે લોકમાં દ્રશ્યમાન ચતુર્ગતિયોમાં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચથી છુટી બાય છે.

મૂલમ—સે વતા કોહ ચ માણ ચ માય ચ લોભ ચ, યય પાસગસ્સ
દસણ, ઉવરયસત્થસ્સ પલિયતકરસ્સ, આયાણ સગઢઞ્ચિ ॥સૂ.૦૧॥

છાયા—સ ધમિતા ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ । एतत् पश्यकस्य दर्शनं
उपरतसखस्य पर्यन्तकरस्य, आदानं स्वकृतमित् ॥મૂ. ૧॥

ટીકા—સ=શુમાધ્યવસાયપૂર્વકસંયમમારાધનાયનઃ ધમજ, ક્રોધં માનં
માયાં લોભં ચ ધમિતા=અપનેતા મવતિ । अत्रैकपदेन क्रोधमानमायालोभानिति
वक्तव्ये पृथक् पृथग्पादानमेकैकस्य क्रोधादेरनन्तानुषन्ध्यादिभेदेन चतुर्विधत्वं
दर्शयति । तेषामुपशमो युगपथ संभवति, तस्मादेकैकस्योपशमार्थं पृथक् पृथक् प्रयत्नो

સે છૂટ જાતા હૈ । ये सष पाते तीसरे उद्देशकके अन्तिम सूत्रोर्मि प्रकट कर
दी गई हैं । परन्तु यह छूटता कैसे है ? सो कहते हैं—‘से वता’ इत्यादि।

શુમઅધ્યવસાયપૂર્વક સંયમકી આરાધનામે તત્પર અમણ-મુનિ
ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભકા ધમિતા-અપનેતા-નાશક હોતા હૈ ।

મૂલમે “ક્રોધં માનં માયાં લોભં” इस प्रकार इन द्वितीयान्त पदोंका
अलग अलग स्वतंत्र प्रयोग किया गया है, उसका कारण क्रोधादिकोर्मि
एकएकके अनन्तानुषन्धी आदिके भेदसे चार-चार भेदों को दिखाना है ।

અર્થાત્-સમાસ કરને પર-“ક્રોધમાનમાયાલોભાન્”-એસા એક પદ થન
જાતા હૈ, ફિર મી इस एक पदका प्रयोग न कर जो प्रत्येक पद सूत्रमें स्वतन्त्र
विभक्तिवाले रखे हैं उसका कारण क्रोध आदि, अनन्तानुषन्धी अप्रत्या-
ख्यान, प्रत्याख्यानावरण एव संजवलनके भेदसे चार २ प्रकारके हैं, यह
बतलाना है । तथा इनका उपशम एक साथ एक ही जगह नहीं होता है किन्तु

જે સુધળી વાતો ત્રીજા ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રમાં તથા આ ઉદ્દેશના અન્ય સૂત્રમાં
પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે પરન્તુ તે છુટે છે કેવી રીતે ? તે કહે છે—સે વતા ઈત્યાદિ

શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક સુધમની આરાધનામાં તત્પર અમણ-મુનિ ક્રોધ,
માન, માયા અને લોભના ધમિતા-અપનેતા-નાશક બને છે

સૂત્રમાં “ક્રોધ, માન માયા લોભ” આ પ્રકારે આ દ્વિતીયાન્ત પદોના અલગ
અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કરેલ છે તેનું કારણ ક્રોધાદિકોમાં એક-એકના અનન્તાનુષન્ધી
આદિના ભેદથી ચાર ચાર ભેદ બતાવવાના છે અર્થાત્ સમાસ કરવાથી “ક્રોધમાન-
માયાલોભાન્” જેવું એક પદ બને છે તે પછી આ એક પદનો પ્રયોગ ન કરીને
જે પ્રત્યેક પદ સૂત્રમાં સ્વતંત્ર વિભક્તિવાળા રાખેલ છે તેનું કારણ ક્રોધ અદિ-
અનન્તાનુષન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને સંજવલનના ભેદથી ચાર ચાર
પ્રકારે છે તે બતાવવાનું છે તથા તેના ઉપશમ એક સાથે એક જ જગ્યા ઉપર

વિધેય इति भावः । किं च-परमार्थतो मुनित्वं क्रोधादिकषायवमनादेव संपद्यते, नान्यथेति स्वबुद्ध्या नाहं कथयामि । किंतु तीर्थंकरस्य श्रीवर्धमानस्वामिनो निरावरणज्ञानत्वाद् दृष्टिपथावतीर्णमिति बोधयितुमाह-‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इत्यादि । एतत्=यदुक्तं क्रोधादिवमनकर्ता मुनिर्भवतीति, तदेतत् पश्यकस्य=पश्यति निरावरणज्ञानत्वाद् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकस्तीर्थंकरः श्रीवर्धमानस्वामी, तस्य दर्शनम्=केवलालोकेनावलोकनम्, तदुपदेशान्मया ज्ञातमेतदिति भावः ।

भिन्न ૨ समयमें भिन्न ૨ गुणस्थानोंमें होता है । इस कारण इनके प्रत्येक का उपशम करनेके लिये पृथक्-पृथक्-रूपसे प्रयत्न करना पड़ता है । इस समस्त अभिप्रायको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रमें क्रोधादिक पदोंको असमा-सरूपसे स्वतन्त्र विभक्तिमें रखा है ।

તથા-પરમાર્થ દૃષ્ટિસે મુનિપના ક્રોધાદિકષાયોંંકા નિગ્રહ કરનેસે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, અન્ય રીતિસે નહીં । ઇસ વાતકો સુધર્મા સ્વામી કહતે હૈ-હે જમ્બૂ ! મૈં અપની નિજી કલ્પનાસે નહીં કહતા હૂં કિન્તુ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીને કિ જિનકા જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ ઇસ વાતકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ, અતઃ ઉન્હીંકે કથનાનુસાર કહતા હૂં । ઇસ અપને અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં-“અયં પાસગસ્સ દંસણં” પદ રખા હૈ । ક્રોધાદિક કષાયોંંકા વમન કરનેવાલા હી મુનિ હોતા હૈ, યહ સિદ્ધાન્ત ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામીકા હૈ । “પશ્યતિ=નિરાવરણજ્ઞાનત્વાત્ જાનાતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ” નિરાવરણજ્ઞાનશાલી હોને સે જો સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પદાર્થોંંકો

થતો નથી પણ ભિન્ન ભિન્ન સમયમા ભિન્ન ભિન્ન ગુણસ્થાનોમા થાય છે આથી પ્રત્યેકના ઉપશમ કરવા માટે પૃથક્-પૃથક્-રૂપથી પ્રયત્ન કરવો પડે છે આ તેમાંના સમસ્ત અભિપ્રાયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રમા ક્રોધાદિક પદોને અસમાસ-રૂપથી સ્વતંત્ર વિભક્તિમા રાખેલ છે.

અને પરમાર્થ દૃષ્ટિથી મુનિપણું ક્રોધાદિક કષાયોના નિગ્રહ કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. અન્ય રીતિથી નહિ આ વાત માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે-હે જમ્બૂ ! મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી આ કહ્યું નથી પણ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામી કે જેનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે તેમણે આ વાતનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે, માટે તેમના કથનાનુસાર કહું છું આ પોતાના અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમા-“અયં પાસગસ્સ દંસણં” પદ રાખેલ છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરનારા જ મુનિ બને છે એ સિદ્ધાન્ત ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીનો છે “પશ્યતિ-નિરાવરણજ્ઞાનત્વાત્ જાનાતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ” નિરાવરણજ્ઞાનશાળી હોવાથી જે સમસ્ત

પદ્યકસ્ય વિશેષણમાહ—‘ઉપરતશ્ચક્ષસ્ય’ इत्यादि । ઉપરતશ્ચક્ષસ્ય=ઉપરત્—અપ-
ગતં દ્રવ્યશ્ચક્ષં સ્વરૂપાદિ, માવશક્ષં કપાયર્ક્યં ચ યસ્માત્ સકાશાત્ સ ઉપરતશ્ચ-
ક્ષસ્ય, અર્થં ભાષાઃ—ક્રોધાદિકપાયવમનમન્તરેણ તીર્યકરસ્યાપિ સર્વપદાર્થાવમાસર્ક
નિરાવરણજ્ઞાનં ન મવતિ, ઈર્ષં તદુપદેશાનુસારિણાઽન્યેન મુમુક્ષુષાઽપિ ક્રોધાદિકપા-
યવમનં કરણીયમિતિ । અપરવિશેષણમાહ—‘પર્યન્તકરસ્ય’ इति । પર્યન્તં=સર્વથા
વિનાશં કર્મણાં કરોતિ તચ્છીલમેતિ પર્યન્તકરસસ્યૈતદ્ વર્ણનમિતિ સમ્બન્ધઃ ।

યુગપત્—એકસાથ—જાનતે હું એ પદ્યક હું, પદ્યકો હી પદ્યક કહતે હું ।
‘પદ્યક’ શબ્દ તીર્થક્ષર વર્ધમાન સ્વામીના વાચક હૈ । કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોક
(પ્રકાશ) સે દેવ્યનેકા નામ વર્ણન હૈ । મગધાનને યહ સમસ્ત વિષય
અપને કેવલજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશસે પ્રત્યક્ષ દેખ્યા હૈ । શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે
હૈં કિં ઉન્નીંકે ઉપદેશસે હસકો મૈને જાના હૈ અતઃ હસમેં અન્યધાપનકી
આશક્ત હો હી નહીં સક્તી હૈ । મગધાનકા જ્ઞાન નિરાવરણ કૈસે જુઝા ?
હસ પાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ‘ઉપરતશ્ચક્ષસ્ય’ હસ વિશેષણ
કા પ્રયોગ કરતે હૈં । શક્ત દો પ્રકારકે હૈં—(૧) દ્રવ્યશક્ત ઓર (૨)
ભાવશક્ત । તલવાર આદિ દ્રવ્યશક્ત હૈં । ક્રોધાદિક કપાય ભાવશક્ત
હૈં । જામ તક આત્માસે ભાવશક્તોંકા અમાશ-ઉચ્છેદ નહીં હોતા હૈ તજ
તક જ્ઞાનમેં નિરાવરણતા નહીં આ સક્તી । મગધાન વર્ધમાન સ્વામીને
હનકા અપની આત્માસે સર્વથા ચિનાશ કર દિયા હૈ, હસીલિયે હનકા
જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ । દ્રવ્યશક્ત ઓર ભાવશક્ત જિસસે સર્વથા દૂર હો ચુકે

ત્રિજાળવર્તી પદ્યકેનિ યુગપત્—એક સાથે બાણે છે તે પદ્યક છે. પદ્યકને જ પદ્યક
કહેવામાં આવે છે. ‘પદ્યક’ શબ્દ તીર્થક્ષર વર્ધમાન સ્વામીના વાચક છે.
કેવળજ્ઞાનરૂપી આલોક (પ્રકાશ) શ્રી દેવવાનુ નામ ઈશ્વર છે. મગધાને આ
સમસ્ત વિષય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રત્યક્ષ દેખેલ છે. શ્રી સુધર્મા
સ્વામી કહે છે કે “તેમના ઉપદેશથી તે જ્ઞાન એ બાણેલ છે. મારે તેમાં અન્યથા-
પડ્યાની આશંકા બની શકતી જ નથી. મગધાનનું જ્ઞાન નિરાવરણ કેવી રીતે થયું ?
આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર ઉપરતશ્ચક્ષસ્ય આ વિશેષણનો પ્રયોગ
કરે છે. શક્ત બે પ્રકારના છે (૧) દ્રવ્યશક્ત અને (૨) ભાવશક્ત. તલવાર આદિ
દ્રવ્યશક્ત છે. ક્રોધાદિક કપાય ભાવશક્ત છે. જ્યાં સુધી આત્માથી ભાવશક્તોનો
અભાવ-ઉચ્છેદ નથી થતો ત્યાં સુધી જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા અગતી શકતી નથી.
મગધાન વર્ધમાન સ્વામીએ પોતાના આત્માથી તેને સર્વથા ચિનાશ કરી
નાખેલ છે. મારે તેમનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. દ્રવ્યશક્ત અને ભાવશક્ત જેનાથી

યથા તીર્થંકરઃ કષાયશસ્ત્રવિનિવર્તનાત્ સકલકર્મણાં ક્ષપયિતા, એવમન્યોઽપિ તદુપદેશાનુસારી ભવ્યો ભવતીત્યાહ—‘આદાનમ્’ इत्यादि। આદાનમ્=આદીયતે =ગૃહ્યતે-આત્મપ્રદેશૈઃ સહ શ્લિષ્યતેઽષ્ટવિધં કર્મ યેન તદાદાનમષ્ટાદશપાપસ્થાનમ્, તત્સ્થિતિહેતુત્વાત્ કષાયા વાઽઽદાનં તદ્વમિતા સ્વકૃતભિદ્ ભવતિ। યઃ સ્વલુ કર્મ-ણામાદાનં કષાયાદિ નિરાકરોતિ, સ સ્વકૃતકર્મણાં મેત્તા ભવતીત્યર્થઃ ॥ મૂ૦૧ ॥

हैं उसका नाम उपरतशस्त्र है। जब तक आत्मासे कषायोंका वमन नहीं होगा तब तक, चाहे वे कोई भी क्यों न हों; निरावरणशाली नहीं हो सकते। ज्ञानमें जब तक निरावरणता नहीं आती है तब तक किसी भी पदार्थका साक्षात्कार नहीं हो सकता है। अतः समस्त पदार्थोंको हस्तामलकवत् प्रकट करनेवाला ज्ञान सर्वज्ञको कषायोंके वमनसे ही प्राप्त होता है। जब यह सिद्धांत निश्चित है तो उन्हींके उपदेशानुसार प्रवृत्ति करनेवालेअन्य मोक्षामिलाषीजनको भी क्रोधादिक कषायोंका वमन करना आवश्यक है। क्रोधादिक कषायोंके वमन किये बिना ज्ञानमें निरावरणता नहीं आती है। इसकी पुष्टि—‘पलियंतकरस्स-पर्यन्तकरस्य’ इस पदसे करते हैं। यद्यपि यह पद षष्ठ्यन्त है और पश्यकके विशेषणरूपसे ही प्रयुक्त हुआ है, परन्तु यह इस बातकी घोषणा करता है कि तीर्थङ्कर कषायरूप भाव-शस्त्रोंके नाशसे ही सकल कर्मोंके नाशक हुए हैं। अतः क्रोधादिक कषायोंका नाश सकल कर्मोंके नाश होनेसे तथा घातियाके नाशमें एवं केवलज्ञानरूपी निरावरण ज्ञानकी प्राप्तिमें कारण है। इस प्रकार परम्परासम्ब-

સર્વથા દૂર થઈ ચૂકેલ છે તેનું નામ ઉપરતશસ્ત્ર છે, જ્યાં સુધી આત્માથી કષાયોનું વમન નહિ થાય ત્યાં સુધી, ભલે તેઓ કોઈ પણ કેમ ન હોય, નિરાવરણજ્ઞાનશાળી બની શકતા નથી જ્ઞાનમાં જ્યાં સુધી નિરાવરણતા નથી આવતી ત્યાં સુધી કોઈ પણ પદાર્થનો સાક્ષાત્કાર થતો નથી માટે સમસ્ત પદાર્થોને હસ્તામલકવત્ પ્રગટ કરવાવાળું જ્ઞાન સર્વજ્ઞને કષાયોના વમનથી જ પ્રાપ્ત થાય છે જ્યારે આ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત છે તો તેના ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અન્ય મોક્ષામિલાષીજનને પણ ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરવું આવશ્યક છે ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કર્યા વગર જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવતી નથી તેની પુષ્ટિ ‘પલિયંતકરસ્સ-પર્યન્તકરસ્ય’ આ પદથી કરે છે, જે કે આ પદ ષષ્ઠ્યન્ત છે, અને પશ્યકના વિશેષણરૂપથી જ પ્રયુક્ત થયેલ છે તો પણ આ એ વાતની ઘોષણા કરે છે કે તીર્થંકર કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રોના નાશથી જ સકળ કર્મોના નાશક બનેલ છે માટે ક્રોધાદિક કષાયોનો નાશ સકળ કર્મોનો નાશમાં તથા ઘાતિયાના નાશમાં તેમજ કેવળજ્ઞાનરૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં કારણ છે આ પ્રકારે પરપરા-સબધથી કષાયોનું

મૂલમ્—જે એગં જાણઈ સે સઠ્ઠં જાણઈ, જે સઠ્ઠં જાણઈ
સે એગં જાણઈ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—ય એકં જાનાતિ સ સર્વં જાનાતિ, યઃ સર્વં જાનાતિ સ એકં જાનાતિ ॥ સૂ. ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઓર ઉપાદેયકા ઉપદેશ દેતે હૈં ।
એતાવતા પરકે ઉપકારકે કર્તૃત્વસે ડનમેં તીર્થંકરપના ભલે હી આ જાવે
ઇસમેં હમેં કોઈ વિવાદ નહીં હૈં । પરન્તુ ઇસસે ડનમેં સર્વજ્ઞતા કૈસે સિદ્ધ
હો સકતી હૈં ? એસી શઙ્કા નહીં કરની ઑહિયે । કયોં કિ જબ તક આત્મા
મેં પદાર્થોંકા સમ્યગ્-વાસ્તવિક જ્ઞાન નહીં હો જાતા હૈં તબ તક તીર્થંકર
ભગવાન્ ઉપદેશ નહીં દેતે હૈં । જીવોંકો ઉપદેશ દેના સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્
કેવલજ્ઞાનકે આધીન હૈં । કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોનેપર ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત
પદાર્થોંકા વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમેં પ્રતિવિમ્બકી તરહ પ્રતિભાસિત હોને
લગતા હૈં । કેવલજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ હી સર્વજ્ઞતા હૈં । ઇસ સર્વજ્ઞતાકે વિના
એક પદાર્થકા ભી વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત નહીં હો સકતા હૈં । ઇસ વાત
કો સમજાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘જે એગં’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—યહ જો અભી કહા હૈં કિ—‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્
પચ્ચકસ્ય દર્શનમ્’ સો શિષ્ય યહાં પર યહ પ્રશ્ન કરતા હૈં કિ—સર્વજ્ઞ
કયા એક હી પદાર્થ કો જાનતા હૈં યા અનેક પદાર્થોંકો ?’ ઇસ પ્રકારકે
શિષ્યકે પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હૈં—‘જે એગં’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઓર ઉપાદેયકા ઉપદેશ આપે છે એતાવતા
બીજના ઉપકારના કર્તૃત્વથી તેમા તીર્થંકરપણુ ભલે આવી બધ તેમા અમને કોઈ
વિવાદ નથી, પરંતુ તેથી તેમા સર્વજ્ઞતા કેવી રીતે સિદ્ધ થાય છે ? એવી શંકા
કરવી બેઠીએ નહિ કારણ કે જ્યાં સુધી આત્મામા પદાર્થોંનુ સમ્યગ્-વાસ્તવિક
જ્ઞાન થતુ નથી ત્યાં સુધી તીર્થંકર ભગવાન્ ઉપદેશ આપતા નથી જીવોંકો ઉપ-
દેશ આપવો સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવળજ્ઞાનને આધીન છે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી
ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોંનુ વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમા પ્રતિબિંબની માફક પ્રતિ-
ભાસિત થવા માટે છે કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જ સર્વજ્ઞતા છે આ સર્વજ્ઞતા વિના એક
પણ પદાર્થોંનુ વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત થઈ શકતુ નથી આ વાતને સમજાવવા માટે
કહે છે—‘જે એગં’ ઇત્યાદિ

અથવા એ બે હમણા કહ્યું કે ‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્ પચ્ચકસ્ય દર્શનમ્’
જેથી શિષ્ય આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન કરે છે કે—સર્વજ્ઞ શુ એક જ પદાર્થને બોલે છે કે
અનેક પદાર્થોંને ? આ પ્રકારના શિષ્યના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ‘જે એગં’ ઇત્યાદિ.

नन्वस्तु हेयोपादेयोपदेशेन परोपकारकरणात् तीर्थकरत्वम्, कथमेतावता सर्वज्ञता तस्येति चेन्न, यत् सम्यग्ज्ञानरहितो ययोचितं हेयोपादेयोपदेशं कर्तुं न प्रभवति, यथानस्थितैकपदार्थज्ञानमपि न भवति सर्वज्ञतामन्तरेणेति प्रतिबोध्यपि तु माह—‘जे एगं’ इत्यादि ।

यद्वा—ननु ‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इति यदुक्तं तत्र स पश्यकः किमे कमेव पदार्थं जानाति, आहास्वित्—अनेकम् ? इति शिष्यजिज्ञासामाह—‘जे एगं’ इत्यादि ।

नचसे कपायोंका वमन निराकरण ज्ञानका उत्पादक माना जाता है । जो सकल कर्मोंका विनाश करता है, अथवा कर्मोंके विनाश करनेका जिसका स्वभाव है उसका नाम—“पर्यन्तकर” है, उसका यह सिद्धान्त है । जैसे तीर्थङ्कर कपायशस्त्रकी निवृत्तिसे सकल कर्मोंके विनाशक हुए हैं वसी तरहसे उनके उपदेशानुसार अपनी प्रवृत्ति रम्बनेवाला अन्य भव्यजन भी सकल कर्मोंका विनाशक होता है । इसी अमिप्रायको प्रकट करनेके लिये सूत्रमें ‘आदानम्’ पद रखा है । आत्माके प्रवेशोंके साथ अष्टविध कर्म जिनसे दूध—पानीकी तरह एकत्रेप्रावगाहरूप होकर ठहरते हैं उनका नाम आदान है । ये अठारह पापस्थान हैं । अथवा कर्मोंमें स्थितिबन्धका कारण होनेसे कपायें भी आदान हैं, इनका वमन करनेवाला ‘सगडग्नि’ स्वकृतनिन्द—होता है, अर्थात् जो भव्य कर्मोंके आदानमूल कपायादिकोंका निराकरण—विनाश करता है वह अपने किये हुए कर्मोंका विनाशक होता है ॥ सू० १ ॥

वमन निराकरण ज्ञाननु उत्पादक मानवार्थाभावे ॥ ७ ॥ सकल कर्मोंका विनाश करे ॥ अथवा कर्मोंका विनाश करनेका स्वभाव ॥ तेनु नाम “पर्यन्तकर” ॥ तेने के सिद्धांत ॥ ७ ॥ तीर्थङ्कर कपायशस्त्रकी निवृत्तिसे सकल कर्मोंका विनाशक ॥ ७ ॥ ते भाव ॥ तेना उपदेशानुसार पोतानी प्रवृत्ति शम्भवावाला अन्य भव्यजन पण सकल कर्मोंका विनाशक ॥ ७ ॥ अमिप्रायने प्रकट करने भागे सूत्रमा ‘आदानम्’ पद रमेल ॥ आत्माना प्रवेशोंकी साथ अष्टविध कर्मोंकेनाभी दूध—पानीकी भाव ॥ केहेवावगाहरूप ॥ ७ ॥ तेनु नाम आदान ॥ ते पठार पापस्थान ॥ ७ ॥ अथवा कर्मोंमें स्थितिबन्ध कारण होवाधी कपाये पण आदान ॥ तेनु वमन करनेवाला ‘सगडग्नि’—स्वकृतनिन्द भाव ॥ अर्थात् ॥ ७ ॥ भव्य कर्मोंका आदानमूल कपायादिकोंका निराकरण—विनाश करे ॥ ते पोताना करेला कर्मोंका विनाशक ॥ ७ ॥ सू० १ ॥

મૂલમ્—જે એગં જાણઇ સે સઠ્ઠં જાણઇ, જે સઠ્ઠં જાણઇ
સે એગં જાણઇ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ય એકં જાનાતિ સ સર્વ જાનાતિ, યઃ સર્વ જાનાતિ સ એકં જાનાતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઓર ઉપાદેયકા ઉપદેશ દેતે હૈં ।
એતાવતા પરકે ઉપકારકે કર્તૃત્વસે ડનમેં તીર્થંકરપના ભલે હી આ જાવે
હસમેં હમેં કોઈ વિવાદ નહીં હૈં । પરન્તુ હસસે ડનમેં સર્વજ્ઞતા કૈસે સિદ્ધ
હો સકતી હૈં ? એસી શઙ્કા નહીં કરની ઑહિયે । કયોં કિ જબ તક આત્મા
મેં પદાર્થોંકા સમ્યગ્-વાસ્તવિક જ્ઞાન નહીં હો જાતા હૈં તબ તક તીર્થંકર
ભગવાન્ ઉપદેશ નહીં દેતે હૈં । જીવોંકો ઉપદેશ દેના સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્
કેવલજ્ઞાનકે આધીન હૈં । કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોનેપર ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત
પદાર્થોંકા વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમેં પ્રતિવિમ્બકી તરહ પ્રતિભાસિત હોને
લગતા હૈં । કેવલજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ હી સર્વજ્ઞતા હૈં । હસ સર્વજ્ઞતાકે વિના
એક પદાર્થકા ભી વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત નહીં હો સકતા હૈં । હસ વાત
કો સમજ્ઞાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

અથવા—યહ જો અભી કહા હૈં કિ—‘એગં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્
પચ્ચકસ્ય દર્શનમ્’ સો શિષ્ય યહાં પર યહ પ્રશ્ન કરતા હૈં કિ—સર્વજ્ઞ
કયા એક હી પદાર્થ કો જાનતા હૈં યા અનેક પદાર્થોંકો ?’ હસ પ્રકારકે
શિષ્યકે પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હૈં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

તીર્થંકર ભગવાન જીવોને હેય અને ઉપાદેયનો ઉપદેશ આપે છે એતાવતા
બીજાના ઉપકારના કર્તૃત્વથી તેમા તીર્થંકરપણું ભલે આવી બધે તેમા અમને કોઈ
વિવાદ નથી, પરતુ તેથી તેમા સર્વજ્ઞતા કેવી રીતે સિદ્ધ થાય છે ? એવી શંકા
કરવી બેઠીએ નહિ કારણ કે બધાં સુધી આત્મામા પદાર્થોનું સમ્યગ્-વાસ્તવિક
જ્ઞાન થતુ નથી ત્યાં સુધી તીર્થંકર ભગવાન ઉપદેશ આપતા નથી જીવોને ઉપ-
દેશ આપવો સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવળજ્ઞાનને આધીન છે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી
ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમા પ્રતિબિંબની માફક પ્રતિ-
ભાસિત થવા માટે છે કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જ સર્વજ્ઞતા છે આ સર્વજ્ઞતા વિના એક
પણુ પદાર્થનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત થઈ શકતુ નથી આ વાતને સમજાવવા માટે
કહે છે—‘જે એગં’ હત્યાદિ

અથવા એ જો હમણા કહ્યું કે ‘એગં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્ પચ્ચકસ્ય દર્શનમ્’
જેથી શિષ્ય આ ઠંકાણું એ પ્રશ્ન કરે છે કે—સર્વજ્ઞ શુ એક જ પદાર્થને બોલ્યું છે કે
અનેક પદાર્થોને ? આ પ્રકારના શિષ્યના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ‘જે એગં’ હત્યાદિ.

ટીકા-યઃ એકઃ—જીવદ્રવ્યમ્ અજીવદ્રવ્યં યા દ્રવ્યલેખકાસમાવતઃ, અતીતાનાગ-
તવર્તમાનૈઃ સર્વપર્યાયૈશ્ચ જાનાતિ, સ સર્વં જાનાતિ । સકલપદાર્થસમ્યક્જ્ઞાનમન્તરેભૈ
કસ્ય કસ્યચિત્ પદાર્થસ્ય દ્રવ્યલેખાદિનાઽતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયતથા જ્ઞાનં ન
સંમવતીતિ માત્રઃ । ઇમમેષાર્યં બોધયિતું કાર્યકારણમાર્થં પ્રવર્ણયમાહ—‘ યઃ સર્વે
જાનાતિ ’ ઇત્યાદિ । યઃ સર્વે—લોકાન્તર્વર્તિ સકલં પદાર્થજ્ઞાનં જાનાતિ, સ એકં
દ્રવ્યં ઘટાદિકં જાનાતિ । અતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયૈસ્તત્તત્સમાવધાસ્માજ્ઞા-

જો એક જીવ દ્રવ્યકો, અથવા અજીવ દ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર
ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઓર વર્તમાનકાલ-સમ્યન્ધી પર્યાયોસે યુક્ત
જાનતા હૈ બહુ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ । સમસ્ત પદાર્થોં કે સમ્ય
જ્ઞાન હુએ વિના કોઈ એક બિચક્ષિત પદાર્થ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવસે
એવં અતીત અનાગત ઓર વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોં સે નહીં જાના જા સક્તા
હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો સમજાનેકે લિયે કાર્યકારણભાવ વિસ્તારાતે હુએ
સૂચકાર કહતે હૈ—‘ જે સમ્ય જાણહ ’ ‘ યઃ સર્વ જાનાતિ ’ ઇતિ । જો ઇસ
લોકકે ખીતરકે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ યહ એક ઘટાદિક દ્રવ્યકો
ખી જાનતા હૈ । જૂત અવિષ્યત્ ઓર વર્તમાનકાલ-સમ્યન્ધી જિતની ખી
ઉસ દ્રવ્યકી પર્યાયોં હૈ જે સમસ્ત ઉસ દ્રવ્યકે સ્વભાવ હૈ । જન પર્યાયોંસે
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવલાલા હોતા રહતા હૈ । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્યમેં ઉનર
પર્યાયોંસે તત્તત્સ્વભાવકી પ્રાપ્તિ હોનેસે બહુ દ્રવ્ય અપને અનાદિ અનન્ત
કાલપનેસે (ઇસ રૂપસે જુઝા, ઇસ રૂપસે હો રહા હૈ ઓર ઇસ રૂપસે

જે એક દ્રવ્યકો, અથવા અદ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ અને ભાવથી
તેમજ અતીત અનાગત અને વર્તમાનકાલ-સમ્યન્ધી સમસ્ત પદાર્થોંથી યુક્ત
જાણે છે તે સમસ્ત પદાર્થોંને જાણે છે, સમસ્ત પદાર્થોંનું સમ્યક્જ્ઞાન થયા વિના
કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થનું જ્ઞાન દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ અને ભાવથી અને અતીત
અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત પદાર્થોંથી વર્ધ શક્યું નથી, આ અભિપ્રાય સમ
જાણવા માટે કાર્પ-કારણ ભાવ રસાવર્ણ સૂત્રકાર કહે છે—“ જે સમ્ય જાણહ-
ય સર્વ જાનાતિ ” ઇતિ । જે આ લોકના ખીતરના સમસ્ત પદાર્થોંને જાણે છે
તે એક ઘટાદિક દ્રવ્યકે પણ જાણે છે જૂત અવિષ્ય અને વર્તમાનકાલ સમ્યન્ધી
જેટલી પણ તે દ્રવ્યની પદાર્થોં છે તે સમસ્ત, દ્રવ્યનો સ્વભાવ છે તે પદાર્થોંથી
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાળા અનન્ત રહે છે આ પ્રકારે દ્રવ્યમાં તે તે પદાર્થ
યોગી તત્તત્સ્વભાવની પ્રાપ્તિ થવાથી તે દ્રવ્ય પોતાના અનાદિ અનન્તકાળપર્યાયી
(આ રૂપથી અ-થા, આ રૂપથી અને છે અને ઉપર આ રૂપથી બનશે) તે તે

ઘનન્તકાલતયા સમસ્તવસ્તુસ્વભાવપરિજ્ઞાનાદિત્યર્થઃ । એકસ્ય વસ્તુનઃ સમગ્રસ્વરૂપં સર્વજ્ઞ એવ જાનાતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

એવં જાનન્ સર્વજ્ઞ એવ સર્વજીવોપકારકમુપદેશં દદાતીત્યાહ—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ । યદ્વા—સર્વજ્ઞઃ શિષ્યેભ્યઃ પ્રમાદદોષાન્ અપ્રમાદગુણાંશ્ચ કથયતિ—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સવ્વઓ પમત્તસ્ય અતિથિ ભયં, સવ્વઓ અપ્પમત્તસ્ય નતિથિ ભયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—સર્વતઃ પ્રમત્તસ્ય અસ્તિ ભયં, સર્વતોઽપ્રમત્તસ્ય નાસ્તિ ભયમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—પ્રમત્તસ્ય=મદ્યાદિપ્રમાદયુક્તસ્ય સર્વતઃ=દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ ભયં=ભયકારિત્વાત્ કર્મ અસ્તિ । પ્રમાદવાન્ સ્વલુ જ્ઞાનાવરણીયાદિકમષ્ટવિધં કર્મોપચિનો-હોગા) ઉન ઉન સ્વભાવોવાલા જાન લિયા જાતા હૈ । અર્થાત્ એક વસ્તુકા સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ હી જાનતે હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હસ પ્રકાર સમસ્ત દ્રવ્યોંકો જાનનેવાલે સર્વજ્ઞ હી સમસ્ત જીવોંકે લિયે હિતકારી ઉપદેશ દેતે હૈ । હસ વાતકો મૂત્રકાર દિસલાતે હૈ — ‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—સર્વજ્ઞ સ્વયં અપને શિષ્યોંકે પ્રતિ પ્રમાદકે દોષોંકો ઔર અપ્રમાદકે ગુણોંકો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી વ્યક્તિ, દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર ભાવસે ભય-ભય-કારી હોનેસે કર્મ-કા બન્ધ કરતા હૈ । ‘ભય’ શબ્દકા અર્થ કર્મ હૈ, ક્યોં કિ કર્મ જીવોંકો સદા ભયકારી હોતે હૈ હસલિયે યહાં કાર્યમેં કારણ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । ભય, કર્મોં કા કાર્ય હૈ ઔર કર્મ, ભય કે કારણ હૈ । પ્રમાદવાલા વ્યક્તિ નિશ્ચયસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકાર

સ્વભાવોવાળા બાણી લેવામા આવે છે. અર્થાત્ એક વસ્તુનુ સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ જ બાણ છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આ પ્રકારે સમસ્ત દ્રવ્યોને બાણવાળા સર્વજ્ઞ જ સમસ્ત જીવોને માટે હિતકારી ઉપદેશ દે છે આ વાતને સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ.

અથવા સર્વજ્ઞ સ્વયં પોતાના શિષ્યો પ્રતિ પ્રમાદના દોષોને અને અપ્રમાદના ગુણોને પ્રદર્શિત કરે છે—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ.

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી જીવ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી ભય-ભયકારી હોવાથી કર્મનો બંધ કરે છે ‘ભય’ શબ્દનો અર્થ કર્મ છે કારણ કે કર્મ જ જીવોને સદા ભયકારી હોય છે માટે આ ઠેકાણે કાર્યમા કારણનો ઉપચાર કરેલ છે. ભય, કર્મોનુ કાર્ય છે અને કર્મ, ભયનુ કારણ છે. પ્રમાદવાળો જીવ

તિ । સ ચ દ્રવ્યતઃ સર્વેરાત્મપ્રવેશૈઃ કર્મ શુદ્ધાતિ, સેવ્રતઃ=પદ્મ વિષ્ણુ, કાલ્સોઽન્તુ
સમયં, માવતોઽષ્ટાદશમિઃ સ્થાનૈઃ, પચ્ચષ્ઠેન વા પ્રમાદેન, एवं कर्म सर्वतः प्रमादितं
વમાતીત્યર્થઃ । યદ્વા-‘સર્વતઃ’ इत्यस्य ‘सर्वत्र’ इत्यर्थः । यथा चौरस्व
करच्छेदन-शूलादिमेदन-कक्षादिताडन-कठिनतराजकीयय-प्रणादिभयमस्मिन् लोके,
परलोकेऽपि नरकनिगोदादियातनाभयं भवति, तथा-प्रमादस्य सर्वत्र भय-
मित्यर्थः । प्रमादरहितस्य तु नास्ति भयमित्याह-‘सर्वतोऽप्रमत्तस्य’ इत्यादि ।
अप्रमत्तस्य=प्रमादरहितस्य आत्मकस्याज्ञाय भयमाराधने जाग्रत इत्यर्थः, सर्वतः=
पेरિકામુખિકદુઃસ્વકારણાત્ સંસારાત્ ભયં નાસ્તિ । પ્રમાદરહિતસ્ય સંસારો ન
મવતીત્યર્થઃ ॥ છ૦ ૩ ॥

કે કર્મોંકા બચક હોતા હૈ । બહુ વ્રુવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રવેશોંસે
કર્મોંકા પ્રહ્ણ કરનેવાલા હોતા હૈ । કોષ્ઠકી અપેક્ષા વદ-છદ-વિશામોં
મેં, કાલકી અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમેં, આવકી અપેક્ષા અઠારહ (૧૮) પાપ
સ્થાનોંસે, અથવા પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદસે કર્મોંકા બચક હોતા હૈ । હસ
પ્રકાર વસકે સયતરફસે કર્મોંકા બચ હોતા રહતા હૈ । અથવા ‘સર્વતઃ’
‘સર્વ પ્રકારસે’ હસકે સ્થાનમેં ‘સર્વત્ર’ એસા અર્થ કરને પર-પ્રમાદી ક
લિયે ‘સર્વત્ર’-સય જગદ-ભય હોતા હૈ, એસા અર્થબોધ હોતા હૈ । યહાં
“ભય” શબ્દકા અર્થ ‘હર’ હૈ જિસ પ્રકાર ચોરકે લિયે હસ લોકમેં
હાથોંકે કઢને, શૂલાદિસે ખિવને, કક્ષા-ચાલુક આદિસે તાઢને આદિ સ્વપ્ને
કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓ-કપ્ડોં-કે ભોગને કા ભય હોતા હૈ, તથા
પરલોકમેં બી નરક-નિગોદાદિકકે અનેક કપ્ડોંકે સહનેકા ભય હોતા
હૈ, હસીતરહસે પ્રમાદી પ્રાણીકો સર્વત્ર ભય હી ભય હૈ । આત્મકસ્યાણ

નિઃસંયધી જ્ઞાનાવસ્થાવાદિકે આઠ પ્રકારના કર્મોંના બધક થાય છે તે દ્રવ્યની
અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રવેશોંથી કર્મોંના પ્રહ્ણ કરવાવાળા બને છે ક્ષેત્રની અપેક્ષા
વદ-છ વિશામોં, કાળની અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમાં, બાવની અપેક્ષા અઠાર
પાપસ્થાનોંથી અથવા પાંચ પ્રકારના પ્રમાદથી કર્મોંના બધક થાય છે આ પ્રકારે
તેને સઘળી બાબતોથી કર્મોંના બધ થતો રહે છે અથવા સર્વતઃ=સર્વપ્રકારથી તેના
સ્થાનમાં ‘સર્વત્ર’ જોવો અથ કરવાથી પ્રમાદી માટે સવત્ર દરેક જગ્યાએથી
ભય થાય છે, જોવો અર્થબોધ થાય છે. આ ઠેકાણે ભય શબ્દનો અર્થ ‘૫૨’ છે
જે પ્રકારે ચોર માટે આ લોકમાં ખડગાદિથી કાળેનું કાપનું શૂલાદિથી કોણનું
કક્ષા-ચાલુક આદિથી માર આવે આદિરૂપ કઠિનતર રાજકીય ભયજાઓ-કપ્ડોં-ને
ભોગવવાનો ભય હોય છે તથા પરલોકમાં પશુ નરકનિગોદાદિક અનેક કપ્ડોંને
સહનકરવાનો ભય છે. આ ૫૨ નો સર્વત્ર ભય જ ભય છે

इह कपायाधिकारो वर्तते, तद्वमनं द्विविधम्—उपशमनवमनं, क्षपणवमनं च । तत्रोपशमनवमनं नामनमिति पर्यायस्तदभिप्रायेणाह—‘ जे एगं नामे ’ इत्यादि ।

यद्वा—कपायाभावात् प्रमादाभावः, तदभावाच्च सकलमोहनीयाऽभावः, तस्मात् सकलकर्मक्षयः, तदेवमेकाभावे सति बहूनामभावः, बहूनामभावे सति एकाभावः, इत्येवं गतप्रत्यागतरूपेण कार्यकारणभावं दर्शयितुमाह—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

करनेके लिये जो संयमकी आराधनामें जागरूक हैं ऐसे अप्रमादी प्राणीको कहीं भी भय नहीं होता है । वे न इस लोकमें दुःखी होते हैं और न परलोकमें । अधिक क्या कहा जाय ? वे इस संसारके भयसे ही निर्मुक्त हो जाते हैं । इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखका कारण यह संसार ही उन्हें फिरसे प्राप्त नहीं होता, अर्थात् वे सदा के लिये मुक्त हो जाते हैं ॥ सू० ३ ॥

यहां पर कषायका अधिकार है । कषायका वमन दो प्रकारका है—(१) उपशमनवमन, (२) क्षपणवमन । कषायोंका उपशम होना यह उपशमनवमन है, तथा कषायोंका क्षय होना यह क्षपणवमन है । उपशमन-वमनका पर्यायान्तर शब्द नामन है । इस अभिप्रायसे कहते हैं—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

अथवा—कषायोंके अभावसे प्रमादका अभाव, प्रमादके अभावसे समस्त मोहनीयका अभाव, उससे सकल कर्मोंका क्षय होता है । इस प्रकार एकका अभाव होने पर बहुतोंका अभाव, बहुतोंका अभाव होने

આત્મકલ્યાણ કરવા માટે જે સયમની આરાધનામા જાગરૂક છે એવા અપ્રમાદી પ્રાણીઓને કાંઈ પણ ભય હોતો નથી તેઓ નથી આ લોકમા હુ ખી થતા નથી પરલોકમા હુ ખી થતા અધિક શુ કહેવું ? તેઓ આ સંસારના ભયથી જ નિર્મુક્ત થઈ જાય છે આ-લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી હુ ખનુ કારણ આ સંસાર જ તેને ફરીથી પ્રાપ્ત થતો નથી, અર્થાત્ તે સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ ઠેકાણે કષાયનો અધિકાર છે કષાયોનુ વમન બે પ્રકારે છે (૧) ઉપશમવમન (૨) ક્ષપણવમન કષાયોનુ ઉપશમ થવું તે ઉપશમવમન છે તથા કષાયોનુ ક્ષય થવું તે ક્ષપણવમન છે ઉપશમવમનનો પર્યાયાન્તર શબ્દ નામન છે આ અભિપ્રાયથી કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ

અથવા—કષાયોના અભાવથી પ્રમાદનો અભાવ, પ્રમાદના અભાવથી સમસ્ત મોહનીયનો અભાવ, તેનાથી સકળ કર્મોનો ક્ષય થાય છે આ પ્રકારે એકનો અભાવ થવાથી બહુનો અભાવ, બહુનો અભાવ થવાથી એકનો અભાવ થાય છે

મૂલ્ક—જે ષગ નામે સે ઘટ્ટુ નામે, જે ઘટ્ટુ નામે સે ષગ નામે ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—યઃ એકં નામયતિ સ બહુન્ નામયતિ, યો બહુન્ નામયતિ, સ ર્દેકં નામયતિ ॥ ઘ. ૪ ॥

ટીકા—યઃ એકમ્=અનન્તાનુબન્ધિનં ક્રોધં નામયતિ=ઉપશમયતિ સ બહુન્=અપ્રત્યાક્ષ્યાનાદીન્ તદ્વમેવાન્ માનાદીન્ ચા નામયતિ ।

યદ્વા—યઃ એકં સમકૃતિકં મોહનીયં નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ બહુન્=તદનુશિષ્ટાનિ સમકૃતિકાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદિકાનિ સંસારિણ્યપિ નામયતિ=ઉપશમયતિ । યો બહુન્=સ્થિતિશેષાન્ નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ એકમ્=અનન્તાનુબન્ધિનં ક્રોધં મોહનીયં ચા નામયતિ=ઉપશમયતિ । અન્ નામનસ્=ઉપશમનં સર્વં ચા । તવા વાયમપ્યર્થ—

પર એકત્વ અમાન હોતા હૈ । હસ પ્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) સે કાર્ય-કારણ બાધકો દિશ્વાનેકે છિયે કહસે હૈ—‘ જે ષગ ’ હત્યાદિ ।

જો અનન્તાનુબંધી ક્રોધકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ અપ્રત્યાક્ષ્યાનાદિ કપાયોંકા ષર્થ અનન્તાનુબંધી છોમાદિકોંકા ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા—જો એક મોહનીય કર્મકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ વસસે અનુશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા મી ઉપશમ કરતા હૈ । જો સ્થિતિસે અનુશિષ્ટ કર્મોંકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ એક અનન્તાનુબંધી ક્રોધ અથવા મોહનીયકા મી ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા નામન શબ્દકા અર્થ ઉપશમન અથવા ક્ષેપણ હૈ । ઉપશમનકી અપેક્ષાસે યહ વ્યાખ્યા કી હૈ । ક્ષેપણકી અપેક્ષાસે વ્યાખ્યા હસ પ્રકાર હૈ—

આ પ્રકારે ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) મી કાર્ય કારણ બાધકે બાધકા મટે કહે છે—‘ જે ષગ ’ હત્યાદિ ।

જે અનન્તાનુબંધી કપાયોંકા અને અનન્તાનુબંધી લોભાદિનો ઉપશમ કરે છે, આ ઠેકાણે જે એક મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે તેનાથી અનુશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા પણ ઉપશમ કરે છે. જે સ્થિતિથી અનુશિષ્ટ કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે એક અનન્તાનુબંધી ક્રોધ અથવા મોહનીયનો પણ ઉપશમ કરે છે આ ઠેકાણે નામન શબ્દનો અર્થ ઉપશમ અથવા ક્ષેપણ છે ઉપશમની અપેક્ષાથી આ વ્યાખ્યા કરેલ છે ક્ષેપણની અપેક્ષાથી વ્યાખ્યા આ પ્રકારે છે—

યઃ એકમ્—નામયતિ=ક્ષપયતિ, સ વહૂનપિ નામયતિ=ક્ષપયતિ । એકસ્યાનન્તાનુ-
વન્ધનઃ ક્રોધસ્ય ક્ષપકો વહૂનાં=તદ્ભેદાનામપ્રત્યાખ્યાનાદીનાં માનાદીનાં વા કષા-
યાણાં ક્ષપકો ભવતીતિ । યદ્વા—એકસ્ય મોહનીયસ્ય ક્ષપકઃ, વહૂનાં તદવશિષ્ટાનાં સર્વાસાં
પ્રકૃતીનાં ક્ષપકો ભવતીતિ । તથા—યો વહૂનાં ક્ષપકઃ, સ એકસ્ય ક્ષપક ઇતિ ॥ સૂ. ૦ ૪ ॥

વહુકર્મોપશમેનૈકકર્મોપશમેન વા વિના મોહનીયસ્યોપશમો ન ભવતિ, તથા વહુ-
કર્માભાવમન્તરેણ એકકર્માભાવમન્તરેણ વા મોહનીયકર્મણઃ ક્ષયો ન ભવતિ । ત-
સ્માદેવ કારણાજ્જન્તૂનાં વહુવિધદુઃસ્વસમુદ્ભવ ઇત્યાહ—‘દુઃસ્વં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃસ્વં લોગસ્સ જાણિત્તા વંતા લોગસ્સ સંજોગં જંતિ
ધીરા મહાજાણં, પરેણ પરં જંતિ, નાવકંસ્વંતિ જીવિયં ॥ સૂ. ૦ ૫ ॥

છાયા—દુઃસ્વં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા વાન્ત્વા લોકસ્ય સંયોગં યાન્તિ ધીરા મહાયાનં,
પરેણ પરં યાન્તિ, નાવકાઙ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્ ॥ સૂ. ૦ ૫ ॥

જો એકકા ક્ષય કરતા હૈ વહુ વહુતોંકા ક્ષય કરતા હૈ । એક અન-
ન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા અથવા અપને
ભેદસ્વરૂપ માનાદિ—કષાયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । અથવા—એક મોહનીય
કર્મકા ક્ષપક વહુત—તદવશિષ્ટ (મોહનીય કર્મસે બાંકી રહી) સબ કર્મ-
પ્રકૃતિયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । હસી પ્રકાર જો વહુતોંકા ક્ષપક હોતા હૈ વહુ
એકકા ભી ક્ષપક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૦ ૪ ॥

વહુત કર્મોંકે ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મકે ઉપશમ વિના મોહ-
નીય કર્મકા ઉપશમ નહીં હોતા હૈ, તથા વહુત કર્મોંકે અભાવ—ક્ષય—હુએ
વિના મોહનીય કર્મકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ । હસી કારણસે પ્રાણિયોંકો
અનેક પ્રકારકે દુઃસ્વોંકી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । હસી બાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ
કરતે હૈ—‘દુઃસ્વં’ ઇત્યાદિ ।

એ એકનો ક્ષય કરે છે તે બહુનો ક્ષય કરે છે. એક અનંતાનુબધી
ક્રોધનો ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોનો અથવા ખોતાના ભેદસ્વરૂપ માનાદિ
કષાયોનો ક્ષપક થાય છે અથવા એક મોહનીય કર્મના ક્ષપક બહુ—તદવશિષ્ટ
(મોહનીય કર્મથી બાકી રહી) સઘણી કર્મપ્રકૃતિયોનો ક્ષપક થાય છે આ
પ્રકારે બહુનો ક્ષપક થાય છે તે એકનો પણ ક્ષપક થાય છે ॥ સૂ. ૦ ૪ ॥

બહુ કર્મોના ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મના ઉપશમ વિના મોહનીય
કર્મનો ઉપશમ થતો નથી. તથા બહુ કર્મોનો અભાવ—ક્ષય વિના, અથવા એક
કર્મનો અભાવ થયા વિના મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતો નથી તે કારણથી પ્રાણી-
યોને અનેક પ્રકારના દુઃખોની ઉત્પત્તિ થાય છે. આ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે
છે—‘દુઃસ્વં’ ઇત્યાદિ,

टीका—लोकस्य=पञ्चजीवनिकायस्य दुःखं=दुःखकारणं कर्मास्तीति ज्ञात्वा लोकस्य=पुत्रकलत्रादेस्तथा हिरण्यसुवर्णादेव संयोगं=ममत्वलक्षणं सम्बन्धं परिग्रहे वाऽऽनृषिकर्महेतुं धान्त्वा=परित्यज्य धीराः=कर्मविदारणसमर्था महायानं=यानस्वनेन मोक्षमिति यानं चारित्र्यम्, तच्च भवकोटिदुर्लभतया महदस्तीत्याशयेन महायानमित्युच्यते । यान्ति=गच्छन्ति प्राप्नुवन्तीत्यर्थः ।

ननु प्राप्त्यारित्रस्य किमेकेनैव भवेन मोक्षः, उत पारंपर्येणेति शिष्यनि ज्ञात्वापाम्भययाऽपि मोक्षो भवतीति बोधयितुमाह—‘ परेण पर यान्ति ’ इति ।

“इस पञ्चजीवनिकायरूप लोकके दुःखका कारण कर्म है” ऐसा जान कर कर्मों के नाश करनेमें शक्तिशाली धीर मुनि, पुत्र स्त्री आदिसे, तथा हिरण्य सुवर्ण आदिसे ‘ममेदं’-ममत्वभावरूप संयोगका अथवा अष्टप्रकारके कर्मोंके आस्रवके कारणरूप परिग्रहका सर्वथा त्याग कर चारित्र्य को अङ्गीकार करते हैं। “यान” शब्दका अर्थ चारित्र्य है—“यान्ति अनेन मोक्षमिति यानम्” अर्थात्-जिसके द्वारा मोक्षको प्राप्त करे उस का नाम “यान” है, क्योंकि इसकी प्राप्तिसे जीवोंको मुक्तिका लाभ होता है। “यान” के साथ जो “महा” विशेषण लगा हुआ है वह इसमें महत्ताका द्योतक है। चारित्र्यमें महत्ता इसी लिये है कि जीवोंको इसकी प्राप्ति करोखों भवोंमें भी दुर्लभ है। इसी अन्विष्टाप्रयसे चारित्र्यको महायान कहा है।

जिसको चारित्र्य प्राप्त हो चुका है ऐसे मुनिकी मुक्ति उम्मी भवसे हो सकती है ? अथवा भवपरम्परासे ? इस प्रकारकी शिष्यकी आशङ्कता

‘आ पदलुपनिशङ्करूप लोकना दुःखं भवतु कारणं कर्म’ अनेन अर्थात् अनेन नारा कल्याणं शक्तिशाली धीर मुनि, पुत्र स्त्री आदिसे तथा हिरण्य सुवर्ण आदिसे ‘ममेदं’-ममत्वभावरूप संयोगेन, अथवा अष्ट प्रकारका कर्मोंका आस्रवकारणरूप परिग्रहेन सर्वथा त्याग करी चारित्र्यने अङ्गीकार करे छे “यान” शब्दने अर्थ चारित्र्य छे “यान्ति अनेन मोक्षमिति यानम्” अर्थात् अनेन द्वारा मोक्षने प्राप्त करे तेनु नाम “यान” छे, कारण के तेनी प्राप्तिषी लयेने मुक्तिने लाभ प्राप्त छे “यान”नी साथे ने “महा” विशेषण लागेले छे ते तेनी महत्ताने द्योतक छे, चारित्र्यमें महत्ता अने भाटे छे के लयेने तेनी प्राप्ति कठोर। अनेनां पक्ष दुर्लभ छे ते अन्विष्टाप्रयसी चारित्र्यने महायान कहले छे ।

अनेन चारित्र्यप्राप्त यक्ष मुकेले छे तेना मुनिनी मुक्ति ते भवषी कर्म शके छे ? अथवा भवपरम्परासी ? आ प्रकारनी शिष्यनी आशङ्कानु समाधान कर्तव्य

તદ્યોગ્યક્ષેત્રકાલપ્રાપ્ત્યા લઘુકર્મણસ્તેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, અન્યસ્ય તુ પારમ્પર્યેણ ભવતિ, ઇહ તદેવોચ્યતે—

યથા—યથાશક્તિસમારાધિતસંયમા આયુષોઽન્તે સતિ કર્માવશેષેણ સૌધર્માદિદેવલોકં ગચ્છન્તિ, તતઃ પરં પુનઃ કર્મભૂમાવાર્યક્ષેત્રે સુકુલે જન્મ લબ્ધ્વા શ્રદ્ધાસંયમાદિધર્મારાધનેન સૌધર્માદિદેવલોકાદપિ વિશિષ્ટતરં સ્વર્ગમનુત્તરોપપાતિકં યાવત્ પ્રયાન્તિ । તતઃ પરં પુનરપિ તતશ્ચ્યુતાસ્તત્સમુચિતમહાવિદેહાદિક્ષેત્રં પ્રાપ્ય સંપૂર્ણશ્રુતચારિત્રધર્મસમારાધનેન કૃત્સ્નકર્મક્ષયાદપુનરાવૃત્તિકં મોક્ષમુપગચ્છન્તિ ।

સમાધાન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘‘સ મુનિકી મુક્તિ દોનોં પ્રકાર સે હોતી હૈ, ઇસી વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—‘ પરેણ પરં જંતિ—પરેણ પરં યાન્તિ ’ મુક્તિપ્રાપ્તિકે યોગ્ય ક્ષેત્ર ઓર કાલકી પ્રાપ્તિસે લઘુકર્મીં જીવોં કી ડસી ભવસે, ઓર અન્ય જીવોંકી પરમ્પરાસે—અન્ય—અન્ય ભવોંસે મુક્તિ હોતી હૈ । ઇસી વાતકો ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈં—જૈસે કિતનેક જીવ અપની શક્તિકે અનુસાર સંયમકા આરાધન કરતે હૈં ઓર સંયમકા આરાધન કરતે હી વે ડસ ભવ સમ્બન્ધી આયુ કા અન્ત હોને પર કાલ કર કર્માવશેષસે સૌધર્માદિ દેવલોકોંમેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં । વહાંકી ઋદ્ધિકા ગૃદ્ધિરહિત હો ભોગ કરતે હી ડસ ભવ સમ્બન્ધી આયુકાં ભી અન્ત કરકે વે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર ઓર સુકુલમેં જન્મ પા કર ફિરસે શ્રદ્ધા સંયમાદિક કી આરાધના કરનેમેં લવલીન હોને કે પ્રભાવસે આયુકે અવસાનમેં સૌધર્માદિક દેવલોકોંસે ભી આગે વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમેં દેવ હો જાતે હૈં । વહાં સે ચ્યવ કર

સૂત્રકાર કહે છે કે તે મુનિની મુક્તિ બંને પ્રકારથી થાય છે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—‘ પરેણ પરં જંતિ ’—‘ પરેણ પરં યાન્તિ ’ મુક્તિ પ્રાપ્તિને યોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિથી લઘુકર્મીં જીવોની તે લવથી, અને અન્ય જીવોની પરપરાથી—અન્ય લવોથી મુક્તિ થાય છે, આ વાતને ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરે છે—જેવી રીતે કેટલાક જીવો પોતાની શક્તિ—અનુસાર સયમનુ આરાધન કરે છે અને સયમનુ આરાધન કરતાં કરતાં જ તે લવસ બધી આયુનો અત થવાથી તે મરીને કર્માવશેષથી સૌધર્માદિ દેવલોકો—મા ઉત્પન્ન થાય છે ત્યાંની ઋદ્ધિને ગૃદ્ધિરહિત થઈ ભોગ કરતા કરતા તે લવસ બધી આયુનો પણ અત કરીને તે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર અને સુકુળમા જન્મ પામીને ફરીથી શ્રદ્ધાસયમાદિકની આરાધના કરવામા લવલીન થવાના પ્રભાવથી આયુના અવસાનમા સૌધર્માદિક દેવલોકોથી પણ આગળ વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમા દેવ બને છે. ત્યાંથી ચવીને સયમ આરાધનાને યોગ્ય મહાવિદેહાદિ

યદા-પરેણ=ચતુર્થગુણસ્થાનેન, પર=ચતુર્થગુણસ્થાનં યાવત, યાન્તિ=અધિવિશ્તિન્તિ ।

યદા—પરેણ અન્તઃપ્રાણાનુષન્ધિકપાયસયણ, પર=મોહનીયસયં ધાર્ઠિ-મનોપત્રારિ કર્મણાં વા ક્ષયં યાન્તિ ।

एषमूढा धीराः, जीवितं=आयुः, नाशकास्तन्ति=कियद् व्यतीतं, कियद् अष्टिमिति न विमादयन्ति=वीर्यजीवित्वमसंयमजीवित्वं वा नेच्छन्तीत्यर्थः ॥५०॥

સંયમ આરાધનાકે યોગ્ય મહાધિવેદ્યાદિ ક્ષેત્રોર્મે જન્મ પ્રાપ્ત કર ફિર સમ્પૂર્ણ શ્રુતચારિત્રધર્મકી આરાધનાકે પ્રભાવસે સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયકર અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાન મેં જા ચિરાજતે હેં ।

भावार्थ—‘चारित्र्यप्राप्त मुनि उसी भवसे अथवा अन्यभव-से भी क्या मोक्ष जाते हैं?’ ऐसी शिष्यकी आशङ्कका शास्त्रकार उत्तर देते हैं कि-जो संयमकी आराधना करते हैं वे जीव उसी भवमें, अथवा उस भवमें मोक्ष न जा कर अन्य भवोंसे भी मुक्तिका लाभ कर लेते हैं । जब तक वे मुक्तिका लाभ नहीं कर लेते तब तक वे वत्सम मनुष्य पचाय एवं देवपचायमें उत्पन्न होते रहते हैं । मुक्तियोग्य क्षेत्र और काव की प्राप्ति होते ही पूर्ण संयमकी आराधनाके प्रभावसे घातिया और अघातिया कर्मोंका सर्वथा विनाश कर पंचमगति-मुक्तिका लाभ कर लेते हैं ।

अथवा—“परेण परं यान्ति” इसका यह भी अर्थ होता है कि-जो कर्मोंके नाश करनेकी शक्तिसे सम्पन्न धीर हैं वे ‘परेण’ चतुर्थ गुण

ક્ષેત્રેભાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી દરીથી શ્રુતચારિત્ર ધર્મની આરાધનાના કારણથી સમસ્ત કર્મોના ક્ષય કરી અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાનમાં જઈ બિસરે છે

ભાવાર્થ—‘આરિત્રપ્રાપ્ત મુનિ તે ભવથી અથવા અન્ય ભવથી પણ શુ મોક્ષ ભવ છે ?’ એવી શિષ્યની આશંકાને શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દે છે કે જે સંયમની આરાધના કરે છે તે છવ તેજ ભવમાં અથવા તે ભવથી મોક્ષ ન જતા અન્ય ભવોથી પણ મુક્તિનો લાભ કરી લે છે જ્યાં સુધી તે મુક્તિનો લાભ નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તે વત્સમ મનુષ્યપચાઈ તેમજ દેવપચાઈમાં ઉત્પન્ન થતા રહે છે, મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિ થતા જ પૂર્ણ સંયમની આરાધનાના ભાવથી તે ધાતિયા અને અધાતિયા કર્મોના સર્વથા વિનાશ કરી પંચમગતિ-મુક્તિનો લાભ કરી લે છે

अथवा—“परेण परं यान्ति” तेनो जो पञ्चमक थाव છે કે જે કર્મોના નાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન ધીર છે તે ‘પરેણ’ આથ શુદ્ધસ્થાનથી લગાવી

સ્થાનસે લગા કર ‘પરં’ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનતક જાતે હેં, અર્થાત્—
“ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” ઇન પાંચ દ્વસ્વ અક્ષરોંકે ઉચ્ચારણ કરનેમેં જિતના
સમય લગતા હૈ ઉતને સમય પ્રમાણ ઉસ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં ઉનકી
સ્થિતિ હોતી હૈ, વાદમેં વે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરતે હેં ।

અથવા-પ્રથમ ‘પર’ શબ્દકા અર્થ અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય
મી હૈ । ઈતીય ‘પર’ શબ્દકા અર્થ-મોહનીયકા નાશ, અથવા ઘાતિ
અઘાતિ કર્મોંકા વિનાશ હૈ । હસકા યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ-અનન્તા-
નુબન્ધી કષાયકે ક્ષયસે વે મોહનીય્ કા ક્ષય, અથવા ઘાતિ ઓર અઘાતિ
કર્મોંકા ક્ષય કરતે હેં ।

ભાવાર્થ—વીરોંકો ચતુર્થ ગુણસ્થાનસે લગા કર જો ચૌદહવેં ગુણસ્થાન
તકકી પ્રાપ્તિ વતલાઈ ગઈ હૈ ઉસકા યહ તાત્પર્ય હૈ કિ સમકિતકી પ્રાપ્તિ
જીવોંકો ચૌથે ગુણસ્થાનમેં હો જાતી હૈ । સમકિતકા લાભ હી જીવોંકો સા-
ક્ષાત્ (ભાવચરિત્ર કી અપેક્ષાસે) યા પરમ્પરાસ્પસે મુક્તિકા કારણ હોતા હૈ ।
જિસ વ્યક્તિકો સમકિતકા લાભ હો જાતા હૈ ઉસ મન્યાત્માકા અર્ધ્વપુદ્ગલ
પરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમેં રહનેકા રહતા હૈ, ઉસસે અધિક નહીં । ધીરે
વહ અપની ઉન્નતિ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણસ્થાનોં પર આરોહણ કર
પરિણામોંકી વિશુદ્ધિકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઓર અઘાતિયા કર્મોંકે નાશ

‘પરં’ ચૌદમા ગુણસ્થાનક સુધી જાય છે, અર્થાત્ “ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” આ પાંચ
દ્વસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામા જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય પ્રમાણ
તે ચૌદમાં ગુણસ્થાનમા તેની સ્થિતિ થાય છે, બાદમા તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા પ્રથમ “ પર ” શબ્દનો અર્થ અનતાનુબન્ધી કષાયનો ક્ષય પણ
છે બીજો ‘પર’ શબ્દનો અર્થ મોહનીયનો નાશ અથવા ઘાતિ અઘાતિ કર્મોંનો
વિનાશ છે તેનો એ ફલિતાર્થ થાય છે કે અનતાનુબન્ધી કષાયના ક્ષયથી મોહ-
નીયનો ક્ષય, અથવા ઘાતિ અને અઘાતિ કર્મોંનો ક્ષય તે કરે છે

ભાવાર્થ — વીરોને ચોથા ગુણસ્થાનથી લઇને જે ચૌદમા ગુણસ્થાન સુધીની પ્રાપ્તિ
ખતાવવામાં આવી છે તેનો એ તાત્પર્ય છે કે સમકિતની પ્રાપ્તિ જીવોને ચોથા
ગુણસ્થાનમા થઇ જાય છે સમકિતનો લાભ જ જીવોને સાક્ષાત્ (ભાવચારિત્રની
અપેક્ષાથી) અગર પરપરા-રૂપથી મુક્તિનું કારણ થાય છે જે વ્યક્તિને સમકિતનો
લાભ થઇ જાય છે તે ભવ્યાત્માનો અર્ધ્વપુદ્ગલપરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમાં
રહેવાનું રહે છે, તેનાથી અધિક નહિ. ધીરે ધીરે તે પોતાની ઉન્નતિ કરતાં કરતા
આગળ આગળના ગુણસ્થાનો ઉપર આરોહણ કરી પરિણામોની વિશુદ્ધિના પ્રભા-

સે પ્રાપ્ત होनेवाली मुक्तिका स्वामी हो जाता है । इसी अभिप्रायको ले कर “अनन्तानुबन्धी कपायके क्षयसे मोहनीयका अपवा घाती अघाती कर्मोंका नाश कर वे मुक्तिको पाते हैं ” यह बात कही गई है, क्यों कि अनन्तानुबन्धितुष्क और दर्शनमोहनीयत्रिकका जब तक आत्मामें क्षय आवि नहीं होता है तब तक समक्षित शुणकी प्राप्ति नहीं होती है । इस लिये अनन्तानुबन्धी कपायका क्षय आवि ही मोहनीयकर्मके नाश आदिमें कारण होते हैं । मोहनीयके अभाव होते ही शेषकर्म भी बहुत शीघ्रतासे नष्ट हो जाते हैं । टीकाकारने—“ परेण ” इस पदका अर्थ जो ‘अनन्तानुबन्धिकपायक्षयेण’ अर्थात्—अनन्तानुबन्धी कपायका क्षय रूप किया है, उसका अभिप्राय यह है कि शिष्यने जो यह प्रश्न किया है कि—“ प्राप्तिपरिवासेकी मुक्ति एक ही भवसे होती है या अन्य भवों से होती है ? ” सो इसका समाधान “अन्य भवोंसे होती है ” ऐसा तो पहिले किया जा चुका है । यहाँ पर तो “क्या एक भवसे होती है ? ” इसका समाधान किया गया है, क्यों कि अनन्तानुबन्धिकपायचतुष्क एवं दर्शनमोहनीयत्रिकके क्षयसे जीवोंको क्षायिक-सम्यक्त्वका लाभ होता है । क्षायिकसम्यक्त्वी यदि क्षपकभेदि पर आरुह होते हैं तो नियमसे उसी भवसे मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं ।

વધી ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોના નાશથી પ્રાપ્ત થવાવાળી મુક્તિનો સ્વામી થઈ બચે છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ‘અનંતાનુબંધી કપાયના ક્ષયથી મોહનીયનો અપવા ઘાતી અઘાતી કર્મોના નાશ કરી તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે એ વાત કહેવાઈ ગઈ છે. કારણ કે અનંતાનુબંધિચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકનો જ્યાં સુધી આત્મામાં ક્ષય આવે નથી થતો ત્યાં સુધી સમક્ષિત-શુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેથી અનંતાનુબંધી કપાયના ક્ષય આવે મોહનીય કર્મોના નાશ આવે ત્યાં કારણ થાય છે. મોહનીયનો અપવા થતાં જ શેષ કર્મ પણ બહુ શીઘ્રતાથી નિષ્પત્ત થઈ જાય છે. ટીકાકારે “પરેણ” આ પદનો અર્થ જે ‘અનન્તાનુબંધિ કપાયક્ષયેણ’—અર્થાત્ અનંતાનુબંધી કપાયનો ક્ષયરૂપ કરેલ છે તેનો અભિપ્રાય છે કે શિષ્યે જે એ પ્રશ્ન કરેલ છે કે—‘પ્રાપ્તિપરિવાણની મુક્તિ એક જ ભવથી થાય છે ? અથવા અન્ય ભવથી થાય છે ?’ તો તેનું સમાધાન ‘અન્ય ભવોથી થાય છે એનું તો પહેલાં કહી મુકેલ છે. આ ઉદાહરણે તો ‘શું એક ભવથી થાય છે ? તેનું સમાધાન કરવામાં આવેલ છે. કારણ કે અનંતાનુબંધિકપાયચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકના ક્ષયથી એવોને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વીને ક્ષપકભેદી ઉપર આરુહ થાય છે તો તે નિયમથી તે ભવમાં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

યશ્ચાનન્તાનુવન્ધ્યાદિક્ષપ્પણપ્રવૃત્તઃ, સ કિમેકસ્યૈવ ક્ષયે પ્રવર્તતે ઉતાનેકસ્યેત્યાહ
-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એગં વિગિંચમાણે પુઠો વિગિંચઙ્, પુઠો વિગિંચમાણે
એગં વિગિંચઙ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

એસે વીર “નાવકાહ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્” હસ વાતકા વિચાર નહીં
કરતે હૈં કિ મેરી આયુ કિનની વ્યતીત હો ગઈ હૈં ઓર કિતની અવ
બાકી હૈં ? । ક્યોં કિ દીર્ઘ આયુષ્ય મી મિલા ઓર ઉસમેં અસંયમ જીવન
રહા તો આત્માકા હસસે કોઈ હિત નહીં હો સકતા હૈં । અતઃ ઉન્હેં જો
કુછ મી જીવન પ્રાપ્ત હોતા હૈં ઉસીમેં વે સન્તુષ્ટ રહ કર અપને જીવનકો
સફલ બનાનેકા પ્રયત્ન કરતે રહતે હૈં । જિતની મી આયુ ઉનકી વ્યતીત
હો ચુકી હૈં વહ, તથા આગે મી જો વ્યતીત હોતી હૈં વહ સવ આત્મોદ્ધાર
કે સદુપાયોંકે સેવન કરતેર હી વ્યતીત હોતી હૈં । અસંયમ જીવનકી
ચાહના હનમેં હોતી નહીં હૈં । અતઃ એસે જીવ અપની આયુકે વ્યતીત
હોનેકા ઓર ઉસકે અવશિષ્ટ રહનેકા વિચાર નહીં કરતે હૈં, અર્થાત્ યે
અસંયમ જીવન ઓર દીર્ઘ જીવનકી ચાહના નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો અનન્તાનુવન્ધી આદિકે ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત હૈં વહ ક્યા એકકે
હી ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? અથવા અન્યકે મી ક્ષય કરનેમેં
પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? હસ આશંકાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈં—‘ એગં
વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

આવા વીર “નાવકાહ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્” એ વાતનો વિચાર નથી કરતા
કે મૌરી આયુ કેટલી વ્યતીત થઈ ગઈ છે અને હવે કેટલી બાકી છે ? કારણ
કે દીર્ઘ આયુષ્ય પણ મળે અને તેમા અસયમ જીવન રહ્યું તો આત્માનુતેમાં
હિત કોઈ પ્રકારે થતું નથી માટે તેને જે કાંઈ જીવન પ્રાપ્ત થાય છે તેમા તે
સતુષ્ટ રહી પોતાના જીવનને સફળ બનાવવા માટે પ્રયત્ન કરતા રહે છે જેટલી
પણ આયુ તેની વ્યતીત થવાવાળી છે તે સઘળી આત્મોદ્ધારના સદુપાયોનું સેવન
કરતા કરતા વ્યતીત થાય છે, અસયમ જીવનની ચાહના તેમા થતી નથી. માટે
તેવા જીવ પોતાની આયુના વ્યતીત થવાનો તથા તેના અવશિષ્ટ રહેવાનો વિચાર
કરતા નથી અર્થાત્ તે અસયમ જીવન અને દીર્ઘ જીવનની ચાહના કરતા નથી
॥ સૂ૦ ૫ ॥

જે અનન્તાનુબધી આદિનો ક્ષય કરવામા પ્રવૃત્ત છે તે શું એકનો જ ક્ષય
કરવામા પ્રવૃત્ત થાય છે ? અથવા અન્યનો પણ ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.
આ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ

આપા-एकं विवेचयन् पृथक् वेवेक्ति, पृथग् विवेचयन् एवं वेवेक्ति ॥सू०६॥

ટોકા-एकम्=अनन्तानुबन्धिर्न क्रोधं, विवेचयन्=सपयन् सपकथेमिस्मात्स्वः संयतं, पृथक्=अन्यदपि अनन्तानुबन्धितुष्टयं, मिध्यास्व-मिथ-सम्यक्त्व-मोहनी यत्रयं चेति मिध्यास्वसप्तकं, वेवेक्ति=नियमतः सपयति । यो बद्धायुष्कः, सोऽपि भीन मवान् नातिक्रामति । तृतीये भवे नियमतो मोक्षं प्राप्नोति । अबद्धायुष्कस्तु-मोह नीयस्य सप्तविंशतिं कर्मोशान् नियमत सपयति, चत्वारि घातिकर्माणि वा, सिध्यन् वा चत्वारि केषलिकर्माणि सपयति ।

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ક્ષય કરનેવાલા ક્ષપકઝેણિમેં આરુઢ સયત નિયમસે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય એવં મિધ્યાસ્વમોહનીય, મિથ્ઞમોહનીય ઔર સમ્યક્સ્વમોહનીય, इन सात प्रकृतियोंका क्षय करता है । जो ब द्दायुष्क (आयुर्कर्मका पहले पंच कर चुका है) वह भी तीन भवों को उत्संघन नहीं करता, अर्थात् तृतीय भवमें नियमसे मुक्तिका लाभ कर लेता है । अबद्धायुष्क- (जिसने पहले आयुर्कर्मका पंच नहीं किया है वह) जीव मोहनीय कर्मकी २७ सप्ताईस प्रकृतियोंका नियमसे नाश करता है । अथवा चार घातिया कर्मोंका नाश कर के अवशिष्ट चार अघातिया कर्मोंका भी नाश कर देता है ।

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિયોંકે ક્ષયસે જિસને ક્ષાયિક-સમ્યક્સ્વકા લાભ કિયા હૈ, ઔર ક્ષાયિક-સમ્યક્સ્વકો લે કર ક્ષપકઝેણિ પર વઢા હૈ ઉસ જીવકી મુક્તિ નિયમત ડસી ભવસે હો જાતી હૈ । પરતુ ડેસા જીવ યદિ બદ્દાયુષ્ક હૈ તો વઢ ઉસ ભવસે મુક્તિકા લાભ ન કર

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો ક્ષય કરવાવાળા ક્ષપકઝેણિમાં આરુઢ સયત નિયમથી અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય અને મિધ્યાસ્વમોહનીય, મિથ્ઞમોહનીય અને સમ્યક્સ્વમોહનીય, એ સાત પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે જે બદ્દાયુષ્ક (આયુર્કર્મના જે પહેલાં બંધે કરી ચુકેલ છે) તે પણ ત્રણ ભવોનું ઉત્સંઘન નથી કરતા, અર્થાત ત્રીજા ભવમાં નિયમથી મુક્તિનો લાભ કરી લે છે । અબદ્દાયુષ્ક (જેણે પહેલાં આયુર્કર્મનાં બંધે નથી કર્યાં તે) ૨૭ મોહનીય કર્મની ૨૭ સપ્તાવીસ પ્રકૃતિઓનો નિયમમાં નાશ કરે, જે અથવા ચાર ઘાતીયા કર્મોનો નાશ કરીને અવશિષ્ટ ચાર અઘાતીયા કર્મોનો પણ નાશ કરી નાખે છે

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી જેણે ક્ષાયિક-સમ્યક્સ્વને લાભ કરેલ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્સ્વને લઈને ક્ષપકઝેણિ ચઢેલ છે તે જીવની મુક્તિ નિયમન. તે ભવથી થઈ બચે છે, પરંતુ તેના જીવ કદાચ બદ્દાયુષ્ક છે તો તે, તે

યદ્વા-પૃથક્=અન્યદપિ મિથ્યાત્વસપ્તકં વિવેચયન્=ક્ષપયન્, એકમ્=અનન્તા-
નુવન્ધિક્રોધં વેવેક્તિ=નિયમતઃ ક્ષપયતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન ગુણેન ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યતાં પ્રાપ્નોતીતિ વોધયિતું કર્મક્ષપણોદ્યતસ્ય વિશે-
ષણાન્યાહ-‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સડ્ઢી આણાએ મેઘાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—શ્રદ્ધી આજ્ઞયા મેઘાવી ॥ સૂ૦ ૭ા ॥

ટીકા—શ્રદ્ધી=મોક્ષાભિલાષરૂપા જિનમતાભિરુચિઃ શ્રદ્ધા, સાડસ્યાસ્તીતિ
તથાવિધઃ; સ હિ કેવલિનો ભાવિતાત્મનોડનગારસ્ય વા સમીપે ધર્મ શ્રુત્વા સંયમં
પ્રતિપદ્યતે । આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ પ્રવર્તમાનઃ, મેઘાવી=અપ્રસન્નસંયમી ક્ષપ-
કશ્રેણિયોગ્યો ભવતિ, નાન્ય ઇત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દૂસરે અથવા તીસરે ભવમેં તો નિયમસે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા
હૈ । યદિ અબદ્ધાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

હસી તરહ—“ પુઢો વિર્ગિંચમાણે એગં વિર્ગિંચઈ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-
સપ્તકકા ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા
નિયમસે ક્ષય કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કિસ ગુણસે મુનિ ક્ષપકશ્રેણિકી યોગ્યતાકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? હસ
બાતકો સમજાનેકે લિયે કર્મોંકે ક્ષય કરનેમેં ઉદ્યત મુનિકે વિશેષણોં
કો કહતે હૈ—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મોક્ષકી અભિલાષારૂપ જિનમતકી ઓર અભિરુચિકા નામ શ્રદ્ધા
હૈ । હસ પ્રકારકી શ્રદ્ધાસે સમ્પન્નકા નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ હૈ । શ્રદ્ધા-
વાન્ વ્યક્તિ કેવલી અથવા અન્ય કિસી ભાવિતાત્મા સાધુકે સમીપ
ધર્મકા શ્રવણ કર સંયમકો ગ્રહણ કરતા હૈ । અરિહન્તદેવદ્વારા પ્રતિ-

ભવમા મુક્તિનો લાભ ન પામીને ણીળ અથવા ત્રીળ ભવમા તો નિયમથી મુક્તિને પ્રાપ્ત
કરવાવાળા થાય છે નો અબદ્ધાયુષ્ક છે તો તે તેજ ભવથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે

આવી રીતે “ પુઢો વિર્ગિંચમાણે એગં વિર્ગિંચઈ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વસપ્તકનો
ક્ષય કરવામા પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનતાનુબંધી ક્રોધનો નિયમથી
ક્ષય કરે છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કયા ગુણથી મુનિ ક્ષપક શ્રેણીની યોગ્યતાને પ્રાપ્ત કરે છે ? આ વાતને સમ-
જાવવા માટે કર્મોના ક્ષય કરવામા ઉદ્યત મુનિના વિશેષણોને કહે છે—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ

મોક્ષની અભિલાષારૂપ જિનમતની તરફ અભિરુચિનું નામ શ્રદ્ધા છે, આ
પ્રકારની શ્રદ્ધાથી સંપન્નનું નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ છે શ્રદ્ધાવાન્ વ્યક્તિ કેવળી
અથવા અન્ય કોઈ પણ ભાવિતાત્મા સાધુની સમીપે ધર્મનું શ્રવણ કરી સંયમને ગ્રહણ

કિંચ—‘લોગં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—લોગ ચ આણાપ અભિસમિષ્ઠ અકુતોમય ॥સૂ૦ ૮॥

જાપા—લોકં ચાડ્ડકયા અભિસમેત્ય અકુતોમયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ચ—સમ્યઃ સમુચ્ચયાર્થઃ । લોકં—પદ્મીવનિકાયરૂપમ્, આજ્ઞયા=મિન-પ્રવચનેન, અભિસમેત્ય=વિદિત્વા, અકુતોમયમ્=કુતચિત્ કારણાદુત્પદમાનસ્ય મય સ્યામાવો યથા મવતિ પદ્મીવનિકાયલોકસ્ય, તથારૂપં સપર્મં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ૦ ૮॥

પાવિત્ર આગમકે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપ ક્રમેણિકે યોગ્ય હોતા હૈ, અન્ય નહીં ।

માધાર્ય—અદ્વાસમ્પન્ન વ્યક્તિ સંયમકી આરાધના કર જબ સપ્તમ ગુણસ્થાનવર્તી હો જાતા હૈ તમી બહ ક્ષપક્રમેણિપર આરૂઢ હોનેકે યોગ્ય માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઔર ‘મી કહતે હૈ—“લોગં ચ” इत्यादि ।

યહાં “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમેં હૈ । મુનિ હસ પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકકો જિનપ્રવચન—આગમ—સે જાન કર ‘જિસ પ્રકાર મવિષ્યમેં વસ પદ્મ જીવનિકાયરૂપ લોકકો અપનેદ્વારા ‘મયકા અમાવ હો’ હસ પ્રકાર સંયમ કી આરાધના કરતા રહે ।

માધાર્ય—સંયમકી આરાધના કરનેકી આવશ્યકતા હસી લિયે હૈ કિ જિસસે અન્ય જીવોકી રક્ષા હોતી રહે । અસંયમ પ્રવૃત્તિસે જીવોકા ઘાત હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિયોકો હસ લોક ઔર પરલોકમેં સદા મયકા

કરે છે અરિક તદ્વાસ પ્રતિપાદિત આગમ—અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમત્ત સંયમી છવ ક્ષપક્રમેણીને યોગ્ય થાય છે—અન્ય નહિ.

જાપાર્થ—અદ્વાસમ્પન્ન વ્યક્તિ સંયમની આરાધના કરી અન્યરે ક્ષતમ સુશુસ્થાનવર્તી થઈ જાય છે ત્યારે તે ક્ષપક્રમેણી પર આરૂઢ હોવાના યોગ્ય માનવામા આવે છે ॥ સૂ ૭ ॥

વળી બીજુ પશુ કહે છે—“લોગં ચ” इत्यादि.

આ ઠેકાણે “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમાં છે મુનિ આ પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકને છવપ્રવચન—આગમથી અર્જુને જે પ્રકારે બવિષ્યમા તે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકને પોતાના દ્વારા જમનો અજાવ કોય જે પ્રકારે સંયમની આરાધના કરતા રહે.

જાપાર્થ—સંયમની આરાધના કરવાની આવશ્યકતા કોટલા માટે છે કે જેનાથી અન્ય જીવોની રક્ષા થતી રહે. અસંયમ પ્રવૃત્તિથી જીવોના ઘાત થાય છે. એવી

તદપિ ભયં પૃજીવનિકાયલોકસ્ય શસ્ત્રાદેવ ભવતિ । તસ્ય શસ્ત્રસ્ય કિં પ્રકર્ષ-
પરમ્પરાઽસ્તિ ? નાસ્તિ વા ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયામ્ ‘અસ્તી’-તિ વોધયિતુમાહ—
‘અત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

યદ્વા-શસ્ત્રતો ભયં ભવતિ, અતસ્તત્ પરિઘર્તવ્યમિત્યાશયેન-શસ્ત્રં કથયતિ—
‘અત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અત્થિ સત્થં પરેણ પરં, નત્થિ અસત્થં પરેણ પરં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—અસ્તિ શસ્ત્રં પરેણ પરમ્, નાસ્તિ અશસ્ત્રં પરેણ પરમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—શસ્ત્રં=દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દિવિધં; તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વડ્ગાદિકં, તત્ પરેણ પરમ
સ્તિ, લોઘ્કર્તૃસંસ્કારાનુસારેણ દ્રવ્યશસ્ત્રં તીવ્રાત્ તીવ્રતરમસ્તીત્યર્થઃ । યદ્વા-યત્ પીઢા-
સામના કરના પડતા હૈ । સંયમી જીવ હસ પ્રકારકે ભયસે સદા નિર્મુક્ત
રહતે હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકે લિયે ભય શસ્ત્રસે હી હોતા હૈ । યહ
વાત જવ નિશ્ચિત્ત હૈ તો ક્યા ઉસ શસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હૈ યા નહીં ? હસ
પ્રકારકી શિષ્યકી આશઙ્કાકા ઉત્તર કહતે હૈ—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ ।

અથવા-શસ્ત્રસે ભય હોતા હૈ; અતઃ ઉસકા પરિહાર કરના ચાહિયે,
હસ આશયસે શસ્ત્રકો કહતે હૈ—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ ।

શસ્ત્ર, દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે દો પ્રકારકા હૈ । તલવાર વગૈરહ દ્રવ્ય
શસ્ત્ર હૈ । હનમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા, શસ્ત્રકો બનાવેવાલે લુહારકે સંસ્કાર
કે અનુસાર આતી હૈ । કોઈ તલવાર અત્યન્ત તીક્ષ્ણ હોતી હૈ ઔર કોઈ
ઉસસે મી અધિક । અથવા જો જીવકો પીઢાકારક હોતા હૈ વહી શસ્ત્ર

વ્યક્તિઓને આ-લોક અને પરલોકમા સદા ભયનો સામનો કરવો પડે છે સચમી
ભવ આ પ્રકારના ભયથી સદા નિર્મુક્ત રહે છે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આ ષડ્ભુવનિકાયરૂપ લોકના માટે ભય શસ્ત્રથી જ થાય છે એ વાત બ્યારે
નિશ્ચિત છે તો શું તે શસ્ત્રમા પ્રકર્ષની પરપરા છે યા નહિ ? આ પ્રકારે શિષ્યની
આશંકાનુ ઉત્તર કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ

અથવા શસ્ત્રથી ભય થાય છે, માટે તેનો પરિહાર કરવો બેધએ, એ આશ-
યથી શસ્ત્રને કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ

શસ્ત્ર દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારે છે તલવાર વિગેરે દ્રવ્ય-શસ્ત્ર
છે તેમા પ્રકર્ષની પરપરા, શસ્ત્રના બનાવવાળા લુહારના સંસ્કાર અનુસાર આવે
છે, કોઈ તલવાર અત્યંત તીક્ષ્ણ હોય છે અને કોઈ તેનાથી યથા અધિક. અથવા
જે ભવોને પીઢાકારક થાય છે તે શસ્ત્ર છે. પીઢાકારક એક જ વસ્તુથી અન્ય

કારકં તદેવ શક્ષમિત્યુચ્યતે । एकस्मात् पीडाजनकादन्यत् पीडाजनकं प्रादुर्मभवति । यथा-सहगामिघातेन शिरपीडा, ततो ज्वरः, ततोऽपि मूर्च्छादय इति । भावशक्त्यस्य पारम्पर्यं स्वैवोद्देशके 'जे कोहवसी' इत्यादिनाऽनुपदं वक्ष्यति ।

यथा शक्त्यस्य पारम्पर्यमस्ति, न तथा पारम्पर्यमशक्त्यस्यास्तीत्याह—'नास्ति' इत्यादि । अशक्तं संयमः, तत् परेण परं नास्ति—प्रकर्षपरम्परायुक्तं न भवतीत्यर्थः । यथा पृथिव्यादिनीवेषु स्वात्मना समभावः कर्तव्यः, तत्र—'एगे आया' इति मगवद्वचनाद् मन्दतीव्रमदो नास्ति, तस्मात् तत्र समत्पसङ्गात् सामायिकस्य न प्रकर्षपारम्पर्यम् । यद्वा-शैलश्चक्रवर्त्तासयमात्परः संयमो नास्ति, तदूर्ध्वं शुभस्यान-भावादिति भावः ॥ सू० ९ ॥

है । पीडाकारक एक ही वस्तुसे अन्य अनेक बातें उत्पन्न होती हैं, जैसे तलवारद्वारा मारनेसे लगनेवालेके शिरमें पीडा, उससे ज्वर, उससे भी उसे मूर्छा आदि दुःख होते हैं । ये सब बातें द्रव्यशक्त्यमें प्रकर्ष परम्पराकी चोतक हैं ।

भावशक्त्यमें प्रकर्षकी परम्परा इसी उद्देशमें इसीके आगे "जे को हवसी" इस सूत्रमें कहेंगे । जिस प्रकार शक्त्यमें प्रकर्षकी परम्परा है उस प्रकार अशक्त्यमें प्रकर्षपरम्परा नहीं है, इस बातको "नत्थि" इस वाक्य से सूत्रकार प्रकट करते हैं—अशक्त नाम संयमका है, वह "परेण पर नास्ति" प्रकर्षपरम्परासे युक्त नहीं होता है । जैसे—पृथिवीकायिकादि जीवोंमें संयमीको आत्मतुल्यताकी भावना रखनी चाहिये, क्यों कि यह ध्वન है "एगे आया" आत्मा एक है । इस प्रकारकी भावનારૂપ સંયમ મેં મન્દ ઓર તીવ્ર મેવ નહીં છે । इस कारण समस्त पृथिवीकायिकादि

અનેક વાતો ઉત્પન્ન થાય છે જેમ-તલવાર દ્વારા મારવાથી લાગવાવાળાના માથામાં પીડા, તેનાથી જ્વર, તેનાથી તેને મૂર્છા આવે છે, તે સમગ્રી વાતો દ્રવ્યશક્ત્યમાં પ્રકર્ષપરંપરાની ચોતક છે

ભાવશક્ત્યમાં પ્રકર્ષની પરંપરા આ જ ઉદ્દેશમાં બેનાથી આવળના "જે કોહવસી" એ સૂત્રમાં કહેવામાં આવે છે જે પ્રકારે શક્ત્યમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે તે પ્રકારે અશક્ત્યમાં પ્રકર્ષપરંપરા નથી એ વાતને "નત્થિ" ઇત્યાદિ વાક્યથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે અશક્ત નામ સંયમનું છે, તે "પરેણ પર નાસ્તિ" પ્રકર્ષ-પરંપરાથી મુક્ત થતું નથી જેમ-પૃથિવીકાયાદિ જીવોમાં સંયમીએ આત્મ તુલ્યતાની ભાવના રાખવી જોઈએ, કારણ કે ભગવાનનું એ વચન છે—'એગે આયા' આત્મા એક છે આ પ્રકારની ભાવનારૂપ સંયમમાં મન્દ અને તીવ્ર એક નથી એ કારણથી સમસ્ત પૃથિવીકાયાદિક જીવોમાં સમતાશાળી સંયમીના સમાધિક

ભાવશસ્ત્રં કથં પરેણ પરમસ્તીત્યાહ—‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જે કોહદંસી સે માણદંસી, જે માણદંસી સે માયા-
દંસી, જે માયાદંસી સે લોહદંસી, જે લોહદંસી સે પેજ્જદંસી,
જે પેજ્જદંસી સે દોસદંસી, જે દોસદંસી સે મોહદંસી, જે મોહદંસી
સે ગબ્બદંસી, જે ગબ્બદંસી સે જમ્મદંસી, જે જમ્મદંસી સે
મારદંસી, જે મારદંસી સે નરયદંસી, જે નરયદંસી સે તિરિયદંસી,
જે તિરિયદંસી સે દુક્ખદંસી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જીવોંમેં સમતાશાલી સંયમીકે સામાયિકરૂપ ચારિત્રમેં તીવ્રમન્દરૂપ
પ્રકર્ષકી પરમ્પરા નહીં હૈ । અથવા—શૈલેશી અવસ્થાકે સંયમસે આગે ગુણ-
સ્થાનકા અભાવ હોનેસે ઔર કોઈ પર-ઉત્કૃષ્ટ-સંયમ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં હોતી હૈ, ક્યોં કિ
હસી ગુણસ્થાનમેં ચારિત્રકી પૂર્ણતા હોતી હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્રસે ઔર
કોઈ ચારિત્ર તો એસા ઉત્કૃષ્ટ હૈ નહીં જો હસસે મી અધિક ઉત્કૃષ્ટ હો,
હસ લિયે હસ અવસ્થાકે ચારિત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરાકા નિષેધ હૈ । ચારિત્ર
કે મેદોંમેં પરસ્પર પ્રકર્ષાપ્રકર્ષવૃત્તિ મલે હી હો પરન્તુ કિસી મી ચારિત્ર
મેં નિજમેં પ્રકર્ષાપ્રકર્ષવૃત્તિ નહીં હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષકી
અવધિસ્વરૂપ હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરાકો સ્પષ્ટ કર અવ ‘ભાવશસ્ત્રમેં વહ પ્રકર્ષ-
પરમ્પરા કૈસે હૈ ?’ હસે સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

૩૫ ચારિત્રમા તીવ્રમદૃષ્ટ પ્રકર્ષની પરપરા નથી અથવા શૈલેશી અવસ્થાના
સંયમથી આગળ ગુણસ્થાનનો અભાવ થવાથી બીજો કોઈ ઉત્કૃષ્ટ સંયમ નથી.

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદમા ગુણસ્થાનમા થાય છે, કારણ કે તે
ગુણસ્થાનમા ચારિત્રની પૂર્ણતા થાય છે યથાખ્યાત-ચારિત્રથી બીજા કોઈ ચારિત્ર
તો એવું ઉત્કૃષ્ટ છે નહિ કે જે એનાથી પણ અધિક ઉત્કૃષ્ટ હોય. માટે આ અવસ્થાના
ચારિત્રમા પ્રકર્ષની પરપરાનો નિષેધ કરે છે ચારિત્રના લેહોમા પરસ્પર પ્રકર્ષ-
પ્રકર્ષ વૃત્તિ ભલે હોય પરંતુ કોઈ પણ ચારિત્રમા પોતામા પ્રકર્ષાપ્રકર્ષવૃત્તિ
નથી. યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષની અવધિસ્વરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમા પ્રકર્ષપરપરાને સ્પષ્ટ કરીને હવે ‘ભાવશસ્ત્રમાં તે પ્રકર્ષ
પરપરા કેવી રીતે છે ?’ તેને સ્પષ્ટ કરવા માટે કહે છે—‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ.

છાયા—યઃ ક્રોધદર્શી સ માનદર્શી, યઃ માનદર્શી સ માયાદર્શી, યો માયાદર્શી સ લોભદર્શી, યો લોભદર્શી સ મેમદર્શી, યઃ મેમદર્શી સ દ્વેષદર્શી, યો દ્વેષદર્શી સ મોહદર્શી, યો મોહદર્શી સ ગર્ભદર્શી, યો ગર્ભદર્શી સ જન્મદર્શી, યો જન્મદર્શી સ મારદર્શી, યો મારદર્શી સ નરકદર્શી, યો નરકદર્શી સ તિર્યગ્દર્શી, યસ્તિર્યગ્દર્શી સ દુઃસ્વદર્શી ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—યઃ ક્રોધદર્શી ક્રોધં પश्यति—માવયતિ ક્રુધ્યતીત્યર્થઃ, ક્રોધં દર્શયતીતિ યાવત્ । યથા ક્રુદ્ધસ્ય દષ્ટિસ્તીત્રા, પ્રસન્નચિત્તસ્ય તુ સિતકમલકદવલા મન્વતિ સ માનદર્શી માનં પश्यति—માવયતિ, ગર્ભં દર્શયતીતિ યાવત્ । एवमग्रेऽपि योजनीयं यावत्—‘સ મોહદર્શી’તિ । યો મોહદર્શી—મોહાઽઽક્રાન્ત, સ ગર્ભદર્શી ગર્ભં પश्यति—ગર્ભવાસોદ્ભૂતદુઃસ્વાનુભવી મન્વતીત્યર્થઃ । एवं—‘સ તિર્યગ્દર્શી’—તિ

જો ક્રોધદર્શી હૈ અર્થાત્ ક્રોધકો દેખતા હૈ—ક્રોધ કરનેકી આધના કરતા હૈ—ક્રુદ્ધ હોતા હૈ, દુસરે વ્યક્તિ પર ક્રોધ દિશ્વલાતા હૈ, જૈસે—‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિકી દષ્ટિ તીવ્ર હોતી હૈ, પ્રસન્નચિત્તાવાલેકી સફેદ કમલ જૈસી ઘલ હોતી હૈ’ હસ પ્રકારસે જો દુસરેકિ સ્થિતે દષ્ટિ ઘૈરહ ચિહ્નોસે અપની ક્રોધપરિણતિ દિશ્વલાતા હૈ—પ્રકટ કરતા હૈ ઘહ માન દર્શી હોતા હૈ—માનકો દેખતા હૈ—માન કરનેકી આધના કરતા હૈ, માન કરતા હૈ—અન્યકે લિયે ઘહ અપની માનપરિણતિ પ્રકટ કરતા હૈ । હસી પ્રકાર જો માનદર્શી હૈ ઘહ માયાદર્શી હોતા હૈ । જો માયાદર્શી હૈ ઘહ લોભદર્શી હૈ । જો લોભદર્શી હૈ ઘહ રાગદર્શી હૈ । જો રાગદર્શી હૈ ઘહ દ્વેષદર્શી હૈ । જો દ્વેષદર્શી હૈ ઘહ મોહદર્શી હૈ । જો મોહદર્શી હોતા હૈ ઘહ ગર્ભદર્શી હોતા હૈ । હસકા આય ઘહ હૈ ફિ—મોહદર્શી માણી ગમી

જે દ્રવ્યદર્શી છે અર્થાત્ ક્રોધને દેખે છે—ક્રોધ કરવાની આધના કરે છે—ક્રુદ્ધ થાય છે, બીજા વ્યક્તિના ઉપર ક્રોધ દેખાડે છે જેમ—‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિની દષ્ટિ તીવ્ર હોય છે પ્રસન્ન ચિત્તવાળાની સફેદ કમલ જેવી ધવળ હાય છે’ એવા પ્રકારથી જે બીજાઓને માટે દષ્ટિ વિગેરે ચિન્હાથી પોતાની ક્રોધ—પરિણતિ દેખાડે છે—પ્રકટ કરે છે તે માનદર્શી થાય છે—માનને દેખે છે—માન કરવાની આધના રાખે છે, માન કરે છે—બીજાને માટે તે પોતાની માન—પરિણતિ પ્રગટ કરે છે એ પ્રકારે માનદર્શી છે તે માયાદર્શી કીય છે જે માયાદર્શી છે તે લોભદર્શી છે, જે લોભદર્શી છે તે રાગદર્શી છે જે રાગદર્શી છે તે દ્વેષદર્શી છે જે દ્વેષદર્શી છે તે મોહદર્શી છે ૭ માનદર્શી છે તે ગર્ભદર્શી છે તેના આય એ છે કે—માનદર્શી માણી ગમીઆસથી ઉત્પન્ન થનન્

યાવદવગન્તવ્યમ્ । યસ્તિર્યગ્દર્શી=તિર્યગ્ભવનિગોદસમ્બન્ધિદુઃસ્વદર્શી, સ દુઃસ્વદર્શી
-ઇહ દુઃસ્વશબ્દેન સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટતમં નિગોદભવસમ્બન્ધિ દુઃસ્વં પરિગૃહ્યતે, તત્
પશ્યતિ=અનુભવતીત્યર્થઃ । एतेन गर्भदर्शीत्यादावपि दुःस्वदर्शित्वेन तिर्यग्दर्शिन
एव दुःस्वदर्शित्वकथनमयुक्तमिति शङ्कावसरो नास्तीति बोध्यम् । अनेन-पारम्पर्या-
पन्नस्य सर्वस्य भावशस्त्रस्य निदानं क्रोधः, तथा सर्वतः समुत्कृष्टदुःस्वं निगोदभ-
वेऽस्तीति ध्वनितम् ॥ सू० १० ॥

વાસસે ઉત્પન્ન અનન્ત યાતનાઓનો ભોગતા હૈ । इसी प्रकार जो गर्भ-
दर्शी है वह जन्मदर्शी है । जो जन्मदर्शी है वह मरणदर्शी है । जो मर-
णदर्शी है वह नरकदर्शी है । जो नरकदर्शी है वह तिर्यग्दर्शी है, जो
तिर्यग्दर्शी है अर्थात् तिर्यग्भगतिस्वरूप निगोदके दुःस्वोंका अनुभवकर्त्ता
है वह वहांके सर्वोत्कृष्ट दुःस्वोंका अनुभव करता है । यही भाव
“स दुःस्वदर्शी ” इस पदसे सूत्रकारने प्रकट किया है । यहां दुःस्व-
शब्दसे सर्वोत्कृष्ट निगोदसम्बन्धी दुःस्वों का ही ग्रहण किया है । इस
लिये “जो गर्भदर्शी ” इत्यादि पद हैं उनमें भी दुःस्वदर्शित्व तो आता
ही है, फिर भी जो तिर्यग्दर्शी में ही दुःस्वदर्शित्व स्वतन्त्र रूपसे प्रकट
किया गया है वह अयुक्त है । इस प्रकारकी शङ्का करनेका यहां अवसर
ही नहीं प्राप्त होता है । इस समस्त कथनसे यह ध्वनित होता है कि
इस प्रकर्षपरम्पराप्राप्त भावशस्त्रका निदान-मूल कारण-क्रोध है और
सबसे उत्कृष्ट दुःस्व निगोदभवमें है ।

યાતનાઓને ભોગવે છે એ પ્રકારે જે ગર્ભદર્શી છે તે જન્મદર્શી છે જે જન્મ-
દર્શી છે તે મરણદર્શી છે, જે મરણદર્શી છે તે નરકદર્શી છે જે નરકદર્શી છે
તે તિર્યગ્દર્શી છે જે તિર્યગ્દર્શી છે અર્થાત્ તિર્યગ્ભગતિસ્વરૂપ નિગોદના હુ ખોનો
અનુભવકર્તા છે, તે ત્યાના સર્વોત્કૃષ્ટ હુ ખોનો અનુભવ કરે છે. એ જ ભાવ.
“સ દુઃસ્વદર્શી ” એ પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે અહીં હુ ખ-શબ્દથી
સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસમ્બન્ધી હુ ખોનું જ ગ્રહણ કરેલ છે માટે જે “ગર્ભદર્શી” ઇત્યાદિ
પદ છે તેમા પણ હુ ખ-દર્શિત્વ તો આવેજ છે તો પણ જે તિર્યગ્દર્શીમાં જ
હુ ખ-દર્શિત્વ સ્વતન્ત્ર રૂપથી પ્રગટ કરેલ છે તે અયુક્ત છે આ પ્રકારની શંકા
કરવાનો આ ઠેકાણે અવસર જ પ્રાપ્ત થતો નથી, આ સમસ્ત કથનથી એ ધ્વનિત
થાય છે કે આ પ્રકર્ષપરમ્પરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રનું નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ છે અને
ખધાથી ઉત્કૃષ્ટ હુ ખ નિગોદભવમા છે

યસ્ય મુમુક્ષુઃ, સ ક્રોધાદિકં પરિહરેદિત્યાહ—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સે મેહાવી અભિણિવદિજ્ઞા ક્રોહ ચ માળ ચ માર્ય ચ લોહં ચ પેજ્ઞ ચ દોસ ચ મોહ ચ ગઠમં ચ જમ્મ ચ મારં ચ નરય ચ તિરિય ચ દુષ્સ ચ । યય પાસગસ્સ દસણ ઉવરયસ થયસ્સ પલિયતકરસ્સ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—સ મેહાવી અભિનિવર્તયત્ ક્રોધં ચ માનં ચ માર્યાં ચ લોમં ચ પ્રેમ ચ દ્વેષં ચ મોહં ચ ગર્મં ચ જન્મ ચ મારં ચ નરકં ચ તિર્યઞ્ચં ચ દુસ્ત ચ । एतत् पश्य-कस्य दर्शनम्, उपरतस्रस्तस्य पर्यन्तकरस्य ॥ सू० ૧૧ ॥

ટીકા—સ મેહાવી ક્રોધાદિમોહાન્તં માવશઞ્ચં, તથા—ગર્માદિદુઃસ્વાન્ત તત્ત્વયો ગફલમૂતમ્, અભિનિવર્તયેત્—પરિહરેત્—અપનયેદિત્યર્થઃ । ક્રોધાદિમોહાન્તં માવશઞ્ચં સર્વથા પરિવર્જયેત્, યેન ગર્મદુઃસ્વાદારમ્ય નિગોવદુ રં યાન્ત્ સર્વમપિ દુઃસં ન પ્રાપ્નુયાદિતિ માનઃ ।

માવાર્થ—યે ક્રોધાદિક પર-માવ હી માવશઞ્ચ હૈં ઔર ક્રોધસે માન, માનસે માયા, માયાસે લોમ, इत्यादि रूपसे उनमें प्रकर्षपरम्परा है; यह बात प्रकट की गई है ॥ सू० ૧૦ ॥

જો મુમુક્ષુ—મોક્ષ જાનેલી હચ્છા રસનેવાલા હો ઉસકો ક્રોધાદિકકય પરિહાર કર દેના વાહિયે, હસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈં—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

બહ મેહાવી મુનિ ક્રોધસે છગાકર મોહ તક માવશઞ્ચકા તથા ઉન કે પ્રયોગસે ઉત્પન્ન ઉનકે ફલસ્વરૂપ ગર્માવાસકે દુઃસ્વોસે લેકર નિગોવકે દુઃસ્વો તકકા પરિહાર કરે, અર્થાત્—બુદ્ધિમાનકા કર્તવ્ય હૈં કિ બહ ક્રોધાદિક કષાયરૂપ માવશઞ્ચકા પરિત્યાગ કરે । કયોંકિ ક્રોધાદિકપાર્યોંકે કરને સે કસાંકો અનેક પ્રકારકે દુઃસ્વોંકો મોગના પડતા હૈં । ગર્માવાસકે દુઃસ્વોં

ભાવાર્થ—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ જ ભાવશઞ્ચ છે અને ક્રોધથી માન, માનથી માયા, માયાથી લોભ, इत्यादि रूपથી તેમાં પ્રકર્ષપરમ્પરા છે, એ વાત પ્રગટ કરી છે ॥ સૂ ૧ ॥

જે મુમુક્ષુ—મોક્ષ જવાની ઇચ્છા રાખનારા હોય તેને ક્રોધાદિકનો પરિહાર કરી દેવો એઈએ આ વાતને પ્રગટ કરે છે—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

તે મેહાવી મુનિ ક્રોધથી લઇ મોહ સુધી ભાવશઞ્ચને તથા તેના પ્રયોગથી ઉત્પન્ન તેના ફલસ્વરૂપ ગર્માવાસના દુઃખથી લઇને નિવોદના દુઃખે સુધીનો પરિહાર કરે, અર્થાત્ બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય છે કે તે ક્રોધાદિકકષાયરૂપ ભાવશઞ્ચનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે ક્રોધાદિક કષાયોના કલ્યાણથી કલેને તેનાથી અનેક પ્રકારના દુઃખો મોગવા

एतच्च मया न स्वबुद्धिकल्पनया कथ्यते, किंतु भगवतस्तीर्थंकरस्य समीपे तदुपदेशवचनं यथा मया श्रुतं तथा निगद्यते, इत्याशयेनाह—‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इत्यादि । अत्रैवोद्देशे कृतव्याख्यानमेतत् ॥ सू० ११ ॥

असौ तीर्थंकरः कथंभूतः ? इत्यत आह—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—आयाणं निसिद्धा सगडब्धिम् ॥ सू० १२ ॥

छाया—आदानं निषेद्धा स्वकृतभित् ॥ सू० १२ ॥

સે ખી અનન્તગુને કષ્ટ નિગોદમેં જીવ ઇનકે કરનેકે હી ફલસ્વરૂપ ભોગતા હૈ । અતઃ મુનિકે લિયે ક્રોધાદિ કષાયોંકા પરિહાર કરના હી સર્વશ્રેયસ્કર હૈ । ઇનકા પરિહાર કરનેસે ફિર ઉસકો ગર્ભવાસાદિક તથા નિગોદકે અનન્ત કષ્ટોંકો નહીં સહના પડતા હૈ । ઇનકા ત્યાગ કરના હી ઉન દુઃખોંકે અભાવકા હેતુ હૈ । શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! યહ જો કુછ ખી મૈને યહાં તક પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત કર નહીં કિયા હૈ; કિન્તુ ભગવાન્ તીર્થંકર શ્રીવર્ધમાનસ્વામીકે સમીપ ઉનકે ઉપદેશરૂપ વચન જૈસા મૈને સુના હૈ ઉસી તરહસે કહા હૈ । હસી આશયસે શ્રી સુધર્માસ્વામી “ એયં પાસગસ્સ દંસણં ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કી સાક્ષી દેતે હૈ । હિસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન હસી ઉદ્દેશકે પહેલે સૂત્રમેં કિયા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

જિનકા યહ દર્શન હૈ વે તીર્થંકર ભગવાન્ કૈસે હોતે હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ આયાણં ’ ઇત્યાદિ ।

પડે છે ગર્ભાવાસના દુ ખોથી અન તગણા કષ્ટ નિગોદમા જીવ તેના કરવાના ફળ સ્વરૂપ ભોગવે છે, અતઃ મુનિ માટે ક્રોધાદિ કષાયોના પરિહાર કરવો જ સર્વશ્રેયસ્કર છે તેનો પરિત્યાગ કરવાથી ફરીથી તેને ગર્ભાવાસાદિકના તથા નિગોદના અન ત દુઃખોને સહન કરવા પડતા નથી તેનો ત્યાગ કરવું જ તે દુ ખોના અભાવનો હેતુ છે.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે—હે જમ્બૂ ! આ જે કાઈ પણ મે અહીંયા સુધી પ્રતિપાદન કરેલ છે તે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી કહેલ નથી, પણ ભગવાન તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના સમીપે તેના ઉપદેશરૂપ વચન જેવું મે સાંભળેલ છે તે જ મે કહેલ છે તે આશયથી શ્રી સુધર્માસ્વામી “એયં પાસગસ્સ દંસણં” ઇત્યાદિ સૂત્રની સાક્ષી આપે છે આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ ઉદ્દેશના પહેલા સૂત્રમા કરવામા આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

જેનું આ દર્શન છે તે તીર્થંકર ભગવાન કેવા હોય છે ? તે કહે છે—‘આયાણં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—આદાનમિત્તિ—આદાન કર્મોપાદાન ક્રોધ, નિયેદા—અપનેતા સ્વકૃત મિત્તિ—પૂર્વોપાર્જિત કર્મોપપિતા મમતીત્યર્થ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

જમ્બુસ્વામી પૂછવિ—‘કિમત્થિ ઉવાહી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ—કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ? , ન વિજ્ઞાનત્થિસિ ઘેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

જાણા—કિમત્થિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય, ન વિધતે નાસ્તીતિ ઘણીમિ ॥ ૧૩ ॥

ટીકા—પશ્યકસ્ય=કેવલિનઃ, ઉપાધિઃ ઉપાધીયતે ઇત્યુપાધિઃ, તત્ત્વ દ્રવ્યોપાધિર્હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, માલોપાધિર્જ્ઞાનાવરણીયાધિકં કર્મ, યદ્વા—ઉપાધીયતે ધ્યપ

આદાન=કર્મોકે ઉપાદાન—ગ્રહણ કરનેમે પ્રધાનકારણ એસે ક્રોધકા જો પરિહાર કરતા હે વહ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોકા વિનાશક હોતા હે ।

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોકા મૂલ કારણ ક્રોધ હે, એસા સમગ્રકર તીર્થકૂર ભગવાનને હસકા સર્વથા પરિહાર કિયા હે । અતઃ હસકે પરિહારસે ઘે નવીન કર્મોકે વધક નહીં હુય, હતના હી નહીં, ડનકી આત્મામે જો કુછ પૂર્વસંચિત કર્મ ઘે ડનકો મી સચરકી પ્રાપ્તિસે ડન તીર્થકૂર પ્રમુને નષ્ટ કર દિયે । હમલિયે મોક્ષાભિલાષી મુનિકા કર્તવ્ય હે કિ વહ વીતરાગ તીર્થકૂરપ્રમુકા આદર્શ સામને રલ્લકર ડસ માર્ગકા અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

અય ઉપાધિ કે વિષયમે કહતે હે—‘કિમત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

જમ્બુસ્વામી મી સુધર્માસ્વામીસે પૂછતે હે કિ—હે ભદ્રન્ત ! કેવલી ભગવાનકે ઉપાધિ હે કયા ? મી સુધર્માસ્વામી કહતે હે કિ ડનકે કિસી મી પ્રકારકી ઉપાધિ નહીં હે । હિરણ્યસુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય—ઉપાધિ ઓર

આદાન=કર્મોના ઉપાદાન—ગ્રહણ કરવામા પ્રધાન કારણ ને ક્રોધ છે તેના ને પરિહાર કરે ॥ તે પાતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના વિનાશક બને છે

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોનું મૂલ કારણ ક્રોધ છે એવું સમજીને તીર્થકર ભગવાને તેના સર્વથા પરિહાર કરેલ છે, માટે તેના પરિહારથી તે નવીન કર્મોના વધક નથી થયા, એટલું જ નહિ, એટલા કદ તેની આત્મામા પૂર્વ સંચિત કર્મ હતા તે સ્વચરની પ્રાપ્તિથી તે તીર્થકર પ્રમુખે નષ્ટ કરી નાખ્યા. માટે મોક્ષાભિલાષી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે વીતરાગ પ્રમુખે આદર્શ સામે સમીને તે માર્ગનું અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

હવે ઉપાધિના વિષયમા કહે છે—‘કિમત્થિ’ ઇત્યાદિ.

જમ્બુસ્વામી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદ્રન્ત ! કેવળો ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ? મી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે તેને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ નથી. હિરણ્ય સુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય—ઉપાધિ અને જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મ આવ—ઉપાધિ આ

દિશ્યતે યેનેત્યુપાધિઃ-કર્મજનિતો નરકાદિભવઃ, અસ્તિ કિમ્ ? । શ્રીસુધર્માસ્વામી ઉત્તરયતિ-ન વિદ્યતે । ‘નાસ્તિ’ इति-ઉત્તરવાક્યાર્થસ્ય દાઢ્યવોધનાય, અધ્યયન-સમાપ્તિસૂચનાય વાડ્યતઃ પુનઃ કથનમ્ । યદ્વા-‘ન વિદ્યતે’ इत्यन्तं પ્રશ્નવાક્યમ્ । પશ્યકસ્યોપાધિઃ કિમસ્તિ, ઉત ન વિદ્યતે ? અત્રોત્તરમાહ-નાસ્તીતિ । અષ્ટવિધં કર્મ, કર્મજનિતનરકાદિભવો વા કેવલિનો ન ભવતીત્યર્થઃ । તથા ચોક્તં--

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મ ભાવ-ઉપાધિ, હસ પ્રકારસે ઉપાધિકે દો ભેદ હૈં; હનમેંસે કોઈ મી ઉપાધિ ઉનકે નહીં હૈ । અથવા કર્મજનિત જો નરકાદિ પર્યાય હૈ વહ મી ઉપાધિ હૈ, યહ ઉપાધિ મી ઉનમેં નહીં હૈ । પ્રશ્ન ઓર ઉત્તરકે રૂપમેં યહ સૂત્ર હૈ, જૈસે-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ” કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ?, યહાં તક પ્રશ્નવાક્ય હૈ “ન વિજ્જહ નત્થિ”-ન વિદ્યતે નાસ્તિ, યહ ઉત્તર વાક્ય હૈ । અર્થાત્ સર્વજ-તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? નહીં હૈ । યહાં પર “ન વિદ્યતે” હસ ક્રિયાકી પર્યાયવાચી ક્રિયા જો “નાસ્તિ” વતલાઈ હૈ, સો ઉત્તરવાક્યકે અર્થકી દૃઢતા સમજાનેકે લિયે, ઓર અધ્યયનકી સમાપ્તિ સૂચન કરનેકે લિયે ।

અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” યહાં તક પ્રશ્ન-વાક્ય હૈ, ઓર “નત્થિ” યહ ઉત્તરવાક્ય હૈ । અર્થાત્-સર્વજ-તીર્થઙ્કરકો ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? યહાં તક શિષ્યકા પ્રશ્ન હૈ । ગુરુકા ઉત્તર હૈ-‘નત્થિ’-નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ-કેવલી તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ન અષ્ટવિધ કર્મરૂપ ઉપાધિ હૈ ઓર ન કર્મજન્ય-નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ હી હૈ, વે ઉપાધિસે નિર્મુક્ત

પ્રકારે ઉપાધિના એ ભેદ છે તેમાંથી કોઈ પણ ઉપાધિ તેને નથી અથવા કર્મજનિત જે નરકાદિ પર્યાય છે તે પણ ઉપાધિ છે, તે ઉપાધિ પણ તેમનામાં નથી પ્રશ્ન અને ઉત્તરના રૂપમાં એ સૂત્ર છે, જેમ-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ”-કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ? આહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે “ન વિજ્જહ નત્થિ”-નવિદ્યતે નાસ્તિ એ ઉત્તર વાક્ય છે અર્થાત્ સર્વજ તીર્થ કર ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ?, નથી. આ ઠેકાણે “ન વિદ્યતે” આ ક્રિયાની પર્યાયવાચી ક્રિયા જે “નાસ્તિ” બતાવી છે તે ઉત્તરવાક્યના અર્થની દૃઢતા સમજાવવા માટે, અને અધ્યયનની સમાપ્તિ સૂચન કરવા માટે અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહો પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” આહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે, અને ‘નત્થિ’ આ ઉત્તરવાક્ય છે અર્થાત્ સર્વજ તીર્થ કરને ઉપાધિ છે કે નહિ ? આહી સુધી શિષ્યનો પ્રશ્ન છે ગુરુનો ઉત્તર છે-‘નત્થિ’ નથી

ભાવાર્થ-કેવળી તીર્થ કર ભગવાનને અષ્ટવિધકર્મરૂપ ઉપાધિ નથી, અને કર્મજન્ય નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ પણ નથી તે તો ઉપાધિથી નિર્મુક્ત છે.

“દગ્ધે ધીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાકુર ।

કર્મધીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ મયાકુર ॥ ૧ ॥” હિતિ ॥

હિતિ પ્રવીમિ—હિતિ=હવં, પ્રવીમિ=યથા શ્રુતં મગવન્મુસાત્ તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૦ ૧૩ ॥

॥ તૃતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદેશ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૪ ॥

“તૃતીયેઽધ્યયને સુસમાગરુકી ચ વર્ણિતી ।

સુસદુઃસં મુનિસ્થે ચ, કારણં ક્રોધનર્જનમ્” ॥ ૧ ॥ હિતિ ॥

॥ હિતિમી ચિન્થનિસ્થાત્—જગદ્દુઃખ—પ્રસિદ્ધવાચક—પચ્ચદશમાપાકસ્મિતસસ્મિત—

કલાપાઽઽભાપક—મવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક—આદિમાનમર્દક—ઘાઠ

છપ્રપતિ—કોલ્હાપુરરાજપદ્મ—“જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય”—પદ્મશ્રુપિત—કોલ્હાપુર

રાજગુરુ—શાલગ્રામચારિ—જૈનાચાર્ય—જૈનધર્મવિધાકર—પૂજ્ય—મી

ધાસીલાલ—વૃત્તિવિરચિતાયામ્ આચારાશ્રમ્નસ્યાચારચિન્તા

મષ્ટિટીકાયાં ક્ષીતોઽર્ણીયાસ્ય તૃતીયમધ્યયનં સપૂર્ણમ્ ॥ ૩ ॥

હૈં । ક્યોં કિ ઉનકે કર્મરૂપી ધીજ જલ શુકા હૈ, કહા મી હૈ—

“દગ્ધે ધીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાકુર ।

કર્મધીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ મયાકુર ॥ ૧ ॥” હિતિ ।

જિસ પ્રકાર ધીજકે મષ્ટ હોનેપર અકુર ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈં उसी प्रकार कर्मरूपी धीजके बिनाश होने पर संसाररूपी अकुर उत्पन्न नहीं होता है । ‘सि वे मि’ ‘इति प्रवीमि’ इस प्रकार मैं कहता हूँ, अर्थात्—मगवानके मुखसे मैंने जैसा सुना है वैसा ही तुमसे कहता हूँ ॥ सू. ० १३ ॥

ત્રીસરે અધ્યયન કા ચોથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

इस तृतीय अध्ययनके चार उद्देशोर्मां यथाक्रमसे इस प्रकार विषय वर्णित हुए हैं ।

કાશ્વ ઠે તેને કર્મરૂપી ધીજ બળી ગયેલ છે, કશું પણ છે—

“દગ્ધે ધીજે યથાઽત્યન્તં પ્રાદુર્ભવતિ નાકુર ।

કર્મધીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ મયાકુર ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે બીજનો નાશ થવાથી અકુર ઉત્પન્ન થતો નથી તે પ્રકારે કર્મ રૂપી બીજનો વિનાશ થવાથી સંસારરૂપી અકુર ઉત્પન્ન થતો નથી.

‘સિ વેમિ’ હિતિ પ્રવીમિ—આ પ્રકારે હું કહું છું અર્થાત્ મગવાનનાં મુખથી મેં જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું ॥ સૂ. ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

આ ત્રીજા અધ્યયનનાં ચાર ઉદ્દેશોર્માં યથાક્રમથી આ પ્રકારે વિષય વર્ણિત થયેલ છે—

(१) प्रथम उद्देशमें भावसुप्त संयमियोंके दोष और संयममें जागरूक संयमियों के गुण प्रकट किये हैं ।

(२) द्वितीय उद्देशमें भावनिद्रावाले संयमियोंको अनेक दुःखोंका अनुभव करना पड़ता है, यह विषय वर्णित किया गया है ।

(३) तृतीय उद्देशमें संयमाचरणके विना केवल दुःखोंके सहनमात्र से कोई साधु नहीं कहला सकता, यह विषय प्रतिपादित किया है ।

(४) चतुर्थ उद्देशमें छर्दित-वान्त-अन्नके समान कषाय त्यागने योग्य हैं, पापकर्म परिहरणीय हैं, तथा पदार्थोंके स्वरूपको जाननेवाले संयमीके लिये संयम आराधनीय है, इत्यादि समस्त विषय प्रकट किया गया है ॥ ११॥

॥ यह आचाराङ्गसूत्रके शीतोष्णीयनामक तृतीय अध्ययनका हिन्दी-भाषानुवाद समाप्त ॥३॥

(१) प्रथम उद्देशमां भावसुप्त संयमियोंना दोष अने जागरूक संयमियोंना गुण प्रकट करेले छे

(२) द्वितीय उद्देशमां भावनिद्रावाला संयमियोंने अनेक दुःखोंना अनुभव करेले छे अने विषय वर्णित करेले छे

(३) तृतीय उद्देशमां संयमाचरण विना केवल दुःखोंना सहन मात्रही केवल साधु कहेवाला नथी अने विषय प्रतिपादित करेले छे

(४) चौथा उद्देशमा छर्दित—वान्त अन्न समान कषाय त्यागवायेज्य छे पापकर्म परिहरणीय छे तथा पदार्थोंना स्वरूपने जानुवावाला संयमी माटे संयम आराधनीय छे इत्यादि समस्त विषय प्रकट करेले छे

आ आचाराङ्गसूत्रना शीतोष्णीय नामना तृतीय अध्ययनने

गुजराती-भाषानुवाद समाप्त ॥ ३ ॥

। अथाचाराङ्गसूत्रस्य सम्यक्त्वनामक चतुर्थमध्ययनम् ।

निरुपाधिकं संयमानुष्ठानं मुनिस्त्वस्य मोक्षस्य च कारणमिति प्रागुक्ताध्ययन-
प्रयेण प्रतिपादितं, तद्धि सम्यक्त्वमन्तरेण न समवसीत्यतः सम्यक्त्वाख्यं चतुर्थं
मध्ययनं कथयति । सम्यक्त्वप्रतिषेधकत्वादिदमध्ययनमपि सम्यक्त्वमुच्यते ।
यथा चतुःश्लोकात्मकगतः प्रदीपः शालाचतुष्टयं प्रद्योतयति, तद्विद मध्यगतमध्ययनं
सर्वाध्ययनस्यमाचारमवभासयति । प्रसङ्गतस्तावत् सम्यक्त्वं निरूप्यते—

समञ्जसि ज्ञानादिगुणं प्राप्नोतीति सम्यग्=जीवस्तस्य भावः सम्यक्त्वम् । तच्च
तत्त्वार्थभेदान्, तत्त्वार्थेषु सर्वज्ञवीतरागोपविष्टतया पारमार्थिकेषु जीवाजीनादि
पदार्थेषु भेदान्=वचिरमिप्रीतिः । उक्तञ्च—

। आचाराङ्गसूत्रका सम्यक्त्वनामक चतुर्थं अध्ययन ।

उपाधिरहित संयमका आराधन, मुनिपनेका और मोक्षका कारण
होता है, यह बात यद्यपि पहिले कहे गये तीन अध्ययनोंमें अच्छी
तरह से प्रकट की जा चुकी है । परन्तु यह संयमाराधन सम्यक्त्वके बिना
नहीं हो सकता है । इसलिये सम्यक्त्व नामका चौथा अध्ययन कहा
जाता है । जैसे आमने-सामनेके चार मकानों के चौक में रस्वा हुआ
दीपक उन चारों ही मकानों को प्रकाशित करनेवाला होता है, ठीक इसी
तरहसे सब अध्ययनों के मध्य में रहा हुआ यह अध्ययन भी समस्त
अध्ययनों के आचार का प्रकाशक है । इसलिये प्रकरणवशा उसीकर
निरूपण किया जाता है ।

ज्ञानादिक गुणों को जो प्राप्त करता है उसका नाम सम्यक् है । इस
अपेक्षा से यह सम्यक् जीवस्वरूप है । उसका जो भाव उसे सम्यक्त्व

आचारान्गसूत्रनु सम्यक्त्वनामनु चोद्य अध्ययन

उपाधिरहित संयमनु आराधन मुनिपक्षानु तथा मोक्षनु कारण
हे आ विषय पहिला त्रय अध्ययनोभा रूपान् रीते प्रकाशित कर्वाभा आवेले हे-
पक्ष आ संयमाराधन सम्यक्त्व विना जनी शकतु नही. मागे सम्यक्त्व नामनु
चोद्य अध्ययन कहेवाभा आवे हे जेवी रीते चार मकानोना चौकभा राजेले
जेक हीपक चार मकानोने प्रकाशित करे हे तेवी रीते जथा अध्ययनोना मध्यभा
स्थित आ अध्ययन जथा अध्ययनोना आचारनु प्रकाशक हे आ मागे प्रकरण
वशा तेनु ए प्रतिपादन कर्वाभा आवे हे

ज्ञानादिक गुणने जे प्राप्त करे हे तेनु नाम सम्यक् हे ते अपेक्षाजे
आ सम्यक् एवस्वरूप हे जेने जे भाव तेने सम्यक्त्व कहे हे आ सम्यक्त्व
तत्त्वार्थभेदान् हे सर्वज्ञ वीतराग प्रभुदास आपित होवाशी पारमार्थिक सत्य

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । ” ઇતિ ।

જિનોક્તતત્ત્વેષુ જીવાજીવાદિપદાર્થેષુ યા શુદ્ધા=અજ્ઞાનસંશયવિપર્યયનિરાકરણેન નિર્મલા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનં સા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

કહતે હૈં । વહ સમ્યક્ત્વ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ હૈં । સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા કહે હુણ હોનેસે પારમાર્થિક-સત્યસ્વરૂપ જીવ અજીવાદિક પદાર્થોં મેં જો શ્રદ્ધા-રુચિ-પ્રીતિ હૈં उसीका नाम तत्त्वार्थश्रद्धान है । कहा भी है—

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા કહે ગયે તત્ત્વોં મેં જો નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ હૈં, उसीका नाम तत्त्वार्थश्रद्धान है ।

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ ઔર હિતોપદેશી પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે જો જીવ-અજીવ આદિ નૌ પદાર્થ હૈં, वे यहां पर ‘तत्त्व’-शब्दवाच्य हैं । ‘तत्त्व’ शब्द का अर्थ पारमार्थिक-वास्तविक है । ‘श्रद्धान’ शब्दका अर्थ रुचि-दृढ़ विश्वास-आस्था है । जीव अजीवादिक पदार्थ प्रभुद्वारा उपदिष्ट होने से सत्य-वास्तविक हैं । फलितार्थ इसका यही है—जीवादिक पदार्थ वीतराग प्रभुके द्वारा प्रतिपादित किये गये हैं, इसी-लिये वे यथार्थ-सत्य तत्त्व हैं । उनमें जो दृढ़ विश्वास है उसी का नाम तत्त्वार्थश्रद्धान है । इसीका नाम सम्यग्दर्शन है ।

સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોંમા જે શ્રદ્ધાન-રૂચિ પ્રીતિ છે એનું નામ તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન છે કહ્યું છે—

“ જિનોક્ત તત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા જે તત્ત્વો કહેવાયા છે એમા જે નિર્દોષ રૂચિ-પ્રીતિ છે એનું નામ સમ્યક્ત્વ છે

વિશેષાર્થ —સર્વજ્ઞ, વીતરાગ અને હિતોપદેશી પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત જે જીવ-અજીવ આદિ નવ પદાર્થ છે તે આહીંઆ તત્ત્વશબ્દવાચ્ય છે. તત્ત્વ-શબ્દનો અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક છે. શ્રદ્ધાન-શબ્દનો અર્થ રૂચિ-દૃઢવિશ્વાસ-આસ્થા છે જીવ અજીવ આદિ પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોવાથી સત્ય-વાસ્તવિક છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કેઃ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત કરેલ છે જેથી તે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે, એમા જે દૃઢ વિશ્વાસ છે તેનું નામ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન છે એનું જ નામ સમ્યગ્દર્શન છે

નરુ યદુચ્યતે—“તત્ત્વાર્થઅધ્યાન સમ્યક્ત્વ”-મિતિ; તથા અધ્યાનં તથેતિ પ્રત્યય’,
તીર્થકરેણ યથા પ્રતિષેષિતં તથૈવ વસ્તુતો બીજાજીવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ
નિશ્ચયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્ની માનસી પરિણતિઃ । ઇયં સત્ત્વપર્યાપ્તકાચક્ત્યાપાં

રુચિ (પ્રીતિ) કે સાથ જો શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ વિચા ગયા છે
સસકા માથ યહી છે ફિ યહ રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન સંશય ઓર વિપર્યય,
इन तीन दोषों से रहित होनी चाहिये, तय ही यह निर्दोष रुचि है । जिसमें
इन अज्ञानादिका सम्राव है वह सत्य रुचि नहीं, किन्तु सदोष रुचि है ।

વિશેષાર્થ —પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકે સ્પર્શ કરનેવાળે જ્ઞાન કો
‘સશય’ કહતે છે । જેસે—યહ સ્વાણુ છે ફિ પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિકા
નિશ્ચય કરનેવાળા જ્ઞાન ‘વિપર્યય’ કહલાતા છે—જેસે સીપ કો ચાંવી
સમજના । યહ કુઠ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અન્યથાસાય કહતે
છે, જેસે માર્ગ ચલતે કુપ કો મૃગસ્પર્શ ઘોરહ કા જ્ઞાન । યે ત્રીન-અજ્ઞાન,
સંશય, વિપર્યય, રુચિકે વૃણ છે । इनसे रहित रुचि ही सम्यक्-यथार्थ
रुचि कहलाती है ।

શંકા—“તત્ત્વાર્થઅધ્યાન સમ્યગ્દર્શન છે” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ
કહા ગયા છે, ઘરાં “તથા” ઇસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી અધ્યાન
છે । અર્થાત્—‘તીર્થકર પ્રજ્ઞને જીવાદિક પદાર્થો કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપા-
દન કિયા છે, ઊન જીવાદિક પદાર્થો કા વૈસા હી સ્વરૂપ છે’ ઇસ પ્રકાર

રુચિ (પ્રીતિ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામા આવ્યું છે
તેના કાવ જો છે કે તે રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન, સશય અને વિપર્યય, આ
ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારે જ તે નિર્દોષ રુચિ છે જેમાં આ અ
જ્ઞાનહિના સદૃશ્ય છે તે સત્ય રુચિ નહીં; પણ સદોષ રુચિ છે

વિશેષાર્થ:—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકા (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને
સશય કહે છે જેમ-આ સ્વાણુ છે કે પુરુષ છે? વિપરીત એક કોટિકા નિશ્ચય
કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ-છીપને બાહી બાણવી આ કાઈક હશે,
આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અગર અન્યથાસાય કહે છે જેમ-માગ પર બાલકાવાળાને
તુલુસ્પર્શ વિભેદનુ જ્ઞાન, આ ત્રણ-અજ્ઞાન, સશય, વિપર્યય-રુચિનાં રૂપો
છે જેનાથી રહિત રુચી જ સમ્યક્-યથાર્થ-રુચી કહેવાય છે

શંકા—“તત્ત્વાર્થઅધ્યાન સમ્યગ્દર્શન છે” એવું જે સમ્યક્ત્વનુ લક્ષણ
કહેવામાં આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નુ નામ જ
અધ્યાન છે અર્થાત્ તીર્થકર પ્રજ્ઞને જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા
છે એ જીવાદિક પદાર્થોના તેના જ સ્વરૂપ છે’ આવા પ્રકારની નિશ્ચયપૂર્વક જે

नेष्यते, सम्यक्त्वं तु तस्यामपीष्टं, षट्पण्डिसागरोपमरूपायाः साद्यपर्यवसितकालरूपायाश्च तस्योत्कृष्टस्थितेः प्रतिबोधनादिति कथं नागमविरोधः ? किंच-तत्त्वार्थ-श्रद्धानस्य रागात्मकरुचिरूपत्वेन वीतरागे तदभावात् तत्र सम्यक्त्वं कथमुपपद्येत?—

की निश्चयपूर्वक जो प्रीतिस्वरूप रुचि नाम की मानसिक परिणति है वही तत्त्वार्थ-श्रद्धान है । यह अपर्याप्तावस्था में घटित नहीं होती, परंतु सम्यक्त्व तो वहां पर भी माना गया है । कारण कि कुछ अधिक छासठ ६६ सागर एवं सादि अनन्त उस सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति बतलाई गई है, तब तो आगम से विरोध ही आवेगा ।

अर्थात्—आप तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्व का लक्षण करते हैं । लक्षण के दोष-अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव है । जो लक्षण अपने संपूर्ण लक्ष्य में नहीं घटित होता; वहां अव्याप्ति दोष होता है । जो अपने लक्ष्य में रहते हुए अलक्ष्य में भी रहता है, वहां अतिव्याप्ति दोष होता है । तथा-जिस लक्षण का समन्वय लक्ष्य में नहीं होता, वहां असंभव दोष होता है । यहां प्रकृत में अव्याप्ति दोष होगा । क्योंकि शास्त्रकारों ने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक ६६ छासठ सागरोपम और क्षायिक सम्यक्त्व की स्थिति सादि और अनन्त मानी है । क्षायिक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व सहित मरण करनेवाले जीव के

प्रीतिस्वरूप इच्छि नामनी मानसिक परिणति छे ते न तत्त्वार्थश्रद्धान छे अये अपर्याप्तावस्थामा घटित नथी थती परन्तु सम्यक्त्व तो त्या पणु मानेले छे. कारण के ६६ छासठ सागर अजेरी अये सादि अनन्त, अये सम्यक्त्वनी उत्कृष्ट स्थिति कहेली छे त्यारे तो आगमथी विरोध आवेशे

अर्थात्—आप 'तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्व छे' अये प्रकारे सम्यक्त्वनु लक्षणु कडो छे. लक्षणुना दोष अव्याप्ति, अतिव्याप्ति अने असंभव छे ने लक्षणु पोताना समस्त लक्ष्यमां घटित नथी होतुं, त्या अव्याप्ति दोष थाय छे ने पोताना लक्ष्यमा अने अलक्ष्यमा पणु घटित थाय छे त्या अतिव्याप्ति दोष थाय छे अने ने लक्षणुनो समन्वय लक्ष्यमा होतो न थी, त्या असंभव दोष थाय छे. अहीना प्रकृतमां अव्याप्ति-दोष आवेशे, केम के शास्त्रकारेअये क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वनी उत्कृष्ट स्थिति ६६ छासठ सागरोपम अजेरी अने क्षायिक-सम्यक्त्वनी स्थिति सादि अने अनन्त मानेली छे. क्षायिक अथवा क्षायोपशमिक सम्यक्त्व सहित मरणावाणा अने

નનુ યદુચ્યતે—“તત્ત્વાર્થબદ્ધાનં સમ્યક્ત્વ” —મિતિ; તથા બદ્ધાનં તથાતિપ્રત્યયા, તીર્થકરેણ યથા પ્રતિબોધિતં તથૈષ વસ્તુતો જીવાત્માવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ નિમ્નયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્નો માનસી પરિણતિ । ઇયં સત્યપર્યાપ્તકાલસ્યાપાં

રુચિ (પ્રીતિ) કે સાથ જો છુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ વિચા ગયા છે. ડસકા ભાવ યહી છે કે યહ રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન સંશય ઝોર વિપર્યય, હન ત્રીન ઢોષો સે રહિત હોની જાહિયે, તથા હી યહ નિર્દોષ રુચિ છે. જિસમેં હન અજ્ઞાનાદિકા સંશય છે વહ સત્ય રુચિ નહીં, કિન્તુ સંદોષ રુચિ છે.

વિશેષાર્થ:—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિ કે સ્પર્શ કરનેવાલે જ્ઞાન કો ‘સંશય’ કહતે હૈં. જૈસે—યહ સ્થાણુ છે કિ પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિકા નિમ્નય કરનેવાલા જ્ઞાન ‘વિપર્યય’ કહલાતા છે—જૈસે સીપ કો જાવી સમજના । યહ કુછ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અનધ્યવસાય કહતે હૈં, જૈસે માર્ગ ચલતે કુપ કો તૃણસ્પર્શ ઘોરહ કા જ્ઞાન । પે ત્રીન—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય, રુચિક દૂષણ હૈં । હનસે રહિત રુચિ હી સમ્યક્-યથાર્થ રુચિ કહલાતી છે.

જાંકા—“તત્ત્વાર્થબદ્ધાન સમ્યગ્વર્ધાન છે” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ કહા ગયા છે, વહાં “તથા” હસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી અદ્ધાન છે. અર્થાત્—‘તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થો કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપાદન કિયા છે, ડન જીવાદિક પદાર્થો કા એના હી સ્વરૂપ છે’ હસ પ્રકાર

રૂચિ (પ્રીતિ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામાં આવ્યું છે તેના ભાવ છે કે તે રૂચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન, સંશય અને વિપર્યય આ ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારે જ તે નિર્દોષ રૂચિ છે જેમા આ અજ્ઞાનહિના સદ્ભાવ છે તે સત્ય રૂચિ નહીં પણ સંદોષ રૂચિ છે.

વિશેષાર્થ —પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિના (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને સંશય કહે છે જેમ-આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે ? વિપરીત જોઈ કોટિના નિમ્નય કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ-છીપને ઘાંઘી બાણવી આ કાંઈક હશે, આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અનર અનધ્યવસાય કહે છે જેમ-માર્ગ પર ચાલવાવાળાને તૃણસ્પર્શ વિવેરેનું જ્ઞાન, આ ત્રણ-અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય-રૂચિના દૂષણો છે જેનાથી રહિત રૂચી જ સમ્યક્-યથાર્થ-રૂચી કહેવાય છે.

જાંકા—“તત્ત્વાર્થબદ્ધાન સમ્યગ્વર્ધાન છે” એવું જે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહેવામાં આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નું નામ જ અદ્ધાન છે અર્થાત્ તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા છે એ જીવાદિક પદાર્થોના તેવા જ સ્વરૂપ છે. આવા પ્રકારની નિમ્નયપૂર્વક જે

अत्र मिथ्यात्वशब्देन मिथ्यात्वसप्तकं गृह्यते, तच्चानन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीयत्रयं चेति । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि—अनन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाञ्छयं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुबन्धी कषाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुबन्धी ४ कषाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया और अनन्तानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

आ ठेकाणु मिथ्यात्व शब्दथी मिथ्यात्वसप्तकनु अडणु ठरेल छे. ते ओ छे—अन तानुण धी कषाय आर ४, अने मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय, अने सम्यक्त्व-मोहनीय, ओ त्रणु ३, ओ सात दर्शन-मोहनीयना लेहो मिथ्यात्व कडेवाय छे कदाय अन तानुण धी आर ४ कषाय, आरित्र-मोहनीयना लेहो छे तो पणु मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकना अवसरमा ओना पडेलां ओना क्षय अथवा उपशम अवश्य थर्छ जाय छे, तेथी मिथ्यात्व-शब्दथी आ आरनु व्यपदेश थाय छे

विशेषार्थ —मिथ्यात्व ओ उपलक्षण शब्द छे उपलक्षणनु लक्षण छे—स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्, अर्थात्—स्वबोधक होवा छतां ने पोताथी जीनना पणु बोधक थाय छे ते उपलक्षण छे ओथी सात प्रकृतियेनु अडणु थाय छे ओ सात प्रकृतिये आ छे —अन तानुण धी क्रोध, अन तानुण धी मान, अन तानुण धी माया अने अन-तानुण धी लोभ, तथा मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय अने सम्यक्त्व-मोहनीय मोहनीय कर्मना मूल भेद ओ छे ओक दर्शन-मोहनीय, जीने आरित्र-मोहनीय.

अत्रोच्यते—तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यक्त्वस्य कार्यम् । सम्यक्त्व तु सम्यग्दर्शनापरनाम-
धेया मिथ्यात्वमयोपशमादिजन्य प्रथमसंवेगादिलक्षणं शुभ आत्मपरिणामविशेषः ।

अपयाप्तावस्था में भी उस २ सम्यक्त्व का सद्भाव माना गया है; परन्तु तत्त्वार्थश्रद्धान वहाँ नहीं माना गया है। आप तो सम्यक्त्व का लक्षण तत्त्वार्थश्रद्धान कहते हैं।

तत्त्वार्थश्रद्धान अपर्याप्तावस्था के जीवों में नहीं होता; अतः वहाँ सम्यक्त्व का लक्षण नहीं घटेगा। लक्ष्य में लक्षणका नहीं घटना ही तो अन्यासि है, सो इस लक्षण में अन्यासि दोष अनिवार्य है। यदि आप कहेंगे कि हम अपर्याप्तावस्था के जीवों में सम्यक्त्व नहीं मानते तो आपको आगमविरोधरूप दोष आवेगा। क्योंकि आगम में अपर्याप्तावस्था के जीवों में भी सम्यक्त्व माना गया है।

तथा—सम्यक्त्व का यह लक्षण रागात्मकस्वरूप होने से घीतराग अवस्था में घटित नहीं होता। कारण कि उस अवस्थामें रागात्मक रुचि का सर्वथा अभाव है। ऐसी परिस्थितिमें वहाँ सम्यक्त्व की उत्पत्ति का निर्वाह भी कैसे हो सकेगा ?

समाधान—तत्त्वार्थश्रद्धान, यह सम्यक्त्व का लक्षण नहीं है; किन्तु उसका कार्य है। सम्यक्त्व, जिसका दूसरा नाम सम्यग्दर्शन है, एवं जो मिथ्यात्व के क्षायोपशमिकादिक से उत्पन्न होता है, तथा जिसके लक्षण प्रथम, संवेगादिक हैं, वह आत्मा का शुभपरिणामविशेष है।

अपर्याप्तावस्था में पण ते त सम्यक्त्वना ग्रहभाव मानेव हे; परन्तु तत्त्वार्थश्रद्धान त्या मानवाम नथी आवेव आता सम्यक्त्वनु वहाण तत्त्वार्थश्रद्धान कही छे

तत्त्वार्थश्रद्धान अपर्याप्तावस्थाना एवोमा जातु नथी, भाटे त्या सम्यक्त्वनु वहाण वगैरे नहि वक्षम वगणुने समन्वय नहि ववाधी न अन्यासि थाव हे भाटे आ व हाणुमा अन्यासि—होय अनिवार्य हे कदाय आप कहेछो के अमे अपर्याप्तावस्थाना एवोमा सम्यक्त्व नथी मानना तो आपने आत्मविशेषरूप होय वागछो, केम के आत्ममा अपर्याप्तावस्थाना एवोमा पण सम्यक्त्व मानव छे

तथा—सम्यक्त्वनु अ वहाण समा भक्षिक्क होवाधी वीतराग अवस्था में पण नथी वतु कारण के अ अन्यामा ता प्रभके—इतिने अप वा अभाव हे अवी परिमिनिमा त्या सम्यक्त्वनी उ पत्तिने निर्वाह पण केवी रीते थ / शके ?

समाधान—तत्त्वार्थ—श्रद्धान अ सम्यक्त्वनु व हाण नथी, पण तेनु हाय हे सम्यक्त्व ननु पीनु नाम सम्यग्दर्शन हे अने न मिथ्यात्वना हा हागमादिकरी पत थाव छे तथा ननु व हाण प्रथम संवेगादिक छे त अ मानु शुभ परिणामविशेष छे

अत्र मिथ्यात्वशब्देन मिथ्यात्वसप्तकं गृह्यते, तच्चानन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीयत्रयं चेति । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि—अनन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाऽवश्यं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुबन्धी कषाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुबन्धी ४ कषाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया और अनन्तानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

आ ठेकाणु मिथ्यात्व शब्दथी मिथ्यात्वसप्तकनु ग्रहणु करेले छे. ते अये छे—अन ताणुण धी कषाय आर ४, अने मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय, अने सम्यक्त्व-मोहनीय, अये त्रणु ३, अये सात दर्शन-मोहनीयना लेहो मिथ्यात्व कडेवाय छे. कदाय अन ताणुण धी आर ४ कषाय, आरित्र-मोहनीयना लेहो छे तो पणु मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकना अवसरमा अयेना पडेला अयेना क्षय अथवा उपशम अवश्य थर्ध नय छे, तेथी मिथ्यात्व-शब्दथी आ आरनु व्यपदेश थाय छे

विशेषार्थ —मिथ्यात्व अये उपलक्षणु शब्द छे उपलक्षणुनु लक्षणु छे—स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्, अर्थात्—स्वबोधक होवा छता जे पोताथी भीनना पणु बोधक थाय छे ते उपलक्षणु छे अथी सात प्रकृतियेनु ग्रहणु थाय छे अये सात प्रकृतिये आ छे —अन ताणुण धी क्रोध, अन ताणुण धी मान, अन ताणुण धी माया अने अन-ताणुण धी लोभ, तथा मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय अने सम्यक्त्व-मोहनीय मोहनीय कर्मना मूल भेद जे छे अयेक दर्शन-मोहनीय, भीजे आरित्र-मोहनीय

મોહનીય કે ત્રીન મેદ હૈ—મિધ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિમ્મ (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, ઓર સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩. ઇસ કર્મ કે ઉદય મેં આત્માકા ગુણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ નહીં હોતા. અર્થાત્ત્વ યહ કર્મ આત્માકે સમક્તિ ગુણકા ઘાતક હૈ. ચારિત્રમોહનીયકે અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંઝલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, ઈર્ષ નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, મય, શોક, જુગુપ્સા, ક્રીવેદ, પુવેદ ઓર નપુસકવેદ, યે ૨૫ પચીસ મેદ હૈ. યહ કર્મ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા ઘાતક હોતા હૈ. ઇસકે ઉદય મેં ન તો સર્વસંયમ કા હી ઉદય હોતા હૈ ઓર ન દેશસંયમ કા હી. શક્તકાર કા યહાં પર યહ કહના હૈ કિ સમ્યગ્દર્શન કી ઉત્પત્તિ મેં દર્શનમોહનીયત્રય કા હી ક્ષયોપશમાદિક કહના ચાહિયે; ક્યોં કિ યહ હી ઇસકા પ્રતિપક્ષી કર્મ હૈ. ચારિત્રમોહનીય કે મેદ અનંતાનુબંધી-જતુષ્ટય કા ક્ષયોપશમાદિક ઇસકે સાથ ૨ ક્યોં કહા. યહ તો સિર્ફ આત્માકે ચારિત્રગુણ કા હી ઘાતક હૈ. ઇસકા યહ સમાધાન હૈ કિ-દર્શનમોહનીય કે ક્ષયોપશમાદિક કે પહિલે હી ઇનકા (કપાયોં કા) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય હો જાતા હૈ, ઇસકે બિના ઇસકા ક્ષયોપશમાદિ

જોમા દર્શન—મોહનીયના ત્રણ લેહ છે—મિધ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિમ્મ (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, અને સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩

આ કર્મના ઉદયમાં આત્માના ગુણ-સમ્યગ્દર્શન-પ્રગટ નથી થતું. અર્થાત્ત્વ આ કર્મ આત્માના સમક્તિ ગુણનું ઘાતક છે. ચારિત્રમોહનીયના અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંઝલન—ક્રોધ-માન-માયા-લોભ અને નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, મય, શોક, જુગુપ્સા, ક્રીવેદ, પુવેદ અને નપુસકવેદ, જો પચીસ ૨૫ લેહ છે. આ કર્મ આત્માના ચારિત્રગુણનું ઘાતક છે. આના ઉદયમાં નથી સર્વસંયમનો ઉદય. યતો કે નથી દેશસંયમનો. શક્તકારનું અહીંથી જો કહેવાનું છે કે સમ્યગ્દર્શનની ઉત્પત્તિમાં દર્શનમોહનીયત્રયનું ક્ષયોપશમાદિક કહેવું જોઈએ. કારણ કે તે જ જોનું પ્રતિપક્ષી કર્મ છે. ચારિત્રમોહનીયના લેહ અનંતાનુબંધિજતુષ્ટયના આની સાથે ૨ ક્ષયોપશમાદિક કેમ કરા? જો તો હતા આત્માના ચારિત્રગુણના ઘાતક છે? જોનું જો સમાધાન છે કે—દર્શન મોહનીયના ક્ષયોપશમાદિકના પહેલાં જ જોનું (કપાયોનું) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય થવું જાય છે. આના બિના જોનું (મોહનીયનું) ક્ષયોપશમાદિ

ઉક્તશ્ચ ચાવશ્યકસૂત્રે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લન્તે ” ઇતિ ।

છાયા—તત્ત્વ સમ્યક્ત્વં પ્રશસ્તસમ્યક્ત્વમોહનીયકર્માનુવેદનોપશમક્ષયસમુત્થઃ
પ્રશમસંવેગાદિલિઙ્ગઃ શુભઃ આત્મપરિણામઃ પ્રજ્ઞપ્ત ઇતિ ।

કાર્યે કારણોપચારાત્ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । તથા ચોક્તં—

“ જીવાદ્નવપયત્થે, જો જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મતં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મતં ” ॥ ઇતિ ।

હો હી નહીં સકતા । ડસકા યુલાસા આગે સમ્યક્ત્વ કે ફલકે પ્રકરણમેં
અચ્છી તરહ સે હો જાયગા ।

આવશ્યક સૂત્રમેં યહી વાત કહી હૈ—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોવસમક્ખય-
સમુત્થે પસમસંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લન્તે ” ઇતિ । અર્થાત્—
વહ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અનુવેદન કે ઉપશમ
ઔર ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિઙ્ગોં સે જાના
જાતા હૈ, એવં યહ આત્મા કા શુભ પરિણામ કહા ગયા હૈ । તત્ત્વા-
ર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વકા કાર્ય હૈ, યહ ઉપર કહા જા ચુકા હૈ ઔર સમ્ય-
ક્ત્વ ઉસકા કારણ હૈ । અતઃ કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર-આરોપ સે
કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન બી સમ્યક્ત્વરૂપ સે કહ દિયા જાતા હૈ । અન્યત્ર
બી એસા હી કહા હૈ—

આદિ થઈ જ શકતુ નથી એનો ખુલાસો આગળ સમ્યક્ત્વના ફળના પ્રકરણમા
ઘણી જ સરલ રીતે થઈ જશે

આવશ્યકસૂત્રમા આ વાત કહી છે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોવસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લન્તે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—આ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અનુવેદનના
ઉપશમ અને ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિંગોથી બાણવામા
આવે છે, અને તે આત્માના શુભ પરિણામ કહેવામા આવે છે તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન
સમ્યક્ત્વનું કાર્ય છે, એ ઉપર કહેવામા આવેલ છે અને સમ્યક્ત્વ એનું કારણ
છે, એથી કાર્યમા કારણના ઉપચાર-આરોપથી કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન પણ સમ્યક્ત્વ
રૂપથી કહેવામા આવે છે બીજી જગ્યાએ એમ કહેવામા આવેલ છે—

अस्य च लक्षणस्य मनोरहितेषु सिद्धादिष्वपि समन्वयो भवति ।

यदा—तत्त्वार्थश्रद्धानमिति लक्षणं सरागसम्पत्त्वस्यैव, अत एव स्थानाङ्गमूत्रमे प्रोक्तम्

“ दसविधे सरागसम्पत्त्वदर्शने पण्णसे, तं जहा—

निसग्गुणपसरुई, आणारुई सुत्तवीयरुइमेव ।

अभिगमवित्थाररुई, किरिया—संखेव—धम्मरुई ” ॥ १ ॥ इति ।

एव चापर्याप्तकादी शीतरागे च रुच्यमावेऽपि न सतिः ।

“ जीवाइनधपयत्थे, जे जाणइ तत्स होइ सम्मत्तं ।

भावेण सइइते, अयाणमाणे वि सम्मत्तं ॥ ” ॥ १ ॥

अर्थात्—जीवादिक नव पदार्थों को जो जानता है उसको सम्पत्त्व होता है । तथा नहीं जानने पर भी उनका भाव से अज्ञान करनेवाले के भी सम्पत्त्व कहा गया है । इस कथन से इस लक्षणका समन्वय मनरहित सिद्धादिकों में भी हो जाता है ।

अथवा—“ तत्त्वार्थश्रद्धान ” यह लक्षण सराग सम्पत्त्वका ही समझना चाहिये, इसलिये स्थानाङ्गमूत्रमें “ दसविधे ” इत्यादि दस प्रकार का सराग सम्पत्त्वदर्शन कहा गया है । जैसे—

“ दसविधे सरागसम्पत्त्वदर्शने पण्णसे, तं जहा—

निसग्गुणपसरुई, आणारुई सुत्तवीयरुइमेव ।

अभिगमवित्थाररुई, किरिया—संखेव—धम्मरुई ” ॥ १ ॥

सरागसम्पत्त्वदर्शनके दस प्रकार ये हैं—(१) निसर्गरुचि, (२) वप

“ जीवाइनधपयत्थे जे जाणइ तत्स होइ सम्मत्तं ।

भावेण सइइते अयाणमाणे वि सम्मत्तं ” ॥ १ ॥

अर्थात्—लयादि नव पदार्थों में से लब्ध है तेने सम्पत्त्व भाव है जाने न जाणुया छत्ता पणु भावधी तेनु अज्ञान कत्वावाणाने पणु सम्पत्त्व कहेवाभां आवेत्त ॥ अ पदार्थों में लक्षणानो समन्वय मनरहित सिद्धादि इति पणु भाव है

अथवा—“ तत्त्वार्थश्रद्धान को लक्षण सम्पत्त्वपणु व समवतु नोदधे, माटे स्थानाङ्गसूत्रम् ” दसविधे ” इत्यादि दस प्रकारका सराग सम्पत्त्वदर्शन कहा है, जैसे—

“ दसविधे सरागसम्पत्त्वदर्शने पण्णसे, तं जहा—

निसग्गुणपसरुई, आणारुई सुत्त—वीय—इइमेव ।

अभिगम—वित्थाररुई, किरिया संखेव—धम्मरुई ” ॥ १ ॥ इति ।

सुसप्त सम्पत्त्वदर्शनना दस प्रकार का है—(१) निसर्गरुचि, (२) वप

वस्तुतस्तु—इदं सम्यक्त्वलक्षणं न तत्स्वरूपं, किंतु तल्लिङ्गं तद्व्यञ्जकमिति यावत्।
व्यञ्ज्यभूतं सम्यक्त्वं हि मिथ्यात्वक्षयोपशमादिजन्यं शुद्धात्मपरिणामरूपं परमार्थ-
तोऽनाख्येयं स्वानुभवगम्यमेव ।

यथा वह्निव्यञ्जकस्य धूमस्यासद्भावेऽपि संतप्तायोगोलके वह्निरस्ति, तथा तत्त्वार्थ-
भिरुच्यभावेऽपि आत्मपरिणामरूपसम्यक्त्वमस्त्येव । अत एवोत्तराध्ययनसूत्रे
प्रोक्तम् ।

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगम
रुचि, (७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, १० धर्मरुचि ॥

इस अपेक्षासे अपर्याप्त अवस्था एवं वीतरागदशा में रागात्मक रुचिका
अभाव होने पर भी उसके सद्भाव में किसी भी प्रकारकी क्षति नहीं आती ।

यथार्थ में तो यह सम्यक्त्व का लक्षण—सम्यक्त्व का स्वरूप—नहीं है;
किन्तु उसका व्यञ्जक एक लिङ्ग है । जो लिङ्ग होता है वह अपने लिङ्गी
का बोधक या व्यञ्जक हुआ करता है । मिथ्यात्वके क्षयोपशमादिक से
उत्पन्न होनेवाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप वह सम्यक्त्व तो
वास्तवमें अनाख्येय—वचनके अगोचर ही है । जैसे—अग्निका अभिव्यञ्जक
धूम हुआ करता है, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोहे के पिण्ड) में उसके
अभाव में भी अग्निका सद्भाव रहता है । उसी तरह से तत्त्वार्थश्रद्धान
के अभाव में भी आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वका सद्भाव सिद्धादिकों
में रहता ही है । इसलिये उत्तराध्ययन सूत्र (अध्य० २८) में कहा है—

देशज्ञि, (३) आज्ञाज्ञि, (४) सूत्रज्ञि, (५) बीजज्ञि, (६) अभिगमज्ञि,
(७) विस्तारज्ञि, (८) क्रियाज्ञि, (९) संक्षेपज्ञि, (१०) धर्मज्ञि

आ अपेक्षार्थी अपर्याप्त अवस्था तेभञ् वीतराग दशाभां रागात्मकं ज्ञिनेन
अभावो वा छत्ता यणु तेना सहसावभा केधं यणु प्रकारे क्षति आवती नथी

यथार्थों में तो आ सम्यक्त्वनु लक्षणु—सम्यक्त्वनु स्वज्ञ—नथी, यणु तेनु
व्यञ्जक ओक लिङ्ग छे ने लिङ्ग थाय छे ते चोताना लिङ्गीना ओधक अगर
व्यञ्जक थया करे छे मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकथी उत्पन्न थवावाला, तथा शुद्ध
आत्मपरिणामस्वरूप ओ सम्यक्त्व तो वास्तवभा अनाख्येय—वचननु अगोचर
छे, नेम अग्नितो अलिव्यञ्जक धूम थया करे छे, परन्तु तप्त अयोगोलक
(लोहेना पिंड)मा ओना अभावमां यणु अग्नितो सहसाव रहे छे ओवी
रीते तत्त्वार्थश्रद्धानना अभावमा यणु आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वतो सहसाव
सिद्धादिकोमां यणु रहे छे तेथी उत्तराध्ययन सूत्र अध्य० २८ मा कह्यु छे—

“નાળં ચ દંસણં ચેવ, ધરિષ્ઠ ચ તથો તદ્વા ।

ધીરિયં ઉપબોગો ય, પર્યં જીવસ્સ લક્ષણ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અથ જ્ઞાનાદિકં જીવસ્વરૂપમ્પણકરૂપં જીવમ્પણમુક્તં, તેન જ્ઞાનાદીનામન-
મિધ્યક્તામપિ પૃથિભ્યાદિષુ જીવસદ્ભાવઃ । શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વ નાત્મ્યમ
માણસિયસ્તસ્માત્ સ્વાનુભવગમ્યમવેતિ નિર્ણયત ।

પરંતપ્રાપિ પદ્મમાધ્યયને શુદ્ધાત્મસ્વરૂપં પ્રતિષેધતયા ભગવતા વક્ષ્યતે—

“નાળં ચ દંસણં ચેવ, ધરિષ્ઠ ચ તથો તદ્વા ।

ધીરિયં ઉપબોગો ય, પર્યં જીવસ્સ લક્ષણ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ધારિત્ર, તપ તથા ધીર્ય એવં ઉપયોગ, એ જીવકે
લક્ષણ છે ।

હસ ગાથા મેં જ્ઞાનાદિકોં કો જીવસ્વરૂપાદિધ્યક્તક જીવલક્ષણ
કહા છે, હસસે પૃથિભ્યાદિક એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જ્ઞાનાદિકોં સ્પષ્ટતાઃ
અમિધ્યક્તિ-પ્રકટતા નહીં પ્રતીત હોને પરંતુ ઘડાં પર જીવત્વકા સન્નાય
સિદ્ધ હોતા છે । સમ્યક્ત્વ જો શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે ઓર જિસે
અનાસ્થેય-વચનઅગોચર-કહા ગયા છે ઉસકા કારણ યહી છે કિ વહ
અન્ય કિસી બી પ્રમાણકા વિષય નહીં હોતા છે । હસીલિયે તો વહ
સ્વાનુભવગમ્ય કહા જાતા છે । યહી માત્ર આગે હસી ધારિત્રકે પદ્મમાધ્યયન
મેં શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપકા કથન કરતે સમય ભગવાન સ્વયં કહેંગે । એસે—

“નાળં ચ દંસણં ચેવ ધરિષ્ઠ ચ તથો તદ્વા ।

ધીરિયં ઉપબોગો ય, પર્યં જીવસ્સ લક્ષણ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ધારિત્ર, તપ તથા ધીર્ય અને ઉપયોગ એ લખના લક્ષણ છે
અથ ગાથામાં જ્ઞાનાદિને લક્ષણરૂપાકિ-અર્થક લખલક્ષણ કહે છે એથી
પૃથિવી બાદિ એકેન્દ્રિય લોભામાં જ્ઞાનાદિકની સ્પષ્ટતા અભિવ્યક્તિ પ્રત્યક્ષ એવામાં
આવતી નથી તે પણ બા કહેવાયે લખને સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે સમ્યક્ત્વ એ
શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે અને એને અનાસ્થેય-વચનઅગોચર કહ્યું છે,
એવું કાણુ એ છે કે તે બીજા કોઈ પ્રમાણને વિષય નનતો નથી, તેથી તે
તે સ્વાનુભવગમ્ય કહેવાય છે આ માત્ર આગળ આ શારણ્ય પાઘમ આધ્યયનમાં
શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપનું કથન કરતી વખત ભગવાન સ્વયં કહેશે એમ—

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞઈ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।
છાયા—“ સર્વે સ્વરા નિવર્તન્તે, તર્કા યત્ર ન વિદ્યતે, મતિસ્તત્ર ન ગ્રાહિતા ” ઇત્યાદિ ।
સ્વાનુભવવિપયત્વેઽપિ સમ્યક્ત્વસ્યેશુક્ષીરાદિરસમાધુર્યવિશેષાણામિવ ત્રાગ્વિપય-
ત્વાઽભાવાદનાસ્થયેયત્વમ્ । તથા ચોક્તમ્—

“ ઇશુક્ષીરગુડાદીનાં માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।

તથાપિ ન તદાખ્યાતું સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૨ ॥

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞઈ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।
સમસ્ત સ્વરોંકી વહાં પર નિવૃત્તિ होती है, तर्क भी वहां प्रवेश
नहीं कर सकता है, एवं बुद्धि के भी वह अगम्य है । इत्यादि ।

શુદ્ધ સમ્યક્ત્વ કો જો વચનાતીત એવં સ્વાનુભવગમ્ય કહા હૈ વહ
ઇસ પ્રકાર સે-જૈસે-ઇશુ-(ગન્ના) ઔર દુગ્ધાદિકકી મધુરતા ઉપ-
ભોક્તા કે હી અનુભવગમ્ય होती है । उससे यदि कोई यह पूछे कि
गन्ना कैसा मीठा है ? दूध की मधुरता कैसी है ?, तो वह इस बातको
वचन से नहीं कह सकता, वह तो उनकी मधुरता अपने निजी अनुभव
से ही जानता है । यही बात अन्यत्र भी कही है ।

“ ઇશુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં, માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।

તથાપિ ન તદાખ્યાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૧ ॥

यद्यपि गन्ना, दूध और गुड आदि मिष्ट पदार्थों की मधुरतामें
बहुत ही अन्तर है, तो भी उनके उस अन्तर को सरस्वती भी नहीं
कह सकती ॥ १ ॥

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞઈ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ
સમસ્ત સ્વરોની બધાં નિવૃત્તિ થઈ બાંધ છે, ત્યા તર્ક પણ પ્રવેશ કરી
શકતો નથી તેમ જ બુદ્ધિથી પણ તે અગમ્ય છે ઇત્યાદિ શુદ્ધ સમ્યક્ત્વને
જે વચનાતીત અને સ્વાનુભવગમ્ય કહેલ છે તે આ પ્રકારે કે જેવી રીતે ઇશુ
(શેરડી) અને દુગ્ધાદિકની મધુરતા ઉપભોક્તાથી અનુભવગમ્ય હોય છે. કદાચ
કેઈ તેને પૂછે કે શેરડી કેવી મીઠી છે ? દૂધની મધુરતા કેવી છે ?, તો તે આ વાતને
વચનથી કહી શકશે નહિ તે તો તેની મધુરતાને પોતાના નિજ અનુભવથી જ જાણે
છે આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ કહેવામા આવી છે—

“ ઇશુ-ક્ષીર-ગુડાદીના, માધુર્યસ્યાન્તર મહત્ ।

તથાપિ ન તદાખ્યાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જો કે-શેરડી, દૂધ અને ગોળ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોની મધુરતામાં ઘણો જ
ભેદ છે તો પણ એ ભેદને સરસ્વતી પણ કહી શકતી નથી.

सम्यक्त्वमेव — सम्यक्त्वं द्रव्यमात्रमेवाव विविधम् । तत्र द्रव्यत्वं सम्यक्त्वं विशोचिता मिथ्यात्वपुद्गला एव । विशोचिता हि मिथ्यात्वपुद्गला अतिस्वच्छ-सूक्ष्मवस्त्वमिव दृष्टेरध्यवसायात्मकस्य सम्यक्त्वस्याऽऽवरका न भवन्ति, तस्मात् तत्र सम्यक्त्वोपचाराः । भावतस्तु मिथ्यात्वस्योपपन्नमाविन्यः शुभ आत्मपरिणामविशेषः ।

सम्यक्त्वके भेद—

सम्यक्त्व दो प्रकार का है—(१) द्रव्य-सम्यक्त्व, (२) भाव-सम्यक्त्व मिथ्यात्व प्रकृति के जो विशुद्ध पुद्गल हैं वे द्रव्यसम्यक्त्व हैं । ये विशुद्ध मिथ्यात्व के पुद्गल, जिस तरह सूक्ष्म वस्त्र दृष्टिका रोचक नहीं होता उसी तरह अध्यवसायस्वरूप सम्यक्त्व के प्रतिबन्धक नहीं होते । अर्थात् जैसे सूक्ष्मवस्त्र दृष्टिका प्रतिबन्धक नहीं होता, ठीक इसी प्रकार से वह मिथ्यात्व का शुद्ध पुंज सम्यक्त्वपूर्णरूप दृष्टिका रोचक नहीं होता । इस कारण उसे उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है । मिथ्यात्व कर्म के क्षयोपशमादिक उत्पन्न हुआ आत्माका शुभ परिणाम भाव सम्यक्त्व है । अन्य प्रकार से भी सम्यक्त्व दो प्रकार का है—(१) नैसर्गिक-सम्यक्त्व, (२) व्यावहारिक-सम्यक्त्व । एक पौद्गलिक-सम्यक्त्व, दूसरा अपौद्गलिक-सम्यक्त्व । एक नैसर्गिक और दूसरा आधिगमिक सम्यक्त्व ।

सम्यक्त्वना भेद—

सम्यक्त्व दो प्रकार का है (१) द्रव्य-सम्यक्त्व (२) भाव-सम्यक्त्व, मिथ्यात्व प्रकृतिना के विशुद्ध पुद्गल के ते द्रव्य-सम्यक्त्व के जैसी होते सूक्ष्म वस्त्र दृष्टि रोचक नहीं वस्तु तेवी होते के विशुद्ध मिथ्यात्वना पुद्गल अध्यवसाय-स्वरूप सम्यक्त्वना प्रतिबन्धक नहीं वत्ता । अर्थात् जैसी होते सूक्ष्म वस्त्र दृष्टि प्रतिबन्धक नहीं वस्तु, ठीक आ प्रकारही ते मिथ्यात्वना विशुद्ध पुद्गल पुंज सम्यक्त्व शून्य दृष्टि रोचक नहीं वत्ता । आ कारण तेने उपचारही सम्यक्त्व केहेवाभा आवे छे मिथ्यात्व कर्मना क्षयोपशमादिकी उत्पन्न वयेला आ-माना शुभ परिणाम कारण-सम्यक्त्व छे जैसा प्रकार पद सम्यक्त्व दो प्रकार का छे (१) नैसर्गिक-सम्यक्त्व (२) व्यावहारिक-सम्यक्त्व, केक पौद्गलिक सम्यक्त्व, जैसा अपौद्गलिक-सम्यक्त्व, केक नैसर्गिक जेने जैसा आधिगम-सम्यक्त्व ।

પ્રકારાન્તરૈરપિ સમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્, યથા-નૈશ્વર્યિક-વ્યાવહારિકભેદાદ્ દ્વિ-
વિધમ્, પૌદ્ગલિકાપૌદ્ગલિકભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વિવિધમિતિ ।

તત્ર મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામવિશેષરૂપં નૈશ્વર્યિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।
વ્યાવહારિકં તુ કુદેવકુગુરુકુધર્મપરિત્યાગપૂર્વકં નિશ્ચિતરૂપેણ સુદેવસુગુરુસુધર્મસ્વીકરણં
રુચિરૂપં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિકમપિ ।

તથા- અપનીતમિથ્યાત્વસ્વભાવસમ્યક્ત્વપુઞ્જગતપુદ્ગલવેદનસમુત્થં ક્ષાયોપશ-
મિકં વેદકં ચ પૌદ્ગલિકં સમ્યક્ત્વમ્ । અપૌદ્ગલિકં તુ પુદ્ગલવેદનવર્જિતં કેવલજીવ-
પરિણામરૂપં ક્ષાયિકમૌપશમિકં ચ । નૈસર્ગિકમાધિગમિકં ચ સમ્યક્ત્વં પ્રથમાધ્યયને
તૃતીયોદેશે પ્રાગેવ વર્ણિતમ્ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વ કા જો લક્ષણ કહા હૈ વહી નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ કા
સ્વરૂપ હૈ । અર્થાત્ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક સે ઉત્પન્ન હુઆ
આત્મા કા શુભ અધ્યવસાયવિશેષ હી નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । કુદેવ,
કુગુરુ ઔર કુધર્મ કા પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપ સે સુદેવ, સુગુરુ
ઔર સુધર્મ કા સ્વીકાર કરના, તથા રુચિરૂપ સે તત્ત્વાર્થકા શ્રદ્ધાન
કરના આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઇસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જિસ
સે દૂર હો ચુકા હૈ એસા જો સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ હૈ ઉસકે ખીતર રહે
હુઅ પુદ્ગલો કે વેદનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ ઁવં વેદક-
સમ્યક્ત્વ હૈ વહ પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઉસ પુદ્ગલ કે વેદન સે રહિત
કેવલ જીવ કે પરિણામસ્વરૂપ જો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ ઔર ઔપશમિક
સમ્યક્ત્વ હૈ, વહૂ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । નૈસર્ગિક ઔર આધિગમિક
સમ્યક્ત્વકા વર્ણન પ્રથમ અધ્યયન કે તીસરે ઉદ્દેશ મેં કિયા જા ચુકા હૈ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વનુ જે લક્ષણ કહ્યું છે તે નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વનુ સ્વરૂપ છે
અર્થાત્ મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માનુ શુભ અધ્ય-
વસાયવિશેષ જે નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ છે કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મના પરિહાર-
ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપથી સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મનો સ્વીકાર કરવો, તથા રૂચિ-
રૂપથી તત્ત્વાર્થનુ શ્રદ્ધાન કરવુ આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ છે આ પ્રકારે મિથ્યાત્વ
સ્વભાવ જેનાથી દૂર થઈ ગયેલા છે એવા જે સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુજ છે એની અદર
રહેલા પુદ્ગલોના વેદનથી ઉત્પન્ન થયેલા જે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ તેમજ વેદક-
સમ્યક્ત્વ છે તે પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે એ પુદ્ગલના વેદનથી રહિત કેવલ જીવના
પરિણામસ્વરૂપ જે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે આ અપૌદ્ગલિક
સમ્યક્ત્વ છે નિર્સર્ગ અને અધિગમ સમ્યક્ત્વનુ વર્ણન પ્રથમ અધ્યયનના ત્રીજા
ઉદ્દેશમા કરવામા આવેલા છે.

પ્રકારાન્તરેણ સમ્યક્ત્વં વક્ષ્યા, સચ્ચયા—(૧) ઔપશમિક—(૨) ક્ષાયિક—(૩) ક્ષાયોપશમિક—(૪) સાસ્વાદન—(૫) વેદકમેદાત્ પચ્ચવિધમ્ । તત્ર પ્રત્યકં નૈસર્ગિકાધિગમિકમદાદ્ દ્વૈવિધ્યે વક્ષ્યવિધત્વં મવતિ ।

(૧) અનન્તાનુષન્ધિકપાયવતુષ્ણયોપશમાનન્તરં મિથ્યાત્વ—મિથ્ર—સમ્યક્ત્વ—મોહનીયકર્મણાં સર્વયોપશમાજ્ઞાતો જીવમ્ય તત્ત્વરુચિરુપઃ શુભપરિણામઃ ઔપશમિકં સમ્યક્ત્વમ્ । પચ્ચોપશમભ્રેણિપ્રતિપચ્ચસ્ય જીવસ્ય મવતિ ।

(૨) તેષાં સર્વેષાં ક્ષયેણ નિર્જ્ઞાનં જીવસ્ય શુભપરિણામકસ્ય ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વં પ્રોચ્યતે—અનન્તાનુષન્ધિકપાયવતુષ્ણ-

અન્ય પ્રકાર સે સમ્યક્ત્વ વક્ષા પ્રકાર કા મી કહા ગયા હૈ, જૈસે—(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, ઓર (૫) વેદક । યે પાંચો હી નિસર્ગ ઓર અધિગમ કે મેદ સે દો દો પ્રકારકે હોતે હૈ, હસ પ્રકાર સમ્યક્ત્વ કે વક્ષા મેદ હો જાતે હૈ ।

(૧) અનન્તાનુષન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, હન ચાર કપાયોં કે ઉપશમ (સત્તા મેં સ્થિત રહને) કે પાદ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિથ્ર મોહનીય ઈવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે સર્વથા ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હુઆ જો તત્ત્વરુચિરુપ જીવકા શુભ પરિણામવિશેષ હૈ ચહ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ ઓળિચાલે જીવ કે હોતા હૈ ? ।

(૨) અનન્તાનુષન્ધી આદિ (૩) સાત પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જો જીવ કો શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ચહ ક્ષાયિક—સમ્યક્ત્વ હૈ ? ।

(૩) ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ હસ પ્રકાર હૈ—

જીવ પ્રકારે સમ્યક્ત્વ હસ પ્રકારના પચ્ચ કહેવામાં આવે છે એમ—(૧) ઔપશમિક (૨) ક્ષાયિક (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, અને (૫) વેદક એ પાંચે નિસર્ગ અને અધિગમના લેહથી બે બે પ્રકારના છે એ રીતે સમ્યક્ત્વના હસ લેહ મળે બાક છે ।

(૧) અનન્તાનુષન્ધી ક્રોધ માન માયા અને લોભ, એ ચાર કપાયોના ઉપશમ (સત્તામાં સ્થિત રહેવું) પછી મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિથ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય કર્મોના સર્વથા ઉપશમથી ઉત્પત્ત થયેલા એ ઉત્પન્નરુચિરુપ જીવના શુભ પરિણામવિશેષ છે તે ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે આ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ ઓળિવાળા જીવને થાય છે (૧)

(૨) અનન્તાનુષન્ધી આદિ ૩ સાત પ્રકૃતિયોના સર્વથા ક્ષયથી ને જીવને શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયિક—સમ્યક્ત્વ છે (૨) .

(૩) ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ આ પ્રકારે છે—

ક્ષયાન્તરં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણા ક્ષયોપશમાત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મણામુદયાચ સંજાત આત્મપરિણામઃ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વમ્ । તત્રેદમવગન્તવ્યમ્-ચદુર્દીર્ણમુદય- માગતં મિથ્યાત્વમોહનીયં કર્મ, તદ્દિ વિપાકોદયેન વેદિતત્વાત્ ક્ષયં પ્રાપ્તમ્, યચ્ચ શેષસત્તાયામનુદિતં વર્તતે, તદુપશાન્તમ્ । ઉપશાન્તં નામ-અનુદયાવસ્થાપનમ્ । તત્ર-મિથ્યાત્વમિશ્રપુઝાવાશ્રિત્યાનુદયાવસ્થાપનં સમ્યક્ત્વપુઝમાશ્રિત્ય તુ અધિકાંશ- તયા ડદીર્ણાવસ્થાપનમ્ । તદેવમુદિતસ્ય મિથ્યાત્વસ્ય ક્ષયેણાનુદિતસ્ય ચોપશમેન સમ્ય- ક્ત્વકર્મપુદ્ગલાનાં ક્રિયતાશ્ચિદ્વેદનેન ચ નિર્વૃત્તં=નિપ્પન્નં ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

અનન્તાનુચન્ધી ચાર કપાયો કે ક્ષય કે અનન્તર, મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે, ંવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે ડદય સે જો આત્મા કા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ, અર્થાત્ ડસ સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વ કે કુછ ભાગકા ક્ષય હો જાતા હૈ ઔર કુછ ભાગકા ઉપશમ રહતા હૈ, વહ ડસ પ્રકાર સે કિ-મિથ્યાત્વકે જો સર્વઘાતિસ્પર્દક હૈં ડનકા તો ડદયભાવી ક્ષય (ડદય મેં આયે હુઁ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા ચિના ફલ દિયે હી ઁર જાના) હો જાતા હૈ, ંવં ડન્હીં કે આગામી કાલમેં ડદય આનેવાલે નિષેકોં (કર્મ પુદ્ગલોંકે રચનાવિશેષોં) કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહતા હૈ, ઔર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ જો દેશઘાતી હૈ ડસકા યહાં પર ડદય રહતા હૈ, અતઃ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા જિતના ખી અંશ ડદય મેં આયા હૈ, વહ તો વિપાકરૂપ ડદય સે વેદ લિયા ગયા હૈ, ડસલિયે ડત્તને ભાગ કા તો ક્ષય હો ચુકા હૈ, ંવં જો અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ હૈ કિ જો અખી તક

અનતાનુચન્ધી ચાર કપાયોના ક્ષયના અનન્તર મિથ્યાત્વ-મોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના ઉદયથી જે આત્માને પરિણામ-ભાવ- ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે અર્થાત્ આ સમ્યક્ત્વમા મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગનો ક્ષય થઈ જાય છે અને કોઈ ભાગનો ઉપશમ રહે છે તે એ પ્રકારથી કે મિથ્યાત્વના જે સર્વઘાતી સ્પર્દક છે તેનો તો ઉદય-ભાવી ક્ષય (ઉદયાગત સર્વઘાતિ સ્પર્દકોનુ ડળ આપ્યા વિના તુટી જવુ) થઈ જાય છે અને એના આગામી કાળમા ઉદય આવવાવાળા નિષેકો (કર્મ પુદ્ગલોના રચના વિશેષો) નો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ જે દેશઘાતી છે એનો આહી ઉદય રહે છે, એટલે અહીયા મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મનો જેટલો પણ અશ ઉદયમા આવ્યો તે તો વિપાકરૂપ ઉદયથી વેદવામા આવેલ છે જેથી એટલા ભાગનો તો ક્ષય થઈ ગયેલ છે અને જે અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ છે

આત્મપરિણામરૂપસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાનાવરણત્વાદયં વિશોભિતપુદ્ગલપુદ્ગલોડ્વય-
ધારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલવેદનસમુદયમૂતત્વાદિદં સમ્યક્ત્વં પૌદ્ગલિકમ્ ।

ઉદય મેં નહીં આયા છે—સિर्फ સત્તા મેં હી બેઠા હુઆ છે, યસ इसीका नाम
सदवस्थारूप उपशम है, इसीको अनुदित=अनुदय अवस्था भी कहते हैं ।
यहां पर जो मिथ्यात्व की अनुदयावस्था कही गई है वह मिथ्यात्वके कुछ
भाग की तथा मिथ्यपुंजकी अपेक्षा को लेकर ही कही गई है, क्योंकि इनका
यहां पर उदय नहीं है तथा सम्यक्त्वप्रकृतिका ही कितनेक अंश से उदय
है । इसप्रकार उदित मिथ्यात्व के क्षय से और अनुदित उसी मिथ्यात्व के
उपशम से और कितनेक सम्यक्त्व—कर्मके पुद्गलों के वेदन होनेसे यह
क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है । इस प्रकार से क्षायोपशमिक
सम्यक्त्व का लक्षण सुघटित हो जाता है ।

यह सम्यक्त्व आत्मपरिणामरूप सम्यक्त्व का अनावरण—आवरण
करनेवाला नहीं—होने से उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है, क्योंकि
इस सम्यक्त्वमें विशेषितपुद्गलपुंज का—सम्यक्त्व—प्रकृतिका उदय
है और उसीके उदयरूप वेदन से यह सम्यक्त्व हुआ है, इसलिये
पुद्गलजनित होनेसे यह पौद्गलिक है । इस पौद्गलिक कार्य का जो
सम्यक्त्व कहा गया है वह इसी हेतु से कि यह आत्मपरिणामरूप जो
सम्यक्त्व है उसका आवरण नहीं करता है ।

જે હવે સુધી ઉદયમા આવેલ નથી રહ્યા સત્તામાજ્ય બેઠેલ છે, બસ એનું
નામ સદવસ્થારૂપ ઉપશમ છે, જેને અનુદિત—અનુદયઅવસ્થા પણ કહે છે. અહીંયા
જે મિથ્યાત્વની અનુદયાવસ્થા કહેવાઈ છે તે મિથ્યાત્વના કેઈ ભાગની અને મિથ્ય
પુંજની અપેક્ષાએ કહેવાઈ છે કારણ કે એના આ જગ્યાએ ઉદય નથી, તથા
સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના થાડા ભાગે ઉદય છે આ પ્રકારે ઉદિત મિથ્યાત્વના ક્ષયથી અને
અનુદિત એજ મિથ્યાત્વના ઉપશમથી અને કેટલાક સમ્યક્ત્વકર્મના પુદ્ગલોના
વેદન હોવાથી આ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે આ પ્રકારથી ક્ષાયોપશમિક
સમ્યક્ત્વના લક્ષણ સુઘટિત થઈ જાય છે

આ સમ્યક્ત્વ આત્મ-પરિણામરૂપ સમ્યક્ત્વના અનાવારક—આવરણ કરવા
વાળાં નહિ—હોવાથી ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામા આવેલ છે કારણ કે આ
સમ્યક્ત્વમા વિશેષિતપુદ્ગલપુંજનો—સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિનો ઉદય છે અને એના
ઉદયરૂપ વેદનથી એ સમ્યક્ત્વ થયેલ છે માટે પુદ્ગલજન્ય હોવાથી આ પૌદ્ગલિક
છે, અને આ પૌદ્ગલિક કાર્યને જે સમ્યક્ત્વ કહેલ છે તે આ હેતુથી કે તે
આત્મપરિણામરૂપ જે સમ્યક્ત્વ છે એનું આવરણ નથી કરતું

નનુ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્યૌપશમિકસમ્યક્ત્વાત્કો ભેદઃ ? इति चेदुच्यते—
ક્ષાયોપશમિકે મિથ્યાત્વદલિકવેદનં વિપાકતો નાસ્તિ, પ્રદેશતસ્તુ વિદ્યતે । ઔપશ-
મિકે તુ પ્રદેશતોઽપિ નાસ્તીતિ વિશેષ इति ।

(૪) અથ સાસ્વાદનં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે—આસ્વાદનેન=સમ્યક્ત્વરસાસ્વાદ-
નેન સહ વર્તત इति સાસ્વાદનમ્ । યથા—ક્ષીરાન્નં મુક્ત્વા તદ્વિષયે ચિત્તવિકારેણ યદિ
કશ્ચિત્ તદ્વમતિ, તદાઽસૌ વમનકાલે ક્ષીરાન્નરસમાસ્વાદયતિ, તથા મિથ્યાત્વોદયે

શંકા--ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં ઔર ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં
કયા ભેદ હૈ? શંકાકારકા અભિપ્રાય યહાં પર इतना ही है कि जैसे
ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકા ઉદય નહીં હૈ, ડસી પ્રકાર સે
ઉપશમસમ્યક્ત્વ મેં મી નહીં હૈ; ફિર इन दोनों में अन्तर क्या है? ।

ઉત્તર--इन दोनों में अन्तर है और वह इस प्रकार से है कि
ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકે દલિયોં કા વેદન યદ્યપિ વિપાક-
રૂપ સે નહીં હૈ પરન્તુ પ્રદેશોદય સે ડનકા વેદન વહાં પર હૈ હી । ઔપ-
શમિક સમ્યક્ત્વ મેં તો ડોનોં રૂપ સે હી ડનકા વેદન નહીં હૈ ૩ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ--

‘સહ-આસ્વાદનેન વર્તતે इति સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જો સમ્યક્ત્વ-
રૂપ રસકે આસ્વાદન સે સહિત હો ડસકા નામ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ હૈ ।
જૈસે કોઈ વ્યક્તિ સ્ત્રીર સ્વાકર પશ્ચાત્ ચિત્ત મેં તદ્વિષયક વિકાર હોનેપર
વમન કરતા હૈ ડસ સમય મેં મી વહ ડસકે રસાસ્વાદકા અનુભવ કરતા હૈ,

શંકા--ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમા અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમા શો ભેદ
છે? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે એ છે કે જેવી રીતે ક્ષાયોપશમિક-સ-
મ્યક્ત્વમા મિથ્યાત્વનો ઉદય નથી તેવી જ રીતે ઉપશમ-સમ્યક્ત્વમા પણ નથી
તો પછી એ બન્નેમા ભેદ શો છે?

ઉત્તર—એ બન્નેમા ભેદ છે અને તે આ પ્રકારે છે—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમા
મિથ્યાત્વના દલિયોંનુ વેદન છે, જે કે વિપાકરૂપથી નથી પરન્તુ પ્રદેશોદયથી એનુ વેદન
ત્યા છે જ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમા તો બન્ને રૂપથી તેનુ વેદન છે જ નહિ (૩)

(૪) હવે સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વનુ સ્વરૂપ કહે છે—

‘સહ આસ્વાદનેન વર્તતે इति સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જે સમ્યક્ત્વરૂપ રસના
આસ્વાદનથી સહિત છે એનુ નામ સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ છે, જેમકે કોઈ વ્યક્તિ
દૂધપાક જમ્યા પછી ચિત્તમાં તદ્વિષયક વિકાર થવાથી વમન કરે છે એ સમયમા
પણ તે એના રસાસ્વાદનો અનુભવ કરે છે આ પ્રકારે મિથ્યાત્વના ઉદયથી મિથ્યા-

સતિ મિથ્યાત્વામિદુલ્લસ્યાન્નન્તાનુવન્ધિકપાયોદયાદૌપશ્ચમિકસમ્યક્ત્વોપરિ ચ્ચ
સીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વમુદ્ગમતસ્તદ્ગ્રાસાસ્વાદનં મધન્યત્ સમયમાષ્ટે, ઉત્કર્ષતથ પદા-
વલિકાયાં મવતિ, તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વ સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેન્નન્તા
નુવન્ધિકપાયોદયસ્રસ્ત્રેનાત્મપરિણામનૈર્મલ્યાભાવાદખ્યક્તા તત્ત્વાર્પાનમિરુચિસ્તિષ્ઠતિ,
મિથ્યાત્વે તુ ખ્યક્તા, इत्येव तयोर्मैवः ।

યદા-इद सामादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयय्=औपशमिकसम्य-
क्त्वलामं सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुवन्धिकपायवेदनम् । तस्मिन्
उसी प्रकार मिथ्यात्वके उदय होनेसे मिथ्यात्वप्राप्तिके सम्मुख हुआ
जीव भी अनन्तानुषन्धी कपाय के उदय से जब औपशमिक सम्यक्त्वके
ऊपर अरुचि-चित्तवाला होकर उसका घमन-त्याग कर देता है, अर्थात्
-जब वह सम्यक्त्व उससे छूट जाता है, तब उसका आस्वादन भी उसे
कमसे कम एक समय तक, और ज्यादा से ज्यादा छह आबलिकाल तक
पना ही रहता है । इस कारण हम सम्यक्त्व को सास्वादनसम्यक्त्व
कहा गया है । इस सम्यक्त्व में अनन्तानुषन्धी कपाय के उदय का सद्भाव
होने से (क्रोधादिकों में से किसी एक के उदयका सद्भाव होने से) आत्मा के
परिणामों में यथावत् निर्मलता-विशुद्धि-का अभाव हो जाता है । इससे
यहां तत्त्वार्थ के प्रति यद्यपि व्यक्त-प्रगट-रूप में अभीति-अरुचि नहीं है;
फिर भी अव्यक्त रूपसे वह यहां है ही । इसीलिये तो मिथ्यात्व और
सास्वादनमें इसी अभीति की व्यक्ताव्यक्तता से भेद माना गया है ।

તત્ત્વમિત્યા સમ્યક્ત્વ ધર્મેષ્ઠ ભવ પલ્લુ અનતાનુભવી કપાયના ઉદયથી અન્ધારે
औपशमिक-सम्यक्त्वना उपर अरुचिचित्तवाला धरने कोने घमन-त्याग करे
छे, अर्थात् अन्धारे ते सम्यक्त्व छुट्टी जाय छे त्पारे कोने आस्वादन पल्लु कोने
आलामा आलम को समय सुधी अने वधाएमां वधाए छ-आवलिकाल सुधी
रहे छे आ आश्चरे आ सम्यक्त्वने सास्वादन-सम्यक्त्व कडेवागा आवेले ॥

આ સમ્યક્ત્વમા અનતાનુભવી કપાયના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી (ક્રોધા
દિકોભાથી કોઈ એકના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામોમાં યથાવત્
નિર્મલતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે, તેથી અહીંયા વત્તાપના પ્રતિ
યદપિ અભ-પ્રગટ-રૂપમા અભીતિ-અરુચી નથી; તે પલ્લુ અવ્યક્તરૂપથી તે
અહીંયા છે જ તેથી તો મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદમા એ જ અભીતિની અવ્યક્ત
વ્યક્તતાથી બેદ માનવામાં આવે છે

સતિ હિ-અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરુવીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ
સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ પઙ્કિમિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ । આસાદનમિત્યત્ર પૃષોદરાદિત્વાદ્
યકારલોપઃ, ‘કૃદ્વહુલ’-મિતિ કર્તર્યનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત-ઈતિ સાસાદનમ્ ।
અનન્તાનુવન્ધિકષાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા-
મિમુલઃ સન્ યાત્રત્ મિથ્યાત્વભૂમિં ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં
તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે મી કહા જાતા હૈ,
અર્થાત્-હસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ મી હૈ । ‘આયં સાદયતિ-
અપનયતીત્યાસાદનમ્; આસાદનેન સહ વર્તતે-ઈતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્-
‘આય’ નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ડસ લાભકો જો
હટાતા હૈ, ડસે આસાદન કહતે હૈં । ડસકે સહિત હોને સે વહ સાસા-
દન કહા જાતા હૈ । હસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાસિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા
અનંતાનુબંધી કષાય કે ડદયકા વેદન હી હૈ । ક્યોં કિ હસકે હોને પર
અનન્ત સુખદાતા ઔર નિશ્રેયસ-મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા વીજરૂપ જો ઔપશ-
મિક સમ્યક્ત્વ હૈ ડસકા લાભ-સદ્ભાવ કમ સે કમ ંક સમય તક ઔર
અધિક સે અધિક છહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા
હૈ । હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુ-
બંધી કષાય કા ડપશમ હૈ વહ અપને કાલ-અન્તર્મુહૂર્ત-તક હી રહતા હૈ ।
હસકે વાદ જવ ડસ કષાય કા ડદય હો જાતા હૈ તવ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામા આવે છે અર્થાત્
એનુ બીજુ નામ સાસાદન-સમ્યક્ત્વ પણ છે ‘આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્,
આસાદનેન સહ વર્તતે ઇતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્ ‘આય’ નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના
લાભનુ છે એ લાભને જે કહેવે છે એને આસાદન કહે છે એના સહિત હોવાથી
તે સાસાદન કહેવાય છે

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિરૂપ લાભને કહેવાવાળા અનંતાનુબંધી કષાયના
ઉદયનુ વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિ-
શ્રેયસ-મોક્ષ-રૂપ વૃક્ષના બીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ-
સદ્ભાવ ઓછામા ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમા વધારે છ આવલી
કાળ સુધી રહીને પછી ફર થઈ જાય છે એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશ-
મિક સમ્યક્ત્વમા જે અનંતાનુબંધી કષાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ-
અન્તર્મુહૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે એ કષાયનો ઉદય થઈ જાય છે

સતિ મિથ્યાત્વામિશ્રિતત્વાન્નન્તાનુબન્ધિકપાયોદયાદૌપશમિકસમ્યક્ત્વોપરિ વ્ય
 સ્તીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતસ્તદ્વસાસ્વાદનં યથન્યતઃ સમયમાત્રે, ઉત્કર્ષતઃ પદ્મ-
 વલિકાયાં મવતિ, તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વ સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેન્નન્તા
 નુવન્ધિકપાયોદયસરવેનાત્મપરિણામૈર્નૈમલ્યામાવાદધ્યક્તા તત્ત્વાયાંનમિરુષિસ્થિતિ,
 મિથ્યાત્વે તુ વ્યક્તા, इत्येव तयोर्भेदः ।

પદ્મા-इदं सासादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयम्=औपशमिकसम्य
 क्तत्वस्य सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुबन्धिकपायवेदनम् । तस्मिन्
 उसी प्रकार મિથ્યાત્વકે ઉદય હોનેસે મિથ્યાત્વપ્રાપ્તિકે સમ્યક્ત્વ હુઆ
 જીવ મી અનન્તાનુબન્ધી કપાય કે ઉદય સે જય ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે
 ઉપર અરુચિ-ચિત્તચાલા હોકર ઉસકા વમન-ત્યાગ કર દેતા હૈ, અર્માત્
 -જય વહ સમ્યક્ત્વ ઉસસે છૂટ જાતા હૈ, તથ ઉસકા આસ્વાદન મી ઉસે
 કમસે કમ એક સમય તક, ઓર જ્યાદા સે જ્યાદા છહ આવલિકાલ તક
 યના હી રહતા હૈ । ઇસ કારણ ઇસ સમ્યક્ત્વ કો સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ
 કહા ગયા હૈ । ઇસ સમ્યક્ત્વ મેં અનન્તાનુબન્ધી કપાય કે ઉદય કા સદ્ભાવ
 હોને સે (પ્રોધાદિકોં મેં સે કિસી એક કે ઉદયકા સદ્ભાવ હોને સે) આત્મા કે
 પરિણામોં મેં યથાવત્ નિર્મલતા-વિશુદ્ધિ-કા અભાવ હો જાતા હૈ । ઇસસે
 યહાં તત્ત્વાર્થ કે પ્રતિ યથાપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપ મેં અપ્રીતિ-અરુચિ નહીં હૈ;
 ફિર મી અવ્યક્ત રૂપસે વહ યહાં હૈ હી । ઇસીલિપે તો મિથ્યાત્વ ઓર
 સાસ્વાદનમેં ઇસી અપ્રીતિ કી વ્યક્તાવ્યક્તતા સે ભેદ માના ગયા હૈ ।

ત્વમ્ભસિન્ના સમ્યક્ત્વ ક્ષેત્રે એવ પશુ અનન્તાનુબન્ધી કપાયના ઉદયથી વ્યથિત
 ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના ઉપર અરુચિચિત્તવાળા થઈને જોને વમન-ત્યાગ કરે
 છે, અર્માત્ વ્યથિત તે સમ્યક્ત્વ છૂટી જાય છે ત્યારે જોનું આસ્વાદન પણ જોને
 ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છે-આવલિકાળ સુધી
 રહે છે આ કારણે આ સમ્યક્ત્વને સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે

આ સમ્યક્ત્વમાં અનન્તાનુબન્ધી કપાયના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી (કોષા
 દિકામાંથી કોઈ એકના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામોમાં યથાવત્
 નિર્મલતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે તેથી અર્દ્યા તત્ત્વાયના પ્રતિ
 યથાપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપમાં અપ્રીતિ-અરુચિ નથી, તે પણ અવ્યક્તરૂપથી તે
 અર્દ્યા છે જ તેથી તો મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદનમાં જો જ અપ્રીતિની વ્યક્ત
 વ્યક્તવાધી ભેદ માનવામાં આવે છે

સતિ હિ-અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરૂવીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ
સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ; ષડ્ભિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ । આસાદનમિત્યત્ર પૃષોદરાદિત્વાદ્
યકારલોપઃ, 'કૃદ્વહુલ'-મિતિ કર્તૃયનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત-ઇતિ સાસાદનમ્ ।
અનન્તાનુવન્ધિકષાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા
ભિમુલ્લઃ સન્ યાવત્ મિથ્યાત્વભૂમિં ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં
તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે મી કહા જાતા હૈ,
અર્થાત્ હસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ મી હૈ । 'આયં સાદયતિ-
અપનયતીત્યાસાદનમ્; આસાદનેન સહ વર્તતે-ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્-
'આય' નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ઉસ લાભકો જો
હટાતા હૈ, ઉસે આસાદન કહતે હૈ । ઉસકે સહિત હોને સે વહ સાસા-
દન કહા જાતા હૈ । હસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા
અનંતાનુબંધી કષાય કે ઉદયકા વેદન હી હૈ । ક્યોં કિ હસકે હોને પર
અનન્ત સુખદાતા ઔર નિશ્રેયસ-મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા વીજરૂપ જો ઔપશ-
મિક સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા લાભ-સદ્ભાવ કમ સે કમ એક સમય તક ઔર
અધિક સે અધિક હહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા
હૈ । હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુ-
બંધી કષાય કા ઉપશમ હૈ વહ અપને કાલ-અન્તર્મુદ્ધૂર્ત-તક હી રહતા હૈ ।
હસકે વાદ જવ ઉસ કષાય કા ઉદય હો જાતા હૈ તવ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામા આવે છે અર્થાત્
એનુ બીજુ નામ સાસાદન-સમ્યક્ત્વ પણ છે 'આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્;
આસાદનેન સહ વર્તતે-ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્ 'આય' નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના
લાભનુ છે એ લાભને જે કહેવે છે એને આસાદન કહે છે એના સહિત હોવાથી
તે સાસાદન કહેવાય છે

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિરૂપ લાભને કહેવાવાળા અનંતાનુબંધી કષાયના
ઉદયનુ વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિ-
શ્રેયસ-મોક્ષ-રૂપ વૃક્ષના બીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ-
સદ્ભાવ ઓછામા ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમા વધારે છ આવલી
કાળ સુધી રહીને પછી દૂર થઈ જાય છે એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશ-
મિક સમ્યક્ત્વમા જે અનંતાનુબંધી કષાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ-
અન્તર્મુદ્ધૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે એ કષાયનો ઉદય થઈ જાય છે

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વમુચ્યતે-વેદયતિ-અનુમયતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનિતિ વદ
કોઽનુમવિતા, તદર્થાન્તર્મૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઠ્ઠનસ્ય વદ
તરસપિષ્ઠસ્ય ચરમપુદ્ગલાનાં ગ્રામમયે વેદકસમ્યક્ત્વં ભવતિ । તથાદિ-ક્ષપક્ષેભિ
પ્રાપ્તોઽન્તાનુવન્ધિકપાયવતુષ્ઠયમપિ ક્ષપયિત્વા મિથ્યાત્વમિષપુદ્ગલપુદ્ગલામ્ ક્ષપયતિ,
શમિકસમ્યક્ત્વસે પતિત હોકર મિથ્યાત્વકે સમ્મુલ્લ હોતા હૈ-(અમી
મિથ્યાત્વમે પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ ઉસકે સમ્મુલ્લ હી હુઆ હૈ); સો
જય તક યહ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી મૂમિ કો પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ, અર્થાત્-
જય તક સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત સે ગિર કર વીચમે હી હૈ, તય તક ઉસ
જીવકા જો સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન હૈ ૪ ।

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વ કા મ્થરૂપ—

વેદયતિ=અનુમયતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્-इति वेदका=अनुमविता,
तदर्थान्तर्भूतत्वात् सम्यक्त्वमपि वेदकम् ।

અર્થાત્-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોં કા જો અનુમય કરનેવાલા હૈ,
ઉસે વેદક-અનુમવિતા કહતે હૈં । ઉસસે અભિલ્લ હોનેસે સમ્યક્ત્વ મી
વેદક કહલાતા હૈ । સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે જિતને મી પુદ્ગલપુંજ હૈં, ઉનમેં
સે અધિકતર પુદ્ગલપુંજોં કા ક્ષય હો જુકને પર વાકી જો ચરમપુદ્ગલપુંજ
રહતે હૈં ઉનકે પ્રાસકે સમીપ (નષ્ટ કરને કે સમય)મેં વહ વેદકસ
મ્યક્ત્વ હોતા હૈં । ક્ષપક્ષેણીકો પ્રાપ્ત હુઆ જીવ અનંતાનુવંધિવતુષ્ઠય

ત્યારે એ છપ ઓપશમિક સમ્યક્ત્વથી પતિત થઈ મિથ્યાત્વની સમ્મુખ થય
છે (હવે મિથ્યાત્વમા પ્રાપ્ત નથી થયે પણ એની સમ્મુખ થયે છે) આરે અમ
સુધી એ છપ મિથ્યાત્વથી ભૂમિને પ્રાપ્ત નથી થયે, અર્થાત્-અમ સુધી
સમ્યક્ત્વથી પર્વતથી પડીને વચમા જ છે તે સમય તે છપને એ સમ્યક્ત્વ
છે તેનું નામ સાસાદન છે (૪).

(૫) વેદક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે—‘વેદયતિ=અનુમયતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્
इति वेदक=अनुमविता तदर्थान्तर्भूतत्वात् सम्यक्त्वमपि वेदकम्’

અર્થાત્—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોંને એ અનુમય કરવાવાળા છે,
એને વેદક-અનુમવિતા કહે ॥ એવાથી અભિલ્લ હોવાથી સમ્યક્ત્વ પણ વેદક
કહેવાય ॥ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના જેટલા પણ પુદ્ગલપુંજ છે એવાથી અધિકતર
પુદ્ગલપુંજને નાશ થયા પછી બાકી જે થયે પુદ્ગલ રહે છે એવા પ્રાતની
સમીપ (નાશ કરવાના સમય)મા તે વેદક-સમ્યક્ત્વ થાય છે ક્ષપક્ષેણીને
પ્રાપ્ત થયેલા છપ અનંતાનુવંધિ-વતુષ્ઠયનું પણ કપણ કહીને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ

તતઃ પરં સમ્યક્ત્વપુઞ્નમપિ ઉદીર્યોદીર્યાનુભવેન નિર્જરયતિ, તેનોદીરણીયસમ્યક્ત્વ-
પુઞ્જાભાવો જાયતે, તદેવં ચરમગ્રાસેઽવતિષ્ઠમાનેઽધ્યાપિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલનાં ક્રિયતા-
મપિ વેદ્યમાનત્વાત્ વેદકં સમ્યક્ત્વમુપજાયતે । इदमपि स॒म्यक्त्वं पौ॒द्गलिकं विज्ञेयम् ।

ધાયોપશમિકસમ્યક્ત્વી જીવઃ સમ્યક્ત્વમોહનીયપુઞ્નસ્યાધિકાંશં ક્ષપયિત્વા
યદા સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્યાન્તિમપુદ્ગલનાં વેદનં કરોતિ તદાનીં જાયમાન આત્મપ-
રિણામો વેદકસમ્યક્ત્વમિતિ નિષ્કર્ષઃ । વેદકસમ્યક્ત્વપ્રાપ્ત્યનન્તરં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં
લભ્યત એવ ।

કાં મી ક્ષપણ કરકે મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ ઓર મિશ્રપ્રકૃતિ કૈ પુદ્ગલપુંજોકા
જવ ક્ષય કર દૈતા હૈ તવ ઉસકૈ વાદ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કૈ પુંજોકી અપને
અનુભવ સૈ ઉદીરણા કરકૈ નિર્જરા કરતા હૈ । ંસા કરને સૈ ઉદીરણીય-
ઉદીરણા કરને યોગ્ય-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કૈ પુંજો કા અભાવ હો જાતા હૈ ।
ઇસ પ્રકાર અન્તિમ ગ્રાસ કૈ રહને પર ઉસ સમય મી કિતનેક અંતિમ
અંશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કૈ પુદ્ગલપુંજો કા અનુભવ હોતા હૈ । ઇસકા
અનુભવ કરના હી વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ મી પૌદ્ગલિક જા-
નના ઇચ્છિયૈ ।

ઇસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ-કિ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વવાલા જીવ
સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કૈ પુદ્ગલપુંજકૈ અધિકાંશ ભાગકા ક્ષય કરકૈ જવ
ઉસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કૈ અંતિમ પુદ્ગલો કા વેદન કરતા હૈ ઉસ
સમય મૈ ઉત્પન્ન હોનેવાલા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । વેદકસમ્ય-
ક્ત્વ કી પ્રાપ્તિકૈ વાદ જીવ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ ।

અને મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુણેનો ન્યારે ક્ષય કરી નાખે છે ત્યારે પછી
સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુજની પોતાના અનુભવથી ઉદીરણા કરીને નિર્જરા કરે
છે એમ કરવાથી-ઉદીરણીય-ઉદીરણા કરવા યોગ્ય સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના
પુજનો અભાવ થઈ જાય છે આ પ્રકારે અન્તિમ આસના રહેવાથી તે સમય
પણ કેટલાક અતિમ અશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુણેનો અનુભવ
થાય છે એનો અનુભવ કરવો તે વેદક-સમ્યક્ત્વ છે આ સમ્યક્ત્વ પણ પૌદ્ગ-
લિક જાણવું જોઈએ

આનો ફલિતાર્થ એ છે કે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વવાળા જીવ સમ્યક્ત્વ-
મોહનીય કર્મના પુદ્ગલપુજના અધિકાંશ ભાગનો ક્ષય કરીને ન્યારે એ
સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અતિમ પુદ્ગલોનું વેદન કરે છે તે સમયમા ઉત્પન્ન
થવાવાળા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ છે, વેદક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ પછી
ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો અભાવ થાય પડી જાય છે

નન્વેષ સતિ વેદકસ્ય ક્ષાયોપશમિકાત્ કો મેદ, સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજનવદનસ્યો-
મયમાપિ તુલ્યત્વાત્ ? અપ્રોચ્યતે—વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજનપરમપ્રાસ-
વેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમપ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિ-
ષ્ઠન્તિ, તેન તદ્દર્મિતપુદ્ગલાનાં વેદનં મનતિ, ઇતિ વિશેષોડ્ધધારણીય ઇતિ । ઉક્તજ-

શંકા—યદિ યદી યાત છે કે જન દોનો સમ્યક્ત્વો મેં સમ્યક્ત્વ
પ્રકૃતિ કે પુજો કા વેદન હોતા હૈ તો ફિર વેદકસમ્યક્ત્વકા ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વસે મેદ હી કયા રહા ?

સમાધાન—વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ચરમપુદ્ગલો કા
વેદન હોતા હૈ, ઔર ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ મેં જનસે અવશિષ્ટો કા ।
વસ, યદી જન દોનો મેં મેદ હૈ । જસી યાત કો “વેદકે સ્વલુ સર્વો-
દિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજનચરમપ્રાસવેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ
ચરમપ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ” । જન વૈકલ્યો મેં
ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈ । અર્થાત્—વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે
વદિત હુવ સમસ્ત પુદ્ગલપુજો મેંસે સિર્ફ ચરમપ્રાસવર્તી પુદ્ગલો કા વેદન
હોતા હૈ । ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ કે સમય મેં તો વસ ચરમપ્રાસવર્તી
પુદ્ગલપુજ સે અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુજો કા વેદન હોતા હૈ ।
ક્ત્વના કીજિયે—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે સમસ્ત પુદ્ગલપુજો કી સંખ્યા ૧૦૦ હૈ ।

શંકા—જો જો યાત છે કે જ્યારે જો જનને સમ્યક્ત્વોમા સમ્યક્ત્વપ્રકૃ-
તિના પુજેતુ વેદન યાત છે તો પછી વેદક—સમ્યક્ત્વના ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વની
વેદ જો શો રહો ?

સમાધાન—વેદક—સમ્યક્ત્વમા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના ચરમ પુદ્ગલોનુ વેદન યાત
છે જનને ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વમા જોનાથી અવશિષ્ટોનુ વેદન યાત છે । અસ
આજ આ જનમાં વેદ છે

આજ યાતને “વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજનચરમપ્રાસવેદનમ્ ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમપ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ”

આ વૈકલ્યોમા ટીકાકારે સ્પષ્ટ કરી છે અર્થાત્ વેદક—સમ્યક્ત્વમા સમ્ય-
ક્ત્વપ્રકૃતિના વદિત યથેચ જ્યા પુદ્ગલપુજોમાંથી રહ્યા ચરમપ્રાસવર્તી પુદ્ગલ
લોનુ જ વેદન યાત છે

ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વના સમયમા તો આ ચરમપ્રાસવર્તી પુદ્ગલપુજની
અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અન્વયવદિત પુદ્ગલો પુદ્ગલપુજેતુ વેદન યાત છે
રહ્યા કરિયે કે સમ્યક્ત્વ—પ્રકૃતિના સમસ્ત પુદ્ગલપુજોની સંખ્યા ૧૦૦ છે

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ।

इनमें से ९९ वें तकके पुद्गलपुंजोंका वेदन क्षायोपशमिकसम्यक्त्वमें होगा, अन्तिम १०० वें का वेदन वेदकसम्यक्त्वमें । इस अन्तिम १०० वें का वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमें नहीं होगा ५ । औपशमिकसम्यक्त्वादिकों का स्वरूप इन गाथाओंमें भी संक्षेपरूप से इस प्रकार कहा है—

गाथा—खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ॥ ४ ॥ ” इति ।

आभाषी ८८ सुधीना पुद्गलपुंजेतु वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमां थशे
 अन्तिम १०० भातु वेदन वेदक-सम्यक्त्वमां थशे (प)

औपशमिक-सम्यक्त्वादिकेणु स्वइय आ गाथाओमा पणु संक्षेपइपथी
 आ प्रकारे कहु छे —

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउ मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायण-सम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ॥

જાયા—સીળે દર્શનમોદે, ત્રિવિધેઽપિ ક્ષાયિકં મયતિ સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ।
 વેદકમિદ સર્વોદિત-ચરમકપુટ્રભ્રાસમ્ ॥ ૧ ॥
 ઉપશમભેણિગતસ્ય સુ, મનતિ હુ ઔપશમિકં તુ સમ્યક્ત્વમ્ ।
 યો વા અકૃતત્રિપુઠ્ઠજ, અસપિતમિધ્યાત્વો સમતે સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ॥૨॥
 ઉપશમસમ્યક્ત્વાત્ ચ્યુત્વા મિધ્યાત્વમપ્રાપ્નુવતઃ ।
 સાસ્ત્રાદનસમ્યક્ત્વં, તદન્તરાલે પઠાવલિકમ્ ॥ ૩ ॥
 મિધ્યાત્વં યદુદીર્ઘે, તત્સીળમનુદિતં ચોપશ્ચાન્તમ્ ।
 મિત્રીમાવપરિણતં, વધમાન ક્ષાયોપશમમ્ (ક્ષાયોપશમિકમ્) ॥૪॥ ઇતિ ।

મિધ્યાત્વમોદનીય, મિશ્રમોદનીય ઓર સમ્યક્ત્વમોદનીયરૂપ દર્શન મોદનીય કર્મ કે સર્વથા ક્ષય होने પર ही ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ होता है, सय उदित पुट्रलों में चरम-अन्तिम-अशवर्ती पुट्रलोंका वेदन होना वेदकसम्यक्त्व है ॥ १ ॥ उपशमभेणिप्राप्त जीवोंको उपशमसम्यक्त्व का लाभ होता है । अथवा जिसने मिध्यात्वकर्म के तीन पुंज नहीं किये हैं ऐसे मिध्यादृष्टि जीव के, तथा जिसने मिध्यात्वका क्षय भी नहीं किया है किंतु उसका उपशम किया है उस जीव के उपशमसम्यक्त्व होता है । मिध्यादृष्टि जीवके ७ प्रकृतियों (अनन्तानुषधी ४, मिध्यात्वमोदनीय^१, मिश्रमोदनीय^२, सम्यक्त्वमोदनीय ७) के उपशमसे उपशमसम्यक्त्व होता है; ऐसा सिद्धान्तकारोंने कहा है । ८वें ९वें १०वें और ११वें गुणस्थानमें उपशमसम्यक्त्व होता है, क्योंकि कि ये उपशमभेणि के स्थान हैं । तथा अनादि-मिध्यादृष्टि जीव

મિધ્યાત્વમોદનીય, મિશ્રમોદનીય અને સમ્યક્ત્વમોદનીયરૂપ દર્શનમોદનીય કર્મને ક્ષય થયા પછી જ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, બધા ઉદિત પુટ્રલોમાં ચરમ-અન્તિમ-અશવર્તી પુટ્રલોના વેદન થવું વેદક-સમ્યક્ત્વ છે (૧) ઉપશમભેણિપ્રાપ્ત એવોને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે અથવા જેવો મિધ્યાત્વકરમના ત્રણ પુંજ નથી કર્યા, એવા મિધ્યાદૃષ્ટિ એવોને તથા મિધ્યાત્વનો ક્ષય કર્યો નથી પણ તેનો ઉપશમ કર્યો છે, એ એવોને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વ થાય છે મિધ્યાદૃષ્ટિ એવી આવ ૭ પ્રકૃતિયો (અનન્તાનુષધી ૪ મિધ્યાત્વમોદનીય^૧, મિશ્રમોદનીય^૨ સમ્યક્ત્વમોદનીય ૭)ના ઉપશમથી ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે; એવું સિદ્ધાન્તકારાએ કહ્યું છે / મા, ૬ મા ૧૦ મા અને ૧૧ મા અનુસંધાનમાં ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે કારણ કે એ ઉપશમભેણીનું સ્થાન છે તથા અનાદિ

યન્મિથ્યાત્વમુદીર્ણં તત્ ક્ષીણમ્ । યત્ અનુદિતમ્ અનુદીર્ણં તન્મિથ્યાત્વં, મિ-
શ્રીભાવપરિણતં=મિશ્રમોહનીયં, ચ શબ્દાત્ સમ્યક્ત્વદલિકં યદનુદીર્ણમનુદિતં તદપિ,
ઉપશન્તમ્, અનુદીર્ણાનુદિતમિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વદલિકેતિત્રયમુપશમાવસ્થમિ-
ત્યર્થઃ । વેદ્યમાનમ્=ઉદયાવસ્થાં સમાપન્નં સમ્યક્ત્વદલિકં યત્ર તત્ ક્ષાયોપશમિકં
સમ્યક્ત્વમુચ્યતે, इत्यर्थः ॥ ૪ ॥

કે સર્વપ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । યહ જીવ મિથ્યાત્વ કર્મ કે
ત્રીન પુંજ નહીં કરતા હૈ और न मिथ्यात्वका क्षय ही करता है ॥ ૨ ॥
ઉપશમસમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હોકર મિથ્યાત્વ કો નહીં પ્રાપ્ત હુઅ જીવ
કે હી અન્તરાલ સમય મેં કમ સે કમ ૧ સમય और अधिक से अधिक
६ આવલીકાલ તક સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ ॥ ૩ ॥ ઉદય પ્રાપ્ત
મિથ્યાત્વ કા નાશ और अनुदित मिथ्यात्वका उपशम, इन दो अवस्थाओं
સે મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૪ ॥

इस सम्यक्त्व में उदयप्राप्त मिथ्यात्वका विनाश-क्षय होता है
और अनुदीर्ण मिथ्यात्व का क्षय नहीं है; किन्तु उसका परिणमन मिश्र
प्रकृति के रूपमें है, और इसका यहां पर उपशम है । इसी प्रकार सम्य-
क्त्वप्रकृति का पुंज भी जो अनुदीर्ण है वह भी उपशम अवस्था में है ।
यह बात भी श्लोकमें आये हुए ‘च’ शब्द से प्रकट है । अतः ‘जो क्षय
और उपशम से उत्पन्न होता है, वह क्षायोपशमिक-सम्यक्त्व है’ इस प्रकार

મિથ્યાદષ્ટિ જીવને સર્વ પ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે આ જીવ મિથ્યાત્વ
કર્મના ૩ ત્રણ પુજ નથી કરતો, તેમજ મિથ્યાત્વનો ક્ષય પણ નહિ (૨)
ઉપશમસમ્યક્ત્વથી જુદા પડી મિથ્યાત્વને નહિ પ્રાપ્ત થયેલ જીવને અતરાણ
સમયમા ઓછામા ઓછુ ૧ એક સમય અને વધારેમા વધારે ૬ છ આવલીકાળ
સુધી સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહે છે (૩)

ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો નાશ અને અનુદિત મિથ્યાત્વનો ઉપશમ, એ એ
અવસ્થાઓથી મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ છે (૪)

આ સમ્યક્ત્વમા ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો વિનાશ-ક્ષય થાય છે, અને અનુ-
દીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય નથી, પણ એનું પરિણમન મિશ્રપ્રકૃતિના રૂપમા છે, અને
તેનો અર્હાયા ઉપશમ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુજ પણ જે અનુ-
દીર્ણ છે તે પણ ઉપશમ અવસ્થામા છે આ વાત પણ શ્લોકમા આવેલ “ચ”
શબ્દથી પ્રગટ છે, માટે ‘જે ક્ષય અને ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્ષયો-
પશમ-સમ્યક્ત્વ છે’ એવી રીતે જે ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે

પ્રકારાન્તરેણાપિ સમ્યક્ત્વસ્ય દશચિધ્સ્ત્વં સ્થાનાજ્ઞાદૌ પ્રતિબોધિતમ્, યથા-
(૧) નિસર્ગરુચિઃ, (૨) ઉપદેશરુચિઃ, (૩) આજ્ઞારુચિઃ, (૪) સૂત્રરુચિઃ, (૫) બીજ-
રુચિઃ, (૬) અધિગમરુચિઃ, (૭) વિસ્તારરુચિઃ, (૮) ક્રિયારુચિઃ, (૯) સંક્ષેપરુચિઃ
(૧૦) ધર્મરુચિરિતિ ।

તત્ર-નિસર્ગઃ સ્વભાવસ્તેન રુચિર્મિનોક્તત્ત્વામિલાપરૂપા યસ્ય સ નિસર્ગ-
રુચિઃ ૧ । ઉપદેશો ગુણાદિર્ભવિસ્તુતત્ત્વકથનં, તેન રુચિર્યસ્ય સ ઉપદેશરુચિઃ ૨ ।

જો ક્ષાયોપશામિક સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કહા છે, વહ મી સુઘટિત હો જાતા
હે; કારણ કિ યહા પર મિધ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્ય-
ક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોં કે અનુર્દીર્ણ પુજ ઉપશામ-અવસ્થા મેં રહતે હે
પરં ઉર્દીર્ણ મિધ્યાત્વ કા કાય હે, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કે વલોંકા વર્ત-
માન મેં ઉદય હો રહા હે ।

પ્રકારાન્તર સે મી સમ્યક્ત્વ વસ પ્રકાર કા હે, વહ સ્થાનાજ્ઞ આદિ
સૂત્રોં મેં ઘણિત હે, જૈસે-(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞા-
રુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) બીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ,
(૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ ।

નિસર્ગ નામ સ્વભાવ કા હે; સ્વભાવ સે હી જિસ જીવ કો
જિનોક્ત તત્ત્વોં મેં રુચિ-અમિલાપા હોતી હે ઉસકે યહ સમ્યક્ત્વ હોતા હે ।
અર્થાત્-સ્વભાવ સે હી જીવ કો રુચિ જિસકે દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોં મેં
હુઆ કરતી હે વહ નિસર્ગરુચિ હે (૧) । ગુણાદિક કે ઉપદેશ સે તત્ત્વોં મેં જો

પણ સુઘટિત થઈ જાય છે કાણુ કે આ ટેકાવે મિધ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય
અને સમ્યક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોના અનુર્દીર્ણ પુજ ઉપશામ અવસ્થામાં રહે છે,
એવ ઉર્દીર્ણ મિધ્યાત્વને કાય છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના હજિઓને વર્તમાનમાં
ઉદય થાય છે

પ્રકારાન્તરથી પણ સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના છે, તે સ્થાનાજ્ઞ આદિ સૂત્રોમાં
વર્ણિત છે જેમ-(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞારુચિ, (૪) સૂત્ર-
રુચિ, (૫) બીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ, (૮) ક્રિયારુચિ,
(૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ.

નિસર્ગ નામ સ્વભાવનું છે; સ્વભાવથી જ જો જીવને જીવેલા તત્ત્વોમાં
રુચિ-અમિલાપા થાય છે તેને આ સમ્યક્ત્વ થાય છે અર્થાત્-સ્વભાવથી જ જીવેલી
રુચિ જેના દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોમાં થયા કરે છે, તે નિસર્ગરુચિ છે (૧).
ગુણાદિકના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં જે રુચિ જીવને માટે થયા કરવામાં આવે

आज्ञा=सर्वज्ञबीतरागवचनात्मिका, तत्र रुचिरभिलाषो यस्य स आज्ञारुचिः ३ । सूत्रम्-आचाराङ्गादिकम्, आवश्यक-दशवैकालिकादिकं च, तेन रुचिर्यस्य स सूत्ररुचिः ४ । बीजमिव बीजं यदेकमप्यनेकार्थबोधजनकं वचः, तेन रुचिर्यस्य स बीजरुचिः ५ । अधिगमेन=विशिष्टपरिज्ञानेन रुचिर्यस्य सः अधिगमरुचिः ६ । विस्तारः=सकलद्वादशाङ्गस्य नयैः पर्यालोचनम्, तेन परिवर्धिता रुचिर्यस्य स विस्ताररुचिः ७ । क्रिया=यथाविधि संयमानुष्ठानं तस्यां रुचिर्यस्य स क्रियारुचिः ८ । संक्षेपः=संग्रहः, तत्र रुचिर्यस्य स संक्षेपरुचिः । विस्तरार्थपरिज्ञानाभावेन संक्षेपे रुचिर्भवति ९ । धर्मास्तिकाये श्रुतधर्मादौ वा रुचिर्यस्य स धर्मरुचिः १० । इह सम्यक्त्वस्य जीवभेदेन कथनं गुणगुणिनोः कथंचिदभेदोऽस्तीति बोधनार्थम् ।

रुचि जीव के लिये पैदा करायी जाती है उसका नाम उपदेशरुचि है (२) सर्वज्ञ बीतराग प्रभुके वचनों में जो रुचि जीव को होती है उसे आज्ञा-रुचि कहते हैं (३) । आचाराङ्ग आदि अङ्गप्रविष्ट एवं आवश्यक, दश वैकालिक आदि अङ्गबाह्यों के द्वारा तत्त्वों में जीव की जो प्रीति-श्रद्धा कराई जाती है वह सूत्ररुचि नामका सम्यक्त्व है (४) । जिस प्रकार एक ही बीजसे अनेक फलोंकी उत्पत्ति हुआ करती है उसी प्रकार जिस एक वचन से अनेक पदार्थों की प्रतीति हो उसका नाम बीज है, उससे जिस जीवको तत्त्वों में रुचि जागृत होती है उसका नाम बीजरुचि है (५) । विशिष्ट ज्ञानको अधिगम कहते हैं, इसके द्वारा जिस जीवको तत्त्वों में रुचि होती है उसे अधिगमरुचि कहते हैं (६) । सम्पूर्ण नयोंके द्वारा सकल द्वादशाङ्ग का पर्यालोचन करना, इसका नाम विस्ताररुचि है । इस के द्वारा जीव की रुचि तत्त्वों में परिवर्धित कराई जाती है (७) । शास्त्र-

छे तेनु' नाम उपदेशरुचि छे (२) सर्वज्ञ बीतराग प्रभुना वचनोभा ने रुचि लवनी थाय छे तेने आज्ञारुचि कहे छे (३) आचाराङ्ग आदि अङ्गप्रविष्ट ओम न आवश्यक, दशवैकालिक, आदि अङ्गबाह्यो द्वारा तत्त्वोभा लवनी ने प्रीति-श्रद्धा करावामा आवे छे ते सूत्ररुचि नामनु सम्यक्त्व छे (४) नेवी रीते ओक न जीवथी अनेक इलोनी उत्पत्ति थाय छे ओ प्रकारे ओक न वचनथी अनेक पदार्थोनी ने प्रतीति थाय तेनु नाम बीज छे, तेनाथी ने लवने तत्त्वोभा रुचि जागृत थाय छे तेनु नाम बीजरुचि छे (५) विशिष्ट ज्ञानने अधिगम कहे छे ओना द्वारा ने लवने तत्त्वोभा रुचि थाय छे ओने अधिगमरुचि कहे छे (६) सम्पूर्ण नयोना द्वारा सकल द्वादशाङ्गनु पर्यालोचन करवु तेनु नाम विस्ताररुचि छे, ओना द्वारा लवनी रुचि तत्त्वोभा परिवर्धित करवामा आवे

વિહિત વિધિકે અનુસાર સયમકા અનુષ્ઠાન કરના ક્રિયા છે, इसमें जिस जीवकी रुचि होती है वह क्रियारुचि नामका सम्पत्त्व है (८)। संक्षेप नाम सग्रहका है, उसमें जो रुचि हो वह संक्षेपरुचि है। अर्थात्-जिस जीवको विस्तृतरूपसे पदार्थपरिज्ञान नहीं है उसको संक्षेपमें रुचि हुआ करती है। इसी अपेक्षा से इस सम्पत्त्व का नाम संक्षेपरुचि है। इस सम्पत्त्ववाला जीव जीवादिक पदार्थों में विस्ताररूप से रुचि संपन्न नहीं होता; किन्तु संक्षेपरूप से ही उन्हें समस्त कर उनमें वह आस्थावाला हो जाता है (९)। धर्मास्तिकायादिक जो अमूर्तिक पदार्थ हैं, उनमें अथवा श्रुत एवं धर्मादिकमें जीवको जिसके द्वारा रुचि होती है वह धर्मरुचि है (१०)। यद्यपि सम्पत्त्व आत्माका निजी गुण है, परन्तु इस दस प्रकार के सम्पत्त्व कथन में जो उसका जीव से निम्नरूपमें जो कथन किया है वह इस बातकी पुष्टि करता है कि गुण और गुणीमें कथंचित् निम्नता और कथंचित् अतिमिता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से गुण और गुणी अतिमिता हैं। पदार्थार्थिक नयकी विवक्षा से ये दोनों लक्षण, संख्या आदिकी अपेक्षा से निम्न २ हैं। यह दशप्रकार के सम्पत्त्व का वर्णन हुआ (१०)।

૪ (૭) ગ્રાન્થવિહિત વિધિના અનુસાર સયમકા ને અનુષ્ઠાન કરવું તે ક્રિયા છે, તમા ને જીવની રુચિ થાય તે ક્રિયારુચિ નામનું સમ્પત્ત્વ છે (૮) સંક્ષેપ નામ સગ્રહનું છે એમા જેની રુચિ હોય તે સંક્ષેપરુચિ છે અર્થાત્-જે જીવને વિસ્તૃતરૂપથી પદાર્થ પરિજ્ઞાન નથી તેને સંક્ષેપમા રુચિ થયા કરે છે, જે અપેક્ષાથી એ સમ્પત્ત્વનું નામ સંક્ષેપરુચિ છે આ સમ્પત્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમા વિસ્તારરૂપથી રુચિસંપન્ન નથી થવા; પણ સંક્ષેપરૂપથી જ તેને સમ જીવે એમા દ૯ આસ્થાવાળા બની રહે છે (૯) ધર્માસ્તિકાયાદિક ને અમૂર્તિક પદાર્થ છે એમા અથવા શ્રુત એમજ ધર્માદિકમા જીવની જેના દ્વારા રુચિ થાય છે તે ધર્મરુચિ છે (૧૦). યદ્યપિ સમ્પત્ત્વ આત્માના નિજગુણ છે, પરંતુ આ દશ પ્રકારના સમ્પત્ત્વ કથનમાં તેનું જીવથી નિમ્નરૂપમાં ને કથન કર્યું છે તે જોવાતની પુષ્ટિ કરે છે કે ગુણ અને ગુણીમાં કથંચિત્ નિમ્નતા અને કથંચિત્ અતિમિતતા છે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાથી ગુણ અને ગુણી અતિમિત છે પદાર્થાર્થિક નયની વિવચ્છાથી જો બન્ને લક્ષણ સખ્યા આદિની અપેક્ષાથી નિમ્નમિત છે. આ દશ પ્રકારના સમ્પત્ત્વનું વર્ણન થયું ૧૦

(૧) સમ્યક્ત્વસ્થિતિઃ ।

સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિરેકસમયમાત્રં જઘન્યતઃ, ઉત્કર્ષતસ્તુ પઙ્કાવલિકાઃ, ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચાન્તર્મુહર્તમ્ । વેદક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચૈકસમયમાત્રમ્ । ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય જઘન્યા સ્થિતિરેકસમયમાત્રમ્, ઉત્કૃષ્ટા તુ કિંચિદધિકપટ્પટ્ટિસાગરોપમા, ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિઃ સાદ્યપર્યવસિતકાલરૂપા ।

(૨) સમ્યક્ત્વસ્ય પ્રાદુર્ભાવવ્યવસ્થા ॥

એકભવમાશ્રિત્યૌપશમિકસાસ્વાદનસમ્યક્ત્વે જઘન્યતઃ સકૃદેવ પ્રાદુર્ભવતઃ । ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ પશ્ચવારમ્ । વેદકસમ્યક્ત્વં જઘન્યત ઉત્કૃષ્ટતથૈકવારં પ્રાદુર્ભવતિ ।

(૧) સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ ।

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર ઓર ઉત્કૃષ્ટ છઠ્ઠ ૬ આવલિકા પ્રમાણ હૈ, ઔપશમિક ઓર વેદક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહર્ત કી હૈ । ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી જઘન્ય એકસમયમાત્ર ઉત્કૃષ્ટ કુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ હૈ, ઓર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ સાદિ અનંત હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વકી ઉત્પત્તિકી વ્યવસ્થા—

એક ભવકી અપેક્ષા ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ ઓર સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર હી ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર ઉત્કૃષ્ટસે પાંચ વાર । વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટસે ઓર જઘન્ય સે એક હી વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

(૧) સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર અને ઉત્કૃષ્ટ છ આવલિકાપ્રમાણ છે ઔપશમિક અને વેદક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહર્તની છે. ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની જઘન્ય એકસમયમાત્ર, ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદિ અનંત છે

(૨) સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિની વ્યવસ્થા

એક ભવની અપેક્ષાએ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અને સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર જ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઉત્કૃષ્ટથી પાંચ વાર વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટથી અને જઘન્યથી એક જ વાર ઉત્પન્ન થાય છે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર અને ઉત્કૃષ્ટથી અસખ્યાતવાર ઉત્પન્ન થાય છે

શાયોપશ્મિક જયન્યસં સકૃત્, ઉત્કૃષ્ટતસ્વસંન્યાતધારમ્ । શાયિકં તુ પ્રાદુર્ભૂતં
સત્ પુનર્ન પ્રતિનિવર્તતે । પ્રાદુર્ભૂતનન્તરમવિચ્છેદન સર્વશઃ વિષ્ણતિ ।

(૩) સમ્યક્ત્વસ્થાપ્તરકાલઃ ।

ઔપશ્મિક-સાસ્વાદન-શાયોપશ્મિકસમ્યક્ત્વાનાં પ્રત્યેકમન્તરકાલો નમ-
ન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ વેદોનાર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલ । વેદકત્વ્યાપ્તરં ન
મયતિ, તદનન્તરં નિયમત્ શાયિકસમ્યક્ત્વોત્પત્તે સંમત્ । શાયિકસમ્યક્ત્વં
સાધનન્ત ચ, તસ્ય પુનર્નિવૃત્ત્યમાપાદન્તર ન મયતિ ।

શાયોપશ્મિક સમ્યક્ત્વ જયન્યસે એક ધાર ઓર ઉત્કૃષ્ટસે અસંન્યાત
ધાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । શાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોનેકે ધાદ ફિર નિવૃત્ત
મહીં હોતા । યહ તો ઉત્પન્ન હોનેકે ધાદ અવિચ્છિન્નરૂપસે સર્વદારહતા હૈ ।

(૩) સમ્યક્ત્વકા અન્તરકાલ

ઔપશ્મિક, સાસ્વાદન, ઓર શાયોપશ્મિક સમ્યક્ત્વમેં સે પ્રત્યેક
કા વિરહકાલ જયન્ય અંતર્મુહૂર્ત ઓર ઉત્કૃષ્ટ કુછ કમ અર્ધપુદ્ગલપરા-
વર્તનકાલ પ્રમાણ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહકાલ સંમતિત મહીં હૈ,
કયોં કિ હસ સમ્યક્ત્વ કે અનતર નિયમ સે શાયિક સમ્યક્ત્વકા લાભ
જીવકો હો જાતા હૈ । શાયિક-સમ્યક્ત્વ મેં અંતરકાલ નહીં હૈ, કારણ કિ
હસકા સદ્ભાવ હોને પર જીવ કો મુક્તિકા લાભ હો જાતા હૈ, હસીં સિયે
યહ સમ્યક્ત્વ સાદિ ઓર અનન્ત હૈ । એક ધાર સમતિત હો કર ફિર
છૂટ જાને પર ફિર સે ઉત્તકી પ્રાપ્તિ હોને મેં જિતના સમય લગતા હૈ
ઉત્તકા નામ વિરહ-કાલ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહ-કાલકા અભાવ

શાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થયા પછી ફરી નિવૃત્ત થતું નથી તે તે ઉત્પન્ન થયા
પછી અવિચ્છિન્નરૂપથી સર્વશઃ રહે છે.

(૪) સમ્યક્ત્વનો અતરકાલ

ઔપશ્મિક સાસ્વાદન અને શાયોપશ્મિક સમ્યક્ત્વ એ પ્રત્યેકના વિરહ
કાલ જયન્ય અતરકાલ અને ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ જોઈ અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ
પ્રમાણ છે વેદક સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળ સમાવિત નથી કારણ કે આ સમ્યક્ત્વની
પછી નિયમથી શાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ લેવને થઈ જાય છે શાયિક સમ્ય-
ક્ત્વમાં અતરકાલ નથી, કારણ કે એનો સદ્ભાવ યથાથી લેવને મુક્તિનો લાભ
થઈ જાય છે તેથી આ સમ્યક્ત્વ સાદિ અને અનન્ત છે. એક ધાર સમ્યક્ત્વ
પામને પછી જ્યારે તે છૂટી જાય છે ત્યારે ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ યથામાં જોટલો
સુખ લાગે છે તેનું નામ વિરહકાળ છે વેદક-સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળનો અભાવ

(४) सम्यक्त्वस्य फलम्—

सम्यक्त्वे सति-अपद्ग्रहः=आप्तवचनवाधितार्थेषु पक्षपातो न भवति। असद्ग्रहं प्रति मिथ्यात्वोदयस्य कारणत्वात् सम्यक्त्वस्य मिथ्यात्वक्षयोपशमजन्यत्वेन सम्यक्त्वसद्भावकाले मिथ्यात्वोदयाभावात्।

सम्यक्त्वे सति श्रुतश्रवणवाञ्छा, श्रुतचारित्रधर्मरागः, चतुर्विधतीर्थवैयावृत्य-नियमश्च भवति। एषामुत्तरोत्तरं प्रति पूर्वपूर्वस्य हेतुत्वं बोध्यम्।

है, क्यों कि वेदक-सम्यक्त्व होने पर उसके बाद फिर क्षायिक-सम्यक्त्व होता है, वेदक-सम्यक्त्व नहीं। वेदक-सम्यक्त्वके छूटने पर यदि वेदक-सम्यक्त्व की प्राप्ति फिर से होती तो विरहकाल वहाँ संभवित होता। इस प्रकार क्षायिक-सम्यक्त्वके होने पर जीव अपनी स्थिति को पूर्ण कर मुक्ति स्थानका ही स्वामी बन जाता है, अतः एक बार क्षायिक सम्यक्त्वके होने पर फिर उसी जीवको क्षायिक-सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं करनी पड़ती। अतः यहाँ पर भी विरहकाल संभवित नहीं।

(४) सम्यक्त्वका फल—

सम्यक्त्वके होते ही जीव कदाग्रहसंपन्न नहीं होता है। उसकी दृष्टि-श्रद्धा आप्तवचन से अवाधित पदार्थों में अनुरागवाली होती है, इनसे भिन्न पदार्थों में नहीं। क्योंकि कदाग्रह का कारण मिथ्यात्व का उदय बतलाया है और मिथ्यात्व के क्षयोपशमादिसे सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। सम्यक्त्वके होने पर मिथ्यात्वका अभाव हो जाता है। कारण के अभावमें कार्यका अभाव सुतरां सिद्ध ही है। कदाग्रह का कारण

छे, कारण के वेदक-सम्यक्त्व तथा पछी क्षायिक-सम्यक्त्व थाय छे, वेदक-सम्यक्त्व नहि वेदक-सम्यक्त्वना छुट्या पछी जे वेदक-सम्यक्त्वनी इरीथी प्राप्ति थती डोट तो विरहकाण त्या संभवित थात ओ प्रकारे क्षायिक सम्यक्त्व तथा पछी एव पोतानी स्थितिने पूर्ण करीने मुक्तिस्थाननो स्वामी अनी नय छे तेथी ओक बार क्षायिक-सम्यक्त्व तथा ते न एवने पछीथी क्षायिक-सम्यक्त्वनी प्राप्ति करवी पडती नथी, भाटे आ ठेकाणु पणु विरहकाण संभवित नथी.

(४) सम्यक्त्वनुं इह

सम्यक्त्व थवाथी एव कदाग्रहसंपन्न थतो नथी, अनी दृष्टि-श्रद्धा आप्त वचनथी अवाधित पदार्थोभा न अनुरागवाणी थाय छे, अथी भिन्न पदार्थोभा नहि केम के कदाग्रहनु कारण मिथ्यात्वनो उदय अताव्यो छे, अने मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिथी सम्यक्त्व उत्पन्न थाय छे सम्यक्त्वना डोवाथी मिथ्यात्वनो अभाव थय नय छे कारणना अभावमा कार्यनो अभाव स्वतः सिद्ध छे, कदाग्रहनु

મિથ્યાત્વ છે । સમ્યક્ત્વી જીવકે હમકા અભાવ છે ।

સમ્યક્ત્વકે હોને પર શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ઓર ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ, એવં ચતુર્વિધ સંઘની વૈષાદૃષ્ટિ કરનેકા નિયમ જીવકે જાગૃત હોતા છે । इनमें आगे २ के प्रति पूर्व २ को कारणता है, अर्थात् श्रुतधर्मका अनुराग जीवके तब ही जागृत हो सकेगा जब उसके अन्तरंगमें श्रुतश्रवणकी इच्छा होगी, श्रुतश्रवणेच्छा के बिना श्रुतमें अनुराग नहीं हो सकता, जब सद्गुणोंमें अनुराग है तो यह श्रुतमक्सि रूप कार्य श्रुतश्रवणके बिना नहीं हो सकता, श्रुतश्रवण भी पिना इच्छा के संभवित नहीं । श्रुतधर्मके अनुरागके प्रति श्रुतश्रवण की बाढडा कारण है । चारित्रधर्मके प्रति अनुराग भी जीवको तब ही होगा जब उसके अन्तरंगमें श्रुतधर्मका अनुराग होगा । श्रुतानुराग का अन्विषाय यही है कि शास्त्रप्रतिपादित मार्ग पर दृढ़ आस्था । इस मार्ग पर दृढ़ आस्थावाला जीव ही चारित्रधर्मका स्वयं आराधन करनेवाला अथवा उसके धारक मुनियोंके प्रति अनुरागी बनता है, अनास्थावाला नहीं, अतः चारित्रधर्मके अनुराग का कारण श्रुतानुराग ही है । चारित्र धर्म में जब तक अनुराग नहीं होगा तब तक यह जीव किसी प्रकार भी चतुर्विध संघ की सेवा करने का नियमकर्ता नहीं हो सकता; अतः उन

ઝરણ મિથ્યાત્વ છે સમ્યક્ત્વી જીવને એના અભાવ છે

સમ્યક્ત્વના હોવાથી શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મ પ્રતિ અનુરાગ અને ચારિત્રધર્મ પ્રતિ અનુરાગ એમજ ચતુર્વિધ સંઘની વૈષાદૃષ્ટિ કરવાનો નિયમ જીવને જાન્યુત થાય છે. એમજ આગળ ૨ ના પ્રતિ પૂર્વ ૨ માં કારણતા છે અર્થાત્ શ્રુતધર્મના અનુરાગ જીવને ત્યારે જ જાગૃત થાય છે, જ્યારે એના અતરંગમાં શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા થાય છે. શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિના શ્રુતમાં અનુરાગ થઈ જ શકેલો નથી. જ્યારે સદ્ગુણોમાં અનુરાગ છે તો એ શ્રુતમક્ષિત્વ થાય. શ્રુત શ્રવણ વિના નથી પણ શ્રુતશ્રવણ પણ વગર ઇચ્છાએ સંભવિત નથી. શ્રુત ધર્મના અનુરાગની પ્રતિ શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા કારણ છે. ચારિત્રધર્મના પ્રતિ અનુરાગ પણ જીવને ત્યારે જ થશે જ્યારે એના અતરંગમાં શ્રુતધર્મના અનુરાગ હોય. શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા એ છે કે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ આસ્થાવાળા જીવ જ ચારિત્રધર્મનું સ્વયં આરાધન કરવાવાળા, અથવા એના ધારક મુનિઓની પ્રતિ અનુરાગી બને છે. અનાસ્થાવાળા નહિ. મોટે ચારિત્ર ધર્મના અનુરાગનું કારણ શ્રુતશ્રવણ જ છે. ચારિત્રધર્મમાં જ્યાં સુધી અનુરાગ નહિ થાય ત્યાં સુધી એ જીવ કોઈ પ્રકારે પણ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવાનો નિય

નન્વસદ્ગ્રહસ્ય મિથ્યાત્વોદયજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વે સતિ તત્કયોપશમાદસ્તુ તદભાવઃ, કિંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં જ્ઞાનચારિત્રાગરૂપત્વેન જ્ઞાનાવરણીયચારિત્રમોહનીયવીર્યાન્તરાયકર્મલક્ષ્યોપશમજન્યત્વાત્ કથં સમ્યક્ત્વફલરૂપત્વં તેપામ્ ? इति चेत्,

કી સેવા આદિ કરનેરૂપ નિયમ કે પ્રતિ ચારિત્રધર્મકા અનુરાગ હી કારણ હોતા હૈ ।

શઙ્કા—માના કિ અસદ્ગ્રહ કે મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોને સે મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે ઉસ અસદ્ગ્રહકા અભાવ હો જાતા હૈ, પરન્તુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગૈરહ જો જ્ઞાન ઓર ચારિત્રકે અંગરૂપ હૈ, इन्हें सમ्यक्त्व का फल कैसे माना जा सकता है ? कारण कि इनके रोधक ज्ञानावरणीय, चारित्रमोहनीय और वीर्यान्तर कर्म हैं, इनके क्षयोपशम से उनका प्रादुर्भाव होता है, अतः श्रुतश्रवणेच्छा वगैरह को सम्यक्त्वका फल न मानकर ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके क्षयोपशमका ही फल मानना चाहिये।

વિશેષાર્થ—શઙ્કાકારકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે નહીં હોતી હૈ; કિન્તુ વહ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમસે હી જીવ કો હોતી હૈ । શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા ઁક ભેદ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ જીવકા અનુરાગ ભી ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ, અતઃ ઇસે ભી સમ્યક્ત્વ કા ફલ ન માન કર ચારિત્રમોહનીય કે ક્ષયોપશમ કા હી ફલ માનના

મકર્તા નથી થતો માટે એની સેવા કરવારૂપ નિયમની પ્રતિ ચારિત્રધર્મનો અનુરાગ જ કારણ રૂપ થાય છે

શકા—માન્યુ કે અસદ્ગ્રહ મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોવાથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી એ અસદ્ગ્રહનો અભાવ થઈ જાય છે પરન્તુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરે જે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અશરૂપ છે એને સમ્યક્ત્વનુ ફળ કેવી રીતે માનવામા આવે ? કારણ કે એના રોધક જ્ઞાનાવરણીય ચારિત્રમોહનીય અને વીર્યાન્તરાય કર્મ છે એના ક્ષયોપશમથી એનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે માટે શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરેને સમ્યક્ત્વનુ ફળ ન માનીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમનુ જ ફળ માનવું જોઈએ

વિશેષાર્થ—શકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે—શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી નથી થતી કિન્તુ તે શ્રુત જીવને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો એક ભેદ છે ચારિત્રધર્મની પ્રતિ જીવનો અનુરાગ પણ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાધીન છે માટે એને સમ્યક્ત્વનુ ફળ ન માનીને ચારિત્રમોહનીયના ક્ષયોપશમનુ જ ફળ

અશ્રોચ્યતે—મિથ્યાત્વયોગપદમાવસરે જ્ઞાનાવરણીયાનન્તાનુબંધિકપાયરૂપ-
 ચારિત્રમોહનીયાદિકર્મણામપિ સયોગપદમો ભવતીતિ કૃત્વા સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવ-
 ણેચ્છાદયો મન્વન્તીત્યુચ્યતે । યથા કેવલજ્ઞાનાવરણસયમન્યમપિ કેવલજ્ઞાને ચારિ-
 ત્રમોહનીયાંશકપાયસયે સત્યેન ભવતીતિ । યથા ચા મિથ્યાત્વસયોગપદમત્વમપિ
 સમ્યક્ત્વમનન્તાનુબંધિકપાયરૂપચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ ન સમ્યતે । ઉક્ત્ય—
 ઉપયુક્ત પ્રતીત હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ યહી હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકો
 સમ્યજ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકા હી ફલ માનના વાહિયે, સમ્ય-
 ક્ત્વ કા નહીં ।

સમાધાન—શક્તકારકી શક્ત ટીક નહીં । કારણ કિ જિસ સમય
 મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઉસ સમય જ્ઞાનાવરણીય ઓર અનન્તા-
 નુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયાદિક કર્મોં કા મી ક્ષયોપશમ હોતા
 હૈ । હસી ધ્યેય કો લેકર—‘સમ્યક્ત્વ કે હોને પર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક હોતે
 હૈ’ વેસા કહા ગયા હૈ । જૈસે—કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણકે ક્ષય સે
 ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પરન્તુ જબ તક ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે અશ-મેવ-
 સ્વરૂપ કષાયોં કા ક્ષય નહીં હોતા તબ તક કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ નહીં
 હોતી, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હનકે ક્ષય હોને પર હી હોતી હૈ ।
 હસી પ્રકાર સમ્યક્ત્વ મી યદ્યપિ મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમ સે હી હોતા હૈ,
 પરન્તુ જબ તક અનન્તાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયકા ઉદય બના
 રહતા હૈ તબ તક યહ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈ ।

માનવુ ઉપમુકત પ્રતીત થાય છે નિષ્કર્ષ એ છે કે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોને સમ્ય-
 જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું જ ફળ માનવું જોઈએ, સમ્યક્ત્વનું નહિ.

સમાધાન—શક્તકારકી શક્ત ટીક નહિ, કારણ કે જે વખતે મિથ્યાત્વનો
 ક્ષયોપશમ થાય છે તે વખતે જ્ઞાનાવરણીય અને અનન્તાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર-
 મોહનીયાદિક કર્મોના પણ ક્ષય થાય છે

એ ધ્યેયને લઈને જ—સમ્યક્ત્વના કષાયથી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક થાય છે -
 એવું કહેવામાં આવ્યું છે જેવી રીતે કેવલજ્ઞાન કેવલ જ્ઞાનાવરણના કષાયથી ઉત્પન્ન
 થાય છે પરન્તુ જ્યાં સુધી ચારિત્રમોહનીયકર્મના અશ-મેવ-સ્વરૂપ કષાયોનો ક્ષય
 નથી થતો ત્યાં સુધી કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થતી માટે કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ
 એનો ક્ષય કષાયથી જ થાય છે એવી જ રીતે સમ્યક્ત્વ પણ યદ્યપિ મિથ્યાત્વના
 ક્ષયોપશમથી જ થાય છે પરન્તુ જ્યાં સુધી અનન્તાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર-
 મોહનીયનો ઉદય જન્યો રહે છે ત્યાં સુધી તે પ્રાપ્ત થતું નથી.

વિશેષાર્થ—કારણ દો પ્રકારકે હુઆ કરતે હૈં—ઁક સંનિકટ—કારણ દૂસરા વ્યવહિત—કારણ, સંનિકટ—કારણ કો મુખ્ય કારણ ઔર વ્યવહિત કારણ કો ગૌણ કારણ ધી કહતે હૈં । પ્રકૃતમેં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, ક્યોં કિ વિના સમ્યગ્દર્શન કે इनका सद्भाव नहीं हो सकता, सत्यदर्शन के होने पर ही ये होते हैं, इसी लिये ये सत्यदर्शन के फलरूप से कहे गये हैं । “ एक कार्य के अनेक कारण भी होते हैं, परन्तु जो मुख्य होता है वही प्रधान माना जाता है । ” इस नीतिके अनुसार भले ही श्रुतश्रवणेच्छादिकों का कारण ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का क्षयोपशम भी हो, परन्तु ये सब व्यवहित कारण हैं । दृष्टान्त के लिये—केवलज्ञानकी प्राप्ति का मुख्य कारण केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय ही है, परन्तु जब तक मोहनीय कर्मका क्षय नहीं होता, तब तक केवलज्ञानावरणीय कर्मका क्षय नहीं हो सकता ।

“ खीणमोहस्सणं अरहओ तओ कम्मंसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा—नाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं, अंतराइयं ” (स्था. स्था. ३ उ. ४)

यही बात इस सूत्रमें प्रगट की गई है । इसी तरह सत्यदर्शन भी मिथ्यात्व के क्षयोपशम से होता है, परन्तु जब तक अनंतानुबंधी कषाय

વિશેષાર્થ—કારણ બે પ્રકારે થયા કરે છે—એક સંનિકટ—કારણ, બીજુ વ્યવહિત—કારણ. સંનિકટ—કારણને મુખ્ય કારણ અને વ્યવહિત કારણને ગૌણ કારણ પણ કહે છે પ્રકૃતમા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનુ મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન વિના તેનો સદ્ભાવ નથી થતો. સમ્યગ્દર્શનના થવાથી તે થાય છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શનના ફળરૂપથી કહેવામા આવે છે “ એક કાર્યના અનેક કારણો પણ થાય છે પરંતુ જે મુખ્ય થાય છે તે જ પ્રધાન માનવામા આવે છે ” આ નીતિ—અનુસાર ભલે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનુ કારણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો ક્ષયોપશમ પણ હોય, પરંતુ એ બધા વ્યવહિત કારણ છે દૃષ્ટાન્તને માટે—કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનુ મુખ્ય કારણ કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય જ છે, પરંતુ બીજા સુધી મોહનીયકર્મનો ક્ષય નથી થતો ત્યા સુધી કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય નથી થતો

“ खीणमोहस्स णं अरहओ तओ कम्मंसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा—नाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं अंतराइयं (स्था. स्था. ३ उ. ४)

આ વાત આ સૂત્રથી પ્રગટ કરી છે એ પ્રકારે સમ્યગ્દર્શન પણ મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી થાય છે, પરંતુ બીજા સુધી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયોપશમ નથી થતો ત્યા સુધી મિથ્યાત્વનો ક્ષયોપશમ નથી થતો

“ પદમિસ્તુયાણ ઉદયે નિયમા, સંજોયણા કસાયાણ ।
સમ્મદસણભંમે, મવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—“ પ્રાયમિકાનામુદય નિયમાત્ સયોજના કપાયાણામ્ ।
સમ્યદ્ધનસામં, મવસિદ્ધિકા અપિ ન લભન્તે ॥ ૧ ॥

નતુ વૈયાટ્ટસ્યનિયમસ્ય તપઃપદસ્ત્વન ચારિત્રાંસરૂપતાત્ સમ્યક્ત્વે સતિ
જાવશ્યમાનાદવિરતસમ્યગ્દષ્ટિગુણસ્થાનં ત્રિલુપ્યત ? ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

કા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા, તથા તક મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ નહીં હો
સકતા । ઇતી લિયે મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમકે અવસર મેં અનંતાનુબંધી
કષાયકા ક્ષયોપશમ અપેક્ષણીય હોતા હૈ । નિષ્કર્પ-ભુતઅવગોચ્યાદિકો
કા અભ્યવહિત-સુખ્ય-કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, અતઃ યે ઉસકે હી ફલ
સ્વરૂપ સે યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈ । કહા મી હૈ—

“ પદમિસ્તુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણ ।

સમ્મદસણભંમે, મવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શક્ત—વૈયાટ્ટસ્યનિયમ કો આપને સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે કહ
દિયા ? કારણ કિ યહ તો અતરંગ ચારિત્રકા એક મેદ હૈ । યદિ હસ
વૈયાટ્ટસ્યનિયમો કા સમ્યક્ત્વ કે હોને પર અવશ્યમાન માના જાયે તો
ફિર અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ નામકા ચતુર્થ ગુણસ્થાન હી નહીં પન સકતા,
કારણ કિ હસ અવસ્થા મેં મી આંશિક રૂપસે ચારિત્રકા સંજ્ઞાવ હસ
માન્યતા સે સિદ્ધ હો જાતા હૈ ।

એથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમના અવસરમા અનંતાનુબંધી કષાયને ક્ષયો
પશમ અપેક્ષણીય થાય છે નિષ્કર્પ-સુતથવચ્ચે અધિકોતુ અભ્યવહિત-સુખ્ય-કારણ
સમ્યગ્દર્શન વ છે માટે જો જોના જ હસસ્વરૂપથી અર્હિયા પ્રગટ કરવામાં
આવેલ છે કહું પણ છે—

‘ પદમિસ્તુયાણ ઉદયે નિયમા સંજોયણા કસાયાણ ।

સમ્મદસણભંમે મવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ’ ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શકા—વૈયાટ્ટસ્ય નિયમને આપે સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે કહું, કારણ
કે તે તો અતરંગ ચારિત્રને એક લેલ છે યદિ સમ્યક્ત્વ થવાથી જોને અવ
સ્થાવ માનવામાં આવે તો પછી અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ નામનું ચતુર્થ ગુણસ્થાન
બની શકતું નથી કારણ કે આ અવસ્થામાં પણ આંશિક રૂપથી ચારિત્રને સંજ્ઞાવ
આ માન્યતાથી સિદ્ધ થાય છે

વૈયાટ્ત્યનિયમરૂપચારિત્રસ્યાલ્પતમત્વેન ચારિત્રતયા તદ્વિવક્ષાયા અભાવાત્ ।
યથા-સંમૂર્ચ્છનજાનાં સંજ્ઞાસામાન્યસત્ત્વેઽપિ ત્રિશિષ્ટસંજ્ઞાયા અભાવાદસંજ્ઞિત્વમઙ્ગી-
કૃતમ્ । વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે । યથા-એક-
રૂપ્યકમાત્રધનેન ધનવાનયમિતિ ન વ્યપદિશ્યતે, યથા વા નાપ્યેકયા ગવા ગોમાન્ ;
યથા વા એકેનૈવ શુઠ્ઠીગ્રન્થિના ' પંસારી ' તિ-ભાપાપદવ્યપદેશ્યો વણિગ્ન ભવતીતિ ।

શઙ્કાકાર કી શઙ્કા કા યુલાસા ઇસ પ્રકાર હૈં-ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી
જીવકે ચારિત્રકા સદ્ભાવ નહીં માના ગયા હૈ, કારણ કિ વહ અવિરત-
દશાસંપન્ન હૈ । ડસકે કેવલ એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિકા પ્રાદુર્ભાવ હૈ,
ચારિત્ર કા નહીં । ચારિત્રકા સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાન સે પ્રારંભ હોતા હૈ ।
અવ યદિ વૈયાટ્ત્યનિયમ કો સમ્યગ્દર્શન કા ફલ માના જાવેગા તો
સમ્યગ્દર્શન કે હોને પર ઇસકા સદ્ભાવ અવશ્ય માનના હી પડેગા । એસી
દશામેં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવકે ભી આંશિકરૂપ સે ચારિત્ર કા સદ્ભાવ
સિદ્ધ હો જાતા હૈ, તથ વહ અવિરત ન રહ કર વિરત હી સિદ્ધ હુઆ ।

સમાધાન-વૈયાટ્ત્યનિયમ ચારિત્ર કા એક ભેદ હૈ, પરન્તુ વહ પૂર્ણ
ચારિત્ર નહીં હૈ, આંશિક ચારિત્ર હી હૈ, ઓર યહ યહાં પર વહુત હી અલ્પ
દશામેં હૈ, ઇસ લિયે ડસકી ચારિત્રરૂપ સે યહાં વિવક્ષા નહીં હૈ । મહા-
વ્રતાદિરૂપ ત્રિશિષ્ટ ચારિત્ર હી ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત હોતે હૈં, વે યહાં
પર નહીં હૈં, અતઃ સમ્યગ્દર્શનકા અસ્તિત્વ હોને પર ભી ઇસ દશામેં ઇસ
પ્રકારકા કોઈ ભી ચારિત્ર યહાં પર નહીં હૈ । ઇસી લિયે યહ અવિરત

શ કાકારની શ કાનો યુલાસો આ પ્રકારે છે — ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને
ચારિત્રનો સદ્ભાવ માનવામા નથી આવ્યો, કારણ કે તે અવિરતદશાસંપન્ન છે
તેને ફક્ત એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિનો પ્રાદુર્ભાવ છે, ચારિત્રનો નહિ ચારિત્રનો
સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાનથી પ્રારંભ થાય છે હવે જો વૈયાટ્ત્યનિયમને સમ્ય-
ગ્દર્શનનુ રૂપ માનવામા આવે તો સમ્યગ્દર્શનના થવાથી એનો સદ્ભાવ અવશ્ય
માનવો પડે આવી દશામા ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને પણ આશિષરૂપથી ચારિ-
ત્રનો સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે, ત્યારે એ અવિરતિ ન રહીને વિરત જ સિદ્ધ થાય છે

સમાધાન-વૈયાટ્ત્યનિયમ ચારિત્રનો એક ભેદ છે, પરન્તુ તે પૂર્ણ ચારિત્ર
નથી, આશિક ચારિત્ર છે, અને તે અહીંયા ઘણો જ અલ્પ દશામા છે, એથી
એના ચારિત્રરૂપથી આ ઠેકાણે વિવક્ષા નથી મહાવ્રતાદિરૂપ ત્રિશિષ્ટ ચારિત્ર જ
ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત થાય છે, તે આ ઠેકાણે નથી, માટે સમ્યગ્દર્શનનુ અસ્તિત્વ
હોવા છતાં પણ આ દશામા આ પ્રકારનું કોઈ પણ ચારિત્ર આ ઠેકાણે નથી,

નનૂપશાન્તમોહાદીનો સમ્યક્સ્વે સત્યપિ કૃતકૃત્યસયા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ન મરન્તિ, તથા ચ કાર્યકારણમાયનિયામકાન્વયધ્યતિરેકવિરહાત્ તેષાં સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્દષ્ટિ કહ્યાતા છે । અત્યતમ ચારિત્રકે મદ્ભાવસે પદ્ય ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત નહીં હો સકતા છે । જૈસે-સંમૂર્ચનજન્મસે ઉત્પન્ન હુવ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાકા મદ્ભાવ રહને પર મી વિશિષ્ટ સંજ્ઞાકે અભાવ હોને સે અસહી ટી કહે જાતે હૈં । હાં, મહાવ્રતાવિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર પદ્ય કોઈ હોતા તો યહ વ્રતી કહ્યાતા । ક્યોં ફિ-મમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રકે મદ્ભાવ મેં હી વ્રતિત્વ સ્વીકાર કિયા જાતા છે । હસી વસ્તુ કો ટીકાકાર કહેતે હૈં—

“વિરતત્વં हि महाव्रतादिरूपानम्यचारित्रमद्भावं एव स्वीक्रियते” इति ठीक है; जैसै-मात्र एक रुपया के रहने पर कोई बनी नहीं माना जाता है, जैसै एक ही गाय के अस्तित्वमें कोई गोपाल नहीं कहा जाता है, और जैसै एक गाँठ मोँठके रखने से कोई पंसायी नहीं होता है, वसी प्रकार इस अत्यतम आंशिक चारित्र के अस्तित्व से भी सम्यग्दृष्टि (अविरतदशासंपन्न सम्यग्दृष्टि जीव) चारित्री नहीं बन सकता ।

શાસ્ત્ર—ઉપશાન્તમોહાદે જીવોં કે સમ્યક્સ્વકે હોને પર મી શ્રુત શ્રવણેચ્છાદિક નહીં હોતે હૈં, કારણ ફિ વે કૃતકૃત્ય હો જુકે હૈં । હસ

તેથી આ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે અત્યતમ ચારિત્રન્ય સદ્ભાવમાં એ ચારિત્રરૂપી વિવક્ષિત નથી થઈ શકતું જેમ સંમૂર્ચનજન્મથી ઉત્પન્ન થયેલ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ વિશિષ્ટ સંજ્ઞાનો અભાવ હોવાથી અસહી કહેવાય છે એ મહાવ્રતાવિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર થઈ કેઈ હોત તો તે વ્રતી કહેવાય ? કારણ કે-મમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રન્ય સદ્ભાવમાં જ વ્રતિત્વ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, એ જ વસ્તુને ટીકાકાર કહે છે —

“વિરતત્વં हि महाव्रतादिरूपानम्यचारित्रमद्भावं एव स्वीक्रियते” इति

ઠીક પણ છે જેમ ફક્ત એક રૂપિયાના રહેવાથી કેઈ ધનવાન નથી કહે વાતે, જેમ એક ગાય રહેવાથી કેઈ ગોપાલ નથી કહેવાતો, અને જેમ કુંઠની એક ગાંઠ સખવાથી કેઈ ગાંઠી નથી થતો, તે પ્રમાણે આ અત્યતમ આંશિક ચારિત્રન્ય અસ્તિત્વથી પણ સમ્યગ્દષ્ટિ (અવિરતદશાસપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ) ચારિત્રી બની શકતો નથી.

શાસ્ત્ર—ઉપશાન્તમોહાદે જીવોં સમ્યક્સ્વ હોવા છતાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક નથી થતા, કારણ કે તે કૃતકૃત્ય થયેલ છે, તેમાં કાર્યકારણનિયામક

ફલત્વ ન સંભવતીતિ ચેત્, મૈવમ્, શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં મોહોપશાન્તિફલકત્વેન ફલરૂપેણ તેષ્વપિ શ્રુતશ્રવણવાચ્છાદિસદ્ભાવાત્, યદ્વા-શ્રાવકાવસ્થાયાં યત્ સમ્યક્ત્વં તદાશ્રિત્ય શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ભવન્તીતિ વિવક્ષયા તેષાં સમ્યક્ત્વફલત્વં સંભવત્યેવેતિ ।

લિયે કાર્યકારણભાવકે નિયામક અન્વય ઓર વ્યતિરેકકા વિઘટન હોનેસે સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પરમેં કાર્યકારણભાવ નહીં બન સકતા ।

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા મોહોપશાન્તિ ફલવાલે હોનેસે ફલરૂપસે વહાં પર સદ્ભાવ હૈ ।

વિશેષાર્થ—અમી પ્રતિવાદીને જો સમ્યગ્દર્શન ઓર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા યહાં પર કાર્યકારણભાવ, અન્વય વ્યતિરેક કે ન ઘટનેસે નહીં સ્વીકાર કિયા થા ઉસકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં મી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા સદ્ભાવ હૈ । યદિ इनका यहां पर सद्भाव न माना जावे तो इन जीवोंकी उपशान्तता हुई है वह घटित नहीं हो सकती । મોહકી ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા ફલ હૈ, ઓર શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનકે ફલ સ્વરૂપ હૈ, ઇતાવતા વે નિષ્ફલ હોં યહ વાત નહીં; કારણ કિ ફલ મી તો સ્વયં ફલવાન્ હુઆ કરતે હૈં, અતઃ ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફલ હૈ; નિષ્ફલ નહોં, ઇસ લિયે સમ્યગ્દર્શન

અન્વય અને વ્યતિરેકનુ વિઘટન હોવાથી સમ્યક્ત્વ અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પરમા કાર્યકારણભાવ બની શકતો નથી

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો મોહોપશાન્તિ ફળવાળા હોવાથી ફળરૂપથી ત્યા પશુ સદ્ભાવ છે

વિશેષાર્થ:—અત્યારે પ્રતિવાદીએ જે સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંના આ ઠેકાણે કાર્યકારણ-ભાવ અન્વયવ્યતિરેકના નહિ ઘટવાથી સ્વીકાર કરેલ નથી, એનું સમાધાન કરતા આચાર્ય મહારાજ કહે છે કે-ભાઈ ! ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોમાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો સદ્ભાવ છે જે તેનો ત્યા સદ્ભાવ ન માનવામાં આવે તો આ જીવોના મોહની જે ઉપશાન્તતા થઈ છે તે ઘટિત થતી નથી મોહની ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનુ ફળ છે, અને શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનનું ફળસ્વરૂપ છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શન નિષ્ફળ થાય એવી કોઈ વાત નહિ, કારણ કે ફળ પણ સ્વયં ફળવાન થયા કરે છે, તેથી ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોમાં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન અફળ થાય તે નિષ્કર્ષ નથી

માવતો વ્રતાક્રીકરણમપિ સમ્યક્ત્વસ્ય ફલં મરતિ, પરન્તુ સમ્યક્ત્વે સતિ
 કદાચિત્ સદ્ મરતિ, કદાચિન્મ । યદપિ પ્રત્યિમદાયન સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતિ સમ્યક્ત્વ-
 નાંમ વ્રતાક્રીકરણમવોપાદેયતર વિજાનાતિ; તથાપિ યાવત્સ્યાં કર્મસ્થિતીં સ્પ્યાં
 સમ્યક્ત્વલામો મરતિ તાવત્યાપવ વ્રતાક્રીકરણં ન સંમરતિ । વ્રતાક્રીકરણં પ્રતિ
 વારિમમોદનીયકર્મધ્યોપશ્ચમસ્ય સમ્યક્ત્વમાત્તિકરણકર્મસ્યોપશ્ચમાપશ્ચયાઽધિકર-
 ત્સ્ય કારણત્વાત્ ।

ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત હો જાતા
 હૈ । અથવા—સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં જો કાર્યકારણ
 માવ સંબંધ કહા ગયા હૈ વહ આવક-અવસ્થા મેં હોનેવાલે સમ્યગ્દર્શનકી
 અપેક્ષા સે સમજ લેના ચાહિયે । આવક-અવસ્થા મેં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ
 શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા જનક વહાં પર હોતા હૈ ।

સમ્પ્રાપ્તિપૂર્વક વ્રતાદિકોં કા અંગીકાર કરના મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ
 હૈ । યહા ટીકા મેં જો “અપિ” શબ્દ દિયા ગયા હૈ ઉસકા અર્થિપ્રાપ
 યહ હૈ કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિકોં કા આચરણ કમી હોતા મી
 હૈ ઔર કમી નહીં મી હોતા । યહ નિયમ નહીં કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર
 વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં કા સમ્પ્રાપ્તિ જીવોં કે હોયે હી । યદપિ રાગદ્વેષકી પ્રબલ
 પ્રત્યિ કે મેદ સે હી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઔર સમ્યક્ત્વની જીવ વ્રતા-
 દિક અનુષ્ઠાનોં કા અંગીકાર કરના શ્રેયસ્કર માનતા હૈ, પરન્તુ જિતની
 કર્મની સ્થિતિ રહને પર સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ ઉતની સ્થિતિમેં વ્રત

સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત થઈ
 જાય છે । અથવા—સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા કાર્યકારણ
 સંબંધ કહેવામા આવ્યો છે તે કારણ-અવસ્થામાં જનવાવણા સમ્યગ્દર્શનની
 અપેક્ષા મી સમજ લેવું જોઈએ । આવક-અવસ્થામાં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવ-
 ણેચ્છાદિકોં ઉત્પાદક તથા અવશ્ય માય છે ।

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં અંગીકાર કરવું તે પણ સમ્યક્ત્વનું ફળ છે
 જોઈએ ટીકામાં જે “અપિ” શબ્દ આવ્યો છે એનો અર્થિપ્રાપ જે છે કે
 સમ્યક્ત્વના વગર વ્રતાદિકોં આચરણ કોઈ વખત થાય પણ કે અને કોઈ
 વખત નથી પણ ચર્તુ જે નિયમ નથી કે સમ્યક્ત્વના વગર વ્રતાદિક અનુ-
 ષ્ઠાનોં સદ્ભાવ લેવોને થાય જ કારણ રાગદ્વેષની પ્રબલ પ્રત્યિના લેટલી જ
 સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે અને સમ્યક્ત્વની જીવ વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં અંગી-
 કાર કરવું શ્રેયસ્કર અને જે પરન્તુ જેટલી કર્મની સ્થિતિ રહેવાથી સમ્યક્ત્વને

અત્રેદમવગન્તવ્યમ્—જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મસ્થિતેર્હિ દ્વિપ્રભૃતિનવપર્યન્તસંખ્યારૂપે પલ્યોપમપૃથક્ત્વે વેદનાદપગતે સતિ ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણં ભવતિ । તત્રૈવં ક્રમઃ—

મોહનીયાદિકર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ સાગરોપમકોટીકોટીસપ્ત્યાદિકા, તન્મ-
ધ્યાત્ તાવર્તી સ્થિતિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેનાદૌ ક્ષપયતિ, યેન પલ્યોપમાનામસંખ્યેય-
ભાગન્યૂના એકસાગરોપમકોટીકોટી શેષા સ્થિતિર્ભવતિ । તતો ગ્રન્થિભેદેન સમ્યક્ત્વં
પ્રાપ્નોતિ । તદનન્તરં શેષકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વે ક્ષપિતે સત્યગુણં લભતે,
એવમેવ ભાવતો વ્રતપ્રાપ્તિર્ભવતિ, પરન્તુ દીર્ઘતરકર્મસ્થિતૌ સત્યામપિ દ્રવ્યતોઽગુણં
મહાવ્રતં ચ ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

કા અંગીકાર કરના સંભવિત નહીં હોતા । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોના એક
બાત હૈ ઓર ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોના હસ સે ભિન્ન બાત હૈ । સમ્યક્ત્વ કી
ઉત્પત્તિકા કારણ મિથ્યાત્વ (દર્શનમોહનીયાદિક) કા ક્ષયોપશમાદિક હૈ
ઓર ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિકા કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ હૈ ।
યહ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કે કારણ કી અપેક્ષા વ્રત અંગીકાર
કરનેમેં અધિકતર રૂપસે કારણ માના ગયા હૈ । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોને
પર ભી યદિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હુઆ હૈ તો ચારિત્ર
કી પ્રાપ્તિ જીવકો નહીં હોતી હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોતે હી ચારિત્રમોહનીય
કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકે હોને પર જબ જ્ઞાના-
વરણીયાદિક કર્મેં કી સ્થિતિ અપનીર સ્થિતિમેંસે દો સે લગા કર નૌ
પલ્ય તક ઓર ઘટ જાતી હૈ તબ હી જીવ ભાવકી અપેક્ષા વ્રતોંકો અંગી-
કાર કરતા હૈ । હસકા ક્રમ હસ પ્રકાર હૈ—મોહનીયાદિ કર્મોંકી જિતનીર

લાલ થાય છે તેટલી સ્થિતિમા વ્રતનુ અંગીકાર કરવુ સંભવિત નથી સમ્ય-
ક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવી એક વાત છે અને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી એનાથી ભિન્ન
વાત છે સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનુ કારણુ મિથ્યાત્વના (દર્શનમોહનીયાદિના) ક્ષયો-
પશમાદિક છે ચારિત્રની ઉત્પત્તિનુ કારણુ ચારિત્રમોહનીય કર્મને ક્ષયોપશમ
છે આ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના કારણુની અપેક્ષાએ વ્રત અંગીકાર
કરવામા અધિકતર રૂપથી કારણુ માનવામા આવે છે સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય
તો પણ જો ચારિત્રમોહનીય કર્મને ક્ષયોપશમ નહિ થયો હોય તો ચારિત્રની
પ્રાપ્તિ જીવને નથી થતી સમ્યક્ત્વના થવાથી જ ચારિત્રમોહનીય કર્મને ક્ષયો-
પશમ નથી થતો, પણ સમ્યક્ત્વના થવાથી જ્યારે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોની
સ્થિતિ પોતાપોતાની સ્થિતિમાથી એથી માડીને નવ પલ્ય સુધી ઘટી જાય છે
ત્યારે જીવ, લાવની અપેક્ષા વ્રતોને અંગીકાર કરે છે એનો ક્રમ આ પ્રકારે છે—

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈ ઘટ જખ અન્ત કોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાતી હૈ તખ હી જીવ સમ્યક્સ્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સપ્તર કોટાકોટી સાગર પ્રમાણ હૈ । ઇસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જખ પલ્લવે અસંખ્યાતમે માગ ન્યૂન-કમ ઇક કોટાકોટી સાગર કી કર હેતા હૈ તખ રાગ-રોપરૂપી પ્રવલ પ્રપ્તિ કે મેલ્સે સમ્યક્સ્વકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । આયુકર્મકો છોડ કર ઇસી પ્રકાર રોપ કર્મો કી સ્થિતિ ત્રી અન્તઃકોટા-કોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાતી ચાહિયે । કર્મો કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ મેં ઔર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્સ્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી, યહ નિયમ હૈ સમ્યક્સ્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર રોપ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મો કી અન્તઃ કોટાકોટી સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હી હોતી હૈ । ઇસકે બાદ અવગિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જખ પલ્લવપ્રવૃત્તિ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈ ઇસ સમય જીવ માલકી અપેક્ષા અણુવતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । ઇસ કર્મસ્થિતિમેં ઇતના જખ પરિવર્તન હો જાતા હૈ તખ હી માલસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ । ઇસસે યહ સાધિત હોતા હૈ કિ 'સમ્યક્સ્વકે હોને પર જીવ માલસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હી હેતા હૈ' યહ નિયમ નહીં હૈ । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં વ્રત્ય સે હી (માલશૂન્ય)

મોહનીયાદિ કર્મોની કોટલી કોટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે બ્યારે અન્તઃકોટી સાગર પ્રમાણ રહી જાય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્સ્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) ચિત્તર કોટાકોટી સાગર પ્રમાણ હૈ આ સ્થિતિમેં યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને બ્યારે પલ્લવના અસંખ્યાતમા માગ ન્યૂન કોટાકોટી સાગરની કરે છે ત્યારે સમ્યક્સ્વ રૂપી પ્રવલ પ્રવૃત્તિના લેહથી સમ્યક્સ્વને પ્રાપ્ત કરે છે આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે રોપ કર્મોની સ્થિતિ પણ અન્તઃકોટી સાગરપ્રમાણ રહેલી બેઠકે કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમા અને જઘન્ય સ્થિતિમા સમ્યક્સ્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે સમ્યક્સ્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને રોપ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોની એક કોટાકોટી સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે ત્યાર બાદ અવગિષ્ટ કર્મસ્થિતિ બ્યારે પલ્લવપ્રવૃત્તિપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ જાય છે તે વખતે જીવ, માલની અપેક્ષા અણુવતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમા એટલું બ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે માલથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે એથી એ સાધિત થાય છે કે 'સમ્યક્સ્વકે હોવાથી જીવ, માલથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ શકે' એ નિયમ નથી, દીર્ઘ તર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમા વ્રત્ય

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

છાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્મન્ત્રે ગ્રૈવેયકેપૂપપાતઃ ।

મણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિંગં મુક્ત્વા યતો મણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિંગપ્રવ્રણ કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેપામપિ ચોપપાત, ઉત્કર્ષો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અયમન્ત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેઽનુક્રમેણ વીર્યોદ્ધાસાત્ ક્ષપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ ।

અણુવ્રત-મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ, जिसका फल कर्मक्षय नहीं है । द्रव्यचारित्रका अभिप्राय भावशून्य चारित्र है । यह चारित्र सम्यग्दर्शनमूलक नहीं होता । भावचारित्र ही सम्यग्दर्शनमूलक होता है । कहा भी है—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि-जितनी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

થી જ (ભાવશૂન્ય) અણુવ્રત મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી । દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું ભાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે કહ્યું પણ છે —

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિંપિ ય ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (જે થી માડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ વીર્યોદ્ધાસથી ક્ષપિત થઈ નય

देशविरतिमाप्स्यन्तरं संख्यातेषु सागरोपमेषु क्षपितेषु सर्वविरतिचारित्र्यं स्मरते । तदनन्तरमपि संख्यातेषु सागरोपमेषु क्षपितेषु पञ्चमभेदि प्रतिपद्यते । ततोऽपि संख्यातेषु सागरोपमेषु क्षपितेषु क्षपकभेदिर्मवति । ततस्तस्मिन्नेव मवे मोक्ष इति । एवं यस्य सम्यक्त्वमप्रतिपतित तस्यैव देवमनुष्यमवेषु ससरणं कुर्वतो वञ्चविरत्यादि लाभो भवति । सम्यक्त्व वि अनन्तानन्द-रूपानुपम मोक्षसुखस्य कारणम् । उक्तम्—

“ नस्त्यन्त्रस्य यथा पुंसश्चक्षुर्भावे शुभोदये ।

सर्वत्र तथैवास्य, सम्यक्त्वे सति जायते ॥ १ ॥

आनन्दो जायतेऽत्यन्तं, मात्तिकोऽस्य महात्मनः ।

सद्रोष्युपगमे यद्वा, व्यापितस्य सर्वोपमम् ” ॥ २ ॥ इति ।

वीर्योत्थान से क्षपित हो जावे तब देशविरति का लाभ होता है । देश विरति—आवकचारित्र्य—पंचम गुणस्थान की प्राप्ति के अनन्तर संख्यात सागरप्रमाण स्थितिके क्षय होने पर सर्वविरति—मुनिव्रत—पञ्चगुण स्थानकी प्राप्ति होती है । इसके बाद संख्यातसागरप्रमाण स्थितिके व्यतीत हो जानेपर उपशमभेदि और फिर संख्यातसागरप्रमाणस्थिति के क्षय होने पर क्षपकभेदिका लाभ होता है । फिर उसी भवे उसको मुक्तिकी प्राप्ति हो जाती है । देशविरति आदि चारित्र्यका लाभ उसी जीवके होता है कि जिसने अपने सम्यक्त्व की विराधना देव मनुष्यमवेषों में रहते हुए नहीं की है । अर्थात् देवपर्याय में या मनुष्यपर्याय में जिसके सम्यक्त्वकी विराधना हो गई है उस जीवके देशविरति आदि चारित्र्य का लाभ नहीं होता । यह सम्यक्त्व अनन्तआनन्दरूप अनुपम मोक्ष सुखका कारण है । जैसे कहा है—

तत्र देशविरतिना लाभ लाभ छ देशविरति—आवकचारित्र्य पंचम गुणस्थानकी प्राप्तिनी पाछी संख्यातसागरप्रमाण स्थितिना क्षय वनाथी सर्वविरति—मुनिव्रत—छदम शुद्धस्थानकी प्राप्ति साथ छ तत्र बाद संख्यातसागरप्रमाण स्थितिना व्यतीत यथ वनाथी उपशमभेदि जाने पाछी संख्यातसागरप्रमाण स्थितिना क्षय वनाथी क्षपकभेदिना लाभ लाभ छ वनी के व सर्वो मोक्ष तेने मुक्तिनी प्राप्ति यथ लाभ छ देशविरति आदि चारित्र्यना लाभ ते व एवने साथ छ के नेवे पोताना सम्यक्त्वनी विराधना देव मनुष्यमवेषमा रहीने नथी करी, अर्थात्—देवपर्यायमा अत्र मनुष्यपर्यायमा नेने सम्यक्त्वनी विराधना यथ अर्थ छ के एवने देशविरति आदि चारित्र्यना लाभ नथी भेते ते सम्यक्त्व अनन्त आनन्दरूप अनुपम मोक्षसुखन कारण छ नेम कहु छ—

अन्यच्च—“द्वारं मूलं प्रतिष्ठानमाधारो भाजनं निधिः ।

द्विषट्कस्यास्य धर्मस्य, सम्यक्त्वं परिकीर्तितम्” ॥ ३ ॥

अपरं च—“सस्यानीवोपरक्षेत्रे, निक्षिप्तानि कदाचन ।

न व्रतानि प्ररोहन्ति, जीवे मिथ्यात्ववासिते” ॥ ४ ॥ इति ।

“जात्यन्धस्य यथा पुंसश्चक्षुर्लाभे शुभोदये ।

सद्दर्शनं तथैवास्य, सम्यक्त्वे सति जायते ॥ १ ॥

आनन्दो जायतेऽत्यन्तं, सात्त्विकोऽस्य महात्मनः ।

सद्बोध्युपगमे यद्वद्, व्याधितस्य सदौषधम्” ॥ २ ॥

अन्यच्च—“द्वारं १ मूलं २ प्रतिष्ठान ३ माधारो ४ भाजनं ५ निधिः ६ ।

द्विषट्कस्यास्य धर्मस्य, सम्यक्त्वं परिकीर्तितम्” ॥ ३ ॥

अपरञ्च—“सस्यानीवोपरक्षेत्रे, निक्षिप्तानि कदाचन ।

न व्रतानि प्ररोहन्ति जीवे मिथ्यात्ववासिते” ॥ ४ ॥

अर्थात्—जन्मान्ध पुरुषको शुभ कर्मोंके उदयसे नेत्रोंके खुल जाने पर जिस प्रकार सद्दर्शन (समस्त वस्तुओंका दीखना) होता है उसी प्रकार इस जीवको सम्यक्त्वका लाभ होने पर यथार्थ ज्ञान होता है । १।

जिस प्रकार रोगीको श्रेष्ठ औषधसे आरोग्यप्राप्ति होने पर आनन्द होता है उसी प्रकार सद्बोधि (सम्यक्त्व) के प्राप्त होने पर उस महात्मा पुरुष को सात्त्विक अत्यानन्द होता है ॥ २ ॥

“जात्यन्धस्य यथा पुंसश्चक्षुर्लाभे शुभोदये ।

सद्दर्शनं तथैवास्य, सम्यक्त्वे सति जायते ॥ १ ॥

आनन्दो जायतेऽत्यन्तं, सात्त्विकोऽस्य महात्मनः ।

सद्बोध्युपगमे यद्वद्, व्याधितस्य सदौषधम्” ॥ २ ॥

अन्यच्च—“द्वारं १ मूलं २ प्रतिष्ठान ३, माधारो ४ भाजनं ५ निधिः ६

द्विषट्कस्यास्य धर्मस्य, सम्यक्त्वं परिकीर्तितम्” ॥ ३ ॥

अपरं च—“सस्यानीवोपरक्षेत्रे, निक्षिप्तानि कदाचन ।

न व्रतानि प्ररोहन्ति, जीवे मिथ्यात्ववासिते” ॥ ४ ॥

अर्थात्—जन्मान्ध पुरुषने शुभ कर्मना उदयशी नेत्रोना खुलवाथी ने प्रकारे सद्दर्शन (हरैक वस्तुओंनु देखवुं) थाय छे, ते प्रकारे आ खुलने सम्यक्त्वनो लाभ थावाथी यथार्थ ज्ञान थाय छे (१)

ने प्रकारे रोगीने श्रेष्ठ औषधिथी आरोग्यप्राप्ति थावाथी आनन्द थाय छे ते प्रकारे सद्बोधि (सम्यक्त्व) नी प्राप्ति थावाथी ते महात्मा पुरुषने सात्त्विक अत्यानन्द थाय छे (२)

નનુ યદુક્તં સમ્યક્ત્વે સતિ ક્વાચિદ્ યત્તાત્તીકરણં નાપિ મવતીતિ, ક્વ ક્ષં સંમવતિ ? ઉચ્યતે—

યદા સમ્યક્ત્વલામાનન્તરં નવપલ્યોપમાધિકસ્થિતિકો દેવેપૂત્પદ્યસે તદા તસ્માન્ વસ્થાયાં યાત્રતીં સ્થિતિં સપયતિ તાત્ત્વીમન્યા વદ્નાતિ, તતો દેશોનસાગરોપમકોટી કોટીરૂપાયા અધિકૃતકર્મસ્થિતો પલ્યોપમપૃથક્ત્વસ્યાપગમો ન મવતીતિ—અતો દેવમ વે દશવિરતિભામો ન સંમવતિ, તસ્માદ્ સમ્યક્ત્વે સત્યપિ પ્રતાનત્તીકાર્યં સિદ્ધમ્ ।

और भी—यह सम्यक्त्व चार प्रकारके आवक धर्मका द्वार है १, मूल है २, प्रतिष्ठान (आलम्बन) है ३, आधार है ४, वाजन—पात्र है ५, और निधिरूप है ६ ॥ ३ ॥

फिर भी—जिस प्रकार ऊपर क्षेत्रमें बोये हुए बीज नहीं उगाते हैं उसी प्रकार मिथ्यात्ववामिन जीवमें वनोंका उद्भव नहीं होता ॥४॥

शास्त्र—सम्यक्त्व के होने पर क्वाचिद् व्रतका लाभ नहीं भी होता है, यह बात कैसे संभव होती है ? ।

समाधान—सम्यक्त्वके होने पर भी व्रतका लाभ नहीं होता, यह बात एक तो ऊपर कथित प्रकारसे प्रकट की गई है, और दूसरा प्रकार यह भी है—जिस जीवको सम्यक्त्वका लाभ हुआ है वह अपनी आयुके अन्तमें नौ पल्यसे अधिक स्थितिका बंध कर देवपर्याय में उत्पन्न हुआ उस समय वह उस पर्याय में से जिननी भी स्थितिका क्षय करता है उतनी और दूसरी स्थितिका बंध भी करता रहता है । सम्यक्त्वके उत्पादनके

કરી—આ સમ્યક્ત્વ ચાર પ્રકારના આવક ધર્મનું દ્વાર છે ૧, મૂલ છે ૨, પ્રતિષ્ઠાન (આલંબન) છે ૩, આધાર છે ૪, વાજન—પાત્ર છે ૫ અને નિધિ છે ૬ (૩)

વળી—જે પ્રકારે ઉપર ક્ષેત્રમાં વાવેલા બીજ ઉગતા નથી તે પ્રકારે મિથ્યાત્વવાસિત છવમાં જતનો ઉદ્ભવ થતો નથી. (૪)

સાધના—સમ્યક્ત્વના ચલાથી જતનો લાભ કોઈ વખત નહીં પણ યાત્ર, આ વાત કેમ સંભવે છે ?

સમાધાન—સમ્યક્ત્વના ચલાથી પણ જતનો લાભ નથી થતો જો વાત જોઈ તે ઉપર ઠહિત પ્રકારથી પ્રગટ કરી છે અને બીજો પ્રકાર જો પણ છે—જે છવને સમ્યક્ત્વનો લાભ થયો છે તે પોતાની આમુના અતર્માં નવ પચ્ચથી અધિક સ્થિતિનો બંધ કરીને દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો, તે વખત તે પર્યાયમાં કોટલી સ્થિતિનો સ્થાપ કરે છે તેટલી બીજી સ્થિતિનો તે બંધ પણ કરે છે જો પ્રકારે સમ્યક્ત્વના ઉત્પાદનના સમયની

यस्य सम्यक्त्वान्नो व्रतप्राप्तिर्न भवति, स तु अव्रती सम्यग्दृष्टिः श्रावको निगद्यते ।

किंच—सम्यक्त्वाभावे सति मोक्षो न लभ्यते । मिथ्यादृष्टिर्हि कुशास्त्रप्रति-
बोधितां संयमनियमादिरूपां निवृत्तिमाचरन्नपि, स्वजनधनभोगान् परित्यजन्नपि,
शीतोष्णक्षुत्पिपासादिभिर्दुःखस्य परां काष्ठागुपगच्छन्नपि सम्यक्त्वरहितत्वेन
मोक्षसिद्धये न प्रभवति । सम्यक्त्वाभावे सति कर्मक्षयो न भवति । सम्यक्त्ववतामेव
ज्ञानतपश्चारित्राण्यपि सफलीभवन्ति । सम्यक्त्वे सत्येव चाणुव्रतगुणव्रतशिक्षाव्रतानि
भवितुमर्हन्ति, तस्मात् सम्यक्त्वं मोक्षस्य बीजमिति बोध्यम् ।

समय की कुछ कम कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमेंसे पत्योपम-
पृथक्त्वरूप स्थितिका अपगम-अभाव नहीं होनेसे देवपर्यायमें देशविरति
का लाभ संभवित नहीं होता ।

जिस सम्यक्त्वकी व्रतप्राप्ति नहीं होती है वह सम्यग्दृष्टि श्रावक
कहलाता है । इसको कभी न कभी (अर्धपुद्गलपरावर्तनकालके बाद)
मुक्तिका लाभ अवश्य हो जाता है, परन्तु जिसके मूलमें सम्यक्त्व ही
नहीं है उसको मुक्तिपद की प्राप्ति हो नहीं सकती । मिथ्यादृष्टि जीव
(द्रव्यलिङ्गी मुनि जैसा) खोटे २ शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित संयम
नियमादिरूप चारित्रका पालन करनेपर भी स्वजन धन एवं पांच इन्द्रियों
के विषयों का परित्यागी होने पर भी, और अनेक प्रकारसे शीत उष्ण,
भूख और प्यास आदि परीषहजन्य कष्टों का कठोर से कठोर सामना
करते हुए भी सम्यक्त्व से रहित होनेके कारण ही मोक्षरूपी सिद्धि
का भागी नहीं माना गया है । यह तो अटल सिद्धान्त है कि-सम्य-

काष्ठ ओछी कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमाथी पत्योपमपृथक्त्वरूप स्थितिने
अपगम-अभाव नहि थवाथी देवपर्यायमा देशविरतिने लाभ संभवित थतो नथी

जे सम्यक्त्वने व्रतप्राप्ति नथी थती ते अविरतसम्यग्दृष्टि श्रावक
कडेवाय छे अने कोष्ठ वणत (अर्धपुद्गलपरावर्तन कालनी पछी) मुक्तिने
लाभ अवश्य थाय छे पणु जेना भूणमा सम्यक्त्व नथी तेने मुक्तिपदनी प्राप्ति
थती नथी मिथ्यादृष्टि लव (द्रव्यलिङ्गी मुनि जेवा) जोटा जोटा शास्त्रोद्वारा
प्रतिपादित संयमनियमादिरूप चारित्रनु पालन करवाथी स्वजन धन अने पंचे-
न्द्रियोना विषयोना परित्यागी होवा छता पणु, अने अनेक प्रकारथी शीत,
उष्ण, भूख अने प्यास आदि परिषहजन्य कष्टोना कठोरमा कठोर सामना करवा
छता पणु सम्यक्त्वथी रहित होवाना कारणे मोक्षरूपी सिद्धिने लागी मानवामा
आवतो नथी ओ तो अटल सिद्धांत छे के—सम्यक्त्वप्राप्ति बिना कर्म क्षय

નન્યાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વ કર્તૃ વિગ્રયં મધેદિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સમ્યક્ત્વ-
કાર્યરૂપૈઃ સમસંધેગનિર્વેદાનુકમ્પાસ્તિક્યૈ સાધુસામાધારીમહત્ત્યાવિરૂપૈઃ સામાયિક-
પોષધમસિક્રમણત્યાગપ્રત્યાક્ષ્યાનાદિધાવકાચારરૂપૈઃ ધાત્રીયશસ્ત્રધ્યાપારૈરેત્દવન્નું
શક્યતે । તત્ર—

સ્વપ્રાપ્તિકે વિના કર્મકથ્ય હોતા હી નહીં છે । સમ્યક્ત્વકે વિના જ્ઞાન
ઔર ચારિત્ર નિષ્ફલ છે । इनकी सफलता का मूल कारण यदि कोई है
तो वह एक सम्यक्त्व ही है । सम्यक्त्व की जीव के ही ज्ञान तप चारित्र
सफल होते हैं, अणुव्रत, गुणव्रत एवं शिक्षाव्रत—रूप आवकका देश
चारित्र भी सम्यक्त्व के सद्भावमें ही सफल माना गया है, इस लिये
सम्यक्त्व ही मोक्षका कारण है ।

શક્ત—સમ્યક્ત્વ તો આત્માકા એક પરિણામ છે, ઉસકા અસ્તિત્વ
કેસે જાના સકતા છે ?

શક્તકારકા અભિપ્રાય યહાં હસ પ્રકારકા છે કિ જય સમ્યક્ત્વ
આત્માકા એક પરિણામ છે તો હાં મી અમૂર્સ હી હોગા । अर्थात्—जिस
प्रकार आत्मा अमूर्त है उसी प्रकार वह सम्यक्त्व भी अमूर्त होगा, फिर
उसके अस्तित्वका बोध कैसे होता है ?

હસ શક્તકા સમાધાન કરતે હુણ આચાર્ય મહારાજ કહતે છે કિ—
માત ટીક છે; પરન્તુ ઉમકે કાર્યો સે ઉમકે અસ્તિત્વકા માન હોતા છે ।
શમ, સંધેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિર્ય, સાધુઓંકી સમાધારીરૂપ
પ્રવૃત્તિ આદિ ઈવં સામાયિક, પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાક્ષ્યાન

વ્યા નથી, સમ્યક્ત્વ વિના જ્ઞાન અને ચારિત્ર નિષ્ફળ છે એની સ્પષ્ટતાત મૂળ
કારણ એ કેહાં હોય તો તે એક સમ્યક્ત્વ જ છે સમ્યક્ત્વની છપને જ જ્ઞાન તપ
ચારિત્ર સફળ થાય છે અણુવ્રત, ગુણવ્રત અને શિક્ષાવ્રતરૂપ આવકનું દેશચારિત્ર
પણ સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવગા જ સફળ બનાય છે નથી સમ્યક્ત્વ જ મોક્ષનું કારણ છે.

શક્ત—સમ્યક્ત્વ તો આત્માનું એક પરિણામ છે તેનું અસ્તિત્વ કેવી
રીતે બાળી શકાય ? શક્તકારકો અભિપ્રાય આ કેહાણે આ પ્રકારનો છે કે અમૂર્ત
સમ્યક્ત્વ આત્માનું એક પરિણામ છે તો તે પણ અમૂર્ત થયે અર્થાત્—જે પ્રકારે
આત્મા અમૂર્ત છે તે પ્રકારે તે સમ્યક્ત્વ પણ અમૂર્ત થયે, પણ તેના અસ્તિત્વનો
બોધ કેવી રીતે થાય ? આ શક્તનું સમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે
કે—પાત ટીક છે પરન્તુ તેના કાર્યોથી તેના અસ્તિત્વનું જ્ઞાન થાય છે શમ, સંધેગ
નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય સાધુઓની સમાધારીરૂપ પ્રવૃત્તિ આદિ, અને આ

(૧) શમરૂપેણ સમ્યક્ત્વપરિણામેન સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રતિકૂલકારિણેઽપિ ન ક્રુધ્યતિ ।

(૨) સંવેગારૂપેણ તેન 'સકલમહીમળ્ડલેશ્વરસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય ચ મુખં પરમાર્થતો દુઃખમેવ, કર્મજન્યત્વાત્ સાવસાનત્વાદસ્વાભાવિકત્વાચ્ચેતિ મન્યમાનો મોક્ષાદન્યત્ કિંચિન્ન વાઙ્મતિ, મોક્ષો દિ સ્વાભાવિકાત્મપરિણામરૂપઃ કર્માજન્યઃ પર્યવસાનરહિતો નિરતિગયાનન્દરૂપશ્ચાસ્તિ ।

આદિ જો બાહર કે પ્રગસ્ટ વ્યાપાર હેં યે હી ઉસકે કાર્ય હેં । ઇનસે હી ઉસકે અસ્તિત્વકા બોધ હોતા હેં ।

(૧) શમ--શમરૂપ સમ્યક્ત્વકે પરિણામવાલા જીવ કિસી ધી સમય અપને સે પ્રતિકૂલ આચરણ કરનેવાલોં પર ધી ક્રોધ નહીં કરતા હે, અર્થાત્-કષાયોં કા શમનરૂપ યહ પરિણામ હે, અથવા કષાયોં કા શમન હી શમ હે ।

(૨) સંવેગ-સંસારાદ્મીરુતા સંવેગઃ--સંસારસે અગમીત હોના હી સંવેગ હે । ઇસ પરિણામવાલા જીવ ચક્રવર્તી ઑર ઇન્દ્ર કે ધી વૈષયિક સુખોં કો અપની દૃષ્ટિસે દુઃખરૂપ હી માનતા હે । કારણ કિ વહ ઉનકા સુખ, કર્મ-(સાતાવેદનીય) કે ઉદયાધીન હોને સે સાન્ત-નાશવાન હે, ંવ યહ આત્મિક સ્વભાવ સે પ્રતિકૂલ હે, ઑર મોક્ષ તો ઇસસે વિપરીત સ્વભાવવાલા હે, અતઃ ઉસકે અતિરિક્ત ઑર કોઈ ધી સાંસારિક પદાર્થ ઇસકી દૃષ્ટિ કા મોહક નહીં બન સકતા, ઇસલિઅ મોક્ષ કે અતિરિક્ત ઑર કિસી ધી પદાર્થ કી પ્રાપ્તિકી વાંઝા ઇસકે નહીં રહતી । 'મોક્ષ ઇસસે વિપ-

માયિક પોષધ પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન આદિ જે ણાહ્ય પ્રશસ્ત વ્યાપાર હે તે જ તેના કાર્યો છે, તેનાથી જ તેના અસ્તિત્વનો બોધ થાય છે

(૧) શમ--શમરૂપ સમ્યક્ત્વના પરિણામવાળો જીવ કોઈ વખત પોતાથી પ્રતિકૂળ આચરણ કરવાવાળા ઉપર પણ ક્રોધ કરતો નથી અર્થાત્ કષાયોના શમનરૂપ આ પરિણામ છે, અથવા કષાયોનો શમન જ શમ છે -

(૨) સંવેગ--'સંસારાદ્મીરુતા સંવેગઃ' સંસારથી ભયભીત થવું તે સંવેગ છે. આ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી અને ઇન્દ્રોના વૈષયિક સુખોને પણ પોતાની દૃષ્ટિથી દુઃખરૂપ જ માને છે કારણ કે તે એના સુખ, કર્મ (સાતાવેદનીય)ના ઉદયાધીન હોવાથી સાન્ત-નાશવાન છે, એ આત્મિકસ્વભાવથી જ પ્રતિકૂળ છે, અને મોક્ષ તો એનાથી વિપરીત સ્વભાવવાળો છે એથી એનાથી અતિરિક્ત બીજો કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થ એની દૃષ્ટિનો મોહક નથી બની શકતો, તેથી મોક્ષના અતિરિક્ત કોઈ પણ પદાર્થની પ્રાપ્તિની વાછના એને રહેતી નથી. 'મોક્ષ એથી

(૩) નિર્વેદાસ્થ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન મીષો મન્યતે—‘નારકતિર્યક્મનુપ્પલે-
મવપુ સર્વેભ્યેવ દુ ન્વમસ્તિ, અતઃ સર્વમેષ જગથિઃસાર’-મિતિ । અપિ ચ મમત્વતિ-
ચેગરહિતો મપતિ ।

(૪) પ્રાણિવર્ગે સમન્તાદવજ્રોક્તયાનુકમ્પાસ્થ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન—‘એ
સંસારચક્રપરિશ્રમ્તાઃ શારીરેમૌનસૈષ વિવિધદુઃસૈ પરાધૃત્વા’ સન્તી’-તિ મત્વા ત્વા
સ્મૌપમ્યેન સેવા દુઃસ્વાન્યનુભૂય સ્વકીયપરકીયમારાડમાવપૂર્વકમમયવાનન, પ્રાણિનો
રીત સ્વમાવધાણા છે’ હસકા તાત્પર્ય યહી છે કે વહ કર્મ કે ઉદય કે
આધીન નહીં છે, અપિતુ આત્મા કા નિજસ્વમાત્ર છે । એક વાર જિમ
જીવ કો હસકી પ્રાપ્તિ હો જાતી છે ઉસકો ફિર હસ સંસારમેં પરિશ્રમણ
નહીં કરના પડતા, એવં જીવ કો વહાં પર નિરતિષાય અનંત આનન્દ કી
પ્રાપ્તિ હોતી છે હસલિયે વહ મોક્ષ સ્વયં અપૂર્વ અનંત આનન્દ કા એક નામ
છે । સંયોગ પરિણામવાલા જીવ હસ પ્રકારકે મોક્ષસ્તુત્ત્વકી હી અમિલાવા
કરતા છે ।

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાલા જીવ—‘નરક, તિર્યક વેદ્ય ઔર મનુ
ષ્યમવમેં સર્વથ્ર હી દુઃખકા સામ્રાજ્ય છાયા હુઆ છે હસ લિયે યહ સમસ્ત
જગત દુઃસ્વકા એક માજન છે’ એસા સમસ્ત કર ઉસકો નિઃસાર—સારરહિત
હી જાનતા છે । મમતારૂપ જહર મે વહ દૂર હી રહતા છે ।

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવો પર દયામાત્ર હોના હી અનુકંપા છે ।
હસ ગુણવાલા જીવ સંસારસ્થ સમસ્ત પ્રાણિવર્ગે કો શારીરિક માનસિક

વિપરીત સ્વભાવવાળો છે’ એનો તાત્પર્ય એ છે કે તે કર્મના ઉદયને આધીન નથી
પણ આત્માને નિઃસ્વભાવ છે એક વાર ને હવે ને આત્માની પ્રાપ્તિ થઈ જઈ તે
પછી એને આ નિઃસ્વાસ્થ્ય પરિશ્રમથી કરતું કરતું નથી અને હવે તે ત્યાં નિરતિ
મુક્ત અનંત આનંદની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે આશ્ચર્ય પાત્રે અપૂર્વ અનંત
આનંદની પ્રાપ્તિ છે સર્વેપરિણામવાળો હવે આવા પ્રકારના એક-સુખનીજ
અભિલાષા કરે છે

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળો હવે—‘નરક તિર્યક, દેવ અને મનુષ્ય ભવમાં
સર્વથ્ર દુઃખત્વ સામાન્ય જ પથકથેતું છે એથી સમસ્ત આ જગત દુઃખગ્રસ્ત એક
ભાજન છે એવું સમજીને તેને નિઃસાર—સારરહિત માને છે. મગવાદ્ધી ગેરશી
તે દૂર જ રહે છે

(૪) અનુકંપા—દુઃખી હવે ઉપર દયા કરવી તેનું નામ અનુકંપા છે આ
સુખવાળા હવે પ્રત્યક્ષા સમસ્ત પ્રાણિવર્ગને અનેક શારીરિક માનસિક કર્મોથી

રક્ષણેન, માર્યમાણાનાં સંકટાન્મોચનેન, ધર્મોપદેશેન મોક્ષમાર્ગે યોજનયા ચ યથા-
સામર્થ્યમનુગ્રહં કુરુતે ।

(૫) આસ્તિક્યપરિણામેન ચ ‘યદિહ તીર્થકરૈઃ પ્રતિવોધિતં તત્ સર્વમેવ સત્યં,
તથૈવ સર્વે જીવાજીવાદયોઽર્થાઃ સન્તિ નિશ્શંકામ્’ ઇતિ મન્યતે । સ ચ કાહ્વાદિ-
વિસ્રોતસિકારહિતો ભવતિ ।

અર્થભૂતૈઃ શમાદિપરિણામૈઃ સમ્યક્ત્વં વિજ્ઞેયં ભવિતુર્મહતિ । લબ્ધસમ્યક્ત્વશ્ચ
સમ્યગ્દષ્ટિરિત્યુચ્યતે । સ ચાન્તર્મુહર્તકાલમપિ સમ્યક્ત્વેન સ્પૃષ્ટશ્ચેદુત્કૃષ્ટતો દેશો-

અનેક કષ્ટોં સે વ્યથિત હી અનુભવ કિયા કરતા હૈ, ઓર અપને
સમાન હી ઉન્હેં માન કર અનેકે અનુભવોં કા સ્વયં અનુભવ કરકે નિષ્પક્ષ
દૃષ્ટિ સે યુક્ત હો કર અનેકે અનુભવોં કો દૂર કરને કી યથાશક્તિ કોશિશ
મેં રહતા હૈ । અપની શક્તિકે અનુસાર અનકી રક્ષા કરતા હૈ । મરતે હુઅ
તથા ઘાતકદ્વારા મારે જાતે હુઅ જીવોં કો યથાશક્તિ બચાતા હૈ ઓર
મોક્ષમાર્ગસે વિપરીત જનોં કો સદ્ધર્મકે ઉપદેશ સે ભાવિત કર ઉન્હેં
મોક્ષમાર્ગમેં લગાને કી અપની શક્તિકે અનુસાર ષેષ્ટા ભી કરતા હૈ ।

(૫) આસ્તિક્ય—“જો જિનેન્દ્રદેવને કહા હૈ વહ સર્વ હી સત્ય હૈ”
હસ પ્રકાર દૃઢ આસ્થાવાલી મતિ હી આસ્તિક્ય ભાવ હૈ । હસ આસ્તિક્ય
ભાવવાલા જીવ જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોં મેં નિશંક હોકર દૃઢ આસ્થા-
સમ્પન્ન હોતા હૈ । વહ જીવ જિનવચનોં મેં શંકાકાહ્વાદિરહિત હોતા હૈ ।

હન પૂર્વોક્ત શમાદિ ભાવરૂપ ચિહ્નોંસે સમ્યક્ત્વ કા અસ્તિત્વ જાના
જાતા હૈ । જીવ યદિ સમ્યગ્દર્શનકા અક અંતર્મુહર્ત ભી સ્પર્શ કર લેતા

વ્યથિત જ અનુભવ કર્યા કરે છે અને પોતાના સમાન જ તેઓને માનીને તેઓના
તે હુઓનો અનુભવ સ્વય કરીને નિષ્પક્ષદષ્ટિયુક્ત થઈ તેઓના તે હુઓને દૂર
કરવાની યથાશક્તિ કોશિશમા રહે છે, પોતાની શક્તિના પ્રમાણમા તેની રક્ષા કરે છે
મરતા હોવોને તથા ઘાતકીદ્વારા મરતા હોવોને યથાશક્તિ બચાવે છે, અને
મોક્ષમાર્ગથી વિપરીત જનોને સદ્ધર્મના ઉપદેશથી ભાવિત કરી તેને
મોક્ષમાર્ગમા લગાડવામા પોતાની શક્તિ-અનુસાર ષેષ્ટા કરે છે

(૫) આસ્તિક્ય—“જે જિનેન્દ્ર દેવે કહ્યા છે તે સર્વે સત્ય છે” આ પ્રકા-
રની દૃઢ આસ્થાવાળી મતિ જ આસ્તિક્ય ભાવ છે આ આસ્તિક્યભાવવાળા હોવ
જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમા નિશંક થઈને દૃઢ આસ્થાવાળા થઈ જાય છે તે હોવ જિન
વચનોમા શંકાકાહ્વાદિરહિત હોય છે

આ પૂર્વોક્ત શમાદિભાવરૂપ ચિહ્નોથી સમ્યક્ત્વનુ અસ્તિત્વ જાણવામા આવે
છે હોવ જે સમ્યગ્દર્શનનો એક અંતર્મુહર્ત પણ સ્પર્શ કરી લે તો તે નિયમથી

નાર્ભપુદ્ગલપરાવર્તનતરે નિયમેન મોક્ષ પ્રાપ્નોતિ । અભ્યધિકેન, મન્મસમ્યક્તા
સુરગતિ નિયમતો લભત । તથા ચોક્તમ્—

“અંતોમુદ્ગમિર્ત, -પિ ફાસિઝં દુઃખ જેહિં સમ્મત્ ।

તેસિં અવદ્દપુગ્ગલ, -પરિચ્છો વેષ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જાયા—અન્તર્મુદ્ગર્માપ્રમપિ સ્પૃષ્ટં મવદ્યૈ સમ્યક્ત્વમ્ ।

તેપામપાર્દપુદ્ગલપરિવર્ત ઇષ સંસારઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપર ચ—“સમ્મદિદ્ધી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસમ્મતો, અહય ન વદ્દાઝઓ પુર્વિ ” ॥ ૧ ॥

હૈ તો વહ નિયમસે ય્યાવા સે ય્યાવા અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાલ તક હી
હસ સંસાર મેં રહતા હૈ ઓર ઉમકે વાવ મોક્ષસ્થાનકો પ્રાપ્ત કર હી
હેતા હૈ । કહા મી હૈ—

“અંતોમુદ્ગમિર્ત, -પિ ફાસિઝં દુઃખ જેહિં સમ્મત્ ।

તેસિં અવદ્દપુગ્ગલ, -પરિચ્છો વેષ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જિન જીવોને ઇક અંતર્મુદ્ગર્માપ્રમ મી સમ્યક્ત્વકમ સ્પર્શ કિયા હૈ
ઉન જીવોં કા સંસાર અર્ધ પુદ્ગલપરાવર્તનકાલ તક હી અવશિષ્ટ રહતા
હૈ । હસ વિષયમેં અધિક કયા કહા જાય ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ નિયમ સે,
યદિ વહ વિગતસમ્યક્ત્વ નહોં હૈ, તથા વદ્દાપુષ્ક નહોં હૈ તો, વૈમાનિક
દેવોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કહા મી હૈ—

“સમ્મદિદ્ધી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસમ્મતો, અહય ન વદ્દાઝઓ પુર્વિ ” ॥ ૧ ॥

વધારેમા વધારે અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાલ સુધી જ આ સંસારમાં રહે છે અને
ત્યાર પછી મોક્ષસ્થાનને પ્રાપ્ત કરી જ લે છે કહ્યું છે—

અંતોમુદ્ગમિર્ત -પિ ફાસિઝં દુઃખ જેહિં સમ્મત્ ।

તેસિં અવદ્દપુગ્ગલ -પરિચ્છો વેષ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

ને હવેએ એક અત્યુદ્ધર્ત માત્રપણ સમ્યક્ત્વને સ્પર્શ કર્યો છે તે હવેએ
સંસાર અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલ સુધી જ અવશિષ્ટ રહે છે, આ વિષયમાં
વધારે શું કહેવું ? સમ્યગ્દષ્ટિ હવે એ તે વિગતસમ્યક્ત્વ નથી તથા વદ્દાપુષ્ક
નથી તો નિષમયી તે વૈમાનિક દેવોમાં જ પ્રધારણ કરે છે કહ્યું છે—

સમ્મદિદ્ધી જીવો ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસમ્મતો અહય ન વદ્દાઝઓ પુર્વિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—સમ્યગ્દૃષ્ટિર્જીવો, ગચ્છતિ નિયમાદ્ વિમાનવાસિષુ ।

યદિ ન વિગતસમ્યક્ત્વઃ, અથવા ન વદ્ધાયુષ્કઃ પૂર્વમ્ ॥ ૧ ॥

અન્યચ્—‘જં સક્કહ તં કીરહ, જં ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

મદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—યત્ શક્નોતિ (કર્તુ) તત્ ક્રિયતે, યચ્ચ ન શક્નોતિ તસ્મિન્ શ્રદ્ધા ।

શ્રદ્ધધાનો જીવો, વ્રજતિ અજરામરં સ્થાનમ્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

નન્વેવં સમ્યક્ત્વેનૈવ મોક્ષપ્રાપ્તિશ્ચેત્તર્હિં કિં પુનસ્તીવ્રતરકષ્ટસાધ્યૈરર્હિંસાદિવ્રત-

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ મર કર નિયમસે વૈમાનિક દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ
યદિ ઉસકા સમ્યક્ત્વ વિગત (નષ્ટ) નહીં હુઆ હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે
પહેલે અન્ય ગતિયોં કો આયુ નહીં બાંધી હૈ તો ॥ ૧ ॥

હસલિયે પ્રત્યેક સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
એસે સુન્દર સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરનેકા પ્રયત્ન કરતા રહે । કહા ભી હૈ—

“જં સક્કહ તં કીરહ, જ ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જો શુભ કર્તવ્ય પ્રાણી સે હો સકતા હો વહ આત્મવીર્ય—બલ પરા-
ક્રમકો નહીં ગોપતે હુએ અવશ્ય કરના ચાહિયે । યદિ ન બન સકે તો
ભી ઉસમેં શ્રદ્ધા રાખની હી ચાહિયે, ક્યોં કિ શુદ્ધ શ્રદ્ધાકે પ્રભાવસે હી
જીવ અજર—અમર પદકા અધિકારી બનતા હૈ ॥ ૧ ॥

શઙ્કા—યદિ એસી હી વાત હૈ તો ફિર તીવ્રતર કષ્ટોંકે દ્વારા સાધ્ય

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ મરીને નિયમથી વૈમાનિક દેવોમા ઉત્પન્ન થાય છે જે એનો
સમ્યક્ત્વ વિગત નથી થયો અને તેને સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તિના પહેલા અન્ય ગતિની
આયુ નહિ બાંધી હોય તો ॥ ૧ ॥

તેથી પ્રત્યેક સરી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા સુન્દર
સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરવા પ્રયત્ન કરતો રહે કહ્યું છે—

“જ સક્કહ તં કીરહ, જ ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જે શુભ કર્તવ્ય પ્રાણીથી બની શકતું હોય તે આત્મવીર્ય—બલ પરાક્રમને
છુપાવ્યા વિના અવશ્ય કરવું જોઈએ જે ન બની શકે તો પણ તેમા શ્રદ્ધા રાખવી
જોઈએ, કારણ કે શુદ્ધ શ્રદ્ધાના પ્રભાવથી જ જીવ અજર—અમર પદનો અધિ-
કારી બને છે ॥ ૧ ॥

શંકા—જે આવી વાત છે તો પછી તીવ્રતર કષ્ટોંદ્વારા સાધ્ય અર્હિંસાદિ

સમવતપઃસમારાધને, તથાદિ-પર્યાસપર્યાસકાદિમેદવર્તા પૃથિવ્યપ્તેજોનાપુનનપ
 તીનાં દ્વીન્દ્રિયાદિષિષિષ્મનાં ચ મિકરણમિયાગૈરુપમર્દનપરિહારપૂર્વકસમ્પૂર્ણરૂપમ
 રિસામતે, તથા સ્વસ્વમેદૈર્ભુવિષમૃપાવાદાદચ્છાદાનમૈધુનપરિહારપરિહારરૂપાદિ
 પ્રવાનિ, શ્લીતોષ્ણાદિકઠિનતરપરિપહસહનપૂર્વકસમ્પૂર્ણરૂપવિષસયમસમારાધનમ્, અનર
 નાદ્યુગ્રતરદ્વાદશવિષતપશ્વરણમનિતશરીરાદિક્ષોપણેન ધન્યમુનિવદ્ ધોરતરકળ્પસહન
 વેતિ । તથા-કિ પુનર્મેદાવિસ્તરદુરધિગમસામાયિકાદિદ્વાદશારૂપમુતજ્ઞાનેતિ ?
 इति च,

અહિંસાદિ મહાવ્રત સંયમ ઓર તપ આદિકે પાલન ત્થં આરાધન કરને
 કો આવશ્યકતા થયા હે ? અર્થાત્-એક સમ્યગ્વર્ધન સે હી જીવકો મુક્તિ
 કા લાભ હો જાવે તો પર્યાસ ઓર અપર્યાસ-મેદવિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-
 પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, ઓર વનસ્પતિકાયકે જીવો
 કો, ત્થં દ્વીન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારકે ઘસ જીવો કો છૂન કારિત અનુ
 મોદના ઓર મન વચન કાયસે વિરાધના કા ત્યાગ કરના, ત્થં ઉનક
 રક્ષણ કરના ઓ અહિંસા-મહાવ્રત હે હસકા પાલન ? તથા અનેક પ્રકાર
 રકે મુપાવાદ ૭, અનેક પ્રકારકે અવત્તાદાન-ચોરી ૩, મૈથુન ૪, ત્થં પરિ
 ગ્રહ ૬ કા ત્યાગરૂપ પાંચ મહાવ્રતો કા આરાધન, ત્થં કઠિનતર પરિપદો
 કે સહનપૂર્વક (૧૭) મતરહ પ્રકારકે સંયમ કા સેવન કરના, તથા ધન્ય
 મુનિકી તરહ અનશનાદિક (૧૨) ચારહ પ્રકારકે તપકે આશરણસે હત્વજ
 શરીરાદિક ઘોષણ સે ધોરતર કળ્પો કા સહન કરના; યે સમી વિમ્કુલ
 હી વ્યર્થ હે ? તથા સામાયિકાદિદ્વાદશારૂપ મુતજ્ઞાન, કિ જો મહા

મહાવ્રત ધર્મ અને તપ વિનેરેનુ પાલન અને આરાધન કરવાની આવશ્યકતા
 થી છે ? અર્થાત્-એક સમ્યગ્વર્ધનથી જ હવે મુક્તિને લાભ થઈ શકે તો
 પર્યાસ અને અપર્યાસ બેઠ-વિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય,
 વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય-ના હવેની, અને એકેન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારના
 ગ્રસ હવેની છૂન કારિત અનુભવના અને મનવચન કાયથી વિરાધનાને ત્યાગ કરને,
 અને તેનુ રક્ષણ કરુ જે અર્દિસામનામત છે તેનુ પાલન તથા અનેક પ્રકારના
 મુપાવાદ અનેક પ્રકારના અવત્તાદાન-ચોરી ૩ મૈથુન ૪ અને પરિગ્રહ ૫ ના ત્યાગરૂપ
 પાંચ મહાવ્રતાનુ આરાધન અને કઠિનતર પરિપદોનુ સહનપૂર્વક મતર પ્રકારે સંયમનુ
 સેવન કરનું, તથા ધન્યમુનિની પદે અનશનાદિક ચાર પ્રકારના તપના આશરણથી
 ૭ પત્ર શરીરાદિક ઘોષણથી ઘોષણ કરોનું સહન કરનું, એ બધા ગિતિય તથા

જ્ઞાનચારિત્રસમુત્પાદનદ્વારા સમ્યક્ત્વસ્ય મોક્ષં પ્રતિ કારણત્વાત્, તથાદિ-ન કેવલં સમ્યક્ત્વમાત્રેણ સિદ્ધિપદં લઙ્ઘું શક્યતે, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકાર્યસ્ય તદભિ-વ્યક્તકર્ય ચારિત્રસ્યૈવ મોક્ષં પ્રતિ સાધાત્કારણતયા તેનૈવ તત્પ્રાપ્તિર્ભવિતુમર્હતિ, સમ્યગ્જ્ઞાનમપિ ચારિત્રોત્પાદનદ્વારેણૈવ મોક્ષજનકમ્ । યતશ્ચારિત્રપરિણામેનૈવ જ્ઞાન મપિ મોક્ષાય પ્રમવતિ, ન કેવલં સ્વસત્તામાત્રેણ । અતઃ એવ મગવતાઽનૈવ પ્રથમાધ્યયને વિસ્તારસમ્પન્ન ંવ દુરધિગમ હૈ, ડસકા શ્રવણ, મનન આદિ કરના મી નિસ્સાર હી હૈ ? ।

સમાધાન—જઙ્ઘાકારકી યહ જઙ્ઘા ટીક નહીં હૈ, ક્યોં કિ સ્વતન્ત્ર સમ્યગ્દર્શન મોક્ષકા કારણ નહીં માના ગયા હૈ । જવ તક જીવ કો સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ તક ડસકે જ્ઞાન ઔર ચારિત્ર મિથ્યા-રૂપ મેં રહતે હૈં । જ્ઞાન ઔર ચારિત્રમેં સમ્પક્પના ડસી સમ્યક્ત્વ કે દ્વારા આના હૈ, અતઃ સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિ દ્વારા હી સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા હેતુ હોતા હૈ । ડસી અભિપ્રાયકો લે કર સમ્યક્ત્વ, મોક્ષ કા કારણ કહા ગયા હૈ । જવ તક સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન ઔર પૂર્ણ ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા તવ તક વહ મોક્ષકા કારણ નહીં હોતા । મુક્તિ સમ્યક્ચારિત્ર સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ડસ કારણ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હી મુક્તિકા સાધાત્ કારણ હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વ કા કાર્ય ઔર ડસકા અભિવ્યંજક-પ્રકાશક હોતા હૈ ।

વ્યર્થ છે ? તથા સામાયિકાદિઠાદશાગરૂપ શ્રુતજ્ઞાન, કે જે મહાવિસ્તારસ પન્ન અને દુરધિગમ છે, તેનુ શ્રવણુ મનન આદિ કરવું પણુ નિસ્સાર જ છે ?

સમાધાન—શ કાકારની શ કા ઠીક નથી, કારણુ કે સમ્યગ્દર્શન મોક્ષનું સ્વ-તન્ત્ર કારણુ માનવામા આવ્યુ નથી જ્યા સુધી જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ નથી થતી ત્યા સુધી તેનુ જ્ઞાન અને ચારિત્ર મિથ્યારૂપમા રહે છે જ્ઞાન અને ચારિ-ત્રમા સમ્યક્પણુ આ સમ્યક્ત્વદ્વારા આવે છે, એથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્-ચારિત્રની ઉત્પત્તિ દ્વારા જ સમ્યક્ત્વ મોક્ષનો હેતુ થાય છે આ અભિપ્રાયને લઈને જ સમ્યક્ત્વને મોક્ષનુ કારણુ કહેવામા આવ્યુ છે જ્યા સુધી સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન અને પૂર્ણ ચારિત્રને ઉત્પન્ન નથી કરતુ ત્યા સુધી તે મોક્ષનુ કારણુ નથી થતુ. મુક્તિ સમ્યક્-ચારિત્રથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, આ કારણુથી સમ્યક્ ચારિત્ર જ મુક્તિનુ સાધાત્ કારણુ છે આ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વનુ કાર્ય અને તેનુ અભિવ્યંજક (પ્રગટ કરવાવાળુ) થાય છે.

‘से ह्य मुष्णी परिणायकम्मा’ इति पुन पुनर्दर्शना सम्यक्चारित्र्यमव मासप्राप्ति-
कारणमिति प्रतिपादितम् । उक्ताराध्ययनेऽपि—

“नार्दसगिस्स नाणे, नाणेण विणा न हुंसि चरणगुणा ।

अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं” ॥१॥ (अ० २८)

सम्यग्ज्ञान भी सम्यक्चारित्र्य को उत्पन्न करता हुआ मोक्षका कारण
माना गया है । ज्ञानकी सत्ता भले ही आत्मा में हो परन्तु जब तक वह
आत्मामें चारित्र्यपरिणाम को उत्पन्न नहीं कर देता, तब तक मोक्ष का
जनक नहीं हो सकता । इसी अभिप्राय को लेकर भगवान् ने इसी प्रथम
अध्ययनमें “से ह्य मुष्णी परिणायकम्मा” अर्थात्—जो छ काम के
भारम को क्षपरिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से त्यागता है वही
मुनि चारित्र्यवान् गिना जाता है । इस कथन द्वारा भी सम्यक्चारित्र्य को
ही मोक्षप्राप्तिका कारण प्रकट किया है । उक्ताराध्ययनके २८वें अध्य-
यनमें भी इसकी पुष्टि की गई है । जैसे—

“नार्दमगिस्स नाणे, नाणेण विणा न हुंसि चरणगुणा ।

अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं” ॥१॥

अर्थात्—सम्यग्दर्शनरहित आत्मामें सम्यग्ज्ञान नहीं होता । स-
म्यग्ज्ञान से रहित आत्मा को चारित्र्यगुणकी प्राप्ति नहीं होती । चारित्र्य
गुण की प्राप्ति किये बिना मोक्ष नहीं होता, एवं अमुक्तका निर्वाण नहीं
होता ॥ १ ॥ उक्त० अ० २८ ॥

सम्यग्ज्ञान पक्ष सम्बद्ध-चारित्र्यने उत्पन्न करता मोक्षतु कारण मानवाभा
आवे छ ज्ञानकी सत्ता भले ही आत्माभा छ परन्तु अन्य सुधी ते आत्माभा
चारित्र्यपरिणामने उत्पन्न नहीं करतु त्या सुधी मोक्षतु उत्पादक नहीं बतु, आ
अभिप्रायने छ छ ने ज्ञानवाने आ प्रथम अध्ययनभा से ह्य मुष्णी परिणायकम्मा
अर्थात्—जो छ कामका भारमने क्षपरिज्ञाभी जानीने प्रत्याख्यानपरिज्ञाभी त्याजे
छ ते व मुनि चारित्र्यवान् मानवाभा आवे छ आ कथन द्वारा पक्ष सम्बद्ध
चारित्र्यने व मोक्षप्राप्तिनु कारण प्रकट करु छ उक्ताराध्ययन अध्ययन २८भा
पक्ष ज्येती पुष्टि करी छ ज्ये—

“नार्दसगिस्स नाण माणेण विणा न हुंसि चरणगुणा ।

अगुणिस्स नत्थि मोक्खो नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं” ॥१॥ उक्त० अ० २८ ॥

अर्थात्—सम्यग्दर्शनरहित आत्माभा सम्बद्धान नहीं बतु सम्बद्धानभी
रहित आत्माने चारित्र्य गुणकी प्राप्ति बती नहीं, चारित्र्यगुणकी प्राप्ति कर्मा बिना
मोक्ष बतु नहीं, अन अमुक्ततु (कर्मभी सुख नहि तेत) निर्वाण बतु नहीं १

सूत्रकृताङ्गे च—“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥ ” (अ० ११)

ज्ञानं हि क्रियापरिणामाऽनापन्नं सत् कमप्यर्थं साधयितुं न शक्नोति । यथा शास्त्राभ्यासनकुशलोऽपि तदर्थविज्ञाननिपुणोऽपि तदुक्तधर्मानाचरणेन तदभ्यासनादिकं सर्वं निष्फलीकुर्वन्नहि विद्वत्पदं लभते । यथा वा—औषधस्वरूपगुणप्रज्ञावतामपि वैद्यानां तत्सविधिसेवनक्रियामन्तरेण तत्प्रज्ञा नैरुज्यं न जनयति, यद्यौषधज्ञानवतामियम-वस्था, तर्हि का वार्त्ता केवलं तन्नामरटनशीलानां जनानाम् । तथा चोक्तम्—

सूत्रकृताङ्गमें भी यही लिखा है—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ (सू० अ० ११)

ज्ञान जब तक क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं होता तब तक वह किसी भी इष्ट अर्थ की पुष्टि नहीं कर सकता । जैसे—शास्त्रके अभ्यास करनेमें कुशलमति व्यक्ति उसके अर्थका विशिष्ट ज्ञाता होकर भी जब तक शास्त्रविहित मार्ग को जीवनमें क्रियात्मकरूप नहीं देता तब तक वह उसके अभ्यास या ज्ञान से अपने किसी भी इच्छित कार्य की सिद्धि नहीं कर सकता है, और न वह यथार्थ विद्वत्ता के पदसे ही विभूषित हो सकता है । अतः उसको क्रियात्मक रूप देने के बिना जैसे उसका वह अभ्यास एवं ज्ञान निष्फल है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन भी ज्ञान-क्रियाके अभाव में मोक्षका साधक नहीं होता है । वैद्यका औषधि-

सूत्रकृताङ्गमा पणु ओ न लण्यु छे—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ सूत्र० अ० ११ ।

ज्ञान न्यां सुधी क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं थतु त्या सुधी ते डोछ पणु इष्ट अर्थनी पुष्टि नहीं करी शक्तु जेम शास्त्रने अभ्यास करवाभा कुशलमति मनुष्य ओना अर्थने विशिष्ट ज्ञाता होवा छता पणु न्या सुधी शास्त्रविहित मार्गने जीवनमा क्रियात्मकरूपथी नहीं उतारतो त्यां सुधी ते तेना अभ्यासना ज्ञानथी पोताना डोछ पणु इच्छित कार्यनी सिद्धि प्राप्त करी शक्तो नहीं, अने यथार्थ विद्वत्ताना पदथी पणु ते विभूषित थछ शक्तो नहीं ओथी तेने क्रिया-त्मक रूप आप्या बिना जेम तेना आ अभ्यास तेमज् ज्ञान निष्फल छे ते प्रकारे सम्यग्दर्शन पणु ज्ञान-क्रियाना अभावमा मोक्षनु साधक थतु नहीं वैद्यने औषधविषयक अभ्यास अने परिपक्व ज्ञान औषधिसेवनना विधिनी

“શાસ્ત્રાભ્યાધીત્યાપિ મયન્તિ મૂર્ત્વા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્પરોગમ્” ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસમ્પ્રાપ્તે શ્વસસેવેગાદયો ગુણા પ્રસમમુદયન્તે, તદાતીં કથમપિ તદુ-
દયં પ્રતિરોદ્ધુ ન કથન સમર્થો મવતિ । ઉક્તઃ—

“અસમસુત્વનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયા, મયસુત્વધિમુત્વસ્વાધીપને સઙ્ગિવેક ।
નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુત્વતરુષીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલામઃ” ॥ ૧ ॥

ચિપયક્ત અભ્યાસ, ઇષ પરિપક્વ જ્ઞાન કયા કમી ઔપધિસેધનકે વિધિ
કી ધનમિશ્રતા મેં નીરોગતા કા કારણ હો સક્તા હૈ ? નહીં હો સક્તા ।
યદિ હો સક્તા તો ફિર ઉમકા નામ રત્નેવાલે રોગી પુરુષોં કી બાત હી
કયા કહની ? ઉન્હેં મી ઉસસે કાયદા હો જામા ધાદિયે । કહા મી હૈ—

“શાસ્ત્રાભ્યાધીત્યાપિ મયન્તિ મૂર્ત્વા, —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્પરોગમ્” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રોંકો પઢકર મી મનુષ્ય મૂર્ત્વ રહ જાતે હૈ । જો ક્રિયાવાન્ હૈ
થહી વિદ્વાન્ હૈ । થીમાર વ્યક્તિકો સુચિન્તિત મી ઔપધિ નામમાત્ર
છેને સે આરોગ્યદાયક નહીં હોતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વકે સદ્ભાવમેં શ્વસસેવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવદય
હોતી હૈ, ધનકો રોકને કે લિયે કોઈ મી સમર્થ નહીં હો સક્તા, કયોં
કિં યદ સર્વગુણસમ્પન્ન હૈ । કહા મી હૈ—

“અસમસુત્વનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયા,
મયસુત્વધિમુત્વસ્વોધીપને સઙ્ગિવેક ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં,
શિવસુત્વતરુષીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલામઃ” ॥ ૧ ॥

અનલિનત્વમા નીશગતાનું કારણ કોઈ બળત બની શકે છે ? નથી બની શકે
ને બની શકે તો પછી તેનું નામ લેવાવાળા શાસ્ત્રી પુરુષોની બાત જુ કહેવી ?
તેને પણ તેનાથી કાયદો થવા જોઈએ, કમું પણ છે —

“શાસ્ત્રાભ્યાધીત્યાપિ મયન્તિ મૂર્ત્વા —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।

સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં ન નામમાત્રેણ કરોત્પરોગમ્” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રને અભ્યાસ કરીને પણ મનુષ્ય મૂળ રહી બાધ છે ને ક્રિયાવાન્
છે તે વિદ્વાન્ છે થીમાર મનુષ્યને સુચિન્તિત પણ જોઈએ નામમાત્ર તેનાથી
આરોગ્યદાયક નથી થતી ॥ ૧ ॥

અભ્યાસના સદ્ભાવમા શ્વસસેવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવદય થાય છે એને
રોકવાને મારે કોઈ સમર્થ હવું નથી કારણ કે તે સર્વગુણપાત્ર છે કમું પણ છે—

કિંચ—“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥
તદેવં સમ્યક્ત્વમિદં મોક્ષસ્ય વીજમિતિ સિદ્ધમ્ ।

સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિક્રમઃ ।

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટેર્જીવસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તૌ યથાક્રમં ત્રીણિ કરણાનિ ભવન્તિ ।

યહ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખકા નિધાન હૈ, વૈરાગ્યકી ઉત્પત્તિ કા કારણ હૈ, વૈરાગ્યકો પ્રકટ કરને મેં શુદ્ધ વિવેક હૈ, ચાર ગતિકે દુઃસ્વોંકા ઉચ્છેદ કરને મેં કારણ હૈ ઓર મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષકા યહ વીજ હૈ ॥ ૧ ॥

ઓર ભી કહા હૈ—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વ-રત્નસે કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નહીં હૈ, ઇસસે વધકર કોઈ વન્ધુ નહીં હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર હૈ, ઓર ઇસકા લાભ હી પરમલાભ હૈ ॥

ઇસસે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ સમ્યક્ત્વમોક્ષકા મૂલ કારણ હૈ ।

સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિકા ક્રમ—

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જત્ર સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે સંમુખ હોતા હૈ ઇસ સમય ઇસકે યથાક્રમસે ત્રીણ કરણ હોતે હૈ—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ, (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ ।

“ અસમસુખનિધાન ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદ્દીપને સદ્વિવેકઃ ।
નરનરકપશુત્વોચ્છેદદેહતુર્નરાણા, શિવસુખતરુવીજ શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

આ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખનુ નિધાન છે વૈરાગ્યની પ્રાપ્તિનુ કારણ છે વૈરાગ્યને પ્રગટ કરવામા શુદ્ધ વિવેક છે ચાર ગતિના દુખના ઉચ્છેદ કરવામા કારણ છે અને મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષનુ એ વીજ છે ॥ ૧ ॥ વળી પણ કહ્યું છે—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વરત્નથી કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નથી એનાથી વધીને કોઈ બધુ નથી. આ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર છે, અને એનો લાભ જ પરમ લાભ છે ॥ ૧ ॥

એથી એ સિદ્ધ થયુ કે સમ્યક્ત્વ મોક્ષનુ મૂળ કારણ છે

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિનો ક્રમ

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જત્ર સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિને સમ્યુખ થાય છે તે વખતે તેને યથાક્રમથી ત્રણ કરણ થાય છે—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ.

યથામવૃત્તિકરણમ્, અપૂર્વકરણમ્, અનિવૃત્તિકરણં ચેતિ । યથા=અનાદિસંસિદ્ધમકારેણ પ્રવૃત્તિઃ=પ્રવર્તમાને-યથાપ્રવૃત્તિઃ, ક્રિયતે કર્મસંપન્નમનેનતિ કરણ-જીવપરિણામરૂપમ્ । યથામવૃત્તિ ચ તત્ કરણં ચેતિ યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્ ।

एवमुत्तरप्रापि करणशब्देन कर्मधारयो बोध्यः । एव शानादिकालात् कर्मसंपन्नप्रवृत्तोऽध्यवसायविशेषो यथाप्रवृत्तिकरणमिति फलितम् । एतानि ग्रीष्मपि करणानि भव्यानां भवन्ति । अभव्यानां तु प्रथममेव यथाप्रवृत्तिकरणं भवति नेतरद्वयम् ।

અનાદિ પરપરા સે જો પ્રવર્તમાન છે સહ યથાપ્રવૃત્તિ છે, તથા કર્મ ક્ષય જિન્નકે દ્વારા ક્રિયા જાતા છે સહ કરણ છે, યહ કરણ જીવકા પરિણામસ્વરૂપ હી છે । યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જો કરણ છે એસકા નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે । યહ ઇસકા નિરુક્ત-અર્થ છે । ઇસી પ્રકાર આગે બી કરણ શબ્દ કે સાથ કર્મધારય સમામકા સંયંચ કર છેના આહિયે । ઇસ પ્રકાર અનાદિ ફાલસે કર્મક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત જીવકા પરિણામવિશેષ હી યથા પ્રવૃત્તિકરણ છે, યહી ઇન્નકા ફલિતાર્થ છે । યે ત્રીન કરણ ભવ્યો કે હોતે હેં । અભવ્યો કે મર્ક પ્રથમ હી કરણ હોતા હેં, અન્તકે દો નહીં હોતો ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવકે હોના હી રહતા છે । ઇસકે દ્વારા જીવ ઉદયમેં આયે છુન જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોક્તી પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતા રહતા છે । ઇસ લિયે ઇસ પરિણામકે કર્મક્ષય કા કારણ હોને સે જીવ ઇન્નકે ચલ પર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિકા ક્ષય કરતા છુઆ ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી અન્થિકે સમીપ તક પહુંચ જાતા છે । યહ પ્રતિન્ય

અનાદિ પરપરા સે જે પ્રવર્તમાન છે તે યથાપ્રવૃત્તિ છે એન કમક્ષય નેના દ્વારા કરવામા આવે છે તે કરણ છે આ કરણ જીવના પરિણામસ્વરૂપ છે યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જે કરણ છે તેનું નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે તે એના નિરુક્ત-અર્થ છે આ પ્રકારે આગળ પણ કરણ-શબ્દની સાથે કર્મધારયસમાસને સંબંધ કરી લેવો જોઈએ આ પ્રકારે અનાદિકાગથી કમક્ષય કરવામા પ્રવૃત્ત જીવનું પરિણામ વિશેષ જ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે, તે તેનું ફલિતાર્થ છે જે ત્રણ કરણ ભવ્યોને સાથ છે અભવ્યોને ફક્ત પ્રથમ ૧ કરણ સાથ છે જાકીના બે નથી થતા.

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવને થતા જ રહે છે એના દ્વારા જીવ ઉદયમા આવેલા જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોની પ્રકૃતિયોને ક્ષય કરતો રહે છે તેથી આ પરિણામ કમક્ષયનું કરણ કોવાધી આ જીવ તેના બહુ ઉપર યથાસંભવ કમસ્થિતિનો ક્ષય કરતા ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી અન્થિકી સમીપ સુધા પહોંચી ભય છે આ પ્રતિ એટલી માત્ર-પ્રવૃત્તતમ છે કે જેનું આ

अध्यवसायस्य सर्वदैव भावादुदयप्राप्तानां ज्ञानावरणीयाद्यष्टकर्मप्रकृतीनां क्षपणेन कर्मक्षयकारणतया यथाप्रवृत्तिकरणेन यथासंभवं कर्मस्थितिं क्षपयतो जीवस्य घनराग-द्वेषपरिणामरूपो ग्रन्थिरवतिष्ठते, यथाप्रवृत्तिकरणस्य मन्दविशुद्धिपरिणामरूपत्वेन ग्रन्थिभेदनसामर्थ्याभावात् ।

ननु तर्हि यथाप्रवृत्तिकरणेन कियती कर्मस्थितिः क्षपिता भवति ? उच्यते— यथा गिरिनद्यां पाषाणखण्डानि तद्वेगतो घर्षणादिना वर्तुलाकाराणि जायन्ते, एवमनादिकालतः पूर्वपूर्वकर्मवगाच्चतुर्गतिकसंसारसागरं प्राप्तस्यानन्तदुःखानि सह-मानस्य जीवस्य परिणामस्वभावतयाऽनाभोगनिर्वर्तितेन यथाप्रवृत्तिकरणाख्येन विशुद्धिपरिणामेन दीर्घतराऽपि कर्मस्थितिस्तथा क्षपिता भवति यथाऽऽयुर्वर्जानां ज्ञानावरणीयादिकर्मणां सर्वेषां स्थितिः पल्योपमासंख्यातभागन्यूनेककोटीकोटी-सागरोपमप्रमाणाऽवशेषा तिष्ठति ।

इतनी गाढ़-प्रचलतम होती है कि जिसका इस परिणामके द्वारा भेदन करना सर्वथा अशक्य कार्य है । जीवको इस ग्रन्थिके देश तक पहुँचाना ही इस परिणाम का काम है । ग्रन्थिका भेदन इसके द्वारा इस लिये नहीं होता है कि यह परिणाम मन्दविशुद्धिवाला है ।

शङ्का—आपका कथन ठीक है; परन्तु अभी तक यह मालूम नहीं हो रहा है कि इस परिणामके द्वारा कितनी कर्मस्थितिका क्षय होता है ।

उत्तर—जैसे पर्वतीय नदी में पाषाणखण्ड नदीके प्रचल प्रवाह के वेगसे लुङ्कते हुए और इधर उधर से टकराते हुए स्वाभाविक रीतिसे गोलमोल हो जाता है, उसी प्रकार अनादिकालसे कर्मकी अनवच्छिन्न संतति (अटूट परंपरा) के वशीभूत रह कर चतुर्गतिस्वरूप इस संसार महासागरमें गोते

परिणामद्वारा भेदन करवु सर्वथा अशक्य कार्य है एवं आ ग्रन्थिना देश सुधी पड़ोयाउवु न आ परिणामनु काम है ग्रन्थिनु भेदन येना द्वारा ते माटे नथी थतु के आ परिणाम मन्दविशुद्धिवाणु है

शङ्का—आपनु कथन ठीक है, परन्तु उन्नु सुधी ओ मालूम नथी के आ परिणामद्वारा डेटली कर्मस्थितिने क्षय थाय है

उत्तर—जेम पर्वतीय नदीमा पाषाणखण्ड येना प्रचल प्रवाहना वेगधी आम-तेम अथउधने घसातो घसातो स्वाभाविक रीतिथी गोणमोल थध नथ है, ते न प्रकारे अनादि कालथी कर्मनी अनवच्छिन्नसंतति-अतुटपर पसाने वशीभूत रहने अतुर्गतिस्वरूप आ संसारमहासागरमा गोथा जाता अने अनत दुःखानी परपसाने सदन करता ओ एवं स्वाभाविक रीतिथी-विना डोध

મ્વાતે, તથા અનંત ધુ મ્મોંકી પરપરાકો સહતે હુપ્પે હસ ઝીવકે સ્વામાધિક રીતિ સે-ચિના કિમ્મી પ્રયત્ન કે-વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામકા પરિણામ પ્રગટ હોતા હૈ, જિસકે ધારા યદ્ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિ યો મી હતની સ્વપા વેતા હૈ કિ જિસસે આયુકર્મકો છોડ કર શેપ શા-નામરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંકી સ્થિતિ પત્થ્ય કે અસંખ્યાતવે માત્ર કમ એક કોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

વિશેષાર્થ—ઝેસે પર્વતપ્રદેશમેં વહેનેવાળી નદીકા પત્થર ડસકી પ્રવલ ધારાસે આહત હો હ્મર-ઉધર ટકરા કર સ્વામાધિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાયા કરતા હૈ, ડસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકે ઘડીમૂત હોકર સંસારરૂપી સમુદ્રમેં પડા હુઆ યદ્ જીવરૂપી પાપાણમ્બજ ઝી વતુર્ગતિયોં કે દુઃખરૂપી પ્રયત્નતમ પ્રવાહોં સે રાત્ર-દિન ટકરા કર ગોલમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન હો જાતા હૈ । જિમ પ્રકાર નદીકા પાપાણ વિના કિસી પ્રયત્ન એવં અનામોગરૂપસે (સ્વામાધિકરૂપસે) ગોલ હો જાયા કરતા હૈ ડસી પ્રકાર યદ્ કરણ ઝી વિના કિમ્મી પ્રયત્ન સે-સ્વામાધિકરૂપ સે હી જીવકો પ્રાપ્ત હો જાયા કરતા હૈ । યદ્ જીવ કા વિશુદ્ધ પરિણામ હૈ । હસકે પ્રમાણસે ડસકે આયુકર્મકો છોડ કર અવશિષ્ટ (શેપ) માત્ર કર્મોંકી ઉલ્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટ કર પત્થ્યકે અસં

પ્રયત્ને વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામનું પરિણામ પ્રાપ્ત થાય છે એના બાદ આ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિને પણ એવી ખબરી દે છે કે જેથી આયુકર્મને છોડીને શેપ પ્રાપ્તવર્ણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પત્થ્યના અસંખ્યાતમા ભાગ હીન એકકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહી જાય છે

વિશેષાર્થ—જેમ પર્વતપ્રદેશમાં વહેવાવાળી નદીને પત્થર જેની પ્રવલ ધારાથી બહોં-તહોં અવધારી કુટાઈને સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે અનાદિકાલથી કર્મના વરીમૂત થઈને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં પડી રહેલા આ જીવરૂપી પાપાણખંડ પણ વતુર્ગતિના દુઃખરૂપ પ્રવલ પ્રવાહથી સતતિન અવધારીને ગોળમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન થઈ જાય છે. જેમ નદીના પાપાણ, કેઈ પ્રયત્ન વિના અને અનામોગરૂપથી (સ્વામાધિક રૂપથી) ગોળ થવા કારે છે તે પ્રકારે આ કરણ પણ કેઈ પ્રયત્ન વિના સ્વામાધિક રૂપમાં જ જીવને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે આ જીવને વિશુદ્ધ પરિણામ છે આના પ્રમાણથી જો જીવના આયુકર્મને છોડીને અવશિષ્ટ (શેપ) માત્ર કર્મોંની

અત્રાન્તરે ચ જીવસ્ય કર્મજનિતો ઘનરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્કશનિવિડચિરપ્રરૂ-
ઘગૂઢવક્રગ્રન્થિવદ્ દુર્ભેદઃ કર્મસ્થિતિવિશેષો ગ્રન્થિર્ભવતિ ।

અમવ્યોડપિ જીવઃ સ્વલુ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન પ્રાગુક્તકર્મણાં દીર્ઘતરસ્થિતિં
હાસયન્નેકકોટીકોટીસાગરોપમપ્રમાણાં કર્તુમર્હતિ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદનાય ન સમર્થો
સ્થિતિર્ભવે ભાગ કમ એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ (અન્તઃકોટીકોટી
સાગરપ્રમાણ) રહ જાતી હૈ ।

इसके बाद जीवके कर्मजनित-कर्मों से उत्पन्न की गई-और सघन
कठिनतर रागद्वेष परिणामवाली कर्मों की विशेषस्थितिरूप एक ग्रन्थि
होती है, जो अत्यन्त कठोर, सघन और पुरानी गूढ गांठके समान
दुर्भेद्य होती है । जैसे-बहुत पुरानी कठोर गांठका-कि जो चिकनाई
आदिके संबंधसे अत्यन्त चिपट गई है और जिसका फंदा भी नजर
नहीं आ रहा है, एवं जो टेढ़ी मेढ़ी लगी हुई है; उसका खोलना दुःशक्य
है, उसी प्रकार की यह कर्मस्थिति भी एक दुर्भेद्य गांठ है ।

અમવ્ય જીવ મી ઇસી યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કો સ્વપા કર એક કોટીકોટી સાગર પ્રમાણ
કર દેતા હૈ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદન નહીં કર સકતા । ઇસકે પશ્ચાત્ કોઈ હી
મહાત્મા મવ્ય જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણ સે મી અધિક વિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ
કરણ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઇસકે દ્વારા વહ ઘન રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ધરીને પદ્યના અસખ્યાતમા ભાગ હીન એક કોટીકોટીસાગર
પ્રમાણ (અન્ત કોટીકોટીસાગરપ્રમાણ) રહી બન્ય છે

ત્યાર બાદ જીવની કર્મજનિત-કર્મોથી ઉત્પન્ન થયેલી-અને સઘન કઠિનતર
રાગદ્વેષપરિણામવાળી કર્મોની વિશેષ સ્થિતિરૂપ એક ગ્રન્થિ હોય છે, જે
અત્યન્ત કઠોર, સઘન અને જીની ગૂઢ-ગાંઠની સમાન દુર્ભેદ્ય હોય છે જેમ
ઘણી જીની કઠણ ગાંઠનું, કે જે ચિકણાપણા વિગેરેના સખધથી અત્યન્ત ચોટી
ગયેલ છે, અને જેનો સાધો પણ નજર નથી આવતો, અને જે વાકીચુકી લાગેલી
છે, એનું તોડવું જેમ અશક્ય હોય છે તે જ પ્રકારની આ કર્મસ્થિતિ પણ
એક દુર્ભેદ્ય ગાંઠ છે

અલબ્ધ જીવ પણ આ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને અપાવીને એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ કરી દે
છે, પરંતુ ગ્રન્થિભેદન કરી શકતા નથી એના પશ્ચાત્ કોઈ પણ મહાત્મા લબ્ધ
જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણથી પણ અધિકવિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ-કરણને પ્રાપ્ત
કરે છે એના દ્વારા તે ઘન-રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ ગ્રન્થિને સર્વ પ્રકારથી છેદી

મનતિ । એસદનન્તર પશ્ચિદધ મહાત્મા મમ્યમીમસ્તુ યયામવૃત્તિકરણામ્યપરિણામ-
વ્યપ્તિશ્ચિદ્વિશુદ્ધિપરિણામ પ્રાપ્તમર્હતિ, મ પશ્ચાત્પૂર્વકરણામ્ય પરિણામઃ । તે પ્રાપ્તસૌ
નિશ્ચિતકુટારપારયેવ પામવિશુદ્ધયા યનરાગદ્વેષાતિદ્વિમસ્કારસ્ય પ્રનિય સર્વયા
ચિનતિ મિનષિ ચ ।

મત્ પૂર્વ ન જાતે તદપૂર્વમ્, અપૂર્વ ચ તત્ કરણં ચત્પૂર્વકરણમ્) અર્થ પરિ
ણામ' સકુદેવ મવતિ, ન તુ પુન પુનરિતિ । યયામવૃત્તિકરણં તમમ્યાનામપ્યનન્તર
પ્રાદુર્ભવતિ । તસ્માદ્મમ્યા અપિ યયામવૃત્તિકરણેન કર્મ ક્ષપયિત્વા પ્રનિય વાન્દન
ન્તઃ સમાગચ્છન્તિ ।

અપૂર્વકરણપરિણામેન ગ્રંથે સર્વયા મદને કૃત મતિ તદ્વ્યસપાડ્યપશ્ચિદ્વિશુદ્ધિ
પરિણામો મવતિ, સ સ્વનિશ્ચયિકરણપરિણામઃ । તદ્વ્યવહિતાસરજાલે જીવ' સમ્ય-
ક્ત્વ નિયમત' પ્રાપ્નાતિ, મ પાસૌ સમ્યક્ત્વમનવાપ્ય નિર્વર્તે, તસ્માદનિશ્ચિ-
દ્વનિયકો સર્વ પ્રકાર સે છિદ્ર-મિદ્ર કર જાલતા છે । યદ્ પરિણામ જીવ
કો પહિલે કમી મી પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હસી લિયે હસકી અપૂર્વકરણ સજ્ઞા
હૈ । જો પહિલે ન હુઆ હો વહ અપૂર્વ હૈ । અપૂર્વ જો કરણ વહ અપૂર્વકરણ
હૈ । વહ પરિણામ જીવકે લિયે એકવાર હી હોતા હૈ, વારવાર નહીં । યયા-
પ્રવૃત્તિકરણ તો અમમ્યોં કે અનન્તપાર મી હો જાતા હૈ, હસ લિયે વ
હસ કે દ્વારા કર્મોંકા ક્ષેપણ કર પ્રનિયેશ તક અનન્તવાર આ જાતે હૈ ।

અપૂર્વકરણ-પરિણામ સે પ્રનિયકા સર્વયા મેવ હોન પર હસકે
અનન્તર હમ સે મી અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસ
કા નામ અનિવૃત્તિકરણ હૈ । હસકે દ્વારા વ્યવધાનરહિત હસીકે ઉત્તર
કાલમેં (હસી સમય) જીવ નિયમસે સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કર હેતા હૈ ।

નાખે હ અને સેરી નાખે છે આ પરિણામ છપતે પહેલાં કોઈ વખત પણ
પ્રાપ્ત નથી થયું તેથી એની અપૂર્વકરણ સજ્ઞા છે એ પહેલાં નથી થયું તે
અપૂર્વ છે અપૂર્વ એ કરણ તો અપૂર્વ કરણ હ આ પરિણામ છપતે માટે જોકે
વાર જ થાય છે વારવાર નહીં, યયાપ્રવૃત્તિકરણ તો અમ એને અનન્ત વાર પણ
થાય છે આથી ત એના દ્વારા કર્મોંનું ક્ષેપણ કરીને પ્રનિયેશ સુધી અનન્ત
વાર આવે છે

અપૂર્વકરણ-પરિણામથી અગિયના સર્વયા જોઈ થવાથી એના પછી
આનાથી પણ અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે એનું નામ અનિવૃત્તિ
કરણ છે એના દ્વારા વ્યવધાનરહિત એના ઉત્તરશબ્દ (એ જ વખતે) છપ
નિયમથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરી છે હ આ પરિણામ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કર્યા

करणमित्युच्यते । तस्य स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, तदानीं जीवस्य वीर्यसमुल्लासोऽपूर्वकरणापेक्षया परिवर्धते । तस्यान्तर्मुहूर्तप्रमाणायां स्थितौ संख्येयेषु भागेषु गतेषु सत्स्वेकस्मिन् संख्येयतमे भागे शेषे तिष्ठति सति मिथ्यात्वप्रदेशवेद्यदलिकाभावकरणरूपम् अन्तरकरणं प्रवर्तते । अन्तरकरणाख्यस्य जीवपरिणामस्यापि स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, परन्तुन्तर्मुहूर्तस्यासंख्यातभेदसद्भावेनानिवृत्तिकरणकालस्वरूपान्तर्मुहूर्तापेक्षया तदन्तिमभागवर्ती न्यूनोऽयमन्तरकरणकालोऽन्तर्मुहूर्तमिति ।

अनिवृत्तिकरणस्यान्तिमे भागेऽन्तरकरणस्य कार्यं प्रारभ्यते, तद्यथा-अपूर्वकरणानिवृत्तिकरणलक्षणविशुद्धिपरिणामजनितसामर्थ्यसमन्वितो मव्यस्तदव्यवहितोत्त-

यह परिणाम सम्यक्त्व प्राप्त कराये बिना छूटता ही नहीं है, इसी लिये इसका नाम “ अनिवृत्तिकरण ” पडा है । इसकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त की है, जीवके अपूर्वकरणकी अपेक्षा इस समय अधिक मात्रामें वीर्योल्लास बढ़ता है । अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थिति में से संख्यात भाग घटते २ जब उसका अन्तिम संख्यातवां भाग अवशिष्ट रह जाता है उस समय अन्तरकरण होता है । यह मिथ्यात्व के प्रदेशोंके वेदन करने योग्य दलियों के अभाव (क्षय) का कारण होता है । इसकी भी स्थिति अन्तर्मुहूर्त की है । यह अन्तर्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त है । अनिवृत्तिकरण के कालका अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है । अन्तर्मुहूर्तके भी असंख्यात भेद हैं ।

अनिवृत्तिकरण के अन्तिम भागमें अन्तःकरणका कार्य प्रारम्भ होता है । मिथ्यात्वके प्रदेशोंके वेदन करने योग्य दलियों का अभाव करना ही अन्तरकरणका कार्य है । वह कार्य इसके द्वारा जीव जिस प्रकार से करता

वगर छुटता न थी, तेथी तेनु नाम “ अनिवृत्तिकरण ” पड्यु छे, ऐनी स्थिति अतर्मुहूर्तनी छे एवने अपूर्वकरणनी अपेक्षा आ समये अधिक मात्रामा वीर्योल्लास वधे छे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिमाथी सज्यात लाग घटता घटता न्यारे तेनो अन्तिम सज्यातमा लाग अवशिष्ट रही जाय छे ते वधते अन्तरकरण थाय छे आ मिथ्यात्वना प्रदेशोना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव (क्षय) नु कारण थाय छे ऐनी पण स्थिति अन्तर्मुहूर्तनी छे आ अन्तर्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त छे अनिवृत्तिकरणना कारण अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त छे अतर्मुहूर्तना पण असज्यात भेद छे

अनिवृत्तिकरणना अन्तिम लागमा अन्तरकरणनु कार्य प्रारंभ थाय छे मिथ्यात्वना प्रदेशोना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव करवा, ऐ न अन्तर-

અન્તર્મુહર્તકાળે ઉદયમાણ મિધ્યાત્વદમ્બિક દ્વિધા ધિધાય તૈર્નૈક દન્વિસ્મનિવૃત્તિ
 પરણાન્તિમસમયપર્યન્તે ઉત્થમાનમિધ્યાત્વદમ્બિકાનુ નિશિપતિ, દ્વિતીય દમ્બિક
 ત્વનિવૃત્તિપરણાવ્યવહિતોત્તરકાલિકાન્તર્મુહર્તસમાપ્ત્યનન્તરકાળે ઉદયમાણૈર્મિધ્યા
 ત્વદન્વિૈ સદ્ સંયાજયતિ । તથા ચાનિવૃત્તિપરણામાવ્યવહિતાત્તરકાળે પ્રથમો
 ઽન્તર્મુહર્તકાળ એકસ્તાદશા સંમાયત યત્ન મિધ્યાન્વકર્મણા કિંચિદપિ દમ્બિક નૈવ
 તિષ્ઠતિ । તથાચાનેનાન્તરકરણેન મપ્તસ્તસ્મિન્નન્તર્મુહર્ત ઉદયયોગ્યમિધ્યાત્વદમ્બિક
 હૈ વદ્ કહતે ૬—જિસકે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ, હન દો
 વિશુદ્ધ પરિણામોં સે ધિધિષ્ઠ શક્તિકા વિકાસ જુઆ હૈ તેસા મન્ય જીવ
 ન્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણ કે ઉત્તર અન્તર્મુહર્ત-સમય મેં આગામી
 કાલમેં ઉદય આન યોગ્ય મિધ્યાત્વ દલિયોં કે દો ટુકડે-ભાગ કરતા હૈ।
 ઉસમેં એક ટુકડે કો અનિવૃત્તિકરણકે અન્તિમસમયપર્યન્ત ઉદયાગત
 મિધ્યાત્વકે દલિયોં મેં પ્રશ્નિત કરતા હૈ, ઓર દુમરે ભાગકો અનિવૃત્તિ
 કરણ કે અવ્યવહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહર્તકો સમાપ્તિકે અનન્તર
 (અન્તરરહિત) કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિધ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ
 સંયુક્ત કરતા હૈ । હસ તરહ અનિવૃત્તિકરણ કાલકે વ્યવધાનરહિત
 ઉત્તર કાલમેં પ્રથમ અન્તર્મુહર્તકાલ એક તેસા કાલ હોતા હૈ કિ જિસમેં
 મિધ્યાત્વ કર્મકા એક મી દલિયા શોધ નહીં રહતા । હસ અન્તરકરણ
 પરિણામકે દ્વારા મન્ય જીવ ઉસ અન્તર્મુહર્તકાલ મેં ઉદય યોગ્ય મિધ્યાત્વ
 કે દલિયોં કે પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગકો ઉસકે પૂર્વકાલવર્ત્તી જો અ

કરણુ કાય છે આ કાય એના દ્વારા છવ ને પ્રકારથી કરે છે તે કહે છે—જેને
 અપૂર્વ કરણ અને અનિવૃત્તિકરણ, આ ને વિશુદ્ધ પરિણામથી વિશિષ્ટ શક્તિને
 વિકાસ થયો છે આવા જાન્ય છવ વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણની પછી અન્તર્મુહર્ત
 નમયમા આગામી કાળના ઉદય આવવા થોડા મિધ્યાત્વના દલિયોના ને ટુકડા—ભાગ
 કરે છે એના એક ટુકડા ને અનિવૃત્તિકરણના અન્તિમ સમયના અન્તમાં ઉદયાગત
 મિધ્યાત્વના દલિયોના પ્રશ્નિત કરે છે અને બીજા ભાગને અનિવૃત્તિકરણના અન્ય
 વહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહર્તની સમાપ્તિના અનન્તર (અન્તરરહિત) કાળમાં ઉદય
 આવવા થોડા મિધ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરે છે આ રીતે અનિવૃત્તિ
 કરણકાળના વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં પ્રથમ અન્તર્મુહર્તકાળ એક એવો કાળ
 થાય છે કે જેમાં મિધ્યાત્વ કરનાર એક પણ દલિયુ શોધ નથી સ્કેલુ આ અન્તર
 કરણ-પરિણામદ્વારા જાન્ય છવ આ અન્તર્મુહર્તકાળમાં ઉદયથોડા મિધ્યાત્વના
 દલિયોના પ્રથમ સ્થિતિક્ષે એક ભાગને એનો પૂર્વકાળવર્ત્તી ને અનિવૃત્તિકરણને

સૈકભાગં પ્રથમસ્થિતિરૂપં તત્પૂર્વકાલવર્ત્યનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમભાગે ઉદયમાનમિથ્યા-
ત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજ્ય સ્વોદયકાલાત્ પ્રાગેવોદયં પ્રાપયતિ, તેન તસ્ય મિથ્યાત્વ-
દલિકસ્ય સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિસ્થાદિ । દ્વિતીયભાગસ્યાપિ દ્વિતીયસ્થિતિનાસ્નરત-
સ્માદન્તર્મુહૂર્તાદવ્યવહિતોત્તરકાલે ઉદેખ્યમાણતયા સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરોધયતિ;
તદેવમનિવૃત્તિકરણાનન્તરોદયયોગ્યદલિકાનાં વ્યવધાનકરણાદન્તરકરણમિત્યુચ્યતે ।

નિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ ભાગ હૈ ઉસમેં ઉદયમાન મિથ્યાત્વ કે દલિયોં
કે સાથ સંયુક્ત કરકે ઉસે અપને નિજ ઉદયકાલસે પહિલે હી ઉદય મેં લે
આતા હૈ, ઇસ સે વહ ભવ્ય જીવ ઉસ મિથ્યાત્વ કે દલિયે કે ઉદય કો
ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેતા હૈ । તથા દૂસરી સ્થિતિરૂપ મિથ્યા-
ત્વકા જો દ્વિતીય ભાગ હૈ, જો ઉસ અન્તર્મુહૂર્ત સે વ્યવધાનરહિત ઉત્તર
કાલમેં ઉદય મેં આને યોગ્ય હૈ; ઉસકે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલ
મેં રોક દેતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અનિવૃત્તિકરણ કે અનન્તર ઉદયયોગ્ય
મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે ઉદય મેં વ્યવધાન કરનેવાલા હોને સે યહ 'અ-
ન્તરકરણ' કહલાતા હૈ । યહ કરણ મિથ્યાત્વકે દલિયોં કો અગલે ઔર
પિછલે ભાગમેં મિલા દેતા હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કા અંતિમ સમય પૂર્ણ
હોને પર અન્તર્મુહૂર્ત તક મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા કિસી મી તરહ સે ઉદય
નહીં હો સકતા । ઉસ સમય જિન મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા ઉદય સંભવ
થા, ઉનમેંસે કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલ સે પહિલે હી ઉદયમેં
આને કી યોગ્યતા આતી હૈ, ઔર કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલસે

અંતિમ ભાગ છે તેમા ઉદયમાન મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરીને તેને
પોતાના નિજ ઉદયકાળથી પહેલા જ ઉદયમા લઈ આવે છે, આ કારણે તે ભવ્ય જીવ
તે મિથ્યાત્વના દલિયાના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમા રોકી દે છે, અને બીજી
સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વનો જે બીજો ભાગ છે જે તે અન્તર્મુહૂર્તથી વ્યવધાનરહિત ઉત્તર
કાળમા ઉદયમા આવવા યોગ્ય છે તેના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમા રોકી દે છે
આ પ્રકારે અનિવૃત્તિકરણના અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદયમા
વ્યવધાન કરવાવાળા હોવાથી આ 'અન્તરકરણ' કહેવાય છે

આ કારણે મિથ્યાત્વના દલિયોને આગળ અને પાછળના ભાગમા બેડી આવે
છે, અને અનિવૃત્તિકરણનો અંતિમ સમય પૂર્ણ થતા તેની પછી અન્તર્મુહૂર્ત સુધી
મિથ્યાત્વના દલિયોનો કોઈ પણ પ્રકારથી ઉદય થતો નથી તે જે મિથ્યાત્વના
દલિયોનો ઉદય સંભવ હતો, તેમાથી કેટલાક દલિયોમા પોતાના ઉદયકાળના
પહેલા જ ઉદયમા આવવાની યોગ્યતા આવે છે, અને કેટલાક દલિયોમા પોતાના

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમય વ્યતીતે સતિ યાવદન્તર્મુહૂર્તં કયમપિ મિધ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં ચપાં મિધ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેપાં-
ચિદ્ દલિકાનાં સત્પૂર્વકાણે, કેપાંચિત્ તત્પશ્ચાત્કાણેડન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપા-
દ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિધ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભાવેન તાવ-
દ્દાલપર્યન્તં જીવા મિધ્યાત્મી વર્તત, પરં તનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સતિ સપદિ
જીવનોપશ્ચમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિધ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકત પ્રદે-
શતય સર્વથાદયામાવાત્, અત એવ જીવસ્ય સ્વામાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટી-
ભવતિ । इदं च सम्यक्त्वमौपशमिकमित्युच्यते । उक्तञ्च—

‘ જા ગંઠી તા પદમ, ગંઠિં સમદૃષ્ટ્વો મવે ધીય ।

અગ્નિયદીકરણે પુણ, સમ્મતપુરસ્કહે જીવે ’ ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદગ્રન્થિસ્તાવત્યયમં (કરણં) ગ્રન્થિ સમતિક્રામતો (મિન્દાન્તસ્ય)
મવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુન સમ્યક્ત્વપુરસ્કહે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ इति ।

પીઢે ઉદયમેં આનેકી યોગ્યતા આતી છે । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ
સમય પર્યન્ત મિધ્યાત્વ કે દલિયોંં કા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ
મિધ્યાત્મી રહતા છે, પરન્તુ જ્યોંંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો
જાતા છે ત્યોંં હી જીવ જ્ઞાનિતિ ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા
છે । ઇસ સમય મિધ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ન તો વિપાકોદય હી રહતા
છે ઔર ન પ્રદેશોદય હી । સર્વપ્રકાર સે ઉસકે ઉદય કા ઇસ સમય
અમાય રહતા છે । ઇસી લિયે જીવ કા નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ
રૂપ પરિણામ વદ્મૂત (પ્રગટ) હો જાતા છે । કહા મી છે—

“ જા ગંઠી તા પદમ, ગંઠિં સમદૃષ્ટ્વો મવે ધીય ।

અગ્નિયદી કરણં પુણ, સમ્મતપુરસ્કહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેશ તક જીવકો પહુંચા વેના યહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમા આવવાની યોગ્યતા આવે છે । અનિવૃત્તિકરણના ચરમ
સમયના અનિવૃત્તિકરણના મિધ્યાત્વના દલિયોંંને ઉદયકોવાથી એટલા સમય સુધી ઇવ
મિધ્યાત્મી રહે છે પરન્તુ જ્યારે અનિવૃત્તિકરણના કાળ અમાપ્ત થઈ જાય છે
ત્યારે જ ઇવ જ્ઞાનિતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે । આ સમયે
મિધ્યાત્વમાહનીય કર્મ નથી વિપાકોદય જ રહેતા અત્ર નથી પ્રદેશોદય જ
અવ પ્રકારથી નેના ઉદયને આ વખત અમાપ રહે છે તેથી ઇવનુ નૈસર્ગિક
ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે કહ્યું છે—

“ જા ગંઠી તા પદમ, ગંઠિં સમદૃષ્ટ્વો મવે ધીય ।

અગ્નિયદીકરણ પુણ સમ્મતપુરસ્કહે જીવે ’ ॥ ૧ ॥

અન્યચ્ચ—

“ કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કોઢ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઢો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયાભાવાન્ મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકર્તુ શ્વનોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-કરણ) કા, ઔર ડસકા ભેદન કરના-અપૂર્વકરણ (દ્વિતીય કરણ) કા, ઔર સમ્યક્ત્વકે સન્મુખ જીવકો કર દેના યહ અનિવૃત્તિકરણ (તૃતીય કરણ) કા કાયે હૈ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—

“ કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેહ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિ સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઔર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) દો પ્રકાર કે હોતે હૈં—
(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઔર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

હનમેં સે—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલા ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામ કે અવલમ્બન સે ગ્રન્થિ કા ભેદન કરકે મી તીવ્ર અધ્યવસાય કે

ગ્રન્થિદેશ સુધી જીવને પહોચ્યાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ કરણ) નુ અને એનુ લેહન કરવુ અપૂર્વકરણ (બીજા કરણ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ (ત્રીજા કરણ) નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી —

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેહ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિલેહ કરીને કેટલાક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) એ પ્રકારના હોય છે (૧) મન્દ વિશુદ્ધિપરિણામવાળા અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળા

આમાથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળા ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના અવલમ્બનથી ગ્રન્થિનુ લેહન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી

નતરકરણ કૃત્વાડનુપદોક્તરીત્યા પ્રથમઔપશમિકસમ્યક્ત્વં મમતે । અયમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમન્તર્મુહૂર્તમન્નુષ્ય સ્વનન્તરમષયં સર્વપ્રતિપાતેન પુનર્મિધ્યાત્વી મયતિ ।

(૧) યસ્તીપ્રવિશુદ્ધિપરિણામી મયતિ, સ્વત્વપૂર્વકરણમારુદો મિધ્યાત્વં ત્રિપુઝીકૃત્ય સ્વનન્તરમનિવૃત્તિકરણે પ્રવિષ્ટ સમ્યક્ત્વપુઝોદયાત્ પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ, પરન્તુ કૃતત્રિપુઝોડયં પ્રથમતયૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ન લભતે ।

ઔપશમિકસમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્—પ્રત્યિમેદજન્યમ્, ઉપશમશ્રેણિમાયિ વેતિ । તત્ર પ્રથમં પ્રત્યિમેદજન્ય મન્દવિશુદ્ધિપરિણામિનો જીવસ્ય મયતિ, દ્વિતીયં તુપશમ-અમાવ હોનેસે મિધ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરનેકી શક્તિ સે શૂન્ય રહતા હૈ, હસલિયે યહ અનિવૃત્તિકરણ કો પ્રાપ્ત હો કર અન્તરકરણ કરકે ઉપર્યુક્ત રીતિસે સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકી અન્તર્મુહૂર્તપરિમિત સ્થિતિકા અનુભવ કર પશ્ચાત્ ઉસકે પૂર્ણ હોતે હી અવશ્ય સર્વપ્રતિપાત સે બહુ પુન મિધ્યાત્વી હો જાતા હૈ ।

(૨) જો તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોતા હૈ યહ અપૂર્વકરણ મેં રહ કર મિધ્યાત્વ કે ત્રીન પુંજ કરકે પશ્ચાત્ અનિવૃત્તિકરણ મેં પ્રવિષ્ટ હોકર સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકા છામ કરતા હૈ, ઉપશમ સમ્યક્ત્વકા નહીં ।

ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે કો મેદ હૈ । (૧) પ્રત્યિમેદજન્ય ઔર દુસરા (૨) ઉપશમશ્રેણિમાયિ । इनमें प्रथिमेदजन्य उपशमसम्यक्त्व, मन्द विशुद्धिपरिणामवाले जीव के होता है । दूसरा उपशमश्रेणिप्राप्त जीव

મિધ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય રહે છે તેથી આ અનિવૃત્તિકરણને પ્રાપ્ત કરીને અને અન્તરકરણ કરીને ઉપર જતાવેલી રીતિથી સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે । અન્તર્મુહૂર્તની ઔપશમિક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિનો અનુભવ કરીને પછી તેના પૂજ થતાં જ અવશ્ય સર્વપ્રતિપાતથી તે પુન મિધ્યાત્વી થઈ જાય છે

જે (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોય છે તે અપૂર્વકરણમાં રહીને મિધ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરીને પછી અનિવૃત્તિકરણમાં પ્રવિષ્ટ થઈને સમ્યક્ત્વમોહનીય પુંજના ઉદયથી સર્વ પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વનો લાભ કરે છે, ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો નહિ.

ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના બે ભેદ છે (૧) એક પ્રતિમેદજન્ય અને બીજો (૨) ઉપશમશ્રેણિમાયી. આમાં પ્રતિમેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ મન્દવિશુદ્ધિ-

શ્રેણિગતસ્ય । તત્રોપશમશ્રેણિગતઃ સમ્યક્ત્વી દેશપ્રતિપાતેન સર્વપ્રતિપાતેન વા પ્રતિ-
પતતિ-મિથ્યાત્વમવાપ્નોતિ । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વે પ્રાપ્તે સતિ જીવસ્ય પદાર્થાનાં
સ્ફુટતયા નિશ્શઙ્ક પ્રતીતિર્જન્માન્ધમ્ય નેત્રલાભે સતીવ જાયતે । સર્વોપશમસેવનને
રોગે પ્રતિનિવૃત્તે વ્યાધિતેનેવ મિથ્યાત્વમહારોગેऽપગતે સત્યપૂર્વ આનન્દોऽનુભૂયતે
જીવેન ।

ગ્રન્થિભેદજન્યમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમનાદિમિથ્યાત્વમન્યાનાં ભવતિ । इदं च
प्रथमोपशमसम्यक्त्वमित्यपि कथ्यते । उपशमश्रेणिभाविन औपशमिकसम्यक्त्वस्य
को होता है । उपशमश्रेणिप्राप्त जीव नियमसे वहां से सर्वदेशके प्रतिपात
से अथवा एकदेशके प्रतिपात से नीचे के गुणस्थानको प्राप्त हो जाता है ।

जैसे—जन्मान्धको नेत्रके लाभ होने पर पदार्थों की प्रतीति बिना
किसी सन्देह के स्फुटरूपसे होने लगती है उसी प्रकार इस सम्यक्त्व
के प्राप्त होने पर जीवादि पदार्थोंकी प्रतीति भी बिना किसी सन्देह के
स्फुटरूप से जीवको होती है । तथा जिस प्रकार निर्दोष औषध के
सेवन से रोगके चले जाने पर रोगी पुरुष अपूर्व आनन्दका अनुभव
करता है, उसी प्रकार मिथ्यात्व महारोगके नष्ट होने पर इस समकित
वाला जीव भी अपूर्व आनन्दका अनुभव करता है ।

ग्रन्थिभेदसे उत्पन्न સમ્યક્ત્વ (ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ) અનાદિ-
મિથ્યાદષ્ટિભવ્યજીવોં કે હોતા હૈ । इस सम्यक्त्वका दूसरा नाम प्रथ-

પરિણામવાળા જીવને થાય છે બીજી ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવને થાય છે. ઉપશમ-
શ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ નિયમથી ત્યારથી સર્વ દેશના પ્રતિપાતથી અથવા એક દેશના
પ્રતિપાતથી નીચેના ગુણસ્થાનોમા આવીને આખરે મિથ્યાત્વગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત
થઈ જાય છે

જેવી રીતે જન્માન્ધને નેત્રનો લાભ થતાં જ પદાર્થોની પ્રતીતિ કોઈ જાતના
સંદેહ વિના સ્ફુટરૂપથી થવા માટે છે, તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં
જ જીવાદિ પદાર્થોની પ્રતીતિ પણ કોઈ જાતના સંદેહ વગર સ્ફુટરૂપથી જીવને
થાય છે તથા જે પ્રકારે નિર્દોષ ઔષધના સેવનથી રોગનો નાશ થતાં જ રોગી
પુરૂષ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે તેવી રીતે મિથ્યાત્વ-મહારોગનો નાશ
થતાં જ આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ પણ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે

अन्थि-लेहथी उत्पन्न सम्यक्त्व (औपशमिक-सम्यक्त्व) अनादिमिथ्या-
दष्टि लव्य जिवोने थाय છે આ સમ્યક્ત્વનું બીજું નામ પ્રથમોપશમ-સમ્યક્ત્વ

પ્રાપ્તિશત્રુત્યપચ્ચમપદ્મસપ્તમેષુ કસ્મિંશ્ચિત્ ગુણસ્થાને મશિતુર્મહતિ, પરંતુ અષ્ટમગુણ સ્થાને સત્પ્રાપ્તિરવશ્યમેવ મયતિ ।

મિધ્યાત્વં ત્રિપુણીકૃત્ય સમ્યક્ત્વપુણોદયાત્ ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ-
 इति यदुक्तं, सत्रायं क्रम—केवलमिष्टसीनां वषः भूत्वा, जातिस्मरणादिना वा
 सम्यक्त्वस्वरूपं ज्ञात्वाऽपूर्वकरणे वर्षमानपरिणामो दर्शनमोहनीयापरनामकमिध्या-
 त्वपुद्गलान् युगपत् त्रिपाकरोति, सम्यक्त्वमोहनीय—मिथमोहनीय—मिध्यात्वमोह
 नीयमेदात् । तत्र तावत् सम्यक्त्वमोहनीयमुच्यते—

મોહામસમ્યક્ત્વ ાત્રી હૈ । ઉપશમભેગિગત જીવોષો જો સમક્તિ હોતા
 હૈ વહ ઉપશમભેગિમાત્રિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ષોયે,
 પાંચવેં, છઠવેં ઔર સાતવેં ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસીં નક ગુણસ્થાનમેં હો
 સકતા હૈ, પરંતુ આઠવેં ગુણસ્થાનમેં તો ઉસકી પ્રાપ્તિ જીવકો અવશ્ય
 હી હો જાતી હૈ ।

મિધ્યાત્વકે ત્રીન પુજ કરને કે વાદ જીવ ઉન ત્રીન પુંજોં મેં સે એક
 સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કિયા
 કરતા હૈ । યહ જો ઘાત કપર કહી ગઈ હૈ વહાં પર હસ પ્રકારકા ક્રમ સમ
 જ્ઞાના ચાહિયે । કેવલી યગૈરહ કે વચન સુન કર અથવા જાતિસ્મરણાદિક સે
 સમ્યક્ત્વકે સ્વરૂપકો જાન કર અપૂર્વકરણમેં જિસકા પરિણામ વૃદ્ધિગત હો
 રહા હૈ, એસા જીવ વર્ષાનમોહનીય કર્મ કો—જિસકા દૂસરા નામ મિધ્યાત્વ
 પુદ્ગલ હૈ ઇસકો—એક સાથ ત્રીન મેદોં મેં, અર્થાત્—મિધ્યાત્વમોહનીય,
 મિથમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયકે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ ।

પણ છે ઉપશમભેદિગત છવોને જે સમ્યક્ત્વ યામ છે તે ઉપશમભેદિમાત્રી
 ઔપશમિક—અમ્યક્ત્વ છે આ સમ્યક્ત્વ ષોધા, પાચમા, છઠા અને સાતમા સુષુ
 સ્થાનેમાથી કોઈ એક સુષુસ્થાનમા થઈ શકે છે, પરંતુ આઠમા સુષુસ્થાનમાં તો
 તેની પ્રાપ્તિ છવને અવશ્ય જ થઈ બાય છે

મિધ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કયાં બાદ છવ આ ત્રણ પુંજેમાથી એક સમ્યક્ત્વ
 મોહનીયપુંજના ઉદયથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થઈ શકે છે આ જે વાત
 ઉપર કહેવાઈ ગઈ છે ત્યાં આ પ્રકારનો ક્રમ સમજવો જોઈએ—કેવળી વિગેરેનું
 વચન સુણીને અથવા જાતિસ્મરણાદિકથી સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને જાણીને અપૂર્વકરણમાં
 જેનો પરિણામ વૃદ્ધિગત થઈ શકો છે એવો છવ દર્શનમોહનીય કર્મને, જેનું
 બીજું નામ મિધ્યાત્વપુદ્ગલ છે તેને એકસાથ ત્રણ મેદોમાં અર્થાત્ મિધ્યાત્વ
 મોહનીય, મિથમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયના રૂપમાં પરિણમાયે છે

सम्यक्त्वमोहनीयस्य स्वरूपम्—

यस्य कर्मणः प्रभावात् जीवाजीवादिनवतत्त्वेषु श्रद्धा समुत्पद्यते तत् सम्यक्त्वमोहनीयम् । यथा—उपनेत्रं नेत्रावरकं सदपि दृष्टिं न प्रतिरुणद्धि, तथैव सम्यक्त्वमोहनीयमावरणस्वरूपमपि सद् विशुद्धत्वात् तच्चात् श्रद्धानं नहि विधातयति, तस्मात् सम्यक्त्वमोहनीयकर्मत एव नवतत्त्वेषु श्रद्धा भवतीति सिद्धम् ।

अपूर्वकरणाध्यवसायेन यस्य मिथ्यात्वपुद्गलपुञ्जस्य मिथ्यात्वस्वभावोऽपनीतः स शोधितमिथ्यात्वपुद्गलपुञ्जः, स एव तत्त्वार्थश्रद्धानरूपस्य जीवपरिणामस्यानावरकत्वादुपचारतः सम्यक्त्वमुच्यते ।

सम्यक्त्वमोहनीयका स्वरूप इस प्रकार है—जिस कर्मके प्रभाव से जीवादिक नौ तत्त्वों में जीवको श्रद्धा उत्पन्न होती है उसका नाम सम्यक्त्वमोहनीय है । जिस प्रकार चश्मा नेत्रोंका प्रतिबन्धक होता हुआ भी पदार्थों के देखने में दृष्टिका विघात नहीं करता, उसी प्रकार यह सम्यक्त्वमोहनीय कर्म यद्यपि मिथ्यात्वका अंश होनेसे आवरण स्वरूप है तो भी उसका शोधित अंश होने की वजह से विशुद्ध है, इसलिये वह तत्त्वश्रद्धान का विघातक नहीं होता है । जीव को नव तत्त्वों में श्रद्धा इसी सम्यक्त्वमोहनीय के द्वारा उत्पन्न होती है । यद्यपि यह मिथ्यात्व का ही अंश है तो भी श्रद्धा का विघातक नहीं है, कारण कि अपूर्वकरणरूप परिणाम इसमें से श्रद्धाविघातक अंश को, कि जिसका दूसरा नाम मिथ्यात्व स्वभाव है; दूर कर देता है । यह शोधित मिथ्यात्वपुद्गलपुञ्ज

सम्यक्त्व मोहनीयनु स्वरूप आ प्रकारे छे—

सम्यक्त्वमोहनीयनु स्वरूप—जे कर्मना प्रभावथी जीवादिक नव तत्त्वोभा जीवने श्रद्धा उत्पन्न थाय छे तेनु नाम सम्यक्त्वमोहनीय छे जेवी रीते यश्मा नेत्रोना प्रतिबन्धक होवा छता पणु पदार्थोना देखवामा दृष्टिने विघात नथी करता तेम आ सम्यक्त्वमोहनीय कर्म ले के मिथ्यात्वनो अश होवार्थी आवरणस्वरूप छे तो पणु तेना शोधित अश होवार्थी विशुद्ध छे, तेथी ते तत्त्वश्रद्धाननो विघातक नथी थतु जीवने नवतत्त्वोभा श्रद्धा आ सम्यक्त्वमोहनीय द्वारा उत्पन्न थाय छे, ले के आ मिथ्यात्वनो ज अश छे तो पणु श्रद्धानो विघातक नथी कारण के अपूर्वकरणरूप परिणाम आमाथी श्रद्धाविघातक अशोने जेनु जीवु नाम मिथ्यात्वस्वभाव छे तेने दूर करे छे आ शोधित मिथ्यात्वपुद्गलपुञ्ज

યયા—સતુપકોદ્રવા મક્ષણેન માદકા મથન્તિ, ત એથ યથપનીતતુપાસ્ત્રકાવિન
 ઘોષિતાસ્તર્ધિ મર્દન જનયન્તિ, તયા મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલા જીવં દિતારિત
 જ્ઞાનરશિતં કુર્વન્તિ । તત્ર ટિસ્થાનકાદિચતુસ્પાનકાન્ત સર્વધાતી રસસ્તિષ્ઠતિ
 યદિ સ્વકીયવિશુદ્ધપરિણામબલાષેપાં સર્વધાતિરૂપં રસં સપયતિ, તદા સ્વામાયિ
 કસ્યૈકસ્પાનકરસસ્ય મદ્રાણે મિથ્યાત્વમાહનીયપુદ્ગલા એવ સમ્યક્ત્વમોહનીયા
 ઉચ્ચતે । વિઘોષિતત્વાદિર્દં કર્મ તત્પરુષધિરૂપસમ્યક્ત્વં ન પ્રતિરોધયતિ, પરં ત્વ
 તત્કર્મોદયાત્માત્મમાવરૂપમીપશ્ચમિક્ષસમ્યક્ત્વં જ્ઞાપિક્ષસમ્યક્ત્વં ચ ન પ્રાદુર્ભવતિ,
 સૂક્ષ્મતત્ત્વસમાસાધનાયાં શુદ્ધાઘોષિષ્ઠન્તિ, યત સમ્યક્ત્વે માત્રિન્યમુપજાયતે ।
 અસ્માદેવ દોષાદેવત્ કર્મ સમ્યક્ત્વમોહનીયં વ્યવદિશ્યતે ।

હૈ । યદી ઘોષિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુદ્ગલ તત્સર્વાર્થશ્ચત્ત્વરૂપ જીવકે પરિણામ
 કા અનાધારક હોને કી ઘજાહ સે કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ
 કહા ગયા હૈ ।

જેસે—સતુપ (તુપયુક્ત) કોદ્રવ (અશ્વવિઘોષ) જ્ઞાને પર માદકતા
 ઉત્પન્ન કરતે હૈ; પરન્તુ જય જે હી કોદ્રવ નિસ્તુપ કર દિયે જાતે હૈં ઓર
 તત્ર (છાશ) ઘગૈરહ કે દ્વારા ઝનકા માદક અંશ દૂર કર દિયા જાતા હૈ
 તથ ઝનમેં સે માદકશક્તિકા અમાવ હો જાતા હૈ ઓર જ્ઞાને પર ફિર
 જે માદકતા પૈદા નહીં કરતે । ઠીક હસી નરહ સે યહ મિથ્યાત્વમોહનીય
 જય તક અઘોષિત અવસ્થા મેં રહતા હૈ તમી તક જીવ કો દિતારિત
 વિવેકસે શૂન્ય કરતા રહતા હૈ, ક્યોં કિ હસમેં ટિસ્થાન સે છેકર ચતુઃ
 સ્પાન તક ચાલા સર્વધાતી રસ રહતા હૈ । પરન્તુ જ્યોં હી હસમેં સે સર્વ-
 ધાતી રસ કા ક્ષય હો જાતા હૈ જ્યોં હી યહ શુદ્ધ અવસ્થાવાલા પુદ્ગલ કહ

હે આ જ શોષિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુદ્ગલ તત્સર્વાર્થશ્ચત્ત્વરૂપ જીવના પરિણામનો
 અનાધારક ડોષથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવાય છે

જેમ સતુપ (તુપયુક્ત) કોદ્રવ (અશ્વવિઘોષ) જ્ઞાનથી માદકતા ઉત્પન્ન
 કરે છે, પરન્તુ જ્યારે તે જ કોદ્રવ નિસ્તુપ કરી દેવામાં આવે છે અને તક (છાશ)
 વિગેરે દ્વારા તેના માદક અંશ દૂર કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંથી માદક
 શક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે, અને જ્ઞાનથી ફરી તે માદકતા પૈદા કરતું નથી.
 ઠીક આ પ્રકારે આ મિથ્યાત્વમોહનીય જ્યાં સુધી ઘોષિત અવસ્થામાં રહે છે
 ત્યાં સુધી જીવને દિતારિતવિવેકથી શૂન્ય કરતું રહે છે કારણ કે આમાં
 ટિસ્થાનથી કઈને ચારસ્થાનવાળા સર્વધાતી રસ રહે છે, પરન્તુ જ્યારે જ
 તેમાંથી સર્વધાતી રસનો ક્ષય થઈ જાય છે ત્યારે જ શુદ્ધ અવસ્થાવાળા પુદ્ગલ

लाने लगता है। मिथ्यात्वप्रकृति यह सर्वधातिप्रकृति है। इसमें बहुत भाग सर्वधातिरस है और शेष एक भाग देशधातिरस है। कर्मा में मन्द, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम इस प्रकारकी चार शक्तिरूप रस रहता है। इनमेंसे इस मिथ्यात्व कर्म में तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम ये तीन शक्तियां—जिन्हें सर्वधातिरस कहा गया है—हैं। यदि कोई भव्य जीव अपने विशुद्ध परिणामके बलसे इसमें से इन तीन शक्तिरूप सर्वधातिरसका क्षय कर देता है तो उसमें स्वभावतः एक स्थानक रसका ही सद्भाव रहता है। इस परिस्थिति में मिथ्यात्वमोहनीय का नामान्तर ही सम्यक्त्वमोहनीय हो जाता है। शुद्ध होनेसे यह कर्म यद्यपि तत्त्व-रुचिरूप सम्यक्त्व का प्रतिरोधक नहीं होता है तो भी इसके सद्भाव में एक तो आत्मस्वभावरूप औपशमिकसम्यक्त्व, एवं क्षायिकसम्यक्त्व का प्रादुर्भाव नहीं होता, दूसरे इसके अस्तित्व में सूक्ष्म तत्त्व की गवेषणा करते समय गङ्गाओंका भी उत्थान हो जाया करता है; जिससे समकित में मलिनता आ जाती है। इसी दोषकी वजह से इस कर्मकी “सम्यक्त्वमोहनीय” यह संज्ञा पड़ी है।

કહેવાવામાં આવે છે મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ એ સર્વધાતિ પ્રકૃતિ છે. એમાં ઘણો ભાગ સર્વધાતિ રસ છે અને શેષ એક ભાગ દેશધાતિ રસ છે કર્મોમાં મંદ, તીવ્ર, તીવ્ર-તર અને તીવ્રતમ, આ પ્રકારની ચાર શક્તિરૂપ રસ રહે છે એનાથી આ મિથ્યાત્વ કર્મમાં તીવ્ર, તીવ્રતર અને તીવ્રતમ, એ ત્રણ શક્તિઓ—જેને સર્વ-ધાતિ રસ કહેવામાં આવે છે—રહે છે જે કોઈ ભવ્ય જીવ પોતાના વિશુદ્ધ પરિણામના બળથી એમાંથી આ ત્રણ શક્તિરૂપ સર્વધાતિ રસનો ક્ષય કરી દે છે તો તેમાં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસનો જ સદ્ભાવ રહે છે આ પરિસ્થિતિમાં મિથ્યા-ત્વમોહનીયનું નામાન્તર જ સમ્યક્ત્વમોહનીય થઈ જાય છે શુદ્ધ હોવાથી તે કર્મ જે કે તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વનું પ્રતિરોધક નથી થતું તો પણ એના સદ્ભાવમાં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ અને ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વનો પ્રાદુર્ભાવ નથી થતો, બીજું એના અસ્તિત્વમાં સૂક્ષ્મ તત્ત્વોની ગવેષણા કરતી સમય શકાઓની પણ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે, જેથી સમ્યક્ત્વમાં મલિનતા આવી જાય છે આ દોષના કારણથી આ કર્મની “સમ્યક્ત્વમોહનીય” એ સંજ્ઞા પડી છે

॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिदंशाः सत्प्राः केचिद् विप्रास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीयं पुत्रलानाम् । एतत्कर्मोदयाचस्वरुचिर्नोत्पद्यते, न चातत्स्वरुचिरपि । मिश्रमोहनीयं कर्मपुद्गलेषु द्विस्थानको रसः सर्वघाती विद्यते ।

॥ मिथ्यात्वमोહનીયમ્ ॥

સત્પ્રકોદ્રવસમા મિથ્યાત્વમોહનીયપુત્રલા, તસ્માદેતત્કર્મોદયાઞ્જીવો હિતમ-
હિતરુપેણ જાનાતિ, હિતરુપેણ ચાહિતમપિ । મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મપુદ્ગલેષુ ચતુ-
સ્થાનકસ્ત્રિસ્થાનકો દ્વિસ્થાનકઃ રસો મયતિ ।

મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુદેક અંશ સત્પ્ર હૈં ઓર કુદેક અંશ નિસ્તુપ હૈં, ડન કોદ્રવોં કે સાથ મિશ્રમોહનીય કે પુત્રલોં કી સમાનતા જાનના ચા હિયે । ઇસ કર્મ કે ઉદયસે જ તો તત્સ્વરુચિરુપ સમ્યક્સ્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈં, ઓર ન અતત્સ્વરુચિ મિથ્યાત્વ હી । ઇસ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં સર્વઘાતિરસ કા ઢિતીય (તીઘતર) અંશ હૈં ।

મિથ્યાત્વમોહનીય—

સત્પ્ર કોદ્રવોં કે સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીય કે પુદ્ગલ હૈં । ઇમ કર્મ કે ઉદય સે જીય અહિતકારી પદાર્થોંકો હિતકારી ઓર હિતકારી પદાર્થોંકો અહિતકારી માનતા રહતા હૈં । ઇમ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં 'ચતુ' સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઓર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈં ।

મિશ્રમોહનીય—

એ કેદ્રવોના કેઈ કેઈ અંશ સત્પ્ર છે અને કેઈ કેઈ અંશ નિસ્તુપ છે, એ કેદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુદ્ગલોની સમાનતા સમજવી બોધ્યે. આ કર્મના ઉદયથી નથી તત્સ્વરુચિરુપ અમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્સ્વરુચિરુપ મિથ્યાત્વ આ કર્મના પુદ્ગલોમાં સર્વઘાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અંશ ॥

મિથ્યાત્વમોહનીય—

સત્પ્ર કેદ્રવોના સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીયના પુદ્ગલો છે આ કર્મના ઉદયથી જીવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી, અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી માનતો રહે ॥ આ કર્મના પુદ્ગલોમાં ચતુસ્થાનક ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિસ્થાનક રસ રહે છે

एकस्य चतुर्थांशश्चतुःस्थानकः, तृतीयांशस्त्रिस्थानकः, द्वितीयांशो द्विस्थानक उच्यते । यश्च रसः स्वाभाविकः स एकस्थानक इति बोध्यम् । शुभाशुभफलप्रदा कर्मणां तीव्रतमा शक्तिश्चतुःस्थानकरसः, तथा तीव्रतरा शक्तिस्त्रिस्थानकरसः, तीव्रा शक्तिर्द्विस्थानकरसोऽवगन्तव्यः । मन्दशक्तिस्त्वेकस्थानको रस इत्यन्यत्र विस्तरः ।
 अथैतेषां त्रिविधानां पुद्गलानां किं परस्परं संक्रमो भवति, किं वा न ? उच्यते- भवतीति । प्रवर्धमानपरिणामः सम्यग्दृष्टिः मिथ्यात्वदलिकात् पुद्गलानाकृष्य मिश्रे सम्यक्त्वे च संक्रमयति । मिश्रपुद्गलानां संक्रमो द्वयोर्भवति-सम्यक्त्वे

एक रस का चतुर्थांश चतुःस्थानक, तृतीय अंश त्रिस्थानक, और द्वितीय अंश द्विस्थानक होता है । अर्थात् शुभ और अशुभरूप अपने-फल देनेवाले प्रत्येक कर्मों के तीव्रतम अंश की चतुःस्थानक, तीव्रतर अंश की त्रिस्थानक और द्वितीय तीव्र अंश की द्विस्थानक एवं प्रथम मन्द अंश की एक स्थानक संज्ञा है । प्रथम अंश स्वाभाविक है । इसीलिये उसे एक स्थानक कहा है । इस विषयका खुलासा अन्य शास्त्रों में विस्तार से किया गया है ।

प्रश्न—इन तीन प्रकार के पुद्गलों का परस्पर में संक्रमण होता है या नहीं ?

उत्तर—हां, होता है । जिसका अध्यवसाय अहर्निश वृद्धिगत हो रहा है ऐसा सम्यक्त्वी जीव मिथ्यात्वके दलिये से पुद्गलपुञ्जको खींच कर मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति के पुद्गलपुञ्जोंमें उन्हें संक्रमित करता है । मिश्रप्रकृति के पुद्गलोंका संक्रमण मिथ्यात्व और सम्यक्त्व, इन दोनों प्रकृतियों में होता है । प्रवर्धमानपरिणामवाला सम्यग्दृष्टि जीव

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોય છે અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-ફળ પ્રદાતાના ફળ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોની તીવ્રતમ અશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મદ અશની એકસ્થાનક સંજ્ઞા છે પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે આ વિષયનો ખુલાસો બીજા શાસ્ત્રોમા વિસ્તારથી આપ્યો છે

પ્રશ્ન—આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ઉત્તર—હા, થાય છે જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુજને એ ચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલ પુજોમા એને સંક્રમિત કરે છે મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બંને પ્રકૃતિઓમા થાય છે. પ્રવર્ધમાન

॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिर्दक्षाः सत्प्राः केचिद् विशुद्धास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीयं पुत्रसामानम् । एतत्कर्म्मोदयात्तत्स्वरुचिर्नोत्पद्यते, न चातस्वरुचिरपि । मिश्रमोहनीयं कर्मपुत्रछेषु द्विस्थानको रसः सर्वघाती निघते ।

॥ मिथ्यास्वमोहनीयम् ॥

सत्पुत्रकोद्रवसमा मिथ्यास्वमोहनीयपुत्रलाः, सस्मादेतत्कर्म्मोदयाज्जीवो हितम-
हितरूपेण जानाति, हितरूपेण चाहितमपि । मिथ्यास्वमोहनीयकर्मपुत्रछेषु चतु-
स्थानकस्त्रिस्थानको द्विस्थानकश्च रसो भवति ।

મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુછેક અંશ સતુપ હૈં ઔર કુછેક અશ નિસ્તુપ હૈં, ઊન કોદ્રવોં કે સાથ મિશ્રમોહનીય કે પુત્રલોં કી સમાનતા જાનના યા હિયે । હસ કર્મ કે ઉદયસે ન તો તત્સ્વરુચિરૂપ સમ્યક્સ્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈં, ઔર ન અતત્સ્વરુચિ મિથ્યાસ્વ હી । હસ કર્મ કે પુત્રગલોં મેં સર્વઘાતિરસ કા દ્વિતીય (તીવ્રતર) અંશ હૈ ।

મિથ્યાસ્વમોહનીય—

સતુપ કોદ્રવોં કે સ્થાનાપજ મિથ્યાસ્વમોહનીય કે પુત્રગલ હૈં । હસ કર્મ કે ઉદય સે જીવ અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઔર હિતકારી પદાર્થોં કો અહિતકારી માનતા રહતા હૈ । હસ કર્મ કે પુત્રગલોં મેં ચતુઃ સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઔર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈ ।

મિશ્રમોહનીય—

જે કોદ્રવોનો કોઈ કોઈ અશ સતુપ છે અને કોઈ કોઈ અશ નિસ્તુપ છે એ કોદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુત્રગલોની સમાનતા સમજાવીએછાં. આ કર્મના ઉદયથી નથી તત્સ્વરુચિરૂપ સમ્યક્સ્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્સ્વરુચિ રૂપ મિથ્યાસ્વ આ કર્મના પુત્રગલોમાં સર્વઘાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અશ છે

મિથ્યાસ્વમોહનીય—

સતુપ કોદ્રવોના સ્થાનાપજ મિથ્યાસ્વમોહનીયના પુત્રગલો છે. આ કર્મના ઉદયથી જીવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી માનતો રહે છે આ કર્મના પુત્રગલોમાં ચતુઃસ્થાનક, ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિસ્થાનક રસ રહે છે

એકસ્ય ચતુર્થાંશશ્ચતુઃસ્થાનકઃ, તૃતીયાંશસ્ત્રિસ્થાનકઃ, દ્વિતીયાંશો દ્વિસ્થાનક ડચ્યતે । યશ્ચ રસઃ સ્વાભાવિકઃ સ એકસ્થાનક ઇતિ બોધ્યમ્ । શુભાશુભફલપ્રદા કર્મણાં તીવ્રતમા શક્તિશ્ચતુસ્થાનકરસઃ, તથા તીવ્રતરા શક્તિસ્ત્રિસ્થાનકરસઃ, તીવ્રા શક્તિર્દ્વિસ્થાનકરસોડવગન્તવ્યઃ । મન્દશક્તિસ્ત્વેકસ્થાનકો રસ ઇત્યન્યત્ર વિસ્તરઃ ।

અથૈતેષાં ત્રિવિધાનાં પુદ્ગલાનાં કિં પરસ્પરં સંક્રમો ભવતિ, કિં વાન ? ડચ્યતે ભવતીતિ । પ્રવર્ધમાનપરિણામઃ સમ્યગ્દષ્ટિઃ મિથ્યાત્વદલિકાત્ પુદ્ગલાનાકૃષ્ણ મિશ્રે સમ્યક્ત્વે ચ સંક્રમયતિ । મિશ્રપુદ્ગલાનાં સંક્રમો દ્વયોભવતિ-સમ્યક્ત્વે

એક રસ કા ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, ડૌર દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોતા હૈ । અર્થાત્ શુભ ડૌર અશુભરૂપ અપનેર ફલ દેનેવાલે પ્રત્યેક કર્મોં કૈ તીવ્રતમ અંશ કી ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અંશ કી ત્રિસ્થાનક ડૌર દ્વિતીય તીવ્ર અંશ કી દ્વિસ્થાનક ંવં પ્રથમ મન્દ અંશ કી એક સ્થાનક સંજ્ઞા હૈ । પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક હૈ । ઇસીલિયે ડસે એક સ્થાનક કહા હૈ । ઇસ વિષયકા ખુલાસા અન્ય શાસ્ત્રોં મૈ વિસ્તાર સે કિયા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન-ઇન તીન પ્રકાર કૈ પુદ્ગલોં કા પરસ્પર મૈ સંક્રમણ હોતા હૈ યાનહીં ?

ડત્તર-હાં, હોતા હૈ । ડિસકા અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત હો રહા હૈ ંસા સમ્યક્ત્વી ડીવ મિથ્યાત્વકૈ દલિયે સે પુદ્ગલપુજ્જકો ર્શોંચ કર મિશ્ર ડૌર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કૈ પુદ્ગલપુજ્જોંમૈ ડન્હેં સંક્રમિત કરતા હૈ । મિશ્રપ્રકૃતિ કૈ પુદ્ગલોંકા સંક્રમણ મિથ્યાત્વ ડૌર સમ્યક્ત્વ, ઇન ડોનો પ્રકૃતિયોં મૈ હોતા હૈ । પ્રવર્ધમાનપરિણામવાલા સમ્યગ્દષ્ટિ ડીવ

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અશ દ્વિસ્થાનક હોય છે અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-રૂપ પોતાપો તાના રૂપ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોંની તીવ્રતમ અશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મદ અશની એકસ્થાનક સરા છે પ્રથમ અશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે આ વિષયનો ખુલાસો બીજા શાસ્ત્રોમા વિસ્તારથી આપ્યો છે

પ્રશ્ન-આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમા સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ડત્તર-હાં, થાય છે જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુંજને ંચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજોમા એને સંક્રમિત કરે છે મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બને પ્રકૃતિઓમા થાય છે. પ્રવર્ધમાન

मिथ्यात्वे च । तत्र प्रवर्धमानपरिणाम सम्यग्दृष्टिर्मिश्रपुद्गलान् सम्यक्त्वे सक्रमयति, मिथ्यादृष्टिस्तु तान् मिथ्यात्वे । अत्र च सम्यक्त्वदमिषात् पुद्गलान् आकृष्य मिथ्यात्वं एव सक्रमयति, न तु मिथे । तस्य सम्यक्त्वांशमाभावात् ।

सम्यग्दर्शनमाप्तीं सत्यां हीयमानपरिणामस्तु मिश्रपुद्गलान् मिथ्यात्वंपुद्गलांश्च न सम्यक्त्वपुद्गलान् करोति, न च तस्य केचिदन्ये शोधितपुद्गलाः सन्ति, यान् सप्तति प्रस्तुतसम्यक्त्वपुद्गलनिष्ठाकाष्ठे वेदयेत् । ततः सम्यक्त्वपुद्गलानामन्तिमप्राप्तं वेदयित्वा पूर्वं सम्यक्सम्यक्त्वोऽपि पश्चान्मिथ्यात्वमेव सक्रमयति ।

मिश्रप्रकृति से मिश्रपुद्गलपुञ्ज को लींच कर सम्यक्त्वप्रकृतिके रूपमें, और मिथ्यादृष्टि जीव उन्हीं पुद्गलों को मिथ्यात्व प्रकृति के रूपमें परिणामाता है । तथा सम्यक्त्वप्रकृति के दलिये से पुद्गलों को छेडे कर वही मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्व में ही उनका सक्रमण किया करता है, मिश्रमें नहीं; कारण कि उसके सम्यक्त्वका अंश भी नहीं है ।

सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होने पर भी जिसका परिणाम हीयमान है ऐसा सम्यग्दृष्टि जीव मिश्रप्रकृति के पुद्गलपुंजों का, एवं मिथ्यात्व प्रकृति के पुद्गलपुंजोंका सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलपुंजोंमें संक्रमण नहीं करता; कारण कि उसके निकट दूसरे कोई शोधित पुद्गल नहीं हैं कि जिन्हें वह वर्तमान में प्राप्त सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलोंके समाप्ति काल में वेदन कर सके । इसलिये वह जीव यद्यपि लघ्वसम्यक्त्व है तो भी हीयमानपरिणामवाला होने से सम्यक्त्वप्रकृति के अन्तिम प्राप्त का वेदन कर पीछे से मिथ्यात्व में ही संक्रमण करता है ।

परिष्कारवाणः सम्यग्दृष्टि एव मिश्रप्रकृतिं मिश्र पुद्गलपुंजने जेवीने सम्यक्त्व प्रकृतिना इष्यमा, जने मिथ्यादृष्टि एव तेज पुद्गलवने मिथ्यात्वप्रकृतिना इष्यमा परिष्कारवे छे तथा सम्यक्त्वप्रकृतिना इतिवाणी पुद्गलवने लघ्व-लघ्वने तेमिथ्या दृष्टि एव मिथ्यात्वमा ज तेनु सक्रमण कर्या करे छे, मिश्रमां नहि; कारण के तेने सम्यक्त्वने जस पणु नही ।

सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति यत्ता पणु जेना परिष्कार हीयमान छे जेवे सम्यग्दृष्टि एव मिश्रप्रकृतिना पुद्गलपुंजने जने मिथ्यात्वप्रकृतिना पुद्गलपुंजने सम्यक्त्वप्रकृतिना पुद्गलपुंजनेमां सक्रमण नही करतो कारण के जेनी नलक नीज जोर शोधित पुद्गल नही के जेने ते वर्तमानमा प्राप्त सम्यक्त्वप्रकृतिना पुद्गलवनी समाप्ति क्षणमा वेदन करी शके तेथी ते एव जे के लघ्वसम्यक्त्व छे तो पणु हीयमान परिष्कारवाणः कोनाथी सम्यक्त्वप्रकृतिना अन्तिम प्राप्तो वेदन करी पछीमी मिथ्यात्वमा ज सक्रमण करे छे ।

મિથ્યાત્વપુણ્ણસ્ય ક્ષયાભાવે યઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ સ ત્રિપુણ્ણી, ક્ષીણે તુ મિથ્યાત્વ-પુણ્ણે દ્વિપુણ્ણી, મિથ્યાત્વપુણ્ણસ્ય મિશ્રપુણ્ણસ્ય ચ ક્ષયે ત્વેકપુણ્ણી, સમ્યક્ત્વપુણ્ણસ્યાંપ ક્ષયે તુ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી ભવતીતિ ।

કારણવશાત્ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તાવષ્ઠૌ દૃષ્ટાન્તાઃ સન્તિ । યથા-(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તરઃ (૨) પન્થાઃ, (૩) જ્વરઃ, (૪) વસ્ત્રમ્, (૫) જલમ્, (૬) પિપીલિકા, (૭) પુરુષઃ (૮) કોદ્રવશ્ચેતિ ।

(૧) યથાપ્રવૃત્તારણ્યે કરણે ગિરિનદીપ્રસ્તરદૃષ્ટાન્તઃ, યથા ગિરિનદ્યાં પ્રસ્તર-ખણ્ણાસ્તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલા જાયન્તે, એવં યથાપ્રવૃત્તકરણપ્રભાવાદ્ દીર્ઘત-રાયા અપિ કર્મસ્થિતેસ્તાવત્ ક્ષપણં ભવતિ યાવતા ગ્રન્થિરૂપઃ શેષોઽવતિષ્ઠતે ।

મિથ્યાત્વપુંજ કા જિસને ક્ષય નહીં કિયા હૈ એસા જીવ સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ હોને પર ત્રિપુંજી, મિથ્યાત્વ કે ક્ષય હોને પર દ્વિપુંજી, ઔર મિથ્યાત્વપુંજ એવં મિશ્રપુંજકે ક્ષય હોનેપર એકપુંજી (સમ્યક્ત્વપુંજવાલા) હોતા હૈ, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ક્ષય હોને પર ક્ષાયિકસમ્ય-ક્ત્વી હો જાતા હૈ ।

સમકિતપ્રાપ્તિ મેં આઠ દૃષ્ટાન્ત હૈ—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જલ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, ઔર ૮વાં કોદ્રવ । ઇનકા ખુલાસા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—

(૧) પહિલા દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામક કરણમેં હૈ । જૈસે-પર્વત ડપરસે બહનેવાલી નદીમેં પત્થરોં કે ઢુકડે ડસકે પ્રવાહ કે વેગસે ઇધર-ડધર ઘિસે જાકર ગોલ હો જાતે હૈ, ઇસીપ્રકાર યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે પ્રભાવ સે ડ-લ્કૃષ્ટ ભી કર્મસ્થિતિ ઘટતે ૨ ઇતની કમ રહ જાતી હૈ જિસકી વજહ સે

મિથ્યાત્વપુણ્ણનો જેણે ક્ષય નથી કર્યો એવો જીવ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતા ત્રિપુણ્ણ, મિથ્યાત્વનો ક્ષય થતા દ્વિપુણ્ણ, મિથ્યાત્વપુણ્ણ અને મિશ્રપુણ્ણનો ક્ષય થતા એકપુણ્ણ (સમ્યક્ત્વપુણ્ણવાળો) થાય છે, તથા એક પુણ્ણ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો ક્ષય થતા જ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી થઈ જાય છે.

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિમા આઠ દૃષ્ટાન્તો છે (૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જળ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, અને (૮) કોદ્રવ. એનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—

(૧) પહેલો દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામવાળા કરણમા છે જેમ પર્વતથી પહેવાવાળી નદીમા પત્થરનો ઢુકડો તેના પ્રવાહના વેગથી અહીં-તહીં ઘસડાઇ જેમ ગોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે યથાપ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી ડલ્કૃષ્ટી

(૨) અનિવૃત્તિ કરણ સમ્યક્સ્વપુરસ્કૃતે જીવે મવતિ । કયં તત્ સમ્યક્ત્વં મવતિ ? ઉપવે-ઉપવેશત સ્વયં વા । તત્ર પષિદષ્ટાન્ત-યયા કમિદષ્ટપયઃ પુરુષોઽયં દૃષ્ટા તદુપવેશતો માર્ગમારોહતિ, કમિત્ સ્વયમેષોદાપોર્દં કૃત્વા, તયા કમિદાવા પાંદીનામુપવેશત સમ્યક્સ્વ સમતે, કમિત્ સ્વયમેવ જાતિસ્મરમાદિના ।

(૩) જ્વરદષ્ટાન્તોઽપ્યથૈવ, યયા-જ્વરિતઃકમિદૌપધાદારોમ્ય સમતે, કમિષુ તથ પિનેવ ઠહ્નાદિના; તયાઽપિ કસ્યધિનિમિષ્યાસ્વ શુર્વામુપવેશતો નશ્યતિ, કસ્ય મિષુ સ્વયમેવ તત્ત્વપર્યાલોચનતઃ ।

યદ્ જીવ પ્રતિવેદ્યા તત્ક પશુંચ જાતા હૈ । અર્થાત્-હસ કારણ કે પ્રમાણ સે ઉત્કૃષ્ટ બી કર્મસ્થિતિ ક્ષય હોતે ૨ ગ્રંથિરૂપમેં અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વ કે સંમુલ્લ જુદ જીવ કે અનિવૃત્તિકરણ હોતા હૈ । સમ કિત્તી પ્રાપ્તિ કે દો ઉપાય હૈ—(૧) શુર્વાદિકકા ઉપવેશ, (૨) નિસર્ગ । યહાં પર માર્ગ કા દૃષ્ટાન્ત હૈ । જૈસે—કોઈ ૨ માર્ગ ખૂલા પધિક ઉસી માર્ગ પર ચલતે જુદ દુસરે કો વેલ કર પા વસસે પૂછ કર તયા કોઈ ૨ સ્વયંતર્ક ચિત્તર્ક કરકે અપને માર્ગકી પ્રાપ્તિ કર લિયા કરતે હૈ, ઉસી તરહ કોઈ ૨ પ્રાણી આચાર્યાદિક શુરુઓં કે ઉપવેશ સે, ઔર કોઈ ૨ સ્વયં અપને આપ જાતિસ્મરણાદિક સાધનોં સે સમકિત્ત કા મામ કર હેતે હૈ ।

(૩) જ્વર કા દૃષ્ટાન્ત બી યહીં પર ઘટિત્ હોતા હૈ । જૈસે—કિસી રોગી કા જ્વર ઓષધિ કે સેવન સે ઔર કિસી ૨ કા વિના ઓષધિ કે કેવલ લંઘનાદિક કરને સે જ્ઞાન્ત હો જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કિસી ૨ જીવ

કર્મસ્થિતિ ઘટતી ઘટતી એટલી બોલી રહી બાક છે કે જેના કારણથી એ જીવ અનિવૃત્તિ સુધી પહોંચી બાક છે, અર્થાત્ આ કારણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી કર્મસ્થિતિ ક્ષય થતા થતા અનિવૃત્તિમા અવશિષ્ટ રહી બાક છે

(૧) સમ્યક્ત્વના સ મુખ્ય ધ્યેય જીવને અનિવૃત્તિકરણ થાય છે સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના ત્રી ઉપાય છે—(૧) શુર્વાદિકને ઉપવેશ, (૨) નિસર્ગ આ ઠેકાણે માર્ગને દૃષ્ટાન્ત છે જેમ કોઈ કોઈ માગભૂત્યા ગુણાદિર તે માર્ગ પર આલતા બીજને દેખીને અગર તેને પૂછીને, તયા કોઈ કોઈ સ્વયં તર્ક નિર્ણય કરીને પોતાના માર્ગની પ્રાપ્તિ કરી લે છે તેવી રીતે કોઈ કોઈ પ્રાણી આચાર્યાદિક શુરુઓના ઉપવેશથી અને કોઈ સ્વયં પોતે પોતાના જાતિસ્મરણાદિક સાધનોથી સમ્યક્ત્વને લાભ કરી લે છે

(૨) જ્વરને કારણે પણ આ ઠેકાણે ઘટિત થાય છે જેમ કોઈ કોઈ રાત્રીને જ્વર ઓષધીના સેવનથી અને કોઈ કોઈને ઓષધિ વિના લંઘનાદિક કરવાથી

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામિજીવસ્ય પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વં ભવતિ, તત્ સ્વલ્પપૂર્વકરણવશાત્ । તત્રાપૂર્વકરણેન જીવો મિથ્યાત્વદલિકં ત્રિધા કરોતિ, તદ્વથા-(૧) મિથ્યાત્વં, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વં, (૩) સમ્યક્ત્વં ચેતિ । તત્ર (૪) વસ્ત્રં, (૫) જલં ચેતિ દૃષ્ટાન્તદ્વયમ્ । યથા કિંચિદ્ વસ્ત્રં જલં વા મલિનં ભવતિ, કિંચિદીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ શુદ્ધમ્, તથા મિથ્યાત્વદલિકમપ્યપૂર્વકરણવશાત્ કિંચિન્મિથ્યાત્વરૂપં મલિનં ભવતિ, કિંચિત્ સમ્યગ્મિથ્યાત્વરૂપમીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ સમ્યક્ત્વરૂપં શુદ્ધમ્ ।

કા મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે, ઔર કિસી ૨ કા અપને આપ તત્ત્વોં કી પર્યાલોચના સે નષ્ટ હો જાતા હૈ ।

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે હી જીવ મિથ્યાત્વ કે (૩) ત્રીન ભાગ કરતા હૈ—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ । યહાં પર વસ્ત્ર ઔર જલ ચે દો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત હોતે હૈ । જૈસે—કોઈ વસ્ત્ર અથવા જલ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈ, ઔર કોઈ ઉસસે કુછ કમ મલિન, ઔર કોઈ ૨ બિલ્કુલ સાફ-નિર્મલ હોતા હૈ, ઉસી તરહ સે જીવ અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે મિથ્યાત્વ કે ત્રીન ટુકડે કર દેતા હૈ, ઉનમેં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ મલિન, ઔર કોઈ ટુકડા કુછ કમ મલિન, ંવં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ સાફ-શુદ્ધ હોતા હૈ । બિલ્કુલ મલિન ટુકડે કા નામ મિથ્યાત્વ, કુછ કમ મલિન ટુકડે કા નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, ઔર સર્વથા શુદ્ધ ટુકડે કા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

શાત થઇ જાય છે, તે પ્રમાણે કોઈ કોઈ જીવને મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી, અને કોઈ કોઈને પોતાની મેળે તત્ત્વોની પર્યાલોચનાથી નષ્ટ થઇ જાય છે

(૪-૫) તીવ્ર વિશુદ્ધ પરિણામવાળા જીવને અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી જ જીવ મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરે છે—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ. આઠેકાણે વસ્ત્ર અને જળ, આ બે દૃષ્ટાન્ત ઘટિત થાય છે જેમ કોઈ વસ્ત્ર અથવા જળ અત્યન્ત મલિન છે, અને કોઈ એનાથી ઓછું મલિન, અને કોઈ કોઈ બિલ્કુલ સાફ-નિર્મળ હોય છે, તેમજ જીવ અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરી નાખે છે તેમા કોઈ ભાગ બિલ્કુલ મલિન અને કોઈ ભાગ થોડા મલિન, કોઈ ભાગ તદ્દન સાફ-શુદ્ધ હોય છે તદ્દન મલિન ભાગનું નામ મિથ્યાત્વ, થોડા ઓછા મલિન ભાગનું નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, અને સર્વથા શુદ્ધ ભાગનું નામ સમ્યક્ત્વ છે

(૬) નન્નમધ્યાઃ કથં તસ્મિન્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેઽષ્ટિષ્ઠતે, કથં વા તતઃ પ્રતિ પઠન્તિ, ? મધ્યા યા ગ્રન્થિ મિત્થા કથં તત પરતો ગચ્છન્તિ ?; અપ્રોચ્યતે— પિપીલિકાદૃષ્ટાન્તાત્ । તથાદિ—કાશિત્ પિપીલિકા અનામોગતો વિભા- મિસ્સુસ્ય ઇતસ્તતો ગન્તું પ્રવૃષ્ણા, કાશિવપૂર્વકરણેન વૃક્ષાદાવારુદા , તાસામપિ મધ્યે પસરદિવાસ્ત્રૈષ્ઠિ ટિષ્ઠન્તિ, તતઃ પ્રત્યષરોદન્તિ ચ । કાશિત્ પક્ષોદ્ભવેન તત ઉદ્ભીયતે । ઇદં યથા પિપીલિકાનામિતસ્તતો ગમનં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન, વૃક્ષાદાવા- રોદ્ભવમપૂર્વકરણેન, સ્વદ્યનમનિવૃત્તિકરણેન, તથાઽપિ ગ્રન્થિદેશગમનં યથાપ્રવૃત્તિ

(૬) અમધ્ય જીવ કેસે યથાપ્રવૃત્તિકરણમે સ્થિત હોતે હૈં ? ઓર કેસે ફિર વહાં સે અપુત હો જાતે હૈં ? તથા અમધ્ય જીવ ગ્રન્થિ કા મેદન કર કેસે ડસસે આગે ચડ જાતે હૈં ? , પેસી શંકા કો દૂર કરને કે લિખે પિપી લિકા—દૃષ્ટાન્ત કી માર્થક્તા હૈં ।

જેસે કિત્તનેક પિપીલિકાઈ (કીડિયાં) યૌં હી અપને ચિલસે વાહર નિકલ કર ઇષર—ઉષર ધ્રમને લગતી હૈં, ઓર इनमेंसे કિત્તનીક પિપી લિકાઈ અપૂર્વકરણ સે વૃક્ષાદિક કે ડપર ચડ જાતી હૈં । અનન્તર उनमें पांखरहित कित्तीक वहीं पर रह जाती हैं, ઓર કિત્તનીક વહાં સે ડતર આતી હૈં, ઓર કિત્તનીક પિપીલિકાઈ કિ જિનકે પર હોતે હૈં વે વહાંસે ડડ જાતી હૈં । જેસે પિપીલિકાઈ કોં કા ઇષર—ઉષર ધ્રમણ યથાપ્રવૃત્તિ કરણસે હોતા હૈં, વૃક્ષાદિક પર ડનકા ચડના અપૂર્વકરણ સે હોતા હૈં, ઇંધ વહા સે ડનકા ડડ જાના અનિવૃત્તિકરણસે હોતા હૈં, ડસી પ્રકાર જીવકા ગ્રન્થિ દેશ તક જાના—યથાપ્રવૃત્તિકરણકે ડારા હોતા હૈં, ગ્રન્થિકા

(૬) અમધ્ય જીવ કેવીરીતે યથાપ્રવૃત્તિકરણ કરે છે ? અને કેવી રીતે પછી ત્યાંથી પતિત થઈ બાધ છે ? તથા અમધ્ય જીવ ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને કેવી રીતે બેનાથી આગળ વધી બાધ છે ? આથી શકાને દૂર કરવાને માટે પિપીલિકા એ (કીડીઓ)ના દૃષ્ટાન્તની સાર્થક્તા છે જેમ કેટલીક પિપીલિકાઓ (કીડીઓ) એમજ પોતાના ઇરથી બાહર નિકળીને અહીંતહીં ફરવા લાગે છે, અને તેઓમાંથી કેટલીક કીડીઓ વૃક્ષાદિકની ઉપર ચડી બાધ છે બાકમાં તેઓમાંથી પાંખરહિત કેટલીક કીડીઓ ત્યાં જ રહી બાધ છે અને કેટલીક કીડીઓ ત્યાંથી ડતરી આવે છે, તથા કેટલીક કીડીઓ—કે જેઓ પાંખરહિત હોય છે તેઓ ત્યાંથી ડડી બાધ છે જેમ કીડીઓનું અહીંતહીં ફરવું યથાપ્રવૃત્તિકરણથી બાધ છે વૃક્ષાદિકની ઉપર તેઓનું ચડવું અપૂર્વકરણથી બાધ છે અને ત્યાંથી તેઓનું ડડવું અનિવૃત્તિકરણથી બાધ છે; તે જ પ્રમાણે જીવનું ગ્રન્થિદેશ મુધી જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા બાધ

કરણેન, ગ્રન્થિભેદનમપૂર્વકરણેન, સમ્યક્ત્વમનિવૃત્તિકરણેન । પક્ષરહિતાસ્તુ યથા વૃક્ષાદૌ સ્થિતાસ્તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ, તથાઽધ્યવસાયસ્ય માન્દ્યાત્ કોઽપિ તીવ્રવિશોધિ-રહિતોઽપૂર્વકરણેન ગ્રન્થિભેદં કર્તુમુદ્યતોઽપિ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામોદયાત્ તત્રૈવ તિષ્ઠતિ, પશ્ચાત્ તત એવ પરાવર્તતે ।

(૭) અત્રૈવ પુરુષદૃષ્ટાન્તોઽપિ—યથા ત્રયો મનુષ્યાઃ ભયઢ્ઢરં પન્થાનં ભયેન ગચ્છન્તઃ સાયંકાલે સમાગતે ત્વરમાણા વ્રજન્તિ । અત્રાન્તરે સ્વદ્ગહસ્તૌ દ્વૌ ચૌરૌ પાર્શ્વદ્વયતઃ સંપ્રાપ્તૌતૌ ચૈવમાક્ષિપતઃ—“કવ ગચ્છથ યૂયં ? યુષ્માકમિદાનીં મરણં

ભેદન કરના યહ અપૂર્વકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ, ઓર સમકિત કી પ્રાપ્તિ કરના યહ અનિવૃત્તિકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ । પક્ષરહિત પિપીલિકાઈ જેસે વૃક્ષાદિક પર ચઢ કર વહાં સે ફિર ઉતરતી હૈં ઉસી પ્રકાર અધ્યવ-સાય કી મન્દતાસે જીવ ભી તીવ્રવિશુદ્ધિસમ્પન્ન પરિણામ કે વિના અપૂર્વકરણ કે દ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરનેમ્ ઉદ્યત હોતા હુઆ ભી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ પરિણામકે ઉદયસે વહીં પર ઠહર જાતા હૈ ઓર પીછે વહાં સે લૌટ આતા હૈ; આગે નહીં વઢ સકતા ।

(૭) યહીં પર પુરુષકા દૃષ્ટાન્ત ભી લાગૂ પડતા હૈ । જેસે ત્રીન મનુષ્ય ભય સે ભંત્રસ્ત હો વિકટ માર્ગ સે જાતે હુઅ સાયંકાલ કે સમય અપને સ્થાનકી ઓર બહુત હી શીઘ્રતાસે આગે વઢ રહે થે, ઇનમ્ સે ઇકકે પાસ હી તલવાર થી । ઇસી સમય તલવાર લિયે હુઅ દો ચોર ભી જો ઇનકે પીછે લગે હુઅ થે, વે ઉનકે સામને આ કર બોલે—‘તુમ લોગ કહાં જાતે હો ? જો કુછ હો હમ્ દે દો, નહીં તો તુમ્હારી ઇસ સમય મૃત્યુ નિકટ

છે ગ્રન્થિનુ ભેદન કરવુ, તે અપૂર્વકરણદ્વારા થાય છે, અને સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવી તે અનિવૃત્તિકરણ દ્વારા થાય છે પાખરહિત કીડિઓ જેમ વૃક્ષાદિની ઉપર ચઢીને ઉતરે છે તે પ્રમાણે અધ્યવસાયની મન્દતાથી જીવ પણ તીવ્ર વિશુદ્ધ-સપ્ત પરિણામના અભાવે અપૂર્વકરણદ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરવામા તૈયાર હોવા છતા પણ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામના ઉદયથી ત્યા જ રોકાઈ જાય છે અને પછી ત્યાથી ફરી આવે છે અને આગળ વધી શકતા નથી

(૭) એ જ ઠેકાણે પુરુષનો દૃષ્ટાન્ત પણ લાગુ પડે છે જેમ—સાયકાળની વખત વિકટ માર્ગથી જતા ત્રણ મનુષ્ય ભયથી હુ ખી હતા, અને પોતાના સ્થાનની તરફ ઘણી જ શીઘ્રતાથી આગળ વધી રહ્યા હતા તેમા એકની પાસે તલવાર હતી આ વખતે તલવારવાળા એ ચોર જે તેમની પછવાડે પડ્યા હતા તે એમની સામે આવી બોલ્યા ‘—તમે લોક કયા જાઓ છો ? તમારી પાસે જે હોય

સમાયાતમ્ ” ઇતિ । તથૈકઃ પુરુષસ્તૌ સમાપતન્તૌ વિલોભ્ય પ્રયમત એવ નિહતઃ, દ્વિતીયસ્તદ્વાક્યધ્રુવેણ સહગર્ભનેન ધ સજ્ઞાતમયસ્તથૈવ સ્થિતઃ, તૃતીયસ્તુ પરમ-સાહસિકઃ પ્રકટીકૃતકૃપાણસ્તૌ દ્વાષપિ ધૌરૌ પચાત્કૃત્ય તત્ સ્થાનમતિક્રાન્તઃ ।

इह प्रयाणामपि या प्रयमत क्रमेण गतिः सा यथाप्रवृत्तिकरणम्, यद्यु-
त्पन्नं तदपूर्वकरणम्, यच्च तौ परामित्य उत्परतो गमनं तत् तृतीयमनिवृत्तिकरणं
द्रष्टव्यम् । यच्च ततः पलायनं तत् पतनम् ।

(૮) અપૂર્વકરણેન મિથ્યાત્વ ધિષા કરોતીતિ ચદુક્ત તથા કોદ્રવદ્દ્યાન્ત ।
સ દુ પ્રાગેવ નિરુપિત ।

है' यह सुनते ही उनमें से एक पुरुष तो पहिले से ही कहीं भाग गया ।
दूसरा उनकी बात सुन कर और तलवार देख कर वहीं पर चुपचाप
खड़ा रह गया । तीसरेने जो परमसाहसी था अपनी तलवार निकाल
कर उनका सामना किया और उन्हें परास्त कर आगे बढ़ गया ।

यहाँ तीनों का गमन करना यह यथाप्रवृत्तिकरण के, तथा उनमें से दूसरे
का भयान्वित हो कर वहीं पर खड़े रहना यह अपूर्वकरणके और तीसरे
का धौरौको परास्त कर आगे बढ़ना यह अनिवृत्तिकरणके स्थानापन्न
समझना चाहिए । तथा भागना यह पतन का स्थानापन्न है ।

(૮) અપૂર્વકરણ-પરિણામ કે દ્વારા यह जीव जो मिथ्यात्वके तीन
खण्ड करता है वहाँ पर कोद्वेष का दृष्टान्त लागू पड़ता है । इस दृष्टान्त
का समन्वय पहिले किया जा चुका है ।

તે જાગેને આખી ઘો, નહિ તો તમાથે મોત આ વખતે નહીં છે આ સાંભ-
ળતા જ તેમાથી એક પુરુષ તો પહેલેથી જ ક્યાંક ભાગી ગયો, બીજો તેમની
વાત સાંભળી અને તલવાર દેખીને ચુપચાપ ઉભો રહ્યો, ત્રીજો જે ઘણો સાહ-
સિક હતો તેણે પોતાની તલવાર ઠાલીને સામે ધક્કો માર્યો અને તેમને ભગાડીને
આગળ વધી ગયો.

આ ઠેકાણે ત્રણેનું જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણનું, તથા આમાથી બીજાનું
ભયભીત થઈ ત્યાં થાકી જવું તે અપૂર્વકરણનું અને ત્રીજાનું ધૌરેને હસવીને
આગળ વધવું તે અનિવૃત્તિકરણનું સ્થાનાપન સમજવું જોઈએ. જે ભાગવું તે
પતનનું સ્થાનાપન છે.

(૮) અપૂર્વકરણ પરિણામ દ્વારા આ જીવ જે મિથ્યાત્વના ત્રણ ખંડ કરે
છે ત્યાં કોદ્રવનો દૃષ્ટાન્ત લાગુ પડે છે. આ દૃષ્ટાન્તનો સમન્વય પહેલાં જ
કર્યો આપ્યો છે.

अर्हंतधर्म एव श्रद्धेय इति बोधयितुं श्रीसुधर्मास्वामी कथयति—‘से वेमि’ इत्यादि ।

मूलम्—से वेमि, जे अईया जे य पडुप्पन्ना जे य आगमि-
स्सा अरहंता भगवंतो ते सव्वेवि एवमाइक्खंति एवं भासंति
एवं पण्णवित्ति एवं परूवित्ति—सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे
जीवा सव्वे सत्ता न हंतव्वा, न अज्जावेयव्वा, न परिघेत्तव्वा,
न परियावेयव्वा, न उद्वेयव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तद् ब्रवीमि, ये अतीता ये च प्रत्युपन्नाः ये चागमिष्यन्तः अर्हन्तो
भगवन्तस्ते सर्वेऽपि एवमाख्यान्ति, एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति—
सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वाः न हन्तव्याः, न आज्ञापयितव्याः,
न परिग्रहीतव्याः, न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः ॥ सू० ॥ १ ॥

तीर्थकरैर्गणधरैश्च स्वस्वशिष्येभ्यो यत् सम्यक्त्वमुक्तं तदहं ब्रवीमि=कथयामि ।
यद्वा—‘से’ इत्यस्य स इतिच्छाया । येन मया भगवतः श्रीवर्धमानस्वामिन-
स्तीर्थकरस्य सकाशे तद्वचनेन तत्त्वज्ञानं लब्धं, सोऽहं ब्रवीमि । भगवदुक्तमेवार्थं
कथयामि, तस्मान्मम वाक्यं श्रद्धेयमिति भावः ।

अर्हन्त प्रभुके द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करनेके योग्य है । इस
वातका प्रतिबोध करानेके लिये श्रीसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं—
—‘से वेमि’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तीर्थङ्करों ने एवं गणधरादिकों ने अपने २ शिष्योंके लिये
जिस सम्यक्त्वका उपदेश दिया है उसी सम्यक्त्वका मैं व्याख्यान करता
हूँ । अथवा भगवान् श्रीवर्धमान तीर्थङ्कर के निकट जो उनके वचनोंद्वारा
सुना है, वही मैं कहता हूँ, किन्तु अपनी तर्फसे कुछ भी नहीं कहता हूँ ।

‘अर्हन्त प्रभुद्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करवायेज्य छे’ आ वातने
प्रतिबोध करवाने भाटे श्री सुधर्मास्वामी कहे छे—‘से वेमि’ इत्यादि.

हे जम्बू ! तीर्थङ्करोन्ते तेम ही गणधरादिकोन्ते पोतपोताना शिष्योने भाटे
जे सम्यक्त्वने उपदेश आये छे ते सम्यक्त्वनु हुं पणु व्याख्यान करूं छुं
अथवा भगवान् श्री वर्धमान तीर्थङ्कर पासे तेमना वचनोथी जे साबज्य छे ते
हुं कहुं छुं पणु भारी तरङ्गी कछ पणु कहेतो नथी.

અતીતાઃ=અતીતકાલિકા અનન્તાઃ, યે ચ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ-પશ્ચ
મરતેષુ પશ્ચૈરવતેષુ પશ્ચમહાવિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, ય ચ આગમિષ્યન્તઃ=મવિષ્યત્કાલે
આગમિનોઽનન્તાઃ, સે સર્વે=અર્હન્તો મગવન્ત એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, આસ્થાન્તિ=
પરમભાવસરે કથયન્તિ ।

અપ્ર વર્તમાનગ્રહણમુપસંહર્ષ, તેનાતીતાનાગતયારપિ ગ્રહણમ્ । તથા ચ-એન્માચ
સ્થુઃ, એવમાસ્થાસ્યન્તીત્યપિ યોજનીયમ્ । એવં સર્વત્ર ક્રિયાસુ યોજનીયમ્ । તથા-
એષ માપન્તે=સુરનરપરિપદિ સર્વભીષાનાં સ્વસ્વમાપાપરિણામિન્યાઽર્ધમાગધ્યા
માપયા બ્રુવન્તિ । તથા-એષ પ્રજ્ઞાપયન્તિ=હેતુદ્દણ્ણાન્તાદિના પ્રકર્ષેષ્વ બોધયન્તિ । તથા
-એવં પ્રરૂપયન્તિ=તત્ત્વદ્વેદં પ્રદર્શ્ય પ્રકર્ષેણ નિર્ણયન્તિ ।

અતીતકાલ મેં જિતને મી અનન્ત તીર્થક્રૂર હુણે હૈં, તથા પાંચ ખરત, પાંચ
પેરવત ઓર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જિતને વિચમાન હૈં, ઓર
મવિષ્યત્કાલમેં જિતને મી તીર્થક્રૂર હોંગે ડન મયોને દુસરોં કે પ્રજ્ઞાવસરમેં
હુસી પ્રકાર સે કહા હૈ, કહતે હૈં ઓર કહોંગે । યહાં પર “ આસ્થાન્તિ ”
યહ વર્તમાનકાલિક ક્રિયા હૈ, હસસે મૂત ઓર મવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયા
મી સમસ્ત લેના ચાહિયે । આંગે મી જહાં પર વર્તમાન ક્રિયાપદ્ધત પ્રયોગ
હો, વહાં પર મૂત ઓર મવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયાપદ્ધત ઉપલક્ષણ સે અધ્યા
હાર કર લેના ચાહિયે ।

“ એવં માપન્તે ” ડન સમસ્ત તીર્થક્રૂર મહાપ્રમુખોને દેવ, મનુષ્યોં
કી સમામેં અપની અર્ધમાગધી માપાકે દ્વારા, જો માપા સમસ્ત જીવોંકી
માપામેં પરિણત હો જાતી હૈ; હસ પ્રકાર સ્પષ્ટ કહા હૈ ।

અતીતકાળમા જેટલાં પશુ અન ત તીર્થક્રૂર થયાં છે તથા પાંચ ખરત પાંચ એર-
વત અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમા જેટલાં વિચમાન છે અને ભવિષ્યકાળમા જેટલાં
પશુ તીર્થક્રૂર થશે તે બધા બીભના પ્રજ્ઞાવસરમાં આ પ્રકારથી કહ્યું છે, કહે છે
અને કહેશે. આ ઠેકાણે “ આસ્થાન્તિ ” તે વર્તમાનકાલિક ક્રિયા છે એથી મૂત
અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા પણ સમજી લેવી એમજે. આગળ પણ જે ઠેકાણે
વર્તમાનકાલિક ક્રિયાપદ્ધતે પ્રયોગ છે ત્યાં પણ મૂત અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા
પરનો ઉપલક્ષણથી અધ્યાહાર કરી લેવો એમજે.

“ એવં માપન્તે ” આ પ્રમત્ત તીર્થક્રૂર મહાપ્રમુખોએ દેવ મનુષ્યોની સભાગા
થેતાની અર્ધમાગધીભાષાદ્વારા-જે ભાષા સમસ્ત જીવોની ભાષામાં પરિણત થઈ
ભાય છે-આ પ્રકારે સ્પષ્ટ કહ્યું છે

सर्वेऽर्हन्तो भगवन्त एवं किमाख्यान्तीति जिज्ञासायामाह—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि । सर्वे=निरवशेषाः प्राणाः=प्राणिनः पृथिव्यादयः स्थावराः, द्वीन्द्रियादि-पञ्चेन्द्रियपर्यन्ताः त्रसाश्चेत्यर्थः, इन्द्रियादिप्राणानां यथासंभवं धारणात् तेषु प्राणित्वमस्तीति भावः । तथा सर्वे भूताः=भवन्ति भविष्यन्त्यभूवन्निति च भूताः चतुर्दश-भूतग्रामरूपाः, तथा—सर्वे जीवाः=जीवन्ति जीविष्यन्त्यजीविषुरिति जीवाः नार-कतिर्यङ्मनुष्यदेवरूपाश्चतुर्गतिकाः, तथा सर्वे सत्त्वाः=स्वकृतकर्मजन्यसुखदुःख-सत्तावन्तः । तत्त्वानां भेदपर्यायैः प्रतिबोधनमर्हन्तो भगवन्तः कुर्वन्तीति कृत्वा पर्यायश-ब्दनिर्देशः । यद्वा—सर्वप्राणिषु पुनः पुनर्दयाभावसमुत्पादनाय पर्यायशब्दनिर्देशः । न हन्तव्याः=दण्डादिभिर्न ताडयितव्या इत्यर्थः । नाज्ञापयितव्याः=अनभिमतकार्येषु न प्रवर्तयितव्याः, न परिग्रहीतव्याः=इमे भृत्यादयो ममेति कृत्वा परिग्रहरूपेण स्वाधीन-तया न स्वीकर्तव्याः, न परितापयितव्याः=न अन्नपानाद्यवरोधनेन ग्रीष्मातपादौ स्थापनेन च पीडनीयाः, नापद्रावयितव्याः=न विषशस्त्रादिना मारयितव्याः ॥सू० १॥

‘एवं प्रज्ञापयन्ति’ हेतु दृष्टान्तादिक के द्वारा अच्छी तरह से समझाया है, और ‘एवं प्ररूपयन्ति’ भेदप्रभेदपूर्वक स्पष्ट रीति से निर्णय किया है ।

समस्त तीर्थङ्करों ने क्या कहा ? इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर भगवान् कहते हैं—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि ।

समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जीव और समस्त सत्त्वों को अर्थात् किसी को भी ‘न हन्तव्या’ डंडे आदि से न हने । ‘न अज्जावे-यव्वा’ न इनको मारनेके लिये आज्ञा दे । ‘न परिघेतव्वा’ ‘ये भृत्यादिक मेरे अधीन हैं’ ऐसा समझ कर उन्हें दास नहीं बनावें । ‘न परियावेयव्वा’ अन्नपानी आदि बंध करके तथा धूप आदिमें रख कर न पीड़ा पहुंचावे ‘न किलामेयव्वा’ बन्धनादि से न खेद पहुंचावे ‘न उद्वेयव्वा’ इनका

‘एवं प्रज्ञापयन्ति’ हेतुदृष्टान्तादिकथी सारी रीते समज्जव्यु छे अने

“ एवं प्ररूपयन्ति ” लेदप्रभेदपूर्वक स्पष्ट रीतिथी निर्णय कर्यो छे

समस्त तीर्थङ्करोणे शुं कहु ? आ प्रकारनी ज्ञाणुवानी छिच्छा थावाथी जग-वान् कहे छे—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि

समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जीव अने समस्त सत्त्वोने अर्थात् कोछने पणु ‘न हन्तव्या’ लाकडी आदिथी न मारे ‘न अज्जावेयव्वा’ न मारवाने भाटे आज्ञा आपे, ‘न परिघेतव्वा’ ‘आ नोकरादि भारी आज्ञाभा छे’ ओणु समज्जने तेओने दास न अनावे ‘न परियावेयव्वा’ अन्न पाणी आदि बंध करीने तथा तडका आदिमा शभीने न पीडा पहुंचावै ‘न किलामेयव्वा’ बंधनादिथी भेद न

ધિપ શાસ્ત્રાદિક સે પ્રાણધિયોગ ન કરે । પ્રાણી, મૂત, જીવ ઓર સસ્ત્ર, યે યથાપિ જીવ કે હી પર્યાયવાધી શબ્દ હૈ, ફિર મી મિસ્તર રૂપસે જો इनका यहां पर निर्देश किया है वह पर्यायमेव मान कर ही किया है, और पर्यायमेव से अर्थमेव होता है इसलिये यहां पुनरुक्ति दोषकी संभावना नहीं है । जो इन्द्रियादિક दश प्राणोंको यथासंभव धारण करते हैं वे प्राणी कहलाते हैं । वे त्रस और स्यावरके मेव से दो प्रकारके होते हैं । प्रीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियपर्यन्त जीव त्रस, और एकेन्द्रिय-पृथिवीकायादिक जीव स्यावर हैं । ये सय हैं, होंगे एवं हुय हैं, इसलिये मूत कहलाते हैं । ये चौदह प्रकारके हैं । ये सय जीते हैं, आगे भी जीयेंगे और मूतकाल में जीये, इसलिये इनकी 'जीव' संज्ञा सार्थक है । नारकी, तिर्यज, मनुष्य और देवके मेवसे ये चार गतिवाले हैं । तथा ये समस्त ही अपनेर कर्मोदयजन्य सुख दुःखोंकी मत्तावाले होते रहते हैं; इसलिये सस्त्र हैं ।

तीर्थङ्कर प्रभુ તત્ત્વોં કી વિવેચના, મેવ ઓર પર્યાયોં કે દ્વારા કિયા કરતે હૈ, इस कारणसे पर्याय-शब्दोंका निर्देश किया गया है । अथवा 'सर्व जीवों के ऊपर अत्यन्त दया रखनी चाहिये' इस बातको पार पार समझाने के अभिप्राय से मी इन पर्याय शब्दोंका कथन है ॥ सू० १ ॥

પહેલાંઆડે. 'મ સર્વેયજ્ઞા' તિપ શાસ્ત્રાદિકથી તેના પ્રાણોનો વિયોગ ન કરે પ્રાણી, મૂત, જીવ અને સત્ત, આ બધા શબ્દો એ કે જીવના જ પર્યાય શબ્દો છે તે પણ કિત્ત કિત્ત રૂપથી જોઓનો આ ઠેકાણે નિર્દેશ કર્યો છે તે પર્યાયલેહ માનીનેજ કર્યો છે અને પર્યાયલેહથી અર્થલેહ થાય છે માટે આ ઠેકાણે પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના નથી જે ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોને યથાસંભવ ધારણ કરે છે તે પ્રાણી કહેવાય છે તે ત્રસ અને સ્યાવરના લેહથી બે પ્રકારે હોય છે એકેન્દ્રિયથી છઠને પચેન્દ્રિયપર્યન્ત જીવ ત્રસ અને એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાયાદિક જીવ સ્યાવર છે આ બધા-છે- ઘરો તેમજ ઘજોલ છે, તેથી મૂત કહેવાય છે તે ચોથ પ્રકારના છે એ બધા જીવે છે આગળ પચુ જીવરો અને મૂતકાળમાં જીવ્યા તેથી તેની 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક છે નારકી, તિર્યજ, મનુષ્ય અને દેવના લેહથી એ ચાર ગતિવાળા છે તથા એ સમસ્ત પાતપોતાનાં કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોની સત્તાવાળા હોય છે તેથી સત્ત છે

તીર્થંકરપ્રભુ તત્ત્વોની વિવેચના, લેહ અને પર્યાયો દ્વારા કરે છે આ ખ્યાલથી પણ પર્યાય-શબ્દોનો નિર્દેશ કરવામા આવ્યો છે અથવા 'સય જીવોની ઉપર અત્યંત દયા રાખવી જોઈએ' આ વાતને વારંવાર સમજાવવાના અભિપ્રાયથી આ પર્યાય-શબ્દોનું કથન છે ॥ સૂ० ૧ ॥

सम्यक्त्वमुद्गावयितुम् आर्हतधर्मस्य महिमानमाह—‘एस धम्ममे’ इत्यादि ।

मूलम्—एस धम्ममे सुद्धे निइए सासए समिच्च लोयं खेय-
ण्णेहिं पवेइए, तं जहा—उट्टिएसु वा अणुट्टिएसु वा, उवट्टिएसु
वा अणुवट्टिएसु वा, उवरयदंडेसु वा अणुवरयदंडेसु वा, सोवहि-
एसु वा अणोवहिएसु वा, संजोगरएसु वा असंजोगरएसु वा । सू० २॥

छाया—एष धर्मः शुद्धः नित्यः शाश्वतः समेत्य लोकं खेदज्ञैः प्रवेदितः । तद्
यथा—उत्थितेषु वा अनुत्थितेषु वा, उपस्थितेषु वा अनुपस्थितेषु वा, उपरतदण्डेषु
वा अनुपरतदण्डेषु वा, सोपधिकेषु वा अनुपधिकेषु वा, संयोगरतेषु वा
असंयोगरतेषु वा ॥ सू० २ ॥

टीका—एषः=अनन्तरोक्तः सर्वार्हद्भगवत्प्ररूपितः, धर्मः=सर्वप्राणिप्राणातिपा-
तविरमणादिरूपः, शुद्धः=निर्मलः—पापानुबन्धरहित इत्यर्थः । आर्हतधर्मादन्यस्तु
धर्मत्वेन यः शाक्यादेरभिमतः स खल्वसर्वज्ञसरागोपदिष्टत्वेन हिंसादिदोषानुब-
न्धसद्भावेन च न शुद्ध इति भावः ।

सम्यक्त्वका उद्गावन करनेके लिये जिनेन्द्रप्रतिपादित धर्मकी महिमा
कहते हैं—‘एस धम्ममे’ इत्यादि ।

समस्त जीवों के घात करनेका निषेधरूप यही धर्म—जिसे समस्त
तीर्थङ्करोंने प्रतिपादित किया है—पापानुबन्ध से रहित होनेसे निर्मल है,
इसके अतिरिक्त बौद्धादिकों का अभिमत जो सिद्धान्त है वह हिंसादि-
दोषविशिष्ट होनेसे निर्मल नहीं है; यह बात ‘निर्मल’ इस पद से प्रकट
होती है । पञ्चमहाविदेहों में सदा वर्तमान होने के कारण यह अविनाशी-
ध्रौव्यस्थितिवाला है, शाश्वतगति—मोक्षका कारण होनेसे, अथवा नित्य
होनेसे यह शाश्वत है, अतः यही धर्म श्रद्धा करने योग्य एवं ग्रहण करने

सम्यक्त्व प्रगट करवा माटे लुनेन्द्र प्रतिपादित धर्मनो महिमा कहे छे—
‘एस धम्ममे’ इत्यादि

समस्त लुवोना घात करवाना निषेधइय आ न धर्म के नेने समस्त
तीर्थङ्करोने प्रतिपादित क्यो छे, पापानुबन्ध रहित होवाथी निर्मल छे ओनाथी
अतिरिक्त बौद्धादिकोने अभिमत के सिद्धात छे ते हिंसादिदोषविशिष्ट
होवाथी निर्मल नथी, आ बात “निर्मल” आ पदथी प्रगट थाय छे पय-
महाविदेहोमा सदा वर्तमान होवाथी आ अविनाशी—ध्रुव स्थितिवाणो छे शाश्वत-
गति—मोक्षनु कारण होवाथी, अथवा नित्य होवाथी ते शाश्वत छे तेथी आ न

અતઃ પૈવ નિત્યઃ=અવિનાશી, સર્વદા પશ્યતુ મહાવિદેહેષુ સદ્માયાત્ । તથા
શાશ્વતઃ શાશ્વતગતિકારણત્વાત્, યદ્વા-યતો નિત્યસ્તસ્માન્શાશ્વતઃ । અયમેવ ધર્મો
અદેયો પ્રાણમેત્યત્ર હેતુ મદર્શનન્ વિશેષણાન્તરમાહ-‘સમેત્ય’ ઇત્યાદિ । સાદ્=
પદ્મજીવનિકાયં દુઃસ્વદાયાનલ્લાન્તઃપતિતં, સમેત્ય=કેવલજ્ઞાનેન પ્રત્યક્ષતયા વિજ્ઞાપ,
સ્વેદમૈ=સર્વપ્રાણિદુઃસ્વામિઙ્ઘૈસ્તીર્થકરૈઃ, પ્રવેદિતઃ=પ્રતિષ્ઠાપિતઃ । ધર્મોઽયં મયા ન
સ્વમનીપાકસ્પિત ઇતિ ચ મુધર્મસ્વામિના શિષ્યમુષિષ્ય સુચિતમ્ ।

તીર્થક્રમણામુપદેશો યથા મવતિ, તં પ્રકારમાહ-તદ્ યથેત્યાન્તિ । યથા=એવ
પ્રકારેણ તત્ પ્રતિષ્ઠાપિતં તત્ મદર્શયामीત્યર્થ । ઉત્પિતેષુ વા-ઉત્પિતાઃ=ધર્માચ-
રણાર્પિણપતાઃ, તેષુ વા, તથા-અનુત્પિતેષુ=અનુત્પિતા -ઉદ્ધિપરીતાસ્તેષુ વા । ઉત્પિ-
તાઽનુત્પિતસાધારણસ્વરૂપદેશો મવતીત્યર્થઃ ।

યોગ્ય છે । યદ્ અન્ય વિશેષણો કે દ્વારા શુભાસા કરતે હુણ શ્રીસુધર્માસ્વામી
કહતે હૈં કિ-સમસ્ત જીવોં કે નાના પ્રકારકે વહેણોકિ જ્ઞાતા શ્રીતીર્થક્રમ
પ્રમુને દુઃસ્વરૂપી દાવાનલસે જલસે હુણ ઇસ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ લોક
કો અપને કેવલજ્ઞાનસે પ્રત્યક્ષ કર ઇસી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા હૈ, અતા
ધર્મકે આદિ પ્રવર્તક શ્રી તીર્થક્રમ પ્રમુ હી હૈં । ઇસ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી
અપને શિષ્ય જમ્બુસ્વામીસે સૂચિત કિયા હૈ કિ મૈને અપની કલ્પના સે
કુછ શ્રી નહીં કહા હૈ ।

અન તીર્થક્રમોંકા ઉપદેશ-પ્રવાહ જિસ એકરૂપસે જહાં ૨ વદ્વા ઉસી
કો પ્રકટ કરતે હુણ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-અનકા ઉપદેશ સિર્ફ
અન્હીં જીવોંકે લિયે નહીં હુઆ જો ધર્માચરણ કરનેમેં ઉત્પિત-ઉચ્ચત યે,
કિન્તુ જો અનુત્પિત-અનુષ્ઠત યે અન્હીં શ્રી પ્રમુને ધર્મ સમજાયા, અર્થાત્

ધર્મ મદ્વા ઠસ્વા યોગ્ય અને મદ્વાજી ઠસ્વામાય છે આ વાતનો અન્ન વિશેષણોદ્વાર
પ્રુલાસો કરતા શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે-સમસ્ત જીવોના નાના પ્રકારના કલેશોના
સાતા શ્રી તીર્થક્રમપ્રમુએ દુઃખરૂપી દાવાનગથી બળતાં આ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ
લોકને પોતાના કેવલજ્ઞાનથી પ્રત્યક્ષ કરીને આ જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો ।
એથી આ ધર્મના આદિપ્રવર્તક શ્રી તીર્થક્રમપ્રમુ જ છે આ પ્રકારે શ્રીસુધર્માસ્વામી
પોતાના શિષ્ય જમ્બુસ્વામીને સૂચિત કરે છે કે-શ્રી મારી પોતાની ઠક્વનાથી
કાંઈ પણ નથી કહ્યું.

આ તીર્થક્રમનો ઉપદેશ-પ્રવાહ જે એકરૂપથી બન્યાં બન્યાં યથો તેને જ
પ્રકાશિત કરતાં શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે-એમનો ઉપદેશ કેવલ તેવા જીવો માટે
નથી યથો કે જે ધર્માચરણ કરવામા ઉચ્ચત હતા, કિન્તુ જે જીવો ધર્માચરણ
કરવામા અનુષ્ઠત હતા તેમને પણ પ્રમુએ ધર્મ સમજાવ્યા, અર્થાત્ એમનો ઉપ-

યદ્વા—દ્રવ્યતઃ યે ઉત્થિતાઃ, અનુત્થિતાઃ, તેષુ તેષુ વા । યથા—ઉત્થિતેષ્વે-
કાદશસુ ગણધરેષુ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના ભગવતા ધર્મ ઉપદિષ્ટઃ । અનુત્થિતેષુ યથા
ચણ્ડકૌશિકાદિષુ । તથા—ઉપસ્થિતેષુ વા =ધર્મે શ્રોતું ગ્રહીતું વા યે વાઙ્મનિ
તે ઉપસ્થિતાસ્તેષુ વા, યથા ચિલાતિપુત્રાદિષુ । અનુપસ્થિતેષુ વા=તદ્વિપરીતા
અનુપસ્થિતાઃ તેષુ વા, યથા—ઈન્દ્રનાગાદિષુ, અનિચ્છયાઽપિ શ્રવણેન કર્મપરિણામ-
વૈચિત્ર્યાત્ તેષાં ક્ષયોપશમસંભવાત્, યથા રોહકચોરસ્ય ક્ષયોપશમઃ સંજાતઃ ।
ઉપસ્થિતાનુપસ્થિતેષ્વપિ સમાનસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

उनके उपदेशका प्रवाह उभयसाधारण (दोनोंके लिये समान) था । अथवा
जो जीव धर्माचरण से उस समय बाह्य भी थे, किंतु भगवानके दिव्य उप-
देशका पान कर जो सुमार्ग में आनेकी योग्यता रखते थे; उन्हें भी प्रभुने
धर्मका उपदेश दिया । जैसे—ग्यारह (११) गणधर जो द्रव्यतः उत्थित थे
उन्हें श्रीवर्धमानप्रभुने सद्धर्मका स्वरूप समझा कर सन्मार्गगामी किया ।
अनुत्थितों में भी इसी प्रकार से प्रभुके उपदेशका प्रवाह बहा है,
जैसे चण्डकौशिकादिकों में । धर्मको सुननेकी अभिलाषा रखनेवाला
चिलातिपुत्रादिकोंको, और अनुपस्थित—इससे बहिर्भूत इन्द्रनागा-
दिकों को भी प्रभुने अपने धर्मके उपदेशका पान कराया है । धर्मके
जाननेकी अभिलाषा से रहित प्राणी को भी जो धर्म सुनाया जाता
है उसका कारण यही है कि जिस प्रकार अनिच्छा से पिया हुआ
भी अमृत अपने गुणको प्रकट करता है उसी प्रकार श्रुतधर्म भी कर्म के
परिणामकी विचित्रता से क्षयोपशम का कारण होता हुआ अपना प्रभाव

દેશપ્રવાહ બનેને માટે સાધારણ—બરાબર છે અથવા જે જીવો ધર્માચરણથી
તે વખત બહાર પણ હતા, કિન્તુ ભગવાનના દિવ્ય ઉપદેશનું પાન કરીને જે
સુમર્ગમાં આવવાની યોગ્યતા રાખતા હતા, તેને પણ ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો
જેમ ગ્યારહ (૧૧) ગણધરે જે દ્રવ્યથી ઉત્થિત હતા તેઓને શ્રીવર્ધમાન પ્રભુએ
સદ્ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવીને સન્માર્ગ તરફ વાળ્યા અનુત્થિતોમાં પણ આ પ્રકારે
પ્રભુનો ઉપદેશપ્રવાહ આવ્યો છે, જેમ ચક્રકૌશિકાદિકોમાં ઉપસ્થિત—ધર્મને
સાલણવાની અભિલાષા રાખવાવાળા ચિલાતિપુત્રાદિકોને, અને અનુપસ્થિત—
એનાથી બહિર્ભૂત ઇન્દ્રનાગાદિકોને પણ પ્રભુએ પોતાના ધર્મના ઉપદેશનું પાન
કરાવ્યું છે ધર્મ સાલણવાની અભિલાષાથી રહિત પ્રાણીને પણ જે ધર્મ સાલણા-
વવામાં આવે છે તેનું કારણ એ જ છે કે જે પ્રકારે અનિચ્છાથી પિવાયેલું પણ
અમૃત પોતાના ગુણને પ્રગટ કરે છે, તે જ પ્રકારે શ્રુતધર્મ પણ કર્મના
પરિણામની વિચિત્રતાથી ક્ષયોપશમનું કારણ થતા પોતાનો પ્રભાવ પ્રગટ કરે છે.

તથા-ઉપરતદ્વંષ્ટેષુ યા-એકેન્દ્રિયાદીન્ પ્રાપ્તિનો દૃષ્ટયતીતિ દૃષ્ટો મનોવા કાયરૂપઃ, ઉપરતો દૃષ્ટો યર્ષાં તે ઉપરતદ્વંષ્ટાઃ-મુનયઃ, તેષુ યા, તદ્વિપરીતા અનુપરતદ્વંષ્ટા-ગૃહસ્થાઃ, તેષુ યા । एतदुभयसाधारणोऽप्युપदेसस्तेषामित्यर्थः ।

તથા-સોપધિકેષુ યા इति । उपधीयते=गृह्यते इत्युपधिः द्रव्यतो हिरण्यमुखाणांदिः, मानतो रागद्वेषादि, सहोपधिना वर्तन्त इति सोपधिका-भरतादयस्तेषु યા । अनुपधिकेषु યા=न विद्यते उपधिर्येषां तेषु उपधिकाઃ-કાદૃશાદયસ્તેષુ યા । एतद्वयेऽपि तीर्थकरोपदेशः समान एव भवतीत्यर्थः ।

પ્રકટ કરતા હૈ । इस विषयमें रोहतक चोरका इष्टान्त शास्त्रों में प्रसिद्ध ही है । इसी प्रकार उपस्थितों और अनुपस्थितों में, उपरतदंडवालों में और अनुपरतदंडवालों में, सोपधिकों में और निरुपधिकों में, तथा संयोगरतों में और असंयोगरतों में भी प्रभुका धार्मिक उपदेश एक ही तरीखा हुआ है । जो प्रभु का धार्मिक उपदेश सुननेकी अभिलाषासे समवसरण में आते हैं वे 'उपस्थित' कहलाते हैं, और इससे विपरीत 'अनुपस्थित' । एकेन्द्रियादिक स्थावर और द्वीन्द्रियादिक अस जीवों की हिंसाके कारणभूत मानसिक, धार्मिक एवं कायिक व्यापारों से जो निवृत्त हो चुके हैं वे 'उपरतदण्ड' कह जाते हैं, जैसे मुनिराज । इससे उल्टे 'अनुपरतदण्ड' हैं जैसे गृहस्थ । जो ब्रह्मण की जावे उसे 'उपधि' कहते हैं । यह दो प्रकार की है-एक 'द्रव्य-उपधि' दूसरी 'भाव-उपधि' । 'द्रव्य-उपधि'-हिरण्यसुवर्णादि, और 'भाव-उपधि' रागद्वेषादि हैं । इस उपधिसे युक्त जो होते हैं वे 'सोपधिक' जैसे भरतादिक, और इस उपधिसे रहित जो हैं

આ વિષયમાં રોહતક ચોરનો ઇષ્ટાન્ત શાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ છે. આ પ્રકારે ઉપસ્થિતો અને અનુપસ્થિતોમાં, ઉપરતદડવાળામાં અને અનુપરતદડવાળામાં, સોપધિકોમાં અને નિરુપધિકોમાં, તથા સંયોગસ્તોમાં અને અસંયોગસ્તોમાં પણ પ્રભુને ધાર્મિક ઉપદેશ એક જ સરખો છે જે પ્રભુને ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળવાની ભાવનાથી સમવસરણમાં આવે છે તેઓ 'ઉપસ્થિત' કહેવાય છે. અને તેનાથી વિપરીત અનુપસ્થિત એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર અને બેન્દ્રિયાદિક અસ જીવોની હિંસના કારણભૂત માનસિક ધાર્મિક અને કાયિક વ્યાપારોથી જે નિવૃત્ત થઈ ચુકેલાં તે ઉપરતદણ્ડ કહેવાય છે જેમ મુનિઓ. બેનાથી ઉલટા "અનુપરતદણ્ડ" છે જેમ ગૃહસ્થો. જે પ્રભુ કસ્યામાં આવે તેને 'ઉપધિ' કહે છે આ જે પ્રકારની છે એક દ્રવ્ય-ઉપધિ અને બીજી ભાવ-ઉપધિ. દ્રવ્ય-ઉપધિ હિરણ્યસુવર્ણાદિ અને ભાવ-ઉપધિ રાગદ્વેષાદિ છે. આ ઉપધિસંધિત જે હોય છે તે 'સોપધિક' જેમ

તથા-સંયોગરતેષુ વા-સંયોગઃ પુત્રકલત્રાદિસમ્બન્ધસ્તસ્મિન્ રતા=આસક્તાઃ
સંયોગરતાઃ=ગૃહસ્થા દેશવિરતિશ્રાવકાસ્તેષુ વા । અસંયોગરતેષુ-અસંયોગઃ=સંયમ-
સ્ત્ર રતા અસંયોગરતાઃ=ઉપશમશ્રેણ્યાદિસમ્પન્નાસ્તેષુ વા । એતદુભયવિદ્રેષ્વપિ
સમાન એવ તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

અયં ભાવઃ—તીર્થકરાણામુપદેશઃ સૂર્યોદય ઇવ પ્રવોદ્યવિશેષમનપેક્ષ્ય પ્રવ-
ર્તેતે, તસ્માત્ તત્ર નાસ્તિ રાગદ્વેષપક્ષપાતાદિદોષલેશાવસર ઇતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વસ્ય સ્વરૂપમાહ—‘તત્ત્વં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્ત્વં ચેયં તહા ચેયં અસ્મિંસ ચેયં પવુચ્ચઈ ॥સૂ૦૩॥

છાયા—તથ્યં ચેદં તથા ચેદં અસ્મિંશ્ચેદં પ્રોચ્યતે ॥મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—ઈદં=ભગવદ્વચનં તથ્યં ચ=સત્યમેવ । અત્ર મૂત્રે ચકારો નિયમાર્થઃ ।

વે ‘નિરુપધિક’ હૈં, જૈસે કઠિયારાદિક । પુત્રકલત્રાદિક કે મોહમેં જો
ફંસે હુએ હૈં એસે ગૃહસ્થ ‘સંયોગરત’ જૈસે દેશવિરતિ શ્રાવક, ઔર ઇન્કે
ત્યાગી સંયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહલાતે હૈં જૈસે ઉપશમશ્રેણ્યાદિસંપન્ન ।
ઇસકા ફલિતાર્થ યહી હૈં કિ જિસ પ્રકાર સૂર્યકા ઉદય ઝંચનીચ કે પક્ષપાત
સે રહિત હો કર સમસ્ત જગતકો પ્રકાશ દેતા હૈં ટીક ડસી તરહ પ્રમુકા
દિવ્ય ધાર્મિક ઉપદેશ મી ઉત્થિત ઔર અનુત્થિતાદિકોં કે પક્ષપાત વિના
સમસ્ત જીવોંકે હિતકે લિયે એક હી જૈસા હોતા હૈં, કારણ કિ પક્ષપાતા-
દિદોષોં કો કારણ રાગદ્વેષ હી હૈં, ઔર પ્રમુ વીતરાગી હૈં, ઇસલિયે વે
પક્ષપાતાદિ દોષોં સે રહિત હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વ કે સ્વરૂપ કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—
‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થકર પ્રમુકે વે વચન સત્ય હી હૈં, કારણ કિ જિન પ-

ભરતાદિક અને આ ઉપધિરહિત એ છે તે ‘નિરુપધિક’ છે, જેમ કઠિયારાદિક
પુત્રકલત્રાદિના મોહમા એ ફંસેલા છે એવા ગૃહસ્થી ‘સંયોગરત’ જેમ દેશવિરતિ
શ્રાવક અને તેના ત્યાગી સયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહેવાય છે, જેમ ઉપશમ-
શ્રેણ્યાદિસંપન્ન એનો ભાવ એ છે કે જેમ સૂર્યનો ઉદય ઉચનીચના પક્ષપાતથી
રહિત થઈને સમસ્ત જગતને પ્રકાશ આપે છે તે જ માફક પ્રમુનો દિવ્ય ધાર્મિક
ઉપદેશ પણ ઉત્થિત અને અનુત્થિતાદિકોના પક્ષપાતથી રહિત થઈને સમસ્ત
જીવના હિતને માટે એક જ સરખો હોય છે, કેમ કે પક્ષપાતાદિ દોષોનું
કારણ રાગ-દ્વેષ જ છે અને પ્રમુ વીતરાગી છે, તેથી તે પક્ષપાતાદિદોષથી
રહિત છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને પ્રકટ કરીને શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે—‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ
ભગવાન તીર્થકર પ્રમુના તે વચનો સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું જે

इदं=तद्वाक्यार्थरूपं वस्तु, तथा च=तथैव-तीर्थंकरमगवद्भूमिर्यया परुषितं तथैव
 वस्तुसम्भावोऽपीत्यर्थः । एकेन्द्रियादिपञ्चेन्द्रियान्ता स्थावरप्रसरूपा सर्वे प्राणिनो
 न इन्तव्याः, एष धर्मा शुद्धो नित्यः शाश्वत इत्यादि यथा परुषितं तद्वाक्यार्थोऽपि
 तथैव विद्यते, तस्मात् सत्यमेवेदं वचनमिति भावः । अनेन भद्दानलक्षणं सम्पत्स्व
 परुषितम् । अस्मिन्नेदं प्रोच्यते इति-इदं=भद्दानलक्षणं सम्पत्स्वम्, अस्मिन्=
 आर्हतप्रवचनविषय एव प्रोच्यते=विशेषतया प्रकर्षणोपदिश्यते । केवस्मादित
 प्रवचनविषये पुनः पुनरतिशयन वा भद्दानलक्षणं सम्पत्स्वमास्थेयमित्युपदिश्यते
 तिर्यकरित्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

વાર્થોના જિસ સ્વરૂપના ભગવાનને અપની દિવ્યબાણીદ્વારા પ્રતિપાદન
 ક્રિયા છે અને પદાર્થોના સ્વરૂપ ઓર ઊનના અસ્તિત્વ ઊસી પ્રકાર સે હૈ
 અન્યથા નહીં । હસ પ્રકારના તત્વાર્થભદ્દાનરૂપ સમ્પત્સ્વ સિર્ફ અર્હન્ત
 પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોમેં હી કિયામ રચને સે જીર્થોનો
 પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

હસ સૂત્રમેં ત્રીન વાર “ચ” શબ્દના પ્રયોગ ક્રિયા હૈ બહુ નિયમ
 ના ચોતક હૈ । હસસે યહ સમજામા ચાહિયે કિ ભગવાનને જો ત્રસ સ્થા-
 વર જીર્થોનો નહીં મારનેરૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મ કે ઉપદેશરૂપ
 વચન કહે હૈં એ સત્ય હૈં । કારણ કિ જિન પદાર્થોના પ્રતિપાદન પ્રભુને
 અપની બાણી દ્વારા ક્રિયા હૈ અને પદાર્થોના સ્વરૂપ ઠીક વૈસા હી હૈ,
 અર્થાત્—ભગવાનને વચન હસલિયે પ્રમાણ હૈં કિ ઊન વચનો કે પ્રતિ
 પાદ્ય અર્થમેં કિસી બી પ્રકાર સે બિસવાસાદિક નહીં દેખા જાતા । અર્થ

સ્વરૂપમા ભગવાને પોતાની દિવ્ય બાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ
 અને તેનું અસ્તિત્વ તે પ્રકારનું જ છે અન્યથા નહિ. આ પ્રકારનું તત્વાર્થભદ્દાન
 રૂપ સમ્પત્સ્વ રૂપ અર્હન્તપ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોમા જ વિશ્વાસ રાખવાથી
 જીર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે

આ સૂત્રમા જે ત્રણ વાર “ચ” શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે નિયમનો
 ચોતક છે તેથી જે સમજવાનું છે કે ભગવાને જે ત્રસ સ્થાવર જીવને નહિ
 માત્રારૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મના ઉપદેશરૂપ વચન કહ્યું છે તે સત્ય જ
 છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું પ્રતિપાદન પ્રભુએ પોતાની બાણીદ્વારા કર્યું છે તે
 પદાર્થોનું સ્વરૂપ તેવું જ છે અર્થાત્ ભગવાનનું વચન એટલા માટે પ્રમાણ છે
 કે તે વચનોના પ્રતિપાદ્ય અર્થમા કોઈ પણ પ્રકારથી બિસવાસાદિક નથી દેખાતું

ઉક્તરીત્યા સમ્યક્ત્વરૂપં પ્રદર્શ્ય, તત્પ્રાપ્ત્યનન્તરં તત્ર સ્થિરીકરણાય સમ્યગ્દૃષ્ટેઃ કર્તવ્યં પ્રતિવોધયતિ—‘ તં આહત્તુ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—તં આહત્તુ ન નિહે ન નિક્ષિવે જાણિત્તુ, ધમ્મં

જહા—તહા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—તત્ આદાય ન નિહ્નુવીત, ન નિક્ષિપેત, જ્ઞાત્વા ધર્મં યથા—તથા ॥૪॥

ટીકા—તત્=સમ્યગ્દર્શનાપરનામકં સમ્યક્ત્વમ્, આદાય=ગૃહીત્વા પ્રાપ્યેતિ યાવત્, ધર્મ=શ્રુતચારિત્રરૂપં, યથા—તથા=યેન કેનાપિ પ્રકારેણ ગુરુપદેશાદિના જ્ઞાત્વા, યદ્વા—ધર્મં વસ્તુસ્વભાવં જ્ઞાત્વા ન નિહ્નુવીત, સમ્યક્ત્વં તત્કાર્યાઽકરણેન નાઽઽચ્છાદયેદિત્યર્થઃ । પ્રશમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાદિભિઃ સમ્યક્ત્વં પ્રકાશયેદિતિ

કી પ્રમાણતાસે હી વચનમેં પ્રમાણતા આતી હૈ । જવ પ્રતિપાદ્ય અર્થરૂપ ધાર્મિક ઉપદેશ વિસંવાદ આદિ સે રહિત હૈ તો ફિર ક્યોં નહીં ઉસકે પ્રતિપાદક વચનોં મેં સત્યતા આવેગી ? અવશ્ય હી આવેગી । ઇસ પ્રકારકી દૃઢ આસ્થા હી તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે સમ્યક્ત્વકા સ્વરૂપ પ્રકટ કર ઉસકી પ્રાપ્તિકે વાદ ઉસમેં સુસ્થિર કરનેકે લિયે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કા કર્તવ્ય પ્રકટ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ—‘ તં આહત્તુ ન નિહે ’ ઇત્યાદિ ।

જીવ ઉસ સમકિત કો પ્રાપ્ત કર ગુરુપદેશાદિકરૂપ જિસ કિસી મી પ્રકારસે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કો અથવા વસ્તુસ્વભાવકો જાન કર ઉસ સમકિત કો આચ્છાદિત નહીં કરે ઓર ન ઉસકો છોડે । સમકિત કો પ્રાપ્ત કર લેને પર સમકિતી જીવ કો પ્રશમ, સંવેગ, નિર્વેદ ઓર

અર્થની પ્રમાણતાથી જ વચનમા પ્રમાણતા આવે છે જ્યારે પ્રતિપાદ્ય-અર્થરૂપ ધાર્મિક ઉપદેશ વિસંવાદ આદિથી રહિત છે તો પછી તેના પ્રતિપાદક વચનોમા કેમ સત્યતા ન આવે ? અવશ્ય જ આવે. આ પ્રકારની દૃઢ આસ્થા જ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિથી સમ્યક્ત્વનુ સ્વરૂપ પ્રગટ કરીને તેની પ્રાપ્તિ પછી તેમા સુસ્થિર કરવાને માટે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવનુ કર્તવ્ય પ્રગટ કરતા શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે—‘ તં આહત્તુ ન નિહે ’ ઇત્યાદિ

જીવ તે સમકિતને પ્રાપ્ત કરી ગુરુ-ઉપદેશ આદિ કોઈ પણ પ્રકારે શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મને અથવા વસ્તુસ્વભાવને જાણીને તે સમકિતને ઢાકે નહિ, અને તેને છોડે પણ નહિ સમકિત મેળવ્યા પછી સમકિતી જીવને શમ, સંવેગ નિર્વેદ

માવ । ન નિસિપેદિતિ સત્ સમ્યક્ષ્વ ન સ્પજેત્ । યદિ સંસર્ગોદિના મિથ્યાદૃષ્ટ્યો મિથ્યાસ્ત્વ સ્થાપયેયુ , સદા સ્વાત્મનાઃ સામર્થ્યગુણં પ્રકાશયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા—ન નિસિપેદિતિ—નિષ્કેપણં=છર્વનં વમનમિત્યર્થઃ, યદા કશ્ચિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ યદ્દીત્વા પદ્માત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિસિપ્યોત્પન્નજતિ, પુનરાગત્ય દૃઢાતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયદિત્યર્થઃ । યદ્વા—ધર્મ=યથાઽવસ્થિતં ધર્મં ભુવધારિમર્ક્ય, તથા સૈનેષ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા તં ભુવધર્મં ચારિમ્-ધર્મં ચ ન નિસિપેત્=ન સ્પજેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમકિત્ત કે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ઉમસે હી સમકિત્તકા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈ, અતઃ इन कार्यों को करने से सम कित्त का प्रकाश होता है, नहीं करने पर उसका आच्छादन होता है । यदि कदाचित् मिथ्यादृष्टियों की संगति भी हो जावे और वे मिथ्यात्व की ओर छे जाने का प्रयत्न भी करे तो भी उस समय अपनी शक्ति का प्रकाशन कर समकित्त का परित्याग नहीं करना चाहिये । अथवा जैसे कोई जीव आचार्य के समीप व्रतों को धारण कर पद्मात कालान्तर में उनके निकट उनका वमन—त्याग कर चला जाता है, और फिर आत्कर उन्हें धारण कर लेता है, उस प्रकार इस सम्यक्स्वका वमन नहीं करना चाहिये, किंतु प्राप्त होने पर इसको प्रयत्नपूर्वक यावज्जीवन पालते रहना चाहिये । अथवा—समकित्त के कार्यरूप भुवधारिधर्म की जिस प्रकार से अवस्थिति है उसी रूपसे उन्हें जान कर फिर नहीं छोड़ना चाहिये ॥४॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમકિતના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ બાંધ છે તેનાથી જ સમકિતનું અસ્તિત્વ બહુશય્ય આવે છે માટે તે કાર્યોને કસ્વાથી સમકિતને પ્રકાશ થાય છે અને નહિ કસ્વાથી તે ઢકાઈ બાંધ છે, અને કદાચ મિથ્યાદૃષ્ટિ-જોની સંગત પણ થઈ બાંધ અને તેને મિથ્યાત્વની તરફ સઈ જવાને પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વખત પોતાની શક્તિને પ્રકાશ કરી સમકિતને ત્યાગ નહિ કરવો બોધ્યો. અથવા જેમ કોઈ છુપ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાલાન્તરમાં તેની નજીક તેનો વમન—ત્યાગ કરી આવ્યો બાંધ છે અને ફરી જીવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે છે તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વનો વમન—ત્યાગ કરવો નહિ બોધ્યો, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક અવલવ-લવનપશ્ચાન્ત પાળતા રહેવું બોધ્યો. અથવા સમકિતના મર્મરૂપ ભુવધારિધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમાં તેને બાંધીને ઊંડું ન બોધ્યો ॥સૂ૦ ૪॥

અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિદ્દેહિં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—દિદ્દેહિં નિર્વેયં ગચ્છિજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દૃષ્ટેષુ નિર્વેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દૃષ્ટેષુ=દૃષ્ટિપથસમાગતેષુ ऐहिकेष्टानिष्टशब्दादिविषयेषु, अस्यो-
पलक्षणार्थत्वात् स्वर्गादिसम्बन्धिष्वपि, निर्वेदं=वैराग्यं, गच्छेत्=कुर्यादित्यर्थः ।
यदा यदा-शब्दाः श्रवणगोचराः, रसा आस्वादिताः, गन्धा आघ्राताः, स्पर्शा वा
स्पृष्टा भवन्ति, तदा तदा भावयेत्-शब्दादयः खलु पुद्गलास्त एव कदाचित् प्रिय-
शब्दादिरूपेण कदाचिदप्रियशब्दादिरूपेण परिणमन्ते, अतः तेषु पुद्गलपरिणा-
णामरूपेषु को रागः कश्च वा द्वेष इति ॥ सू० ५ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिद्वेहिं’ इत्यादि ।

દૃષ્ટ પદાર્થોં મેં નિર્વેદ-દૃષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો,
સંસાર કે જિતને भी मनोज्ञ और अमनोज्ञ पचेन्द्रियों के विषयभूत श-
ब्दादि पदार्थ हैं उनमें सम्यग्दृष्टि जीवको विरक्त भाव रखना चाहिये,
कारण कि ये शब्दादि सब पौद्गलिक हैं । जो कभी मनोज्ञ प्रतीत होते हैं वे
ही कालान्तर में अमनोज्ञ रूपसे भी परिणमित होते हुए देखे जाते हैं । अथवा
जो एक की अपेक्षा मनोज्ञ हैं वे ही दूसरे की अपेक्षा अमनोज्ञ हो जाते
हैं । निम्ब हमारी अपेक्षा अमनोज्ञ है परन्तु ऊँटकी अपेक्षा मनोज्ञ है ।
फलितार्थ यही है कि संसार का कोई भी पदार्थ सर्वथा न मनोज्ञ है न
अमोज्ञ है, मनकी कल्पनाशक्ति ही उसको मनोज्ञ और अमनोज्ञ रूपसे
भान कराती है, अतः उनमें राग द्वेष करना समझिती जीवका कर्तव्य

બીજી પણ સમ્યગ્દષ્ટિનુ કર્તવ્ય કહે છે—“દિદ્દેહિં” ઇત્યાદિ

દેખીત પદાર્થોંમા નિર્વેદ-દૃષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોંમા વિરક્તભાવ
હોય, સંસારના જેટલા પણ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પચેન્દ્રિયોંના વિષયભૂત શબ્દ આદિ
પદાર્થ છે તેમા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા
પૌદ્ગલિક છે જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાળાન્તરમા અમ-
નોજ્ઞરૂપથી પણ પરિણમિત થતા દેખવામા આવે છે અથવા જે એકની અપેક્ષા
મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ
મનોજ્ઞ છે, પરંતુ ઊંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો
કોઈ પણ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણ નથી મનની
કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિજ્ઞિત કરાવે છે, માટે તેમા
રાગદ્વેષ કરવો તે સમજિતી જીવનુ કર્તવ્ય નથી એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

માવઃ । ન નિસિપેદિતિ સત્ સમ્યક્ષ ન સ્યજેત્ । યદિ સંસર્ગાદિના મિધ્યાષ્ટયો મિધ્યાત્વ સ્થાપયેયુઃ, તદા સ્વાત્મનઃ સામર્થ્યગુણે પ્રકાશપદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ન નિસિપેદિતિ—નિસ્રેપર્ણ=છર્દનં વમનમિત્યર્થઃ, યથા કથિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ શ્રીત્વા પદ્માત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિસિપ્યોત્પન્નજતિ, પુનરાગત્ય શ્રદ્ધાતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ધર્મ= યથાત્રસ્થિત ધર્મ ધ્રુવચારિત્રરૂપ, તથા તેનૈવ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા સં ધ્રુવધર્મ ચારિત્ર- ધર્મ ચ ન નિસિપેત્=ન સ્યજેત્ ॥ સૂ. ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમક્ષિત્ત કે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ઉનસે હી સમક્ષિત્તકા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈં, અતઃ દ્વન કાર્યોં કો કરને સે સમ ક્ષિત્તકા પ્રકાશ હોતા હૈ, નહીં કરને પર ઉસકા આષ્ટાદન હોતા હૈ । યદિ કદાચિત્ મિધ્યાષ્ટયોં કી સંગતિ ધી હો જાવે ઓર વે મિધ્યાત્વ કી ઓર હે જાને કા પ્રયત્ન ધી કરે તો ધી ઉસ સમય અપની શક્તિ કા પ્રકાશન કર સમક્ષિત્ત કા પરિત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે । અથવા જૈસે કોઈ જીવ આચાર્ય કે સમીપ વર્તોં કો ચારણ કર પદ્માત્ કાલાન્તર મેં ઉનકે નિકટ ઉનકા વમન-ત્યાગ કર વસા જાતા હૈ, ઓર ફિર બાકર ઉન્હેં ધારણ કર હેતા હૈ, ઉસ પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ષત્વકા વમન નહીં કરના ચાહિયે, કિંતુ પ્રાપ્ત હોને પર ઇસકો પ્રયત્નપૂર્વક યાવજ્જીવન પાલતે રહના ચાહિયે । અથવા-સમક્ષિત્ત કે કાર્યરૂપ ધ્રુવચારિત્રધર્મ કી ઝિસ પ્રકાર સે અવસ્થિતિ હૈ ઉસી રૂપસે ઉન્હેં જાન કર ફિર નહીં છોડના ચાહિયે ॥૪॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમક્ષિત્તના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ બાંધ છે તેનાથી જ સમક્ષિત્તનું અસ્તિત્વ બાંધવામાં આવે છે માટે તે કાર્યોને કરવાથી સમક્ષિત્તને પ્રકાશ થાય છે અને નહિ કરવાથી તે હ કાંઈ બાંધ છે અને કદાચ મિષ્ટાદક્ષિ ઓની સંગત પણ થઈ બાંધ અને તેને મિધ્યાત્વની તરફ લઈ જવાનો પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વખત પોતાની શક્તિને પ્રકાશ કરી સમક્ષિત્તને ત્યાગ નહિ કરવો બોધ્યો. અથવા જેમ કોઈ છવ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાળાન્તરમાં તેની નજીક તેનો વમન-ત્યાગ કરી આશ્રમે બાંધ છે અને ફરી આવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે ॥ તે પ્રકારે જ સમ્યક્ષત્વનો વમન-ત્યાગ કરવો નહિ બોધ્યો, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક અવલપ-છવનપર્ણાંત પાળતા રહેવું બોધ્યો. અથવા સમક્ષિત્તના ધર્મરૂપ ધ્રુવચારિત્ર ધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમાં તેને બાંધીને છોડવું ન બોધ્યો પ્રશ્ન ૪૫

અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિટ્ઠેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દિટ્ઠેહિં નિર્વેયં ગચ્છિજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દષ્ટેષુ નિર્વેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દષ્ટેષુ=દષ્ટિપથસમાગતેષુ એહિકેષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયેષુ, અસ્યો-
પલક્ષણાર્થત્વાત્ સ્વર્ગાદિસમ્બન્ધિષ્વપિ, નિર્વેદં=વૈરાગ્યં, ગચ્છેત્=કુર્યાદિત્યર્થઃ ।
યદા યદા-શબ્દાઃ શ્રવણગોચરાઃ, રસા આસ્વાદિતાઃ, ગન્ધા આગ્રાતાઃ, સ્પર્શા વા
સ્પૃષ્ટા ભવન્તિ, તદા તદા ભાવયેત્-શબ્દાદયઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્ત એવ કદાચિત્ પ્રિય-
શબ્દાદિરુપેણ કદાચિદપ્રિયશબ્દાદિરુપેણ પરિણમન્તે, અતઃ તેષુ પુદ્ગલપરિણા-
નામરુપેષુ કો રાગઃ કશ્ચ વા દ્રેષ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिट्ठेहिं’ इत्यादि ।

દષ્ટ પદાર્થોં મેં નિર્વેદ-દષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો, સંસાર કે જિતને ખી મનોજ્ઞ ઔર અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયભૂત શ-
બ્દાદિ પદાર્થ હેં ડનમેં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવકો વિરક્ત ભાવ રખના ચાહિયે,
કારણ કિ યે શબ્દાદિ સબ પૌદ્ગલિક હેં । જો કમી મનોજ્ઞ પ્રતીત હોતે હેં વે
હી કાલાન્તર મેં અમનોજ્ઞ રુપસે ખી પરિણમિત હોતે હુઅ દેસે જાતે હેં । અથવા
જો એક કી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હેં વે હી દૂસરે કી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હો જાતે
હેં । નિમ્બ હમારી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હે પરન્તુ ડેંટકી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હે ।
ફલિતાર્થ યહી હે કિ સંસાર કા કોઈ ખી પદાર્થ સર્વથા ન મનોજ્ઞ હે ન
અમોજ્ઞ હે, મનકી કલ્પનાશક્તિ હી ડસકો મનોજ્ઞ ઔર અમનોજ્ઞ રુપસે
ભાન કરાતી હે, અતઃ ડનમેં રાગ દ્રેષ કરના સમકિતી જીવકા કર્તવ્ય

બીજી પણ સમ્યગ્દષ્ટિનુ કર્તવ્ય કહે છે—“દિટ્ઠેહિં” ઇત્યાદિ

દેખીત પદાર્થોમા નિર્વેદ-દષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોમા વિરક્તભાવ
હોય, સંસારના જેટલા પણ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોના વિષયભૂત શબ્દ આદિ
પદાર્થ છે તેમા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા
પૌદ્ગલિક છે જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાળાન્તરમા અમ-
નોજ્ઞરૂપથી પણ પરિણમિત થતા દેખવામા આવે છે અથવા જે એકની અપેક્ષા
મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ
મનોજ્ઞ છે, પરંતુ ઊંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો
કોઈ પણ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણ નથી મનની
કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિજ્ઞિત કરાવે છે, માટે તેમા
રાગદ્રેષ કરવો તે સમકિતી જીવનુ કર્તવ્ય નથી એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

કિંચ—“ નો લોગસ્સે ” ત્યાદિ ।

મૂલમ્—નો લોગસ્સેસણ ચ્ચરે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નો લોકસ્યૈપણાં ચરત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—લોકસ્ય પ્રાણિકાસ્ય, પપણામ્-પપણા-અનુકૂલેષુ શ્વદાદિષિપયેષુપા

નહીં હૈ । હસી પ્રકાર સ્વર્ગાવિક સુસ્ત્રોંકી વાખ્ખા કરના મી સમકિતીકે
લિયે યોગ્ય નહીં । અનુકૂલ શબ્દોં કે સુનને સે હર્ષિત હોના, એવં પ્રતિ
કૂલ શબ્દોં કે સુનને સે કુશ્ચિત હોના, સ્વાદિષ્ઠ રસાદિકોં કે મિલનેસે
આનન્દ માનના, ઓર પ્રતિકૂલ રસાદિકોંકી પ્રાપ્તિમેં આકુલિત હો જાના,
સુગંધિત પદાર્થોં કે સુંઘનેમેં પ્રેમ પ્રદર્શિત કરના, ઓર કુર્ગંધિત વસ્તુઓં
પર અરુચિ રમ્બના, કોમલાદિ સ્પર્શોં મેં પ્રમુદિતમન હોના, એવં કઠિનાદિ
સ્પર્શોં કે હોને પર મ્લાનચ્છદન હોના, યહ સમકિતી કે લિયે સર્વથા અ
યોગ્ય હી હૈ । સમકિતી તો સમદષ્ટિ હોતા હૈ । હસ તરહ કી રાગમેષ
મયી વિષમદષ્ટિ હસમેં નહીં હોની ચાહિયે । પ્રતિકૂલ ઓર અનુકૂલ
શબ્દાદિકોં કી પ્રાપ્તિ મેં હસે યહી માનના કરની ચાહિયે કિ યે સબ
પુદ્ગલ કી પર્વાયેં સદા ચલતી રહતી હૈં-પર્વાયેં સ્થિરરૂપ નહીં હૈં, અતઃ
હન અસ્થિર પર્વાયોં મેં રાગ કરનેસે ઓર દ્રેષ રચ્ચને સે મુદ્ધે કૌનસા
લાભ હો સકતા હૈ ? ॥ સૂ૦ ૬ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સ ’ ત્યાદિ ।

સમ્પરદષ્ટિ જીવ લોકૈપણા ન કરે, જિમ પ્રકાર લોક, અનુકૂલ

કાંઈ પણ સમકિતીને માટે યોગ્ય નથી. અનુકૂળ શબ્દ સાંભળીને હર્ષિત થવું
અને પ્રતિકૂળ શબ્દ સાંભળીને ક્રોધી થવું સ્વાદિષ્ઠ રસાદિક મળવાથી આનંદ
માનવે, અને પ્રતિકૂળ રસાદિકથી બ્યાકુળ થવું, સુગંધિત પદાર્થોના સુધવામાં પ્રેમ
દેખા વે અને કુર્ગંધિત વસ્તુઓ ઉપર અરુચિ જાણવી, કોમલાદિ સ્પર્શમાં
અનાદિત થવું અને કઠણ શબ્દ સ્પર્શમાં મોકું બગાડવું, આ બધું સમકિતીને
માટે સર્વથા અયોગ્ય જ છે, સમકિતી તો સમદષ્ટિ હોય છે જ્યાં પ્રકાશની
સમદ્રેષવાળી વિષમદષ્ટિ તેને ઢોલી ભેઈળે નહિ. પ્રતિકૂળ અને અનુકૂળ શબ્દ
વિગેરેમાં તેણે જાણના જાણવી ભેઈળે કે આ બધા પર્વાયો છે પર્વાય સદા બદ
લાતી જ રહે છે પર્વાય સ્થિરરૂપ નથી માટે આ અસ્થિર પર્વાયોમાં સત્ર કરવાથી
અને દ્રેષ જાણવાથી અને શું લાભ થવાનો છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સે ’ ત્યાદિ

સમ્પરદષ્ટિ હવે લોકૈપણા કરે નહિ, અર્થાત્-જે પ્રકારે લોક, અનુકૂળ શબ્દો

દેયબુદ્ધિઃ, પ્રતિકૂલેષુ હેયબુદ્ધિસ્તાં ન ચરેત્=ન કુર્યાત્ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાચરણસ્ય ફલમાહ--“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ । યદ્વા-સમ્યક્ત્વા-
લાભે સમ્યક્જ્ઞાનં ન ભવતીત્યાહ--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-જસ્સ નત્થિ ઇમા જાઈ અણ્ણા તસ્સ કઓ સિયા ॥ ૭ ॥

છાયા--યસ્ય નાસ્તિ ઇયં જાતિઃ અન્યા તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા--યસ્ય સાધોઃ ઇયં જાતિઃ=લોકૈષણાબુદ્ધિઃ નાસ્તિ, તસ્ય અન્યા=અન્ય-
વિધા સાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્યાત્ । ભોગેચ્છા હિ લોકૈષણા, તત્પરિત્યાગેન
સાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિર્નોપજાયતે, ઇતિ ભાવઃ ।

શબ્દાદિકોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ એવં પ્રતિકૂલ વિષકણ્ડકાદિકોં મેં હેય-બુદ્ધિ
રખતે હૈં’ ઉસ પ્રકાર સમકિતી જીવકો અનુકૂલ પદાર્થોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ
ઔર પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયબુદ્ધિ નહોં રખની ચાહિયે, અપિ તુ મધ્યસ્થ-
ભાવ રખના ચાહિયે ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણા કા ફલ કહતે હૈં--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

હસ પ્રકાર લોકૈષણા કી બુદ્ધિ રખનેવાલે જીવકે સાવધ વ્યાપારોં
સે નિવૃત્તિ નહોં હો સકતી હૈ । ભોગેચ્છારૂપ હી લોકૈષણા હૈ । જિસ
સાધુ કો હસ પ્રકારકી લોકૈષણા નહોં હૈ’ ઉસકી પ્રવૃત્તિ શબ્દાદિ વિષયોં
મેં નહોં હોતી હૈ । અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયોપાદેયબુદ્ધિ રખનેવાલા
વ્યક્તિ નિયમતઃ હસ પ્રકાર કે કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ કર અપની મનોવૃત્તિકો
દૂષિત કિયા કરતા હૈ, જબકિ સમકિતી નિરન્તર અપની પ્રવૃત્તિ કો
નિર્મલ બનાને કી હી કોશિશ મેં રહતા હૈ, અતઃ હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ

આદિમાં ઉપાદેય બુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ વિષકાટા વિગેરેમા હેયબુદ્ધિ રાખે છે તે પ્રમાણે
આ સમકિતી જીવને અનુકૂળ પદાર્થોમા ઉપાદેયબુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં
હેયબુદ્ધિ રાખવી જોઈ એ નહિ, બલકે મધ્યસ્થ ભાવ રાખવો જોઈએ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાનુ કૂળ કહે છે--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ

આ પ્રકારની લોકૈષણાની બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવને વ્યાપારોમાથી નિવૃત્તિ
થતી નથી ભોગેચ્છારૂપ જ લોકૈષણા છે જે સાધુને આ પ્રકારની લોકૈષણા નથી
થતી તેની પ્રવૃત્તિ શબ્દ આદિ વિષયોમા થતી નથી અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં
હેય-ઉપાદેય-બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવ નિયમથી આ પ્રકારના કાર્યોમા પ્રવૃત્તિ
કરીને પોતાની મનોવૃત્તિને દૂષિત કર્યા કરે છે, બ્યારે સમકિતી હમેશા પોતાની
પ્રવૃત્તિને નિર્મળ બનાવવાની મહેનત કર્યા કરે છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ

यद्वा-इयम्=उपक्रान्ता, क्षातिः=सम्यक्स्वरूपा परिणति, यस्य नास्ति, तस्या-
न्या=विवेकिनी परिणति साध्यानुष्ठानपरिहारकारिणी कृत स्यादित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

सम्यक्त्वे शिष्यमतिस्थिरीकरणार्थं पुनराह-‘दिट्ठ सुयं’ इत्यादि ।

मूखम्-दिट्ठ सुय मय विषणाय ज एय परिकहिज्जइ ॥ सू० ८ ॥

छाया-एह भुतं मत्तं विज्ञातं यदेतत् परिकथ्यते ॥ सू० ८ ॥

टीका-यदेतत् सम्यक्त्व मया परिकथ्यते, तत् इष्टं=तीर्थकरै केवलसो
केनावलोकितम्, एता भुतं=अणधरादिभि भवणविषयीकृत, मत्तं=समुक्तेषां

मनोवृत्ति को दूषित करनेवाली होने से ही समझिती के लिये हेय
यतलाई गई है ।

अथवा-‘सम्यक्त्व की अप्राप्ति में सम्यग्ज्ञान नहीं होता है’
इस बात को भी इसी सूत्र में कहते हैं-‘अस्त नत्थि’ इत्यादि ।

जिस जीवके पास सम्यक्त्वपरिणति नहीं है उसको साधय व्या-
पारोंसे इटानेवाली विवेकपरिणति भी कैसे हो सकती है? अर्थात् नहीं
हो सकती है ॥ सू० ७ ॥

सम्यक्त्वमें शिष्यकी बुद्धिको दृढ़ करने के लिये सुधर्मास्वामी फिरसे
कहते हैं-‘दिट्ठ सुयं’ इत्यादि ।

जिस समझितका मैंने वर्णन किया है वह दृष्ट, सुत, अनुमत और
विज्ञात है । यहां पर सुधर्मास्वामी समझितके विषयमें खुलासा करते
हुए कहते हैं कि-हे जन्म ! जिस समझितका यहां वर्णन किया गया है
वह मैंने अपनी बुद्धि से नहीं कहा है; किंतु ‘इष्टं’-तीर्थकरों ने उसका

मनोवृत्तिने दूषित कथावाणी होवाधी व समझितीने भाटे डेय छे, जेभ कहुं छे

अथवा सम्भ्रुत्वनी अत्रासिभ्य सम्भ्रुत्तानं भुतं नथी. अथ यातने पञ्च अ
सूत्रभां कहे छे- अस्तनत्थि धत्तादि.

ने एवनी पासो सम्भ्रुत्वपरिवृत्ति नथी तेने साधय व्यापारोधी इर
कथावाणी विवेकपरिवृत्ति पञ्च केवी रीते बधुं सके? अर्थात् बधुं सकती नथी ॥ सू० ७ ॥

सम्भ्रुत्वभा शिष्यनी बुद्धिने दृढ कथाने भाटे सुधर्मास्वामी दरीगी कहे
छे- दिट्ठ सुय धत्तादि.

ने समझितनु मे पञ्च न कहुं छे ते दृष्ट, सुत, अनुमत अने विज्ञात छे.
अ कथावे सुधर्मास्वामी समझितविषयभा खुलासा करीने कहे छे हे-हे जन्म !
ने समझितनु अ कथावे पञ्च न कथामा आबु छे ते मे पोतानी बुद्धिभी
नथी कहुं; पञ्च दृष्ट तीर्थकरोने तेने पोताना केवज्ञानरूपी प्रभयभी साध

ભવ્યાનાં મતં, વિજ્ઞાતં=જ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાત્, અતઃ સમ્યક્ત્વલાભે તદ્રક્ષણે ચ પ્રયતિતવ્યમિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

યે તુ સમ્યક્ત્વમુપેક્ષન્તે તેષામનન્તદુઃસ્વમયી સંસારગતિર્નૈવ વિરમતીત્યાહ-
'સમેમાણા પલેમાણા' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સમેમાણા પલેમાણા પુણો પુણો જાઈં પકપ્પાંતિ ॥સૂ૦ ૧॥

છાયા-સમાયન્તઃ પ્રલીયમાનાઃ પુનઃ પુનર્જાતિં પ્રકલ્પયન્તિ ॥સૂ૦ ૧॥

ટીકા-સમાયન્તઃ-સમાગચ્છન્તઃ=આર્હતાગમવિષયે શ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યક્ત્વા-
કરણેન માતાપિત્રાદિભિઃ સહ સંસારસમ્બન્ધં કુર્વન્તઃ, પ્રલીયમાનાઃ=મૃત્યુવશાદ્
માતાપિત્રાદિભ્યો વિયુજ્યમાનાઃ, યદ્વા-પ્રલીયમાનાઃ=શબ્દાદિવિષયેષુ સમાસર્ત્તિ
કુર્વાણાઃ પુનઃ પુનઃ=અનન્તશઃ જાતિમ્=એકેન્દ્રિયાદિરૂપાં પ્રકલ્પયન્તિ । સમ્યક્ત્વ-
મનવાપ્તાઃ સંસારદુઃસ્વતો ન મુચ્યન્ત ઇતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અપને કેવલજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશ સે સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ, 'શ્રુતં'-ગણધરા-
દિકોને ડનસે સુના હૈ, 'મતં'-હલુકર્મી ભવ્યોને ડસે માના હૈ, ઓર
'વિજ્ઞાતમ્'-અપને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાનુસાર ડન્હોને ડસે
જાના હૈ, અતઃ સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર ડસ કી રક્ષા કરને મેં સદા
સાવધાન રહના ઑહિયે ॥સૂ૦ ૮ ॥

જો વ્યક્તિ ડસ સુન્દર સમકિતકે પ્રતિ ડપેક્ષા ભાવ રલ્લતા હૈ ડસકે
ડસ અનન્ત દુઃસ્વરૂપ સંસારકા અન્ત નહીં આતા, યહી ઑાત કહતે હૈ-
'સમેમાણા' ઇત્યાદિ ।

જો પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમકી શ્રદ્ધારૂપ ડસ સમકિતસે શૂન્ય
રહતા હૈ વહ સંયોગ વિયોગ કો પાતા હુઆ જન્મ મરણ કર ઑારંઑાર એકે-
ન્દ્રિયાદિક ભવોં મેં ભટકતા ફિરતા હૈ ।

ત્કાર કર્યો છે 'શ્રુતં' ગણધરાદિકોએ તેમનાથી સાલજીસુ છે. 'મતં' હલુકર્મી
ભવ્યોએ તે માન્યુ છે, અને 'વિજ્ઞાતમ્' પોતાના જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપ-
શમ અનુસાર તેઓને તેમણે બહુયા છે, તેથી સમ્યક્ત્વને લાભ થઈ ગયા પછી
તેની રક્ષા કરવામા હમેશા સાવધાન રહેલુ બોઈએ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે શુધ આ સુન્દર સમકિત પ્રત્યે ડપેક્ષાભાવ રાખે છે તેનો આ અનન્ત
હિ ખરૂપ સંસારનો અત આવતો નથી આ વાત કહે છે-'સમેમાણા' ઇત્યાદિ

જે પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમની શ્રદ્ધારૂપ આ સમકિતથી શૂન્ય રહે
છે તે સંયોગ-વિયોગને મેળવતો જન્મ મરણ કરીને વારવાર એકેન્દ્રિયાદિક
ભવોમા ભટકતો ફરે છે

યથેવં તત્ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—“અહો ય રાઓ ય” ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ક—અહો અ રાઓ ય જયમાણે ધીરે સયા આગયપણ્ણાણે પમત્તે ઘહિયા પાસ અપ્પમત્તે સયા પરિક્કમિજ્જાસિ—ત્તિવેમિ । સુ ૧૦ ।

॥ પદ્મો ઉત્તેસો સમત્તો ॥ ૪-૧ ॥

છાયા—અહમ્ રાત્રિં ચ યતમાનો ધીર સદા આગતપ્રજ્ઞાનઃ પ્રમત્તાન્ પરિઃ પદ્ય, અપ્રમત્તઃ સદા પરાક્રમેયાઃ, ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સુ ૧૦ ॥

॥ પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥

ટીકા—અહમ્ રાત્રિં ચ=અહર્નિશં, યતમાના=મોક્ષપ્રાપ્તયે સમુપુક્તઃ, ધીર=મિધ્યાત્મદિભિઃ સંસર્ગાદિના સ્વાપિત્તેऽપિ મિધ્યાસ્ત્વે વિશુદ્ધિપરિણામધારામનવશ-

જો પ્રાણી હસ સમક્ષિત્ર કે છામસે વંચિત રહતા હૈ વહ અનન્ત કાલ તક અનન્ત ઘાર માતા-પિતાકે સાય ‘યે મેરે માતા-પિતા હૈ, મૈં હનકા પુત્ર હૈ’ હસ પ્રકારકા સંબંધ કરતા હૈ, ઔર અન્તમેં મૃત્યુકા માસ બનકર એકેન્દ્રિયાદિક કુયોનિયોં મેં બ્રમણ કરતા હૈ ।

અથવા શબ્દાદિચિયોં મેં આસક્તિ ધારણ કર અનન્તઘાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્વાયોં મેં ઉત્પન્ન હોતા રહતા હૈ, તથા વહકે અનન્ત કટ્ટોંકાં સહન કરતા રહતા હૈ । અર્થાત્-અસમ્યક્સ્ત્રી જીવ મંસાર કે દુઃસસે કમી ‘મી છુટકારા કહોં પાતા ॥ સુ ૦ ॥

અગર એસા હો તો કયા કરના વાલ્લિયે ? સો કહતે હૈ—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ ।

હૈ જન્મ્ ! તુમ અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિકે લિયે પ્રયત્નશીલ બનો, ઔર ધીર ધીર બન કર સદા ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયકે વિવેક સે વિશિષ્ટ

જે પ્રાણી આ સમક્ષિત્રના કાલથી વંચિત રહે છે તે અનતકાળસુધી જનતી વાર માતા-પિતાની સાથે ‘આ મારા માતા-પિતા છે, હું એમના પુત્ર છું’ આ પ્રકારના સંબંધ કરે છે અને છેવટમાં મરીને જોડેન્દ્રિયાદિક કુયોનિઓમાં બ્રમણ કરે છે અથવા શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્તિ ધારણ કરી જનતી વાર જોડેન્દ્રિયાદિક પર્વાયોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તથા ત્યાંના અનત દુઃખોને સહન કરતો રહે છે અર્થાત્-અસમ્યક્સ્ત્રી જીવ સસારના દુઃખોથી ક્યારે પણ છુટતો નથી । સુ ૧૦

તે આ પ્રમાણે છે તો શું કરવું જોઈએ ? તે કહે છે—અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ

હે જન્મ ! તમે અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિને માટે પ્રયત્નશીલ બનો અને ધીર ધીર બનીને કહેશાં ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયના વિવેકથી વિશિષ્ટ બનીને અસમ્યક્

न्यानः, अत एव सदा=सर्वस्मिन् काले, आगतप्रज्ञानः=उत्तरोत्तरप्रवर्धमानहेयो-
पादेयविवेकपरिणामः सन्, प्रमत्तान्=असंयतान्, वह्निः=आर्हतधर्माद्वह्निर्वस्थि-
तान् अलब्धसम्यक्त्वान् इति यावत्, पश्य। दृष्ट्वा च अप्रमत्तः=पञ्चविधप्रमादरहितः
सन् सदा=अविच्छेदेन पराक्रमेथाः=मोक्षतरुबीजस्य सम्यक्त्वस्य लाभार्थं रक्षणार्थं च
हो कर असंयमी जीवों के संसर्ग से सदा दूर रहो। एवं स्वकर्तव्य में
अप्रमत्त हो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति और उसका रक्षण करने के लिए, अथवा
कर्म शत्रुओं पर विजय पानेके लिये कटिबद्ध रहो। हे जम्बू! मैंने जैसा
भगवान से सुना है वैसा ही तुम्हें कहता हूँ।

इस सूत्रमें जम्बूस्वामीको संवोधन करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी
कहते हैं कि—हे जम्बू! जब प्रत्येक प्राणीका लक्ष्य मोक्षकी प्राप्ति करनेका
है तो उसका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन की
प्राप्ति करनेके लिये अहर्निश—सदा कटिबद्ध रहे, कारण कि—एक तो
इसके अभाव में मुक्तिकी प्राप्ति नहीं हो सकती, दूसरे सांसारिक
अनन्त कष्टों का अन्त भी नहीं आ सकता। यद्यपि यह बात निश्चित
है कि मिथ्यादृष्टि जीव अपने संसर्ग से मिथ्यात्वकी स्थापना करनेमें
कसर नहीं रखते हैं तो भी भव्य जीवका कर्तव्य है कि वह ऐसे समयमें
अपनी विशुद्ध परिणामधाराको न रोकें; किन्तु परिणामों में विशुद्धता
जिस प्रकारसे बढे उस प्रकार से उसको बढाने का उत्तरोत्तर प्रयत्न करता

ल्योना ससर्गथी सदा दूर रहो, अने स्वकर्तव्यमा अप्रमत्त थाव, सम्यग्दर्शननी
प्राप्ति अने तेना रक्षणुने भाटे, अथवा कर्मशत्रुओ उपर विजय मेणववाने
भाटे कटिबद्ध रहो हे जम्बू। मे जेम लगवान पासेथी साबज्यु छे तेम
तमने कहुं छु

आ सूत्रमा जम्बूस्वामीने संवोधन करीने श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे के—
हे जम्बू! न्यारे दरेक प्राणीनु लक्ष मोक्षनी प्राप्ति करवानु छे तो तेनुं ओ
मुख्य कर्तव्य छे के पड़ेला सम्यग्दर्शननी प्राप्ति करवाने भाटे डमेशा तैयार
रहे, कारण के ओके तो तेना अभावमा मुक्तिनी प्राप्ति थती नथी, तेमज भीनु
सासारिक अनन्त दुःखोनो अत पावु नथी आवतो जे के आ बात निश्चित छे
के मिथ्यादृष्टि ओव चोताना ससर्गथी मिथ्यात्वनी स्थापना करवामा कसरशब्दतो
नथी, तो पावु लव्य ओवनु कर्तव्य छे के ते आवा समयमा पोतानी विशुद्ध
परिणामधाराने न रोकी राखे, पावु परिणामोमा विशुद्धता जे प्रकारे वधे ते प्रकारे,
तेने वधारवामा उत्तरोत्तर प्रयत्न करता रहे ओनाथी डेयोपादेयनो विवेक जगशे

વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્યે સોત્સાઈ પ્રયત્નમાનો મત્ત । યદ્વા-પરાક્રમેયાઃ=અવિધર્મકર્મ-
મૂન્ મિજેતું વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્યેણ ધીર્યશુભસામર્થ્યમુદ્ઘાતવ્યત્પર્યઃ । इति=અભિ-
કારપરિસમાપ્તૌ, ધ્રુવીમિ=ગગનમુસ્તાષયા શ્રુતં તથા કયપામીત્પર્ય ॥ સૂં ૧૦ ॥

॥ इति चतुर्थीअध्ययने प्रथम उद्देशः सम्पूर्णः ॥ ४-१ ॥

રહે । હસસે હેયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હોગા ઔર હસ વિવેકમુદ્ધિસે
વહ યહ સમક્ષ સકેગા કિ 'જો સમક્ષિસે શૂન્ય હેં વે હસ ધર્મસે બહિ
મૂત હેં અત' મેં 'મી પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદોંકા ત્યાગ કર મોક્ષતરુ કા ધીજ-
સ્વરૂપ સમક્ષિની પ્રાપ્તિ કરનેમેં, ઔર પ્રાપ્ત સમક્ષિની રક્ષા કરનેમેં
કારણમૂત વિશુદ્ધ પરિણામ ધારાકે વધાનેમેં સદા યતન કરતા રહૂં ।'
અથવા 'હસ અનન્ત સંસારમેં અનન્તકષ્ટપ્રદાતા કર્મરૂપ શાશ્વત્વી હેં; અત
હન્હેં પરાત્ત કરનેકે લિપે મી મેં અપને મીતર વિશુદ્ધ પરિણામોંકી ધારા
પદ્ધા કર ધીર્યશુભસ્વરૂપ અપની શક્તિકા વિકાસ કરૂં તો અવશ્ય હી
સફલતા પ્રાપ્ત કર લૂંગા' હસ પ્રકાર સદા હસ અભ્ય ઝીષ કો ઉત્સાહિત
રહના ધાહિયે ॥ સૂં ૧૦ ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशः सम्पूर्णः ॥ ४-१ ॥

જાને આ વિવેકમુદ્ધિથી તે એ સમક્ષ શક્યે કે 'જે સમક્ષિતથી શૂન્ય છે તે આ
ધર્મથી અભિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના
ધીજસ્વરૂપ સમક્ષિતની પ્રાપ્તિ કરવામા, અને મેળવેલા સમક્ષિતની રક્ષા કરવામા
કારણમૂત વિશુદ્ધ પરિણામપ્રાપ્તિને વધારવામા હમેશા યતન કરતો રહૂં' અથવા-
'આ અનન્ત સંસારમા અનન્ત દુઃખ આપવાવાળા કર્મરૂપ શાશ્વત્વી છે, તેને પરાત્ત
કરવાને માટે પણ માત્ર અતરૂની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને ધીર્યશુભ-
સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરૂં તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે' એવા પ્રકારે
હમેશા અભ્ય હવે ઉત્સાહી રહેવું બોધાયે ॥ સૂં ૧૦ ॥

योधा अध्ययननो प्रथम उद्देशः सम्पूर्णः ॥ ४-१ ॥



॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहाँ यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वों मेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

ચોથા અધ્યાયનો બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યાયના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે ત્યાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯ ત્યાં સુધી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? ત્યાં સુધી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલા તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘જે આસવા’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અપચિર્ષ કમાસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મબન્ધહેતવો વિપયા, તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહતવાઃ, વિષયસુખાડસક્તાનાં સૂક્ષ્મન્દનવનિતાદયો વિપયાઃ કર્મબન્ધનનકસ્વાદાસ્રવા મથન્તિ, ત ઇષ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સસારાનન્તદુઃસ્વપ્ન જતયા પ્રતીયમાના હેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યમનકસ્વાત્ પરિસ્રવા મથન્તિ । યથા મરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરુપેણ પરિણતા મથૂયુઃ, યથા વા-સમુદ્ર પાલ્સ્ય, યથા વા નમિરાજર્પે । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મબન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિસ્રવાઃ’ એ હી કિસી દૂસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે મી હેતુ હૈં । ‘યે પરિસ્રવા’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ એ આસ્રવકે મી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવા’ જો આસ્રવસે મિશ્ર હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ એ કર્મબન્ધકે મી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મબન્ધકે કારણ હૈં ‘તે અનાસ્રવા’ એ કર્મબન્ધકે કારણ નહીં મી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવા’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ જિનકે દ્વારા આતે હૈં એસે કર્મબન્ધકે કારણરુપ જો વિષયકથાયાદિક હૈં ઉન્હેં આસ્રવ કહતે હૈં । તથા જિનકે દ્વારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસ્યમાદિક હૈં ઉન્હેં પરિસ્રવ કહતે હૈં । વિષયસુખોંમેં આસ્રવ મનઝાલેકે લિપે મારા બન્દન એવં વનિતાદિક જો પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય હૈં એ કર્મબન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં, કારણ કિ ઘટ ઉનકે સેવનસે અપને કો પરમસુખી માનતા હૈ, એવં ઉન્હેં

‘યે આસ્રવા’ એ કાઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ ॥ ‘તે પરિસ્રવા’ તે જ કાઈ બીજી અપેક્ષાથી કર્મોની નિર્જરતા હેતુ છે । ‘યે પરિસ્રવા’ એ નિર્જરતા હેતુ છે । ‘યે આસ્રવા’ તે આસ્રવના પશુ હેતુ છે । ‘યે અનાસ્રવા’ એ આસ્રવથી મિશ્ર છે । ‘યે અપરિસ્રવા’ તે કર્મબંધના પશુ કારણ છે । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ એ કર્મબંધના કારણ છે । ‘યે અનાસ્રવા’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પશુ નથી ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવા’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના કર્મ એ દ્વારા આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ એ વિષયકથાયાદિક છે તેને આસ્રવ કહે છે. તથા એ દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જરિત થાય છે, એવા નિર્જરાના એ કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે । વિષયસુખોમા આસ્રવમનઝાળાને માળા, બંધ અને સ્ત્રી આદિક એ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય ॥ તે કર્મબંધનાં કારણ હોવાથી આસ્રવ થાય છે, કારણ કે તે તેના સેવનથી પોતાને બધે સુખી માને છે, અને તેને

“ યથાપ્રકારા યાવન્તઃ સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, -નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ૬તિ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમદ્વતા હૈ, ‘ યે મેરે હૈં ઓર મૈં ઇનકા હૂં ’ ઇસ પ્રકારકી ઁસકી સદા માન્યતા હોતી હૈ, ઁનકે વિગાડમૈં અપના વિગાડ, ઁર ઁનકે સુધારમૈં અપના સુધાર માનતા હૈ, તવ જ્ઞાની કિ જિસકે હૃદયમૈં હૈયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ ઁર જો કર્મ કે ઁદયસે ઇનકા સેવન ઁી કરતા હૈ ફિર ઁી ઇનસે અપનેકો જલમૈં કમલ કી તરહ સર્વથા ઁિન્ન હી દેઁવતા હૈ, યે હી પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય ઁસકો સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકે કારણરૂપ પ્રતીત હોનેસે વૈરાગ્ય કે જનક, પરિસ્રવ-હોતે હૈં, ઇસ કારણ ઁસકે લિયે યે આસ્રવ કર્મકી નિર્જરાકે હી કારણ હૈં । જૈસે છહ ઁળડોં કારાગ્ય કરનેવાલે ઁરતચક્રવર્તીં કે લિયે ઁવં સમુદ્રપાલ તથા નમિ રાજર્ષિકે લિયે વે હી પદાર્થ જો અજ્ઞાનીકે લિયે આસ્રવ કે કારણ થે, નિર્જરા કે હી કારણ હુઁ । જૈસે કહા હૈ—

“ યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥ ૬તિ ।

અર્થાત્—જિસ પ્રકારકે જિતને સંસારપરિભ્રમણ કે કારણ હોતે હૈં, ઁનસે વિપરીત પ્રકારકે ઁતને હી મોક્ષસુખકે કારણ હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમજે છે ‘ આ ઁારા છે ઁને હું તેમનો છું ’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે તેના ઁગડવામા પોતાનું ઁરાળ થયેલ, ઁને તેના સુધારામા પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે ત્યારે જ્ઞાની કે જેના હૃદયમા હૈયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થયેલ છે ઁને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જળમા કમળની માફક સર્વથા ઁિન્નપણે દેખે છે આ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો તેને સાસારિક અનન્ત હ ઁળેનું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવૈરાગ્યના કર્તા ઁને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે જેમ છ ઁ ઁડનું રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે ઁને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આસ્રવના કારણ હતા, નિર્જરાના જ કારણ થયા જેમ કહ્યું છે—

“ યથાપ્રકારા યાવન્ત, સંસારાવેશહેતવ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥ ૬તિ ।

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે (૧)

રાગદ્વેષમભિનમનસા વૈષયિકમુલો મુખ્યસ્ય સર્વં સત્સારકારણં મનતિ, યથા નિમ્બરસાક્રાન્તરસનસ્ય શીરશ્ચર્કરાદિકં સર્વં મધુરં કદુતથા પરિણમતે । સમ્યગ્દૃષ્ટ મ્હુ ત્રિપયવિતૃષ્ણસ્ય સર્વં સ્વચ્છન્દનવનિતાઽઽદિકમથુષિ દુઃસ્વકારણં મતિ માનયતઃ પ્રાદુર્ભૂતસંવેગમ્ તદેવ મોક્ષનનકં મનતિ ।

ઉક્તાર્થમેવ દ્રઢયિતું પરાત્રસ્ય કથયતિ—“ જો પરિસ્ત્રવા ” ઇત્યાદિ । ય એષ પરિસ્ત્રવા=નિર્જરાદૃશ્યસ્તપઃસયમાવયસ્ત એવ કર્મોદયમતિરુદ્ધમપરિણામસ્ય માનવક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય જન્તોર્ઋદિરસસાતગૌરવપ્રાપ્તિમનસ આસ્રવા મનન્તિ । કર્મ નિર્જરાર્થં યાવન્તિ સંયમમ્પાનાનિ તાચન્ત્યેવ કર્મબંધનાપાસયમસ્થાનાનિ । યથા નાગેશ્વરીદ્રામ્પ્યા પરિસ્ત્રવા આસ્રવરુપેણ પરિણતા ચમ્બુ ॥

રાગ દ્વેષસે આકુલ એવં વૈષયિક સુખર્ષમે લલલીન જીવકે લિપે પંચે ન્ત્રિયોંકે સમી વિષય સંસારકે કારણ હોતે હૈં । જૈસે-નીમ કે રમપાન કરનેસે જિમ્કી જીમ્કા સ્વાદ કદુ (કદુઆ) હો જુકા હૈં એસે વ્યક્તિ કે લિપ મીઠા પદાર્થ મી કદુઆ પ્રતીત હોતા હૈં । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે લિપે, કિ જિસકા પિત્ત વિષયાદિકોંસે વિતૃષ્ણ-તૃષ્ણારહિત હો જુકા હૈં, એ હી માલા ચંદન આદિ સમસ્ત વિષય અપવિત્ર ઔર કુ સ્વકે હી કારણરુપ પ્રતીત હોતે હૈં, અતઃ જનસે ડનકા પિત્ત સદા ચિરક્ત રહા કરતા હૈં, હમલિયે ડનકે પ્રતિ સંવેગભાવ કી જાગૃતિ હોનેસે એ હી વસ્તુનું ડસકે લિયે નિર્જરાકા કામ કરતી હૈં ।

નિર્જરા હી મોક્ષકા કારણ હૈં, હમી યાગકો દૃઢ કરનેકે લિયે ડપર કહે જુગ અર્થકો હી ડુમાકર કહતે હૈં-(૨) “ યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્રવા ” ઇત્યાદિ । જો તપમયમાવિક માય જ્ઞાની કે ‘ પરિસ્ત્રવા ’ નિર્જરા કે કારણ હોતે હૈં, એ હી અજ્ઞાની કે કિ-જિમ્ કી અપને કર્મકે

રાગદ્વેષથી બાહ્યુગ તેમજ વૈષયિક મુખ્યમાં સંવેશ લેવાને માટે પદ્ય ઇન્દ્રિયાના બધા વિષયા સંસારના કારણ થાય છે, જેમ લીન અને રસ પીવાથી જેની ડસને સ્વાદ કે મેા બનેલ છે તેવી વ્યક્તિને માટે મીઠી પદાર્થ પણ કે એ લાગે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હજ કે જેનું ચિત્ત વિષયાદિકની તૃષ્ણામાં સંદિત છે તે મળ્યા, હવન આદિ મુખ્ય વિષયોને અપવિત્ર અને કુ ખનુ કારણ માને છે તેથી તે વિષયાથી તેનું ચિત્ત હંમેશા વિરક્ત રહ્યા કરે છે આ માટે તેનું પ્રતિ સંવેગભાવની બામતિ થવાથી તે / વસ્તુના તને માટે નિષ્ રાગ કામ કરે છે

નિષ્ રા / મોક્ષનું કારણ છે આ ચાલને દૃઢ કરવાને માટે ડપર કહેતા મારને જાહેરનીને કહે છે-(૨) ય પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્રવા ઇત્યાદિ, જે તપ, સંયમ આદિ આવે રાની માટે પરિસ્ત્રવા નિ / રાગ કારણ થાય છે તે અજ્ઞાની માટે-

યે અનાસ્રવાઃ=આસ્રવેતરાઃ-વ્રતવિશેષાઃ, તેડપિ કર્મોદયવગ્નાદશુભાધ્યવસાયવતો
જન્તોરપરિસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકારણાનિ ભવન્તિ, યથા વ્રાન્તસમ્યક્ત્વસ્ય મુનેઃ । તથા-યે
અપરિસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતવઃ તે પ્રવચનોપકારાદિના ક્રિયમાણાઃ અનાસ્રવાઃ ભવન્તિ,
કર્મવન્ધજનકા ન ભવન્તીત્યર્થઃ, યથા વાલગ્નનાનાદ્યર્થ નિત્યપિષ્ઠાદિગ્રાહકસ્ય ।

યદ્વા-અત્ર સૂત્રે ચતુર્ભઙ્ગી પ્રોચ્યતે, તથાહિ-

ઉદયસે શુભ પરિણામધારા સ્ત્રી દુર્હૈ હૈ, સાવદ્ય ક્રિયાઓં કે કરનેમેં હી
જિસકી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ રહતી હૈ, ઓર જો ઋદ્ધિ, રસ, સાન ગૌરવકી
પ્રાપ્તિ કરનેકે અભિપ્રાય સે હી તપ સંયમાદિકોંકા આરાધન કરતા
હૈ ઉસકે આસ્રવ-નવીન ૨ કર્મોં કે આને કે દ્વાર હોતે હૈ । સમકિતકે
વિના કી ગઈ સમસ્ત હી ક્રિયાણં કર્મવન્ધકા કારણ હોતી હૈં । અજ્ઞા-
નિયોં કે તપસંયમાદિક, સમકિત કે અભાવમેં મિથ્યારૂપ-અસંયમરૂપ
હોતે હૈં, અનઃ વે ઉસકે નિર્જરાકે હેતુ ન હો કર ઉલ્ટે આસ્રવકે હી કારણ
બનતે હૈં । સમકિતી કે કર્મનિર્જરાકે લિયે જિતને ભી સંયમસ્થાન હૈં
ઉતને હી અજ્ઞાનિયોં કે કર્મવન્ધકે લિયે અસંયમસ્થાન ભી હૈં । ઇસ
વિષયમેં નાગેશ્વરી બ્રાહ્મણીકા દૃષ્ટાન્ત પ્રસિદ્ધ હૈ, ઉસકે લિયે પરિસ્રવ
આસ્રવરૂપસે પરિણત હુણ હૈં ।

(૩) 'યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ'—જિનસે કર્મવન્ધ નહીં હોતા
એસે જો વ્રતવિશેષ હૈં વે ભી, કર્મોદયકે વશસે જિસકે અધ્યવસાય
અશુભ હો રહે હૈં એસે અજ્ઞાની જીવકે લિયે કર્મવન્ધકે હી કારણ હોતે હૈં ।

જેની પોતાના કર્મના ઉદયથી શુભપરિણામધારા બન્ધ છે, સાવદ્ય-ક્રિયાઓ કરવામા
જ જેની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, અને જે ઋદ્ધિ, રસ, સાત ગૌરવની પ્રાપ્તિ કરવામા
જ તપસયમાદિનુ આરાધન કરે છે તેને માટે આસ્રવના-નવા નવા કર્મોના
આવવાના-દ્વાર થાય છે સમકિત વગર કરવામા આવેલી બધી ક્રિયાઓ કર્મ-
બધના કારણ થાય છે અજ્ઞાનિઓના તપ સયમાદિ સમકિતના અભાવમા મિ-
થ્યારૂપ-અસયમરૂપ થાય છે, તેથી તે નિર્જરાના હેતુ ન થઈને આસ્રવના જ કારણ
બને છે સમકિતીના કર્મનિર્જરાને માટે જેટલા પણ સયમ-સ્થાનો છે તેટલા જ
અજ્ઞાનિઓના કર્મબધના માટે અસયમ-સ્થાનો પણ છે આ વિષયમા નાગેશ્વરી
બ્રાહ્મણીનુ દૃષ્ટાન્ત પ્રસિદ્ધ છે તેને માટે પરિસ્રવ, આસ્રવરૂપથી પરિણત થયેલ છે

(૩) 'યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ' જેનાથી કર્મબધ નથી થતા એવા જે
વ્રત-વિશેષ છે તે પણ કર્મોદયના વશથી જેના અધ્યવસાય અશુભ જ રહેલા
છે, એવા અજ્ઞાની છુવને માટે કર્મબધના જ કારણ બને છે.

(૧) યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવા, (૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવા,

(૩) યે અનાસ્રવાસ્તે પરિસ્રવા, (૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવા,

(૧) ય આસ્રવા-આસ્રવન્તિ=કર્મ સચિન્વન્તીત્પાસ્રવા=કર્મબન્ધકર્તાનો

જીવા, ત એવ પરિસ્રવા=કર્મનિર્જેરાકર્તાર । અસ્મિન્ પ્રથમમંત્રે સર્વે સંસારિણો જીવાઃ પ્રક્ષિપ્તા, તે દિ પ્રતિજ્ઞામિધ્યાત્વાદિમિરાગન્તુકાનાં કર્મણાં વન્ધ, પૂર્વાર્મિતાનાં ચ નિર્જેરાં કુર્વન્તિ ।

તથા-(૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવા, इति द्वितीयमङ्गवर्चिनो जीवा

(૪) 'યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ' જો કર્મકે બંધ કરાવે તેને કારણ હોતે હે એ હી પ્રવચનકે ઉપકારકે અભિપ્રાયસે કિયે હુવ હોને સે કર્મ-બંધક કારણ નહીં હોતે, જૈસે ચાલમ્લાનાદિકે લિયે નિત્યપિણ્ડાદિ કા ગ્રહણ કરના । હસ સૂત્રમેં આદિ અત્રકે વો હી મંગ વાતલાયે ગયે હે, મધ્ય કે નહીં, ઉત્તરકા ગ્રહણ કરને પર હસ સૂત્રમેં ચતુર્મઙ્ગી હસ પ્રકાર સે વનતી હે—

(૧) યે આસ્રવા — તે પરિસ્રવા, (૨) યે આસ્રવા — તે અપરિસ્રવા:

(૩) યે અનાસ્રવા — તે પરિસ્રવા, (૪) યે અનાસ્રવા — તે અપરિસ્રવા

૧-યહાં પર પ્રથમ મંત્ર મેં સમસ્ત સંસારી જીવોં કા સમાવેશ હો જાતા હે, કારણ કિ એ હી જીવ પ્રતિજ્ઞા મિધ્યાત્વાદિક જો કર્મબંધકે કારણ હે, ઉનસે કર્મોંકા વન્ધ કરતે રહતે હે, ઓર પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોં કી નિર્જેરા મા કિયા કરતે હે ।

૨-દ્વિતીય મંત્ર શુન્ય હે, કારણ-એસે કોઈ સી જીવ નહીં હે જો

(૪) 'યે અપરિસ્રવા સે અનાસ્રવાઃ' એ કર્મબંધ કરવામા કારણ બને છે, પ્રવચનના ઉપકાર કરવાના અભિપ્રાયથી કરવામા આવેલ તે જ કર્મબંધના કારણ થતા નથી એમ જાણ-જ્ઞાનાદિ માટે નિત્યપિંડાદિનું શ્રદ્ધા કરવું આ સૂત્રમાં આદિજ્ઞાતના એ જગ બતાવેલ છે મધ્યના નહિ આના શ્રદ્ધા કરવાથી આ સૂત્રમાં ચતુર્મંગી આ પ્રકારે બને છે—

(૧) યે આસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવા, (૨) યે આસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવા

(૩) યે અનાસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવા, (૪) યે અનાસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવા ।

(૧) અહીં પ્રથમ જગમા સમસ્ત સંસારી જીવોંના સમાવેશ માં બંધ છે, કારણ કે તે જ જીવ પ્રતિજ્ઞા મિધ્યાત્વાદિક એ કર્મબંધના કારણ છે તે ઓછી કર્મોં બંધ કરે છે, અને પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોંની નિર્જેરા કરે છે.

(૨) બીજો જગ શુન્ય છે, કારણ કે એવો કોઈ પણ જીવ નથી જે અવગતો

કેડપિ નોપલભ્યન્તે, કુતઃ ? યે-આસ્રવાઃ-કર્મવન્ધકર્તારસ્તેડવશ્યમેવ કર્મ-નિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ, તસ્માત્તે-અપરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાયાઃ અકર્તારો ન ભવન્તિ ।

તથા-(૩) યે અનાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધસ્યાડકર્તારસ્તે પરિસ્રવાઃ=પૂર્વકર્મનિર્જરા-કર્તારઃ, ઇત્યેતસ્મિન્ તૃતીયભક્ત્રે ચાયોગિકેવલિનશ્ચતુર્દશગુણસ્થાનવર્તિનઃ સન્તિ ।

તથા-(૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, ઇતિ ચતુર્થભક્ત્રે સિદ્ધાઃ સન્તિ, તેપા-મનાસ્રવત્વાદપરિસ્રવત્વાચ્ચ । અત્રાદ્યન્તભક્ત્રૌ સૂત્રે ગૃહીતૌ । આદ્યન્તભક્ત્રગ્રહણેન મધ્યમ-ભક્ત્રદ્વયં સુતરાં ગૃહ્યતે ॥

યદ્વા-યે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્તારો જીવાસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ । તથા-યે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારસ્તે આસ્રવાઃ=પુનર્નવીનકર્મવન્ધ-કર્તારો ભવન્તિ ।

આસ્રવકર્તા હોતે હુણ્ મી નિર્જરા કે કર્તા નહીં, જો કર્મવન્ધકે કર્તા હોતે હેં વે અવશ્ય હી કર્મકી નિર્જરા કે મી કર્તા હોતે હૈ ।

૩-તૃતીય ભક્ત્રમેં અયોગિકેવલિનામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં રહ-નેવાલે જીવોંકા ગ્રહણ હૈ, કારણ કિ ઉનકે નવીન કર્મોંકે વન્ધકા અભાવ હૈ, ઔર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કી નિર્જરા કા સદ્ભાવ હૈ ।

૪-ચતુર્થ ભક્ત્ર મેં સિદ્ધ જીવોંકા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, વહાં પર ન કર્મોં કા આસ્રવ હૈ ઔર ન ઉનકી નિર્જરા હી હૈ ।

અથવા-જો જીવ આસ્રવ-કર્મવન્ધકે કરનેવાલે હેં વે પરિસ્રવ-કર્મ-નિર્જરાકે કરનેવાલે હેં, તથા-જો પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરા કે કરનેવાલે હેં વે આસ્રવ-ફિરસે નવીન કર્મોં કે વન્ધ કરનેવાલે હેં ।

હોવા છતા નિર્જરાનો કર્તા ન હોય ? જે કર્મબંધનો કર્તા હોય છે તે અવશ્ય જ કર્મની નિર્જરાનો પણ કર્તા હોય છે

(૩) ત્રીજા ભગવા અયોગિકેવળી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમા રહેવાવાળા જીવોતુ ગ્રહણ છે, કારણ કે તેને નવા કર્મના બંધનો અભાવ છે, અને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોની નિર્જરાનો સદ્ભાવ છે

(૪) ચોથા ભગવા સિદ્ધ જીવોતુ ગ્રહણ કરેલુ છે ત્યાં નથી કર્મોતુ આસ્રવ અને નથી તેઓની નિર્જરા

અથવા-જે જીવો આસ્રવ-કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે તે પરિસ્રવ-કર્મ નિર્જરાના કરવાવાળા છે, તથા જે પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરાના કરવાવાળા છે તે આસ્રવ-ફેરી નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે

નત્રં 'યે પરિસ્થાસ્તે આસ્થા' ઇતિ સ્વીકારે પ્રયોદશે સયોગિકેવલિ-
ગુણસ્થાને યેર્થાપયિકક્રિયા સમાગત કર્મ નિર્જરયતો મુને પુનર્નવીનકર્મવન્ધાપર્ષી
સત્પા કર્મવન્ધપરમ્પરોન્મેદ કદાપિ ન સ્પાત્, તથા ચ-આગમોક્તમોક્ષવાદસ્ય
વૈયર્થ્યે પ્રસજ્યત ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—

પ્રયોદશગુણસ્થાનસમાગતકર્મણા નિર્જરા યન્નિ જીવન પ્રયત્નવિશેષજ ક્રિયત
તર્દિ યયોક્તરીત્યા તર્નિર્જરાકર્તૃમુને પુનરપિ નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્તમાપયેત, પરન્તુ
નૈવં મનન્તિ, યત્—તસ્ય કર્મણા નિર્જરા સ્વમાવાદય જાયતે ।

શંકા—“જો નિર્જરા કરનેવાલે હ વે નવીન કર્મકા યથ કરનેવાલે
હે ” હમ પ્રકારકે પૂર્વોક્ત મજ્જકી સ્વીકૃતિમેં મયોગિ-કવલિનામક
તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવોં વે મી નવીન કર્મવન્ધકા સદ્વાચ માનના
પહેગા, કારણ કિ વહા પર નિર્જરા મી હોતી હે ઓર ઈર્થાપય ક્રિયાસે
નવીન કર્મોંકા વન્ધ મી હોતા હે । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા કે અનુસાર
તો વહાં કર્મી મી કર્મવન્ધ કી પરમ્પરા કા ઉચ્છેદ હી નહીં હો સકેગા;
ફિર આગમમેં જિસ મુક્તિવાદ કા સમર્પન કિયા હુઆ મિલતા હે વહ
સર્વથા અસંગત હી ઠહેરેગા ?

ઉત્તર—યહ આપકા કહના તય ઠીક હો સકતા, જય કિ પ્રયોદશ
ગુણસ્થાનવર્તી જીવકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્ન વિશેષસે
માપ્ય હોમી માની જાતી, પરન્તુ યેસી માન્યતા તો હે હી નહીં, ક્યોં કિ
વહા પર આગત કર્મોં કી નિર્જરા સ્વન-સ્વમાવ સે હી હોતી હે ।

શંકા— ‘ય પરિસ્થાસ્તે આસ્થા’ અર્થાત્— જે નિર્જશ કર્મવાળા છે તે
નવીન કર્મોના બન્ધ કરવાવાળા છે ” આ પ્રકારે જે માનવામાં આવે તો
સમ્યક્નિર્જશીનામના તરના મુલસ્થાનવર્તી હોવાને પણ નવા કર્મના બન્ધને
મદ્બાદ માનવો પડે, કાબુ કે ત્યા નિર્જશ પણ થાય છે અને કર્મો રાક્ષિયાથી
નવા કર્મના બન્ધ પણ થાય છે આવા પ્રકારની માન્યતાના અનુસારે તો ત્યા કોઈ
વખત પણ કર્મ બન્ધની પરપરાને ઉચ્છેદ થઈ શકે નહિ, તો પછી આગમના જે
મુખિયાદનુ અમથન કૈયુ છે તે સર્વથા અસંગત જ થઈ જશે.

ઉત્તર—આ આપનુ કહેવુ ત્યાં ન જાન થાય, ક્યારે પ્રયોદશમુલસ્થાન
વર્તી હોવાના માનના કર્મોના નિર્જશ કાઈ પ્રયત્નવિશેષથીજ માનવામાં આવે
પરન્તુ અર્થી માન્યતા તો હ જ નહિ કર્મ કે ત કેકાને આગત (આવેગ)
કર્મોના નિર્જત સ્વભાવથી જ થાય ।

अत्र परिस्रवपदार्थे जीवप्रयत्नकृता निर्जरा परिगृह्यते, एवं च नोक्तदोषप्रसङ्गः । त्रयोदशगुणस्थाने उक्तकर्मैव जीवो निर्जरयति, प्रथमसमये ऐर्यापथिककर्मणो बन्ध, द्वितीये तद्वेदन, तृतीये च तन्निर्जरेत्येवं क्रमेण बन्धो निर्जरा चेति द्वयं स-योगिकेवल्लिगुणस्थानं यावन् प्रवर्तते । तत्रत्या निर्जरा न जीवप्रयत्नजनिता किंतु स्वभावादेवेति पुनः पुनः स्मृतिपथमानेतव्यम् ।

तथा—चतुर्दशगुणस्थानवर्तिजीवोऽपि नैतद्वाक्यविषयः । तस्याघातिकर्मचतुष्टय-निर्जराकर्तृत्वं प्रयत्नविशेषमनपेक्ष्य भवति, केवलज्ञानोत्पत्तौ सत्यां तत्सामर्थ्या-दवशिष्टकर्मचतुष्टयनिर्जराया अवश्यम्भावनिरूप्यते ।

“परिस्रव” इस शब्द में जीवके प्रयत्न से होनेवाली निर्जरा का ही ग्रहण किया गया है, अतः उस गुणस्थानवर्ती जीव के नवीन कर्मबंध के प्रति कर्तापन किसी प्रकार भी संभवित नहीं हो सकता है । वहां प्रथम समय में ईर्यापथ क्रियासे आगत कर्मका बंध होता है, द्वितीय समयमें उसका वेदन और तृतीय समयमें उसकी निर्जरा । इस प्रकारका क्रम उस जीव के तब तक चालू रहता है जब तक उस जीव के उस गुणस्थानवर्तीपना रहता है, अतः यह मानना कि—उसके आगत कर्मों की निर्जरा किसी प्रयत्नविशेषाधीन होती है, यह एक भ्रम ही है, क्योंकि उन कर्मों की निर्जरा तो स्वाभाविक ही है ।

तथा चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीवमें अवशिष्ट अघातिया कर्मोंकी निर्जरा के प्रति कर्तृत्व प्रयत्नविशेषके बिना स्वतः ही है, कारण कि केवलज्ञानकी उत्पत्ति होने पर उसके प्रभावसे उन अघातिया कर्मोंकी

“परिस्रव” आ शब्दमा लवना प्रयत्नथी थवावाणी निर्जरातु न अहणु करेव छे, तेथी आ गुणस्थानवर्ती लवतु नवीन कर्मबंध करवामा कर्तापणु कोछ पणु प्रकारे सलपित थछ शकतु नथी त्या प्रथमसमयमा ईर्यापथक्रियाथी आगत (आवता) कर्मनो बंध थाय छे, जीवत समयमा तेनु वेदन अने त्रीवत समयमा तेनी निर्जरा आ प्रकारेना कर्म ते लवने त्या सुधी आलु रहे छे ज्या सुधी ते लवने ते गुणस्थानवर्तीपणु रहे छे आथी ओम मानवु डे ‘तेना आगत कर्मनी निर्जरा कोछ प्रयत्नविशेषाधीन होय छे’ ओओक भ्रम न छे, कारण डे ते कर्मोनी निर्जरा तो स्वभावथी न थाय छे

तथा—चौदहमा गुणस्थानवर्ती लवमा अवशिष्ट (गात्री रहेला) अघातिया कर्मोनी निर्जरा प्रति कर्तापणु कोछ ओक प्रयत्न वगर स्वत न छे तेनु कारण ओ छे डे केवलज्ञाननी उत्पत्ति थता न तेना प्रभावथी ते अघातिया कर्मोनी

પ્રથમ—‘યે આસ્ત્રવાસ્તે પરિસ્ત્રવાઃ, યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવા’ इति
 પૂર્વાર્ધવાક્યં ચતુર્ગતિભ્રમણાધિકારિનીનામિપ્રાયેણ વ્યયિતમ્ । ‘યે અનાસ્ત્રવાસ્તે
 અપરિસ્ત્રવા, યે અપરિસ્ત્રવાસ્તે અનાસ્ત્રવા’ इत्युत्तरार्ધવાક્યં તુ સિદ્ધાપેક્ષયા; તે
 हि-नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाऽभावादनास्त्रवा, सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मबन्धभावेन
 च निर्जरणीयकर्माभावात्कर्मनिर्जराया अकर्णारस्तस्मादपरिस्त्रवाः ।

તથા—સકલપૂર્વકર્મક્ષયેન નવીનક્રમાનાગમનેન ચ નિર્જરણીયકર્માભાવાત્કર્મ
 નિર્જરાયા અકર્તૃત્વાદ્ અપરિસ્ત્રવાઃ, નવીનકર્મબન્ધકર્તૃત્વાભાવાદ્ અનાસ્ત્રવા, इति ।

નિર્જરા નિયમસે હોતી છે, इसे रोकनेवाली कोई भी शक्ति नहीं है,
 इसलिये चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीवके प्रति भी यह आक्षेप नहीं होता।

इस प्रकार “ये आस्त्रवास्ते परिस्त्रवाः, ये परिस्त्रवास्ते आस्त्रवाः” यह
 पूर्वार्ध वाक्य चतुर्गतियों में भ्रमण करनेके अधिकारी जीवों की अपेक्षा से
 ही कहा गया है। तथा—“ये अनास्त्रवास्ते अपरिस्त्रवाये” अपरिस्त्रवास्ते अना
 स्त्रवाः” यह उत्तरार्ध वाक्य सिद्धों की अपेक्षासे कहा गया है, कारण कि
 एक तो वे नवीन कर्मबन्धके कर्ता नहीं हैं इससे वे अनास्त्रव हैं। दूसरे
 उनमें पूर्वके सकल कर्मोंका क्षय और आगामी नवीन कर्मबन्धका अभाव
 ही हो चुका है, इसलिये निर्जराके भी कर्ता नहीं माने गये हैं। इसलिये वे
 अपरिस्त्रव हैं। तथा—उनमें पूर्वसंचित सकल कर्म के क्षय से और नवीन
 कर्मों के नहीं आने के कारण निर्जरा करने योग्य कर्मोंके अभाव से कर्मोंकी
 निर्जराके कर्ता नहीं होने के कारण वे अपरिस्त्रव हैं, और नवीन कर्मोंके
 बन्ध नहीं करने के कारण वे अनास्त्रव हैं ।

નિર્જરા નિયમથી થઈ જાય છે, તેને રોકવાવાળી કોઈ પણ શક્તિ નથી, માટે
 ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્તી જીવના પ્રતિ પણ આ આક્ષેપ થઈ શકતો નથી.

આ પ્રકારે ‘યે આસ્ત્રવાસ્તે પરિસ્ત્રવા’ યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવા” આ
 પૂર્વાર્ધ વાક્ય ચતુર્ગતિયોમા ભ્રમણ કરવાવાળા જીવોની અપેક્ષાથી જ કહેલ છે.
 તથા—“યે અનાસ્ત્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ યે અપરિસ્ત્રવાસ્તે અનાસ્ત્રવા” આ ઉત્તરાર્ધ
 વાક્ય સિદ્ધીની અપેક્ષાએ કહેલ છે કારણ કે એક તો તે નવા કર્મજનક
 કર્તા નથી તેથી તે અનાસ્ત્રવ છે બીજી તેમા પૂર્વના સકળ કર્મોના ક્ષય અને
 આગામી નવા કર્મજનકો અભાવ પણ થઈ ચુકેલ છે, માટે નિર્જરા કરવાયોગ્ય
 કર્મોના અભાવ થવાથી તે નિર્જરાના પણ કર્તા માનવામા આવેલ નથી, માટે તે
 અપરિસ્ત્રવ છે તથા—તેમા પૂર્વસંચિત સકળ કર્મોના ક્ષયથી અને નવીન કર્મોના નહિ
 આવવાથી નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મોના અભાવ થવાથી કર્મોની નિર્જરાના
 કર્તા નહી હોવાને લીધે તે અપરિસ્ત્રવ છે અને નવીન કર્મો તો બંધ નહી
 કરવાથી તે અનાસ્ત્રવ છે.

યદ્વા-અનાસ્રવાપરિસ્રવયોઃ ક્રમં દર્શયતિ-‘યેઽનાસ્રવાસ્તેઽપરિસ્રવાઃ’ ઇતિ । યે પ્રથમે સમયેઽનાસ્રવા ભવન્તિ-કર્મવન્ધકા ન ભવન્તિ, તે તત્પશ્ચાત્ સમયે અપરિસ્રવા ભવન્તિ-કર્મનિર્જરકા ન ભવન્તિ, વદ્વસ્યેવ કર્મણો નિર્જરણીયત્વાત્ । એવં યેઽપરિસ્રવાસ્તેઽનાસ્રવા ઇતિ બોધ્યમ્ । એતદપિ વ્યાખ્યાનં સિદ્ધાપેક્ષયા ॥ મૂ. ૧ ॥

યદ્દેવં તતઃ કિમ્ ? ઇત્યાહ-‘એ એ પપ્પ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-એ એ પપ્પ સંબુજ્જમાણે લોચં ચ આણાએ અભિસમિચ્ચા પુઠો પવેઙ્ગયં ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા-એતાનિ પદાનિ સંબુદ્ધમાનઃ લોકં ચાજ્ઞયાઽભિસમેત્ય પૃથક્ પ્રવેદિતમ્ । ૨ ।

ટીકા-એતાનિ=અનન્તરોક્તાનિ, પદાનિ=‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ ઇત્યાદીનિ સંબુદ્ધમાનઃ=સમ્યગ્ જાનન્, તથા લોકં=પદ્ધતિજીવનિકાયમ્ આસ્રવાગતકર્મણા

અથવા-અનાસ્રવ ઓર અપરિસ્રવ કે ક્રમકો દિશાતે હૈ-“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવા.” જો પ્રથમ સમયમેં અનાસ્રવ હૈ-કર્મવન્ધ કે કર્તા નહીં હૈ, વે ઉસકે બાદ કે સમયમેં અપરિસ્રવ હૈ-કર્મ કી નિર્જરા કરનેવાલે નહીં હૈ, કારણ કિ જો કર્મોસે બંધા હુઆ હોતા હૈ વહી ઉનકી નિર્જરા કરનેવાલા ભી હોતા હૈ । જો કર્મોસે બંધા હુઆ હી નહીં હૈ વહ નિર્જરા ભી કિસકી કરેગા । હસી પ્રકાર “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” યહ વાક્ય ભી સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । યહ વિવરણ ભી સિદ્ધોંકી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા હૈ એસા સમજ્ઞના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧ ॥

યદિ એસા હૈ તો હસસે ક્યા ? હસકા ઉત્તર કહતે હૈ-‘એ એ પપ્પ સંબુજ્જમાણે’ ઇત્યાદિ ।

હન પૂર્વોક્ત પદોં કો અચ્છી તરહસે જાનનેવાલા કૌનસા એસા પ્રાણી હોગા જો આસ્રવસે આયે હુએ કર્મો સે બંધે હુએ, ઓર તપ એવં સંયમ કે

અથવા-અનાસ્રવ અને અપરિસ્રવના ક્રમને બતાવે છે-

“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ” જે પ્રથમ સમયમા અનાસ્રવ છે-કર્મબંધના કર્તા નથી તે ત્યારબાદના સમયમા અપરિસ્રવ છે-કર્મની નિર્જરા કરવાવાળા નથી, કારણ કે જે કર્મોથી બંધાયેલા રહે છે તે તેની નિર્જરા કરવાવાળા પણ હોય છે જે કર્મોથી બંધાયેલા નથી તે નિર્જરા પણ કેવી રીતે ? આ જ પ્રકારે “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવા” આ વાક્ય પણ સમજી લેવું જોઈએ આ વિવેચન પણ સિદ્ધાંતની અપેક્ષાથી જ કરેલ છે ॥ સૂ. ૧ ॥

જે એમ છે તો તેનાથી શું ? આનું ઉત્તર કહે છે-‘એ એ પપ્પ સંબુજ્જમાણે’ ઇત્યાદિ । તે પૂર્વોક્ત પદોને ઘણી સારી રીતે બાણનાર કેણુ તેવો પ્રાણી હશે જે આસ્રવથી આવેલા કર્મોથી બંધાયેલા અને તપ સચમના આરાધનથી રહિત આ

વચમાન, તપસંયમસમારાધેન ચ મુચ્યમાનમ્, આશ્વા=આર્હતાગમાનુસારેન, અમિસમેત્સ્ય=સમ્યગ્ વિજ્ઞાય, પૃથક્=અન્યાન્યમકારેણ પ્રવર્તિતં ચ=મ્મતીતાનાગત્ત્વર્તમાને સર્વતીર્થકરૈઃ પ્રયોધિતં વ્યવહારણં નિર્મરાકારણં ચ, અમિસમેત્સ્ય=હસ્ત્વા, કો નામ ધર્માચરણે પ્રવૃષ્ઠો ન ભવતુ? અપિ તુ મયં દેવે તિત્પર્ય ॥ સૂ. ૨ ॥

આર્હતપ્રવચનાનુસારી ચતુર્દશપૂર્વપરાશિરપિ જીવાનાં હિસાય પ્રવેદયતીત્યાહ 'આવાહ નાળી' ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય-આવાહ નાળી ઇહ માળવાળ સત્સારપડિવળ્લાળ સવુજ્જમાળાળ વિજ્ઞાળપત્તાળ અદ્દાવિ સતા અદુવા પમત્તા અહા સચ્ચમિળ-તિવેમિ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા-આત્મ્યાતિ જ્ઞાની ઇહ માનવેભ્ય સંસારપ્રતિપન્નેભ્ય મનુષ્યમાનેભ્યા વિજ્ઞાનપ્રાપ્તેભ્યા, આતાં અપિ સન્તઃ અથવા પ્રમત્તાઃ યથાસત્યમિદ્રમ્ ઇતિ પ્રશ્નમિ ॥૩॥

ટીકા-જ્ઞાની=પ્રવચનજ્ઞાનમંપક્ષ, ૨૬=પ્રવચને પ્રોક્ત ધર્મ માનવેભ્ય, આ સ્યાતિ-ઇત્યન્વય, મનુષ્યાણાં સર્વસંસ્કારાશિસંમલાષેભ્ય ઉપદિશતીત્યર્થઃ ।

આરાધનસે રહિત ઇમ પદ્મજીપનિકાપરુષ લોકકો તથા અતીત, અનાગત ઓર વર્તમાન સમસ્ત તીર્થકરો દ્વારા મિત્ત ૨ પ્રકારસે ઉપદિષ્ટ વંધકે કારણો ણ્વં નિર્નેરા કે કારણો કો જિનાગમસે જાન કર ધર્માચરણ કરને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોગા ? અપિતુ અવદ્ય હી હોગા ॥ સૂ. ૨ ॥

અર્હત પ્રભુકે પ્રવચનાનુમાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ચતુર્દશપૂર્વ કે પાઠી ગણધરાદિક મી જીવોં કે હિતકે લિયે હી ઉપદેશ કરતે હેં; યહી વાત પ્રક્ટ કી જાતી હૈ- 'આવાહ નાળી' ઇત્યાદિ ।

જિને પ્રોપદિષ્ટ પ્રવચનકે જ્ઞાનસે સંપન્ન જ્ઞાની ગણધરાદિક શાસ્ત્ર ચિહ્નિત ધર્મકા પ્રતિપાદન, હેયોપાદેય-વિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોં કે

પદ્મજીપનિકાપરુષ લોકકો તથા અતીત અનાગત અને વર્તમાન અમસ્ત તીર્થકરો દ્વારા જુદા જુદા પ્રકારથી ઉપદિષ્ટ બાધના કારણોને અને નિર્જનતા કારણોને જાણ અમથાં બાળીને ધર્માચરણ કરવામા પ્રવૃત્ત ન થાય ? પરન્તુ અવગમ ન થાય ॥ સૂ. ૨ ॥

અવ-ત પ્રભુના પ્રવચન અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનાર ચતુર્દશ-ગોઠ પૂર્વના પાઠી ગણધરાદિક પદ્મ જીવના હિતને માટે જ ઉપદેશ કરે છે આ વાત પ્રમ કરવામા આવે છે- આવાહ નાળી ઇત્યાદિ

જીને ૬ અગ્રવાને કહેલા પ્રવચનના જ્ઞાનથી અપણ જ્ઞાની ગણધરાદિક શાસ્ત્રચિહ્નિત ધર્મનુ પ્રતિપાદન હેયોપદેશવિનેશીલ આશી મનુષ્યોને માટે કરે છે આ સૂત્રમા

કથંભૂતેભ્યો માનવેભ્યઃ ? સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ=ચતુર્ગતિપુ વર્તમાનેભ્યઃ, કેવલિપ્રમુ-
ત્તીનામુપદેશશ્રવણપ્રયોજનં નાસ્તીતિ ભાવઃ । સંસારિણ્ણપિ ધર્મગ્રહણયોગ્યા એવ ઉપ-
દેશાર્હાં इत्यत आह-संवृध्यमानेभ्य इति, यथोपदिष्टं धर्मज्ञातृभ्य इत्यर्थः ।
असंज्ञिनो नोપદેશાર્હાં, इत्यतस्तान् व्यावर्तयितुं विशेषणान्तरमाह-विज्ञानप्राप्तेभ्य
इति हेयोपादेयज्ञानवद्भ्यः-सर्वथापर्याप्तकेभ्यः संज्ञिभ्य इत्यर्थः ।

લિધે કરતે હૈં । ઇસ મૂત્રમેં જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મકા ઉપદેશ સંસારી
માનવોં કે લિધે જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ યહી હૈં કિ ઉનમેં
હી સર્વસંચર ઔર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે આરાધન કરને કી યોગ્યતા
રહી હુઈ હૈં । ઉનમેં ખી જો ધર્મગ્રહણ કરનેકી યોગ્યતા સે સમ્પન્ન હોતે
હૈં ઉન્હેં હી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈં, ઔર વહીં પર વહ અસરકા-
રક હોતા હૈં । જો અપર્યાપ્તાવસ્થામેં રહે હુઅ હૈં વે ધાર્મિક ઉપદેશકે પાત્ર
નહીં હૈં । યહી વાત ‘સંવૃધ્યમાન’ ઔર ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ ઇન દો વિશે-
ષણોં સે પ્રકટ કી ગઈ હૈં । જો ધાર્મિક ઉપદેશકો યથાવત્ નહીં સમ્પન્ન
સકતે વે ઉસ ઉપદેશ સે લાભ ખી કુછ નહીં પ્રાપ્ત કર સકતે ।
એવં જો અપર્યાપ્ત હૈં, અસંજી હૈં, ઉન પર ખી ઉપદેશ અપના કુછ ખી
પ્રભાવ નહીં દિખા સકતા । મનકે વિના વિચારશક્તિકા અભાવ
હોનેસે વે ઉસ લાભસે સર્વથા વંચિત હી રહતે હૈં, અતઃ જો સંજી હૈં,
જિનમેં ‘યહ હેય હૈં યહ ઉપાદેય હૈં’ ઇસ પ્રકારકા જ્ઞાન જાગૃત્ત હો રહા
હૈં, વહીં પર દિયા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ અપના પ્રભાવ પ્રકટ કરતા હૈં ।

જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મનો ઉપદેશ સંસારી જીવોને માટે જે પ્રગટ કરવામા
આવેલ છે તેનુ કારણ એ જ છે કે તેમા સર્વ-સંચર અને સર્વ-વિરતિરૂપ
ચારિત્રનુ આરાધન કરવાની યોગ્યતા રહેલી છે તેમા પણ જે ધર્મ ગ્રહણ કરવાની
યોગ્યતાથી સંપન્ન હોય છે તેને જ ધર્મનો ઉપદેશ આપવામા આવે છે, અને
ત્યાં જ તે અસરકારક પણ થાય છે જે અપર્યાપ્તાવસ્થામાં રહેલા છે તે ધાર્મિક
ઉપદેશને પાત્ર નથી, આ વાત ‘સંવૃધ્યમાન’ અને ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ આ બે વિશે-
ષણોથી પ્રગટ કરેલ છે જે ધાર્મિક ઉપદેશને યથાવત્ નથી સમજી શકતા તે
એ ઉપદેશથી કાંઈ પણ લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી તેમજ જે અપર્યાપ્ત છે-
અસંજી છે તેની ઉપર પણ ઉપદેશ પોતાનો કાંઈ પણ પ્રભાવ પાડી શકતો નથી.
મન વગર વિચાર-શક્તિનો અભાવ હોવાથી તે એ લાભથી સર્વથા દૂર જ રહે
છે, પણ જે સંજી છે એમાં ‘આ હેય છે, આ ઉપાદેય છે’ આવા પ્રકારના
જ્ઞાનની જાગૃતિ છે તેવાઓને ધર્મનો ઉપદેશ પોતાનો પ્રભાવ બતાવી શકે છે

જ્ઞાનીકા દિવા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશા હસ પદ્ધતિ કા હોતા હૈ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણવિશિષ્ટ માનવોં મૈં અપને કર્તવ્ય માર્ગકી અવશ્ય ૨ જાગૃતિ કરતા હુઆ ઉન્હેં ધર્મકી માથનાસે માથિત કર દેતા હૈ । યદિ કોઈ કિસી કારણ સે આતુર-પીડિત યા પ્રમત્ત-પ્રમાદદશાવાલા મી હો તો મી ઘહ ઇસ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિયોધિત હો જાતા હૈ । યહી “અઘાવિ સંતા અદુલા પમસા ” હસ પદ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । કિસી કારણવશ જો આર્તધ્યાનમૈં લક્ષીન હૈ, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોં સે યા વૈપરિત્ય કિસી મી સંબંધ સે જો પ્રમત્ત હો રહે હૈ, યેસે માનવ મી જ્ઞાની કે દિવ્ય ઉપદેશ સે ધાર્મિક લાભસે સંપન્ન હુય હૈ । જૈસે-આર્ત ચિંતાતિપુત્ર ઘૌરહ ઓર પ્રમત્ત શાલિમદ્રાદિકોને ધર્મકા લાભ જ્ઞાનીકે ઉપદેશસે લિયા હૈ ।

હસ સૂત્રમૈં “ મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈ ” યહ જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈ, ઇમકા કારણ યહ હૈ કિ-ઊનમૈં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ આરિત્રારાધન કરનેકી અધિકારિતા હૈ । યદ્યપિ પ્રમુકા ધાર્મિક આશ્યાન-ઓત મેઘધારાકી તરહ યકસી ધારામૈં સર્વત્ર પક્ષપત્ત રહિત બહતા હૈ । ઊમકી પર્યંતા-સમવસરણ-મૈં જો (૧૨) ધારહ પ્રકારકી પરિવદ હોતી હૈ ઇસમૈં સબકે લિયે પ્રમુકી દિવ્યધાણી યકરૂપમૈં વિના કિસી મેઢમાથકે ઊન ૨ જીવોંકી માપામૈં પરિણત હોતી હૈ ।

જ્ઞાનીએ આપેલ ધાર્મિક ઉપદેશ પણ આ પદ્ધતિના હોય છે જે પૂર્વોક્ત વિશેષણ-વિશિષ્ટ મનુષ્યોમાં પોતાના કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય અવશ્ય જાગૃતિ કરતાં કરતાં તેમાં ધમની આવના ભરી દે છે કદાચ કદાચ કદાચ ધારણથી પીડિત અતર પ્રમદદશાવાળા પણ હોય તો પણ તે આ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિયોધિત થઈ બદલે છે । ‘ અઘા વિ સવા અદુલા પમસા ’ આ પદોથી સ્પષ્ટ કરેલ છે કદાચ ધારણ વશ જે આર્તધ્યાનમાં તરફ છે, અથવા રાગદ્વેષ આદિ ધારણથી યા વૈપરિત્ય કદાચ પણ સબ ધર્મો જે પ્રમત્ત થઈ રહ્યા છે, જેવા મનુષ્ય પણ જ્ઞાનીના દિવ્ય ઉપદેશથી ધાર્મિક લાભ પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આર્ત-ચિંતાતિપુત્ર વિગેરે અને પ્રમત્ત-શાલિમદ્રાદિકોને ધર્મના લાભ જ્ઞાનીના ઉપદેશથી લીધા છે.

આ સૂત્રમાં “ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની ધર્મના ઉપદેશ આપે છે ” આ જે પ્રકટ કરેલ છે તેનું ધારણ એ છે કે-તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ આરિત્ર આસપ્તન કરવાની મોખતા છે પ્રમુકા ધાર્મિક આશ્યાન-ઓત વરસાદધારાની માફક એક ધારાથી સર્વત્ર પક્ષપાતરહિત વહે છે તેમની પથ-સમવસરણ-માં જે બાર પ્રકારની પરિવદ બચાવ છે તેમાં જમાને માટે પ્રમુકી દિવ્ય ધાણી કદાચ પણ સેદલાવ વિના-એક રૂપમાં તે તે જીવોની માપમા પરિણત થાય છે,

જ્ઞાની યથા ધર્મમાખ્યાતિ તથા દર્શયતિ-‘ આર્તાઅપિ ’ ઇત્યાદિ । આર્તાઅપિ = કુતશ્ચિત્ કારણાત્ આતુરા અપિ, અથવા રાગદ્વેષોદયાત્ અન્યસ્માદ્ વા વિષય-સંગવશાત્ પ્રમત્તા અપિ સન્તઃ પ્રતિબુદ્ધ્યન્તે, યથા-આર્તાશ્ચિલાતિપુત્રાદયઃ, પ્રમત્તાઃ શાલિભદ્રાદયો ધર્મં વિદન્તિ સ્મ, તથા જ્ઞાની પુરુષો ધર્મમુપદિશતીત્યર્થઃ । એતસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ દર્શયિતુમાહ-‘ યથાસત્યમિદમ્ ’ ઇતિ । મયા યત્ કથિતં કથ્યમાનં ચ તદિદં યથાસત્યં સત્યમનતિક્રમ્ય વર્તતે-ઇત્યર્થઃ, મુમુક્ષુર-

ફિર ખી જો યહાં પર મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઉસકા કારણ ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરને કી યોગ્યતા હી હૈ । ઓર ઉસી યોગ્યતા કો લક્ષમેં રખ કર યહ કહા ગયા હૈ ।

મનુષ્યોં કે સિવાય અન્યગતિયોં કે જીવોં મેં યહ યોગ્યતા નહીં હૈ । તિર્યચ્છગતિકે જીવ (૫) પાંચ ગુણસ્થાનોં સે આગે નહીં બઢ સકતે હૈ । દેવગતિકે જીવોં મેં (૪) ચાર ગુણસ્થાન હી પાયે જાતે હૈં, અન્ય ગુણસ્થાન નહીં । મનુષ્યોં મેં હી (૧૪) ચૌદહ ગુણસ્થાનોંકે આરાધન કરનેકી યોગ્યતા હૈ । ઇતના હોને પર ખી જો પર્યાસ નહીં હૈં કિન્તુ અપર્યાસદશાવર્તીં હૈં, વે ઉપદેશકે પાત્ર હી નહીં હૈ ।

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ વે હૈં—જિનકી અખી પર્યાસિયાં પૂર્ણ નહીં હુઈ હૈં, એક અન્તર્મુહૂર્ત મેં નિયમ સે પૂર્ણ હો જાવેંગી । ‘ લઘ્વપર્યાસક ’ વે હૈં—જો પર્યાસિયોં કી પૂર્ણતાસે રહિત હૈં, ઓર અન્તર્મુહૂર્ત મેં જિનકા મરણ

તો પશુ જે આ ઠેકાણે ‘ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ’ આવું જે કહેવામા આવ્યું છે તેનું કારણ તેમા સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ આશિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા જ છે અને તે યોગ્યતાને ધ્યાનમાં રાખીને આ કહેવામા આવેલ છે

મનુષ્ય સિવાય બીજી ગતિઓના જીવોમા આ યોગ્યતા નથી તિર્યચ ગતિના જીવો પાંચ ગુણસ્થાનથી આગળ વધી શકતા નથી દેવગતિમા જીવોને ચાર ગુણસ્થાન જ દેખાય છે, બીજા ગુણસ્થાનો નથી મનુષ્યોમા જ ચૌદ ગુણસ્થાન આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે આટલું હોવા છતાં જે પર્યાસ નથી પશુ અપર્યાસદશાવર્તીં છે તે ઉપદેશને પાત્ર નથી

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ તે છે, જેની હજી પર્યાસિઓ પુરી થઈ નથી, એક અતર્મુહૂર્તમા નિયમથી પૂર્ણ થશે ‘ લઘ્વપર્યાસક ’ તે છે જે પર્યાસિઓની પૂર્ણતાથી રહિત છે, અને અતર્મુહૂર્તમા જેનું મરણ અવશ્ય લાવી છે, તે સંમૂર્ચિતમ

સ્મિન્ વિપયે સમ્યક્ત્વ કુર્યાદિતિ માન । इति=इदं ध्वनीमि=यथा मया मगवद्वाक्य
 भुवं तथा कथयामीत्यर्थः । दुर्लभं सम्यक्ત્વ ચારિત્રં વા પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કર્તવ્ય
 इति भावः ॥ सू० ३ ॥

પ્રમાદવર્તા સંસારિણાં પુનઃ પુનર્મરણ જન્મ ધ નિરત્સારનં મઘતીતિ ચોધયિતુમાર્
 —‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ ।

અઘદયન્નાયી છે । ये संमुखिम मनुष्य होते हैं । इसी पातको प्रकट करने
 के लिये सूत्रमें ‘संमुखिमान’ और ‘विज्ञानप्राप्त’ ये दो विशेषण
 दिये गये हैं ।

કૈસી ૨ દવાસંપન્ન જીવોં ને પ્રમુકી ધર્મવેદનાના સે ધર્મલાભ લિયા
 है, यह पात चितान्तिपुत्र और शालिभद्र आदिके दृष्टान्तसे स्पष्ट की गई है ।
 इनका कथानक शास्त्रों में वर्णित है ।

हे जन्मू ! इस विषयमें जो मैंने कहा है, अथवा आगे भी जो कहा
 जायगा वह सप सर्वथा सत्य ही है । मुमुक्षुका कर्तव्य है कि वह इस
 विषयमें पूर्ण श्रद्धालु हो, कारण कि प्रमुके मुन् से जैसा सुना है वैसा
 ही मैं तुझे कहता हूँ, अतः हे जन्मू ! दुर्लभ सम्यक्त्व और चारित्रको
 प्राप्त कर प्रमादका सेवन न करो, यही बारबार कहना है ॥सू० ३॥

પ્રમાદી સસારી જીવોંકા પુનઃ પુનઃ મરણ ઔર જન્મ નિરતર હોતા
 रहता है, यही प्रकट किया जाता है—‘नाणागमो’ इत्यादि ।

મનુષ્ય હોય છે, આ જ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં ‘સંમુખમાન’ અને
 ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ એ બે વિશેષણો આપેલા છે

કેવી કેવી દશાવાળા હોવાને પ્રમુની ધર્મવેદશાસ્ત્રી ધર્મનો લાભ ધમેલ
 છે તે વાત ચિત્તાન્તિપુત્ર અને શાલિભદ્ર આદિના દૃષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ છે. (અહીં
 કયા શાસ્ત્રોમાં વર્ણવેલી છે)

હે જન્મૂ ! આ વિષયમાં જે મેં કહ્યું છે અને આગળ પણ જે કહેવામાં
 આવશે તે બધું સાચુ જ છે મોક્ષાભિલાષીનું કર્તવ્ય છે કે તે બધા વિષયમાં પૂર્ણ
 શ્રદ્ધાળુ રહે; કારણ કે પ્રમુના મુખથી જેવું ચાલવ્યું છે તેવું જ કું તમોને કહ્યું
 હું માટે હે જન્મૂ ! દુર્લભ સમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પ્રમાદનું
 સેવન ન કરે, એ જ વારવાર કહેવાનું છે ॥ સૂ० ૩ ॥

પ્રમાદી સસારી હોવાના વારવાર મરણ અને જન્મ નિરતર થયા કરે છે,
 તેને પ્રગટ કરવામાં આવે છે—‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ

मूलम्—नाणागमो सच्चमुहस्स अत्थि, इच्छा पणीया वंकानि-
केया कालगहीया निचये निविट्ठा पुढो पुढो जाइं पक्कपयंति । सू० ४।

छाया—नाऽनागमो मृत्युमुखस्यास्ति, इच्छा प्रणीता वङ्कानिकेताः, काल-
गृहीता निचये निविट्ठाः पृथक् पृथक् जार्तिं प्रकल्पयन्ति ॥ सू० ४ ॥

टीका—मृत्युमुखस्यानागमः संसारिणां नास्तीत्यन्वयः । एवभूतः कश्चिदपि
संसारी नास्ति, य उपक्रमेण निरुपक्रमेण वा मृत्युमुखे नाऽऽपततीत्यर्थः । उपक्रमो
= निमित्तं-दण्डकशाशस्त्ररज्जुधिपादयः, निरुपक्रमो= निमित्ताभावः । तथा चोक्तम्—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनं क्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति,

ऐसा कोई संसारी जीव नहीं है जो कि उपक्रम—निमित्तसे अथवा
अनुपक्रम—विना निमित्त से मृत्युके मुखमें नहीं पड़ता हो । कहा भी है—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ॥ १ ॥ ” इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युके भयसे चाहे कहीं भग जाय, या मृत्यु
की लाचारी करे, कहीं चला जाय, कोई प्रपञ्च करे, अथवा अमर होनेके
लिये रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा बडे २ व्रत करे, पहाड़ों की
गुफाओं में छिप जावे, अनेक प्रकारके तप तपे, परिमित खोराक खावे,

येवो केहँ स सारी जेव नथी जे निमित्तथी अथवा वगर निमित्तथी
मृत्युना मुअभा न पडता डोय कहु छे—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युना लयथी लवे केहँ जग्याओ लागी नय,
अथवा मृत्युनी लाचारी करे, केहँ जग्याओ आली नय, कोय प्रपञ्च करे, अथवा
अमर थवाने भाटे रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा मोटा व्रत करे, पहाड़ोनी
गुफाओभा छुपाय नय, अनेक प्रकारना तप करे, परिमित खोराक भाय, मन्त्र—

યે સુરાગાન્ધતયા પ્રમદાધર્મે નામિજાનન્તિ તે કિંમૂતા મન્તીત્યા-‘ઇચ્છા’
 इत्यादि । इच्छया=विषयसुखवाछया, प्रणीता=विषयामिषुसं प्रक्रमेण नीताः,
 इच्छापरतन्त्रा इत्यर्थ । यद्वा-इन्द्रियाधनुकूला प्रवृत्तिरिच्छा, तथा ससारामिषुसं
 मन्त्रसाधना करे, तो भी वह कराल कालके तीखे दांतों से चीरा ही जाता
 है, अर्थात् किसी प्रकार भी प्राणी मृत्यु से नहीं बच सकता ॥१॥

उपक्रम—मृत्युका निमित्त कारण । जैसे—दण्ड, चामुक, शस्त्र, रस्सी,
 विष आदि । निरुपक्रम—मिमित्त रहित—आयुके पूर्ण होने पर अपने-
 आप मृत्युको प्राप्त होना ।

इस सूत्र में यह प्रकट किया जा रहा है कि जो राग और द्वेषसे
 भरे होकर प्रमादी हुए हैं और धर्म को नहीं जान रहे हैं वे विषय
 सुख की वाछा से ही विषयों में आसक्त होते हैं । अपनी उस अभि-
 लाषा की पूर्तिकरनामात्र ही वे अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस
 समय उन्हें न्याय अन्याय का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इच्छा की पूर्ति
 करनामात्र ही एक लक्ष्य होता है । इन्द्रियों के अनुकूल जथा उसमें ही भवे होकर
 ये गिर पड़ते हैं, ‘इसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा ?’ यह विचार
 इन्हें नहीं रहता । इच्छाओंके आधीन बने हुए मनुष्य संसारकी ओर
 ही दौड़ लगा रहे हैं । निवृत्तिमार्गसे वे दूर हैं । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति

આપના કરે તે પછી તે કસળકાળના લીધા દાંતથી વિસર્જન થાય છે, અર્થાત્
 પ્રાણી મૃત્યુથી કોઈ મોકાદે પછી બચી શકતો નથી ॥ ૧ ॥

उपक्रम—मृत्युत्त निमित्तकारण, जैसे—दण्ड, चामुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि
 निरुपक्रम—निमित्तरहित—आयुष्य पूर्ण भवामी आपभवे मृत्युने पर सर्व-

આ સૂત્રમાં એમ કહેવામાં આવેલ છે કે જેઓ રાગ અને દ્વેષથી ભ્રમ
 બનીને પ્રમાદી બને છે અને ધર્મને બાંધતા નથી તેઓ વિષયમુખની ઇચ્છાથી
 વિષયોમાં આસક્ત બને છે પોતાની આ ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવામાં જ પોતાનું પરમ
 કર્તવ્ય સમજે છે આ બળતે ન્યાય અન્યાયનો કોઈ ખ્યાલ રાખતો નથી. ઇચ્છાને
 પૂર્ણ કરવાનો જ માત્ર એક ખ્યાલ રાખે છે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ પ્રવૃત્તિનું નામ
 જ ઇચ્છા છે જે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ગમ્યુ તેમા જ ભ્રમ બનીને તેઓ પડે
 છે એનું ભવિષ્યમાં શું પરિણામ આપશે ?’ આ વિચાર બને નથી આવતો.
 ઇચ્છાઓને આધીન બનેલો મનુષ્ય સંસારની તરફ જ દોડ લગાવે છે. નિવૃત્તિ
 માર્ગથી તે દૂર છે નિવૃત્તિ મારગની પ્રાપ્તિ વિના ઇચ્છાઓ પર અક્રમ થતો

प्रणीता इत्यर्थः । अत एव-वृद्धानिकेताः वृद्धः असंयमस्तस्य आ-समन्तात् निकेताः
 आश्रयाः, अत एव-कालगृहीताः=कालेन-मृत्युना गृहीताः-पुनःपुनर्मरणदुःखभागिनः,
 यद्वा-कालगृहीताः-गृहीतः कालो यैस्ते कालगृहीताः, आर्पत्वान्निष्ठान्तस्य परनि-
 पातः, धर्माचरणाय कालाभिसन्धायिनः-‘वृद्धावस्थायां परुद् वा परारि वा तनय-
 दुहितृपरिणयानन्तरं वा धर्मं करिष्यामः’ इत्येवं संकल्पकारिण इत्यर्थः । अत एव
 निचये निविष्टाः=द्रव्यतो हिरण्याद्युपचये, भावतः कर्मोपचये निविष्टाः=संलग्नाः
 सन्तः, पृथक् पृथक् अन्यामन्याम् जातिम्=एकेन्द्रियादिकाम् अनन्तवारं प्रकल्पयन्ति
 विना, इच्छाओं पर अंकुश नहीं हो सकता है, यह निर्विवाद सिद्ध है ।
 जहां तक प्रवृत्तिमार्ग है वहीं तक संसार है । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति ही
 संसारका साक्षात् या परम्परारूपसे अन्त है । इच्छाओं पर विजय पाना
 यही तो संयमभाव है । इसके विपरीत असंयमभाव है । असंयमी
 जीव धर्मकी प्राप्ति करने में काल-समयका बहाना किया करते हैं—
 “अभी तो जवानीका समय है सांसारिक आनन्द भोग लूं, वृद्धावस्था
 आने पर धर्म धारण कर लूंगा । अथवा आगामी वर्ष में या उसके बाद
 के वर्ष में अथवा पुत्र-पुत्रियों का विवाह करके फिर धर्म करूंगा ।” इस
 प्रकार का विचार करते २ ही वे काल के ग्रास घन जाते हैं और धर्मके
 लाभ से वंचित रह जाते हैं । विषयेच्छा के आधीन बना हुआ संसारी
 मनुष्य जिस किसी प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादिक परिग्रहके संचय करने
 में ही अपने जीवन के अधिकांश भाग को नष्ट कर देता है, और उपा-
 र्जित कर्मानुसार एकेन्द्रियादिक योनियोंमें अनन्तवार जन्ममरण के अनन्त

नधी, ते निर्विवाद सिद्ध છે જ્યાં સુધી પ્રવૃત્તિમાર્ગ છે ત્યાં સુધી સંસાર છે
 નિવૃત્તિમાર્ગની પ્રાપ્તિ સંસારનો સાક્ષાત્ અગર પરપરાથી અત છે, ઇચ્છાઓ
 ઉપર વિજય મેળવવો તે જ સંયમ-ભાવ છે તેથી વિપરીત અસંયમભાવ છે
 અસંયમી જીવ ધર્મની પ્રાપ્તિ કરવામાં સમયનું બહાનું બતાવે છે—‘હજી તો
 જુવાનીનો સમય છે, સાંસારિક આનંદ ભોગવી લઉં, વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પછી ધર્મ
 ધારણ કરી લઉંશ અથવા-આગામી વર્ષમાં, અગર તેના બાદના વર્ષમાં, અથવા
 પુત્ર-પુત્રીઓના વિવાહ થયા પછી ધર્મ કરીશ ’ આવા પ્રકારના વિચાર કરી કરીને
 તે કાળનો ગ્રાસ બની જાય છે, અને ધર્મના લાભથી વંચિત રહી જાય છે વિષ-
 યેચ્છાને આધીન બનેલા સંસારી મનુષ્ય જે કોઈ પ્રકારથી હિરણ્ય-સુવર્ણાદિક
 પરિગ્રહનો સંચય કરવામાં જ પોતાના જીવનના અધિકાંશ ભાગને નષ્ટ કરે છે,
 અને ઉપાર્જિત-કર્માનુસાર એકેન્દ્રિયાદિક યોનિઓમાં અનંત વાર જન્મ મરણના

=નનયન્તિ । રાગદ્વેષશાત્રમાત્મિનઃ સસારિણો ધર્મમનષુષ્ય ઇન્દ્રિયાતુરૂઝવિપયે મોહં પ્રાપ્ય પુન પુનઃ કર્મોપધર્મ્યં કુર્મન્તસ્તદ્યન્ધાત્ પ્રધ્યુતા ન મવન્તીતિ માયઃ ॥૪॥

પ્રમાદનર્તા પુન પુનર્નાતિપ્રકટપને કા હાનિર્મયતીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયામાહ—
'ઇહમેગેસિ સત્ય તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂઢમ્—ઇહમેગેસિ તત્થ સત્ય સયવો મવહ્ । અહોવવાઇપ્
ફાસે પઢિસવેયતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—ઇહેકેપાં તપ્ર તપ્ર સસ્તવા મવતિ । અવઓપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિ સવંદયન્તિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—અમિન્ લોકે, એકેપાં=મિષ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકપાયવર્તા, તપ્ર-તપ્ર=નરકાવિયાતનાસ્થાનેષુ, સસ્તવઃ=મર્કપેષ પરિચયો મવતિ, તપ્ર પુનઃ-પુનર્ગમનવશા કર્મોં કો સહન કરતા રહતા હૈ । સારાંશ યહ્ હૈ કિ-રાગદ્વેષકે વશા સે સસારી જીવ ધર્મ કો નહીં સમજા કર ઇન્દ્રિયા ઓર મન કે અનુકૂલ વિષયોં મેં મુગ્ધ હોકર વારંવાર કર્મપરપરા કી વૃદ્ધિ કરતા હુઆ કર્મોં સે રહિત નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદગાલી જીવોં કી એકેન્દ્રિયાવિક યોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરન પર ક્યા હાનિ હોતી હૈ ? તેસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર ઉત્તર દેતે હ—'ઇહમેગેસિ' ઇત્યાદિ ।

ઇમ સંસાર મેં મિષ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઓર કપાયવાહે જીવોં ફા છેવન, મેવન, યન્ધન આદિ કર્મોં કે સ્થાનભૂત નરકાદિમેં વારંવાર ઉત્પન્ન હોને સે ઊન નરકાદિકોંકે માપ અધિક પરિચય હો જાતા હૈ, ઇમસે યે વહા ક કુામ્યોંકો મોગતે રહતે હૈ ।

અનત દુઝોન સહન કરવા રહે છે આ કમનને આર કો છે કે—સત્ર દેવના કારણથી સમારી છવ ધર્મને નહિ સમજીને ઈન્દ્રિયે અને મનના અનુકૂળ વિષયોમા મુગ્ધ થઈને વારંવાર કર્મપરપરાની વૃદ્ધિ કરે છે અને કર્મોંથી રહિત થતા નથી ॥સૂ૦ ૪॥

પ્રમાદગાલી છવોની એકેન્દ્રિયાવિક વાનિયેમા જન્મ ધારણ કરવાથી શું નુક આન થાય છે ? એવી શિષ્યની છવગ્યા થવાથી ઉત્તર આપે છે—'ઇહમેગેસિ' ઇત્યાદિ
આ સસારમા મિષ્યાત્વ, અવિરતિ પ્રમાદ અને કપાયવાગ્યા છવોને છેવન મેવન બ ધન આદિ દુઝોના સ્થાનભૂત નરકાદિમા વારંવાર ઉત્પન્ન થવાથી તે નરકાદિકોની આથે અધિક પરિચય થઈ જાય છે, તે ત્યાંના દુઝોને મોગવતા રહે છે.

દેતિ ભાવઃ । તત્પરિચયે સતિ કિં ભવતીત્યાહ—‘અધર્મોપપાતિકાન્’ इत्यादि।
 भोगेच्छापरतन्त्रतयेन्द्रियानुकूलऽऽचरणेन नरकादिस्थानं संप्राप्ताः, अधर्मोपपा-
 तिकान्=नरकादिसम्बन्धिनः, स्पर्शान्=दुःखानि प्रतिसंवेदयन्ति=अनुभवन्ति ॥५॥
 ननु भोगेच्छाविवक्षाः सर्वेऽपि अधर्मोपपातिकान् स्पर्शान् प्रतिसंवेदयन्ति,
 किं वा तेषु कश्चिदवेति जिज्ञासायामाह—‘चिद्वं क्रूरेहि’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ચિદ્વં ક્રૂરેહિં કર્મમેહિં ચિદ્વં પારિચિદ્વહ્ । અચિદ્વં ક્રૂરેહિં
 કર્મમેહિં નો ચિદ્વં પારિચિદ્વહ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ઢાયા—તિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મણુ મૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અતિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મણુ નો
 મૃશં પરિતિષ્ઠતિ ।

યદ્વા—મૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ મૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અમૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નો મૃશં
 પરિતિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો કર્મબન્ધ કે કારણ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઓર કષાય કે
 સેવન કરનેમેં હી રાતદિન સંલગ્ન રહેતે હૈં, એવં વિષયભોગોં કી ઇચ્છા
 કે આધીન હોને સે ધાર્મિક આચારવિચાર સે શૂન્ય હૈં, ઇન્દ્રિયોં કે અ-
 નુકૂલ આચરણ કરનેમેં હી જો લગે હૈં વે મૃત્યુ કે ગ્રાસ વનકર નરકાદિ-
 યોનિયોં મેં—કિ જહાં પર છેદન, ભેદન, બન્ધનાદિ અપાર કષ્ટ હૈં—વાર વાર
 ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર વહાં કે ડન અનન્ત કષ્ટોં કો ભોગતે રહેતે હૈં ॥સૂ૦૫॥

કયા વિષયભોગોંકી ઇચ્છા કે પરાધીન બને હુએ સમસ્ત હી પ્રાણી
 નરકાદિયોનિયોં કે કષ્ટોં કો ભોગતે હૈં યા ડનમેં સે કોઈ ૨ ? ઇસ
 પ્રકાર કે પ્રશ્નકા ઉત્તર કહેતે હૈં—‘ચિદ્વં ક્રૂરેહિં’ इत्यादि ।

જે મનુષ્ય કર્મબન્ધના કારણ મિથ્યાત્વ અવિરતિ પ્રમાદ અને કષાયના
 સેવન કરવામા રાત-દિન રચ્યો-પચ્યો રહે છે, અને વિષયભોગોની ઇચ્છાને અધીન
 હોવાથી ધાર્મિક આચાર વિચારથી શૂન્ય છે, ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ આચરણ કર-
 વામાં જ જે લાગેલ છે, તે મૃત્યુનો ગ્રાસ બનીને નરકાદિ યોનિયોમાં કે જે
 ઠેકાણે છેદન-ભેદન બન્ધનાદિ અપાર ડુગો છે, ત્યાં વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે અને
 ત્યાંના તે અનન્ત ડુગોને ભોગવતો રહે છે ॥સૂ૦ ૫॥

શુ વિષયભોગોની ઇચ્છાને પરાધીન બનેલા સમસ્ત પ્રાણી નરકાદિ યોનિયોમા
 ડુગોને ભોગવે છે કે તેમાથી કોઈ કોઈ ભોગવે છે? આ પ્રકારના પ્રશ્નના જવાબમા
 કહે છે—‘ચિદ્વં ક્રૂરેહિં’ इत्यादि.

टीका—कूरेषु=घोरतरपरिणामेषु वध-वधनादियु, कर्मसु=क्रियासु, तिष्ठन् प्रवृत्ताः, भृशम्=अत्यर्थ-चिरं नरके परित्यजति-उभ वैतरणीतरभाऽसिपमपाताऽऽदि जनितं घोरतरं दुःखमनुभवन् दीर्घकालमवस्थितो भवतीत्यर्थः । कूरेषु कर्मसु अति दुःखमवस्थितो भृशे=सर्वथा नरके नो परित्यजति=उपस्थितो न भवति, न तत्रोत्पद्यते इत्यर्थः ।

यथा—भृशं कूरेः=अतिकुटिलैः प्राणातिपातादिभिः कर्मभिः=न्यापारैः, भृशम्=अत्यर्थ-चिरं नरके परित्यजति । एवम् अमृतं कूरेः=मन्दकूरेः कर्मभिः नरके भृशम्=अत्यर्थ-चिरं नो परित्यजति, भेषिकयत् ॥ सू० ६ ॥

जिनका परिणाम घोरतर है, ऐसे वध-वधनादिक जो कूर कर्म हैं उनमें प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी भरकर नरकों में उत्पन्न होता है, और चिरकाल तक अनेक सागरपर्यन्त वहा के दुःख भोगना, वैतरणी नदी में तैरना, शास्मली-सेमर जामके वृक्षोंके तलघार की घार के सदृश पत्तों के गिरने से देह का पीरे जाना आदि जो भयंकर दुःख हैं उन्हें भोगता हुआ वहीं पर अपनी मुच्यमान आयुको व्यतीत करता है । जो इन कूर कर्मों के सेवन में प्रवृत्ति नहीं करता है वह नरक-निगोद में उत्पन्न नहीं होता है ।

अथवा—अतिकुटिल जो प्राणातिपात आदि कर्म हैं उनके द्वारा यह प्राणी चिरकाल तक नरक में निवास करता है और मन्द कूर कर्मों के द्वारा वहाँ चिरकाल तक नहीं, किन्तु कुछ काल तक ही भेषिकराजा की तरह रहता है ॥ सू० ६ ॥

नेना परिष्ठाभ घोरतर छे जेवा वध वधनादिक ने ने कूर कर्म छे तेमा प्रवृत्ति करवावाण आखी भरीने नरकमा उत्पन्न भय छे अने चिरकाण सुधी अनेक सागर पर्यन्त त्यांना दुःखने भोगवतु वैतरणी नदीमा तरतु, शास्मली-सेमर जतना वृक्षेना तलघारणी घार जेवा पादकज्येना पठवाभी देखतु नीलधि जतु आदि ने वध कर दुःख छे तेज्येने भोगवता भोगवता त्यां ज पाताना मुच्यमान आयुज्यने व्यतीत करे छे ने जेवा कूर कर्मोनु सेवन करवाग्य प्रवृत्ति करता नही ते नरक-निगोदमा उत्पन्न भया नही ।

अथवा—अतिकुटिल ने प्राणातिपात आदि कर्मो छे तेज्ये द्वारा जेवा आखी चिरकाण सुधी नरकमा निवास करे छे अने मंद कूर कर्मो द्वारा त्यां चिरकाण सुधी नहि पद्य कायक जेवा सभय सुधी भेषिक राजनी भावक रहे ॥ सू० ६ ॥

એવં કો વદતિ, યસ્ય વચનેઽસ્માકં શ્રદ્ધા સમુત્પદ્યેત ? ઇતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—
'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એગે વયંતિ અદુવાવિ નાણી, નાણી વયંતિ અદુવાવિ
એગે ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—એકે વદન્તિ અથવાઽપિ જ્ઞાનિનઃ । જ્ઞાનિનો વદન્તિ અથવાઽપિ એકે ॥૭॥

ટીકા—એકે=ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ શ્રુતકેવલિનો યદ્ વદન્તિ, અથવા જ્ઞાનિનઃ નિરા-
વરણજ્ઞાનવન્તઃ સર્વજ્ઞા અપિ તદેવ વદન્તિ । ઉક્તાર્થમેવ પરાવર્ત્ય કથયતિ—'જ્ઞાનિનઃ'
ઇત્યાદિ । જ્ઞાનિનઃ=નિરાવરણજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિનો યદ્ વદન્તિ, અથવા—એકેઽપિ=

શ્રી જમ્બૂસ્વામી શ્રીસુધર્માસ્વામી સે પૂછતે હૈં કિ—હે ભદન્ત ! જેસી
પ્રરૂપણા કૌન કરતે હૈં કિ જિનકે વચનોં મેં હમ શ્રદ્ધા કરેં ? શ્રી સુધર્મા
સ્વામી કહતે હૈં—'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ ।

ઇસ પ્રકારકા પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વ કે પાઠી શ્રુતકેવલી શ્રીગણ-
ધરાદિક દેવ કરતે હૈં, ઔર યહી વાત નિરાવરણજ્ઞાનગાલી શ્રી સર્વજ્ઞ
ભગવાન ભી કહતે હૈં । દોનોં કા ઇસ વિષયમેં એક મત હૈં । ઇસ વિષય
કી આચાર્ય મહારાજ ફિર પુષ્ટિ કરતે હૈં કિ—જિસ અર્થકા પ્રતિપાદન
કેવલી કરતે હૈં ડસીકા પ્રતિપાદન શ્રુતકેવલી મહારાજ કરતે હૈં । કારણ
કિ કેવલી ઔર શ્રુતકેવલી કે કથનમેં રંચમાત્ર ભી ફરક નહીં હોતા હૈં ।
કેવલી ભગવાન કેવલજ્ઞાનવિશિષ્ટ હોતે હૈં, ઔર શ્રુતકેવલી ચૌદહ પૂર્વ
કે પાઠી હોતે હૈં; અતઃ યે દોનોં યથાર્થવક્તા હૈં । યદ્યપિ કેવલી ઔર
શ્રુતકેવલી કે જ્ઞાનમેં પ્રત્યક્ષ ઔર પરોક્ષ કે રૂપસે ભિન્નતા હૈં; પરન્તુ વસ્તુ-

શ્રી જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે—હે ભદન્ત ! આવી પ્રરૂપણા
કેણુ કરે છે જે તેના વચનોમા અમે શ્રદ્ધા કરીએ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે—
—'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ

આ પ્રકારનો પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વના પાઠી, શ્રુતકેવળી, શ્રીગણધરાદિક
દેવ કરે છે, અને આ વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાળી શ્રી સર્વજ્ઞ ભગવાન પણ કહે છે.
આ વિષયમા અનેના એક મત છે આ વિષયની આચાર્ય મહારાજ ફરીથી પુષ્ટિ
કરે છે કે જે અર્થનુ પ્રતિપાદન કેવળી કરે છે તેજ અર્થનુ પ્રતિપાદન શ્રુતકેવળી
મહારાજ કરે છે, કારણુ કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના વચનોમા જરા પણ ફરક પડતો
નથી કેવળી ભગવાન કેવળજ્ઞાન-વિશિષ્ટ છે અને શ્રુતકેવળી ચૌદ પૂર્વના પાઠી
છે, માટે આ અને યથાર્થવક્તા છે જે કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના જ્ઞાનમા પ્રત્યક્ષ
અને પરોક્ષ રૂપથી ભિન્નતા છે પરન્તુ વસ્તુસ્વરૂપના પ્રતિપાદન કરવામાં અગર

મૃતકેષલ્લિનોઽપિ તદેવ વદન્તિ । દિવ્યધ્વાનવન્તઃ કૈષલ્લિઃ, ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ મૃત-
કૈવલ્લિન્મેથ્યુભય યયાર્યવાદિત્વાવકમેષાર્ય વદન્તિ, ન તુ વિરુદ્ધમિતિ માયઃ ॥૭૫॥
एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेषामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आचरती’ इत्यादि ।

મૂળમ્—આવતી કેયાવતી લોચસિ સમણા ચ માહુણા ચ
પુઠો ધિવાય વયંતિ—“સે દિદ્ધ ચ ણે, સુચં ચ ણે, મય ષ ણે, વિણ્ણાય
ચ ણે, ઉદ્ધ અહ તિરિય દિસાસુ સવ્વઓ સુપહિલેહિય ચ ણે—
સવ્વે પાણા સવ્વે મૂયા સવ્વે જીવા સવ્વે સસા હતઠ્ઠા
અજ્ઞાવેયઘા પરિઘેતઘા પરિયાવેયઘા ઉદ્ધવેયઘા, હરથવિ જાણહ,
નસ્થિત્થ દોષો, ”—અણારિયવયણમેય ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—યાવન્તઃ કિયન્તો લોકે ધમણાઽથ બ્રાહ્મણાઽથ પૃથક્ વિવાદં વદન્તિ—
“તત્ દૃષ્ટં ચ ના, શ્રુતં ચ ન, મત ચ ના, વિહારં ચ ના, કાર્ષ્વમપસ્તિયૈર્ દિશાસુ
સર્વેષુ સુમતિભિર્વતં ચ ન—સર્વે પ્રાણાઃ, સર્વે મૃતા સર્વે જીવા સર્વે સત્ત્વાઃ સન્ત-
વ્યાઃ આદ્યાપયિતવ્યાઃ પરિગ્રહીતવ્યાઃ પરિતાપયિતવ્યાઃ અપદ્મ્રાવયિતવ્યાઃ, અપ્રાપિ
જાનીત, નાસ્ત્યપ્ર દોષાઃ ” અનાયંવચનમેતત્ ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—લોકે=મનુષ્યલોકે યાવન્તઃ કિયન્તઃ=પરસ્પરં ઇત્યર્થઃ ધમણાઃ=દ્વિ-
શાક્યાત્રય, બ્રાહ્મણાઃ=ઔદેશિકમાર્જિન પૃથક્=અન્યપ્રકારેણ વિવાદ=ધર્મવિરુદ્ધ
વચનં વદન્તિ । તદ્વિવાદસ્વરૂપં દર્શયિતુમાહ—‘તત્ દૃષ્ટમ્’ ઇત્યારમ્ય યાવત્

સ્વરૂપ કે પ્રતિપાદન કરને મેં જરા સ્ત્રી મિલત્તા નહીં હૈં । કેવલી ઓર
શ્રુતકેવલી યયાર્યવક્તા હોનેસે એક હી અર્થકા પ્રતિપાદન કરતે હૈં, બિરુદ્ધ
અર્થકા નહીં ॥ સૂ. ૭ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;
वह दिखलाते हैं—“आचरती केयावती” इत्यादि ।

इस लोकमें जितने भी धमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध
पृथक्-२ रूपसे प्रस्पृणा करते हैं और करते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

तेने બાણવામા બનેના જ્ઞાનમા જશ પણ બિલત્તા નથી કેવળી અને શ્રુતકેવલી
યયાર્યવક્તા હોવાથી એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે, બિરુદ્ધ અર્થને નહિ ॥ સૂ. ૭ ॥

આ જ પ્રકારે આમળ કહેવામાં આવનારા અર્થમાં પણ એકવાક્યતા થાય
છે, તે બતાવે છે—આવતી કેયાવતી ઇત્યાદિ.

આ લોકમાં જેટલા પણ ધમણ એટલે કે શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણ એટલે
ઔદેશિક આદિર લેવાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ જુદા જુદા રૂપે પ્રસ્પૃણ

‘નાસ્ત્યત્ર દોષઃ’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामस्तदस्माकं दृष्टम्-दिव्य-
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां पठ्ठी । यद्वा
-अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च-ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु
दिशासु-दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति-“ सर्वे
प्राणाः ” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-
मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और
तिर्यग् (तिरछी), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके
लिए आज्ञा देने के योग्य है, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य है, परि-
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनायों के वचन है,
आयों के नहीं ।

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થ કા કથન અલ્પજ્ઞતા કે હોને પર હી હોતા
હૈ । કેવલી ઔર શ્રુતકેવલી પદાર્થોં કે જાનકાર હોતે હૈ; અતઃ ઉન્હોને

કરે છે અને કહે છે—“ જે કાઈ અમારી માન્યતા છે તે અમારી દેખેલી છે,
અમારી સાંભળેલી છે, અમારી માનેલી છે અને અમારી જાણેલી છે
તથા ઉર્ધ્વ—(ઉચી) અધ (નીચી) અને તિર્યગ્ (તિરછી) આ સમસ્ત
દિશાઓમા અમે તથા અમારા આચાર્યોએ ઘણી સારી રીતે તેનું પર્યાલોચન
કર્યું છે કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા
યોગ્ય છે, મારવા માટે આજ્ઞા આપવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષ શસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આ
અમારો અભિપ્રાય નિર્દોષ છે ” આ બધા અનાયોના વચન છે, આયોના નથી

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થનું કથન અલ્પજ્ઞતા હોવાથી થાય છે, કેવળી
અને શ્રુતકેવળી પદાર્થોના જાણકાર છે, માટે તેમણે જે કાંઈ પ્રતિપાદન કર્યું

મૃતકેશલિનોડપિ તદેષ વદન્તિ । વિવ્યજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિન , ચતુર્વર્ણપૂર્વધરા મૃત-
કેશલિનમેત્યુમયે યથાર્યવાદિત્વાદકમવાર્ય વદન્તિ, ન તુ વિરુદ્ધમિતિ માત્ર ॥૭॥
एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेषामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आर्षती’ इत्यादि ।

મૂલમ્—આવતી કેયાર્વતી લોચસિ સમણા ચ માહણા ચ
પુઠો વિવાય વયતિ—“સે દિઢ ચ ણે, સુચ ચ ણે, મય ચ ણે, વિણ્ણાય
ચ ણે, ઉદ્દઢ અહં તિરિય દિસાસુ સઠ્ઠઓ સુપહિલેહિયં ચ ણે—
સઠ્ઠે પાણા સઠ્ઠે મૂયા સઠ્ઠે જીવા સઠ્ઠે સત્તા હતઠ્ઠા
અજ્ઞાવેયઘ્વા પરિષેતઘ્વા પરિયાવેયઘ્વા ઉદ્ધવેયઘ્વા, इत्थवि जाणह,
नस्थित्य दोषो, ”—अणारियवयणमेयं ॥ सू० ८ ॥

છાયા—યાવન્ત ક્રિયન્તો લોકે શ્રમણાશ્ચ બ્રાહ્મણાશ્ચ પૃથક્ વિવાદં વદન્તિ—
“તત્ દૃષ્ટં ચ નઃ, શ્રુતં ચ નઃ, મત ચ નઃ, વિજ્ઞાતં ચ નઃ, કર્મમતસ્તિયં વિજ્ઞાતુ
સર્વમ્ મુમતિભેન્વિતં ચ નઃ—સર્વે પ્રાણાઃ, સર્વે મૃતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ સન્ત-
વ્યાઃ આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ પરિગ્રહીતવ્યાઃ પરિતાપયિતવ્યા અપદ્રાવયિતવ્યાઃ, અપ્રાપિ
જાનીત, નાસ્ત્યપ્ દોષઃ ” અનાર્યવચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—લોકે=મનુષ્યલોકે યાવન્તઃ ક્રિયન્તઃ=વશ્વેત્યર્થઃ શ્રમણાઃ=વૈદિક
શાસ્ત્રાદય , બ્રાહ્મણાઃ=ઔદેશિકમાજિન પૃથક્=અન્યમકારણ વિવાદં=વર્મવિરુદ્ધ
વચનં વદન્તિ । તદ્વિવાદસ્વરૂપં દર્શયિતુમાહ—‘તદ્ દૃષ્ટમ્’ સ્ત્યારમ્ય યાવત્

સ્વરૂપ કે પ્રતિપાદન કરતે મેં જરા મી મિદ્ધતા નહીં હૈ । કેવલી ઔર
મૃતકેવલી યથાર્થવક્તા હોનેસે એક હી અર્થકા પ્રતિપાદન કરતે હૈ, બિન્દુ
અર્થકા નહીં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;
यह दिखलाते हैं—“आर्षती केयार्षती” इत्यादि ।

इस लोकमें जितने भी श्रमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध
पृथक्-२ रूपसे प्ररूपणा करते हैं और कहते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

તેને બાણવામા બનેના શાનમા જરા પણ કિલતા નથી. કેવળી અને મૃતકેવળી
યથાર્થવક્તા હોવાથી એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે વિરુદ્ધ અર્થના નહિ. ॥સૂ૦ ૭॥

આ જ પ્રકારે આગળ કહેવામાં આવનારા અર્થમાં પણ એકવાક્યતા થાય
છે, તે બતાવે છે—આવતી કેયાર્વતી ઇત્યાદિ.

આ લોકમાં જેટલા પણ શ્રમણ એટલે જ રી શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણ એટલે
ઔદેશિક આદિ દેરાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ શ્રુત શ્રુત રૂપે પ્રરૂપ

‘नास्त्यत्र दोषः’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामस्तदस्माकं दृष्टम्—दिव्य-
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां पठ्ठी । यद्वा
—अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च—ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु
दिशासु—दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति—“सर्वे
प्राणाः” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-

मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और
तिर्यग् (तिरछी), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके
लिए आज्ञा देने के योग्य है, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य हैं, परि-
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनायों के वचन है,
आर्यों के नहीं !

स्पष्टार्थ—परस्परविरुद्धार्थ का कथन अल्पज्ञता के होने पर ही होता
है । केवली और श्रुतकेवली पदार्थों के जानकार होते हैं; अतः उन्होंने

करे છે અને કહે છે—“જે કાઈ અમારી માન્યતા છે તે અમારી દેખેલી છે,
અમારી સાંભળેલી છે, અમારી માનેલી છે અને અમારી જાણેલી છે
તથા ઉર્ધ્વ—(ઉચ્ચી) અધ (નીચી) અને તિર્યગ્ (તિરછી) આ સમસ્ત
દિશાઓમા અમે તથા અમારા આચાર્યોએ ઘણી સારી રીતે તેનું પર્યાલોચન
કર્યું છે કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા
યોગ્ય છે, મારવા માટે આજ્ઞા આપવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષ શસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આ
અમારો અભિપ્રાય નિર્દોષ છે ” આ બધા અનાયોના વચન છે, આર્યોના નથી

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થનું કથન અલ્પજ્ઞતા હોવાથી થાય છે, કેવળી
અને શ્રુતકેવળી પદાર્થોના જાણકાર છે, માટે તેમણે જે કાંઈ પ્રતિપાદન કર્યું

જો કુછ મી પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ નિર્દોષ યથં પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થતા સે રહિત હૈ । અલ્પજ્ઞોં કે વચનોં મેં યહ યાત નહીં પાઈ જાતી, ઉનકે વચન સદોષ ઝીર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક બુઝા કરતે હૈ ॥ યહી વાત હસ સૂત્ર મેં માન્યરૂપસે પ્રકટ કા ગઈ હૈ ।

દુનિયા મેં જિતને મી ગ્રાહ્યણ) યા અમણ, વૃણ્ઝી, (યુદ્ધમતાનુયાયી આદિ હૈં યે સય ધર્મતત્ત્વ કે ધર્માર્થ સ્વરૂપસે અનમિજ હૈં । ઉનકી માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હૈ । હિંસાદિક પાપોં કે સેવન કરનેમેં હનકી માન્યતાનુસાર કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

યે એસે હી હન અકૃત્યોં કી પુટિ કરતે મુષ કહતે હૈં કિ-જો કુછ હમારે યહાં કહા ગયા હૈ વહ કપોલકલ્પિત-અસત્ય નહીં હૈં; કિંતુ હમને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે હસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । અથવા—(હમારે આચાર્યોં ને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે હમકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ) હમને યહ અપને આચાર્યોંદિકોં સે સુના હૈ । (યુસ્તિયુક્ત હોનેસે હમેં) યા હમારે આચાર્યોંકે લિયે યહ માપ હૈ । પચાર્યોં કા મેવ પર્યાયોં દ્વારા વિહલેપણ કરને સે હમને ઝીર હમારે આચાર્યોં ને યહ મેવ અઘી તરહ જાન મી લિયા હૈ । પ્રત્યેક વિદ્યામેં હમને તથા હમારે આચાર્યોં ને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોં સે હસકા મલી પ્રકર જ્ઞાન્તશ્ચિત્ત હોકર નિર્ણય મી કર લિયા હૈં કિ-સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત

છે તે નિર્દોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધતાથી સંહિત છે અરુપશોભા વચનોમાં આવાટ ટેળવામાં આવતી નથી. તેના વચન સદોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક થવા કરે છે આવાટ આ સૂત્રમાં સાધ્યરૂપથી પ્રગટ કરેલ છે

સસારમાં બેટલા અમણ, હડી યુદ્ધમતાનુયાયી આદિ છે અને બ્રાહ્મણ-ઝીરે શિક્ષિત બ્રાહ્મણા છેવાવાળા છે ધર્મતત્ત્વના વચાર્થ સ્વરૂપથી અનમિત છે, તેમની માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક છે હિંસાદિક પાપોનું સેવન કરવામાં તેમની માન્યતા મુજબ કોઈ દોષ નથી. તે આવા કૃત્યોની પુષ્ટિ કરવા કહે છે કે-એ કંઈ અમિતને કહેવામાં આવ્યું છે તે કપોલકલ્પિત-અસત્ય નથી; પણ અમે પાતાના દિવ્યજ્ઞાનથી જોને સાક્ષાત્કાર કરેલ છે અથવા-અમારા આચાર્યોંને પાતાના દિવ્ય જ્ઞાનથી જોને સાક્ષાત્કાર કરેલ છે અમિતને આ અમારા આચાર્યોંદિકોંથી સાંભળ્યું છે યુક્તિયુક્ત હોવાથી અમિતને તેમજ અમારા આચાર્યોંને માટે માન્ય છે પચાર્યોંના સેવ પચાર્યોંદિકા પૃથક્કરણ કરવાથી અમિત અને અમારા આચાર્યોંને આ સેવો સારી રીતે બાધી લીધેલ છે પ્રત્યેક વિદ્યામાં અમે તથા અમારા આચાર્યોંને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોંથી તેના સારી રીતે જ્ઞાતચિત્તે નિવૃત્ત પણ કર્યો છે કે-સમસ્ત પ્રાણી,

વ્યાખ્યાતમ્ । અત્ર ધર્મવિષયે-મન્દિરનિર્માણપ્રતિમાપ્રતિષ્ઠાદૌ, અપિશબ્દાદૌદેશિકે, તથા-વિહારાદૌ શ્રાવકં સાર્થીકૃત્ય સ્વસેવાદ્યર્થમનુજ્ઞાપ્ય તત્કૃતાઽઽહારાદિગ્રહણે ચ જાનીત, અત્ર=અસ્મિન્નુક્તવિષયે નાસ્તિ દોષઃ=નાસ્તિ પાપાનુબન્ધ इति । અનાર્ય-વચનમેતદિતિ । આરાદ્ યાતાઃ=સર્વસાવધવ્યાપારેભ્યો દૂરં ગતા इति-આર્યાઃ, તદ્વિ-પરીતા અનાર્યાઃ-કૂરકર્માણઃ, તેષાં પ્રાણ્યુપમર્દકં વચનમેતત્ ॥ મુ. ૮ ॥

ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ મારને યોગ્ય હૈં, મારનેકી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈ, મારને કે લિયે ગ્રહણ કરને યોગ્ય હૈં, પરિતાપિત કરને યોગ્ય હૈં ઓર વિષશસ્ત્રાદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈ । પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોં કા વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહિલે પ્રકટ કિયા જા ચુકા હૈ ।

(इसी प्रकार जिनप्रतिपादित धर्म में भी मंदिरादिक के निर्माण करने की एवं जिनप्रतिमा बनवा कर उसकी प्रतिष्ठा करने की जो प्रथा चालू है वह पद्धति भी सदोष है, उपादेय नहीं है । तथा साधुओं में औद्देशिक आहार ग्रहण करने की एवं विहारादिक करते समय अपनी सेवा करवाने के बहाने से श्रावकों को साथ लेकर उनके द्वारा तैयार किये आ-हारादिक लेनेकी एक प्रकार की जो प्रथा सी चल पड़ी है, और उसमें जो दोष-पापानुबंध(नहीं मानते हैं, प्रत्युत इसका किसी दूसरे रूपसे सम-र्थन करते हैं; यह सब) पूर्वोक्त(कथन अनार्यों का) ही समझना चाहिये ।

સાવધ વ્યાપાર સે જો દૂર રહતે હૈં ઊનકી આર્યસંજ્ઞા ઓર વિપ-

સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષશસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોના વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહેલા જ પ્રકટ કરવામા આવેલ છે

આ પ્રકારે જનપ્રતિપાદિત ધર્મમા પણ મંદિરાદિકનિર્માણ કરવાનુ, તેમજ જિનપ્રતિમા બનાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરવાની જે પ્રથા ચાલુ છે તે પદ્ધતિ પણ સદોષ છે, ઉપાદેય નથી તથા સાધુઓમા ઔદેશિક આહાર લેવાની તેમજ વિદ્વા-ગદિક કરતી વખતે પોતાની સેવા કરવાના બહાને શ્રાવકોને સાથે લઈને તેના દ્વારા તૈયાર કરેલા આહાર પણી લેવાની એક પ્રકારની જે પ્રથા ચાલુ થઈ છે, અને તેમા જે દોષ-પાપાનુબંધ નથી માનતા, અને દરેક તે બાળતને બીજાનુપયોગી સમર્થન કરે છે તે બધા પૂર્વોક્ત કથન અનાર્યોના જ સમજવા બેધએ

સાવધ વ્યાપારથી જે દૂર રહે છે તેની આર્ય સંજ્ઞા, અને તેનાથી વિપરીતની

યે તુ આર્યાસ્તે કિં વદન્તીતિ ત્રિપ્યગ્નિજ્ઞાસાયામાહ—‘તત્થ જે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તત્થ જે આરિયા તે એવ વયાસી—“સે દુર્લભ ચ મે, દુસ્સુય ચ મે, દુમ્મય ચ મે, દુલ્લિણ્ણાય ચ મે, ઠદ્દ અહ તિરિય દિસામ્મ સદ્ધઓ દુપ્પલિલેહિય ચ મે, જળ તુઠ્ઠમે એવ આદિક્કલ્લહ, એવ ભાસહ, એવ પરુલ્લેહ, એવ પળ્લવેહ—સલ્લે પાળા ૪, હત્થા ૫, इत्य वि जाणह नत्थिरथ दोसो” અળારિયવચનમેય ॥ સૂ. ૧॥

છાયા—તત્થ ચ આર્યામ્મ એવમચારિણુ—તદ્ દુર્લ્લપ્તં ચ વ, દુસ્સુય ચ વ, દુર્મયં ચ વ, દુર્લિણ્ણયં ચ વ, ઠદ્ધેમ્ અથ તિર્યગ્ દિશામ્ સર્વતઃ દુપ્પલિલેલિતં ચ વ, યત્ સલ્લ યુપમેયમ્ આલ્પ્યાય, એવં માગલ્લે, એવં પ્રલ્લપયથ, એવં પ્રજ્ઞાપયથ—સર્વે પ્રાણા ૪ હન્તમ્પા ૫ । અગ્રાપિ જાનીત, નાસ્સ્યથ દોષ । ” અનાર્ય વચનમેતદ્ ॥ મૂ. ૧ ॥

ટીકા—ય દેશતા આપાત્તચારિણતથાર્યાસ્તે, તત્થ=ઉક્તવિષયે, એવં વક્ત્રમા ણમકારેણ અવાદિષુ =ઉક્તવન્તઃ—‘તદ્ દુર્લ્લપ્તં ચ વ’ इत्यादि । યુપ્પામિર્યં દુક્તં—‘તદ્ દુક્તં ચ નઃ’ इति, તદ્ વ =યુપ્પાકં યુપ્પદાવાપાણાં વા દુક્તં દુર્લ્લપ્તમ્=

ગીત કી અનાર્યસંજ્ઞા છે । યે પ્રવચ્છમીં હોતે હૈં । વહ પ્રાણિયોં કે વીજા કારક સમસ્ત પ્રયોક્ત કથન કનને અનાર્યોં કા પ્રતિપાદિત કિયા હુઅરે ॥

યદિ યા પ્રયોક્ત સમસ્ત ધર્મચિક્ષુ કથન અનાર્યોં કા હૈં તો ફિર (આર્યોં કી માન્યતા કેસી હૈં ? કમ પ્રકાર ત્રિપ્યગ્ની જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કિયા જાતા હૈં—‘તત્થ જે આરિયા’ इत्यादि ।

કમ પ્રયોક્ત કથનમેં આર્યોં કી કમ પ્રકાર કી પ્રત્યુચારરૂપ માન્યતા હૈં, અર્થાત્—દેશ સે, માયા સે ઓર ચારિત્ર સે જો આર્ય હૈં ઉનકા કમ પ્રકાર કા કથન હૈં યિ—આપને ય આપકે આચાર્યોંમે જો દેખ્યા હૈં, જો

અનાય સમ્મ છે ત હરકર્મીં લાય છે પ્રાણીજીવને મારે પીડકારક આ સમસ્ત પ્રયોક્ત કથન આ અનાર્યોંના જ પ્રતિપાદિત કરેલા છે ॥ મૂ. ૮ ॥

આ પ્રયોક્ત સમસ્ત ધર્મચિક્ષુ કથન અનાર્યોંના છે તો પદી આર્યોંની માન્યતા કેવી છે ? આ પ્રકારની ચિંતની સમત્ત સમાધાન કરે છે—‘તત્થ જે આરિયા’ इत्यादि

આ પ્રયોક્ત કથનમા આચાર્યોં આ પ્રકારની પ્રત્યુચારરૂપ માન્યતા છે અર્થાત્—દેશથી બાળથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું આ પ્રકારનું કથન છે કે—તમેએ તમારા આચાર્યોંએ ? દેખ્યું છે માન્યું છે માન્યું છે અને જે

=दुष्टं हृष्टं न तु सम्यग् दृष्टमित्यर्थः । एवं यावत् “ दुष्प्रतिलेखितं च वः ” इति स्वयमूहनीयम् । पुनरपि त एवार्थाः प्रागुक्तश्रमणादिवचनं हिंसादिप्रवर्तक-तया सदोषमिति बोधयितुं यदवादिपुस्तदाह-‘ यत् खलु यूयमेवम् ’ इत्यादि । एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण युयं यद्वचनमाख्याय, एवं यद् भाषध्वे, एवं यत् प्रज्ञापयथ, एवं यत् प्ररूपयथ-सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ इत्यादि, यावत्-नास्त्यत्र दोष इति, तदेतत् सर्वमनार्यवचनं=हिंसादिप्रवर्तकतया पापानुबन्धि वचनं युष्मदाचार्याणां वेत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

सुना है, जो माना है, और जो जाना है एवं/ प्रत्येक दिशामें जिसकी प्रत्यक्षादि प्रमाणों के द्वारा (अच्छीतरह से छान-बीन की है; वह सर्वथा सदोष है) - वह आपका व आपके आचार्यों का देखना, सुनना, मानना, एवं जानना और पर्यालोचना करना दोषोंसे रिक्त नहीं है, अतः आपने व आपके आचार्यों ने जो देखा है वह सुन्दर निर्दोष नहीं देखा, जो सुना है वह निर्दोष नहीं सुना, जो माना है वह निर्दोष नहीं माना, जो जाना है वह निर्दोष नहीं जाना (एवं जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा प्रत्येक दिशामें पर्यालोचना की है वह भी निर्दोष नहीं की) यह सब उनका व आपका नाममात्रका ही देखना सुनना बगैरह हुआ है। कारण कि यह आपका पूर्वोक्त कथन जीवों की हिंसादिक पापों में प्रवृत्ति की जागृति करानेवाला है, अतः ‘समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व मारने योग्य है, मारने की आज्ञा देनेयोग्य है, मारने के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परितापित करनेयोग्य है और विष-श-

जल्यु छे तेमज प्रत्येक दिशामा जेनी प्रत्यक्षादि प्रमाणोद्वारा सारी रीते शोध करी छे ते सर्वथा सदोष छे ते तमाइ तेमज तमारा आचार्योंनु हेणवुं, सालणवुं, मानवु, तेमज जल्युवु अने पर्यालोचना करवी ते दोषोथी सुकत नथी, भाटे तमोजे तेमज तमारा आचार्योंजे जे हेण्यु छे ते सुन्दर-निर्दोष नथी हेण्यु, जे सालण्यु छे निर्दोष नथी सालण्यु, जे मान्यु ते निर्दोष नथी मान्यु, तेमज जे जल्यु छे ते निर्दोष नथी जल्यु, अने जे प्रत्यक्षादिप्रमाणोद्वारा प्रत्येक दिशामा पर्यालोचना करी छे ते पण निर्दोष नथी करी, आ जधु तेजोनु तेमज तमाइ नाममात्रनु हेणवु सालणवु विगेरे थ्यु छे, कारण जे तमाइ पूर्वोक्त कथन जेवानी हिंसादिक पापेमा प्रवृत्ति जअत करवावाणु छे, भाटे ‘समस्त प्राणी समस्त भूत समस्त सत्त्व मारने योग्य है, मारने की आज्ञा देनेयोग्य है, मारने के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परितापित करनेयोग्य है और विष-श-

जे, मारवानी

एवं केवलम्नो दण्डिष्ठान्पाद्रीनां वाद हिंसादिदोषसङ्गावाद्धर्मविरोधं प्रदर्शय-
स्वमतं प्रतिबोधयितुं शक्नन्ति-‘वयं पुनः’ इत्यादि ।

મૂલ્ય-વયં પુનઃ એવામહક્ષ્ત્રામો, એવા માસામો, એવા પક્ષ-
ધેમો, એવા પરુષેમો-સઘે પાણા, સઘે મૂયા, સઘે જીવા, સઘે સત્તા
ળ હત્તા, ણ અજ્ઞાવેયત્તા, ણ પરિષેતત્તા, ણ પરિચાવેયત્તા, ણ ઉદયે-
યત્તા । પરિચયિ જાણહ, ણરિચયિ દોસો । આરિયવચનમેય ॥ સુ. ૧૦ ॥

જ્ઞાતિકોં કે દ્વારા (વધ કરને યોગ્ય છે, હમમેં કોઈ દોષ નહીં છે ।) યહ જો આપકા કથન છે, આપકા આપણ છે, આપકી પ્રજ્ઞાપના છે, આપકી પ્રસ્પષ્ટતા છે, તથા (જેને જો આપને નિર્દોષ પ્રકટ કિયા છે; જે સર્વ અનાયોં કે હી વચન છે ઓર સદોષ છે,) કારણ કિ આપકે ય આપકે આચાર્યોં કે જન વચનોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા પ્રાણી કેવલ પાપકા હી ઉપા-
ર્જન કરનેવાલા હોતા છે,) ધર્મકા નહીં, (અતઃ અનાયવચન હોને સે યે ત્યાજ્ય હી છે) । ઇસ પૂર્વોક્ત કથન કા તાત્પર્ય યહી છે કિ યહ સર્વ કથન ધર્મવિરુદ્ધ હોનેસે જીવોં મેં અસદાચાર કી પ્રવૃત્તિ કા કારણ હોનેસે સદોષ ણં પાપાનુબન્ધ કા હેતુ છે, અતઃ અનાયવચન હોને સે યદ સર્વપા નિન્દનીય ઇવં ગર્હણીય છે ॥ સુ. ૯ ॥

(કેવલી ભગવાન) ઇસ પ્રકાર વળી શાક્યાત્તિકોં કે કથન મેં હિંસા-
વિક દોષોં કા સ્પષ્ટાવ હોનેસે ધર્મવિરુદ્ધતા પ્રદર્શન કરું અપના સિદ્ધાન્ત-
પ્રકટ કરનેકે લિયે કહેતે છે- ‘વયં પુનઃ’ ઇત્યાદિ ।

અમા દેવા યોગ્ય છે, આપવાને ચક્રણ કરવા યોગ્ય છે પરિતાપિત કરવા યોગ્ય
છે અને વિવશસ્થાતિકોં દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમાં કાંઈ પણ દોષ નથી,
આ પ્રકારે જે વમાહ કથન છે વમાહ આપણ છે, વમારી પ્રજ્ઞાપના છે,
વમારી પ્રસ્પષ્ટતા છે, તથા જેને જે વમાએ નિર્દોષ પ્રજ્ઞા કરેલ છે તે બધા
અનાયોગ્ય જ વચનો છે અને સદોષ છે કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આજ્ઞા
ચીના આ વચનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી કેવળ આપના જ ઉપાજ્ઞાન કરવાવાળા
બને છે ધર્મના નહીં માટે અનાયવચન કોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે આ
પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ-વિરુદ્ધ કોવાથી એવાને
અસદાચારી પ્રવૃત્તિનું કારણ કોવાથી સદોષ અને પાપાનુબન્ધ હેતુ છે માટે
અનાયવચન કોવાથી તે સર્વપા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે ॥ સુ. ૯ ॥

કેવલી ભગવાન આ પ્રકારે હી શાક્યાત્તિકોં કથનમાં હિંસાવિક દોષોને
સૂક્ષ્મ કોવાથી ધર્મ-વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી પોતાને સિદ્ધાન્ત પ્રકટ કરવાને
માટે કહે છે- વયં પુનઃ ઇત્યાદિ.

छाया—वयं पुनरेवमाख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—
सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः, न हन्तव्याः १, न आज्ञापयितव्याः २,
न परिगृहीतव्याः ३, न परितापयितव्याः ४, न अपद्रावयितव्याः ५ । अत्रापि
जानीत, नास्त्यत्र दोष । आर्यवचनमेतत् ॥ सू० १० ॥

टीका—वयं पुनरित्यादि । अत्र पुनः—शब्द उक्तश्रमणादिवैलक्षण्यद्योतनाय ।
यथा धर्मविरुद्धवादो न भवति, तथा वयम् एवं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यामः, एवं
भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५ । एतानि
पदानि प्राग्व्याख्यातानि । अत्रापि—अत्रैव=अस्मिन् उक्तविषये—सर्वे प्राणाः ४
न हन्तव्याः ५, इत्यत्रैव जानीत=ग्रयमवबुध्यन्वम्, अत्र=अस्मिन्—अस्मद्वाक्ये

इस सूत्रमें “ पुनः ” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे
केवलियों की मान्यतासे भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात्
केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे
उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका
कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण
करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं (कि-समस्त प्राणी,
समस्त (जीव), समस्त (भूत) और समस्त (सत्त्व न मारने योग्य हैं, न
न मारनेकी (आज्ञा देने योग्य हैं) न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं,
(न परितापित करने योग्य हैं) और न विषयान्त्रादिकों के द्वारा वध करने
योग्य ही है । (इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है)
यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं
होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

आ सूत्रमा ‘ पुन ’ आ शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकोनी मान्यताथी केवणी-
योनी मान्यतामा भिन्न-प्रकारता प्रकाशित करे छे अर्थात्—केवणीओनु कथन आ
प्रकारनु नहीं पणु आम छे जेनाथी केछ पणु प्रकारे धर्मथी विरोध आवी शकते
नथी ओमनु कहेछे छे के—अमे तो आ प्रकारनु कथन करीओ छीओ, लाषणु करीओ
छीओ, प्रज्ञापना करीओ छीओ अने प्ररूपणा करीओ छीओ के समस्त प्राणी, समस्त
भूत, समस्त एव अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य नथी, मारवानी आज्ञा देवा
योग्य नथी, मारवाने माटे अडणु करवा योग्य नथी, परितापित करवा योग्य नथी,
तेमज विष अने शस्त्रादिकोथी वध करवाने योग्य नथी. (आ समस्त पदार्थोनु
विवेचन पड़ेला करवामा आब्यु छे) आ अमाइ कथन हिंसादिक पापोमा एवोनी
प्रवृत्ति करवावणु नहि होवाथी प्रमाणरूप निर्दोष छे ओ तमे सारी रीते समष्ट

દોષો નાસ્તિ; હિંસાદિમવર્તકસામાશાદિતિ માથ . પરત્ત્વ આર્યવચનમ્—વેશ્વરો માપાતશ્ચારિત્રતમ યે આર્યોસ્તેષાં ધાક્ય, તસ્માન્નાસ્ત્યત્ર દોષ इत्यर्थः ॥ સૂ० ૧૦ ॥

દક્ષિણાક્યાદીનાં પાપખિન્નાં ધર્મચિક્ષુવાદમશ્વમનાય કંચમિનો યદ્ પદન્તિ તવાઈ—' પુષ્પં નિકાય ' इत्यादि ।

મુક્ત—પુત્ર નિકાય સમય પત્તેય પત્તેય પુષ્છિસ્ત્સામો, હ મો પવાડયા ! કિં મે સાય દુક્ત્વ અસાય? સમિયા પઠિવળ્ણે યાવિ ષ્વ ધૂયા—સઘેસિં પાળાળ સઘેમિં મૂયાળ સઘેસિં જીવાળ સઘેસિં સત્તાળ અસાય અપરિનિશ્વાળ મહઁમય દુક્ત્વ તિવેમિ ॥સૂ० ૧૧॥

છાયા—પૂર્વે નિકાગ્ય સમયે પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રત્યામ , હં મા પ્રાશાદુકા ! કિં યુષ્માક સાર્તે દુઃસ્વમ્ અસાતમ્ ? સમ્યક્પ્રતિપજ્ઞાંશ અપ્યેષં ધૂયાત્—સર્વેપા પ્રાણાનાં સર્વેપા મૂતાનાં સર્વેપા જીવાના સર્વેપાં સત્તાનાં અસાતમ્ અપરિનિશ્વાંશ મહામયં દુઃસ્વમ્—इति श्रवीमि ॥ સૂ० ૧૧ ॥

હીકા—મોઃ પ્રાશાદુકાઃ ! ત્વં પૂર્વમ્—આદૌ, સમયમ્—આગમમ્ આગમોક્ત મયે, નિકાગ્ય—અવસ્થાપ્ય, યુષ્માન્ પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રત્યામઃ, દુઃસ્વં યુષ્માકં કિં સાર્તે—મનોડનુકલ, કિં શા અસાતમ્—મનપ્રતિકૂલમ્ ?

(દેશસે, આપાસે ઓર ચારિત્રસે જો આર્ય હૈં ડનકા કપન હૈ, હસી કારણ યહ નિર્દોષ હૈ) આર્ય દેશમેં જો ઉત્પન્ન હુગ હૈ હે દેશસે આર્ય, આર્યોંકી માપા જો ઘોલતે હૈં હે માપાસે આર્ય ઓર ચારિત્ર કા જો આરાધન કરતે હૈં હે ચારિત્રસે આર્ય કહલાતે હૈં ॥ સૂ० ૧૦ ॥

(દક્ષિણાક્યાદિક પાત્વણિયોં કે ધર્મચિક્ષુ કથનકો શાન્ત કરને કે સિયે કેશલિયોં કા જો કથન હૈં ચહીકેહોં આતા હૈ) પુષ્પં નિકાય 'इत्यादि ।

હે માદિયોં ! હમ સવસે પ્રથમ આગમોક્ત—અર્થતત્ત્વકી અવસ્થા કર કે આપ લોગોં મેં સે પ્રત્યેક કો યહ પૂછતે હૈં કિ આપ દુઃસ્વ કિસે માનતે ?

આ. દેશથી ભાષાથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું અર્થ જ કથન છે આ માટે જ આ નિર્દોષ ॥ આપ દેશમાં જે ઉત્પન્ન થયા છે તે દેશથી આર્ય, આર્યોની ભાષા બોલે છે માટે ભાષાથી આર્ય અને ચારિત્રનું જે આરાધન કરે છે તે ચારિત્રથી આર્ય કહેવાય છે ॥ સૂ० ૧ ॥

દેશાક્રમાદિક પાપાધિના ધર્મચિક્ષુ કથનને શાન્ત કરવા માટે કેવળાંબુ જે કથન છે તે કહે છે— પુષ્પ નિકાય ' इत्यादि.

દેવાદિવાદ કરવાવાળા! અમે ચોથી પ્રથમ આગમોક્ત અર્થ તત્ત્વની અવસ્થા કરીને તમારે લોકોમાંથી દરેકને પૂછીએ છીએ કે તમે દુઃસ્વ કોને માને છે? જે

एवं पृष्ठाः सन्तो यदि ते 'दुःखं सातम्' इति ब्रूयुस्तदा तेषां प्रत्यक्षाग-
मलोकविरोध आपद्येत, यदि तु दुःखमसातम्' इति वदेयुस्तदा सम्यक्-
प्रतिपन्नान्=यथार्थमर्थं ज्ञातवतः प्रावादुकान् स्वतः स्तम्भितवाक्प्रचारान्, अप्येवम्-
अपिशब्दः संभावनार्थद्योतकः; एवं संभाव्यते-दुःखं भवतामेव नासातरूपं, किंतु
सर्वेषामपि प्राणिनां सर्वेषामपि भूतानां सर्वेषामपि जीवानां सर्वेषामपि सत्त्वानां
दुःखम्-असातं=मनःप्रतिकूलम्-अप्रियमित्यर्थः । तथा-अपरिनिर्वाणम्=अशान्तं
है ? जो शाता-मनके अनुकूल है वह दुःख है ? या जो अशाता-मनके
प्रतिकूल है वह दुःख है ?

(મનકે અનુકૂલ શાતાકો યદિ દુઃખ માના જાવે તો इसमें प्रत्यक्ष
तथा आगम प्रमाणसे और लोकसे भी विरोध आता है, कारण कि
मन अपने अनुकूल पदार्थके सेवनमें सुख मानता है) यह प्रत्यक्षसिद्ध
वात है । (आगममें भी 'मनोऽनुकूलं सुखं') यह लिखा हुआ है, अर्थात्
मनोऽनुकूल पदार्थों की प्राप्ति शातावेदनीय कर्मके उदयसे ही जीवोंको
प्राप्त होती है, ऐसा शास्त्रका वचन है । लोक भी मनोऽनुकूल पदार्थके
सेवनमें सुख है-ऐसा ही कहते और मानते हैं ।

મનકે પ્રતિકૂલ અશાતા કો યદિ દુઃખ માના જાવે તો જો યથાર્થવક્તા-
સમજ્ઞદાર પ્રવાદી છે ઓર જો ઇસ વિષય મેં કેવલ મૌન છે ડનસે હમ
યહી કહેંગે કિ/ જિસ પ્રકાર અશાતા તુમ્હેં દુઃખરૂપ પ્રતીતિ હોતી છે ડસી
તરહસે સમસ્ત પ્રાણિયોં કો, સમસ્ત ભૂતોં કો, સમસ્ત જીવોં કો ઓર
સમસ્ત સત્ત્વોં કો યહ અશાતા મહાઘોર ઓર ડનકે પ્રાણોં કો કલ્ટ

શાતા-મનને અનુકૂળ છે તે હ.ખ છે ? અગર જે અશાતા-મનને પ્રતિકૂળ છે તે
હ.ખ છે ?

મનને અનુકૂળ-શાતાને કહાય હ.ખ માનવામા આવે તો તેમા પ્રત્યક્ષ તથા
આગમપ્રમાણથી અને લોકથી પણ વિરોધ આવે છે, કારણ કે મન પોતાના અનુ-
કૂળ પદાર્થના સેવનમા સુખ માને છે એ પ્રત્યક્ષ-સિદ્ધ વાત છે આગમમા પણ
'મનોઽનુકૂલં સુખં' એમ લખેલ છે, અર્થાત્-મનના અનુકૂળ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ
જીવોને શાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, એવુ શાસ્ત્રનુ વચન છે, લોક પણ
'મનને અનુકૂલ પદાર્થના સેવનમા સુખ છે' એવુ જ કહે છે તેમ જ માને છે મનને
પ્રતિકૂળ અશાતાને કહાય હ.ખ માનવામા આવે તો જે યથાર્થવક્તા-સમજ્ઞદાર
પ્રવાહી છે અને જે આ વિષયમા કેવળ મૌન છે તેને પણ અમે એ જ કહીશુ કે
—જે પ્રકારે અશાતા તમોને હ.ખરૂપ પ્રતીતિ થાય છે તે માફક સમસ્ત પ્રાણિયો
સમસ્ત ભૂતો, સમસ્ત જીવો અને સમસ્ત સત્ત્વોને આ અશાતા મહાઘોર અને

ધારમિત્યર્થ । તથા-મહામયમ્=નિસ્તિષ્ઠપ્રાણિપ્રાણોદ્વેજકત્વાન્મહામયરૂપમ્ । इत्येवं
 મૂળાત્=‘પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં ગણયિતા, સર્વે પ્રાણિનો ન હન્તવ્યા નાહ્યાપયિતવ્યા ન પરિ
 પ્રદીતવ્યા ન પરિતાપયિતવ્યા, નાપદ્યાયિતવ્યા, યતો હિંસાદિકરણે દોષઃ
 પ્રસજ્યેત’ इत्येवं વચનં વદેદિત્યર્થ । યસ્તુ હિંસાદિકરણે દોષા નાસ્તીતિ ન્યતિ,
 તદનાયંવચનમ્-इति પ્રત્યક્ષાનુમાનોપમાદિપ્રમાણે સિદ્ધમિતિ માત્રઃ । इति प्रथमीतीति
 પૂર્વશ્ચ જ્યાસ્થાપગન્તવ્યા ॥ મૂ० ૧૧ ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य त्रितीय उद्देशः समाप्त ॥ ४-२ ॥

પશુચાનેવાલી હોનેસે મહામયરૂપ પ્રતીત થોતી હૈ, અતઃ સમસ્ત પ્રાણી,
 સમસ્ત મૃત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ ન મારને યોગ્ય હૈ, ન મારને
 કી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈ, ન મારનેકે લિગ ગ્રહણ કરનેયોગ્ય હૈ ન પરિ
 તાપિત કરને યોગ્ય હૈ ઓર ન વધ કરને યોગ્ય હૈ । અજ્ઞાતા દેનેસે
 હિંસાદિક દોષોંકા ભાગી હોના પડ્ઝા હૈ (જો હિંસાદિક પાપોંકે કરને મેં
 દોષ નહીં માનતે હૈ ષે અનાયર્થ હૈ ઓર “ હિંસાદિક પાપોંકે કરને મેં
 દોષ નહીં હૈ ” ઉનકે યે વચન અનાયર્થવચન હી હૈ) ઓ સુધર્માસ્વામી
 કહતે હૈ—હે જમ્મ ! જૈસા મૈને મગધાન કે સમીપ સુના હૈ વૈસા હી
 કહતા હૈ ॥ મૂ० ૧૧ ॥

॥ चौथे अध्ययनका दूसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

તમના પ્રાણાને કુપ્ત પહોંચા-વાવાળી હોવાથી મહામયરૂપ પ્રતીત થાય છે માટે
 સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત મૃત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ નહિ મારવાયોગ્ય
 છે નહિ મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, નહિ મારવાને અવધ કરવા યોગ્ય છે,
 નહિ પરિતાપિત કરવાને યોગ્ય છે નહિ વધ કરવા યોગ્ય છે અજ્ઞાતા દેવાથી
 હિંસાદિક દોષાનુ ભાગી બનવું પડે છે જે હિંસાદિક પાપો કરવામા દોષ નથી
 માનતા તે બનામ છે અને “ હિંસાદિક પાપો કરવામા દોષ નથી ” એમ જે
 તેનું વચન છે એ અનાયર્થવચન છે સુધર્માસ્વામી કહે છે—હે જમ્મ ! જેવું મે
 મગધાન સમીપે સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું ॥ સૂ० ૧૧ ॥

चौथा अध्ययनનો तीसरे उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

અથ ચતુર્થાધ્યયનસ્ય તૃતીય ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके दण्डिशाक्यादिपापण्डिमत्तनिराकरणेन सम्यक्तत्वं स्थिरीकृतम् । सत्यपि सम्यक्तत्वे निरवद्यतपश्चरणमन्तरेण कर्मक्षयो न भवतीत्यतः स्तत्र प्रवर्तयितुं तृतीयोद्देशकं कथयति । तत्र प्रथमं धर्मबहिष्क्रान्तस्यानार्यतया तदुपेक्षा करणीयेति बोधयितुमाह—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ઉવેહિ ણં બહિયા ય લોગં, સે સવ્વલોગંમિ જે કેહ્ વિણ્ણૂ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—ઉપેક્ષસ્વ સ્વલુ બહિશ્ચ લોકમ્, સ સર્વલોકે યે કેચિદ્ વિજ્ઞઃ ॥ મૂ૦૧ ॥
ટીકા—બહિઃ=ધર્માદ્ બહિષ્ક્રાન્તં લોકં સ્વલુ=નિશ્ચયેન ઉપેક્ષસ્વ=મા અનુસર । દણ્ડિશાક્યાદિપાપણ્ડિમતં મા અનુમન્યસ્વેત્યર્થઃ । ધર્મબહિષ્ક્રાન્તલોકોપેક્ષ-

चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश

इस पीछेके द्वितीय उद्देश में दण्डी शाक्यादिक पापण्डियोंकी मान्यताका निराकरण करके सम्यक्त्वको सुस्थिर किया; परन्तु इनने मात्र से कर्मक्षय नहीं हो सकता, कर्मक्षय तो निरतिचार तपश्चरण से ही होता है, इसलिये उस तपमें जीवोंकी प्रवृत्ति कराने के लिये इस तृतीय उद्देशका कथन प्रारंभ किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम धर्मसे बहिर्भूत जो व्यक्ति हैं वे अनार्य हैं और उनके साथ रागद्वेष न करते हुए उपेक्षाभाव ही रखना चाहिये, इस बातका परिज्ञान कराने के लिये कहते हैं—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

ધર્મસે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કી સદા ઉપેક્ષા હી કરની યાહિણ ।
અર્થાત્—દણ્ડી શાક્યાદિક જો ધર્મસે બહિર્ભૂત હૈ, ધર્મકા યથાર્થ સ્વરૂપ

ચોથા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ

પાછળના બીજા ઉદ્દેશમા દ્વિ-શાક્યાદિક પાપણ્ડીઓની માન્યતાનું નિરાકરણ કરીને સમ્યક્ત્વને સુસ્થિર કર્યું, પણ આટલાથી જ કર્મક્ષય થઈ શકે નહિ. કર્મક્ષય તો નિરતિચાર તપશ્ચરણથી જ થાય છે, માટે તે તપમા જીવોની પ્રવૃત્તિ કરવાને માટે આ ત્રીજા ઉદ્દેશના કથનનો પ્રારંભ કરવામા આવે છે આમા સર્વપ્રથમ ધર્મથી બહિર્ભૂત જે વ્યક્તિ છે તે અનાર્ય છે અને તેની સાથે રાગ દ્વેષ ન કરતા ઉપેક્ષા ભાવ જ રાખવો જોઈએ, આ વાતનું પરિજ્ઞાન કરવાને માટે કહે છે—‘ઉવેહિ ણં’ ઇત્યાદિ

ધર્મથી બહિર્ભૂત વ્યક્તિઓની સદા ઉપેક્ષા જ રાખવી જોઈએ, અર્થાત્—દ્વિ-શાક્યાદિક જે ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, ધર્મનું યથાર્થ સ્વરૂપ નથી જાણતા તેમજ

કસ્ય ગુણમાહ—‘સ સર્વલોક’ इत्यादि । योजनार्य मत्वा धर्मबहिष्कान्तलोके
नानुसरति, स सर्वलोके=समस्ते मनुष्यलोके, य केचिद् विद्वांसस्ततोऽप्यधिको
विद्वांसः=विद्वान्निस्पर्यः ॥ सू० १ ॥

નહીં જાનતે હૈં એક હિંસાવિક પાપ કાર્યોં મેં જીવોં કો પ્રવર્તિત કરાને કે
લિયે મિથ્યા ઉપદેશ કરતે હૈં, ઉનકા અનુસરણ નહીં કરના યાહિયે ।
જિસ પ્રકાર ધામકે તૃણ કે ઉપર સમગ્રદાર જીવકે હૃદયમેં ન રાગ હોતા
હે ઓર ન દ્વેષ હી હોતા હે; કિન્તુ સદા માધ્યસ્થ માણ રહતા હે । હસી
પ્રકાર જો આર્હત ધર્મ કે વિપરીત ચલનેવાલે હૈં ઓર ઉસસે અપની વૃત્તિ
કો ચિસ્તુ બનાયે દુષ્ટ હૈં ઉનકે પ્રતિ મી ભગવાન કા યહી આદેશ હે કિ હે
મહાનુભાવોં ! તુમ મી રાગ દ્વેષ ન કરકે ઉનકે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ હી રક્ષો;
કારણ કિ હસ ઉપેક્ષાભાવસે આત્મામેં શાન્તિ કી માત્રા અધિક રૂપમેં
જાગૃત હોતી રહતી હે । નવીન કર્મોં કા બંધ, જો ઉસકે પ્રતિ રાગદ્વેષ
કરને સે ઉત્પન્ન હોતા હે વહ રુક જાતા હે, અતઃ ધર્મબહિર્મૂત મનુષ્યોં કો
અનાર્ય સમજ કર જો ઉનકા અનુસરણ નહીં કરતા હે વહ મનુષ્ય હસ
લોકમેં જિતને મી વિદ્વાન હૈં ઉન મપસે અધિક વિદ્વા-વિદ્વાન હૈં । યહાં પર
જો ઉસ વ્યક્તિ કો સમસ્ત વિદ્વાનોં સે અધિક વિદ્વાન બતલાયા ગયા હે,
વહ તત્ત્વોં કા સમ્યક્ પ્રકારસે જાનનેવાલે હોનેસે હી સમજના યાહિયે,
કારણ કિ વહ સમક્તિ જીય અપને પ્રયોજનમૂત તત્ત્વોં સે હી મતલબ

હિંસાવિક પાપ કાર્યોમા છવોની પ્રવૃત્તિ કરાવવામા ગિચ્છા ઉપદેશ આપે છે તેનું
અનુસરણ નહિ કરણુ ભેદજો જેમ માણના તણખલા ઉપર સમગ્રદાર છવના
હૃદયમા રાગ તેમજ દ્વેષ હાતો નથી પણ હમિશા મધ્યસ્થ ભાવ રહે છે, તે
પ્રકારે જે આર્હત ધર્મ મી વિપરીત ચાલવાવાળા છે અને તેનાથી જેની વૃત્તિ વિદુક્ક
બનેલી છે તેના પ્રત્યે પણ ભગવાનનો જે જ આદેશ છે તે-હે દેવાનુગ્રિહ ! તમે
રાગ દ્વેષ ન કરતા તે પ્રત્યે ઉપેક્ષા ભાવજ સખો, કારણ કે આ ઉપેક્ષાભાવથી
આત્મામા શાન્તિની માત્રા અધિક રૂપમા બ્રજત થાય છે નવીન કર્મોના બંધ, જે
તે પ્રત્યે રાગ દ્વેષ કરવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે શિકારી બધ છે, તેથી ધર્મ વિમુખ
મનુષ્યાને જ્ઞનાર્થ સમજાને જે તેનું અનુસરણ નથી કરના તે મનુષ્ય આ લોકમા
જેટલા વિદ્વાનો છે તે બધા કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે પણ આ ઠેકાણે તે અક્તિ
જેને બધા વિદ્વાનો કરતા વધારે બાણવાળા જતાવેલા છે તે તત્ત્વોના સમજ
પ્રકારથી બાણવાળા હોવાથી જ સમજનું ભેદજો; કારણ કે તે સમક્તિ છવ
ચોતાના પ્રયોજન-મૂત તત્ત્વોથી જ મતલબ રાખે છે. જોનાથી વિગ્રજ તત્ત્વોમા

ननु ते विद्वांसः कथं विज्ञेयाः ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘अणुवीड’ इत्यादि ।

मूलम्—अणुवीड पास, निखिखत्तदंडा जे केइ सत्ता पलियं चयंति, नरा मुयच्चा धम्मविउ-त्ति अंजू, आरंभजं दुक्खमिणं-ति णच्चा, एवमाहु संमत्तदंसिणो ॥ सू० २ ॥

छाया—अनुविचिन्त्य पश्य, निक्षिप्तदण्डाः ये केऽपि सत्त्वाः पलित त्यजन्ति, नरा मृता र्चा धर्मविदः ऋजवः आरम्भजं दुःश्वम् इदमिति ज्ञात्वा एवमाहुः सम्यक्तत्त्वदर्शिणः ॥ सू० २ ॥

टीका—अनुविचिन्त्य=पुनः पुनः पर्यालोच्य, पश्य=ज्ञानदृष्ट्या विलोक्य, ये केऽपि सत्त्वाः=जीवा, निक्षिप्तदण्डाः=परित्यक्तमनोवाक्कायमयसावद्यव्यापाररूप-दण्डाः सन्तः, पलितं=पुरातन कर्मेत्यर्थः, अनादिकालवस्थायित्वेन चिरन्तनं कर्मापि

रखता है, इनसे बहिर्भूत तत्त्वों में उसकी सदा उपेक्षा ही बनी रहती है। जहाँ अपने में स्वपरका विवेक जागृत हो रहा है वही दुनियां में विद्वानों से भी अधिक विद्वान् है। अनेक शास्त्रों का अध्येता हो कर भी जो इस ज्ञानसे शून्य है वह विद्वान् होकर भी सिद्धान्तज्ञों की दृष्टि में मूर्ख ही है ॥ सू० १ ॥

जिनधर्म से बहिर्भूत व्यक्तियों के प्रति उपेक्षाभाव धारण करने-वाला मनुष्य विद्वान् क्यों बतलाया गया है? इस प्रकार शिष्य की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘अणुवीड’ इत्यादि।

जो मनुष्य बारंवार विचार करके तथा ज्ञानदृष्टि से देखकर मन, वचन और कायके सावद्यव्यापाररूप दण्डों से रहित हो जाता है वही अनादिकालसे आत्माके साथ एकक्षेत्रावगाहरूप होने से आवद्ध चिर-

तेनी सदा उपेक्षा न रहेछे जे एवमा स्व-परनो विवेक नभ्रत रहेछे ते न ससारमा सौ विद्वानो करता पणु अधिक विद्वान छे अनेक शास्त्रोनो नल्लुकार होवा छता पणु जे ज्ञानथी शून्य छे ते विद्वान होवा छता पणु सिद्धांतोनो दृष्टिमा भूणं न छे ॥ सू० १ ॥

जिनधर्मथी विमुण्य व्यक्तिओ प्रति उपेक्षाभाव धारण करवावाणा मनुष्यने विद्वान केम मानवामा आवेल छे? आ प्रकारनी शिष्यनी जिज्ञासा थवाथी अछे छे—‘अणुवीड’ इत्यादि

जे मनुष्य बारवार विचार करीने तथा ज्ञानदृष्टिथी जेध मन, वचन अने कायाना सावद्यव्यापाररूप दण्डथी रहित यध नथ छे ते न अनादि कालथी ओक न क्षेत्रमा रहेवावाणा होवाथी आत्मानो साथे न धारेल पुरातन अष्टविध

પલિતસાદૃશ્યાત્પન્થિમિત્યુચ્યતે; ત્યજન્તિ, આત્મનો માલિન્યકરખાટ્તજોરૂપમપ્તવિષં
કર્માપનયન્તિ તે ચિદ્રાસ इति मावा। य निश्चितदण्डाः सन्तोऽष्टविषं कर्म सप्त-
यन्ति, एवंभूता के जीवविशेषा सन्तीति शिष्यजिज्ञासापामाह—‘नरा’इत्यादि।

નત્તન અષ્ટવિષ કર્મોં કો, જો યજ્ઞાદિકોં કો ધૂલકે સમાન આત્મા કો
મલિન કર રહે હેં, અપનેસે દૂર કર દેતા હે, ઓર ઘણી ચિદ્રાન્ મી હેં।
શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ ‘જિનકર્મસે યહિર્મૂત વ્યક્તિયોંમેં
ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરનેવાલા વ્યક્તિ ઉત્તમ ચિદ્રાન્ કયોં યન જાતા હેં?’
ઉત્તકા હી યહ સમાધાન હૈ—‘વેત્સીતિ ચિદ્રાન્’—અર્થાત્ જિસકે મીતર
સ્વપર કા વિવેક જાગૃત હો રહા હે ઘણી ચિદ્રાન્ હૈ। હસ પ્રકારકી ચિદ્રતા
પ્રાપ્ત કરનેકે લિયે સર્વપ્રથમ હસ યાતકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે અવશ્ય વિચાર
કરના ચાહિયે કિ યે કર્મ જો અનાદિ કાલસે મેરી આત્મા કે સાથ ક્ષીર
નીરકી તરહ સંચિત હો રહે હ, હસકા કારણ કયા હેં?, સૂક્ષ્મ વિચાર કરને
પર જ્ઞાત હોગા કિ હનકે સાથ અમી તક સંયંધ હોનેકા કારણ મન, વચન
ઔર કાયકી સાવધ પ્રવૃત્તિ હી હૈ, અત જૈસે ૨ યહ પ્રવૃત્તિ રહેગી વૈસે ૨
મધીન કર્મોં કા આલ્લખ રહેગા ઔર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોગી।
મન ઔર કાયકી સાવધ પ્રવૃત્તિ કો રોકનેકે લિયે તપ સંયમ કે આરાધન
કરનેકી પૂર્ણ આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોં ને યતલાઈ હૈં। તપ સંયમ કે આરા-
ધન કરન સે સાવધ વ્યાપારોં કા ઝિત્તને ૨ અંશ મેં અભાવ હોગા તતમે ૨

કર્મોંને—પૂજ જેમ વજ્રાદિકોંને મલિન કરે છે તેમ આત્માને જેઓ મલિન કરી
રહ્યા છે તેઓને—પાતાશી દૂર કરી નાખે છે, અને તે જ વિદ્વાન પણ છે શિષ્યો
જે પ્રશ્ન કરેલા હોય કે ‘જનકર્મથી વિમુખ વ્યક્તિઓમાં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ
કરવાવાળી વ્યક્તિને ઉત્તમ વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવે છે?’ તેનું આ સમા-
ધાન છે—વેત્સીતિ ચિદ્રાન્ —અર્થાત્ જેની અદર સ્વ-પરત્યે વિવેક વ્યવૃત્ત છે
તે જ વિદ્વાન છે આ પ્રકારની ચિદ્રતા પ્રાપ્ત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ આ વાતનું
જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર અવશ્ય કરવો જોઈએ કે આ કર્મોંને જન્યાદિ કાળથી પ્રાપ્ત
આત્માની સાથે દ્રુષ-પાણીની માફક જોડ થઈ રહ્યા છે તેનું કારણ શું છે? સૂક્ષ્મ
વિચાર કરવાથી જાત થશે કે કોની સાથે કલ સુધી સંબંધ રહેવાનું કારણ
મન, વચન અને કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિ જ છે માટે જેમ જેમ આ પ્રવૃત્તિ
રોકાયે તેમ તેમ નવા કર્મોંના આલ્લખ અને સંચિત કર્મોંની નિર્જરા થશે મન,
વચન અને કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિ રોકવાને માટે તપ સમય આરાધન કરવાની
આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોંને બતાવી છે તપ સુચમની આરાધના કરવાથી સાવધ
આપશોનો જેટલા જેટલા અશે અભાવ થશે તેટલા તેટલા અશે આત્મામાં

नराः=मनुष्याः, तेषामेव निर्वशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यमस्तीति भावः । तत्रापि साधारणतया न सर्वे मनुष्या अशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यवन्तः—इति बोधयितुं तद्विशेषणमाह—‘मृतार्चा’ इति ।

अंशमें आत्मा में निर्मलता जागृत होगी । इस निर्मलता के आते ही स्वतः शब्दादि विषयों में जीवको उपेक्षाभावकी जागृति हो जाती है । मनुष्य को तप संयम ही उत्तम विद्वत्ता के स्थान पर लाकर रखने-वाला होता है, इसीलिये सिद्धान्तकारों ने ऐसे मनुष्यको विद्वानों में श्रेष्ठ माना है ।

यहां पर ‘पलित’ शब्द का अर्थ ‘पुरातनकर्म’ है । अनादिकालिक होने के कारण पुरातन कर्म भी पलित=श्वेतकेश सदृश है, अतः उन्हें यहां पलित कहा गया है । इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार मनुष्य पलित-सफेद केश को शीघ्र उखाड़ डालता है उसी प्रकार मन, वचन और कायकी सावध प्रवृत्ति को त्याग करनेवाला मनुष्य भी उन पुरातन कर्मों को शीघ्र नष्ट कर देता है । यह काम सामान्य जीवों से नहीं हो सकता इसलिये इस कार्य के करनेवाले विशेष जीव ही होते हैं, इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रकार इस सूत्रमें “नराः” इस पदका विन्यास करते हैं; क्योंकि समस्त कर्मों के विनष्ट करने की साक्षात् शक्ति मनुष्य में ही रही हुई है । इनमें भी सभी मनुष्य समस्त कर्मों के क्षपण करने में समर्थ नहीं होते हैं; यही बात “मृतार्चा” इस पदसे प्रकट की गई है ।

निर्मलता जागृत थोड़े आ निर्मलता आववाथी शब्दादिविषयोभा जवने उपेक्षा लावनी जागृति थाय છે મનુષ્યને તપ સયમ જ વિદ્વત્તાના સ્થાન પર લાવીને રાખવાવાળા છે, માટે સિદ્ધાંતકારોએ આવા મનુષ્યને વિદ્વાનોમા ઉત્તમ માનેલ છે

આ ઠેકાણે ‘પલિત’ શબ્દનો અર્થ ‘પુરાતનકર્મ’ છે અનાદિકાલિક હોવાના કારણે પુરાતન કર્મો પણ પલિત=શ્વેતકેશસદૃશ છે, માટે તેઓને આહીં પલિત કહ્યા છે આનો અભિપ્રાય આ છે કે—જે પ્રકારે મનુષ્ય પલિત-સફેદ વાળને શીઘ્ર ઉખાડી નાખે છે તે પ્રકારે મન વચન કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિનો ત્યાગ કરવાવાળા મનુષ્ય પણ આ પુરાણા કર્મોને શીઘ્ર નષ્ટ કરી દે છે આ કામ સામાન્ય જીવથી થઈ શકતું નથી, માટે આ કાર્યને કરવાવાળા કોઈક જ જીવ હોય છે આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમા “નરાઃ” આ પદ રાખ્યું છે, કેમ કે બધા કર્મોના નાશ કરવાની સાક્ષાત્ શક્તિ મનુષ્યમા જ રહેલી છે આમા પણ બધા મનુષ્યો સકળ કર્મોનો ક્ષય કરવામા સમર્થ થતા નથી આ વાત ‘મૃતાર્ચા’ આ શબ્દથી પ્રગટ કરવામા આવી છે

સંસ્કારરાહિત્યાવ મૃતેવ મૃતા-અર્થા શરીરં યપાં તે મૃતાર્થા,
શુભ્રૂપાવિમૂપાદિવર્જિતશરીરા ઇત્યર્થઃ । યદ્વા-અર્થા અર્ચિ, તત્સાદૃશ્યાત્
ક્રોધોઽપ્યર્ચા, સ ચ કપાયમાત્રોપસક્ષણમ્ । તથા ચ-મૃતા નપ્ત્વા અર્ચા કપાયરૂપા
યપાં તે મૃતાર્ચા, કપાયરહિતા ઇત્યર્થઃ । કિંતુ-ધર્મચિદ્-મૃતવારિષ્ઠધર્મજ્ઞાનચન્તઃ,

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીર યેપાં તે મૃતાર્ચા” અર્થાત્-શારીરિક-
શુભ્રૂપાવિમૂપારૂપસંસ્કારરહિત હોનેસે મૃતકે સમાન હૈ શરીર જિનકા
એસે અપને શરીરમેં નિસ્પૃહવૃત્તિ રચ્ચનેવાલે મનુષ્યશિરોમણિ હી इन कर्मों
પર વિજય લાભ કરતે હૈ । અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ” અર્થ હૈ જ્વાલા ।
જિસ પ્રકાર અગ્નિકી જ્વાલા લાલ હોતી હૈ उसी प्रकार क्रोध भी
લાલ હોતા હૈ; અતઃ જ્વાલાકે સાદૃશ્ય સે ક્રોધ કો મી અર્ચા કહા હૈ ।
ક્રોધ યહ અન્ય કપાયોંકા ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે માન, માયા ઓર લોભ
કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । જિનકી આત્માસે કપાયરૂપ અર્ચા નષ્ટ હો
જુકી હૈ, અર્થાત્ જો કપાયરહિત હો જુકે હૈ એ મનુષ્ય હી અષ્ટધિષ
કર્મોં કે નષ્ટ કરનેમેં વિશિષ્ટશક્તિશાલી હોતે હૈ । સંસારમેં યદુત સે
એસે મી યદુત સે મનુષ્ય હોતે હૈ કિ જિન્હે શારીરિક શૃંગાર કરને
કા જીવન મેં અવસર તક હી પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ, મીલ આદિ એસે હી
મનુષ્યોં મેં હૈ, અતઃ इनकी भी यह अवस्था कर्मक्षपण के योग्य मानी
જાની ચાહિયે ? ઇસ પ્રકારકી આર્ષાકાકો દૂર કરનેકે લિયે હી “મૃતાર્ચા”

‘મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેપાં તે મૃતાર્ચા’ અર્થાત્ શારીરિક શુભ્રૂપ
વિભૂષણ સંસ્કાર રહિત હોવાથી મૃતકસદૃશ જેવું શરીર છે. આવા પોતાના
શરીરમાં નિસ્પૃહ વૃત્તિ સળવાવાળા મનુષ્યશિરોમણિ જે આ કર્મો ઉપર
લિપ્ય લાભ કરે છે અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ”ના અર્થ બનાવ્યા છે. જે
પ્રકારે અગ્નિની બનાવ્યા લાલ હોય છે તે પ્રકારે ક્રોધ પણ લાલ છે, માટે
બનાવ્યાની સદૃશતાથી ક્રોધને પણ અર્ચા કહે છે. ક્રોધ-શબ્દ બીજા કપાયોત્ત
ઉપલક્ષણ છે. આમા માન માયા અને લોભનો પણ સમાવેશ થાય છે. જેના
આત્માથી કપાયણથી અગ્નિનો નાશ થયેલ છે અર્થાત્-જે કપાયરહિત છે તે જ
મનુષ્ય આઠ પ્રકારના કર્મોનો લાભ કરવામાં વિશિષ્ટશક્તિશાળી છે. સંસારમાં
જોવા પણ પણ માણસો છે કે જેને શારીરિક શૃંગાર કરવાનો અવસર
જન્મમાં કેઈ વખત પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, મીલ આદિ જોવા મનુષ્યો છે
માટે તેની પણ આ અવસ્થા કર્મક્ષપણમાં માનવી જોઈએ ? આ પ્રકારની
શકને દૂર કરવાને માટે જ ‘મૃતાર્ચા’ શબ્દનો અર્થ “કપાયરહિત”

अत एव ऋजवः=सरलहृदयाः, अमायिन इत्यर्थ । मनुष्याः किं कृत्वा एवं भवन्ती-
ती जिज्ञासायामाह—‘आरम्भजम्’ इत्यादि । इदं सर्वप्राणिप्रत्यक्षं दुःखम्
शब्दका अर्थ “कषायरहित” किया है । यद्यपि असाता-अशुभ कर्म के
तीव्र उदय होने से वे उस प्रकारकी सामग्री से रहित हैं फिर भी वे उस
जातकी कषाय से रहित नहीं हैं, अतः शारीरिक संस्कार से रहित होकर
भी जो कषायोंसे रहित होते हैं वे ही कर्मक्षपण करनेमें शक्ति-सम्पन्न
होते हैं । सच्चे शारीरिक संस्कार से विहीन वे होंगे जो इस शरीर को
अपवित्र एव मल, रुधिर, राध (पीव) की थैली मान कर निस्सार सम-
झेंगे । शारीरिक संस्कार करना यह एक जातकी कषाय है । इस प्रकार
के मनोभाव की जागृति आत्मामें विना श्रुतचारित्र धर्म के ज्ञान हुए
नहीं हो सकती, अतः ‘धर्मविदः’ यह विशेषण इसी बातकी पुष्टि
करता है । धर्मके यथार्थ स्वरूप को जान कर उस पर श्रद्धा रखनेवाला
मनुष्य ही धार्मिक नियमों को अपनी आत्मामें उतारनेकी चेष्टा या
उत्साह से सम्पन्न होता है । धार्मिक ज्ञान भी उसीकी आत्मामें अपना
प्रभाव प्रकट करता है और वही ‘अमायावी’ सरल हृदयवाला होता
है । मायावी-दुरंगी चाल चलने वाले-मनुष्य धर्मका सेवन करते हुए भी
उससे जैसा फल प्राप्त उन्हें होना चाहिये वैसा फलसे सदा वंचित ही
रहते हैं । यही बात सूत्रकारने “ऋजवः” इस पदसे स्पष्ट की है ।

इथी છે બે કે અસાતા-અશુભ કર્મ-નો તીવ્ર ઉદય હોવાથી તે તેવા પ્રકારની
સામગ્રીથી રહિત છે તો પણ તે તેવા પ્રકારના કષાયથી રહિત નથી, માટે શારી-
રિક સંસ્કારથી રહિત થઈને પણ જે કષાયોથી રહિત થાય છે તે જ કર્મક્ષપણ
કરવામા શક્તિસમ્પન્ન થાય છે સાચા શારીરિક સંસ્કારથી દૂર તેજ થશે જે આ
શરીરને અપવિત્ર અને મળ, લોહી, રક્તની થેલી માનીને નિસ્સાર મમજશે.
શારીરિક સંસ્કાર કરવો તે પણ એક જાતનો કષાય છે આ પ્રકારના મનોભાવની
જાગૃતિ આત્મામા શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું જ્ઞાન થયા વગર થતી નથી માટે ‘ધર્મ-
વિદઃ’ આ વિશેષણ આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે ધર્મના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણીને
તેના ઉપર શ્રદ્ધા રાખવાવાળા મનુષ્ય જ ધાર્મિક નિયમોને પોતાના આત્મામા
ઉતારવાની ચેષ્ટા અને ઉત્સાહ રાખે છે ધાર્મિક જ્ઞાન પણ તેના જ આત્મામા
પોતાનો પ્રભાવ પાડે છે, અને તે જ ‘અમાયાવી’ સરળ હૃદયવાળો હોય છે
માયાવી-માયા-કપટથી ચાલવાવાળો-મનુષ્ય ભલે તે ધર્મનું સેવન કરતો હોય
તો પણ જેવું જ્ઞાન તેને મળવું જોઈએ તેવા જ્ઞાનથી તે સદા વંચિત જ રહે છે
આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકારે “ઋજવઃ” આ પદથી કર્યું છે

આરમ્ભમ્=કૃપિવાણિજ્યાદિસકમ્સાવચન્યાપાર આરમ્ભ, તસ્માજ્ઞાતમ્, શ્વિ
જ્ઞાત્વા=‘આરમ્ભે કૃતે સતિ પ્રાણિના દુઃસ્વમુત્પદ્યતે’ શ્વિ વિદિત્વા તતો મિત્રવા
નરાઃ સર્વં કર્મ ભવ્યન્તીત્યર્થઃ । અસ્મિન્ વિષયે શ્વદાનં વિધેયમિતિ સાધયિતુમાદ-
-અવમાદુ સમ્યક્ત્વદર્શિનં હતિ । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તા કેવલિ-
મમૃતય, અયના સમલ્લદર્શિના=રાગદ્વેષામાષેન એકેન્દ્રિયાદિસર્વગ્રીવે મુલ્યમાવના
વમોક્તિઃ એવમ્=ઉક્તરીત્યા આદુ =વદન્તિ । તસ્માદ્વષ શ્વદાનં વિધેયમિતિમાષઃ । ૨।
કૃતઃ સમ્યક્ત્વદર્શિના વદન્તીતિ જિજ્ઞાસાયામાદ-‘તે સચ્ચે’ શ્વ્યાદિ ।

કૃપિ-લેતી, વાણિજ્ય-વ્યાપાર આદિ સાવચ કાર્યોંકા નામ આરંભ છે
इस आरम्भ से ही समस्त जीवों को दुःस्व उत्पन्न होता है और इस दुःस्वका
समस्त ही जीव अपने २ स्वानुभवरूप प्रत्यक्ष से साक्षात् अनुभव करते हैं,
ऐसा समझ कर जो मनुष्य उस सावच व्यापारसे नियुक्त हो जाते हैं वे ही
समस्त कर्मों का क्षय करते हैं । इस प्रकार के इस कथनमें भव्य प्राणियों
को श्रद्धा करना चाहिये । इस प्रकारकी सूचना करते हुए सूत्रकार कहते
हैं कि-इस प्रकार का यह कथन समझित को प्राप्त हुए केवली आदि
महापुरुषोंने, अथवा जो समदर्शी हैं, समस्त जीवोंको राग द्वेष के अभाव
होनेसे अपने मुख्य समझते हैं-उन्होंने किया है । इस विषयमें निश्चय
होकर इस श्रद्धा ही करनी चाहिये ॥ सू० २ ॥

सम्यक्त्वदर्शी केवली आदि ऐसा क्यों कहते हैं ? इस प्रकारकी शि-
ष्यकी जिज्ञासा ज्ञात करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं-‘ते सच्ये’ श्वादि ।

જેતી, વ્યાપાર આદિ સાવચ કાર્યોંકા નામ આરંભ છે આ વ્યવસ્થાથી જ
અવ જીવોને દુઃખ ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ દુઃખને અર્થ જીવ પોતપોતાના
સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષથી સાક્ષાત્ અનુભવ કર છે એવું સમજીને જે મનુષ્ય આવા
સાવચ વ્યાપારથી નિરૂત્ત થઈ જાય છે તે જ અવ કશીને કાય કર છે આવા
પ્રકારના આ કથનમાં ભવ્ય પ્રાણિઓએ શ્રદ્ધા રાખવી એમજે આ પ્રકારની
સૂચના કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે-આવા પ્રકારનું આ કથન સમકિતને પ્રાપ્ત
થયેલા કેવળી આદિ શ્રદ્ધાપુરુષોએ, અથવા સમદર્શી છે સમદ્વેષ રહિત હોવાથી
અવ જીવોને પોતાના મુલ્ય માને છે તેઓએ કયું છે આ વિષયમાં નિશ્ચય
થઈને હવે શ્રદ્ધા જ રાખવી એમજે ૫૨ ૨ ૫

सम्यक्त्वदर्शी केवली आदि ऐसा प्रकाश केम कहे छै ? अरु प्रकाशनी
शिष्यनां एतदज्ञाने शान्त करवा भाए सूत्रकार कहे छै-‘त सच्ये’ श्वादि.

मूलम्—ते सवे पावाइया दुखस्स कुसला परिणमुदाहरन्ति
इय कम्म परिणाय सवसो ॥ सू० ३ ॥

छाया—ते सर्वे प्रावादिकाः दुःखस्य कुशलाः परित्रामुदाहरन्ति इति कर्म
परिज्ञाय सर्वशः ॥ सू० ३ ॥

टीका—यतस्ते सर्वे सर्वविदः, प्रावादिकाः=प्र=प्रकर्षेण आ=धर्ममर्यादापुर-
स्सरं वदितुं शीलं येषां ते प्रावादिनस्त एव प्रावादिकाः—यथावस्थितार्थं प्रतिबो-
धयितुं वाग्मिन इत्यर्थः । दुःखस्य=शारीरमानसदुःखकारणस्य, कारणे कार्योपचा-
रात् अष्टविधकर्मण इति यावत्, अपनोदने कुशलाः=प्रवीणाः सन्तः, सर्वशः=
सर्वप्रकारैः मूलोत्तरप्रकृतिप्रकारैरित्यर्थः, कर्म परिज्ञाय इति=अनया रीत्या परिज्ञां

वे समस्त सर्वज्ञ केवली भगवान् कि जिनका स्वभाव धार्मिक-
मर्यादा के अनुसार ही बोलने-उपदेश देनेका है, अर्थात्—जो वाग्मी-
यथावस्थित पदार्थका प्रतिबोधन करनेमें पटु है और जो शारीरिक और
मानसिक दुःखके कारणभूत अष्टविध कर्म को नष्ट करने में कुशल है,
मूल और उत्तर प्रकृति के भेदसे विविधरूप (८ और १४८) कर्म को
जान कर ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञाके भेदसे दो प्रकार की परिज्ञाका
प्रतिपादन करते हैं, अर्थात्—‘ज्ञ’ परिज्ञा से अष्ट प्रकार के कर्म को जान कर
‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञा से उम समस्त कर्मका परिहार करे, ऐसा कहते हैं ।

परिज्ञा दो प्रकारकी है (१) ज्ञपरिज्ञा, (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा । ज्ञाता
ज्ञपरिज्ञासे कर्मों के स्वरूपादिक को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञासे—ज्ञान-
पूर्वक त्यागसे उनके नाश करने में उद्यमशील होता है । कर्मों की मूल

ते अथा सर्वज्ञ केवली भगवान्, जे ओना स्वभाव धार्मिक मर्यादा अनुसार ज
बोलावानो—उपदेश देवानो—छे, अर्थात् जे वाग्मी यथावस्थित पदार्थनु प्रति-
बोधन करवामा कुशल छे, अने जे शारीरिक अने मानसिक दुःखना कारणभूत
आठ प्रकारना कर्मोना नाश करवामा कुशल छे, भूण अने उत्तर प्रकृतिना लेदथी
विविधरूप (आठ कर्म अने ओकसो अठतालीस प्रकृतिरूप कर्म) कर्मने ज्ञाणीने ज्ञ-
परिज्ञा अने प्रत्याख्यान-परिज्ञाना लेदथी जे प्रकारनी परिज्ञानु प्रतिपादन करे छे.
अर्थात्—‘ज्ञ’ परिज्ञाथी आठप्रकारना कर्मने ज्ञाणीने ‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञाथी ते
समस्त कर्मोना नाश करे, ओम कहे छे

परिज्ञा जे प्रकारनी छे (१) ज्ञ-परिज्ञा, (२) प्रत्याख्यान-परिज्ञा, ज्ञाता
ज्ञ-परिज्ञाथी कर्मोना स्वरूपादिक ज्ञाणीने प्रत्याख्यान-परिज्ञाथी ज्ञानपूर्वक त्यागथी
तेना नाश करवामा उद्यमशील रहे छे कर्मोनी मूल प्रकृतिओ ८ छे, अने उत्तर

પ્રત્યામ્યાનમેવાધ્વ દ્વિવિધામ્, ઉદાહરન્તિ—કથયન્તિ । પ્રપરિશ્ચયા અષ્ટવિધં
કર્મ સર્વથા પરિશ્ચાય, પ્રત્યામ્યાનપરિશ્ચયા તત્ સર્વં પરિહરેદિતિ વદન્તીત્યર્થઃ ॥૩૧॥

યદિ સર્વથા કર્મપરિશ્ચાયુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? इति शिष्यनिश्चा
सायामाह—‘इह आणाकस्वी’ इत्यादि ।

મૂલ્મ—इह आणाकस्वी पठिष्य अणिहे, एगमप्याण संपेहाप
धुणे सरीर ॥ सू० ४ ॥

જાયા—इह आणाकस्वी पठित अस्मिह, एकमात्मानं संपेक्ष्य घुनीयात्
शरीरम् ॥ सू० ४ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ છે ઓર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ છે । સૂત્રમેં ‘દુઃસ્વ’ શબ્દ સે
ઉસકે કારણમૂત કર્મોં કા કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈ ।
કેવલી ભગવાન્ થે હૈં જો સમસ્ત જીવોં કો ધાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર
હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઓર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ધાનિયા
કર્મોં કો નષ્ટ કર ચુકે હૈ, અવશિષ્ટ ચાર અપાતિયા કર્મોં કા નાશ કરને
મેં જો લગેહુપ હૈં, શારીરિક ઓર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહીં
હૈ, ઓર જો યહી પ્રવચન કરતે હૈં કિ જો દુઃસ્વ સે છૂટને કી અભિલાષા
રખતે હૈં ઉનકા કર્તવ્ય હૈ કિ થે પહિલે દુઃસ્વકે કારણમૂત કર્મોં કે
જ્ઞાના થને ઓર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ઉનકા સમૂલ
વિષ્કોદ કરે ॥ સૂ० ૩ ॥

યદિ સર્વથા ભગવાન્ કર્મપરિજ્ઞા કા કથન કરતે હૈં તો ઇસસે ભવ્ય
જીવોં કા ક્યા કર્તવ્ય હૈ ? તેસી શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈં—
‘इह आणाकस्वी’ इत्यादि ।

પ્રકૃતિઓ ૧૪૮ છે સૂત્રમા ‘દુઃસ્વ’ શબ્દથી તેના કારણમૂત કર્મોંનું કારણમા
કાર્ત્તવ્ય ઉપચારમા શ્રદ્ધા કરેલ છે કેવળી ભગવાન તે છેને સર્વ લોકોને ધાર્મિક
મર્યાદા અનુસાર જ હિતનો ઉપદેશ આપે છે અને પોતે આઠ કર્મમાથી ચાર
ધાતિયા કર્મોંના નાશ કરી ચૂકયા છે અવશિષ્ટ રહેલા ચાર અપાતિયા કર્મોંના
નાશ કરવામા જે લાગેલ છે, શારીરિક અને માનસિક આધિ-વ્યાધિ જેઓમા
નથી, અને જેઓનું પ્રવચન આ પ્રકારનું છે કે-જે દુઃખથી છુટવાની અભિલાષા
રાખે છે તેમનું કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલા દુઃખના કારણમૂત કર્મોંને બાંહે અને
પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેનો અમૂળ નાશ કરે ॥ સૂ ૩ ॥

કહિ સર્વથા ભગવાન કર્મ પરિજ્ઞાનું કથન કરે છે તો તેથી ભવ્ય લોકોનું
જું કર્તવ્ય છે ? એવી શિષ્યની છાયામા થવાથી કહે છે- ‘इह आणाकस्वी’ इत्यादि

ટીકા—ઈહ=અસ્મિન્ મનુષ્યલોકે, આજ્ઞાં=સર્વજ્ઞનિદેશં કાક્ષિતું શીલમસ્યેતિ આજ્ઞાકાક્ષી સમ્યક્ત્વસ્ય દૃઢીકરણેન પુનઃ પુનરાર્હતાગમશ્રવણમનનસમારાધનશીલઃ, અત એવ પण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषपरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं—स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं =स्वदेहं धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः । अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु क्षणभङ्गगुરुत्वादिदोषदर्शनेन रागापगमो भवति । तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति । यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तबुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे ।

શરીર મેં જિતના અધિક મમત્વ હોગા ઉતના હી અધિક ઇસ સંસાર કે ચક્રમેં ફસેગા । ‘મમેદ’ ભાવસે શરીરકી સેવા હી આત્મકલ્યાણ સે વિમુક્ત હોનેકી નિશાની હૈ, અતઃ સૂત્રકાર યહાં પર ઇસી વાતકા ઉલ્લેખ કરતે હુએ ઉપદેશ દેતે હૈં કિ—હે ભવ્ય ! તુમ સર્વ પ્રથમ સમક્તિ કો દૃઢ કરો । ઇસકી દૃઢતા હોને પર તુમ્હેં અપને કલ્યાણ કા માર્ગ અપને આપ જ્ઞાત હોને લોગેગા । ડસ સમય તુમ્હારા આત્મસ્વભાવ શબ્દાદિ વિષયોં કી ઓર ન જુક કર પ્રમુપ્રતિપાદિત આગમકે શ્રવણ, મનન ઓર ડસકે સમારાધન કી ઓર હી જુકેગા । ડસસે તુમ સમજ સકોગે કિ હમારા

આ મનુષ્યલોકમા સર્વજ્ઞ ભગવાનની એક માત્ર આજ્ઞાનુ આરાધન કરવાના સ્વભાવવાળા, હેયોપાદેયના વિવેક કરવામા નિપુણ મતિવાળા અને રાગ દ્વેષથી વિરક્ત બુદ્ધિવાળા ભવ્ય જીવ પોતાના આત્માની પર્યાલોચના કરીને શરીરને નિર્મમત્વ ભાવથી રાખે

શરીરમા જેટલો અધિક મમત્વ હશે તેટલો જ અધિક આ સંસારના ચક્રમાં ફસાશે. ‘મમેદ’ ભાવથી—‘આ માં છે’—એવા ભાવથી શરીરની સેવા જ આત્મ-કલ્યાણથી વિમુક્ત થવાની નિશાની છે, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનો ઉલ્લેખ કરીને ઉપદેશ આપે છે કે—હે ભવ્ય ! તમે પહેલા સમક્તિને દૃઢ કરો. સમક્તિની દૃઢતા હોવાથી તમને તમારા કલ્યાણનો માર્ગ આપમેળે જાણવામા આવશે એવે વખતે તમારો આત્મસ્વભાવ શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ન જતાં પ્રમુપ્રતિપાદિત આગમનુ શ્રવણ મનન અને તેના આરાધનની તરફ જ વળશે,

પ્રત્યાભ્યાસમેવાદ્ દિવિષામ્, ઉદાહરન્તિ-કપયન્તિ । પ્રપરિશ્યા અષ્ટવિધે
કર્મ સર્વથા પરિશ્યાય, પ્રત્યાભ્યાસપરિશ્યાય તત્ સર્વં પરિહરશ્રિતિ ધરન્તીત્પર્ય ॥૩॥

યદિ સર્વજ્ઞા કર્મપરિશ્યાયુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? શ્ચિ શિષ્યનિજ્ઞા-
સાયામાહ—‘ હહ આણાકસ્વી ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—હહ આણાકસ્વી પઠિષ્ઠ અણિહે, પગમપ્યાણ સપેહાપ
ધુણે સરીર ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાપા—હહ આણાકાસ્ત્રી પઠિતઃ અસ્તિહ, વકમાત્માન સંપેત્સ્ય ધુનીયાત્
સરીરમ્ ॥ મૂ૦ ૪ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ છે ઓર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ છે । સૂત્રમે ‘ કુસ્મ ’ શબ્દ સે
તમ્કે કારણમૂત કર્મોં કા કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈ ।
કેવલી મગધાન્ થે હૈં જો સમસ્ત જીવોં કો ખાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર
હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઓર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ઘાતિયા
કર્મોં કો નષ્ટ કર જુકે હૈ, અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કરને
મેં જો લગેહુય હૈં, શારીરિક ઓર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહીં
હૈ, ઓર જો યહી પ્રવચન ફરતે હૈં કિ જો કુ સ્વસે છૂટને કી અભિલાષા
રમ્વતે હૈં ડનકા કર્તવ્ય હૈ કિ કે પહેલે કુસ્મકે કારણમૂત કર્મોં કે
જાણા યને ઓર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ડનકા સમૂલ
વિન્શેદ કરે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ મગધાન્ કર્મપરિશ્યા કા કપન કરસે હૈં તો ઇસસે અવ્ય
જીવોં કા કયા કર્તવ્ય હૈ ? એસી શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈ—
‘ હહ આણાકસ્વી ’ इत्यादि ।

પ્રકૃતિજ્ઞા ૧૪૮ છે સૂત્રમા કુસ્મ શબ્દથી તેના કારણમૂત કર્મોંનું કારણમ
કામના ઉપચારમાં મહત્ત્વ ઠરેલ છે કેવળી ભગવાન તે છે કે સર્વ લોકોને ધાર્મિક
મર્યાદા અનુસાર જ હિતને ઉપદેશ આપે છે અને પોતે આઠ કર્મમાંથી ચાર
ઘાતિયા કર્મોંના નાશ કરી ચૂક્યા છે અવશિષ્ટ રહેલા ચાર અઘાતિયા કર્મોંના
નાશ કરવામાં જે લાગેલ છે શારીરિક અને માનસિક અધિ-વ્યાધિ જેઓમાં
નથી, અને જેઓનું પ્રવચન આ પ્રકારનું છે કે-જે કુ:પ્રત્યા હુટવાની અભિલાષા
રાખે છે તેમનું કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલા કુ:પ્રત્યા કારણમૂત કર્મોંને બાંધે અને
પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેના સમૂળો નાશ કરે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન કર્મ પરિશ્યાનું કપન કરે છે તો તેથી અવ્ય લોકોનું
કુ કર્તવ્ય છે ? એવી શિષ્યની લગભગ યથાથી કહે છે- ‘ હહ આણાકસ્વી ’ इत्यादि

टीका—इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, आज्ञां=सर्वज्ञनिदेशं काङ्क्षितं शीलमस्येति आज्ञाकाङ्क्षी सम्यक्त्वस्य दृढीकरणेन पुनः पुनरार्हतागमश्रवणमननसमाराधनशीलः, अत एव पण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं=स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं=स्वदेह धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः। अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु क्षणभङ्गुरत्वादिदोषदर्शनेन रागापगमो भवति। तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति। यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तबुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे।

शरीर में जितना अधिक ममत्व होगा उतना ही अधिक इस संसार के चक्रमें फँसेगा। 'ममेदं' भावसे शरीरकी सेवा ही आत्मकल्याण से विमुख होनेकी निशानी है, अतः सूत्रकार यहां पर इसी बातका उल्लेख करते हुए उपदेश देते हैं कि—हे भव्य ! तुम सर्व प्रथम समकित को दृढ़ करो। इसकी दृढ़ता होने पर तुम्हें अपने कल्याण का मार्ग अपने आप ज्ञात होने लगेगा। उस समय तुम्हारा आत्मस्वभाव शब्दादि विषयों की ओर न झुक कर प्रसुप्रतिपादित आगमके श्रवण, मनन और उसके समाराधन की ओर ही झुकेगा। उससे तुम समझ सकोगे कि हमारा

आ मनुष्यलोकमा सर्वज्ञ भगवान्नी ओक मात्र आज्ञानु आराधन करवाना स्वभाववाणा, हेयोपादेयना विवेक करवाना निपुण मतिवाणा अने राग द्वेषधी विरक्त बुद्धिवाणा भव्य एव योताना आत्मानी पर्यालोचना करीने शरीरने निर्ममत्व लावधी राखे

शरीरमा जेटवो अधिक ममत्व हरे तेटवो न अधिक आ ससारना यकमां इसारे 'ममेदं' लावधी—'आ माईं छे'—ओवा लावधी शरीरनी सेवा न आत्म-कल्याणुधी विमुख थवानी निशानी छे, भाटे सूत्रकार आ ठेकाणु आ वातने उल्लेख करीने उपदेश आपे छे के—हे भव्य ! तमो पड़ेवा समकितने दृढ़ करे समकितनी दृढ़ता होवाधी तमने तमारा कल्याणुने मार्ग आपमेणे नालुवामा आवशे. ओवे वणते तमारो आत्मस्वभाव शब्दादि विषयानी तरङ्ग न जता प्रसुप्रतिपादित आगमनु श्रवणु मनन अने तेना आराधननी तरङ्ग न वणशे,

ઉપાદેય ક્યા છે ઔર હેય ક્યા છે ? હસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જય આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તથ ષાણ પદાર્થોં મેં જો રાગ ઔર દ્વેષકી ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી છે ઘટ રુક જાયગી, યહાં તક કિ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નિકટ સમ્બંધી છે ઝમકે પ્રતિ મી 'મમેવ' ભાવકા સર્વથા હાસ હો જાયેગા ઔર 'તપ-સંયમ' હી ઉપાદેય વસ્તુ છે' હમકા માન અચ્છી તરહ સે હોને લગેગા ।

તાત્પર્ય હમકા યહી છે કિ કર્મ કં સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારિક પદાર્થોં કી ઔર સે ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે । હમસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમક્તિ કી ઉત્પત્તિ ઔર પુષ્ટિ હોગી । હમકી પુષ્ટિ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઔર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । હસસે હેપોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઔર રાગદ્વેષ કી પરિણતિ સે રહિત કરેગા; તથ જ્ઞાન હોગા કિ યહ આત્મા સ્વજન-સ્ત્રી-પુત્ર-મિત્રાદિકોં સે ઔર શરીર સે સર્વથા મિલ્લ-જુદા છે, ઝનકે સાથ હસકા કિસીમી પ્રકાર કા સમ્બંધ નહીં છે । ઝનકે સુધાર-યિગાઢ મેં હમકા યત્કિષિત્ મી સુધાર-યિગાઢ નહીં છે । હસ પ્રકાર કી ધારણા પરિપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જીસે કમ્બુક (કાંચલી) કો સર્વ નિર્મલસ્વભાવસે ઘોઢ વેતા છે ઝસી પ્રકાર હસ શરીર મેં 'મમત્વ' ભાવ

ઝને તેથી તેમો સમજી શકશે કે આમાં ઉપાદેય શું છે અને દેવ શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક આપે આત્મામાં સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમાં જે રાગ દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે તે રોકાઈ જશે, ત્યાં સુધી કે શરીર આ માત્ર અત્યંત નિકટ સંબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેવ' ભાવના- 'આ માત્ર છે' એવા ભાવને સ્વભાનાશ થઈ જશે અને 'તપ સંયમ' જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું જ્ઞાન આવી રીતે થઈ જશે.

આનો અભિપ્રાય એ છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સાંસારિક પદાર્થો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે. આમાં મોહની અવધાન થતા થતા સમક્તિની ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ થશે. સમક્તિની પુષ્ટિ થતા જ આદત પ્રવચનનું આરાધન કરવાની તરફ ધ્યાન દોરશે, અને તેથી દેવાપાદેયના વિવેક જાગૃત થઈ આ-માને પરપદાર્થોની તરફ રાગદ્વેષપરિણતિરહિત કરશે, ત્યારે જ્ઞાન થશે કે આ આ મા સ્વજન સ્ત્રી પુત્ર મિત્રાદિકોથી અને શરીરથી સ્વભા જુદો છે, તેની સાથે આત્માના કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી. તેમના સુધરવા બગવામાં તેનો જોડો આ માને જરા પણ સુધારા-બગાવો નથી આ પ્રકારની ધારણા પછી યજ્ઞાધી સાથે જેમ કાચગીને મમતા જમર છેડી દે છે તે રીતે જ તે જ્ઞાની

“ काय संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमा सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित् सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

का परित्याग करता है । वह जानता है कि इन स्वजन धन और शरी-
रादिकों के साथ जो इस ज्ञाता द्रष्टा आत्मा का सम्बन्ध हुआ है वह
केवल संयोगमात्र है । संयोगसम्बन्धवालों का वियोग अवश्यंभावी
है । ज्ञान और आत्मा का जिस प्रकार तादात्म्यसम्बन्ध है उस प्रकार
का सम्बन्ध इसके साथ इनका नहीं है, अतः इनका यह संयोग क्षणभं-
गुर है, और आत्माका स्वभाव शाश्वत है, फिर क्षणिक पदार्थोंके साथ
राग करनेसे लाभ ही क्या है ? । इस प्रकारके विवेकपूर्ण सच्चिदार्थों से
जब उनके प्रति उसकी दृष्टि रागरहित होती है और आत्मस्वभावकी
ओर विशेष उन्मुख होती है तब वह विचारता है कि-मैं एकाकी हूँ,
संसारमें मेरा कोई नहीं है और मैं भी किसीका नहीं हूँ । कहा भी है-

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

आत्मा आ शरीरना भभत्वलावनो त्याग करे छे ते ज्ञानी नष्टे छे के-आ
स्वजन धन अने शरीरादिकोनी साथे के आ जाता द्रष्टा आत्मानो सयध
थयेल छे ते केवल संयोगमात्र छे संयोग-सणधवाणाओनो वियोग अवश्य-
भावी छे ज्ञान अने आत्मानो के प्रकारे तादात्म्य सयध छे ते प्रकारनो सयध
तेनी साथे तेनो नथी, भाटे आ तेनो संयोग क्षणभंगुर छे, अने आत्मानो
स्वभाव शाश्वत छे, पछी क्षणिक पदार्थोनी साथे राग करवाथी लाल न शु छे ?,
आवा प्रकारना विवेकपूर्ण सच्चिद्विचारोथी न्यारे तेना प्रति तेनी दृष्टि राग-रहित
थाय छे, अने आत्मस्वभावनी तरफ विशेष उन्मुख थाय छे त्यारे आ रीते
विचार छे के-हु ओकठो न छु, स संसारमा भाइ कोछ नथी, अने हु पण कोछनो
नथी कहु पण छे—

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

ઉપાદેય કયા છે ઓર હેય કયા છે ? હસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિક જપ આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તથા વાણ્ય પદાર્થોં મેં જો રાગ ઓર દેષની ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી હૈં યહ રુક જાયગી, યહા તક કિ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નિકટ સમ્બંધી હૈં વસકે પ્રતિ મી 'મમેદ' ભાવકા સર્વથા હામ હો જાયેગા ઓર 'તપ-સંયમ' હી ઉપાદેય વસ્તુ હૈં' - હસકા માન અઢી તરફ સે હોને લગેગા ।

તાત્પર્ય હસકા યહી હૈં કિ કર્મ કે સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારિક પદાર્થોં કી ઓર સે ઉપેક્ષામાય ધારણ કરે । હસસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમક્ષિત કી ઉત્પત્તિ ઓર પુષ્ટિ હોગી । હસકી પુષ્ટિ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઓર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । હસસે હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઓર રાગદેષ કી પરિણતિ સે રહિત કરેગા; તથા જાત હોગા કિ યહ આત્મા - સ્વજન-છત્રી-પુત્ર-મિત્રાદિકોં સે ઓર શરીર સે સર્વથા મિલ-જુદા હૈં, વનકે માપ હસકા કિસીમી પ્રકાર કા સમ્યગ્ધ નહીં હૈં । વનકે સુખાર-પિગાફ મેં હસકા યત્કિંચિત્ મી સુખાર-પિગાફ નહીં હૈં । હસ પ્રકાર કી ધારણા પરિપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જેસે કચ્છુક (કાંચલી) કો સર્પ નિર્મમસ્વભાવસે છોડ દેતા હૈં વસી પ્રકાર હસ શરીર મેં 'મમત્વ' માય

જને વંધી તમેા અમલ શકશે કે અમારૂં ઉપાદેય શું છે અને હેમ શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જ્યારે આત્મામા સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમા જે રાગ દેષની ભાવના જાગૃત થાય છે તે શોકાઈ જશે તથા મુખી કે શરીર આ માત્ર અત્યંત નિકટ અબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેદ' ભાવના- 'આ મારૂં છે' એવા ભાવનો સર્વથા નાશ થઈ જશે અને 'તપ સંયમ' જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું જ્ઞાન આવી રીતે થઈ જશે.

આને અભિપ્રાય છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સામાયિક પદાર્થો પ્રતિ ઉપેક્ષાજન્ય ધારણ કરે. આથી મોક્ષની અપેક્ષા થતાં યત્ન અમક્ષિતની ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ થશે. સમક્ષિતની પુષ્ટિ થતાં જ આકૃત પ્રવચનનું આશ્રધન કરવાની તરફ ધ્યાન દોરાશે, અને તેથી હેયોપાદેયના વિવેક જાગૃત થઈ આ માને પરપદાર્થોની તરફ સમદેષપરિણતિસ્થિત કરશે, ત્યારે જ્ઞાન થશે કે આ આ-મા સ્વજન આ પુત્ર મિત્રાદિકોમા અને શરીરમા સર્વથા જુદો છે, તેની સાથે આત્માના કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી. તેમના સુખશ્યા જન્યતામાં તેના એવંતે આ માને જરા પણ સુખાર-અગારો નથી. આ પ્રકારની ધારણા પાછી દવાથી સાપ જેમ કાચગીને મમતા જમર છોડી કે છે તે રીતે જ તે શાંતી

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमा सापगमा, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित् सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

का परित्याग करता है । वह जानता है कि इन स्वजन धन और शरी-
रादिकों के साथ जो इस ज्ञाता द्रष्टा आत्मा का सम्बन्ध हुआ है वह
केवल संयोगमात्र है । संयोगसम्बन्धवालों का वियोग अवश्यंभावी
है । ज्ञान और आत्मा का जिस प्रकार तादात्म्यसम्बन्ध है उस प्रकार
का सम्बन्ध इसके साथ इनका नहीं है, अतः इनका यह संयोग क्षणभं-
गुर है, और आत्माका स्वभाव शाश्वत है, फिर क्षणिक पदार्थों के साथ
राग करनेसे लाभ ही क्या है ? । इस प्रकारके विवेकपूर्ण सद्भिचारों से
जब उनके प्रति उसकी दृष्टि रागरहित होती है और आत्मस्वभावकी
ओर विशेष उन्मुख होती है तब वह विचारता है कि-मैं एकाकी हूँ,
संसारमें मेरा कोई नहीं है और मैं भी किसीका नहीं हूँ । कहा भी है-

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

आत्मा या शरीरना भभत्वभावना त्याग करे छे ते ज्ञानी जाणु छे के-आ
स्वजन धन अने शरीरादिशेनी साथे जे आ ज्ञाता द्रष्टा आत्मानो स भ ध
थयेल छे ते केवल संयोगमात्र छे संयोग-स भ धवाणाओना वियोग अवश्य-
भावी छे ज्ञान अने आत्मानो जे प्रकारे तादात्म्य स भ ध छे ते प्रकारेना स भ ध
तेनी साथे तेना नथी, भाटे आ तेना संयोग क्षणभंगुर छे, अने आत्मानो
स्वभाव शाश्वत छे, पछी क्षणिक पदार्थोंनी साथे राग करवाथी लाल जे शु छे ? ,
आवा प्रकारेना विवेकपूर्ण सद्भिचारोंथी न्यारे तेना प्रति तेनी दृष्टि राग-रहित
थाय छे, अने आत्मस्वभावनी तरफ विशेष उन्मुख थाय छे त्यारे आ रीते
विचार छे के-हुं झेकदो जे छु, संसारमा भाइ कोछि नथी, अने हुं पाणु कोछिनो
नथी कहुं पाणु छे—

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥

अपर च—“ एकः प्रकुरुते कर्म, मुनक्त्येकञ्च तत्फलम् ।

जायते क्षिपत वैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

अन्यस्य —“ सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भाषीति यो मम ” ॥ ५ ॥

किञ्च —“ न खलु विघटिता पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं भवन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वदयाः

तदतस्माप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

तस्मात् स्वजनपनञ्जरीरादिषु ममत्वं परिवर्जयेदिति ॥ सू० ४ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा “ एकः प्रकुरुते कर्म, मुनक्त्येकञ्च तत्फलम् ।

जायते क्षिपत वैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भाषीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिता पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं भवन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वदयाः,

तदतस्माप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा—“ एकः प्रकुरुते कर्म, मुनक्त्येकञ्च तत्फलम् ।

जायते क्षिपते वैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भाषीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं भवन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वदयाः,

तदतस्माप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

યહ શરીર જો મુક્તિ પ્રાપ્ત હુઆ હૈં ઉસકા પતન અવશ્યંભાવી હૈં । સંપત્તિ અનેક વિપત્તિયોં કી જનની હૈં । ઇષ્ટમિત્રાદિકોં કા સમાગમ ધ્રુવ નહીં હૈં । સર્વ પદાર્થ ઉત્પત્તિ ઓર વિનાશ સ્વભાવવાલે હૈં ॥ ૧ ॥ યહાં પર કિસી કા કિસી કે સાથ નિવાસ સ્થિર નહીં હૈં । દૂસરોં કી તો વાત હી કયા કરની ? અરે ! હસ શરીર કે સાથ ભી તો આત્માકા સમ્બન્ધ સ્થિર નહીં હૈં ॥ ૨ ॥ હસ અનન્ત સંસારમેં જો મેરે હજારોં માતા-પિતા હો ગયેવે દૂસરે હી થે, અભી જો હૈં વે દૂસરે હી હૈં; આગે જો હોંગે વે ભી દૂસરે હી હોંગે ॥ ૩ ॥ ફિર ભી કહા હૈં—

યહાં પર જીવ અકેલા હી શુભાશુભ કર્મોંકા કર્તા હૈં ઓર અકેલા હી શુભાશુભ ફલોંકા ભોક્તા હૈં । યહ અકેલા હી મરતા હૈં ઓર અકેલા હી ભવાન્તરમેં જાતા હૈં ॥ ૪ ॥

મૈં સદા અકેલા હૂં, ન મેરા કોઈ હૈં ઓર ન મૈં કિસીકા હૂં । મૈં જિનકા હૂં એસે અપને પિતા-પિતામહાદિકોં કો આજ નહીં દેખ રહા હૂં, ક્યોં કિ વે કાલકવલિત હો ગયે । ઓર એસા ભી કોઈ નહીં હોગા જિસકા મૈં હોઝૂં । અર્થાત્-મેરે કાલકવલિત હો જાને પર મૈં ભી અપને પુત્રાદિકોં કા નહીં રહૂંગા ॥ ૫ ॥ જો હસ સંસારસે પરલોકવાસી હો ગયે હૈં વે અવ મિલનેકે

આ શરીર જે મને પ્રાપ્ત થયેલ છે, તેનો નાશ જરૂર છે સંપત્તિ અનેક વિપત્તિઓની માતા છે ઇષ્ટ મિત્રોનો સમાગમ પણ ધ્રુવ નથી જે ઉત્પત્તિશીલ પદાર્થો છે તે બધા ક્ષણભંગુર છે (૧) અહીંઆ કોઈનો કોઈની સાથે નિવાસ સ્થિર નથી બીજાની તો વાત જ શી કરવી ? અરે ! આ શરીરની સાથે આત્માનો સંબંધ પણ સ્થિર નથી (૨) આ અનન્ત સંસારમા જે મારા હજારો માતા પિતા અને સેંકડો પુત્રો અને સ્ત્રીઓ થઈ ગયા તે બીજા જ હતા, અને જે અત્યારે છે તે પણ બીજા જ છે, અને જે આગળ થશે તે પણ બીજા જ થશે. ॥૩॥ વળી પણ કહ્યું છે—

અહીં છવ એકલો જ શુભાશુભ કર્મોંનો કર્તા છે, અને એકલો જ શુભાશુભ ફળોંનો ભોક્તા છે. તે એકલો જ મરે છે અને એકલો જ ભવાન્તરમા જાય છે (૪)

હમેશા હું એકલો છું, મારો કોઈ નથી, તેમ જ હું પણ કોઈનો નથી, જેનો હું છું એવા પોતાના આપ દાદાઓને આજે હું જોતો નથી, કેમ કે-તે બધા કાળકવળિત થઈ ગયા, અને એવો પણ કોઈ નહિ થશે જેનો હું થાઉં, અર્થાત્-મારું શરીર છુટ્યા પછી હું પણ પોતાના પુત્રાદિકોંનો રહીશ નહિ (૫) જે આ સંસારથી પરલોકવાસી થયા છે તે હવે મળવાના નથી, જે હાલ

ર્ષિષ—કસેહિ અપ્પાણં ? इत्यादि ।

મૂલમ—કસેહિ અપ્પાણ જરેહિ અપ્પાણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—કુર્ષ કુરુ આત્માન જારમ આત્માનમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટોકા—આત્માને—શરીરમ્, હૃદ આત્મશબ્દઃ શરીરનાથી છૂટતે; કુર્ષ કુરુ—

તપશ્વરણાદિના શરીરશોષણે મત્તપો મવેદિત્યર્થઃ । તથા—આત્માને—શરીર જારમ—
જીર્ણ કુરુ, તપશ્વરણેન તથા કુરુ યથા જરાગીર્ણમિષ મવેદિત્યર્થઃ । શુદ્ધપાવિશુદ્ધપારિ
હારમ્ શરીરસ્ય નિઃસારસામાપાત્ય, સ્વદેહ નિર્બલ્લ ક્ષ્મં ચ કુરુષ્વેતિ માત્રઃ ॥મૂ૦ ૫॥

નહીં; જો અમી સાધર્મે રહ રહ હું થ મી સદા સાધ રહનેકે નહીં । જિસ
પ્રકાર નદિયોં કે તટ પર ચહે છુટ વૃક્ષોંકો उनका जल उम्पाड़ कर फेंक
देता है उसी प्रकार मेरे ये स्वजननादिक मुझे हर तरह से आत्मस्वरूप से
उखाड़ देनेकी कोशिश में लगे हुए हैं ॥ ६ ॥

इमलिये मनुष्यको चाहिये कि इन संयोगी पदार्थों से ममत्परहित
होकर आत्मकत्प्राणके मार्गका पथिक बने ॥ सू० ४ ॥

મગવાનુ અપની દિન્યવેદનામં અન્ય જીવોંકો સમજાતે છુપ કહતે હૈં—
'કસેહિ અપ્પાણં' इत्यादि ।

हे अन्य ! तू इस शरीरका तपस्या आदि शुभ साधनों के द्वारा
शोषण कर, तथा तपस्या भी ऐसी कर कि जिससे यह शरीर जरा-
घृद्धावस्था से जीर्ण हुए के समान हो जावे ।

શરીરકે પ્રતિ મમતા રમ્બ કર उसकी सेवाशुश्रूषा और विभूषा
आदि न कर; किन्तु तपश्चर्या के द्वारा इसे निर्यल और स्वतः बना ॥मू० ५॥

આથે રહે છે તે પણ હમિશાં આથે રહેનાર નથી. જેવી રીતે નરીના કિનાસ ઉપસ્યા
વૃક્ષાને તેનું પાણી ઉપાડીને ફેંકા કે છે તેવાં જ રીતે મારા આ સ્વજનનાદિક અને કેઈ
પ્રકારે આત્મસ્વરૂપથી ઉપાડી ફેંકાની કોશિશમાં લાગેલા છે. (૬)

મારે મનુષ્યોને સમજવું જોઈએ કે—આ સમયગી પદાર્થોથી મમત્વ—વહિત
શક્ટિને આત્મકક્ષ્યાણના માર્ગમાં આમગ વપ. ॥ સૂ. ૪ ॥

મગવાન પોતાની દિન્યવેદનામાં અન્ય છુપાને સમજાવના કહે છે—
'કસેહિ અપ્પાણં' इत्यादि.

हे अन्य ! तू आ शरीरनु तप आदि शुभसाधनद्वारा शोषण कर અને
તપ પણ જેવી રીતે કર કે જેથી નાઈ આ શરીર જરા-ઘટાવસ્થાથી છુટા નેયું
થઈ નાથ. શરીર પ્રતિ મગવા શક્તિને તેની સેવા શુશ્રૂષા અને વિભૂષા આદિ ન
કર કિન્તુ તપશ્ચર્યાદ્વારા તેને નિર્બળ અને ફક્ત બનાવ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

કિમર્થમ્ इत्येतदिति जिज्ञासायामाह--‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જહા જુન્નાઈં કઢાઈં હવ્વાહો પમત્થઈ, એવં અત્તસ-
માહિણ અણિહે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—યથા જીર્ણાનિ કાષ્ઠાનિ હવ્યવાદ્ પ્રમથ્નાતિ, એવમ્ આત્મસમાહિતઃ
અસ્નિહઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યથા હવ્યવાદ્=અગ્નિઃ, જીર્ણાનિ=અસારાણિ શુષ્કાણિ, કાષ્ઠાનિ પ્રમ-
થ્નાતિ=ત્વરિતં મસ્મસાત્ કરોતિ, એવમ્=અનેન પ્રકારેણ અસ્નિહઃ=શબ્દાદિવિષય-
યેષુ રાગરહિતઃ સન્, શરીરાદૌ નિર્મમો ભૂત્વા, इति ફલિતાર્થઃ; આત્મસમાહિતઃ=
આત્મનિ=આત્મનઃ શુભપરિણામે સમ્યગ્દર્શનાદૌ સમાહિતઃ=સાવધાનઃ આત્મનિષ્ઠ
इत्यर्थः, અતએવ-અસ્નિહઃ શબ્દાદિવિષયેષુ રાગરહિતઃ સન્ જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધ-
કર્મકાષ્ઠાનિ પ્રમથ્નાતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इस प्रकार शरीरको निर्बल और रूक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों
है ? इसको कहते हैं—‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि शीघ्र भस्म कर देती है उसी
प्रकार शब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है—नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक ममत्वभाव रहता है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व भावकी जागृति अवश्य
आवश्यक है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों
से कर्मों का नाश अवश्यभावी है ॥ सू० ६ ॥

આ પ્રકારે શરીરને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવવાની આવશ્યકતા શા માટે ?
તો કહે છે—‘જહા જુન્નાઈં’ ઇત્યાદિ

જેમ સુકા લાકડાને અગ્નિ જલદી બાળી નાખે છે તેમ શબ્દાદિ વિષયોમા
મમતા વગર થઈને ફક્ત આત્માના શુભપરિણામરૂપ સમકિત આદિમા સાવ-
ધાન-આત્મનિષ્ઠ થયેલો મનુષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપ કાષ્ઠોને
બાળી નાખે છે—નાશ કરે છે

શરીરમા જ્યાં સુધી મમતાભાવ રહે છે ત્યાં સુધી બરોબર રીતે તપશ્ચર્યા-
દિક સાધનાતુ અનુષ્ઠાન બનતુ નથી, માટે બરોબર રીતે તપશ્ચર્યાદિક અનુષ્ઠાનોને
કરવા શરીરમા નિર્મમત્વ ભાવની જાગૃતિની ખામ જરૂર છે આમ થવાથી સરળી
રીતે અનુષ્ઠિત તપશ્ચર્યાદિક સાધનોદ્વારા કર્મોનો અવશ્ય નાશ થાય છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

किं च—कसेहि अप्पाणं ' इत्यादि ।

मूढम्—कसेहि अप्पाण जरेहि अप्पाण ॥ सू० ५ ॥

छाया—कृष्टं कुरु आत्मानं जारय आत्मानम् ॥ सू० ५ ॥

टीका—आत्मानं—शरीरम्, इह आत्मशब्दं शरीरवाची एवमते; कुरु कुरु तपस्वरणादिना शरीररक्षापणे महतो भवेदित्यर्थः । तथा—आत्मानं—शरीरं धारयन् जीर्णं कुरु, तपश्चरणेन तथा कुरु यथा जराजीर्णमिव भवेदित्यर्थः । शुभ्रपाविभूपापरि शरणं शरीरस्य निःसारतामापादय, स्वदेहं निर्वर्त्मं रूपं च कुरुष्वति भावः ॥ सू० ५ ॥
नहीं, जो अभी माथमें रह रहे हैं वे भी सदा साथ रहनेके नहीं । जिस प्रकार नदियों के तट पर खड़े हुए वृक्षोंको उनका जल उखाड़ कर फेंक देता है उसी प्रकार मेरे ये स्वजनादिक मुझे हर तरह से आत्मस्वरूप से उखाड़ देनेकी कोशिश में लगे हुए हैं ॥ ६ ॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इन संयोगी पदार्थों से ममत्वरहित होकर आत्मकल्याणके मार्गका पथिक बन ॥ सू० ६ ॥

भगवान् अपनी दिव्यदेहानामें मम्य जीवोंको समझाते हुए कहते हैं—
' कसेहि अप्पाणं ' इत्यादि ।

हे मम्य ! तू इस शरीरका तपस्या आदि शुभ साधनोंके द्वारा शोषण कर, तथा तपस्या भी ऐसी कर कि जिससे यह शरीर जरा-हृदाबस्या से जीर्ण हुए के समान हो जावे ।

शरीरके प्रति ममता रख कर उसकी सेवा शूद्रा और विभूपा आदि न कर; किन्तु तपश्चर्या के द्वारा इसे निर्मल और स्वतः बना ॥ सू० ६ ॥

साधे स्वे छे ते पञ्च ज्येष्ठा साधे स्वेनाए नभी, जेवी शीते नहीना किनाश उपरना वृक्षाने तेनुं पाव्ही उपादीने देही दे छे तेवी न शीते भाग आ स्ववन्दारिक भने केछ भ्रारे आत्म स्वरूपवी उपादी देवाना केरिशिआ बायेवा छे (६)

भा० मनुष्येने समस्तं जेष्ठं जे—आ संयोगी पदार्थोंभी ममत्त-रहित धर्मने आत्मकल्याणना मार्गमां आगम नये, ॥ सू० ६ ॥

भगवान् श्रोतृणां दिव्यदेहानामा मम्य लुप्ताने समस्तवत्तां छे छे—
' कसेहि अप्पाणं ' इत्यादि ।

हे मम्य ! तू आ शरीरनु तप आदि शुभसाधनद्वारा शोषण कर जाने तथा पञ्च ज्येष्ठी शीते कर के ज्येष्ठी मांस आ शरीर का—वृद्धावस्थाभी लुप्त जेठु धर्म व्यय शरीर प्रति ममत्ता राखीने तेनी सेवा शूद्रा आने विभूपा आदि न कर, किन्तु तपश्चर्याद्वारा तेने निर्मल आने देह बनाव ॥ सू० ६ ॥

किमर्थम् इत्येतदिति जिज्ञासायामाह--'जहा जुन्नाइ' इत्यादि ।

मूलम्-जहा जुन्नाइं कट्टाईं हववाहो पमत्थइ, एवं अत्तस-
माहिण अणिहे ॥ सू० ६ ॥

छाया--यथा जीर्णानि काष्ठानि द्रव्यवाद् प्रमथ्नाति, एवम् आत्मसमाहितः
अस्निहः ॥ सू० ६ ॥

टीका--यथा द्रव्यवाद्=अग्निः, जीर्णानि=असाराणि शुष्काणि, काष्ठानि प्रम-
थ्नाति=त्वरितं भस्मसात् करोति, एवम्=अनेन प्रकारेण अस्निहः=गब्दादिविष-
येषु रागरहितः सन्, शरीरादौ निर्ममो भूत्वा, इति फलितार्थः; आत्मसमाहितः=
आत्मनि=आत्मनः शुभपरिणामे सम्यग्दर्शनादौ समाहितः=सावधानः आत्मनिष्ठ
इत्यर्थः, अतएव-अस्निहः गब्दादिविषयेषु रागरहितः सन् ज्ञानावरणीयाद्यष्टविध-
कर्मकाष्ठानि प्रमथ्नातीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

इस प्रकार शरीरको निर्बल और रुक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों
है ? इसको कहते हैं--' जहा जुन्नाइं ' इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि उगीध भस्म कर देती है उसी
प्रकार गब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है-नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक समत्वभाव रहना है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व भावकी जागृति अवश्य
आवश्यक है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों
से कर्मों का नाश अवश्यभावी है ॥ सू० ६ ॥

आ प्रश्नं शरीरं निर्ममं अने इक्ष जनावानी आवश्यकता शा भाटे
तो छे छे--' जहा जुन्नाइं ' इत्यादि

तेम मुझ दादने अग्नि जल्दी जाणी नाछे छे तेम शब्दादि विषयोम
भमता वज्र छे तेम आन्माना शुभपरिणामरूप समकित आदिमा साव
धान-आत्मनिष्ठ अथेदा मनुष्य ज्ञानावरणीयादिक आठ प्रकारना कर्मरूप काष्ठ
जाणी नाछे छे-नाछे छे छे.

शरीरमें न्यां मुझी भयनाभाव छे छे त्या मुझी परापर रीते
दिद आधेनेनु अनुष्ठान अननु नहीं, भाटे परापर रीते तपश्चर्यादिक
उरवा शरीरमें निर्ममत्व जावनी जागृतिनी प्राप्त ७३२ छे. आभ

उत्तरीत्या रागनिवृत्तिं प्रदर्श्य द्वेपनिवृत्तिमाह—‘विर्गिष कोहं’ इत्यादि।

मूळम्—विर्गिष कोह अविकम्पमाणे इमं निरुद्धाउय संपेहाय ॥७॥

छाया—वविह्व आधम् अविकम्पमान इमं निरुद्धायुष्कं संपेक्ष्य ॥ म० ७ ॥

टीका—इमं=मनुष्यमात्रं, निरुद्धायुष्कम्=अवर्षितायुष्कं संपेक्ष्य=पर्यालोच्य,
अविकम्पमानः क्रोधजनितकम्परहितः प्रथमगुणममन्वितः मस्तिष्यर्थः, क्रोधस्-
प्रज्वलनरूपातिक्रूराध्यवसायः क्रोधस्त वेविह्व=परित्यज, क्रोधमितिपदं सकलक
पायोपलक्षणम् ॥ म० ७ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे रागकी निवृत्ति प्रकट कर अब द्वेपकी निवृत्ति कहते हैं। ‘विर्गिष कोहं’ इत्यादि।

इस मनुष्यलोकको अवर्षित-नियमित आयुवाला जान क्रोधसे उत्पन्न हुए विकार-परिणामसे रहित होकर अर्थात् प्रथमगुणसम्पन्न होकर आत्माको जलानेवाले क्रूर अध्यवसायस्वरूप इस क्रोधका, उपलक्षणसे-मान, माया और लोभका भी त्याग कर।

तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार रागभाव त्याज्य है उसी प्रकार द्वेपभाव भी त्याज्य है, अतः जब किसी भी सचेतन, अचेतन वस्तु पर द्वेप होता है तब आत्मामें क्रोध पैदा होता है। क्रोधसे शरीरमें कंप की जाग्रति होती है; शारीरिक कंप से आत्माके प्रदेशोंमें भी एक प्रकार की परिस्पंदरूप क्रिया होगी है जिससे उस हालतमें अधिक श्वास-उच्छ्वास चलने लगते हैं, अधिक श्वासोच्छ्वासों के चलने से आयुर्म्म के अविभागों प्रतिच्छेदों-विभागों-का प्रास होता है, और इस तरहसे अकालमें ही आयु

पूर्वोक्त रीतिसे रागकी निवृत्ति प्रकट कर, अब द्वेपकी निवृत्ति कहे-
‘विर्गिष कोहं’ इत्यादि।

आ मनुष्यलोकको अवर्षित-नियमित आयुवाला जानने क्रोधभी उत्पन्न होनेसे विकारपरिणामभी रहित यह अर्थात् प्रथमगुणसंपन्न यह आत्माने जलानेवाला क्रूर अध्यवसायस्वरूप आ क्रोधने, उपलक्षणसे मान माया और लोभको त्याग कर तात्पर्य ये हैं कि-ने प्रकार रागभाव त्याज्य है ते प्रकार द्वेपभाव पण त्याज्य है मागे लक्ष्य है कि पण सचित-अचित वस्तु पर द्वेप पैदा होना है तब आत्मामें क्रोध पैदा होना है। क्रोधसे शरीर में कंप आने से शरीरना मनुष्यकी आत्मामें प्रदेशोंमें पण एक प्रकारकी परिस्पंदरूप क्रिया होना है तभी तेवी जाग्रतों अधिक श्वास-उच्छ्वास आसना होने से अधिक श्वासोच्छ्वासों वातवाभी आयुर्म्मना अविभाग प्रतिच्छेद-विभागों-का प्रास

કિંચ--‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃખં ચ જાણ અદુ આગમેસ્સં, પુઢો ફાસાઈં ચ ફાસે, લોયં ચ પાસ વિફંદમાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—દુઃખં ચ જાનીહિ અથ આગમિ, પૃથક્ સ્પર્શાન્ ચ સ્પૃશેત્, લોકં ચ પશ્ય વિસ્પન્દમાનમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ક્રોધાદિવશાત્ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિકરણે સમુત્પદ્યમાનં કર્મ કી સ્થિતિ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અનઃ ભગવાન્ કા કથન હૈ કિ કષાય-રૂપ ક્રોધ કરતે સમય હસ વાતકા પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવકો વિચાર કરના ચાહિયે કિ જિસ પ્રકાર ઘડી કી ચાવી ઉસકે નીચે ચલતે હુણ ગોલે કો અધિક-ચારંચાર ઘુમાનેસે અસમયમેં ચ્વાલી હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર કષાયાદિ કરને સે આયુકર્મ કી સ્થિતિ ખી અસમયમેં ચિર જાતી હૈ । આયુકર્મ કી નિર્જરા નો હોતી હૈ પરન્તુ વદ્ધ આયુ મેં ઉત્કર્ષણ (અધિકતા) નહીં હોતા । જિસ પ્રકાર જીવ સાત કર્મો કો પ્રત્યેક સમય બાંધતા ઓર નિર્જોર્ણ કરતા હૈ ઉસ પ્રકાર આયુકર્મ કો નહીં બાંધતા । જિતની કુછ આયુકર્મ કી સ્થિતિ બંધ ચુકી વહ ઉતની હી રહેગી, ઉસમેં ફિર વૃદ્ધિ નહીં હો સકતી । હાં ! વાહ્ય નિમિત્તો કો લેકર ઉસમેં અપ-કર્ષણ (હાસ) જરૂર હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ફિર ભગવાન કહતે હૈ—‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

યહ નિશ્ચિત હૈ કિ-ક્રોધાદિક કષાયકે આધીન હોકર જવ જીવ

થાય છે, અને આવી રીતે અક્રણે આયુકર્મની સ્થિતિ પૂર્ણ થઈ જાય છે, માટે ભગ-વાનનું કથન છે કે-કષાયરૂપ ક્રોધ કરતી વખતે પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવને વિચાર કરવો જોઈએ કે જેમ ઘડીયાળની ચાવી તેની નીચે ચાલતા હોલકને વારવાર અધિક ઘુમાવવાથી અસમયમાં ખાલી થઈ જાય છે, તેમ કષાયાદિ કરવાથી આયુ-કર્મની સ્થિતિ પણ અસમયમાં ખલાસ થઈ જાય છે. આયુ કર્મની નિર્જરા તો થાય છે પણ બદ્ધ-બાધેલા આયુમાં ઉત્કર્ષણ (અધિકપણ) નથી હોતું જેવી રીતે જીવ સાત કર્મોને પ્રત્યેક સમય બાધે છે, અને તેની નિર્જરા કરે છે, તેવી રીતે આયુકર્મને નથી બાધતો જેટલી પણ આયુકર્મની સ્થિતિ બાધાએલી છે તે તેટલી જ રહેશે. તેમાં વધારો થઈ શકતો નથી હા, બાહ્ય નિમિત્તો લઈને તેમાં અપકર્ષણ (હાસ) અવશ્ય થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી ભગવાન કહે છે—‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ

એ નિશ્ચિત છે કે-ક્રોધાદિક કષાયને આધીન થઈ જ્યારે જીવ કરવું,

ઉક્તરીત્યા રાગનિવૃત્તિ પ્રકર્ય દ્રેપનિવૃત્તિમાહ- 'ચિર્ગિચ કોહ' ઇત્યાદિ।

મૂલમ્-વિર્ગિચ કોહ અધિકપમાણે હમ નિરુદ્ધાઉય સપેહાપ ॥૭૫

છાયા-વવિસ્વ ક્રોધમ્ અધિકમ્પમાન' હમ નિરુદ્ધાયુજ્ઞ સંપ્રેક્ષ્ય ॥ મૂ० ૭ ॥

ટીકા-—હમે=મનુષ્યલોક, નિરુદ્ધાયુજ્ઞમ્=અવર્ધિતાયુજ્ઞ સંપ્રેક્ષ્ય=પર્યાસપ્ચ,
અધિકમ્પમાનઃ ક્રોધજનિતકમ્પરહિત પ્રશમયુગ્મસમન્વિતઃ સમ્પ્રિસ્થર્થ, ક્રોધ-
પ્રશ્નલનરૂપાતિક્કરાધ્યક્ષસાય ક્રોધસ્ત વેવિસ્વ=પરિસ્પન્ન, ક્રોધમિતિપદં સક્ષ્મક
પાયોપલક્ષણમ્ ॥ મૂ० ૭ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે રાગકી નિવૃત્તિ પ્રકટ કર અથ દ્રેપકી નિવૃત્તિ કહતે
હેં । 'ચિર્ગિચ કોહ' ઇત્યાદિ ।

હસ મનુષ્યલોકકો અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાલા જાન ક્રોધસે
ઉત્પન્ન હુપ ધિકાર-પરિણામસે રહિત હોકર અર્થાત્ પ્રશમયુગ્મસમ્પન્ન
હોકર આત્માકો જલાનેવાલે કૂર અપ્યવસાયસ્વરૂપ હમ ક્રોધકા, ઉપલ
ક્ષણસે-માન, માયા ઓર લોભકા મી ત્યાગ કર ।

તાત્પર્ય યહ હે કિ જિમ પ્રકાર રાગભાવ ત્યાગ્ય હે ઉસી પ્રકાર
દ્રેપભાવ મી ત્યાગ્ય હે, અતઃ જય કિસી મી સચેતન, અચેતન વસ્તુ
પર દ્રેપ હોતા હે તય આત્મામે ક્રોધ પેદા હોતા હે; ક્રોધસે શરીરમે કંપ
કી જાણતિ દોતી હે; શારીરિક કપ સે આત્માકે પ્રવેશોમે મી એક પ્રકાર કી
પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા હોતી હે જિસસે ઉત્ત હાલતમે અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ
ચલને લગતે હે, અધિક શ્વામોચ્છ્વાસોં કે ચલને સે આયુર્કર્મ કે અવિમાગી
પ્રતિજ્ઞોદો-વિમાગો-કા પ્રાપ્ત હોતા હે, ઓર હસ તરહસે અકાલમે હી આયુ

પૂર્વોક્ત રીતિથી તમની નિવૃત્તિ પ્રકટ કરા, હવે દેખની નિવૃત્તિ કહે છે-
'ચિર્ગિચ કોહ' ઇત્યાદિ.

આ મનુષ્યલોકને અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળે બાણીને ક્રોધથી ઉત્પન્ન
અધિક વિકારપરિણામથી રહિત થઈ અર્થાત્ પ્રશમયુગ્મસમ્પન્ન થઈ આત્માને
બાળવાવાળા કૂરઅપ્યવસાયસ્વરૂપ આ ક્રોધને, ઉપલબ્ધથી માન આવા બને
હોબને ત્યાગ કર તાત્પર્ય એ છે કે-જે પ્રકારે સમભાવ ત્યાગ્ય છે
તે પ્રકારે દ્રેપભાવ પણ ત્યાગ્ય છે, માટે જ્યારે કાંઈ પણ સચેત-અચેત વસ્તુ
ઉપર દ્રેપ થાય છે ત્યારે આત્મામા ક્રોધ પેદા થાય છે. ક્રોધથી શરીર મુશ્કેલ
થાય છે. શરીરના મુશ્કેલાથી આ માન્ય પ્રદેશોમાં પણ એક પ્રકારની પરિસ્પંદરૂપ
ક્રિયા થાય છે જેથી તેથી કાલમાં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ આવવા લાગે છે અધિક
શ્વામોચ્છ્વાસોના શ્વાસવાથી આયુર્કર્મના અવિભાજ્ય પ્રતિજ્ઞોદો-વિભાજ્યો-નો દાખ

માર્ગે પ્રવર્તયિતુમાહ--‘લોકં ચ’ ઇત્યાદિ । વિસ્પન્દમાનં=દુઃસ્વાગમમયાત્ કમ્પમાનં લોકં=જીવનિકાયં પશ્ય, પ્રગમસમન્વિતઃ સન્ દુઃસ્વમયાત્કમ્પમાનં જીવલોકં દયાદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કરારને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે ભવ્ય ! દુઃસ્વકી પ્રાપ્તિ કે ભયસે કંપાયમાન ઇસ ષડ્જીવનિકાય કો તું દેખ, અર્થાત્ પ્રશમભાવ સે યુક્ત હોકર દુઃસ્વકે ભયસે ત્રસ્ત જીવલોક કો સદા તું દયાદૃષ્ટિસે દેખ ।

બન્ધ ચાર પ્રકારકા હૈ—પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ, અનુભાગબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ । ઇનમેં યોગસે પ્રકૃતિબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ હોતે હૈં । કષાયસે સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોતે હૈં । રંગકા કામ કપડેકો રંગને કા હૈ પરન્તુ હરૌ ઓર ફિટકરી કે સમાગમસે જિસ પ્રકાર વહ રંગ કપડે પર ગહરા હો જાતા હૈ ઁસી પ્રકાર કષાય કી અલ્પતા ઓર અધિકતા કર્મેંકિ સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધકી અલ્પતા ઓર અધિકતા મેં કારણ હોતી હૈ, અત ઁવ કષાય યદિ તીવ્ર હોગી, તો કર્મેં કા તીવ્ર સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોગા । કષાય મધ્યમાંશવાલી હોગી તો ઁનકા મધ્યમાંશ બંધ હોગા । બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવધ વ્યાપાર કરતે સમય જીવકો અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકષાય કા તીવ્રતમ અંશ હોતા હૈ, ઁસી હાલતમેં જીવકો જો કર્મેં કા બંધ હોગા વહ તીવ્રતમ સ્થિતિ ઓર અનુભાગબંધ કો હી લેકર હોગા । ઁસી હાલતમેં

છેડીને મોક્ષમાર્ગમા પ્રવૃત્તિ કરાવવા સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ભવ્ય ! ઇ ખના લયથી કંપાયમાન આ ષડ્જીવનિકાયને તું દેખ, અર્થાત્-પ્રશમભાવથી યુક્ત થઈ ઇ ખના લયથી ત્રાસેલા જીવલોકને સદા તુ દયાદૃષ્ટિથી દેખ.

બંધ ચાર પ્રકારના છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ આમા યોગથી પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ થાય છે કષાયથી સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ થાય છે રંગનું કામ કપડાને રંગવાનું છે પરંતુ હરડા અને ફટકડીથી જે પ્રકારે તે રંગ વધારે ગાઢો થાય છે તે પ્રકારે કષાયની અલ્પતા અને અધિકતા કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અલ્પતા અને અધિકતામા કારણ થાય છે, માટે કષાય જે તીવ્ર હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ તીવ્ર થશે કષાય મધ્યમાશવાળો હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ મધ્યમ થશે બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવધ વ્યાપાર કરતી વખતે જીવને અનન્તાનુબંધી ક્રોધકષાયનો તીવ્રતમ અંશ થાય છે, તેવી હાલતમા જીવને જે તે સમયે કર્મોના બંધ થશે તે તીવ્રતમ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધને જ લઈને

પ્રાણિનાં દુઃખં જાનીદિ, યદા-ક્રોધાદિના પ્રજ્જ્વલિતાત્મનો યન્માનસ દુઃસ્વપ્નપ્રા-
યતે તદ્ગમાનીદિ । અથ-આગમિ-ક્રોધજનિતકર્મણિપાકોદયાગ્જાપમાનમતાગતકા
નિકં દુઃખં ચ જાનીદિ । આગમિનો દુઃસ્વસ્ય પ્રાપ્તિસ્થાનમા-‘પૃથક્’ ઇત્યાદિ ।
પૃથક્=અન્યપ્ર નરકનિગોદાદી સ્પશ્ચાન્-દુ સ્વાનિ ધ વ્રોધી સ્પૃશત્=અનુમશેદ ।
અપ્રચકાર સમુદયાર્થઃ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિય ઇષ મનસ્તાપ
ર્કિં તુ મવિવ્યસ્કાષ્ટેઽપિ નરકાદી ક્રોધમનિતકર્મપન્થભૂતં દુઃખં ભવતીત્યર્થ । માત-

કરના કરાના ઓર અનુમોદના, ઇન ત્રીન કરણોં સે, ણય મન, ઘષન
તથા કાય સે દુસ્તરે જીવોં કી દિમાદિક કરને મેં પ્રવસ્ટ હોતા હૈ તથ ઇન
પ્રાણિયોં કો દુઃખ અવશ્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અથવા-ક્રોધાદિ કપાય સે
આત્મા જય સંતસ હો જાતા હૈ તથ ડસકે લિયે અવશ્ય માનસિક કષ્ટ
હોતા હૈ । તથા ક્રોધ કપાય કરતે સમય જીય જિન કર્મોં કા ધંચ કરતા
હૈ ઓર જય યે તીવ્ર અનુમાગરૂપસે હૃદયમેં આતે હૈ તથ ડનકા ફલ
દુઃસ્વરૂપ હી હોતા હૈ । ઇસ ફલકી પ્રાપ્તિ જીવકો નરકનિગોદાદિ ગતિયોં
મેં ઘરોં કે અનંત કષ્ટોં કો ભોગને કે રૂપમેં હોતી હૈ ।

પહાં પર ‘ચકાર’ સમુદય અર્થ કો પ્રકટ કરતા હૈ, અર્થાત્-
ક્રોધસે સંતસ આત્મા કેવલ વર્તમાનકાલમેં (વસી ભવમેં) હી મનસ્તાપ
રૂપ દુઃખકો નહીં ભોગતા હૈ; કિન્તુ આગામી કાલમેં (પરમવર્તમેં) ત્રી
નરકાદિ ગતિયોં મેં ડસ ક્રોધસે જનિત કર્મકે ફલરૂપ દુઃસ્વકા અનુભવ
કરતા હૈ, ઇસલિયે ક્રોધાદિક કપાયોં કો છોડ કર મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ

કરાવવું, અને અનુભવવું, આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયાથી બીજા
ભૂતોની દ્રિષ્ટિ આદિ કારણમા પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીએને દુઃખ અવસ્થ
થાય છે અથવા-ક્રોધાદિ કપાયથી આત્મા આત્મા સંતસ થઈ જાય છે ત્યારે તેને
માટે માનસિક કષ્ટ અવસ્થ થાય છે તથા ક્રોધકપાય કરતી વખતે ભુવ યે
કરોને બધ કરે છે અને આત્મા તે તીવ્ર અનુભવરૂપથી ઉદયમા આવે ॥
ત્યારે તેનું ફળ દુઃખરૂપ જ થાય છે આ ફળની પ્રાપ્તિ ભુવને નરકનિગોદાદિ
ગતિઓમા ત્યાગી અને કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે

આ ઉકાણે ‘ચકાર’ સમુદય અર્થને પ્રકટ કરે છે અર્થાત્-ક્રોધથી સંતસ
આત્મા ઉપજાવતી વર્તમાનકાળમા (આ ભવમા જ) મનતાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો
નથી; પરંતુ આગામી કાળમા (પરભવમા) પણ નરકાદિ ગતિઓમા તે ક્રોધથી
ઉત્પન્ન થયેલાં કર્મોના ફળરૂપ દુઃખને અનુભવ કરે છે, માટે ક્રોધાદિકપાયોને

मार्गे प्रवर्तयितुमाह—‘लोकं च’ इत्यादि । विस्पन्दमानं=दुःखागमभयात् कम्पमानं लोकं=जीवनिकायं पश्य, प्रगमसमन्वितः सन् दुःखभयात्कम्पमानं जीवलोकं दयादृष्ट्याऽवलोकयेत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

कराने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य ! दुःखकी प्राप्ति के भयसे कंपायमान इस षड्जीवनिकाय को तूं देख, अर्थात् प्रगमभाव से युक्त होकर दुःखके भयसे त्रस्त जीवलोक को सदा तूं दयादृष्टिसे देख ।

बन्ध चार प्रकारका है—प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध । इनमें योगसे प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्ध होते हैं । कषायसे स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होते हैं । रंगका काम कपड़ेको रंगने का है परन्तु हरा और फिटकरी के समागमसे जिस प्रकार वह रंग कपड़े पर गहरा हो जाता है उसी प्रकार कषाय की अल्पता और अधिकता कर्मोंके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धकी अल्पता और अधिकता में कारण होती है, अत एव कषाय यदि तीव्र होगी, तो कर्मोंका तीव्र स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होगा । कषाय मध्यमांशवाली होगी तो उनका मध्यमांश बंध होगा । बुद्धिपूर्वक प्राणातिपातादि सावध व्यापार करते समय जीवको अनन्तानुबन्धी क्रोधकषाय का तीव्रतम अंश होता है, ऐसी हालतमें जीवको जो कर्मोंका बंध होगा वह तीव्रतम स्थिति और अनुभागबंध को ही लेकर होगा । ऐसी हालतमें

छोड़ीने मोक्षमार्गमा प्रवृत्ति कराववा सूत्रकार कहे छे के-डे लव्य ! दु ण्ना लयथी क पायमान आ षड्जीवनिकायने तुं हेण, अर्थात्—प्रगमभावथी युक्त थं दु ण्ना लयथी त्रासेवा लवलोके सदा तु दयादृष्टिथी हेण.

अध चार प्रकारना छे—प्रकृतिअध, स्थितिअध, अनुभागअध अने प्रदेशअध आमा योगथी प्रकृतिअध अने प्रदेशअध थाय छे कषायथी स्थितिअध अने अनुभागअध थाय छे रंगनु काम कपडाने रंगवानु छे परतु डरडा अने इटकडीथी ने प्रकारे ते रंग वधारे गाढा थाय छे ते प्रकारे कषायनी अल्पता अने अधिकता कर्मोना स्थितिअध अने अनुभागअधनी अल्पता अने अधिकतामा कारण थाय छे, माटे कषाय ने तीव्र डशे तो कर्मोना स्थितिअध अने अनुभागअध तीव्र थशे. कषाय मध्यमांशवालो डशे तो कर्मोना स्थितिअध अने अनुभागअध मध्यम थशे बुद्धिपूर्वक प्राणातिपातादि सावध व्यापार करती वणते लवने अनन्तानुबन्धी क्रोधकषायने तीव्रतम अंश थाय छे, तेवी हालतमा लवने ने ते समये कर्मोना अध थशे ते तीव्रतम स्थितिअध अने अनुभागअधने न लधने

પ્રાણિનાં દુઃખે જાનીદિ, યદ્વા-ક્રોધાદિના પ્રજ્વલિતાત્મનો યન્માનસં દુઃસહ્યમ્
 યતે તસ્માનીદિ। અથ-આગામિ-ક્રોધમનિતર્કમનિપાકોદયાઝાયમાનમનાગત્કા
 ઝિક્કં દુઃખં વ જાનીદિ। આગામિનો દુઃસહ્ય મામિસ્યાનમાદ-‘પૃથક્’ રત્વાદિ।
 પૃથક્=અન્યથ નરકનિગોદાત્મો સ્પર્શાન્=દુઃસ્થાનિ ચ ક્રોધી સ્પૃશેત્=અનુભવેત્।
 અત્ર ચકારઃ સમુચયાર્થ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિક એવ મનસ્તાપઃ
 કિંતુ ભવિષ્યસ્કાલેઽપિ નરકાદી ક્રોધમનિતર્કમ્ફલભૂત દુઃખં ભવતીત્યર્થ। મોક્ષ-

કરમા કરાના ઓર અનુમોદના, इन तीन करणों से, एवं मन, वचन
 तथा काय से दूसरे जीवों की हिंसादिक करने में प्रवृत्त होता है तब उन
 प्राणियों को दुःख अबश्य उत्पन्न होता है। अथवा-क्रोधादि कपाय से
 आत्मा जप संतप्त हो जाता है तब उसके लिये अवश्य मानसिक कष्ट
 होना है। तथा क्रोध कपाय करते समय जीव जिन कर्मों का बंध करता
 है और जप के तीव्र अनुमागरूपसे उदयमें आते हैं तब उनका फल
 दुःखरूप ही होता है। इस फलकी प्राप्ति जीवको नरकनिगोदादि गतियों
 में वहाँ के अनेक कष्टों को भोगने के रूपमें होती है।

પહાં પર ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થ કો પ્રકટ કરતા હૈ, અર્થાત્-
 ક્રોધસે સંતપ્ત આત્મા કેવલ વર્તમાનકાલમેં (વસી ‘મઘમેં’) હી મનસ્તાપ-
 રૂપ દુઃખકો નહીં ‘મોગતા’ હૈ; કિન્તુ આગામી કાલમેં (પરમયમેં) સી
 નરકાદિ ગતિયોં મેં ઇમ ક્રોધસે જનિત કર્મકે ફલરૂપ દુઃખકા અનુભવ
 કરતા હૈ, इसलिये क्रोधादिक कपायों को छोड़ कर मोक्ष मार्गमें प्रवृत्ति

કરાવતુ, અને અનુભવતુ આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયાથી બીજા
 જીવોની હિંસા આદિ કરવામા પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીભોને ફાળ અવશ્ય
 થાય છે અથવા-ક્રોધાદિ કપાયથી આ આ જીવારે સતત મનસ્તાપ છે ત્યારે તેને
 માટે માનસિક કષ્ટ અવશ્ય થાય છે. તથા ક્રોધકપાય કરતી વખતે જીવ જે
 કર્મોના બંધ કરે છે અને જીવારે તે તીવ્ર અનુમાગરૂપથી ઉદયમા આવે છે
 ત્યારે તત્તુ ફળ ફાળદ્રુપ થાય છે આ ફળની પ્રાપ્તિ જીવને નરકનિગોદાદિ
 ગતિઓમા ત્યાના જનવ કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે

આ ઠેકાણે ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થને પ્રગટ કરે છે, અર્થાત્-ક્રોધથી સતત
 આત્મા કેવળ વર્તમાનકાળમા (જ્યાં હવમા જ) મનસ્તાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો
 નથી, પરંતુ આગામી કાળમા (પરમવર્તમા) પશુ નરકાદિ ગતિઓમા તે ક્રોધથી
 બંધ થયેલાં કર્મના ફળરૂપ કષ્ટોને ભોગવવા કરે છે. માટે ક્રોધાદિકપાયોને

માર્ગે પ્રવર્તયિતુમાહ--‘લોકં ચ’ इत्यादि । विस्पन्दमानं=दुःखागमभयात् कम्पमानं लोकं=जीवनिकायं पश्य, प्रशमसमन्वितः सन् दुःखभयात्कम्पमानं जीवलोकं दयादृष्ट्याऽवलोकयेत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

કારાને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે ભવ્ય ! દુઃખકી પ્રાપ્તિ કે ભયસે કંપાયમાન હસ પડ્ડીજીવનિકાય કો તું દેખ, અર્થાત્ પ્રશમભાવ સે યુક્ત હોકર દુઃખકે ભયસે ત્રસ્ત જીવલોક કો સદા તું દયાદૃષ્ટિસે દેખ ।

બન્ધ ચાર પ્રકારકા હૈ—પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ, અનુભાગબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ । હનમેં યોગસે પ્રકૃતિબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ હોતે હૈં । કષાયસે સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોતે હૈં । રંગકા કામ કપડેકો રંગને કા હૈ પરન્તુ હરાં ઓર ફિટકરી કે સમાગમસે જિસ પ્રકાર વહ રંગ કપડે પર ગહરા હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર કષાય કી અલ્પતા ઓર અધિકતા કર્મેંકે સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધકી અલ્પતા ઓર અધિકતા મેં કારણ હોની હૈ, અત એવ કષાય યદિ તીવ્ર હોગી, તો કર્મેં કા તીવ્ર સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોગા । કષાય મધ્યમાંશવાલી હોગી તો ઉનકા મધ્યમાંશ બંધ હોગા । બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવચ વ્યાપાર કરતે સમય જીવકો અનન્તાનુબંધી ક્રોધકષાય કા તીવ્રતમ અંશ હોતા હૈ, એસી હાલતમેં જીવકો જો કર્મેં કા બંધ હોગા વહ તીવ્રતમ સ્થિતિ ઓર અનુભાગબંધ કો હી લેકર હોગા । એસી હાલતમેં

છોડીને મોક્ષમાર્ગમા પ્રવૃત્તિ કરાવવા સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ભવ્ય ! હું ખના ભયથી કંપાયમાન આ પડ્ડીજીવનિકાયને તું દેખ, અર્થાત્-પ્રશમભાવથી યુક્ત થઈ હું ખના ભયથી ત્રાસેલા જીવલોકને સદા તું દયાદૃષ્ટિથી દેખ.

બંધ ચાર પ્રકારના છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ આમા યોગથી પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ થાય છે કષાયથી સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ થાય છે રંગનું કામ કપડાને રંગવાનું છે પરંતુ હરકા અને ફટકડીથી જે પ્રકારે તે રંગ વધારે ગાઢો થાય છે તે પ્રકારે કષાયની અલ્પતા અને અધિકતા કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અલ્પતા અને અધિકતામા કારણ થાય છે, માટે કષાય જે તીવ્ર હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ તીવ્ર થશે કષાય મધ્યમાશવાળો હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ મધ્યમ થશે બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવચ વ્યાપાર કરતી વખતે જીવને અનન્તાનુબંધી ક્રોધકષાયનો તીવ્રતમ અંશ થાય છે, તેવી હાલતમા જીવને જે તે સમયે કર્મોના બંધ થશે તે તીવ્રતમ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધને જ લઈને

જય ઉનકા અપને અમાધાકાલ કો છોડ કર ઉદય આવેગા તય વહ મી તીવ્રતમ રૂપસે હી અપના ફલ દેગા, અતાઃ જીવ યા તો હસી મનમેં તજ્જન્ય દુઃસ્વાદિકોં કા પૂર્ણ મોક્ષા હોગા, ઔર યદિ અવશિષ્ટ બચેંગે તો ઉનકા ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર મોગના પડેગા। યહી વાત હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। ‘બકાર’ શબ્દ જો સૂત્રમેં પડા હૈ વહ યહ મી પ્રકટ કરતા હૈ કિ—ક્રોધકપાય કે અશા હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તજ્જન્ય દુઃસ્વ કો હસ મનમેં ઔર પર મનમેં (નરકનિગોદાદિકોં મેં) મી મોગતા હૈ।

ક્રોધકપાય સે જિસ સમય આત્મા સંતપ્ત હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સતપ્ત હોતા હૈ, મનકા સંતપ્ત હોના હી માવહિંસા હૈ। મનકે સંતાપ સે અદ્યુત્તમ કર્મોં કા આસ્થ હોતા હૈ।

અન્તમેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે દુપ કહતે હૈં કિ જય ક્રોધાદિક કપાયોં કે કરને સે જીવોં કો દુઃસ્વ મોગના પડતા હૈ ઔર સંસાર મેં કોઈ મી પ્રાણી દુઃસ્વ કો નહીં પાહતા, મય સુસ્વકે હી અમિલાપી હૈં, તો મન્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ દુઃસ્વ કે અમાધરૂપ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરો સંસાર મેં ધોકા સા મી સુસ્વ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુસ્વ માન રલા હૈ વહ કાલ્પનિક હૈ। આકુલતા કા જય તક સર્વથા અન્ત નહીં હો

યથે એવી સ્થિતિમાં જ્યારે પોતાના અજાણાગને છેડીને તેને ઉદય થશે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું કળ આપશે, માટે જીવ કા તો આ ભવમાં જ તજ્જન્ય દુઃખાદિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને એ અવશિષ્ટ જયથે તે તેનું કળ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે. આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે ‘બકાર’ શબ્દ એ સૂત્રમાં છે તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-કપાયને પણ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવળાં જીવ તજ્જન્ય દુઃખને આ ભવમાં અને પરભવમાં (નરકનિગોદાદિકોમાં) પણ ભોગવે છે।

ક્રોધ-કપાયથી જે વખતે આત્મા સંતપ્ત થઈ જાય છે, તે વખતે તે આત્માનું મન સંતપ્ત થાય છે મનનું સંતપ્ત થવું એ જ ભાવદિશા છે।

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આસ્થ થાય છે અતઃ સૂત્રકાર ઉપ સંહાર કરતા કહે છે કે—જ્યારે ક્રોધાદિક કપાયો કરવાથી જીવોને દુઃખ ભોગવવું પડે છે અને સંસારમાં કોઈ પણ પ્રાણી કળને નથી પાહતો, બધા મુખના જ અભિલાષી છે ત્યારે ભવ્ય પ્રણીનું કર્તવ્ય છે કે આ દુઃખના અભાવરૂપ મોક્ષમયત્વા પ્રવૃત્તિ કરે સંસારમાં યોગ પણ મુખ નથી, જીવે જેને મુખ માન્યુ છે તે કાલ્પનિક છે આકુલતાને જ્યાં મુખી સ્વથા અન નથી થતો ત્યાં

યે તુ એવં ન સન્તિ, તે કથં ભવન્તિ ? इत्यत आह—‘जे निव्वुडा’ इत्यादि ।
 मूलम्—जे निव्वुडा पावेहिं कम्ममेहिं अणियाणा ते वियाहिया ॥ ९ ॥

છાયા—યે નિર્વૃતાઃ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ તે વ્યાખ્યાતાઃ ॥ મૃ૦ ૯ ॥

ટીકા—યે ભગવત્તીર્થકરોપદેશે શ્રદ્ધાવન્તસ્તદુપદેશધારણયા ક્રોધાદિકપા-
 માનલપ્રશમનાન્નિર્વૃતાઃ=શીતીભૂતાઃ, અત એવ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ=નિદાન-
 રહિતાઃ, તે વ્યાખ્યાતાઃ=મોક્ષસુખસ્થાનરૂપેણ કથિતાઃ, ઇદ લોકે ઔપગમિકસુખ-
 યત્ત્વેન રચ્યાતિમુપગતા ભવન્તીત્યર્થઃ ॥ મૃ૦ ૯ ॥

જાતા, તવ તક સુખ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । સાંસારિક જીવન કા
 એક ભી ઝળ બિના આકુલતા કે નહીં હૈ । ઉસ આકુલતારૂપ
 પરિગતિ કા અભાવ તો મોક્ષમાર્ગ મેં હી હૈ, ઇસલિયે પ્રત્યેક આત્મક-
 લ્યાણાભિલાષી જીવકો ઉસ માર્ગ મેં હી લગને કી પરમાવશ્યકતા હૈ ।
 જ્યતક ઉસ માર્ગ મેં નહીં લગા જાવેગા તવ તક દુઃખ ઓર આકુલતા કા
 અન્ત નહીં હો સકતા । મોક્ષમાર્ગ મેં લગા હુઆ પ્રાણી અવશ્ય હી દુઃખ
 કી પ્રાપ્તિ કે ભય સે ટસ્ત ઇસ પ્રત્યક્ષ મેં દિઁખનેવાલે પડ્જીવનિકાય કો
 પ્રશમભાવસે સમન્વિત હોકર દયાદષ્ટિ સે દેઁખેગા । કિસીકો ભી
 સ્વપ્ન તક મેં સતાને કી ભાવના નહીં કરેગા । ઉસકી ભાવના યહી સદા
 રહેગી કિ યે દુઃખ સે કૈસે છૂટે ? ॥ મૃ૦ ૮ ॥

જો ક્રોધાદિ કષાયોં સે રહિત હોતે હૈં વે કૈસે હોતે હૈં ? સો કહતે હૈ
 —‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થઙ્કર કે ઉપદેશ મેં જો શ્રદ્ધાસમ્પન્ન હૈં, અર્થાત્—ઉન્કે
 દિવ્ય ઉપદેશ કી ધારણા સે જો ક્રોધાદિક કષાય રૂપ અગ્નિ કે શમન હોને

સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી, સાસારિક જીવનમા એક પણ ક્ષણ આકુળતા વગર નથી.
 આ આકુળતારૂપ પરિણતિનો અભાવ તો મોક્ષમાર્ગમા જ છે, માટે આત્મકલ્યાણ
 ઇચ્છવાવાળા પ્રત્યેક જીવને તે માર્ગમા જ લાગવાની પરમ આવશ્યકતા છે ત્યા
 સુધી જીવ તે માર્ગમા નહિ જશે, ત્યા સુધી હું જ અને આકુળતાનો અત થઈ
 શકતો નથી મોક્ષમાર્ગમા લાગેલા પ્રાણી જરૂર જ હું જ આવવાના ભયથી ત્રાસેલા
 આ પ્રત્યક્ષમા દેખાતા પરજીવનિકાયને પ્રશમભાવથી સમન્વિત થઈ દયાદષ્ટિથી
 જોશે, કોઈને પણ સ્વપ્નમા પણ સતાવવાની ભાવના રાખશે નહિ તેની ભાવના
 સદા એવી જ રહેવાની કે ક્યારે આ પ્રાણી હું ખરી છૂટે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે ક્રોધાદિ કષાયોથી રહિત છે તે કેવા છે ? તે કહે છે—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ

ભગવાન્ તીર્થકરના ઉપદેશમા જેને શ્રદ્ધા છે અર્થાત્—પ્રભુના દિવ્ય
 ઉપદેશની ધારણાથી જેનો ક્રોધાદિકકષાયરૂપ અગ્નિ શાત થઈ ગયેલ છે, અને તેથી

જયે તેનું અપને અષાઢકાલ કો છોડ કર ઉદય આલેગા તથા જી મો તીવ્રતમ રૂપસે હી અપના ફલ વેગા, અતઃ જીવ યા તો હસી મલે તલ્લજન્ય વુઃસ્વાદિકોં કા પૂર્ણ મોક્ષા હોગા, ઓર યદિ અવશિષ્ટ થયેગે તો તેનું ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર મોગના પડેગા। યહી બાત હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। 'ચકાર' શબ્દ જો સૂત્ર મેં પકા હૈ જહ જહ મો પ્રકટ કરતા હૈ કિ-ક્રોધકપાય કે વશ હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તલ્લજન્ય વુઃસ્વ કો હસ મલે ઓર પર મલે (નરકનિગોદાદિકોં મેં) મો મોગતા હૈ।

ક્રોધકપાય સે જિસ સમય આત્મા સંતપ્ત હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સંતપ્ત હોતા હૈ, મનકા સંતપ્ત હોના હી આવશિષ્ટા હૈ। મનકે સંતાપ સે આત્મા મ કર્મોં કા આશ્રય હોતા હૈ।

અન્ત મેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુપ કહતે હૈં કિ જબ ક્રોધાદિક કપાયોં કે કરમે સે જીવોં કો વુઃસ્વ મોગના પડતા હૈ ઓર સંસાર મેં કોઈ મો પ્રાણી વુઃસ્વ કો નહીં ચાહતા, સપ સુલ્લકે હી અનિલાપી હૈં, તો મલ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ જહ હસ વુઃસ્વ કે અમાલરૂપ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરો સંસાર મેં યોગા સા મો સુલ્લ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુલ્લ માન રહ્યા હૈ જહ કાલ્પનિક હૈ। આકુલતા કા જબ તક સવયા અન્ત નહીં હો

યદે એવી સ્થિતિમાં આવે પોતાના અષાઢકાળને છોડીને તેને ઉદય કરે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું ફળ આપશે, માટે જીવ જો તે આ ભવમાં જ તલ્લજન્ય કુ પ્રાણિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને એ અવશિષ્ટ બચશે તે તેનું ફળ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે. 'ચકાર' શબ્દ જો સૂત્રમાં છે તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-કપાને વશ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં જીવ તલ્લજન્ય હોવાને આ ભવમાં અને પરભવમાં (નરકનિગોદાદિકોમાં) પણ ભોગવે છે

ક્રોધ-કપામયી જે વખતે આત્મા સંતપ્ત થઈ જાય છે તે વખતે તે જલ્દીથી મન સંતપ્ત થાય છે મનનું સંતપ્ત થવું જો જ આવશિષ્ટ છે

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આશ્રય થાય છે અવમાં સુત્રકાર ઉપ સંહાર કરતા કહે છે કે—ત્યારે ક્રોધાદિક કપાઓ કરવાથી જીવને કુપ્ર ભોગ વળું પડે છે અને સંસારમાં કેઈ પણ પ્રાણી કુપ્રને નથી ચાહેતો, બધા સુખના જ અનિલાપી છે ત્યારે જીવ પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે જો કુપ્રના અભાવરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે સંસારમાં મોક્ષ પણ સુખ નથી, જીવે જેને સુખ માન્ય છે તે કાલ્પનિક છે આકુલતાને આ મુદ્દો અવશ્ય જાત નથી થતો ત્યા

યે તુ एवं न सन्ति, ते कथं भवन्ति ? इत्यत आह—‘जे निव्वुडा’ इत्यादि ।
 मूलम्—जे निव्वुडा पावेहिं कम्ममेहिं अणियाणा ते वियाहिया ॥ ९ ॥

છાયા—યે નિર્વૃતાઃ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાના તે વ્યાખ્યાતાઃ ॥ મૂ૦ ૯ ॥

टीका—ये भगवत्तीर्थकरोपदेशे श्रद्धावन्तस्तदुपदेशधारणया क्रोधादिकपा-
 यानलप्रशमनान्निर्वृताः=शीतीभूताः, अत एव पापेषु कर्मसु अनिदानाः=निदान-
 रहिताः, ते व्याख्याताः=मोक्षमुखस्थानरूपेण कथिताः, इह लोके औपशमिकसुख-
 वत्त्वेन ख्यातिसुपगता भवन्तीत्यर्थः ॥ मू० ९ ॥

જાતા, તવ તક સુખ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । સાંસારિક જીવન કા
 એક ભી ક્ષણ વિના આકુલતા કે નહીં હૈ । उस आकुलतारूप
 પરિણતિ કા અભાવ તો મોક્ષમાર્ગ મેં હી હૈ, इसलिये प्रत्येक आत्मक-
 ल्याणाभिलाषी जीवको उस मार्ग में ही लगने की परमावश्यकता है ।
 જયતક उस માર્ગ મેં નહીં લગા જાવેગા તવ તક દુઃખ ઔર આકુલતા કા
 અન્ત નહીં હો સકતા । मोक्षमार्गमें लगा हुआ प्राणी अवश्य ही दुःख
 કી પ્રાપ્તિ કે ભય સે ત્રસ્ત इस प्रत्यक्ष में दिखनेवाले पड़जीवनिकाय को
 પ્રશમભાવસે સમન્વિત હોકર દયાદષ્ટિ સે દેખેગા । किसीको भी
 સ્વપ્ન તક મેં સતારે કી ભાવના નહીં કરેગા । उसकी भावना यही सदा
 રહેગી કિ ये दुःख से कैसे छूटें ? ॥ મૂ૦ ૮ ॥

જો ક્રોધાદિ કષાયોં સે રહિત હોતે હેં વે કૈસે હોતે હેં ? सो कहते हैं
 —‘जे निव्वुडा’ इत्यादि ।

‘भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेश में जो श्रद्धासम्पन्न हैं, अर्थात्-उनके
 दिव्य उपदेश की धारणा से जो क्रोधादिक कषाय रूप अग्निके शमन होने

સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી, સાસારિક જીવનમા એક પણ ક્ષણ આકુળતા વગર નથી.
 આ આકુળતારૂપ પરિણતિનો અભાવ તો મોક્ષમાર્ગમા જ છે, માટે આત્મકલ્યાણ
 ઇચ્છવાવાળા પ્રત્યેક જીવને તે માર્ગમા જ લાગવાની પરમ આવશ્યકતા છે બધા
 સુધી જીવ તે માર્ગમા નહિ જશે, ત્યાં સુધી હું જ અને આકુળતાનો અંત થઈ
 શકતો નથી મોક્ષમાર્ગમા લાગેલા પ્રાણી જરૂર જ હું જ આવવાના ભયથી ત્રાસેલા
 આ પ્રત્યક્ષમા દેખાતા પડજીવનિકાયને પ્રશમભાવથી સમન્વિત થઈ દયાદષ્ટિથી
 જોશે, કેઈને પણ સ્વપ્નમાં પણ સતારવાની ભાવના રાખશે નહિ. તેની ભાવના
 સદા એવી જ રહેવાની કે ક્યારે આ પ્રાણી હું બની છૂટે ॥ મૂ૦ ૮ ॥

ભગવાન તીર્થંકરના ઉપદેશમા જેને શ્રદ્ધા છે અર્થાત્-પ્રભુના દિવ્ય
 ઉપદેશની ધારણાથી જેનો ક્રોધાદિકકષાયરૂપ અગ્નિ શાંત થઈ જાયેલ છે, અને તેથી

સે સર્વદા જ્ઞાત હો જુકે હૈં, ઔર હસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિવાનકન્ય
સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ કે સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો ક્રોધાદિક કપાયોં કે લિયે અગ્નિ કી ઉપમા વી હૈ
વહ સાર્યક હૈ, કારણ કિ અિસ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તસ લોહે કા
ગોલા પાની મેં ઢાલને પર અપને ચારોં ઓર કે પાની કો સ્વીચતા હૈ ડસી
પ્રકાર વહ આત્મામી જય કપાયોં સે અત્યન્ત સંતસ હો જાતા હૈ તય અપની
ચારોં ઓર ખરી હુઈ કાર્મણવર્ગનાઓં કો મન, વચન, કાયરૂપ નાલિયોં
સે સ્વીચતા હૈ । જ્વાલા હુઆ અગ્નિ અિસ પ્રકાર રસ-રુચિર-આદિ રૂપમેં
પરિણત હોતા હૈ ડસી પ્રકાર ગૃહીત વે કાર્મણવર્ગનાઓં મી જ્ઞાનાવરણાદિક
કર્મરૂપસે ઇકઠી સાય પરિણત હો જાતી હૈ । કર્મરૂપ સે ઘષી હુઈ જન
કાર્મણવર્ગનાઓં કી ચાર પ્રકાર કી અવસ્થાઓં હોતી હૈં, પ્રકૃતિવંધ, સ્થિતિ
વંધ અનુભાગવંધ ઔર પ્રવેશવંધ । વહ નિશ્ચિત હૈં કિ જય કોઈ ઇક પદાર્થ
કિસી દુસરે પદાર્થ કો આહુત કરતા હૈ યા ડસકી શક્તિ કા ઘાત કરતા
હૈ તય આવરણ કરનેવાલે પદાર્થમેં-‘આવરણ કરને કા સ્વમાત્ર, આવરણ
કરને કા કાલ, આવરણકી શક્તિ કી હીનાયિકતા ઔર આવરણ કરને
વાલે પદાર્થ કા પરિમાણ, યે ચાર અવસ્થાઓં ઇક સાય પ્રકટ હોતી હૈં । યહી
માત્ર જન વંધ કે મેદોં મેં મી સમજના ચાહિયે । આત્મા આશ્રિયમાણ હૈ

તે મર્ત્યા જ્ઞાત યથેષ્ઠ છે આત્મા ને પાપકર્મોમાં નિવાનજ ઘષી રહિત છે તેને પરમ
સુખના સ્થાનરૂપ કહેવામા આવેલ છે ટીકાકારે ક્રોધાદિક કપાયોને માટે ને અગ્નિની
ઉપમા આપી છે તે બરાબર છે કારણ કે ને પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલા
લોખન્ને ગોળો પાણીમા નાખવાથી પોતાના આદે બાબુના પાણીને જેથે છે તે
પ્રકારે જ્યારે આત્મા પણ કપાયોમાં અત્યન્ત સંતસ થાય છે ત્યારે પોતાની આદે બાબુ
બારેલી કાર્મણવર્ગનાઓને મન-વચન-કાયરૂપ નાજિયોથી જેથે છે જેવી રીતે
આદિતું અત્યલ રસ રૂપિર આદિ રૂપમા પરિણત થાય છે તે પ્રકારે ગૃહીત આ કાર્મણ
વર્ગનાઓ પણ નાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી ભેડે જ સાથે પરિણત થઈ જાય છે. કર્મ
રૂપથી ભાષેલી આ કાર્મણવર્ગનાઓની આદે પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે-પ્રકૃતિવંધ
સ્થિતિવંધ, અનુભાગવંધ અને પ્રવેશવંધ, જો નિશ્ચિત છે કે જ્યારે કોઈ ભેડ
પદાર્થ કોઈ બીજા પદાર્થને આહુત કરે છે અગર તેની શક્તિને પાત કરે છે ત્યારે
આવરણ કરનાર પદાર્થોમા-આવરણ કરનારો સ્વમાત્ર ૧ આવરણ કરનારો કાલ ૨
આવરણની શક્તિની હીનાયિકતા ૩ અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪ આ
આવરણના ચાર અવસ્થાઓ અંક સાથે પ્રગટ થાય છે આ જ્ઞાત-જાણના મેદોમા પણ ગમજની
આદે અવસ્થાઓ અંક સાથે પ્રગટ થાય છે

ઔર કર્મ આવરણ હૈં, અતઃ કર્મ કી ખી વંધ કે સમય મૈં ચાર અવસ્થાઁ પ્રગટ હોતી હૈં । યે ચારોં અવસ્થાઁ કર્મવંધ કે પ્રથમ સમય મૈં હી સુનિશ્ચિત હો જાતી હૈં । ઉદાહરણાર્થ—જિસ સમય હમ લાલદેન કો વસ્ત્ર સે ઢાંકતે હૈં ડસી સમય ડસ આવરણ કરનેવાલે વસ્ત્ર મૈં ચાર અવસ્થાઁ સ્પષ્ટતઃ પ્રતિભાસિત હોતી હૈં—

(૧) વસ્ત્ર કા સ્વભાવ લાલદેન કે પ્રકાશ કો આવૃત કરના (૨) નિશ્ચિત કાલ તક લાલદેન કે પ્રકાશ કો આવૃત કિયે રહના (૩) લાલદેન કે પ્રકાશ આવૃત કરને કી શક્તિ કા વસ્ત્ર મૈં હીનાધિક રૂપ સે પાયા જાના ઔર (૪) આવૃત કરને વાલે વસ્ત્ર કા પરિમાણ ।

ડન ગૃહીત કાર્મણવર્ગનાઓં કા પ્રત્યેક કર્મ મૈં વટવારા ડસ પ્રકાર સે હોતા હૈં । યદિ આયુકર્મ કા ખી વંધ હો રહા હૈં તો આયુકર્મ કો સવ સે થોડા દ્રવ્ય મિલતા હૈં । નામગોત્ર મૈં પ્રત્યેક કો ડસ સે અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈં તો ખી ડન ડોનોં કર્મોં કા દ્રવ્ય સમાન રહતા હૈં । જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઔર અન્તરાય મૈં પ્રત્યેક કો ડસ સે અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈં તો ખી ડન કા દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોતા હૈં । ડસ સે મોહનીય કર્મ કો અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈં ઔર ડસ સે વેદનીય કર્મ કો અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈં । ઘાતિયા કર્મોં કો જો દ્રવ્ય મિલતા હૈં ડસ મૈં જો સર્વઘાતિ દ્રવ્ય હૈં

જોઈએ આત્મા આમિયમાણુ છે અને કર્મ આવરણુ છે, માટે બધા સમયમા કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ—બધના પ્રથમ સમયમા જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે. દાખલા તરીકે જ્યારે બત્તીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણુ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમા ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે—

(૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ બત્તીના પ્રકાશને રોકવુ (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી બત્તીના પ્રકાશને રોકી રાખવો (૩) બત્તીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમા હીનાધિકરૂપથી સદ્ભાવ (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનુ પરિમાણ ઓળખ કરવામા આવેલી તે કર્મણુવર્ણણુઓની વહેચણી પ્રત્યેક કર્મમા આ પ્રકારે થાય છે—જો આયુ કર્મનો બધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડુ દ્રવ્ય મળે છે, નામ—ગોત્રમા પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ બન્ને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે જ્ઞાનાવરણુ, દર્શનાવરણુ અને અતરાયમા પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનુ દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે એનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને એનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે ઘાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમા જે સર્વઘાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વઘાતિક દ્રવ્યનો

સે સર્વદા જ્ઞાત હો શુકે છે, ઓર હસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિદાનવપ
સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ ક સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો પ્રોધાદિક કપાયોં કે લિયે અગ્નિ કરી ઉપમા થી હ
વહ સાર્યક હૈ, કારણ કિ જિમ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તત્ત લોહે કા
ગોલા પાની મેં ડાલને પર અપને ચારોં ઓર વે પાની કો સ્વીચતા હૈં उसी
પ્રકાર यह आत्माभी जप कपायो से अत्यन्त संतप्त हो जाता है तब अपनी
चारों ओर मरी हुई कर्मणवर्गणाओं को मन, वचन, कायरूप नालियों
से स्वीचता है । स्वाया हुआ अस जिस प्रकार रस्-रुधिर-आदि रूपमें
परिणत होता है उसी प्रकार ग्रहीत वे कर्मणवर्गणाओं भी ज्ञानावरणादिक
कर्मरूपसे एकही साथ परिणत हो जाती हैं । कर्मरूप से पंथी हुई इन
कर्मणवर्गणाओं की चार प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं, प्रकृतियंध, स्थिति
यंध अनुभागयंध और प्रवेशयंध । यह निश्चिंत है कि जब कोई एक पदार्थ
किसी दूसरे पदार्थ को आवृत करता है या उसकी शक्ति का घात करता
है तब आवरण करनेवाले पदार्थमें—‘आवरण करने का स्वभाव, आवरण
करने का काल, आवरणकी शक्ति की हीनधिकता और आवरण करने
वाले पदार्थ का परिमाण, ये चार अवस्थाएँ एक साथ प्रकट होती हैं । यही
यान इन यंध के मैदों में भी समझना चाहिये । आत्मा आव्रियमाण है

તે સર્વદા જ્ઞાત થયેલ છે આથી જો પાપકર્મોંમાં નિદાનવપથી રહિત છે તેને પરમ
સુખના સ્થાનરૂપ કહેવામાં આવેલ છે ટીકાકારે ક્રોધાદિક કપાયોને માટે જે અગ્નિની
ઉપમા આપી છે તે બસેબર છે, કારણ કે જે પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલા
લોખ ઠેસો બેળો પાણીમાં નાખવાથી પોતાના ત્યારે બાજુના પાણીને જેલ છે તે
પ્રકારે અત્યારે આત્મા પણ કપાયોથી અત્યન્ત સતપ્ત થાય છે ત્યારે પોતાની ત્યારે બાજુ
સરેલી કાર્મણવર્ગણાઓને મન-વચન-કાયરૂપ નાળિયોથી જેલ છે જેની રીતે
બાંધેલું અનાજ રસ રૂમિર આદિ રૂપમાં પરિવૃત્ત થાય છે તે પ્રકારે ગ્રહીત આ કાર્મણ-
વર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી એક જ સાથે પરિવૃત્ત થઈ જાય છે ક્રમ
રૂપથી બાંધેલી આ કાર્મણવર્ગણાઓની ત્યાર પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે—પ્રકૃતિયંધ
સ્થિતિયંધ, અનુભાગયંધ અને પ્રવેશયંધ, જે નિશ્ચિત છે કે ત્યારે કંઈ એક
પદાર્થ કંઈ બીજા પદાર્થને આવૃત કરે છે અગર તેની શક્તિનો ઘાત કરે છે ત્યારે
આવરણ કરનાર પદાર્થોમાં—આવરણ કરવાનો સ્વભાવ ૧ આવરણ કરવાનો કાળ ૨
આવરણની શક્તિની હીનાધિકતા ૩ અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪ આ
ચાર અવસ્થાઓ એક સાથે પ્રગટ થાય છે આ બાત બેદામાં સેદોમાં પણ સમજાવી

और कर्म आवरण हैं, अतः कर्म की भी बंध के समय में चार अवस्थाएँ प्रगट होती हैं। ये चारों अवस्थाएँ कर्मबंध के प्रथम समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। उदाहरणार्थ—जिस समय हम लालटेन को वस्त्र से ढांकते हैं उसी समय उस आवरण करनेवाले वस्त्र में चार अवस्थाएँ स्पष्टतः प्रतिभासित होती हैं—

(१) वस्त्र का स्वभाव लालटेन के प्रकाश को आवृत करना (२) निश्चित काल तक लालटेन के प्रकाश को आवृत किये रहना (३) लालटेन के प्रकाश आवृत करने की शक्ति का वस्त्र में हीनाधिक रूपसे पाया जाना और (४) आवृत करने वाले वस्त्र का परिमाण।

उन गृहीत કાર્મણવર્ગણાओं का प्रत्येक कर्म में बद्वारा इस प्रकार से होता है। यदि आयुर्कर्म का भी बंध हो रहा है तो आयुर्कर्म को सब से थोड़ा द्रव्य मिलता है। नामगोत्रमें प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इन दोनों कर्मों का द्रव्य समान रहता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इनका द्रव्य परस्पर समान होता है। इससे मोहनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है और इससे वेदनीय कर्मको अधिक द्रव्य मिलता है। धातिया कर्मों को जो द्रव्य मिलता है इसमें जो सर्वधाति द्रव्य है

જોઈએ. આત્મા આગ્રિયમાણ છે અને કર્મ આવરણ છે, માટે બંધ સમયમા કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ-બંધના પ્રથમ સમયમા જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે દાખલા તરીકે જ્યારે બત્તીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમા ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે— (૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ બત્તીના પ્રકાશને રોકવું (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી બત્તીના પ્રકાશને રોકી રાખવો. (૩) બત્તીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમા હીનાધિકરૂપથી સદ્ભાવ (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનું પરિમાણ ગ્રહણ કરવામા આવેલી તે કાર્મણુવર્શણાઓની વહેચણી પ્રત્યેક કર્મમા આ પ્રકારે થાય છે—જો આયુ કર્મનો બંધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડું દ્રવ્ય મળે છે, નામ-ગોત્રમા પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ બન્ને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાયમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનું દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે એનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને એનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે ધાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમા જે સર્વધાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વધાતિક દ્રવ્યનો

ઉત્કાર્પમુપસંહરમાદ--‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-તમ્હા અતિવિજો નો પદિસજલિજાસિ તિ ઘેમિ ॥સૂ૦૧૦॥

છાયા—તસ્માત્ અતિચિદ્વાન્ ન પ્રતિસમ્બલે—ઇતિ વચીમિ ॥ મૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યતઃ ક્રોધાદિકપાયવાન્ અનન્તદુસ્ત્વં પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્, સ્વમ્-અતિચિદ્વાન્-આર્થવાગમપરિશીલનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાન્વાન્ મન્ ન પ્રતિસમ્બલે=ક્રોધવદિનાઽઽત્માન્ ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કપાયેપુ ક્રોધસ્ય પ્રાપ્ત

વહ સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તર્થા ભાગ હોતા હૈ, ઓર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ યહ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તયદુ-ભાગ હોતા હૈ । હસમેં બી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટધારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોતા હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટધારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈ, ઓર નૌ નોકપાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ મૂ૦ ૦ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુણ ગૂઝકાર કહતે હૈ—‘તમ્હા અતિ વિજો’ ઇત્યાદિ ।

જય યહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈ કિ ક્રોધાદિક કપાયવાલે જીવ અનન્ત યામનાઓં કો હસ લોક ઓર પરલોક મેં ભોગતે હૈ તો હૈ શિષ્ય ! અહંત પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિશીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોતે હુણ તુમ ક્રોધ રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કમી બી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનન્તમે ભાગ હોય છે અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યને અનન્ત બદુભાગ હોય છે આમા પલ્લુ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેલથી દેશઘાતિ પ્રકૃતિઓમા જ થાય છે સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેલથી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ બન્ને પ્રકારની પ્રકૃતિઓમા થાય છે અને નવનોકપાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે, સર્વઘાતિ નહિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ઉક્ત અર્થને ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે— તમ્હા અતિવિજો ઇત્યાદિ.

અર્થાદે આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કપાયવાળા જીવ અનન્ત માત્ર નાબોને આ લોકમાં અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યારે છે શિષ્ય ! અતિચિદ્વાન્-અહંત પ્રતિપાદિત આગમનના પરિશીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન થતા તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી પોતાના અત્માને કેઈ વખતે પણ સળગાવશો નહિ. આ જગ્યાએ કીધની પ્રમા

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथाश्रुतं तथा कथ-
यामीत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बतलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता अतापी छे तेथी गीज्ज ऋषायेनो पणु परित्याग समञ्ज लेवो नेहो
डे जम्बू । भगवाननी पासो जेवु मे साबज्जु छे तेवुं ज तने डहु छु
थोथा अध्ययननो गीज्जे उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥



ઉત્કાર્યમુપસંહરમાદ--'તમ્હા' ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ય-તમ્હા અતિવિજ્ઞો નો પઢિસજલિજ્ઞાસિ તિ વેમિ ॥મૂ૦૧૦॥

છાયા-તસ્માત્ અતિવિજ્ઞાન ન પ્રસિસંજ્વલે -ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા-હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યતઃ ક્રોધાદિકપાયવાન અનન્તદુસ્વં પ્રાપ્નોપિ તસ્માત્, સ્વમ્-અતિવિજ્ઞાન-માર્ગતાગમપરિણીભનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાન્વાન સન્ ન પ્રતિસંજ્વલે=ક્રોધવહ્નિનાઽઽત્માનં ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કપાયેપુ ક્રોધસ્ય પ્રાપ્ત

વહ સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તર્થા ભાગ હોના હૈ, ઓર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ વહ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તપદ્મભાગ હોના હૈ । ઇસમેં બી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટવારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોના હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટવારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનાં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોના હૈ, ઓર નો નોકપાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોના હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ મૂ૦ ૦ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુપ સ્વચક્રાર કહતે હૈ--'તમ્હા અતિ વિજ્ઞો' ઇત્યાદિ ।

જય વહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈ કિ ક્રોધાદિક કપાયવાલે જીવ અનન્ત યામનામોં કો ઇસ લોક ઓર પરલોકમેં યોગતે હૈ તો હૈ શિષ્ય ! અહંત પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિણીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોતે હુપ તુમ ક્રોધ રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કમી બી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનન્તમે ભાગ હોય છે અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યને અનન્ત પદ્મભાગ હોય છે આમ પણ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેબણી દેશઘાતિ પ્રકૃતિયોમા જ થાય છે, સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેબણી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ અને નહાની પ્રકૃતિયોમા થાય છે, અને નવનોકપાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે, સર્વઘાતિ નહિ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ઉક્ત અર્થનો ઉપસંહાર કરતા સ્વચક્રાર કહે છે--'તમ્હા અતિવિજ્ઞો' ઇત્યાદિ.

આથી આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કપાયવાળો જીવ અનન્ત યાત નામોને આ લોકમા અને પરલોકમા યોગતે છે ત્યારે હૈ શિષ્ય ! અતિવિજ્ઞાન-અહંત પ્રતિપાદિત આગમના પરિણીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન થતા તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી પોતાના અત્માને કેઈ વખતે પણ સંગ્રામશે નહિ. આ અગ્નિએ કામની પ્રતા

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथाश्रुतं तथा कथ-
यामीत्यर्थः ॥ मू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३, ॥

पर क्रोध की प्रधानता बनलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

નતા બતાવી છે તેથી બીજા કષાયોનો પણ પરિત્યાગ સમજી લેવો જોઈએ.
હે જમ્બૂ ! ભગવાનની પાસે જેણે મેં સાંભળ્યું છે તેણે જ તને કહ્યું છે
એથી અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૩ ॥



ઉત્કાર્યમુપસંહરશાઃ--'તમ્હા' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્--તમ્હા અતિવિજ્ઞો નો પઠિસજલિજ્ઞાસિ તિ ઘેમિ ॥સૂ૦૧૦॥

છાયા--તસ્માત્ અતિવિદ્વાન્ ન પ્રતિસંજ્ઞલે--ઇતિ ઘષીમિ ॥ મૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા--હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યસઃ ક્રોધાદિકપાયવાન્ અનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્, ત્વમ્--અતિવિદ્વાન્--આત્માગમપરિચીલનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ સન્ ન પ્રતિસંજ્ઞલે=ક્રોધમદ્દિનાઽસ્માને ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કપાયપુ ક્રોધસ્ય પ્રાપ્ત

યદ્ સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તર્થા ભાગ હોતા હૈ, ઓર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ યદ્ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તયદ્ ભાગ હોતા હૈ । હસમેં બી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટવારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોતા હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા ઘટવારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈ, ઓર નો નોકપાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ મૂ૦ ૦ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે કુપ સૂચકાર કહતે હૈ--'તમ્હા અતિ વિજ્ઞો' ઇત્યાદિ ।

જય યહ નિર્વિષાદ સિદ્ધ હૈ કિ ક્રોધાદિક કપાયવાલે જીવ અનન્ત યાગનાઓં કો હસ લોક ઓર પરલોક મેં ભોગતે હૈ તો હૈ શિષ્ય ! અહંત પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિચીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનમંપલ્લ હોતે કુપ તુમ ક્રોધ રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કમી બી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનન્તમો ભાગ હોય છે, અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યને અનન્ત બહુભાગ હોય છે આમા પણ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેવણી દેશઘાતિ પ્રકૃતિયોમા જ થાય છે, સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેવણી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ બન્ને પ્રકારની પ્રકૃતિયોમા થાય છે, અને નવનોકપાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે સર્વઘાતિ નહિ ॥ સૂ૦ ૬-૧ ॥

ઉક્ત અર્થનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે--'તમ્હા અતિવિજ્ઞો' ઇત્યાદિ.

આરે આ નિર્વિષાદ સિદ્ધ હૈ કે ક્રોધાદિક કપાયવાળો જીવ અનન્ત યાગનાઓને આ લોકમાં અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યારે હૈ શિષ્ય ! અતિવિદ્વાન્--અહંત પ્રતિપાદિત આગમના પરિચીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનમંપલ્લ થતા તમે કોઇકપ અગ્નિથી યોવાના આત્માને કેઇ વખતે પણ સંગ્રામશે નહિ. આ જગ્યાએ કાપની પ્રથા

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथा श्रुतं तथा कथ-
यामीत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बनलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता अतावी छे तेर्था पील्ल इषायोनो पणु परित्याग समञ्ज देवो नेधञ्जो
हे जम्बू ! भगवाननी पासो जेवु मे सालज्युं छे तेवु न तने उहुं छुं
ओथा अध्ययननो त्रीजे उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥



। अथ चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देश ।

इहानन्तरतृतीयाश्वेदके जन्मपातपो वर्णितम् । तत्र समयमव्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया मयति, तस्मात् समयं प्रतिबोधयितुं चतुर्थश्वेदकं कथयन्मादां गृहीतप्रवृत्त्यस्य कर्तव्यमाह—‘आवीलए’ इत्यादि ।

मूलम्—आवीलए पवीलए निप्पीलए अहिता पुव्वसज्जो
हिच्चा उव्वसम ॥ सू० १ ॥

छाया—आपीठयत् प्रपीठयत् निप्पीठयत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोगं हित्वा उपसमम् ।
टीका—पूर्वसंयोग—पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्धं, उपसममवस्थितस्य
योगं भ्रातृरादिसम्बन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः—अनादिमयसमायातत्वेन प्राक्तनो-
संयमः, तेन सह संयागं पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपसमं—कर्मोपसमकार

॥ योथे अप्ययनका योथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवध—निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जब तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारम्भ किया जाता है । उसमें भी जिसने दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘आवीलए’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक—भ्रातृरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम नाश के अभी तक के

योथा अध्वननेन योथा उद्देश.

आ पहिले तृतीय उद्देशमा निरवध—निर्दोष तपनु वर्णन करेले छे, परन्तु निर्दोष तपनी आराधना संपूर्ण रीतिशी न्या सुधी एव अवधमा स्थित नहीं होता त्या सुधी यथ शकती नहीं; भागे अवधने प्रतिबोधित करवाने भागे आ योथा उद्देशने प्रारंभ થાય છે તેમા પણ જેણે દીક્ષા ધારણ કરેલી છે તેનું સર્વ પ્રથમ શું કર્તવ્ય છે તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર કરે છે—‘આવીલણ’ ઇત્યાદિ.

પૂર્વકાલિકા અબધ સમવાર માતા પિતા આદિના, તથા પછીના કાળમા અબધ સમવાવાળા ભ્રાતૃરાદિના અબધને, અથવા અનાદિ જન્મપરંપરાથી સંબંધિત હોવાને કારણે પૂર્વકાલિક જે અસંયમભાવ છે તેના આજ સુધીના સંબંધને બંધી

णत्वात्संयमं हित्वा=गत्वा प्राप्येति यावत्, आपीडयेत् प्रथमप्रव्रज्याकालेऽविकृष्टेन तपसा शरीरमीपत्पीडयेदित्यर्थः । प्रपीडयेत्-तदनन्तर प्ररूपेण विकृष्टतपसा शरीरं पीडयेत् । ततः निष्पीडयेत्=पण्डितमरणेन शरीरं त्यक्तुमना मार्गार्थमासक्षपणादि-स्वयोरुत्तरतपोभिः शरीरं निश्चयेन पीडयेदित्यर्थः । यद्वा-आपीडयेत्=सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुणस्थानेषु ज्ञानावरणीयादिकं कर्म ईपत् पीडयेत्, ततः प्रपीडयेत्=अपूर्वकरणानिवृत्तिवाटरयोः, ततः-निष्पीडयेत्-सूक्ष्मसंपरायावस्थायाम्, यद्वा-अष्टविधं कर्म उपशमश्रेण्यामापीडयेत्, क्षपकश्रेण्यां प्रपीडयेत्, शैलेश्यवस्थाया निष्पीडयेदित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

सम्यग्ध को छोड़ कर कर्मों के उपशम का कारण होने से उपशम-सयम को प्राप्त कर प्रथम दीक्षा के अवसर पर साधारण तप के द्वारा शरीर को किञ्चित् कृश करे । पश्चात् उत्कृष्ट तप से शरीर को पूर्ण रीति से कृश करे । तदनन्तर पण्डितमरण से शरीर का नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चतुर्थादिक गुणस्थानों में ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थितिका हास करे, पश्चात् अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में उनकी स्थिति का पहिलेकी अपेक्षा और अधिक हास करे । इस के अनन्तर सूक्ष्मसंपराय नामके दशवें गुणस्थान में और अधिक हास करे ।

अथवा—उपशमश्रेणी में ज्ञानावरणादिक कर्मों का हास करे, क्षपकश्रेणी में और अधिक हास करे तथा शैलेशी अवस्थामें उनका समूल नाश करे ॥ सू० १ ॥

कर्मोना उपशमनु कारणु होवाथी उपशमसयमने प्राप्त करी प्रथम दीक्षाना अवसरे साधारण तप द्वारा शरीरने आपीडित-किञ्चित् दुण्णु करे पछी उत्कृष्ट तपथी शरीरने पूर्ण रूपथी दुण्णु करे त्यार पछी पण्डितमरणथी शरीरने नियमपूर्वक परित्याग करे

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चोथा आदि-गुणस्थानोभा ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनी स्थितिने घटाओ पछी अपूर्वकरणु अने अनिवृत्ति करणुमा तेनी स्थितिने पढे-लानी अपेक्षा वधादे घटाओ करे, त्यार भाद सूक्ष्मसापराय नामना दशमा गुणु स्थानमा ओथी वधादे घटाओ करे

अथवा—उपशम-श्रेणीमा ज्ञानावरणादिक कर्मोना घटाओ करे, क्षपकश्रेणीमा ओथी अधिक घटाओ करे, तथा शैलेशी अवस्थामा तेना समूणो नाश करे ॥ सू० १ ॥

। अथ चतुर्थोऽध्ययनस्य चतुर्थ उद्देश ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके जन्मवृत्तपो वर्णितम् । तत्र समयमन्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया भवति, तस्मात् समयं प्रतिबोधयितुं चतुर्थोद्देशक कथयन्नादौ दृष्टीतममप्यस्य कर्तव्यमाह—‘ आबीलए ’ इत्यादि ।

मूलम्—आबीलए पवीलए निप्पीलए जहिचा पुव्वसजोग
हिचचा उव्वसम ॥ सू० १ ॥

आपा—आपीडयेत् प्रपीडयेत् निप्पीडयेत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोग इत्या उपक्रमः ।

टीका—पूर्वसंयोग—पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्ध, उपलब्धत्वात्प्राक् संयोगश्च शूरादिसम्बन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः—अनादिमवसमायातत्वेन प्राक्तनोऽसंयमः, तेन सह सयागं पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपशमं—कर्मोपशमकम्

॥ चौथे अध्यायनका चौथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवध—निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जब तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारम्भ किया जाता है । उनमें भी जिसमें दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘ आबीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक—शूरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम नाश के सभी तत्त्वों

चौथा अध्यायनका चौथा उद्देश.

आ पदेवा त्रीणा उद्देशमा निरवध—निर्दोष तपसु वर्णन करेता है, परन्तु निर्दोष तपसु आराधना संपूर्ण रीतिसे नभ्य सुधी एव संयममां स्थित नही होता तथा सुधी यह शकती नही, आगे संयमने प्रतिबोधित करने में आगे चौथा उद्देशने प्रारंभ पाया है तेमा पक्ष लेखे दीक्षा धारण करेती है तब सर्व प्रथम सु कर्तव्य है तब निरूपण सूत्रकार करे है—‘ आबीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिकी संयम संयमपर माता पिता आदिना, तथा पश्चीना संयम संयम संयमपर शूरादिना संयमने, अथवा अनादि जन्मपर पराधी संयमने होवाने कारणे पूर्वकालिक ने असंयमभाव है तेना आद्य सुधीना संयमने होती

णत्वात्संयमं हित्वा=गत्वा प्राप्येति यावत्, आपीडयेत् प्रथमप्रव्रज्याकालेऽविकृष्टेन तपसा शरीरमीपत्पीडयेदित्यर्थः । प्रपीडयेत्-तदनन्तर प्रकर्षेण विकृष्टतपसा शरीरं पीडयेत् । ततः निष्पीडयेत्=पण्डितमरणेन शरीरं त्यक्तुमना मासार्धमासक्षपणादिरूपयोरुत्तरतपोभिः शरीरं निश्चयेन पीडयेदित्यर्थः । यद्वा-आपीडयेत्=सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुणस्थानेषु ज्ञानावरणीयादिकं कर्म ईषत् पीडयेत्, ततः प्रपीडयेत्=अपूर्वकरणानिवृत्तिवादरयोः, ततः-निष्पीडयेत्-सूक्ष्मसंपरायावस्थायाम्, यद्वा-अष्टविधं कर्म उपशमश्रेण्यामापीडयेत्, क्षपकश्रेण्यां प्रपीडयेत्, शैलेश्यवस्थायां निष्पीडयेदित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

सम्बन्ध को छोड़ कर कर्मों के उपशम का कारण होने से उपशम-संयम को प्राप्त कर प्रथम दीक्षा के अवसर पर साधारण तप के द्वारा शरीर को किञ्चित् कृश करे । पश्चात् उत्कृष्ट तप से शरीर को पूर्ण रीति से कृश करे । तदन्तर पण्डितमरण से शरीर का नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चतुर्थादिक गुणस्थानों में ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थितिका हास करे, पश्चात् अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में उनकी स्थिति का पहिलेकी अपेक्षा और अधिक हास करे । इसके अनन्तर सूक्ष्मसंपराय नामके दशवें गुणस्थान में और अधिक हास करे ।

अथवा—उपशमश्रेणी में ज्ञानावरणादिक कर्मों का हास करे, क्षपकश्रेणी में और अधिक हास करे तथा शैलेशी अवस्था में उनका समूल नाश करे ॥ सू० १ ॥

कर्मोना उपशमनु कारणु ढोवाथी उपशमसयमने प्राप्त करी प्रथम दीक्षाना अवसरे साधारण तप द्वारा शरीरने आपीडित-किञ्चित् दुग्धु करे पछी उत्कृष्ट तपथी शरीरने पूर्णु इषथी दुग्धु करे त्यार पछी पण्डितमरणथी शरीरने नियमपूर्वक प्रित्याग करे

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चोथा आदि-गुणस्थानोभा ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनी स्थितिने घटाडे पछी अपूर्वकरणु अने अनिवृत्ति करणुभा तेनी स्थितिने पढे-लानी अपेक्षा वधारे घटाडे करे, त्यार भाद सूक्ष्मसापराय नामना दशमा गुण स्थानभा ओथी वधारे घटाडे करे

अथवा—उपशम-श्रेणीभा ज्ञानावरणादिक कर्मोना घटाडे करे, क्षपकश्रेणीभा ओथी अधिक घटाडे करे, तथा शैलेशी अवस्थाभा तेना सभूणो नाश करे ॥ सू० १ ॥

उपशमाभयणस्य फलं प्रदर्शयन् दृष्टीतप्रयत्नस्य सुसुप्तोः कर्तव्यमाह—
'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

मूलम्—तम्हा अविमणे वीरे सारप समिष्ट सहिष्ट सया
जय ॥ सू० १ ॥

छाया—तस्मात् अविमना वीरः स्वारतः समितः सदा यतेत ॥ सू० २ ॥

टीका—तस्मात्=उपशमाभयणात्, वीरः=कर्मविदारणसमर्थ अविमनाः=संयमाराधने खेदरहितः, अथ एव स्वारतः=सुष्ठु आरतः=यावज्जीवनमर्यादया संयमाऽऽचरणे तत्परः, समितः=समितिस्समन्वितः, सहितः=हितेन सह सहितः=सम्यग्ज्ञानादिगुणयुक्तः, सदा=सर्वकालं यतेत=संयमाराधनमारोहजनमतिहान्नीकस्य तत्परिपालनार्थं प्रयत्नमाना भवेदित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयमानुष्ठानोपदेशे हेतुं प्रदर्शयन्नाह—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करने के फलको दिम्बाते हुए सूत्रकार जिसने दीक्षा अंगीकार कर ली है ऐसे मोक्षामिलायी मुनि का कर्तव्य बतलाते हैं—'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करनेसे कर्म को नष्ट करने की शक्ति से संपन्न जीव संयम के आराधन करने में खेदरहित होकर यावज्जीवन संयम के आराधना में तत्पर होता हुआ समिति से और सम्यग्दर्शन-ज्ञानादि गुणों से युक्त होकर सर्वदा संयम के आराधनरूपी भार को वहन करने की प्रतिज्ञा को अंगीकार कर उसके पालन करने में प्रयत्नशील बने ॥ सू० २ ॥

पुन पुन संयम के अनुष्ठान करने के उपदेश में कारण प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशम—संयमना आश्रय करवाना इष्टाने देखावटा सूत्रकार ने जो दीक्षा अंगीकार करे ली है अथवा मोक्षामिलायी मुनिनु कर्तव्य कहते हैं—तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशम—संयमना आश्रय करवायी करने नष्ट करवाना शक्तिवाला हुए संयमनु आराधन करवाया जोखरहित भवने यावज्जीवन संयमना आराधनमें तत्पर बनाने अभितिभी जाने सम्यग्दर्शनज्ञानादि गुणवायी युक्त बहने उभेया संयमना आराधनरूपी भारने वहन करवाना नियमने अंगीकार करीने तेनु पालन करवाया प्रयत्नशील बने ॥ सू० २ ॥

बारबार संयमनु अनुष्ठान करवाना उपदेशमें कारण प्रकट करीने सूत्रकार कहते हैं—दुरणुचरो' इत्यादि।

મૂલમ-દુરણુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયદ્દગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા-દુરણુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા-માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ
-અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં યેષાં તે-અનિવૃત્તગામિનસ્તેષાં, વીરાણાં=કર્મ-
વિદારણસમર્થાના પ્રમાદરહિતાનાં દુરણુચરઃ-દુઃસ્થેન સદ્ધ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ
પશ્ચાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે ઇતિ દુરણુચરઃ=દુઃસ્વાનુગમ્યઃ-સદુઃસ્વમનુસેવ્યોઽસ્તિ,
તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત્ત ઇતિ ભાવઃ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાહ-‘વિગિંચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-વિગિંચ મંસસોણિયં, એસ પુરિસે દવિણ વીરે આયા-
ણિજ્જે વિયાહિણ જે ધુણાઇ સમુસ્સયં વસિત્તા વંભચેરાંસિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા-વેવિદ્ધ મંસશોણિતમ્, એપ પુરુષો દ્રવિકો વીર આદાનીયો વ્યા-
હ્યાતો યો ધુનાતિ સમુચ્છ્રયમ્ ઉપિત્વા વ્રહ્મચર્યે ॥ મૂ૦ ૪ ॥

ટીકા-માંસશોણિતં સ્વશરીરસ્થં વેવિદ્ધ=અપનય-અન્તપ્રાન્તાદ્વારાદિના અન-

યહ સંયમ રૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કિ
વીર-કર્મો કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી એવં અપ્રમાદી હેં ઉનકે લિયે ખી
દુરણુચર-અર્થાત્ અતિકષ્ટમાધ્ય હૈ, ક્યોં કિ પૂર્વ-પૂર્વ તીર્થદ્ધરોં ને ઇસ
કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈ ઉસી કે અનુસાર્ યહ
આચરિત ક્રિયા જાતા હૈ, અતઃ ઇસકે અનુષ્ઠાન કરને કા વારંવાર
ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ઉસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગ સે હોતા હૈ, ઇસી
વાત કી પુષ્ટિ કરતે હેં-‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ ઇત્યાદિ ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિત કો સુસ્વાવે, અર્થાત્ અન્તપ્રાન્ત

આ સયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ જે વીર એટલે
કે કર્મને ક્ષય કરવામા શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના મટે પણ દુરણુ-
ચર અર્થાત્ અતિકષ્ટમાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાના તીર્થદરોએ તેનુ આચરણ
કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તદનુસારે જ એનુ આચરણ કરવામા આવે છે,
માટે એનુ અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ વારંવાર કરવામા આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ સયમરૂપ માર્ગનુ આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની
પુષ્ટિ કરે છે-‘વિગિંચ મસસોણિયં’ ઇત્યાદિ

સયમી પોતાના શરીરના માસ લોહીને સુકાવે, અર્થાત્ અત-પ્રાત આહા-

उपशमाभयस्य फलं प्रदर्शयन् गृहीतमवज्यस्य सुपुत्राः कर्तव्यमाह—
'तम्हा अविमणे' इत्यादि ।

मूत्रम्—तम्हा अविमणे वीरे सारण समिण सहिण सया
जण ॥ सू० २ ॥

छाया—तस्मात् अविमना वीरः स्वारसः समितः सदा यतेत ॥ सू० २ ॥

टीका—तस्मात्=उपशमाभयणात्, वीरः=कर्मविदारणसमर्थ अविमना=सय
माराधने सेदरहितः, अत एव स्वारसः=सुष्ठु आरसः=यावज्जीवनमयां दया संय-
माऽऽधरणे तत्परः, समितः=समितिसमन्वितः, सहितः=हितेन सह सहितः=सम्यग्
ज्ञानादिगुणयुक्तः, सदा=मनेकांशं यततः=संयमाराधनमारोहइनप्रतिज्ञामहीकृत्य
तत्परिपालनार्थं प्रयतमानां भवेदित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयमाऽनुष्ठानोपदेशे हेतुं प्रदर्शयमाह—'बुरणुचरो' इत्यादि ।

उपशमसंयम के आश्रय करने के फलको दिखाने हुए सूत्रकार
जिसने दीक्षा अंगीकार कर ली है ऐसे मोक्षामिलापी मुनि का कर्तव्य
बतलाते हैं—'तम्हा अविमणे' इत्यादि ।

उपशमसंयम के आश्रय करनेसे कर्म को नष्ट करने की शक्ति से
संपन्न जीव संयम के आराधन करने में सेदरहित होकर यावज्जीवन
संयम के आराधना में तत्पर होता हुआ समिति से और सम्यग्दर्शन-
ज्ञानादि गुणों से युक्त होकर सर्वदा संयम के आराधनरूपी भार को
बहन करने की प्रतिज्ञा को अंगीकार कर उसके पालन करने में प्रयत्न
शील बने ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयम के अनुष्ठान करने के उपदेश में कारण प्रकट करते
हुए सूत्रकार कहते हैं—'बुरणुचरो' इत्यादि ।

उपशम—संयमना आश्रय कर्त्तव्यता इत्यनेन हेतुवाक्या सूत्रकार नेछे दीक्षा अंगी
कार करेवी छे जेवा मोक्षामिलापी मुनिनु कर्त्तव्य कहे छे—'तम्हा अविमणे' इत्यादि ।

उपशम—संयमना आश्रय कर्त्तव्यता कर्मने नष्ट कर्त्तव्यता शक्तिवाक्या एव
संयमनु आराधन कर्त्तव्यतां चेदरहित बहने यावज्जीवन संयमना आराधनमां
तत्पर अंगीने समितिथी अने सम्यग्दर्शनज्ञानादि गुणवां युक्त भर्त्तने उभेथां
संयमना आराधनरूपी भारने बहन कर्त्तव्यता नियमने अंगीकार करीने तेनु
पालन कर्त्तव्यतां प्रयत्नशील अने ॥ सू० २ ॥

वारवार संयमनु अनुष्ठान कर्त्तव्यता उपदेशमा कारण प्रकट करीने सूत्र
कार कहे छे—'बुरणुचरो' इत्यादि ।

મૂલમ્—દુરણુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયટ્ટગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—દુરણુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ
-અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં યેષાં તે-અનિવૃત્તગામિનસ્તેષાં, વીરાણાં=કર્મ-
વિદારણસમર્થાનાં પ્રમાદરહિતાનાં દુરણુચરઃ-દુઃખેન સહ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ
પશ્ચાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે इति દુરણુચરઃ=દુઃખાનુગમ્યઃ-સદુઃખમનુસેવ્યોઽસ્તિ,
તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત इति ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાહ-‘વિગિંચ’ इत्याદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ મંસસોણિયં, एस पुरिसे दविण वीरे आया-
णिज्जे वियाहिण जे धुणाइ समुस्सयं वसित्ता वंभचेरांसि ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—વેવિક્ષ્વ માંસશોણિતમ્, एष पुरुषो द्रविको वीर आदानीयो व्या-
ख्यातो यो धुनाति समुच्छ्रयम् उपित्वा ब्रह्मचर्यं ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—માંસશોણિતં સ્વશરીરસ્થં વેવિક્ષ્વ=અપનય-અન્તપ્રાન્તાદારાદિના અન-

યહ સંયમ રૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કિ
વીર-કર્મોં કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી एवं અપ્રમાદી હૈંં ઉનકેં લિયે ખી
દુરણુચર-અર્થાત્ અતિકષ્ટમાધ્ય હૈ, ક્યોં કિ પૂર્વ-પૂર્વ તીર્થદ્વરોં ને ઇસ
કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈંં ઉસીં કે અનુસાર યહ
આચરિત કિયા જાતા હૈ, અતઃ ઇસકે અનુષ્ઠાન કરને કા વારંવાર
ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ઉસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગ સે હોતા હૈ, ઇસી
વાત કી પુષ્ટિ કરને હૈંં-‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિત કો સુઝાવે, અર્થાત્ અન્તપ્રાન્ત

આ સયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ જે વીર એટલે
કે કર્મનો ક્ષય કરવામા શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના માટે પણ દુરણુ-
ચર અર્થાત્ અતિકષ્ટમાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાના તીર્થકરોએ તેનુ આચરણ
કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તદનુસારે જ એનુ આચરણ કરવામા આવે છે,
માટે એનુ અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ વારંવાર કરવામા આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ સયમરૂપ માર્ગનુ આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની
પુષ્ટિ કરે છે-‘વિગિંચ મસસોણિયં’ इत्यादि

! સયમી પોતાના શરીરના માસ લોહીને સુઝાવે, અર્થાત્ અત-પ્રાત આહા-

જનાદિવપસા વા શરીરે શોષયેત્યર્થઃ । શરીરશોષણસ્ય ફલમાદ-‘ એવ’ ઇત્યાદિ ।
 વપ=સ્વશરીરશોષક પુરુષઃ-મોક્ષાર્થી જનો દ્રવિક-દ્રવ્ય-સંયમઃ સ વિદ્યતં યસ્યા-
 સૌ, સંયમીત્યર્થઃ, તથા-ત્રીર=કર્મવિદારણસમર્થઃ, તથા-આશાનીયઃ=મન્યાનો ગ્રાહ્યઃ
 મદેયવચન ઇત્યર્થઃ, વ્યાસ્યાતઃ=શીર્ષકૌ ફયિત । યથ ગ્રહણર્થે=ગ્રહણર્થમ્
 મદાવ્રતે સંયમે વા ઉપિત્વા=સ્થિત્વા-તત્પરા ભૂત્વેતિ યાવત્, સમુચ્ચયઃ=કર્મોપચયં
 ધુનાતિ=દ્રાસયતિ-સપયવીત્યર્થઃ, સોઽપિ-આશાનીયો વ્યાસ્યાત ઇતિ સમ્બન્ધઃ । ૧૪।

પ્રમાદરહિતાનાં યુગાન્ પ્રવૃત્ત્ય પ્રમાદવર્તાં શોપાનાદ-‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ-નિત્તેહિં પલિચ્છિન્નેહિં આયાણસોયગઢિષ્ વાલે
 અવ્ધોચ્છિન્નવંધણે અણભિક્કંતસજોપ તમસિ અવિયાણઓ
 આણાપ્ લભો નરિથ ત્તિ વેમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા-નેત્રૈઃ પ્રતિચ્છન્ને આવાનસોતોયુદ્ધા વાલ અવ્ધોચ્છિન્નવંધણા અન-
 ધિક્કાન્તસંયાગઃ તમસિ અવિજાનત આજ્ઞાયા વામો નાસ્તિ-ઇતિ વ્રતીમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

ટીકા-નેત્રૈઃ=વધુરાદિમિરિન્દ્રિયૈઃ, પ્રતિચ્છન્ને=સ્વસ્વવિપયતોઽપચારિતૈઃ-

જાતારાદિક સે અથવા અનશનાદિક તપ કે દ્વારા શરીર કા શોષણ કરે ।

હસ ક્રિયા કા આચરણ કરનેવાલા વહ મોક્ષામિલાપી સંયમી જીવ
 મૌકો નષ્ટ કરને કી શક્તિ સે સમન્વિત હોતા હુઆ મન્ય પુરુષો કે
 યે ઉપાદેયયચનવાલા હોતા હૈ, એમા તીર્થસ્કરોને કહા હૈ । તથા જો
 ત્પર્ય મેં અથવા સંયમ મેં તત્પર હોકર કર્મો કો નષ્ટ કરતા હૈ વહ
 નિ નમ્યો કે લિયે માનનીયવચનવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિયોં મેં કયા કયા દોષ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? વહ વાત
 પ્રકાર કહતે હૈં-‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

અપને વિપયોં સે અપચારિત-પ્રતિચ્છન્ન વધુરાદિક ઇન્દ્રિયોં સે યુક્ત
 રાદિકથી અથવા અનશનાદિક તપ દ્વારા શરીરનુ શોષણ કરે

આ ક્રિયાનું આચરણ કરવાવાળા તે મોક્ષામિલાપી સંયમી જીવ કહેને
 નહ કસ્યાની શક્તિથી અપત થઈ બન્ય પુરુષો માટે ઉપદેય વચનવાળો થઈ બન્ય
 છે એમ તીર્થસ્કરો કહ્યું છે તથા જે ગ્રહણર્થમા અને સંયમમા તત્પર થઈ
 કહેને નાશ કરે છે તે જીવ અમ્યોને માટે માનનીય-વચનવાળો થાય છે ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિઓમા શુ શુ દોષ ઉત્પન્ન થાય છે ? આ વાત સત્ર
 કાર કહે છે-‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ.

વાતવેલાના વિષયમાં નિચારિત વધુ-અધિક ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત થઈને પ્રમા

प्रतिरुद्धैर्युक्तोऽपि, ब्रह्मचर्ये स्थितोऽपि, आदानीयो भूत्वाऽपि, यदि-आदानस्रोतो-
गृहः=आदीयते=गृह्यते सावद्यक्रियाप्रवृत्तेन यत्-तदादानं=संसारबीजरूपं कर्म, तस्य
स्रोतांसि=शब्दादिविषयभोगाः, तत्र गृहः=आसक्तो भवति, तर्हि स बालः=मोहोद-
दयान्मूढः सन् अव्युच्छिन्नबन्धनः=अव्युच्छिन्नं बन्धनं यस्य स तथोक्तः-अव्रुटित-
कर्मबन्धः स्यादित्यर्थः । किं च—स बालः अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यन्वयः ।
अनभिक्रान्तः=अनतिलङ्घितः संयोगः=मातापित्रादिसम्बन्धः, अथवा-असंयमसंब-
न्धो येन सः-अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यर्थः । यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद्
विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=शतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं
नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसम्बन्धावसानं पश्यतीति वर्तुलार्थः ।

होकर भी, ब्रह्मचर्य में स्थित रह कर भी, तथा आदानीय-लोकमान्य हो
कर भी जो आदानस्रोतोगृह, अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त
हो जाता है उस बाल-अज्ञानी का कर्मबन्ध कभी भी नष्ट नहीं होता,
और न वह माता-पिता आदि के सम्बन्ध को, अथवा असंयम के भाव
को ही अपने से दूर कर सकता है ।

तथा-अज्ञानरूप अंधकार में रहने वाला वह बाल अज्ञानी, कि जो
अपने हितको ही नहीं समझता है, भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेशरूप प्रव-
चनका लाभ नहीं ले सकता ।

विशेषार्थः—संयम का लक्षण सिद्धान्तकारों ने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः
संयमः ' इन्द्रियों की वृत्ति का निरोध करना ही बतलाया है । इन्द्रियों की
वृत्ति का निरोध कर लेने पर भी यदि संयमी व्यक्ति के हृदय में उनके
विषयभूत पदार्थों के सेवन के प्रति लालसा याने रागभाव बना हुआ है

अर्थभा स्थित रहने और आदानीय-लोकमान्य पणः धरने-के आदानस्रोतो-
गृह-अर्थात् शब्दादि विषयभोगोभा आसक्त बनी जाय छे ते भाण-अज्ञानीने।
कर्मबन्ध क्यारे पण छूटतो नथी अने ते माता-पिता-आदिना स भधने अथवा
असंयमभावने पोताथी दूर करी शकतो नथी तथा अज्ञानरूप अंधकारभा रहे-
नार ते भाण अज्ञानी के पोताना छितने पण समजतो नथी तेने लगवान
तीर्थंकरना उपदेशरूप प्रवचनने लाभ पण भणी शकतो नथी

विशेषार्थ—संयमनु लक्षण सिद्धान्तकारोअ ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः संयम '
इन्द्रियोनी वृत्तिनो निरोध करवो, तेम जातावेळ छे इन्द्रियोनी वृत्तिनो निरोध
करी लेवा छता पण जे संयमी व्यक्तितना हृदयभा तेना विषयभूत पदार्थोना
सेवन करवानी लालसा अटवे रागभाव थाय तो पकारनी दृष्टिभा ते व्यक्ति

શનાદિતપસા યા શરીરં શોષયેત્યર્થઃ । શરીરશોષણસ્ય પન્મમાદ-‘પપ’ ઇત્યાદિ ।
 પપ=સ્વશરીરશોષક પુરુષઃ-મોક્ષાર્થી મનો દ્રવિકઃ=દ્રવ=સંયમઃ સ વિષયતે યસ્યા-
 સૌ, સંયમીત્યર્થઃ, તથા-વૌર=કર્મવિશારણસમર્થઃ, તથા-આશનીયઃ=મન્યાનાં ગ્રાહઃ
 મદેયવચન ઇત્યર્થઃ, વ્યાખ્યાતઃ=તીર્થસ્કરૈઃ સ્થિત । યથા વ્રત્તચર્યે=વ્રત્તચર્યામ્ય-
 મદાગ્રતે સંયમે વા ઉપિસ્વા=સ્વિસ્વા-તત્પરો ભૂત્વેતિ યાવત્, સમુચ્છર્ય=કર્મોપચર્ય
 ધુનાતિ=દ્વાસયતિ-સપયતીત્યર્થઃ, સાડપિ-આદાનીયો વ્યાખ્યાત ઇતિ સમ્બન્ધઃ । ૪।

પ્રમાદરહિતાનાં ગુણાન્ પ્રવર્ણ્ય પ્રમાદવતાં વાપાનાદ-‘નિષેદિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂઢમ્-નિષેદિ પલિચ્છિન્નેદિ આયાણસોયગઢિપ વાલે
 અવ્ધોચ્છિન્નવચણે અણમિક્તસજોષ તમસિ અવિયાણઓ
 આણાપ લમો નતિથિતિ વેમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા-નેત્રે પ્રતિચ્છન્ને આદાનસ્રાતોદૃઢો વાલઃ અવ્યુચ્છિન્નવચન અન
 મિક્તાન્તસંવાગઃ તમસિ અવિમાનત આજ્ઞાયા સામાનાસ્તિ-ઇતિ પ્રવીમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

દૌકા-નેત્રે-વશ્તુરાદિમિરિન્દ્રિયૈઃ, પ્રતિચ્છન્ને=સ્વસ્થવિષયતોડપવારિતૈ-

આહારાદિક સે અથવા અનશનાદિક તપ કે દ્વારા શરીર કા શોષણ કરે ।

હસ ક્રિયા કા આચરણ કરનેવાલા વહ મોક્ષામિલાપી સંયમી જીવ
 કર્મો કો નષ્ટ કરને કી શક્તિ સે સમન્વિત હોતા હુઆ અમ્ય પુરુષો કે
 લિયે ઉપાદેયવચનવાલા હોતા હૈ, જેમા તીર્થસ્કરોને કહા હૈ । તથા જો
 વ્રત્તચર્ય મેં અથવા સંયમ મેં તત્પર હોકર કર્મો કો નષ્ટ કરતા હૈ વહ
 મી અમ્યો કે લિયે માનનીયવચનવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રમાદમહિત વ્યક્તિયો મેં કયા કયા દોષ ઉત્પન્ન હોતે હૈ ? વહ પાત
 પ્રકાર કહતે હૈ-‘નિષેદિ’ ઇત્યાદિ ।

અપને વિષયો સે અવવારિત-પ્રતિચ્છિન્ન વશ્તુરાદિક ઇન્દ્રિયો સે યુક્ત

રાદિકમી અથવા અનશનાદિક તપ દ્વારા શરીરનુ શોષણ કરે.

આ ક્રિયાનું આચરણ કરવાવાળા તે મોક્ષામિલાપી સર્વમી હવ ક્રમેને
 નષ્ટ કરવાની પ્રક્રિયાથી સુપન થઈ અમ્ય પુરુષો માટે ઉપાદેય વચનવાળો થઈ અમ્ય
 હિ ક્રમે નિર્ધારિત હોય હમું હે તથા જે વ્રત્તચર્યમા અને સંયમમા તત્પર થઈ
 ક્રમેની નાશ કરે હે તે પત્તુ અમ્યોને માટે માનનીય-વચનવાળો થાય હે ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રમાદરહિત વ્યક્તિઓમા શુ શુ દોષ ઉત્પન્ન થાય હે ? આ પાત સૂત્ર
 કાર કહે હે-‘નિષેદિ’ ઇત્યાદિ

પોતપોતાના વિષયોમાં નિમગ્નિત અમુ-આદિ ઇન્દ્રિયોમાં મુગ્ધ થઈને, પ્રમા

નેવાલેપ્રાણી કે દ્વારા જો ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ વહ આદાન-કર્મ હૈ, ઓર વહ સંસાર કા ધીજરૂપ હૈ । વીજ સે હી વૃક્ષ તૈયાર હોતા હૈ, વિના વીજ કે નહીં; યહ સંસારરૂપ મહાવૃક્ષ મી ઇસ કર્મરૂપ વીજ કા હી ફલ હૈ । ઇસ સે યહ ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ ધીજ કી કિસી નિમિત્ત સે અંકુરોત્પાદન શક્તિ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ તથ વહ જિસ પ્રકાર અપને કાર્ય કો નહીં કર સકતા હૈ ઁસી પ્રકાર રાગ-દ્વેષાદિક કષાયોં કે અભાવ મેં ગૃહીત કાર્મણવર્ગણાઓં કી મી જીવકો પરતન્ત્રાદિરૂપ કરને કી, અથવા જીવ કે જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા ઘાત આદિ કરને કી શક્તિ નષ્ટ હો જાતી હૈ । ઇસ આદાન કા સ્રોત શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગ હી હૈ, ઁનમેં જો ગૃહ-આસક્ત હૈ વહ આદાનસ્રોતોગૃહ હૈ । જો મોહ કે ઉદય સે પર-પદાર્થોં મેં તહીંન હૈ ઁવં હેયોપાદેય કે જ્ઞાન સે વિકલ હૈ વહી યહાં પર બાલ હૈ । જો મોહાધીન-આત્મજ્ઞાન સે રહિત હૈ-વાહે વહ વ્યાકરણાદિક ઁવં ન્યાયશાસ્ત્રાદિ ગ્રન્થોં કા અધ્યેતા મી ક્યો ન હો વહ બાલ-મૂર્ખ હી હૈ । સંયમ કો ગ્રહણ કર પશ્ચાત્ પ્રવલ મોહ કે ઉદય સે અસંયમભાવ કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે વહે સે વહે વિદ્વાન્ મી શાસ્ત્રોં મેં ‘બાલ’ નામસે વર્ણિત કિયે ગયે હૈ । યહી વાત ટીકાકાર ઇસ પ્રકાર સે પ્રકટ કરતે હૈ—

છે બીજથી જ વૃક્ષ તૈયાર થાય છે, બીજ વિના નહિ આ સંસારરૂપ મહા-વૃક્ષ પણ આ કર્મરૂપ બીજનુ જ ફળ છે આથી એ સારાશ નિકળે છે કે—
બ્યારે કોઈ પણ નિમિત્તથી બીજની અકુરોત્પાદનશક્તિ નષ્ટ થઈ જાય છે ત્યારે તે જે પ્રકારે પોતાના કાર્યને નથી કરી શકતું તે પ્રમાણે રાગદ્વેષાદિક કષાયોના અભાવમા ગૃહીત કાર્મણવર્ગણાઓની પણ જીવને પરતન્ત્રાદિરૂપ કરવાની, અથવા જીવના જ્ઞાનાદિક ગુણોના ઘાત આદિ કરવાની શક્તિનો નાશ થાય છે આ ‘આદાન’નું સ્રોત (માર્ગ) શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોના વિષયભોગ જ છે, આમા જે ગૃહ-આસક્ત છે તે આદાનસ્રોતોગૃહ છે, એટલે કર્મ આવવાના કારણોમા ગૃહ રહે છે જે મોહના ઉદયથી પરપદાર્થોમા આસક્ત છે તેમજ હેયોપાદેયના જ્ઞાનથી વિકળ છે તે જ આ ઠેકાણે બાળ છે જે મોહાધીન-આત્મજ્ઞાનથી રહિત છે, ભલે તે વ્યાકરણાદિક અને ન્યાય શાસ્ત્રોના ગ્રંથોનો અભ્યાસી કેમ ન હોય તો પણ તે બાળ-મૂર્ખ જ છે મોટામા મોટો વિદ્વાન પણ સયમને ગ્રહણ કરી પાછળથી પ્રબળ મોહના ઉદયથી અસયમભાવને પ્રાપ્ત કરવાળો મોટામા મોટો વિદ્વાન પણ શાસ્ત્રોમા ‘બાળ’ આ નામથી કહેવામા આવ્યો છે એ જ વાતને ટીકાકાર આ સારાશથી પ્રગટ કરે છે—

તસ્ય ઘાલસ્ય તમસિ—મોહરૂપે ભાવાન્ધકારે વર્તમાનસ્ય, અત એવ—અધિજાનતઃ—
આસ્મદિતમનવબુદ્ધ્યમાનસ્ય આજ્ઞાયા = મગલચીર્યકરોપદેશરૂપસ્ય પ્રવચનસ્ય મામો
નાસ્તિ । અનાનિમિધ્યાત્વપ્રતિષ્ઠાધિવેકજ્ઞાનસ્ય મહામાંદચન્નાદાઽઽઈતમવચન-
ભવણે મદૃષ્યમાવાદ્ હેયોપાદેયવિવેકાનર્હસ્થાન્ન સમ્યક્ષ્યામાસમવ ઇતિ માષ' ।
યદ્વા—આજ્ઞા=વાધિ—સમ્યક્ષમ્, તસ્યા ભામો નાસ્તીત્યર્થઃ । ઇતિ—એતદ્ બ્રવીમિ
યથા મગલવચનં શ્રુતં તથા વચયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

તો શાસ્ત્રકારોંની દૃષ્ટિમાં ઘડ વ્યક્તિ અસંયમી હી હૈ । યહ ઉનર પદાર્થો
કા સેવન નહીં કર રહા હૈ, ગ્રાહ્યચર્ય જૈસે મહાવ્રત મેં ઘડ સ્થિત હો,
અન્ય અન્ય પ્રાણી ખી ઉમકે ઉપદેશ કો અદ્યાકી દૃષ્ટિ સે લેખતે ઔર
માનતે હૌં; તો ખી ઉમકે મસાર કે કારણમૂત કર્મોં કા વધ કર્મી ખી
નષ્ટ નહીં હો સકતા । જેમા વ્યક્તિ એક પ્રકાર કા 'વકવૃત્તિ' હી હૈ ।
ઘડ ઉપર સે શુદ્ધ—નિર્દોષ પ્રતીત હોતે હુપ ખી ખીતર સે અશુદ્ધ—મલિન
હી હૈ । દિલ્લાને કે લિયે હી ઉમને વાદ્યરૂપમેં માતા—પિતાદિક અપવા અ
સંયમ-માર્ગોં સે સંબંધ છોડ રખ્યા હૈ, ખીતર સે નહીં, અતઃ એસે વ્યક્તિયોં
કો—કિ જિન્હે વાસ્તવિક રીતિ સે હેયોપાદેય કા વિવેક નહીં હૈ, જો યહ
ખી નહીં મમલતે હૈ કિ મેરા સ્વયંકા હિત કિસ મેં હૈ? ઇતને ગહરે અંધ
કાર મેં પડે હુપ હૈ ઉન્હેં ધીતરાગ પ્રમુ કી ઘાળીકા રસાસ્વાદ કર્મી ખી
નહીં આ સકતા ।

‘આદીયતે યત-તન્ આદાનમ્’ અર્થાત્—સાયણ ક્રિયા મેં પ્રવૃત્તિ રસ

અત્ર યમી જ છે જલે તે પદાર્થોનું સેવન તે ન કરતો હોય જાણવર્થ જેવા મહા
મનમા જલે તે સ્થિત હોય ખીજા જલ આવી પણ તેના ઉપદેશને અજાણી
દૃષ્ટિથી દેખતા અને માનતા હોય તે પણ તેના સંસારના કારણમૂત કરેના
જાણે કોઈ વખત પણ નષ્ટ થતો નથી જોવી વ્યક્તિ એક પ્રકારના 'વકવૃત્તિ'
/ છે તે ઉપરથી શુદ્ધ-નિર્દોષ દેખાતા હતા પણ અતરથી અશુદ્ધ-મલિન જ
છે દેખાડવાને જ માટે તેણે વાદ્યરૂપમા માતા—પિતાદિક, અપવા અસંયમ
ભાવોથી યજ્ઞ જ છેડી રીપેલ હોય છે, પણ અતરથી નહિ, માટે આવી વ્યક્તિ
જોને—કે જેજોને વાસ્તવિક રીતિથી હેયોપાદેયને વિવેક ક્રીતો નથી અને જેજો
એટલા જાક અધકારમા પડેલા હોય છે કે માર્ગ સ્વચ્છનું—પોતાનું હિત સેમા
છે? જોની પણ જેજોને સમજ ક્રીતી નહા; તેજોને ધીતરાગ પ્રમુની ઘાળીના
રસાસ્વાદ કરાવે પણ આવી શકતો નથી.

**આદીયત યત તન્ આદાનમ્—અર્થાત્—સાયણ ક્રિયામા પ્રવૃત્તિ સંબંધાર આણી
દાસ જે નવજુ કરવામાં આવે છે તે આદાન—કર્મ છે, અને તે સંસારના બીજરૂપ**

નેવાળે પ્રાણી કે દ્વારા જો ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ વહ આદાન-કર્મ હૈ, ઔર વહ સંસાર કા વીજરૂપ હૈ । વીજ સે હી વૃક્ષ તૈયાર હોતા હૈ, વિના વીજ કે નહીં; વહ સંમારૂપ મહાવૃક્ષ મી ઇસ કર્મરૂપ વીજ કા હી ફલ હૈ । ઇસ સે વહ ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ વીજ કી કિસી નિમિત્ત સે અંકુરોત્પાદન શક્તિ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ તથા વહ જિસ પ્રકાર અપને કાર્ય કો નહીં કર સકતા હૈ ડસી પ્રકાર રાગ-દ્વેષાદિક કપાયોં કે અભાવ મેં ગૃહીત કાર્મ-ળવર્ગણાઓં કી મી જીવકો પરતન્ત્રાદિરૂપ કરને કી, અથવા જીવ કે જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા ઘાત આદિ કરને કી શક્તિ નષ્ટ હો જાતી હૈ । ઇસ આદાન કા સ્રોત શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગ હી હૈ, ડનમેં જો ગૃહ-આસક્ત હૈ વહ આદાનસ્રોતોગૃહ હૈ । જો મોહ કે ડદય સે પર-પદાર્થોં મેં તલીન હૈ ંવં હેયોપાદેય કે જ્ઞાન સે વિકલ હૈ વહી ઘઠાં પર ચાલ હૈ । જો મોહાધીન-આત્મજ્ઞાન સે રહિત હૈ-ચાહે વહ વ્યાકરણાદિક ંવં ન્યા-યશાસ્ત્રાદિ ગ્રન્થોં કા અધ્યેતા મી ક્યો ન હો વહ ચાલ-મૂર્ચ હી હૈ । સંયમ કો ગ્રહણ કર પશ્ચાત્ પ્રવલ મોહ કે ડદય સે અસંયમભાવ કો પ્રાપ્ત કરનેવાળે વડે સે વડે વિદ્વાન્ મી શાસ્ત્રોં મેં 'ચાલ' નામસે વર્ણિત કિયે ગયે હૈ । ઘઠી ચાત ટીકાકાર ઇસ પ્રકાર સે પ્રકટ કરતે હૈ--

છે બીજથી જ વૃક્ષ તૈયાર થાય છે, બીજ વિના નહિ આ સંસારરૂપ મહા-વૃક્ષ પણ આ કર્મરૂપ બીજનુ જ ફળ છે આથી એ સારાશ નિકળે છે કે—
બ્યારે કોઈ પણ નિમિત્તથી બીજની અકુરોત્પાદનશક્તિ નષ્ટ થઈ જાય છે ત્યારે તે જે પ્રકારે પોતાના કાર્યને નથી કરી શકતું તે પ્રમાણે રાગદ્વેષાદિક કષાયોના અભાવમા ગૃહીત કાર્મણવર્ગણાઓની પણ જીવને પરતન્ત્રાદિરૂપ કરવાની, અથવા જીવના જ્ઞાનાદિક ગુણોના ઘાત આદિ કરવાની શક્તિનો નાશ થાય છે આ 'આદાન'નું સ્રોત (માર્ગ) શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોના વિષયભોગ જ છે, આમા જે ગૃહ-આસક્ત છે તે આદાનસ્રોતોગૃહ છે, એટલે કર્મ આવવાના કારણોમા ગૃહ રહે છે. જે મોહના ઉદયથી પરપદાર્થોમા આસક્ત છે તેમજ હેયોપાદેયના જ્ઞાનથી વિકળ છે તે જ આ ઠેકાણે બાળ છે જે મોહાધીન-આત્મ-જ્ઞાનથી રહિત છે, ભલે તે વ્યાકરણાદિક અને ન્યાય શાસ્ત્રોના ગ્રંથોનો અભ્યાસી કેમ ન હોય તો પણ તે બાળ-મૂર્ખ જ છે મોટામા મોટો વિદ્વાન પણ સય-મને ગ્રહણ કરી પાછળથી પ્રબળ મોહના ઉદયથી અસંયમભાવને પ્રાપ્ત કરવા-વાળો મોટામા મોટો વિદ્વાન પણ શાસ્ત્રોમા 'બાળ' આ નામથી કહેવામા આવ્યો છે એ જ વાતને ટીકાકાર આ સારાંશથી પ્રગટ કરે છે—

“यः पूर्वं गृहीतप्रवृत्त्य पश्चाद् विषयभोगासक्तो भवति चेत्सर्हि स मूढः कदापि=दातमहमवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसम-वायसानं पश्यतीति।”

जो पहिले दीक्षा अंगीकार कर के भी फिर पीछे मोड़ के प्रचल उदय से पांच इन्द्रियों के विषयभोगों में आसक्त हो जाता है वह मूढ़ है—बाल है। उसके कर्म के बंध का उच्छेद—अवसान छान्नों मर्षों में भी नहीं हो सकता, और न वह मातापितादिकरूप सांसारिक मंषघ का अंत ही कर सकता है। ‘तमसि’ यह पद गाढ़ अधकार का बाधक सप्तमी विभक्ति का एक बचन है। जिस प्रकार अधकार में वर्तमान व्यक्ति अपने हाथ पर भी रखी हुई वस्तु का अवलोकन नहीं कर सकता है, ठीक इसी प्रकार मोड़रूप भाषान्धकार में रहा हुआ व्यक्ति भी अपनी आत्मा में ही समाये हुए अपने हितरूप कर्मव्य को नहीं जान सकता है। ऐसे जीव के लिये भगवान् तीर्थङ्कर प्रभु की उपदेशरूप वाणी का भी लाभ नहीं हो सकता है, कारण कि अनादिकालिक मिथ्यात्व से उसका विवेकज्ञान लुप्त हो रहा है, और प्रचल मोड़ के उदय से अर्हन्तप्रभु की वाणी का लाभ लेने में असमर्थ बन रहा है, अतः उस की उनकी वाणी के अवगण करने में अन्तरंग

“यः पूर्वं गृहीतप्रवृत्त्या पश्चाद् विषयभोगासक्तो भवति चेत्सर्हि स मूढः कदापि=दातमहमवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं नाप्नोति नापि मातापित्रादिसांसारिक-सम्बन्धावसानं पश्यतीति”

ने पहले दीक्षा अंगीकार करीने पछा मोड़ना प्रजग ऊदयधी पांच इन्द्रियों के विषयभोगों में आसक्त बंध जाय छे ते मूढ़ छे—आज छे, तेना कर्मना अधनो उच्छेद बाजो अवोभां पद्य नथी भेतो तेम व ते मातापितादिकरूप सवधनो पद्य अंत बायी शक्तो नथी।

तमसि अ पछ गाढ़ अधकारनु बाधक सातगी विभक्तितु ज्येकबचन छे ते प्रकार अधकारमा केरि भाष्यस पोतना काय छे तर पद्य लजेही वस्तुने देणी शक्तो नथी ते प्रकार मोड़रूप आव-अधकारमा रहेसो एव पद्य अत्रमाया रहेसो पोतना हितरूप कतव्यने बाझी शक्तो नथी, जेवा एवने भगवान् तीर्थङ्कर प्रभुनी उपदेश वाणीने पद्य लाभ बंध शक्तो नथी, कारण के अनादि कलना मिथ्यात्वधी तेनु विवेक-ज्ञान लुप्त थयेहु छे जने प्रजग मोड़ना ऊदयधी ते अर्हन्तप्रभुनी वाणीना लाभ दीवाम असमर्थ जनेस तेधी तेने तेमनी वाणीनु अवद्य करवाम अतरगधी प्रवृत्ति पद्य भती नथी अववा देधा-

ભાવતમમિ વર્તમાનસ્ય વાલસ્ય કથં સમ્યક્ત્વલાભાસમ્ભવઃ ? ઇતિ જિજ્ઞાસા-
યામાહ—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ પુરા પચ્છા મજ્ઞે તસ્સ કુઓસિયા ? ૧૬ ।

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ પુરા પશ્ચાત્ મધ્યે તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ મૃ૦ ૬ ॥

ટીકા—યસ્ય=મોહતમસિ વર્તમાનસ્ય જીવસ્ય પુરા=પૂર્વસ્મિન્ કાલે પશ્ચાત્=મરિણ્યત્કાલે નાસ્તિ=પૂર્વ સમ્યક્ત્વં નાભૂત્, અગ્રેડપિ નતદ્ મરિણ્યતિ, તસ્ય મધ્યે=મધ્યભવે-વર્તમાનજન્મનિ, કુતઃ સ્યાત્=કથં ભવેત્-ન મવેદિત્યર્થ । “આદા-
વન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેડપિ તત્તથા” ઇતિ લોકન્યાયસ્ય સર્વાનુભવસિદ્ધત્વા-
દિતિ ભાવઃ । અવ્યવહારરાશ્યપેક્ષયૈતત્ ।

સે પ્રવૃત્તિ હી નહીં હોતી । અથવા હેયોપાદેય કે વિવેક કે અયોગ્ય હોને
સે એસે મનુષ્ય કો સમ્યક્ત્વ કા લાભ અસમ્ભવ હૈ, યહ બી “આજ્ઞાયાઃ
લાભો નાસ્તિ” ઇસ વાક્ય કા અર્થ હોતા હૈ, ક્યોંકિ-‘આજ્ઞા’ કા ઢિતીય
અર્થ વોધિ-સમકિત હૈ ઉસકા લાભ એસે મનુષ્ય કો હોતા નહીં ॥ મૃ૦ ૬ ॥

ભાવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ વાલ જીવ સમ્યક્ત્વ કે લાભ સે વંચિત
રહતા હૈ । ઇસીકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરતે હેં—‘જસ્સ નત્થિ પુરા’ ઇત્યાદિ ।

મોહરૂપી અન્ધકાર મેં રહનેવાલા અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમેં ઓર
આગામી જન્મમેં સમકિત કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ તો મધ્ય અર્થાત્
વર્તમાન જન્મ મેં વહ સમકિત કા લાભ કર લેગા યહ કૈસે સમ્ભવ હો
સકતા હૈ ? અર્થાત નહીં હો સકતા । “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમા-
નેડપિ તત્તથા” જિસકી સત્તા આદિ ઓર અન્ત મેં નહીં હૈ ઉસકી સત્તા
વર્તમાન મેં બી નહીં હોતી હૈ । યહ એક સામાન્ય સા નિયમ હૈ ।

પાદેયના વિવેકને અયોગ્ય હોવાથી આવા મનુષ્યને સમ્યક્ત્વનો લાભ અસંભવ
છે આ પાણુ “આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ” આ વાક્યનો અર્થ થાય છે, કેમ કે
‘આજ્ઞા’નો બીજો અર્થ બોધિ એટલે સમકિત છે, તેનો લાભ આવા મનુષ્યને
થતો નથી ॥ સૂ૦ ૫ ॥

લાવ-અધકારમા રહેલા બાળ જીવ સમ્યક્ત્વના લાભથી વચિત રહે છે
આની પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરે છે—‘જસ્સ નત્થિ પુરા’ ઇત્યાદિ.

મોહરૂપી અધકારમા રહેનાર અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમા અને આવતા
જન્મમા સમકિતના લાભથી વચિત રહે છે, તો પછી મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મમા
તે સમકિતનો લાભ કરી લેશે, તેનો સંભવ કેવી રીતે હોય ? અર્થાત્ સંભવ
હોતો નથી “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેડપિ તત્તથા”—જેની સત્તા આદિ અને
અતમા નથી તેની સત્તા વર્તમાનમા પણ નથી હોતી, એ એક સામાન્ય નિયમ છે.

“ય” પૂર્વે ગૃહીતપ્રમુખ્ય પશ્ચાદ્ વિષયમોગાસક્તો મયતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢ કદાપિ=શતસહસ્રમવાન્તેઽપિ કર્મબન્ધોચ્છેદ્ નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિકમયઘાષસાનં પશ્યતીતિ ।”

જો પછિલે દીક્ષા અગીકાર કર કે મી ફિર પીછે મોહ કે પ્રબલ ઉદય સે પાંચ હનિયોં કે વિષયમોગોં મેં આસક્ત હો જાતા હૈ વહ મૂઢ હૈ—બાલ હૈ । ઉસકે કર્મ કે ઘઘ કા ઉચ્છેદ્—અવમાન લાચોં મયોં મેં મી નહીં હો સક્તા, ઓર ન વહ માતાપિતાદિકરૂપ સાંસારિક સંબંધ કા અંત હી કર સક્તા હૈ । ‘તમસિ’ યહ પદ ગાઢ અધકાર કા વાચક સસમી વિમત્તિ કા એક ઘષન હૈ । જિમ પ્રકાર અધકાર મેં વર્તમાન વ્યક્તિ અપને હાથ પર મી રમ્બી હુઈ ઘસ્ટુ કા અવલોકન નહીં કર સક્તા હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર મોહરૂપ માયાધકાર મેં રહા હુઆ વ્યક્તિ મી અપની આત્મા મેં હી સમાયે હુણ અપને હિતરૂપ કર્તવ્ય કો નહીં જાન સક્તા હૈ । જેસે જીવ કે લિયે મગ ઘાત્ તીર્થકર પ્રમુ કી ઉપદેશરૂપ વાળી કા મી લાભ નહીં હો સક્તા હૈ, કારણ કિ અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ સે ઉસકા વિવેકજ્ઞાન છુસ હો રહા હૈ, ઓર પ્રબલ મોહ કે ઉદય સે અર્હન્તપ્રમુ કી વાળી કા લાભ લેને મેં અસમર્થ ઘન રહા હૈ, અતઃ ઉમ કી ઉનકી વાળીકે અવળ કરને મેં અન્તરંગ

“ય” પૂર્વે ગૃહીતપ્રમુખ્ય પશ્ચાદ્ વિષયમોગાસક્તો મયતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢ કદાપિ=શતસહસ્રમવાન્તેઽપિ કર્મબન્ધોચ્છેદ્ નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિક-સમ્બન્ધાવસાનં પશ્યતીતિ ।”

જે પહેલા દીક્ષા અગીકાર કરીને પણ મોહના પ્રબળ ઉદયથી પાંચ હનિયોના વિષયોમોમા આસક્ત થઈ બાંધ છે તે મૂઢ છે—બાળ છે તેના કર્મના બંધનો ઉચ્છેદ લાભે બેવોમાં પણ નથી થતો તેમ જ તે માતાપિતાદિકરૂપ સંબંધોના પણ અંત લાવી શકતો નથી.

“તમસિ” આ પદ ગાઢ અધકારનું વાચક સાતમી વિમત્તિનું એકવચન છે જે પ્રકારે અધકારમાં કેટલું આવુંસ પોતાના હાથ ઉપર પણ રાખેલી વસ્તુને ટેળી શકતો નથી તે પ્રકારે મોહરૂપ માયા-અધકારમાં રહેલો જીવ પણ આત્મામાં રહેલા પોતાના કિતરૂપ કર્તવ્યને બાળી શકતો નથી, એવા જીવને ભગવાન તીર્થકર પ્રમુની ઉપદેશ વાળીને પણ લાભ થઈ શકતો નથી કારણ કે અનાદિ કાળના મિથ્યાત્વથી તેનું વિવેકજ્ઞાન છુસ થયેલું છે અને પ્રબળ મોહના ઉદયથી તે અર્હન્તપ્રમુની વાળીનો લાભ લેવામાં અસમર્થ બનેલ છે, તેથી તેને તેમની વાળીનું અવળ કરવામાં અતરંગથી પ્રવૃત્તિ પણ થતી નથી, અથવા દેવા-

યસ્ય કાલત્રયેऽપિ ભોગેચ્છા નાસ્તિ, સ કિં શૂતઃ સ્યાદિત્યાદ્-‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે હુ પન્નાણમંતે બુદ્ધે આરંભોવરણ । સમ્મમેયંતિ પાસહ । જેણ વંધં વહં ઘોરં પરિયાવં ચ દારુણં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—સ હુ પ્રજ્ઞાનવાન્ બુદ્ધઃ આરમ્મોપરતઃ । સમ્યગેતદિતિ પश्यत । येन बन्धं बंधं घोरं परित्यापं च दारुणम् ॥ सू० ७ ॥

ટીકા—હુ=યતઃ-ભોગામિલાપરદિત્તઃ, તસ્માત્ સ પ્રજ્ઞાનવાન્=જીવાજીવાદિ-પદાર્થાના સમ્યગ્જ્ઞાતા, અત એવ બુદ્ધઃ=તત્ત્વજ્ઞઃ, આરમ્મોપરતઃ=આરમ્મઃ=સાવધ-વ્યાપારસ્તસ્માદુપરતો=નિવૃત્તઃ । એતદ્=આરમ્મોપરમણં, સમ્યક્=સમ્યક્ત્વમસ્તિ । સમ્યક્ત્વે સતિ દિ આરમ્મનિવૃત્તિરુપજાયતે, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વકાર્યતયાऽऽરમ્મોપ-

વાન ખી ટીક હૈ; जिसके मोहनीय कर्म का उपशम हो चुका है उस व्यक्ति के लिये भोगेच्छा-विषयसुखों को भोगने की लालसा-हो ही कैसे सकती है? भोगेच्छा यह मोहनीय कर्म का ही एक कार्य है, अतः जब मोहनीय कर्म ही उपशम अवस्थामें है तब भोगेच्छारूप कार्य का आविर्भाव हो भी कैसे सकता है ॥ सू० ६ ॥

जिसके त्रिकाल में भी भोगेच्छा नहीं है उसकी प्रशंसा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से हू’ इत्यादि ।

भोगोंको भोगनेकी अभिलाषासे रिक्त होने के कारण वह संयमी जीवाजीवादिक नव तत्त्वों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञाता बन कर तत्त्वज्ञ होता हुआ आरम्भ-सावधव्यापाररूप प्रवृत्ति-से परे हो जाता है, यही सम्यक्त्व है । यद्यपि आरम्भनिवृत्ति, समकित का कार्य है; क्यों

વાત પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે ?, ભોગેચ્છા તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે બ્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવસ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્-થઈ શકતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતા સૂત્રકાર કહે કે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાથી રિક્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞાનની આરભ-સાવધ વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ જાય છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જે કે આરભની

પટ્ટા—યસ્ત્વતીત સુસં ન સ્મરતિ, નાપિ ભવિષ્યત્કાલિક ધાઠ્ઠતિ, તસ્ય વર્ત માનસુલેડપિ રાગો નૈવ સ્યાદિત્યાદ—‘અસ્ત નસ્થિ’ ઇત્યાદિ । યસ્ય મોગવિપાકં જ્ઞાનતઃ, પુરા=પૂર્વ—પૂર્વમુક્તસુન્નાતુસ્મરણં નાસ્તિ, પથાત્=પથાદ્ભાવી—માગામિ મોગામિત્યાપા નાસ્તિ, તસ્ય મધ્યે=વર્તમાનકાળે કુત મોગેચ્છા સ્યાત્ । મોહનીય કર્મોપશ્મમાતસ્ય મોગેચ્છા નૈવ મવદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૬ ॥

પ્રશ્ન—જિન્હોં ને પૂર્વ મેં સમક્ષિત પ્રાપ્ત નહીં કિયા હૈ ઓર ભવિષ્ય મેં જો નહીં પ્રાપ્ત કરેંગે, તેસે હાં જીવ તો વર્તમાનમેં સમક્ષિત કી પ્રાપ્તિ કિયા કરતે હૈં । યદિ “આદાવન્તેડપિ યન્નાસ્તિ વર્તમા નેડપિ તત્તથા” યહ અટલ નિયમ માન લિયા જાવેગા તો ફિર કિસી બી જીવકો સમક્ષિત કા લાભ નહીં હો સકેગા ?

ઉત્તર—યહ કથન અન્યવહાર રાશિમેં રહનેવાલે જીવોં કી અપેક્ષા સે હી સમક્ષના વાહિયે । વ્યવહાર રાશિમેં રહે હુણ જીવોંકી અપેક્ષાસે નહીં ।

અથવા ઇસ મુદ્રકા વ્યાખ્યાન ઇમ પ્રકારસે બી હોતા હૈ—

મોગોં કે વિપાક કો મહા કષ્ટપદ જ્ઞાન કર જો પૂર્વમેં મોગે હુણ પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયસુખ કા સ્મરણ તક નહીં કરતા હૈ ઓર ઇસ સુખ કી ભવિષ્યત્કાલિક પ્રાપ્તિ કી ધાઠ્ઠા સે મર્ચયા દૂર હૈં, તેસે વ્યક્તિ કો વર્ત માનકાલ મેં પ્રાપ્ત બહ સુખ મોગેચ્છારૂપ રાગ કા કારણ કૈસે હો સકતા હૈં ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા ।

પ્રશ્ન—એએએ પૂર્વમા સમક્ષિત પ્રાપ્ત નથી કર્યું અને આવતા કાળમાં પણ એએ સમક્ષિત પ્રાપ્ત કરી નહિ આ પ્રકારના જુએ વર્તમાનમા સમક્ષિતની પ્રાપ્તિ કરે છે ને “આદાવન્તેડપિ યન્નાસ્તિ વર્તમાનડપિ તત્તથા” આ અટલ નિયમ માનવામા આવે તો પછી કેમ પણ જીવને સમક્ષિતનો લાભ થઈ શકે નહિ ?

ઉત્તર—આ કથન અન્યવહાર—રાશિમા રહેનાર જીવોની અપેક્ષાથી જ સમક્ષતું નોંધીને અન્યવહાર—રાશિમા રહેલા જીવોની અપેક્ષાએ નહિ.

અથવા આ મુદ્દનું વ્યાખ્યાન આ પ્રકારે પણ થાય છે—એએના વિપાકને મહા કષ્ટપદ બોલને જે પૂર્વમા મોગવેલા પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયસુખનું સ્મરણ સુદાત હતો નથી અને તે સુખની ભવિષ્યમાં પણ પ્રાપ્તિની વાછાથી મર્ચયા દૂર । એવા જીવને વર્તમાનકાળમાં પ્રાપ્ત ત સુખ મોગેચ્છાકૃપ સમનું કારણ કેવી રીતે હોઈ શકે ? અર્થાત્ નથી શકું

यस्य कालत्रयेऽपि भोगेच्छा नास्ति, स किंभूतः स्यादित्याह—‘से हु’ इत्यादि ।

मूलम्—से हु पन्नाणमंते बुद्धे आरंभोवरए । सम्ममेयंति पासह । जेण बंधं वहं घोरं परियावं च दारुणं ॥ सू० ७ ॥

छाया—स हु प्रज्ञानवान् बुद्धः आरम्भोपरतः । सम्यगेतदिति पश्यत । येन बन्धं वधं घोरं परितापं च दारुणम् ॥ सू० ७ ॥

टीका—हु=यतः—भोगाभिलाषरहित , तस्मात् स प्रज्ञानवान्=जीवाजीवादि-पदार्थानां सम्यग्ज्ञाता, अत एव बुद्धः=तत्त्वज्ञः, आरम्भोपरतः=आरम्भः=सावद्य-व्यापारस्तस्मादुपरतो=निवृत्तः । एतद्=आरम्भोपरमणं, सम्यक्=सम्यक्त्वमस्ति । सम्यक्त्वे सति हि आरम्भनिवृत्तिरुपजायते, तस्मात् सम्यक्त्वकार्यतयाऽऽरम्भोप-

वात भी टीक है; जिसके मोहनीय कर्म का उपशम हो चुका है उस व्यक्ति के लिये भोगेच्छा-विषयसुखों को भोगने की लालसा-हो ही कैसे सकती है? भोगेच्छा यह मोहनीय कर्म का ही एक कार्य है, अतः जब मोहनीय कर्म ही उपशम अवस्थामें है तब भोगेच्छारूप कार्य का आविर्भाव हो भी कैसे सकता है ॥ सू० ६ ॥

जिसके त्रिकाल में भी भोगेच्छा नहीं है उसकी प्रशंसा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से हु’ इत्यादि ।

भोगों को भोगने की अभिलाषा से रिक्त होने के कारण वह संयमी जीवाजीवादिक नव तत्त्वों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञाता बन कर तत्त्वज्ञ होता हुआ आरम्भ-सावद्यव्यापाररूप प्रवृत्ति-से परे हो जाता है, यही सम्यक्त्व है । यद्यपि आरम्भनिवृत्ति, समकित का कार्य है; क्यों

वात પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે ?, ભોગેચ્છા તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે જ્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવસ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્-થઈ શકતો નથી ॥ સૂ. ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાથી રિક્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞ બનીને આરભ-સાવધ વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ બચે છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જે કે આરભની

રમણમપિ સમ્યક્સ્વચ્છન્દ્યન્યપદેશ્યમિતિ માન' । इति=एष पश्यत=पूर्यं भानीत । यत -
येन=आरम्भोपरमणरूपेण कारणेन घोर=घोरदुःसज्जनकं कर्मबन्धं, बंधं, दास्यं=
दुःखं परितापं=आरीरं मानस च दुःखं नाप्नोतीत्यर्थ , तस्मात् सकलसाधव्यपापा
रेभ्यः निवर्तितव्यमिति भाव । यद्वा=येन=आरम्भेण साधयानुष्ठानेन घोरं बन्धं बंधं
दास्यं परितापं च प्राप्नोति तस्मादारम्भादुपरता भवेदित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

કિ સમક્ષિત કે હોને પર હી આરમ્મનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો ખી કારણ મેં
કાર્ય ક ઉપચાર સે હી આરમ્મનિવૃત્તિ કો સમક્ષિત કહા ગયા હૈ, યેસા
સમક્ષના ચાહિયે ।

જીવ હસ સાધય વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મબંધ, બંધ ઔર
ઔર દુ સહ શારીરિક ઇંધ માનસિક કષ્ટો સે સદા યચતા હૈ, હસ લિયે
આત્મહિતૈષી કા કર્તવ્ય હૈ કિ બહ હસ સાધયવ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે
સદા વૃર રહે ।

વિશેષાર્થ—યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાધય વ્યાપાર સે જીવો
કે પરિણામો મેં કુર્વત્તિ સદા જાગૃત રહતી હૈ । ડસસે જીવ તરહ-તરહ
કે સાધનો કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો વિતા દેતા હૈ । યેસા કયો
હોતા હૈ ? જય હમ હસકા મૂલ્ય નિરીક્ષણ કરસે હૈ તો હમેં હસ કી તહ
કા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જાતા હૈ કિ બહ યહ વિષયમોગેચ્છા હી હૈ ।

હસકે કલમેં ફસા જુઝા જીવ જ્ઞાતા ઇંધ તસ્વજ બનન કા ડોંગ હી
કરતા હૈ । ડમકે પાસ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ ખી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમક્ષિતનુ કાર્ય છે કારણ કે સમક્ષિતના યવાથી જ આરભનિવૃત્તિ થાય
છે, તે પછી કારણના કાર્યના ઉપચારથી આરભનિવૃત્તિને જ સમક્ષિત કહેવામા
આવેલ છે એમ સમજવું જોઈએ.

જીવ આ સાધય-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કમ બંધ, બંધ અને હું સહ શારી
રિક માનસિક કષ્ટોથી સહા બધે છે, માટે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે તે સહા
આ સાધય-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાધય વ્યાપારથી જીવોના પરિ
ણામોમા સહા કુર્વત્તિ બજૂત રહે છે, તે થકી જીવ તરહ-તરહના સાધનોને
એકત્રિત કરવામા જ પોતાના જીવનને વ્યતીત કરી દે છે એમ કેમ બને છે ?
આરે અમા તેનું સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે અમાને લોકસપક્ષે તેનું
સમાધાન મળી બાધ છે કે તે આ વિષય લોગોજ છે

એની પક મા હસેલાં જીવ નાતા અને તસ્વજ બનવાના ડોંગ જ કરે છે
તેની પાસે પોતાના હિતને માટે કાંઈ પછી હોતું નથી, પોતાના વિષય કયામની

અપને વિપયકપાય કી પુષ્ટિ જૈસે ખી હો, ઉસકે લિયે વહ વિહિત અ-
વિહિત સવ તરહ કે ઉપાયોં કો કામ મેં લાના હૈ । ડપર સે હી વહ સાધુ-
વેષધારી હૈ, ખીતર સે વહ અપને સચ્ચે હિતકે સાધનોં કા નાશ કરતા હૈ ।
સંસાર મેં ધર્મકા પતન ખી ઇમી કી ઓટ લેકર હુણ હૈં ઓર હો
રહે હૈં તથા આગે ખી હોંગે ।

યહ વડી વલવની વ્યાધિ હૈ । ડસકી ચિકિત્સા સદ્ગુરુ હી કર સકતે
હૈં, અતઃ ડનકા કથન હૈ કિ સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ ડસકી ચિ-
કિત્સા કરાને કે લિયે અપને મેં યોગ્યતા લાવે । યહ યોગ્યતા ંક હી ભવમેં
જીવ કો પ્રાપ્ત નહીં હો સકની । જો ખી વર્તમાન ભવમેં યોગ્ય હુણ હૈં વે
સવ પૂર્વકે આરાધક જીવ થે, અતઃ ડસ વ્યાધિ કી ચિકિત્સા કરાને કી
યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરને કી જીવમેં કટિબદ્ધતા હોની ચાહિયે । યહ કટિબદ્ધતા
હી સમકિત હૈ, ચાહે યહ સ્વભાવ સે હો યા પરકે ઉપદેશ સે ।

યહ તો નિશ્ચિત હૈ કિ ડસ પ્રકાર કી યોગ્યતા સે સંપન્ન આત્મા ભોગોં
મેં લાલસાવાલા નહીં હોતા । ડસકી પ્રવૃત્તિ વહાં પર તપે હુણ લોહે પર પાંવ
રખને જૈસી હી હોતી હૈ, અતઃ ધીરે ૨ અપની ડન્નતિ કરતા હુઆ વિષય-
ભોગેચ્છા સે સદા કે લિયે દૂર હો જાતા હૈ ઓર સાવચ વ્યાપારોં કો અનેક

પુષ્ટિ માટે તે વિહિત અવિહિત બધા પ્રકારના ઉપાયો કરે છે ઉપરથી જ તે
આધુવેષધારી છે પણ અતરથી તે પોતાના સાચા હિતના સાધનોના નાશ જ કરે છે
સંસારમા ધર્મનું પતન પણ આવા જીવોના નિમિત્તે થયું છે, થઈ રહેલું
છે અને આગળ પણ થશે

આ મોટી બળવાન વ્યાધિ છે એની ચિકિત્સા સદ્ગુરુ જ કરી શકે છે.
માટે તેમનું કથન છે—સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ તેની ચિકિત્સા કરાવવા
માટે પોતાનામા યોગ્યતા લાવે યોગ્યતા એક જ ભવમા જીવને પ્રાપ્ત થતી નથી.
જે વર્તમાન ભવમા યોગ્ય થયેલ છે તે બધા પૂર્વના આરાધક જીવ હતા, માટે
આ વ્યાધિની ચિકિત્સા કરાવવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવા માટે જીવમા કટિબદ્ધતા
હોવી જોઈએ આ કટિબદ્ધતા જ સમકિત છે, ભલે તે સ્વભાવથી હોય અગર
પારકાના ઉપદેશથી હોય.

આ નિશ્ચિત છે કે આવી યોગ્યતાથી સંપન્ન આત્મા ભોગોમા લાલસા રાખનાર
નથી થતા તેની પ્રવૃત્તિ ત્યા તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા જેવી થાય છે, માટે
તે ધીરે ધીરે પોતાની યુક્તિ-પ્રયુક્તિથી વિષય ભોગેચ્છાથી સદાને માટે દૂર

રમણમપિ સમ્યક્ત્વશબ્દવ્યપદશ્યમિતિ માય' । इति=एष पश्यत=यूयं भानीत । यत -
 यन=आरम्भोपरमणरूपेण कारणेन घोरं=घोरदुःखजनकं कर्मबन्धं, बंधं, दास्य=
 दुःख परिताप=शरीरं मानस च दुःखनाप्नोतीत्यर्थ , तस्मात् सकृत्सावधयापा
 रेभ्यो निर्वर्तितव्यमिति भाव । यद्वा-येन=आरम्भेण सावधानुष्ठानेन घोरं बन्धं बंधं
 दास्य परिताप च प्राप्नोति तस्मादारम्भादुपरता भवेदित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

કિ સમક્તિ કે હોને પર હી આરમ્મનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો ખી કારણમેં
 કાર્યક ઉપચાર સે હી આરમ્મનિવૃત્તિ કો સમક્તિ કહા ગયા હૈ, એમા
 સમક્તના ચાહિયે ।

જીવ હસ સાવચ વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મબંધ, બંધ ઔર
 ઔર દુઃસહ શારીરિક ઇયં માનસિક કષ્ટો સે સદા વચતા હૈ, હસ લિયે
 આત્મહિતૈવી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ સાવચવ્યાપારસ્ય ત્રિયા સે
 સદા દૂર રહે ।

વિશેષાર્થ—વહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાવચ વ્યાપાર સે જીવો
 કે પરિણામો મેં કુર્ષ્ણિ સદા જાયત રહતી હૈ । ઉમસે જીવ તરહ-તરહ
 કે સાધનો કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો ચિતા વેતા હૈ । એસા ક્યો
 હોતા હૈ ? જય હમ હસકા મૂઝમ નિરીક્ષણ કરતે હૈ તો હમેં હમ કી તહ
 વા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જામા હૈ કિ વહ વહ વિષયમોગેચ્છા હી હૈ ।

હસકે પદમેં પમા દુઃખા જીવ જ્ઞાતા ઇયંતસ્વજ વનને કા હોંગ હી
 કરમા હૈ । ઉમક પામ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ બી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમક્તિનુ કાય છે કામ્ય કે સમક્તિના યથાધીજ આરમ્મનિવૃત્તિ યથ
 છે તે પદ્ય કારણમા કાયના ઉપચારથી આરમ્મનિવૃત્તિને જ સમક્તિ કહેવામા
 આવેલ છે એમ સમજવું જોઈએ.

૭૫ આ સાવચ-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કર્મબંધ, બંધ અને દુઃસહ શારી
 રિક માનસિક કષ્ટોથી તથા બંધ છે, માટે આત્મહિતૈવીનુ કર્તવ્ય છે કે તે સદા
 આ સાવચ-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાવચ વ્યાપારથી છવોના પરિ
 ત્યાગમા સદા ઉત્તિ જાયત રહે છે તે થદી જીવ તરહ-તરહના સાધનોને
 એકત્રિત કરવામા જ પેનાના જીવનને વ્યતીત કરી દે છે. એમ કેમ બને છે ?
 ત્યારે અમા તનુ મૂઝમ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે અમાને યોગસપક્ષે તનુ
 ગ્રાપ્તાન મળી જાય છે કે ને આ વિષય જોગ્યજ છે.

અની પદ્ય મા હમેણાં જીવ પાના અને તત્વજા બનવાના રોગ જ કરે છે
 તેની પમે પેનાના દિનને માટે કાંઈ પદ્ય જાનું નથી, પેનાના વિષય કાપવાની

शब्द का अर्थ यही है कि जिमसे जीव कर्मों का ग्रहण करे। अर्थात् ममत्वभावसे ग्रहण करने को परिग्रह कहते हैं। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कपाय और योग, ये सब अन्तरङ्ग-परिग्रह हैं। इन्हींसे जीव नवीन २ कर्मों का बन्ध किया करता है।

जिस प्रकार नौकामें पानी आने का कारण छिद्र होता है, उसी प्रकार आत्मामें नवीन २ कर्मों के आनेके लिये परिग्रह छिद्र के स्थानापन्न माना गया है। जैसे-मिथ्यादर्शनजन्य कर्मों का बन्ध (१) प्रथम गुणस्थान तक; अविरतिजन्य कर्मों का बन्ध (४) चतुर्थ गुणस्थान तक, प्रमादजन्य कर्मों का बन्ध (६) षष्ठ गुणस्थान तक, कपायजन्य कर्मों का बन्ध (१०) दशवें गुणस्थान तक, और योगजन्य कर्मों का बन्ध सयोगकेवलीनामक (१३) तेरहवें गुणस्थान तक जीवोंके होता है। स्रोत शब्द का अर्थ प्रवाह भी है। जिस प्रकार जलाशयों में प्रवाह के द्वारा पानी आता है उसी प्रकार अंतरङ्ग और बहिरङ्ग परिग्रहरूप प्रवाहद्वारा आत्मामें नवीन २ कर्मों का बन्ध हुआ करता है, अतः संयमी जीव बाह्य परिग्रह से सर्वथा विरक्त हो जाता है। अन्तरङ्ग परिग्रह से भी वह अपने पदके अनुसार विरक्त ही रहता है। इसीलिये सूत्रकार कहते हैं कि जिस संयमी मुनिका लक्ष एक मोक्ष प्राप्ति करने का ही है वह मनुष्यलोकमें रहता हुआ भी सावध

अर्थ એજ છે કે જેનાથી જીવ કર્મોને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોનો બંધ કરે છે જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કપાયજન્ય કર્મોનો બંધ દશમાં ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમાં ગુણસ્થાન સુધી જીવોને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહ-રૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ બાંધ છે અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે પોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

शब्द का अर्थ यही है कि जिससे जीव कर्मों का ग्रहण करे। अर्थात् ममत्वभावसे ग्रहण करने को परिग्रह कहते हैं। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये सब अन्तरङ्ग-परिग्रह हैं। इन्हींसे जीव नवीन २ कर्मों का बन्ध किया करता है।

जिस प्रकार नौकामें पानी आने का कारण छिद्र होता है, उसी प्रकार आत्मामें नवीन २ कर्मों के आनेके लिये परिग्रह छिद्र के स्थानापन्न माना गया है। जैसे-मिथ्यादर्शनजन्य कर्मों का बन्ध (१) प्रथम गुणस्थान तक; अविरतिजन्य कर्मों का बन्ध (४) चतुर्थ गुणस्थान तक, प्रमादजन्य कर्मों का बन्ध (६) षष्ठ गुणस्थान तक, कषायजन्य कर्मों का बन्ध (१०) दशवें गुणस्थान तक, और योगजन्य कर्मों का बन्ध सयोगकेवलीनामक (१३) तेरहवें गुणस्थान तक जीवोंके होता है। स्रोत शब्द का अर्थ प्रवाह भी है। जिस प्रकार जलाशयों में प्रवाह के द्वारा पानी आता है उसी प्रकार अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग परिग्रहरूप प्रवाहद्वारा आत्मामें नवीन २ कर्मों का बन्ध हुआ करता है, अतः संयमी जीव बाह्य परिग्रह से सर्वथा विरक्त हो जाता है। अन्तरङ्ग परिग्रह से भी वह अपने पदके अनुसार विरक्त ही रहता है। इसीलिये सूत्रकार कहते हैं कि जिस संयमी मुनिका लक्ष एक मोक्ष प्राप्ति करने का ही है वह मनुष्यलोकमें रहता हुआ भी सावद्य

अर्थ એ જ છે કે જેનાથી જીવ કર્મોને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોનો બંધ કરે છે જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે. મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કષાયજન્ય કર્મોનો બંધ દશમાં ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમાં ગુણસ્થાન સુધી જીવોને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહ-રૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ બંધ છે અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે ચોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

નનુ કર્મોપાદાનરૂપં સ્રોતઃ કિં કૃત્વા પ્રતિચ્છેદ્યમિતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—
'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—કમ્મુણો સફલત્ત દદ્દટ્ટુણ તઓ નિજ્જાહ વેયધી ॥ સૂ. ૯ ॥

જ્ઞાયા—કર્મણઃ સફલત્ત્વં દટ્ટા સતો નિર્ણતિ વેદવિત્ ॥ સૂ. ૯ ॥

ટીકા—મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકપાયયોગે ક્રિયતે ઇતિ કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ

કમ્, તસ્ય, સફલત્ત્વ=જ્ઞાનાવરણાદિસ્વસ્વપ્રજનનાવશ્યમ્માય, દટ્ટા વેદવિત્—વેદયે
તત્સાન્યનેનેતિ વેદઃ=આર્હતાગમ, સ વેતીતિ વેદવિત્—સર્વજ્ઞોપદેક્ષાન્યસમ્યગ્જ્ઞાન-
ધાનિત્યર્થઃ, તત્ત=કર્મણ કર્મબન્ધકરણાત્ નિર્ણતિ=પૂરીનવતિ, કર્મબન્ધનનિબન્ધન-
સફલસાવધણ્યાપારં પરિવર્જયતીત્યર્થ ॥ સૂ. ૯ ॥

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે । જિસસે જીવોં કો ઘોઢે સે બી કષ્ટાદિક
કા અનુભવ હો ગેમી કોઈ બી ક્રિયા વહ ન કરે । સારવણક્રિયા કરને
ઘાલે મનુષ્યોં કે સમ્યક્કેમેં રહતે હુણ બી અપને કો ડમ વ્યાપાર સે બચા
કર રહના યહી તો સંયમી મુનિકી વિશેષતા હૈ ।

નિષ્કર્મદર્શી—હસ શબ્દ કા અર્થ મોક્ષામિલાપી હૈ, ક્યોં કિ કર્મોં
કે સમ્યક્કે સે રહિત જો સ્થાન હૈ વહ નિષ્કર્મ હૈ, ઉમ સ્થાન કો દેવને
કા જિસ કા સ્વભાવ હૈ તેસા જીવ નિષ્કર્મદર્શી કહલાતા હૈ । સૂત્રમેં
“ચ” શબ્દ અન્નરક્ષ પરિગ્રહ કા યોગક હૈ ॥ સૂ. ૮ ॥

સંયમી મુનિ કયા મમજ્ઞ કર કર્મોં કે જાને મેં કારણરૂપ હસ સ્રોત
કો યત્ન કર ? હસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે હુણ સૂત્રકાર
કહતે હૈ—'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

કર્મોં કો અપને ૨ ફલ કા લેનેવાલા જાનકર ઘહ જ્ઞાની—સંયમી મુનિ
ડન કર્મોં સે ઝોર ડનકે કારણોં સે દૂર હી રહતા હૈ ।

વ્યાપારથી સદા વિરક્ત રહે. જેનાથી છુલોને થાય પણ કષ્ટાદિકનો અનુભવ થાય
તેવું કોઈ કાર્ય તેઓ ન કરે. સાબધ—વ્યાપાર કરવાવાળા મનુષ્યોનાં સ પર્કમાં રહેવા છતાં
પણ પેતાની બાતને તેના વ્યાપારથી દૂર રાખવું એ જ સચમી મુનિની વિશેષતા છે.

‘નિષ્કર્મદર્શી’ આ શબ્દનો અર્થ મોક્ષામિલાપી છે કારણ કે કર્મોના અવધથી
રહિત એ સ્થાન છે તે નિષ્કર્મ છે. તે સ્થાનને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેનો જીવ
નિષ્કર્મદર્શી કહેવાય છે. સૂત્રમાં “ચ” શબ્દ અતરંગ પરિચયનો યોગક છે ॥ સૂ. ૮ ॥

મું સમજીને સચમી મુનિ કર્મોને આચવાના કારણરૂપ આ સ્રોતને બંધ કરે ?
આ પ્રશ્નની છત્રાસાનુ સમાધાન કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘કમ્મુણો’ ઇત્યાદિ.

કર્મોને પાતપેતાના કળેને દેવાવાળા બાળીને તે સચમી મુનિ તે કર્મોથી
બંને તેના કારણથી દૂર જ રહે છે.

समैव नायमागतः किन्तु सर्वेषामर्हतामिति दर्शयितुं भगवान् प्राह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

यद्वा—सम्यक्त्वमुक्तं, निरवयं तपश्चारित्रमपि, इदानीं तत्फलमाह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मूलम्—जे खलु भो ! वीरा समिया सहिया सयाजया संघ-
डदंसिणो आओवरया अहातहा लोयं उवेहमाणा पाईणं पढीणं
दाहिणं उईणं इय सच्चंसि परिविचिट्टिसु ॥ सू० १० ॥

छाया-ये खलु भो ! वीराः समिताः सहिताः सदायता संघटदर्शिनः, आत्मोपरताः
यथातथा लोकमुपेक्षमाणाः प्राचीनं प्रतीचीनं दक्षिणम्, इति सत्ये परिन्यस्थुः ॥ १० ॥

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कपाय और योगों के द्वारा जो किये जाते हैं वे कर्म हैं । ये ज्ञानावरणीयादिक के भेद से आठ प्रकारके हैं । आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध अनादिकाल से हो रहा है । कोई भी कर्म जब तक अपना फल नहीं देता तब तक वह आत्मा से नष्ट नहीं होता; यह नियम है, अतः वह वेदवित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मोंसे और उन कर्मों के कारण मिथ्यादर्शनादिकोंसे, तथा मिथ्यादर्शनादिके कारण कपायों से सदा दूर ही रहता है । अर्थात् कर्मबन्ध के कारणभूत समस्त सावध व्यापार का वह त्याग कर देता है ॥ सू० ९ ॥

इस कथन में सब तीर्थङ्करों की सम्मति प्रदर्शित करते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित को कहा और निर्दोष तप चारित्र को भी कहा; अब उसका फल कहते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कपाय अने योगद्वारा नष्ट करवाभा आवे छे ते कर्म छे ते ज्ञानावरणीयादिकना लेदथी आठ प्रकारना छे आत्माना साथे तेना संध अनादि काणथी थछ रह्यो छे कोइ पणु कर्म न्या सुधी पोतानु इण नथी आपतु त्या सुधी ते आत्माथी नष्ट थतुं नथी, ओ नियम छे तेथी ते वेद-वित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मोथी अने ते कर्मोना कारण मिथ्या-दर्शनादिको अने मिथ्यादर्शनादिकोना कारण कषायोथी सदा दूर रह्ये छे अर्थात् कर्मणधना कारणभूत समस्त सावध व्यापारनो ते सदा त्याग करी दे छे ॥ सू० ९ ॥

आ कथनमा णधा तीर्थङ्करोनी समति प्रदर्शित करे छे—‘जे खलु भो’ इत्यादि अथवा समकित कछु, निर्दोष तप चारित्र पणु कछु, उवे तेनु इण कछे छे—‘जे खलु भो’ इत्यादि

ટીકા—‘મો’ इति शिष्यामन्त्रणार्थ । स वक्ष्यमाणविषये शिष्यस्य पुनः पुनरवधानार्थमामन्त्रणं द्योतयति । मोः शिष्य ! ये केषन वीरा = कर्मविदारणार्थं त्साहवन्तः, समिताः = समितियुक्ताः, सहिताः = स्वहितार्थमुपयुक्ताः सम्यग्ज्ञानादियुक्ता वा, सदायता = सर्वदा समयमाराधनसाधनानां, संघटक्षिन्ः = हेयोपादेयस्य निरन्तरदक्षिन्ः, यद्वा = अन्यावाधानन्दस्वरूपमोक्षामिलापिणः, आत्मापरताः—

પાંચ સમિતિયોં મેં છલલીન, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં હચમી અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોં સે યુક્ત, સર્વદા સંયમ કી આરાધના કરનેમેં સા ઘઘાન, હેયોપાદેય કે વિવેક સે યુક્ત અથવા અધ્યાપાધ-આનન્દ-સ્વરૂપ મોક્ષકે અમિલાપી કપાપવિશિષ્ટઆત્માસે સદા પરે રહનેવાલે ઔર યથાવસ્થિતકર્મલોક કી અથવા શબ્દાદિવિષયોં કી સદા ઉપેક્ષા કરને વાલે, કર્મોં કો વિદારણ કરનેમેં ઉત્સાહગાલી જો કોઈ મધ્ય વીર પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં હુપે હેં વે સય સત્ય-મોક્ષસ્થાનમેં સ્થિત હા ચુકે હેં ।

સૂત્રકાર હસ સૂત્ર મેં નિર્દોષ તપ-ચારિત્ર કી આરાધના કા ફલ પ્રકટ કરતે હુપ શિષ્યોં સે કહ રહે હેં કિ જિન મધ્યવીરોં ને પાંચ સમિતિયોં કા નિર્દોષ રીતિસે પાલન કિયા હૈ, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં જિન્હોંને કુછ મી નહીં પાકી રહ્વા, નિર્દોષ સંયમ કી આરાધના કરનેમેં હી જિન્હોં ને અપને જીવન કો ચિતાયા, હેયોપાદેય કે સુન્દર વિવેક સે જિન્હોંને મોહ-મમત્વ પર વિજય પ્રાપ્ત કી, જિન્હોંને કપાપ કે ઉદય કો

પાંચ સમિતિઓમાં સમવાવાળા, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં હચમી, અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોથી યુક્ત, સર્વદા સંયમની આરાધના કરવામાં સાધના, હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત, અથવા અન્યાવાધ-આનન્દસ્વરૂપ મોક્ષના અભિલાષી, કપાપવિશિષ્ટ આત્માથી સદા દૂર રહેવાવાળા, અને યથાવસ્થિત કર્મ દેહની અથવા શબ્દાદિવિષયોની સદા ઉપેક્ષા કરવાવાળાં કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહશાળી જે શબ્દ વીરો પૂર્વ પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશાઓમાં યથા છે તે બધા સત્ય-મોક્ષસ્થાનમાં સ્થિત થઈ રહેલ છે

સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં નિર્દોષ તપ-ચારિત્રની આરાધનાનું ફળ પ્રકટ કરીને શિષ્યોને કહે છે કે જે શબ્દ વીરોએ પાંચ સમિતિઓનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કર્યું છે આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં જેમણે કાંઈ પણ બાકી ન રાખ્યું નિર્દોષ સંયમની આરાધના કરવામાં જ જેમણે પોતાના જીવનને વીતાવ્યા, હેયોપાદેયના સુન્દર વિવેકથી જેઓએ મોહ મમત્વ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કર્યો જેઓએ કપાપના

આત્મનઃ=કપાયાત્મન ઉપરતાઃ=નિવૃત્તાઃ યથાતથા=યથાવસ્થિતં, લોકં=કર્મલોકં, શબ્દાદિવિષયલોકં વા, ઉપેક્ષમાણાઃ=દૃષ્ટ્યાઽપચ્યન્ત આસન્, તે પ્રાન્યાદિદિશ્વ-સ્થિતાઃ, સત્યે=સત્યસુખજનકત્વાત્ સત્યો=મોક્ષમાર્ગઃ, તત્ર, પરિવ્યસ્થુઃ=સ્થિતવન્તઃ, ઇદમુપલક્ષણમ્—નેનાનાગતવર્તમાનયોરપિ ક્રિયાપદે સંયોજનીયે, યથા—યે વીરાઃ સન્તિ તે વર્તમાનકાલે પશ્ચદશકર્મભૂમિષુ સંખ્યેયાસ્તિષ્ઠન્તિ, યે ચ ભવિષ્યન્તિ, તે ચાનાગતકાલેઽનન્તાઃ સ્થાસ્યન્તીતિ ॥ મૂ. ૧૦ ॥

નિષ્ફલ ક્રિયા ઓર ઇસ કર્મમય લોક કી અથવા શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં કી વિષયોં કી તરફ થોડા સા ધ્યાન નહીં દિયા, ડન ભવ્યવીરોં ને-ચાહે વે કિસી ધી દિશા મેં ક્યોં ન રહેં હોં-નિયમ સે મોક્ષ કો અપને હાથ મેં કર લિયા હૈ । સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ંકતા કી વિના મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, યહ જૈનસિદ્ધાન્ત કા અટલ નિયમ હૈ । પાંચસમિતિ વગૈરહ કી પાલન મેં અપને કો વિસર્જિત કર દેના યહ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી આરાધના સે હી આત્માકો ઉપલબ્ધ હોની હૈ । સૂત્ર મેં “વીર” શબ્દ ઇસી વાત કી પુષ્ટિ કરતા હૈ । વાહ્ય જગત મેં શત્રુઓં પર વિજય પ્રાપ્ત કરનેવાલે લાખોં ક્યા કરોડોં ધી મનુષ્ય મિલ સકતે હૈ, પરન્તુ જો અપને આત્મશત્રુઓં-કર્મોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી કોશિશ મેં હૈં વે લાખોં મેં ક્યા કરોડોં મેં ધી ંક દો મિલેંગે । પાંચ સમિતિયોં મેં લવલીન રહના, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં સદા ઉચ્ચમ કરતે રહના, સર્વદા સંયમ કી આરાધના મેં જરા ધી પ્રમાદશીલ ન વનના, હેયોપાદેય કી વિવેક મેં થોડી સી

ઉદ્યને નિષ્ક્ર્ણ બનાવ્યો અને આ કર્મમય લોકની અથવા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોની તરફ થોડું પણ ધ્યાન નથી આપ્યું તેવા ભવ્ય વીરોએ ભલે તેઓ કોઈ પણ દિશામાં હોય તો પણ નિયમથી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ છે સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની એકતા વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ જૈન-સિદ્ધાન્તનો અટલ નિયમ છે પાંચ સમિતિ વિગેરેના પાલનમાં પોતાને વિસર્જિત કરી દેવું, એ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધનાથી જ આત્માને ઉપલબ્ધ થાય છે સૂત્રમાં જે “વીર” શબ્દ છે તે આ વાતની જ પુષ્ટિ કરે છે બાહ્ય જગતમાં શત્રુઓ પર વિજય કરનારાઓ લાખો તો શું પણ કરોડો મનુષ્યો મળી રહેશે, પરંતુ પોતાના આત્મશત્રુઓ-કર્મ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની કોશિશમાં હોય તેવા લાખો બદ્ધે કરોડોમાં પણ એક-એ મળશે પાંચ સમિતિઓમાં રચ્યા રહેવું, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં સદા ઉચ્ચ કરતા કરતા જગતની આરાધનામાં જરા પણ પ્રમાદશીલ ન બનવું. હેયોપાદેયના

મી મૂલ ન આને દેના, કપાયોં સે સદા સાવધાન રહના ઔર ગણ્યાદિક ચિપયોં મેં સદા ઉપેક્ષામાવ રહના, યે સય પાતે-ક્રિયાયોં કર્મશત્રુઓં પર વિજય પાને મેં સૈન્ય કા કામ દેતી હેં । મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ હે, કર્મોં કી મૂલ-ઉત્તાર-પ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય હે, ઉસ પર વિજય પ્રાપ્ત કરને મેં ઇસ યોદ્ધા કી યે પૂર્વોક્ત ક્રિયાયોં ણક અક્ષૌહિણી સેના જૈસી હેં, અત યહ આત્મા નિયમસે કર્મસેના કા પરાભય કર અપને સ્વભાવ સે હી મોક્ષ કા પૂર્ણ મોક્ષા યન જાતા હે । ઇમમેં જરા મી સન્દેહ નહીં ।

સૂત્ર મેં “મો” શબ્દ શિષ્યોં કે સંપોધન કે લિયે આયા હે । બહુ ભગવાન કે કહે ગયે વચનોં મેં શિષ્યોં કા પુન પુન ધ્યાન આકર્ષિત કરને કે લિયે કહા ગયા હે । મૂલ મેં ‘પરિચિર્ચિટ્સિ’ યહ મૂતકાલિક ક્રિયાપદ હે । યહ વર્તમાન ઔર અવિષ્યત્કાલિક ક્રિયાપદ કા મી ઉપ લક્ષણ હે । ઇસકા અભિપ્રાય યહ હે કિ મૂતકાલ મેં જિતને મી ધીર હુપ હેં ઊન સયને તો મોક્ષ કા માર્ગ પ્રાપ્ત કર હી લિયા હે, વર્તમાન મેં મી જો પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઈરણ્વત ક્ષેત્ર ઔર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં સંખ્યાત ધીર હેં યે ઔર અનાગત કાલમેં જો અનંત ધીર હોંગે યે સય મોક્ષકે મોક્ષા બનેંગે ।

કર્મોં કે વિહારણ કરને મેં ઉત્સાહસમ્પન્ન કો ‘ધીર,’ પાંચ સમિતિયોં

વિવેકમા જરા પહુ મૂલ ન આનવા દેવી, કપાયોં સદા સાવધાન રહેવુ, આ બધી વાતો-ક્રિયાઓ-કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામાં સૈન્યનું કામ કરે છે મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ છે કર્મોની મૂળ-ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓ એક અક્ષૌહિણી સેના હોવી છે માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાને પરાભવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ મોક્ષતા બની જાય છે, તેમાં જરા પહુ સંદેહ નથી.

સૂત્રમાં “મો” શબ્દ શિષ્યોના સંબોધનને માટે આપેલ છે, તે જગ્યાને ઠહેલા વચનેમાં શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે ઠહેવામાં આપેલ છે મૂળમાં પરિચિર્ચિટ્સિ આ મૂતકાલિક ક્રિયાપદ છે આ વર્તમાન અને ભવિષ્ય કાલિક ક્રિયાપદનું પહુ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—મૂતકાળમાં નેટલા વીરો ધરેલા છે તે બધાએ મોક્ષનો માર્ગ પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે વર્તમાનમાં પહુ જે પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઈરણ્વત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સુખ્યાત વીરો છે તેઓ અને આવતા કાળમાં જે અનંત વીરો ધરે તેઓ બધા મોક્ષના મોક્ષતા બનશે.

કર્મોનું વિહારણ કરવામાં ઉત્સાહસમ્પન્નને ધીર, પાંચ સમિતિઓનું પાલન

तेषां सत्यावरथायिनां ज्ञानमाह—‘साहिस्सामो’ इत्यादि ।

मूलम्—साहिस्सामो नाणं वीराणं समियाणं सहियाणं सया-
जयाणं संघट्टदंसीणं आओवरयाणं अहातहा लोयमुवेहमाणानं,
किमात्थि उवाही? पासगस्सन विज्जइ, नत्थि-त्ति वेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—साधयिष्यामो ज्ञानं वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघ-
ट्टदर्शिनाम् आत्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां, किमस्ति उपाधिः पश्य-
कस्य? न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि ॥ सू० ११ ॥

टीका—तेषां वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघट्टदर्शिनाम् आ-
त्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां ज्ञानम्=अभिप्राय, साधयिष्यामः=कथ-
के पालन करनेवाले को ‘समित,’ आत्मकल्याण में उद्यमशाली अथवा
ज्ञानादिक गुणों से युक्त को ‘सहित,’ सर्वदा संयम की आराधना में
सावधान को ‘सदायत,’ हेयोपादेश के विवेक से युक्त अथवा अव्यावाध
आनन्दस्वरूप मोक्ष की अभिलाषावाले को ‘संघट्टदर्शी’ और कषायों
से उपरत-निवृत्त जीवों को ‘आत्मोपरत’ कहते हैं ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्ग में रहनेवाले उन वीर-आत्माओं के ज्ञान के विषय में
सूत्रकार कहते हैं:—‘साहिस्सामो नाणं’ इत्यादि ।

हम वीर, समित, सहित, सदायत, संघट्टदर्शी, आत्मोपरत, यथा-
वस्थित लोक की उपेक्षा करनेवाले उन मोक्षमार्ग के पथिकों के ज्ञान के
विषय में आगे कथन करेंगे । अभी तो इतना ही कहते हैं कि उन
वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्माओं के कर्मजनित कोई भी उपाधिनहीं है ।

करवावाणाने ‘समित,’ आत्मकल्याणमा उद्यमशाली अथवा ज्ञानादिक गुणोत्थी
युक्तने ‘सहित,’ सर्वदा संयमनी आराधनामा सावधानने ‘सदायत,’ हेयोपादेशना
विवेकथी युक्त अथवा अव्यावाधआनन्दस्वरूप मोक्षनी अभिलाषावाणाने ‘संघ-
ट्टदर्शी’ अने कषायोत्थी उपरत-निवृत्त एवोने ‘आत्मोपरत’ कहे छे ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्गमा रहेवावाणा ते वीर-आत्माओना ज्ञानना विषयमा सूत्रकार
कहे छे —“साहिस्सामो नाणं” इत्यादि

अमे वीर, समित, सहित, सदायत, संघट्टदर्शी, आत्मोपरत अने यथा-
वस्थित लोकनी उपेक्षा करवावाणा ते मोक्षना पथिकोना ज्ञानना विषयमा आगण
कहीशु हमणु तो आटलु कहीओ छीओ छे ते वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्मा-
ओने कर्मजनित (कर्मथी थनारी) कोटिपणु उपाधि नथी

‘મી મૂલ ન આને દેના, કપાપોં સે સદા સાવધાન રહના ઔર શન્દાવિક ધિપયોં મેં સદા ઉવેક્ષામાય રહના, યે સય યાતેં—ક્રિયાઈ કર્મશત્રુઓં પર વિજય પાને મેં સૈન્ય કા કામ દેતી હેં । મોક્ષામિલાપી આત્મા સેનાપતિ હૈ, કર્મોં કી મૂલ—ઉશર—પ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય હૈ, ઉસ પર વિજય પ્રાપ્ત કરને મેં હસ યોદ્ધા કી યે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઈ એક અક્ષૌહિણી સેના જૈસી હેં, અત યહ આત્મા નિયમસે કર્મસેના કા પરામવ કર અપને સ્વભાવ સે હી મોક્ષ કા પૂર્ણ મોક્ષા ધન જાતા હૈ । હસમેં જરા મી મન્દેહ નહીં ।

સૂત્ર મેં “મો” શબ્દ શિષ્યોં કે સંપોધન કે લિપે આયા હૈ । યહ મગધાત્ કે કહે ગયે વચનોં મેં શિષ્યોં કા પુન પુન ધ્યાન આકર્ષિત કરને કે લિપે કહા ગયા હૈ । મૂલ મેં ‘પરિવિચિદ્ધિસુ’ યહ મૂલકાલિક ક્રિયાપદ હૈ । યહ વર્તમાન ઔર અવિપ્યત્કાલિક ક્રિયાપદ કા મી ઉપલક્ષણ હૈ । હસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ મૂલકાલ મેં જિતને મી ધીર હુપ હેં ડન સપને તો મોક્ષ કા માર્ગ પ્રાપ્ત કર હી લિધા હૈ, વર્તમાન મેં મી જો પાંચ મરતક્ષેત્ર, પાંચ પેરચત ક્ષેત્ર ઔર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં સંખ્યાત ધીર હેં યે ઔર અનાગત કાલમેં જો અનંત ધીર હોંગે યે સય મોક્ષકે મોક્ષા ધનેંગે ।

કર્મોં કે વિદારણ કરને મેં ઉત્સાહસમ્પન્ન કો ‘ધીર,’ પાંચ સમિતિયોં

વિવેકમા જશ પશુ મૂલ ન આવવા દેવી, કપાયોથી સદા સાવધાન રહેવું, જ બધી વાતો—ક્રિયાઓ—કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામા સૈન્ય કામ કરે છે મોક્ષામિલાપી આત્મા સેનાપતિ છે કર્મોની મૂળ—ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે, તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામા આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓએ એક અક્ષૌહિણી સેના જેવી છે માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાના પરામવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ મોક્ષા ધની બાંધે છે, તેમા જશ પશુ સંદેહ નથી

સૂત્રમા “મો” શબ્દ શિષ્યોના સંપોધનને માટે આવેલ છે તે બગવાને કહેલા વચનોમા શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે કહેવામા આવેલ છે મૂળમા પરિવિચિદ્ધિસુ આ મૂલકાલિક ક્રિયાપદ છે આ વર્તમાન અને અભિષેક કાલિક ક્રિયાપદનું પણ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—મૂલકાળમા નેટલા વીશ થયેલા છે તે બધાએ મોક્ષનો માત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે વર્તમાનમા પણ એ પાંચ મરતક્ષેત્ર પાંચ પેરચત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમા સંખ્યાત વીશ છે, તેઓ અને આવતા કાળમા એ અનંત વીશ થશે તેઓ બધા મોક્ષના મોક્ષા ધનશે

કર્મોનું વિદારણ કરવામા ઉત્સાહસમ્પન્નને ધીર પાંચ સમિતિઓનું પાલન

સમ્યક્ત્વકરયા, યુક્ત્યા, સમ્યક્ત્વં તત્ફલાનિ ચ ।

વિદૂષ્યાનાર્યવચનં, ચતુર્થેઽધ્યયનેઽવ્રવીત્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

॥ ઇતિશ્રી-વિશ્વવિરૂપાત-જગદ્ગુપ્ત-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશભાષાકલિતલલિત-
કલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાતૃસર્દક-ગાહુ-
છત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત-“જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય”-પદ્મભૂષિત-
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-વાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર
પૂજ્ય-શ્રીઘાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયામ્ આચારાન્નમુત્ર-
સ્યાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં સમ્યક્ત્વાર્થ્યં ચતુર્થ-
મધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪ ॥

સમકિત કે પ્રાપ્ત હોતે હી આત્મા મેં આત્મસ્વરૂપ કા ખાન હોને સે
આંશિક રૂપ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સ્વાતુભવ મેં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર
બી સમકિતી કો ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, અતઃ યહાં પર સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગ
કે પથિકોં કો કર્મજન્ય ઉપાધિકા અભાવ બતલાતે હૈ, ક્યોં કિ અજ્ઞાની
જીવોં કો હી કર્મજન્ય ઉપાધિ હુઆ કરતી હૈ, જ્ઞાની જીવોં કે નહીં ।

હસ પ્રકરણ કી સમાપ્તિ કરતે હુઅ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ
હે જમ્બુ ! જિસ પ્રકાર સે મૈને યહ ભગવાન કે સમીપ સુના હૈં ઉસી
પ્રકાર મૈં કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ચૌથે અધ્યયનકા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથે અધ્યયન મેં જો વિષય કહે ગયે હૈં ડનકા સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોક
દ્વારા કરતે હૈં—‘સમ્યક્ત્વકરયા’ ઇત્યાદિ ।

સમકિત પ્રાપ્ત થતા જ આત્મામા આત્મસ્વરૂપતુ લાન થવાથી આશિક રૂપમા
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાતુભવમા રમણરૂપ આશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન
થાય છે, માટે આ ઠેકાણે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિને અભાવ
બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતા શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્બુ !
જે પ્રકારે મે ભગવાનની સમીપ આ સાલજ્યુ છે તે પ્રકારે હું કહુ છું ॥સૂ૦૧૧॥

ચૌથા અધ્યયનનો ચૌથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથા અધ્યયનમા જે વિષય કહેવાયા છે તેનુ સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા
કરે છે—‘સમ્યક્ત્વકરયા’ ઇત્યાદિ

यिष्यामः । वीरादिविशेषणशब्दा अनन्तरपूर्वम्ने व्याख्याताः । किं पृच्छति-
किमस्ति उपाधिरिति । किं तेषां महापुरुषाणामुपाधिरस्ति ? उत्तरवाक्यमार-
'पश्यकस्य' इत्यादि । पश्यकस्य=सम्पददर्शनादिकं मोक्षमार्गं पश्यतीति पश्यः,
स एव पश्यकः, तस्य कर्मजनितोपाधिर्न विद्यते नास्ति, इति प्रवीमि=मया यथा
मग्नवाक्यं श्रुतं तथा वक्ष्यामीत्यर्थः ॥ सू० ११ ॥

चतुर्याध्ययनस्य चतुर्योरेष समाप्त ॥ ४-४ ॥

माधवार्थ—जब तक जीव अपने शुद्धस्वरूप-निर्विकार आनन्द-स्वरूप
मुक्तिको प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक वह कर्मों से निर्लिप्त नहीं हो
सकता है । ऐसी अवस्था में जब तक सांसारिक दशा है अथवा समार
में रहना है तब तक कर्मों के बंधन में प्रत्येक प्राणी फँसा हुआ ही है ।
जो कर्मों का कर्ता है वह उसके फल का भी भोक्ता माना जाता है ।
यद्यपि यह नियम अटल है परन्तु ज्ञानी जीव उसके अपवादस्वरूप है,
क्यों कि चारित्र्यमोहनीय के उदयसे जब तक चारित्र्य का अभाव उनकी
आत्मा में नहीं हुआ है तब तक दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न
होनेवाला कर्मबंध उनको नहीं होता है । जितने अंश में परपदार्थों से
निवृत्ति है उतने अंशों में आत्मा में शुद्धि का भण्डार भी है, अर्थात्
दर्शनमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशम से जितनी भी
अहमा से अनस्वप्नप्रदानपरिणति का अंत होगा उतनी ही आत्मजागृति
रूप शुद्धपरिणति का विकास बढ़ा पर होगा ।

माधव—ज्यां सुधी एव भोक्ताना शुद्धस्वरूप-निर्विकार आनन्द-स्वरूप
मुक्तिन प्राप्त नथी करी वेतो त्या सुधी ते कर्मोधी निर्लिप्त भवो नथी, आधी
अवस्थामा ज्यां सुधी सांसारिक दशा ऐ अवस्था ससारमा रहैवानु ऐ त्या
सुधी कर्मोन्म बध्तरमा प्रत्येक प्रपुं इसायेवा न ऐ ने कर्मोन्म कर्ता ऐ ते
तेन इज्जने पण कोप्पमा भनाय ऐ ने के आ नियम आत्मा ऐ एता पण स्थानी एव
तन्ना अपवादस्वरूप ऐ केम के चारित्र्यमोहनीयना उदयधो ज्यां सुधी आस्त्रिने
अभाव तेन आ भावा नथी थयो त्या सुधी दर्शन-मोहनीय कर्मना उदयधो
उत्पत्त यनार कर्मबंध तने यतु नथी, नेटला अशमा परपदार्थोनी निवृत्ति ऐ
ते त्या अशेमां आ भावा शुद्धिने अभाव पण ऐ अर्थात् दर्शन-मोहनीय
कर्मना उपशम दाय अन क्षयोपशमणी आत्माभां नेटली पण अनत्यवस्था
भविष्यतिने आन द्यो तंती न आ भवतुनिश्च शुद्ध परिणतिने विकास त्या द्यो

સમ્યક્ત્વકરયા, યુક્ત્યા, સમ્યક્ત્વં તત્કલાનિ ચ ।

વિદૂષ્યાનાર્યવચનં, ચતુર્થેઽધ્યયનેઽવ્રવીત્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

॥ ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુપ્ત-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશભાષાકલિતલલિત-
કલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનસદંક-ગાહ-
છત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત-“ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ”-પદ્મભૂષિત-
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-વાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર
પૂજ્ય-શ્રીઘાસીલાલ-વ્રતિચિરચિતાયામ્ આચારાદ્રશુત્ર-
સ્યાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં સમ્યક્ત્વાખ્યં ચતુર્થ-
મધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪ ॥

સમકિત કે પ્રાપ્ત હોતે હી આત્મા મેં આત્મસ્વરૂપ કા જ્ઞાન હોને સે
આંશિક રૂપ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સ્વાનુભવ મેં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર
મી સમકિતી કો ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, અતઃ યહાં પર સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગ
કે પથિકોં કો કર્મજન્ય ઉપાધિકા અભાવ બતલાતે હૈં, ક્યોં કિ અજ્ઞાની
જીવોં કો હી કર્મજન્ય ઉપાધિ હુઆ કરતી હૈ, જ્ઞાની જીવોં કે નહીં ।

હસ પ્રકરણ કી સમાપ્તિ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ
હે જમ્બુ ! જિસ પ્રકાર સે મૈને યહ ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ ઉસી
પ્રકાર મૈં કહતા હું ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ચૌથે અધ્યયનકા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથે અધ્યયન મેં જો વિષય કહે ગયે હૈં ઉનકા સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોક
દ્વારા કરતે હૈં—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ ।

સમકિત પ્રાપ્ત થતા જ આત્મામા આત્મસ્વરૂપનુ જ્ઞાન થવાથી આશિક રૂપમા
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવમા રમણરૂપ આશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન
થાય છે, માટે આ ઠેકાણે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિનો અભાવ
બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતા શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્બુ !
જે પ્રકારે મે ભગવાનની સમીપ આ સાંભળ્યું છે તે પ્રકારે હું કહું છું ॥સૂ૦૧૧॥

ચૌથા અધ્યયનનો ચૌથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથા અધ્યયનમા જે વિષય કહેવાયા છે તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા
કરે છે—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ

सम्यक्त्व को पुष्ट करनेवाली युक्ति से सम्यक्त्व का वर्णन तथा अनायों के षडनों का निराकरण करके सम्यक्त्वका फल इस चौथे अध्ययन में कहा गया है ॥ १ ॥

यह आचाराङ्गसूत्रके सम्यक्त्व नामके चौथे अध्ययनकी आचार चिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥

सम्यक्त्वने गुण कर्त्तावाणी युक्तिथी सम्यक्त्वनु वर्णन, तथा अनार्योना वचनोनु निराकरण करीने सम्यक्त्वनु रण आ बोधा अध्ययनमा कर्त्तु छे ॥ १ ॥

आ आचार्यसूत्रना सम्यक्त्वनामना चौथा अध्ययननी आचार-चिन्तामणि-टीकाने गुजराती अनुवाद संपूर्ण ॥ ४ ॥

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કૃપા ગેડ - ગ્રીન લોજ પાઠે

રાજકોટ



સમિતિની ગરેડીઆ તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી
તા. ૩૧-૧-૫૭ સુધીમા દાનવીર મહાશયો
નરકથી મળેલી રકમોની નામાવલી.



(રૂ. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)



આદ્ય મુરબીશી-૪

(જોછામાં જોછી રૂ ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

| | | |
|-------|---|---------|
| ૧૦૦૦૦ | ચેઠ શાંતિલાલ મગજદારભાઈ, પ્રમુખ સાહેબ | અમદાવાદ |
| ૬૦૦૦ | ચેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ | ભાલુપદ |
| | (હા ચેઠ લાલચંદભાઈ, જેચંદભાઈ, નગીનદાસભાઈ, વૃન્દલાલભાઈ તથા વજલદાસભાઈ) | |
| ૫૨૫૧ | કેઠારી જેમદભાઈ અજરખર હા હરખોવિંદભાઈ જેચંદ | રાજકોટ |
| ૫૦૦૧ | ચેઠ ખારશીભાઈ હવનભાઈ | સોલાપુર |

મુરબીશીઓ-૨૦

(જોછામાં જોછી રૂ ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

| | | |
|----------|---|----------|
| ૩૬૦૫ | વકીલ હવરાજ વર્ધમાન હા કેઠારી કદાનદાસભાઈ તથા વેળીલાલભાઈ | જેતપુર |
| ૩૬૦૪ | દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ | રાજકોટ |
| ૩૨૮૬નાના | મહેતા શુભાનંદ પાનાચંદ | " |
| ૩૧૦૧ | સમવી પીતામ્બરદાસ શુભાનંદ | અમનનર |
| ૨૫ ૦ | ચેઠ શામજીભાઈ વેલજી વીરાણી | રાજકોટ |
| ૨૦૦૦ | નામદાર કાકેર સાહેબ લખખીરસીંહજી બહાદુર | મોરબી |
| ૨૦૦૦ | ચેઠ લહેરચંદ કુવરાજી હા ચેઠ ન્યાલચંદભાઈ લહેરચંદ | સીધપુર |
| ૨ ૦ | ચાહુ હવનલાલ હેમચંદ વસા હા મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ | સુબઈ |
| ૧૬૬૩ | શ્રી સ્વામીકવાસી જૈન સંઘ | મોરબી |
| ૧૦૦૧ | ચેઠ આરમાશમ માણેકલાલ | અમદાવાદ |
| ૧૦૦૧ | ચેઠ માણેકલાલ ભાલુજીભાઈ | પાલનદર |
| ૧૦ ૦ | ચેઠ સોમચંદ વૃલસીદાસ | સ્વલમ |
| ૧૦૦૦ | કેઠારી છત્રીલદાસ હરખચંદ | સુબઈ |
| ૧૦૦૦ | કેઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ | ચીકોર |
| ૧૦૦૨ | જમડીઆ જગજીવનદાસ સ્વતંત્રી | દામનનર |
| ૧૦૦૧ | શ્રીમાન ધર્મસિંહજી મહેતા (રહેને મેનેજર સાહેબ) કલકત્તા | |
| ૧૦૦૧ | મહેતા પાપટલાલ માવજીભાઈ | અમલોધપુર |
| ૧૦૦૧ | મહેતા સોમચંદ નેજુરીભાઈ (કરાંચીવાળા) | મોરબી |
| ૧૦૦૧ | ચાહુ હરીલાલ અનુપચંદ | ખલાલ |
| ૧૦૦૨ | દોશી કપુરચંદ અમરચી હા દલપતરામ કપુરચંદ દોશી | અમલોધપુર |

સહાયક મેમ્બરો-૨૧

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

| | | |
|-----|---|------------|
| ૭૫૦ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુઝાભાઈ વેલસીભાઈ | વઢવાણ શહેર |
| ૭૫૦ | મોદી કેશવલાલ હરચંદ | સાબરમતી |
| ૭૦૦ | શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ | જોરાવરનગર |
| ૫૦૧ | શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ | લીંબડી |
| ૫૦૦ | કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા | રાજકોટ |
| ૫૦૦ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ | થાનગઢ |
| ૫૦૦ | શેઠ તારાચંદ જી પુખરાજી | મૌરંગાબાદ |
| ૫૦૦ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ | મૌરંગાબાદ |
| | ૧૫૦ શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી | |
| | ૧૨૫ „ અનરાજજી લાલચંદજી | |
| | ૧૨૫ „ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી | |
| | ૧૦૦ „ ઢગડુમલજી ચાંદમલજી | |
| | ૫૦૦ | |
| ૫૦૦ | મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ | રાજકોટ |
| ૫૦૦ | શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ | રાજકોટ |
| ૫૦૦ | મહેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હર્લલજીભાઈ ધ્રાફા | |
| ૫૦૦ | શેઠ હરખચંદ પરસોત્તમ હા. ભાઈ ઈન્દુકુમાર | ચોરવાડ |
| ૫૦૧ | શેઠ ખીમજી ખાવાભાઈ હા. તેમના પુત્રો કુલચંદભાઈ નાગરદાસભાઈ, શુભાખચંદભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ | મુંબઈ |
| ૫૦૧ | શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. શેઠ સુલજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ | |
| ૫૦૧ | શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ | અમદાવાદ |
| ૫૦૧ | શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ | અમદાવાદ |
| ૫૦૧ | સ્વ કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ ખાલચંદ સાકરચંદ | મુંબઈ |
| ૫૦૦ | અ. સૌ. જેન મણીગૌરી મગનલાલ તે મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસના ધર્મપત્નિ | રતલામ |
| ૫૦૧ | સ્વ પીતાશ્રી નદાજીના સ્મરણાર્થે હ. વેણીચંદ શાતીલાલ (બાપુઆવાળા) | મેઘનગર |

| | | |
|-----|----------------------------------|---------|
| ૭૫૧ | શાહ રાજાશાહ મોહનલાલ | અમદાવાદ |
| ૫૦૧ | કામદાર રવીલાલ દુર્લભાણ નેતુરવાળા | સુભઈ |

પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો-૧૮૫

(જોછામા જોછી રકમ રૂ. ૨૫૦ આપનાર)

| | | |
|-----|--|---------------|
| ૪૦૨ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમ | મોહા |
| ૪૦૦ | શ્રી વાઘીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વકસ | રાજકોટ |
| ૩૫૩ | શેઠ વતનશી હીરણભાઈ હા ગોરખનદાસભાઈ | ભામલેધુર |
| ૩૦૧ | શેઠ જેઠાભાઈ માણેકચંદ | ભાલુવડ |
| ૨૫૧ | સુધવી માણેકચંદ માધવજી | ભાલુવડ |
| ૨૫૧ | શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા) | ભાલુવડ |
| ૨૫૧ | શેઠ રામજી બીજાભાઈ | ભાલુવડ |
| ૨૫૧ | પચ્ચમીયા ભવાનભાઈ કાળાભાઈ | બઢીયા |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમ | વાંકાનેર |
| ૨૫૧ | શેઠ રવીલાલ ન્યાલચંદ | રાજકોટ |
| ૨૫૦ | ભાણુ પદ્મશામ હજનલાલ શેઠ (કંદેપુરવાળા) | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ મજનલાલ હજનલાલ વિશ્વામ (મોહાવાળા) | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ જેઠાલાલ ગોરખનદાસ | ઉપલેટા |
| ૨૫૧ | સ્વ. જહોન સતોઠ કચરા હા આતમચંદભાઈ, ઘોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કરમચુવાળા) | ઉપલેટા |
| ૨૫૧ | શેઠ જુલાલચંદભાઈ કાનજીભાઈ હા શેઠ પ્રતાપભાઈ | ઉપલેટા |
| ૪૭૭ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમ | ખાખીવળગીયા |
| ૨૫૧ | શેઠ ડાંગલાલ કેશવજી | ભામનગર |
| ૨૫૧ | શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ | નેતલસર જ કચાન |
| ૨૫૧ | શાહ અતુલદાસ કાકરશીભાઈ | ભામનગર |
| ૨૫૧ | ખંડેરીયા કાન્તીલાલ ત્રણકલાલ (સ્ટેશન માસ્ટર) | સુરે કાનગર |
| ૨૫૧ | શાહ કેશવલાલ જેઠા | વેરાવલ |
| ૨૫૧ | શાહ ખીમચંદ મોહામચંદ વસનજી | વેરાવલ |
| ૨૫૧ | સ્વ. ભાખડા વચ્છરાજ તુલસીદાસના પ્રમીપત્ની કમળભાઈ તરશી હા માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ | મોહલ |
| ૨૫૧ | શેઠ હમનલાલ નાગજીભાઈ | સુભઈ |
| ૨૫૧ | ચેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ | જુનાગઢ |

| | | |
|-----|---|---------------|
| ૨૫૧ | શેઠ ગીન્ધગલાલ કરમચંદ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શેઠ હોટાલાલ વખતચંદ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | ગોસલિયા દલિપાલ લાલચંદ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ | ખલાન |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન મંથ હા શેઠ મોદનલાલ ઇચ્છાગમ ખલાન | ખલાન |
| ૨૫૧ | શેઠ રમાણીકલાલ ચં. કપાળી | ગામુડ |
| ૨૫૧ | બહેન મુરીમોદન (લક્ષ્મીબેન) | |
| | હા મહેતા વરીલાલ ખીનામગદામ | પાલાકુપુર |
| ૨૫૦ | શેઠ પારીલાલ નેમચંદ વકીલ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | ગ્રામ વીહલદામ ગોલી માસ્તર | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | ગ્રામ નાગરદાસ માણેકચંદ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | ગ્રામ મળીલાલ છવણલાલ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ નાગરદાસ વાધજીભાઈ | અમલનેર |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન મંથ | અમલનેર |
| ૨૫૧ | શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (ઈન્જીનીયર સાહેબ) | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ | |
| | [તેમના ધર્મપત્નીના વરસીતપ પ્રસંગે ગુણાલીના] | રાજકોટ |
| ૨૫૦ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન મંથ હા ચ પાલાલજી મારવે | ટોડાઈચા |
| ૨૫૧ | શેઠ મોતીલાલજી રણુજીતલાલજી હીંગડ | ઉદેપુર |
| ૨૫૦ | શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેન્કર્મ | યાદગીરી |
| ૨૫૦ | શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ | હાટીના માળીયા |
| ૨૫૧ | ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ [વકીલ] | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ પ્રભારામ વીઠલજી | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા | મદ્રાસ |
| ૨૫૧ | પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી | કોલકી |
| ૩૦૨ | પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી | કોલકી |
| ૨૫૧ | શેઠ હકીમચંદ દીપચંદ ગોડલવાળા [સ્ટેશન માસ્તર સક્રિતનગર] | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શેઠ વસનજી નારણજી | નમખંભાળીયા |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન મંથ | નમખંભાળીયા |
| ૨૫૧ | શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ | ખીચન (પાલી) |
| ૨૫૧ | શેઠ પદમસી ભીમજી દ્રાક્ષીયા | |

| | | |
|-----|---|----------------|
| ૨૫૧ | અ સૌ બહેન બચીબહેન બાણુભાઈ | ધેરાણ |
| ૨૫૧ | શેઠ નેમચંદ સવલભાઈ મોદી | લાલપુર |
| ૨૫૦ | શ્રી સ્થા જેન સઘ હા પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ | નડુરમાર |
| ૨૫૧ | શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા નરસેલમભાઈ જેતપુર | જેતપુર |
| ૨૫૧ | દોશી ઇનાલાલ વનેચંદ | જેતપુર |
| ૨૫૧ | કામદાર લીલાધર છવરાજના દમરજીભૈ તેમનાં ધર્મપત્ની | |
| | બાઈ અબકબહેન તરફથી હા ભાઈ ચંતિલાલ | જેતલસર |
| ૨૮૭ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | જામજોધપુર |
| ૨૫૧ | સ્વ બહેન નિલ્માગૌરી રાયચંદ હા શેઠ રાયચંદ પાનાચંદ | ધેરાણ |
| ૨૫૦ | આખી પોપટલાલ જેચંદભાઈ | ધેરાણ |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | |
| | હા પ્રમુખ રાયચંદ વૃજલાલ જજમેશ | વીછીયા |
| ૨૫૧ | શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા મણીલાલભાઈ | |
| | વઘા જેસીંમલાલભાઈ | લાલપુર |
| ૨૫૧ | શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા હરિલાલભાઈ | |
| | હાટીના માળીવાવાળા | જુનાગઢ |
| ૨૫૧ | સ્વ વસાણી હરબોવીદાસ હગનલાલના દમરજીભૈ | |
| | તેમનાં ધર્મ પત્ની બાઈ છબલબેન તરફથી | બેટાદ |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | મુઠા (ભાલાવાડ) |
| ૨૫૧ | શેઠ મગનલાલજી બામરેયા | ઉડેપુર |
| ૨૫૧ | શેઠ ચાપરીભાઈ મુખલાલ | મુરેન્દ્રનગર |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | બેટાદ |
| ૨૫૧ | સ્વ. પૂજ્ય માણેશી સમરતમાઈના દમરજીભૈ | |
| | હા મેઝર ચાંદેજ નરોત્તમદાસ મુનીલાલ કાપડીયા | રાણપુર |
| ૨૫૧ | સ્વ. ટુરખીયા લહેચંદ માણેકચંદ મુદામકાવાળાના દમરજીભૈ | |
| | તેમના ધર્મ પત્ની છાતીબાઈ તરફથી હા જયવીરાલ લહેચંદ દભાસ | |
| ૨૫૧ | શ્રી ધ જેન મોટા સઘ | ખાંજા |
| ૨૫૧ | ચાહ દીલીપકુવર સવાઈલાલ | |
| | હા શેઠ સવાઈલાલ ત્રબકલાલ | વડવાળ સહેર |
| ૨૫૧ | શેઠ દેદુભાઈ હરબોવીદાસ કટોરીવાળા | સુભઈ |
| ૨૫૧ | ગ શા નાથલાલ ડી. મહેતા | મોત્રાસા |
| ૨૫૧ | સઘની પ્રાણલાલ ત્રવજીભાઈ | જામજોધવા |

| | | |
|-----|--|-----------------|
| ૨૫૧ | ખાનીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે | |
| | તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ મણીબેન તરફથી | |
| | હા. બાઈ રસીકલાલ, અનીલકાંત તથા વિનોદરાય | આસનસોલ |
| ૨૫૦ | શેઠ માણેકલાલ અમુલખરાય મહેતા | ઘાટકોપર |
| ૨૫૧ | ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ | ધંધુકા |
| ૨૫૧ | શાહ પોપટલાલ ધનજીભાઈ | ધંધુકા |
| ૨૫૧ | સ્વ ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે | |
| | હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ | ધંધુકા |
| ૨૫૧ | શેઠ ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી | ધંધુકા |
| ૨૫૧ | સ્વ મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે | |
| | તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી તરફથી | બરવાળા |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સઘ | પાણશણા (લી બડી) |
| ૨૫૧ | સઘણી મુળશકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે | |
| | હા. તેમના પુત્રો જય તિલાલભાઈ તથા રમણીકલાલભાઈ | ઉપલેટા |
| ૨૫૧ | શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ | |
| | હા. રતીલાલ મગનલાલ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | સઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ | |
| | હા. જીવનલાલ ગફલદાસ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | ખેડેન સુર્યાબાળા નૌતમલાલ જસાણી | |
| | [વરસીતપનાં પારણાની ખુશાલીમાં] | રાજકોટ |
| ૨૫૧ | શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે | |
| | હા. બાઈ શાતીલાલ રાયચંદ | લખતર |
| ૨૫૧ | ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે | |
| | હા. બાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ | લખતર |
| ૨૫૧ | શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે | |
| | હા. બાઈ અમૃતલાલ તલકશી | લખતર |
| ૨૫૧ | શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ | લખતર |
| ૨૫૧ | શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | સઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ | વઢવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી | વઢવાણ શહેર |

| | | |
|-----|---|----------------|
| ૨૫૧ | અ સૌ જહેન બચીબહેન બાણુભાઈ | ધારાલ |
| ૨૫૧ | શેઠ મેમચંદ સવલભાઈ મોદી | ઢાલપુર |
| ૨૫૦ | શ્રી સ્થા જેન સઘ હા પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ | નંદરમાર |
| ૨૫૧ | શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા નરસેસમભાઈ જેતપુર | |
| ૨૫૧ | દોશી છોટાલાલ વનેચંદ | જેતપુર |
| ૨૫૧ | કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણુશૈ તેમનાં ધર્મપત્ની | |
| | ભાઈ બલકબહેન તરફથી હા. ભાઈ ચાંતિલાલ | જેતલસર |
| ૨૮૭ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | જામનેધપુર |
| ૨૫૧ | સ્વ બહેન વિજયાગૌરી રામચંદ હા શેઠ રામચંદ ધનાચંદ | ધારાલ |
| ૨૫૦ | ચાંધી પોપટલાલ જેચંદભાઈ | ધારાલ |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | |
| | હા પ્રમુખ રામચંદ વૃજલાલ અલમેરા | વીંછીયા |
| ૨૫૧ | શેઠ ઝુળચંદ પોપટલાલ હા મણીલાલભાઈ | |
| | તથા જેહી ગલાલભાઈ | ઢાલપુર |
| ૨૫૧ | શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા હરિલાલભાઈ | |
| | હાટીના માળીવાવાળા | જુનાગઢ |
| ૨૫૧ | સ્વ વસાણી હરજોવીદાસ છગનલાલના સ્મરણુશૈ | |
| | તેમનાં ધર્મપત્ની ભાઈ છબલમેન તરફથી | બોટાદ |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | જુઠા (બાલાવાઠ) |
| ૨૫૧ | શેઠ મનલાલજી બાગેશા | ઉડેપુર |
| ૨૫૧ | શેઠ આપરીભાઈ સુજલાલ | સુરેન્દ્રનગર |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જેન સઘ | બોટાદ |
| ૨૫૧ | સ્વ. પૂજ્ય માણુશ્રી સમરતજાર્જના સ્મરણુશૈ | |
| | હા એક્ટર સાહેબ નરોત્તમદાસ સુનીલાલ કાવડીયા | રાણપુર |
| ૨૫૧ | સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદ સુદામકાવાળાના સ્મરણુશૈ | |
| | તેમના ધર્મપત્ની જીવતીભાઈ તરફથી હા જીવતીલાલ લહેરચંદ દલાસ | |
| ૨૫૧ | શ્રી સ્થા જેન મોટા સઘ | પ્રાંતપ્રા |
| ૨૫૧ | શાહ હીલીપકુવર સવાઈલાલ | |
| | હા શેઠ સનાઈલાલ ત્રજકલાલ | વડવાણ શહેર |
| ૨૫૧ | શેઠ છેદુભાઈ હરજોવીદાસ કટોરીવાળા | સુબઈ |
| ૨૫૧ | રા. રા. નામાલાલ ડી. ખેડા | મોખાસા |
| ૨૫૧ | સઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ | જામખાણીયા |

| | | |
|-----|--|------------|
| ૨૫૧ | શાહ શાકરચંદ કાનજીભાઈ | સાથુદ |
| ૨૫૧ | શાહ હીંમતલાલ હરજીવનદાસ | મુંબઈ |
| ૨૫૧ | શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા) | સાબરમતી |
| ૨૫૧ | અ. સૌ. સમરતળેન ગ્રેમચંદ % ગ્રેમચંદ માણેકચંદ (ગજ સીતાપુરવાળા) | સાબરમતી |
| ૨૫૧ | શા. કાંતીલાલ ત્રીલોખનદાસ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સંઘવી જેચંદભાઈ નારાણદાસ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ વેલશી કત્રાજવાળા | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | પારેખ મણીલાલ ટેકરશી લાતીવાળા તરફથી મોટીબેનના સ્મરણાર્થે | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ નારાણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીભાઈના ધર્મપત્ની અ. સૌ. નારંગીબેનના વરસીતપ નિમીત્તે હા. શાંતીભાઈ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ | અમદાવાદ |
| ૨૫૦ | શેઠ ગ્રેમચંદ સાકરચંદ | અમદાવાદ |
| ૩૫૧ | લાલા પુરણચંદ જૈન (સેન્ટ્રલબેંકવાલા) | દિલ્લી |
| ૨૫૧ | સ્વ. છબીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મ- પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મણુલા કુમારી | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ રતીલાલ વાડીલાલ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ | ” |
| ૨૫૧ | અ. સૌ. કમળાબેન તે કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલના ધર્મપત્નિ (વઢવાણવાળા) | રંજુન |
| ૨૫૧ | વોરા ઠોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા જૈન સઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ | વઢવાણ શહેર |

- ૨૫૧ શાકે બાદવણ જોમકભાઈ સદાકવાળાના સ્મરણાથે
કા. ભાઈ શાંતીલાલ બાદવણ લખતર
- ૨૫૧ ભાવસાર સુનીલાલ પ્રેમમહાઈ સુરેન્દ્રનગર
- ૨૫૧ શ્રી વખમાન સ્વેતાગર સ્થા આવક સદ્ય
કા. ચેક ઠેસરીમણી અનોપચક્રી ગુજળીયા મલાક (સુભઈ)
- ૨૫૧ ટોચી કાકરચી ગુલાબચંદના સ્મરણાથે તેમનાં
ધર્મપત્ની સમસ્તનેન વૃજલાલ તરફથી
કા. ભાઈ જયંતિલાલ કાકરચી લખતર
- ૩૦૦ શાકે અમુલખ ઉર્ફે બચુભાઈ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની
અ. સૌ. બેન લીલાવતીના વરણી તપના પાશુની
ગુલાબીમાં કા. ભાઈ કાંતીલાલ નાગરદાસ વીરમગામ
- ૨૫૧ કમદાર કેશવલાલ કીમતરામ પ્રેક્ષસચાકેભ (વેલકવાળા) વઢોટરા
- ૨૫૧ ચેક કુમરચી હસરાજ વીધરીયા સુભઈ
- ૨૫૧ ચેક ખનરાજ ગુજલક સુખા લોતખાલા (પુના)
- ૨૫૧ મહેતા નાનાલાલ છત્રનલાલનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. ચમળનેન તથા પુરીનેનના સ્મરણાથે
કા. ભાઈ મનકેશલાલ નાનાલાલ સુ વણી (વીરમગામ)
- ૨૫૧ ટોચી સુનીલાલ કુલચક મોરબીવાળા સુ શાલજની (બચાળ)
- ૩૦૧ શાકે કીલચક છત્રનલાલ કા. શાકે ચીમનલાલ કીરાચક સાચુક
- ૨૫૧ ચેક મોહનલાલ બેઠાભાઈના સ્મરણાથે
કા. ચેક આત્મારામ મોહનલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શાકે રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાંતવેન
રમણીકલાલ (મંજાપાળા) સુભઈ
- ૨૫૧ ડોકટર મધાચક મગનલાલ કા. ડો. રતનચક મધાચક કલોલ
- ૨૫૧ સ્વ. શાકે નાયાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાથે
કા. શાકે રવીલાલ નાયાલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા હરીયાપુરી બેન સવ ક. ભાવચાર
દામોદરદાસ ઉપરભાઈ કદી
- ૨૫૧ શાકે મણીલાલ તલચંદના સ્મરણાથે
કા. મારફતીયા ચકુલાલ મણીલાલ કલોલ
- ૨૫૧ અ. સૌ. ચપાનેન ક. ચેક અવસજી લાલચક ટોચી સાચુક
- ૨૫૧ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ સાચુક

| | | |
|-----|---|------------|
| ૨૫૧ | શાહ શાકરચંદ કાનજીભાઈ | સાણ્ડ |
| ૨૫૧ | શાહ હીંમતલાલ હરજીવનદાસ | મુંબઈ |
| ૨૫૧ | શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા) | સાબરમતી |
| ૨૫૧ | અ. સૌ. સમરતબેન પ્રેમચંદ % પ્રેમચંદ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા) | સાબરમતી |
| ૨૫૧ | શા. કાંતીલાલ ત્રીલોચનદાસ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શેઠ ઉજ્જવશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રજુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ ઘવી જેચંદભાઈ નારાણદાસ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ વેલશી કત્રાજવાળા | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | પારેખ મણીલાલ ટાકરશી લાતીવાળા તરફથી મોટીબેનના સ્મરણાર્થે | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ નારાણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીભાઈનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. નારંગીબેનના વરસીતપ નિમીત્તે હા. શાંતીભાઈ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ | અમદાવાદ |
| ૨૫૦ | શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ | અમદાવાદ |
| ૩૫૧ | લાલા પુરણચંદ જૈન (સેન્ટ્રલબેંકવાલા) | દીલ્લી |
| ૨૫૧ | સ્વ. છખીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મ- પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મણુલા કુમારી | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ રતીલાલ વાડીલાલ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ | ” |
| ૨૫૧ | અ. સૌ. કમળાબેન તે કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ (વઢવાણવાળા) | રંજુન |
| ૨૫૧ | વોરા ઠોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા જૈન સંઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ | વઢવાણ શહેર |

- ૨૫૧ વેશ ધનજીભાઈ લાલચ દેશા જેન સમ કા.
વેશ પાનાચ દ ગોબરદાસ નવાણુ યહેર
- ૨૫૧ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાથે કા. કદાનજીભાઈ અમદાવાદ
અમૃતલાલ દેશી
- ૨૫૧ શ્રી વીરમગામ સ્થા જેન આવિકા સમ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. ત્રિવેણનદાસ દેવચ દ તથા સ્વ. અ. સી. મલ્લ
જેનના સ્મરણાથે કા. ડાકર દિ મતલાલ મુખલાલ "
- ૨૫૧ ચાહ મુલચ દ કાનજીભાઈ વરદેવી કા. ચાહ નામદાસ
બોલદભાઈ "
- ૨૫૧ શેઠ મેહનલાલ પીતાબરદાસ કા. ભાઈ દેશવલાલ તથા
મનમુખલાલભાઈ "
- ૨૫૧ ચાહ રતનચી મેણુચીની કું મુખઈ
- ૨૫૧ ભવધાર ભોખીલાલ જમનાદાસ અમદાવાદ
- ૨૫૧ ચાહ ચીવલ ભાણેજીભાઈ ભેલચ કમ્પ
- ૨૫૧ ચાહ હુણલ મુલાખચ દ (સનેલી) પથમદાલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા જેન સમ કા. ચાહ પ્રેમચ દ હલીચ દ (સનેલી) "
- ૨૫૧ ચાહ કુવરજી મુલાખચ દ (લીમડી) "
- ૨૫૧ ચાહ પાનાચ દ સમજીભાઈ કા. વળકલાલ રવીલાલ મુખઈ
- ૩૦૧ ચાહ અમુલખભાઈ મુળજી કા. પ્રકાશચ દ અમુલખ હાસીવ
- ૩૦૧ સ્વ. જેન બદ્ધકાતાના સ્મરણાથે કા. અમુલખ મુળજીભાઈ ,
- ૨૫૧ સ્વ. પદમચી મુલચદના સ્મરણાથે કા. ચીવલાલ પદમચી મેસાણા
- ૨૫૧ ચાહ બોલજીદાસ ચામજી ઉદાણી જેન દેવ
- ૨૫૧ બાટવીયા ગીરધરલાલ પ્રભાણુ કા. અમીચ દ
ગીરધરલાલ ખાખીજળીયા
- ૨૫૧ શ્રીમતિ અ. સી. જેન બદ્ધાવતી તે શ્રીમાન બહેતલાલજી
નાકરના ધમ પતિન કા. શેઠ રણજીત લાલજી હીમદ ઉદેપુર
- ૨૫૧ સ્વ. શેઠ વીરચદભાઈ જેસીંગ લખતરવાળાના સ્મરણાથે
કા. દેશવલાલ વીરચ દ શેઠ મુખઈ
- ૨૫૧ જી. વાસીરામ મુલાખચ દ (લીમડી) પથમદાલ
- ૨૫૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ પેરાજી
- ૩૦૧ શ્રીમતી હીરાબેન નયુભાઈના નરસીતપ નીમીતે
કા. નયુભાઈ નાનચ દ ચાહ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. મણિધાર પરસોતમ મુદરજીના સ્મરણાથે
કા. ચાકરચ દ પરસોતમ "

| | | |
|-----|--|-----------------|
| ૨૫૧ | શેઠ મણીલાલ શીવલાલ | વીરમગામ |
| ૨૫૧ | શાહ ત્રીભોવનદાસ લગવાનજી પાનેલીવાળા | નમજોધપુર |
| ૨૫૧ | શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ | અમદાવાદ |
| ૩૦૧ | શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ | ગોધરા |
| ૨૫૧ | શાહ નરસીદાસ ત્રીભોવનદાસ | અમદાવાદ |
| ૩૦૧ | ખીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી | રાણપુર |
| | હા. ગોપાણી ચુનીલાલ માણેકચંદ | |
| ૨૫૧ | શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. | |
| | વહીવટ કરનાર શેઠ ઈશ્વરદાસ પુરષોત્તમદાસ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ | |
| | હ શેઠ ચંદુલાલ અમૃતલાલ | " |
| ૨૭૭ | શ્રી સ્થાનકવાસી છકોટી જૈન સંઘ | |
| | હ મહેતા ચુનીલાલ વેલજી | માઠવી (કચ્છ) |
| ૨૫૧ | વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ મહેતા | વડોદરા |
| ૨૫૧ | વોરા મણીલાલ પોપટલાલ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ | " |
| ૨૫૧ | શા. ભાઈલાલ બિજમશી | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | સ્વ. કેશવલાલ સુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની, સ્વ. અમૃતભાઈના | |
| | સ્મરણાર્થે હ ભાઈલાલ કેશવલાલ થાનગઢવાળા | શુરેન્દ્રનગર |
| ૨૫૧ | પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના | |
| | સ્મરણાર્થે હ વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી | સાણુ દ |
| ૨૫૧ | પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે | |
| | હ બીખાલાલ નેમચંદ | સાણુ દ |
| ૨૫૧ | સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે | |
| | હ જયંતીલાલ નારણદાસ | સાણુ દ |
| ૨૫૧ | શા પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ સાણુ દવાળા | ખોડેલી (શુજરાત) |
| ૨૫૧ | મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ સીવીલ ઈન્જીનીયર સાહેબ | લાખેરી |
| | | (રાજસ્થાન) |
| ૨૫૧ | ડો કુ સરસ્વતી ખડેન શેઠ | અમદાવાદ |
| ૨૫૧ | શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ | અમદાવાદ |

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી વાસીલાલજી મહારાજનાં
બનાવેલા સૂત્રો

કાશ્મીર થી ઈન્ડિયાનું મારી

તેમજ ઈરાન થી ઈસ્રાઈલ

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વચામ છે

કાશ્મીર કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તેવાર કરવાનું બનાવ્યું કામ
હવે સુધી કોઈ કરી શકે નથી.

* * *

મી સ્થાનકવાસી જેન સમાજ

ઉપરાંત

મી દેરાવાસી સમ્રાટના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી
તથા અન્ય મુનિશ્રીઓ

તેમજ

તેરાપથી મહાસક્ષા કલકત્તાવાળાઓ આ સૂત્રો બનાવ્યાં છે

* * *

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જેન ખર્ચના મુતરાનનો અનુભવ
લાભ લઈ રહ્યા છે

હવે સુધી લોકની ઈન્ડિયા બેઠીસ લાવશેરીને આ સૂત્રો મળ્યા છે

* * *

આજ રૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે
લગભગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકે છે

વધુ વિગત માટે લખો :

૪ શ્રીન લેખ પાસે,
મરહુમાદેવા શાહ
રાજકોટ.

મંત્રિ
મી અખિલ ભારત ટ્રસ્ટ સ્થા જેન
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

આપ આ સમિતિના કાર્યમાં કઈ રીતે

મદદગાર થઈ શકે ?

રૂ. ૫૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને સંસ્થાના આદ્ય મુરબીશ્રી તરીકે મુખ્યારક નામ લખાવી શકે છે, આપને ફોટો તથા આપનું જીવનચરિત્ર શાસ્ત્રમાં છાપવામાં આવે છે.

રૂ. ૩૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને આપના વડીલના સ્મરણાર્થે એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકે છે સમિતિને એક શાસ્ત્ર છપાવવામાં લગભગ રૂ. ૬૦૦૦) થી રૂ. ૮૦૦૦) ખર્ચ થાય છે. તે છતાં ત્રણ હજારમાં આપને નામે શાસ્ત્ર બહાર પાડવામાં આવશે.

રૂ. ૨૫૫] ઓછામાં ઓછા આપીને લાઈફ મેમ્બર તરીકે આપનું નામ દાખલ કરાવી શકે છે આપને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મફત મળી શકે છે. (રૂ. ૫૦૦ ની કીંમતનાં શાસ્ત્રો હફતે હફતે આપને મળી શકે છે.)

સ્થાનકવાસી સમાજમાં આ એક જ સંસ્થા શાસ્ત્રો આર ભાષામાં પ્રગટ કરીને સર્વ ઉપયોગી વાંચન રજુ કરે છે આપને જ્યારે કોઈ શાસ્ત્રની જરૂર હોય ત્યારે તેમજ કોઈ સાધુ મુનીરાજને વહોરાવવાની ઇચ્છા હોય ત્યારે શાસ્ત્ર બીજેથી નહિ મંગાવતા આ સમિતિ પાસેથી મંગાવી લેવા વિનંતી છે.

એક અપીલ

દીક્ષા પ્રસંગે

વરસીતપ અને બીજી તપશ્ચર્યાઓનાં પારણા પ્રસંગે

મહાવીર જયંતી, પર્યુષણ, તથા દીવાળી જેવા તહેવાર પ્રસંગે

લગ્નપ્રસંગ તથા પુત્ર જન્મની ખુશાલીમાં.

વડીલોના સ્મરણાર્થે તેમની તીર્થ પ્રસંગે તેમજ બીજા સર અવસરે બનતી મહત્ત્વ આ સંસ્થાને મોકલવા ખાસ નોંધ રાખશો.

પુજ્ય મહાત્મા તથા મહાસતિજીને

નમ્ર પ્રાર્થના

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજશ્રી રાત દીવસના અઘાગ પરીશ્રમ સાથે એક ક્ષતાનના કંકડા પર બેસીને સમાજના ભવિષ્યના વારસદાર માટે આગમ સંશોધન કરી અણુભોલો વારસો તૈયાર કરી રહ્યા છે, તે કાર્યમા અનેક મહાત્માઓ પ્રથમ બતાવીને સહાય સહકાર આપી રહ્યા છે. આપને અમારી નમ્ર વિનંતી છે કે આવા મહત્ત્વ કાર્યમા ઉપદેશ દ્વારા મહત્ત્વ મળી શકે તેટલી સમાજને આપની જરૂર છે માટે વખર વીસબે સારા જૈન સમાજના ઉત્કર્ષ કાર્યમા આપનો ફાળો નોંધાવો.



